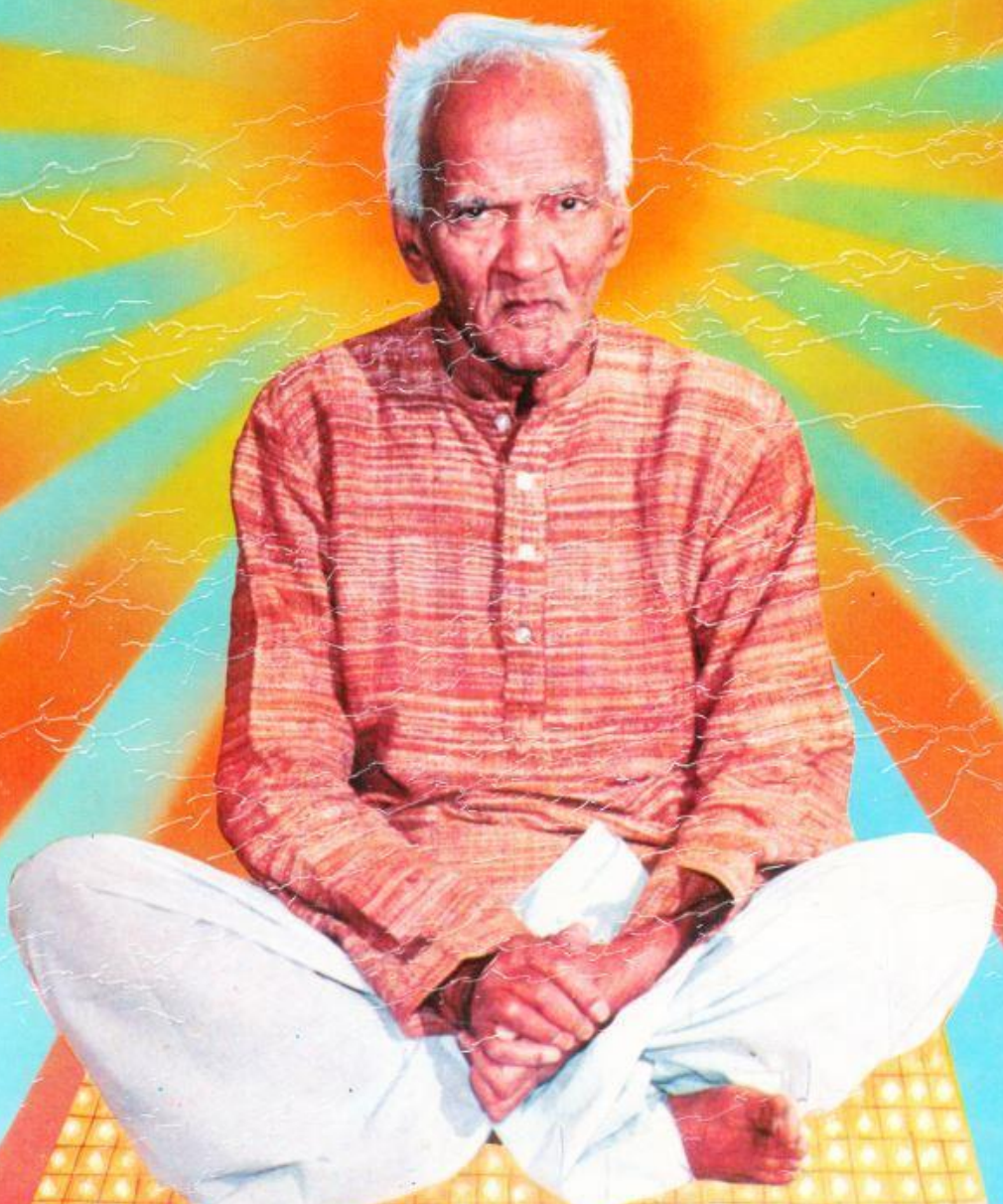
पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

साधना से सिद्धि-२



www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय सूची

विषय	पृष्ठ
अध्याय-१	
'साधना से सिद्धि' सिद्धान्त का पर्यवेक्षण	
जीवन साधना का मार्ग	१.१
साधना का शुभारम्भ	१.८
बुद्धिमत्ता की कसौटी	१.९
मृगतृष्णा में भटकना	१.९
आत्मा की निर्विकार स्थिति	१.१०
मल और आवरणों का निराकरण	१.१०
भावनात्मक साधना स्तर	१.१०
माता का सूक्ष्म स्वरूप	१.१०
सद्गुम और श्रेष्ठ विभूतियाँ	१.११
चमत्कार को नमस्कार	१.११
आत्मबल का सर्वोपरि लाभ	१.१२
उपासना और साधना अन्योन्याश्रित	१.१२
तन्मयतापूर्वक की गई साधना सफल होकर रहती है	१.१६
साधना द्वारा अन्तराल का उच्चस्तरीय विकास	१.२०
प्रत्यक्ष साधना और प्रत्यक्ष सिद्धि	१.२४
साधना के लिए उपयुक्त साधनों की आवश्यकता	१.२७
साधना में सफलता के लिए दो अनिवार्य अवलम्बन	१.२९
एकांगी साधना : अधूरी साधना	१.३२
साधना में सद्गुरु की परम आवश्यकता	१.३५
गुरु ईश्वरीय विभूति	१.४५
दीक्षा की महान परम्परा	१.४६
दीक्षा की आवश्यकता	१.४९
परिभाषा	१.५१
प्रकार	१.५२
समय-दीक्षा	१.५५
पुत्रक दीक्षा	१.५५
निर्वाण दीक्षा	१.५५
वेध दीक्षा	१.५५
शिवधर्मी और लोकधर्मी दीक्षा	१.५६
अन्तः दीक्षा	१.५७
सद्गुरु प्राप्त कर सकने का असाधारण सौभाग्य	१.५७
दिव्य विभूतियाँ श्रद्धालु को ही मिलती हैं	१.५९
सुपात्र पर ही दैवी अनुदान बरसते हैं	१.६३
आत्मिकी का प्रथम सोपान आत्मशोधन	१.६६
पात्रता की साधना से अभीष्ट सिद्धियाँ	१.६९
सन्तों के वरदान और अनुदान	१.७२
दिव्य अनुदान : वरदान सत्प्रयोजनों के लिए ही मिलते हैं	१.७४
सफल साधना की पृष्ठभूमि और आधार	१.७६
अध्याय-२	
योग और तप साधना द्वारा दिव्य शक्तियों का उद्भव	
आत्म प्रगति के आधारभूत साधन : योग और तप	२.१
योग साधनाओं का स्वरूप और प्रयोजन	२.४
योग का उद्देश्य	२.७
योग : प्रसुप्त की जागृति का उच्चस्तरीय विज्ञान	२.८
राजयोग के प्रारम्भिक अनुशासन	२.१२
हमारे अपने वश में है शरीर चेतना	२.१५
योग निद्रा द्वारा अतिमानवी चेतना की उपलब्धि	२.२०
पूर्ण योग की साधना एवं सिद्धि	२.२७
आत्म-शोधन के लिए तप-साधना अनिवार्य	२.२८
'साधना से सिद्धि' में बाधक संचित दुष्कर्म	२.३५
तपश्चर्या का एक सरल आरम्भ	२.३७
इन्द्रिय-निग्रह की उपयोगिता	२.३८
अस्वाद व्रत का महत्त्व	२.३८
आत्मिक और लौकिक दोनों ही लाभ	२.३९
विवेकपूर्ण उपवास	२.३९
पाप-प्रायश्चित्त के तप-व्रत	२.३९
सिद्धियाँ जगाने का यह भी एक मार्ग	२.४०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
इन्द्रियाँ आत्मा की शत्रु नहीं, सेवक	२.४१
मनः संयम के सिद्धान्त	२.४३
आत्मसंयम की साधना	२.४६
जीवन साधना की व्यावहारिक तपश्चर्या	२.४७
अध्याय-३	
अन्तः शक्ति के उभार और चमत्कार	
जीव सत्ता के तीन शरीर	३.१
स्थूल से अधिक शक्ति 'सूक्ष्म' में भरी पड़ी है	३.३
दिव्य प्रकाश का उन्नयन, साधना का उद्देश्य	३.१०
आनन्द और उल्लास का अजस्र निर्झर कारण शरीर	३.१३
अन्तर्जगत की दिव्य शक्तियाँ	३.१५
अन्तःचेतना का विकास-परिष्कार	३.१६
उच्च स्तरीय किन्तु सरल साधनाएँ	३.१६
आध्यात्म तत्वज्ञान का पहला अनुशासन	३.२१
स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर का समन्वय	३.२४
स्थूल शरीर के विकास हेतु ध्वनि प्रयोग	३.२६
सूक्ष्म शरीर और प्राणाकर्षण	३.२८
प्राण विद्युत का सम्वर्धन तेजोवलय का अभिवर्धन	३.३१
कारण शरीर की विकासोन्मुख ध्यान धारणा	३.३४
समग्र साधना का व्यावहारिक स्वरूप	३.३६
स्थूल शरीर की समर्थता	३.३८
सूक्ष्म शरीर की प्रतिभा का निखार	३.४२
(१) प्रज्ञाराधन	३.४२
(२) प्राणायाम साधना	३.४२
(१) नाड़ी शोधन प्राणायाम	३.४३
(२) प्राणाकर्षण प्राणायाम	३.४३
(३) सूर्य वेधन प्राणायाम	३.४३
कारण शरीर की दिव्य विभूतियाँ	३.४५
चेतना को अन्तराल में खोजा जाना चाहिए	३.४८
अध्याय-४	
साधना के विविध स्तर एवं पक्ष	
साधना का स्वरूप और प्रतिफल	४.१
ब्रह्मवर्चस के ज्ञान-विज्ञान की तात्विक पृष्ठभूमि	४.४
ब्रह्मवर्चस की योगाभ्यास साधना	४.८

विषय	पृष्ठ
योग साधना का उद्देश्य एवं स्वरूप	४.१०
ध्यान धारणा	४.११
नादानुसन्धान	४.१२
अन्तः त्राटक	४.१३
प्राण योग	४.१५
मुद्रा सिद्धि	४.१६
तपोनिष्ठ जीवनचर्या	४.१७
देवत्व के जागरण की सौम्य साधना पद्धति	४.२१
सकल किन्तु सर्वांगपूर्ण साधना-पद्धति	४.२६
प्रज्ञा के पाँच स्तरों के जागरण का व्यावहारिक स्वरूप	४.३१
सर्वसुलभ साधना	४.३२
अन्नमय कोश	४.३३
मनोमय कोश	४.३३
प्राणमय कोश	४.३३
विज्ञानमय कोश	४.३४
आनन्दमय कोश	४.३४
साधना की दिनचर्या	४.३४
अत्यन्त सरल किन्तु महान प्रभावोत्पादक	४.३४
ग्रन्थिवेध : एक समग्र साधना	४.३५
सूक्ष्म शरीर को सक्रिय बनाने वाली त्रिविध मुद्राएँ	४.३७
(१) शक्तिचालिनी मुद्रा	४.३८
(२) शिथिलीकरण मुद्रा	४.३८
(३) खेचरी मुद्रा	४.३८
प्राणायाम एवं सोऽहम् साधना के फलितार्थ	४.३९
प्राण विद्या का अभिन्न अंग स्वरयोग की साधना	४.४०
ओजस्, तेजस् और वर्चस् के जागरण की साधना	४.४३
ओजस्, तेजस् एवं वर्चस् के जागरण हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ	४.४७
वर्चस की प्राप्ति एवं आत्मिक प्रगति का एकमात्र अवलम्बन	४.४९
शक्ति-उपासना और मानव जीवन में सक्रियता	४.५१
आत्म शुद्धि की साधना	४.५३
तत्व साधना एक महत्त्वपूर्ण सूक्ष्म विज्ञान	४.५४
सार्थक एवं समग्र जीवन साधना	४.५६
(क) ज्ञान योग (भावना एवं धारणा)	४.५८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
(ख) कर्म योग (पूजा उपचार)	४.५६
देव जीवन की त्रिविधि साधना	४.६१
जीवन साधना के दो विशिष्ट पर्व	४.६६
आध्यात्मिक कायाकल्प की भाव-साधना	४.६६
जप के साथ ध्यान, प्राण साधना का महाविज्ञान	४.७१
जापान की जेन साधना में ध्यान की प्रमुखता रहती है	४.७४
जप और ध्यान सूक्ष्म ही नहीं स्थूल परिणाम	४.७५
पर्यवेक्षण योग की साधना, ध्यान धारणा	४.७७
साधना स्वर्ण जयन्ती वर्ष का विशेष साधना-क्रम	४.७६
साधना की सिद्धियाँ	४.८६
महायोगी गोरखनाथ और उनका योग-मार्ग	४.८८
युग के अनुरूप साधन प्रक्रिया में हेरफेर	४.६१

अध्याय-५

सर्वोपयोगी सुलभ साधनाएँ

आत्म-परिष्कार की सरल किन्तु महान साधनाएँ	५.१
कारण शरीर में परमेश्वर की प्रतिष्ठापना	५.३
आत्म-समर्पण द्वारा प्रभु प्राप्ति	५.५
मन मान जाता है, मनाइए तो सही	५.७
उच्च स्तरीय आध्यात्म साधना के तीन चरण	५.६
आत्मबोध एक दिव्य वरदान	५.१३
आत्मिक प्रगति हेतु आत्मबोध की साधना	५.२१
आन्तरिक उत्कर्ष के दो सुदृढ़ अवलम्बन चिन्तन-मनन	५.२६
देवाधिदेव आत्मदेव की साधना	५.३१
दर्पण के माध्यम से आत्म परिष्कार की साधना	५.३३
आत्म-दर्शन का दर्पण प्रयोग	५.३७

अध्याय-६

शक्ति एवं संदेश संचार की साधना

शक्ति एवं सन्देश संचार की प्राण-विद्या	६.१
विचार संप्रेषण की अद्‌भुत शक्ति सामर्थ्य	६.३
दृश्य से परे विचारों की विलक्षण दुनिया	६.७
बिना बोले विचार भेजना	६.१४
पशु, पक्षियों, पेड़ों की गुप्त शक्तियाँ	६.१५
दैनिक जीवन में विचार संचालन	६.१७
विचार संचालन का यन्त्र	६.१८
मानसिक शक्तियों की परिपुष्टि	६.१८
टेलीपैथी का प्रथम तत्व एकाग्रता	६.१६
शिथिलीकरण का प्रयोग	६.२०
टेलीपैथी का द्वितीय तत्व उर्वरा कल्पना	६.२०
तृतीय तत्व : दृढ़ इच्छा-शक्ति	६.२१
विचार की लहरें और कम्पन	६.२२
माध्यम ईथर पदार्थ	६.२२
समाधि	६.२४
समाधि के अभ्यास में सावधानी	६.२५
टेलीपैथी	६.२६
विचार संचालन की क्रिया के अभ्यास	६.२८
विचार पुष्टीकरण के दो और उपाय	६.२६
इस विद्या के अन्य उपयोग	६.२६
कुछ स्मरणीय तत्व	६.३०
आत्म शक्ति द्वारा वार्तालाप	६.३१

अध्याय-७

हिप्नोटिज्म एवं वशीकरण की सच्ची सिद्धि

सम्मोहन विज्ञान	७.१
सबल एवं पूर्ण विकसित शरीर	७.१
पोशाक एवं वेश-भूषा इत्यादि	७.३
मानसिक-समृद्धि की साधना	७.४
वाक्-शक्तियाँ एवं आत्म-प्रकटीकरण	७.११
आदिम प्रवृत्तियों का परिष्कार	७.१२
मानसिक दक्षता का रहस्य	७.१४
लोगों को अपने विचारानुकूल बनाने की ११ रीतियाँ	७.१७
सम्मोहन विज्ञान या हिप्नोटिज्म है क्या ?	७.२०
सम्मोहन एक मानसिक क्रिया है	७.२०
सम्मोहन विज्ञान के दो भाग	७.२४
स्वयं सूचना पर कुछ विद्वानों का मत	७.२५
सम्मोहन शक्ति कैसे उत्पन्न करें ?	७.२५
नेत्रों में सम्मोहन शक्ति	७.२५
हाथ तथा आवाज	७.२६
पात्रों का चुनाव	७.२६
सम्मोहन विज्ञान द्वारा रोग परिहार	७.२६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
आत्म-सम्मोहन कैसे करें ?	७.३१
मन की गांढें खोल दीजिए	७.३६
वशीकरण का सच्चा एवं सर्वसुलभ उपाय	
प्रेम और त्याग	७.३६
बलिदान की आवश्यकता	७.४०
दाम्पत्ति वशीकरण	७.४१
प्रियजन का वशीकरण	७.४५
पाँच अन्य साधन	७.४६
अप्सराओं का वशीकरण	७.४६
ईश्वर को वश में करना	७.५२
वशीकरण के तान्त्रिक प्रयोग	७.५४
मानसिक साधन	७.५४
अध्याय-८	
परकाया : प्रवेश की साधना	
कैसे हो सकता है ?	८.१
यह क्रिया नई नहीं है	८.३
पर काया प्रवेश क्यों ?	८.५
दूसरों को कैसे समझावें ?	८.७
त्राटक का अभ्यास	८.६
साधक की प्रारम्भिक योग्यता	८.१०
दृष्टिपात का अभ्यास (त्राटक)	८.१०
विचारों की एकाग्रता का अभ्यास =नादळ	८.११
कुछ जानने योग्य बातें	८.१४
दूसरों पर आत्म शक्ति का प्रयोग	८.१६
निद्रित करके प्रभावित करना	८.१८
सोते हुए आदमी पर प्रयोग	८.२०
दूरस्थ व्यक्ति को प्रभावित करना	८.२२
दूसरों के मन की बात जानना	८.२४
हिप्नोटिज्म	८.२६
मेस्मेरिज्म का तत्वज्ञान	८.२७
मेस्मेरिज्म का अभ्यास	८.३१
दृष्टिपात का अभ्यास (त्राटक)	८.३२
अभ्यास की सफलता का परीक्षण	८.३३
(१) काले परदे की सहायता से	८.३३
(२) आकर्षक प्रभाव	८.३४
(३) जल का स्वाद परिवर्तन	८.३४

विषय	पृष्ठ
(४) लटकती हुई वस्तु का झुलाना	८.३४
(५) जीव जन्तुओं पर प्रतिबन्ध	८.३४
(६) फोटो खींचना	८.३५
(७) चौंका देना	८.३५
निद्रित करने की कुछ विधियाँ	८.३५
अपने ऊपर मेस्मेरिज्म करना	८.३८
(१) आरोग्य प्राप्ति के लिए	८.३६
(२) ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए	८.३६
(३) मानसिक शक्तियों की उन्नति के लिए	८.३६
(४) आत्मिक बल बढ़ाने के लिए	८.३६
(५) किसी सांसारिक वस्तु को प्राप्त करने के लिए	८.४०
(६) प्रार्थना द्वारा इच्छापूर्ति	८.४०
मेस्मेरिज्म की सिद्धियाँ	८.४०
(१) दूरस्थ व्यक्ति पर प्रभाव प्रेरणा	८.४०
(३) दूरदर्शन	८.४२
(४) भविष्य ज्ञान	८.४२
(५) व्यक्तित्व की पहचान	८.४२
(६) सन्देश पहुँचाना	८.४२
(७) दूसरों के मन की बात जानना	८.४३
(८) पीड़ा दूर करना	८.४३
(९) शक्तिपात	८.४३
हिप्नोटिज्म के तीन खेल	८.४३
दृष्टि बन्ध	८.४४
प्रेत-विद्या	८.४५
सम्मोहन	८.४६
नकली मैस्मेरिज्म	८.४७
परकाया-प्रवेश : एक सत्य घटना	८.४७
परकाया प्रवेश एक विद्या एक विज्ञान	८.५०
तृतीय नेत्रोन्मीलन : दिव्य दृष्टि जागरण	
अध्याय-९	
दिव्य दृष्टि का संचार स्रोत	
तृतीय नेत्र आज्ञाचक्र	९.१
मनुष्य की दो नहीं तीन आँखें हैं	९.९
तृतीय नेत्र की दिव्य क्षमता	९.१२
क्या तृतीय नेत्र का जागरण सम्भव है ?	९.२०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
त्राटक साधना से दिव्य दृष्टि का जागरण	६.२५
गायत्री साधना में त्राटक का महत्त्व	६.३१
त्राटक द्वारा मनःशक्तियों का केन्द्रीकरण और सम्मोहन	६.३४
ज्योति साधना से आज्ञाचक्र का जागरण	६.३७
तृतीय नेत्रोन्मीलन दिव्य दृष्टि जागरण	६.३६
अन्तरंग त्राटक की महान महत्ता	६.४०
अंतःत्राटक से आत्म-ज्योति की साधना	६.४१
त्राटक की रीति और लाभ	६.४४
त्राटक की बनावट	६.४४
लाभ	६.४५
ज्योति साधना की सिद्धिमय फलश्रुतियाँ	६.४६
भावना योग द्वारा दिव्य दृष्टि	६.५०
अध्याय-१०	
सामान्य एवं विशिष्ट फलदायी साधनाएँ	
साधना की सफलता के आधार भूत तत्व	१०.१
समर्पण योग की ध्यान-साधना	१०.५
जप के साथ पयपान की ध्यान धारणा	१०.७
प्रतिभा सम्वर्धन हेतु विज्ञान सम्मत विशिष्ट साधनाएँ	१०.६
(१) स्वसंकेत (ऑटोसजेशन)	१०.१०
(२) दर्पण साधना	१०.१०
(३) रंगीन वातावरण का ध्यान	१०.११
(४) प्राणकर्षण प्राणायाम	१०.११
(५) सूर्य बेधन प्राणायाम	१०.११
(६) चुम्बक स्पर्श	१०.१२
(७) प्राणवानों का सान्निध्य	१०.१२
(८) नादयोग	१०.१२
(९) प्रायश्चित	१०.१२
(१०) अंकुरों का कल्क एवं वनौषधि सेवन	१०.१३
अदृश्य जगत की सम्पर्क साधना	१०.१३
प्राण-संचार की शक्तिदायी साधना	१०.१६
प्रकाश पुंज के ज्योति स्फुल्लिंग	१०.२०
प्राण-प्रवाह की शक्ति-संचार साधना	१०.२१
व्यक्ति विद्युत का धारा-प्रवाह	१०.२१

विषय	पृष्ठ
शिक्षा के साथ-साथ शक्ति दान भी	१०.२२
दिव्य शक्तियों का उच्च अनुदान	१०.२२
शक्ति-संचार साधना विधि	१०.२२
शक्ति-संचार प्रक्रिया से आत्म शक्ति का उपार्जन-अभिवर्धन	१०.२३
ऊर्जा अनुदान की ध्यान धारणा	१०.२६
आनन्दानुभूति की उच्चस्तरीय साधना	१०.२६
एकात्म भाव की ध्यान साधना	१०.२७
ध्यान धारणा का सीमाबन्ध	१०.२७
द्वैत से अद्वैत की ओर	१०.२८
ज्योतिर्मयी का दिव्य दर्शन	१०.२८
क्रिया के स्थान पर भावना की वृद्धि	१०.२८
दृष्टिकोण का परिमार्जन	१०.२९
परम तेज पुंज ज्योति अवतरण साधना	१०.२९
अन्तःशक्ति सम्वर्धन की सविता-साधना	१०.३२
ज्योतिपुंज सविता कीध्यान धारणा	१०.३८
दिव्य अनुदान की ध्यान धारणा	१०.३८
व्यस्त प्रज्ञा परिजन भी इतना तो कर ही सकेंगे	१०.३९
न्यूनतम उपासना	१०.३९
साधना १	१०.३९
साधना २	१०.४१
साधना ३	१०.४३
प्रथम चरण : व्यक्तिगत, न्यूनतम	१०.४३
दूसरा चरण : संगठन, सत्संग	१०.४४
साधना ४	१०.४४
सूर्य की ध्यान धारणा	१०.४६
नियति के परिवर्तन में आध्यात्म साधना के सफल प्रयोग	१०.४८
(१) जाग्रत आत्माओं की विशिष्ट उपासना	१०.५०
(२) जीवन साधना	१०.५१
(३) सामूहिक साधना	१०.५१
(४) सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन	१०.५१
(५) दुष्प्रवृत्ति निराकरण	१०.५१
यान संकट और सुरक्षा-अनुष्ठान	१०.५२
प्रत्यक्ष या छद्म युद्धों के शमन में आध्यात्मोपचार की महती भूमिका	१०.५४

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषय	पृष्ठ
राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए एक महान पुरश्चरण	१०.५६
आत्मिक प्रगति के तीन सुनिश्चित आधार अवलम्बन	१०.५८
दिव्य अनुदान दिव्य प्रयोजनों के लिए	१०.६२
अब सभी जाग्रत परिजनों को यह लाभ मिलेगा	१०.६४
आत्मश्रेय और दैवी अनुग्रह पाने का दुहरा सुयोग	१०.६६
कुछ जानने योग्य अनुशासन	१०.६६
दिव्य अनुदानों का ग्रहण अभ्यास	१०.७१
तीन प्रकार के प्रवाह	१०.७२
(१) प्राण संचरण (कुण्डलिनी स्फुरण)	१०.७४
(२) ज्योति अवतरण (दिव्य दृष्टि जागरण)	१०.७४
(३) रसवर्षण (प्रभु मिलन)	१०.७४
युग-धर्म की त्रिकाल संध्या	१०.७५
महान परिवर्तन की सन्धि वेला में युग साधना	१०.७८
प्राणवान परिजन इतना तो करें ही	१०.७९
प्रातः उपासना	१०.७९
मध्यान्ह साधना	१०.७९
सोते समय आराधना	१०.७९
युग धर्म का निर्वाह	१०.७९
यह उपक्रम हम सभी अपनाएँ	१०.८०
शक्ति सम्प्रेषण का तत्वज्ञान	१०.८०
शक्ति केन्द्र से साझेदारी की साधना	१०.८२
परिजनों के लिए विशेष साधना उपक्रम	१०.८५
अध्याय-११	
चमत्कारी, किन्तु सर्वथा हानि रहित विशेष साधनाएँ	
ज्योति अवतरण की बिन्दुयोग साधना	११.१
साधना	११.५
कला-साधना	११.८
पाँच कलाओं द्वारा तात्विक साधना	११.१०
पृथ्वी-तत्व	११.१०
साधन-विधि	११.११
जल-तत्व	११.११
साधन-विधि	११.११
अग्नि-तत्व	११.११
साधन-विधि	११.११
वायु-तत्व	११.११
साधन-विधि	११.११
आकाश-तत्व	११.११
साधन-विधि	११.११
लययोग	११.१२
नादयोग	११.१२
दिव्य अनुदानों को ग्रहण करने की विशिष्ट साधना ध्यान धारणा	११.१३
पात्रता एवं पूर्व स्थिति	११.२०
ध्यान मुद्रा	११.२२
सूक्ष्म शरीर से प्रज्ञा-तीर्थ में उपस्थिति	११.२३
प्रथम ध्यान : प्राणाग्नि-कुण्डलिनी	११.२४
द्वितीय ध्यान : दिव्य दृष्टि-प्रकाश ज्योति	११.२५
तृतीय ध्यान : रसानुभूति अमृत-वर्षा	११.२६
सम्मिश्रित साधना	११.२६
संयुक्त ध्यान धारणा	११.२७

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'साधना से सिद्धि' सिद्धान्त का पर्यवेक्षण

जीवन साधना का मार्ग

आज जन-जीवन एक विडम्बना मात्र बनकर रह गया है, जिसे ज्यों-त्यों करके काटना पड़ता है । निर्वाह की आवश्यकता जुटाने, गुत्थियों को सुलझाने और प्रतिकूलताओं के अनुकूलन में माथा-पच्ची करते-करते मौत के दिन पूरे हो जाते हैं । अभावों और संकटों से पीछा नहीं छूटता । कई बार तो गाड़ी इतनी भारी हो जाती है कि खींचे नहीं खिंचती है । फलतः प्रयत्नपूर्वक अथवा बिना प्रयत्न ही अकाल मृत्यु के मुँह में प्रवेश करना पड़ता है । नीरस और निरर्थक जीवन एक ऐसा अभिशाप है जिसे दुर्भाग्य के रूप में स्वीकार भर करना पड़ता है, किन्तु लगता यही रहता है—बेकार जन्मे और निरर्थक जिये । साधारण जीवन का यही स्वरूप है जो प्रतिकूल परिस्थितियों में तो अन्य प्राणियों से भी गया-बीता प्रतीत होता है ।

असामान्य जीवन इससे आगे की बात है । सफल, समर्थ और समुन्नत स्तर के व्यक्ति सौभाग्यशाली दीखते हैं और उनकी स्थिति प्राप्त करने के लिए मन ललचाता है । भौतिक सम्पन्नता से सम्पन्न और आत्मिक विभूतियों के धनी लोगों की—न प्राचीन काल में कमी थी और न अब है । पिछड़े और समुन्नत वर्गों का मध्यान्तर देखने से आश्चर्य होता है कि एक जैसी काया में रहने वाले मनुष्य प्राणियों की स्थिति का इतना ऊँच और नीच होने का क्या कारण हो सकता है ? सृष्टा का पक्षपात और प्रकृति का अन्तर कहने से भी काम नहीं चलता, क्योंकि दोनों को सुव्यवस्थित एवं सुनियोजित करने में अन्धेरगर्दी के लिए कहीं रत्ती भर भी गुंजाइश नहीं है । यह व्यतिक्रम रहा होता तो ग्रह-नक्षत्र अपनी धुरी पर न घूमते, परमाणुओं के घटक उच्छृंखलता बरतते और परस्पर टकराकर उसी मूल स्थिति में लौट गए होते, जिसमें कि महत्तत्व अपनी अविज्ञात स्थिति में अनन्त काल से पड़ा था । अन्धेरगर्दी के रहते न यह सृष्टि बन ही पाती और न एक दिन चलती-ठहरती । यह सब कुछ परिपूर्ण व्यवस्था के अनुरूप चल रहा है ।

फिर मनुष्यों के बीच पाये जाने वाले अन्तर का क्या कारण है ? इसका सुनिश्चित उत्तर यही है कि जीवन की उथली परतों तक ही जिनका बास्ता रहा उन्हें छिलका ही हाथ लगा किन्तु जिन्होंने नीचे उतरने की चेष्टा की उन्हें एक के बाद एक बहुमूल्य उपलब्धि भी मिलती चली गईं । गहराई में उतरने को आध्यात्म की भाषा में साधना कहते हैं । साधना किसकी ? इसका उत्तर है—जीवन की । जीवन प्रत्यक्ष कल्पवृक्ष है, जो उसकी जितनी सदुपयोग साधना कर लेता है, वह उतना ही कृत-कृत्य हो जाता है । जीवन का मूल्य, महत्त्व और उपलब्धि न समझना ही वह अभिशाप है, जिसके कारण गई-बीती परिस्थितियों में दिन गुजारने पड़ते हैं । यदि स्थिति को बदल दिया जाय—जीवन देवता की अनन्त सामर्थ्यों तथा उसके वरदानों की असीम शृंखला को समझा जा सके तो प्रतीत होगा कि सृष्टा ने बीज रूप से वैभव का भाण्डागार इसी मानवी काय कलेवर के भीतर सँजोया हुआ था । भूल इतनी ही होती रही कि न उसे खोजा गया और न काम में लाया गया । इस भूल का परिमार्जन ही आत्म-ज्ञान है । यह जागृति जब सक्रिय बनती है तो आत्मोत्कर्ष के लक्षण तत्काल दृष्टिकोण होने लगते हैं । इसी आत्म परिष्कार की प्रक्रिया का नाम 'साधना' है ।

साधना से सिद्धि का सिद्धान्त अक्षरशः सत्य है । भौतिक जगत् के विभिन्न क्षेत्रों में साधनारत पुरुषार्थी अनेकानेक सफलताएँ अर्जित करते देखे जाते हैं । जीवन भी एक ऐसा क्षेत्र है जिसे जड़-जगत् के किसी भी घटक एवं वर्ग से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जा सकता है । जड़-सीमित है—चेतन असीम । जड़ से साधन मात्र मिलते हैं, चेतन में आनन्द और उल्लास के भी भण्डार भरे पड़े हैं । साधना का एक सुविस्तृत विज्ञान है । आध्यात्म तत्वज्ञान के अन्तर्गत उसकी व्यापक विवेचना की गई है ।

साधना के अभ्यासों को देखते हुए यह भ्रम होता है कि कहीं बाहर से कुछ माँगने या पाने का यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपक्रम है । वस्तुतः बात ऐसी है नहीं । उपयोगी उपार्जन के लिए अपने खेत में ही फसल बोनी और काटनी पड़ती है । अपने पुरुषार्थ से ही निर्वाह होता है । बाहरी सहायता के बल पर किसका काम चला है । फिर याचना भर से मिलता भी किसे कितना है । माता का दूध उपलब्ध रहने पर भी आखिर चूसने और पचाने का पुरुषार्थ तो उसे ही करना पड़ता है । इसके बिना दयालु माता भी शिशु को अपने अनुदानों से लाभान्वित नहीं कर सकती । दैवी शक्तियों के अनुग्रह से बहुत कुछ मिलता है । यह सत्य होने पर इससे भी बड़ा सत्य यह है कि उसके लिए पात्रता उपार्जित करनी पड़ती है । इन्द्रदेव की विपुल वर्षा होते रहने पर भी न तो टीले पर जलराशि ठहरती है और न चट्टान पर हरियाली उत्पन्न होती है । इन्द्रदेव कितने ही दयालु क्यों न हों, उनका अनुग्रह अभिवर्षण गहरे गड्ढों में ही जलाशय के रूप में संग्रह होता है । उर्वर भूमि ही वर्षा से लाभान्वित होती—हरी-भरी बनती है ।

पात्रता का सम्वर्धन साधना ही इसके लिए जीवन के बहिरंग को व्यवस्थित और अन्तरंग को परिष्कृत करना होता है । परिष्कृति को योग और व्यवस्थिति को तप कहते हैं । साधना के यही दो क्षेत्र हैं । बहिरंग को सभ्यता की मर्यादा में करना होता है और अन्तरंग को परिष्कृत करने के लिए प्रबल पुरुषार्थ करना पड़ता है । साधना का तत्वदर्शन यही है । सरकस का पशु-प्रशिक्षक अनगढ़ जानवरों को प्रशिक्षित करता है और उन्हें आश्चर्यजनक करतब दिखाने में अभ्यस्त कर लेता है । प्रकारान्तर से यही प्रक्रिया जीवन सम्पदा के अनगढ़ और अव्यवस्थित स्वरूप को सुव्यवस्थित और समुन्नत बनाने के लिए करना पड़ता है । साधना के समस्त उपचार उसी प्रयोजन के लिए सृजे गए हैं ।

लोक मान्यता यह है कि सिद्धियाँ दैवानुग्रह से बरसती हैं । साधना उसी की मनुहार है । यह मान्यता आंशिक रूप से सत्य है । दुकानदार माँगने से ही कोई वस्तु निकालकर दिखा भर देता है । न माँगने पर तो वह देना तो दूर कुछ बतायेगा तक नहीं । प्रार्थना को अपनी आवश्यकता की अभिव्यक्ति कह सकते हैं । उस अर्थ में वह उचित भी है, आवश्यक भी है । भूल वहाँ होती है, जब प्रार्थना को याचना समझा जाता है । याचना का अर्थ है बिना मूल्य या अल्प मूल्य में कुछ बहुमूल्य पाने के लिए गिड़गिड़ाना । इस उपाय से बहुत हल्के अनुदान ही प्राप्त होते देखे गए हैं । इतने पर भी वे न तो सन्तोषजनक होते हैं और न सम्मानास्पद । उनका उपयोग करने के समय आत्म-ग्लानि भी होती है और बाहर से तिरस्कृत भी होना पड़ता है । फिर यह प्रचलन भी मानवी है । व्यक्तिगत याचना अनुदान का सिलसिला तो मानव समाज में ही प्रचलित है । विश्व व्यवस्था में तो खरीदने-पाने भर का विधान है । सृष्टा की समूची सृष्टि इसी व्यवस्था की धुरी पर परिभ्रमण करती है कि पात्रता प्रस्तुत करने वाले को अनुदान दिए जायँ । पवन प्राण वायु की प्रचुर मात्रा लिए खड़ा रहता है, पर उसे सक्षम फेफड़े ही ग्रहण कर पाते हैं । मृतकों को कुछ दे सकने में समर्थ होते हुए भी पवन सर्वथा असमर्थ ही रहता है । मनोरम दृश्यों से भरी-पूरी इस दुनिया में निहारने का आनन्द मात्र उन्हीं को मिलता है, जिनकी आँखें सही हैं । ध्वनि प्रवाह के अगणित उतार-चढ़ावों को समझने और श्रवण का आनन्द लेने की सुविधा इस संसार में विद्यमान हैं, पर उससे लाभान्वित हो सकना उन्हीं के लिए शक्य है, जिनके कान की झिल्ली ठीक है । बाहर दैवी-अनुग्रह बरसने की बात सत्य होते हुए भी वह निर्विवाद नहीं है । यह शर्त जुड़ी ही हुई है कि अनुदान उपलब्ध करने के लिए पात्रता अनिवार्य है ।

पात्रता का सम्बर्धन ही ब्रह्मवर्चस साधना का उद्देश्य है । इस मार्ग पर चलने वाले को अतिरिक्त याचना नहीं करनी पड़ती, जो उपयुक्त है, वह अनायास ही मिलता है । उपयुक्त का तात्पर्य है अपने स्तर के अनुरूप । स्तर को बढ़ाये बिना न तो विभूतियाँ मिलती हैं और न मिलने पर ठहरती हैं । अतएव पात्रता का पाचन, समर्थता का अभिवर्धन, अनिवार्य रूप से आवश्यक है । साधना में यही करना पड़ता है । वह प्रयास जितना प्रौढ़-प्रखर एवं परिपक्व होता है, उसी अनुपात में विभूतियाँ भीतर से उफनती और बाहर से बरसती दृष्टिगोचर होने लगती हैं । प्रारम्भिक अभ्यास से लौटे साधक इसी आधार पर अपना भावी जीवन सार्थक करते रहते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना से अदृश्य शक्तियों की सिद्धियों की उपलब्धि का प्रतिपादन गलत नहीं है । ईश्वर का अनुग्रह सृष्टि के हर घटक पर अनादिकाल से बरसता रहा है और अनन्तकाल तक बरसता रहेगा । उसे न्यूनाधिक मात्रा में प्राप्त कर सकना अपने स्तर के अनुरूप ही हो सकता है । संसार में आहार के विपुल भण्डार भरे पड़े हैं । उन्हें प्राप्त करने की सभी को सुविधा है । किन्तु चींटी अपने स्तर को अपनी मात्रा में सामग्री प्राप्त करती हैं और हाथी को अपने काम के पदार्थ अपनी आवश्यकतानुसार मिलते रहते हैं । सृष्टा के अनुग्रह अनुदान में कोई कमी नहीं । उससे याचना करने की आवश्यकता नहीं । पात्रता सिद्ध कर देना भर पर्याप्त है । ब्रह्मवर्चस साधना का उद्देश्य इसी पात्रता का अभिवर्धन करने की जीवन शैली का मार्ग दर्शन समझा जाना चाहिए ।

पेड़ अपनी आकर्षण शक्ति से बादलों को खींचने और बरसने के लिए विवश करते हैं । पौधों पर ओस के कण जमा होते हैं । खदानें अपने सजातीय कणों को दूर-दूर तक आमन्त्रण भेजती हैं और उन्हें अपने निकट खींच बुलाती हैं । यह चुम्बकत्व है, जो यहाँ जितना अधिक होता है—सजातीयों से उसका उसी स्तर का आह्वान-आमन्त्रण मिलता है, फलतः वे उसी गति से दौड़ते चले आते हैं । खिलते फूल का चुम्बकत्व मधुमक्खियों, तितलियों और भौरों को न्योत बुलाता है । खिलते हुए यौवन से अनेकों आँखें अनायास ही आकर्षित होती हैं । प्रतिभा अनेकों को प्रशंसक एवं अनुगामी बनाती है । यह चुम्बकत्व का चमत्कार है । साधक का चुम्बकत्व दैवी शक्तियों को अदृश्य लोक से आमन्त्रित करता है और उन्हें अनुग्रह बरसाने के लिए सहज-सहमत करता है ।

सिद्धियों की एक धारा ऊपर से, बाहर से, बरसती है और दूसरी नीचे से, भीतर से, उभरती है । दैवी अनुग्रह से अनेकों लाभान्वित होते हैं, ठीक इसी प्रकार आत्मोत्कर्ष की प्रक्रिया द्वारा सुषुप्त क्षमताओं का जागरण होता है, तो उनके साथ ही वे विभूतियाँ प्रकट होती हैं, जिनसे सामान्य-जन वंचित ही नहीं अपरिचित भी बने रहते हैं । मनुष्य के भीतर बहुत कुछ है । इतना कुछ जिसे सृष्टा की सामर्थ्य के समतुल्य ही कहा जा सकता है । वृक्ष का विशालकाय ढाँचा छोटे से बीज में सुनिश्चित रूप से विद्यमान रहता है । सौर-मण्डल की समस्त प्रक्रिया सूक्ष्म रूप से नन्हें से परमाणु में यथावत् गतिशील रहती हैं । जड़ें नीचे से रस खींचती और पेड़ के कलेवर को हरा-भरा पुष्पित-पल्लवित बनाने के लिए सारे सरंजाम जुटाती हैं । यद्यपि वे आँखों से दीखती नहीं । जमीन से दबी रहती हैं । तो भी जानकारों को पता रहता है कि पेड़ तो मात्र कलेवर है, उसकी शोभा-समर्थता का स्रोत तो अदृश्य जड़ों में ही पूर्णतया सन्निहित है । जीव का छोटा अन्तराल लगभग उतना ही समर्थ है, जितना ब्रह्म का विराट् विस्तार । व्यक्ति भीतर से ही उगते उठते हैं । बाहर तो उस अन्तरंग प्रगति का प्रमाण-परिचय भर मिलता है ।

जीव की प्रसुप्त शक्तियाँ भीतर से जगती-उभरती हैं । उनके उफलने पर उसी तरह की प्रवाह धारा बहने लगती है जैसे कि यमुना, नर्मदा, चम्बल आदि छोटे से कुण्डों में से निकलकर भूतल पर प्रवाहित होती है । ब्रह्म की दिव्य शक्तियाँ साधक पर अन्तरिक्ष से घटाओं की तरह बरसती हैं । निर्झर भी ऊपर से नीचे गिरते और भूमि पर गतिशील होते देखे जाते हैं । यह दोनों ही सौभाग्य हर किसी के लिए सहज-सुलभ हैं । पात्रता परिचय देकर इस संसार के विभिन्न बाजारों में कुछ भी कितनी ही मात्रा में खरीदा जा सकता है । मण्डी में पैसे की तूती बोलती है । धनवान इच्छानुसार किसी स्तर के सुविधा-साधन कितनी ही मात्रा में खरीद सकते हैं । इसी प्रकार बलिष्ठता, बुद्धिमत्ता, प्रतिभा आदि सामर्थ्यों के भी अपने-अपने क्षेत्र पड़े हैं और उनमें उपलब्धियाँ प्राप्त करने वाले अपनी योग्यता एवं तत्परता के अनुरूप जो चाहें सो, जितना चाहे सो खरीद सकते हैं । जिनकी जेब खाली है, जो अकर्मण्य हैं, उन्हें बड़े मनोरथ करने में भी निराशा का कष्ट सहन करना पड़ता है । मिलना तो उन्हें है ही क्या ? प्रार्थना, याचना, करते रहने पर भी उनके पल्ले कुछ नहीं पड़ता है । समर्थता ही वह पूँजी है जिसे विभिन्न उपलब्धियों को खरीद सकने वाली पात्रता कह सकते हैं । इस बहुमुखी पात्रता का उपार्जन-पुरुषार्थ ही साधना है ।

साधना से सिद्धि का सिद्धान्त सुनिश्चित है । भौतिक क्षेत्र में अपने-अपने प्रसंग में साधना-रत पुरुषार्थी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभीष्ट मनोरथ पूरे करते देखे जाते हैं । आत्मोत्कर्ष भी चेतनात्मक विभूतियाँ उपार्जन करने की एक विशिष्ट प्रक्रिया है । उससे सफलता प्राप्त करने का सिद्धान्त भी वही है जो भौतिक सफलताओं पर लागू होता है । साधक-जीवन देवता—की साधना करते हैं । उसके अन्तरंग और बहिरंग दोनों पक्षों को समुन्नत बनाते हैं । सामान्य स्थिति में यहाँ सब कुछ अनगढ़ रहता है । उत्कृष्टता युक्त दृष्टिकोण एवं पुरुषार्थ उसे सुन्दर-सुव्यवस्थित बनाता है । झाड़ियों के स्थान पर उद्यान लगाना—वन्य पशुओं को पालतू बनाना—अनगढ़ को सुगढ़ में परिवर्तित करना संस्कृति है । इसी का चमत्कार दृश्य जगत् में सर्वत्र बिखरा पड़ा है । साहित्य ने चिन्तन को दिशा दी है । सृजन ने सुविधा साधन खड़े किए हैं । अपने आपको सद्गुणों की सम्पदा से लदा हुआ कल्पवृक्ष बना लेना यही ब्रह्मवर्चस साधना का उद्देश्य है ।

साधना से सिद्धि का सिद्धान्त शाश्वत सत्य की तरह स्पष्ट है । न उसमें सन्देह की गुंजाइश है न विवाद की । मात्र साधना का स्वरूप और उद्देश्य समझने भर की है । यदि उसे पात्रता का—समर्थता का—व्यक्तित्व का—परिष्कार माना जाये—उसी दृष्टि से उस महा प्रयास में निरत हुआ जाय तो ऐतिहासिक एवं विद्यमान महामानवों—की तरह हर कोई अपने स्तर को क्रमशः अधिकाधिक ऊँचा उठा सकता है । इतना ऊँचा जिसकी गरिमा को हिमालय से कम नहीं वरन् अधिक ही उत्तुंग, समुन्नत एवं समृद्ध कहा जा सके । साधना क्षेत्र में निराश उन्हें रहना पड़ता है, जो आत्म-परिष्कार के लिए कुछ नहीं करते, वरन् देवताओं को फुसलाने वाले सस्ते तरीके ढूँढ़ते और उतने भर से ही लम्बी-चौड़ी आशाएँ लगाए रहते हैं ।

अतः आत्मिकी की उच्चस्तरीय उपलब्धियों के निमित्त 'साधना' का आश्रय लेना पड़ता है । साधना का सिद्धान्त पक्ष ब्रह्म विद्या और प्रयोग पक्ष तपश्चर्या है । ब्रह्म विद्या का विस्तार बहुत है पर उसका सार एवं संक्षिप्त ऋतम्भरा प्रज्ञा है, इसी का दूसरा नाम गायत्री है । यों गायत्री एक शब्द गुच्छक एवं मन्त्रोपचार में काम आने वाला प्रख्यात निर्धारण है पर उसकी अनुपम विशेषता यह है कि गुच्छक के २४ अक्षरों में ब्रह्म विद्या के सभी सूत्रों संकेतों का सार समावेश है । उपनिषदों और धर्म शास्त्रों में जो विस्तारपूर्वक लिखा है, उसे संक्षेप में समझना हो तो इन २४ बीजाक्षरों के संकेतों को स्मरण रखने से भी काम चल सकता है ।

आमतौर से मन्त्रों में शब्द शक्ति ही प्रमुख रहती है और स्वर विज्ञान के आधार पर की गई उसकी संरचना शक्ति केन्द्रों को झंकृत करने में काम आती है, उनके शब्दार्थों में कोई विशेष प्रतिपादन नहीं रहता । किन्तु गायत्री की अनुपम विशेषता यह है कि उसके अक्षरों में ब्रह्म विद्या का समग्र तत्व दर्शन गागर में सागर की तरह भर दिया गया है इसी कारण उसे ऋतम्भरा प्रज्ञा कहा गया है । ब्रह्म विद्या और ऋतम्भरा एक ही महा ज्योति के दो नाम हैं । इसी आलोक का तीसरा नाम भारतीय समुदाय में गायत्री के नाम से प्रख्यात है ।

गायत्री का साधना पक्ष ही सर्व विदित है । आमतौर से उसे जप अनुष्ठान की प्रक्रिया ही समझा जाता है । कठिनाइयों के निवारण और परिस्थितियों के अनुकूलन में इस उपासना से सहायता मिलने की बात ही जन मानस में बैठी हुई है । उपलब्धियों को दैवी अनुकम्पा के रूप में लिया जाता है, इस तथ्य को बहुत कम लोग समझते हैं कि गायत्री का रटन ही सब कुछ नहीं है, उसके अतिरिक्त आत्म परिष्कार की आत्म साधना का अनुशासन भी जुड़ा हुआ है और इस माध्यम से जो उपलब्ध होता है उसमें आत्म साधना के माध्यम से उभरने वाली आन्तरिक उत्कृष्टता का विशेष योगदान है ।

गायत्री महामन्त्र है जबकि अन्य मन्त्र मात्र कहलाते हैं । महा विशेषण इसलिए लगा है कि उससे प्रज्ञा के निखार-भद्रा के उभार का समन्वित लाभ मिलता है । भद्रा उस दिव्य शक्ति का नाम है जो भौतिक सिद्धियों और आत्मिक ऋद्धियों की उपलब्धि का समान रूप से पथ प्रशस्त करती है । अतीत के महान आत्म विज्ञानी इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि आत्मिकी से लाभान्वित होने के लिए गायत्री से बढ़कर और कोई अवलम्बन नहीं है । इस तथ्य को उन्होंने अनेक प्रतीक संकेतों द्वारा प्रकट किया है । गायत्री को वेदमाता, देवमाता कहा गया है । वेदमाता अर्थात् उच्चस्तरीय ज्ञान गंगोत्री । देवमाता अर्थात् देवत्व की जन्म दात्री धात्री । विश्वमाता अर्थात् विश्व व्यवस्था, समृद्धि एवं प्रगति की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिष्ठात्री । गायत्री को पारस कल्पवृक्ष और अमृत कहा है । पारस अर्थात् कायाकल्प, कल्पवृक्ष अर्थात् अभीष्ट उपार्जन, अमृत अर्थात् श्रद्धा और भक्ति का रसास्वादन । अलंकारिक रूप से इन तीनों में जीवनोत्कर्ष और जीवनोद्देश्य की स्थिति परिणति का विवेचन है । गायत्री को कामधेनु कहा गया है उसी का पयपान करने से देवता अजर अमर बनते बताये जाते हैं । अजर अर्थात् जिसे कभी जरा जीर्णता न आये, सदा उमंग उत्साह से भरा रहे । अमर अर्थात् जिसका यश अमर रहे, जिसे अपनी अमरता की स्मृति सदा बनी रहे । यह सभी प्रतिपादन ब्रह्म विद्या की प्रतिक्रिया परिणति कहे जा सकते हैं ।

गायत्री-उपासना का उच्चस्तर 'ब्रह्मवर्चस' कहलाता है । इसमें दो शब्द हैं—ब्रह्म+वर्चस । ब्रह्म अर्थात् ब्रह्म-विद्या, ब्रह्म-ज्ञान वर्चस अर्थात् तेजस्, ब्रह्म-तेज । अतः ब्रह्मवर्चस के दो पक्ष हुए—(१) ब्रह्म-विद्या अर्थात् दृष्टिकोण का, क्रिया-कलाप का परिष्कार एवं दर्शन-विज्ञान । (२) वर्चस अर्थात् प्रसुप्त अन्तःशक्तियों का जागरण, तेज-सम्वर्धन । यह चेतना क्षेत्र की वह समर्थता है जिसे जो जितनी मात्रा में प्राप्त करता है वह उसी अनुपात से देवात्मा बनता चला जाता है । गायत्री को ब्रह्मास्त्र एवं ब्रह्मदण्ड भी कहते हैं । इस नामकरण में उस सामर्थ्य का संकेत है जिसके सहारे जीवन के अन्तरंग और बहिरंग पक्षों को समुन्नत सुसंस्कृत बनाया जा सकता है साथ ही प्रस्तुत विकृतियों विपत्तियों से जूझने, पछाड़ने का कौशल हस्तगत हो सकता है । इस प्रकार ब्रह्मवर्चस उस समग्र आध्यात्म का समन्वय है, जिसमें आत्मानुभूति एवं आत्मिक प्रखरता दोनों का समुचित सुसन्तुलित समावेश है ।

गाड़ी की पूर्णता दो पहियों के मिलने से है । एक के रहने से वह अधूरी रहती है । एक हाथ, एक पैर से किसी प्रकार काम चल तो सकता है, किन्तु उसमें सहज गतिमयता, प्रखरता और परिपूर्णता नहीं आ पाती । चिन्तन तथा क्रिया दोनों का समन्वय ही समग्र आध्यात्म-साधना है । चिन्तन की उत्कृष्टता ब्रह्मविद्या या आध्यात्म-तत्वज्ञान का ज्ञान पक्ष है । क्रिया की प्रखरता उसका विज्ञान पक्ष है । ज्ञान एवं कर्म का समन्वय ही ब्रह्मवर्चस है । परिपोषण तथा उन्मूलन दोनों ही तथ्य इसमें समाविष्ट हैं । ईश्वर का अवतार दो प्रयोजनों के लिए होता है—धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश ! पुण्य से प्रेम तथा पाप से घृणा की उभयपक्षीय प्रवृत्तियों का सन्तुलन बनाये रहने की प्रेरणा को ब्रह्मवर्चस कह सकते हैं । सदाशयता के सम्बर्धन में उदारता और सहकारिता की नितान्त आवश्यकता है । किन्तु दुष्टता के प्रति यही नीति नहीं अपनाई जा सकती अन्यथा सर्प को पालने, दूध पिलाने, आततायी को सहयोग देने या सहन करने की अतिवादी और भयपरक उदारता के अनर्थकारी दुष्परिणाम उत्पन्न होंगे । सज्जनता एवं सत्प्रवृत्तियों के प्रति उदार सहयोग तथा आन्तरिक दोष-दुर्गुणों एवं समाजगत अनाचारों का उग्र प्रतिकार, दोनों ही आवश्यक हैं । असुरता और पाशविकता के तत्व अपने भीतर और इस संसार में कम नहीं । उनसे जूझने के लिए मात्र सदाशयता और सज्जनता अपर्याप्त है । उनके प्रति 'मन्यु'—सिद्धान्तनिष्ठ आक्रोश—का उभरना आवश्यक है । रावण द्वारा मारे गए ऋषियों के अस्थिपंजरों के पहाड़ जैसे विशाल ढेर देखकर भगवान राम ने ऐसे ही 'मन्यु' की अभिव्यक्ति की थी और भुजा उठाकर प्रण किया था—"**निशिचर हीन करों महि** ।" इसी प्रकार दुर्योधन-पक्ष की दुर्नीति एवं दुराग्रह के दलन के लिए भगवान कृष्ण को महाभारत रचाना पड़ा था और सुदर्शनचक्र भी घुमाना पड़ा था । तेजस्विता तथा उदारता परस्पर सम्बद्ध रहनी चाहिए । पवित्रता एवं प्रखरता, दोनों ही समन्वित रहें, यही उचित है । ब्रह्मवर्चस इसी समन्वयात्मक रीति-नीति एवं गतिविधि की प्रशिक्षण-प्रक्रिया को कहते हैं । इसे आगम एवं निगम, वेद-पक्ष एवं तन्त्र-पक्ष दोनों का समन्वय कहा समझा जाना चाहिए ।

मानवीय चेतना में दैवी एवं आसुरी-दोनों ही तत्व कार्यरत रहते हैं । दैवी अंश को सद्भावना और सज्जनता का खाद-पानी देकर बढ़ाया जाता है । आसुरी अंश का सन्तुलन करने की आवश्यकता पड़ती है । माली पौधों को सींचता है, तो साथ ही उनकी अनावश्यक, कुरूप, टहनियों की काट-छाँट भी करता है और बगीचे में उगे हुए खरपतवार की सफाई भी करता है । किसान उपयोगी पशुओं को पालता है, साथ ही हानि पहुँचने वाले जंगली जानवरों को भगाता भी है । अपने भीतर एवं अपने समाज के भीतर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्प्रवृत्तियों, सद्भावनाओं का अभिवर्धन जितना आवश्यक है, दुष्प्रवृत्तियों का उन्मूलन, प्रायश्चित्त एवं इष्टापूर्त्ति भी उतनी ही आवश्यक है । भक्ति एवं प्रायश्चित्त—दोनों ही उपासना के अंग हैं । श्रेष्ठता को प्रोत्साहन और निकृष्टता पर प्रतिबन्ध दोनों ही आवश्यक हैं ।

द्रोणाचार्य के कन्धे पर धनुष, पीछे तरकश और हाथों में वेद देखकर किसी ने प्रश्न किया । "आचार्य प्रवर ! बाण और वेद एक साथ क्यों ? द्रोणाचार्य ने उत्तर दिया—

"अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः ।

इदं ब्रह्मं, इदं क्षात्रं, शास्त्रादपि शरादपि ॥"

अर्थात्—"आगे हैं चारों वेद तो पीछे धनुष-बाण । वेद ब्राह्मण-धर्म है तो धनुष-बाण, क्षात्र-धर्म । शास्त्र एवं शस्त्र, दोनों ही के द्वारा सदाचरण का पथ प्रशस्त किया जाता है ।" विद्या और बल; ज्ञान तथा भक्ति दोनों ही महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक हैं । यही प्राचीन आर्ष-परम्परा रही है । श्रीराम को महर्षि विश्वामित्र ने दोनों ही प्रकार का शिक्षण दिया था । श्रीकृष्ण को भी संदीपनि के आश्रम में उभयपक्षीय शिक्षा प्रदान की गई थी । प्राचीन गुरुकुल-परम्परा में यह समन्वय सर्वत्र विद्यमान था । आध्यात्म-क्षेत्र में यही परम्परा भक्ति और कर्म का समन्वय करने वाले तत्वज्ञान की थी । अर्जुन और हनुमान—दोनों ही उत्कृष्ट भक्त थे, साथ ही दोनों को सदा सक्रिय जीवन जीना पड़ा, दोनों को ही भगवान द्वारा निरन्तर कर्म की प्रेरणा एवं शिक्षा दी गई । आत्मोत्कर्ष और लोक-कल्याण की यही समन्वित व्यवस्था भारतीय आध्यात्म की आर्ष परम्परा है । ब्रह्मवर्चस उसी परम्परा को गतिशील बनाने वाली प्रक्रिया है ।

एकांगिता अपूर्ण ही नहीं, हानिकारक भी होती है । जिन दिनों भारत में उदारता, सहनशीलता और भक्ति-भाव तक ही चिन्तन को सीमा-बद्ध किया गया और अहिंसा के अतिवाद में पराक्रम को ही अनावश्यक ठहराया गया, उन दिनों तेजस्विता-प्रखरता की उपेक्षा होती चली गई और मध्य एशिया से आये, मुट्ठी भर आक्रामक इस विशाल देश को पराधीन बनाने में सफल होते चले गए । इसी प्रकार तेजस्विता का अभ्यास होने पर भी उसके साथ में विवेक का मार्ग दर्शन न होने पर एक समय, आक्रान्ताओं की कुटिल चालों के सामने तेजस्वी भारतीय योद्धा हारते चले गये । भक्ति एवं कर्म, भावना एवं तेजस्विता दोनों को समन्वित रखने वाला तत्वज्ञान ही भारतीय आध्यात्म विद्या का समग्र आधार रहा है । उसके स्थान पर एकांगिता अपनाने की भूल जब भी की गई है, तो दुर्गति का सामना करना पड़ा है । जबकि दोनों में समन्वय से सफलता और प्रगति का द्वार खुला है । गाँधीजी के सत्याग्रह में सत्य और अहिंसा का जितना समावेश था, अनीति के निर्भीक प्रतिकार का उतना ही प्रखर संकल्प एवं साहस भी था । यह समन्वय ही ब्रह्मवर्चस की साधना-प्रक्रिया का पथ है ।

प्रज्ञा और पराक्रम का युग्म ब्रह्मवर्चस की लक्ष्य-प्राप्ति में समर्थ बनता है । आध्यात्म-परम्परा में इन्हें ही ब्रह्म-विद्या एवं ब्रह्माग्नि कहा गया है । पौराणिक गाथाओं में ब्रह्माजी की दो पत्नियाँ बताई गई हैं । एक गायत्री, दूसरी सावित्री । गायत्री को ब्रह्म-विद्या और सावित्री को ब्रह्माग्नि कहा गया है । ब्रह्माग्नि का अर्थ है आन्तरिक-अग्नि, चेतना-ऊर्जा । गायत्री या ब्रह्मविद्या से शान्ति का, मोक्ष का द्वार खुलता है, सावित्री से सर्वतोमुखी समर्थता उत्पन्न होती है । दोनों ही परस्पर अविच्छिन्न हैं । सुसंस्कार और सत्सामर्थ्य दोनों ही परस्पर अन्योन्याश्रित कहे जा सकते हैं । इन दोनों का सम्मिलन ही प्रगति का पाथेय बनता है । प्रज्ञा की उदारता, पवित्रता, उत्कृष्टता से मिलने वाली उपलब्धियों को गायत्री-उपासना से प्राप्त अमृत पारस और कल्पवृक्ष कहते हैं । प्रखरता, पराक्रम और पुरुषार्थ की उपलब्धियाँ ब्रह्मास्त्र, ब्रह्मदण्ड और ब्रह्मशाप के रूप में सामने आती हैं । गायत्री और सावित्री के रूप में दोनों के सम्मिलन का प्रतिपादन किया गया है । साधना-विज्ञान की भाषा में इसे योग और तप का समन्वय कहा जाता है । योग से आत्मा को देवात्मा-परमात्मा स्तर तक विकसित होने का अवसर प्राप्त होता है । तप से शक्ति उत्पन्न होती है । सशक्तता ही प्रगति, समृद्धि और विभूति के त्रिविधि सत्परिणाम उत्पन्न करती है । साधना से मिलने वाली सिद्धियाँ शक्ति-सम्पादन का ही परिणाम हैं । योग एवं तप दोनों की समन्वित साधना-प्रक्रिया ब्रह्मवर्चस का आधार है ।

ब्रह्मज्ञान एवं ब्रह्मतेज—दोनों के समन्वय से ब्रह्मवर्चस-साधना सम्पन्न होती है । यही हमारे महान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्वजों द्वारा साधित एवं प्रतिपादित समग्र आध्यात्म है ।

योग को आस्थापक्ष की, साधना एवं तप को क्रियापक्ष की साधना समझा जा सकता है । आस्तापक्ष में चिन्तन-क्षेत्र को प्रभावित करने वाले समस्त ज्ञान-विस्तार का समावेश होता है । वेद-शास्त्र, उपनिषद् दर्शन, नीति-शास्त्र आदि के सृजन इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए हैं । मानवी-चिन्तन के परिष्कार की प्रक्रिया का महत्त्व ध्यान में रखकर ही पाठ, स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन-मनन, कथा-प्रवचन, श्रवण आदि का माहात्म्य बतलाया जाता रहा है । यह सद्ज्ञान-साधना विकृत मनोवृत्तियों से मुक्त कराती और विवेकयुक्त दूरदर्शिता का पथ प्रशस्त करती है । यही पवित्रता की प्रक्रिया है । इसलिए श्रीमद्भगवद्गीता में कहा है—**"न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।"** वेदान्त दर्शन में इसी ज्ञान-साधना का प्राधान्य है । भूमा, ऋतम्भरा, प्रज्ञा जैसे नाम उसी परिष्कृत चिन्तन को दिए गए हैं । उत्कृष्ट आदर्शवादी आस्थाओं के अनन्त विस्तार से स्वयं को जोड़ना अपने विचार-संस्थान में उनकी अनुभूति करना योग है । चित्तवृत्तियों का संशोधन ही योग कहा गया है । वह पशु-प्रवृत्तियों को देव-आस्थाओं में बदल देने वाले मानसिक उपचार का नाम है । यह साधना चिन्तन-परक होती है । परिष्कृत चिन्तन की परमोच्च अवस्था ही मुक्ति है । उस मनःस्थिति की सुखद, सन्तोषपूर्ण अनुभूति ही स्वर्गीय अनुभूति है ।

क्रिया-पक्ष की साधना तप है । तप साधन है, साध्य है—ब्रह्मतेज, व्यक्तित्व की प्रखरता, आन्तरिक शक्ति का अभ्युदय एवं विकास । इसके तीन भाग हैं—(१) आत्म-निग्रह, आत्म-नियन्त्रण, (२) प्रसुप्त शक्तियों का जागरण, (३) उन शक्तियों को परमार्थ-प्रयोजनों में लगाने का उत्साह तथा अभ्यास । पहले वर्ग को तितीक्षा प्रधान तप, दूसरे को तप, अनुष्ठान और तीसरे को तप-अनुदानों का विवेक सम्मत उदार वितरण कह सकते हैं । आत्मनिग्रह-आत्मनियन्त्रण में अस्वाद व्रत, उपवास, ब्रह्मचर्य, मौन, अपनी सेवा आप करना, सर्दी-गर्मी का ऋतु-प्रवाह सहना, सादगी, मितव्ययता, श्रमशीलता, समयबद्ध दिनचर्या आदि के द्वारा शरीर और मन की अवांछनीय आदतों को कड़ाई के साथ रोककर उन्हें दुरुस्त करना शामिल है । प्रसुप्त शक्तियों के जागरण के लिए जप-ध्यान, अनुष्ठान, पुरश्चरण, प्राणायाम, सोऽहं, खेंचरी आदि मुद्राएँ, बध, त्राटक आदि के विधि-विधान सहित तप किए जाते हैं । इनसे प्राप्त शक्तियों द्वारा लोकमंगल के कठिन मार्ग पर चलते हुए प्रचलित प्रवाह के विरुद्ध चलने पर मिलने वाले विरोध, उपहास, अपमान, प्रहार आदि कष्टों को धैर्यपूर्वक सहना तथा अतीति के विरुद्ध साहसपूर्वक संघर्षरत रहना तीसरे प्रकार का तप है । अपनी सुविधाओं में कमी करने पर ही सेवा-सहायता सामूहिक सत्कर्मों में सहयोग तथा लोक-कल्याण के लिए अपने समय, श्रम एवं धन के एक अंश का नियमित विनियोग सम्भव है । यह तीसरे वर्ग की तप-साधना है । तीनों ही प्रकार के तप से प्रसुप्त से निवृत्ति होती है और अन्तःऊर्जा प्रदीप्त होती है । मानवी-सत्ता में सन्निहित शक्तियाँ तप-साधना की ऊष्मा से जाग्रत होती हैं ।

मनोनिग्रह एवं इन्द्रिय-निग्रह से शक्ति का क्षरण रुकता है । खुले मुँह की पतीली में खौलता हुआ पानी भाप बनकर उड़ता रहता है । पर जब उसी को कड़े ढक्कन से बन्द कर दिया जाय, तो वह संचित वाष्प-शक्ति अति प्रबल हो जाती है, पर साथ ही उस शक्ति का सदुपयोग जानना आवश्यक है । भाप से चलने वाले रेलइंजन, वाष्प-शक्ति के उसी सदुपयोग का उदाहरण हैं । यदि वह शक्ति यों ही संचित भर की जाती रहे, तो वह भयंकर विस्फोट द्वारा अपने लिए मार्ग बनाती है, स्टोव और प्रेशर कुकर फटने से होने वाली दुर्घटनाएँ इसका उदाहरण हैं । इसीलिए मनोनिग्रह तप से उत्पन्न शक्ति का सदुपयोग करना भी साधना का ही अंग है । शरीर-व्यापी ओजस् को निम्नगामी अधःपतन से रोककर ऊर्ध्वगामी बनाना और उसका उपयोग आत्म-चेतना की गतिशीलता में करना ब्रह्मचर्य साधना है ।

परम्परागत साधना विज्ञान में इसी विद्या को यम-नियम आदि के रूप में दर्शाया गया है । सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह आदि मनोनिग्रह एवं इन्द्रिय निग्रह के विभिन्न पक्ष हैं ।

धर्मग्रन्थों में उनका माहात्म्य-सहित विस्तृत वर्णन मिलता है । तपाने से वस्तुएँ गरम होती हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनका संशोधन होता है, दृढ़ता आती है तथा स्तर बढ़ता है । इसी प्रकार व्यक्ति भी तपसाधना से परिष्कृत होता और सुदृढ़ बनता है ।

योग एवं तप, पवित्रता तथा प्रखरता, आस्था और क्रिया, ब्रह्म-विद्या तथा ब्रह्मतेज की उभयपक्षीय ब्रह्मवर्चस-साधना, गायत्री-सावित्री की समन्वित साधना का ही नाम है । दोनों का समन्वित स्वरूप ही गायत्री-तत्व का यथार्थ स्वरूप है ।

गायत्री मन्त्र में इन दोनों ही पक्षों का निर्देश है । 'धियः' शब्द ब्रह्म-विद्या स्वरूप का संकेत करता है और 'भर्गः' में तेजस् का प्रतिपादन है । शास्त्रों में गायत्री की ज्ञान-गरिमा के साथ-साथ उसके तेज-पक्ष का भी उल्लेख है । देवी भागवत में कहा है—

"ब्रह्मत्वं चेदाप्तु कामोऽस्युपास्त्र,
गायत्रीं चेल्लोक कामोऽन्यदेवम् ।
बुद्धेः साक्षी बुद्धिगम्यो ज्यादौ,
गायत्र्यर्थः सोऽनद्यो वेदसारः ।
तद् ब्रह्मैव ब्रह्मतोपासकस्याप्येवं,
मन्त्रः कोऽस्ति तन्त्रे पुराणे ।"

अर्थात्—ब्रह्मतेज प्राप्त करने की इच्छा हो तो वेदमाता गायत्री की ही उपासना करनी चाहिए । अन्य कामनाएँ हों तो भले ही अन्य देवताओं को पूजो । साक्षी बुद्धि, आदि बुद्धि, ऋतम्भरा प्रज्ञा का उदय इसी से यानी गायत्री-उपासना से होता है । यह वेदों का सार है । पापों से निवृत्ति और पवित्रता की सिद्धि इसी से मिलती है । ब्रह्मतत्व की उपासना करने वाले के लिए यह साक्षात् ब्रह्म है । यही सर्वोपरि मन्त्र है। ब्रह्मवर्चस—

शतपथ ब्राह्मण (१।८।२।१५) में कहा है—

"यो वा अत्राग्निर्गायत्री स निदानेन ।"

अर्थात्—गायत्री को ही निदान यानी ब्रह्मज्ञान तथा अग्नि यानी ब्रह्मशक्ति का रूप समझना चाहिए ।

छान्दोग्य उपनिषद् (३।१२।१) में गायत्री को ही सर्वव्यापी शक्ति कहा गया है—

"गायत्री वा इदं सर्वंभूतं यदिदंकिञ्च ।"

गायत्री के २४ अक्षरों में सन्निहित २४ शक्तियों को तपसाधना द्वारा उपार्जित किया जाता है । शास्त्र में ये शक्तियाँ इस प्रकार वर्णित हैं—

"ओजशशक्ति बलप्रभाव सुषमा तेजस्सुवीर्यप्रभा ।
ज्ञानैश्वर्य हस्सहो जययशस्थैर्य प्रतिष्ठाश्रियः ॥
विज्ञान प्रतिभामति स्मृतिधृति प्रज्ञाप्रथस्सुज्ज्वलाः ।
वर्णौस्त्वन्मानुगैस्त्रिरषभिरहो बर्ध्यन्तेएवात्रमे ॥"

अर्थात्—हे माता, ओज, शक्ति, बल, प्रभाव, कान्ति, तेज, पराक्रम, प्रकाश, ज्ञान, ऐश्वर्य, विकास, सहन-शक्ति, जय, यश, स्थैर्य, प्रतिष्ठा, लक्ष्मी, विज्ञान, प्रतिभा, मति, स्मृति, धृति, प्रज्ञा एवं ख्याति—ये चौबीस गुण जो तुम्हारे चौबीस वर्णों में विद्यमान हैं, मुझमें, तुम्हारी साधना से अभिवृद्धि पा रहे हैं ।

इन विवेचनों द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि ज्ञान और तेज, पवित्रता एवं प्रखरता, योग तथा तप दोनों पक्षों की समन्वित साधना ही गायत्री की समग्र साधना है । ब्रह्मवर्चस में 'ब्रह्म' और 'वर्चस' शब्दों के द्वारा अभिव्यंजित ये दोनों ही पक्ष विद्यमान हैं । ब्रह्मविद्या के भी दो उप पक्ष हैं—ब्रह्मज्ञान एवं भक्ति दोनों को मिलाकर आस्था पक्ष बनता है । सद्विचार तथा सद्भाव—दोनों का युग्म ही सत्संस्कार का स्वरूप निर्धारित करता है । इसलिए ब्रह्मवर्चस की साधना में कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्तियोग—तीनों का ही समन्वय रहता है । उत्कृष्ट वातावरण में की गई ये समन्वित साधनाएँ सुनिश्चित सत्परिणाम उत्पन्न करती हैं । ब्रह्मवर्चस साधना में ही समग्र एवं उच्चस्तरीय साधना का विधि-विधान एवं क्रम बनाया जाता है । समय-समय पर साधना सम्बन्धी समुचित मार्गदर्शन की व्यवस्था भी बनायी जाती है ।

साधना का शुभारम्भ

हमें शरीर को प्राप्त होने वाले सुख साधनों का निरन्तर ध्यान रहता है, उन्हीं प्रयत्नों में सारा समय लगता है, पर जिस आत्मा का यह शरीर एक तुच्छ-सा वाहन मात्र है, उसके कल्याण एवं सुख का तनिक भी ध्यान नहीं रखा जाता, यह कैसे दुःख और आश्चर्य की बात है । पौष्टिक भोजन में कंजूसी के कारण शरीर दुबला और पीला पड़कर मरणासन्न स्थित को पहुँचता जाय और कपड़े जेबरों पर प्रचुर धन खर्च किया जाय तो उसे कोई बुद्धिमानी का कार्य न माना जायेगा । हमारी गति-विधि आज ऐसी ही अबुद्धि-मत्तापूर्ण बनी हुई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आज हमारी चतुरता इस बात में लगी हुई है कि कितना धन, मान और विलास उपलब्ध कर लिया जाय, पर चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करके लाखों करोड़ों वर्ष बाद मनुष्य शरीर प्राप्त करने का जो अलभ्य अवसर प्राप्त हुआ है उसका सदुपयोग कैसे किया जाय इस प्रश्न को सुलझाने में सारी चतुरता धूमिल पड़ जाती है ।

बुद्धिमत्ता की कसौटी

हम बुद्धिमान हैं या मूर्ख इसका पता उस दिन लगता है जब जीव इस शरीर को छोड़कर आकाश में उड़ रहा होता है । उसे आगे फिर चौरासी लाख योनियों के दुःखदायक शरीर सामने उपस्थित दीखते हैं जिनमें उसे करोड़ों वर्ष पड़ा रहना पड़ेगा, तब कहीं फिर मनुष्य जन्म का वह अवसर आयेगा जो अभी तुच्छ बातों में गंवा दिया गया । जीव को अपनी इस मूर्खता पर भारी पश्चात्ताप होता है कि यह सुरदुर्लभ मानव-जीवन व्यर्थ ही नहीं गंवा दिया गया, वरन् शरीर के मोह में पड़कर अनेक दुष्कर्म भी कर लिए जिनके लिए नारकीय यन्त्रणाएँ चिरकाल तक सहनी पड़ेंगी । पाप कर्मों के सुख क्षणिक थे पर उनका दण्ड तो दीर्घकाल तक सहना पड़ेगा ।

पश्चात्ताप की अग्नि में इस प्रकार जलने से पूर्व ही यदि थोड़ी समझदारी उत्पन्न हो जाय तो उसे एक सौभाग्य ही समझना चाहिए । आध्यात्मिक प्रवृत्तियों में मन का लगने लगना वस्तुतः एक महान सौभाग्य ही है जिसके लिए आज भले ही उपहास सहना पड़े पर अन्ततः उसका परिणाम श्रेयस्कर ही होता है । शरीर सुख की मृगतृष्णा में सदा के लिए भविष्य को अन्धकारमय क्यों बनाया जाय ।

मृगतृष्णा में भटकना

लोग शौक, मौज चाहते हैं पर चाहने पर भी कितनों को वह मिल पाती है । अधिकांश को तो उस मृगतृष्णा के पीछे भटकने पर भी निराश और असफल ही रहना पड़ता है । फिर यदि इस छोटी-सी जिन्दगी में कुछ दिन वासना और तृष्णा की अग्नि को विलास और संग्रह के ईंधन से शान्त करने में कुछ देर सफलता मिली भी तो उससे बनता भी क्या है ? बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता की कसौटी तो एक ही है कि हम अपने स्थिर स्वार्थ को समझें, शाश्वत शान्ति के लिए प्रयत्न करें और आत्मकल्याण की साधना में श्रद्धापूर्वक लग जायँ । इस मार्ग पर चलते हुए लोक और परलोक दोनों बनते हैं । पारलौकिक शान्ति तो मिलती ही है, लौकिक सुखों का अभाव भी नहीं रहता ।

आत्मसुधार, आत्मनिर्माण और आत्मविकास का मार्ग-दर्शन 'अखण्ड-ज्योति' अपने जीवन के गत २३ वर्षों से सतत करती रही है । सद्विचारों को अपनाने, सद्भावनाओं को विकसित करने और उपासनात्मक साधना का अवलम्बन करने का अपना एक सुनिश्चित मिशन एक लम्बे समय से चल रहा है । प्रसन्नता की बात है कि परिवार के अगणित सदस्यों ने इससे समुचित लाभ भी उठाया है ।

ज्वलन्त अंगार जब ठण्डा होने लगता है तो उसका ऊपरी पर्त भस्म बनकर आवरण जैसा चढ़ जाता है । जब इस आवरण को स्पर्श करते हैं तो अंगार न तो गरम मालूम पड़ता है और न प्रकाशवान । ऐसी स्थिति में यह पहचानना भी कठिन होता है कि इसके भीतर अभी अग्नि का अंश भी है या नहीं । पर जब उस समय आवरण को हटा दिया जाता है तो भीतर छिपी हुई अग्नि पुनः प्रकट हो जाती है और उसकी गर्मी तथा रोशनी पुनः पूर्ववत् दिखाई पड़ने लगती है । यही बात हमारी आत्मिक स्थिति पर लागू होती है । परमात्मा का अंश होने के कारण आत्मा में वे सब शक्तियाँ और विशेषताएँ बीज रूप से मौजूद रहती हैं जो परमात्मा में भरी होती हैं । किन्तु मल-विक्षेपों का आवरण जब उस पर चढ़ जाते हैं तो उसकी स्थिति भी भस्म से ढके हुए अंगार जैसी बन जाती है । मायाबद्ध जीव की स्थिति बड़ी दीन-हीन और दयनीय दिखाई पड़ती है । दुःख दारिद्र के, रोग-शोक के अभाव, अज्ञान, व्यथा, वेदना के कष्ट क्लेशों से ऐसा ग्रसित रहता है कि यह विश्वास करना कठिन हो जाता है कि ऐसी दयनीय स्थिति में पड़ा हुआ मानव प्राणी भला सत् चित और आनन्द स्वरूप परमात्मा का अंश भी हो सकता है । ठण्डी भस्म का आवरण छूकर और उसकी कालिमा देख कर यह मानना कठिन होता है कि इसके भीतर ज्वलन्त अग्नि पुञ्ज भी छिपा होगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मा की निर्विकार स्थिति

आत्मा अपनी स्वाभाविक स्थिति में हो, उसके आवरण हट जायँ तो उसकी स्थिति इतनी उत्कृष्ट होती है कि हर क्षण अनन्त आनन्द का रसास्वादन करने का ही सौभाग्य उसे उपलब्ध रहता है । इसी स्थिति को प्राप्त करना आध्यात्मिक साधना का लक्ष्य है । इस मार्ग को अवरुद्ध करने वाले वे मल-विक्षेप और आवरण ही हैं जिनके कारण महान सम्भावनाएँ साथ लेकर आया हुआ आत्मा इन तुच्छ परिस्थितियों में पड़े रहने के लिए विवश होता है । मानव शरीर ही इन आवरणों की सफाई कर लेने का एक मात्र अवसर है । यदि यह ऐसे ही बर्बाद होता गया या कुविचारों और कुकर्मों में मस्त रहकर उन आवरणों को और भी बढ़ा लिया गया तो फिर चौरासी लाख योनियों की लम्बी अवधि तक उसी मार में दबा पड़ा रहना पड़ता है ।

मल और आवरणों का निराकरण

इन आवरणों की सफाई में दुहरा लाभ है जहाँ मलीनता हटने से, आत्मा पर चढ़ा हुआ भार हल्का होते चलने से अन्तःकरण में शान्ति और प्रफुल्लता बढ़ती है वहाँ इन आवरण द्वारों के खुलने पर विभूतियों का एक विशिष्ट भण्डागार उपलब्ध होता चलता है । पाँच आवरणों को ही पाँच कोश कहते हैं । इन द्वारों के खोलने की वैज्ञानिक विधि का नाम ही पंचकोशी गायत्री साधना अथवा पंचमुखी गायत्री उपासना है । उच्च कक्षा में प्रवेश करने वाले साधकों के लिए इसी आराधना का प्रयोग करना पड़ता है । प्रथम स्तरीय साधना का अधिकांश कार्यक्रम स्थूल वस्तुओं या स्थूल विधि-विधानों पर निर्भर है । माला, आसन, पंचपात्र, धूप, दीप, नैवद्य, पुष्प, अक्षत, चित्र, मूर्ति, हवन सामिग्री, मंत्रोच्चारण, व्रत, उपवास, पाठ, कीर्तन, अनुष्ठान, ब्रह्मभोज, तर्पण, मार्जन आदि यह सभी कुछ स्थूल आधार हैं । इसे साकार उपासना कह सकते हैं । प्रथम कक्षा के लिए यह सब आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है । इस आधार के बिना ऊपर की कक्षा में प्रवेश कर सकना उसी प्रकार सम्भव नहीं जिस प्रकार सीढ़ी या जीने की सहायता के बिना छलांग मार कर छत पर चढ़ जाना कठिन होता है । स्कूल की पढ़ाई की उपेक्षा करके सीधे कॉलेज में प्रवेश नहीं मिलता, उसी प्रकार प्रथम स्तरीय स्थूल विधि व्यवस्था के आधार पर बनी हुई साकार उपासना के बिना उच्चस्तरीय निराकार साधना से सफलता प्राप्त कर सकना किसी के लिए सम्भव नहीं हो सकता ।

भावनात्मक साधना स्तर

उच्चस्तरीय गायत्री उपासना में वस्तुओं, उपकरणों और विधानों का तारतम्य घटने लगता है और ध्यान, भावना एवं निष्ठा में तीव्रगति से अभिवृद्धि होने लगती है । यह उपासना बिना किसी वस्तु के भी हो सकती है । एकान्त निर्जन वनों में रहकर घोर तपस्या करने वाले योगियों के लिए अन्न और वस्त्र तक उपलब्ध नहीं होता तो धूप दीप की, हवन, ब्रह्मभोज की व्यवस्था कहाँ से बनेगी ? सच बात यह है कि तब उन्हें इनमें से किसी भी उपकरण की आवश्यकता नहीं रह जाती, वे आत्मा की अग्नि में प्राण को हवि बनाकर निरन्तर अखण्ड यज्ञ करते रहते हैं । गायत्री चालीसा में "हंसारूढ़ सितम्बर धारी" पद में जिस हंस वाहनी और श्वेत वस्त्र धारणी गायत्री माता का उल्लेख हुआ है उसका स्वरूप उच्चस्तरीय साधना में कुछ और ही हो जाता है ।

श्वास, प्रश्वास क्रिया के साथ जो 'सोऽहम्' की ध्वनि होती उसे ही हंस योग कहते हैं । यह हंस अर्थात् सोऽहम् तत्व ही गायत्री का वाहन बन जाता । माला का स्थान यह श्वास प्रक्रिया ले लेती है । इड़ा पिंगला, चन्द्र, सूर्य, नाड़ियों का आरोहरण, अवरोहण माला फेरने का काम करती है । ५४ ग्रन्थियाँ आरोहण की और ५४ अवरोहण की मिलकर १०८ दाने की यह सूक्ष्म चक्र सारिणी घूमने लगती है । सुषुम्ना को सुमेरु कहते हैं । माला में एक मध्य बिन्दु बड़ा दाना रहता है जिसे सुमेरु के नाम से हम सम्बोधन करते हैं । आध्यात्मिक माला से सुषुम्ना नाड़ी का वही स्वरूप और स्थान बन जाता है । यह सोहऽम् संस्थान उच्च स्तरीय साधना में गायत्री माता का हंस वाहन बन जाता है । इस माला पर वे बिहार और विचरण करने लगती है । इस वीणा में उनकी झंकार उठने लगती है और इसी स्थल से नीर-क्षीर विवेक का हंस गुण साधक की अन्तरात्मा में उत्पन्न होने लगता है ।

माता का सूक्ष्म स्वरूप

श्वेत वस्त्र धारिणी गायत्री माता का हम पूजन करते हैं । 'सूर्य मण्डल मध्यस्था' की छवि बनाकर उसे सूर्य प्रकाश के बीच बैठी हुई प्रतिमा बनाकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी प्रतिष्ठा करते हैं । पर उच्च स्तरीय साधना में माता का पूरा आवरण इस शुभ्र ज्योति के स्वरूप में ही परिलक्षित होता है । प्रकाशपुञ्ज के रूप में ही गायत्री माता का दर्शन ध्यान और साक्षात्कार हो जाता है । जिस प्रकार प्रथम स्तर के साधकों को हंसारूढ़ गायत्री माता का नारी देह में दर्शन, साक्षात्कार जागृति, स्वप्न और सुषुप्ति अवस्थाओं में होता रहता है, उसी प्रकार उच्च भूमिका के साधक को प्रकाश की छोटी-छोटी चिनगारियों के रूप में, किरणों के रूप में और तेजस्वी ज्योति पिण्ड के रूप में दर्शन एवं साक्षात्कार होता है । स्तर बदलने के साथ साधनों एवं उपकरणों की शृंखला भी बदल जाती है । स्कूल की प्रारम्भिक कक्षाओं में लकड़ी की तख्ती पर खड़िया और मोटी कलम से बड़े-बड़े अक्षर लिखने का अभ्यास करना पड़ता है पर आगे चलकर कापी और फाउन्टेनपेन के माध्यम से लिखने की क्रिया सम्पन्न होती है ।

साधना क्षेत्र में भी ऐसे परिवर्तन का होना कोई आश्चर्य, विरोध या मतभेद की बात नहीं वरन् एक स्वाभाविक विकासक्रम है । भारतीय धर्म में साकार और निराकार की जो निष्ठा परम्पराएँ चली आ रही हैं इनमें न तो कोई विरोध है और न विभ्रम । दोनों ही एक-दूसरे की पूरक हैं । अपने-अपने स्थान पर दोनों ही उपयुक्त हैं और आवश्यक भी । पंचकोशी गायत्री उपासना का विधानक्रम निराकार उपासना जैसा ही है । इसीलिए पंचमुखी गायत्री को अलंकारिक रूप से चित्रित तो करते हैं, पर पूजा के लिए एक मुखी गायत्री की तस्वीरें तथा मूर्तियाँ ही प्रयुक्त होती हैं । इस उद्देश्य के लिए पंच मुखी गायत्री का प्रयोग नहीं होता । इस सम्बन्ध में "गायत्री की पंचकोषी साधना व उपलब्धियाँ" नामक वांगमय के तेरहवें खण्ड में विस्तार पूर्वक चर्चा की जा चुकी है और बताया जा चुका है कि आत्मा पर चढ़े हुए पाँच आवरण ही गायत्री के पाँच मुख हैं ।

जैसे शरीर पर बनियान, कुर्ता, जाकिट, कोट और ओवरकोट एक के ऊपर एक पहन लेते हैं, वैसे ही आत्मा भी पाँच आवरण धारण किए हुए हैं, जिन्हें (१) अन्नमय कोश (२) मनोमय कोश (३) प्राणमय कोश (४) विज्ञानमय कोश (५) आनन्दमय कोश कहते हैं । इन कोशों में छिपी हुई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण शक्तियों को विकसित करना और उन आवरणों का परिमार्जन करके आत्म-शान्ति का रसास्वादन करना ही योग साधना का प्रधान उद्देश्य है । प्रथम स्तरीय उपासना में लौकिक लाभों का मार्ग प्रशस्त होता है । (१) सद्ज्ञान (२) स्वास्थ्य सुधार (३) उत्साह एवं स्फूर्ति (४) सहयोग एवं मित्रता की अभिवृद्धि (५) अभावों की पूर्ति, यह पाँच लाभ प्रथम श्रेणी के निष्ठावान् साधक को मिलते हैं । ऊँची श्रेणी में यह लाभ और भी उच्चकोटि हो जाते हैं । (१) साहस एवं निर्भीकता (२) विवेक एवं दूरदर्शिता (३) पुरुषार्थ एवं तृप्ति यह पाँच सिद्धियाँ पंचकोशी साधना की हैं । जैसे नर-नारी का जोड़ा होता है वैसे ही दो-दो सद्गुणों का यह जोड़ा दस की संख्या में हो जाता है । इन्हें पंचमुखी गायत्री की दस भुजाएँ अथवा दस सिद्धियाँ कह सकते हैं ।

सद्गुण और श्रेष्ठ विभूतियाँ

गुणों की अभिवृद्धि पर सम्पदाओं और विभूतियों की उत्पत्ति एवं अभिवृद्धि निर्भर रहती है । जिस प्रकार बिना जड़ का पौधा देर तक खड़ा नहीं रह सकता, उसी प्रकार योग्यता और प्रतिभा न होने पर अनायास कोई सम्पदा मिल भी जाय तो देर तक ठहर नहीं पाती । जड़ मजबूत होने पर ऊपर की टहनी कट जाने पर भी फिर उसकी शाखाएँ फूट आती हैं । उसी प्रकार यदि सद्गुणों की जड़ मनोभूमि में मजबूती से जमी हुई हो तो किन्हीं आकस्मिक कारणों से दरिद्रता एवं विपत्ति सामने आ जाने पर भी वे ठहर नहीं पातीं और कोई नई सुविधा उत्पन्न होकर उस अभाव की पूर्ति कर देती है । गायत्री उपासना से प्रत्यक्ष तो किसी को छप्पर फाड़कर सम्पदा नहीं मिलती, पर साधक के अन्दर के तत्व विकसित हो जाते हैं जिनके साथ अनेकों प्रकार की सुख-सम्पदाएँ जुड़ी रहती हैं । वर्षा होते ही हरियाली उग जाती है और कीट-पतंगों की अजस्र उत्पत्ति होने लगती है । मानवोचित सद्गुणों का विकास होने के साथ-साथ वे मंगलमयी सुख-सुविधाएँ, समृद्धियाँ और विभूतियाँ सामने आ जाती हैं जिनके लिए आमतौर से लोग तरसते रहते हैं और जिनकी उपलब्धि को कोई दैवी वरदान या सिद्धि चमत्कार माना जाता है ।

चमत्कार को नमस्कार

मोटेतौर से चमत्कार उन बातों को माना जाता है जो मानव शरीर की सीमा और सामर्थ्य से बाहर की है । हवा में उड़ना, पानी पर चलना, अदृश्य हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाना, रूप बदल लेना आदि क्रियाओं को किसी समय सिद्धियाँ कहा जाता था । पर अब विज्ञान की उन्नति के कारण यह बातें अमुक मशीनों की सहायता से सस्ती और सुलभ हो गईं, इसलिए इन योग्यताओं के प्राप्त कर लेने पर भी कोई विशेष प्रकार की सिद्धि नहीं होती । बाजीगरी के अनेकों अचम्भे में डालने वाले खेल जादूगर दिखाते फिरतें हैं । मैस्मरेजम और हिप्नोटिज्म के भी मनोरंजक तमाशे होते देखे गये हैं । कौतूहल उत्पन्न करके अचम्भे में डालने वाली बातें इस विज्ञान की उन्नति के युग जब कि सौर मण्डल की खोज के लिए मानव संचलित यन्त्र भेजे जा रहे हैं—अब महत्त्व नहीं रखतीं ।

एक ही हाइड्रोजन बम से जब करोड़ों मनुष्यों को पलक मारते नष्ट कर डालना सम्भव हो गया है तो मारण, मोहन, उच्चाटन आदि के अभिचार क्या महत्त्व रखते हैं । यह प्रयोजन तो नशीली चीजों से या मामूली हथियारों से भी पूरे हो सकते हैं । साधना, उपासना के द्वारा इस प्रकार के चमत्कारों की आशा से श्रम करना बाल बुद्धि वाले ओछे स्तर के लोगों के लिए ही सम्भव है । वेशक अनेकों अचम्भे में डालने वाले काम कर सकना तपस्वी साधकों के लिए सम्भव है, पर उनकी तुच्छता को समझते हुए इन पंक्तियों में उनकी उपेक्षा ही की जा रही है । उनका कोई वर्णन और विवेचन करने की हमारी इच्छा आकांक्षा इसलिए नहीं है कि उससे साधक की अभिरुचि उच्चकोटि के लाभ उठाने की अपेक्षा इन बाल विनोदों के स्तर के अभिमुख हो सकती है, जिसका परिणाम शक्ति की बर्बादी करके सस्ती वाहवाही पाने के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं होता ।

आत्मबल का सर्वोपरि लाभ

गायत्री उपासना की उच्च भूमिका में प्रवेश करने का सबसे बड़ा लाभ आत्मबल की वृद्धि है । धनबल, विद्याबल, बुद्धिबल, शस्त्रबल, संघबल का चमत्कार हम रोज ही अपने चारों ओर देखते रहते हैं । आत्मबल का अनुभव हमें नहीं है क्योंकि उस बल के बलवान् लोग आस-पास दिखाई नहीं पड़ते । पर जब कभी भी ऐसे आत्मबल सम्पन्न योद्धा कहीं दृष्टिगोचर होते हैं तो उन की महत्ता संसार के समस्त भौतिक बल सम्पन्न लोगों से कहीं अधिक होती है । महापुरुष, अवतारी देवमानवों आदि में उन्हीं की गणना होती है । जमाने को बदल देने की, आत्म-कल्याण की, दूसरों का सच्चा हितसाधन कर सकने की अपार क्षमता उनमें होती है । इसी को सच्ची सिद्धि कहते हैं । उच्चस्तरीय साधक दिन-दिन महानता की ओर तीव्रगति से अग्रसर होने लगता है ।

उपासना और साधना अन्योन्याश्रित

उपासना और साधना का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है बीज की महिमा और महत्ता कितनी ही बड़ी क्यों न हो, उसका उगना और फलना उपजाऊ भूमि पर ही निर्भर है । उपासना पूजा उपचार को कह सकते हैं और साधना परिष्कृत जीवन चर्या को । यह तथ्य हजार बार समझा और लाख बार समझाया जाना चाहिए कि मात्र उपासनात्मक कर्मकाण्डों के सहारे कोई महत्त्वपूर्ण उपलब्धि किसी को भी नहीं मिल सकती । देवता वहीं आकर्षित होते हैं । जहाँ उन्हें देवत्व दिखाई देता है । भौंरे फूल पर मडराते हैं और मधुमक्खियों को पराग चाहिए । देवता को भौंरे के सदृश और देवियों को मधुमक्खियों जैसे स्वभाव की माना जा सकता है । उनका निवास विश्राम अनुग्रह वरदान अनुकूल परिस्थितियों में ही सम्भव होता है । दैवी अनुकम्पा और सहायता जिन्हें भी चाहिए उन्हें उपासनात्मक कर्मकाण्ड तो करने ही पड़ते हैं । पर साथ ही इस अनिवार्यता को भी ध्यान में रखना पड़ता है कि जीवन साधना के बिना आध्यात्म क्षेत्र की चमत्कारी सफलताएँ सम्भव नहीं हो सकतीं ।

सृष्टि के आदि काल के लेकर अद्यावधि के भक्ति इतिहास पर दृष्टिपात करने से यह तथ्य भली प्रकार उजागर होता है कि योगाभ्यास, तप साधन, भक्ति, अनुदान, पूजा-अर्चना जैसे उपचारों का जो महात्म्य बताया गया है वह तभी यथार्थ बनता है जब साधक का दृष्टिकोण और क्रिया-कलाप उच्चस्तरीय हो । घटिया चिन्तन और चरित्र के रहते, वह पृष्ठभूमि बनती ही नहीं जिस पर दैवी अनुकम्पा उतरती है । रेल पटरी पर ही चलती है । वायुयान विनिर्मित अड्डे पर ही

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उतरते हैं । दैवी वरदानों का अवतरण उत्कृष्ट व्यक्तित्वों को छोड़कर अन्य किसी पर हो नहीं सकता ।

जादू और आध्यात्म का अन्तर हर साधक को भली प्रकार समझ लेना चाहिए । जादू हाथ की सफाई और बौद्धिक चतुरता के सहारे भली प्रकार दिखाया जा सकता उसमें जादूगर के स्तर का ऊँचा होना आवश्यक नहीं । कोई घटिया चरित्र का व्यक्ति भी बाजीगरी के तमाशे दिखाता रह सकता है । किन्तु पहलवानी के बारे में यह बात नहीं है, कुश्ती पछाड़ने में न हाथ की सफाई काम देती है और न दिमागी चतुरता । दंगल में विजयश्री लेकर लौटने के लिए शरीर का बलिष्ठ होना अनिवार्य है । आध्यात्म जादू नहीं है, जिसे अमुक कर्मकाण्डों के सहारे चरितार्थ करना और प्रतिपादित लाभों से लाभान्वित होना सम्भव हो सके । इसके लिए साधक का चरित्र आधारभूत तथ्य है । उसमें उपेक्षा बरतने वालों के कर्मकाण्डों को आकाश पाताल जितना महत्त्व देने वालों के पल्ले मात्र निराशा ही बँधती है । असफलता का दोष विधि-विधान को, विज्ञान प्रतिपादन को, देवता की निष्ठुरता को अथवा किसी को भी दिया जा सकता है । आत्म प्रवंचना के अन्य बहाने भी हो सकते हैं किन्तु तथ्य यथास्थान ही रहेगा । साधना की फसल कमाने के लिए उपजाऊ जमीन और खाद पानी की आवश्यकता बनी ही रहेगी । बीज का प्रबन्ध करने और बोने की विधि जानने की आवश्यकता तो है पर इतने भर से धान्य के कोठे भर लेने का स्वप्न साकार नहीं हो सकता ।

तन्त्र-मन्त्र को जिन्होंने जादूगरी समझा हो, उनकी बालबुद्धि पर हँसा ही जा सकता है, उन्हें समझना और समझाया जाना चाहिए कि इस क्षेत्र की सफलताएँ यदि इतनी ही सरल रही होतीं तो फिर साधकों को ब्राह्मण स्तर का संयम, शील, अनुशासन अपनाने और सन्त स्तर का उदार परमार्थ अपनाने के कष्ट साध्य मार्ग पर क्यों चलना पड़ता ? यदि मन्त्राराधन भर से सिद्धियों की उपलब्धि आत्मिक प्रगति सम्भव रही होती तो उस सरल से क्रिया-कलाप से थोड़ा-सा परिश्रम करके कोई भी कर्मकाण्डी देवात्मा बन गया होता और देवताओं को उँगलियों के इशारे पर नचा रहा होता । पर देखते हैं कि ऐसा कहीं कुछ नहीं है । मांत्रिकों और तान्त्रिकों के दावे प्रायः मिथ्या ही सिद्ध होते हैं । क्योंकि उनके पास उपचार भर होता है । साधक के लिए जिस उच्चस्तरीय जीवनक्रम की आवश्यकता है उसकी ओर वे ध्यान ही नहीं देते । फलतः या तो निराश होकर नास्तिक बनते हैं या फिर धूर्तता अपनाकर ढोंग बनाते और लोगों को छल-छद्म के सहारे ठगते हैं ।

कोई क्या सोचता है ? क्या चाहता है ? क्यों करता है ? इसका सुनिश्चित तथ्यों पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । देवता से कोई क्या चाहता है, इससे वस्तु स्थिति पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । सूर्य को कोई अब किसी दिशा में चलाना चाहता है इसका उसकी निर्धारित कार्य पद्धति पर कोई असर नहीं पड़ता । जिन्हें धूप और रोशनी का लाभ लेना है, उन्हें सूर्य की विधि व्यवस्था के अनुकूल अपनी तैयारी करनी होगी । देवता को अपनी इच्छा पर चलने के लिए विवश करना अशक्य है । इस निमित्त किये गये उपचार प्रायः निष्फल ही होते रहते हैं ।

सफलता उन्हें मिलती है जो देवता की प्रकृति को समझते हैं और तद्नकूल बनने का प्रयत्न करते हैं । तथ्यान्वेषितों को यह समझने में देरी नहीं लगनी चाहिए कि मनुहार और उपहार के छुटपुट प्रलोभन बालकों को छोड़कर किसी परिपक्व व्यक्ति को फुसलाने में समर्थ नहीं हो सकते तो देवता जैसी उच्चस्तरीय सत्ताएँ क्यों कर स्तोत्र पाठ सुनने और पुष्प, मेवे, नैवेद्य पाने के लालच में किसी की मनोकामनाएँ क्यों पूरी करती फिरेंगी ? पात्रता और पुरुषार्थ के अनुरूप प्रतिफल मिलने का विधान ही इस विश्व व्यवस्था में प्रचलित है और वही अदृश्य जगत में भी क्रियान्वित होता है । इस राजमार्ग को छोड़कर सरल पगडंडी ढूँढ़ने वाले झाड़ियों में उलझते और बीहड़ों में भटकते फिरे हैं ।

इस तथ्य को जितनी जल्दी समझा जा सके उतना ही उत्तम है कि उपासना की महिमा में जो कुछ कहा गया है वह ऋषियों के निजी अनुभव का सार तत्व है । उसमें मिथ्या जैसा कुछ नहीं है । किन्तु उस प्रतिपादन के पीछे एक अनिवार्य शर्त जुड़ी हुई है—जीवन साधना । परिष्कृत व्यक्तित्व । उज्ज्वल चरित्र । उत्कृष्ट चिन्तन । जो इसे कष्ट साध्य समझते हैं इसकी उपेक्षा करके मात्र कर्मकाण्डों के सहारे लम्बे-चौड़े सिद्धि वरदान पाने के इच्छुक हैं वे तथ्यान्वेषी विवेक बुद्धि का दिवालिया पन ही प्रकट करते हैं । यदि पात्रता की शर्त हट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गई और उपचारों की खाना पूरी ही सब कुछ बन गई तो समझना चाहिए कि विश्व व्यवस्था और कर्मफल जैसे तथ्यों का अन्त हो गया अब अराजकता का युग प्रारम्भ हुआ और अँधेर नगरी की नई परम्परा चल पड़ी ।

सृष्ट की परिपक्व विधि व्यवस्था को धन्यवाद है कि वह अपने स्थान पर सदा से सुदृढ़ रही है और अन्त तक स्थिर ही बनी रहेगी । बाल बुद्धि को उससे सन्तोष होता है या असन्तोष । लोग आस्तिक बनते हैं या नास्तिक । इसका उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता । सृष्टि के सुनिश्चित तथ्य अपने स्थान पर तब तक बने ही रहेंगे । जब तक कि उस पर किसी समर्थ सत्ता का अनुशासन चलेगा ।

आध्यात्म का सुनिश्चित तत्वदर्शन है । साधना एक परिपक्व विज्ञान है । उनकी पृष्ठभूमि भावुकता पर नहीं, एक सुनिश्चित विधि व्यवस्था पर रखी हुई है । पूजा उपचार बीजारोपण की तरह महत्त्वपूर्ण हैं, किन्तु उसके फलित होने में भूमि की उर्वरता और खाद पानी की व्यवस्था अनिवार्य है । उपासना कहे जाने वाले पूजा उपचार न तो अविश्वस्त हैं और न निरर्थक । उनकी गरिमा ठीक वैसी ही है जैसी कि शास्त्रों एवं आप्त पुरुषों ने बतायी है । यहाँ रहस्यमय तथ्य एक ही है कि उपासना के साथ साधना को अनिवार्य माना जाए । शरीर के साथ प्राण भी विद्यमान रहना चाहिए, उपासना के साथ साधना भी होनी चाहिए ।

उपासना-साधना के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें ध्यान में रखनी चाहिए—

(१) प्रत्येक अभ्यासी के लिए यह बहुत लाजमी है कि वह साधना पर पूर्ण श्रद्धा और विश्वास रखे । अभ्यास को बिना नागा, नित्य प्रति ठीक समय पर करते जाना चाहिए । एक दिन के लिए भी छूटने पर अभ्यासी कुछ न कुछ अपने स्थान से (जहाँ तक वह चढ़ाई कर ले गया था) नीचे खिसक आता है और लगातार कुछ दिवस न करने पर तो कोरा रह जाता है ।

(२) पूजा या अध्यात्मिक किसी कर्म के लिए पवित्रताई और शुद्धताई की भी बहुत जरूरत है । वस्त्र-स्थान-शरीर-मन सभी पवित्र होने चाहिए । पूजा का स्थान शुद्ध और शान्तिमय हो और उसको किसी दूसरे काम में नहीं लाना चाहिए । अभ्यास या तो निर्जन जंगल में जाके करें या घर में एक कोठरी इसी काम के लिए रख छोड़े, उसमें अधिक सजावट भी न करें ।

(३) पूजा अकेले भी की जा सकती है पर सामूहिक रूप से करने से उसका फल शीघ्र ही प्राप्त होता है । ऐसे स्थानों पर देवगण आ जाते हैं और सबको सहायता पहुँचाते हैं । कुछ लोगों का तो यहाँ तक ख्याल है कि मनुष्य की भक्ति की खबर यही देवगण ईश्वर तक पहुँचाते हैं और ईश्वर का आशीर्वाद इस भूलोक में लाकर देते हैं । पुराणों में लिखी हुई नारदादि ऋषियों की गाथाएँ इसी बात की सूचक हैं । ईसाई और मुसलमान भी इस सिद्धान्त को मानते हैं । कुरान में लिखा है कि जहाँ सब लोग मिल के इवादत (भजन) करते हैं फरिश्ते (देवता) वहाँ अपनी रहमत बरसाते हैं और खुदा से जाके अर्ज करते हैं कि फलां गिरोह (समूह) मुहब्बत (प्रेम) के साथ आपको याद कर रहा है ।

(४) इस सामूहिक पूजा का नाम ही 'सत्संग' है । सत्संग की महिमा सबने गाई है उसका कारण उपर्युक्त कारण ही है ।

(५) आज कल कुछ दिन से लोगों के अन्दर यह ख्याल बहुत मजबूत हो गया है कि सन्ध्या पूजन-भजन इत्यादि व्यक्तिगत अर्थात् अलग-अलग एकान्त ही में करना चाहिए परन्तु अनुभव ने यह बताया है कि जितने अधिक मनुष्य सामूहिक रूप से किसी साधन या भजन को करें तो उसका फल एक व्यक्ति की क्रिया से दुगना-चौगुना नहीं बल्कि बहुत अधिक होगा । कई लोगों के एक साथ बैठने से एक की त्रुटि दूसरे से पूरी होती रहती है और यह पूजकों का समूह ईश्वरीय आशीर्वाद उतारने के लिए संगठित बलवान यन्त्र बन जाता है ।

(६) पूजा या भजन के समय श्रद्धा, उच्च भावना और दृढ़ निश्चय होना बहुत लाजिमी है । भाव का ही फल मिलता है । जहाँ भाव नहीं वहाँ भावना नहीं ।

(७) सत्संग के समय नग्न-खुले-उघारे नहीं बैठना चाहिए, पाँव पसार के या टेढ़े-मेढ़े भी नहीं बैठना चाहिए । जहाँ तक हो सरकिल बना के बैठना उचित पड़ता है, ताकि प्रवाहित विद्युतधारा का असर सब पर एक समान पहुँचे और सब मिलके अनेक से एक बन जायें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(८) कई लोग आशा और मनोरथ लेके भजन में बैठते हैं इससे पूजा या भजन की शक्ति उसी ओर चली जाती है और साधक मुख्य वस्तु को नहीं प्राप्त हो सकता ।

(९) जिस समय मनुष्य विधि सहित साधन में जो पूर्ण और अनुभवी गुरू द्वारा उसे मालूम हुआ हो लगता है तो एक दम उसका सम्बन्ध उस आदि सूर्य जगदीश्वर से हो जाता है और उसकी ओर से तुरन्त ही एक बहुत मोटी किरण प्रकाश की आन कर भजन करने वाले के ऊपर गिरने लगती है और उसका प्रकाश उसके हृदय, मस्तिष्क इत्यादि रोम-रोम में फैल जाता है ।

(१०) अनुभवी पुरुषों ने ऐसी स्थूल किरण का प्रकाश श्वेत सुनहरी वर्ण लिए हुए बताया है पर किसी-किसी अभ्यासी को दूसरे रंगों में भासती दिखाई देती है यह किरन चाहे दिन हो चाहे रात्रि हो हर समय मिल सकती है और अगर हम किवाड़ बन्द करके अन्दर बैठे हों तो वहाँ भी दीवार में घुस के वहाँ पहुँच जाती है ।

(११) लोगों को तरह-तरह के रंग-बिरंगें प्रकाश क्यों दिखाई देते हैं ? इसका कारण है प्रथम यह श्वेत किरण अन्तरात्मा में प्रवेश करती है फिर वहाँ टकराके बाहर आती है और हमारे अन्तःकरण से पास होती है । बस उसी समय उसमें अनेक रंग भासने लगते हैं । हमारे अन्दर जिस तत्व के परमाणु अधिक होंगे वही रंग स्पष्ट होगा । जैसे त्रिकोण शीशे के टुकड़े में सूर्य की किरण अनेक रंगों वाली हो जाती है ।

(१२) साइंस यह बतलाती है कि जब प्रकाश किसी बिन्दु से निकल के आगे बढ़ता है तो वह गोल होता जाता है और अर्द्ध गोलाकार शक्ल में वह ठहर जाता है परन्तु यहाँ उसका उल्टा होता है जो लोग साधन या भजन करते हैं उनमें से तेज पुञ्ज जिसको अँग्रेजी में औरा (aura) कहते हैं—निकल कर बिंदु की शक्ल अखत्यार कर लेता है और यह बिन्दु चाहे किसी रंगत के हों साधक के आगे ही चला करते हैं पीछे की ओर नहीं जाते । आगे बढ़ के यह सब, बिन्दु आपस में मिलते जाते हैं और ठोस किरण के आकार में आते-जाते हैं । फिर उन सबका अति तेजोमयी 'प्रकाश बिन्दु' बन जाता है ।

(१३) यह बिन्दु बिल्कुल जड़ ही नहीं होते उनमें चेतनता होती है । इसका सुबूत यह है कि यदि कोई चैतन्य शरीर मनुष्य या दूसरी योनि का उनके रास्ते के समीप होता है तो यह अपना स्थान त्याग कर उसकी ओर मुड़ पड़ते हैं और उसके हृदय और मस्तिष्क को स्पर्श करने लगते हैं और अपने प्रभाव से थोड़ी देर के लिए उसको भी प्रज्वल्लित कर देते हैं और बाहर आकर अपने काम में लग जाते हैं । इस प्रकार एक साधक अनेकों मनुष्यों को अपनी किरण द्वारा प्रकाश देने और अपने प्रभाव में लाने का अनायास ही उद्योग करता रहता है और यह एक बड़ा उपकार है ।

(१४) पश्चिमी साइन्सदांनों ने इस तेजपुञ्ज (aura) के लिए जो लिखा है वह यह है कि यह साधारण मनुष्य में १८ इंच चारों ओर रहता है । यानी केवल डेढ़ फुट और विकसित अर्थात् जिसने आत्म उन्नति करली हो ऐसे मनुष्य में ५० गज अर्थात् १५० फीट तक वह फैला रहता है और उसमें बहुत शक्ति होती है । तात्पर्य यह है कि आध्यात्म विकास के साथ यह तेज पुंज (aura) भी बढ़ता रहता है और यही कारण है कि सन्तमहात्माओं के स्थानों में पहुँच के मनुष्य अपने को बदला हुआ पाता है, उनके तेज पुञ्ज के प्रभाव में आकर अपनी तपन थोड़ी देर को त्याग देता है और शान्ति की गोद में खेलने लगता है ।

(१५) साधारण मनुष्य अपने तेज पुञ्ज से कोई काम नहीं ले सकता मगर विकसित मनुष्य उस पर अधिकार रखता है । उसे वह अपना संकल्प शक्ति (will) के साथ सैकड़ों मील दूर भेज सकता है और अपना प्रभाव फैला सकता है । साधारण पुरुष का प्रयोग ३० या ४० गज से अधिक नहीं चलता मगर साधक उसे दूर देशों में भी ले जा सकते हैं ।

जब बहुत से मनुष्य मिल कर पूर्णभाव के साथ एक स्वर होकर उसको पुकारते हैं, उसका गुणगान करते हैं या उसका चिन्तन (ध्यान) करते हैं तो एक बहुत मोटी किरन ऊपर से उतरती है । अकेले मनुष्य पर उतरने वाली किरन का व्यास इतना नहीं होता । एक साथ मिल के साधन करने में आकर्षण बढ़ जाता है और सबके तेजबिन्दु (aura) मिल के वहाँ छा जाते हैं और अपने भण्डार से प्रकाश खींचने लगते हैं । इसलिए सत्संग की विशेषता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१६) चूँकि यहाँ (aura) या तेज पुंज का वर्णन हम कर रहे हैं इसलिए एक बात हम और बतलाते हैं इस बात को शायद अभी तक तुमने न समझा हो । संसार में जितने मत हैं उन सब के पूजा गृह या मन्दिर भिन्न-भिन्न प्रकार के पाये जाते हैं । शैवों के मन्दिर दूसरी तरह के, वैष्णवों के दूसरी तरह के जैनी बौद्ध, ईसाई-पारसी-मुसलमान-यहूदी सबके मन्दिरों की बनावट में फर्क होता है । यह बात यों ही नहीं है । इन मजहबों के प्रचारकों का अनुभव इसमें शामिल है और उसी की आकृति बाहर स्थूल में उन लोगों ने बनवाई थी कि जो रस्म के तौर पर अब तक चली आती है ।

मनुष्य जब पूजा या आराधना करने बैठता है तो उसके चारों और अन्तरिक्ष (eather) में एक सूक्ष्म इमारत बन जाती है वह किसी साधन में गुम्बददार होती है किसी साधन में दूसरे प्रकार की । प्रत्येक मत के कर्म में भेद रहता है, रस्म रिवाज भी दूसरी रहती है । इसलिए उनके यह आस्ट्रल बिल्डिंग (astrel building) सूक्ष्मगृह में भी फर्क हो जाता है और उसी के फोटो पर बाहर यह सब बनाये गये हैं ।

(१७) ऊपर से जब प्रकाश की धार गिरती है तो अभ्यासी को कभी-कभी ब्रह्म रन्ध्र से शरीर में उतरते हुए अनुभव होती है, कभी हृदय के स्थान पर से घुसती मालूम देती है, कभी लगातार मूसलाधार आती है, कभी आती है फिर बन्द हो जाती है, फिर आने लगती है, यानी रुक-रुक कर आती है । धारा प्रवाह उसका नहीं रहता और कभी इतनी सूक्ष्म आती है कि उसको हम महसूस ही नहीं कर पाते, पर फायदा देखते हैं ।

(१८) सन्तों ने व अनुभवी पुरुषों ने पहली तरह के प्रकाश को निकृष्ट, दूसरी प्रकार के प्रकाश को मध्यम, और तीसरे सबसे सूक्ष्म को उत्तम श्रेणी का माना है । इसका लाभ ठहराऊ होता है और शरीर व अन्तःकरण के परमाणु सब उससे भर जाते हैं और दूसरे व पहले में यह बात नहीं होती । वह वर्षा के जल की तरह बहकर चला जाता है ।

(१९) इस बात की बहुत जरूरत है कि भजन या पूजा के समय हमारी वृत्ति अन्तर्मुखी रहे । इष्ट का ध्यान अन्तर में ही हो । बाहरी ध्यान से वृति बहिर्मुखी रहती है, उससे काम पूरा नहीं बन पाता । न तो पूर्ण शक्ति आती है और न आत्म-साक्षात्कार होता है ।

तन्मयतापूर्वक की गई साधना सफल होकर रहती है

'स्वामी रामदास कथामृत' में एक घटना का उल्लेख है—

तारापीठ (बंगाल) में द्वारिका नदी के सुरम्य तट पर भगवती तारादेवी का मन्दिर है । उस दिन उसका मेला या कोई विशेष पूजन-पर्व था । पास के ही गाँव का जमींदार भी तारादेवी के दर्शनों के लिए आया । दर्शन करने से पूर्व, उसने सोचा—स्नान करके यहीं पूजा-पाठ भी समाप्त कर लिया जाय, सो उसने द्वारका के तट पर ही अपना सामान रख दिया ।

वस्त्र उतार कर जमींदार ने स्नान किया । अनन्तर आसन बिछाकर पूर्वाभिमुख पूजा-पाठ के लिए बैठकर ध्यान करने लगे । एक सन्त भी स्नान के लिए उसी समय वहाँ आये । उन्हें बड़ी प्रसन्नता थी कि भारतीय जीवन में अभी आस्तिकता का अभाव नहीं है । तभी तो लोग न जाने कहाँ-कहाँ से देव-दर्शन और तीर्थ-यात्राओं के लिए आते-जाते रहते हैं । इस आस्तिकता का ही असर है कि भारतीय जीवन में अभी भी शान्ति, सन्तोष और पवित्रता की पर्याप्त मात्रा बची हुई है जबकि शेष विश्व इससे सर्वथा विपरीत है । भले ही वे कितने ही सुखी और समृद्ध क्यों न हों ।

यह महात्मा बंगाल के असाधारण तान्त्रिक वामक्षेप थे । उधर वे स्नान कर रहे थे, इधर जमींदार भगवान के ध्यान में निमग्न । जो सन्त अभी देर पहले इतनी प्रसन्नता अनुभव कर रहे थे, सुन्दर विचारों में डूबे हुए थे, न जाने क्या कौतुक सूझा कि एकाएक जमींदार पर पानी के छींटे मारने लगे । जमींदार ने आँखें खोली—आँखों में गुस्सा भरा स्पष्ट दिखाई दिया । सन्त वामक्षेप शरीर रगड़ने लगे, ठीक बालकों जैसी मुद्रा—मानो उन्होंने जल के छींटे मारे ही न हों और उन्हें पता तक न हो कि अभी कुछ हुआ भी है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जमींदार ने दुबारा आँखें मूँद लीं और फिर ध्यान में मग्न दिखाई दिये । उधर उन्होंने आँख मींची, इधर वामक्षेप फिर जल उलीचने लगे और जमींदार के दुबारा आँख खोल देने के बाद जल उलीचते ही गये जैसे उनके मन में भय नाम की कोई वस्तु ही न हो ।

जमींदार गरजे—ओरे ! साधु, अन्धा हो गया है । दिखाई नहीं देता, मेरे ऊपर पानी उलीच रहा है ? मेरा ध्यान टूट गया, साधु होकर भी उपासना में विघ्न डालते तुझे लाज नहीं आती ?

वामक्षेप को हँसी आ गई । बोले—उपासना को कलंकित न करो महाराज । भगवान का ध्यान कर रहे हो या 'मूर एण्ड कम्पनी' कलकत्ता की दुकान से चमड़े के जूते खरीद रहे हो ?

जमींदार का उबलता हुआ क्रोध जहाँ-का-तहाँ ऐसे बैठ गया जैसे उफनते दूध में जल के छींटे मारने से उफान रुक जाता है । उनके आश्चर्य का ठिकाना न था । वह उठे और साधु के चरण पकड़कर बोले—'महाराज ! सचमुच मैं ध्यान में यही सोच रहा था । मूर एण्ड कम्पनी से जूते पहनने हैं, वही सोच रहा था, कौन-सा जूता ठीक रहेगा । मुझे आश्चर्य है आपने मेरे मन की बात कैसे जान ली ?

साधु ने मुस्करा कर कहा—मन को भटकाना छोड़, रंगीन चमक-दमक और ऊपरी दिखावे की आदतें छोड़ । फिर ध्यान के समय केवल भगवान का ही चिन्तन कर । जिस दिन तेरा चित्त एकाग्र हो गया, उस दिन ऐसी सूक्ष्म मन की बातें जान लेना तेरे लिए भी कठिन न रह जायेगा ।

आध्यात्म ग्रन्थों, योग शास्त्रों में उपासना-साधना में एकाग्रता पर बहुत जोर दिया गया है । ध्यान धारणा का अभ्यास इसीलिए किया जाता है कि मन की अनियन्त्रित भगदड़ करने की आदत पर नियन्त्रण स्थापित किया जाय और उसे तथ्य विशेष पर केन्द्रित होने के लिए प्रशिक्षित किया जाय ।

एकाग्रता एक उपयोगी सत्प्रवृत्ति है । मन की अनियन्त्रित कल्पनाएँ, अनावश्यक उड़ानें उस उपयोगी विचार शक्ति का अपव्यय करती हैं जिसे यदि लक्ष्य विशेष पर केन्द्रित किया गया होता तो गहराई में उतरने और महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त करने का अवसर मिलता । यह चित्त की चंचलता ही है जो मनः संस्थान की दिव्य क्षमता को ऐसे ही निरर्थक गँवाती और नष्ट-भ्रष्ट करती रहती है । संसार के वे महामानव जिन्होंने किसी विषय में पारंगत प्रवीणता प्राप्त की है या महत्त्वपूर्ण सफलताएँ उपलब्ध की हैं उन सबको विचारों पर नियन्त्रण करने—उन्हें अनावश्यक चिन्तन से हटा कर उपयोगी दिशा में चलाने की क्षमता प्राप्त कर रही है । इसके बिना चंचलता की वानर वृत्ति से ग्रसित व्यक्ति न किसी प्रसंग पर गहराई के साथ सोच सकता है और न किसी कार्यक्रम पर देर तक स्थिर रह सकता है । शिल्प, कला, साहित्य, शिक्षा, विज्ञान, व्यवस्था आदि महत्त्वपूर्ण सभी प्रयोजनों की सफलता में एकाग्रता की शक्ति ही प्रधान भूमिका निभाती है । चंचलता को तो असफलता की सगी बहिन माना जाता है । बाल चपलता का मनोरंजक उपहास उड़ाया जाता है । वयस्क होने पर भी यदि कोई चंचल ही बना रहे—विचारों की दिशा धारा बनाने और चिन्तन पर नियन्त्रण स्थापित करने में सफल न हो सके तो समझना चाहिए कि आयु बढ़ जाने पर भी उसका मानसिक स्तर बालकों जैसा ही बना हुआ है । ऐसे लोगों का भविष्य उत्साहवर्धक नहीं हो सकता ।

आत्मिक प्रगति के लिए तो एकाग्रता की और भी अधिक उपयोगिता है । इसलिए 'मेडीटेशन' के नाम पर उसका अभ्यास विविध प्रयोगों द्वारा कराया जाता है । इस अभ्यास के लिए कोलाहल रहित ऐसे स्थान की आवश्यकता समझी जाती है जहाँ विक्षेपकारी आवागमन या कोलाहल न होता हो । एकान्त का तात्पर्य जनशून्य स्थान नहीं वरन् विक्षेप रहित वातावरण है । सामूहिकता हर क्षेत्र में उपयोगी मानी है । प्रार्थनाएँ सामूहिक ही होती हैं । उपासना भी सामूहिक हों तो उसमें हानि नहीं लाभ ही है । मस्जिदों में नमाज—गिरजा घरों में प्रेयर—मन्दिरों में आरती सामूहिक रूप से ही करने का रिवाज है । इसमें न तो एकान्त की कमी अखरती है और न एकाग्रता में कोई बाधा पड़ती है । एक दिशाधारा का चिन्तन हो रहा हो तो अनेक व्यक्तियों का समुदाय भी एक साथ मिल बैठकर एकाग्रता का अभ्यास भली प्रकार कर सकता है । नितान्त एकान्त में बैठना वैज्ञानिक, तात्त्विक शोध अन्वेषण के लिए आवश्यक हो सकता है, उपासना के सामान्य सन्दर्भ में एकान्त ढूँढ़ते फिरने की ही कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खास आवश्यकता नहीं है । सामूहिकता के वातावरण में ध्यान धारणा और भी अच्छी तरह बन पड़ती है । सेना का सामूहिक कार्य—साथ-साथ कदम मिला कर चलना—सैनिक में से किसी का भी ध्यान नहीं बटाता वरन् साथ-साथ चलने की पग ध्वनि के प्रवाह में हर एक के पैर और भी अच्छी तरह अपने आप नियत क्रम से उठते चले जाते हैं । सहगमन से पग क्रम को ठीक रखने में बाधा नहीं पड़ती वरन् सहायता ही मिलती है । सहगान की तरह सहध्यान तथा सहभजन भी अधिक सफल और अधिक प्रखर बनता है ।

साधना के लिए जिस एकाग्रता का प्रतिपादन है उसका लक्ष्य है—भौतिक जगत की कल्पनाओं से मन को विरत करना और उसे अन्तर्जगत की क्रिया-प्रक्रिया में नियोजित कर देना । उपासना के समय यदि मन सांसारिक प्रयोजनों में न भटके और आत्मिक क्षेत्र की परिधि में परिभ्रमण करता रहे तो समझना चाहिए कि एकाग्रता का उद्देश्य ठीक तरह पूरा हो रहा है । विज्ञान के शोध कार्यों में—साहित्य के सृजन प्रयोजनों में वैज्ञानिक या लेखक का चिन्तन अपनी निर्धारित दिशा धारा में ही सीमित रहता है । इतने भर में एकाग्रता का प्रयोजन पूरा हो जाता है । यद्यपि इस प्रकार के बौद्धिक पुरुषार्थों में मन और बुद्धि को असाधारण रूप में गतिशील रहना पड़ता है और कल्पनाओं को अत्यधिक सक्रिय करना पड़ता है तो भी उसे चंचलता नहीं कहा जाता है । अपनी निर्धारित परिधि में रहकर कितना ही द्रुतगामी चिन्तन क्यों न किया जाय, कितनी ही कल्पनाएँ, कितनी ही स्मृतियाँ, कितनी ही विवेचनाएँ क्यों न उभर रही हों वे एकाग्रता की स्थिति में तनिक भी विक्षेप उत्पन्न नहीं करेंगी । गड़बड़ तो अप्रासंगिकता में उत्पन्न होती है । बेतुका, वे सिलसिले का—अप्रासंगिक-अनावश्यक चिन्तन ही विक्षेप करता है । एक बेसुरा वादन पूरे आरकेस्ट्रा के ध्वनि प्रवाह को गड़बड़ा देता है ठीक इसी प्रकार चिन्तन में अप्रासंगिक विक्षेपों का ही निषेध है । निर्धारित परिधि में कितनी ही-कितने ही प्रकार की कल्पनाएँ—विवेचनाएँ करते रहने की पूरी-पूरी छूट है ।

कई व्यक्ति एकाग्रता का अर्थ मन की स्थिरता समझते हैं और शिकायत करते हैं कि उपासना के समय उनका मन भजन में स्थिर नहीं रहता । ऐसे लोग एकाग्रता और स्थिरता का अन्तर न समझने के कारण ही इस प्रकार की शिकायत करते हैं । मन की स्थिरता सर्वथा भिन्न बात है । उसे एकाग्रता से मिलती-जुलती स्थिति तो कहा जा सकता है पर दोनों का सीधा सम्बन्ध नहीं है । जिसका मन स्थिर हो उसे एकाग्रता का लाभ मिल सके या जिसे एकाग्रता की सिद्धि है उसे स्थिरता की स्थिति प्राप्त हो ही जाय यह आवश्यक नहीं है ।

स्थिरता को निर्विकल्प समाधि कहा गया है और एकाग्रता को सविकल्प कहा गया है । सविकल्प का तात्पर्य है उस अवधि में आवश्यक विचारों का मनःक्षेत्र में अपना काम करते रहना । निर्विकल्प का अर्थ है एक केन्द्र बिन्दु पर सारा चिन्तन सिमटकर स्थिरता की स्थिति उत्पन्न हो जाना ।

यहाँ मनःसंस्थान की संचरना को ध्यान में रखना होगा । मस्तिष्क की बनावट एक प्रचण्ड विद्युत भण्डार जैसी है । उसके भीतरी और बाहरी क्षेत्र में विचार तरंगों के आँधी तूफान निरन्तर उठते रहते हैं । यह तरंग तूफान जितने तीव्र गति सम्पन्न होते हैं वह मस्तिष्क उतना ही उर्वरक और कुशाग्र बुद्धि माना जाता है । जहाँ इन तरंगों में जितनी मन्दगति हो समझना चाहिए कि वहाँ उतनी ही जड़ता, दीर्घ सूत्रता, मूर्खता, छाई रहेगी । हारे-थके मस्तिष्क को निद्रा घेर लेती है अर्थात् उसकी गतिशीलता शिथिल हो जाती है । यह कृत्रिम निद्रा नशीली दवाएँ पिलाकर, क्लोरोफार्म, ईथर आदि सुँघाकर, सुन्न करने वाली सुई लगाकर उत्पन्न की जा सकती है । मूर्छा की स्थिति में मस्तिष्क की गतिशीलता ठप्प हो जाती है । स्थिरता ऐसे ही स्तर की हो सकती है । गड्ढे में बन्द होने के प्रदर्शन वाली जड़ समाधि में ऐसी ही स्थिरता होती है । मनस्वी योग अपनी संकल्प शक्ति से हृदय की धड़कन और मस्तिष्क की सक्रियता को ठप्प कर देते हैं । स्थिरता जड़ समाधि के वर्ग में आती है । वह संकल्पशक्ति से या औषधियों से उत्पन्न की जा सकती है । स्थिरता का लाभ विश्राम मिलना है । इससे आन्तरिक थकान दूर हो सकती है और जिस तरह निद्रा के उपरान्त जागने पर नई चेतनता एवं स्फूर्ति का अनुभव होता है वैसा ही मन की स्थिरता का—निर्विकल्प समाधि का भी लाभ मिल सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामान्य रूप में इस स्थिति को शिथिलीकरण मुद्रा का एक प्रकार कहा जा सकता है । उसमें भी शरीर और मन की स्थिरता-शिथिलता-का ही अभ्यास किया जाता है । मैस्मेरिज्म-हिप्नोटिज्म प्रयोगों में भी इसी का अभ्यास काले गोले के माध्यम से करना पड़ता है । नेत्रों में बेधक दृष्टि उत्पन्न करने के लिए एकाग्र मनःशक्ति को एक स्थान पर केन्द्रित करते हैं । मैस्मेरिज्म का यही आधार है । ऐसे ही सामान्य चमत्कार उस स्थिरता से उत्पन्न किए जा सकते हैं जिसके लिए आमतौर से आध्यात्म साधना के विद्यार्थी लालायित रहते हैं और जिसके न मिलने पर अपने अभ्यास की असफलता अनुभव करके खिन्न होते हैं ।

मन की स्थिरता अति कठिन है । वह हठयोग से ही सम्भव हो सकती है । तीन मिनट की स्थिरता मिल सके तो साधक शून्यावस्था में जाकर निद्रा ग्रस्त हो जाता है । जिन्हें निर्विकल्प समाधि अभीष्ट हो उन्हें ही स्थिरता की अपेक्षा और चेष्टा करनी चाहिए । जिन्हें सविकल्प साधना में स्थिरता की नहीं एक दिशाधारा में मन को नियोजित किए रहने की आवश्यकता है । परब्रह्म में आत्म-समर्पण और उस परा-शक्ति का आत्म सत्ता में अवतरण ही ध्यान का मुख्य प्रयोजन है । उसके लिए कितने ही प्रकार की साकार-निराकार ध्यान धारणाएँ विद्यमान हैं उनमें से जो उपयोगी एवं रुचिकर लगे उसे अपनाया जा सकता है ।

स्थिरता स्तर की एकाग्रता हिप्नोटिज्म प्रयोगों में तो काम में आती ही है । सरकस के अनेक खेलों में मानसिक सन्तुलन ही चमत्कार दिखा रहा होता है । स्मरण शक्ति के धनी भी प्रायः एकाग्रता के ही अभ्यासी होते हैं । गणितज्ञों में तो यह विशेषता पायी ही जायेगी । शोध कर्त्ताओं की सफलता का आधार यही है । उतने पर भी उसे आत्मिक प्रगति की अनिवार्य शर्त नहीं माना जा सकता । अधिक से अधिक उसे सहायक ही कहा जा सकता है । यदि ऐसा न होता तो यह सब एकाग्रता सम्पन्न लोग आत्मबल सम्पन्न हो गये होते और उनकी गणना सिद्ध योगियों में की जाने लगती । इसके विपरीत प्रायः सभी भावुक भक्त भावावेश जन्य चंचलता से ग्रस्त रहे हैं । मीरा, चैतन्य, रामतीर्थ, रामकृष्ण परमहंस आदि इसी वर्ग के थे, जिन पर प्रायः भवावेश ही छाया रहता था । वे एकाग्र चित्त तो कदाचित् ही कभी हो पाते हों ।

एकाग्रता के अभ्यास के लिए इष्ट देवताओं की प्रतिमाओं का निर्धारण करना होता है । उनकी चित्र-विचित्र आकृतियाँ, आभूषण, वस्त्र, आयुध, वाहन इस दृष्टि से बनाये गये हैं कि ध्यान करने के लिए सुविस्तृत क्षेत्र मिल जाय । मन की दौड़ उन सब पर अदल-बदल—उछल-कूद करती रहती है । एक परिधि में मन को सीमित दौड़ लगाने का अवसर मिलता रहता है । पूर्ण एकाग्रता या स्थिरता की ध्यानयोग के आरम्भिक चरण में उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी कि समझी जाती है ।

जिस एकाग्रता की आवश्यकता, आध्यात्म प्रगति के लिए बताई गई है वह मन की स्थिरता नहीं वरन् चिन्तन की दिशाधारा है । उपासना के समय सारा चिन्तन आत्मा का स्वरूप, क्षेत्र, लक्ष्य समझने में लगना चाहिए और यह प्रयास रहना चाहिए कि ब्राह्मी चेतना के गहरे समुद्र में डुबकी लगाकर आत्मा की बहुमूल्य रत्नराशि संग्रह करने का अवसर मिले । उपासना का लक्ष्य स्थिर हो जाने पर उस समय जो विचार प्रवाह अपनाया जाना आवश्यक है उसे पकड़ सकना कुछ कठिन न रह जायेगा ।

मन की स्थिरता एवं एकाग्रता का सार तत्व 'तन्मयता' शब्द में आ जाता है । गायत्री उपासना में यह प्रयोजन तन्मयता से पूरा होता है । तन्मयता का अर्थ है—इष्ट के साथ भाव सम्वेदनाओं को केन्द्रीभूत कर देना । यह स्थिति तभी आ सकती है जब इष्ट के प्रति असीम श्रद्धा हो । श्रद्धा तब उत्पन्न होती है जब किसी की गरिमा पर परिपूर्ण विश्वास हो । साधक को अपनी मनोभूमि ऐसी बनानी चाहिए जिसमें गायत्री महाशक्ति की चरम उत्कृष्टता पर, असीम, शक्ति सामर्थ्य पर, सम्पर्क में आने वाले के उत्कर्ष होने पर, गहरा विश्वास जमता चला जाय । यह कार्य शास्त्र वचनों का, अनुभवियों द्वारा बताये गये सत्परिणामों का, उपासना विज्ञान की प्रामाणिकता का, अधिकाधिक अध्ययन अवगाहन करने पर सम्पन्न होता है । आशंकाग्रस्त, अविश्वासी मन, उपेक्षा भाव से आधे-अधूरे मन से उपासना में लगे तो स्वभावतः वहाँ उसकी रुचि नहीं होगी और मन जहाँ-तहाँ उड़ता फिरेगा । मन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगने के लिए आवश्यक है कि उस कार्य में समुचित आकर्षण उत्पन्न किया जाये । व्यवसाय उपार्जन में, इन्द्रिय भोगों में, विनोद मनोरंजनों में, सुखद कल्पनाओं में, प्रियजनों के सम्पर्क सान्निध्य में मन सहज ही लग जाता है । इसका कारण यह कि इन प्रसंगों के द्वारा मिलने वाले सुख, लाभ एवं अनुभव के सम्बन्ध में पहले से ही विश्वास जमा होता है । प्रश्न यह नहीं कि वे आकर्षण दूरदर्शिता की दृष्टि से लाभदायक हैं या नहीं । तथ्य इतना ही है कि उन विषयों के सम्बन्ध में अनुभव अभ्यास के आधार पर मन में आकर्षण उत्पन्न हो गया है उस आकर्षण के फलस्वरूप ही मन ही उनमें रमता है और भाग-भागकर जहाँ-तहाँ घूम फिरकर वहीं जा पहुँचता है । हटाने से हटता नहीं, भगाने से भागता नहीं । मानसिक संचरना के इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हमें उपासना के समय मन को इष्ट पर केन्द्रित रखने की आवश्यकता पूरी करने के लिए पहले से ही मस्तिष्क को प्रशिक्षित करना चाहिए । गायत्री महाशक्ति के सन्दर्भ में जितना अधिक ज्ञान-विज्ञान संग्रह किया जा सके मनोयोग पूर्वक करना चाहिए । विज्ञ व्यक्तियों के साथ उसकी चर्चा करनी चाहिए । इस सन्दर्भ में होने वाले सत्संगों में नियमित रूप से जाना चाहिए । जिन्होंने लाभ उठाये हों उनके अनुभव सुनने चाहिए । यह कार्य तो तद् विषयक स्वाध्याय और मनन चिन्तन के एकाकी प्रयत्न से भी सम्भव हो सकता है, पर अधिक सरल और व्यावहारिक यह है कि गायत्री चर्चा के सन्दर्भ में चलने वाले सत्संगों में उत्साहपूर्वक नियमित रूप से सम्मिलित होते रहा जाय ।

भूल यह होती रहती है कि किसी प्रकार जप संख्या पूरी कर लेने की ही उतावली रहती है और उसे ज्यों-त्यों पूरी कर लेना ही पर्याप्त मान लिया जाता है । यह स्मरण नहीं रखा जाता है कि वाणी से मन्त्रोच्चार करने, उँगलियों से माला फिराने के शारीरिक श्रम प्रयोजन से ही इतने महान उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो सकती—उसके साथ मनोयोग और श्रद्धा समावेश भी आवश्यक है । चेतना शक्ति के उत्थान परिष्कार में तन्मयता सबसे बड़ा आधार है । शरीर से किए जाने वाले कर्मकाण्डों का प्रयोजन इतना ही है कि उनके कारण मस्तिष्क और अन्तःकरण को साथ-साथ चलने का आधार मिल जाय । चिन्तन का गहरा पुट रहने पर ही आत्मिक भूमिका में हलचलें होती हैं और प्रगति का सरंजाम जुटता है । यदि मन इष्ट पर जमे नहीं और मात्र उच्चारण का श्रम चलता रहे तो उसका भी लाभ तो मिलेगा पर इतना स्वल्प होगा जिससे अभीष्ट सत्परिणाम की अपेक्षा पूरी न हो सकेगी । अस्तु, यह मानकर चलना चाहिए कि उपासना कृत्य में मनोयोग का लगाया जाना नितान्त आवश्यक है ।

तन्मयता की स्थिति उत्पन्न करने के लिए धैर्यपूर्वक देर तक प्रयत्न करना होता है, एक दिन में सम्पन्न नहीं हो सकता । मन का पुराना अनुभव अभ्यास भौतिक आकर्षणों के साथ खेल करते रहने का है । उसे इससे विरत करने के लिए उससे अधिक नहीं कम से कम उतना बड़ा आकर्षण तो प्रस्तुत किया ही जाना चाहिए । अरुचिकर प्रयोजन पर जमने की उसको आदत है ही नहीं । आकर्षण के अभाव में उसे बुरी तरह ऊब आती है और वहाँ से उचटने भागने की ऐसी धमाचौकड़ी मचाता है कि देर तक उस कार्य को चलाते रहना कठिन हो जाता है । तरह-तरह की बहाने बाजी बनाकर वहाँ से उठाने के लिए अचेतन मन कितनी-कितनी तरकीबें खड़ी करता है यह सब देखते ही बनता है । खुजली उठना, जमुहाई आना, कोई साधारण-सा खटका होते ही उधर देखने लगना, पालथी बदलना, कपड़े सँभालना, जैसी चित्र-विचित्र क्रियाओं का होना यह प्रकट करता है कि मन यहाँ लग नहीं रहा और उस कार्य को छोड़कर जल्दी-जल्दी उठ चलने के लिए बार-बार तकाजा कर रहा है ।

इस स्थिति का सामना करने के लिए प्रथम भूमिका यह है कि श्रद्धा करने वाले स्वाध्याय और सत्संग का, मनन और चिन्तन का ऐसा क्रम बनाया जाये जिससे उस दिशा में चलने के लिए सत्परिणामों के सम्बन्ध में तर्क, तथ्य, प्रमाण, उदाहरणों के आधार गायत्री उपासना के लिए श्रम करने की सार्थकता पर श्रद्धा और विश्वास गहरा होता चला जाय ।

साधना द्वारा अन्तराल का उच्चस्तरीय विकास

आत्मा के ऊपर तीन परिधान लिपटे हुए हैं । जिस प्रकार बनियान, कुर्ता, कोट एक के बाद एक पहन कर सुसज्जा बनाई जाती है उसी प्रकार काया के ऊपर भी तीन शरीर चढ़े हैं । एक स्थूल शरीर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है जो प्रत्यक्ष जाता है और इच्छानुसार कार्यों में लगाया जाता है । दूसरी गहरी परत सूक्ष्म शरीर की है । यह प्राणमय है मरने के बाद यह कुहासे के रूप में बिखर जाती है । हृदयस्थ स्थान में ज्योतिवत् ध्यान करते हुए दिखाई देती है । शरीर के इर्द-गिर्द तेजोवलय के रूप में छाई रहती है । तीसरा कारण शरीर है । इसका स्थान अन्तःकरण चतुष्टय है । मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार का समुच्चय इसी के साथ जुड़ा हुआ है । यों आकांक्षा, मान्यता, प्रेरणा, उमंग इसी में उठती हैं । पर एक शब्द में इसकी प्रमुखता को देखते हुए भावना प्रधान कहा जा सकता है । उसकी स्थिति प्रधानतया भाव सम्वेदनाओं से ही जानी जाती है ।

जीव-जन्तु पशु-पक्षी स्थूल शरीर प्रधान होते हैं । वे काया की आवश्यकता एवं इच्छा पूरी करने में लगे रहते हैं । पेट भरने के लिए उनकी शारीरिक क्रियाएँ होती हैं और प्रजनन का ताना-बाना बुनने में उनका मन काम करता रहता है इसके अतिरिक्त सुरक्षा की व्यवस्था बनाने में भी अपनी बुद्धिमत्ता का उपयोग करते हैं । शत्रुओं से आत्म रक्षा के लिए जितने बन पड़ते हैं, कौशल अपनाते हैं । झाड़ियों में रहने से लेकर गुफाओं में छिपने और झुण्ड बनाकर रहने की प्रवृत्ति आत्म-रक्षा से ही सम्बन्धित है । प्रजनन के लिए घोंसले, खोह, कोतर आदि का प्रबन्ध उन्हें करना पड़ता है ।

मनुष्य भी इन्हीं कार्यों में अपनी काया की अधिकांश श्रम शक्ति को इन्हीं प्रयोजनों में जुटाए रहते हैं । गुजारे के लिए उत्पादन का श्रम करना पड़ता है । कामुकता बेचैन करती है तो जोड़ा बनाता है, विवाह करता है और उस समागम का प्रतिफल संतानोत्पादन के रूप में सामने आता है । बच्चों की असमर्थता को देखते हुए अभिभावक ही उसकी देखभाल तब तक करते हैं जब तक कि वह शारीरिक, मानसिक दृष्टि से स्वावलम्बी नहीं हो जाता । यह उपरोक्त दोनों ही व्यस्त रखने वाले कार्य "पेट और प्रजनन" की परिधि में आते हैं । स्थूल शरीर को उत्पादन जन्य लोभ अपनाना होता है । कामुकता का फलितार्थ विवाह और संतान के रूप में सम्मुख आता है । यह सभी नवागन्तुक और अपने प्रभाव और प्रयत्न से उत्पन्न किए गए होते हैं इसलिए इनके प्रति ममता जुड़ती है । ममता अपने प्रियजन की अनेकानेक आवश्यकताओं को पूरी करने के लिए आतुरता प्रकट करती है, यही मोह है । मनुष्य का स्तर जब तक शरीर प्रधान, पशु स्तर का रहता है तब तक उसे लोभ और मोह की ललक, लगन छाई रहती है ।

इसके अतिरिक्त मनुष्य बुद्धिमान होने के कारण अपने निजी व्यक्तित्व के बारे में भी विचार करने लगता है । जबकि पशुओं में उस स्तर का चिन्तन स्वल्प मात्रा में ही उभरता है । मनुष्य की शरीरगत प्रवृत्तियों में एक अहंकार भी है । इसे मानसिक चेतना का उद्भव भी कह सकते हैं । इन्द्रिय भोगों की वासना और उपभोग सामग्री की तृष्णा इन दोनों का बाहुल्य तो रहता ही है । पर साथ ही मानसिक विकास के रूप में निज के व्यक्ति की कल्पना भी प्रखर होती है । स्वाभिमान जगता है अहंता प्रकट होती है इसकी दो कामनाएँ हैं—यह एक कि अपना स्तर दूसरों से बड़ा-चढ़ा सिद्ध करना । दूसरा सम्मान उपलब्ध करना । यह किस प्रकार सम्भव हो, इसके लिए शरीर की परिधि में अपनी सत्ता सीमित रखने वालों के लिए स्वकृत्य के रूप में ठाठ-बाट बढ़ाने का उपाय उपचार समझ में आता है । वस्त्र, आभूषण, शृंगार, साधन, ठाठ, बाट, अमीरी जताने वाले साधनों का एकत्रीकरण यह इस स्तर के कौतुक हैं जिनमें समय, श्रम और साधन खर्च करते हुए भी इसलिए प्रवृत्त होना पड़ता है कि अपने से पिछड़ी स्थिति के लोग तुलनात्मक दृष्टि से विचार करने के उपरान्त यह विचार करें कि अमुक व्यक्ति हमारी तुलना में अधिक वैभववान होने के कारण बड़प्पन का अधिकारी है । मोटी बुद्धि अपने से अधिक समृद्ध को ही बड़ा मान लेती है । उससे दबती, झेंपती है । सौभाग्यवान समझती और सम्मान करती है । इसे पाने के लिए शरीर चेतना आतुर रहती है । वह बलवान, सम्पन्न सुन्दर, पदाधिकारी आदि बनने के लिए कुछ न कुछ चेष्टाएँ करती रहती हैं । वैसा यदि सचमुच नहीं बन पड़ता तो उसका आडम्बर बनाती हैं । विडम्बना एवं प्रवंचना रचती है ताकि स्वल्प बुद्धि वाले उसका रहस्य न जान सकें और आँखें चौधियाँ जाने से बड़प्पन का गौरव प्रदान करने लगें । यह उथले दर्जे का बड़प्पन है । इसे पाने के लिए लोग विवाह शादियों में अन्धाधुँध अपव्यय करने, कर्मकाण्डों का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रदर्शन करने सभा, सोसाइटियों के अधिकारी बनने आदि के प्रपंच रचते रहते हैं । इस कौतुक के सहारे वे अपना सांसारिक मूल्य दूसरों के मूल्यों की तुलना में अधिक सिद्ध करने में किसी कदर सफल भी हो जाते हैं । शारीरिक क्षेत्र की तुलना में मानसिक झलक की मात्रा अधिक है । शरीर तो अन्न, वस्त्र और निवास की आवश्यकताएँ पूरी हो जाने पर तृप्त हो जाता है । पर मन को कामुकता की, अन्याय, इन्द्रियों की ललक बुझानी पड़ती है और उसके लिए विवाह, सन्तान, परिवार को अपने साथ जोड़कर उनकी आवश्यकताओं की भी अपनी आवश्यकता मानना पड़ता है । बात ममता की पूर्ति तक ही सीमित नहीं रहती । मोह से अधिक भीष्ट-अभीष्ट, सुविधा सम्पादन का क्रम बैठ जाने पर भी मन शान्त नहीं होता । विकसित मस्तिष्क पर अहंकार का उन्माद होता है और साधारण होते हुए भी असाधारण आडम्बर बनाकर अपनी वरिष्ठता का ढिढ़ोरा पीटना चाहता है । लोगों की दृष्टि में अधिक वैभववान सिद्ध होना चाहता है । इसके लिए खर्चीली ठाठ-बाट तो बनाना ही पड़ता है । उसके लिए ढेरों समय एवं साधनों का अपव्यय करना आवश्यक हो जाता है । इतना ही नहीं कई, बार उद्धत आचरण अपनाकर अपनी आतंकवादी प्रखंडता प्रकट करने के लिए अनाचार तक अपनाना पड़ता है ।

इससे कुछ कदम आगे बढ़कर कारण शरीर में एक जागृति भरी हलचल उत्पन्न होती है वह है सम्मान की, स्नेह सद्भाव की आकांक्षा । जिस प्रकार स्थूल शरीर से सूक्ष्म और सूक्ष्म से कारण शरीर का स्तर ऊँचा है उसी प्रकार इन तीनों शरीरों की आकांक्षाएँ भी क्रमशः अधिक समय साध्य श्रम साध्य एवं बुद्धि साध्य हैं । स्थूल शरीर की आवश्यकताएँ सामान्य प्रयास से ही पूरी हो जाती हैं । पेट और प्रजनन की व्यवस्था पशु, पक्षी, कीड़े-मकोड़े तक आसानी से बना लेते हैं। थोड़ा-सा ही चिन्तन और परिश्रम करने से उनके साधन बन जाते हैं । अहंता के नाम पर अन्य प्राणी तो अपनी बलिष्ठता दिखाने के लिए आक्रमण भर करते हैं । आतंक भर मचाते हैं । पर मनुष्य को इसके लिए आकुलता भी रहती है और आतुरता भी । जिसे स्नेह नहीं मिला समझना चाहिए कि उसका जीवन नीरस, निर्जीव, रूखा कर्कश रह गया । इसी प्रकार जिसे सम्मान नहीं मिला उसे ऊँचा उठने के लिए जो आधार, अवसर मिलना चाहिए था वही छिन गया । इन दोनों के न मिलने छिन जाने के कारण शरीर की उर्वरता एवं गरिमा ही पलायन कर जाती है । पेट, प्रजनन से भी बड़ी भूख, अन्तरात्मा को स्नेह, सम्मान की रहती है, पर उसे प्राप्त करने के लिए स्तर के अनुरूप पुरुषार्थ करना पड़ता है । पेट भरने के लिए मेहनत करनी पड़ती है । कामुकता की बेल को समेटने के लिए सुविस्तृत ताना-बाना बुनना पड़ता है । जब स्थूल और सूक्ष्म शरीर अपनी इच्छाएँ पूरी करने के लिए समुचित श्रमशीलता एवं तन्मय, तत्परता चाहते हैं, व्यस्त किए रहते हैं तो कोई कारण नहीं कि काया का सर्वोच्च स्तर जो माँगता है वह बिना कुछ किए अनायास ही न मिल जाय । उसके लिए और भी बढ़ा-चढ़ा वैभव उपार्जित करना होता है । कारण शरीर की बलिष्ठता भाव सम्वेदना है । ठीक उसी तरह जैसे शरीर में बल और मन में बुद्धि का होना आवश्यक है । पशु भाव रहित होते हैं । उनमें मैत्री, करुणा मुदिता सेवा, सहानुभूति, उदारता जैसी गरिमामयी भाव सम्वेदनाएँ कदाचित ही नगण्य मात्रा में होती हैं । उन्हें स्वार्थ ही सूझता है । कष्ट होते हैं तो अपने ऊपर संकट आने पर ही थोड़ी अनुभूति होती है । किन्तु मनुष्य का दर्जा कहीं ऊँचा है । वह "आत्मवत् सर्व भूतेषु' और 'वसुधैव कुटम्बकम्' स्तर की भाव सम्वेदना संजोये रहता है । यही कारण है कि उसके अन्तराल में करुणा और उदारता का उद्गम उभरता है । दूसरों का दुःख बँटा लेने की और अपना सुख बाँटने की उमंग उठती रहती है । इसी परमार्थ परायणता के मूल्य पर दूसरों का सहयोग एवं श्रद्धा, सम्मान खरीदा जाता है । उदारता भरी सेवा साधना ही विचारशील लोगों के अन्तराल में शालीनता प्रदर्शित करने वालों के प्रति श्रद्धा उभारती हैं और साथ ही सम्मान और सहयोग की भी वर्षा करती हैं । उसमें स्थायित्व भी होता है । आदर्शवादियों के चरित्र एवं व्यवहार का अनुकरण अभिनन्दन किया जाता है । भाव सम्वेदना ही आत्मीयता, ममता, मित्रता की जड़ें मजबूत करती हैं । जिनका अन्तःकरण ऊसर, बंजर की तरह भावनात्मक उर्वरता से रहित है उस पर न तो सहयोग सम्मान के मेघ बरसते हैं और न सेवा उदारता के उपवन उगते, सुरभित फूल खिलते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निष्ठुर, स्वार्थ परायण, सहानुभूति सम्वेदना रहित व्यक्ति के सम्बन्ध में यही कहा जा सकता है कि उसका अन्तःकरण भाव सम्वेदना की उस उर्वरता से सम्पन्न नहीं हो पाया, जिसके कारण व्यक्तिगत स्नेह और समूहगत सम्मान की अमृत वर्षा होती है । व्यक्तित्व को दैवी अनुकम्पा और अन्तरंग सन्तोष एवं उल्लास से निरन्तर भरे रहती है ।

शरीरगत आवश्यकताएँ पशु भी पूरी करते हैं । मानसिक तृष्णाओं को चतुर लोग पूरा करा लेते हैं पर मानवी गरिमा इसमें है कि उसके अन्तःकरण में भावनाएँ उनमें स्वयं विनम्र, निष्काम एवं संयमी अपरिग्रही रहे । अपनी क्षमताओं को सदाश्यता के संवर्धन में समर्पित करें, देवमानवों का कारण शरीर इसी आधार पर विकसित होता है । इसी उपलब्ध विशेषता के कारण वे महामानव, नर नारायण एवं पुरुष पुरुषोत्तम बनते हैं ।

कहा जा चुका है कि मनुष्य के तीन शरीर हैं । (१) स्थूल, पंच तत्व निर्मित-प्रत्यक्ष (२) सूक्ष्म, चिन्तन और चरित्र से सम्बन्धित, बौद्धिक (३) कारण-श्रद्धा प्रज्ञा, निष्ठा परक, भावनात्मक । यह तीनों परस्पर गुंथे हुए हैं । इन तीनों का समन्वय ही त्रिवेणी संगम है । जिस प्रकार अन्न, जल और वायु के आधार पर जीवन धारण सम्भव होता है, उसी प्रकार उपरोक्त तीनों शरीरों को सुनियोजित रखने पर ही समग्र सुख शान्ति हस्तगत होती है । प्रगति की राह मिलती है और उस परम लक्ष्य पर पहुँचने की सम्भावना बनती है जिसके लिए चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने के उपरान्त एक बार यह सुयोग मिला है । तीनों ही शरीरों की सुव्यवस्था पर ध्यान दिया जाना चाहिए ।

स्थूल शरीर से व्यवहार—सूक्ष्म शरीर के चिन्तन और कारण शरीर से चरित्र का निर्णाण होता है । इन तीनों का समन्वय ही व्यक्तित्व है । व्यक्ति का समग्र विकास इन तीनों की सुनियोजित साधना पर ही निर्भर है । इसलिए उपासना, साधना, आराधना को विज्ञजनों ने उतना ही महत्त्व दिया है जितना आजीविका एवम् दिनचर्या को । मात्र प्रत्यक्ष शरीर की ही साज-सम्भाल होती रहे और सूक्ष्म एवं कारण शरीर उपेक्षित पड़े रहें तो उसे ऐसा ही समझा जायेगा कि तन ढकने के लिए वस्त्रों का तो प्रबन्ध हुआ पर आहार, विश्राम की बात भुला दी गई । हमें प्रत्यक्ष शरीर की भाँति ही अप्रत्यक्ष सूक्ष्म—बौद्धिक और कारण—भावना परक शरीर का भी समानरूप से ध्यान रखना चाहिए । स्थूल से सूक्ष्म की और सूक्ष्म से कारण शरीर की सामर्थ्य अनेक गुनी बढ़ी-चढ़ी मानी गई है । अतएव उनका महत्त्व भी क्रमशः उसी अनुपात से अधिकाधिक होता है ।

आमतौर से लोग अनगढ़ जीवन जीते हैं । कुसंस्कारों से भरे और गुण, कर्म, स्वभाव की दृष्टि से गए गुजरे रहते हैं । चिन्तन, चरित्र और व्यवहार में ढेरों कमियाँ रहती हैं । न दृष्टिकोण परिमार्जित होता है और न मानवी गरिमा का निर्वाह बन पड़ता है । मान्यतायें, भावनायें एवं आदतें भी ऐसी होती हैं जिन्हें एक शब्द में पशु प्रवृत्तियाँ कहा जा सके । जन साधारण की ऐसी ही स्थिति होती है । ऐसी दशा में पेट प्रजनन का ढर्रा तो किसी प्रकार चलता रहता है पर उन विभूतियों से वंचित ही रहना पड़ता है जो मानवी सत्ता के गहन अन्तराल में मणिमुक्तकों की तरह छिपी पड़ी है, जिन्हें पाकर देव जीवन जिया जा सकता है और महामानवों की तरह सिद्धियों का अधिष्ठाता बन कर रहा जा सकता है ।

साधना से सिद्धि का सिद्धान्त सर्वविदित है । इसी आधार पर ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी बना जा सकता है । तपस्वी इन ऋद्धि सिद्धियों का धनी होता है, संयमी समर्थ बनता है । अभ्यास से वर्चस्व उपलब्ध होता है । पुरातन काल में लोग उपार्जन-उपभोग तक ही सीमित नहीं रहते थे वरन् व्यक्तित्व विकास की साधना को भी उतना ही अनिवार्य मानते थे । उस पुरुषार्थ का लाभ हाथों-हाथ उठाते थे ।

इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि अपने देश में से आध्यात्म तत्व ज्ञान एवं साधना विज्ञान एक प्रकार से लुप्त ही हो गया । उसके स्थान पर चित्र-विचित्र पाखण्ड ही प्रचलित है । सस्ते मोल, चुटकी बजाते, छुट-पुट टंट-घण्ट के सहारे मनोकामना पूर्ण कराने और देवताओं को वशवर्ती बनाने के पूजा उपचारों की ही धूम है । इसे समय का प्रभाव ही कहना चाहिए कि साधना के सिद्धान्त और स्वरूप तक आँख से ओझल हो गये, फिर उन्हें अपनाने का अवसर ही किसी को क्यों कर मिलता ? सच्ची साधना न हो, तो सही प्रतिफल कैसा ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

देव परम्पराओं के पुनर्जीवन का यह पुण्य प्रभाव है । भगवान इन दिनों उस राजमार्ग की पुनः मरम्मत कर रहे हैं । जिस पर चलते हुए मानव जीवन को हर दृष्टि से सुखी सार्थक बनाया जा सके । अभ्युदय की पुण्य बेला में सर्वसाधारण के लिए पुरातन काल के साधना काल के साधना क्रम का स्वरूप निखरा है और उसे उपलब्ध करने का स्वरूप बना है ।

शान्ति कुंज, हरिद्वार में नवयुग के अनुरूप महान व्यक्तित्व ढालने के लिए पुरातन काल के साधना विधानों के प्रशिक्षण एवं अभ्यास का सुनियोजित प्रबन्ध हुआ है । इस "साधना में तीनों शरीरों को निर्मल एवं प्रखर बनाने की विधि व्यवस्था है । स्थूल शरीर को निरोग, समर्थ, सूक्ष्म शरीर से विज्ञ, विवेकवान, कारण शरीर को दिव्यदर्शी, देवोपम बनाने की साधनाओं का समन्वित निर्धारण है । यह ध्यान रखा गया है कि वे सर्व सुलभ हों और कुछ भूल रहने पर भी हानिकारक न हों ।

हर साधक की शारीरिक और मानसिक स्थिति का सुयोग्य डॉक्टरों द्वारा, बहुमूल्य यन्त्रों द्वारा, पर्यवेक्षण किया जाता है । संचालक मनःस्थिति एवं परिस्थिति का पर्यवेक्षण करते हैं । इतना निदान करने के उपरान्त ही तीनों शरीरों की स्थिति सुधारने के दृष्टि से साधना विधान का निर्धारण किया जाता है । हर व्यक्ति की स्थिति एवं आवश्यकता अलग-अलग होती है । इसलिए स्वभावतः साधना क्रम भी प्रथक-प्रथक ही होना चाहिए । सब भेड़ों को एक लाठी से हांकना, सब रोगों में एक दवा देना, समझदारी नहीं है । हर व्यक्ति की साधना भी एक जैसी नहीं होनी चाहिए । साथ ही उसका स्वरूप ऐसा भी न हो जो तीन शरीरों में से एक को भी लाभ पहुँचाए और शेष दो की स्थिति यथावत् दुर्गतिग्रस्त बनी रहे । समग्रता तभी बनती है जब तीनों शरीरों का समान विकास हो और तीनों को समुन्नत बनाने के लिए प्रयास साथ-साथ चलें । कल्प साधना का स्वरूप यही है ।

प्रत्यक्ष शरीर को नीरोग बनाने के लिए आसन, प्राणायाम, अमृताशन आहार (उबला अन्न) जड़ी-बूटी कल्प, गंगा, जल पान, जैसे उपाय उपचार बताये जाते हैं । इसे संक्षेप में पंच तत्वों के परिमार्जन की व्यवस्था कहा जा सकता है । शरीर पाँच तत्वों से ही तो बना है ।

सूक्ष्म शरीर को प्राणवान बनाने के लिए गायत्री जप अनुष्ठान, नित्य अग्निहोत्र, ध्यान-धारणा, प्रत्याहार, बंध, मुद्रा जैसे क्रिया कृत्य कराये जाते हैं । स्वाध्याय और सत्संग का नियमित क्रम चलता है । सूत्र संचालकों के साथ व्यक्तिगत समस्याओं पर परामर्श करने की व्यवस्था है । इस साधना व्यवस्था को पंच प्राणों का परिमार्जन कहना चाहिए । सूक्ष्म शरीर पंच प्राणों से बना है । उन्हें पाँच प्रमुख देवता भी कहा जा सकता है । इन अभ्यासों से अतीन्द्रिय क्षमताएँ जगती हैं ।

उपरोक्त साधना क्रम में आराधना, साधना और उपासना के त्रिविध सिद्धान्तों का समावेश है । एक शब्द में इन्हें सरस्वती, लक्ष्मी, काली की—ब्रह्मा, विष्णु, महेश की समन्वित साधना भी कहा जा सकता है । शरीर, मन और अन्तःकरण के परिष्कार की इस समन्वित साधना क्रम के आधार पर आशाजनक पृष्ठभूमि बनती है ।

प्रत्यक्ष साधना और प्रत्यक्ष सिद्धि

प्राथमिक पाठशाला की पढ़ाई पूरी करने के उपरान्त ऊँची कक्षाओं में प्रवेश मिलता है । हाईस्कूल उत्तीर्ण कर लेने के उपरान्त ही कॉलेज की पढ़ाई पूरी होती है । स्नातक बन जाने के पश्चात् ही स्नातकोत्तर कक्षाओं में पढ़ना शुरू किया जाता है । क्रमिक गति से चलते रहने पर ही लम्बी यात्रा पूरी होती है । छलाँग लगाकर ऊँची छत पर नहीं पहुँचा जाता । व्यावहारिक जीवन में शालीनता, सज्जनता, सुव्यवस्था, संयमशीलता आदि सत्प्रवृत्तियों का प्रतिष्ठापन और संवर्धन करने के उपरान्त ही पूजा विधानों के सफल होने की आशा करनी चाहिए । गन्दगी से सना बच्चा यदि माता की गोद में चढ़ने के लिए मचले तो वह उसकी इच्छा पूरी नहीं करती, प्यारा लगते हुए भी उसके रोने की परवाह नहीं करती । पहला काम वह उसे धोने का करती है । बच्चों की उतावली सफल नहीं होती, माता की व्यवस्था बुद्धि ही कार्यान्वित होती है ।

आध्यात्म क्षेत्र में इन दिनों एक भारी भ्रान्ति फैली हुई है कि पूजा-परक कर्मकाण्डों के सहारे जादूगरों जैसे चमत्कारी प्रतिफल मिलने चाहिए । देवता को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्तवन, पूजन की मनुहार उपहार के आधार पर फुसलाया जाना चाहिए और उससे अपनी उचित-अनुचित मनोकामनाओं को पूरा कराया जाना चाहिए । यह स्थापना अनैतिक है असंगत भी । यदि इतने सस्ते में मनोकामनाएँ पूरी होने लगें तो सफलता के लिए क्यों तो कोई परिश्रम करेगा और क्यों पात्रता विकसित करेगा ? फिर सभी उद्योगी, परिश्रमी व्यक्ति मूर्ख समझे जायेंगे और देवता की जेब काटकर उल्लू सीधा करने वाले चतुर । यह मान्यता यदि सही रही होती तो देव पूजा में अधिकांश समय बिताने वाले पंडित-पुजारी, साधु-बाबाजी अब तक उच्चकोटि की उपलब्धियाँ प्राप्त कर सकने की स्थिति में पहुँच गए होते । जबकि उनमें से अधिकांश सामान्यजनों से भी गई-गुजरी स्थिति में देखे जाते हैं । इसी प्रकार जंत्र-मंत्र के फेरे में पड़े रहने वाले व आतुर और भावुक व्यक्ति बड़ी-बड़ी आशा-अभिलाषाएँ संजोये रहते हैं । समय बीतता जाता है और सफलता के दर्शन नहीं होते तो फिर वे निराश होने लगते हैं । प्रयास बन्द कर देते हैं और लगभग नास्तिक स्तर के बन जाते हैं ।

यह दुःखद परिस्थिति इसलिए उत्पन्न होती है कि उन्होंने आत्म-विज्ञान का तत्व-दर्शन समझने में पूर्व आतुरतावश मात्र कर्मकाण्ड आरम्भ कर दिये और बालू के महल बनाने लगे । जबकि होना यह चाहिए था कि बीज से वृक्ष उत्पन्न होने के सिद्धान्त के साथ जुड़े हुए अन्य तथ्यों को भी समझते और उन पर ध्यान देते । बीज से वृक्ष बनने की बात सच है । साधना से सिद्धि मिलने की भी । परन्तु आदि और अन्त को अपना लेना बीज का विस्तार उपेक्षित कर देना सही नहीं है । बीज को उर्वर भूमि, खाद और पानी तीनों का संयोग मिलना चाहिए तभी वह अंकुरित होगा, बढ़ेगा और फूलेगा-फलेगा । इतना किए बिना बीज से वृक्ष बना देने की जादूगरी कोई बाजीगर ही कर सकता है । उसी का काम है हथेली पर सरसों जमाना । किसान वैसा नहीं करते । जादूगर रुपये बरसाकर दर्शकों को चकित कर सकते हैं । पर व्यवसायी जानते हैं कि यदि ऐसा सम्भव रहा होता तो यह बाजीगर बिना परिश्रम के करोड़पति हो गये होते ।

देव-अनुग्रह जीवन की परिष्कृति की प्राथमिक आवश्यकता को पूरा किए बिना हस्तगत नहीं हो सकता । म्यान न हो तो खरीदी हुई तलवार कहाँ रखी जाय ? तिजोरी नहीं तो उपार्जित धनराशि को खुली तिखालों में रखकर किस प्रकार सुरक्षित रखा जा सके । पाचन तन्त्र यदि समर्थ न हो तो पौष्टिक आहार को पचाने और उस आधार पर बलवृद्धि का सुयोग कैसे बने ?

उपासना, साधना और आराधना का त्रिविधि संयोग है । इसे त्रिवेणी संगम भी कह सकते हैं । उपासना, पूजापरक कर्मकाण्डों के जप-अनुष्ठानों, ध्यान धारणा को कहा जाता है । साधना-चिन्तन-चरित्र और व्यवहार पर आच्छादित रहने वाली शालीनता को चरित्र-निष्ठा को कहते हैं । आराधना का अर्थ है सेवा-साधना, पुण्य-परमार्थ । इसके लिए कड़ाई से आत्म-संयम बरतना पड़ता है । उस आधार पर की गई बचत को समय और साधनों को, सत्प्रवृत्ति संवर्धन के लिए लगाना पड़ता है । गिरों को उठाने और उठतों को उठाने के लिए भी 'सादा जीवन उच्च विचार' का सिद्धान्त यही है । जो सादगी से रह सकेगा, न्यूनतम में अपना निर्वाह सन्तोष कर सकेगा, उसी के लिए यह सम्भव है कि आदर्शवादिता को चरितार्थ कर सके । औसत नागरिक स्तर का निर्वाह अपनाने पर ही कोई ईमानदार रह सकता है और परमार्थ के लिए आवश्यक भाव सम्वेदना उभार सकता है । उदार सेवा-साधना का परिचय दे सकता है ।

उपासना, साधना, आराधना का जीवनचर्या में समावेश होना आवश्यक है । पेट प्रजनन की, लोभ-मोह और अहंकार की तृप्ति के लिए तो हर कोई व्यस्त, उद्विग्न देखा जा सकता है । पर यह भौतिक क्षेत्र की उछल-कूद हुई । उससे शरीर भर को तात्कालिक रसास्वादन करने का अवसर मिलता है । इन उपलब्धियों से तृष्णा और भी भड़कती रहती है और अधिकाधिक की माँग इस प्रकार बढ़ती जाती है कि उस की पूर्ति सम्भव ही नहीं होती । व्यक्ति सदा अपने आपको असंतुष्ट अभावग्रस्त अनुभव करता है ।

आत्मोत्कर्ष की साधना के लिए शान्तचित्त रहना आवश्यक है । यदि अन्तराल में उद्वेग उभरते रहे, उपलब्धियों की आतुरता उफनती रहे तो वह आन्तरिक सन्तुलन समाधान बन ही न पड़ेगा जिसकी पृष्ठभूमि पर अन्तराल की प्रसुप्त शक्तियों को जगाया जा सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर के द्वारा ही संसार से उसकी पदार्थ सम्पदा से सम्बन्ध जुड़ता है । अनुभव भले ही न करें, पर चेतना की ऊर्जा भी शरीर को ही प्रभावित करती है । आत्मिक प्रगति जप, ध्यान, प्राणायाम आदि शरीर माध्यम से ही बन पड़ती हैं । आत्मसत्ता तक अपने आपको शरीर के नियंत्रण में चलती अनुभव करती है । इन सब तथ्यों पर ध्यान देने से काय कलेवर की प्रमुखता बनी दिखती है । अस्तु आवश्यक है कि आत्मोत्कर्ष साधना को शरीर माध्यम से आरम्भ किया जाये । उसकी चिन्तन पद्धति, चरित्र-निष्ठा और पारस्परिक सम्बन्धों में आदर्शवादिता का समावेश किया जाये । प्रत्यक्ष जीवन में आदर्श ही आध्यात्म है । जीवनचर्या के प्रत्येक पक्ष में मानवी गरिमा से सम्बन्धित सभी अनुबन्धों को सतर्कतापूर्वक पालन किया जाये । इसके लिए परिशोधन और उत्कर्ष की उभय-पक्षीय, क्रिया-प्रक्रिया अपनायी जाय । अपना स्तर ऐसा बनाया जाय जो आत्म सन्तोष प्रदान कर सके । कृतकृत्यता सम्पन्न हुई अनुभव कर सके । साथ ही दूसरों पर अनुकरणीय उदाहरण की प्रभावी छाप छोड़ी जा सके । यह निश्चय करने के उपरान्त उसे व्यवहार में उतारने के लिए जुट जाना जाहिए । गलाई और ढ़लाई की दुहरी क्रिया-प्रक्रिया निरन्तर चलती रहनी चाहिए ।

साधनात्मक उपचारों से पूर्व यही करणीय है । राजयोग के आठ उपचारों में यम-नियम को प्रथम स्थान दिया गया है । इसके उपरान्त आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि के अगले चरण उठते हैं । हठयोग में भी नाड़ी शोधन प्रथा है । चिकित्सक उपवास विवेचन आदि के द्वारा प्रथम पेट की सफाई कराते हैं इसके बाद उपचार का क्रम चलाते हैं ।

स्थूल, सूक्ष्म और कारण-शरीर परस्पर गुंथे हुए हैं । क्रिया-विचारणा और भाव सम्वेदना का उतार-चढ़ाव निरन्तर चलता रहता है । इसलिए अन्न, जल, हवा की तरह तीनों ही क्षेत्रों को सुसंतुलित बनाने वाली जीवनचर्या अपनानी पड़ती है । उसमें तीनों ही पक्षों का समाधान करना पड़ता है । कॉलेज से पहले वाली कक्षाओं में भाषा, गणित, भूगोल, इतिहास आदि कई विषय साथ-साथ पढ़ने पड़ते हैं । स्नातकोत्तर कक्षाओं में एक विषय ही रह जाता है । जिन्होंने सर्वतोभावेन अपना लक्ष्य आत्म-सत्ता का अभ्युदय निश्चित कर लिया है, जो सांसारिक, पारिवारिक उत्तरदायित्वों से निवृत्त हो चुके हैं, उन्हें तपश्चर्या और योग साधना के लिए समूची शक्ति नियोजित कर सकना सम्भव है । अन्यथा सामान्यजनों के लिए यही मध्यमार्गीय प्रयास उपयुक्त है ।

शरीरगत संयम साधना का तात्पर्य है—क्षमताओं को बर्बादी से बचा लेना और संग्रहीत जीवनी-शक्ति को किन्हीं महान प्रयोजन के लिए सुरक्षित रखना । संयम, साधना से दुर्बलता, रुग्णता एवं अकाल मृत्यु से भी बचा जा सकता है । इस आधार पर साहस और ओजस् विकसित होता है । कुरूप होते हुए भी शालीनता अपनाने वाला भारी-भरकम, विश्वस्त, प्रामाणिक एवं सुन्दर लगता है । इस प्रकार उसे नकद धर्म के रूप में व्यक्तित्व का विकास और प्रतिभा का निखार का लाभ हाथों-हाथ मिलते देखा जा सकता है ।

मनःक्षेत्र की कल्पना, विचारणा, मेधा, प्रज्ञा यदि उत्कृष्टता अपनाए रहे तो उद्वेगों से तनाबों से सहज बचा जा सकता है । साथ ही विचार तन्त्र संरचनात्मक दिशा में संलग्न रहने पर साधक ऐसे रहस्य खोजते रह सकता है, जो अपने परिकर के लिए ही नहीं समस्त संसार के लिए श्रेयस्कर सिद्ध हो सके । वैज्ञानिकों के अविष्कार इसी आधार पर प्रकट हुए हैं । मनोविकारों से बचे रहना अपनी दूरदर्शी विवेकशीलता को समुन्नत बनाना है । मन को संतुलित करने के लिए सद्विचारों को अपनाने की सहज प्रक्रिया भी काम दे सकती है । व्रतशीलता के सहारे भी उभरने वाले अनौचित्य का दमन हो सकता है । इसी मनोभूमि पर ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग के कल्पवृक्ष उगते एवं परिपक्व होकर विभूतियों का भण्डार भरते हैं । उत्कृष्ट दृष्टिकोण अपनाए रहने वाले व्यक्ति ऐसी कार्य पद्धति अपनाते हैं जिसके सहारे प्रगति प्रसन्नता और सफलता की बहुमुखी उपलब्धियाँ हस्तगत होती रहें ।

भाव सम्वेदना की गंगोत्री अन्तःकरण के गहृवर से प्रकट एवं प्रवाहित होती है । आत्म-भाव का जिस पर भी आरोपण होता है वह परम प्रिय एवं अतीव सुन्दर लगने लगता है । ऐसी दशा में दूसरों का दुःख बँटाने-अपना सुख बाँट देने की प्रवृत्ति सहज हो जाती है । इसी आधार पर आत्म-सन्तोष, जन-सम्मान एवं दैवी-अनुग्रह की असीम वर्षा होती है । इस विधा अमृत-निर्झर का जो रसास्वादन कर सका, उसे स्वर्ग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और मुक्ति का, शान्ति और समाधि का आनन्द निरन्तर मिलता है । ऐसे ही व्यक्ति नर-नरायण और पुरुष-पुरुषोत्तम कहलाते हैं ।

साधना के लिए उपयुक्त साधनों की आवश्यकता

साधना के लिए जिस प्रकार आहार-विहार में अधिकाधिक सात्विकता का समावेश रखने की आवश्यकता है उसी प्रकार उसके लिए अनुकूल वातावरण भी उपलब्ध किया जाना चाहिए । वातावरण से तात्पर्य है उद्देश्य के अनुरूप स्थान एवं सम्पर्क सान्निध्य । इन दोनों का सुयोग न बन पड़ने पर विक्षेपों के घटाटोप जमते रहते हैं और प्रयत्न को अग्रगामी न होने देने वाले अवरोध पग-पग पर आ खड़े होते हैं । इसलिए शान्तिदायक स्थान और उसी तरह के लोगों का सामीप्य भी आवश्यक हो जाता है ।

घर में पूर्वाभ्यास के संचित संस्कार मन पर जमे रहते हैं और वे अभ्यस्त स्वरूप का परिचय निरन्तर देते रहते हैं । इसी प्रकार जिन लोगों के साथ उथले स्तर पर मेलजोल रहा है और उचित-अनुचित व्यवहार चलते रहे हैं । वहीं रहते हुए पूर्वाभ्यासों की प्रभाव प्रक्रिया से बच निकलना कठिन होता है । इसलिए यदि वस्तुतः किसी ठोस परिणाम वाली साधना अभीष्ट हो तो उसके लिए अनुकूल वातावरण की तलाश भी करनी चाहिए । घर रहकर पुराने ढर्रे के—सामान्य घटिया मनोभूमि वाले लोगों के—बीच निर्वाह करते हुए यह कठिन है कि दूरगामी परिणाम उत्पन्न करने वाली महत्त्वपूर्ण साधना बन पड़े । यों नित्य कर्म की तरह ही भगवान का नाम कहीं भी किसी भी स्थिति में लिया जा सकता है । पर ध्यान में तो यह बात रहनी ही चाहिए कि मनोभूमि में सन्तुलन रखने एवं विक्षोप उत्पन्न करने के वातावरण का असाधारण योगदान रहता है । उसकी अनुकूलता प्रतिकूलता अपना भला-बुरा प्रभाव छोड़े बिना नहीं रहती ।

सम्भव हो तो इसके लिए वैसे स्थान में रहने की बात सोचनी चाहिए जैसे कि प्राचीन काल में तीर्थ नाम से प्रख्यात थे । वहाँ प्राकृतिक शोभा शान्ति भी थी । सान्निध्य रहन-सहन, प्रचलन, प्रशिक्षण की दृष्टि से भी अनुकूलता रहती थी । साथ ही परामर्श मार्गदर्शन का उपयुक्त सत्संग भी मिलता रहता था । सभी जानते हैं कि कठिन रोगों के इलाज के लिए अस्पताल में इसलिए भर्ती होना पड़ता है कि वहाँ कुशल चिकित्सक एवं उपचार साधन हर घड़ी उपलब्ध रहते हैं । स्वास्थ्य लाभ के लिए उपयुक्त जलवायु वाले सेनेटोरियमों उपचार ग्रहों में स्थान पाने की चेष्टा की जाती है क्योंकि चिकित्सा सामान्य होते हुए भी वातावरण की विशिष्टता रोग निवारण एवं स्वास्थ्य सम्पादन में विशेष सहायता कहती है । साधना को यदि आत्मिकी क्षेत्र की काया-कल्प चिकित्सा माना जाये तो उसके लिए अस्पताल में सेनेटोरियमों में भर्ती होने जैसा सुयोग वहाँ मिल सकता है जहाँ के वातावरण में आध्यात्मिकता का सहज समावेश विद्यमान है । जिनके पास समय या सुविधा नहीं है वे घर में थोड़ा हटकर उपयुक्त वातावरण ढूँढें कम से कम इतना तो करें ही एकान्त कक्ष न होने की दशा में खुली छत पर जा बैठने या पास-पड़ौस में ही कोई पार्क, उद्यान, मन्दिर, जलाशय तट जैसा स्थान खोजने का प्रयत्न करें । न मिल सके तो 'कुछ न से तो कुछ अच्छा' की नीति अपनाकर घर में भी यथासम्भव अधिक स्वच्छता एवं निस्तब्धता बनाये रखने की चेष्टा करें । यह बात भुलाये जाने योग्य नहीं है कि साधना के लिए उपयुक्त वातावरण का सुनिश्चित महत्त्व रहता है ।

उच्चस्तरीय साधना की दृष्टि से हिमालय की छाया और गंगा की गोद का असाधारण महत्त्व माना गया है । सप्त ऋषियों से लेकर मध्यवर्ती योगी तपस्वियों की सफल साधनाएँ प्रायः इसी क्षेत्र में सम्पन्न होती रही हैं । भगवान राम और उनके तीनों भाई, पारिवारिक उत्तरदायित्वों से निवृत्त होते ही आत्म-साधना के लिए अयोध्या छोड़कर हिमालय पहुँचे थे । वशिष्ठ गुफा के थोड़े-थोड़े फासले पर चारों ने अपनी-अपनी एकान्त कुटियाएँ बनाई थीं । राम देव प्रयाग में, लक्ष्मण, लक्ष्मण झूला में, भरत ऋषिकेश में और शत्रुघ्न मुनी की रेती में जा बसे थे । अयोध्या में उन्हें स्थान की कमी नहीं थी, पर स्थान एवं व्यक्ति परिवार के साथ जो सूक्ष्म सम्बन्ध जुड़े होते हैं वे चित्त शोधन की प्रक्रिया में अन्त तक बाधक ही बने रहते हैं । इसलिए स्थान परिवर्तन की उपयोगिता ऐसे दिव्य प्रयोजन को कितनी अधिक होती है उसे सहज ही समझा जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगवान कृष्ण ने युवावस्था में तप साधना बद्रीनाथ में की थी और वृद्धावस्था में वे समुद्र तट पर द्वारिका चले गए थे । जन्म स्थान एवं क्रीड़ा क्षेत्र मथुरा वृन्दावन इसके लिए उन्हें रुचा नहीं था । पढ़ने के लिए भी वे उज्जैन संदीपन ऋषि के आश्रम में ही रहे थे । घर में ट्यूशन लगाने या पड़ौस के स्कूल में पढ़ने से उन्हें यह बात बनती दिखाई नहीं पड़ी जो उच्चस्तरीय संस्कार सम्पादन के लिए गुरुकुलों का आश्रय लेने से ही सम्भव होती है । राम और लक्ष्मण की शिक्षा भी माता-पिता के लाड़-प्यार और सुविधा भरे राजमहल में रहकर सम्पन्न नहीं हुई थी उन्हें विश्वामित्र के आश्रम में आवश्यक शिक्षा प्राप्त करने के लिए प्रवेश पाना और निवास करना पड़ा था । इसी कारण कृष्ण मथुरा या गोकुल में नहीं उज्जैन संदीपन ऋषि के आश्रम में पूरी किशोरावस्था तक पढ़े थे ।

हिमालय के हृदय क्षेत्र का इतिहास पढ़ने से प्रतीत होता है कि भारत के अधिकांश आध्यात्म विज्ञानी इसी क्षेत्र में लम्बे समय तक रहकर अपनी-अपनी साधनाएँ करते रहे हैं । समस्त ऋषियों की गुफा, कन्दराएँ इसी क्षेत्र में पायी गईं हैं । पाण्डवों की तरह अन्यान्य महत्त्वपूर्ण व्यक्ति अपनी साधना एवं प्रायश्चित प्रक्रिया के लिए इसी क्षेत्र में डेरा डालते रहे हैं । गंगाजल, गंगा तट साधना की अवधि में असाधारण रूप से सहायक सिद्ध होता है । प्रसिद्ध है कि जब गंगा लेकर भागीरथ आगे-आगे चल रहे थे तो मार्ग में हरिद्वार के निकट सप्त ऋषि अपनी सात कुंजों में तप करते पाये गये । गंगा ने उन्हें हटाया नहीं वरन् स्वयं ही सात भागों में विभक्त होकर उनके साधना स्थलों को यथावत् रहने दिया । यह स्थान अभी सप्त सरोवर के नाम से प्रख्यात है । शान्ति-कुंज ब्रह्मवर्चस और गायत्री तीर्थ उसी दृष्टि से इस क्षेत्र में बनाये गये हैं कि पूर्ण संचित संस्कारों का इस भूमि से विशेष प्रभाव जुड़ा रहने के कारण साधकों की सफलता सरल होती रहे ।

प्राचीन काल के ऐतिहासिक घटनाक्रमों में—उच्चस्तरीय व्यक्तियों में अपने ढंग की विशेष ऊर्जा होती है । जो उन व्यक्तियों के या घटनाओं के न रहने पर भी चिरकाल तक अपनी विशिष्टता से उस स्थान एवं क्षेत्र को प्रभावित किये रहती है । उन स्थानों के सम्पर्क में आने वाले भी उससे प्रभावित होते हैं । कसाईखाने, शराब गृह, चकले, जुआरियों के अड्डे, श्मशान आदि जहाँ रहे होते हैं वे स्थान उन दुष्ट कर्मियों के न होने पर भी उन स्थानों पर अपनी काली छाया डाले रहते हैं और वहाँ रहने या आने जाने वालों को उन दुष्प्रवृत्तियों को अपनाने के लिए उत्तेजित करते रहते हैं । यह बात श्रेष्ठ कृत्यों या व्यक्तियों के सम्बन्ध में भी है । गुरुकुल, आरण्यक, तपोवन, ऋषि आश्रम जहाँ किसी समय रहे थे उन स्थानों में वह पुरातन वातावरण अभी भी अपने प्रभाव का परिचय देता हुआ मिल सकता है । तीर्थस्थान ऐसे ही ऐतिहासिक स्थानों को कहते हैं जहाँ प्राकृतिक वातावरण, पवित्र जलाशय जैसी शान्तिदायक स्थिति रहने के कारण भूतकाल के आध्यात्मवादी प्रयत्नों की शृंखला जुड़ी रही है । ऐसे स्थानों में सम्पन्न हुए सत्प्रयत्न चिरकाल तक अपना प्रभाव बनाए रहते हैं और उसके सम्पर्क में आने पर सामान्यजन अधिक लाभ उठाते हैं । इन तीर्थों का वातावरण धूर्त अनाचारियों ने भावुक धर्म प्रेमियों का शोषण करते रहने के कारण बुरी तरह बिगाड़ दिया है । जनसंख्या बढ़ने, व्यावसायिक क्षेत्र एवं पर्यटन केन्द्र बनने से वह पुरातन उत्कृष्टता नहीं रही तो भी पुरातन ऊर्जा इतनी प्रचण्ड है कि अवांछनीयता बढ़ जाने पर भी विशेषताएँ अभी भी अन्यत्र की तुलना में कहीं अधिक पायी जा सकती हैं । साधना के लिए ऐसे ही स्थान चुने जा सके तो सामान्य स्थानों की तुलना में अधिक सफलता मिलने की सम्भावना रहती है ।

साधक का आहार अपने आप में एक साधना है आरोग्य क्षीण होने पर आयुर्विज्ञान के निष्णात उन्हें दूध-कल्प, छाछ-कल्प, आम्र-कल्प आदि आहार विशेष पर रखकर शरीर शोधन कृत्य करते हैं । इसी प्रकार खाद्य पदार्थों के अन्तराल में रहने वाली चेतना शक्ति को ध्यान में रखते हुए साधकों को आहार में कुछ विशिष्ट वस्तुओं का समावेश करके उन्हें पकाने का विशेष उपक्रम बनाकर ऐसी स्थिति उत्पन्न करते हैं जिसमें वह आहार ही एक प्रकार के आध्यात्मिक काय-कल्प का आधार बन सके । यज्ञीय धान्यों में तिल, जौ, चावल की प्रमुखता है । इन्हें हविष्यान भी कहते हैं । इन पर अवलम्बित रहकर भी एक प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से साधना का लाभ उठाया जा सकता है । अस्वाद व्रत, शाकाहार, फलाहार, एक समय का भोजन, दो वस्तुओं पर निर्भर रहना जैसे कितने ही उपवास तप के छोटे-बड़े प्रयोजन हैं उनमें से साधक की स्थिति के अनुरूप निर्धारण किये जाते हैं । किस ईंधन से पकाया जाय, पकाने और परोसने वाले के संस्कार कैसे होंगे यह सब बातें भी साधक की आत्म-सत्ता को प्रभावित करती हैं ।

जहाँ जैसे लोगों का बाहुल्य होता है वहाँ का प्रत्यक्ष और परोक्ष माहौल भी वैसा ही बन जाता है । व्यक्ति विशेष की विद्युत शक्ति दूसरों को प्रभावित करती है । समर्थ व्यक्ति अपने से कमजोरों पर छाप छोड़ते हैं । यह मानवी विद्युत के चमत्कार संगति के प्रभाव इन पर सर्वत्र अपनी क्षमता का परिचय देते पाये जाते हैं । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए प्रचण्ड प्राण ऊर्जा सम्पन्न व्यक्तियों के निकट रहकर उच्चस्तरीय प्रेरणाएँ तथा सामर्थ्य अनायास ही पाते रहने का सुयोग प्राप्त किया जा सकता है । तीर्थों की एक बड़ी विशेषता यह थी कि वहाँ निवास करने वाली प्रतिभाएँ परामर्श शिक्षण से ही नहीं अपनी प्रचण्ड ऊर्जा से भी सम्पर्क में आने वालों को महत्त्वपूर्ण अनुदान अनायास ही हस्तान्तरित करती रहती थी । इन दिनों भी उन उपलब्धियों का सर्वथा अभाव नहीं हुआ है । तलाश करने पर ऐसे उत्कृष्टता भरे स्थान एवं वातावरण अभी भी उपलब्ध हो सकते हैं जिनके सहारे साधना को अपेक्षाकृत अधिक सरलता से सफल बनाया जा सके ।

इस प्रकरण में साधनों, व्यक्तियों, स्थानों, उपकरणों का उल्लेख किया गया है जो साधना को समर्थ बनाने में काम आ सकते हैं । आवश्यक नहीं कि वे वैसे ही हों जैसा कि उन्हें होना चाहिए । इस अभाव की पूर्ति अपनी सघन श्रद्धा को आरोपित करके भी की जा सकती है । एकलव्य ने मिट्टी के द्रोणाचार्य और मीरा ने पत्थर के कृष्ण बनाये और सर्व समर्थ बन गये । स्वतः समर्थ सहायक मिल सके तो प्राथमिकता उन्हें ही देनी चाहिए यदि न मिलें तो अपनी श्रद्धा का आरोपण करके भी उन्हें प्रभावोत्पादक बनाया जा सकता है, विश्वास के आधार पर झाड़ी से भूत बन सकता है तक तो कोई कारण नहीं कि सामान्य साधन उपकरणों एवं व्यक्तियों को भी इस योग्य बनाया जा सकता है कि वे अपने वास्तविक मूल्य की तुलना में विशिष्ट चमत्कार प्रस्तुत कर सके ।

इस प्रकार स्वाध्याय, सत्संग, मनन-चिन्तन के माध्यम से चिन्तन प्रक्रिया एवं भाव सम्वेदना के क्षेत्र में निकृष्टता निराकरण एवं उत्कृष्टता के संस्थापन, अभिवर्धन की प्रक्रिया सहज गति से चलती रहती है । इस आधार पर बनायी गई स्वनिर्मित चेतना को प्रभावित करने वाला विचार वातावरण उत्कृष्टता सम्वर्धन में ऐसा चमत्कार दिखाता है मानो वह किसी अन्य लोक से, समर्थ देवता या सिद्ध पुरुष वरदान की तरह दिया गया है ।

साधना में सफलता के लिए दो अनिवार्य अवलम्बन

साधना से सिद्धि का सिद्धान्त आध्यात्म क्षेत्र में सर्वमान्य है । शास्त्रकारों, आप्त पुरुषों, महा-मनीषियों, तपस्वी, साधकों ने एक स्वर से इस तथ्य को मान्यता दी है कि मानवी सत्ता दैवी विभूतियों का अजस्र भाण्डागार भरा पड़ा है । उसे जगाने के लिए साधना-परक पुरुषार्थ किया जा सके तो अविज्ञात प्रसुप्त को प्रत्यक्ष होने का अवसर मिल सकता है ।

अप्रत्यक्ष के प्रकटीकरण को लक्ष्य रखकर किए गए प्रयासों को साधना कहते हैं । उसके दो प्रयोजन हैं एक अन्तराल की प्रसुप्त विभूतियों का जागरण दूसरी अनन्त ब्रह्माण्ड में संव्याप्त ब्राह्मी चेतना का अनुग्रह-अवतरण । यह दोनों प्रयोजन देखने में भिन्न प्रतीत होते हैं किन्तु वस्तुतः हैं अविच्छिन्न एक-दूसरे के पूरक ।

बीज में वृक्ष बनने की समर्थता सन्निहित है, पर वह अनायास ही प्रकट नहीं होती उसके लिए उपयुक्त भूमि में बोने, खाद पानी का प्रबन्ध करना पड़ता है । इतना बन पड़ने पर अंकुर उत्पन्न होता है । यह आत्म-जागरण का प्रयास हुआ । बीज जमीन से खुराक खींचने लगता है, यह उसका अपना पुरुषार्थ है । आत्म साधना इसी को कहते हैं कि बीज अंकुरित हो, जड़ पकड़े जमीन से खुराक खाने और पत्तों के द्वारा हवा में साँस खीचने लगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्राह्मी चेतना का अनुग्रह है बाहरी सहायता उपलब्ध करना । पौधा हवा से साँस खींचता है । यह हवा उसकी अपनी कमाई नहीं है । वह तो पहले से ही मौजूद है । पत्तों के साँस लेने में सक्षम होते ही वह अभीष्ट मात्रा में मिलने लगती है । सभी जानते हैं कि पेड़ों की चुम्बकीय शक्ति बादलों को बरसाने के लिए बाध्य करती है । सभी जानते हैं कि हरे-भरे फूले-फले वृक्ष को देखकर उसे जी भरकर निहारने, छाया, सुगन्ध, शोभा का—फल-फूलों का लाभ लेने के लिए कीट-पतंग, पशु-पक्षी, मनुष्य सभी उनके समीप दौड़ते हैं । वह बाहरी अनुग्रह हुआ । पौधे की तरह जब आत्म-सत्ता अन्तः साधना से अपनी प्रसुप्त गरिमा को प्रकट करते हैं तो लोक-लोकान्तरों से दिव्य वरदान भी बादलों की तरह बरसने लगते हैं । सत्प्रवृत्तियों से प्रसन्न होकर देवता आकाश से फूल बरसाते हैं । इस मान्यता में इसी रहस्य का उद्घाटन है कि साधना के फलस्वरूप भीतर के उभार और ऊपर के अनुग्रह का दुहरा लाभ मिलता है ।

देवता पूजा से प्रसन्न होकर मनोकामनाएँ पूर्ण करने और वैभव बरसाने लगते हैं । इस भ्रम जंजाल से प्रत्येक यथार्थ प्रेमी को अपना पीछा छुड़ा लेना चाहिए । दैवी शक्तियाँ इतनी ओछी नहीं है कि मनुष्य उन्हें बाग् जाल में फँसा सके और छुटपुट पूजा उपचारों से अपने भक्त होने का विश्वास दिला सके । जादू की छड़ी घुमाने से उत्पन्न होने वाले चमत्कारों की तरह जो तरह-तरह के जाल बुनते रहते हैं उन्हें निराश ही रहना पड़ता है । कोई देवता कबूतर की तरह जाल में नहीं फँसता । कोई देवी मछली की तरह आटे की गोली नहीं निगलती । कोई मंत्र अलादीन का जादुई चिराग नहीं है । आध्यात्म विज्ञान का एक ही मान्यता प्राप्त सिद्धान्त है—साधना से सिद्धि । जिन्होंने कुछ महत्त्वपूर्ण पाया है उन्होंने इसी तथ्य को हृदयंगम किया है और पात्रता विकसित करने वाले साधनात्मक पुरुषार्थ के सहारे अपनी यथार्थता को बढ़ाया है ।

साधनात्मक प्रयोग, उपचार, क्रिया-कृत्य आरम्भ करने के साथ-साथ एक समस्या का समाधान करना होता जोकि प्रगति पथ के अवरोधों को कैसे हटाया जाय ? अवरुद्ध द्वार कैसे खोला जाय ? आत्मिक प्रगति में सिद्धियों की उपलब्धि से सबमें प्रमुख बाधक अपने कुसंस्कार ही होते हैं । दृश्यमान दुष्कर्म अपना बिस्तार समेट कर अदृश्य संस्कारों का रूप बनकर अचेतन की गहरी परतों में जा घुसते हैं और वहीं से अनेक प्रकार के संकटों का सृजन करते रहते हैं । आग जहाँ रखी जाती है, वही जलाना आरम्भ कर देती है । तेजाब का स्वभाव ही गलाना है वह जहाँ भी रखा जायेगा सामर्थ्यानुसार अपने प्रभाव का परिचय देता रहेगा । अन्तःक्षेत्र में प्रतिष्ठित दुर्बुद्धि और दुष्प्रवृति का समन्वय कुसंस्कार है । यही है जो न साधना को सिद्ध होने देता है और न उस निमित्त श्रद्धा जमने मन लगने तथा गम्भीर प्रयत्न करने देता है । उथले प्रयत्नों का गहरा प्रतिफल कैसे मिले ? कुसंस्कार ही है तो यमदूतों की तरह पग-पग पर त्रास देते हैं । व्यक्तित्व को हेय बनाते हैं । रुग्णता एवं उद्विग्नता के अभिशाप थोपते हैं । सम्पर्क क्षेत्र से असहयोग, विग्रह विद्वेष का वातावरण बनाते हैं । सर्वविदित है कि दुर्गुणी भीतर से जलता है और बाहर से मिटता है ।

नरक लोक में यमदूतों द्वारा दिए जाने वाले त्रासों का वर्णन कथा पुराणों में सुनने को मिलता रहता है । कषाय-कल्मषों से आच्छादित अन्तःकरण ही नरक है । अपने ही दुर्गुण दूसरों के साथ दुर्व्यवहार करते हैं । अपनी ही दुर्बुद्धि अचिन्त्य चिन्तन में निरत रहकर कुमार्ग पर धकेलती है । दुष्प्रवृत्तियाँ ही उलटकर विपत्तियों की तरह बरसती हैं । यमदूत और कुछ नहीं अपने ही कुसंस्कारों द्वारा उत्पन्न किए गए भूत-प्रेत हैं । जो क्रिया की प्रतिक्रिया का परिचय देते हैं और अनाचारों को तोड़-मरोड़ कर रख देते हैं । नरक और यम-त्रास मनुष्य की आत्म-सत्ता में ही सृष्टा ने सुनियोजित रीति से गुंथ दिए हैं ।

साधना की प्रगति में सर्वप्रथम इसी मोर्चे पर जूझना पड़ता है । साधना को संग्राम कहा गया है । यही अर्जुन का महाभारत है । उसे लड़े बिना कोई चारा नहीं । कृष्ण का आग्रह इसी निमित्त था । जब तैयार हो गया तो वह उसका रथ चलाने, घोड़े हाँकने, रास्ता बताने और विजय दिलाने के लिए वचनबद्ध हो गए । साधना यहीं से आरम्भ होती है । साधक को अन्तराल के धर्म क्षेत्र में और व्यवहार के कर्म क्षेत्र में उच्च उद्देश्यों के लिए अग्रगामी होना पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गाण्डीव उठाने और "करिष्ये वचनं तव" का संकल्प करने के उपरान्त ही सामान्य-सा पाण्डु पुत्र भगवान का अनन्य सहचर महान अर्जुन बनता है । यही है साधना से सिद्धि की पृष्ठभूमि ।

भीतरी प्रगति और बाहरी उपलब्धि के लिए साधना मार्ग पर अग्रसर होना होता है । यह मंजिल अपने ही पैरों चलकर पूरी करनी पड़ती है । मार्ग में सहायक सहयोगी भी मिलते हैं और लक्ष्य तक पहुँचने पर अभीष्ट उपहार उपलब्ध होते हैं किन्तु ऐसा नहीं होता कि अपने पैरों को कष्ट देने से बचा लिया जाय और किसी दूसरे के कन्धे पर बैठकर यह यात्रा पूरी करली जाय । दैवी शक्तियों के वरदान अनुदान प्राप्त होने की परम्परा तो है, पर वह लाभ विजेंताओं को मिलता है । छात्रवृत्ति या उपाधि उत्तीर्ण छात्रों को मिलती है । शिक्षा आरम्भ करने से पूर्व ही यह दोनों अनुदान हस्तगत हो सकें ऐसा देखा सुना नहीं गया । साधना का साहस करने से पूर्व सिद्ध पुरुषों के अनुदान आशीर्वाद अथवा देव सत्ताओं को सिद्धि वरदान मिलने लगें, ऐसी अपेक्षा करना व्यर्थ है ।

आत्मिक प्रगति के मार्ग पर चलने के लिए भी इसी प्रकार दो कदम उठाते हुए बढ़ना होता है जैसा कि आये दिन सभी चला करते हैं । पैर दो हैं । चलने वाले इन्हीं को लेफ्ट राइट करते हुए आगे बढ़ते हैं । आध्यात्म क्षेत्र में लक्ष्य तक पहुँचने के लिए जो कदम बढ़ाने पड़ते हैं उनमें से एक का नाम है—परिशोधन । दूसरे का नाम परिष्कार । परिशोधन अर्थात् संचित कषाय-कल्पषों का कुसंस्कारों का, दुष्कर्मों के प्रारब्ध संचय का निराकरण । परिष्कार अर्थात् श्रेष्ठता का जागरण अभिवर्धन । सुसंस्कारिता का जीवन क्रम में अधिकाधिक समावेग । यह दो उपक्रम ही वे दो कदम हैं जिन्हें बढ़ाते हुए आत्मिक क्षेत्र की सफलता सम्भव होती है ।

यही राजमार्ग सब के लिए हैं । इसमें पगदण्डी वाला 'शार्टकट' ढूँढ़ना व्यर्थ है । चुटकी बजाय तो ऋद्धि-सिद्धियों की बात सोचते हैं, कुछ ओछे-तिरछे उपचारों के सहारे भौतिक सफलताओं की तुलना में असंख्य गुनी अधिक महत्त्वपूर्ण आत्मिक सफलता का सपना देखते हैं वे यथार्थ से कोसों दूर हैं । मनमोहक खाने वाले, स्वप्नदर्शी व्यर्थ ही मृग तृष्णाओं में भटकते रहते हैं । बड़ी उपलब्धियों का बड़ा मूल्य चुकाना पड़ता है । हर साधक को सिद्धावस्था तक पहुँचने के लिए आत्म-शोधन और आत्म-परिष्कार के अवलम्बन अनिवार्य रूप से अपनाने होते हैं ।

परिशोधन को तपश्चर्या कहते हैं और परिष्कार को योग साधना । तप की गर्मी से कुसंस्कार जलते हैं और प्रसुप्त जगते उभरते हैं । योग से परब्रह्म के साथ एकात्म स्थापित करने का अवसर मिलता है । बल्ब तब प्रकाशयान होता है जब तारों के माध्यम से वह बिजली के उत्पादन केन्द्र के साथ सम्बन्ध जोड़ता है । परमात्मा बिजलीघर है और आत्मा बल्ब । दो तार मिलने पर ही करेन्ट चालू होता है । आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ने से ही साधक में दिव्य चेतना की विभूतियाँ बढ़ने का प्रमाण परिचय मिलने लगता है । योग अर्थात् आत्मा को परमात्मा से जोड़ने वाली भावनात्मक प्रक्रिया । तप अर्थात् संचित कुसंस्कारों दुष्कर्मों का दहन—प्रायश्चित । तप अर्थात् उस आन्तरिक ऊर्जा का उद्भव जिसके सहारे सत्प्रयोजन का पराक्रम जगे और उत्कृष्टता के अवधारण का साहस उभरे ।

कपड़ा रंगने से पहले उसे भली प्रकार धोना पड़ता है । बीज बोने से पूर्व भूमि तैयार करनी होती है । कारतूस चलाने का समय तब आता है जब अच्छी बन्दूक हाथ लग जाती है । पूजा से पूर्व स्नान करने, धुले वस्त्र पहनने, बुहारी लगाने की आवश्यकता होती है । भोजन करने से पूर्व हाथ धोते हैं । इन्जेक्शन लगाने से पूर्व रुई को गरम पानी में उबालते हैं । इन उदाहरणों में परिशोधन की प्राथमिकता है । यही बात आत्मिक प्रगति के सम्बन्ध में भी है । ईश्वरीय अनुग्रह प्राप्त करने से पूर्व उस दिव्य अवतरण के लिए अन्तःकरण को बुहारने, धोने, लीपने, पोतने की आवश्यकता पड़ती है । अवतरण बाद में होता है । दिवाली आने से पूर्व ही लक्ष्मी पूजन के लिए घरों की रंगाई-पुताई होती है । दूल्हा बरात लेकर आये उससे पूर्व भी ऐसी ही सफाई सजावट होती है । दैवी अनुकम्पा जीवन में उतरे इससे पूर्व उसे भी कुसंस्कारों से युक्त करना पड़ता है । तपश्चर्या की प्राथमिकता है । योग साधना का कदम इससे आगे का है । राजयोग में यम, नियम पालने की मनोभूमि बनने पर ध्यान धारणा के अगले कदम उठते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपासना का समुचित प्रतिफल प्राप्त करने के लिए यह आवश्यक है कि आत्म-शोधन की प्रक्रिया पूर्ण की जाय । यह प्रक्रिया प्रायश्चित विधान से ही पूर्व होती है । हठयोग में शरीर शोधन के लिए नेति-धोति, वस्ति, न्यौली, वज्रोली, कपाल भाँति की क्रियाएँ करने का विधान है । राजयोग में यह शोधन कार्य यम, नियमों के रूप में करना पड़ता है । भोजन बनाने से पूर्व चौका, चूल्हा, बर्तन आदि की सफाई कर ली जाती है । आत्मिक प्रगति के लिए भी आवश्यक है कि अपनी गतिविधियों का परिमार्जन किया जाये । गुण, कर्म, स्वभाव को सुधारा जाये और पिछले जमा हुए कूड़े-करकट का ढेर उठाकर साफ किया जाये । आयुर्वेद के काया-कल्प विधान में वमन, विरेचन, स्वेदन, स्नेहन आदि कृत्यों द्वारा पहले मल शोधन किया जाता है तब उपचार आरम्भ होता है । आत्म-साधना के सम्बन्ध में भी आत्म-शोधन की प्रक्रिया काम में लायी जाती है ।

परिशोधन प्रयोजन के लिए तपश्चर्याओं के अनेकानेक विधि-विधान हैं । उन सबसे सर्व सुलभ एवं अनेक दृष्टियों से सत्परिणाम उत्पन्न करने वाली साधना चान्द्रायण व्रत की है । उसे आध्यात्मिक काया-कल्प कहा गया है । काया-कल्प चिकित्सा से शरीर में भरे हुए मल विकारों की पूरी तरह सफाई की जाती है । तथा ऐसे उपचार अपनाये जाते हैं जिससे नये रक्त का नाड़ियों में संचार होने लगे । पाचन तन्त्र नई स्फूर्ति के साथ काम करने लगे । माँसपेशियाँ फिर से कड़ी हो जायँ और नाड़ियों में प्राण प्रवाह नयी चेतना के साथ बह निकले । चान्द्रायण तपश्चर्या को भीं इसी स्तर की माना है । उसका मुख्य प्रयोजन परिशोधन होते हुए ही लगे हाथों परिष्कार का दुहरा सिलसिला भी चल पड़ता है ।

एकांगी साधना : अधूरी साधना

विपश्च जितने विद्या-विभूषण और मेधावी थे, साधना के संस्कार भी उनमें उतने ही सुदृढ़ थे । आत्मसाक्षात्कार की जिज्ञासाएँ किसी के भी अन्तःकरण में जाग सकती हैं; किन्तु ध्येय पूर्ति के लिए मन की भौतिक लालसाओं से निरन्तर लड़ते हुए उन पर विजय प्राप्त करने का साहस किसी-किसी में होता है । विपश्च उसी कोटि की आत्मा थे । आचार्य विद्याबल्लभ को इस तरह का मनस्वी शिष्य प्राप्त करने पर हार्दिक प्रसन्नता थी सो उन्होंने अपने शिष्य को साधना के पथ पर आगे बढ़ाने का कोई भी उपक्रम रिक्त नहीं छोड़ा ।

अन्नमय कोश की प्रारम्भिक साधना को अस्वाद व्रत से प्रारम्भ कर एकमात्र उबले हुए आँवले ग्रहण करने तक ही लम्बी अवधि में उन्होंने एक भी दिन मन को पश्चात्ताप नहीं करने दिया ।

अन्नमय कोश की सिद्धि के क्षण समीप आये, आचार्य प्रवर ने कहा, तात—इस साधना का दूसरा चरण यह है कि तुम अपनी इस अर्जित साधना का लाभ समाज को भी दो, लोगों को जाकर यह बताओ कि समय न केवल आरोग्य का आधार है अपितु उससे शरीर में प्रसुप्त शक्ति कोशों का जागरण होता है । यह शक्ति अदृश्य जगत से सम्बन्ध जोड़ती और हमारी आध्यात्मिक आस्थाओं का अभिसिंचन करती है ।

सो तो ठीक है गुरुदेव ! किन्तु संसार का हर प्राणी अपने आत्म-कल्याण के लिए आप उत्तरदायी है, हम किसी और की चिन्ता क्यों करें ? शास्त्र भी तो यही कहते हैं अपनी आत्मा का उद्धार व्यक्ति को स्वयं ही करना चाहिए । विपश्च ने विनीत वाणी में असहमति दर्शायी ।

आचार्य विद्यावल्लभ को शिष्य के प्रातवाद पर दुःख हुआ । कहा उन्होंने कुछ नहीं, निर्निमेष नीले अम्बर के गहन अन्तराल में देर तक आँखें गड़ाये रहे मानो वहाँ वहीं-कहीं विपश्च का भविष्य लिखा हुआ हो और वे उसे पढ़ने का प्रयत्न कर रहे हों ।

विपश्च ने प्राणमर्य कोश की साधना की, प्राणों को वशवर्ती कर लेने से उनकी अन्तःचेतना विराट् में विचरण करने लगी, उनके आनन पर प्रदीप्त प्राण ऐसा झलझलाता था मानों कोई देश शक्ति धरती पर उतर आयी हो । मनोमयकोश की सिद्धि ने विपश्च को ऐसी मानसिक प्रतिभा प्रदान की जिससे वे खूँख्यार से खूँख्यार जन्तुओं को भी सम्मोहित कर सकते और मृतक में भी नया जीवन फूँक सकते थे । आचार्य प्रवर ने पुनः विपश्च से आग्रह किया उन्हें अपने ज्ञान अपने तप अपनी साधना का लाभ देने के लिए जन संकुल समुदाय में भी जाना चाहिए । किन्तु विवश्च ने हर बार असहमति ही दर्शाई ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय के साथ विपश्च उच्चकोटि के सिद्ध हुए । साधना का विराम आने पर अब क्या किया जाय यह प्रश्न उनके सम्मुख था किन्तु अब आर्यश्रेष्ठ कोई आदेश देने की अपेक्षा मीन धारणा कर चुके थे निर्णय उन्होंने विपश्च पर ही छोड़ा ?

विपश्च ने अब सेवा के क्षेत्र में पदार्पण किया, वहाँ इन्द्रियों के आकर्षण, प्राणों का मोह, मन की तृष्णा, वासना और यश की कामनाएँ उनके स्वागत में पुष्प मालाएँ हाथ में थामे खड़ी थीं । तैरना जल के बीच सीखा जा सकता है, थल में कोरा सिद्धान्त सीखा जा सकता है । निर्बाध क्षेत्र, उन्मुक्त सुविधाएँ देखते ही, दमित बासनाएँ एकाएक विद्रोह कर उठीं, उन्हें सम्भालना विपश्च के लिए कठिन पड़ गया, उनकी सिद्धियाँ भोगी के बन्दीगृह में जा पड़ीं । वर्षों की तप साधना अल्पकाल में ही बूढ़े वट वृक्ष की तरह ढह गई और उनकी सारी तेजस्विता का यों अन्त हो गया मानों वे जन्म से ही निस्तेज और अशक्त हों ।

जब पास कुछ न रहा तब पश्चाताप आ खड़ा हुआ, वे भागे और आचार्य प्रवर के चरणों पर सिर पटक कर रोने लगे । उठो विपश्च ! आर्य श्रेष्ठ ने समझाया—यदि प्रारम्भ से ही तुम जन सम्पर्क बनाये रखते तो आज यह स्थिति न आती, सेवा-साधना का अर्द्धांग है यदि उसे विस्मृत किया जाय तो साधना निष्फल हो जाती है, पर यदि वह साथ रहे तो साधना के प्रतिफल विरस्थाई होते हैं । विपश्च ने भूल अनुभव की, पुनः साधना पथ अपनाया पर अब उसने मार्ग बदल लिया था—अब उनकी साधना के साथ सेवा भी जुड़ गई थी ।

वस्तुतः स्वार्थ और परमार्थ जिसमें दोनों साधन सधते हों—अपना तथा सबका कल्याण जिसमें सधता हो, वही सच्ची एवं समग्र साधना है । भजन का अर्थ केवल जप या ध्यान ही नहीं । वरन् सेवा भी है । भजन शब्द संस्कृत की 'भज' धातु से बना है, जिसका अर्थ होता है सेवा । जिससे अपनी और दूसरों की सेवा बन पड़े, सच्चा भजन कहना चाहिए । जिस भजन को सर्वांगपूर्ण कहा जा सकता है, जिससे वस्तुतः ईश्वर प्रसन्न हो सकता है, उसका स्वरूप सेवा से मिश्रित ही होना चाहिए ।

नामोच्चार और इष्टदेव का ध्यान उपासना-क्षेत्र की वे आरम्भिक प्रक्रियाएँ हैं जिनसे मन की एकाग्रता में सहायता मिलती है । इस एकाग्रता का उपयोग संकीर्ण स्वार्थपरता से—तृष्णा एवं वासना से चित्त को विरत कर परमार्थ प्रयोजनों में संलग्न करने के निमित्त होना चाहिए । अन्तःकरण में सत्प्रवृत्तियों को जमाने, उगाने, और बढ़ाने के लिए सेवा-साधना का अभ्यास करना पड़ता है । प्राचीन काल में प्रत्येक ब्रह्म परायण व्यक्ति के जीवन में सेवा-धर्म के लिए प्रमुख स्थान रहता था । कोई ब्राह्मण, कोई साधु कोई भक्त ऐसा न था जो ईश्वर की प्रतिकृति-इस विश्व-वसुधा को सुखी-समुन्नत बनाने के लिए आवश्यक योगदान न करता रहा हो आज वही राजमार्ग हमारे लिए भी है । जीवन-लक्ष्य की पूर्ति के लिए हमें सेवाधर्म को अपनी भावना तथा प्रक्रिया में प्रमुख स्थान देना ही होगा । अन्यथा न तो हम आत्मा को प्राप्त कर सकेंगे और न परमात्मा को ।

नव-निर्माण के लिए जन-मानस के परिष्कार का जो पुण्य परमार्थ अपनाने के लिए युग निर्माण परिजनों को प्रेरणा दी गई है, उसे सामाजिक कार्य मात्र नहीं मान लेना चाहिए । वस्तुतः वह आत्मिक प्रगति की—ज्ञानयोग, भक्तियोग, कर्मयोग की संगम साधना है । सद्विचारों का निरन्तर चिन्तन करना—सत्प्रवृत्तियों में भावना स्तर को निमग्न करना वस्तुतः अन्तःकरण में परमेश्वर की प्रतिष्ठापना करने का ही एक महत्त्वपूर्ण प्रयोग है ।

जिस प्रकार जिह्वा पर भगवान का नाम और मस्तिष्क में भगवान का रूप प्रतिष्ठापित करके जप और ध्यान की प्रक्रिया चलाई जाती है, उसी प्रकार अन्तःकरण में सद्भावों, सद्गुणों, सत्कर्मों, सत्-स्वभावों की स्थापना करना भी उपासना है । भगवान के नाम और रूप तक ही सीमित नहीं हैं । यह दो प्रक्रियाएँ तो आरम्भिक हैं—भगवान का वास्तविक स्वरूप तो भावामय है । जितनी देर अन्तरात्मा में उच्च भावनाएँ विचरण करती रहें, समझना चाहिए उतनी देर परमेश्वर ही विराजमान रहे । लोकमानस में सत्प्रवृत्तियों की प्रतिष्ठापना के सत्प्रयत्नों द्वारा इसी उद्देश्य की पूर्ति होती है । जितनी देर इन क्रिया-कलापों में संलग्न रहा जायेगा, उतनी देर अपने अन्तःकरण चतुष्टय में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन-बुद्धि-चित्त व अहंकार में उच्च आदर्शों का रूप धारण कर परमेश्वर ही प्रतिष्ठापित रहेगा । युग परिवर्तन के लिए आरम्भ किए गये ज्ञान-यज्ञ में, जन-जागरण में, जितनी देर हम लगे रहते हैं वस्तुतः उतने समय भगवान के समीप रहने का उपासना का ही लाभ लेते हैं । यह आध्यात्मिक प्रयोग अपना भी कल्याण करता है और दूसरों का भी, इसलिए उसे सच्चा आध्यात्म, सच्चा भजन कहा जा सकता है । इस साधना के समय के अनुरूप श्रेष्ठतम स्तर की साधना को तपश्चर्या कहा जाय तो इसमें कुछ भी अत्युक्ति न होगी । प्रिय परिजनों को इस साधना में आध्यात्मिक प्रयोजन पूर्ण करने और जीवन लक्ष्य प्राप्त करने के उद्देश्य से संलग्न होना चाहिए । साधना सरल अवश्य है । पर उसका प्रतिफल किसी भी कठोर तपश्चर्या से कम नहीं है ।

नव निर्माण योजना में जहाँ अपने समीपवर्ती लोगों की उत्कृष्टता की-आदर्शवादिता की दिशा में अग्रसर होने की प्रेरणा देने के लिए कहा गया है, वहाँ यह भी बताया गया है कि आत्म-निर्माण के लिए उतनी ही तत्परता के साथ प्रयत्न किया जाय । अपना स्तर ऊँचा उठाने के लिए भी पूरा-पूरा प्रयत्न करना चाहिए । नव निमार्ण की साधना में यह भी एक महत्त्वपूर्ण अंग है ।

प्रातःकाल नींद खुलते ही, अपने साथ वार्तालाप शुरू कर देना चाहिए । बिस्तर छोड़ने से पूर्व अपने आप के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक आत्म-चिन्तन, लकीर पीटने के रूप में नहीं वरन् निर्माणात्मक उद्देश्य की पूर्ति के लिए करने चाहिए ।

हर दिन को एक नया जीवन और हर रात को एक पटाक्षेप—मृत्यु—मानकर ऐसी योजना प्रातःकाल ही बना लेनी चाहिए कि हमारा आज का दिन हर दृष्टि से आदर्श स्तर का बीते ।

पिछले दिनों किन दोष दुर्गुणों का बहुमूल्य अपने में रहा है और किन सत्प्रवृत्तियों की न्यूनता रही है । इससे बारीकी से आत्म-निरीक्षण करते हुए ढूँढ़ना चाहिए और योजना यह बनानी चाहिए कि उन दोषों को मिटाया या घटाया जाये । इसी प्रकार जो सद्गुण न्यून मात्रा में थे, उन्हें अधिक मात्रा में बढ़ाया—कार्यान्वित किया जाये ।

आज के दिन की उठने से लेकर सोने तक ऐसी दिनचर्या बना लेनी चाहिए जिससे समय के तनिक भी अपव्यय की गुंजाइश न रहे । हर क्षण सार्थक, श्रेष्ठ एवं उपयोगी कार्यों में लगे । इस दिनचर्या को दिन भर कड़ाई के साथ पालन करने का संकल्प करना चाहिए । कोई अनिवार्य व्यवधान आ जाय तो बात दूसरी है अन्यथा आलस्य, ढील-पोल एवं लापरवाही के कारण उस दिनचर्या में व्यतिक्रम नहीं होना चाहिए ।

समय के सदुपयोग की तरह धन के सदुपयोग प्रातःकाल ही बना लेनी चाहिए । अपना एक भी पैसा हानिकारक एवं अनावश्यक कार्यों में खर्च न हो, जो व्यय किया जाये योजनाबद्ध बजट के अनुरूप हो । एक-एक पैसा केवल उन कार्यों में खर्च होना चाहिए, जो उपयुक्त आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक हो । धन उस मार्ग में कमाया जाना चाहिए जिसमें अनीति जुड़ी हुई न हो । अवांछनीय कमाई से बनाई हुई खुशहाली अपेक्षा ईमानदारी के आधार पर गरीबों जैसा जीवन बनाए रहना कहीं अच्छा है यह नीति अपने रोम-रोम बसी हुई रहनी चाहिए ।

समय का सदुपयोग और धन का उपयोग, यह दो नियन्त्रण जिसने कर लिए समझना चाहिए कि उसने आत्मकल्याण की आधी मंजिल पार कर ली । परिश्रमशीलता, मधुर एवं संयत भाषण, सादगी, स्वच्छता, उदारता, सज्जनता जैसे गुण यद्यपि कम महत्त्व के दिखाई पड़ते हैं पर वस्तुतः उनका बहुत मूल्य है । भौतिक सफलता एवं आत्मिक प्रगति इन्हीं सद्गुणों के ऊपर अवलम्बित रहा करती है ।

विचारों को विचारों से काटने की कला जिसने सीख ली, समझना चाहिए कि मानसिक अस्वस्थता पर उसने विजय प्राप्त कर ली । ईर्ष्या, द्वेष, शंका, सन्देह, भय, आवेश, क्रोध, कामुकता, लालच आदि दुष्प्रवृत्तियाँ समय-समय पर विभिन्न परिस्थितियों की घटनाओं के माध्यम से मन में उठती रहती हैं । इनके विरोध में उस विचारधारा को मन में सँजोए रहना चाहिए, जो इन कुविचारों की काट कर सके विचारों से विचार काटने की कला जिसने सीखली, समझना चाहिए कि उसने मानसिक उलझनों को सुलझाने का रहस्य सीख लिया । हर रोज प्रातःकाल आत्म-चिन्तन के समय यह देखना चाहिए कि अपने मनःक्षेत्र में आजकल किन अनुपयुक्त विचारों का घेरा है उन विचारों को काटने के लिए विवेकशीलता एवं दूरदर्शिता के आधार पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसा प्रतिरोधी विचार-प्रवाह विनिर्मित करना चाहिए जो उन कुविचारों को काटकर निरस्त कर सके ।

हर रात को सोते समय फिर प्रातःकाल की तरह आत्म चिन्तन करना चाहिए, देखना चाहिए कि सबेरे जो योजना बनाई गई थी वह कार्यान्वित हुई या नहीं ? त्रुटि हुई तो कितनी और क्यों ? उसमें अपना कितना हाथ रहा और परिस्थितियों का कितना ? जो कुछ अनुचित बन पड़ा हो, उसके लिए सताये हुए व्यक्ति की तरह आत्मा से तथा परमात्मा से हार्दिक क्षमा याचना करनी चाहिए और अगले दिन अधिक सतर्कतापूर्वक उस तरह के दोषों को न होने देने का संकल्प दुहराना चाहिए । तदुपरान्त भगवान का स्मरण करते हुए शान्तिपूर्वक निद्रा देवी की गोद में चले जाना चाहिए ।

युग निर्माण परिवार के प्रत्येक सदस्य को अपनी उपासना के साथ इस आत्म-निरीक्षण की साधना को भी जोड़ लेना चाहिए । इस आधार पर जीवन को उत्कृष्ट बनाने के लिए आन्तरिक प्रकाश एवं मार्ग-दर्शन मिलता रह सकता है ।

मानव जीवन को सार्थक बनाने के लिए इस त्रिविध जीवन साधना की त्रिवेणी में हमें स्नान करते रहना चाहिए ।

साधना में सद्गुरु की परम आवश्यकता

अनेक महत्त्वपूर्ण विधाएँ गुरु के माध्यम से प्राप्त की जाती हैं और तन्त्र विद्या का प्रवेश द्वार तो अनुभवी मार्ग-दर्शक के द्वारा ही खुलता है । अक्षरारम्भ यद्यपि हमारी दृष्टि में पूर्ण सामान्य सी बात है पर छोटा बालक उस कार्य को अध्यापक के बिना अकेला ही पूर्ण करना चाहे तो नहीं कर सकता भले ही वह कितना ही मेधावी क्यों न हो । गणित, शिल्प, सर्जरी, साइन्स, यन्त्र-निर्माण आदि सभी महत्त्वपूर्ण कार्य अनुभवी अध्यापक ही लिखाते हैं । कोई छात्र शिक्षक की आवश्यकता न समझे और स्वयं ही यह सब सीखना चाहे तो उसे कदाचित ही सफलता मिले । रोगी को अपनी चिकित्सा कराने के लिए किसी अनुभवी चिकित्सक की शरण लेनी पड़ती है, यदि वह अपने आप ही इलाज करने लगे तो उसमें भूल होने की सम्भावना रहेगी, क्योंकि अपने सम्बन्ध में निर्णय करना हर व्यक्ति के लिए कठिन होता है ।

अपनी निज की त्रुटि, अपूर्णता, बुराई, स्थिति एवं प्रगति के बारे में कोई बिरला ही सही अनुमान लगा सकता है । जिस प्रकार अपना मुँह अपनी आँखों से नहीं देखा जा सकता, उसके लिए दर्पण की या किसी दूसरे से पूछने की सहायता लेनी पड़ती है, तभी कुछ जान सकना सम्भव होता है । उसी प्रकार अपने दोष-दुर्गुणों का, मनोभूमि का, आत्मिक-स्तर का एवं प्रगति का भी पता अपने आप नहीं चलता, कोई अनुभवी ही इस सम्बन्ध में विश्लेषण कर सकता है और उसी के द्वारा उद्धार एवं कल्याण का मार्ग-दर्शन किया जा सकता है । जिसने कोई रास्ता स्वयं देखा है, कोई मन्जिल स्वयं देखी है, कोई मन्जिल स्वयं पार की है वही उस रास्ते की सुविधा-असुविधाओं को जानता है, नये पथिक के लिए उसी की सलाह उपयोगी हो सकती है । बिना किसी से पूछे स्वयं ही अपना रास्ता आप बनाने वाले सम्भव हैं मन्जिल पार कर लें, निश्चित रूप से उन्हें कठिनाई उठानी पड़ेगी और देर भी बहुत लगेगी । इसलिए जब तक सर्वथा असम्भव ही न हो जाय, तब तक मार्ग-दर्शक की तलाश करना ही उचित है । उसी के सहारे अध्यात्मिक यात्रा सुविधापूर्वक पूर्ण होती है ।

प्राकृतिक नियमों का अध्ययन करने पर भी यही प्रतीत होता है कि जीव शक्ति, ज्ञान और भाव के सम्बन्ध में स्वावलम्बी नहीं है, परावलम्बी है । उसे बाह्य शक्तियों के सहयोग की अपेक्षा रहती है । इसके बिना वह पंगु ही बना रहता है । जब उसकी आन्तरिक शक्ति और बौद्धिक विकास में पर्याप्त वृद्धि हो जाती है, तब उसे बाह्य शक्तियों की अपेक्षा भले ही न हो, परन्तु फिर भी उसे अन्तर की अचिन्त्य शक्ति का आलम्बन स्वीकार करना ही होगा, तभी वह पूर्ण विकास के पथ पर अग्रसर हो सकता है ।

भौतिक शिक्षाओं के शिक्षक अपने विषय की जानकारी देकर अपना कर्त्तव्य पूरा कर लेते हैं, पर आध्यात्म-मार्ग में इतने से ही काम नहीं चल सकता । वहाँ शिक्षा ही पर्याप्त नहीं, वरन् गुरु द्वारा दिया हुआ आत्मबल भी दान या प्रसाद रूप में उपलब्ध करना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ता है । जिस प्रकार कि कोई रोगी चिकित्सक की शिक्षा मात्र से अच्छा नहीं हो सकता, उसे चिकित्सक से औषधि भी प्राप्त करनी पड़ती है, उसी प्रकार सच्चे गुरु न केवल-आत्म-कल्याण का मार्ग बताते हैं, वरन्, उस पर चल सकने योग्य साहस, बल और उत्साह भी देते हैं । यह देन तभी सम्भव है जब गुरु के पास अपनी संचित आत्म-सम्पदा पर्याप्त मात्रा में हो । इसलिए गुरु का चयन और वरण करते समय उसकी विद्या ही नहीं, आत्मिक स्तर और तप की संग्रहीत पूँजी को भी देखना पड़ता है । यदि वह सभी गुण न हों, तो कोई व्यक्ति आध्यात्म-मार्ग का उपदेष्टा भले ही कहा जा सके, पर गुरु नहीं बन सकता । गुरु के पास साधना, तपस्या, विद्या एवं आत्मबल की पूँजी पर्याप्त मात्रा में होनी चाहिए । साधक को ऐसा ही गुरु तलाश करना पड़ता है ।

शास्त्रों में कहा है कि मनुष्य के तीन प्रत्यक्ष देव हैं—(१) माता, (२) पिता, (३) गुरु । इन्हें ब्रह्मा, विष्णु, महेश की उपाधि दी है । माता जन्म देती है, इसलिए ब्रह्मा है । पिता पालन करता है इसलिए विष्णु है । गुरु कुसंस्कारों का संहार करता है, इसलिए शंकर है । गुरु का स्थान माता-पिता के समकक्ष है । वह न केवल कुसंस्कारों की गहरी जड़ों को काटता है, वरन् एक सच्चे माली की भूमिका भी अदा करता है और मनोभूमि का परिष्कार करता है ।

बगीचे को यदि सुन्दर बनाना है, तो इसके लिए किसी कुशल माली की नियुक्ति आवश्यक है । जब आवश्यकता हो तब सींचना जब अधिक पानी भर गया हो, तो उसे बाहर निकाल देना, समय पर गोड़ाई निराई करना, अनावश्यक टहनियों को छाँटना, खाद देना, पशुओं को चरने न देने की रखवाली करना आदि बातों के सम्बन्ध में माली सदा सजग रहता है, फलस्वरूप वह बगीचा हरा भरा, फला-फूला, सुन्दर और समुन्नत रहता है ।

मनुष्य का मस्तिष्क एक बगीचा है, इसमें नाना प्रकार के मनोभाव, विचार, संकल्प, इच्छा, वासना, योजनारूपी वृक्ष आते हैं । उनमें से कितने ही अनावश्यक होते हैं । बगीचे में कितने ही पौधे झाड़-झंखाड़ के अपने आप उग जाते हैं, वे बढ़ें तो बगीचे को नष्ट कर सकते हैं, इसलिए माली उन्हें उखाड़ देता है और दूर-दूर से लाकर अच्छे-अच्छे बीज उसमें बोता है । गुरु अपने शिष्य के मस्तिष्क रूपी बगीचे का माली होता है, वह अपने क्षेत्र में से जंगली झाड़-झंखाड़ जैसे अनावश्यक संकल्पों, संस्कारों, आकर्षणों और प्रभावों को उखाड़ता रहता है और अपनी बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता एवं चतुरता के साथ ऐसे संस्कार बीज जमाता रहता है, जो उस मस्तिष्क रूपी बगीचे को बहुमूल्य बनावें ।

समुचित बौद्धिक विकास की सुव्यवस्था के लिए 'गुरु' की नियुक्ति को भारतीय धर्म में आवश्यक माना गया है । इससे मनुष्य की विचारधारा, स्वभाव, संस्कार, गुण, प्रकृति, आदतें, इच्छाएँ, महत्त्वाकांक्षाएँ कार्य-पद्धति आदि का प्रयास उत्तम दिशा में हो सकेगा, मनुष्य अपने आप से सन्तुष्ट, प्रसन्न, पवित्र और परिश्रमी रहेगा तथा सद्व्यवहार से सुख पहुँचावेगा । इस प्रकार के सुसंस्कृत मनुष्य जिस देश में अधिक होंगे वहाँ निश्चयपूर्वक सुख-शान्ति की सुव्यवस्था की, पारस्परिक सहयोग की, प्रेम की, साथ सद्भाव ही बहुलता रहेगी । हमारा पूर्व इतिहास साक्षी है कि सुसंस्कृति मस्तिष्क के भारतीय महापुरुषों ने कैसे महान कार्य किये थे और इस भूमि पर किस प्रकार स्वर्ग को अवतरित कर दिया था ।

हमारे पूर्वकालीन महान गौरव की नींव में ऋषियों की दूरदर्शिता छिपी हुई है, जिसके अनुसार प्रत्येक भारतीय को अपना मानसिक परिष्कार कराने के लिए किसी उच्च चरित्र, आदर्शवादी, सूक्ष्मदर्शी विद्वान के नियन्त्रण में रहना आवश्यक होता था, जो व्यक्ति मानसिक परिष्कार कराने की निपट आवश्यकता से जी चुराते थे, उन्हें "निगुरा" की गाली दी जाती थी । 'निगुरा' शब्द का अपमान करीब-करीब बिना बाप का या वर्णसङ्कर कहे जाने के बराबर समझा जाता था । धन का कमाना, विद्या पढ़ना, शस्त्र चलाना—सभी बातें आवश्यक थीं, मानसिक परिष्कार तो सबसे अधिक आवश्यक था, क्योंकि असंस्कृत मनुष्य तो समाज का अभिशाप बनकर ही रह सकता है, भले ही उसके पास कितनी ही अधिक भौतिक सम्पदा क्यों न हो । गुरु को प्रत्यक्ष तीन देवों में—तीन परम पूज्यों में स्थान देने का यही कारण था ।

हमारे यहाँ धर्म-शास्त्रों के अनुसार मनुष्य ८४ लक्ष योनियों से होकर आता है । उसमें पशु-प्रवृत्तियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के भाव गहरी जड़ जमाए रहते हैं । उनके शमन के लिए दीर्घ प्रयत्न की अपेक्षा रहती है । हिन्दू धर्म-शास्त्रों में जीवन का परम लक्ष्य मुक्त और मोक्ष बताया गया है, जिस तक पहुँचने के लिए अत्यन्त दुर्गम मार्गों ओर घाटियों से होकर गुजरना पड़ता है । यह इतना सरल नहीं है, जितना पुराणों में अतिशयोक्ति शैली में वर्णित है । इस लम्बी यात्रा को सफल बनाने के लिए भीमकाय बाधाओं का सामना करना पड़ता है । फिर मार्ग अपना देखा हुआ भी नहीं होता, इसलिए पथिक इस संसार रूपी अरण्य में भटक जाता है । स्वयं किसी साधारण व्यक्ति का अन्तिम लक्ष्य तक पहुँचना सर्वथा असम्भव है । कुछ अपवाद भले ही हो सकते हैं, परन्तु सामान्यतः हर व्यक्ति को हर क्षेत्र में प्रशिक्षण के लिए एक पथ-प्रदर्शक की आवश्यकता रहती है । फिर आध्यात्म मार्ग तो सबसे दुर्गम है । इस पर तो बिना पथ प्रदर्शक के चलाना सम्भव ही नहीं है ।

गुरु वरण करने का तात्पर्य उस व्यक्ति की आत्मा के साथ अपनी आत्मा को जोड़ देना है । जिस प्रकार किसी बड़े तालाब के साथ छोटे तालाब को एक नाली के द्वारा जोड़ दिया जाये, तो बड़े तालाब का पानी छोटे में भी आने लगता है और वह तब तक नहीं सूखता, जब तक कि बड़ा तालाब सूख न जाय ।

तस्मै स विद्वानुपसन्नाय सम्यक्
प्रशान्त चित्ताय शमान्विताय ।
येनाक्षरं पुरुषं वेद सत्यं
प्रोवाच तां तत्वतो ब्रह्म विद्याम् ॥

—मुण्डक १/२/१३

"वह ज्ञानी गुरु उस श्रद्धापूर्ण, शान्तचित्त एवं तितिक्षा और साधनानिष्ठ शिष्य को ब्रह्म-विद्या का उपदेश करे, जिससे वह अविनाशी, सत्स्वरूप आत्मा को जान ले ।"

गुरु की महत्ता एवं योग्यता, शिष्य की पवित्रता एवं सुपात्रता, गुरु के प्रति भक्ति-भावना रखना, उनके आदर्श का अनुसरण करना आदि आवश्यक तथ्यों पर शास्त्रों में अनेक प्रसंग मिलते हैं । वे सभी माननीय एवं विचारणीय हैं । देखिए—

"वेद सम्पन्न आचार्य, ईश्वर-भक्त, मत्सरता रहित, योग ज्ञाता, योग निष्ठा वाला, योगात्मा, पवित्रतायुक्त, गुरुभक्त, परमात्मा में विशेष रूप से लीन इन लक्षणों से युक्त गुरु कहा जाता है । 'गु' शब्द का अर्थ है—अन्धकार और 'रु' शब्द का अर्थ है—रोकने वाला । अन्धकार को दूर करने से गुरु होता है ।

"गुरु ही परब्रह्म है । गुरु ही परम गति है गुरु ही पर-विद्या है । गुरु ही परायण योग्य है । गुरु ही पराकाष्ठा है । गुरु ही परम धन है । वह उपदेष्टा होने के कारण श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ है ।"

—अद्वयतारक उपनिषद्

"गुरु ही परम धर्म है । गुरु ही परम गति है । जो उनका सम्मान नहीं करता, उसकी विद्या, तपस्या सभी धीरे-धीरे ऐसी क्षीण हो जाती है, जैसे कच्चे घड़े में जल । जैसी भक्ति देव में, वैसी ही गुरु में होने से ब्रह्मज्ञानी परम पद को प्राप्त करता है, ऐसा वेदानुशासन है, ऐसा ही वेद-विधान है ।"

—शठायायनोयोपनिषद्

"गुरु जो आदेश दे, उसका पालन शिष्य को बिना बिचारे, सन्तोषयुक्त भाव से करना चाहिए । इस विद्या को गुरु से प्राप्त करें । गुरु की सदा सुश्रूषा करें, इसी से मनुष्य का सच्चा कल्याण होता है । श्रुति में कहा गया है कि गुरु ही साक्षात हरि हैं, कोई अन्य नहीं ।"

—ब्रह्मविद्या उपनिषद्

अन्य ग्रन्थों में भी इस सम्बन्ध में बहुत कुछ कहा गया है । वह भी महत्त्वपूर्ण है । गुरु की महत्ता को प्रायः सभी धर्म ग्रन्थों ने एक स्वर से स्वीकार किया है ।

उत्तिष्ठित ! जाग्रत ! प्राप्यवरान निरोधक ।

—ऋग्वेद

"उठो, जागो ! सद्गुरुओं द्वारा ज्ञान को प्राप्त करो ।"

गुरुपोदेशतोज्ञेयं न च शास्त्रर्थ कोटिभिः ।

"केवल शास्त्रों के आधार पर नहीं, इस विद्या को गुरु द्वारा सीखो ।"

तद्विज्ञानार्थ स गुरुमेवाभिगच्छेत् ।
समित् प्राणिः श्रोत्रियं ब्रह्म निष्ठम् ॥

—श्रीमद्भागवत्

"उस ज्ञान की प्राप्ति के लिए वेदज्ञ, ब्रह्मनिष्ठ गुरु के पास हाथ में समाधि लेकर आ जाये ।"

निमज्यां मज्जतां घोरे भवाब्धौ परमायनम् ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन्तो ब्रह्मविदः शांता नीदृंढेवाप्सु मज्जताम् ॥

—श्रीमद्भागवत

"जैसे जल में डूबते हुओं को नाव ही एकमात्र सहारा है, वैसे ही इस भव सागर में डूबने से बचने के लिए ब्रह्मवेत्ता सन्तों का ही सबसे बड़ा सहारा है ।"

दुर्लभो विषयेत्यागो दुर्लभं तत्व दर्शनं ।
दुलभा सहजावस्था सद्गुरोः करुणांविना ॥

"बिना गुरु-कृपा के विषयों का त्याग दुर्लभ है, तत्व-दर्शन दुर्लभ है तथा सहजावस्था का प्राप्त होना भी दुर्लभ है ।"

आत्मज्ञान की उपलब्धि, पापपूर्ण मनोभूमि का परिशोधन, भ्रमसंशयों का उच्छेदन, प्रगति के लिए मार्ग-दर्शन, यह सब कार्य उनके लिए सरल ही हो जाते हैं, जिन्हें अनुभवी सद्गुरु की प्राप्ति हो जाय । इसके बिना आध्यात्म-मार्ग के पथिक को अन्धकार में ही भटकते रहना पड़ता है ।

गुरुपदेशात्स्वार्थे बिना चात्मा न बुध्यते ।
एतत्संयोगसत्तैव स्वात्मज्ञान प्रकाशिनी ॥

—योगवशिष्ठ ६।४१।१६

शास्त्र के अध्ययन और गुरु के उपदेश बिना आत्मज्ञान नहीं होता । अधिकारी, जिज्ञासु शास्त्राध्ययन और सद्गुरु इन तीनों के संयोग से ही आत्मज्ञान प्रकाश में आता है ।

आचार्या द्वै विद्या विहिता साधिष्ठं प्रापत् ।

"आचार्य के बिना पराशक्ति स्वरूपा ब्रह्मविद्या स्वधिष्ठित होती ही नहीं ।"

मन्त्र, साधना-विधान, स्वाध्याय और संयम का जैसा महत्त्व है, वैसा ही गुरु के सहयोग का भी है । उचित मार्गदर्शन से आयी कठिनाई तो स्वयमेव हल हो जाती है । इसीलिए गुरु को भी एक प्रकार से मन्त्र एवं देवता ही माना गया है ।

यथा घटश्च कलशः कुम्भश्चैकार्थ वाचकाः ।
तथा मन्त्रो देवता च गुरुश्चैकार्थ वाचकाः ॥

जिस प्रकार घट, कलश, कुम्भ एक ही वस्तु के कई नाम हैं, उसी प्रकार मन्त्र, देवता और गुरु एक ही तत्व के नाम हैं ।"

पन्थानो बहवः प्रोक्ता मन्त्र शास्त्र मनीषिभिः ।
स्वगुरोर्मतयोश्रित्य शुभं कार्यं न चान्यथा ॥

"बहुत-से मार्ग हैं, अनेक मन्त्र एवं शास्त्र हैं पर अपने गुरु के मतानुसार मार्गावलम्बन करने से ही शुभ होता है । इसके विपरीत करने से नहीं ।"

अनेक कोटि मंत्राणि चित्त व्याकुल कारणम् ।
मंत्र गुरोः प्राप्तमेकं स्यात् सर्वसिद्धिदम् ॥

"अगणित मन्त्र तो चित्त की व्याकुलता के कारण ही सिद्ध होते हैं । गुरु की कृपा से प्राप्त हुआ एक मन्त्र ही सर्व सिद्धियाँ प्रदान करता है ।"

आत्मा को अपने ही विचारों और तर्कों से प्राप्त नहीं किया जा सकता इसके लिए सुयोग्य मार्गदर्शक गुरु का होना नितान्त आवश्यक है । इस सम्बन्ध में महोपनिषद् में वर्णित शुकदेवजी का प्रसंग और कठोपनिषद् का प्रमाण माननीय है—

नैषा तर्केण मतिरापनेया प्रोक्तान्येनैव सुज्ञानाय श्रेष्ठ ।

—कठ. १।२।९

"यह आत्म-बुद्धि तर्क से नहीं मिलती । हे श्रेष्ठ ! दूसरे के द्वारा कही जाने पर ही यह अच्छी तरह जानी जाती है ।"

शुकदेवजी के अन्तःकरण में स्वतः ही ज्ञान उत्पन्न हुआ था । पर उससे काम न चला । इस सम्बन्ध में 'महोपनिषद्' अध्याय २ में इस प्रकार वर्णन मिलता है—

जात मात्रेण मुनिराड् यत्सत्यं तदवाप्तवान् ।
तेनासौ स्व विवेकेन स्वमेव महामनाः ॥
प्रविचार्य चिरं साधु स्वात्मनिश्चयमाप्तवान् ॥

"उन शुकदेवजी को बिना गुरु के उपदेश के ही स्वतः आत्मज्ञान हुआ था । उनकी वासनाएँ स्वतः निवृत्त हो गई थीं, परन्तु वह ज्ञान दृढ़ न होने के कारण उनके मन को शान्ति नहीं हुई । उन्हें अपने ज्ञान विश्वास नहीं हुआ । इसलिए अपने पिता व्यासजी के आदेश से उन्हें जनक के पास ज्ञान ग्रहण करने जाना पड़ा ।"

गुरुर्गरीयान् मातृतः पितृश्चेति मे मतिः ।

—शा. १०८।१७

"माता-पिता से भी गुरु का स्थान ऊँचा है ।" क्योंकि—

माता पितरौ शरीरमेव काष्ठ कुंडयादि समं जनयतः ।
आचार्यास्तु सर्व पुरुषार्थ क्षम रूपं जनयति ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"माता-पिता तो लकड़ी के ढोल सरीखे इस देह को ही जन्म देते हैं, पर गुरु तो सब पुरुषार्थ भरे आध्यात्म रूप को ही जन्म देते हैं ।"

श्रुत्याचार्य प्रसादेन दृढोबोधो यदा भवेत् ।
निरस्ताशेष संसार निदानः पुरुषस्तदा ॥

—वाक्यवृत्ति ५०

"जब श्रुति और आचार्य के अनुग्रह से दृढ़ ज्ञान उत्पन्न होता है, तब पुरुष की संसार की कारण रूप समस्त अविद्या दूर हो जाती है ।"

यथाकूर्मः स्वतनयान्ध्यान मार्गेण पोषयेत् ।
बंध दीक्षोपदेशास्तु मानसः स्पत्तथाविधः ॥

—कुलार्णव तंत्र

"जिस प्रकार मादा कछुआ केवल ध्यान मात्र से अपने अण्डों का पोषण करती है, उसी प्रकार सच्चे गुरु भी शिष्य को हृदय से ही दीक्षा दिया करते हैं ।"

दृष्टान्तो नैव दृष्टास्त्रिभुवन जठेर सद्गुरोर्ज्ञानदातुः
स्पर्शश्चेतत्र कल्प्यः सनयातियदहो स्वर्णतामश्च सारम् ।
न स्पर्शत्वं तथापि श्रितचरणयुगे सद्गुरुः रवीपशिष्ये:
स्वीयं सम्यं विधत्ते भवति निरुपसस्तेन वा लौकिकोऽपि॥

(शंकराचार्य कृत 'शतश्लोकी')

"इस त्रिभुवन में ज्ञानदाता सद्गुरु के लिए देने योग्य कोई दृष्टान्त दिखाई नहीं देता । उन्हें पारस मणि की उपमा दें तो भी यह ठीक नहीं जँचती, कारण पारस लोहे को तो सोना बना देता है पर पारस नहीं बनाता । पर सद्गुरु के चरण कमल का आश्रय लेने वाले शिष्य को सद्गुरु अपने समान ही बना देते हैं इसलिए सद्गुरु की कोई उपमा नहीं हो सकती ।"

चिन्तामणिलोके सुखं सुरद्रुः स्वर्गसम्पदम् ।
प्रयच्छित गुरुः प्रीतो बैकुण्ठं योगि दुर्लभम् ॥

—भागवत महात्म्य

"गुरु की कृपा से संसार के समस्त सुख और स्वर्ग की सम्पदा प्राप्त हो सकती है जोकि योगियों के लिए भी दुर्लभ हैं ।"

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः ।
न गुरोरधिकः कश्चित त्रिषुलोकेषु विद्यते ॥

—योगशिखोपनिषद्

"गुरु ही ब्रह्मा, विष्णु और शिव के समान हैं, तीनों लोकों में गुरु के समान अन्य कुछ भी नहीं है ।"

आचार्या द्वै विहिता साधिष्ठं प्रापत् ।

"आचार्य के बिना पराशक्ति स्वरूपा ब्रह्मविद्या स्वधिष्ठति नहीं होती ।"

आत्मविद्या चानन्तर्मुखस्य गुरुकासव्य—
रहितस्य न वेदशास्त्रमात्रेपोत्पद्यते ।

"गुरु की दयादृष्टि से रहित बहिर्मुख मनुष्य केवल वेद-शास्त्र पढ़कर आत्म-विद्या को नहीं पा सकता ।"

गुरुपूजां विना देवि स्वेष्ट पूजाँ करोति यः ।
मन्त्रस्य त्य तेजांसि हरतै भैरवः स्वयम् ॥

—कालीविलास तन्त्र

"हे देवि ! जो गुरु-पूजा के बिना अपने इष्ट की पूजा करता है, उसके मन्त्र के तेज को भैरव-हरण कर लेता है ।"

गुरोरंधि पद्मे मनश्चेन्न लग्नं ।
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किम् ॥

"मन यदि गुरु के चरण-कमलों में नहीं लगा रहा तो और सब किस काम का ?"

कर्मणा मनसा वाचा गुरोः क्रोधं न कारयेत् ।
तस्य क्रोधेन दह्यन्ते आयुः श्रीज्ञान सत्क्रियाः ॥

"कर्म, मन, वचन से गुरु को कभी क्रोधित होने का अवसर नहीं देना चाहिए । उनके क्रोध से आयु, लक्ष्मी, ज्ञान, सत्कर्म का लाभ हो जाता है ।"

यथा गुरुस्तथैवेशे यथेवेशस्तथा गुरुः ।
पूजनीयो महाभक्त्या न भेदो विद्यतेऽनमोः ॥

—शिवपुराण-कैलाश सं.

"जैसा गुरु का आदेश हो उसी तरह रहना चाहिए, आचरण करना चाहिए । उनकी परम भक्ति से पूजा करनी चाहिए और तनिक भी भेद नहीं रखना चाहिए ।"

यो गुरुः स शिवः प्रोक्तो यः शिवः स गुरु स्मृतः।
तस्माद्धि श्री गुरोभक्तिः भक्तिमुक्ति प्रदायिनी ॥

—शिवपुराण

"जो गुरु है वे शिव स्वरूप है और जो शिव है, वे गुरु स्वरूप है । इसलिए गुरु की भक्ति सब प्रकार से मुक्ति और मुक्ति की प्रदाता होती है ।"

यस्य देवे परा भक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ ।
यस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशन्ते महात्मनः ॥

—श्वेताश्वर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"भगवान में जिसकी पराभक्ति है, जैसी भगवान में वैसी ही गुरु में है, उस महात्मा पर ये कथित अर्थ प्रकट होते हैं ।"

ते तमर्चयन्तस्तवं हि नः पिता योऽस्माकविद्याया परं पारं ताश्वसीति । नमः परम ऋषिभ्यो नमः परम ऋषिभ्यः ।

—प्रश्नोपनिषद् ६/८

"भगवान ! आप हमारे सच्चे पिता (गुरु) हैं । आपने हमको अविद्या सागर से पार लगा दिया । आप जैसे परम ऋषियों को हमारा नमस्कार है—बारंबार नमस्कार है ।"

गुरवो बहवस्तात शिष्यावित्ताय हारकाः ।
विरला गुरुवस्ते ये शिष्य सन्ताप हारका ॥

"ऐसे गुरुओं की कमी नहीं है जो शिष्य का धन हर लेते हैं, पर शिष्य के सन्ताप हरण करने वाले गुरु विरले ही होते हैं ।"

गुरुपदेशतो ज्ञेयं न ज्ञेयं शास्त्र कोटिभिः ।

"योग का रहस्य गुरु के उपदेश से ही जाना जाता है, करोड़ों ग्रन्थ पढ़ने से भी उसका ज्ञान नहीं हो सकता ।"

स्वयमाचरते यस्मादाचारं स्थापयत्यापि ।
आचिनोति च शास्त्राणि आचर्यस्तेन चोच्यते ॥

—ब्रह्माण्ड पु.

"जो धर्म कर्माचाणादि ग्रन्थों को स्वयम् धारता करते हैं और अन्यों से कराते हैं उन समस्त शास्त्रों के ज्ञाता को आचार्य कहा जाता है ।"

गृणाति उपदिशति धर्ममिति गुरुः ।
गिरत्यज्ञानमिति गुरुः ।
यद्वा गीयते स्तूयते देवगन्धर्वादिभिरिति गुरुः ॥

"धर्म का उपदेश दें तम का विनाश कर ज्ञान रूपी हैं ज्योति से जो प्रकाश में, देव, गन्धर्वादि से जो स्तुत हों, उन्हीं साक्षात् देव की संज्ञा गुरु है ।"

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुत्त्वावमानयेत् ।
श्वानं योनिशतं गत्वा चण्डालत्वमवाप्नुयात् ॥

—कुलार्णव तंत्र

"एक भी अक्षर के ज्ञान के प्रदान करने वाले को पूर्ण गुरु भाव से मानना चाहिए । यदि कोई ऐसे गुरु की अवमानना करते हैं तो सौ बार कुत्ते की योनि में जन्म ग्रहण करके अन्त में चण्डालत्व को प्राप्त करता है ।"

कुलार्णव तंत्र द्वादश उल्लास के अनुसार—

न पादुकापरो मन्त्रो न देवः श्री गुरोः परः ।
न हि शक्तित् परा दीक्षा न पुण्य कुलपूजनात् ॥ १२ ॥
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्त्तिः पूजामूलं गुरोः पदम् ।
मन्त्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरो कृपा ॥ १३ ॥

पादुका से पर कोई भी मन्त्र नहीं है श्री गुरु से पर कोई देव नहीं है । शक्ति दीक्षा से उत्तम कोई दीक्षा नहीं है और कुल पूजन से पर कोई पुण्य नहीं होता है ॥ १२ ॥

गुरु की मूर्ति ध्यान मूल है और गुरु के चरण पूजा मूल हैं । गुरु के वाक्य मन्त्र मूल हैं अर्थात् मन्त्रवत् हैं । गुरु की कृपा ही मोक्ष का मूल होती है ॥ १३ ॥

गुरुमूलाः क्रियाः सर्वा लोकेऽस्मिन् कुलनायिके ।
तस्मात् सेव्यो गुरुर्नित्यं सिद्धयं भक्तिसंयुतैः ॥

उपासना की समस्त क्रियाएँ गुरुमूल ही होती है अर्थात् गुरु ही के द्वारा सही उपासना की पद्धति का ज्ञान होता है । हे कुलनायिके । इसलिए सिद्धि प्राप्त करने के लिए भक्तियुक्त होकर मनुष्यों को गुरु की नित्य ही सेवा करनी चाहिए ॥ १४ ॥

तावदार्त्तिर्भय शोको लोभमोहभ्रमादयः ।
यावन्नायाति शरणं श्रीगुरुं भक्तवत्सलम् ॥ १५ ॥
तावद् भ्रमन्ति संसारे सर्व दुःखमलोमसाः ।
न भवेत् सद्गुरौ भक्ति र्यावद्देवेशि देहिनाम् ॥ १६ ॥

इस संसार में तभी तक आत्तिजन्य भय होता है और शोक, लोभ, मोह और भ्रम आदि होते हैं जब तक मनुष्य श्री गुरु चरण की शरणागति में नहीं आता है क्योंकि गुरु बहुत ही भक्तों पर वत्सल अर्थात् कृपालु होते है और उनकी शरण में जाने पर मनुष्य का परम कल्याण अवश्य ही हो जाता है ॥ १५ ॥

हे देवेशि ! इस संसार में समस्त प्रकार के दुःखों का मल तभी तक देहधारियों को घेरे रहता है और उन्हें भ्रमाता रहता है, जब तक किसी सद्गुरु में पूर्ण भक्ति का भान समुत्पन्न नहीं होता है ॥ १६ ॥

तावदाराधयेच्छिष्यः प्रसन्नोऽसौ यदा भवेत् ।
गरौ प्रसन्ने शिष्यस्य सद्य; पापक्षयो भवेत् ॥ २० ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शिष्य को तब तक अपने गुरु की सच्ची आराधना करनी चाहिए, जब तक श्री गुरुचरण प्रसन्न न हो । जब गुरु प्रसन्न हो जाते हैं तो फिर शिष्य के पापों का तुरन्त ही क्षय हो जाता है ॥ २० ॥

ब्रह्माविष्णुमहेशदिदेवतामुनियोगिनः ।
कुर्वन्त्यनुग्रहं तुष्टा गुरौ तुष्टे न संशयः ॥ २२ ॥

जब गुरुवर पूर्णतया सन्तुष्ट एवं प्रसन्न हो जाते हैं तो फिर एक मात्र गुरु की प्रसन्नता होने पर ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि देवता, मुनि और योगीगण सभी उस गुरु भक्त पर अनुग्रह किया करते हैं । इसमें तनिक भी संशय नहीं है ॥ २२ ॥

जन्म हेतू हि पितरौ पूजनीयौ प्रयत्नतः ।
गुरुर्विपेशतः पूज्यो धर्माधर्म प्रदर्शकः ॥ ४८ ॥

देहधारी के माता पिता जन्म देने के कारण पूजा के योग्य होते हैं और प्रयत्नपूर्वक उनकी पूजा करनी चाहिए । गुरु उनसे भी अधिक पूज्य इस लिए होते हैं कि बल धर्म तथा अधर्म का सही ज्ञान का प्रदर्शन कराते हैं ॥ ४८॥

गुरोर्हितं हि कर्त्तव्यं मनोवाक्कायकर्मभिः ।
अहिताचरणाद्देवि विष्ठायां जायते क्रिमिः ॥ ५० ॥
शरीर विच प्राणैश्चय श्रीगुरुं वञ्जयन्ति ये ।
क्रिमिकोटपतङ्गत्वं प्राप्नुवन्ति न सशयणैः ॥ ५१ ॥

अपने गुरु के हित को मन, वाणी और शरीर के कर्मों द्वारा पूर्ण रूप से करना चाहिए । हे देवि ! जो कोई भी शिष्य किसी भी समय गुरु के अहित करने का आचरण करता है तो वह विष्ठा का कीड़ा बनकर नरक की यातना भोगता है ॥ ५२ ॥

शरीर, धन और प्राणों के द्वारा जो कोई शिष्य अपने गुरु का वचन करता है, तो वह कृमि, कीट और पतंगत्व को प्राप्त होता है, इसमें कोई भी संशय नहीं है ॥ ५१ ॥

अनादृत्य गुरोर्वाक्यं शृणुयाद् यः पराङ्मुखः ।
अहितं वा हितं वापि रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ९८ ॥
गोब्राह्मणवधं कृत्वा यत्पापाम् समवाप्नुयात् ।
तत् पापं सम वारनोति गुर्वग्रेऽनृतभाषणात् ॥ ९९ ॥

गुरु के वाक्य का अनादर करके पराङ्मुख होता हुआ जो कुछ भी सुनता है, चाहे वह अहितप्रद हो या अहितप्रद हो, वह मनुष्य, रौरव नरक में जाता है ॥ ९८ ॥

गौ और ब्राह्मण का वध करने से जो महापाप लगता है, ठीक वैसा ही पातक गुरु के आगे मिथ्या-भाषण करने से लगता है ॥ ९९॥

न विंशेदासने देवि देवता गुरुसन्निधौ ।
गुरोः सिंहासनं देयं ज्येष्ठानामुत्तमासनम् ।
देश्यासनं कनिष्ठानामितरेषां समासनम् ॥ १०७ ॥

हे देवि ! देवता और गुरु की सन्निधि में कभी आसन पर नहीं बैठना चाहिए । गुरु के बैठने के लिए सिंहासन देना चाहिए और जो भी अपने बड़े हों उनके बैठने के लिए उत्तम आसन देना चाहिए । अपने से छोटों के लिए देश्यासन देवे और अन्धों के लिए बराबर का आसन देना चाहिए ॥ १०७ ॥

'कुलार्णव तन्त्र' के त्रयोदश उल्लास के अनुसार—

यः क्षणेनात्मसामर्थ्यं स्वशिष्यायं ददाति हि ।
क्रियायासादिरहितं स गुरुर्देव दुर्लभः ॥ १०१ ॥

जो गुरु क्रिया और आयाम से रहित अपनी सामर्थ्य को क्षण भर में ही अपने शिष्य को कृपा प्रदान कर देता है, ऐसा आचार्य वस्तुतः देव-दुर्लभ होता है अर्थात् बहुत कठिनाई से ही प्राप्त होता है ॥ १०१ ॥

वर्णाश्रमकुलाचारनिरता बहवो भुवि ।
सर्वसंकल्पहीनो यः स गुरुर्देवि दुर्लभः ॥ १०९ ॥
गुरोर्यस्यैव सम्पर्कात् परानन्दोऽभिजायते ।
गुरुं तमेव वृणुयान्नापरं मतिमान्नरः ॥ ११० ॥

वर्ण और आश्रम तथा कुल के आचार में निरत संसार में इस पृथ्वी पर बहुत-से आचार्य प्राप्त हो जाते हैं, किन्तु जो सब प्रकार से संकल्पों से रहित हो, ऐसा आचार्य देवों को भी बहुत दुर्लभ होता है ॥ १०९॥

जिस गुरु के सम्पर्क प्राप्त होने से शिष्य को परमानन्द प्राप्त हो जावे, ऐसा ही गुरु वास्तव में वरण करना चाहिए । मतिमान् व्यक्ति को अन्य आचार्य नहीं बनाना चाहिए ॥ ११०॥

प्रेरकः सूचकश्चैव वाचको दर्शकस्तथा ।
शिक्षको बोधकश्चैव षडेते गुरवः स्मृताः ॥ १२८ ॥
पञ्चैते कार्यभूताः स्युः कारणं बोधको भवेत् ।
पूर्णाभिषेककर्त्ता या गुरुस्तस्यैव पादुका ।
पूजनीया महेशानि बहुत्वेऽपि न संशयः ॥ १२९ ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्री गुरुं लक्षणेपेतं संशयच्छेदकारकम् ।
लब्धवा ज्ञानप्रदं देवि न गुर्वन्तरमाश्रयेत् ॥ १३० ॥

प्रेरणा देने वाला, सूचना-प्रदाता, वाचक अर्थात् कहकर तत्व को बताने वाला, दर्शक, शिक्षा देने वाला और ज्ञान करा देने वाला—ये दो प्रकार के आचार्य बतलाये गये हैं ॥ १२८ ॥

इनमें पाँच प्रकार के आचार्य तो केवल कार्यभूत ही होते हैं और जो बोध करा देने वाला आचार्य होता है वह कारण स्वरूप होता है । जो पूर्ण अभिषेक करने वाला होता है, उसी की पादुका पूजा के योग्य होती है । हे महेशानि ! चाहे बहुत-से आचार्य न हों, परन्तु सबसे अधिक महत्त्व बोधक-आचार्य का ही होता है ॥ १२९ ॥

गुरु के समस्त लक्षणों से युक्त और संशयों के उच्छेद करने वाले तथा ज्ञान प्रदान करने वाले गुरु को प्राप्त कर हे देवि ! फिर दूसरे गुरु की तलाश नहीं करनी चाहिए ॥ १३० ॥

तन्त्रसार में लिखा है—

शान्तो दान्तः कुलानश्च विनीतः शुद्धवेषवान् ।
शुद्धाचारः सुप्रतिष्ठः शुचिर्दक्षः सुबुद्धिमान् ॥ १ ॥
आश्रमी ध्याननिष्ठश्च मन्त्रतन्त्र विशारदः ।
निग्रहानुग्रहे शक्तो गुरुरित्यभिधीयते ॥ २ ॥

गुरु शान्तिप्रिय, दमनशील, अच्छे कुल में समुत्पन्न विनयान्वित, शुद्ध वेष-भूषा रखने वाला, शुद्ध आचार से युक्त, अच्छा प्रतिष्ठा समाज में रखने वाला, ध्यान में निष्ठित, मन्त्र और तन्त्र विद्या का पूर्ण पण्डित और किसी को दण्ड देने तथा कृपा करने की शक्ति रखने वाला 'गुरु' नाम का अधिकारी होता है ॥ १-२ ॥

ज्ञानार्णव में लिखा है—

गुरौ मनुष्यबुद्धिश्च मन्त्रे चाक्षरबुद्धिकाम् ।
प्रतिमासु शिलाबुद्धिं कुर्वाणो नरकं व्रजेत् ॥ १ ॥
जन्महेतू हि पितरौ पूजनीयौ प्रयत्नतः ।
गुरुर्विशेषतः पूज्यो धर्म्माधर्म्मप्रदर्शकः ॥ २ ॥

जो मनुष्य अपने गुरु में मनुष्य की बुद्धि रखता है तथा देव-प्रतिमाओं में पाषाण का एक खण्ड मात्र है—ऐसी बुद्धि रखता है, वह अवश्य ही नरक में जाता है ॥ १ ॥

माता-पिता जन्म देने वाले हैं अर्थात् देह को उत्पन्न करने के कारण हैं, इसलिए उनकी अवश्य ही पूर्ण प्रयत्न के पूजा करनी चाहिए । किन्तु उनसे भी अधिक विशेष रूप से गुरु की अर्चना करनी चाहिए, क्योंकि 'क्या धर्म है और क्या अधर्म ?" इसका ज्ञान देकर धर्म में प्रवृत्ति कराने वाले गुरु ही होते हैं ॥ २ ॥

गुरुः पिता गुरुर्माता गुरुर्देवो गुरुर्गतिः ।
शिवे रुष्टे गुरुस्त्राता गुरौ रुष्टे न कश्चन ॥ ३ ॥
गुरु हीनं न कर्त्तव्यं वाङ्मनः कायकर्मभिः ।
अहिताचरणादेव विष्ठायां जायते कृमिः ॥ ४ ॥
मन्त्रत्यागात् भवेन्मृत्युगुरुत्यागात् दरिद्रता ।
गुरुमन्त्रपरित्यागात् रौरवं नरकं व्रजेत् ॥ ५ ॥

गुरु—माता, पिता, देव और गति सभी कुछ होते हैं, क्योंकि गुरु के बिना किसी प्रकार भी इस देहधारी आत्मा का कल्याण सम्भव नहीं होता है । साक्षात् शिव-देव भी नाराज हो जावें तो गुरु ही रक्षक हो सकता है, किन्तु यदि वही नाराज हो जावें तो त्रिलोकी में कहीं भी कोई त्राण करने वाला नहीं है ॥ ३ ॥

मन, वाणी और कर्म से गुरु का हित शिष्य को करना चाहिए । गुरु का अहितकर कार्य करने पर निष्ठा का कृमि बनकर जन्म लेना पड़ता है ॥ ४ ॥

मन्त्र के त्याग कर देने पर मृत्यु होती है, गुरु का त्याग कर देने से दरिद्रता होती है और गुरु तथा मन्त्र दोनों के त्याग कर देने पर रौरव नरक में जाता है ॥ ५ ॥

उत्पादकब्रह्मदात्रोर्गरीयान् ब्रह्मदः पिता ।
तस्मान्मन्येत् सततं पितुरप्याधिकं गुरुम् ॥ १ ॥
गुरुवत् गुरुपुत्रेषु गुरुवत् तत्सुतादिषु ॥

पिता उत्पादक हैं और गुरु ज्ञान देने वाले हैं । शरीर और ज्ञान उत्पादन करने से दोनों ही पिता होते हैं, किन्तु ब्रह्मदान करने वाले गुरु को पिता से भी अधिक मानना चाहिए । गुरु के समान ही उसके पुत्र तथा सुतादि में पूज्य भाव रखना चाहिए ॥ १

श्वित्री चैव गलत्कुष्ठी नेत्ररोगी च वामनः ।
कुनखी श्यावदतंश्च स्त्रीजितोऽप्याधिकांगकः ॥
हीनांगः कर्पटी रोगी बह्वाशी बहुजल्पकः ।
एतैर्दोविहीनो यः स गुरु शिष्यसम्मतः ॥

श्वेत और गलित कुष्ठ वाला, नेत्रों के रोग वाला, कुत्सित नखों वाला, बौना, काले दाँतों वाला, कर्पट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धारण करने वाला, रोगी, बहुत अधिक खाने वाला, बहुत व्यर्थ बोलने वाला गुरु निन्द्य होता है । अतः इन दोषों से रहित ही गुरु बनाना चाहिए और ऐसा ही गुरु शिष्य सम्मत होता है ।

गुरु की इस अनिवर्चनीय महत्ता को स्वीकार करते हुए कबीर ने गुरु को गोविन्द से भी उच्च आसन प्रदान किया—

गुरु गोबिन्द दोऊ खड़े, काके लागौं पांय ।
बलिहारी गुरु आपनो, गोविन्द दियो बताय ॥

सद्गुरु में दो गुणों का होना आवश्यक माना गया है । एक, इच्छा और दूसरी क्रिया । अनेकों विद्वान् देखे जाते हैं, जिनके पास विद्या का भण्डार रहता है, परन्तु उनमें स्वार्थपरता का अवगुण विद्यमान रहता है अथवा उसके प्रसार के लिए कुछ उद्यम नहीं करते । उनका ज्ञान सड़ता रहता है । ज्ञान-प्रसार के लिए इच्छा का होना आवश्यक है । यह पर्याप्त नहीं है, उसके साथ शक्ति का समावेश होना आवश्यक है । इच्छा में क्रिया का योग होने पर सोने में सुहागे का काम करता है । अतः ज्ञान-गंगा का स्रोत प्रवाहित करने के लिए आप्त पुरुष—सद्गुरु में इच्छा और क्रियाशक्ति होनी चाहिए ।

अधिकारी गुरु के लक्षणों पर टिप्पणी करते हुए शास्त्रों कहा है—

दर्शनात् स्पर्शनाच्छब्दात् कृपया शिष्यदेहके ।
जनयेद् यः समावेश शाम्भवं स हि देशिकः ॥

—योग वशिष्ठ, निर्वाण प्रकरण १।१२८।१६१

अर्थात् "दर्शन, स्पर्शन, शब्द या कृपा से शिष्य के शरीर में शिव-भाव का जो आवेश कराने की क्षमता रखते हैं, वही देशिक अथवा गुरु कहलाये जाने के अधिकारी हैं ।"

आवेश का अभिप्राय है कुण्डलिनी जागरण के बाद षट्चक्र भेदन और ब्रह्मरन्ध्र में परम शिव के साथ मिलन ।

विष्णोः सपर्कः सम्यक् त्रिविधोत्पात्कर्मणि ।
षट् चक्र-भेदं कुशलः षडध्व-ज्ञान-मारगः ॥
पिण्डे पदे तथा रूपे रूपातीते विवेचकः ।
संध्यात्रयविशेषज्ञो ह्यध्वषटक-विशोधकः ॥
मन्त्र चैतन्य विज्ञाता गुरुसक्तः स्वयंभुवः ।
मन्त्र तन्त्रार्थ चैतन्य कुण्डलिगति वेदकः ॥
मन्त्र सिद्धान्त विधिवत् गुरुर्भवति नं भवति न परः।

अर्थात्—"त्रिविध तापों से तप्त व्यक्तियों की जो सम्यक् रूप से विष्णु भगवान से सम्पर्क स्थापित करा देते हैं, जो षट् चक्र भेदन में कुशल हैं, जो षडडव (वर्ण, पद, मन्त्र, कला, भुवन) और तन्त्र के ज्ञान में पारंगत हैं, पिंड कुण्डलिनी शक्ति-पद, तन्त्र-रूप-बिन्दु और रूपातीत ब्रह्म का विवेचन करने की सामर्थ्य रखते हैं । जो संध्या जप में विशेषज्ञ हैं, जो षट् चक्रों के मार्ग को जानते हैं, मन्त्र चैतन्य के जानकार हैं, स्वयं-भू ने इन्हें ही गुरु माना है । कुण्डलिनी की गति, मन्त्र, तन्त्र और उनके चैतन्य भाव से जो परिचित हैं, और जो मन्त्र सिद्धान्त के विधि-विधान को जानते हैं, वही वास्तविक गुरु हैं, दूसरे नहीं ।"

इसकी पुष्टि 'नवचक्रेश्वर' तन्त्र में की गई है ।

पिण्डं पदं तथा रूपं रूपातीपं चतुष्टयम् ।
यो वा सम्यग् विजानाति स गुरुः परि कीर्त्तितः ॥

अर्थात्—"गुरु वही है जो पिण्ड, पद, रूप और रूपातीत इन चारों की जिन्हें सम्यक् रूप से जानकारी है ।

गुरु गीता में कुण्डलिनी शक्ति, हंस, बिन्दु और निरंजन को इन चारों की संज्ञा दी गई है ।

पिण्डं कुण्डलिनी शक्तिः पदं हसंः प्रकीत्तिर्तः ।
रूपं बिन्दुरिति ज्ञेयं रूपातीतं निरंजनम्ः ॥

अर्थात्—पिण्ड-कुण्डलिनी शक्ति-परम हंस जो कहा गया है उसका रूप बिन्दु जानना चाहिए । वह रूप से परे और निरंजन होता है ।

अविद्याहृदय ग्रन्थि बन्ध मोक्षो यतो भवेत् ।
तमे व गुरुरित्याहुर्गुरु शब्देन योगिनः ॥

—शंकराचार्य

"जो हृदय की अविद्या ग्रन्थि को छेद कर बन्धन से छुड़ाकर मोक्ष का मार्ग दिखलावें उन्हीं को योगीजन गुरु कहते हैं ।"

तत्तद्विवेक वैराज्ययुक्तवेदान्त युक्तिभिः ।
श्री गुरुः प्रापयत्येव न पद्मपि पद्मताम् ।
प्रापय्य पद्मतामेनं प्रबोधयति तत्क्षणात् ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्—श्री गुरुदेव विवेक और वैराग्यमय वेदान्त युक्तियों सहित अपद्म को जो पद्म रूप में परिवर्तन कर देते हैं और उसे तत्क्षण जाग्रत कर देते हैं ।"

यः समः सर्वभूतेषु विरागो वीतमत्सरः ।
कर्मणा मनसा वाचा भीते चाभयदः सदा ।
सम बुद्धि पद प्राप्तस्तत्रापि भगवन्मयः ।
पंच काल परश्चैव पांचरात्रार्थवित्तथा ।
विष्णु तत्वं परिज्ञाय एचं चानेक भेदनम् ।
दीक्षयेन्मेदिनीं सर्वांकिं पुनश्चोपसम्भवान ॥

—तत्वसार

"जो समस्त प्राणियों में समभाव रखते हैं राग-द्वेष हीन हैं, जिन्हें समत्व की प्राप्ति हो गई हैं और जो भावन्मय हो गए हैं, जो नित्य कर्म का पालन करते हैं और वैष्णव शास्त्र का रहस्य जानते हैं, वे गुरु एक ही विष्णु तत्व को अनेक रूपों में जानकर सारी पृथ्वी की दीक्षित कर सकते हैं, फिर ज्ञान-सम्पन्न अधिकारियों की तो बात ही क्या है ?"

श्री मद् वासुदेवानंद सरस्वती ने अपने 'वृद्ध शिक्षा' नामक, वेदान्त ग्रन्थ में लिखा है—

विशारदं ब्रह्मनिष्ठं श्रोत्रियं गुरुमाश्रयेत् ।

गुरु को ब्रह्मनिक और श्रोत्रिक होना आवश्यक है ।

तंत्र दार्शनिक भास्कराचार्य ने ललिता सहस्रनाम के भाग्य (१०) में लिखा है—

अयोग्येऽपि योग्यतामापाद्य श्री गुरु सूर्यो बोधयति'

अर्थात्—अयोग्य को भी योग्य बनाकर श्री गुरुदेव रूपी सूर्य उसे प्रबुद्ध बना देते हैं ।'

मातृतः पितृतः शुद्धः शुद्धभावो जितेन्द्रियः ।
सर्वांगमानां सांरज्ञः सर्व शास्त्रार्थ तत्ववित ।
परोपकार निरतो जप पूजादि तत्परः ।
अमोघ वचनः शान्तोवेद वेदार्थ पारगः ।
योगमार्गानुसन्धायी देवता हृदयङ्गमः ।
इत्यादि गुण सम्पन्नो गुरुरागम सम्मतः ।

—शारदातिलक

"जो असली माता-पिता से पैदा हो, सदाचारी हो, शुद्ध भावना वाला हो, इन्द्रियाँ जिसके वश में हों, जो समस्त शास्त्रों के सार को जानता हो, परोपकारी हो, जप-पूजा आदि उपासनाओं में संग्लन हो, जिस की वाणी अमोघ हो, शान्त हो, वेद और वेदार्थ का पारदर्शी हो, योगमार्ग में जिसकी प्रगति हो, जो हृदय में देवता के समान इस प्रकार के गुण जिसके स्वभाव में हों वही शास्त्र सम्मत गुरु बनाने योग्य है ।"

सुन्दरः सुमुखः स्वच्छः सुलभो बहुतन्त्रवित् ।
असंशयः संशयच्छिन्निरपेक्षो गुरूमतः ॥
सौन्दर्यमनवद्यत्वं रूपे सुमुखता पुनः ।
स्मरेपूर्वाभिभाषित्वं स्वच्छताऽजिह्मवृत्तिता ।
सौलभ्यमप्यगर्वित्वं सन्तोषी बहुतन्त्रता ।
असंशयस्तत्वबेधः तच्छित्तत्प्रतिपादनात् ॥
नैरपैक्ष्यमवित्तेच्छा गुरत्व हितवेदिता ।
एवंविधो गरर्ज्ञयस्तित्वरः शिष्ययुः उद- ॥

अर्थात्—गुरु की विशेषता यह है कि वह देखने में सुन्दर-सुरम्य मुख वाला-साफ-आसानी से प्राप्त किए जाने वाला-बहुत से तन्त्र ग्रन्थों ज्ञाता, स्वयं संशय से रोहित, संशयों की छेदन करने वाला, किसी भी वस्तु की अपेक्षा न रखने वाला ही मुख वाला मुस्कराते हुए भाषण करने वाला शरीर एवं वस्त्रादि से स्वच्छ रहने वाला, सरल, आसानी से प्राप्त होने वाला, अजर्वी सन्तुष्ट, बहुत से यन्त्रों का ज्ञाता, संशय रहित, तत्व बोधवाला जो कि शिष्य के समक्ष तत्वाज्ञान का प्रतिपादन कर सके किसी भी अपेक्षा न रखने वाला, धनेच्छा से रहित, हित की बात जानने वाला इस प्रकार का व्यक्ति गुरु जानना चाहिए-इन गुणगणों से रहित अन्य तो शिष्यों को दुःखदायी ही होता ।

ब्रह्मनिष्ठो वेधकः शक्तिपात क्षमश्च गुरुः ।

"गुरु ब्रह्मनिष्ठ, वेध करने वाला और शक्तिपात करने की क्षमता वाला होना चाहिए ।"

वेध करने का अभिप्राय—षट्चक्रों के भेदन से है।

'निग्रहानुग्रहक्षमश्च ।'

"गुरु निग्रह और अनुग्रह की क्षमता वाला होना चाहिए ।"

शक्तिपात करने का नाम अनुग्रह और उसे रोकने का नाम निग्रह है ।

जब शक्तिपात अधिक वेग से हो जाता है, तो उसके क़म करने की आवश्यकता पड़ जाती है । जैसी व्यवस्था भौतिक यन्त्रों में रहती है, वैसी आध्यात्मिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षेत्र में भी रहती है । गुरु को शक्तिपात के वेग को कम करने की सामर्थ्य वाला होना चाहिए ।

अन्तर्लक्ष्यो बहिर्दृष्टिः सर्वज्ञो देशकालवित् ।
आज्ञासिद्धिस्त्रिकालज्ञो निग्रहानुग्रहक्षमः ॥
वेधको बोधकः शान्त सर्व जीव दयाकरः ।
स्वाधीनेन्द्रियसञ्चारः षड्वर्गविजयप्रदः ॥
अग्रगण्योऽतिगम्भीरः पात्रापात्रविशेषवित् ।
शिवविष्णुसमः साधुमनु भूष्ण भूषितः ॥

अर्थात्—"जिसकी दृष्टि बाह्य भले ही हो, परन्तु लक्ष्य अन्तर की ओर हो, देश-काल का जानकार और सर्वज्ञ हो, सिद्धियाँ जिसकी आज्ञा से काम करती हों, जो त्रिकालज्ञ हो, निग्रह-अनुग्रह की क्षमता वाला हो, षट्चक्र भेदन की सामर्थ्य वाला, ज्ञान का बोध कराने वाला हो, जो षट्रिपु पर विजय प्राप्त कर चुका हो और जितेन्द्रिय हो, समस्त कार्यों में अग्रगण्य रहता हो, गम्भीर प्रकृति का हो, पात्रापात्र की विशेषता से परिचित हो, जिसकी विष्णु और शिव में समबुद्धि हो (एक को इष्ट मानकर दूसरे के प्रति द्वेष न रखता हो), साधना के भूषणों से भूषित हो । वही गुरु दीक्षा देने के योग्य कहलाता है ।"

स्त्री धनादिष्वनासक्ती दुःसङ्गा व्यसनादिषु ।
सर्वाहम्भावसन्तुष्टा निर्द्वद्वो नियतव्रतः ॥
अलोलुपोह्यसङ्गश्च पक्षपाती विचक्षणः ।
निःसङ्गा निर्विकल्पश्च निर्णीतात्मातिधार्मिकः ॥
तुल्यनिन्दास्तुनिर्मौनी निरपेक्षी नियामकः ।
इत्यादिलक्षणापेतः श्रीगुरुः कथितः प्रिये ॥

अर्थात् "जो स्त्री पुरुष और धनादि में अनासक्त हो, दुःसग और व्यसनों से दूर हो, जो अपने में ही सन्तुष्ट, निर्द्वन्द और नियमित रूप से व्रतशील हो, अलोलुप, संकल्प, आत्मतत्व का साक्षात्कारकर्त्ता, अति धार्मिक, निन्दा-स्तुति में मौन (एक समान समझने वाला), निरपेक्ष (किसी की अपेक्षा न करने वाला) नियामक अपने आत्मबल से दूसरों को नियन्त्रित करने वाला) हो, ऐसे लक्षणों से युक्त व्यक्ति ही गुरु होने की योग्यता रखता है ।"

निर्ममो नित्यसन्तुष्टः स्वतन्त्रोऽनन्तशक्तिमान् ।
सद्भक्तवत्सलोधीरः कृपालुः स्मितपूर्णवाक् ॥
नित्येनैमित्तकेकाम्ये रते कर्मण्यनिन्दिते ।
रागद्वेशभयक्लेषदम्भाहङ्कारवर्ज्जितः ॥
स्वविद्यानुष्ठानरतो धर्मज्ञानौर्थदशंक ।
यदृच्छाला असन्तुष्टो गुणदोष विभेदकः ॥

अर्थात्—"जो व्यक्ति निर्भय, नित्य, सन्तुष्ट, स्वतन्त्र, अनन्त शक्तिशाली, सद्भक्त वत्सल, धीर, कृपालु, हास्यपूर्ण सुख देने वाली वाणीवाला, नित्य, नैमिक्तिक और अनिन्दित काम्य-कर्म में रत, राग, द्वेष; भय, क्लेश, दम्भ, अहंकार से शून्य, विद्या, अनुष्ठान के कार्य में व्यस्त, धर्म व ज्ञान के अर्थ का प्रसारक, दैव-इच्छा के लाभ से सन्तुष्ट, गुणदोष के भेद को जानने वाला है, वही गुरु होने का अधिकारी है ।"

गुरु ईश्वरीय विभूति

शास्त्रों का यह मत है कि ईश्वर जीव के उद्धारकर्त्ता होने के नाते गुरु के रूप में स्वयं अवतरित होते हैं और शिष्य के उत्थान की योजना बनाते हैं । ईश्वर गुरुओं के परम गुरु माने गए हैं । वही अनादि आचार्य तत्व है । पातंजलि ने भी अपने योग सूत्रों में इस तथ्य को स्वीकार किया है—

तस्यात्मानुग्रहामावेऽपि भूतानुग्रहः प्रयोजनं ज्ञान ।
धर्मोपदेशेनं कल्पप्रलयमहाप्रलयेषु संसारिण उद्धरिष्यामीति॥

अर्थात्—'ईश्वर का अपना कोई प्रयोजन नहीं होता, फिर भी कल्पप्रलय और महाप्रलय में ज्ञान और धर्म के उपदेश के माध्यम से संसारी जीवों के उत्थान की दृष्टि से वह आते हैं, यही उनका प्रयोजन रहता है । जीव में उनके अनुग्रह की योग्यता होती है तभी वह अनुग्रह प्राप्त कर पाता है, यह निश्चित है ।"

सच्चे आचार्य का उद्देश्य भी यही रहता है, इसलिए शास्त्रकारी ने उसे शिवतुल्य आसन पर आसीन होने की घोषणाएँ की हैं । वे आचार्य को शिव-समान समझते हैं और उसी दृष्टि से उनकी पूजा-अर्चना करने की सलाह देते हैं । शिव से स्वयं इसे स्वीकार किया है—

शिवोऽहमाकृतिर्देवि नर दृगगोचरो न हि ।
तस्मात् श्रीगुरुरूपेण शिष्यान रक्षति सर्वदा ॥

"मेरी शिवरूपी आकृति मनुष्य नहीं देख सकते, इसलिए गुरु का रूप धारण करके मैं शिष्यों की सदैव रक्षा किया करता हूँ ।"

शास्त्र की भी यही उक्ति है—

यस्मान्महेश्वरः साक्षात् कृत्वा मानुषविग्रहम् ।
कृपया गुरु रूपेण मग्नाः प्रोद्धरति प्रजाः ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्—"शिव स्वयं ही मानुष विग्रह धारण करते हैं और गुरु रूप से कृपा करके माया में लिप्त जीवों का उद्धार करते हैं ।"

इसलिए उत्तम साधक शिव के साथ एक्य स्थापित करके अपने गुरु का ध्यान करते हैं—

स्वमूर्द्धान सहस्रार पंकजसीन भव्ययम् ।
शुद्ध स्फटिक संकाशम् शरच्चन्द्र निभाननम् ॥
प्रफुल्लोन्दीवशकार नोत्र द्वय विराजतम् ।
शुक्लाम्बर धंर शुक्लगन्धमारव्यानु लेपनम् ॥
विभूषितं श्वैत माल्यै वर्राभव कर द्वयम् ।
वामांगतया शक्त्या सहितं स्वप्रकाशया ॥
सुरक्तोपल धारिण्या ज्ञानैर्मुदित मानसम् ।
शिवेनैक्यं समुन्नीय ध्यायेत्परगुरुं धिया ॥

—अनन्तफल तन्त्र

"अपने मस्तक के सहस्रदल कमल में बैठे हुए अविनाशी स्वच्छ स्फटिक मणि के सदृश्य कान्ति वाले, शरद्कालीन चन्द्रमा के समान मुख वाले विकसित कमल ने समान, विशाल नेत्र वाले, श्वेत वस्त्र धारण करने वाले, श्वेत पुष्प की माला को धारण करने वाले, श्वेत चन्दन धारण करने वाले, दोनों हाथों में वराभयमुद्रा धारण किए हुए अपने प्रकाशित स्वर्ण कैसे तेज से युक्त होकर ज्ञान से प्रसन्न चित्त वाले अपने परम गुरुदेव को सदाशिव के साथ एक्य समझकर उनका ध्यान करता हूँ ।"

क्योंकि शास्त्र का अनुमोदन यही है—

शिरः परेमे शुक्ले दशशतं दले के सरगते ।
पतत्रीणां तुल्ये परम शिवरूपं निजगुरुम् ॥

—अन्नदाकल्प

"मस्तष्क में स्थित सहस्रदल कमल के पत्रों पर परम शिवरूप अपने गुरु का स्थान जाने ।"

शिरः पद्मे महादेदेवैस्तथैव परमोगुरुः ।
तत्समो नास्ति देवेशि पूज्यो भुवनत्रये ॥
तदंशं चिन्तयेद्देवि बाह्ये गुरु चतुष्टुयम ॥

—निर्वाण तन्त्र

"मस्तक से सहस्रार पद्म में महादेव ही सर्वप्रधान गुरु हैं । हे देवि ! उसके समान तीनों लोकों में और कोई नहीं है । गुरु, परम गुरु, परमेष्ठी गुरु और परात्म गुरु—ये चारों उसी शिव के अंश हैं ।"

शिवरूपं समास्थाय पूजां गृहणाति पार्वति ।
गुरुरूपं समादाय भवपाशान्निकृन्तयेत ॥
स्वानुग्रहकर्त्ता त्वादीश्वरः करुणानिधि ।
आचार्यरूपमास्थाय दीक्षया मोक्षयेत पशून् ॥

हे पार्वती ! शिवरूप में वह पूजा को ग्रहण करते हैं और गुरु के रूप में भव-बन्धनों को काटते हैं । सब पर अनुग्रह करने वाले करुणानिधि ईश्वर ही आचार्य रूप ग्रहण करके दीक्षा देकर जीव को मोक्ष दिलाते हैं । तभी आन्तर गुरु की श्रेष्ठता को शास्त्र ने स्वीकार किया है । उनका यह विश्वास है कि आन्तर गुरु प्रत्येक जीव के हृदय में अर्न्तयामी रूप से निवास करता है । इसलिए गुरु के इस स्वरूप को निराकार और चैतन्यमय कहा गया है । उन्हें सच्चिदानन्द स्वरूप भी माना जाता है ।

साधना में गुरु की परम आवश्यकता का अच्छा आधार उपरोक्त युक्तियाँ ही हैं । गुरु बिना साधना मार्ग में गति असम्भव ही है । अतः प्रत्येक साधक को चाहिए कि वह अधिकारी सत्पुरुष को गुरु वरण करें, गुरु दीक्षा लें ।

दीक्षा की महान परम्परा

कहा जा चुका है कि आध्यात्म क्षेत्र में प्रवेश करने का श्री गणेश गुरु वरण से होता है । इस द्वार को खोले बिना आत्मिक प्रगति के क्षेत्र में प्रवेश करना बन ही नहीं पड़ता, ऐसा शास्त्रकारों का मत है । कारण स्पष्ट है विद्यार्थी कितना ही मेधावी या सुसम्पन्न क्यों न हो, अध्यापक के बिना अपने बल-बूते विद्याध्ययन नहीं कर सकता । शिल्प, व्यवसाय, कला जैसे महत्त्वपूर्ण प्रसंगों में प्रत्यक्ष प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है । इन्जीनियर, डॉक्टर आदि बनने के लिए बिना कौशल अभ्यास के सम्पर्क में रहे बात बनती ही नहीं । मोटर अपने पैसे से खरीदने वाले भी ड्राइवरी किसी अन्य से सीखते हैं । आध्यात्म विज्ञान के रहस्यों का अपने अनुरूप निर्धारण करने के लिए भी किसी अनुभवी की आवश्यकता पड़ती है । कठिन रोगों का उपचार बिना सुयोग्य चिकित्सक की सहायता के अपने आप कर सकना कहाँ बन पड़ता है । अपने फोड़े चीर-फाड़ कराने से सर्जन का ही सहयोग अर्जित करना पड़ता है । गुरु-वरण की आवश्यकता इसी स्तर की समझी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गई है । आत्मोत्कर्ष का महान लक्ष्य पाने के लिए इस निर्धारण को अनिवार्य मानने का परामर्श शास्त्रकारों और आप्तजनों ने दिया है ।

विभिन्न विषयों के विभिन्न गुरु होते हैं । एक व्यक्ति को समयानुसार साहित्य, संगीत, मल्ल, कला, शिल्प, व्यवसाय, चिकित्सा आदि में प्रवीणता प्राप्त करने की आवश्यकता पड़ सकती है । इन सभी कार्यों की शिक्षा एक व्यक्ति दे सके, यह कठिन है । उनके लिए अलग-अलग अध्यापकों का आश्रय लेना पड़ता है । स्कूली शिक्षा तक में एक अध्यापक से काम नहीं चलता । एक कक्षा में कई विषय पढ़ाये जाते हैं । विभिन्न विषयों के विभिन्न अध्यापक होते हैं । ऊँची कक्षाओं में प्रवेश पाने के साथ-साथ भी नये-नये—योग्यता की दृष्टि से क्रमशः अधिक बढ़े-चढ़े अध्यापकों से वास्ता पड़ता है ।

आत्मिक प्रगति के, आत्म-कल्याण के क्षेत्र में भी यह बात लागू होती है । आज एक प्रयोजन के लिए एक अध्यापक की जरूरत है तो कल दूसरे के पास जाना पड़ सकता है । बाजार में सभी माल एक ही दुकान पर नहीं मिलता है । इसलिए आत्मिक प्रगति क्रम की बढ़ती या बदलती आवश्यकताओं के अनुरूप आध्यात्म क्षेत्र में अपने स्तर के अनुरूप अध्यापन प्राप्त करने के लिए अनेकों प्रवीण पारंगतों का आश्रय लेना पड़ सकता है । एक ही निर्धारण सदा सर्वदा बना रहे, यह आवश्यक नहीं भगवान राम ने संस्कृति की शिक्षा वशिष्ठ से और युद्ध-कौशल विश्वामित्र से प्राप्त किया था ।

चिकित्सा का निर्धारण हर रोगी की स्थिति का गम्भीर पर्यवेक्षण करने के उपरान्त ही सही रूप में बन पड़ता है । सभी मरीजों को एक ही उपचार नहीं बताया जा सकता और न सभी प्रगतिशीलों को एक लाठी से हाँका जा सकता । व्यक्ति विशेष की मनःस्थिति और परिस्थिति का गम्भीर पर्यवेक्षण कर सकने में समर्थ, अपने विषय के निष्णात व्यक्ति भी यह निर्धारण करते हैं कि किसके लिए, किस कारण, किस समय, कम साधन करने की आवश्यकता है । इस क्षेत्र में उतार-चढ़ाव आते और परिवर्तन होते रहते हैं, तद्नुरूप चिकित्सा की तरह साधना में भी आवश्यक परिवर्तन, संशोधन करने होते हैं । यह कार्य प्रवीण पारंग स्तर के निष्णात व्यक्ति ही कर पाते हैं । गुरु उन्हें ही कहा जाता है । विडम्बना के लिए तो सिंह की खाल ओढ़कर गधा भी वनराज बन सकता है । नाटकों में राजा का लिबास पहनकर तुच्छ व्यक्ति भी उस स्वांग का भली प्रकार निर्वाह कर देते हैं ।

गुरु और शिष्य के मध्य मात्र छात्र और अध्यापक का ही रिश्ता नहीं होता । इतना सा सामान क्रम नहीं चलता, आदान-प्रदान का पिता-पुत्र जैसा सिलसिला भी चलता है । मेधावी छात्र को भी पिता का अनुदान चाहिए । उसके बिना भोजन, वस्त्र, फीस, पुस्तक आदि का प्रबन्ध कैसे बने ? न बने तो मेधावी छात्र अल्प वयस्क और साधन रहित होने की स्थिति में विद्या का धनी कैसे बने ?

आध्यात्म क्षेत्र में परामर्शदाता मार्गदर्शक गुरु की दुहरी भूमिका होती है । वह मार्गदर्शक भी करता है । अनुशासन रख सकने योग्य भारी भरकम व्यक्तित्व सम्पन्न भी होता है । साथ ही अपनी उपार्जित सम्पदा का एक अंश देकर भी शिष्य की सामयिक आवश्यकता पूरी करता है ।

अलंकारिक प्रतिपादनों में गुरु को भगवान भी कहा गया है । लगता है यह अत्युक्ति है । शरीरधारी भगवान कैसे हो सकता है ? संशय सही है और उसके समाधान में प्रतिपादित की यथार्थता का वर्णन भी सही है । एक अध्यापक वह होता है जो उँगली पकड़कर अक्षर लिखना सिखाता है । दूसरा अध्यापक वह होता है जो परीक्षा लेकर स्नातक का प्रमाण-पत्र प्रदान करता है । गुरु की शालीनता का अभ्यास कराने वाला और भगवान को उसकी प्रवीणता परखने वाला तदनुरूप प्रतिफल देने वाला उच्चस्तरीय अध्यापक कहा जा सकता है ।

यहाँ एक और भी उपमा फिट होती है—कलम लगाने की । एक पेड़ में दूसरे की कलम लगा देने पर जो फूल या फल आते हैं वे टहनी के गुणों वाले होते हैं । जड़ें पुराने पेड़ की—विशेषता बाहर वाली टहनी की । इस प्रकार दोनों के समन्वय से पेड़ ऐसी विलक्षणताओं से भर जाता है जो पुरानी दोनों परिस्थितियों से भिन्न थी । कलम न लगती तो पुराना पेड़ ऐसे ही गये-गुजरे फल देता रहता । इसी प्रकार टहनी भी पुराने पेड़ की ही अंग रहती तो कलम बनकर जो चमत्कार दिखा सकी वह न दिखा पाती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रयोग से दोनों ही पक्षों को लाभ मिला । गुरु वरण के सम्बन्ध में भी यही बात है । यदि दीक्षा गम्भीरता के वातावरण और तथ्यों के निर्धारण से सम्पन्न हुई है तो उसका प्रभाव परिणाम इस समन्वय से चमत्कारी स्तर का होना चाहिए । दो रंगों के मिलन से एक तीसरा रंग बनता है । गुरु और शिष्य के मिलन से एक तीसरा व्यक्तित्व उभरता है । जिसमें गुरु जैसी विशेषता उत्पन्न न हो सके तो भी शिष्य का पुराना स्वरूप यथावत् स्थिर नहीं रह सकता है । वह निश्चित रूप से दीक्षा का अर्थ होता है प्राण प्रत्यावर्तन । समर्थ रामदास की विशेषताएँ शिवाजी में—चाणक्य की चन्द्रगुप्त में—रामकृष्ण परमहंस की विवेकानन्द में हस्तान्तरित हुई थीं ।

गुरुदीक्षा दो आत्माओं की आध्यात्मिक क्षेत्र की घनिष्टता है । जिसमें दुर्बल पक्ष को सबल के साथ जुड़ जाने जैसा लाभ मिलता है । टंकी का पानी नल में तब तक भरा रहता है जब तक टंकी खाली न हो चले । बिजलीघर से जुड़े हुए तार जहाँ तक पहुँचते हैं वह रोशनी, गर्मी गति आदि उत्पन्न करते हैं । गुरुदीक्षा दो आत्माओं को इसी प्रकार जोड़ती है और समर्थ की प्रतिभा दुर्बल पक्ष में चमकने लगती है । सूर्य का प्रतिबिम्ब पानी की लहरों पर चमकता देखा जा सकता है । किसी सम्पन्न के यहाँ गोद चले जाने पर कोई निर्धन बालक भी रातों-रात सम्पन्न बन जाता है ।

दीक्षा का प्रतीक उपनयन है । पुलिस में भर्ती होने पर कमर में बाँधने की पेटी तथा कन्धे पर लगाने का बैज मिलता है । आदर्शवादी जीवन में प्रवेश करने पर शरीर ज्यों का त्यों रहते हुए भी पुनर्जन्म लेना कहा गया है । इसी को द्विजत्त्व भी कहते हैं । आत्मीयता एवं एकता की एक महत्त्वपूर्ण श्रृंखला का दीक्षा के आधार पर पुनर्जन्म होता है । एकात्म के लाभ सर्वविदित हैं । हिमालय से जुड़ी हुई नदियाँ कभी सूखती नहीं । बर्फ पिघलने का अनुदान उन्हें बराबर मिलता रहता है । नाले का पानी गंगा में मिलकर गंगाजल बनता है । चन्दन वृक्ष के समीप उगे हुए झाड़ झंखाड़ भी सुगन्धित हो जाते हैं । पेड़ से लिपटने के बाद बेल उतनी ही ऊँची उठ जाती है जितना कि पेड़ । अपने बलबूते उसे वह गौरव नहीं मिल सकता था । उड़ाने वाले के हाथ का आश्रय पाकर पतंग आकाश चूमती है । आँधी के साथ तिनके भी बिना पैर के दौड़ लगाते हैं । नदी के प्रवाह में नगण्य से पत्ते भी सैर करते हुए समुद्र तक पहुँचते हैं । युधिष्ठिर का कुत्ता भी स्वर्ग तक पहुँचा था । यह उदाहरण उस सघन एकता के हैं जिसे प्राप्त करने के लिए गुरुदीक्षा का परम पुनीत कृत्य सम्पन्न होता है ।

स्वाति और सीपों के सम्पर्क से मोती बनना, पारस स्पर्श से लोहे का सोना बनना, कल्पवृक्ष के नीचे बैठने पर कामनाओं की तृप्ति होना, अमृत-पान से अमरत्व का आनन्द मिलना अलंकारिक वर्णन है । व्यवहारतः ऐसा होता नहीं । पर गुरु शिष्य की घनिष्ठता में वैसे लाभ मिलते देखे गए हैं । वृहस्पति के नेतृत्व में देव समुदाय समुन्नत हुआ था और शुक्राचार्य के तत्वावधान में दैत्यों ने समर्थता पायी थी । एकलव्य का संकल्प वाला गुरु-श्रद्धा के सहारे सफलता की चरम सीमा तक पहुँचा ।

गुरुदीक्षा में दो तत्वों का समान समावेश है । इसीलिए उसे साझेदारी की दुकान कहा गया है । उसे अंधे, पंगे का संयोग भी कहते हैं । शिष्य अपनी कभी गुरु की सहायता से पूरी करता है । गुरु को भी अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सहायता अपेक्षित होती हैं । गुरु की गरिमा और शिष्य की पात्रता उच्चस्तरीय होने पर ही उसकी समुचित परिणत उत्पन्न होती हैं । इसलिए इस प्रयोग में जहाँ गुरु को अनुदान देने होते हैं वहाँ शिष्य को भी तदनुरूप कर्त्तव्य निभाने होते हैं । विवेकानन्द, दयानन्द, शिवाजी, चन्द्रगुप्त आदि ने भी शिष्य के कर्त्तव्य निभाये थे और उदारतापूर्वक गुरुदक्षिणा प्रस्तुत की थी । गुरुदीक्षा और गुरुदक्षिणा दोनों अन्योन्याश्रित हैं । उन्हें परस्पर पूरक कहा गया है । दो पहियों की गाड़ी, ही ठीक तरह लुढ़कती है । दोनों हाथ से ताली बजती है । गड्ढा न होने पर विपुल वर्षा का पानी भी इकट्ठा कहाँ हो पाता है ? चट्टानों पर तो पावस में हरियाली का एक तिनका भी नहीं जमता ।

गुरु दक्षिणा अनुदान का प्रतिदान है । कलम लगाना, बीज बोना गुरुदीक्षा है और उसे खाद पानी देना गुरुदक्षिणा । महत्त्व दोनों का समान है । एक के अभाव में दूसरा अशक्त ही रहेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गुरु दरिद्र नहीं होता और न शिष्य दानी, फिर भी पात्रता विकसित करने के लिए शिष्य की श्रद्धा को दाता के रूप में विकसित होने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है । उस्ताद स्वयं गिर कर शिष्य को ऊपर लादता और दाँव-पेंच सिखाता है । इसमें प्रत्यक्षतः गुरु छोटा बनता है और शिष्य बड़ा । इस प्रक्रिया में गौरवान्वित दोनों होते हैं ।

भगवान वामन ने यही किया था । वे अवतार होकर भी बलि के सामने छोटे बने थे । शबरी के दरवाजे पर राम, गोपियों के यहाँ कृष्ण, घायल कर्ण के पास अर्जुन, कृष्ण, हरिश्चन्द्र के यहाँ विश्वामित्र इसी उद्देश्य से याचक बनकर गए थे । गुरु दाता भी होता है और विधाता भी । न उसे कोई निजी अभाव और न प्रलोभन । फिर भी वह शिष्य को गुरुदक्षिणा देने के लिए प्रोत्साहित करता है । ताकि उसकी श्रद्धा उभरे और उस बीजारोपण से उसे हजार गुना लाभ उठा सकने का अवसर मिले । गुरुदक्षिणा न टैक्स है, न जुर्माना, न खैरात, न याचना, न अहंकार का परिपोषण । मात्र गुरु के अनुशासन में अपने साधनों का नियोजन सदुपयोग कर सकने का अभ्यास है । पहलवानी सीखने के लिए व्यायाम का, श्रम और आहार का, मालिश का खर्च करना पड़ता है । विद्यार्थी, किसान, व्यवसायी भी आरम्भ में समय भी लगाते हैं और खर्च भी करते हैं । इसके उपरान्त ही उन्हें फसल से तिजोरी भरने और विद्वान बनने का अवसर मिलता है । आत्मिक प्रगति के लिए, विभूति, सम्पदा अर्जित करने के लिए शिष्य को भी गुरुदक्षिणा देनी होती है । समयदान और अंशदान के दो पुण्य परमार्थ प्रयोजनों को उस अवसर पर और भी अधिक बढ़ने का साहस प्रदर्शित करना होता है ।

गुरु की प्रशंसा—वन्दना की जाती है । प्रशंसा का तात्पर्य है भावुकता या चापलूसी । वन्दना का अर्थ है—गुणों का स्मरण, भावनाओं का स्थापन । श्रद्धा का संवर्धन, श्रद्धांजलि समर्पण का तात्पर्य है । महानता के साथ तादात्म्य होने का संकल्प, साहस और व्रत-व्यवहार । शिष्य भी आशीर्वाद के लिए याचक भिक्षुक बनकर अपनी क्षुद्रता प्रकट नहीं करता । वरन् गुरुदक्षिणा प्रस्तुत करते हुए, स्वाभिमान अक्षुण्य रखता है और आदान-प्रदान का उपक्रम अपनाता है जिससे उसकी अपनी लघुता महानता में परिणत हो जाती है । शिष्यों ने गुरुदक्षिणा चुकाने में जो निष्ठा बरती उसे गुरु की ऊँचाई को स्पर्श करते देखा गया है । कर्ण का कुण्डल-कवच दान, एकलव्य की अँगूठे की गुरुदक्षिणा और गुरुदक्षिणा चुकाने में हरिश्चन्द्र का आदर्श इसी तथ्य का प्रतिपादन करते हैं ।

भारतीय संस्कृति की यह भी एक महान परम्परा है । गुरु शिष्य मिलते हैं तो दोनों ही अपने-अपने पक्ष का कर्त्तव्य पालन करते हैं । गुरु की सामर्थ्य—शिष्य की पात्रता । गुरु की सिद्धि—शिष्य की साधना । गुरु की प्रेरणा—शिष्य की सक्रियता । गुरु का स्नेह—शिष्य की श्रद्धा । गुरु का अनुशासन—शिष्य का अनुगमन । यही हैं दो पक्ष जिनके मिलने पर बिजली के दो तार मिलने पर करेन्ट उत्पन्न होने की तरह चमत्कारी परिणति होती है । मात्र एक में उत्साह दूसरे में उपेक्षा रहे तो प्रयास निरर्थक चला जायेगा । एक हाथ से ताली कहाँ बजती है ? एक पहिए की गाड़ी कहाँ चलती है ? दीक्षा के समय मिलन का वैसा ही उत्साह एवं वातावरण रहना चाहिए जैसा कि विवाह के समय दोनों पक्षों का होता है । जले हुए दीपक बुझे को जलाते हैं । यही तथ्य गुरु शिष्य परम्परा के साथ भी जुड़ा हुआ है । एक अपनी ज्योति का अंश देता है । दूसरा उसे अपनाकर तेल-वाती जलाना आरम्भ कर देता है और तद्रूप बनता है ।

गुरु से आशीर्वाद की याचना आवश्यक नहीं । वह समय और पात्रता के अनुरूप स्वयमेव खिंचते चले आते हैं । देखा जाता है कि शिष्य की याचना होती है—कृपा कीजिए, अनुग्रह कीजिए । गुरु कहता है—साहस कीजिए, साझीदार बनिए । कोई खींचतान न करे । अपने पक्ष का निर्वाह करें इसी में दीक्षा की सार्थकता है । स्वार्थ प्रलोभन के लिए रचा हुआ जंजाल दीक्षा का उद्देश्य पूरा नहीं होने देता है वरन् उलटा बाधक बनता है ।

दीक्षा की आवश्यकता

गुरु केवल मार्गदर्शन ही नहीं करते हैं वरन् वह समय की दीर्घा को कम करते हैं और उसे बहुत ही कम समय में अभीष्ट लाभ की सिद्धि में सहायक होते हैं । इस जगत् में मानव अपूर्ण रूप से आता है । उसे पूर्णता की पूर्ति की अभिलाषा रहती है । इसकी पूर्ति के लिए गुरु ही एकमात्र सहारा होते हैं । इसलिए दीक्षा की आवश्यकता पड़ती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तन्त्र-ग्रन्थों की तो यह धारणा है कि—

मूलपद्मे कुण्डलिनी यावत् सा निद्रिता प्रभा ।
तावत किञ्चिन्न सिद्धयेत मन्त्रयंत्राचंनादिकम् ॥
जागर्ति यदि सा, देवि बहुभिः पुण्यसञ्चयैः ।
तदा प्रसादमायान्ति मंत्र यंत्रार्च्चनादयः ॥

"मूलाधार में जब तक कुण्डलिनी शक्ति सोई हुई है, तब तक मन्त्र, यन्त्र, अर्चन आदि कर्म सफल नहीं होते । यदि गुरु के पुण्य प्रताप से कुण्डिलनी देवी का जागरण हो गया, तो मन्त्र, तन्त्र, पाठ, पूजन, जप, तप, ज्ञान, ध्यान जो कुछ भी बन पड़ेगा, यह सभी सिद्धि को प्राप्त होंगें । इससे पूर्व जिस दुःखमय जगत् को मिथ्या और नरक माना जाता था वही सत्य और स्वर्ग स्वयं बन जायेगा, क्योंकि शक्ति के जागरण से हर क्षेत्र में सफलता के स्तम्भ स्थापित किए जाने सम्भव होंगें । आत्मसक्ति के विकास से समस्त भव-व्यवधियों का परिष्कार हो जायेगा ।

शास्त्र भी आश्वासन देते हैं—

अज्ञस्य दुःखौघमयं ज्ञस्यानन्दमयं जचत् ।
अन्धं भुवनमन्धस्य प्रकाशं तु सुचक्षुषाम् ॥

अर्थात् "जो अज्ञ पुरुष होता है उसके लिए यह जगत् दुःखों के समूह से परिपूर्ण होता है और जो ज्ञानी है, उसके लिए समस्त जगत् आनन्दमय होता है । जो अन्धा है, उसके लिए समस्त भुवन ही अन्धकारमय है और जो सुन्दर नेत्रों वाले हैं, उनको यहीं प्रकाशमय है ।"

जीवन की सफलता में कुण्डलिनी जागरण एक प्रमुख प्रक्रिया है । इसे गुरु की सहायता से ही सम्पन्न से ही सम्पन्न किया जा सकता है । यही दीक्षा की आवश्यकता का आधार है ।

दीक्षा द्वारा कुण्डलिनी शक्ति की मन्त्र-सृष्टि पर प्रकाश डालते हुए शास्त्र में कहा गया है ।

यदा भवति सा संविद्धिगुणीकृतविग्रहा ।
सा प्रसूते कुण्डलिनी शब्द ब्रह्ममयी विभः ॥
शक्ति ततो ध्वनितस्मान्नादस्तस्मान्निबोधिका ।
ततोऽर्धेन्दुरुततो बिन्दुस्तस्मादसीत्परा ततः ॥
पश्यन्ती मध्यमा वाणी वैखिरी सर्ग जन्मभूः ।
इच्छा ज्ञान-क्रियात्मासौ तेजोरूपा गुणात्मिका ।
क्रमेणानेन सृजति कुडली वर्णमालिकाम् ॥

अर्थात्—"द्विगुण विग्रह से युक्त जब वह संविद हो जाती है, तब कुण्डलिनी जो शब्द ब्रह्ममयी विभु है, शक्ति का प्रसव करती है । इसके अनन्तर ध्वनि होती है, उससे नाद होता है और उससे निबोधिका हुआ करती है । फिर उसके पश्चात् अर्द्ध चन्द्र और उससे बिन्दु होता है । उससे परापश्यन्ती मध्यमा वाणी जो वैखरी की जन्मभू होती है । यह इच्छा, ज्ञान और क्रियास्वरूप है तथा तेजोरूप—गुणात्मक है । इस क्रम से कुण्डली वर्णमालिका का सृजन किया करती है ।"

साधना शास्त्रों-तंत्र ग्रंथों में दीक्षा की महिमा का अपूर्व वर्णन होता है—

दीक्षवै मोचयत्यूदर्ध्व शैवेधाम नयत्यपि ।

अर्थात् "दीक्षा से मुक्ति होती है और वह ऊपर के शिवधान में पहुँचाती है ।"

दीक्षया पाशमोक्षस्तु शुद्धभावाद् विवेकजम् ।

"दीक्षा से पाशों का मोक्ष होता है और उसके बाद विवेकजज्ञान की उत्पत्ति है ।

पिच्छिला तन्त्र के अनुसार—

दीक्षां विना न मोक्षः स्यात्प्राणिनां शिवशासनात् ।
सा च न स्याद् बिनाचार्यमित्याचार्यपरम्परा ॥ ४
उपानाशतेनापि य विना नंव सिद्ध यति ।
तां दीक्षाभाश्रयेद यत्नात् श्रीगुरोर्मन्त्रसिद्धए ॥ ५

"शिव का अनुशामन यही है कि दीक्षा के बिना किसी को मुक्ति प्राप्त नहीं होती है । आचार्य-परम्परा बिना दीक्षा नहीं होती । सैकड़ों प्रकार की उपासना-पद्धतियाँ प्रचलित हैं, परन्तु दीक्षा के बिना सिद्धि प्राप्त नहीं होती । गुरुदेव से दीक्षा प्राप्त करके ही मुक्ति करना सम्भव है ।"

रसेन्द्रेण यथा विद्धमयः सुवर्णतां व्रजेत् ।
दीक्षाविद्धस्तथैवात्मा शिवत्वं लभते प्रिये ।
दाक्षाग्निदग्धदर्मासौ यायाद्विच्छिन्नबन्धनः ।
गतस्तस्य कर्मबन्धो निर्जीवश्च शिवो भवेत ॥

अर्थात्—"रसेन्द्र (पारद भस्म) से विद्ध होकर लोहा सुवर्ण बन जाया करता है, उसी भाँति दीक्षा से भली-भाँति विद्ध हुआ आत्मा हे प्रिये ! शिव के स्वरूपता को प्राप्त हो जाया करता है । दीक्षा रूपी अग्नि से दग्ध हुए कर्मों वाला यह मनुष्य विच्छिन्न बन्धन वाला हो जाया करता है । इसके कर्मों का बन्धन तो निश्शेष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो जाया करता है । फिर जब यह मृत होता है, तो शिव के स्वरूप वाला हो जाया करता है ।"

दतात्रेय यामल के अनुसार—

अनीश्वरस्य मर्त्यस्य नास्ति त्राता यथा भुवि ।
तथा दीक्षाविहीनस्य नेह स्वामी परत्र च ॥

अर्थात्—"जो मनुष्य बिना ईश्वर वाला होता है, जिस तरह से भूमण्डल में उस अनीश्वरवादी का कोई त्राण करने वाला नहीं होता है, वैसे ही दीक्षा से विहीन पुरुष का भी यहाँ और परलोक में भी कोई रक्षक नहीं होता ।"

विष्णु यामल में लिखा है—

अता गुरुं प्रणम्यैव सर्वस्यं विनिवेद्य च ।
गृह्णीयाद्वैष्णवं मन्त्रं दीक्षापूर्व विधानतः ॥

अर्थात् "इसलिए इस प्रकार से गुरु को प्रणाम करके जो भी कुछ अपने पास हो उस सब कुछ को उनकी सेवा में समर्पित करके वैष्णव मन्त्र का ग्रहण करे, जो कि विधान से दीक्षापूर्वक ही होना चाहिए ।"

पुरश्चरण रसोल्लास (प्रथम पटल) के अनुसार दीक्षा से बढ़कर न कोई ज्ञान है, न तप है । अतः यह सर्वश्रेष्ठ है ।

नवरत्नेश्वर में कहा है कि सभी तरह की दीक्षा से मोक्ष की उपलब्धि होती है और योग की प्राप्ति होती है । पापों का नाश होता है, गुरु से दीक्षा न लेकर जो केवल पुस्तकीय ज्ञान के आधार पर साधना करता है, वह सहस्र मन्वन्तर में भी सद्गति नहीं पाता । जो व्यक्ति दीक्षा नहीं लेता,उसके व्रत, नियम, तप और तीर्थयात्रा कुछ भी सफल नहीं होता । ऐसे व्यक्ति द्वारा या ऐसे के लिए किया गया श्राद्ध मान्य नहीं होता । इसलिए सद्गुरु से दीक्षा लेना अत्यन्त आवश्यक माना गया है ।

योगाचार्यों का मत है कि दीक्षा से अपूर्णता का नाश और आत्मा की सम्यक् शुद्धि होती है । इससे आणवमल की निवृत्ति होती है । जो आत्मा पशुभाव में स्थित है, वह दीक्षा के प्रभाव से ऊपर उठकर शिव को प्राप्त होती है ।

परिभाषा

दीक्षा की परिभाषा तन्त्र में इस प्रकार दी गई हैं—

दीयते ज्ञान सद्भाव क्षीयते पशुवासना ।
दानक्षपण संयुक्ता दीक्षा तेनेह कीर्त्तिता ॥

"जो ज्ञान देती है और पशु-वासना का क्षय करती है, ऐसी दान और क्षपणयुक्त क्रिया को दीक्षा कहा जाता है ।"

दिव्यज्ञानं यतो दद्यात् कुर्यात् पापक्षयै ततः ।
तस्माद्दीक्षेति सा प्रोक्ता सर्वतन्त्रस्य सम्मता ॥

—विश्वसार तन्त्र

"जो पापों का नाश करके दिव्य ज्ञान करती है, उसे दीक्षा कहा जाता है । सभी तन्त्रों का यही मत है ।"

ददातिदिव्यभावञ्चेत् क्षिणुयात् पापसन्ततिम् ।
तेन दीक्षेति विख्याता मुनिभिस्तन्त्रपारगैः ॥

—गौतमीय तन्त्र अ. ७

"जिससे दिव्य भाव उपलब्धि और पाप-नाश होता हो, तन्त्र में विख्यात् मुनियों ने उसी को दीक्षा कहा है ।"

दीयते परमं ज्ञान क्षीयते पाप पद्धतिः ।
तेन दीक्षोच्यते मन्त्रे-स्वागमार्थबलबावात् ॥

—लघु कल्पसूत्र

"जो परम ज्ञान की दाता और पापों का नाश करती है, आगम शास्त्रों में उसी को दीक्षा के नाम से सम्बोधित किया गया है ।"

ददाति शिवतादात्म्यं क्षिणोति च मलत्रलयम् ।
अतो दीक्षेति संप्रोक्ता दीक्षातंत्रार्थविदभिः ॥

"जो शिव की तद्रूपता-समाधि को प्रदान करती है और तीन मलों (आणव, कर्मण और मायिक) का क्षय करती है । अतः दीक्षा तंत्र के अर्थ के जानकार मुनियों ने इसका नामकरण दीक्षा किया ।"

दीयते ज्ञानमत्यर्थं क्षोयते पाशबन्धनम् ।
अतोदीक्षेति देवेशि कथिता तत्वचिन्तकैः ॥
मनसा कर्मणा वाचा यत्पापं समुपार्जितम् ।
तेषां विशेषा करणी परमज्ञानदायतः ॥
तस्मात् दीक्षेति लोकेऽस्मिन गीयते शास्त्र वेदकैः ।
विज्ञान फलदा चैव द्वितीया लयकारिणी ।
तृतीयामुक्तिदा चैव तस्माद्दीक्षेतिधीयते ॥

"जो ब्रह्मज्ञान को प्रदान करने वाली और पाश व कर्मबन्धनों का क्षय करने वाली है । तत्व-चिन्तकों ने उसे दीक्षा नाम दिया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मनसा, वाचा, कर्मणा जो पाप किए जाते हैं, उनकी नाशकर्त्ता और परम ज्ञान-प्रदाता होने के कारण शास्त्रज्ञों ने इसे दीक्षा कहा है ।

प्रथम विज्ञान फल देने वाली, द्वितीय लय भोग सिद्ध करने वाली और तृतीय मोक्षदता होने के कारण इसे दीक्षा कहते हैं ।''

दीक्षा को तन्त्रों में आत्म-संस्कार की संज्ञा दी गई है । बद्ध आत्मा तीन मलों से युक्त रहता है । तीन मल हैं—आणव, कार्म और मायिक । इनके कारण उसकी पूर्णता में बाधा पड़ती है । इनकी निवृत्ति से पूर्णता की प्राप्ति होती है । वास्तव में तो आत्मा पूर्ण है, उसमें अपूर्णता का अंशमात्र भी नहीं है परन्तु माया के संयोग के कारण वह अपने को अपूर्ण समझती है । इस स्थिति को आणव मल की संज्ञा दी गई है । अपूर्णता की भावना के साथ कामनाएँ, इच्छाएँ और वासनाएँ जुड़ी हुई हैं । मनुष्य जब अपने को आत्मा न मानकर शरीर ही समझता है, तो जड़ शरीर की सुख-सुविधाओं की वृद्धि के लिए प्रयत्नशील रहता है । यह भोग बन्धन का कारण बनते हैं । इन्हें तन्त्र की भाषा में कार्म-मल कहा जाता है । तन्त्रवेत्ताओं के अनुसार मायिक मल की परिभाषा इस प्रकार है—''कला, विद्या, राग, काल तथा नियति और इनकी समष्टिभूता माया । पुर्यष्टक तथा स्थूल भूतमय विभिन्न जातीय कारण, सूक्ष्म एवं स्थूल देह—इन सब देहों के आधारभूत, विचित्रभुयन और नाना प्रकार के भोग्य पदार्थों का अनुभव जिसके कारण होता है, उसे मायिक मल कहते थे ।'' इन तीनों मलों से बद्ध आत्मा का संस्कार ही दीक्षा है ।

मूर्धन्य विद्वानों ने बड़े सुन्दर ही शब्दों में दीक्षा का प्रतिपादन किया है—

''श्री गुरुदेव की कृपा और शिष्य की श्रद्धा, इन दो पवित्र धाराओं का संगम ही दीक्षा है । गुरु का आत्मदान और शिष्य का आत्मसमर्पण, एक की कृपा और दूसरे की श्रद्धा के अतिरेक से ही यह सम्पन्न होता है ।

दीक्षा एक दृष्टि से गुरु की ओर से आत्मदान, ज्ञान-संचार अथवा शक्तिपात है, तो दूसरी दृष्टि से शिष्य में सुषुप्त ज्ञान और शक्तियों का उद्‌बोधन है । दीक्षा से ही शरीर की समस्त अशुद्धियाँ मिट जाती हैं और देह शुद्ध होने से देव-पूजा का अधिकार मिल जाता हैं । गुरु एक है और उन्हीं से चारों ओर शक्ति का विस्तार हो रहा है । यदि परम्परा की दृष्टि से देखें तो मूल पुरुष परमात्मा से ही ब्रह्मा, रुद्र आदि के क्रम से ज्ञान की परम्परा चली आयी है और एक शिष्य से दूसरे शिष्य में संक्रान्त होकर वही वर्तमान गुरु में भी है । इसी का नाम सम्प्रदाय है और गुरु के द्वारा इसी अविच्छिन्न साम्प्रदायिक ज्ञान की प्राप्ति होती है, क्योंकि मूलशक्ति ही क्रमशः प्रकाशित होती आयी है । उससे हृदयस्थ सुप्त शक्ति के जागरण में बड़ी सहायता मिलती है और यही कारण है कि कभी-कभी तो जिनके चित्त में बड़ी भक्ति है, व्याकुलता और सरल विश्वास है, वे भी भगवत्कृपा का उतना अनुभव नहीं कर पाते, जितना कि शिष्यों को दीक्षा से होता है ।''

इसका कारण यह है कि दीक्षा देते समय गुरु को अपने शरीर में गुरुत्व शक्ति की स्थापना करना पड़ती है तभी गुरु-दीक्षा देने के योग्य होता है । सहस्रदल कमल में निवास करने वाले परम शिव की प्राणशक्ति ही गुरुत्व शक्ति कही जाती है । इस महाशक्ति के संचार से ही गुरु-शिष्य की आत्मा के बाह्य मलों का संस्कार कर पाता है । आजकल तो न योग्य गुरु हैं और न शिष्य । केवल लकीर पीटना ही मात्र रह गया है । यदि शास्त्रों में दर्शाये विधि-विधान के अनुसार दीक्षा दी जाय तो शास्त्रों में वर्णित लाभ अवश्य प्राप्त होते हैं । तभी इसका इतना महान माहात्म्य बताया गया है और इसको अतीव आवश्यकता का अनुभव किया गया है ।

प्रकार

दीक्षा विभिन्न प्रकार की है । शास्त्र का वचन है—

स्पर्शाख्या देवि दृक् संज्ञा मानसाख्या महेश्वरी ।
क्रियायासादिरहिता देवि दीक्षा त्रिधा स्मृता ॥

''मंगलमयी दीक्षा तीन प्रकार की कही गई है । स्पर्श दीक्षा, दृग दीक्षा और मानस दीक्षा । योग्य गुरु अपनी कृपा से शिष्य को शिवहस्त से स्पर्श दीक्षा, दिव्य दृष्टि से देखने पर दृग, दीक्षा और सत्य संकल्प के मनन से मानस दीक्षा देते हैं ।''

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुलार्णव तन्त्र में इनका वर्णन इस प्रकार है—

यथा पक्षी स्वपक्षाभ्यां शिशून् संवर्धयेच्छनैः ।
स्पर्शदीक्षोपदेशस्तु तादृशः कथितः प्रिये ॥

"जिस तरह पक्षी अपने पंखों के स्पर्श से अपने शिशुओं का पालन-पोषण करता है, उसी तरह की यह स्पर्श दीक्षा है ।"

स्वपत्यानि यथा कूर्मी वीक्षणेनैव पोषयेत् ।
दृग्दीक्षाख्योपदेशस्तु तादृशः कथितः प्रिये ॥

"जिस तरह कछवी अपने शिशुओं का दृष्टिमात्र से पोषण करती है, उसी तरह की यह दृग दीक्षा है ।"

यथा मत्सी स्वतनयान् ध्यानमात्रेण पोषयेत् ।
वेधदीक्षोपदेशस्तु मनसः स्यात्तथाविधः ॥

"जिस तरह से मछली ध्यान मात्र से अपने बच्चों को पालती है, उसी तरह से ध्यान दीक्षा मन से की जाती है ।"

इसके अतिरिक्त एक शब्द-दीक्षा होती है । इस तरह से स्पर्श, भाषणा, दर्शन और संकल्प यह चार प्रकार की दीक्षा हुई है, जिसे स्थूल, सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम् कहते हैं—

विद्धि स्थूलं सूक्ष्मं सक्ष्मतरं सूक्ष्मतममपि क्रमतः ।
स्पर्शनभाषणदर्शन संकल्पनजत्वतश्चतुर्धातम् ॥

शिवागम में तीन प्रकार की दीक्षा का विवेचन है—

शोभवी चैव शाक्तीच मांत्री चैव शिवागमे ।
दीक्षेपदिश्यतेत्रेधा शिवेन परमात्मना ॥

"परमात्मा शिव ने शिवागम में तीन प्रकार की दीक्षा—शोभवी, शाक्ती और मान्त्री का उपदेश दिया है ।"

शाम्भवी दीक्षा के लक्षण इस प्रकार वर्णित किए हैं—

गुरोरालोकमात्रेण भाषणात्स्पर्शनादपि ।
सद्यःसञ्जायते ज्ञानं सा दीक्षा शांभवीयता ॥
देशिकानूग्रहेणैव शिवता व्यक्तकारिणी ।
सेयन्य शंभवी दीक्षा शिवादेशस्य कारिणो ॥
चरणद्वयसंभूता शांभवी शीघ्रसिद्धदा ।

"सामर्थ्यवान गुरु की दृष्टि, भाषण व स्पर्श से वह शक्ति का संचार करते हैं, तब शिष्य में दिव्य ज्ञान की उत्पत्ति होती है । गुरु-कृपा और शिष्य के सौभाग्य से आत्म-साक्षात्कार की स्थिति जिससे आती है, उसे शाम्भवी दीक्षा कहा गया है । गुरु अपने अनुग्रह से शिष्य को कृतार्थ कर देते हैं । शिव-शक्ति के समायोग चरणद्वय से सम्यक् प्रकार से दी हुई यह शाम्भवी दीक्षा सिद्धि प्रदान करती है ।"

वायवीय संहिता में कहा है कि गुरु दृष्टि और स्पर्श से एक क्षण में ही स्वरूप स्थित कर देते हैं । यही शाम्भवी दीक्षा है ।

रुद्रयामल के अनुसार शिव के चरण-द्वय से सम्पन्न दीक्षा ही शाम्भवी है । चरण-द्वय का अभिप्राय है—शिव और शक्ति दोनों के चरण ।

शाम्भवी दीक्षा से स्वरूप स्थिति का कारण बताते हुए शास्त्र में कहा गया है कि गुरु की दृष्टि से शिष्य का सहस्रार प्रफुल्लित हो जाता है, जिससे उसे समाधि की स्थिति प्राप्त हो जाती है ।

शाक्ती-दीक्षा का वर्णन शास्त्रों में इस प्रकार किया गया है कि कुण्डलिनी ही शक्ति है, उसका जागरण करके ब्रह्मनाड़ी से होकर शिव के साथ मिला देना ही शाक्ती-दीक्षा कहलाती है । इसमें कुण्डलिनी जागरण के लिए गुरु-शिष्य के अन्तर में प्रवेश करते हैं और अपनी शक्ति से यह क्रिया सम्पन्न करते हैं । इसमें गुरु-शक्ति की ही विशेषता है । शास्त्र में कहा है—

शाक्ती ज्ञानवती दीक्षा शिष्यदेहे प्रविश्यतु ।
गुरुणा योग-मार्गेण क्रियते ज्ञानचक्षुषा ॥

"ज्ञानवती शाक्ती दीक्षा उसी को कहते हैं, जिसमें गुरु योग-शक्ति से शिष्य के शरीर में प्रवेश करते हैं और अपने ज्ञान-चक्षुओं से दीक्षित करते हैं ।"

शाक्ती शक्तिभवा दीक्षा शक्तिः श्रीपरकुण्डली ।
तस्याः प्राण विलोमेन प्रवेशः परशम्भवे ॥

शक्ति से होने वाली शाक्ती-दीक्षा श्री परकुण्डी है । उसके प्राण विलोम से परशम्भव में प्रवेश हो जाता है ।

मांत्री दीक्षा के लक्षण इस प्रकार बताए गए हैं—

मंत्र मर्गानुसारेण साक्षात् कृतेष्टदेवताम् ।
गुरुश्चोद्बाधयेच्छिष्यं मंत्र मंत्रदीक्षेति सोच्यते ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वयं मन्त्रतनुर्भूत्वा संक्रम मन्त्रमादरात् ।
दद्यात् शिष्याय सा दीक्षा मांत्रोमलविद्यातिनी ॥
मात्री मंत्रोद्भवादीक्षा तच्छक्तिः स्वात्मसम्भवा ।
मंत्रा यंत्रर्चनादुक्तक्रियाभिर्भोगमोक्षदा ।

"मन्त्र से उत्पन्न होने वाली दीक्षा को मांत्री दीक्षा कहा जाता है, उसकी शक्ति अपनी ही आत्मा से सम्भूत हुआ करती है । मन्त्र जाप तथा यन्त्र का अर्चन से उक्त क्रियाओं के द्वारा वह भोग और मोक्ष दोनों का प्रदान करने वाली होती है ।"

मन्त्र-मार्ग में आणवी दीक्षा इस प्रकार दी जाती है—

मंत्रार्चनासनन्यास ध्यानोपचारकादिभिः ।
दीक्षा सा आणवी प्रोक्ता यथाशात्रोक्तरूपिणी ॥
शिवशक्तिसमायोगाज्जन्मान्तर कृतात् शुभात् ।
शवपूजानुसन्धानात् कर्मसाम्यं यदा भवेत् ॥
शिव एव तदा साक्षादाणव्यादीक्षया भवेत् ।
सर्वेषामेव दीक्षाणां मुक्तिः फलमखण्डितम् ॥

अर्थात् "मन्त्र, अर्चना आसन न्यास ध्यान, उपचार आदि के द्वारा जो दीक्षा होती, वह आणवी दीक्षा कही गई है और शास्त्रों के अनुसार उक्त रूप वाली होती है । शिव-शक्ति के समायोग से तथा अन्य जन्मों में किए हुए शुभ कर्म से तथा शिव की पूजा के अनुसन्धान से जिस समय कर्म का साम्य हो जाता है उस समय में आणवी दीक्षा से साक्षात् शिव ही हो जाया करता है । सभी दीक्षाओं का फल अखण्डित है और मुक्ति अर्थात् जन्म-मरण के बारम्बार आवागमन से छुटकारा पाना होता है ।"

नाम क्रिया-भेद से दीक्षा के अनेकों भेद हैं । आणवी दीक्षा के दस भेदों का वर्णन करते हुए कहा गया है—

स्मार्त्ती मानसिकी योगी चाक्षुषी स्पार्शिकी तथा ।
वाचकी मांत्रिकी होत्री शास्त्री चेत्यभिषेचिशा ॥

"स्मार्त्ती, मानसी, योगी, चाक्षुसी, स्पर्शिकी, वाचिकी, मांत्रिकी, होत्री, शास्त्री और अभिषेचिका—यह दस प्रकार दी दीक्षाएँ हैं ।"

'शारदा पटल' में चार प्रकार की दीक्षाओं का वर्णन है—

चतुर्विधा सा सन्दिष्टा क्रियावत्यादि भेदतः ।
क्रियावती वर्णमयी कलत्मावेधमय्यपि ॥

अर्थात् "क्रिया आदि के भेद से वह चार प्रकार की सन्दिष्ट की गई है । क्रियावती, वर्णमयी, कलात्मा और वेधमयी—यही उसके चार प्रकार होते हैं ।"

सुविधा की दृष्टि से दीक्षा के दो भेद भी कर लिए गए हैं—बाह्य और आन्तरिक ।

दीक्षा च द्विविधा प्रोक्ता वाह्याभ्यन्तर भेदतः ।
क्रियादीक्षा भवेदवाह्या वेधाख्याभ्यन्तरी मता ॥
द्विधादीक्षासाधारा च निराधारा तथैव च ।
नित्ये नमित्तिके काम्ये यस्याश्चर्यवाधिकारिता ॥
साधारा सा सप्रक्त निराधारा च मक्तिंदा ।
निर्मला सा च विज्ञेया कथ्यते तत्वचिन्तकैः ॥

अर्थात् "दीक्षा दो प्रकार बतलाई गई है—एक बाह्य होती है और दूसरी आभ्यांतर हुआ करती है । जो क्रिया-दीक्षा है, वह बाह्य होती है तथा जो वेधनाम वाली दीक्षा है वह आभ्यन्तरी मानी गई है । दोनों प्रकार की दीक्षा आधार से मुक्त तथा बिना आधार वाली होती है । नित्य, नैमित्तिक और काम्य में जिसकी अधिकारिता हुआ करती है, वह साधार दीक्षा कहलाती है । जो निराधार दीक्षा है, वह मुक्ति प्रदान करने वाली होती है । उसे तत्वों के चिन्तन करने वालों के द्वारा निर्मला दीक्षा कहा जाता है ! अतः उसे निर्मला ही जानना चाहिए ।

पं. गोपीनाथ कविराज ने दीक्षा-भेदों का वर्णन करते हुए कहा है—"आगम के अनुसार साधारणतया अध्यायों के वैचित्र्य से दीक्षा-भेद इस प्रकार हैं—कलादीक्षा १, तत्वदीक्षा ५, पददीक्षा १, मन्त्रवर्ण-भुवनदीक्षा ३, केवल भुवनदीक्षा १ । सब मिलाकर ११ हैं ।"

तत्वदीक्षा के आवांतर भेद हैं—एकतत्व दीक्षा, त्रितत्व दीक्षा, पंचतत्वदीक्षा, नवतत्वदीक्षा और छत्तीस तत्व दीक्षा । ये सब पाँच प्रकार की हैं, किसी-किसी स्थान पर अठारह तत्वों की दीक्षा का भी वर्णन दीख पड़ता है, छत्तीस तत्व तो सर्वत्र सुप्रसिद्ध ही हैं । अठारह तत्व इस प्रकार हैं—शब्दादि ५, मन, बुद्धि, अहंकार, गुण, प्रकृति—५, पूरुष, नियति, काल, माया, विद्या, ईश्वर, सदाशिव और शक्ति—८, कुल १८ । नवतत्व हैं—प्रकृति, पुरुष, नियति, काल, माया, विद्या, ईश्वर, सदाशिव, और शिव । पंचतत्व इस प्रकार हैं—पृथ्वी, जल, तेज, वायु, और आकाश । तीन तत्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार हैं—आत्मतत्व (विज्ञानकाल पर्यन्त), विद्यातत्व (ईश्वर पर्यन्त) और शिव-तत्व (शेष सब तत्व) । एक तत्व याने शिवतत्व, जिस प्रक्रिया में जिस तत्व या जिन तत्वों को मुख्य रूप में ग्रहण किया जाता है, वहाँ अन्यान्य तत्वों का अन्तर्भाव समझना चाहिए क्योंकि वहाँ उक्त तत्वों का प्राधान्य है तथा और तत्वों का गुणभाव है । ये ग्यारह प्रकार की दीक्षाएँ अध्वगत भेद के अनुसार कही गई हैं ।"

इनके अनन्तर ज्ञान-दीक्षा से लेकर सब दीक्षाओं की संख्या १२ होती है । इनमें से प्रत्येक के सबीज, निर्बीज तथा सद्योनिर्वाणदायिनी भेद से तीन आवान्तर भेद होते हैं । इस प्रकार दीक्षाओं की कुल संख्या ३६ है । आचार्य की दीक्षा केवल सबीज ही होती है, वह बारह प्रकार की है—साधक लोकधर्मी तथा शिवधर्मी भेद से दो प्रकार के होते हैं, इसलिए साधक-दीक्षा २४ प्रकार की है (१२×२) । समयी का अध्वन्यास नहीं होता, ज्ञान तथा क्रिया से उनका हृदादि या ग्रन्थिभेदन हो जाता है । इसलिए इस दृष्टि से उनकी दीक्षा दो प्रकार की होती है । कुल दीक्षा भेद ७४ हैं (३६+१२+२४+२) इनमें सकल, निष्कल, अघोरेश्वरी आदि के अनुष्ठान और लोकधर्मी साधक के अवान्तर वैचित्र्यों के कारण तथा भौतिक, नैष्ठिक आदि भेदों के कारण दीक्षा के असंख्य भेद हैं ।"

समय-दीक्षा

जब गुरुदेव शिष्य को हृदय से आशीर्वाद देना चाहते हैं, तो शिष्य के मस्तक पर शिवहस्त का अर्पण करते हैं । इसी को 'समय-दीक्षा' कहा जाता है । शिवहस्त के स्पष्टीकरण के लिए शास्त्र का वचन है—

ब्रह्मप्रपञ्चसंयुक्तः शिवेनाधिष्ठितः शिवः ।
पाशच्छेदकरः क्षेमी शिवहस्तः प्रकीर्तितः ॥

अर्थात् "ब्रह्म प्रपंच से संयुक्त शिव, शिव के द्वारा अधिष्ठित । शिव का हस्त, पाशों के छेदन करने वाला तथा क्षेमप्रद कहा गया है ।"

यह दीक्षा उसे दी जाती है, जिसके हृदय में मन्द शक्तिपात से श्रद्धाभक्ति की उत्पत्ति हो ताकि वह गुरु व देवता की पूजा कर सके और मन्त्र ग्रहण करने की योग्यता प्राप्त कर सके । यह दीक्षा सर्वसाधारण को दी जाती है । इससे ईश्वर तत्व की पूजा-पात्रता प्राप्त होती है । इस दीक्षा का वर्णन दीक्षोत्तर तन्त्र, स्वच्छन्द तन्त्र और देवी यामल में आता है । इस दीक्षा में सभी का समान अधिकार स्वीकार किया गया है । इसमें भेद-भाव का कोई नियम नहीं है और न ही काल और आश्रम के कोई बन्धन हैं । इससे कर्म-समूह का परिपाक होता है, क्योंकि कर्म परिपक्व हुए बिना नष्ट भी नहीं होते । इस दीक्षा से पूर्णत्व की प्राप्ति सम्भव नहीं । इससे तो पूजा, पाठ, हवन, ध्यान आदि की पात्रता ही प्राप्त होती है ।

पुत्रक दीक्षा

निशिसंचार और योगसंचार तन्त्र में इसका वर्णन है । वागीश्वरी के गर्भ में दूसरा जन्म होने के कारण जो दीक्षा लेता है, उसे 'पुत्रक' कहा जाता है । इसीलिए इसे 'पुत्रक दीक्षा' कहते हैं । जैसे समय-दीक्षा से ईश्वर-पद में प्रतिष्ठित होता है, वैसे ही पुत्रक दीक्षा से परम तत्व में स्थिरता मिलती है तांत्रिक भाषा में इससे शुद्ध देह की प्राप्ति होती है । यह देह भी उच्च श्रेणी की है, परन्तु फिर भी उससे पूर्णता को प्राप्ति सम्भव नहीं है ।

निर्वाण दीक्षा

पुत्रक दीक्षा के बाद निर्वाण दीक्षा का क्रम है । पुत्रक दीक्षा लेकर जब साधक दीर्घकालीन तक साधना करता है । तभी निर्वाण दीक्षा का अधिकार प्राप्त करता है । समय व पुत्रक की अपेक्षा इसका महत्त्व विशेष है, क्योंकि इसके प्रभाव में शिवप्रद में योग होना सम्भव है, समय और पुत्रक में ऐसा नहीं हो सकता । समय दीक्षित साधक का पूर्व जाति-सम्बन्ध बना रहता है । अतः उसकी पशुत्त्व निवृत्ति नहीं होती । उसकी देह भी अशुद्ध हो जाती है । पुत्रक की देह तो अशुद्ध नहीं रहती वरन् विशुद्ध जो जाती है, परन्तु इतना होने पर भी आणव मल की निवृत्ति नहीं होती । अतः शिवप्रद में योग नहीं हो पाता । निर्वाण में मल परिपक्व हो जाता है, तभी शिवप्रद में योग होने की आशा रहती है ।

वेध दीक्षा

ततो वेधमयीं वक्ष्ये दीक्षां संसारमोचिनोम् ।
ध्यायेच्छिष्यतोमंध्ये मूलाधारे चतुर्दले ॥
त्रिकोणमध्ये विमले तेजस्त्रयविलम्भिते ।
वलयत्रयसंयुक्तां तड़ित्कोटिसमप्रभाम् ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शिवशक्तिमयीं देवी चेतनामात्र विग्रहाम् ।
सूक्ष्मां सूक्ष्मतरां शक्ति भित्वा षट् चक्रमञ्जसा ॥
गच्छन्ति मध्यमार्गेण दिव्यां परशिवाबधि ।
सहैवमात्मनः शक्तिं वेधयेत्परमेश्वरे ॥

"यह वेध-शिक्षा जगत् के पापों को नष्ट करने वाली है । गुरु का कर्त्तव्य है कि वह कोटि-कोटि विद्युत-पुंज की भाँति प्रकाशमयी और शिवशक्तिमयी देवी कुंडलिनी का ध्यान करे जो विषय के शरीर में चतुर्दल मूलाधार कमल में तीन तरह के रगों से मिले हुए विमल तेजत्रय से प्रकाशित त्रिकोण योनि-स्थान के मध्य में त्रिवलयाकार रूप में निवास करती है । कुंडलिनी का चेतनामात्र ही विग्रह है । यह सूक्ष्म-से-सूक्ष्मतर शक्ति है । इस शक्ति को परशिव में विलीन करने के लिए मध्य मार्ग सुषुम्ना में प्रवेश कराके षट्चक्र का सेवन करे । इस तरह से ईश्वर के रूप का बोध कराने के लिए गुरु अपनी शक्ति का संचार शिष्य में करते हैं ।"

गुरूपदिष्टमार्गेण वेधं कुर्याद्विचक्षणः ।
पाप मुक्तः क्षणच्छिष्यश्छिन्नपाशस्तया भवेत् ॥
बाह्यव्यापारनिर्मुक्तो भूमौ पतति तत्क्षणात् ।
सञ्जातदिव्यभावोऽसौ सर्वं जानाति शाम्भवि ।
यदस्ति वेधकं तत्तत्स्वयमेवानु भूयते ।

"परम्परा मार्ग से जब गुरु वेध-दीक्षा देते हैं, तो शक्तिपात से शिष्य पापों से मुक्त हो जाता है । वह बाह्य व्यापार से निर्मुक्त होकर उसी समय भूमि पर गिर जाता है । ऐसा शिष्य गुरु के भाव को समझ जाता है । वह स्वयं भी दिव्यभाव को प्राप्त हो जाता है, अतएव वह भी सब कुछ जान जाता है ।"

वेध-दीक्षा के महत्त्व को प्रदर्शित करने के लिए कहा है—

प्रबुद्धः सहसा शिष्यस्तत्सौख्यं बहुधेश्वरि ।
वेधविद्धः शिवः साक्षान्न पुनर्जन्मतां व्रजेत् ॥
एवा तीव्रतरा दीक्षा भवबन्धविमोचिनी ।
शिवभावप्रदा देवि त्वां शपे कुलनायिके ॥

'शक्तिपात से भूमि पर गिरने के बाद वह तत्काल ही होश में आ जाता है, तब वह महासुख की अनुभूति करता है । ऐसी वेध-दीक्षा जिसे मिलती है, वह भाग्यवान साक्षात् रूप ही हो जाता है,उसका फिर जन्म नहीं होता । ऐसी तीव्रतर दीक्षा भव-बन्धन को नष्ट करने वाली और शिव-भाव प्रदान करने वाली है—ऐसा स्वयं शिव शपथ लेकर कहते हैं ।"

चाक्षुणी दीक्षा द्वारा भी शक्तिपात किया जाता है । शतश्लोकी के ६१वें श्लोक में इस प्रकार वर्णन है—

तद्ब्रह्मौवाहमस्मोत्यनुभव उदितो यस्यकस्यापिचेद्वै
पुंसः श्रीसद्गुरूणामतुलितकरुणपूर्ण पीयूषदृष्टवा ।
जीवन्मुक्तः स एव भ्रमविधुरमना निर्गतिऽनाधु पाधौ
नित्यानन्दैकधाम प्रविशति परमं नष्टसन्देहवृतिः ।

"वह ब्रह्म मैं ही हूँ—इस प्रकार के अनुभव से अर्थात् उस ब्रह्म और मुझमें कोई भी भेद नहीं है, एक ही है । ऐसा जब अनुभव हो और उस अनुभव को प्राप्त करने का सौभाग्य जिस किसी को भी श्रीगुरु की अतुलित करुणा से पूर्ण पीयूषमयी दृष्टि से प्राप्त हो जावे तो अनादि उपाधि के निर्गत हो जाने पर भ्रम से विधुर मन वाला वह ही पुरुष जीवन्मुक्त हो जाता है । उसकी जो सन्देह वृत्ति होती है, वह तो नष्ट ही हो जाया करती है, फिर वह परम नित्यानन्दमय एक धाम में प्रवेश कर जाया करता है ।"

शिवधर्मी और लोकधर्मी दीक्षा

साधक दो प्रकार के होते हैं—एक भौतिक सुखों की कामना करते हैं, दूसरे पारलौकिक प्रगति की । एक सकाम उपासना करते हैं, दूसरे निष्काम । निष्काम साधक शिवधर्मी और सकाम साधक लोकधर्मी कहे जाते हैं । एक का लक्ष्य अलौकिक सुख है, दूसरे का लौकिक । शिवधर्मी दीक्षा से तीन प्रकार की सिद्धियों की उपलब्धि होती है—१. यागेश्वर पद, २.मन्त्र पद, ३. पिंड सिद्धि और अवांतर सिद्धियाँ । तन्त्र के अनुसार इस दीक्षा से अजर, अमर और स्थिर देह की प्राप्ति होती है । इस देह की स्थिरता प्रलयकाल तक रहती है ।

लोकधर्मी दीक्षा में मन्त्र की उपासना नहीं होती । यह भोगार्थी साधक है और अपने शुभ कर्मों के फल से ही संचित अशुभ कर्मों के दुष्परिणामों को नष्ट करती है । संचित शुभ कर्मों से इन्हें अणिमादि सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं । इस साधक में वासना का प्राधान्य होता है । अतः इन सिद्धियों के योग के लिए वह गुरु द्वारा ऊर्ध्व लोकों में भेजा जाता है । जब वहाँ भी उसकी तृप्ति नहीं होती, तो उसे उससे भी ऊपर के लोक में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भेजा जाता है, जब तक कि उसे भोगों से वैराग्य न हो जाय । वैराग्य होने पर उसे परमेश्वर के निष्फल रूप से युक्त किया जाता है । तन्त्र में कहा है—

लोकधर्मिणमारोप्य यते भुवनभर्त्तरि ।
तद्धर्मापादनं कुर्याच्छिवे वा मुक्तिकांक्षिणं ॥

"गुरु का कर्त्तव्य है कि वह लोकधर्मी साधक को इष्टभुवनेश्वर के स्वरूप से और उसके धर्म से युक्त करे । यदि साधक में मोक्ष की आकाँक्षा हो, तो उसे शिव में आरोपित करे और फिर उनके धर्मों से युक्त करे ।"

गुरु साधक की मनोभूमि का अच्छी तरह निरीक्षण करके ही उसके अनुरूप दीक्षा देते हैं और इस ढंग से उसकी प्रगति कराते हैं, जो उसके स्वर और इच्छा के अनुरूप हो । दीक्षा में पात्रता और योग्यता तो प्रथम सोपान है ।

अन्तः दीक्षा

गुरु तो साधक की बाह्य वृत्तियों को पात्रता के अनुसार अन्तर्मुख करने का प्रयत्न करते हैं । यह वृत्तियाँ शक्तियों में परिणत हो जाती हैं । शास्त्र का भी यही कहना है—

बहिर्मुखस्य मन्त्रस्य वृत्तयो याः प्रकीर्तिताः ।
ता एवान्तर्मुखस्यास्य शक्तयः परिकीर्त्तिताः ॥

"मन्त्र अर्थात् चित्त जब बहिर्मुख होता है, तो उसे वृत्ति के नाम से सम्बोधित किया जाता है । परन्तु जब वह अन्तर्मुख होता है, तो उसे 'शक्ति' कहते हैं ।"

गुरु साधक को शक्ति-सम्पन्न करने के लिए उसकी वृत्तियों को अन्तर्मुख करते हैं । इस प्रयत्न अर्थात् दीक्षा को अन्तः दीक्षा कहते हैं ।

इससे स्पष्ट है कि सभी साधनाओं में दीक्षा एक अत्यन्त आवश्यक अंग मानी जाती थी, तभी हर स्तर व्यक्ति के लिए विभिन्न प्रकार की दीक्षाओं के विधान की आवश्यकता पड़ी, ताकि किसी भी स्तर का व्यक्ति इससे वंचित न रहे । परन्तु अब न अधिकारी गुरु रहे न अधिकारी शिष्य । यदि हैं भी तो, सत्पात्र शिष्य कहीं ढूँढ़े नहीं मिलते । यही कारण है कि भारत की कितनी ही प्राचीन विद्यायें लुप्त हो गईं ।

सद्गुरु प्राप्त कर सकने का असाधारण सौभाग्य

सद्गुरु की महिमा गाते-गाते शास्त्रकार थकते नहीं । मनीषियों ने निरन्तर यही कहा है कि आत्मिक प्रगति के लिए गुरु की सहायता आवश्यक है । इसके बिना आत्मकल्याण का द्वार खुलता नहीं । साधन सफल होता नहीं । सामान्य जीवन-क्रम में माता, पिता और गुरु को देव माना गया है और उनकी अभ्यर्थना समान रूप से करते रहने का निर्देश दिया गया है ।

सामान्य अर्थ में शिक्षक को गुरु कहते हैं । साक्षरता का अभ्यास कराने वाले—शिल्प-उद्योग, कला, व्यायाम आदि क्रिया कौशलों की शिक्षा देने वाले भी गुरु ही हैं । तीर्थगुरु, ग्रामगुरु, कुलगुरु आदि कितने ही उनके नियमित वर्ग भी बन गए हैं । असाधारण चातुर्य में प्रवीण व्यक्ति को भी व्यंग में 'गुरु' कहते हैं । जिसका वास्तविक अर्थ होता है हरफनमौला—तिकड़मी अथवा धूर्तराज । कितने ही धर्म की आड़ में चेली-चेला बनाने का धन्धा परम्परा के आधार पर ही चलाते हैं । हमारा बाप तुम्हारे बाप का गुरु था इसलिए हम तुम्हारे गुरु बनेंगे यह दावा करने वाला और इसी तर्क से प्रभावित करके अपना धन्धा चलाने वाला एक बहुत बड़ा वर्ग मौजूद है । परम्परावादी लोगों के गले यह दलील उतर भी जाती है और वे योग्य अयोग्य का विचार किए बिना इन तथाकथित गुरुओं का नमन करते हुए भेंट पूजा करते रहते हैं । गले में कण्ठी बँधाई और कान फुकाएँ तो आजीवन कुछ दान-दक्षिणा देते ही रहनी पड़ेगी । शिष्य लोग एक प्रकार से धर्म सन्तोष कर लेते हैं, भले ही वह निराधार हो । गुरु लोग इस विडम्बना को मुफ्त में मान और धन प्राप्त करते रहने का एक स्वर्ण सुयोग मानकर अपने सौभाग्य पर गर्व करते हैं । इस विडम्बना को जड़ जमाये हुए किसी भी बौद्धिक क्षेत्र में पिछड़े हुए क्षेत्र में आसानी से देखा जा सकता है ।

यह तो प्रचलन की बात हुई । परम्परा से परम्परा—ढर्रा से ढर्रा—उसमें नुक्ताचीनी करने की गुंजाइश नहीं रहती । लोगों की बुद्धि भी विलक्षण है । एक ओर जहाँ फूँक-फूँककर कदम रखने और गुण, दोष परखने की क्षमता पायी जाती है दूसरी ओर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परम्परागत बातों में उनका अन्तर्मन इतना रूढ़िवादी हो जाता है कि ढर्रे को ही सही मानते रहने के अतिरिक्त उनकी बौद्धिक क्षमता एक इंच भी आगे नहीं बढ़ पाती । कितने ही क्षेत्र में बड़े तार्किक और प्रतिभाशाली व्यक्ति कितनी ही ऐसी रूढ़ियों एवं मान्यताओं में जकड़े देखे जाते हैं जिनको तात्विक दृष्टि से देखने पर उपहासास्पद और निरर्थक ही ठहराया जा सकता है । इतने पर भी वे लोग इतनी बुरी तरह उनसे चिपके होते हैं मानो यथार्थता की कसौटी पर कसकर ही उन्होंने उस मान्यता को अंगीकार किया हो । यह कैसी विचित्रता है कि एक ही व्यक्ति एक दिशा में प्रखर बुद्धि और दूसरे क्षेत्र में सर्वथा मूढ़मति सिद्ध होता है ।

गुरुवाद के ऊपर यह बात आश्चर्यजनक रूप से लागू होती है । कोई विरला ही ऐसा होगा जो इस क्षेत्र में उपयोगिता, आवश्यकता एवं यथार्थता की कसौटी लेकर आगे बढ़ता हो । अनुकरण, अतिश्योक्ति, मूढ़ मान्यताओं एवं अन्ध परम्पराओं का ही उस क्षेत्र में बोलवाला रहता है । अस्तु गुरु शिष्य परम्परा का वर्तमान स्वरूप लगभग वैसा बन गया है जिसे विचारशील अनावश्यक ही नहीं अवांछनीय भी कह सकते हैं । इस रूढ़ि से आत्मिक प्रगति का नहीं अवगति का ही द्वार खुलता है ।

शास्त्रकारों ने जिस गुरु तत्व की महिमा का वर्णन और आवश्यकता का निरूपण किया है वह प्रचलित विडम्बना के साथ कोई ताल-मेल नहीं खाता । शब्द साम्यभर उनमें है तात्विक अन्तर तो उनके बीच जमीन-आसमान जितना है । शास्त्र सम्मत गुरु तत्व और विडम्बनाग्रस्त गुरुः वस्तुतः एक-दूसरे से सर्वथा भिन्न हैं ।

जिस सद्गुरु का महात्म्य वर्णन शास्त्रकारों ने किया है वह वस्तुतः मानवी अन्तःकरण ही है । निरन्तर सद्शिक्षण और ऊर्ध्वगमन का प्रकाश दे सकना इसी केन्द्र तत्व के लिए सम्भव है । बाहर के गुरु शिष्य की वास्तविक मनःस्थिति का बहुत ही स्वल्प परिचय प्राप्त कर सकते हैं, अस्तु उनके परामर्श भी अधूरे ही रहेंगे । फिर कोई बाहरी गुरु हर समय शिष्य के साथ नहीं रह सकता जबकि उसके सामने निरूपण और निराकरण के लिए अगणित समस्याएँ पग-पग पर क्षण-क्षण में प्रस्तुत होती रहती है । इनमें से किस का किस प्रकार समाधान किया जाय ? इसका मार्ग-दर्शन करने के लिए किसी व्यक्ति विशेष पर निर्भर नहीं रहा जा सकता, भले ही वह कितना ही सुयोग्य क्यों न हो । सुयोग्य व्यक्ति अपने गज से सबको नाप सकते हैं और ऐसी सलाह दे सकते हैं जो उन्हीं के लिए फिट बैठतीं । दूसरों की स्थिति में भिन्नता रहने से परामर्श का स्तर भी बदल जाता था—यह अन्तर कौन करे ? इसे केवल अपना अन्तःकरण ही कर सकता है । क्योंकि भीतरी और बाहरी परिस्थितियों की वास्तविक जानकारी जितनी अपने आपको हो सकती है उतनी और किसी को नहीं ।

अपने अन्तःकरण को निरन्तर कुचलते रहने—उसकी पुकार को अनसुनी करते रहने से आत्मा की आवाज मंद पड़ जाती है । पग-पग पर अत्यन्त आवश्यक और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण प्रकाश देते रहने का उसका क्रम शिथिल हो जाता है । आत्मा की अवज्ञा करते रहने वालों को ही दुर्बुद्धिग्रस्त और दुष्कर्म लिप्त पाया जाता है अन्यथा सजीव आत्मा की प्रेरणा सामान्य स्थिति में इतनी प्रखर होती है कि कुमार्ग का अनुसरण कर सकना मनुष्य के लिए सम्भव ही नहीं होता । यह आत्मिक प्रखरता ही वस्तुतः सद्गुरु है इसी का नमन, पूजन और परि-पोषण करना गुरु भक्ति का यथार्थ स्वरूप है ।

गुरु-दीक्षा इस व्रत धारण का नाम है कि "हम अन्तरात्मा की प्रेरणा का अनुसरण करेंगे ।" ऐसा निश्चय करने वाला व्यक्ति मानवोचित चिन्तन और कर्त्तव्य से विरत नहीं हो सकता । जैसे ही अचिन्त्य चिन्तन मनःक्षेत्र में उभरता है वैसे ही प्रतिरोधी देवतत्व उसके दुष्परिणाम के सम्बन्ध में सचेत करता है और भीतर ही भीतर एक अन्तर्द्वन्द्व उभरता है । यदि अन्तः चेतना को कुचल-कुचलकर मूर्च्छित न बनाया गया हो तो वह इतनी प्रखर होती है कि अचिन्त्य चिन्तन के साथ विद्रोह खड़ा कर देती है और उस अवांछनीय विजातीय तत्व के पैर उखाड़कर ही दम लेती है ।

रक्त के श्वेत कण शरीर में रोग विषाणुओं के प्रवेश करते ही उनसे लड़ने के लिए एकत्रित हो जाते हैं और उन विषाणुओं को पूरी तरह खदेड़ देने तक प्रबल संघर्ष करते रहते हैं । रक्त को पहले से ही विषाक्त या दुर्बल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बना लिया हो तो बात दूसरी है अन्यथा श्वेत रक्त कण शरीर को रोगों के आक्रमण से बचाये रहने का अपना उत्तरदायित्व पूरी तरह निभा देते हैं । ठीक इसी प्रकार चेतना के क्षेत्र में अन्तःकरण द्वारा यही उत्तरदायित्व निवाहा जाता है । अनैतिक और निकृष्ट स्तर का कोई विचार उस मस्तिष्क में देर तक अपने पैर नहीं जमा सकता; जिसका संरक्षण आन्तरिक 'सद्गुरु' सतर्कतापूर्वक कर रहा है । सद्विचारों की रक्षा पंक्ति को भेदकर मानवी चेतना पर दुर्विचारों का आधिपत्य जम सकना तभी सम्भव होता है जब अन्तरात्मा मूर्छित या मृतक स्थिति में पहुँचा दी गई हो ।

कुकर्म करते समय—शरीरगत दिव्य चेतना का विद्रोह देखते ही बनता है । पैर काँपते हैं, दिल धड़कता है, गला सूखता है, सिर चकराता है और भी न जाने क्या-क्या होता है । ध्यानपूर्वक देखने से कुकर्म के लिए कदम बढ़ाते समय की भीतरी स्थिति ऐसी होती है, मानो किसी निरीह पशु को वध करने के लिए ले जाते समय कातर स्थिति में देखा जा रहा हो । सामान्य व्यक्तियों में से अधिकांश की आन्तरिक स्थिति ऐसी हो जाती है कि वे उस अवांछनीय कार्य को पूरा कर ही नहीं पाते, विचार अधूरा छोड़कर अथवा असफल होकर वापिस लौट आते हैं । वस्तुतः यह पराजय—यह असफलता उस अर्न्तद्वन्द्व से ही उत्पन्न होती है जो कुकृत्य न करने के पक्ष में प्रबल प्रतिपादन कर रहा था । सद्गुरु डूबते को उबारते हैं वाली उक्ति ऐसे ही अवसरों पर सर्वथा लागू होती है ।

दिव्य विभूतियाँ श्रद्धालु को ही मिलती हैं

आत्मिक क्षेत्र में सबसे बड़ी शक्ति 'श्रद्धा' है । श्रद्धा, अन्धविश्वास, मूढ़ मान्यता या कल्पना लोक की उड़ान या भावुकता नहीं, वरन् एक प्रबल तत्व है । भौतिक जगत में विद्युत शक्ति की महत्ता एवं उपयोगिता से अगणित प्रकार के कार्य सम्पन्न होते देखे जाते हैं । यदि बिजली न हो तो वैज्ञानिक उपलब्धियों में से तीन चौथाई निरर्थक हो जायेंगी । ठीक इसी प्रकार आत्मिक जगत में श्रद्धा की बिजली की महत्ता है । मनोयोग और भावनाओं के सम्मिश्रण से जो सुदृढ़ निश्चय एवं विश्वास विनिर्मित होता है उसे भौतिक बिजली से कम नहीं वरन् अधिक ही शक्तिशाली समझा जाना चाहिए । आत्म निर्माण का विशालकाय भवन उच्च आदर्शों के प्रति अटूट निष्ठा की चट्टान पर ही खड़ा किया जाता है । जिसे उत्कृष्ट—दिव्य जीवन की गरिमा पर परिपूर्ण श्रद्धा न होगी वह छुट-पुट प्रयत्न करते रहने पर भी आत्मिक प्रगति के मार्ग पर दूर तक देर तक चल न सकेगा । आये दिन तनिक-तनिक सी बात पर उसके पैर लड़खड़ाते रहेंगे । किन्तु जिसने यज्ञीय जीवन जीने का महत्ता अन्तरंग के गहन स्तर से स्वीकार कर ली उसे अभाव और कठिनाइयों की तनिक-सी असुविधा आत्म सन्तोष की महान उपलब्धि के सामने कुछ भी कठिन दिखाई न पड़ेगी ।

श्रद्धा को सदुद्देश्य के लिए नियोजित कर देने का नाम ही आत्मशक्ति है । आत्मबल की प्रबल प्रतिक्रिया उन सिद्धियों के रूप में तत्काल देखी जा सकती है जो न केवल अपने को ही महान बनाती है वरन् सम्पर्क में आने वालों को भी इतना लाभ पहुँचाती है जितना आर्थिक और शारीरिक प्रचुर सहयोग देने पर भी सम्भव नहीं हो सकता ।

उपासना, साधना, तपस्या, देव अनुग्रह, वरदान, स्वर्ग मुक्ति आदि आत्मिक उत्पादनों के पीछे जो तथ्य काम करता है उसे श्रद्धा का परिपाक ही समझा जाना चाहिए । यदि श्रद्धा न हो तो यह समस्त क्रिया-कलाप मात्र कर्मकाण्ड बनकर ही रह जायेंगे और उनका परिणाम नगण्य जितना ही दिखाई देगा ।

जिन्हें मन की सत्ता का ज्ञान है उन्हें यह भी विदित है कि चेतना जगत में जिस प्राण शक्ति की अजस्र महिमा गाई जाती है वह अन्तरिक्ष में संव्याप्त विद्युत, चुम्बक, ईथर, विकरण आदि सामान्य भौतिक संव्याप्ति की संकल्प शक्ति के आधार पर विनिर्मित एक अद्भुत ऊर्जा ही है । प्राण और कुछ नहीं भौतिक प्रकृति और चेतनात्मक संकल्प शक्ति का समन्वय ही है । प्राणधारियों को जीवित रखने उनकी मानसिक हलचलों को प्रखर बनाये रहने का कार्य 'प्राण शक्ति' द्वारा ही सम्पन्न होता है । कहना न होगा कि जो जितना श्रद्धान्वित है वह उतना ही प्राणवान होगा । बौद्धिक तीक्ष्णता से मस्तिष्कीय लाभ मिल सकते हैं किन्तु प्रतिभा, व्यक्तित्व, आत्म बल, जीवन जैसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विशेषताएँ श्रद्धासिक्त प्राप्त शक्ति ही उत्पन्न करती है । महामानव, देवदूत, ऋषिकल्प एवं नर नारायण के रूप में सामान्य व्यक्ति को परिणत कर डालने की क्षमता केवल श्रद्धासिक्त प्राण शक्ति में ही निहित रहती है ।

श्रद्धा का अर्थ है—आत्मानुगमन । शरीर में इन्द्रिय सुखोपभोग की वासना, लिप्सा भरी रहती है । मन में तृष्णा और अहंता की लालसाएँ—कामनाएँ उफनती रहती हैं । इन्हीं की माँग पूरी करने के लिए प्रायः हमारे सारे क्रिया-कलाप होते रहते हैं । जीवनक्रम इसी परिधि में घूमता और खपता है । औसत आदमी की गाड़ी इसी ढर्रे पर लुढ़कती है । ऐसे कम ही लोग हैं जो अन्तरणः से भाव संस्थान की स्थिति और शक्ति से परिचित हैं । हमारे अन्तरंग में परमात्मा की सत्ता प्रतिष्ठित है जो निरन्तर उन उच्च आदर्शों को अपनाने के लिए अनुरोध करती रहती है जिसके लिए बहुमूल्य मानव जीवन उपलब्ध हुआ है । आत्मा की पुकार-आत्मा की प्रेरणा, आत्मा को दिशा का यदि अनुगमन किया जाय तो उस आनन्द उल्लास में अन्तः भूमिका इतनी अभिरुचि एवं तत्परता के साथ संलग्न हो जाती है कि वासना और तृष्णा उपहासास्पद बाल क्रीड़ा मात्र प्रतीत होने लगती है । तब मन के चंचल—चित्त के उद्विग्न होने का कोई कारण शेष नहीं रह जाता ।

आत्मबोध, आत्मानुगमन, आत्मोत्कर्ष की सम्मिलित मनःस्थिति का नाम ही श्रद्धा है । यों किसी मन्त्र, आदर्श व्यक्ति, धर्म आदि के प्रति निष्ठा को भी श्रद्धा कहते हैं पर उसका उच्च स्तर आत्मानुगमन से ही जुड़ा रहता है । जो इस स्तर की प्रेरणा उत्पन्न कर सके, भावना उमंगा सके वही सच्ची श्रद्धा है । कहना न होगा कि आत्मशक्ति की सुसम्पन्नता केवल श्रद्धालु लोगों को ही उपलब्ध हो सकती है ।

पशु-पक्षियों में कितनी विशेषताएँ ऐसी पायी जाती हैं जो मनुष्यों में नहीं होतीं । इन विशेषताओं का कारण यह है कि वे अचेतन का पूर्णतया अनुगमन करते हैं । प्रकृति की प्रेरणाओं का उल्लंघन नहीं करते । तर्क और विचार को वे मर्यादित रखते हैं । अवांछनीयता चिन्तन से उत्पन्न बौद्धिक विकृतियों के वे शिकार नहीं होते । जीवन की नीति निर्धारित करने में वे अन्तरात्मा का निर्देश स्वीकार करते हैं । मनुष्य की अपनी विशेषताएँ हैं और मस्तिष्कीय क्षमताएँ असाधारण रूप से मिलतीं हैं पर दुर्भाग्य यही है कि वह उसे सही दिशा में प्रयुक्त न करके उद्धत चिन्तन में उलझता है । फलस्वरूप बौद्धिक प्रखरता के लाभ से वंचित रहकर उलटा शोक सन्ताप में बंधा, जकड़ा रहता है ।

वैराग्य का अर्थ लोगों ने घर-बार छोड़कर भिक्षा माँगना—सफेद कपड़े छोड़कर लाल पीले पहन लेना मान लिया है, पर वस्तुतः वह मनःस्थित है जिसमें कर्त्तव्य कर्म पूरे उत्साह से करते हुए भी मन असंग, राग, द्वेष रहित बना रहता है । अनासक्त कर्मयोग की गीता में सुविस्तृत चर्चा है । स्थिति प्रज्ञ और निर्विकल्प स्थिति का वर्णन है । इसी को वैराग्य कह सकते हैं । खिलाड़ी की भावना से जीवन का खेल खेलना और नाटक में अपने जिम्मे का अभिनय पूरे मनोयोग से सम्पन्न करना यही कर्मयोग है । हानि लाभ और सफलता असफलता को बहुत महत्त्व न देकर केवल अपनी उत्कृष्ट शैली पर गर्व और सन्तोष अनुभव करना, यही है अनासक्त मनःस्थिति । शरीर को आहार-बिहार और मन को चिन्तन के लिए उत्कृष्ट सामग्री प्रदान करना यही है सन्तुलित जीवन क्रम की रीति-नीति । इसे जहाँ अपनाया जायेगा वहीं आन्तरिक स्थिरता की वह पृष्ठभूमि बन जायेगी जिसमें ध्यान योग, लययोग और ब्रह्म सम्बन्ध की साधनाएँ सफल हो सकें ।

बाहरी भाग-दौड़ में जो श्रम पड़ता है उससे अवयवों को अधिक गतिशील होने का अवसर मिलता है । व्यायाम करने वाले तथा श्रमिक लोग भारी श्रम करने पर भी स्वस्थ बने रहते हैं इसका कारण यह है कि वह श्रमपरक दबाव बाहरी रहता है, विश्राम मिलते ही उस दबाव की पूर्ति हो जाती है । पर यदि अवयवों में आन्तरिक दबाव रहे तो उसका बहुत दबाव पड़ेगा । पेट, सिर, दाँत आदि किसी अवयव में यदि दर्द हो रहा हो तो उस भीतरी उत्तेजना से शरीर के सारे ढाँचे पर बुरा असर पड़ेगा और बड़ी मात्रा में शक्ति क्षीण होगी । ठीक इसी प्रकार इन्द्रियभोगों की ललक से शारीरिक तनाव अधिक बढ़ता है । काम सेवन की क्रिया में जितनी शक्ति क्षरित होती है उससे कहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक काम चिन्तन में नष्ट हो जाती है । इसीलिए मानसिक व्यभिचार शरीर भोग की अपेक्षा कहीं अधिक स्वास्थ्य विघातक सिद्ध होता है । यही बात अन्य इन्द्रिय भोगों की ललक, लिप्सा के सम्बन्ध में है । संयम की महत्ता जहाँ साधारण स्वास्थ्य-नियमों के अनुरूप है वहाँ उसका एक लाभ यह भी है कि वासनात्मक उत्तेजना से होने वाली क्षति से बचा जा सकता है और उस बचाव के स्वास्थ्य सम्बर्धन में भारी सहायता मिल सकती है । वासना शान्त रहे तो शरीर की अन्तरंग स्थिति समुचित विश्राम लाभ करती रहेगी और जीवनी शक्ति को अनावश्यक क्षति न पहुँचेगी । ध्यान योग के लिए तो ऐसी शरीरगत अन्तः शान्ति की नितान्त आवश्यकता पड़ती है ।

भौतिक जीवन की अनेक समस्याओं को हल करने के लिए तर्क, आशंका, अविश्वास, सन्देह, काट-छाँट, प्रमाण परिचय, तथ्य-अतथ्य आदि अनेक कारणों की विवेचना करनी पड़ती है और तब भी मन शंका शंकित रहता है तथा पूर्व निर्णय के सही सुनिश्चित होने में सन्देह बना रहता है । यह मनःस्थिति लाभ हानि एवं उचित अनुचित के बीच के उपयोगी निष्कर्ष पर पहुँचने के लिए आवश्यक है पर यह स्थिति आध्यात्मिक क्षेत्र में भी बनी रहे तो अनिश्चित विश्वास के कारण वह शक्ति उत्पन्न न हो सकेगी जिसके आधार पर कि आत्मबल बढ़ाने उच्च आदर्श अपनाने की और श्रद्धान्वितपृष्ठभूमि बनाई जाती है । कहना न होगा कि यदि श्रद्धा विश्वास का ईंट चूना न जुटाया जा सका तो आत्मिक प्रगति का भवन खड़ा ही न हो सकेगा ।

सामान्य लोक व्यवहार में भी दृढ़ता, श्रद्धा विश्वास के आधार पर ही आती है । आत्म-विश्वास के बल पर ही कोई बड़े कदम उठा सकना सम्भव होता है । शौर्य और साहस में आत्म-विश्वास ही काम करता है । परिवार में एक-दूसरे का स्वजन, घनिष्ठ एवं आत्मीय होने की मान्यता ही उन्हें पारस्परिक स्नेह सहयोग के सुदृढ़ सूत्र में बाँधे रहती है । यह भाव श्रद्धा ही है जिसके आधार पर परिवारों में स्नेह दुलार का अमृत बरसता है और एक-दूसरे के लिए बड़े-चढ़े त्याग करने को तत्पर रहता है । श्रद्धा की कड़ी टूट जाय तो फिर परिवारों का विघटन सुनिश्चित है वे तनिक सी बातों पर अन्तःकलह के अखाड़े बनेंगे और देखते-देखते बिखर कर अस्त-व्यस्त हो जायेंगे ।

श्रद्धा और विश्वास के बिना भौतिक जीवन में भी गति नहीं, फिर आध्यात्म क्षेत्र का तो उसे प्राण ही कहा गया है । आदर्शवादिता में प्रत्यक्षः हानि ही रहती है, पर उच्चस्तरीय मान्यताओं में श्रद्धा रखने के कारण ही मनुष्य त्याग-बलिदान का कष्ट सहन करने के लिए खुशी-खुशी तैयार होता है । ईश्वर और आत्मा का अस्तित्व तक प्रयोगशालाओं की कसौटी पर खरा सिद्ध नहीं होता । वह निश्चित रूप से श्रद्धा पर ही अविलम्बित है । मनुष्य का व्यक्तित्व जिसमें संस्कारों का—आदतों का गहरा पुट रहता है वस्तुतः श्रद्धा की परिपक्वता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । भिन्न-भिन्न व्यक्तियों में भिन्न-भिन्न प्रकार की आदतें और मान्यताएँ अत्यन्त गहराई तक घुसी रहती हैं और वे उन्हें छोड़ने को सहज ही तैयार नहीं होते । यह संस्कार और कुछ नहीं चिरकाल तक सोचे गए—माने गए और व्यवहार में लाये गए अभ्यासों का ही परिपाक है । तथ्यों की कसौटी पर इन संस्कारों में से अधिकांश बेतुके और अन्ध-विश्वास स्तर के होते हैं, पर मनुष्य उन्हें इतनी मजबूती से पकड़े होता है कि उसके लिए वे 'सत्य' बन जाते हैं और सत्य और तथ्य कहकर वह उन पूर्वाग्रहों के प्रति अपनी कट्टरता का परिचय देता है उनके लिए लड़ने-मरने को तैयार हो जाता है । यह मान्यतापरक कट्टरता और कुछ नहीं मात्र श्रद्धा द्वारा रची गई खिलवाड़ मात्र है ।

स्वभाव में सम्मिलित हुई गतिविधियाँ आदतें बन जाती हैं और वे जब नशेबाजी स्तर की बन कर अचेतन की गहराई में घुस जाती हैं तो तर्क के आधार पर हानिकारक सिद्ध कर देने पर भी वे छुड़ाये नहीं छूटतीं । छोड़ना चाहने वाला भी उन्हें छोड़ नहीं पाता । इसका मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यह है कि श्रद्धा की शक्ति तर्क से भी असंख्य गुनी अधिक है । यों सारा लोक-व्यवहार तर्क के आधार पर चलता है और बुद्धि बल के सहारे ही विभिन्न प्रयोजन पूरे होते हैं, पर जहाँ सिद्धान्तों का और स्वार्थों का प्रश्न आता है वहाँ पूर्व मान्यताएँ ही मस्तिष्क तन्त्र को पूरी तरह जकड़ कर बैठ जाती है और तर्क के सारे तीर एक ही तरकस में से निकल कर एक ही दिशा में उड़ते दिखाई पड़ते हैं । पक्षपाती समर्थन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में बुद्धि कौशल कैसे-कैसे विचित्र तर्कों का प्रहार करता है इसे देख कर कई बार तो निष्पक्ष विचारक को आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है ।

यहाँ श्रद्धा की शक्ति का संक्षिप्त-सा आभास दिया गया है कि उसे मानव जीवन की सर्वोपरि सामर्थ्य के रूप में समझ सकने में सुविधा हो । देव लोक यही है । देवता इसी क्षेत्र में जन्मते बढ़ते, परिपुष्ट होते और वरदान दे सकने के लिए सक्षम बनते हैं । उनका उदय एवं अस्त भी इसी श्रद्धा के अनन्त अन्तरिक्ष में होता रहता है । मन्त्र, देवता, गुरु, उपासना, साधन सिद्धि आदि का सारा आधार श्रद्धा की आधारशिला पर खड़ा है । सच तो यह है कि साधना का विशालकाय कलेवर इसलिए खड़ा किया गया है कि उन लौह शृंखलाओं में जकड़कर श्रद्धा विश्वास रूपी महादैत्य को उपयोगी प्रयोजन उत्पन्न कर सकने के लिए प्रशिक्षित किया जा सके । श्रद्धा से व्यक्तित्व का निर्धारण होता है—श्रद्धा के अनेक क्रियाकलापों का सूत्र संचालन और उन्हें सफलता के उच्चस्तर तक पहुँचा सकना सम्भव होता है । आत्मा का सबसे विश्वस्त और सबसे घनिष्ठ सचिव श्रद्धा ही है । उसी के सहारे आत्मिक प्रगति से लेकर सिद्धि चमत्कार के वरदान पाने और आत्म साक्षात्कार से लेकर ईश्वर दर्शन तक के समस्त दिव्य उपहार प्राप्त होते हैं ।

श्रद्धा की स्थापना और परिपुष्टि का चिरस्थायी और सर्वमान्य आधार यह है कि जिस तथ्य पर विश्वास जमाया जाना आवश्यक है, उसी यथार्थता और वैज्ञानिकता को सघन तथ्यों और तर्कों के आधार पर समझ सकने का अवसर दिया जाय । बुद्धि का सर्वतोमुखी समाधान हो सके तो श्रद्धा की स्थिरता सुनिश्चित मानी जा सकती है और उसके अभीष्ट परिणामों की अधिकाधिक अपेक्षा रखी जा सकती है । जिस-तिस से सुनकर जल्दी-पल्दी कुछ सुन समझकर यदि कोई श्रद्धा बनेगी तो उसकी जड़ें उथली रहने के कारण तनिक से आघात में उखड़ जाने की आशंका बनी रहेगी । प्रायः होता भी ऐसा ही रहता है । अमुक व्यक्ति से कहने से भावावेश उमड़ा और तत्काल वह साधना आरम्भ कर दी । कुछ ही समय बाद किसी दूसरे ने उस विधान के दोष बता दिए और किसी नये प्रयोग के माहात्म्य सुना दिए बस इतने भर से मन शंकाशंकित हो गया और पिछला प्रयोग छोड़कर नया मार्ग अपना लिया गया । इस परिवर्तन के बीच यह नई आशंका बनी रहती है कि पिछली साधना जिस प्रकार छोड़नी पड़ी थी उसी प्रकार यह भी न छोड़नी पड़े और उसमें भी कोई दोष वैसा ही न घुसा हो जैसा कि पहली वाली में निकल पड़ा था । कभी कोई चर्चा इस नई साधना के विपक्ष और किसी अन्य के पक्ष में सुनाई पड़ती है तो उसे भी छोड़ने न छोड़ने का असमंजस खड़ा हो जाता है । संदिग्ध, शंका-शंकित मन लेकर सांसारिक प्रयोजन तक में कोई कहने लायक सफलता नहीं मिल सकती फिर आध्यात्म क्षेत्र तो पूरी तरह श्रद्धा की शक्ति पर ही आधारित और अवलम्बित है । यदि मूल तथ्य का अभाव रहा तो फिर ज्यों-त्यों करके कर्म-काण्डों की लकीर पीटते रहने से बात बनेगी नहीं । तब असफलताओं का कारण विधि-विधानों की हेरा-फेरी में ढूँढ़ा जाने लगेगा और यह खोज की जाने लगेगी कि किसी क्रिया कृत्य में कोई अन्तर तो नहीं रह गया जिससे असफलता मिली या उलटा परिणाम निकला ।

वस्तुतः विधि-विधानों का महत्त्व साधना विज्ञान में एक चौथाई और श्रद्धा विश्वास का तीन चौथाई है । सघन श्रद्धा के रहते अटपटे विधि-विधान भी चमत्कारी परिणाम उपस्थित कर सकते हैं, जब अविश्वासी संदिग्ध मनःस्थिति में पंडिताऊ ढंग से किए गए परिपूर्ण कर्मकाण्ड भी निष्प्राण होकर रह जाते हैं और उनका परिणाम निराशाजनक ही रहता है । अस्तु साधना क्षेत्र में प्रवेश करने वाले प्रत्येक साधक में श्रद्धा तत्व की परिपक्वता का आधार खड़ा करना आवश्यक समझा जाना चाहिए ।

आत्म विज्ञानी सदा से श्रद्धा की महत्ता प्रतिपादित करते रहे हैं । श्रद्धा को साधना का प्राण बताते रहे हैं । देव सत्ता के अनुग्रह में—प्रत्यक्षीकरण में—श्रद्धा तत्व को ही आधार कहा जाता रहा है । यह प्रतिपादन अक्षरशः सत्य है । कष्ट साध्य कर्मकाण्डों में उलझे रहने पर भी श्रद्धालु व्यक्ति प्रायः खाली हाथ ही रहते हैं । दैवी शक्ति तो अन्तःकरण में अवतरित होती है और वहीं से सिद्धि सफलताओं के रूप में बहिरंग जीवन में प्रस्फुटित होती है । यदि अन्तःक्षेत्र अशान्त, उद्विग्न, विक्षुब्ध होगा तो फिर वह अवतरण सम्भव ही कैसे हो सकेगा । स्वच्छ हवाई पट्टी पर ही तो वायुयान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उतरते हैं, खाई-खड्डों में उनका उतरना कैसे हो ? कामना ग्रस्त—मनोविकारों से अस्त-व्यस्त मनोभूमि ऐसी हो ही नहीं सकती, जिस पर उच्चस्तरीय विभूतियाँ बरसें और दिव्य सम्पदाओं से सम्पन्न हो सकें । इसके लिए उपयुक्त मानसिक स्तर तो उन्हीं का होगा जिन्होंने भौतिक आकर्षण उद्वेगों से, दुर्भावनाओं और दुष्प्रवृत्तियों से अपने चिन्तन को बचा सकने में सफलता प्राप्त कर ली होगी । श्रद्धा इसी मनःस्थिति का नाम है । उसी को समस्त आत्मिक सम्पदाओं की जननी निर्झरिणी कहा गया है । श्रद्धालु ही आत्मिकता के लक्ष्य को पूरा करते देखे जाते हैं ।

साधना क्षेत्र में प्रवेश करके आत्मिक प्रगति और उसके आधार पर मिलने वाली उपलब्धियों को श्रद्धा तत्व की गरिमा समझनी चाहिए और आप्त वचनों के सहारे तर्क तथ्यों का आश्रय लेकर अपने आदर्शों और साधनों पर विश्वास भरी निष्ठा परिपक्व करनी चाहिए । साधना की सिद्धि श्रद्धा की प्रगाढ़ स्थिति में ही सम्भव हो सकती है यह मान कर चलने वालों को आत्मोत्कर्ष के क्षेत्र में असफल नहीं रहना पड़ता ।

सुपात्र पर ही दैवी अनुदान बरसते हैं

एकबार रामकृष्ण परमहंस से एक शिष्य ने पूछा—"गुरुदेव ! क्या कारण है कि मंत्र, एक उपासना प्रक्रिया को अपनाते हुए भी एक चमत्कारी सामर्थ्य प्राप्त कर लेता है, ऋद्धियों, सिद्धियों का स्वामी बन जाता है जबकि दूसरे को कोई विशेष लाभ नहीं मिल पाता ?" परमहंस ने उत्तर में एक कथा सुनायी जो इस प्रकार थी—"किसी राज्य के मन्त्री ने अपने जप, तप से विशेष आध्यात्मिक शक्ति अर्जित करली । उसकी चमत्कारी विशेषताओं की सूचना राजा को मिली । राजा ने मन्त्री को बुलाकर रहस्य पूछा तो उसने बताया, यह सब गायत्री मन्त्र की उपासना का चमत्कार है । इसकी उपासना, साधना द्वारा सब कुछ प्राप्त कर सकना सम्भव है । राजा ने भी मन्त्र और सम्बन्धित विधि-विधान पूछा और उपासना करने लगे । एक वर्ष तक वे जप करते रहे । पर उन्हें वह उपलब्धियाँ नहीं प्राप्त हो सकीं जो मन्त्री को हुई थीं । निराश होकर एक दिन मन्त्री को बुलाकर कारण पूछा । मन्त्री ने उत्तर देने के बदले राज्य के एक किशोर लड़के को बुलाया और कहा—बेटे ! राजा के गाल पर एक चपत लगाओ । अपनी आज्ञा को मन्त्री ने बार-बार दुहराया, पर बालक अपने स्थान से टस से मस नहीं हुआ । मन्त्री की धृष्टता एवं उद्दण्डता को देखकर राजा का चेहरा तमतमा उठा । उसने लड़के को कड़े स्वर में निर्देश दिया—"इस मन्त्री को दो चपत लगाओ" लड़के ने तुरन्त दो चपत जड़ दिए । राजा का चेहरा अभी भी क्रोध के आवेश में तमतमा रहा था ।

मन्त्री ने नम्रता से उत्तर दिया, "राजन ! धृष्टता क्षमा करें । यह सब आपके समाधान के लिए किया गया था । आपके प्रश्न का यही उत्तर है । वाणी से कही बात अधिकारी पात्र की ही मानी जाती है । मन्त्र जप से चमत्कार पात्रता विकसित होने पर ही आता है ।"

इस कथा को सुनाने के बाद रामकृष्ण परमहंस ने कहा—"उपासना का—मन्त्र जप का—चमत्कारी प्रतिफल उन्हें ही मिल पाता है जिन्होंने अपने गुण, कर्म, स्वभाव को परमात्मा के अनुरूप ढाल लिया है ।"

सन्त ज्ञानेश्वर में जहाँ ज्ञान, विवेक, सदायशता एवं सहिष्णुता की लौकिक विशेषताएँ दिखायी पड़ती थीं वहीं अलौकिक स्तर की ऋद्धि-सिद्धियों एवं चमत्कारों की झाँकी भी मिलती थी । एक महिला उनकी इन उपलब्धियों से विशेष प्रभावित होकर साधना करने लगी । कुछ समय तक उपासना करने के बाद जब उसे कोई विशेष उपलब्धि नहीं हुई तो वह सन्त के पास जाकर बोली देव ! भगवान भी बड़ा पक्षपाती है । वह किसी-किसी को तो ऋद्धि-सिद्धियों का स्वामी बना देता है और किसी को कुछ भी नहीं देता है । सन्त ज्ञानेश्वर मुस्कराये और बोले—"बहिन । ऐसा नहीं है । भगवान विशिष्ट विभूतियाँ सत्पात्रों को देता है । पात्रता विकसित करके हर कोई उन्हें प्राप्त कर सकता है ।" तो इसमें भगवान की क्या विशेषता रही ? उसे तो सबको समान अनुदान देना चाहिए, महिला ने प्रति-प्रश्न किया । सन्त उस समय तो चुप रहे, पर दूसरे ही दिन उन्होंने प्रातःकाल मुहल्ले के एक मूर्ख व्यक्ति को उस महिला के पास यह कहकर भेजा कि उससे सोने का आभूषण माँग लाओ ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूर्ख ने जाकर आभूषण माँगे । पर उस महिला ने झिड़ककर उसे बिना आभूषण दिए ही भगा दिया । थोड़ी देर बाद सन्त ज्ञानेश्वर स्वयं उस स्त्री के पास पहुँचे और बोले 'आप एक दिन के लिए अपने आभूषण दे दें । आवश्यक काम करके लौटा देंगे ।' महिला ने बिना कोई प्रश्न पूछे सन्दूक खोला और सहर्ष अपने कीमती आभूषण सन्त को सौंप दिए । आभूषण हाथ में लिए ही सन्त ने पूछा 'अभी-अभी जो दूसरा व्यक्ति आया था उसे आभूषण क्यों नहीं दिए ।' स्त्री बोली 'उस मूर्ख को आभूषण कैसे दे दें ?' सन्त ज्ञानेश्वर बोले 'बहिन ! जब आप सामान्य से आभूषण बिना सोचे विचारे कुपात्र को नहीं दे सकती हैं तो फिर परमात्मा अपने दिव्य अनुदानों को कुपात्रों को कैसे दे सकता है । वह तो बारम्बार इस बात की परीक्षा करता है कि जिसको अनुदान दिया जा रहा है उसमें पात्रता है अथवा नहीं ?'

पात्रता के अभाव में सांसारिक जीवन में भी कहाँ किसी को कुछ विशेष उपलब्ध हो पाता है ? अपना सगा होते हुए भी एक पिता मूर्ख गैर जिम्मेदार पुत्र को अपनी विपुल सम्पत्ति नहीं सौंपता । विशिष्ट सरकारी सेवाओं में चयन योग्यता की कसौटी पर खरे उतरने वालों का ही होता है । कोई भी व्यक्ति निर्धारित कसौटियों पर खरा उतरकर विशिष्ट स्तर की सफलता अर्जित कर सकता है । मात्र माँगते रहने से कुछ नहीं मिलता, हर उपलब्धि के लिए मूल्य चुकाना पड़ता है । बाजार में विभिन्न तरह की वस्तुएँ दुकानों में सजी होती हैं, पर उन्हें कोई मुफ्त में कहाँ प्राप्त कर पाता है ? अनुनयविनय करने वाले तो भीख जैसी नगण्य उपलब्धि ही करतलगत कर पाते हैं । पात्रता के आधार पर शिक्षा, नौकरी, व्यवसाय आदि क्षेत्रों में भी विभिन्न स्तर की भौतिक उपलब्धियाँ हस्तगत करते सर्वत्र देखा जा सकता है ।

आध्यात्म क्षेत्र में भी यही सिद्धान्त लागू होता है । भौतिक क्षेत्र की तुलना में आध्यात्म के प्रतिफल कई गुने अधिक महत्त्वपूर्ण सामर्थ्यवान और चमत्कारी हैं । किन्हीं-किन्हीं महापुरुषों में उन चमत्कारी विशेषताओं को देख एवं सुनकर हर व्यक्ति के मुँह में पानी भर आता है तथा उन्हें प्राप्त करने के लिए मन ललचाता है, पर अभीष्ट स्तर का आध्यात्मिक पुरुषार्थ न कर पाने के कारण उस ललक की आपूर्ति नहीं हो पाती । पात्रता के अभाव में अधिकांश को दिव्य आध्यात्मिक विभूतियों से वंचित रह जाना पड़ता है जबकि पात्रता विकसित हो जाने पर बिना माँगे ही वे साधक पर बरसती हैं । उन्हें किसी प्रकार का अनुनय-विनय नहीं करना पड़ता है । दैवी शक्तियाँ परीक्षा तो लेती हैं, पर पात्रता की कसौटी पर खरा सिद्ध होने वालों को मुक्तहस्त से अनुदान भी देती हैं । मिलता उन्हें ही है जो लौकिक कामनाओं, ऐषणाओं से मुक्त हैं, निस्पृह और उदार हैं । जिनका हृदय दया-करुणा से अनुप्राणित है । मातृवत् परदारेषु, आत्मबत् सर्वभूतेषु, की आस्था को जिन्होंने साकार कर लिया है । ऐसों पर ऋद्धि-सिद्धियों की वर्षा अपने आप देव शक्तियाँ करती हैं ।

यह सच है कि आध्यात्म का—साधना का चरम लक्ष्य सिद्धियाँ—चमत्कारों की प्राप्ति नहीं हैं, पर जिस प्रकार अध्यवसाय में लगे छात्र को डिग्री की उपलब्धि के साथ-साथ बुद्धि की प्रखरता का अतिरिक्त अनुदान सहज ही मिलता रहता है, उसी तरह आत्मोत्कर्ष की प्रचण्ड साधना में लगे साधकों को उन विभूतियों का भी अतिरिक्त अनुदान मिलता रहता है जिसे लोक-व्यवहार की भाषा में सिद्धि एवं चमत्कार के रूप में जाना जाता है । पर चमत्कारी होते हुए भी ये प्रकाश की छाया जैसी ही हैं । प्रकाश की ओर चलने पर छाया पीछे-पीछे अनुगमन करती है । अन्धकार की दिशा में बढ़ने पर छाया आगे आ जाती है, उसे पकड़ने का प्रयत्न किया तो भी पकड़ में नहीं आती । इसी प्रकार अर्थात् दिव्यता की ओर—श्रेष्ठता की ओर परमात्मा पथ की ओर बढ़ने पर छाया अर्थात् ऋद्धि-सिद्धियाँ साधक के पीछे-पीछे चलने लगती हैं । इसके विपरीत उन्हीं की प्राप्ति को लक्ष्य बनाकर चलने पर तो आत्म-विकास की साधना से वंचित बने रहने से वे पकड़ में नहीं आतीं ।

दिव्यता की ओर बढ़ने का अर्थ है—अपने गुम, कर्म, स्वभाव को इतना परिष्कृत, परिमार्जित कर लेना कि आचरण में देवत्व प्रकट होने लगे । इच्छाएँ, आकांक्षाएँ देवस्तर की बन जायँ । संकीर्णता, स्वार्थपरता हेय और तुच्छ लगने लगे । समष्टि के कल्याण की इच्छा एवं उमंग उठे और उसी में अपना भी हित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिखायी दे । दूसरों का कष्ट, दुःख अपना ही जान पड़े और उनके निवारण के लिए मन मचलने लगे । सभी मनुष्य समस्त प्राणी अपनी ही सत्ता के अभिन्न अंग लगने लगें । आत्म विकास की इस स्थिति पर पहुँचे हुए, साधक की, ऋद्धियाँ-सिद्धियाँ सहचरी बन जाती हैं । पर इन अलौकिक विभूतियों को प्राप्त करने के बाद वे उनका प्रयोग कभी भी अपने लिए अथवा संकीर्ण स्वार्थों के लिए नहीं करते । संसार के कल्याण के लिए ही वे उन शक्तियों का सदुपयोग करते हैं ।

स्वामी रामकृष्ण परमहंस को कितनी ही चमत्कारी विभूतियाँ प्राप्त थीं । पर उन्होंने कभी भी उनका प्रयोग व्यक्तिगत कार्यों के लिए नहीं किया । प्रख्यात है दूसरों के दुःख-दर्द मिटाने में कितनी ही बार उन्होंने अपनी शक्ति का प्रयोग किया । असाध्य रोगों से पीड़ित रोगियों को भी कई बार चमत्कारी लाभ मिला । वे स्वयं गले के कैंसर से परेशान थे । मर्मान्तिक पीड़ा गले में होती रहती थी । एकबार उनके पास शशिधर चूड़ामणि नामक एक व्यक्ति पहुँचे । उन्होंने कहा—"आप समर्थ हैं, चाहें तो अपने संकल्पशक्ति का प्रयोग करके अपने रोग को अच्छा कर सकते हैं ।" परमहंस बोले—"ईश्वरीय कार्यों के लिए मिली शक्ति का उपयोग अपने इस नश्वर शरीर के लिए करूँ इससे बढ़कर दुःख की बात दूसरी नहीं होगी । यह तृष्टा के विधान का उल्लंघन है ।"

जगत गुरु आद्य शंकराचार्य यौगिक सिद्धियों—विभूतियों से परिपूर्ण थे । दीन-दुःखियों को उनकी अलौकिक विशेषताओं का लाभ भी मिलता रहता था । वे स्वयं भगन्दर रोग से ग्रसित थे । धर्म प्रचार के लिए उन्हें अनवरत यात्रा करनी पड़ती थी । तब परिवहन और यात्रा की आज जैसी सुविधा भी नहीं थी । पैदल ही चलकर लम्बी दूरियाँ तय करनी पड़ती थीं । ऐसे में भगन्दर की पीड़ा मृत्यु जैसी कष्ट देती थी । स्वयं कष्ट सहते रहे, पर उन्होंने कभी उस के निवारण के लिए प्राप्त दैवी शक्तियों का उपयोग नहीं किया ।

अपने स्वयं के प्रति कठोर होते हुए भी महापुरुष समाज, देश एवं मानव मात्र के हित के लिए इन सम्पदाओं का उदारतापूर्वक उपयोग करते देखे जाते हैं । उन दिनों स्वामी विवेकानन्द इंग्लैण्ड में थे । जमशेद जी राय भी उद्योग की तकनीकी जानकारियाँ प्राप्त करने के लिए इंग्लैण्ड के विशेषज्ञों से परामर्श लेने गए थे । उन्हें भारत में एक ऐसे स्थान की खोज थी जहाँ कि स्टील उद्योग के लिए प्रचुर परिमाण में कोयला एवं पानी की मात्रा उपलब्ध हो । लक्ष्य था, देश की समृद्धि बनाना । कार्य अत्यन्त कठिन था । भूगर्भ में दबी सम्पदा का परिचय दे सकना किसी अतीन्द्रिय सामर्थ्य सम्पन्न व्यक्ति द्वारा ही सम्भव था । इंग्लैण्ड में ही उन्हें सूचना मिली कि स्वामी विवेकानन्द उद्बोधन के लिए आये हैं । उनकी ख्याति टाटा ने पहले ही सुन रखी थी । अविलम्ब स्वामी जी के पास पहुँचे तथा सहज एवं निर्मल भाव से अपना मन्तव्य स्पष्ट किया । स्वामी जी की पैनी दृष्टि ने टाटा का परमार्थ भाव स्पष्ट देख लिया । उन्होंने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से टाटा को बिहार के वर्तमान जमशेदपुर स्थान का पता बताया । उल्लेखनीय है कि यह स्थान स्टील उद्योग के विकास में सर्वाधिक सहायक सिद्ध हुआ ।

साधना मार्ग पर आरूढ़ साधकों को दिव्य-आलौकिक शक्तियाँ भी मिलती हैं, पर उनके मिलने का आधार एक ही है—उपासना के साथ-साथ अपनी पात्रता का विकास करना । पात्रता अर्थात् अपने व्यक्तित्व को दैवी गुणों—देवत्व से परिपूर्ण बनाना । यह सम्भव हो सके तो वे विभूतियाँ अपने आप सहचरी बन सकती हैं जिन्हें विभूतियों एवं चमत्कारों के रूप में जाना जाता है ।

दैवी चेतना न किसी से पक्षपात करती है, न किसी को दीन-हीन अथवा संकटपूर्ण स्थिति में रहने देना चाहती है । कई बार इस माध्यम से कई लोगों को महत्त्वपूर्ण सूचनाएँ मिलती हैं, जबकि अनेक लोग इस सम्पर्क से सर्वथा वंचित बने रहते हैं । ऐसे प्रकरणों में दैवी सत्ता की कृपा कुछ व्यक्ति विशेषों पर ही क्यों होती है ? इसके मूल में पात्रता को ही प्रधान कारण मानना चाहिए ।

अमेरिका के चार्ल्स फिल्मोर एक सात्विक व सन्त प्रकृति के व्यक्ति थे । वे अपना कुछ समय नित्य ही ध्यान साधना में लगाया करते थे । अपने उत्तरार्ध जीवन में उन्होंने जिस 'सोसायटी ऑफ यूनिटी' नामक संस्था की स्थापना की थी, उसकी अभिप्रेरणा उन्हें दैवी सत्ता द्वारा ही प्राप्त हुई थी । बाद में इस संस्था ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अमेरिका एवं विश्व के अनेक देशों में आध्यात्म का संदेश पहुँचाने एवं लोगों को उत्कृष्टता के मार्ग पर ले चलने का एक अभियान शुरू किया, जिसके परिणाम काफी उत्साहवर्धक रहे । अभी भी यह संस्था पूरी तरह सक्रिय है ।

भगवान बुद्ध को राजपाट छोड़कर सन्यासी बन जाने और बाद में बुधत्व प्राप्त कर समस्त विश्व को सत्य, अहिंसा, प्रेम, सदाचार के आध्यात्म पथ पर ले चलने की प्रेरणा भी दैवी चेतना ने ही दी थी । एक दिन उन्हें ऐसी अनुभूति हुई जैसे कोई कह रहा हो कि सामान्य मनुष्य जन्म लेता है, और पेट-प्रजनन की सामान्य प्रक्रिया से गुजरते हुए भरण को प्राप्त होता है । तुम्हारा जन्म जीवन को इस प्रकार गुजार देने के लिए नहीं हुआ । तुम्हें असाधारण कार्य करना है । इसके लिए स्वयं को तैयार करो । जीवन सम्पदा का सदुपयोग और संसार का मार्गदर्शन करने के लिए जुट पड़ो । इस दिव्य संदेश के बाद से ही उनके मन में वैराग्य उदय हुआ और राज्य पाट छोड़ कर वे तप करने चल पड़े ।

बाइबिल के बारे में कहा जाता है कि रेविलैशन के सारे संदेश और भविष्यवाणियाँ मानवी हृदय में 'इलहाम' के रूप में उतरे हैं । ग्रहणकर्त्ता ने बाद में उन्हें पुस्तकाकार रूप दिया । ऐसी ही मान्यता ज्ञान—विज्ञान के अगाध भण्डार वेदों के बारे में हैं ।

अचेतन मन के माध्यम से दैवी संकेतों का मिलना एक महत्त्वपूर्ण तथ्य है । अब से ६०० वर्ष ईसा पूर्व बेबिलोन के राजा नेबूचाउ को इसी के माध्यम से यह संदेश मिला था कि उसका शीघ्र ही पतन होने जा रहा है ।

मेडिया के राजा अस्ट्रयागेस को पूर्वाभास हुआ था कि उनकी लड़की राजकुमारी मैण्डेना का विवाह एक अन्तर्जातीय लड़के से हो गया है । उससे जो पुत्र पैदा हुआ उसने राजा को पदच्युत कर राज्य छीन लिया । वह पूर्वाभास से इतना घबराया कि राजकुमारी की शादी एक सामान्य सीधे-साधे पारसी युवक से कर दी, ताकि राज्य और राज को उससे किसी प्रकार की हानि की सम्भावना न रहे, पर होनी को नहीं टाला जा सका । उनसे जो पुत्र हुआ, उसने न सिर्फ अस्ट्रयागेस को ही पराजित किया, वरन् दूर-दूर तक अपने राज्य का विस्तार किया और साइरस महान कहलाया ।

मिश्र के राजकुमार तुल्मेस को एक बार एक दिव्य संदेश प्राप्त हुआ कि तुम्हें छोटे राज्य का न रहने दूँगा । बड़े क्षेत्र का शासक बनाऊँगा । ऐसा ही हुआ । राजगद्दी पर बैठते ही परिस्थितियाँ उसके अनुरूप बनने लगीं और सचमुच कुछ ही वर्षों में वह एक बड़े साम्राज्य का शासक बन गया । दैवी प्रेरणाएँ सदैव सुपात्रों एवं पवित्र अंतःकरणों में अवतरित होती हैं व भविष्य की झाँकी दिखा जाती हैं ।

आत्मिकी का प्रथम सोपान आत्मशोधन

भौतिक विज्ञान प्रकृति क्षेत्र में बिखरे पड़े अनगढ़ पदार्थ को उपयोगी उपकरण बनाने के लिए अपनी प्रक्रिया तीन चरणों में पूरी करता है । एक उसकी कुरूप मलिनता का परिशोधन करके काम में आ सकने योग्य स्थिति तक पहुँचाना । दूसरा उसे ऐसी स्थिति में लाना जिससे उसे कोई अच्छी शकल देना सम्भव हो सके । तीसरा उसे उन उपकरणों की शकल में ढालना जो महत्त्वपूर्ण यन्त्र उपकरणों के रूप में प्रयुक्त हो सके । तीनों चरणों में से गुरजने पर ही विज्ञान की हर चेष्टा को सफलता के स्तर तक पहुँचाया जाता है ।

लोहा खदान में से निकलता है तब उसमें मिट्टी मिली होती है । लोहकण भी अस्त-व्यस्त जंग खाये जैसे होते हैं । उस कच्चे माल को भट्ठी में तपाया जाता है ताकि अनावश्यक मिलावट जल जाय और शुद्ध लोहा हाथ लगे । यह एक चरण हुआ । शुद्ध लोहे को किसी मशीन के रूप में ढालना होता है तो उसे फिर भट्ठी में डालकर नरम बनाया जाता है यह दूसरा चरण हुआ । तीसरे कदम में उसे साँचे में ढाला और खराद पर घिस कर उसे पूर्णता प्रदान की जाती है । इस तीसरे चरण के पूरे होने पर एक प्रक्रिया पूरी हो जाती है ।

कुम्हार भी यही करता है । मिट्टी के ढेलों को तोड़ता, गलाता, गूँथता है । जब मिट्टी लोच पर आ जाती है तब उसे चाक पर घुमाकर इच्छित बर्तन बनाता है । चिकित्सक भी यह करते हैं । मूल द्रव्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को शोधते हैं, कूटते-पीसते हैं फिर उसे गोली, केपसूल, अवलेह, शरबत आदि की शकल देते हैं । रस भस्में भी इसी प्रकार बनती हैं । भौतिक विज्ञान की यही कार्यपद्धति है । इसी को कार्यान्वित करते हुए वह उपेक्षित सामग्री को इस स्थिति तक पहुँचाता है कि उसे अति उपयोगी एवं बहुमूल्य आँका जा सके ।

यह सब करने से पूर्व प्रयोग में आ सकने योग्य सिद्धान्तों का आविष्कार, निर्धारण करना पड़ता है । यदि उसकी बौद्धिक व्याख्या सही न हो तो कार्यान्वयन की मेहनत और लागत बेकार जायेगी, असफलता हाथ लगेगी ।

इतना समझ लेने के उपरान्त ही तुलनात्मक दृष्टि से असंख्य गुनी क्षमताओं सम्भावनाओं से भरे पूरे चेतना विज्ञान की दार्शनिक एवं क्रियापरक शैली का निरीक्षण परीक्षण करना चाहिए । यह तथ्य सर्वमान्य होना चाहिए कि पदार्थ को जिस प्रकार कुछ से कुछ बनाया जा सकता है—शरीर में अनेकों प्रसुप्त क्षमताएँ विकसित की जा सकती हैं, उसी प्रकार चेतना का भी परिष्कार एवं उन्नयन हो सकता है । परिष्कृत वस्तु का स्तर एवं मूल्य स्वाभाविक अधिक होना चाहिए । कोयला अमुक तापमान तक पहुँचने पर हीरा बन जाता है । सस्ते गरापाची से अभ्रक भस्म बनती है । बनाने वाले जानते हैं कि इस परिवर्तन की मध्यवर्ती प्रक्रिया कितनी पेचीदा होती है और उसे पूरा करने के लिए कितनी सतर्कता बरतनी पड़ती है, कितने सहायक उपकरण जुटाने पड़ते हैं । कितने दिनों कितनी मुस्तैदी के साथ उसके साथ खपना पड़ता है । कुम्हार, सुनार, लुहार, मोची, दर्जी, रंगरेज, संगीतकार शिल्पी आदि सभी कलाकार अपने-अपने क्षेत्र में नये निर्माण करते और दर्शकों को चमत्कृत करते हुए खरीदने वालों को प्रसन्नता प्रदान करने वाली उपलब्धियाँ हस्तगत कराते हैं । यह प्रक्रिया आध्यात्म विज्ञान के कार्यान्वयन में भी अपनानी पड़ती है ।

पूर्व इसके कि चेतना क्षेत्र को समुन्नत करने वाले विज्ञान के कार्यान्वयन की, विधिविधानों की चर्चा की जाय, अच्छा हो उसके मूलभूत सिद्धान्तों को समझ लिया जाय । सिद्धान्तों के आधार पर सही दिशा में प्रयास करते बन पड़ता है और वही सफल भी होता है ।

चेतना विज्ञान का दूसरा नाम आध्यात्म या आत्मिक भी है । उसके दो पक्ष हैं—एक तथ्यात्मक, दार्शनिक, सैद्धान्तिक । दूसरा है क्रियापरक—विधिविधानों और कर्मकाण्डों का समुच्चय । लोग दूसरे पक्ष से आरम्भ करना चाहते हैं । सिद्धान्तों और आधारों को समझने में रुचि नहीं लेते । फलतः क्रियाकृत्यों का स्वरूप अस्तव्यस्त हो जाता है । उनका प्रतिफल कहीं पतंग जैसा अनिश्चित ही रहता है । सिद्धान्तों की डोरी जब तक कर्मकाण्डों के साथ जुड़ी रहती है तभी तक वह आकाश में छटा दिखाने वाली पतंग जैसी आकर्षक स्थिति में रहती है । चेतना का अथाह और असीम समुद्र इस समूचे ब्रह्माण्ड में लहलहा रहा है । उसी में जल जन्तुओं की तरह हम सब रहते हैं । मछली अपना आहार जलाशय से ही प्राप्त करती है । जीवसत्ता के लिए सम्भव है कि ब्रह्म सत्ता के साथ जुड़े और उसमें से पोषक तत्व प्राप्त करती रहे । उस उपलब्धि के आधार पर अपने को अधिकाधिक समर्थ बनाती चली जाय और महात्मा, देवात्मा के रूप में अपनी स्थिति सिद्धपुरुषों, महामानवों जैसी विनिर्मित करे । ब्रह्म परायण होने के लिए प्रथम आधार के रूप में अपनी पात्रता विकसित करनी पड़ती है । कुछ महत्त्वपूर्ण प्राप्त करने और उसे सुरक्षित रखने के लिए तदनुरूप आधार खड़े करने पड़ते हैं ।

वर्षा में असीम जलराशि बरसती है पर वह कहीं टिकती उतनी मात्रा में है जहाँ जितना गहरा गड्ढा होता है । सूर्य की किरणें उन्हीं घरों में प्रवेश करती हैं जिनके खिड़की दरवाजे खुले हों । सुन्दर दृश्यों को देखने का लाभ उन्हीं को मिलता है जिनकी आँखें सही हों । बहरे लोग इर्दगिर्द के वार्तालाप को, गायन, वादन को कहाँ सुन पाते हैं ? अपना मस्तिष्क ही गड़बड़ा रहा हो तो संसार की समस्त गतिविधियाँ उल्टी हो रही जान पड़ती हैं । आँखों पर रंगीन चश्मा पहन लेने पर सभी वस्तुएँ उसी रंग में रँगी हुई प्रतीत होती हैं । आत्मसत्ता का अन्तराल यदि गई गुजरी स्थिति में पड़ा हो तो लोक व्यवहार भी सही तरह निभ नहीं पाता । साथियों से भी मधुर सम्बन्ध रह नहीं पाते, ऐसी दशा में परब्रह्म की ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ घनिष्टता स्थापित करना और उसके अनुग्रह अनुदान से लाभान्वित हो सकना किस प्रकार बन पड़े ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुदान प्रदान करने वाला पक्ष न तो दुर्बल है, न सीमित, न कृपण । पर उसे भी देते समय यह ध्यान रखना पड़ता है कि जिसे दिया जा रहा है वह उसका सदुपयोग करेगा या नहीं । जहाँ 'नहीं' की आशंका होती है वहाँ दाता के उदार हाथ भी सिकुड़ जाते हैं । उसकी खुली हुई मुट्ठियाँ बन्द हो जाती हैं । वरिष्ठ संस्थानों की तरह ईश्वर भी पात्रता परखता और उसके बाद ही अपने अनुदानों की झड़ी लगाता है ।

रेगिस्तानों में बादल बरसते नहीं । वे उसके ऊपर होकर छवि मात्र दिखाते हुए अन्यत्र चले जाते हैं । बैंक कर्ज बाँटती हैं । लाखों करोड़ों का उधार देती हैं, पर देने से पूर्व यह जाँच लेती हैं कि वह किस कार्य के लिए माँगा जा रहा है । उसमें लाभ होने और उसके वापस लौटने की सम्भावना है या नहीं । सन्देह होने पर ऋण पाने के लिए दिया गया प्रार्थना पत्र रद्द हो जाता है । कन्या का पिता अपनी सर्वगुण सम्पन्न पुत्री के विवाह योग्य होने पर सुयोग्य लड़के की तलाश में भारी दौड़धूप करता है । जहाँ आशा की झलक दिखाई देती है वहाँ बराबर चक्कर लगाता है, मनुहार करता है । उपहार देने का भी प्रलोभन दिखाता है, सिफारिशें करवाता है और जब अभीष्ट सम्बन्ध हो जाता है तो प्रसन्नता अनुभव करता है । इतने पर भी यदि कोई कुपात्र, अयोग्य व्यक्ति उस लड़की को पाने के लिए अपनी ओर से प्रार्थना करे, मनुहार करने, उपहार देने की पेशकश करे तो भी कन्यापक्ष उसके कथन को अस्वीकार ही नहीं करता, उसे धृष्टता बताता और फटकार लगाता है । एक ओर अनुग्रह का आग्रह और दूसरी ओर तिरस्कार भरी फटकार, इन दोनों प्रकार के व्यवहारों में सुयोग्य—अयोग्य का, पात्र—कुपात्र का अन्तर ही प्रधान कारण है ।

गाय अपने बच्चे को दूध पिलाती है । दूसरी जाति के पशु शावकों को थन तक नहीं फटकने देती । छात्रवृत्ति ऊँचे नम्बर लाने वाले परिश्रमी, प्रतिभाशाली छात्रों को ही मिलती है जबकि फेल होने वालों को अगली कक्षा में प्रवेश पाना तक कठिन हो जाता है । अफसरों की भर्ती में चुनाव आयोग के सम्मुख प्रस्तुत होना पड़ता है । योग्यता के आधार पर ही चयन होता है । उसका प्रमाण न दे सकने वाले निराश वापस लौटते हैं ।

इन सब तथ्यों को भली प्रकार समझा जाना चाहिए और ब्राह्मी चेतना से व्यष्टि चेतना को कोई महत्त्वपूर्ण अनुदान मिले ऐसी आशा लगाने से पहले अपनी स्थिति का पर्यवेक्षण करना चाहिए और जीवन के जिस क्षेत्र में जितनी गन्दगी हो उसे बुहार कर साफ करना चाहिए । किसी सम्भ्रान्त अतिथि के घर आने पर घर के फर्श फर्नीचर की सफाई कर ली जाती है । ब्रह्मसत्ता के जीवन क्षेत्र पर अवतरित होने की स्थिति आने से पूर्व अपने आपे की सफाई कर लेनी चाहिए । धुले कपड़े पर ही रंग चढ़ता है । जुते खेत में ही बीज उगता है । बढ़िया बन्दूक से भरा गया कारतूस ही सही निशाना बेधता है । लकड़ी की बन्दूक वह काम नहीं कर सकती भले ही कारतूस कितनी ही अच्छी क्यों न हो ? उपासना का विधि-विधान कारतूस समझा जा सकता है । उसके उपयुक्त प्रतिफल प्रस्तुत कर सकने की सम्भावना तभी बनती है जब साधक का व्यक्तित्व परिष्कृत स्तर का हो ।

आध्यात्म विज्ञान का प्रथम चरण यही है कि अपनी पात्रता विकसित की जाय । व्यक्तित्व को परिष्कृत, प्रखर एवं समुन्नत स्तर का बनाया जाय । यह आत्मिक प्रगति के क्षेत्र में सफलता की पहली शर्त है । इसे पूरा किए बिना अधिक कुछ पाने, कमाने की व्यवस्था बनती नहीं । भटकाओ में भटकना और निराश रहना पड़ता है ।

समझा जाता है कि पेड़ पर जो पके फल दृष्टिगोचर होते हैं वे आसमान से रातों-रात टपकते हैं और आ चिपकते हैं । पर वस्तुतः वैसा होता नहीं । जड़ें जमीन से रस खींचती हैं, वह तने में, टहनियों में होकर ऊपर पहुँचता है और पहले फूल बाद में फल बनता है । जड़ें खोखली हो चलें और जमीन से रस खींचने में सफलता न मिले तो पेड़ मुरझाता, सूखता चला जायेगा । पत्ते झडेंगे, फूलों के, फलों के दर्शन दुर्लभ होंगे । व्यक्ति को आध्यात्मिक ही नहीं, भौतिक क्षेत्र की सफलताएँ भी उसके समुनत व्यक्तित्व के आधार पर ही मिलती हैं । यह दूसरी बात है कि सांसारिक क्षेत्र में परिश्रम और कौशल काम करता है तो आध्यात्मिक क्षेत्र में उसी के समतुल्य सेवा और संयम के समन्वय की, व्यक्तित्व के विकास, परिष्कार की आवश्यकता पड़ती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आध्यात्म क्षेत्र की ऋद्धियों, सिद्धियों, विभूतियों की चर्चा प्रायः होती रहती है । उन्हें प्राप्त करने की ललक—लालसा भी हर साधक में पायी जाती है । किन्तु यह भुला दिया जाता है कि उसके लिए साधना—विधानों से भी अधिक आत्म परिष्कार आवश्यक है । देव पूजन के लिए स्थान, उपकरण सभी स्वच्छ, सुसज्जित किए जाते हैं । मैला—कुचैला, दुर्गन्धित, कुरूप वातावरण देखकर वे आने को तैयार नहीं होते, आते हैं तो वापस लौट जाते हैं । यह बात दैवी शक्तियों के अवतरण, अनुग्रह के सम्बन्ध में भी है, उन्हें स्वच्छता और सदुपयोग कर सकने योग्य पात्रता का निरीक्षण परीक्षण करना होता है । इसके उपरान्त ही वह बात बनती है कि दैवी अनुग्रह से लाभान्वित हुआ जाय । घर—आँगन में आये दिन जमा होने वाला कचरा झाड़ू से बुहारा जाता है, बालों और वस्त्रों की सफाई पानी और साबुन से होती है । मन में आन्तरिक दुर्बलता और बाहरी कुप्रभावों से मनुष्य स्वभावतः वैसे आचरण करता है जैसे कि वह कीट-पतंगों और पशु-पक्षियों की पिछड़ी योनियों में करता रहा है । उस पतनोन्मुख प्रवाह को विवेक और संयम के द्वारा मर्यादाओं और वर्जनाओं के अनुबन्धों द्वारा रोका जाता है । इस नियन्त्रण और परिष्कृत-परिवर्तन के लिए काम करने वाली प्रक्रिया का नाम ही आध्यात्म है ।

पात्रता की साधना से अभीष्ट सिद्धियाँ

बादल ऊपर से बरसते हैं । इसलिए समझा जाता है कि जलाशय आकाश में भरे पड़े होंगे । किन्तु जब थोड़ी गंभीरता के साथ वस्तुस्थिति समझने का प्रयत्न किया जाता है तो पता चलता है कि गहरे समुद्र का पानी ही भाप बनकर ऊपर उठता है और घनीभूत होकर बादल बन जाता है । भारी होने पर वही जब अपना भार वहन नहीं कर पाता तो नीचे बरस पड़ता है । वास्तव में वर्षा का जल समुद्र का ही अनुदान है, जो गहराई तक भीतर सैकड़ों मील नीचे तक जमीन में धँसा हुआ है ।

ऊपर से कुछ मिलता न हो सो बात नहीं है । सरोवरों में वर्षा का जल ही जमा होता है । पवन आकाश में ही बहता है । जिनमें साँस लेने की क्षमता है वे उस प्राण वायु को समुचित मात्रा में खींचते और जीवन धारण किये रहते हैं । इसी प्रकार सूर्य ऊर्जा तथा अन्य अदृश्य शक्तियाँ आकाश से ही बरसती हैं ।

इतने पर भी यह मानकर चलना चाहिए कि जीवनोपयोगी अधिकांश वस्तुएँ धरती के भीतर से ही उत्पन्न होती हैं । बहुमूल्य पत्थर, धातुएँ, कोयला, खनिज तेल, कितने ही रसायन धरती से खोजकर निकाले जाते हैं । वृक्ष वनस्पतियाँ धरती पर ही उगते हैं और उसी के भीतर अपनी जड़ें फैलाकर बड़े बनते, फल-फूलों में लदते हैं । प्राणियों के लिए खाद्य पदार्थ भी धरती से उगाये जाते हैं । कुओं का पानी उसी के अन्तराल में भरा होता है । नदियों का प्रवाह भी तभी बनता है जब धरती उसके लिए जगह देती है । जल भण्डार भी पृथ्वी पर ही भरा पड़ा है । समुद्र तक उसी के अंचल में छिपा बैठा है । पर्वतों की सुरम्य शृंखलाएँ उस पर अवस्थित हैं । धरती पर ही मनुष्य चलते-फिरते और उसी पर अपना आवास निवास बनाते हैं ।

मनुष्य की धरती उसकी काया है । उसके अनेकानेक अंग अवयव जीवनचर्या का निर्वाह क्रम चलाये रहने के लिए तो निरन्तर कार्य करते ही रहते हैं । साथ ही जो अनेकों विशिष्टताएँ एवं विभूतियाँ हैं, वे भी पूरी तरह इसी काय कलेवर में उद्‌भुत होती हैं । उन्हें प्रयत्नपूर्वक जाग्रत किया जाता है ।

शिक्षा, कला, सम्पन्नता, प्रतिभा आदि को शरीर में ही प्रयत्नपूर्वक समाविष्ट किया जाता है । शरीर यदि अपंग असमर्थ स्तर का है तो कोई भी शिक्षक ऐसे व्यक्ति को कोई कौशल सिखा सकने में समर्थ नहीं हो सकता ।

शरीर का ऊपरी आवरण तो तरह-तरह की हलचलें ही कर सकता है । पर उसकी भीतरी परतें विचारशीलता, भावसम्वेदना, आस्था आदि की विशेषताओं को भीतर से ही उभारती हैं । उन्हें समुन्नत बनाने में शिक्षा व्यवस्था तो सहयोग भर देती है । यदि शिक्षा पद्धति में ही समग्र सामर्थ्य रही होती तो वह अन्य जीवधारियों को भी वैसा ही सुयोग्य बना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लेती जैसे कि मनुष्य बनते हैं । मनुष्यों में भी जो मानसिक रोगी या विक्षिप्त हैं, वे दूसरों के द्वारा बहुत प्रयत्न किए जाने पर भी प्रायः असफल ही रहते हैं । इससे सिद्ध है कि मौलिक क्षमताएँ अपने ही भीतर हैं । जो उन्हें विकसित कर लेते हैं, वे प्रतिभावान बनते हैं । जो उसको मात्र काम-काज में ही लगाते हैं । वे सामान्य स्तर के बने रहते हैं । किन्तु जो उनकी उपेक्षा करते हैं वे नर-पशु जीवन जी पाते हैं । इसके विपरीत जो अपनी क्षमताओं को कुमार्ग गामी बनाते हैं वे पतित की अपराधी जिन्दगी जीते हैं । भर्त्सना और प्रताड़ना के भाजन बनते हैं ।

"साधना से सिद्धि" का सिद्धान्त सर्वविदित है । साधना को मोटे तौर पर देवी-देवताओं को प्रसन्न करने का उपाय, उपचार माना जाता है । पर देवताओं का अनुग्रह भी इसी शर्त पर मिलता है कि अपनी पात्रता और उत्कृष्टता प्रमाणित करने के लिए व्यक्तित्व को परिष्कृत स्तर का बनाने में प्रयत्न-पूर्वक सफलता प्राप्त कर ली जाय । कुपात्रों को दैवी अनुग्रह या तो मिलते ही नहीं, यदि कुछ मिलता भी है तो वह दुरुपयोग में सहज ही बर्बाद हो जाता है । असुरों की साधनाएँ आरम्भ में तो कुछ चमत्कार दिखाती हैं, पर कुछ ही समय में जब उस अहंकार में कुकर्म चल पड़ते हैं तो फिर जड़ मूल सहित उखड़ना पड़ता है । जो सामान्य पुरुषार्थ से कमाया गया था उसका भी लाभ नहीं मिल पाता । जो सही रीति से कमाया था वह भी उसी आँधी में उड़ जाता है ।

महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ कुपात्रजनों को एक तो उपलब्ध ही नहीं हो पातीं । यदि किसी प्रकार प्राप्त भी हो चलें तो वह टिकती नहीं । भ्रष्ट व्यक्तित्व दुष्ट आचरण अपनाता है और कुछ ही समय में व्यक्तित्व को पूरी तरह नष्ट कर देता है ।

योगाभ्यास से कई प्रकार की अतीन्द्रिय स्तर की दिव्य क्षमताएँ प्राप्त होती हैं । दूरदर्शन, दूरश्रवण, दूरानुभूति, विचार सम्प्रेषण, भविष्य ज्ञान, व्यक्तित्व अध्ययन जैसी विलक्षणताएँ कई व्यक्तियों में पायी जाती हैं और वे मनुष्य को सिद्ध पुरुषों की श्रेणी में ला बिठाती हैं । शारीरिक मानसिक लाभ भी ऐसे व्यक्ति दूसरों को पहुँचाते देखे गए हैं । शाप वरदान की क्षमता भी उनमें उत्पन्न हो जाती है । इस दिशा में और भी खोजें इन दिनों हो रही हैं । प्राचीन काल के ऋषि मुनि तो उन प्रयोगों में पारंगत थे ही ।

इतने पर भी यह नहीं मान लेना चाहिए कि यह किसी का दिया हुआ वरदान है । वह अपने पुरुषार्थ से आत्मपरिष्कार की पृष्ठभूमि पर ही उगता है । जो उगा है उसे तदनुरूप बाहरी सहायता भी मिलते रहने का प्रकृतिगत नियम है ।

अंकुर जब उत्पन्न होता है तो बाहर से धूप, वर्षा, हवा आदि की अनायास ही सहायता मिलती है और वह ऊँचा उठता जाता है । जिस बीज में अंकुर उत्पन्न करने की आरम्भिक क्षमता ही नहीं, उसे बाहर की वे उपलब्धियाँ प्राप्त करने से वंचित ही रहना पड़ता है जो अन्य उगने में समर्थ अंकुरों को सहज ही मिलती रहती हैं ।

स्वाति की बूँदें बरसती तो सर्वत्र हैं, पर उनसे लाभ केवल वे सीपियाँ ही उठा पाती हैं । जिनमें मोती पैदा करने की मौलिक क्षमता पहले से ही उत्पन्न हो गई है । कहते हैं कि स्वाति बूँदों की सहायता से केले में कपूर, बांस में वंशलोचन उत्पन्न होता है, पर यह सम्भव तभी है जब वे उस लाभ को उठा सकने की अतिरिक्त विशेषता से पहले ही सम्पन्न हो चुके हों । अन्यथा वह लाभ हर सीप को, हर बाँस को, हर केले को कहाँ मिलता है ? मरे हुए को तो अमृत भी नहीं जिला सकता । जीवित व्यक्ति ही उसे प्राप्त करके अमर बनते सुने जाते हैं । कठोर चट्टानों पर पूरी वर्षा ऋतु गुजर जाने पर भी एक तिनका तक पैदा नहीं होता ।

दैवी अनुग्रह हो या पुरुषार्थ उपार्जित वैभव । दोनों ही स्तर की सफलताएँ प्राप्त करने के लिए प्रारम्भिक प्रयास यही करना पड़ता है कि अपनी पात्रता, प्रामाणिकता और प्रतिभा को ऊँचे स्तर तक विकसित किया जाय । यह सिद्धान्त जिन्होंने हृदयंगम कर लिया, समझना चाहिए उन्होंने भौतिक और आत्मिक स्तर की दिव्य विभूतियाँ अर्जित करने का राजमार्ग प्राप्त कर लिया । चुम्बक का निजी आकर्षण ही उसी जाति के अन्य कणों को कहीं से भी खींच घसीट कर उसके समीप ही ले आता है । सफलताएँ भी इसी प्रकार सत्पात्रों के समीप आतीं और अपनी विभूतियों से सत्पात्रों को सुसज्जित करती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुपात्रता को यथावत बनाए रहने, दोष दुर्गुणों से भरे रहने पर सामान्य जीवन भी शान्तिपूर्वक जी सकना कठिन पड़ता है । अयोग्य व्यक्ति जहाँ भी जाते हैं वहाँ से दुतकारे जाते और खाली हाथ लौटते हैं । आध्यात्म क्षेत्र में भी यह नियम समग्ररूप से चरितार्थ होता है । प्रगति किसी भी दशा में क्यों न की जाय ? चलना अपने ही पैरों पड़ता है ।

शरीर उन पंच तत्वों का बना है, जिन्हें जड़ कहा जाता है । चेतना ही उसमें प्राण रूप है । यदि वह निकल जाय, तो पाँच तत्वों का बना घोंसला निर्जीव बनकर रह जाता है । उसके लिए कुछ कर सकना तो दूर, अपनी रक्षा तक नहीं कर सकता । तुरन्त सड़ने-गलने लगता है और जन्तुओं का आहार बनकर अपनी शकल-सूरत तक गँवा बैठता है । प्राण रहते ही किसी को जीवित कहा जाता है । जीवन, वायु की तरह व्यापक और अनन्त है । फेफड़ों में जितनी जगह होती है, वायु उतनी ही मात्रा में ग्रहण की जाती है । शरीर कलेवर के सम्बन्ध में भी यहाँ यही बात है । साँस लेते समय उसकी जितनी आवश्यकता पड़ती है, उतनी ही ग्रहण कर ली जाती है । शेष अनन्त आकाश में ही भरी रहती है । उसे अधिक मात्रा में ग्रहण-उपब्ध करने की कला में प्रवीण लोग उसे 'प्राणायाम' से अतिरिक्त मात्रा में ग्रहण कर लेते हैं और आवश्यकतानुसार विशेष समय पर प्रयुक्त करते हैं । ऐसे ही लोग प्राणवान कहलाते हैं और उस संचय से अपना तथा दूसरों का भला करते हैं ।

शरीर-बल प्रायः इतना ही होता है जितना सीमित मात्रा में प्राण शक्ति विद्यमान रहती है, पर जो आश्चर्यजनक-अद्‌भुत-असाधारण कार्य कर पाते हैं, उनकी चेतना ही विशेष रूप से सक्रिय होती और चमत्कार स्तर के काम करती देखी जाती है । शरीर मनुष्यकृत है । वह नर-नारी के गुण सूत्रों के माध्यम से विकसित होता है, किन्तु प्राण देवता है । उसकी असीम मात्रा इस विश्व-ब्रह्माण्ड में भरी पड़ी है । वह अपने वर्ग के साथ असाधारण मात्रा में एकत्रित भी हो सकता है और एक दूसरे में प्रवेश करके अपनी दिव्य क्षमता का हस्तान्तरण भी कर सकता है । इस प्रकार के प्रयोगों को शक्तिपात नाम से जाना जाता है । छाया पुरुष स्तर में भी उसी का विशेष कर्त्तव्य देखा जाता है । मरणोपरान्त उसका स्वतन्त्र अस्तित्व भूत-प्रेत आदि के रूप में बना रहता है । जीवित स्थिति में भी अतीन्द्रिय क्षमता के रूप में उसके चमत्कारी करतब देखे जा सकते हैं । प्राणयोग के अभ्यास से इसका अतिरिक्त प्रवाह, शरीर से बाहर निकल कर भी सुषुप्ति, तुरीया, समाधि आदि में अपनी सत्ता बनाए रहकर, बिना शारीरिक साधनों के अपने अस्तित्व तथा सशक्त विशेषताओं का परिचय दे सकता है ।

प्राण की सत्ता हस्तान्तरण के उपयुक्त भी है । कोई समर्थ व्यक्ति अपनी दिव्य क्षमता का एक भाग किसी दूसरे को देकर उसकी सहायता भी कर सकता है । आदि शंकराचार्य की कथा प्रसिद्ध है, जिसके अनुसार वे कुछ समय के लिए अपने शरीर से निकल कर किसी दूसरी काया में प्रवेश कर गए थे और लम्बी अवधि तक उसी के बने रहे थे ।

अन्य विशिष्ट शक्तियाँ भी मनुष्य के साथ अपने ताल-मेल बिठाती और उसके शरीर द्वारा अपने अभीष्ट प्रयोजन पूरे करती रही हैं । कुन्ती-पुत्र मनुष्य शरीरधारी होते हुए भी विशेष देवताओं के अंश थे । उसी स्तर के वे काम भी करते रहे, जैसे कि साधारण मानवी काया में रहते हुए कर सकना सम्भव नहीं है । रामायण काल में हनूमान, अंगद आदि के पराक्रमों को भी ऐसे ही देवोपम माना जाता है । मनुष्य शरीरधारी सामान्य प्राण वाले प्रायः वैसे कार्य नहीं कर सकते । अवतारी सत्ताएँ मनुष्य शरीर में रह कर ही अपने विशेष कृत्य करतीं और "यदा यदा ही धर्मस्य" वाली प्रतिज्ञा की रक्षा करती हैं ।

भगवान जिन्हें विशेष कार्यों के लिए चुनते नियुक्त करते हैं, उनमें इस दिव्य प्राण की मात्रा ही अधिक होती है, जिसके सहारे वे नर-वानरों की परिधि से ऊँचा उठकर सोचने, ऐसा साहस करने और आदर्श उपस्थित करने में समर्थ होते हैं । भव—बन्धनों की रज्जुओं से जकड़े हुए सामान्य मनुष्य न तो वैसा सोच ही सकते हैं और न दिव्य आदर्शों को अपना पाते हैं । दैवी प्रयोजनों को सिद्ध करने के लिए अतिरिक्त आत्मबल का-मनोबल का परिचय वे दे नहीं पाते । छिट-पुट विघ्न ही उन्हें पहाड़ जितने भारी देखते हैं और जब कुछ कर गुजरने का समय आता है, तो भयभीत होकर किसी अनर्थ की आशंका करने लगते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । कायरता न जाने कहाँ से आकर दौड़ पड़ती है और कभी की हुई प्रतिज्ञाएँ लिए हुए संकल्पों को एक प्रकार भूल ही जाते हैं ।

दैवी अनुग्रह के सम्बन्ध में भी लोगों की विचित्र कल्पनाएँ हैं । वे उन्हीं छोटी सम्भावनाओं को दैवी अनुकम्पा मानते रहते हैं जो सामान्य पुरुषार्थ से अथवा अनायास ही संयोगवश लोगों को उपलब्ध होती रहती हैं । मनोकामनाओं तक ही उनका नाक रगड़ना, गिड़गिड़ाना सीमित रहता है, जिसे वे दैवी अनुकम्पा मानते हैं । आत्मबल-आत्मविश्वास न होने से जो कुछ प्राप्त होता है उसे पुरुषार्थ का प्रतिफल मान कर उनका मन सन्तुष्ट ही नहीं होता । उनके लिए हर सफलता दैवी अनुग्रह और हर असफलता दैवी प्रकोप मात्र प्रतीत होती है । ऐसे दुर्बल चेताओं की बात छोड़ दें तो यथार्थता समझ में आ जाती है पर अन्ततः एक ही तथ्य सामने आता है कि मनुष्य जब आदर्शवादी अनुकरणीय—अभिनन्दनीय कर्मों को करने के लिए उमंगों-तरंगों से भर जाता है तो वह असाधारण कदम उठाने लगता है । रावण की सभा में अंगद का पैर उखाड़ना तक असम्भव प्रतीत होने लगा था । औसत आदमी को तो हर काम असम्भव लगता है । ऐसे छोटे त्याग करना भी उसे पहाड़ उठाने जैसा भारी पड़ता है, जो वस्तुतः हल्के-फुल्के ही होते हैं, और हिम्मत के धनी आदर्शवादी, जिन्हें आये दिन करते रहते हैं ।

दैवी अनुग्रह का एक ही चिन्ह है आदर्शवादिता की दिशा में साहसपूर्वक बड़े कदम उठाना और उस प्रयास में आगे वाली कठिनाइयों को हँसते-हँसते दरगुजर का देना । भगवान का अनुग्रह एक ही है—आदर्शों के परिपालन में बढ़ी-चढ़ी साहसिकता का प्रदर्शन करते रहना । कायरों और हेयजनों के लिए यही पर्वत उठाने जैसा अड़ंगा प्रतीत होता है किन्तु जिनमें मनोबल की कमी नहीं, उनके लिए तो यह सब खेल-खिलवाड़ जैसा लगता है । संसार का इतिहास साक्षी है कि जिस किसी पर भगवान की प्राण चेतना-अनुकम्पा बरसी है, उनको एक ही वरदान मिला है, ऐसे सत्कर्म करने का साहस मिला है, ऐसा उत्साह मानस में विचरता रहा है कि अनुकरणीय और अभिनन्दनीय कार्य सतत् करने की लगन उठती रहे । अवांछनीय और अनौचित्य जहाँ भी दीखता है, वहाँ लड़ पड़ने का इतना शौर्य-साहस उभरता है कि उसे चरितार्थ किए बिना व्यक्ति शान्ति से बैठ हीं नहीं सकता ।

मनीषियों का अभिमत है कि इक्कीसवीं सदी में ऐसी ही प्रतिभाएँ सर्वत्र उभरेंगी, जिनके पिछले किए क्रिया-कलाप देखने से निराशा होती थी, उनमें से भी कितने ही ऐसे उभरेंगे, जो अपने को धन्य बनायेंगे । अपने इर्द-गिर्द के लोगों को भी पार करके निहाल कर देंगे । पैसा, औलाद स्वास्थ्य, बड़प्पन को बुरे लोग भी अपने बलबूते अर्जित कर लेते हैं, पर आदर्शों की दिशा में साहसपूर्वक चल पड़ना मात्र उन्हीं के लिए सम्भव होता है, जिन पर भगवान की विशेष अनुकम्पा बरसती है जिसे परमपिता कृपापूर्वक अपने उच्चस्तरीय प्राण का वह भाग प्रदान करते हैं, जिसके सहारे नर-वानर को नर से नारायण बनने का अवसर प्राप्त होता है ।

सन्तों के वरदान और अनुदान

किसी के पास अपनी उपार्जित सम्पत्ति हो, वह इच्छानुसार चाहे जिसे दे सकता है, चाहे जिससे काम में खर्च कर सकता है । उस वैभव को अपनी सुख-सुविधा में लगाये या किसी और को हस्तान्तरित कर दे, यह उसकी अपनी मन-मर्जी की बात है, यह क्रम आदिकाल से चलता रहा है और अनन्तकाल तक चलता रहेगा ।

लोग अपनी कमाई को पूरी तरह अपनी लिए खर्च नहीं करते, वरन् स्त्री-बच्चों की सुख-सुविधा में खर्चते रहते हैं और मरने के उपरान्त उसे उन्हीं के लिए छोड़ जाते हैं ।

आध्यात्मिक उपार्जन भी धन कमाने की तरह है । उसे इतनी मात्रा में भी कमाया जा सकता है । कि उससे आत्मकल्याण जैसे प्रयोजन पूरे हो सकें और बचत को किसी अन्य उपयोगी काम के लिए किसी प्रामाणिक व्यक्ति को हस्तान्तरित किया जा सके । ऐसे क्रिया-कलापों को शक्तिपात या वरदान कहते हैं ।

रामकृष्ण परमहंस के पास आध्यात्मिक सम्पदा प्रचुर मात्रा में थी । वे उसका उपयोग भारतीय संस्कृति के प्रसार-विस्तार में लगाना चाहते थे; पर स्वयं इस स्थिति में नहीं थे कि विश्व भ्रमण कर सकें । नई पीढ़ी के बुद्धिजीवियों को अपने क्षमता के आधार पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रभावित कर सकें, इसके लिए उन्हें किसी सहायक की आवश्यकता थी । विवेकानन्द उन्हें मिल गए । ठोंक-बजाकर परख लिया कि आदमी प्रामाणिक भी है और सुयोग्य भी । उन्होंने निश्चय किया कि इस युवक के लिए चिरसाध्य साधना में लगकर अपनी कमाई के बलबूते वह प्रयोजन पूरा कर सकना कठिन पड़ेगा । इसमें लम्बा समय चला जायेगा और जो काम तत्काल किए जाने योग्य हैं, उनमें विलम्ब हो जायेगा । सरल उपाय यही था कि वे अपनी आध्यात्मिक सम्पदा हस्तान्तरित कर दें । परमहंस जब शरीर छोड़ने लगे तो पास ही बैठे विवेकानन्द के शरीर पर अपना पैर रखा उनके शरीर में बिजली कौंध गई । चकित होकर उन्होंने गुरु की ओर देखा । उत्तर मिला "जो कुछ पास में था, सो सब दे दिया । अब इसे अभीष्ट प्रयोजनों में लगाना । मैं इस शरीर से जा रहा हूँ सो इस काया को ठिकाने लगा देना ।" विवेकानन्द ने वही किया । अमानत को उन्हीं के काम में लगाया । अपनी निज की किसी महात्वाकांक्षा के लिए उसमें से रत्ती भर भी खर्च नहीं किया । वे जब विदेशों में प्रचार के लिए गए तो उन्हें हर घड़ी यही अनुभव होता रहा कि कोई दिव्य शक्ति उनकी वाणी और मस्तिष्क पर छाई हुई बोल रही है । अस्तव्यस्त होती हुई संस्कृति में प्राण लौट आये । शक्तिपात सार्थक हो गया ।

समर्थगुरु रामदास को देश की पराधीनता पर बड़ा क्षोभ था । चारों ओर जो अत्याचार हो रहे थे । वे उनसे सहन न होते थे । किन्तु अपना स्वरूप और उद्देश्य छोड़ना भी उनसे नहीं बन पड़ता था । अपना कार्य उन्हें किसी अन्य के माध्यम से कराने की सूझी । पर इसके लिए पात्रता आवश्यक थी । कुणत्र के हाथ में शक्ति जाने में तो सर्प को दूध पिलाने जैसा अनर्थ ही हस्तगत होता है । उनकी निगाह शिवाजी पर गई पर बिना जाने उपार्जन ऐसे ही किसको दे दिया जाय ? सिंहनी का दूध लाने और मुस्लिम तरुणी को माँ कहकर लौटा देने के उपरान्त उन्हें पात्रता पर विश्वास हो गया । उन्होंने शिवाजी को शक्ति दी । भवानी तलवार भी । सामान्य मराठा बालक को उन्होंने छत्रपति बना दिया और स्वतन्त्रता संग्राम का शुभारम्भ चल पड़ा ।

भारत पर मध्य एशिया के शक-हूण बार-बार हमला करते और लूट-पाट करके चले जाते थे । इस स्थिति से चाणक्य को बहुत क्षोभ था । उन्होंने आक्रमणकारियों से निपटने और सीमित भारत को विशाल भारत बनाने के लिए एक दासी की कोख से पैदा हुए चन्द्रगुप्त को चुना । वे स्वयं तो नालन्दा विश्वविद्यालय की व्यवस्था में संलग्न थे । चन्द्रगुप्त को सफलताएँ मिलती चली गई और वे भारत को सुदुर क्षेत्रों तक विस्तार करने में समर्थ हुए । आक्रमणकारियों की तो उन्होंने कमर ही तोड़ दी ।

गाँधी जी सर्वोदय का काम करना चाहते थे । पर राजनीति उन्हें छोड़ नहीं रही थी । उन्होंने विनोबा को चुना और वे देश में रचनात्मक कार्यों को अग्रगामी बनाने में सफल हुए ।

यह वे घटनाएँ हैं, जिनमें उच्च उद्देश्यों की पूर्ति के लिए तपस्वियों ने अपना तप सत्पात्रों को हस्तान्तरित किया है । स्वामी दयानन्द की सफलताओं का परोक्ष श्रेय उनके गुरु स्वामी विरजानन्द को जाता है ।

यह एक तथ्य है कि उच्च उद्देश्यों के लिए तपस्वियों की एवं देवताओं की कृपा उपलब्ध होती है । गाँधी का व्यक्तित्व दैवी अनुकम्पा से चमक था । महामना मालवीय हिन्दू विश्वविद्यालय की श्रद्धानन्द गुरुकुल कांगड़ी हीरालाल शास्त्री वनस्थली बालिका विद्यालय की स्थापना जैसे महान कार्य अपने व्यक्तित्व के बलबूते नहीं, वरन् दैवी अनुकूलता के सहारे ही कर सके । सुग्रीव, विभीषण नरसी मेहता सुदामा आदि को उच्चस्थिति प्राप्त कराने में भगवान ही सहायक रहे । भागीरथ द्वारा गंगावतरण की प्रक्रिया में शिवाजी का कम योगदान नहीं रहा । शिव से ही परशुराम ने वह कुल्हाड़ा प्राप्त किया था, जिसके द्वारा उन अकेले ने ही अगणित अनीति करने वाले सत्ताधीशों के सिर काट दिए । हनुमान सुग्रीव की चाकरी करते समय नगण्य थे, पर जब वे राम-काज के लिए तत्पर हुए तो जामवन्त ने अपना विपुल पराक्रम उनके सुपुर्द कर दिया । बुद्ध ने कुमार जीव को वह सामर्थ्य प्रदान की थी जिसके बलबूते वे चीन तथा उसके समीपवर्ती देशों में बौद्ध धर्म व्यापक बनाने में सफल हुए ।

उदारमना तपस्वी अनेक बार दीन-दुःखियों की भी सहायता करते रहते हैं और व्यक्तिगत सहायता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

करके ऊँचा उठाने में भी प्रसन्नता अनुभव करते हैं । गुजरात के बापा जलाराम का अन्न क्षेत्र सर्व साधारण के लिए खुला रहा और अब तक खुला हुआ है । यह कार्य व्यक्तिगत पुरुषार्थ के आधार पर सम्भव नहीं होते । श्रेय प्रदान करने के लिए दैवी अनुग्रह ही पृष्ठभूमि में काम करता है ।

राजा दिलीप को कोई सन्तान नहीं होती थी । वे गुरु वशिष्ठ के आश्रम में कुछ समय तपस्यारत रहे और वहाँ से पुत्र प्राप्ति का वरदान लेकर वापस लौटे । कुन्ती की मनोकामना देवताओं ने पूर्ण की थी । च्यवन अपने जर्जर शरीर का कायाकल्प करने में अदृश्य शक्ति की कृपा से ही समर्थ हुए थे । कर्ण को कवच-कुण्डल और अर्जुन को गाण्डीव देवताओं से ही प्राप्त हुआ । यह व्यक्तिगत सहायता थी । इसके पीछे ऐसी शर्त्त नहीं थी, कि इन अनुदानों का उपयोग परमार्थ के लिए ही करना पड़ेगा । टिटिहरी समुद्र से अण्डे वापस लेने के लिए चोंच में भर-भर कर बालू डाल रही थी । उसके सत्साहस से प्रभावित अगस्त्य मुनि ने समुद्र सोख कर उस पक्षी के अण्डे वापस दिलाये थे । यह सर्वथा व्यक्तिगत अनुदान थे । प्याऊ, अस्पताल, अन्न क्षेत्र आदि जाकर कोई खाली हाथ नहीं लौटता ।

रोते को हँसता देखकर प्रसन्न होने के लिए भी कितने ही उदारमना दानवीरों की तरह अपनी आध्यात्मसम्पदा खर्चते रहते हैं । बच्चे गुब्बारा खिलौना पाकर उछलते-कूदते हैं । पैर में चोट लगने पर मरहम पट्टी कर देने भूखे को रोटी खिला देने और प्यासे को पानी पिला देने पर जो खुशी उन्हें होती है, उसे देखकर सेवा करने वाले को भी कम प्रसन्नता नहीं होती । सन्तजन ऐसी बिना बदले की आशा के भी बहुधा सेवा-सहायता किया करते हैं । सूर्य-चन्द्रमा का प्रकाश हर घर तक पहुँचा है । पवन सभी को प्राण बाँटता है । धरती सभी का बोझ सहती है । बादल सर्वत्र बरसते हैं; वे नहीं देखते कि यह भले का खेत है या बुरे का । रोतों को हँसा देने में आत्मवादियों को कम प्रसन्नता नहीं होती ।

बहुमूल्य सिद्धियाँ अपनी सुयोग्य बेटियों की तरह होती हैं, जिन्हें बड़े लाड़-चाव से, धन खर्च करके बढ़ाया और पढ़ाया जाता है, उन्हें किसी के हाथ सौंपते समय पिता को यह सोचना पड़ता है कि किसी कुपात्र के घर न चली जायें । उसे जान बूझकर कोई पिता कुपात्र के याचना करने पर भी देने को तैयार नहीं होता, किन्तु साधारण कठिनाइयों में सेवा-सहायता करना तो मानवी धर्म है । दयालुता को छोड़ते भी नहीं बनता । घर पर आये भिक्षुक को कोई खाली हाथ नहीं जाने देता । पानी घर में होते हुए भी प्यासे को दुत्कार देने से सज्जनता चली जाती है । जब वृक्ष अपनी छाया में हर किसी को बैठने देते हैं और अपनी टहनियों के बीच पक्षियों को प्रसन्नतापूर्वक घोंसला बनाने देते हैं, तो फिर मनुष्य ही ऐसा क्यों कर बने के जिनकी कष्ट कठिनाइयाँ अपनी सामर्थ्य के भीतर हैं, उन्हें निराश लौटने दें । अतिथि-सत्कार का कर्त्तव्य पालन सन्तजन भी करते हैं और कठिनाइयों से उबारने के लिए स्वयं पानी में कूद कर डूबतों के बचा लेते हैं यह रीति-नीति तपस्वियों का भी सुहाती है । पर वे औचित्य की सीमा को सदा ध्यान में रखते हैं । ऐसा नहीं होने देते कि उनके किसी अनुदान का दुरुपयोग हो किसी को बन्दूक उधार माँगकर कोई शिकार खेलता फिर तो ऐसी सहायता भी अनुपयुक्त ठहराई जायेगी । नशा पीने के लिए सहायता करते रहना दान नहीं, वरन् दूसरे का भविष्य बिगाड़ना है । दिए हुए का उपयोग किसने किस प्रयोजन के लिए किया, यह तो विचार करने और ध्यान रखने योग्य की है ।

ऋषि का यह कथन उचित ही है कि "मैं राज्य नहीं चाहता न सुख न स्वर्ग न मुक्ति । दूसरों के दुःख दूर करने भर की मेरी कामना है ।" मरते समय भगवान बुद्ध ने कहा था कि जब तक एक भी प्राणी बन्धन में बँधा है, तब तक उसे मुक्त करने के लिए मैं बार-बार जन्म लेता रहूँगा । ऐसी उदारता आध्यात्म चेतना के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ी हुई है और हमेशा रहेगी ।

दिव्य अनुदान : वरदान सत्प्रयोजनों के लिए ही मिलते हैं

इच्छा करना और उसकी पूर्ति होना दो पृथक-पृथक बातें है । इच्छाएँ करते रहने भर से पूरे नहीं हो जाती, वरन् उनके प्राप्त करने के लिए प्रबल पुरुषार्थ करना पड़ता हैं । अन्यथा कल्पनाएँ मनोरंजन बेपर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की उड़ानें ही बनकर रह जातीं । मूल्यवान वस्तुएँ कूड़े या घूरे के ढेर में पड़ी नहीं मिलतीं । उन्हें प्राप्त करने के लिए गहरे समुद्र में डुबकी लगाकर साहसी पनडुब्बे की तरह मोती बीनने पड़ते हैं ।

स्वयंवर में उपस्थितजनों में ये हर किसी के गले में विजय-बैजन्ती वहीं पहनायी जाती । उनमें से जो अनुरूप लगता है, अन्यों से श्रेष्ठ प्रतीव होता है, उसी का चयन एवं वरण होता है । बादल पानी बरसाते तो सभी जगह हैं, पर उनका बड़ा भाग उन नदी-सरोवरों के हाथ आता है, जिन्होंने अपनी गहराई पहले से ही अधिक बना रखी है । अनुग्रह में कोई पक्षपात न होने पर भी टीले और चट्टान पहले जैसे सूखे थे वैसे ही बने रहते हैं । उनके लिए समूची बरसात ऐसे ही चली जाती है, जबकि उर्वर भूमि में मानसून आते ही हरीतिमा उगने और बूँदें पड़ते ही इसकी हरियाली से सर्वत्र हरा फर्श बिछता है ।

दाता के अनुग्रह की सराहना की जानी चाहिए, पर उसे भी अविवेकी नहीं मानना चाहिए । सोचना चाहिए कि "सब धान वाइस पसेरी पीसने वाले" "आँखों के अन्धे-गाँठ के पूरे" कोई विरले ही होते हैं । अन्न देने वाला हजार बार सोचता है कि जो दिया गया है, उसका सदुपयोग करने की क्षमता उसमें है या नहीं । जिसकी सुरक्षा नहीं की जा सकती, वह दूसरों के हाथ पड़ता है और इस छीन-झपट में वह घाटा ही उठाता है, जिसे किसी की कृपा का अप्रत्याशित अनुदान मिला था । प्राप्त करने के, याचना के लेकर चोरी करने वजह के अनेक तरीके हो सकते हैं, पर उपलब्धि की सुरक्षा बलिष्ठता, हिम्मत एवं सूझबूझ के सहारे ही बन पड़ती है ।

सिंहासन बत्तीसी की कहानी है कि राजा विक्रमादित्य का स्वर्ण सिंहासन किसी टीले में गाड़ा था । उस टीले पर जो कोई भी जा बैठता, विद्वानों की-सी बातें करता । समाचार राजा भोज तक पहुँचा । वहाँ खुदवाया गया, तो शोभायमान सिंहासन निकला । राजा ने उसे अपने उपयोग में लेना का निश्चय किया । मुहूर्त निकला, पर जैसी ही वह पैर रखने को हुआ, वैसे ही सिंहासन की बत्तीस स्वर्ण पुतलियों में से एक बोली—"विक्रमादित्य-के से गुण होने पर ही इसमें बैठने के अधिकारी बन सकते हो ।" पूछने पर पुतलियों ने बारी-बारी करके विक्रमादित्य की विशेषताओं का वर्णन किया । अब भोज ने अपने में वैसी विशेषताएँ नहीं पायीं, तो पुतलियाँ सिंहासन को आकाश में उड़ा ले गईं ।

इस कथानक को उन सभी प्रसंगों में प्रयुक्त किया जा सकता है, जिनमें उपलब्धियों की सुरक्षा का प्रश्न सामने आता है और सदुपयोग—सुरक्षा का प्रश्न हल न कर पाने पर जो मिलने वाला था या मिल सकता था, उससे वंचित रहने की ही स्थिति बन जाती है । दाता की वरिष्ठता सभी मानते हैं, पर ग्रहीता की पात्रता के बिना या तो कुछ महत्त्वपूर्ण जैसा मिलता ही नहीं, यदि मिलता है तो वह मार्ग से बह जाते हैं, जिसमें दोनों के रोने रुलाने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं आता । इससे तो अच्छा होता कि कुछ प्राप्त करने से पूर्व अपनी स्थिति, योग्यता और पात्रता को सम्भाला-सुधारा जाय ।

लोक-व्यवहार में यही चलता है और पारलौकिक सिद्धान्तों में भी इसी का कार्यान्वयन होता है । दानी लोग सुपात्रों की बढ़-चढ़कर सहायता करते हैं, किन्तु कुपात्रों की ओर से मुँह फेर लेते हैं और किसी प्रकार कुछ दे-दिलाकर अपना पीछा छुड़ाते हैं । भिखारियों को कौन निहाल करता है ? किन्तु ऊँचा उद्देश्य लेकर चलने वाला गाँधी, मालवीय, श्रद्धानन्द की झोलियाँ बात-की-बात में भरती रही हैं । यह पात्रता की ही प्रतिफल और चमत्कार है ।

यह कथन सही नहीं है कि दानी नहीं रहे, याचक भटकते हैं, पर सही बात यह है कि दानी भटकते हैं और याचक को ढूँढ़ते हैं, पर वे कहीं मिलते नहीं । कन्या के सयानी हो जाने पर उसका पिता उपयुक्त जामाता ढूँढ़ता-फिरता है, मिल जाता है तो खुशी का ठिकाना नहीं रहता । वह कन्या का हाथ उसके हाथ में सौंपता है । साथ ही वस्त्रालंकार भी सत्कार समेत भेंट करता है । यह बात महामानवों, सिद्ध पुरुषों और देवी-देवताओं की है । वे अपनी दिव्य सम्पदा सत्पात्रों को सौंपने के लिए आकुल-व्याकुल फिरते हैं, किन्तु सत्पात्र कहीं खोजे नहीं मिलते, फिर वे दें किसे ? अक्षत गन्ध चढ़ाकर ओंधे-सीधे अक्षर रटकर इतने मात्र से भक्त बनते हैं और तरह-तरह की मनोकामनाएँ प्रस्तुत करते हैं । यह विचित्र जेबकटी जब सफल नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

होती तो जिनसे आकांक्षाएँ लगाई थीं उन्हें दर्जनों गाली देते और भक्ति-भाव को झूठा बताते हैं । यही है आज की विडम्बना जिससे पूजा जा और भक्ति के सिद्धान्त गलत साबित होते हैं और उलाहने देने सुनने का अवसर मिलता है ।

देवी-देवता और परब्रह्म की विभिन्न फ्रीक्वैन्सी हैं रेडियो स्टेशन से प्रसारण विभिन्न तरंगों पर होते हैं । यह फ्रीक्वैन्सी अपनी गतिशीलता पर अलग-अलग स्तर के गद्य-पद्य प्रसारण करती हैं , पर उन्हें खुले कानों में कहीं भी सुनना चाहें तो कुछ पल्ले न पड़ेगा । सुनने का सही तरीका यह है कि अपने पास रेडियो ट्रान्जेस्टर होना चाहिए । उसी के भीतर लगे हुए यन्त्र उपकरण प्रसारित आवाज को पकड़ते और सुनाते हैं । एक ही समय में अनेक स्टेशन बोलते हैं । अपनी-अपनी बात कहते हैं । पर वे आवाजें आपस में मिलती नहीं । अलग-अलग तरंग प्रवाहों पर उनकी आवाजें चलती हैं ।

सिद्ध पुरुष शिष्यों की तलाश में रहते हैं और देवता भक्तों की । समझा इससे ठीक उलटा जाता है कि देवता निर्गुण हैं और सिद्ध पुरुष ढूँढ़े नहीं मिलते । पर बात इससे सर्वथा उलटी है । कुपात्र को कोई धनी-मानी भी अपनी दौलत नहीं लुटाता है । अनमने मन से ही कुछ देकर टालता है । ज्यादा गिड़गिड़ाने पर उसे दुत्कार भी देता है । जिसके पास देने को है उसमें इतनी बुद्धि भी होती है कि किसी को देते समय यह देखे कि लेने वाला प्रामाणिक है या नहीं । जो दिया जायेगा उसका सदुपयोग करेगा या नहीं ? यदि प्रतीत हो जो दिया जा रहा है उससे दुष्टता या मूर्खता बढ़ने में सहायता मिलेगी तो उदार मन वाला भी हाथ सकोड़ लेता है ।

चापलूसी हर जगह काम नहीं देती । मात्र अहंकारी अविवेकी ही उस जाल-जंजाल में फँसते हैं । देवताओं या सिद्ध पुरुषों को इस स्तर का नहीं समझा जाना वाहिए कि सूखी और झूठी मनुहार के सहारे या छुट-पुट बाल विनोद जैसे उपहारों से उन्हें फुसलाया जा सकता है । उचित अनुचित कैसी ही मनोकामना की पूर्ति के लिए उनका वरदान अनुदान पाया जा सकता है । ऐसे हथकन्डों से तो सामान्य बुद्धि वाले भी अपनी जेब नहीं काटते फिर देवाताओं को क्यों इतना ना समझा माना जाय कि वे नाक रगड़ने- गिड़गिड़ाने वाले हर व्यक्ति को अपने भक्त साथ ही प्रामाणिक सत्पात्र मान लेंगे । साथ ही कामनाओं की झोली मणि-मुक्तकों से भर देंगे ।

देवताओं का सिद्ध पुरुषों का अनुग्रह हर सत्पात्र पर अनायास ही बरसाता है । बादल बिना मांगे बरसते हैं । वृक्ष फलते-फूलते और छाया तथा लकड़ी से हर किसी को निहाल करते हैं । पर साथ ही यह शर्त भी जुड़ी हुई है कि जो माँगा जा रहा है उसके पीछे सत्प्रयोजन काम करते हैं । भागीरथ के अनुरोध को गंगा ने टाला नहीं और वे धरती पर बहने के लिए सहमत हो गईं । मारीच भस्मासुर जैसे वरदान के अवसर पाकर भी अपना सर्वनाश कर बैठे । यह बात सब पर सर्वदा लागू होती है ।

प्राचीनकाल में तीर्थों की स्थापना, ऐतिहासिक कारणों तथा प्रकृति विशिष्टताओं के आधार पर ही नहीं हुई थी वरन् उन स्थानों पर बने ऋषि आश्रमों की गतिविधियों ने वहाँ की गरिमा तथा मान्यता बढ़ाई थी । ऋषि आश्रमों में बालकों के लिए गुरुकुल, व्यस्तजनों के लिए तीर्थसेवन तथा परमार्थियों के लिए आरण्यकों की त्रिविध व्यवस्था रहती थी । तीनों ही स्तर के लोग वहाँ साधना करते, प्रशिक्षण पाते तथा प्रेरणाप्रद वातावरण का असाधारण लाभ लेते थे । ऐसे कारणों से ही तीर्थों की स्थापना हुई थी । उन कसौटियों पर कसने के उपरान्त ही कल्प साधना जैसे परिष्कार-उपचार की बात सोचनी चाहिए ।

सफल साधना की पृष्ठभूमि और आधार

ऐसे वातावरण में निवास करने का जिन साधकों को सुयोग मिले, उन्हें इस सौभाग्य का समुचित लाभ उठाना चाहिए । इस अवसर को ऐसे ही असमंजस में नहीं गँवा देना चाहिए । असमंजस यह कि मन कहीं और शरीर कहीं रहे । जो बताया या कराया जा रहा है । उसे उथले रूप में लिया गया और उपेक्षापूर्वक बेगार भुगतने के लिए, लकीर पीटने के लिए जैसे-तैसे, आधे-अधूरे, काने-कुबड़े रूप में निपटाया जाता रहे । ऐसी स्थिति उन लोगों की होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिनका मन घर पर पड़ा रहता है और शरीर जेल के कैदी की तरह लोक-लाज में बँधकर किसी प्रकार समय काटता रहता है । ऐसी दशा में वह लाभ मिलना सम्भव ही नहीं जिसके लिए यह व्यवस्था बनाई गई है और सम्मिलित होने के लिए आया गया है ।

साधना शारीरिक श्रम को नहीं कहते । श्रम करते रहने में श्रमिक बेमन से भी समय काटते और पैसा कमाते देखे गए हैं, पर विचारणा और भावना के क्षेत्र में वैसा बन सकना सम्भव नहीं । कोई विद्यार्थी किताब पढ़ता-सुनता तो रहे पर समझे कुछ नहीं तो उसका उत्तीर्ण होना कठिन है । भावना क्षेत्र तो उससे भी ऊँचा है । उसमें क्रिया, विचारणा और भावना तीनों का समुचित समावेश होना चाहिए । तत्परता ही नहीं तन्मयता भी बढ़ती जानी चाहिए ।

इस सन्दर्भ में यह मान्यता विकसित करनी, चाहिए कि यह सुयोग दैवी अनुग्रह से ही मिला है । इन सौभाग्य का लाभ पूरी तरह उठाया जाय । इस दिनों मन बिखरने दिया जाय न शरीर को आलस्य-प्रमाद में समय गँवाने दिया जाय । घर का चिन्तन एक प्रकार से छोड़ ही दिया जाय । चिन्तन घर का चलता रहे और शरीर यहाँ घिसटता रहे तो इस उपहासास्पद स्थिति में दोनो ही क्षेत्रों की हानि होगी । घर की हानि इसलिए कि शान्ति कुंज आकर घर का काम छोड़ा गया । यदि घर ही रहते तो घर का काम किया जा सकता था । चले आने पर तो वह भी नहीं हो सकता । यही बात युग तीर्थ में सम्पन्न की जा रही युग साधना के सम्बन्ध में भी है । यदि मन को भी यहीं रोक रखा गया होता तो श्रद्धा, प्रज्ञा निष्ठा का भी समावेश रहता है और क्रिया के साथ विचारण भावना का समुचित संयोग रहने से दोनों तार मिलने पर बिजली की धारा बहती है, दो पहिए की गाड़ी आगे चलती है ।

होना यह चाहिए कि जितने दिनों साधना के लिए स्थान विशेष में रहा जाय, उतने दिनों अपने आपको गृह निवृत्त, एकान्त सेवी, योगी-तपस्वी की मनोभूमि बनाकर रह जाय । अपने कमरे को एक गुफा माना जाय और जिस प्रकार अपनी गुफा में एकान्त सेवन करते हैं लगभग उसी स्तर की मनोदशा अपनाकर रहा जाय । इन दोनों सांसारिक समस्याएँ सुलझाने, लोगों के साथ उलझने, लिपटने से दूर रहकर आत्म समीक्षा में निरत रह जाय । संचित कुसंस्कारों से छूटने और उज्ज्वल भविष्य का ढाँचा खड़ा करने की योजना बनाने में संलग्न रहा जाय । इसके लिए चिन्तन, स्वभाव, समय निर्धारण, कार्यक्रम, व्यवहार में जो परिवर्तन अभीष्ट है उसका शुभारम्भ इन्हीं दिनों किया जाना चाहिए और इस अवसर को अभीष्ट प्रयोजन के लिए सर्वोत्तम मुहूर्त मानना चाहिए ।

क्षुद्र और महान व्यक्तियों के बीच जो महत्त्वपूर्ण अन्तर पाया जाता है उसमें ढर्रा ही प्रमुख अवरोध और बही प्रधान संयोग होता है । अभ्यस्त ढर्रा कुछ ऐसा विलक्षण होता है कि समूची जीवनचर्या उसी धुरी पर घूमती रहती है । महान परिवर्तनों के सन्धिकाल में मनस्थी लोग अपना ढर्रा ही बदलते हैं । पुरानी आदतें तथा रुचि भिन्नताएँ उसे स्वीकारने में जो आना-कानी करती हैं । उनसे कुछ दिन संकल्प और साहस के सहारे ही जूझना पड़ता है । इसके बाद तो सब कुछ इतना सरल स्वाभाविक हो जाता है कि अपनाई हुई रीति-नीति दिशाधारा ऐसी लगती है मानो सदा से इसी ढर्रे के बीच गुजारा होता रहा है । जेल के कैदी, अस्पताल के मरीज, खानाबदोश, शिकारी, आवारागर्द और जहाँ-जहाँ छिपते फिरने वाले चोर डकैत तक जब अभ्यस्त ढर्रे में दिन काटते हुए किसी प्रकार की कठिनाई अनुभव नहीं करते तो फिर कोई कारण नहीं कि उत्कृष्ट आदर्शवादिता के अनुरूप उज्ज्वल भविष्य की जो प्रगतिशील रूपरेखा बनाई जा रही है, वह कुछ ही दिन में सुगम एवं व्यावहारिक न बन जाय । भावी जीवनचर्या का निरूपण इन्हीं दिनों होना चाहिए । जब भी अवकाश मिले तब यही ताना-बाना बुनते रहना चाहिए । अपने आपको सर्वसाधारण की, नर पशुओं की श्रेणी से ऊँचा उठाकर असाधारण, जाग्रत एवं महान प्रयोजन के लिए अवतरित हुआ व्यक्तित्व अनुभव करना चाहिए । सामान्य को असामान्य क्षुद्र को महान बनाने में जिस सूझ-बूझ और साहसिकता के साथ निर्धारण करना और ढर्रा बदलना पड़ता है । उसके लिए ठीक यही समय है जो साधना की इस अवधि में ईश्वर की असीम कृपा से हस्तगत हो रहा है ।

निर्धारित साधनाओं में से प्रत्येक में पूरा मनोयोग लगाना चाहिए और निर्धारित विधि-विधान को भली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भाँति समझकर उसे यथावत् करने का प्रयत्न करना चाहिए । जितनी रुचि जगेगी उतना ही मन लगेगा और उतना ही आनन्द तथा प्रतिफल उपलब्ध होगा । प्रमुख बात है—अनुशासन का परिपालन, समय का निर्धारण तथा हर घड़ी व्यस्त रहने का उपक्रम । आलस्य-प्रमाद को हटा दिया जाय । जो भी काम सामने हो उसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर भली प्रकार सम्पन्न करने का प्रयत्न किया जाय ।

मूल प्रश्न है साधना अवधि पूरी करने के उपरान्त घर पहुँचने पर यह कैसे सिद्ध किया जाय कि 'साधना' कितनी सार्थक हुई या व्यंग-विनोद का निमित्त कारण बनी । शरीर संरचना में अन्तर आना कठिन है किन्तु गुण, कर्म, स्वभाव में भाव संरचना में महत्त्वपूर्ण हेर-फेर करना निश्चित रूप से सम्भव है । साधकों को यही करना चाहिए । इस सन्दर्भ में कुछ प्रसंग ऐसे हैं जिनमें यदि थोड़ा-सा परिवर्तन स्थायी रूप से करने का निश्चय कर लिया जाय तो उसका आश्चर्यजनक सत्परिणाम सामने हाथों-हाथ उपलब्ध होने लगेगा ।

व्यक्ति, परिवार और समाजगत जीवन का पुनः निर्धारण इन तीनों क्षेत्रों के लिए निर्धारित पंचशीलों के आधार पर करने का प्रयत्न किया जाय । तीनों के निर्धारित सूत्र एवं अनुशासन ऐसे हैं । जिन पर दिन में कम से कम एक बार बैठकर विचार कर ही लिया जाया करे कि इनमें से किन्हें कितनी मात्रा में किस प्रकार कार्यान्वित किया जाना सम्भव है । सब न सही, पूरी तरह न सही, उनमें जितने बन पड़ें, जितनी मात्रा में सम्भव हो सके उतना कार्यान्वित करने में तत्परता बरती जाय । संकल्प इतना सजग रखा जाय कि पुरानी आदतों के दबाव में बार-बार फिसलन उत्पन्न न करे । श्रेष्ठ निश्चयों को निवाहने में सत्संकल्प बढ़ता है । उसी को मनोबल या आत्मबल कहते हैं । यही है वह क्षमता जिसके सहारे सामान्यों को असामान्य, क्षुद्रों को महान बनने का सौभाग्य हस्तगत हुआ है ।

⌘⌘⌘

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

योग और तप साधना द्वारा दिव्य शक्तियों का उद्भव

आत्म प्रगति के आधारभूत साधन : योग और तप

आध्यात्म विज्ञान की—ब्रह्म विद्या की—दो धाराएँ हैं—एक साधना, दूसरी उपासना । साधना का तात्पर्य है अपना चिन्तन उत्कृष्टता के और कर्तृत्व आदर्शवादिता के ढाँचे में ढालना । अनगढ़ जीवन को सुगढ़ बनाना । बैल, घोड़ा, रीछ, बानर, सर्प, सिंह जैसे पशुओं को सधा लेने से वे कितने उपयोगी सिद्ध होते हैं और पालने वालों का कितना हित साधन करते हैं, यह स्पष्ट देखा जाता है । कुम्हार साधारण मिट्टी से कितने सुन्दर खिलौने बना देता है । मूर्तिकार पत्थर से देव प्रतिमा गढ़ता है । चित्रकार अपनी कला से सामान्य कागज को हृदयस्पर्शी चित्र का रूप देता है । माली का कौशल सामान्य वनस्पतियों को सुरम्य उद्यान में बदल देता है । शरीर की साधना करके पहलवान—मस्तिष्क की साधना करके विद्वान—श्रम साधना करके धनवान बनते रोज ही देखा जाता है । स्वर्णकार के हाथों में जाकर धातुखण्ड आभूषण के रूप में और सामान्य लोहा औजारों के रूप में परिणत होता है । मनुष्य ही हाड़-माँस से बनी काया जीवन साधना के सहारे महामानव, मनीषी ऋषि, देवता एवं परमात्मा के रूप में विकसित हुई देखी जा सकती है । 'साधन से सिद्ध' को उक्ति इतिहास के पृष्ठों पर और वर्तमान के पर्यवेक्षण में हम पग-पग पर सार्थक होते देखते हैं ।

स्वाध्याय, संयम, सेवा के अतिरिक्त जीवनोत्कर्ष का अति महत्त्वपूर्ण आधार साधना ही है । अस्त-व्यस्तता को, व्यवस्था में, अनुशासन में बदलने से अपने भीतर से ही ऐसा नया उभार, नया वर्चस उत्पन्न होता है, इसी को अप्रत्याशित दैवी अनुग्रह जैसा चमत्कार समझा जाने लगता है । आत्म-चिन्तन द्वारा दोष-दुर्गुणों को ढूँढ़ निकालना—आत्मसुधार द्वारा विकृतियों की जड़ें उखाड़ना—आत्मनिर्माण द्वारा सत्प्रवृत्तियों को स्वभाव का अंग बनाना—आत्मविकास द्वारा आत्मीयता का क्षेत्र सुविस्तृत करते जाना—यही हैं वे चतुर्विध प्रयोग जिनके सहारे जीवन साधना सम्पन्न होती है, इन्हीं आधारों को अपनाने से आत्मोकर्ष के लिए की गई योगभ्यासी तपश्चर्याओं में उत्साहवर्धक सफलता मिलती है ।

उपासना आत्मचेतना की प्रस्तुत क्षमताओं को उभारने का वैज्ञानिक प्रयोग है । रसायनशास्त्री विषैले पारे को अमृतोपम मकरध्वज बना देते हैं । वैज्ञानिक सामान्य रेत से प्रचण्ड अणु-शक्ति का उद्भव करते हैं । सामान्य पानी और डिस्टिल्ड वाटर की क्वालिटी में बड़ा अन्तर होता है । कच्चे लोहे को परिष्कृत करके बहुमूल्य फौलाद (इस्पात) बनाया जाता है । इसी प्रकार साधना से व्यक्तित्व का असाधारण विकास होता है । फलतः उसमें अनेकानेक सफलताएँ खींच बुलाने की सामर्थ्य उत्पन्न हो जाती है । वृक्षों का चुम्बकत्व आकाश में उड़ते हुए बादलों को खींच लेता है और उन्हें जल बरसाने के लिए विवश करता है । फूल जब खिलता तो भौंरे, मधुमक्खी, तितली, सभी उसका मनुहार करने आते हैं । प्रतिस्पर्धा में जीतने वाले को पुरस्कार मिलता है । अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण होने वाले छात्रवृत्ति प्राप्त करते हैं । वर्षा चाहे कितनी ही क्यों न होती रहे पल्ले उतना ही पड़ेगा जितना कि अपने बर्तन का घेरा हो । स्वांति वर्षा के जल से कुछ विशिष्ट सीपों में ही मोती उत्पन्न होते हैं सब में नहीं । आत्मशोधन की धुलाई जितनी अच्छी तरह से हो सकेगी उतनी ही भगवद्भक्ति की साधना उपचारों की रंगाई का प्रभाव दिखाई देगा ।

साधना के दो चरण हैं—एक 'योग' और दूसरा, 'तप' योग का अर्थ है अपने को लिप्सा और लालसा के भवबन्धनों से मुक्त करके आदर्शवादिता के प्रति आत्मसमर्पण । ईश्वर को आत्मसमर्पण करना उसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रकार होता है जैसा कि नदी अपने आपको समुद्र में, ईंधन आग में और पतंगा दीपक में अपनी सत्ता घुला देते हैं । अपनी भौतिक महत्त्वाकांक्षाओं को लालसा और लिप्साओं को पैरों तले रोंदकर ईश्वरीय संकेतों और आदर्शों का अनुसरण करने का साहस जुटाते हैं । योगी की यही मनःस्थिति होती है । आत्मसमर्पण का यही रूप है । ईश्वर के हाथों अपने जीवन की बागडोर सौंप कर सत्कर्मों, सद्विचारों एवं सद्भावों को कार्यान्वित करने में जो संलग्न है वस्तुतः वही सच्चा भगवत्भक्त और सच्चा योगी हैं ।

तप का अर्थ है तपाना । उत्कृष्टता एवं आदर्शवादिता अपनाने में जो कष्ट उठाने पड़ते हैं उन्हें साहस एवं प्रसन्नता के साथ आमन्त्रित एवं शिरोधार्य करना । 'चरित्र-निष्ठा' की कसौटी और 'समाज-निष्ठा' की अँगीठी पर हम अपने आपको तपाकर प्रामाणिकता सिद्ध करने वाले 'तपस्वी' ही ईश्वर के साथ अपने आपको जोड़ पाते हैं । जुड़ जाने का अर्थ है उसके आदेशों का अनुसरण करना, पतिव्रता को पति की इच्छानुकूल चलना पड़ता है । भक्त के लिए उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्तृत्व के रूप में ईश्वरीय आदेशों के अनुरूप अपने दृष्टिकोण एवं क्रियाकलाप को ढालने का साहस जुटाना पड़ता है । इस साहसिकता को व्यवहार में उतारना ही तप साधन है ।

ईश्वर के साथ अपने आपको जोड़ने में जीवन परिष्कार की साधना के अतिरिक्त अन्तःकरण में श्रद्धा तत्व विकसित करने के लिए उपासना का अवलम्ब न लेना पड़ता है । स्थूल शरीर की साधना कर्मयोग से सूक्ष्म शरीर की ज्ञान योग से सम्भव होती है । इसके लिए क्रियाकलाप और दृष्टिकोण में उत्कृष्टता का समावेश करना पड़ता है । जीवात्मा का तीसरा कलेवर 'कारण' शरीर है । उसका परिष्कार श्रद्धा के बीजारोपण एवं अभिवर्धन से ही हो सकता है । इसके लिए उपासना की प्रक्रिया अपनायी जाती है । ईश्वर और जीव को परस्पर जोड़ने का कार्य श्रद्धा के सहारे ही सम्भव होता है । आत्मिक पवित्रता एवं प्रखरता बढ़ाने के लिए उपासना को एक प्रकार से अनिवार्य आधार ही माना जाता रहा है । यह तीसरा आधार भक्ति योग है । ज्ञान, कर्म और भक्ति का समन्वय होने से त्रिवेणी संगम बनता है । यही त्रिपदा गायत्री का स्वरूप एवं उद्देश्य है ।

उपासना को नित्य कर्म में सम्मिलित रखने की शास्त्र मर्यादा है । ऋषियों ने इसे आवश्यक धर्म कर्त्तव्य माना है । वातावरण में घुमड़ती रहने वाली विकृतियों के अवांछनीय प्रभाव का परिशोधन करने के लिए उपासना द्वारा स्वच्छता व्यवस्था रखी जाती है और अन्तरात्मा का प्रवाह, परम शक्ति की समीपता तक पहुँचने की दिशा में बहता रहता है । ईश्वर के साथ गहरी घनिष्ठता उत्पन्न करने और उस सम्पर्क से सब प्रकार सुसम्पन्न बनने का अवसर मिलता है । समर्थ तत्वों में सर्वोपरि ईश्वर है । उपासना के आधार पर उसके साथ घनिष्ठता उत्पन्न कर लेना परम पुरुषार्थ है । इससे अधिक महत्त्वपूर्ण एवं लाभदायक दूसरा और कोई प्रयास हो ही नहीं सकता । जीवन हो हर दृष्टि से समृद्ध, सशक्त एवं समुन्नत बनाने में ईश्वरीय अनुग्रह की जितनी उपयोगिता है उसकी तुलना और किसी सिद्धि एवं उपलब्धि के साथ हो नहीं सकती ।

उपासना को बीज कहा जाय तो साधना को भूमि मानना पड़ेगा । उपासना के क्रिया-कृत्यों में संकेत रूप में जीवन साधना का ही मार्ग दर्शन है । उपासना को व्यायाम कहा जाय तो साधना को आहार-विहार की उपमा दी जायेगी । उपासना उसी की फलित होती है जो उसे साधना के खाद-पानी से सींचता है । उपासना को मनुष्य की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है । इस आधार पर उस अनन्त जीवन-कर्मफल—उत्कृष्टता की सर्वोपरि सत्ता, मर्यादा और अनुशासन की सृष्टि व्यवस्था समग्र पवित्रता जैसे महत्त्वपूर्ण तथ्यों पर आस्था बनी रहती है । आत्मा को परमात्मा बनने के लिए उपासना से प्रेरणा मिलती है । ऐसे ही अनेकों सत्परिणाम उपासना प्रक्रिया के साथ जुड़े हुए हैं और उसे आवश्यक धर्म-कृत्य माना गया है ।

इतने पर भी यह तथ्य सुनिश्चित है कि उपासना की प्रेरणा से अथवा स्वतन्त्र रूप से आध्यात्मिक प्रगति के पथिक को आत्म-शोधन एवं आत्मनिर्माण की प्रचण्ड संकल्प शक्ति के साथ प्रखर चेष्टा करनी पड़ती है । अभ्यास न होने के कारण उस परिवर्तन में जो कठिनाई अनुभव होती है उसे प्रसन्नता और साहसिकता के साथ स्वीकार करना पड़ता है । इस प्रयत्नशीलता को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शास्त्रकारों ने तपश्चर्या नाम दिया है । इसमें शरीर और मन की दिशा धाराओं को उत्कृष्टताओं के साथ जोड़ना पड़ता है । आत्म-परिष्कार एवं आत्म-विकास के लिए योग साधना की तरह—चिन्तन में उत्कृष्टता के समन्वय की तरह ही कर्म क्षेत्र में आदर्शवादिता को भी अविच्छिन्न बनना पड़ता है । योग और तप दोनों की ही आत्मिक प्रगति के लिए अनिवार्य आवश्यकता है ।

तपश्चर्या का मार्ग साहसी शूरवीरों का है । पराक्रमी और पुरुषार्थी ही अपने-अपने क्षेत्रों में महत्त्वपूर्ण सफलताएँ प्राप्त करते रहे हैं । अपनी विकृति एवं मूर्छना के रूप में दृष्टिगोचर होने वाले सैकड़ों कुसंस्कार ही दुष्ट कौरव हैं । उन्हीं से अपने मित्र एवं भक्त अर्जुन को लड़ा देने का आग्रह भगवान कृष्ण कर रहे थे । इसके लिए आवश्यक उद्‌बोधन और साहस देकर उन्होंने अर्जुन को महाभारत में प्रवृत्त किया था और स्वयं उसका रथ चलाया था । साधना समर के रूप में यही महाभारत हर साधक को लड़ने के लिए अर्जुन जैसी भूमिका निभानी पड़ती है । वासना, तृष्णा, अहंता के शत्रुओं को परास्त कर लेने पर उस दिव्य साम्राज्य का स्वामित्व हाथ में आता है, उसकी तुलना में संसार क्षेत्र के चक्रवर्ती राज्य और कुबेर की धनराशि को भी तुच्छ कहा जा सकता है ।

छोटे-बड़े कामों में उनके स्तर के अनुरूप तत्परतापूर्वक आवश्यक प्रयत्न एवं साहस जुटाने वाले ही सफलता प्राप्त करते हैं । आत्मिक जगत की विभूतियों को उपलब्ध करने का भी यही उपाय है । सस्ती पगडण्डी ढूँढ़ना व्यर्थ है । उचित मूल्य चुकाने पर ही आवश्यक वस्तुएँ खरीदी जाती हैं । कम श्रम और कम त्याग करने पर मन बहलाने मात्र की नकली वस्तुएँ ही हाथ लग सकती हैं । आत्मोत्कर्ष एवं ईश्वरीय अनुग्रह जैसी महान विभूतियों के लिए तपश्चर्यायुक्त योग साधना आवश्यक है । यह कठिन नहीं, सरल है । इस मार्ग पर कोई भी बाल-वृद्ध, नर-नारी अपनी-अपनी स्थिति के अनुरूप छोटे या बड़े कदम बढ़ाते हुए बढ़ सकता है । इसमें असफलता का या विपरीत परिणाम को कोई खतरा नहीं है । हाँ, जो जितना श्रम एवं साहस जुटा सकेगा उसे उसी अनुपात की उपलब्धियाँ मिल सकेंगी इतना तो स्पष्ट है ।

भागीरथ ने धरती पर गंगा लाने कां स्वयं श्रेय पाने और संसार का कल्याण करने की सफलता तप, साधना से ही प्राप्त की थी । हिमिराज की मानुषी कन्या पार्वती ने महाशिव की अर्धांगिनी बन सकने की सफलता तप के सहारे ही उपलब्ध की । ध्रुव ने तप का आश्रय लेकर ही परम पद पाया । विश्वामित्र तप-बल की सामर्थ्य से ही दूसरे प्रकार की सृष्टि बनाने का साहस कर सके थे । तपस्वी दधीचि की अस्थियों के बने बज्र द्वारा ही दुर्दान्त दैत्य वृत्तासुर मारा जा सका । ब्रह्माजी ने तप की शक्ति से ही यह सृष्टि बनाई । परशुराम ने अनीति का भार भूतल पर से उतारने की प्रचण्डता तप-बल के सहारे ही प्राप्त की । चाणक्य ने चन्द्रगुप्त से, समर्थ रामदास ने शिवाजी से, परमहंस ने विवेकानन्द से, सन्दीपन ने कृष्ण से, विश्वामित्र ने राम से अनेकों महत्त्वपूर्ण कार्य अपनी तपःशक्ति के अनुदान देकर ही सम्पन्न कराये थे । मनु और शतरूपा ने तप करके भगवान को गोदी में खिलाने और मानवी आचार संहिता बनाने का श्रेय प्राप्त किया था । गौतम बुद्ध ने सामान्य मनुष्य से भगवान बनने और युगक्रांति का संचालन करने की क्षमता तप-साधना से ही प्राप्त की थी । महान ऋषियों का प्रधान बल उनकी तप सम्पदा ही रही है । भगवान राम अपने चारों भाइयों समेत अयोध्या छोड़कर हिमालय पर तप करने चले आये थे । पांडवों का अन्तिम जीवन भी इसी प्रयोजन में लगा था । प्राचीन काल की परिपाटी ही यह थी । ब्रह्मचर्य और गृहस्थ में आधा जीवन ही लगता था । जीवन के उत्तरार्द्ध को बानप्रस्थ और संन्यास को तप साधना में ही लगाया जाता था । हिन्दू धर्म वर्णाश्रम धर्म कहलाता है । इस परम्परा में व्यक्ति और समाज की सर्वतोमुखी सुव्यवस्था एवं प्रगति सन्निहित रही है ।

चिन्तन की उत्कृष्टता प्राप्त करने के विविध प्रयासों को योग कहते हैं और कर्म को आदर्श बनाने का नाम ही तप है । इसके लिए तप तितीक्षा अथवा भजन-पूजन के क्रिया-कलाप जो भी अपनाएँ जायें उनका मूल संकेत आत्म-परिष्कार ही रहता है । इस दिशा में जितनी प्रगति होती है उसी अनुपात में ईश्वरीय अनुग्रह, स्वार्थ मुक्ति एवं सिद्धि चमत्कार जैसी अनेकानेक भौतिक एवं आत्मिक उपलब्धियाँ मिलती चली जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

योग साधनाओं का स्वरूप और प्रयोजन

योग का सामान्य अर्थ होता है—जोड़ना । आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ देने की प्रक्रिया आध्यात्म भाषा में 'योग' कहलाती है । इसे आरम्भ करने के लिए जिन क्रियाकलापों को अपनाना पड़ता है उन्हें 'साधन' कहते हैं । साधना अपने आप में एक छोटा उपकरण मात्र है । उसका महत्त्व इसलिए है कि वह 'साध्य' को प्राप्त करने में सहायता करती है । कई लोग साधन को ही 'साध्य' समझ बैठते हैं और उन उपचारों को ही योग कहने लगते हैं जो साधना प्रयोजन में प्रयुक्त होते हैं ।

योग-साधना में कई प्रकार के शारीरिक, मानसिक क्रियाकृत्य अपनाने पड़ते हैं । इनका उद्देश्य आत्म-चेतना को परमात्म चेतना से जोड़ने वाली मनःस्थिति उत्पन्न करना है । यह तथ्य ध्यान में रखकर चला जाय तो ही लक्ष्य की पूर्ति होनी सम्भव है । यदि चेतनात्मक परिष्कार के लिए प्रयत्न न किया जाय और मात्र उन क्रिया-कृत्यों को ही योगाभ्यास मान लिया जाय तो उस भ्रान्ति के कारण घोर परिश्रम करते रहने पर भी कोल्हू के बैल की तरह जहाँ से तहाँ बने रहना पड़ेगा।

शारीरिक श्रम में आसन, प्राणायाम, बन्ध मुद्रा, व्रत, मौन, नेति, धेति, वस्ति, न्यौलि, वज्रोली, कपाल भाँति भूमिशयन, सर्दी-गर्मी सहना, कीर्तन आदि कितने ही उपचार काम में लाये जाते हैं । इनका उद्देश्य स्वस्थता, समर्थता एवं पवित्रता उत्पन्न करना है ताकि मल भारों से लदे व्यक्ति को आत्मिक प्रगति की लम्बी मंजिल पार करने में सुविधा हो । इसी प्रकार मानसिक उपासनाओं में—जप, ध्यान, नाद, एकाग्रता, तन्मयता, स्वाध्याय, सत्संग आदि साधनों का आश्रय लिया जाता है ताकि चेतना को दिशा एवं प्रेरणा दी जा सके और उसे अपनी जीव असीमता को ब्रह्म असीमता में घुला देने के लिए आवश्यक प्रकाश एवं प्रशिक्षण मिल सके ।

लक्ष्यविहीन साधना मनोरंजक भटकाव ही कहा जा सकता है । शारीरिक और मानसिक क्रिया-कृत्यों को योगाभ्यास के आधार साधन मानना ही पर्याप्त है । उन कृत्यों को ही जादुई मान बैठता और उनकी प्रवीणता मिल जाने मात्र से लक्ष्य पूरा हो जाना मान लिया जायेगा तो यह विशुद्ध भ्रान्ति ही सिद्ध होगी । एक व्यक्ति दूसरे तक अपने मनोभाव पहुँचाने के लिए कागज-कलम का प्रयोग करता है । यह उपकरण निश्चय ही बड़े महत्त्वपूर्ण हैं । इनके बिना विचारों का आदान-प्रदान करने में बड़ी कठिनाई पड़ेगी । फिर भी यह मात्र कागज-कलम से पत्राचार का उद्देश्य पूरा नहीं होता उसमें भावों की अभिव्यक्ति का तथ्य जुड़ा ही रहना चाहिए । यदि ऐसे ही कागज पर कलम घिसते रहा जाय और कुछ भी टेड़ी-सीधी लकीरें बनाई जाती रहें तो उससे पत्र-व्यवहार द्वारा विचारों के आदान-प्रदान का उद्देश्य पूरा न हो सकेगा । लेखन क्रिया के साथ भावों की अभिव्यक्ति नितान्त आवश्यक है । योगाभ्यास में प्रयुक्त होने वाले उपचारों में मात्र शारीरिक-मानसिक हलचलों को ही सब कुछ मानकर सन्तुष्ट नहीं हो बैठना चाहिए । उत्कृष्ट प्रयत्न यह होना चाहिए कि आत्मा को परमात्मा से जोड़ देने पर उपयुक्त भाव चेतना उत्पन्न की जा सके । महत्त्व तो इस भाव (उभार) का ही है । वह उभरेगा तो गाड़ी आगे चलेगी अन्यथा तथाकथित योगाभ्यासों की हलचलें कुछ समय तक श्रम-साधना में जितनी कुछ अनुभूति दे सकती हैं, उसे देकर समाप्त हो जायेगी ।

योग को चित्तवृत्तियों का निरोध कहा गया है । चित्त की वृत्तियाँ 'प्रेम' को—वासना, तृष्णा, मोह, अहंता आदि भौतिक लिप्सा-लालसाओं की पूर्ति को ही सुखद मानती हैं, उन्हीं की इच्छा करती हैं और उन्हीं में निरत रहती है । पानी का स्वभाव नीचे की ओर गिरना है । इस पतनोन्मुख प्रवृत्ति को ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए वैसा ही प्रयत्न करना पड़ता है जैसे कुएँ से पानी खींचने अथवा तालाब का पानी टंकी में चढ़ाने के लिए । मन को ढीला छोड़ देने से वह जन्म-जन्मान्तरों की संग्रहीत एवं अभ्यस्त पशु-प्रवृत्तियों के अस्तबल में अपने आप घुस जायेगा । घड़े से गिरते ही पानी नीचे की ओर बहने लगता है । चित्त का भी यही स्वभाव है । उसे उलटने का जो पुरुषार्थ करना पड़ता है उसी को 'चित्तवृत्ति-निरोध' कहा जायेगा । महर्षि पातंजलि ने इसी प्रयास को (योग) कहा है ।

कई व्यक्ति चित्तवृत्तियों के निरोध की बात को नहीं समझते और मात्र 'चित्तनिरोध' को ही योग मान लेते हैं । उनका तात्पर्य 'एकाग्रता' से होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एकाग्रता होना ही उनकी दृष्टि में योगाभ्यास की सफलता है और उसका न होना असफलता । यह भ्रम है । एकाग्रता एक चीज है और एकाग्रता का अपना महत्त्व और अपना लाभ है—उसका औचित्य और उपयोग समझा जा सकता है, पर एकाग्रता को ही योग का—उपासना का आधार मान बैठना गलत है । एकाग्रता के भी स्तर हैं मैस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म में भी एकाग्रता प्रयुक्त होती है और देव प्रतिमा के समक्ष उसकी पूजा, आरती, स्तुति आदि से भी एकाग्रता का पाठ पढ़ा जाता है । पीछे यह बढ़ते-बढ़ते उस स्थिति तक भी पहुँच सकती है जिस तन्मयता, भाव समाधि, विचारशून्यता आदि का नाम दिया जा सके । यह अन्तिम और समय साध्य स्थिति है । लोग इसी को पहले दिन प्राप्त करना चाहते हैं ।

'काम में मन लगाना' एक गुण है । यह प्रयोग दैनिक जीवन की प्रत्येक क्रिया में करते रहना चाहिए । श्रम और मनोयोग के संमिश्रण से होने वाले लाभों को जानना चाहिए और आलस्य, प्रमाद से उत्पन्न होने वाली हानियाँ समझनी चाहिए । अपने काम में पूरी तत्परता, दिलचस्पी के साथ करने का अभ्यास डालें । यही स्वभाव 'भजन' में मन लगाने का भी आधार हो सकता है । जो लोग लापरवाही, उदासी एवं उपेक्षापूर्वक अपने काम करते हैं उनका भजन भी उसी प्रकार का होगा । भजन भी एक काम है और उसमें मन लगाना इस बात पर निर्भर है कि काम में मन लगाने की आदत है या नहीं । भजन में मन लगाने की पृष्ठभूमि विस्तृत है । इसके लिए पूरी कार्य-पद्धति को ही नये ढाँचे में ढालना होगा और दिलचस्पी तथा तत्परतापूर्वक काम करने की आदत विकसित करनी पड़ेगी । इस दिशा में जितनी चेष्टा होगी उसी अनुपात से प्रत्येक कार्य में मन लगेगा—साथ ही भजन में भी । हर काम को उपेक्षा और उदासी से करने वाले लोग मात्र भजन में ही मन लगाने की अपेक्षा रखेंगे तो उन्हें निराश ही होना पड़ेगा ।

एकाग्रता की स्थिति समय-साध्य है, उसके लिए धैर्य और प्रयत्नपूर्वक बहुत समय तक अभ्यास करते रहने की आवश्यकता होगी । वह स्थिति न आये तो भी उतना हर्ज नहीं, जितना समझा जाता है । आत्मिक प्रगति के लिए मन की दिशा और धारा बदल देने की आवश्यकता है, उतने भर से 'चित्त-वृत्ति निरोध' की योग आवश्यकता पूरी होने लगती ।

'प्रेय' की लिप्सा 'श्रेय' की आकांक्षा में बदली जानी चाहिए । पेट प्रजनन भर के लिए जीने में संलग्न पशुस्तरीय प्रवृत्ति को बदलकर आत्मा को परमात्मा स्तर तक विकसित करने की देवस्तरीय प्रवृत्ति में प्रवेश करना चाहिए । आकांक्षाएँ बदल जाने से मन की विचारणा और शरीर की कार्य-पद्धति में काया-कल्प प्रस्तुत हो जायेगा । प्रेय की निरर्थकता और श्रेय की सार्थकता में विश्वास बढ़ चले तो उसका प्रभाव कल्पना क्षेत्र में प्रत्यक्ष दिखाई पड़ने लगेगा ।

आत्मा को परमात्मा से मिलाने वाली यही सड़क है । श्रेय की प्राप्ति को लक्ष्य मानकर चलने से चित्तवृत्तियों में पूर्व की अपेक्षा असाधारण परिवर्तन हो जाता है । निकृष्टता उत्कृष्टता की दिशा में उलट पड़ती है, उसी ऊर्ध्वगमन को चित्तवृत्ति-निरोध कहा जाता है । पतनोन्मुख पशुप्रवृत्तियाँ जब उत्थान की दिशा में देव प्रवृत्तियों का रूप बना लेती हैं तो उस स्थिति को योग स्थिति कह सकते हैं । गीता में योगी की गतिविधियों का स्वरूप बताते हुए कहा है कि 'जब लोग सोते रहते हैं तब वह जागता है ।' 'जब लोग सोते हैं तब योगी जागता है'—इस रहस्यवाद के पीछे यही तथ्य छिपा है कि लोक प्रवाह में पशु-प्रवृत्तियों की ही प्रधानता है । इस प्रवाह को आत्मिक साहस के बल पर उलटने का नाम 'चित्तवृत्ति-निरोध' है । यही योगी का प्रबल पुरुषार्थ माना जाता है ।

एकाग्रता का अभ्यास क्रमशः होता है और वह समयसाध्य है । इसलिए उसमें उतावली बरतने की आतुरता प्रदर्शित करने की तनिक भी आवश्यकता नहीं । निरन्तर जीवन लक्ष्य का ध्यान रखा जाय तो उस धाराप्रवाह को 'एक दिशा' कहा जा सकता है और उससे एकाग्रता का वास्तविक प्रयोजन पूरा हो सकता है ।

वस्तुतः जिसे हम एकाग्रता कहते हैं वह सब चित्त की भाग-दौड़ को असीम से रोककर एक सीमित क्षेत्र में प्रतिबन्धित करना है । मन बार-बार भागता है और उसे पकड़-पकड़ कर बार-बार निश्चित ध्यान परिधि में लाया जाता है । यही प्रयोग चलता रहता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । पूर्ण एकाग्रता समाधि अवस्था है और वह पूर्णता तक जा पहुँचने पर ही मिलती है । उसके लिए किसी को भी अधीर नहीं होना चाहिए ।

हजार बार इस तथ्य को समझ लेना चाहिए कि पूर्ण एकाग्रता साधना काल की आरम्भिक प्रक्रिया या आवश्यकता किसी भी दृष्टि से नहीं है । उसके लिए न तो लालायित होना चाहिए न खिन्न । प्रयत्न करते रहना-भर पर्याप्त है । मीरा, सूर, चैतन्य, रामकृष्ण परमहंस आदि भक्तजनों की भावस्थिति का सूक्ष्म अध्ययन करने पर स्पष्ट हो जाता है कि वे एकाग्रता प्राप्त कर सके और अन्त में उनका लक्ष्य मिल गया । भक्त सम्प्रदाय में प्रणय, वियोग, अश्रुपात, समर्पण, आलिंगन जैसे भावोन्मादों की घटाएँ ही उमड़ती रहती हैं । उस मनःस्थिति में एकाग्रता किसी भी प्रकार सम्भव नहीं । यदि एकाग्रता ही सर्वोपरि होती तो भक्तजनों पर हर घड़ी छाया रहने वाला भावोन्माद तथा उसके उभार में उठने वाले हास्य, रोदन, नृत्य, अवसाद आदि की उद्विग्नता लक्ष्य प्राप्ति में बहुत बड़ी बाधा बन गई होती, पर ऐसा हुआ नहीं है ।

यहाँ एकाग्रता का महत्त्व घटाया नहीं जा रहा है और न उसे त्याज्य या उपेक्षणीय कहा जा रहा है । एकाग्रता की उपयोगिता में किसी को सन्देह नहीं होना चाहिए, इतने पर भी सर्वसाधारण के मन में जमी हुई उस भ्रान्ति का निराकरण होना ही चाहिए कि 'भजन में मन लगाना अर्थात् चित्त का एकाग्र होना आवश्यक है—वह है, तो भजन की सफलता नहीं है, तो असफलता—इस चिन्तन को हटाकर यों सोचना चाहिए कि 'चित्तनिरोध, नहीं 'चित्तवृत्तियों का निरोध' आवश्यक है । एकाग्रता नहीं 'एक दिशा' अभीष्ट है । यदि ऐसा बन पड़े तो समझना चाहिए कि योग साधना की सही पृष्ठभूमि बन चली ।

समूची ब्रह्म सत्ता को समझा जा सकना मनुष्य की छोटी बुद्धि के लिए असम्भव है । ब्रह्माण्ड बहुत बड़ा है, उसका विस्तार हमारी कल्पना शक्ति से बाहर है । अपनी पृथ्वी पर प्रकृति की जो कार्य-पद्धति है, अन्य लोकों में उससे भिन्न है । पृथ्वी के प्राणधारियों की आकृति, प्रकृति, चिन्तन एवं जीवन-यापन पद्धति में आकाश-पाताल जैसा अन्तर है । फिर अन्य लोकवासी चैतन्य प्राणियों की रीति-नीति के बारे में तो कहा ही क्या जा सकता है ? समूचा ब्रह्म न तो हमारी समझ में आ सकता है और न उसे समझने की आवश्यकता है । मानवी चेतना के साथ ब्रह्म चेतना का जितना अंश सम्बन्धित है, उस भाग को ईश्वर या परमेश्वर कहते हैं । हमारे आनन्द एवं उत्थान में उसी की भूमिका रहती है । अस्तु, साधना के लिए उसी छोटी ब्रह्म परिधि के साथ हमारा सम्पर्क मिला लेना पर्याप्त माना गया है । उपासना का केन्द्र बिन्दु यह ईश्वर ही रहता है ।

ब्रह्म एक है । अनेक रूपों में देवी-देवताओं की मान्यता से इस भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए कि वे एक दूसरे से पृथक् एवं स्वतन्त्र हैं । परमेश्वर असंख्य शक्तियों का भण्डार है । उसकी जिस क्षमता के साथ हमारा विशेष आकर्षण या लगाव होता है, उसी को प्रधान मानकर चलने से अभीष्ट शक्ति तत्व की अधिक मात्रा अपनी ओर आकर्षित करने का अवसर मिलता है । सूर्य की धूप में अल्ट्रावायलेट, अल्फावायलेट आदि अनेकों विशेष गुणों वाली क्षमताएँ सन्निहित रहती हैं । वैज्ञानिक उपकरणों की सहायता से शेष किरणों के समूह में से छाँटकर अपने लिए आवश्यक किरणों को ही पकड़ा और प्रयोग में लाया जा सकता है । ब्रह्म को सूर्य और उसकी असंख्य किरणों को असंख्य देवता माना जा सकता है । जो अभीष्ट हो, उस पर उपासना केन्द्रित की जा सकती है ।

आवश्यकतानुसार विशेष सूक्ष्म शक्ति उपार्जन करने के लिए अमुक देवी-देवताओं की उपासना की भी खण्ड साधना की जा सकती है, पर अपना अनुभव और परामर्श यह है कि समग्र ब्रह्म की साधना ही सर्वोत्तम है । आहार वही आदर्श माना जाता है जिसमें पोषण के सभी तत्व मौजूद हों । प्रोटीन कितना ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हो, अकेले उसी को खाना लाभदायक न रहेगा । अमुक देवता की उपासना अकेली प्रोटीन, अकेली कैल्सियम खाने की तरह है । आवश्यकता पड़ जाने पर चिकित्सा उपचार की तरह कोई विशेष तत्व अमुक मात्रा में लिया जाता है, इसी प्रकार विशेष प्रयोजन के लिए कोई देवसाधना उपयोगी हो सकती है, पर सर्वतोमुखी प्रगति के लिए सर्वकालिक साधना समग्र ब्रह्म की ही होनी चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यहाँ यह बात पूरी तरह ध्यान में रखने की है कि आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ा जाना ही योग का एकमात्र लक्ष्य है । इसके लिए चित्तवृत्तियों का निरोध, दिशा परिवर्तन अनिवार्य रूप से आवश्यक है । आखिर आत्मा और परमात्मा को मिलने की भूमिका को चित्त को ही सम्पादित करनी है वह अन्य दिशा में उलझा रहेगा तो लक्ष्य-प्राप्ति मार्ग पर बढ़ चलना किसके सहारे सम्भव होगा ? यदि चित्त की अस्तव्यस्तता सुव्यवस्था में बदली जा सके तो समझना चाहिए कि वह प्रयोजन पूरा होने ही वाला है जिसके लिए विविध साधनात्मक कर्मकाण्ड करने की आवश्यकता पड़ती है ।

विविध योग साधनाओं में मन एवं चित्त को सूक्ष्म, प्रखर और प्रकाशपूर्ण बनाया जाता है जिससे वह शरीर के अंग-प्रत्यंग का भेदन कर वहाँ की सूक्ष्म गतिविधियों का पता पा सकें । शरीर में ब्रह्माण्ड का अस्तित्व इसी विज्ञान के द्वारा जाना जा सका है । इन योग साधनाओं की वैज्ञानिक जाँच की जा सके तो मनुष्य जाति उन सूक्ष्म सत्यों से भी लाभान्वित हो सकती है जिन्हें देववाद कहकर या भावनावाद कहकर ठुकरा दिया जाता है । पर उनका महत्त्व इतना अधिक है कि मनुष्य का सारे का सारा जीवन ही इन्हीं के सहारे संचालित होता है ।

मनुष्य का शरीर अद्‌भुत और ईश्वरीय विलक्षणता से ओत-प्रोत है । इसमें ब्रह्माण्ड ही उतरा हुआ है । जो लोग इसे साधनाओं द्वारा जाग्रत कर लेते हैं, वह मुक्त हो जाते हैं, समर्थ हो जाते हैं । शरीर के नाश हो जाने पर भी उनका नाश नहीं होता । वे विराट् हो जाते हैं ।

साधन-राज्य के योग तत्व का अर्थ यही है कि हमारे भीतर भगवान की अनन्त शक्ति, अनन्त ज्ञान, अनन्त प्रेम और आनन्द निहित है । हमारी कामना, वासना, आसक्ति, हमारी अज्ञानता, हमारे कुसंस्कार, हमारा स्वार्थ, आत्म-सुख की स्पृहा, अहंकार और प्रतिष्ठा का मोह आदि उस भगवत् शक्ति के विकास में बाधा पहुँचाते हैं । अतएव हम जितना ही इन सब बाधाओं से मुक्त, शुद्ध, शान्त तथा पवित्र होंगे उतने ही भगवत्-भाव हमारे अन्दर प्रकाशित होंगे और हम साधन-राज्य में सफलता प्राप्त करेंगे ।

योग का उद्देश्य

योग और विज्ञान में सबसे भारी अन्तर यह है कि योग का ध्येय अतीन्द्रिय बातों को जानना है और विज्ञान का ध्येय इन्द्रियग्राह्य वस्तुओं को जानना है । यह बात भी सत्य है कि अतीन्द्रिय विषयों को जान लेने से इन्द्रियग्राह्य विषयों को भी हम जान लेते हैं, एवं योगानुभूति की सहायता से इन्द्रियग्राह्य एवं इन्द्रियातीत दोनों विषयों को जान लेना सम्भव और सहज है, तथापि योगदर्शन का प्रधान उद्देश्य आत्मदर्शन करना है, इस कारण योग के करिश्मे जनसाधारण के सन्मुख अनायास उपस्थित नहीं किए जा सकते । योगी का ध्यान पार्थिव वस्तुओं की ओर नहीं रहता । योगी पुरुष संसार के सामने आकर अपनी करामात दिखलाना नहीं चाहता । कारण, उसका ध्येय आत्मदर्शन करना है, न कि करामात दिखाना । आत्मदर्शन करने के साधन का मार्ग एक विशिष्ट दार्शनिक मतवाद के साथ ओतप्रोत रूप में सम्बन्धित है । इन सब कारणों से योगीजन लोकचक्षु के सामने आना पसन्द नहीं करते । लेकिन यदि कोई व्यक्ति यथार्थरूप में जिज्ञासु बनकर इन योगियों के पास जाता है तो योगीजन भी उसे यथार्थ मार्ग दिखलाना अपना परम कर्त्तव्य समझते हैं ।

वैज्ञानिक विचार प्रणाली का मूल तत्व यह है कि बिना परीक्षा किए हम किसी बात को न स्वीकार कर सकते हैं और न अस्वीकार ही कर सकते हैं । बिना परीक्षा किए किसी बात को स्वीकार करना अथवा अस्वीकार करना अवैज्ञानिक मनोभाव का परिचय देना है । जो लोग योग की बातों पर आक्षेप करते हैं, उनको उचित है कि वे योग की बातों को लेकर परीक्षा करें । बिना परीक्षा किए आक्षेप करना कूपमण्डूकता का परिचय देना है । स्वामी विवेकानन्द ने अमेरिका के विद्वज्जनों के सम्मुख प्रतिस्पर्धा के साथ ललकार कर यह कहा था कि योग की बातों पर विश्वास करने की कोई आवश्यकता नहीं है । ईश्वर को कोई माने या न माने, योग के सिद्धान्तों को कोई स्वीकार करे या न करे, विश्वास करने या न करने से कुछ विशेष आता-जाता नहीं, योग का दावा है कि योग के मार्ग पर चलने से अपने आप सबको प्रतीत हो जायेगा कि योग की बातें सत्य हैं अथवा निराधार । हमारे परम सौभाग्य से आज भी हमारे देश में ऐसे योगी पुरुष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्तमान हैं जो योग में कही हुई बातों की सत्यता का प्रमाण दे सकते हैं ।

योग दर्शन का मूल तत्व यह है कि एकाग्र मनःशक्ति की सहायता से एवं यम, नियम, आसन, प्राणायाम आदि साधन और क्रियाओं से व्यक्ति अपनी क्रमोन्नति को असम्भावनीय रूप में आगे बढ़ा सकता है । मनुष्यों की इन्द्रियाँ ज्ञान प्राप्त करने का साधन हैं । हमारी इन्द्रियों की शक्ति सीमित है, इस कारण हमारा ज्ञान भी बहुत संकीर्ण एवं अपूर्ण है । वैज्ञानिक जगत में यन्त्रों के आविष्कार से हम अपनी इन्द्रियों की शक्ति को अभावनीय रूप में बढ़ा लेते हैं । इस प्रकार मनुष्यों को यन्त्रों का व्यवहार करने की शक्ति खूब प्राप्त हो जाती है एवं बाह्य प्रकृति पर हम बहुत प्रभुत्व करने लगते हैं । लेकिन मनुष्य इस प्रकार से अपनी प्रकृति पर विशेष प्रभुत्व नहीं कर पाता । योग-साधन से मनुष्य अपनी प्रकृति पर भी प्रभुत्व स्थापित कर लेता है और बाह्य प्रकृति पर भी । योग-साधन की सहायता से मनुष्य अपनी इन्द्रियों की शक्ति को सर्वथा रूपान्तरित कर लेता है । अपने व्यक्तित्व को रूपान्तरित करके विश्व संसार को भी मनुष्य अनिर्वचनीय रूप में देख पाता है । योग-साधन के परिणामस्वरूप मनुष्य की जैविक क्रमोन्नति (Biological evolution) बहुत शीघ्र सम्पन्न होती है । साधारण प्राकृतिक नियमों के अनुसार भी जीवों की क्रमोन्नति हो रही है । इनका क्रम इतना धीमा है कि सहस्र वत्सरों में भी उन्नति का परिमाण पकड़ा नहीं जा सकता । लेकिन योग-साधन की सहायता से इस उन्नति के क्रम को हम इतना तीव्र कर सकते हैं कि शत-सहस्र वत्सरों का काम हम दस-बीस साल में ही कर सकते हैं । इन बातों का सबसे बड़ा प्रमाण तो यह है कि योग के मार्ग का अवलम्बन करके कोई मनुष्य इन सब बातों की परीक्षा कर सकता है । योग की सहायता से कोई भी व्यक्ति अपनी प्रकृति को रूपान्तरित कर सकता है ।

आधुनिक मनोविज्ञान की द्रुत उन्नति के कारण आज वैज्ञानिकों को प्रतीत होने लगा है कि मनुष्यों में इतनी छिपी हुई शक्तियाँ हैं जिनके प्रयोग के बारे में हम अभी कुछ भी नहीं जानते । इतना अवश्य समझा जाने लगा है कि एकाग्र मन की शक्ति प्रबल है । वैज्ञानिक आविष्कार के मूल में भी एकाग्र मनःशक्ति ही काम देती है । सर्वोपरि इस बात में कोई सन्देह नहीं कि प्रकृति के रहस्य का उद्‌घाटन करने में एकाग्र मनःशक्ति को छोड़कर और कोई साधन ही नहीं है । योग का रहस्य भी मनःशक्ति को एकान्त रूप में एकाग्र करने की प्रक्रिया में निहित है । वैज्ञानिकगण भी मनःशक्ति को एकाग्र करते हैं, लेकिन उस एकाग्र करने की प्रक्रिया को वे नहीं जानते । आइन्स्टाइन, प्लांक इत्यादि बड़े-बड़े धुरन्धर वैज्ञानिकों ने इस बात को मुक्तकण्ठ से स्वीकार किया है कि वैज्ञानिक खोज के मूल में एकाग्र मनःशक्ति ही फलवती है ।

मनःशक्ति की खोज करने वाले विलक्षण पण्डितगण आज पाश्चात्य देश में भी इस बात को स्वीकार करने लगे हैं कि इन्द्रियों की सहायता न लेकर भी मनुष्य ज्ञान प्राप्त कर सकता है । इस सन्दर्भ में डॉ. राइनेकृत 'एक्स्ट्रा सेन्सरी परसेप्शन' एवं 'न्यू फ्रान्टियर्स ऑफ दी माइन्ड', अपटान सिंक्लेयरकृत—'मेण्टल रेडियो', डॉ. अर्लेक्सस कैरेलकृत 'मैन द अननोन' तथा बैरेटकृत फिजिकल रिसर्च, जैसी अनुसन्धानपूर्ण पुस्तकों में बहुत कुछ इन पाश्चात्य मनीषियों ने लिखा है ।

कुछ अनुभूतियाँ ऐसी भी होती हैं जिनका वर्णन नहीं किया जा सकता । वल्कि यह कहना और अधिक सत्य है कि किसी भी अनुभूति को भाषा की सहायता से व्यक्त नहीं किया जा सकता । गुड़ का आस्वादन करके हम दूसरे को नहीं समझा सकते कि गुड़ का स्वाद कैसा है । मीठा, कड़वा इत्यादि शब्दों के भावों को हम तभी ग्रहण कर सकते हैं जब हम उन भावों को अपनी अनुभूति में लायें । जिस व्यक्ति ने जीवन में कभी किसी मीठी वस्तु का स्वाद न लिया हो उसे कोई कैसे समझाये कि मीठा क्या वस्तु है ? जो व्यक्ति जन्म से अंधा है उसे कोई कैसे समझाये कि प्रकाश क्या वस्तु है ? इसी प्रकार योगियों के अमुभूतिगम्य ज्ञान को दूसरों को बोधगम्य कैसे कराया जा सकता है, जब तक कि दूसरे भी उसी समाधि अवस्था में प्राप्त ज्ञान को अपनी अमुभूति में न लायें ।

योग : प्रसुप्त की जागृति का उच्चस्तरीय विज्ञान

रायल मेडिकल सोसायटी के सम्मुख सन् १८९६ में चिकित्सा विज्ञान में निष्णात डॉ. ग्लौस्टन ने कहा था, "शारीरिक रोगों के उपजने-बढ़ने से लेकर अच्छे होने या कष्टसाध्य बनने में मानसिक स्थिति की बहुत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़ी भूमिका होती है । शारीरिक कारणों या परिस्थितियों का जितना सम्बन्ध रोगों के उतार-चढ़ाव से है उससे कहीं अधिक मनोदशा प्रभावित करती है । यदि व्यक्ति मानसिक दृष्टि से सुदृढ़ हो तो फिर रोगों की सम्भावना बहुत ही कम रह जायेगी । आक्रमण करने पर भी वे बहुत समय ठहर न सकेंगे । इसलिए चिकित्सा के औषधि-उपचार पर जितना ध्यान दिया जाता है उससे अधिक मनःस्थिति को सही बनाने का प्रयत्न होना चाहिए ।

'मन और स्वास्थ्य' पुस्तक के लेखक हेक ट्यूक ने शरीर पर पड़ने वाले मानसिक प्रभाव का सुविस्तृत पर्यवेक्षण प्रस्तुत किया है । वे कहते हैं—"यों शरीर पर आहार-विहार का भी प्रभाव पड़ता है और अभाव तथा व्यतिरेक भी अपनी प्रतिक्रिया छोड़ते हैं तो उस पर सर्वाधिक प्रभाव व्यक्ति की अपनी मनःस्थिति का पड़ता है । यह प्रभाव प्रतिक्रिया नाड़ी—मण्डल पर ३६ प्रतिशत, अन्तःस्रावी हॉर्मोन ग्रन्थियों पर ५६ प्रतिशत, माँसपेशियों पर ८ प्रतिशत पायी गई है । कई रोगियों के पर्यवेक्षण पर पाया गया कि उनके शरीर में कोई ऐसी गड़बड़ी नहीं है जिससे उन्हें गम्भीर रोगों का शिकार बनना पड़े । तो भी वे हृदयरोग, कैन्सर, कोलाइटिस, हिस्टीरिया, रक्तचाप, अनिद्रा, अपच आदि के मरीज पाये गए । कठिनाई यह भी बनी रही कि किसी औषधि उपचार से उन्हें कोई राहत न मिली जबकि उनका चिन्तन प्रवाह मोड़ देने पर बिना उपचार के ही बहुत कुछ ठीक हो गया ।"

श्री हेक ने अपने प्रतिवेदन का अन्तिम निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए कहा है—फेथ (विश्वास), होप (आशा), कान्फीडेन्स (श्रद्धा), विल (इच्छा) और सजेशन (स्वसंकेत) जैसे प्रयोगों को अब स्वास्थ्य-सम्वर्धन में प्रयोग किया जाना चाहिए । रोग निवारण का यह सबसे सस्ता; सुनिश्चित और हानि रहित निर्धारण है ।

योगशास्त्र के निर्धारणकर्त्ता पातंजलि गीता के प्रस्तोता व्यास और योग वशिष्ठ के उपदेष्टा वशिष्ठ का इस तथ्य पर पूर्णतया मतैक्य है कि मानसिक संयम से मनुष्य सुखी रहता है और प्रगति पथ पर अग्रसर होता है । योग दर्शन में चित्तवृत्तियों के निरोध को योग कहा गया है । अनियन्त्रित, अस्त-व्यस्त और भ्रान्तियों में भटकने वाली मनःस्थिति को मानवी क्षमताओं के अपव्यय एवं भक्षण के लिए उत्तरदायी बताया है और उनको दिशा विशेष में नियोजित रखने का परामर्श दिया है । गीताकार मन को ही मनुष्य का मित्र एवं शत्रु ठहराते हैं और उसे भटकाव से उवारकर अपना भविष्य बनाने का परामर्श देते हैं । वशिष्ठ का कहना है कि जिसने मन जीत लिया उसे त्रैलोक्य विजेता कहना चाहिए । इन प्रतिपादनों में एक ही संकेत है कि मनोदशा की गरिमा शारीरिक स्वस्थता से भी बढ़कर मानी जाय और समझा जाय कि अनेकानेक समस्याओं के उद्भव एवं समाधान का आधार इसी क्षेत्र की सुव्यवस्था पर निर्भर है । इसलिए प्रयत्नपूर्वक मन की अनगढ़ कुसंस्कारिता का नियमन करना चाहिए ।

आत्मानुशासन (साइकोफिजिकल डिसीप्लिन), आत्म-सन्तुलन (इक्वानिमिटी ऑफ स्प्रिट) का अभ्यास ही योग साधना है । इससे नाड़ीमण्डल और स्नायु-संस्थान पर इच्छित नियमन की क्षमता उपलब्ध होती है । फलतः मनुष्य सच्चे अर्थों में मनुष्य अपना स्वामी आप बन जाता है जबकि अव्यवस्थित कल्पनाओं और अनुपयुक्त इच्छाओं में उलझा हुआ व्यक्ति अपने साथ ठिठोली करने और अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारने जैसी विडम्बनाएँ रचता रहता है । निरोग और दीर्घायु वे ही रह सकते हैं जो अपने के स्वामी आप हैं । इच्छाओं और आदतों के गुलाम को आत्म-निरीक्षण करने तक की फुर्सत नहीं मिलती और न इतना साहस रहता है कि पतनोन्मुख प्रवाह को रोके और उसे श्रेय पथ की दिशा में मोड़ें । यह असमर्थता ही मनुष्य की वास्तविक दरिद्रता और दुर्बलता है । इसे हटाये बिना दुर्गति से बचने का और कोई उपाय नहीं । यही कारण है कि सुव्यवस्थित, प्रगतिशील और प्रसन्नता भरा जीवन जीने के लिए आत्म-नियमन सीखना होता है । शरीर निर्वाह के लिए सुविधा-साधनों के सहारे काम चल जाता हैं किन्तु यदि इतना ही पर्याप्त न लगे और मानवोचित वरिष्ठता प्राप्त करने की आवश्यकता प्रतीत हो तो फिर उसके लिए मनोनिग्रह की व्यवस्था भी जुटानी पड़ेगी । उद्दण्डता और बलिष्ठता के सहारे अपहरण और संग्रह-भर हो सकता है । आतंक में डराने और विवश करने भर की क्षमता है । स्नेह और सहयोग अर्जित करने के लिए जिन सद्गुणों की आवश्यकता है उन्हें अपने में उगाने और बढ़ाने के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए मानसिक कुसंस्कारिता की अनिवार्य आवश्यकता है । उसके लिए संचित कुसंस्कारिता से जूझना पड़ता है । इसी संघर्ष को धर्म-युद्ध या साधना-समर कहा गया है । अर्जुन को दिव्य सत्ता ने इसी के लिए दबाव देकर बाधित किया था ।

धारणा (Concentration), ध्यान (Meditation) और समाधि (Contemplation) के अभ्यासों में साधक को एक ही लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील बनाया जाता है कि वह मन की अस्तव्यस्तता पर नियमन करना सीखे । इसके उपरान्त सधे हुए मन को उत्कृष्टता की दिशा में चल सकने योग्य प्रशिक्षित पाया जा सकता है । शारीरिक और मानसिक अनुशासन (Psycho-physical discipline) बन पड़ने पर व्यक्तित्व की प्रौढ़ता, परिपक्वता मानी जाती है और उसी को महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकने की क्षमता एवं सम्भावना आंकी जाती है । बालकों जैसी चंचलता और लक्ष्यहीनता की स्थिति में पड़े हुए लोग बन्दरों की तरह निरर्थक उचक-मचक तो बहुत-सी करते रह सकते हैं, पर वे ऐसा कुछ नहीं पाते जिसे दिशाबद्ध, क्रमबद्ध या महत्त्वपूर्ण कहा जा सके ।

योग न तो रहस्यवाद है न पलायनवाद । उसमें काया कष्ट का वैसा विधान नहीं है जैसा कि कई अतिवादी अपना दुस्साहस दिखाकर भावुकजनों पर विशिष्टता का आतंक जमाते और उस आधार पर शोषण करते देखे गए हैं । योग कल्पना लोक में अवास्तविक विचरण भी नहीं है और न उसे जादूई चमत्कारों की श्रेणी में गिना जा सकता है । देवताओं को वशवर्ती बनाकर या भूत-प्रेतों की सहायता लेकर मनोकामना पूरी करने-कराने जैसी ललक, लिप्सा पूरी करने जैसा भी इस विद्या में कोई आधार नहीं है । योग एक विशुद्ध विज्ञान है जिसका वास्तविक आधार है—आत्मानुशासन का अभ्यास और क्षमताओं का उच्चस्तरीय प्रयोजन के लिए सफल नियोजन । जो इतना कर सकते हैं उन्हें सच्चे अर्थों में सिद्ध पुरुष कहा जा सकता है ।

मानवी विशेषता में उसके चेतन स्तर को ही दैवी विभूति माना गया है । वह उसे प्रचुर परिमाण में उपलब्ध है, उसका सुनियोजन और सदुपयोग तो चाहिए भी । यह न बन पड़े तो समझना चाहिए कि दुरुपयोग से अमृत के भी विष हो जाने जैसी कहावत इस क्षेत्र में भी लागू होगी और मानसिक क्षमता की अपेक्षा उल्टी विपत्तियाँ खड़ी करेगी, जैसा कि सामान्य जनों को निर्वाह सुविधा उपलब्ध रहने पर भी नाना प्रकार के शोक-सन्तापों से ग्रसित देखा भी जाता है । अन्य प्राणियों को पदार्थ विनिर्मित शरीर मिला है । वे पदार्थ-परम्परा के अधिष्ठानों—प्रकृति के निर्धारित अनुशासनों को समझते, पालते और सुखी रहते हैं । मनुष्य को न केवल शरीर वरन् उच्चस्तरीय मनःसंस्थान भी मिला है । इसलिए समझदारी बताती है कि उसे दुहरी जिम्मेदारी निभानी चाहिए । शारीरिक स्वस्थता के लिए प्रकृति अनुशासन और मानसिक विशिष्टता के लिए उसे आत्मिक अनुशासन अपनाना चाहिए । इस क्षेत्र में जो असन्तुलन बन पड़ा है उसे सुधारने के लिए योगाभ्यास आवश्यक है । इस सुधार प्रयोजन के बिना यह सम्भव नहीं कि मानवी क्षमताओं का उपयुक्त प्रयोजनों के लिए उपयुक्त रीत-नीति अपनाते हुए उपयुक्त नियोजन सम्भव हो सके ।

शारीरिक व्याधियों और मानसिक आधियों से छुटकारा पाना ही नहीं, अवांछनीय आदतों के कारण उत्पन्न होती रहने वाली विषम परिस्थिति से निपटने के लिए परिष्कृत मनोभूमि चाहिए । महत्त्वपूर्ण प्रयोजनों के लिए कुछ कर सकना तो इसके बिना बनता ही नहीं इसलिए मानसिक दक्षता की उपयोगिता समझने वाले हर व्यक्ति को योगाभ्यास की बात सोचनी और व्यवस्था बनानी चाहिए ।

महामानवों में से प्रत्येक को अन्तःचेतना की उत्कृष्टता (High level consense) को किसी न किसी प्रकार अर्जित करना ही पड़ा है । जो उस दिशा में बढ़ना चाहते हों उनके लिए सरल और सुनियोजित विधि-व्यवस्था योगाभ्यास की सामने है । बलिष्ठता के लिए व्यायाम, विद्वता के लिए अध्ययन, उपार्जन के लिए पराक्रम की जिस प्रकार आवश्यकता पड़ती है उसी प्रकार मनस्वी बनने के लिए योग साधना का स्वरूप समझें तथा प्रयोग करने की दिशा में भी कदम बढ़ायें ।

सन् १९६३ में औषधि विज्ञान की खोज पर नोबेल पुरस्कार विजेता जॉन एकल्स ने कहा था—"वे सिद्ध कर सकते हैं कि हर मनुष्य को एक जीव रसायन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा रहस्यमयी ऊर्जा से बना एक ऐसा पदार्थ प्राप्त है जिसे आत्मा कहा जा सकता है ।"

कैलेच विश्वविद्यालय के प्राध्यापक रोजर स्पेरी को सन् १९८१ में रासायनिक अध्ययन पर नोबेल पुरस्कार मिला था । उनका आत्मा के सम्बन्ध में कहना है कि यह एक सुनिश्चित तथ्य है । रासायनिक पदार्थों के मस्तिष्कीय गुणों से सम्बन्ध होने पर एक ऐसी सत्ता बन जाती है जो न केवल मनःक्षेत्र के दस अरब न्यूरोनों (Nurons) पर वरन् समूचे शरीर पर अपना शासन चलाती है । इसका कार्यक्षेत्र सीमित नहीं वरन् असीम एवं व्यापक है ।

भौतिकशास्त्र में १९६३ के नोबेल पुरस्कार विजेता यूजीन डिगमर ने आत्मा को ऐसी अचेतन सामर्थ्य कहा है जो चेतन का नियन्त्रण और सूत्र संचालन करती है ।

कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय के भौतिकी विशेषज्ञ ब्रियान जोसेफन ने लिखा है—'मानवी सत्ता एक ऐसी गठन है जो रसायनों और ऊर्जाओं के साथ गुथा रहने पर भी उनके अधीन नहीं है वरन् अपनी सत्ता को चेतना सम्पन्न होने के कारण अपने क्षेत्र पर पूरी तरह शासन करता है ।'

स्प्रिचुअल सोसाइटी के अध्यक्ष जान एकल्सि ने कहा है—'हम आत्मा की प्रत्यक्षता का क्रमशः अधिकाधिक अनुभव करते जा रहे हैं । वह दन दूर नहीं जब वह अदृश्य या अविज्ञात न रहकर सामने प्रस्तुत होगी । उसे हम उसी तरह अनुभव कर सकेंगे जैसे सम्बद्ध अन्य शक्तियों का स्पष्ट अनुभव करते हैं ।'

आत्मा रसायन है 'ऊर्जा या ब्रह्माण्ड' में संव्याप्त महाचेतना की एक अविच्छिन्न इकाई है । यदि इस विवाद में न पड़ा जाय तो भी यह मानना होगा कि वह जो भी वह असाधारण सामर्थ्य की पुंज है, उसकी रहस्यमय परतें ऐसी हैं जिन्हें जगाने, उभारने, सुधारने और सही रीति से प्रयुक्त कर सकने की क्षमता अर्जित कर सकने वाला कोई व्यक्ति अपनी विशिष्टता का परिचय दे सकता है । इस समर्थता को अर्जित करने के लिए योग-साधना ही एक असंदिग्ध मार्ग है ।

अमेरिकी हिल्टन होटल शृंखला के मालिक कोनराल्ड हिल्टन अपने समय के गिने-चुने धन कुबेरों में एक थे । अनवरत रूप से मिलती गई सफलताओं का कारण वे 'भीतर की आवाज' को बताते थे । उनके साथी गणित और तथ्यों के आधार पर योजनाएँ बनाते थे और हिल्टन के आधार को अवैज्ञानिक बताते थे, तो भी यह बात आश्चर्यजनक ही बनी रही कि 'भीतरी आवाज' ने कभी धोखा नहीं खाया जबकि तथ्यानुयायी अनेक बार असफल रहे और घाटे की चपेट में आये । यह रास्ता उन्होंने अलास्का हिमाच्छादित प्रदेश में तेल की खुदाई का ठेका लेने वाले लिडलेन हेस से सीखा था । उन्होंने वह दुस्साहस भरा काम हाथ में लिया था और असाधारण धन तथा यश कमाया था । हेस अपने पुरुषार्थ को दाँव कहते थे और उस बाजी को जीतने में अन्तःप्रेरणा के मार्गदर्शन को श्रेय देते थे ।

विभिन्न क्षेत्रों में असाधारण सफलता पाने वाले लोगों की विशेषता का क्या कारण हो सकता है, यह जानने के लिए दो रहस्यवादी अनुसन्धानकर्त्ताओं ने कदम बढ़ाया और उस स्तर के लोगों के साथ सम्पर्क साधा । ऐसे सफल लोगों में उद्योगपतियों को प्रथम महत्त्व का समझा जाता है । इसलिए उन्होंने उस वर्ग को प्रधानता देते हुए अन्य क्षेत्र के लोगों को भी द्वितीय-तृतीय श्रेणी का गिना और अनुसन्धान का कार्यक्रम बनाया । इस अन्वेषण के निमित्त की गई पूछताछ से पता चला कि उनमें से जिन्हें भीतर की आवाज पर विश्वास था और असमंजस की घड़ियों में उन्होंने उन्हीं का सहारा लेकर कदम बढ़ाया है ।

यह क्षमता किन्हीं में दो जन्मजात रूप में उत्पन्न हुई या अनुमान से मिली भी हो सकती है और कोई उसे योग साधना द्वारा भी उत्पन्न कर सकते हैं । किन्हीं-किन्हीं में अनायास ही प्रकट होते देखा जाता है । यही प्रकटीकरण यह बताता है कि क्षमताएँ तो हर किसी में विद्यमान हैं, पर उनका दृश्य स्वरूप यदि संयोगवश देखा जा सकता है तो यह आशा करने का औचित्य है कि यदि प्रयत्नपूर्वक उन्हें जाग्रत किया जा सके तो उन्हें भी वैसी ही मानसिक विशेषताओं की तरह प्रयुक्त किया जा सकेगा जैसी कि कलाकौशल आदि के रूप में जगाया और काम में लाया जाता है । अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न मनुष्यों में कितने ही उदाहरण समय-समय पर सामने आते रहते हैं ।

चेतना क्षेत्र की इन्हीं विशेषताओं में अतीन्द्रिय क्षमताओं का क्षेत्र आता है । सामान्यतया मानवी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्रिया-प्रक्रिया की एक छोटी सीमा है । आँखें एक सीमित दूरी पर ही देख सकती हैं । बुद्धि उन्हीं का अनुमान लगा सकती है जो किन्हीं प्रमाणों या साधनों से जाना जा सके । इसके अभाव में उसे बहुत दूर की, कालान्तर की, देशान्तर की जानकारियाँ प्राप्त कर सकने की क्षमता नहीं है । किन्तु ऐसा भी देखा गया है कि इन जानकारियों को प्राप्त किया जा सका तो मस्तिष्क तथा इन्द्रिय तन्त्र की पकड़ से सर्वथा बाहर हैं । इसे अतीन्द्रिय क्षमता कहते हैं । मानवी मस्तिष्क का एक अविज्ञात निष्क्रिय पक्ष है जिसे शरीरशास्त्री 'डार्क एरिया' के नाम से पुकारते हैं । सामान्य ज्ञान व्यवहार में मानवी मस्तिष्क का बहुत थोड़ा प्रायः सात प्रतिशत अंश ही काम में आता है । ९३ प्रतिशत क्षेत्र यही प्रसुप्त क्षेत्र है जिसके बारे में शरीरशास्त्री मनःशास्त्री यह जानने में समर्थ न हो सके कि यहाँ क्या छिपा है, और उसे किस प्रकार किन प्रयोजनों के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है ।

तत्वज्ञानी इस प्रसुप्त क्षेत्र को अतीन्द्रिय क्षमता-सम्पन्न कहते हैं । इसका कुछ भाग यदाकदा अपनी रहस्यमय परतों की थोड़ी झाँकी कराता है तो प्रतीत होता है कि हर किसी में वे विशेषताएँ विद्यमान हैं जो यदाकदा सिद्ध पुरुषों द्वारा प्रकट होती देखी जाती हैं ।

राजयोग के प्रारम्भिक अनुशासन

राजयोग के प्रथम दो चरणों में पाँच यम और पाँच नियम आते हैं । इनका तत्व प्रयोजन दसों इन्द्रियों को परिष्कृत मनोभावों के अन्तर्गत अनुशासित करता है । काया को इस प्रकार संयमी बनाना है जिससे कषाय-कल्मषों के कार्यान्वित होने की कहीं गुंजाइश न रहे । यह बन पड़ने पर व्यक्ति आदर्शवादी, उत्कृष्टता सम्पन्न एवं पवित्रता सात्विकता से समन्वित बन जाता है । यह साधारण जीवन में प्रयुक्त होने वाला अनुशासन एवं श्रेष्ठता सम्पन्न क्रिया-कलाप है । जीवनचर्या बहिरंग और अन्तरंग क्षेत्र में शालीनता से परिपूर्ण हो तो समझना चाहिए कि योग साधना के आरम्भिक दस अनुशासन बन पड़े और योगाभ्यास का महत्त्वपूर्ण पक्ष पूरा हो गया । यम और नियम यों संख्या की दृष्टि से दो गिने जाते हैं, पर वर्गीकृत होने पर दस हो जाते हैं । इसमें जीवन गरिमा की दसों दिशाओं का समावेश हो जाता है जिससे इतना करते बन पड़े समझना चाहिए कि उसने योग मार्ग की आधी मंजिल पार कर ली अर्थात् भूमि को खाद-पानी देकर जुताई-गुड़ाई के सहारे उर्वर बना लिया ।

इसके आगे, तीसरे और चौथे चरण में आते हैं— आसन-प्राणायाम । इनका क्रिया-कलाप तो सरल और सर्वविदित है । पर काम चलता है उनके साथ जुड़े हुए रहस्यों और तथ्यों को भली प्रकार समझने और अपनाने से । इन दो चरणों को गुण-कर्म-स्वभाव की उत्कृष्टता समझा और समझाया जाना चाहिए ।

आसन के रूप में पद्मासन, मयूरासन, पश्चिमोत्तानासन, शीर्षासन आदि के व्यायाम सीखे और सिखाए जाते हैं । यह व्यायाम वर्ग का प्रयोग है, जिसका तात्पर्य श्रमशील जीवन, आहार-विहार के नियम में आरोग्य का संरक्षण है । आसन प्रक्रिया में स्वास्थ्य रक्षा के लिए आवश्यक नियमों के पालने की बात कही गई है । इसमें आहार और विहार दोनों आते हैं । आसनों को मात्र व्यायाम तक ही सीमित नहीं मानना चाहिए वरन् यह भी सोचना चाहिए कि इस विद्या से सात्विक आहार के सम्बन्ध में भी आसन के उपरान्त प्राणायाम की बारी आती है । प्राणायाम मोटे अर्थों में गहरी साँस छोड़ना और उसे पूरी तरह बाहर निकालना है । साँस लेने की दृष्टि से यही उपयुक्त तरीका है । हवा के साथ ऑक्सीजन या प्राण वायु भी घुली होती है । गहरी साँस लेने से फेफड़ों में पूरी हवा भरती है । इससे अधिक मात्रा में प्राण तत्व शरीर को उपलब्ध होता है । फेफड़ों में खाली जगह रहने से उस बन्द जगह में क्षय जैसे रोगों के कीटाणु पलने लगते हैं । पूरी गहरी साँस लेने से न केवल फेफड़ों की वरन् समूचे शरीर के तन्तु जाल को जीवन तत्व की बहुलता प्राप्त होती है । रक्त शोधन का क्रम ठीक प्रकार से चलता है । यह नीरोग शरीर और दीर्घ जीवन की दृष्टि से उपयुक्त प्रयोग है । यह शारीरिक प्रयोग-प्रयोजन हुआ । मानसिक दृष्टि से प्राणायाम साहसिकता का प्रतीक है । अमुक व्यक्ति प्राणवान है, इस प्रकार का कथन उसके साहसी होने के अर्थ में प्रयुक्त होता है । प्राणवान अर्थात् साहसी ।

साहस मानसिक गुण है । शरीर बलिष्ठ हो सकता है, पर यह आवश्यक नहीं कि उसमें साहस भी हो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कितने ही स्थूलकाय व्यक्ति कायर तथा भीरु भी हो सकते हैं । इसके विपरीत ऐसा भी देखा गया है कि गाँधी जी जैसे दुर्बलकाय व्यक्ति असीम साहस के भण्डार थे । मनस्वी ऐसे ही व्यक्तियों को कहते हैं । उन्हीं को ओजस्वी-तेजस्वी भी कहा जाता है । प्राणायाम से यह विशेषताएँ बढ़ती हैं । पर ऐसा भी होता है कि बिना विधिवत् प्राणायाम साधे भी कोई व्यक्ति मनस्वी हो । नेपोलियन, सिकन्दर जैसे कितने ही व्यक्ति ऐसे हुए हैं जो शौर्य तथा साहस के धनी थे, यद्यपि योग विधि में वर्णित प्राणायाम नहीं करते थे ।

योगाभ्यास के प्रकरण में जहाँ प्राणायाम का वर्णन आया हो वहाँ उसे मात्र श्वास-प्रश्वास क्रिया की गहराई तक ही सीमित नहीं मानना चाहिए वरन् यह भी समझना चाहिए कि उच्चस्तरीय महत्त्वपूर्ण कार्यों को करने के लिए जिस शारीरिक पराक्रम और मानसिक शौर्य के लिए संकेत किया जा रहा है उसे सम्पादित किया जाना चाहिए । योगाभ्यास में पग-पग पर काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद-मस्तर जैसे असुरों को निरस्त करने के लिए संघर्ष ठानना पड़ता है और निश्चय करना पड़ता है कि कितना ही श्रम क्यों न पड़े, समय क्यों न लगे पर अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँच कर ही रहा जायेगा । ऐसी प्रचण्ड इच्छा शक्ति संकल्पजन्य दृढ़ता आध्यात्मिकता के साथ जुड़ी रहती है ।

आन्तरिक दुर्बलताओं और बाह्य क्षेत्र की कठिनाइयों, आकर्षणों, दबावों से संघर्ष करने के लिए शरीर बल, शस्त्र बल आदि की अपेक्षा मनोबल की अधिक आवश्यकता पड़ती है । इसी को अर्जित करने के लिए श्वास-प्रश्वास से ऊर्जा बढ़ाने का प्रयत्न किया जाता है । जिस भी विधि से प्राण-चेतना, साहसिकता बढ़े उसे प्रकारान्तर से प्राणायाम ही कहा जायेगा ।

राजयोग के आठ अंगों में प्राणायाम तक पाँच पूरे हो जाते हैं । छठा है प्रत्याहार । इसका स्वरूप है प्रतिरोधी प्रक्रिया । जन्म-जन्मान्तरों से संचित कुसंस्कार हर किसी को घेरे होते हैं । वे समय-समय पर उभर कर ऊपर आते रहते हैं । मनुष्य जीवन मिलने पर मानवी गरिमा के अनुरूप आचरण की जिम्मेदारी सिर पर आती है । उन्हें पूरा करने पर ही लक्ष्य की प्राप्ति सम्भव होती है । किन्तु कठिनाइयाँ दो हैं । एक तो हेय योनियों में भ्रमण करते समय जो कुसंस्कार स्वभाव के अंग बन कर रहे हैं, वे अवसर मिलते ही उसी प्रकार उभर आते हैं, जैसे वर्षा होते ही घास की सूखी जड़ें हरी हो जाती हैं और देखते-देखते सूखे धरातल पर हरीतिमा छा जाती है । कुसंस्कारों को जब तक दबाए रखा जाय तब तक वे दबे रहते हैं, किन्तु जैसे ही शिथिल हुआ पशु प्रवृत्तियाँ अपना कौतुक दिखाने लगती हैं ।

इसके अतिरिक्त दूसरी बात यह है कि समाज में सभी ओर दुष्प्रवृत्तियों का प्रचलन है । जनसाधारण का स्वभाव बहुमत की नकल करना है । अधिकांश लोग जिस प्रकार बरतते हैं, उसी प्रकार सामान्यजनों का व्यवहार भी उसी मार्ग पर चल पड़ता है । योग साधना के लिए प्रयत्नशील व्यक्तियों को भी इस मोर्चे पर जूझना पड़ता है । वे अपने अन्तरंग और बहिरंग जीवन को आदर्श उत्कृष्ट बनाना चाहते हैं, किन्तु प्रचलन को देखकर साधक की ललक भी उसी दिशा में मचलने लगती हैं । यहाँ यदि अवरोध का मोर्चा कमजोर पड़े तो हेय दुष्प्रवृत्तियों की चढ़ बनती है और साधना में अनेकानेक विघ्न खड़े हो जाते हैं । इसीलिए प्रतिवादी प्रतिपक्षी संघर्षशीलता का विभिन्न अभ्यासों द्वारा ऐसा स्वभाव बनाना पड़ता है जो किसी भी अवसर पर चूकने न पाये । प्रत्याहर अर्थात् परास्त करने का कौशल । यह व्यक्तियों का, समूहों का, परिस्थितियों का ही उलटना नहीं वरन् अवांछनीय मनोदशाओं को भी परास्त कर देना—उनसे बच निकलना भी है । प्रत्याहार की साधनाएँ कतिपय हैं । उनके नाम-रूप अनेक हैं पर उद्देश्य एक ही है—अनौचित्य को परास्त करना ।

मूर्धन्य मनोवैज्ञानिक कारेन हार्नी अपनी कृति "न्यूरोटिक पर्सनैलिटी ऑफ आवर-टाइम्स" में कहते हैं कि आज जितने अधिक पुरुष एवं महिलाएँ मनोवैज्ञानिक रूप से असमान्य हैं, उतने इस वैज्ञानिक युग से पहले कभी नहीं थे । यूनेस्को द्वारा प्रकाशित "कोरियर" नामक पत्रिका के एक विशेषांक में मानसिक रोगों के बारे में आँकड़ों सहित दी गई जानकारी से स्पष्ट होता है कि समस्त संसार के व्यक्तियों की मानसिक स्थिति बड़ी दुःखद है । लगभग इसी तरह का मत "वर्ल्ड फेडरेशन ऑफ मेण्टल हेल्थ" जैसी संस्थाओं ने भी प्रकट किया है कि इस सुविधा-सम्पन्न युग में भी आज

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मानसिक विखण्डन किसी भी तरह कम न होकर सतत् बढ़ता ही जा रहा है ।

इस समस्या के समाधान का किसी देश की शासन प्रणाली से भी कोई सम्बन्ध नहीं है । यह प्रणाली चाहे साम्यवादी हो या प्रजातान्त्रिक अथवा समाजवादी इसमें हेर-फेर से समस्या का समाधान सम्भव हो जायेगा, ऐसी आशा करना दुराशा मात्र ही होगी । इस परेशानी का निवारण तभी सम्भव है, जब उसके सही कारण की खोज की जाय ।

भारतीय मनोवैज्ञानिक डॉ. आई. पी. सचदेवा ने अपने शोधग्रन्थ "योग एण्ड साइकोएनालिसिस" में इस समस्या के मूल कारणों के विषय में विशद् विचार किया है । उन्होंने बताया है कि विज्ञान युग के पूर्व व्यक्ति में जो धार्मिक आस्थाएँ तथा वैयक्तिक मान्यताएँ थीं, उन पर विज्ञान के प्रत्यक्षवाद ने भरपूर कुठाराघात किया है जिसका परिणाम आज हम मानसिक रोगों के रूप में भुगत रहे हैं । अरटुर आइसेनवर्ग ने भी अपनी कृति "रिफ्लेक्शन्स ऑफ साइकोलाजिकल इन सेक्यूरिटी इन मॉडर्न मैन" में भी इसी मत का समर्थन किया है ।

निःसन्देह समस्या के उपर्युक्त कारण के विषय में इन मनोवैज्ञानिकों के मतों को यथार्थ समझा जा सकता है । विज्ञान के नित नूतन होने वाले आविष्कारों से सुविधा सम्बर्धन तो खूब हुआ है, पर साथ ही धार्मिक एवं नैतिक अवमूल्यन में भी कोई कोर-कसर नहीं, छोड़ी गई । इस तरह के अवमूल्यन ने एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र के प्रति, एक जाति से दूसरी जाति के प्रति, एक परिवार से दूसरे विचार के प्रति भरपूर नफरत पैदा कर दी है । यही नहीं, इस बीमारी से पति-पत्नी, पिता-पुत्र के भी आपसी सम्बन्ध प्रभावित हुए हैं, यहाँ तक कि स्वयं व्यक्ति अपने प्रति भी इसी भाव से भर गया है । यही कारण है कि जहाँ पति-पत्नी की पारस्परिक नफरत एक दूसरे से तलाक लेने की नौबत पैदा करती है, वहीं पिता-पुत्र आपसी स्वार्थों के लिए एक-दूसरे को मार देते हैं । व्यक्ति स्वयं अपने प्रति नफरत एवं घृणा के भाव रखकर आत्महत्या कर लेता है । इन सारे बिखरावों का एक मात्र कारण है जीवन के उद्देश्य तथा पारस्परिक सम्बन्धों की समुचित व्याख्या तथा प्रतिपादन के परिपालन का अभाव । कारण है कि विज्ञान और उसके अध्येता वैज्ञानिक चाहे कितने भी सक्षम एवं सामर्थ्यवान क्यों न हों, पर उनके द्वारा की गई शरीर क्रिया एवं संरचना सम्बन्धी मीमांसाएँ अभी तक मानवीय सम्बन्धों की मधुरता का कोई समुचित आधार नहीं प्रस्तुत कर सकी हैं । विज्ञान ने यह भले ही सिखाया हो कि चन्द्रमा, मंगल या बुध पर कैसे पहुँचा जाय, अन्तरिक्ष में बस्तियाँ बनाकर कैसे रहा जाय, पर धरती पर सही ढंग से रहना वह आज तक नहीं सिखा पाया ।

यहाँ उद्देश्य विज्ञान की निन्दा करने जैसा न होकर मानव के स्वयं के तथा आपसी बिखराव के कारण की विवेचना करना ही है । यह बिखराव दूर भी तभी हो सकता है जब धार्मिक एवं नैतिक मूल्यों की पुनः स्थापना हो ।

वर्तमान समय में इस प्रतिष्ठापना में एक मौलिक कठिनाई यह है कि आज का समाज पूर्व की तरह आस्थापरायण विश्वासी न होकर बुद्धिवादी व तर्क-परायण है । यह उन्हीं तथ्यों को स्वीकार करने के लिए तैयार है जो उसकी बुद्धि को सन्तुष्ट करें तथा तर्कों की कसौटी पर सत्यापित किए जा सकें । क्या ? क्यों ? एवं कैसे ? का जबाव पाये वगैर उसे कोई बात भाती नहीं है । ईश्वर क्या है ? पड़ोसी से क्यों स्नेह किया जाय ? इन सब सवालों का ठीक-ठीक जवाब पाये बिना व्यक्ति आस्तिक बनने की जगह नास्तिक बनने में ही कहीं अधिक भलाई मानेगा । इसी तरह जो धर्म यह कहता है कि अमुक किताब में जो लिखा है उसे मानना ही पड़ेगा । हमारी बातें मानो नहीं तो तुम काफिर हो, उसकी भी बातों का आज मखौल ही उड़ाया जायेगा । इन धार्मिक मतवादों की असफलता के बाद बिखराव कैसे दूर हो ?

इस बिखराव को दूर करने के लिए आवश्यकता एक सशक्त मनोवैज्ञानिक प्रणाली की है, किन्तु फ्राइड जैसे मनो अध्येताओं के सिद्धान्तों से भी काम नहीं चलने का, क्योंकि आज व्याप रहे चिन्ता, उद्वेग के कारण मात्र कामुक वासनाओं का पूरा न होना नहीं है, इस तथ्य को वर्तमान मनोवैज्ञानिकों ने भी एक स्वर से स्वीकारा है । इसी कारण डॉ. सी. जी. युंग सरीखे अध्येताओं ने आध्यात्मिक तथा नैतिक मूल्यों की प्रतिष्ठापना के लिए प्रयास किए हैं । इस विषय में उनकी कृत "मॉडर्न मैन इन सर्च ऑफ सोल" काफी उल्लेखनीय है । युंग के अतिरिक्त इस दिशा में फ्रैंकल,

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राबर्टो, असागिओली व गार्डनर मर्फी के प्रयास भी सराहनीय हैं ।

वर्तमान समय में आज के बुद्धिवादी वैज्ञानिक मन की सारी व्यथाओं को दूर करने तथा एक सर्वांगपूर्ण मनोवैज्ञानिक प्रणाली प्रदान करने का साहस अभी भी भारतीय ऋषियों द्वारा प्रणीत आध्यात्म विज्ञान करता है । यह तथ्य चौंकाने वाला भले लगे, पर है सर्वथा सत्य ।

निःसन्देह विश्व के इतिहास में पहली बार धर्म, आध्यात्म एवं दर्शन तीनों एक साथ एक बिन्दु पर आ मिले हैं और उन्होंने अपनी वैज्ञानिकता सिद्ध की है । इस वैज्ञानिकता से परिपूर्ण पद्धति ही एक सर्वांगपूर्ण मनोवैज्ञानिक प्रणाली के रूप में पल्लवित हुई, जिसे योगदर्शन, योग मनोविज्ञान या आध्यात्म मनोविज्ञान कहा गया । महर्षि पतंजलि के ये सुसम्बद्ध सूत्र यद्यपि अपने मूल भावों में उससे भी पहले उपनिषदों, वेदों में विद्यमान हैं फिर भी इन्हें सुव्यवस्थित कर मनोवैज्ञानिक स्वरूप देने का श्रेय उन्हीं को प्राप्त है । इसकी सराहना, मनोवैज्ञानिक युग परामनोवैज्ञानिक व मर्फी सभी कर चुके हैं । पूर्णतया प्रयोग परीक्षण पर आधारित यह पद्धति निश्चित ही आज के व्यक्ति विशेष तथा समूह रूप समाज के बिखराव को दूर करने में पूर्णतया सक्षम है । इसमें सभी पक्षों की तर्कसम्मत व्याख्या करते हुए समाधि अर्थात् समधी (बुद्धि के समत्व में प्रतिष्ठित होने) तथा मन से अतिमन की ओर आरोहण करने का सहज सुगम राजमार्ग बताया गया है । इसी कारण स्वामी विवेकानन्द प्रभृति मनीषियों ने इसे "राजयोग" भी कहा है । इसी प्रणाली को साधारण किसान से उच्च स्तर के बुद्धिवादी वैज्ञानिक तक सभी इसकी मूल मान्यताओं को व्यवहार में लाकर सभी प्रकार की मनोव्यथाओं से मुक्ति पा आनन्द में प्रतिष्ठित हो सकते हैं ।

हमारे अपने वश में है शरीर चेतना

सतत अभ्यास द्वारा शरीर एवं मन को इच्छानुवर्ती बनाया जा सकता है तथा उन्हें असमान्य कार्यों के कर सकने के लिए भी सहमत किया जा सकता है । प्रतिभा-योग्यता के विकास में बुद्धि आवश्यक तो है सर्वसमर्थ नहीं । बुद्धिमान होते हुए भी बच्चा यदि पाठ याद न करे, पहलवान व्यायाम को छोड़ दे, संगीतज्ञ संगीत का अभ्यास छोड़ दे, चित्रकार तूलिका का प्रयोग न करे, कवि भाव-सम्वेदनाओं को संजोना छोड़ बैठे तो उसे प्राप्त क्षमता भी क्रमशः क्षीण होती जायेगी और अन्ततः लुप्त हो जायेगी जबकि बुद्धि की दृष्टि से कम पर सतत अभ्यास में मनोग्यपूर्वक लगे व्यक्ति अपने अन्दर असामान्य क्षमताएँ विकसित कर लेते हैं । निश्चित समय एवं निर्धारित क्रम में किया गया प्रयास मनुष्य को किसी भी प्रतिभा का स्वामी बना सकता है, जबकि अभ्यास के अभाव में प्रतिभाएँ कुण्ठित हो जाती हैं, उनसे व्यक्ति अथवा समाज को कोई लाभ नहीं मिल पाता ।

मानव शरीर अनगढ़ है और वृत्तियाँ असंयमित । इन्हें सुगढ़ एवं सुसंयमित करना ही अभ्यास का लक्ष्य है । अनगढ़ काया एवं मन अनभ्यस्त होने के कारण सामान्यतया किसी भी नए कार्य को करने के लिए तैयार नहीं होते । उल्टे अवरोध खड़ा करते हैं । उन्हें व्यवस्थित करने के लिए निरन्तर अभ्यास की आवश्यकता पड़ती है । अभ्यास से ही आदतें बनती हैं और अन्ततः संस्कार का रूप लेती हैं । परोक्ष रूप से अभ्यास की यह प्रक्रिया ही व्यक्तित्व का निर्माण करती है ।

कितने ही व्यक्ति किसी भी कार्य को करने में अपने को असमर्थ मानते हैं । उन्हें असम्भव जानकर प्रयास नहीं करते हैं । फलस्वरूप कुछ विशेष कार्य नहीं कर पाते, अपनी मान्यताओं के अनुरूप हेय एवं असमर्थ ही बने रहते हैं । जबकि किसी भी कार्य को करने का संकल्प कर लेने एवं आत्मविश्वास जुटा लेने वाले व्यक्ति उसमें अवश्य सफल होते हैं । आत्मविश्वास की कमी एवं प्रयास का अभाव ही मनुष्य को आगे बढ़ने से रोकता तथा महत्त्वपूर्ण सफलताओं को पाने से वंचित रहता है ।

मानवी काया परमात्मा की विलक्षण संरचना है । सर्वसमर्थता के बीज उसके अन्दर विद्यमान हैं । उसे जैसा चाहे ढलाया बनाया जा सकता है । सामान्यतया लोग कुछ दिनों तक तो बड़े उत्साह के साथ किसी भी कार्य को करने का प्रयास करते हैं, पर अभीष्ट सफलता तुरन्त न मिलने पर प्रयत्न छोड़ देते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

फलस्वरूप अपने प्रयत्नों से असफल सिद्ध होते हैं । जबकि धैर्य एवं मनोयोगपूर्वक सतत अभ्यास में लगे व्यक्ति असामान्य क्षमताएँ तक विकसित कर लेते हैं । अभ्यास-आदतों का रूप लेने पर चमत्कारी परिणाम प्रस्तुत करते हैं । अभ्यास की प्रक्रिया द्वारा शारीरिक-मानसिक क्षमताओं का विकास ही नहीं, रोगों का निवारण भी किया जा सकता है । इस मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया पर आधारित एक नई 'चिकित्सा थिरेपी' का विकास पाश्चात्य जगत में हुआ है जिसे 'वायोफीड वैक' कहते हैं । यह स्वयं निरीक्षण एवं स्वयं नियन्त्रण की मनोवैज्ञानिक पद्धति है । इस पद्धति में रोगी शरीर गत हलचलों एवं मनोभावों की प्रतिक्रिया 'वायोफीड वैक' यन्त्र के माध्यम से देखता है । 'शरीर एवं मनोभावों' की प्रतिक्रियाओं के आधार पर वह स्वयं को उपयोगी अभ्यासों के लिए सहमत करता है । अभ्यास की प्रक्रिया में देखना, सुंनना और परिणाम के अनुसार गतिविधियों को नियन्त्रित करने का समावेश होता है । बायोफीडिंग प्रशिक्षण इस मान्यता पर आधारित है कि शरीर की विभिन्न क्रियाएँ जो किसी समय असम्भव एवं अनियन्त्रित मानी जाती थीं उन पर भी नियन्त्रण किया जा सकता है । कला-कौशल सम्पादन करने की प्रत्येक क्रिया में यही सिद्धान्त कार्य करता है । उदाहरणार्थ, क्रिकेट के बाल को फेंकने की क्रिया में प्रारम्भिक अवस्था में निर्धारित स्थान से कुछ आगे अथवा पीछे गिरती है । किन्तु अभ्यस्त हो जाने पर वह ठीक स्थान पर ही गिरती है । इस पद्धति द्वारा अक्षम शरीर को भी सक्षम एवं समर्थ बनाने में सफलता मिली है । न्यूयार्क के "आई. सी. डी. रिहैविलिएशन एण्ड रिसर्च सेन्टर" में 'मिसेज एण्डूज' नामक महिला भर्ती हुई । वह सात वर्षों से अपना सिर नहीं हिला सकती थी । रोग के आरम्भ में उसकी माँसपेशियों में दर्द हुआ और तनाव उत्पन्न हो जाने से उसकी गर्दन सदा बायीं ओर झुकी रहती थी । चिकित्सा जगत में इस रोग को 'रायनेक' कहते हैं । बायोफीडबैक में स्वयं को निर्देश देना होता है । 'मिसेज एण्डूज' ने स्वयं को अपनी ओर देखने का निर्देश दिया तथा दूसरी ओर सिर हिलाना आरम्भ किया और सफल हुई । क्रमशः अभ्यास द्वारा बिना किसी दवा अथवा चिकित्सा के वह अपने सिर को हिलाने में सफल हुई । शारीरिक गतिविधियों की प्रतिक्रियाओं के अंकन के लिए इस पद्धति में "इलेक्ट्रोमायोग्राफ तथा गैल्वनिक स्किन रिसपान्स" यन्त्र का प्रयोग किया गया । इलेक्ट्राबायोग्राफ (ई. एम. जी.) यन्त्र माँसपेशियों में बहने वाली विद्युत को प्रदर्शित करता है जिसको रोगी स्वयं देख सकता है । 'गैल्वनिक रिस्पान्स' सूक्ष्म विद्युत प्रवाह का त्वचा द्वारा अवरोध का मापन करता है । ताप परिवर्तन के मापन के लिए भी एक यन्त्र का प्रयोग किया जाता है । निर्देशों के आधार पर शारीरिक गतिविधियों की प्रतिक्रियाओं को देखने में रोगी पूर्णतया सक्षम होता है ।

'बायोफीड बैक' पद्धति से विभिन्न प्रकार के रोग जैसे—दमा, मृगी, पक्षाघात, सिर दर्द, पीठ के दर्दों पर नियन्त्रण पाने में सफलता मिली है । यह पद्धति जिस प्रकार काम करती है, इसका प्रदर्शन "नैशनल ज्युडस हॉस्पिटल एण्ड रिचर्च सेन्टर, डेनवेर" में किया जाता है । सामान्यतया दमे के रोगी कुछ पदार्थों, जैसे—धुएँ, धूल, गंध, सर्दी, गर्मी के प्रति सम्वेदनशील होते तथा इनसे उत्तेजित हो जाते हैं । प्रदर्शन में दमे के रोगी को एक वातानुकूलित कमरे में लिटाया जाता है । उसके माथे में भौहों के ऊपर विद्युत क्रियाओं की जाँच के लिए इलेक्ट्रोड लगाया गया । रोगियों को विभिन्न पदार्थ धुआँ, धूल, सुगन्धित पुष्प, सुरम्य वृक्ष, लता आदि देखने को कहा जाता है । उनको देखने से क्या प्रभाव पड़ता है, इसका निरीक्षण करने की भी व्यवस्था साथ में जुड़ी हुई है । इस पद्धति से रोगी स्वयं को सिखाता है कि किन-किन परिस्थितियों में किन-किन पदार्थों को देखने से क्या प्रतिक्रिया होती है तथा किन उपायों से उन पर नियन्त्रण पाया जा सकता है ।

'कान्सास टोपेका' नामक स्थान में स्थित 'मेनिंजर फाउण्डेशन' संस्था के वैज्ञानिकों ने बायोफीड बैक पद्धति द्वारा ८० प्रतिशत रोगियों को रोग से मुक्ति दिलाने में सफलता पायी है ।

बिना किसी दवा आदि के सहयोग से कठिन रोगों के उपचार में भी अभ्यास की पद्धति चमत्कारी सिद्ध हुई है । इस पद्धति द्वारा शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं में असामान्य रूप से वृद्धि की जा सकती है तथा शरीर को प्रत्येक काम के लिए सक्षम बनाया जा सकता है । असमर्थता, अयोग्यता और कुछ नहीं इस

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बात का परिचायक है कि योग्यता उर्जपान के लिए प्रयत्न नहीं किया गया ।

मानवी काया एवं मन में शक्ति के भण्डार छिपे पड़े हैं । विकास की असीम सम्भावनाएँ हैं । निर्धारित लक्ष्य की ओर प्रयास चल पड़े और उसमें धैर्य एवं क्रमबद्धता का समावेश हो जाय तो असम्भव समझे जाने वाले कार्य भी सम्भव हो सकते हैं । पहलवान, विचारवान, कवि, लेखक, वक्ता, चित्रकार, वैज्ञानिक, अध्यापक कोई अकस्मात नहीं बन जाते वरन् उन्हें उसके लिए सतत प्रयास करना पड़ता है । शरीर एवं मन को निर्धारित लक्ष्य के लिए अभ्यस्त करना होता है । प्रयत्न करने पर कोई भी व्यक्ति अपने शरीर एवं मन को प्रशिक्षित कर सकता है । अनगढ़ शरीर एवं मन को सुगढ़ एवं व्यवस्थित करने के लिए पूरे धैर्य के साथ सतत अभ्यास की आवश्यकता होती है ।

मानवी काया में सतत् विविध प्रकार के वैद्युतीय संकेत निकलकर बाह्य वातावरण में विसर्जित होते रहते हैं, जिन्हें विभिन्न उपकरणों के माध्यम से जाँचा, मापा और उनसे उत्पन्न संकेतों को सुना व देखा जा सकता है । तदुपरान्त यह ज्ञात किया जा सकता है कि शरीर स्वस्थ है अथवा अस्वस्थ । हृदय से निःस्सृत विद्युतीय तरंगें सबसे अधिक सशक्त होती हैं । इनके कमजोर पड़ने अथवा अधिक बढ़ जाने पर जीवन-संकट का सामना करना पड़ता है और धड़कन बन्द होते ही व्यक्ति को मृतक घोषित कर दिया जाता है ।

मस्तिष्क से भी लगातार विद्युत तरंगें मानसिक स्थिति के अनुरूप विविध रूपों में निकलती रहती हैं, परन्तु हृदय से निकलने वाली तरंगों की तुलना में ये अपेक्षाकृत कमजोर एवं जटिल होती हैं । इनके अतिरिक्त त्वचा एवं माँसपेशियों से निःस्सृत संकेतों की आवृत्ति उच्च होती है । यह सभी संकेत यह बताते हैं कि मनुष्य की वास्तविक मनःस्थिति एवं उससे संचालित शारीरिक स्थिति कैसी है । मानसिक स्थिति के अनुसार ही व्यक्तित्व का निर्धारण होता है ।

इस सन्दर्भ में प्रख्यात मनोवैज्ञानिक जे. कामिया तथा डॉ. बारबारा ब्राउन ने गहन अनुसन्धान करने के पश्चात् निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए बताया है कि यदि शरीर से निकलने वाले विभिन्न विद्युतीय संकेतों में किसी तरह आवश्यक परिवर्तन या परिवर्धन किया जा सके, तो न केवल शारीरिक स्वास्थ्य को अक्षुण्ण रखा जा सकता है, वरन् मानसिक चेतना को भी परिष्कृत किया एवं उच्चस्तरीय बनाया जा सकता है । इनका मत है कि जब तक हम अपने अन्तर-बाह्य प्रक्रियाओं तथा उन पर पड़ने वाले विचारों एवं संकल्पों के प्रभाव को अच्छी तरह समझ नहीं लेते, तब तक चेतना के क्षेत्र में वांछित परिवर्तन कर सकने में समर्थ नहीं हो सकते । क्रिया-कलापों के प्रति जागरूकता न होने पर उनको नियन्त्रित नहीं किया जा सकता । इसके लिए बायोफीड वैक पद्धति को बहुत उपयोगी पाया गया है ।

योग विद्या-विशारद जानते हैं कि योगाभ्यास की विविध प्रक्रियाएँ शारीरिक एवं मानसिक क्रिया-कलापों के नियन्त्रण में प्रभावकारी भूमिका निभाती हैं । उसके साथ विचारणाओं-भावनाओं के परिष्कार का उपक्रम भी जुड़ा रहता है । इसके बिना समाधि स्तर का सुख एवं चेतना को उच्च आयामों की उपलब्धि नहीं होती । आधुनिक विज्ञानवेत्ताओं ने योगाभ्यासपरक प्रथम आवश्यकता पूर्ति के निमित्त बायोफीड बैक पद्धति को सर्वोत्तम पाया है । इसके द्वारा उपलब्ध परिणामों को मशीन पर चर्म चक्षुओं द्वारा सीधे देखा जा सकता है, जबकि पूर्ववर्ती प्रक्रिया अनुभूतिमूलक है । सामने चलते हुए संकेतों अथवा कौंधते हुए विभिन्न लाइटबार को देखकर साधक अपने मानसिक स्तर को स्वयं समझ सकता है और तद्नुरूप उसमें हेर-फेर कर सकता है । इतना ही नहीं, इसके द्वारा समस्त शारीरिक हलचलों, हृदय, माँसपेशियों, त्वचा, रक्त के अतिरिक्त प्रत्येक कोशिका की गतिविधि को जाना और स्वसंकेत द्वारा उन पर नियन्त्रण साधा जा सकता है ।

सुप्रसिद्ध मनोवेत्ता एल्मरग्रीन का कहना है कि शरीर पर मन का आधिपत्य है, अतः उसे प्रशिक्षित करके समस्त कायिक अंग-अवयवों, कोशिकाओं को वशवर्ती बनाया जा सकता है । क्योंकि यह सभी मन से संचालित हैं अतः माँसपेशियों में उत्पन्न तनाव एवं सिर दर्द जैसी सामान्य बीमारियों को वायोफीड वैक द्वारा सरलतापूर्वक दूर किया जा सकता है । इससे सम्बद्ध व्यक्ति इलेक्ट्रोमायोग्राफ पर अपनी पेशियों द्वारा छोड़े गए विद्युत चुम्बकीय विकिरण को देखता और इच्छा-शक्ति का प्रयोग कर उन्हें इच्छित तरीके से सिकुड़ने-फैलने का निर्देश देता है । अभ्यास द्वारा इससे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसी तरह के सुखद परिणाम निकलते हैं जिस तरह से प्रशिक्षित मस्तिष्क से शान्तिदायक अल्फातरंगों के निष्कासन से मिलता है । इस उपचार में किसी बाह्य चिकित्सक की आवश्यकता नहीं पड़ती वरन् विशेषज्ञ इलेक्ट्रोड आदि लगाने की प्रक्रिया ज्ञात हो जाने पर अकेले भी किया जा सकता है । यह पूर्णतया ऑटोसजेशन प्रक्रिया पर आधारित है । डॉ. एडमन्ड डेवान ने इस विधि द्वारा विकलांग व्यक्तियों की संकल्पशक्ति को जगाकर बेकार बने अंगों को सक्रिय बनाने में आशातीत सफलता पायी है । उनके अनुसार इससे माँसपेशियों की निक्रिष्यता एवं तनाव को भी सरलतापूर्वक दूर किया जा सकता है ।

हृदय की गतिविधियों पर सामान्य मनुष्यों का कोई नियन्त्रण नहीं होता, किन्तु योगाभ्यासियों के लिए नाड़ी की गति हृदय की धड़कन आदि को इच्छानुसार घटा-बढ़ा लेना, लयबद्धता को सुस्थिर बना देना एक सामान्य क्रिया होती है । अभ्यास द्वारा अनैच्छिक पेशियों को भी नियन्त्रित कर लेने में वे समर्थ होते हैं । हृदयगति की अनियमितता "सायनस टेकीकार्डिया" से लेकर हृदयगति रुकने तक का निमित्त कारण बनती है । इसे लयबद्ध बनाया जा सके तो न केवल असामयिक मरण से छुटकारा पाया जा सकता है, वरन् दीर्घ जीवन की उपलब्धि भी सम्भव है । अनुसंधानकर्ता डॉ. एल्मर ग्रीन ने हृदय रोगियों पर किए गए बायोफीड बैक अध्ययनों में पाया है कि जिन व्यक्तियों की हृदयगति ११० प्रति मिनट थी, तीन माह के अभ्यास से वे ७० प्रति मिनट तक गति को कम करने में सफल हुए । उनके अनुसार, इस तरह के बाह्य उद्दीपनों से, जो यन्त्र पर लाल, हरे आदि प्रकाश के रूप में दिखते रहते हैं, व्यक्ति को अपने संकल्प बल को प्रखर बनाने एवं अधिकाधिक कुशलता प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहित करते हैं । इच्छाशक्ति के विकास के साथ ही अंतःप्रक्रियाओं पर नियन्त्रण सधता जाता है ।

हाइपरटेन्शन यानी उच्च रक्तचाप इस शताब्दी की सबसे बड़ी बीमारी है । विश्व में ऐसे लोगों की संख्या करोड़ों में है, जिन्हें उच्च रक्तदाब की शिकायत है, अकेले भारत में प्रायः पाँच करोड़ से अधिक व्यक्ति इस रोग से पीड़ित हैं । इस श्रेणी में प्रतिवर्ष लाखों की संख्या में नये रोगी जुड़ते जाते हैं । चिकित्सक एवं दवाइयाँ भी इसमें कोई स्थायी राहत नहीं दिला पाते । वस्तुतः यह एक मनोशारीरिक रोग है जो चिन्तन क्षेत्र की विषमता व तनाव के कारण पनपती है । इसका उपचार भी तदनुरूप ही ढूँढ़ा जाना चाहिए । विशेषज्ञों ने ई.के.जी. बायोफीड बैक को इसके लिए बहुत उपयुक्त पाया है । एक ओर इस उपक्रम में जहाँ मन को विधेयात्मक विचारणाओं से परिपूरित करने का अवसर मिलता है वहीं भावना क्षेत्र का परिशोधन कर संकल्प बल को बढ़ाया जाता है । हृदय की गतिविधियों एवं ब्लडप्रेशर को नियंत्रित करने में यह युक्ति बहुत कारगर सिद्ध हुई है ।

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि वर्तमान समय की अधिकांश बीमारियों का जनक दैनिक जीवन में बढ़ता ही जा रहा तनाव है । इससे शरीर की ऊपरी त्वचा से लेकर रक्तवाही शिराओं की आंतरिक सम्वेदनशील माँसपेशियों तक प्रभावित हुए बिना नहीं रहतीं । शवासन, शिथिलासन जैसी योगभ्यासपरक प्रक्रियाओं द्वारा दूर कर लिया जाने का विधान योगशास्त्र में है फिर भी अब नये आविष्कारों के साथ ही मस्तिष्कीय शक्ति एवं यांत्रिक सुविधाओं के सम्मिलित प्रयोग से कम समय में सरलतापूर्वक इसे सम्पन्न किया जा सकता है । इसी प्रकार थर्मल सेन्सर द्वारा शारीरिक तापमान के उतार-चढ़ावों को सूक्ष्मतापूर्वक निरखा-परखा जा सकता है और स्वसंकेत द्वारा उसे नियमित स्तर पर लाया जा सकता है । सिरदर्द जैसी सामान्य बीमारियाँ प्रायः शरीर में असमान तापमान-वितरण के कारण उत्पन्न होती हैं । अतः हाथ की ऐच्छिक माँसपेशियों का तापमान बढ़ा लेने पर सिर में रक्त प्रवाह संतुलित हो जाता है और राहत मिलती है ।

इसी प्रकार जी.एस.आर. बायोफीड बैक द्वारा त्वचा की विद्युतीय प्रतिरोधी क्षमता को घटाया-बढ़ाया जा सकता है । बढ़ी हुई त्वचा प्रतिरोध क्षमता, तनाव, शैथिल्य एवं सक्रियता का चिन्ह है । मन की उत्तेजना, व्यग्रता सबसे पहले त्वचा प्रतिरोध में ही परिलक्षित होती है । शरीर की प्रतिरोधी सामर्थ्य को शक्तिशाली बनाने हेतु स्वसम्वेदन, ध्यान प्रक्रिया का प्रयोग किया जा सकता है एवं विधेयात्मक प्रतिक्रिया का संकेत यह उपकरण देता रह सकता है । इसे इक्कीसवीं सदी के 'इलेक्ट्रॉनिक मेडीटेशन' की उपमा दी गई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"न्यूमाइण्ड-न्यूबॉडी" नामक अपनी पुस्तक में मनोचकित्सक डॉ. बारबरा ब्राऊन कहती हैं कि "बायोफीड बैक" द्वारा मनःस्थिति की उत्तेजना को शिथिलीकरण में बदलना इस युग की सबसे बड़ी उपलब्धि है । सचमुच यदि मनश्चेतना पर यंत्रों के माध्यम से ही सही मनुष्य को योग साधना द्वारा नियन्त्रण करने की विद्या सिखाई जा सके तो इसे चिकित्सा विज्ञान का मानव जगत को अद्‌भुत अनुदान कहा जायेगा ।

वस्तुतः योग एक ऊँची आध्यात्मिक प्रक्रिया का नाम है जिसमें आत्मसत्ता को परमात्मसत्ता के साथ जोड़ने का, स्वयं को महत् चेतना में विसर्जित कर तद्रूप बनने का प्रयास किया जाता है । इस शब्द का पिछले दिनों इस सीमा तक दुरुपयोग हुआ है कि यह योग से बदल कर 'योगा' हो गया एवं पश्चिम जगत में एक फैशन के रूप में प्रचलित हुआ । देव संस्कृति के महत्त्वपूर्ण प्रतिपादनों को विश्वभर में व्यापक कर जन-जन तक पहुँचाना एक पुनीत पुण्य है, किन्तु जब यही विकृति रूप में पहुँचे, पढ़े-लिखे समझकर व्यक्ति भी जब मात्र नेति, धौति, वस्ति, बंध, मुद्राओं को समग्र योग का पर्याय मानने लगें तो ऐसे समूह के दिमाग की सफाई की आवश्यकता है ।

कहा जा चुका है कि बायोफीडबैक प्रक्रिया के अनुसंधान ने एक महत्त्वपूर्ण आयाम योग चिकित्सा में जोड़ा है कि मन को साधना व अपनी गतिविधियों को नियन्त्रित कर पाना सम्भव है । इस पर जो अविश्वास करते थे, उनके लिए बायोफीडबैक यन्त्र विविध रूप में सामने आ गए जिसे अब भली प्रकार दर्शाया जा सकता है कि शरीर क्रियाओं में परिवर्तन क्यों व कैसे लाया जाता है ?

शरीरशास्त्रियों को जब क्रियायोग की यह विशेषता ज्ञात हुई, तो उन्होंने इनका परीक्षण रोगियों पर आरम्भ किया । किरोव स्टेट यूनिवर्सिटी, अलमाअता (यू.एस.एस.आर.) के चिकित्साशास्त्रियों ने इसके लिए कुछ उच्च रक्तचाप के मरीजों को चुना और बायोफीड बैक यन्त्रों के माध्यम से आत्मनियन्त्रण द्वारा अपने रक्तचाप को नियन्त्रित करने का उन्हें परीक्षण दिया । कुछ दिनों के प्रशिक्षण के उपरान्त वे इसे भली-भांति सीख गए और अपनी इच्छानुसार इसे नियन्त्रित करने में निष्णात हो भी गए, किन्तु प्रशिक्षकों ने देखा कि इस ऐच्छिक नियन्त्रण से उन्हें क्षणिक लाभ पहुँचता था । नियन्त्रण हटते ही स्थिति पुनः पूर्ववत् हो जाती । अस्तु, उन्होंने इसके साथ ध्यानपरक योग क्रियाओं को भी सम्मिलित कर दिया, तो पाया कि हाइपरटेन्शन के रोगी कम-से-कम एक वर्ष के लिए अपनी तकलीफ से मुक्ति पा लेते हैं । इस सन्दर्भ में "योगा एण्ड बायोफीडबैक इन दि मैनेजमैण्ट ऑफ हाइपरटेन्शन" नामक शीर्षक से "दि लैन्सट" नामक पत्रिका में अभी कुछ दिनों पूर्व एक लेख छपा था जिसमें योगाभ्यास के विभिन्न शरीर-क्रियाओं व प्लाज्मा कार्टीसाल जैसे रक्तस्रावों पर प्रभावों की चर्चा की गई थी, साथ ही इस बात का भी उल्लेख किया गया था कि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के साथ यदि इस प्राचीन स्वास्थ्य-सम्वर्धन पद्धति को भी जोड़ा जा सके, तो इसकी लाभकारी परिणति और भी अनेक गुनी बढ़ जायेगी ।

अब तो इससे सम्बन्धित बायोएनर्जेटिक्स नामक एक स्वतन्त्र उपचार पद्धति का विकास हो गया है । इसके अतिरिक्त जर्मनी के डॉ. इडा राल्फ ने भी एक नई चिकित्सा प्राणाली आरम्भ की है जो राल्फिंग पद्धति कहलाती है । उपचार विज्ञान की इन दोनों विधाओं में मूल रूप में अष्टांग योग के आसनों पर ध्यान केन्द्रित कर रुग्णों को आरोग्य-लाभ देने की विशेष व्यवस्था है । इसी प्रकार आरोग्य विज्ञान की एक अन्य शाखा में मनःकायिक रोगियों को आटोजैनिक ट्रेनिंग द्वारा रिलेक्सेशन (शिथिलीकरण) का अभ्यास कराया जाता है । इसमें भी मूल भूमिका यौगिक क्रियाओं की ही होती है ।

स्वास्थ्य-संरक्षण की इस विधा को देश-विदेश के अनेक चिकत्सकों-विद्वानों ने स्वयं पर भी आजमाया और उसके लाभों को अनुभव किया है । इंस्टीट्यूट ऑफ मेडिकल साइन्सेज, बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी के डायरेक्टर एवं "ए मेनुअल ऑफ साइन्स एण्ड फिलॉसफी ऑफ योगा" के मूर्धन्य लेखक के.एन. उडुपा अनेक प्रकार की मनोकायिक बीमारियों के शिकार थे । ट्रैक्वलाइजर्स का सेवन करते रहे, पर शिवाय सुस्ती के इससे और कोई लाभ नहीं मिला । किसी योग विशेषज्ञ की सलाह से उन्होंने योगासनों का अभ्यास आरम्भ किया । उनके आश्चर्य की सीमा न रही । जो फायदा महीनों के औषधि सेवन से नहीं हुआ, वह एक सप्ताह के यौगिक अभ्यास में ही अनुभव होने लगा । अभ्यास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जारी रखा । शिकायतें धीरे-धीरे कम होती गईं और समाप्त हो गईं । इसके अतिरिक्त उन्हें जो अन्य लाभ प्राप्त हुए वह थे—कार्यक्षमता में बढ़ोत्तरी तथा बुढ़ापे के लक्षणों, यथा बालों का झड़ना, उनका श्वेत होना, त्वचा पर झुर्रियाँ पड़ना आदि में घटोत्तरी । इन उपलब्धियों से उनके शोध क्षेत्र में परिवर्तन आ गया । वे अब वनौषधियों व ध्यानयोग के शरीर विज्ञान पर सम्भावित प्रभावों का अध्ययन करने लगे । उनका कहना है कि उन्हें जो सबसे महत्त्वपूर्ण उपलब्धि योगाभ्यास से प्राप्त हुई, वह थी मन-मस्तिष्क की ताजगी ।

इस विषय के निष्णातों का कथन है कि व्यायाम और योगाभ्यास में एक मूलभूत अन्तर है कि व्यायाम स्थूलतापरक होता है, जबकि योगासन सूक्ष्म क्रियापरक । इस अन्तर के कारण ही दोनों से मिलने वाले लाभों में व्यतिरेक दिखाई पड़ता है । व्यायाम में एक ही क्रिया की आवृत्ति बारम्बार होती है तथा यह अधिक थकाने वाला होता है एवं इसमें ऊर्जा उपभोग भी अधिक होता है । इससे बाह्य शरीर संगठना सुन्दर और आकर्षक तो अवश्य हो जाती है, पर जहाँ शरीर क्रिया और अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को प्रभावित करने का प्रश्न आता है, वहाँ यह अक्षम साबित होता है, जबकि दूसरी ओर योगाभ्यासों से स्थूलता तो नहीं बढ़ती, किन्तु अन्तःस्रावी ग्रन्थियों को नियन्त्रित कर यह शरीर-फिजियोलॉजी को सुव्यवस्थित बनाए रहता है, फलतः व्यक्ति हर वक्त स्फूर्ति का एहसास करता है । इसमें ऊर्जा उपभोग भी न्यूनतम होता है, क्योंकि योगासनों में एक ही क्रिया की पुनरावृत्ति के स्थान पर शरीर को एक निश्चित अवधि तक अवस्था विशेष में रखा जाता है, जिससे शारीरिक-मानसिक शक्ति का संरक्षण होता है । सामान्य कसरत से ऐच्छिक माँसपेशियों में रक्त प्रवाह बढ़ता है, जबकि यौगिक क्रियाएँ उन समस्त अंग-अवयवों को प्रभावित, उत्तेजित करती हैं जो प्राणदायी हैं । रक्त-प्रवाह भी उनमें बढ़ाती हैं । इस प्रकार प्राणायाम से यदि फेफड़ों में रक्त-संचार बढ़ता है, तो सर्वांगासन से अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का रक्त-प्रवाह तेज होता है । इस तरह हम देखते हैं कि साधारण योग-क्रियाओं द्वारा अन्तरांगों को सीधे प्रभावित कर उनकी सक्रियता को आसानी से बढ़ाया जा सकता है । फिर भी इन सभी को उचित मार्गदर्शन में किया जाना चाहिए ।

ज्ञातव्य है कि शरीर-क्रिया का आयु से गहरा सम्बन्ध है । यदि आन्तरिक अवयव ठीक रहें, वे सुव्यवस्थित ढंग से काम करते रहें, तो स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है, जिसका सीधा प्रभाव आयुष्य पर पड़ता है । इसके नियमित अभ्यास से अनेकों ने आयु बढ़ाई है । इन्हीं में से एक हैं—इंग्लैण्ड के प्रख्यात पत्रकार चार्ल्स हेनरी अर्नाल्ड । सन् १९७६ में ११० वर्ष की आयु पूर्ण कर 'जीवेम् शरदः शतम्' के श्रुतिवचन को सार्थक करते हुए उन्होंने महाप्रयाण किया । इस आयु में भी उनका स्वास्थ्य, याददाश्त, आँखों की रोशनी सामान्य व्यक्ति से अच्छे थे । बिना किसी औषधि के, कष्ट के वे चिरनिद्रा में सो गए ।

इन दिनों तनावजन्य व्याधियों का बाहुल्य है । चिकित्सा वैज्ञानिकों का मत है कि ये प्रायः ४० से ५० वर्ष की आयु में होती देखी जाती हैं । इस अवधि में जो गड़बड़ा जाता है, वह अल्पायु में ही उच्च रक्तचाप, रक्तावरोध, मधुमेह, मोटापा, पेप्टिक अल्सर, पित्ताशय व गुर्दे की पथरी का शिकार हो कष्ट पाता व मृत्यु को प्राप्त होता है । यदि इस स्थिति के आने के पूर्व ही योग विज्ञान के प्रचलित अनुशासनों का अवलम्बन लिया जा सके तो स्वास्थ्य को अक्षुण्ण बनाए रखना सम्भव है । योग उपचार के रूप में एक वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति को अपनाया जा सके तो लम्बे समय तक नीरोग रह जीने का आनन्द लिया जा सकता है ।

योग निद्रा द्वारा अतिमानवी चेतना की उपलब्धि

मस्तिष्कीय क्षमता से हर कोई परिचित है । बुद्धिमान, दार्शनिक, कलाकार, वैज्ञानिक अपनी पैनी सूझ-बूझ के आधार पर ही अनौखी सफलताएँ प्राप्त करते हैं । परिचित मस्तिष्क से ऊपर एक और दिव्य चेतना स्रोत है जहाँ चित्तशक्ति निवास करती है । मनौवैज्ञानिकों की भाषा में इसे अचेतन मन (Super ego) कहते हैं । मनोविज्ञान में 'सुपर इगो' के रूप में इसी की विवेचना की जाती है । योगशास्त्रों में इसे देवलोक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अतीन्द्रिय चेतना का केन्द्र एक ऋद्धि-सिद्धियों का भण्डार माना गया है । इस क्षेत्र पर अधिकार प्राप्त करने वाला अलौकिक, असाधारण अतिमानव एवं सिद्ध पुरुष बन सकता है ।

यह एक अद्‌भुत संयोग है कि जब अचेतन जागता है तब प्रबुद्ध मस्तिष्क सोता है और जब प्रबुद्ध मस्तिष्क जागता है तो अचेतन सोता रहता है, दोनों एक साथ कार्यरत नहीं रह सकते । योगनिद्रा उत्पन्न करके पूर्ण या आंशिक समाधि में जाया जा सकता है और अतिमानवी अनुभूतियों के क्षेत्र में प्रवेश किया जा सकता है । कभी-कभी संयोगवश, संस्कारवश योग निद्रा "सामान्य निद्रा" में सामान्य लोगों को भी प्राप्त हो जाती है और वे ऐसे स्वप्न देखते हैं जो तथ्यपूर्ण भविष्य का आभास देने वाले होते हैं । सामान्य स्वप्न तो आमतौर से निरर्थक ही होते हैं पर सार्थक स्वप्नों के प्रमाण भी कम नहीं मिलते ।

शिकागो विश्वविद्यालय के एक मनोविज्ञानी डॉ. डेविड नीडर ने स्वप्नों के साथ जुड़े रहने वाले तथ्यों पर लम्बे समय तक खोज की है । उनका कथन है कि बहुत-से सपने आश्चर्यजनक रीति से तथ्यपूर्ण होते हैं । उनमें से कई बार समस्याओं के ऐसे समाधान मिलते हैं जैसे जाग्रत अवस्था में बहुत माथा-फोड़ी करने पर भी नहीं मिल पाते ।

मनःशास्त्री डॉ. हेवलाक एलिस का कथन है—हमारा अचेतन स्वप्नों की भाषा में ऐसे तथ्यों को प्रकट करता है जिसे समझने पर हम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त कर सकते हैं । कई बार तो वे हमें हमारी समस्याओं के अद्‌भुत किन्तु सही समाधान प्रस्तुत करते हैं ।

रोम में भी ऐसी ही एक घटना हुई जिसमें स्वप्नों की सच्चाई का आभास मिला । श्रीमती ऐमीलिया का व्यापारी पति अचानक गायब हो गया । उसने पुलिस में इसकी रिपोर्ट की और साथ ही यह भी लिखाया कि उसने ऐसी हुलिया के व्यक्ति को उसकी हत्या करते सपने में देखा है । सपना नोट कर लिया गया पर उसकी प्रामाणिकता पर किसी को विश्वास नहीं हुआ; फिर क्योंकि खोये व्यक्ति के मर जाने तक का कोई सबूत न था, हत्या की बात कैसे सच मानी जाय । बहुत दिन बाद हत्या के प्रमाण मिले और गुप्तचर विभाग ने छद्म रूप में पादरी बनकर रह रहे हत्यारे को खोज निकाला । सुराग आगे चले और हत्या उसी व्यक्ति द्वारा किए जाने की बात पूरी तरह प्रामाणित हो गई ।

आयरलैण्ड की पुलिस ने एक हत्यारे के पकड़ने और उसका अपराध सिद्ध करके फाँसी दिलाने में सपने द्वारा प्राप्त सूचना के आधार पर सफलता प्राप्त की थी । तियेरासी निवासी एक व्यक्ति हिकी ने अपने मित्र को पैसा लूटने के उद्देश्य से चाकू मार कर कत्ल कर दिया । मृतक के गायब होने भर की सूचना पुलिस को दी । वह यह पता लगाने में व्यस्त थी कि आखिर उस व्यक्ति का क्या हुआ ? इस खोज-बीन में एक छोटे होटल के मालिक रोजर्स ने पुलिस को बताया कि उस युवक की हत्या हो गई और वह उस हत्या का सुराग दे सकता है । पूछताछ में रोजर्स की पत्नी ने बताया कि कुछ दिन पूर्व यह दोनों उसके होटल में जलपान करने आये थे । इससे पूर्व उसने ठीक उसी हुलिया के दो व्यक्तियों में से एक के द्वारा दूसरे की हत्या किए जाने का सपना देखा था । इस समता से उसे बहुत आश्चर्य हुआ और उसने उन्हें इस भवतव्यता की सूचना देकर कुछ दिन होटल में ही ठहरे रहने की सलाह दी, किन्तु वे चले गए । सपने में जिस स्थान पर हत्या हुई उसका चित्र पत्नी के मस्तिष्क में है; वह उस जगह को खोजने में सहायता दे सकती है । पुलिस ने इस दम्पत्ति की सहायता ली और उस झाड़ी को खोज निकाला जहाँ युवक की लाश पड़ी थी । हत्यारे का जो हुलिया बताया गया था वह हिकी से मिलता-जुलता था अस्तु उसे पकड़ा गया । अन्ततः हत्या को प्रमाणित करने वाले ऐसे अनेक सूत्र मिल गए जिनके आधार पर अदालत द्वारा हत्यारे को फाँसी की सजा दी जा सकी ।

विश्वप्रसिद्ध गणितज्ञों में से कई ऐसे हैं जो अपने आविष्कृत सिद्धान्तों की सफलता का श्रेय स्वप्नों में उपलब्ध हुई प्रेरणाओं को देते हैं । इन गणितज्ञों में फुडसियनस्त्रित और हेनरीफार के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं ।

सम्राट् सीजर और हेनरी तृतीय को अपनी हत्याओं की पूर्व सूचना स्वप्नों में मिल चुकी थी जिसे उन्होंने अपने प्रियजनों को बता भी दिया था । प्रयत्न करने पर भी वे हत्याएँ टाली न जा सकीं । चर्चिल, लार्ड

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किचनर और जनरल गेन्डार्ड को कई भयंकर दुर्घटनाओं की पूर्व सूचना सपनों में मिल गई थी । अवसर आने पर उन्होंने स्वप्नों की बात को ध्यान में रखते हुए विशेष सतर्कता बरती और अपनी जानें बचा लीं ।

नोबेल पुरस्कार विजेता डॉ. पाडलिंग ने भी यह बताया था कि उन्हें अनेक नये वैज्ञानिक विचारों की प्रेरणा सपनों में मिली है ।

बेंजीन परमाणुओं के सम्बन्ध में नई खोज करने के लिए वैज्ञानिक केकुल ने अच्छी ख्याति प्राप्त की थी । उन्होंने अपनी खोज की प्रेरणा का स्रोत अपने एक स्वप्न से उपलब्ध किया था ।

ऐसा ही अनुभव विज्ञानवेत्ता लुई ऐगासिज का है । उनकी जीवाश्म सम्बन्धी खोजें कैसे सफल हुईं, इस पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि मुझे स्वप्नों के इशारे से अपनी खोजें आगे बढ़ाने की अक्सर प्रेरणा मिलती रही है ।

अमेरिका के औषधि शास्त्रज्ञ डॉ. आट्टोलोवी ने जिन आविष्कारों के आधार पर नोबेल पुरस्कार जीता, उसकी मूल प्रेरणा उन्हें स्वप्नों में ही मिली थी । शारीरिक तन्तुओं, स्नायुओं और कोशाओं पर वे कुछ शोध कर रहे थे, पर ऐसे आधार नहीं मिल रहे थे जिनके सहारे किसी निष्कर्ष पर पहुँचा जा सके । ईस्टर की पहली रात को सपने में उन्हें आवश्यक सूत्र हाथ लगे जिन्हें उन्होंने आँख खुलते ही नोट कर लिया । एक दिन दोपहर को भी इसी खोज के सम्बन्ध में ऐसा सपना दीखा जिसमें वे कुछ प्रयोग कर रहे थे उसे भी उन्होंने नोट कर लिया । यद्यपि आरम्भ में वे नोट अटपटे लगे, पर अन्ततः वे उसी आधार पर अपने प्रयोगों में सफलता प्राप्त करने में समर्थ हुए ।

अपनी अद्‌भुत कल्पनाओं के उठने का मूल स्रोत कहाँ है ? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए महान वैज्ञानिक आइन्स्टीन ने एक बार कहा था—प्रायः निद्रित अथवा अर्ध-निद्रित स्थिति में कभी-कभी ऐसे समय आते हैं जब मस्तिष्क अपनी सामान्य मर्यादाओं का उल्लंघन करके ऐसी सूचनाएँ देने लगता है जिनके आधार पर आविष्कारों की आधारशिला रखी जा सके ।

आइन्स्टीन कहते थे—विज्ञान और गणित के आधार पर यह सिद्ध किया जा सकता है कि यह दृश्य संसार स्वप्नों के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । उन्होंने 'लाइफ' पत्रिका के प्रतिनिधि को भेंट देते हुए कहा था—सामने खड़ा हुआ वृक्ष यद्यपि अपना अस्तित्व भली प्रकार प्रमाणित कर रहा है तो भी वस्तुतः यह एक स्वप्न के अतिरिक्त और कुछ नहीं है ।

मैस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म, क्लेरोवायन्स, टैलीपैथी आदि की स्थिति प्रबुद्ध मस्तिष्क को प्रसुप्त करके ही उत्पन्न की जाती है । यदि चेतन मस्तिष्क पूर्ण सजग रहे और तर्कबुद्धि के साथ निद्रित न होने का संकल्प किए रहे तो उनमें से एक भी आध्यात्मिक स्थिति उत्पन्न नहीं हो सकती है । जाग्रत मन को निद्रित करके ही अचेतन को आध्यात्म भूमिका में कुछ अधिक योगदान दे सकने योग्य बनाया जा सकता है ।

प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि यह चार अवस्थाएँ प्रबुद्ध मन की स्वाभाविक चंचलता को निग्रहीत करके एकाग्रता के केन्द्र बिन्दु पर रोके रखने के लिए की जाती है । इनमें जितनी सफलता मिलती जाती है, मस्तिष्क शान्त और समाहित होता चला जाता है । साथ ही चित्तशक्ति का जागरण आरम्भ हो जाता है । हठयोगी कई प्रकार की समाधि लगाते हैं, उसे थोड़े समय में आरम्भ करके लम्बे समय तक ले जाते हैं । कई घण्टे से लेकर कई महीने तक समाधि लगाने वाले योगियों का वर्णन प्रामाणिक प्रत्यक्षदर्शियों द्वारा मिलता है । इससे प्रतीत होता है कि मानवी संकल्प बल न केवल बाह्य प्रयोजनों में वरन् अपने शरीर की अनिवार्य गतिविधियों को इच्छानुसार नियन्त्रित अवरुद्ध करने में भी सफल हो सकता है ।

पंजाब के महाराजा रणजीत सिंह से अंग्रेजों ने एक राजनैतिक सन्धि की । इसी सन्दर्भ में अंग्रेज सरकार का एक प्रतिनिधिमण्डल महाराजा से मिलने अदीना नगर जा पहुँचा । उन दिनों वे वहीं ठहरे हुए थे । अंग्रेज दल में पोलिटिकल सेक्रेटरी डब्ल्यू.एच. मैकनाटन, पोलिटिकल ऐजेन्ट कप्तान वार्ड, मिलिटरी सेक्रेटरी डब्ल्यू.जी. ओसवार्न, कप्तान जी. मैकग्रेवर, डॉ. डूरण्ड आदि थे । घटना १८३८ की है ।

उन दिनों पंजाब में एक ऐसे योगी की बहुत ख्याति थी जो महीनों तक समाधि लगाकर भूमि में गढ़ा रहता था । अंग्रेजी दल ने राजनैतिक बातों से निपटकर महाराजा से उस योगी के चमत्कार दिखाने की व्यवस्था कर देने का अनुरोध किया । महाराजा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने साधु से पुछवाया और उसके सहमत होने पर प्रदर्शन की व्यवस्था बना दी । इस भूमि समाधि का विस्तृत विवरण उस दल के एक सदस्य डब्ल्यू. जी. ओसवार्न ने दिया है । पुस्तक का नाम है—"रणजीत सिंह ।"

उस पुस्तक में लिखा है—महाराज, अनेक सरदार और अंग्रेजी दल की उपस्थिति में योगी ने अपने मुख, नाक, कान के छिद्रों को छोड़कर शेष सारा शरीर मौम से बन्द किया ताकि किसी रोमकूम से उसके भीतर वायु का आवागमन न हो । इसके बाद योगी समाधिस्थ हो गया । शरीर को एक मजबूत बोरी में बन्द किया गया और उस पर सील मुहर लगा दी गई । बोरी को सन्दूक में बन्द किया गया और उस पर ताला लगा दिया गया । गड्ढे में मिट्टी भरी गई । मिट्टी पोली न रहे इसलिए उसे भली प्रकार रोंदा गया । इसके बाद उस जमीन पर जौ बो दिए गए ताकि कोई उखाड़-पछाड़ की जाय तो उसकी साक्षी जौ के पौधे दे सकें । यह सारी क्रिया जनरल वेनट्ररा ने अपने हाथों पूरी की ताकि उसमें कहीं किसी आशंका की गुंजाइश न रहे । समाधि भूमि पर मिलिटरी का कड़ा पहरा बिठा दिया गया ।

दस महीने बाद गड्ढा खोदा गया । खोदते समय सारे अफसर मौजूद थे । कप्तान वार्ड ने अपने हाथों सन्दूक निकाला और सील खोली । योगी की नाड़ी और हृदय की धड़कन बिलकुल बन्द थी, तो भी वे जीवित थे । सारा शरीर ठण्डा था, सिर्फ कपाल गर्म था । उन्हें गर्म पानी से स्नान कराया गया । धीरे-धीरे दो घण्टे में वे होश में आ गए । इस लम्बी अवधि में योगी के नाखून और बाल नहीं बढ़े थे ।

इसी प्रकार की एक अन्य भूमि-समाधि का वर्णन डॉक्टर मैक ग्रेवर ने अपनी पुस्तक 'हिस्ट्री ऑफ दि सिख्स' में दिया है । उसमें हरिदास नामक एक योगी द्वारा लाहौर में ४० दिन के लिए ली गई समाधि का वर्णन है । यह भी महाराजा रणजीत सिंह और अंग्रेज अफसरों की उपस्थिति में ली गई और खोली गई थी । इन्हीं साधु ने एक समाधि जैसलमेर में भी ली थी ।

रामायण कथा के अनुसार रावण का भाई कुम्भकरण छै महीने सोता था और छः महीने जागता था । यदि यह कथा सही है तो उस प्रक्रिया के द्वारा मनुष्य को जरा-मरण से मुक्त किया जा सकता है । छः महीने की सुषुप्तावस्था में कोषाओं की इतनी क्षतिपूर्ति हो सकती है कि वे पुनः कायाकल्प की तरह नये सिरे से नवजीवन जैसा कार्य प्रारम्भ कर सकें । इस प्रकार आमदनी तथा खर्च बराबर होते रहने की प्रक्रिया अनन्त काल तक चलती रह सकती है और मनुष्य को अमरता का लाभ मिल सकता है । वृद्धावस्था थकान का नाम है । थकान का अर्थ है आमदनी से खर्च का अधिक होना—विकृतियों के निराकरण में अवरोध उत्पन्न होना । मौत के निकट घसीट ले जाने वाली यही कठिनाइयाँ हैं जिन्हें प्रसुप्त निद्रा अपनाकर निरस्त करने की बात आजकल वैज्ञानिकों के मस्तिष्क में चल रही है ।

विज्ञान ने यह स्वीकार कर लिया है कि यदि मनुष्य चिर निद्रा में सुलाया जा सके तो उसे रोगों और थकान के पंजे से छुड़ा कर नवजीवन प्रदान किया जा सकता है । समाधि की विधि-व्यवस्था तो भौतिक विज्ञान में नहीं है पर उन्होंने शीत निद्रा का एक नया तरीका ढूँढ़ा है । विज्ञानी डेल कारएन्टर का कथन है कि मनुष्य को ठण्डा करके गहरी सुषुप्तावस्था में सिद्धान्ततः पहुँचाया जा सकता है । अब उसका व्यावहारिक रूप ही सामने लाना बाकी है । न्यून तापमान में भी जीव-कोषों में पाया जाने वाला 'ग्लाइसकोल' रसायन प्राणी को जीवित रख सकता है । इस प्रयोजन से एक विशेष रसायन खोज निकाला गया है । 'डाय-मिथाइल सल्फो ऑक्साइड' की सहायता से गहन शीत निद्रा में मनुष्य को भेजा जा सकेगा, साथ ही उस स्थिति में उत्पन्न हो सकने वाले संकटों की सम्भावना से भी उसे बचाया जा सकेगा ।

शीत निद्रा की समाप्ति कैसे होगी, इसके सम्बन्ध में अभी यही कल्पना है कि वैसा करना वातावरण में तापमान बढ़ाकर ही सम्भव हो सकता है । जो प्राणी शीत ऋतु में निद्रामग्न होते हैं वे गरम ऋतु के प्रभाव वाले वातावरण में आने से उत्तेजना ग्रहण करते हैं । अभीष्ट तापमान उपलब्ध होने पर उनकी जीव कोशिकाएँ सजग होने लगती हैं । शीत ऋतु में सोए मेंढकों को पकड़कर गरम कमरे में रखा गया तो वे जग पड़े और भोजन की तलाश में उछल-कूद करने लगे । शीत निद्रा में सुलाये गए मनुष्य को भी जब जगाना हो तब उसके लिए प्रयत्नपूर्वक अथवा स्वसंचालित पद्धति से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ऐसी व्यवस्था करनी पड़ेगी कि नियत समय पर आवश्यक गर्मी उत्पन्न होने लगे और सोया हुआ मनुष्य उस निद्रा को त्याग कर पुनः सक्रिय हो सके ।

प्रयत्न योग निद्रा के भौतिक हों, हिप्नोटिज्म स्तर के मानसिक हों अथवा समाधि स्तर के आध्यात्मिक हों, हर हालत में सर्वतोमुखी विश्राम एवं शान्त, एकाग्र समाधान की आवश्यकता अति महत्त्वपूर्ण समझी जाती रहेगी । उसे प्राप्त करके हम अतीन्द्रिय शक्ति सम्पादन से नये क्षेत्र में प्रवेश कर सकते हैं । निःसन्देह वह क्षेत्र इतना बहुमूल्य है कि जो उसमें प्रवेश करेगा वह असामान्य अतिमानवी विभूतियाँ उपलब्ध करके रहेगा ।

मानसिक विकास में एक अति उपयोगी प्रयोग है मनःसंस्थान को शिथिल कर देना । शरीर का पूर्ण शिथिलीकरण तथा प्रकृति-प्रदत्त निद्रा के सहारे मनुष्य अपनी जीवनचर्या सम्पन्न करता और अगले दिन के लिए कार्यकारी शक्ति प्राप्त करता है । निद्रा में व्यवधान पड़ने पर मनुष्य अशक्त एवं विक्षुब्ध दिखाई पड़ता है । नींद न आने की बीमारी लगातार चलती रहे तो उसकी परिणति पागलपन में हो सकती है । जिन्हें गहरी निद्रा आती है वे सामान्य आहार-विहार उपलब्ध होते हुए भी निरोग और बलिष्ठ बने रहते हैं । मानसिक क्षमता भी उनकी बड़ी-चढ़ी रहती है । अधिक गहरी निद्रा जिसे प्रसुप्ति कहते हैं दुर्बलों और रोगियों को जीवन प्रदान कर सकती है । आहार और निद्रा दोनों वर्गों की उपयोगिता लगभग समान स्तर की ही मानी जा सकती है ।

मनःसंस्थान की उच्चस्तरीय परतों को निद्रा का अपना महत्त्व है । यदि उसे उपलब्ध किया जा सके तो इस दिव्य संस्थान को अधिक स्वस्थ और अधिक समर्थ बनने का अवसर मिल सकता है ।

मन की दो प्रमुख पर्तें हैं—एक सचेतन दूसरी अचेतन-सचेतन ही सोच-विचार करता है और वह रात्रि को नींद में सोता है । अचेतन को कार्य-संचालन की समस्त स्वसंचालित गतिविधियों की व्यवस्था बनानी पड़ती है । श्वास-प्रश्वास, आकुंचन-प्रकुंचन, निमेष-उन्मेष जैसी क्रियाएँ निरन्तर चलती रहती हैं और उन्हीं के आधार पर शरीर का निर्वाह होता है । यह सब कुछ अचेतन की गतिविधियों पर निर्भर है । रात को सचेतन के सो जाने पर भी अचेतन क्रियाशील रहता है और स्वप्न देखने, करवट बदलने, कपड़े ओढ़ने, हटाने जैसे कृत्य कराता रहता है ।

अचेतन की थकान दूर करने और विश्राम देने के उद्देश्य से ही मृत्यु होती है । मरने और उसके बाद पुनः जन्म लेने के मध्य में जो समय मिलता है उसे 'चिर निद्रा' नाम दिया गया है । स्वर्ग-नरक जैसी अनुभूतियों का रसास्वादन उसी अवधि में मिलता रहता है ।

प्रयत्नपूर्वक यदि अचेतन को थोड़ा या अधिक समय का उथला या गहरा विश्राम दिया जा सके तो मानवी चेतना को बहुत राहत मिलती है । इस विश्राम से उसे थोड़ी-सी अवधि में ही नई स्फूर्ति प्राप्त होती है, साथ ही सचेतन के दबाव से दबे रहने वाले अन्तराल में भी अंकुरित विकसित होने का अवसर भी मिलता है । अन्तराल का विकास ही प्रकारान्तर से आत्मशक्ति का उद्भव-अभिवर्धन कहा जा सकता है ।

योग निद्रा के छोटे-बड़े अनेक स्तर हैं । बड़े स्तर को समाधि कहते हैं । यह निर्विकार, संकल्प रहित और सविकल्प-संकल्प सहित दो स्तर की होती है । सविकल्प का परिणाम भौतिक और निर्विकल्प का आध्यात्मिक उपलब्धियों के रूप में सामने आता है । योगनिद्रा स्वल्पकालीन होती है और समाधि चिर—दीर्घकालीन । दोनों ही परिस्थितियों में मन को अधिक शान्त एवं निष्क्रिय बनाने का प्रयत्न किया जाता है ।

ध्यानयोग के द्वारा इस स्थिति को प्राप्त किया जाता है । विचार संकल्प पूर्णतया समाप्त तो नहीं हो सकते पर उन्हें किसी एक केन्द्र पर नियोजित करके बिखराव के दबाव से मनःसंस्थान को मुक्त रखा जा सकता है । इतने से ही मनःक्षेत्र के जागरण एवं विकास में असाधारण योगदान मिलता है ।

पाश्चात्य देशों में इस दिशा में जो प्रयोग किए जाते हैं उन्हें सम्मोहन क्रिया के नाम से जाना जाता है । इसमें स्वसंकेतों द्वारा आत्मविकास का और सम्मोहन द्वारा दूसरों को अर्धमूर्छित या मूर्छित करके सुधार उपचार का प्रयत्न किया जाता है । ध्यानयोग मेडिटेशन के नाम से अब यह सर्वसाधारण की जानकारी का विषय बनता जा रहा है । उसका उपयोग प्रायः शारीरिक और मानसिक रोगों के निवारण में हो रहा है । प्राचीन काल के आध्यात्मवेत्ता उस प्रक्रिया को आत्मबल सम्वर्धन के लिए करते थे । उन दिनों चिकित्सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपचारों की आवश्यकता बहुत ही स्वल्प मात्रा में पड़ती थी । संयम और सन्तुलन के परिपालन से इन दिनों रोग कम ही होते थे, जो वे रक्त शुद्ध रहने के कारण सामान्य जड़ी-बूटियों के उपचार से ही अच्छे हो जाते थे । परिचित मस्तिष्क से ऊपर एक और दिव्य चेतना स्रोत है जहाँ चितशक्ति निवास करती है । मनोवैज्ञानिक इसे अचेतन कहते हैं । "सुपर ईगो" के रूप में इसी की विवेचना की जाती रही है । यह देवलोक, अतीन्द्रिय चेतना का केन्द्र एवं ऋषि-सिद्धियों का भण्डार माना गया है । इस क्षेत्र पर अधिकार प्राप्त कर लेने वाला अलौकिक, असाधारण, अतिमानव एवं सिद्ध पुरुष बन सकता है ।

जब अचेतन जागता है, जब प्रबुद्ध मस्तिष्क सोता है और जब प्रबुद्ध मस्तिष्क जागता है तब चेतन सोता रहता है । दोनों एक-साथ कार्यरत नहीं रह सकते । योग निद्रा उत्पन्न करके पूर्व या आंशिक समाधि में जाया जा सकता है और अतिमानवी अनुभूतियों के क्षेत्र में प्रवेश किया जा सकता है । यदि चेतन मस्तिष्क पूर्ण सजग रहे और तर्क-बुद्धि के साथ निद्रित न होने का संकल्प किए रहे तो आध्यात्मिक जागृति असम्भव है । जाग्रत मन को निद्रित करके ही अचेतन को आध्यात्म भूमिका में कुछ अधिक योगदान दे सकने योग्य बनाया जा सकता है । योगाभ्यास परक प्रत्याहार, धारणा, ध्यान और समाधि की चार अवस्थाएँ इसीलिए प्रयुक्त की जाती हैं और समाधि स्थिति की प्राप्ति द्वारा कई प्रकार के लाभ उठाये जा सकते हैं, जैसे—

(१) प्रबुद्ध मस्तिष्क को गहरा विश्राम देकर उसे अधिक स्वस्थ, सक्रिय एवं बुद्धिमान् बनाया जा सकता है ।

(२) अचेतन मस्तिष्क को जाग्रत करके उसकी अतीन्द्रिय क्षमता बढ़ाई जा सकती है और चमत्कारी सिद्ध पुरुषों की देव भूमिका में पहुँचा जा सकता है ।

(३) शरीर की गतिविधियाँ रोक सकने में समर्थ संकल्प बल की आग में संसार की कठिनाइयों को गलाया जा सकता है । जो कठिन है, उन्हें सरल बनाया जा सकता है एवं दूसरों को आध्यात्मिक योगदान देकर सुखी बनाया जा सकता है ।

(४) दीर्घजीवन का उद्देश्य पूरा करने के लिए कायाकल्प का रहस्यमय अमृत पाया जा सकता है । विज्ञान ने यह स्वीकार कर लिया है कि यदि मनुष्य को योगनिद्रा में सुलाया जा सके तो उसे रोगों और थकान के पंजों से छुड़ा कर नवजीवन प्रदान किया जा सकता है । भौतिक विज्ञान ने 'शीत निद्रा' के रूप में समाधि से मिलती-जुलती एक विधि ढूँढ़ निकाली है । विज्ञानी डेल कारेण्टर के अनुसार मनुष्य को ठण्डा करके गहरी सुषप्तावस्था में पहुँचाया जा सकता है ।

शीत-निद्रा के भौतिक हो या हिप्नोटिज्म स्तर के, मानसिक हों अथवा समाधि स्तर के आध्यात्मिक हों, हर स्थिति में सर्वतोमुखी विश्राम एवं शान्त, एकाग्र समाधान की आवश्यकता अति महत्त्वपूर्ण समझी जाती रहेगी । उसे प्राप्त करके हम अतीन्द्रिय शक्ति सम्पादन से नये क्षेत्र में प्रवेश कर सकते हैं ।

योगनिद्रा का तात्पर्य है चेतना का प्रवाह शरीर निर्वाह की दिशा से हटाकर अन्तःक्षेत्र की ओर मोड़ देना । सूखे खेत में पानी भरने पर उसमें हरियाली उगने का उपक्रम आरम्भ होता है । इसके दो लाभ होते हैं—एक तो उच्चस्तरीय क्षमता का अभिवर्धन दूसरे निकृष्ट कुसंस्कारों का निराकरण । दोनों कार्य एक साथ चलने लगते हैं । प्रकाश बढ़ता है तो अन्धकार अनायास ही अपना स्थान छोड़ता है ।

मानसिक तनाव एवं विक्षोभ के कारण व्यक्तित्व को अपार हानि होती है । यह उद्विग्नता और कुछ नहीं अन्तराल की असमर्थता भर है । यह असमर्थता और कुछ नहीं समुचित विश्राम न मिलने की प्रक्रिया है । यदि इस कुचक्र को तोड़ा जा सके तो मनःक्षेत्र को अभिनव परिपोषण मिल सकता है और उसकी सामान्य तथा असामान्य क्षमताओं का नये सिरे से विस्तार हो सकता है । कहना न होगा कि अन्तःक्षेत्र का यह लाभ भौतिक क्षेत्र की समस्त सफलताओं की तुलना में अधिक महत्त्वपूर्ण है । मनःक्षेत्र के विकास को लक्ष्य रखकर किए जाने वाले किसी भी प्रयास को अति-दूरदर्शितापूर्ण कहा जा सकता है ।

मनःक्षेत्र का बिखराव रोकने की प्रक्रिया ही ध्यानयोग है । इसके द्वारा सामर्थ्य की खपत में जो बचत होती है उसका अधिकांश लाभ मस्तिष्क के उस क्षेत्र को मिलता है जिसे ब्रह्मचक्र, ब्रह्मरंध्र, सहस्रार आदि नामों से पुकारते हैं । यह इस क्षेत्र में अवस्थित दो अति महत्त्वपूर्ण ग्रन्थियों की समन्वित प्रक्रिया का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भ्रम है । आज्ञाचक्र इसी को कहते हैं । ध्यानयोग की प्रतिक्रिया के सम्बन्ध में एक रुचिकर वैज्ञानिक तथ्य है कि इस दौरान मस्तिष्क का सक्रिय भाग तुरन्त पीनियल एवं पिटीट्यरी ग्रन्थियों से सम्बन्ध स्थापित कर लेता है । यह इनकी हॉर्मोन्स स्राव करने की क्षमता में होने वाले परिवर्तनों से परिलक्षित होता है । ये दोनों ही स्थूल ग्रन्थियाँ आध्यात्म की दृष्टि से बड़ी रहस्यमय हैं । दोनों ही ऐसे रस का स्राव करती हैं, जो हमारी चेतना के स्तर को प्रभावित करते हैं ।

पीनियल ग्लैण्ड को दार्शनिकों तथा रहस्यवादियों ने 'तीसरा नेत्र' एवं 'आत्मा का स्थान' कहा है । हमारे प्रमुख सूक्ष्म शक्ति-केन्द्रों में यह एक है तथा आध्यात्मिक विकास हेतु महत्त्वपूर्ण ग्रन्थि है । उच्च शक्तियों से सम्बन्ध जोड़ने में यह सहायक है । इसका पूर्ण जागरण हमारी चेतना को भावनात्मक और बौद्धिक स्तर से ऊपर उठाकर और अधिक सूक्ष्म जगत में जाता है ।

पिटीटुअरी ग्लैण्ड को तो शरीर का सम्राट् कहा जा सकता है । इस ग्रन्थि से स्नायु संस्थान एवं हॉर्मोन संस्थान की परस्पर प्रक्रिया से ही रसस्राव होता है । सारे शरीर की अन्य हॉर्मोन ग्रन्थियाँ चयापचयी एवं भावनात्मक प्रतिक्रिया को पिटीटुअरी प्रभावित करती है ।

यह अनन्त विस्तृत परम चेतना का प्रवेश द्वार है । यह भौतिक एवं आध्यात्मिक क्षेत्रों का मिलन-बिन्दु माना गया है । ध्यान साधना द्वारा इस ग्रन्थि को नियन्त्रित तथा नियमित कर मनुष्य अपने स्थूल, सूक्ष्म एवं आत्मिक आवरणों का परिमार्जन कर सकता है, पूर्ण मानव बन सकता है ।

जब भी कोई योगनिद्रा का अभ्यास करता है, प्रत्येक बार शक्ति-प्रवाह ब्रेन सर्किटों के मध्य नये सम्बन्ध स्थापित करता है । मस्तिष्क के अँधेरे निष्क्रिय क्षेत्र को प्रकाशित एवं सक्रिय करता है । यह हमारी चेतना को बाह्य जगत के पूर्ण व्यवसाय से अलग करता है तथा उसकी अचेतन क्रियाओं को चेतन नियन्त्रण में लाता है ।

चिकित्सा क्षेत्र में योगनिद्रा का उपयोग शारीरिक एवं मानसिक रोगों की निवृत्ति के लिए किया जा रहा है और उसमें आशातीत सफलता भी मिल रही है । अमेरिका में अकेले डॉ. हार्समैन ही नहीं अन्य १६ अन्य बड़े-बड़े डॉक्टर इस सम्मोहन पद्धति का प्रयोग बड़ी सफलतापूर्वक कर रहे हैं । डॉ. हार्समैन का दावा है कि सम्मोहन पद्धति से महिलाओं को पीड़ा रहित प्रसव कराया जा सकता है तथा क्षय रोग के रोगियों तथा हृदय रोग के रोगियों को भी यह सम्मोहन पद्धति बड़ी कारगर रही है क्योंकि इन रोगों में लम्बे समय तक बेहोशी की दवा पर मरीज को रखना खतरनाक है ।

सम्मोहन क्रिया द्वारा अब तो कृत्रिम हृदय प्रत्यारोपण, अथवा लम्बे समय तक के ऑपरेशनों तक में सफलता प्राप्त कर ली गई है । सम्मोहन पद्धति से अतिजटिल ऑपरेशन, मस्तिष्क का ऑपरेशन, भीतरी टूटी हडिड्यों को निकालना, आँन्तरिक घाव अथवा अति वेदनाशील ऑपरेशनों पर भी सफलता प्राप्त कर ली गई है । जहाँ औषधियाँ कारगर नहीं होतीं, जैसे आदतें अथवा स्वभाव में परिवर्तन, वहाँ भी सम्मोहन क्रिया के बड़े अच्छे परिणाम सामने आये हैं । जिन व्यक्तियों को दिन में ६० से ७० तक सिगरेटें पीने की आदत थी, उन्हें सम्मोहन क्रिया द्वारा केवल १० सिगरेटों तक सीमित करने में एवं अन्ततः छुड़वाने में भी सफलता मिली है । इसी प्रकार अधिक खाने वालों की भूख को सन्तुलित किया जा सका है और अधिक मोटापे को कम करने के लिए भी प्रयोग सफल रहे हैं ।

अनेकों नशे की गोलियाँ खाकर सोने वालों, शराबियों, नाखून कुतरने की बुरी आदत वालों, बिस्तर पर पेशाब करने वालों तथा अगूँठा चूसने वाले बालकों पर भी पूरी तरह सम्मोहन क्रिया सफल रही है ।

मनःतत्व के विज्ञान एवं उपचार में योगनिन्द्रा का अति महत्त्वपूर्ण स्थान है । उसके हल्के-भारी अनेक प्रयोग-विनियोग हैं । इन्हें समझने-अपनाने का विज्ञान प्रयत्न सम्मत आधार पर किया जाय तो निःसन्देह उसका इतना महत्त्वपूर्ण लाभ जन-समाज को मिल सकता है जितना भौतिक अनुसन्धान आविष्कार से भी नहीं मिल सका । पदार्थ की तुलना में यदि चेतना का महत्त्व स्वीकार किया जाता है तो यह भी मानना पड़ेगा कि योगनिद्रा जैसे अभ्यास व्यक्तित्व को अधिक समर्थ बनाने में और उस आधार पर सर्वतोन्मुखी प्रगति का पथ प्रशस्त करने में अतीव उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पूर्ण योग की साधना एवं सिद्धि

महर्षि अरविन्द ने अपनी पूर्ण योग रूपी सर्वांगपूर्ण पद्धति के माध्यम से बताया है कि जगत और जीवन से बाहर निकलकर स्वर्ग या निर्वाण में जाना योग का लक्ष्य नहीं है, अपितु जीवन एवं जगत को परिवर्तित करना ही पूर्ण योग है । यदि कोई दिव्य सिद्धि की व्यक्तिगत उपलब्धि नहीं, वरन् ऐसा क्या है जिसे पार्थिव चेतना हेतु अपनाया ही जाना चाहिए । यह कोई विश्वातीत उपलब्धि नहीं अतिवैश्व उपलब्धि है ।

इस सर्वांगपूर्ण योग पद्धति के चार प्रमुख अंग हैं—शुद्धि, मुक्ति, सिद्धि और भुक्ति । साधना की प्रथम अनिवार्य आवश्यकता है—शुद्धि । विभिन्न उपदिष्ट साधना प्रणालियों में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है । इसका क्षेत्र अति विशाल है । अन्तः और बाह्य दोनों का परिशोधन आवश्यक है । हठयोग की साधना सामान्यतया शरीर के परिशोधन का एक प्रयास है । इससे जीवन को एक काल तक परिवर्तित भी कर लेते हैं । पूर्ण योग में शरीर ही नहीं मन, प्राण, अन्तःकरण अर्थात् सत्ता के समस्त अंगों का परिष्कार होता है ।

शुद्धि की शुरूआत है समता के दिग्दर्शन से । साधक निम्न प्रकृति की सभी क्रियाओं, विभिन्न द्वन्द्वों, अविद्या के आक्रमण और अपने अज्ञान को इस दृष्टि से देखता है और उसे दूर करने हेतु प्रयत्न करता है । इस शुद्धि के फलस्वरूप मन की शान्ति, चित्त की स्थिरता, प्राण की एकाग्रता, हृदय की तन्मयता और विकारों से निष्कृति प्राप्त होती है, जो पूर्ण योग की आधार भूमि है । ऐसे शुद्ध, शान्त, चंचल और नीरव आधार पर ही तो भागवत आनन्द-प्रेम—ज्ञान का अवरोहण सम्भव है ।

इसका दूसरा अंग है—मुक्ति । इसका तात्पर्य कहीं अन्य लोक-लोकान्तर में पलायन नहीं है । न ही समस्त स्थूल क्रिया-कलापों अथवा प्रकृतिगत चेष्टाओं का परित्याग कर निर्वाण प्राप्त करना है । यह आत्मा का, विभिन्न वासनाओं, शरीर बन्धन एवं आकर्षणों से पहले हो जाना है । ससीम से असीम की अमरता में अभुक्त होना । इसके दो पद हैं—त्याग और ग्रहण । इसमें एक है निषेधात्मक और दूसरा विधेयात्मक । प्रथम का अर्थ है, सत्ता की निम्न प्रकृति के बन्धनों, आकर्षणों से छुटकारा । द्वितीय भावनात्मक पक्ष का-तात्पर्य है उच्च स्तर आध्यात्मिक सत्ता में समाहित होना उसकी दिव्य अनुभूतियों में रमण करना ।

यह संसार भगवान का लीला क्षेत्र है । 'वे इसके अणु-अणु में विद्यमान हैं । इसका पलायन करके कोई भी यथार्थ में इस योग का योगी नहीं बन सकता है । वासना और अहंता ही हैं अज्ञान की पिटारियाँ । इनसे ही छुटकारा पाना है । सचमुच-निष्काम और निरहंकारी हो अपनी आत्मा को विश्वात्मा के साथ एक करके, उच्चतम दिव्यता को धारण करना । दूसरे शब्दों में, भगवान के समान बनना ही मुक्ति का सम्पूर्ण एवं समग्र आशय है ।

शुद्धि एवं मुक्ति दोनों की सिद्धि की पहले की अवस्थाएँ हैं । पूर्णयोग में सिद्धि का अर्थ है भागवत सत्ता की प्रकृति के साथ एकत्व की प्राप्ति । अन्यान्य दर्शनों में सिद्धि की मान्यता के सन्दर्भ में मतभेद हैं । मायावादी सत्ता के सर्वोच्च तथा एक मात्र सत्य निर्विकार निर्गुण एवं आत्म सचेतन ब्रह्म है, ऐसा मानता है । अतएव आत्मा की शुद्ध, निर्विकार शान्ति एवं चेतनता में विकसित एकाकार होना ही उसकी सिद्धि है । बौद्ध उच्चतम सत्य सत्ता को अस्वीकृत करते हैं । उनके लिए सत्ता की क्षणिकता, कामना की विनाशकारी निस्सारता का बोध, अहंता तथा तत्सम्बन्धी विचारों, संस्कारों एवं कर्म शृंखलाओं का विलय ही सर्वांगपूर्ण मार्ग है । पर सर्वांगपूर्ण योग में सिद्धि का तात्पर्य है—एक ऐसी दिव्य आत्मा और दिव्य कर्म को प्राप्त करना, जो विश्व में दिव्य सम्बन्ध एवं दिव्य कर्म का खुला क्षेत्र प्रदान करें । इसका समग्र अर्थ है—सम्पूर्ण प्रकृति को दिव्य बनाना तथा उसके अस्तिव और कर्म की समस्त असत्य गुत्थियों का परित्याग ।

इस प्रकार की पूर्णता को प्राप्त पुरुष उस परम चेतना में पुरुषोत्तम के साथ एकाकार हो जीवन धारण करता है । वह सभी में ब्रह्म, ब्रह्म को सभी में, अनन्त सत्ता एवं अनन्त गुणमय ब्रह्म में, स्वयंभू-चैतन्यस्वरूप, आनन्दमय—"सर्वशिल्विदं ब्रह्म" में सचेतन होकर निवास करेगा । उसे सम्पूर्ण विश्व एक असीम विराट् सत्ता की अभिव्यक्ति लगेगी तथा समस्त गुण और कर्मों के विविध स्वरूप लगेंगे परम सत्ता एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भागवती शक्ति के नानाविधि क्रीड़ा कल्लोल । उस आनन्दमय स्थिति में वह उस तत् के साथ एक होगा । जो समस्त का उद्गम और आधार है—सबका मूल आत्मतत्व एवं उपादान शक्ति है । यही है सिद्धि की पराकाष्ठा ।

भुक्ति का तात्पर्य श्री अरविन्द की दृष्टि में है—तेनत्येक्तेन भुञ्जीया अर्थात् अनासक्त भाव से उपभोग । कामनाओं की बेड़ियों में जकड़े रहकर लोगों को पाने का प्रयत्न लक्ष्य की प्राप्ति में बाधक ही है । इस जीवन में दिव्य पूर्णता का अवतरण करना, सम्पूर्ण जीवन को आध्यात्मिक शक्ति का क्षेत्र मान कर दिव्य भोग करना ही भुक्ति का आन्तरिक सार है । इस तरह पूर्ण योग में जीवन के दिव्य भोग के आदर्श को उन्होंने मान्यता दी है । इस योग के साधक को विश्व उद्यान में परमानन्द का उपयोग करना चाहिए ।

पूर्णयोग की साधना का आरम्भ होता है अभीप्सा और आत्मोद्घाटन से आत्मोद्घाटन का अर्थ है—आधार के विभिन्न स्तरों को भागवत शक्ति और परम ज्योति की तरफ खोलना जिससे यह शक्ति हमारे अन्तराल में कार्य कर सके । अभीप्सा इसमें केन्द्रीय आधार है—सच्चाई अर्थात् आशा आकांक्षा का न होना । अभीप्सा और आकांक्षाओं में अन्तर है । आकांक्षा का तात्पर्य प्राण से है और अभीप्सा का सम्पर्क है चैत्य पुरुष (अन्तरात्मा) से । आकांक्षा में माँग रहती है । इसके वशीभूत होकर मनुष्य अपनी इच्छा भगवान पर लादना चाहता है । अभीष्ट के न प्राप्त होने पर रोता-कलपता परेशान होता है, यहाँ तक कि साधना भी छोड़ बैठता है । पर अभीप्सा का सच्चा स्वरूप यही है जिसमें परमेश्वर की तरफ इसी तरह से उन्मुख रहे, जैसे फूल-प्रकाश की ओर । सर्वस्व देकर भी बदले में कुछ पाने की इच्छा मन में न आने दे । जिसके भीतर यथार्थ अभीप्सा जाग्रत हुई है वह अपनी कोई माँग पेश करने की जगह यही कहेगा—हे प्रभु ! तेरी इच्छा मेरे जीवन में पुष्पित पल्लवित हो ।

नीचे से उठेगी हमारी पुकार—ऊपर से अवतरित होगा माँ भगवती का प्रसाद । यही है चेतना । पूर्णयोग का मानव में अवतरण का लक्ष्य मात्र ईश्वर प्राप्ति ही नहीं है अपितु शरीर, प्राण, मन की वेदी पर आत्मा के सौन्दर्य, सत्य और शक्ति की मूर्ति की प्रतिष्ठापना करना भी है । इस दिव्यता के द्वंद से सत्ता के प्रत्येक भाग को झंकृत करने हेतु माता भगवती के प्रसाद की आवश्यकता भी है ।

दूसरी ओर प्रधान प्रक्रिया है—आत्मसमर्पण । आत्मसमर्पण से तात्पर्य है मन, प्राण, बुद्धि, अन्तःकरण का सर्वांगपूर्ण समर्पण । इसमें बाह्य समर्पण भी शामिल है । जैसे जो चीजें साधना के भाव और आवश्यकता विरोधिनी है उनका त्याग । इस आन्तर समर्पण का सार है—भगवान पर विश्वास और भरोसा । साधक का भाव होना चाहिए कि "मैं अपने आपको पूर्ण रूप से भगवान को ही देना चाहता हूँ । मेरे मन-प्राण स्थिर हो मात्र उन्हीं की ओर उन्मुख हों । सब कुछ उनके लिए हो और मैं स्वयं उनके लिए हूँ ।"

जबकि इस तरह का साधक कामना से मुक्त हो, फलासक्ति से रहित हो, अहंभाव से सर्वथा शून्य हो, प्रभु का कार्य उन्हीं के हाथों उन्हीं के हाथ का यन्त्र बन एक मात्र उन्हीं के लिए (इस विश्व उपवन को पुष्पित मज्जिरित करने के लिए) करेगा ।

इतना सब होने पर हमारी सत्ता की वीणा के तार एक साथ एक स्वर से झंकृत हो उठते हैं । पूर्णतया निवेदित हो वह शिव आधार तैयार होता है जिसमें आतिमानसिक चेतना की मंदाकिनी का अवतरण सम्भव है । यह शिव आधार ही ज्योति-सागर को उसकी आनन्द तरंगों को सहन ही नहीं, धारण भी कर सकेगा और सिद्धि की पराकाष्ठा सम्भव हो सकेगी, जिससे देव-मानव अतिमानव बन सकना सम्भव है ।

आत्म-शोधन के लिए तप-साधना अनिवार्य

आग की भट्टी में झोंके बिना सोना कुन्दन नहीं बन सकता । फौलादी मशीनें और उपकरण लोहे को गलाए और तपाए बिना बन ही नहीं सकते । कच्चा अन्न खा लेने से दस्त प्रारम्भ हो जाते हैं, उसके उपयोगी बनने से पूर्व आग के सान्निध्य में जाना आवश्यक होता है । ईंट बनने का गौरव मिट्टी को तब मिलता है जब वह पकने के लिए भट्टे में घुसने के लिए तैयार होती है । सामान्य वस्तु को असामान्य बनने का गौरव तब मिल पाता है जब वह अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भीतर के कषाय-कल्मषों को जला डालने और अपने भीतर की महानता को जाग्रत होने का अवसर देती है । इससे कम में आज तक कोई भी अच्छी वस्तु नहीं बन पायी ।

ब्रह्मवर्चस की प्राप्ति जीवन की असाधारण प्रक्रिया, अद्वितीय पराक्रम और अद्‌भुत सौभाग्य मानी गई है, किन्तु यह तभी सम्भव है जब आत्मा के ऊपर चढ़े हुए पापों की कालिमा को पूरी तरह धोया और माँजा ही न जाय, अपितु उसे उसी तरह चमकाया जाय जिस तरह झूठे बर्तनों को स्वच्छ बनाने के लिए मिट्टी, रेत और बालू की रगड़ का सामना करना पड़ता है । इसी प्रक्रिया को तप और साधना कहते हैं । साधना में जप, उपासना, ध्यान और प्राणायाम आदि ही नहीं आते, अपितु वह समस्त तितीक्षाएँ भी आती हैं, जो अपनी बुराइयाँ आप स्वीकार कर उनके दण्ड को स्वेच्छापूर्वक स्वीकार करना होता है । शरीर के पाप वस्तुतः मन में छिपी वासनाएँ, कुत्साएँ और बुरे विचारों का प्रतिफल मात्र होते हैं । मन बड़ा हठकर्मी और स्वेच्छाचारी प्रकृति का तत्व है । उसे नियन्त्रण में लाने के लिए शरीर को कष्ट देने से लेकर उसकी सुविधाएँ, सुख और अनुकूलताएँ काट देने तक की तितीक्षाएँ करनी पड़ती हैं । जन्म-जन्मान्तरों का स्वभाव गन्दी नाली में बह रहे पानी के नीचे की प्राणघातक बदबू की तरह दबा होता है । नाली की सफाई के समय यह दुर्गन्ध इतनी उग्र होती है कि पास खड़ा रहना भी कठिन होता है । यही स्थिति मन को स्वच्छ बनाने की भी है, उसकी पिटाई शुरू की और उसने विग्रह खड़ा किया, इस विग्रह को जीत पाना दुःसाध्य नहीं तो कठिन अवश्य होता है, पर उसे अपनाए बिना किसी का आत्मशोधन को नहीं पाता । आत्मशोधन ब्रह्मवर्चस की पहली शर्त है, अतएव आत्म-साधना के प्रत्येक साधक को तप से गुजरना प्रत्येक स्थिति में अनिवार्य होता है ।

मात्र छुट-पुट पूजा-पत्री से दैवी अनुग्रह प्राप्त करने की मान्यता बाल-बुद्धि की ही उपज है । पूजा-विधान को बीज बोने के समतुल्य माना जा सकता है, पर उतने भर से तो फसल कट कर घर में नहीं आ जाती । भूमि की तैयारी, खाद, पानी, निराई, गुड़ाई, रखवाली तथा कठोर परिश्रम लगातार कई महीनों करने के उपरान्त बीज के अंकुरित होने से लेकर फलित होने तक की प्रक्रिया पूरी होती है । विधि-विधान जान लेने पर उसकी चिन्ह पूजा कर लेने पर भी न तो किसी को दैवी अनुग्रह मिल सका है और न सिद्धियाँ विभूतियाँ करतलगत हुई हैं जिनको साधना शास्त्र में उपासना के सत्परिणामों में गिनाया गया है । मात्र कलम और स्याही से ही अमर साहित्य लिखने का कार्य पूरा नहीं होता, उसके लिए लेखक को ज्ञान सम्वर्धन की साधना भी करनी पड़ती है । मूर्तिकार मात्र छैनी, हथोड़े से ही पत्थर की प्रतिमा नहीं बना देता, उसे देर तक मूर्ति कला की साधना भी करनी पड़ती है । वाद्य-यन्त्र अपने आप ही तो नहीं बजने लगते, उनके खरीद लेने से ही तो काम नहीं चल जाता । वादक को बजाने की प्रवीणता भी तो प्राप्त करनी पड़ती है । उपासना के विधि-विधानों की आवश्यकता एवं उपयोगिता असंदिग्ध है, उनका परित्याग करने से काम नहीं चल सकता । कलम, स्याही, छैनी, हथौड़ा, वाद्य यन्त्र त्याग कर लेखकर, मूर्तिकार, वादक अपनी प्रखरता प्रदर्शित नहीं कर सकते । इसी प्रकार उपासना के विधि-विधानों का अपना स्थान और अपना महत्त्व है । फिर भी इस तथ्य की उपेक्षा न की जाय कि उनके साथ जिन माहात्म्यों का, सत्परिणामों का, उपलब्धियों का, सिद्धियों का वर्णन है जिन्हें प्राप्त करने के लिए साधक का व्यक्तित्व निखरना ही चाहिए । यह आवश्यकता शरीर को तप से तपाने और मन को योग से परिष्कृत करने पर ही पूरी होती है । सोने का खरापन कसौटी पर कसने और आग पर तपाने से ही प्रमाणित होता है । साधक का ऐसा व्यक्तित्व, जिस पर दैवी अनुग्रह अवतरित हो सके, योग और तप की साधना के सहारे ही विर्निमित होता है ।

प्राचीन काल की आत्मिक प्रगति का इतिहास तप, साधना से ही भरा हुआ है । प्रतिभाओं और विभूतियों के धनी ऋषियों की महान उपलब्धियाँ तत्पश्चर्या का मार्ग अपनाने पर ही सम्भव हुई थी । यदि उन्होंने कष्ट साध्य आत्म-परिष्कार न किया होता और केवल सरल सत्ती पूजा-पत्री तक सीमित रह गये होते तो सम्भवतः उनके पल्ले कुछ भी नहीं पड़ता । दैवी अनुग्रह आकर्षित करने के लिए याचना का अनुरोध ही पर्याप्त नहीं है । दैवी शक्तियों को प्रभावित और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकर्षित करने के लिए साधक को वैसा चुम्बकत्व प्राप्त होना चाहिए जैसे वृक्षों में बादलों के पकड़ने और बरसाने के लिए विवश कर सकने का होता है । मात्र याचना की दुर्बल वाणी दैवी शक्तियों को प्रभावित कहाँ कर पाती है ।

ब्रह्माजी ने सृष्टि तप के बल पर रची, शेषजी पृथ्वी का भार तप की शक्ति से ही उठा पाते हैं, सूर्य तप के तेज से प्रकाशवान हैं । इन प्रतिपादनों पर सन्देह हो तो भी आध्यात्म शक्ति सम्पन्न ऋषियों और महामानवों की विशेषताओं को उनकी तप साधना के साथ ही जुड़ा हुआ देखा जा सकता है । अन्यान्य महामानवों ने अपने-अपने ढंग की तपस्या की है और महानता के उच्च शिखर पर पहुँचे हैं । सप्तऋषियों ने तप के सहारे ही विश्व-व्यवस्था का उत्तरदायित्व वहन किया था और वे अभी भी आकाश में उदीयमान हैं । असुरता के ध्वंस का अमोघ अस्त्र ब्रह्मास्त्र महर्षि दधीचि की अस्थियों से ही बना था । वज्र बनाने के लिए इसके अधिक उपयुक्त धातु संसार में अन्यत्र कहीं थी ही नहीं । भौतिक समृद्धि और आत्मिक शक्ति देने वाली भगवती का अवतरण भागीरथ की तप-साधना से ही सम्भव हुआ । इससे कम में गंगा को स्वर्ग से धरती पर लाने वाला अनुरोध काम कर ही नहीं सकता था । आकाशस्थ ध्रुव की परिक्रमा अभी भी असंख्यों ग्रह-नक्षत्र निरन्तर करते हैं । इतना गौरव तप-साधना के बिना अन्य किसी उपाय से उपलब्ध हो नहीं सकता था । देव पक्ष के लोगों ने आत्मिक और दैत्य वर्ग के लोगों ने भौतिक बल प्राप्त करने एवं तप-साधना का ही समान रूप से अवलम्बन किया है । आग पर तपाने से, भोजन निर्माण से लेकर धातुओं को डालने एवं रसायनें बनाने जैसे असंख्यों आश्चर्यजनक कार्य पूरे होते हैं । जीवन को तपाने से उसमें वह विशेषताएँ उत्पन्न की जा सकती हैं जिसके सहारे सामान्य को असामान्य, तुच्छ को महान, अणु को विभु, मनुष्य को देवता और आत्मा को परमात्मा बनाने का अवसर मिल सके ।

तप-साधना चेतन क्षेत्र का एक ऐसा व्यवसाय है जिसमें पुरुषार्थ की तुलना में लाभ अत्यधिक है । नौकरी करने वालों को नियमित वेतन मिल सकता है, पर बड़ी मात्रा में खाद्यान्न उत्पन्न करने के लिए कृषक जैसी साधना करनी पड़ती है । ब्रह्मवर्चस की साधना अपेक्षाकृत इस तरह के भौतिक पूँजीगत या अनुभवों के आधार पर चलने वाले उद्यमों की अपेक्षा अधिक सरल है और फलप्रद भी । उसमें न तो बाह्य परिस्थितियों की आवश्यकता होती है न साधन जुटाने पड़ते हैं, केवल मात्र अन्तःक्षेत्र की उलट-पुलट करनी होती है । दूसरों का सहयोग-समर्थन ढूँढ़ने की अपेक्षा आत्म-स्वीकृति और अपने ही समर्थन की आशा होती है । शब्दों में ही नहीं यह क्रिया और साधना में भी सरल ही है, क्योंकि यही जीवन की स्वाभाविकता भी है । यह अभ्यास प्रारम्भ करते ही मिलने वाली आत्मिक शान्ति, दिव्य अनुभूतियाँ ऐसी हैं जिनसे साधक को तत्काल आत्मसन्तोष मिलता है । किन्तु अब तक चल रहे सुविधायुक्त इन्द्रियवर्ती जीवन के सहज प्रवाह को मोड़कर उसे अन्तःवर्ती बनाने का कार्य उतना ही कठिन भी है । साधना को "समर" अर्थात् युद्ध कहा जाता है । इसमें अपने ही भीतर पले हुए अपने ही शत्रु मनोविकार बार-बार भौतिक सुखों के सब्जबाग दिखाते और पतन की ओर बढ़ने का लालच दिखाते रहते हैं । इन आन्तरिक शत्रुओं से जूझना वस्तुतः किसी भी महाभारत से कम नहीं होता है । उनसे विजय पाने वाले ही अर्जुन की तरह यश, श्रेय, सम्मान और ब्रह्मवर्चस के अधिकारी हो पाते हैं । ऐसे ही शूरवीरों के जीवन-रथ की बागडोर सँभालने के लिए स्वयं भगवान को समुद्यत होना पड़ता है । तप-साधना द्वारा ही दिव्य शक्तियों का उद्भव होता है ।

तपश्चर्या की महत्ता के वर्णन-दिग्दर्शन की दृष्टि से शास्त्रकारों ने कहा है कि ईश्वर भी तप के ही प्रभाव से सृष्टि-रचना में समर्थ हुआ है ।

"यः पूर्वं तपसो जातमद्भ्यः पूर्वमजायत् ।
गुहा प्रविश्य तिष्ठन्तं यो भूते भूतेभिर्व्यपश्यत् ॥"

—एतद्वैतत क. २।१।६

अर्थात् उस परमेश्वर ने सर्वप्रथम तप किया । उस तप के श्रमस्वेद से जल उत्पन्न हुआ ।

"सोऽकामयत् बहुस्यां प्रजायेयेति । स तपोऽतप्यत् । स तपस्तप्त्वा इदꣳसर्वमसृजत यदिकिंच । सत्सृष्ट्वा तदेवानु-प्राविशत् ।"

—तैत्तरीय ब्रह्मावल्ली ६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात् उस परमात्मा ने प्रकट होने की इच्छा की । उस हेतु तप किया । तप की शक्ति से जगत रचा और उसी में प्रविष्ट हो गया ।

"तस्मै स होवाच प्रजाकामो वै प्रजापतिः स तपोऽतप्यत् । स तपस्तप्त्वा स मिथुनमुत्पादये । रयिं च प्राणं चेत्येतौ मे बहुधा प्रजाः करिष्यत इति ॥४"

"आदित्यो ह वै प्राणो रविरेव चन्द्रमा रविर्वा ।
एतत् सर्वं यन्मूर्तं चामूर्तं च तस्मान्मूर्तिरेव रयि ॥५"

—प्रश्नोपनिषद् १।४।५

अर्थात् प्रजा उत्पन्न करने की कामना वाले प्रजापति ने तप किया । तप द्वारा प्राण और रयि ये दो तत्व उत्पन्न किए । संसार में जो मूर्तिमान है, वह प्राण है और जो अमूर्तिमान है वह रवि है ।

"तपश्चचार प्रथममराणां पितामहः ।
आविर्भूतास्ततो वेदाः सांगोपांगपदक्रमाः ॥"

—मत्स्य पुराण

अर्थात् सर्वप्रथम तो देवों के पितामह ने तप किया । तब सब वेदों का आविर्भाव हुआ, जो अपने अंग, शास्त्र, उपांग तथा पद एवं क्रम से संयुक्त थे ।

"अथैष ज्ञानमयेन तपसा चीपमानोऽकामयत बहुस्यां प्राजायेयेति । अथैतस्मात् तप्यमानात् सत्यकामात् भीण्यक्षराण्य जायन्त । तिस्रो व्याहृतयस्त्रिपदा गायत्रीं त्रयो वेदास्त्रयो देवास्त्रयो वर्णा स्त्रयोऽयनलश्च जायन्ते ।"

—शान्डिल्योपनिद् ३।१

अर्थात् ब्रह्म ने ज्ञानमय तप से वृद्धि प्राप्ति की । तब एक से अनेक होने की इच्छा की और इस हेतु पुनः तप किया । तब तीन अक्षर, तीन आवृत्ति, त्रिपदा गायत्री, तीन वेद, तीन देव, तीन वर्ण, तीन अग्नि प्रकट हुए ।

स्पष्ट है कि तप-साधना ही शक्ति और सिद्धि का माध्यम एवं स्रोत है । ईश्वर द्वारा तप के ये विवरण स्पष्ट करते हैं कि मनुष्य के लिए अभीष्ट उपलब्धियों का यही एकमात्र मार्ग है ।

दूध तपाया जाता है, तो मलाई और घी निकलता है । धातुएँ तप कर बहुमूल्य रसायन एवं भस्म बनती हैं । सामान्य अन्न तपाए जाने पर स्वादिष्ट आहार बनता है । कच्ची मिट्टी तपाने पर दृढ़ पाषाण बन जाती है । कच्चा लोहा पक कर इस्पात बनता है । स्वर्ण अग्नि संस्कार द्वारा आभामय हो जाता है ।

तपता हुआ सूर्य अपनी आत्मा और ऊष्मा से समस्त विश्व में प्राण वर्षा करता हुआ ग्रह-परिवार को अपने साथ बाँधे रहता है । हिमालय की बरफ तप कर गंगा-यमुना का प्रवाह बनती है । खारा और वारी सागर जल तप कर हलके मीठे जल वाले बादल बन जाता और दूर-दूर की यात्राएँ करता है ।

व्यायामसाला में तपने वाला पहलवान, खेतों में तपस्या करने वाला किसान और पाठशाला का तपस्वी ही विद्वान् बनता है । मूर्तिकार का तप अनगढ़ पत्थर को प्रतिमा की और चित्रकार का तप फलक और रंग के अस्त-व्यस्त संयोग को चित्र की गरिमा देता है ।

सोने को अग्नि में डालकर उसमें घुसी हुई मिलावट एवं कुरूपता को दूर किया जाता है । इस अग्निसंस्कार से ही उसकी आभा निखरती है, प्रामाणिकता सिद्ध होती है और बाजार में उचित कीमत उठती है । यदि तपाने के झंझट से बचा जाय तो सोने और पीतल में कोई अन्तर ही सिद्ध न किया जा सकेगा ।

मनुष्य की महान विभूतियों को प्रकट एवं प्रखर बनाने के लिए यह आवश्यक है कि वह तप, साधना के अग्नि-संस्कार को सहन एवं स्वीकार करे । तप का अर्थ है—सदुद्देश्य के लिए उस हद तक बढ़ चलना जिसमें भौतिक कष्टों की हँसते-खेलते उपेक्षा की जा सके । इस तथ्य को जीवन प्रक्रिया में उतारने के लिए कुछ प्रयोग अभ्यास भी करने पड़ते हैं । बलिष्ठ बनने के लिए व्यायामशाला में जाने और कई तरह की कसरतें करनी पड़ती हैं । आत्मबल-सम्पन्न तपस्वी जीवन की भूमिका में विकसित होने के लिए कई तरह के ऐसे उपचार कर्मकाण्ड अपनाने पड़ते हैं जो अभीष्ट प्रयोजनों की पूर्ति में सहायक सिद्ध हो सकें । इन्हीं व्यायाम साधनाओं को तपश्चर्या का बहिरंग कलेवर कह सकते हैं ।

व्रत, उपवास, शीतजल स्नान, धूप-आतप सहना, धूनी तपना, नंगे पाँव चलना, देर तक खड़े रहना, कठोर आसन लगाकर बैठना, कम सोना, सवारी का उपयोग न करके पैदल चलना, स्वल्प वस्त्र धारण, केश न कटाना, मौन रहना, भूमि शयन, नमक, शक्कर आदि के स्वादों का त्याग, ब्रह्मचर्य जैसे क्रिया-कलापों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को तप-साधना में गिना जाता है । जो इन उपचारों को क्रियान्वित करते हैं वे तपस्वी कहलाते हैं । तप का महात्म्य आध्यात्म शास्त्रों में भुरा पड़ा है । तप के प्रताप से देव शक्तियों के द्रवित होने और अभीष्ट वरदान प्रदान करने के कितने ही पौराणिक उपाख्यान पढ़ने और सुनने को मिलते हैं । तपस्वी का सम्मान करने के लिए हमारी सहज श्रद्धा उमड़ती है, जबकि दूसरे लोग सुख-सुविधाओं का तनिक भी त्याग नहीं कर सकते तब तपस्वी इन कष्टसाध्य क्रिया-कलापों को खुशी-खुशी अपना लेता है । इसमें उसकी संकल्प शक्ति की प्रखरता स्पष्ट है । दूसरे लोगों की तुलना में वह स्वतन्त्र निर्णय करने और जनसामान्य के प्रचलित ढर्रे का व्यातिक्रम करने में समर्थ है यह विशेषता तो स्पष्ट ही सिद्ध होती है । इस साहसिकता के सामने यदि मानवी श्रद्धा नत-मस्तक होती है तो उसे सर्वथा उचित ही कहा जायेगा ।

तपश्चर्या का बहिरंग ढाँचा किस उद्देश्य के लिए तत्वदर्शियों ने किस प्रयोजन की पूर्ति के लिए बनाया, इस तथ्य पर गहराई के साथ विचार करने की आवश्यकता है । यदि यह सब निरुद्देश्य रहा होता तो उसे मात्र उत्पीड़न ही कहा जाता । दूसरों की हत्या करने की तरह आत्महत्या भी अपराध है, ठीक इसी तरह दूसरों को उत्पीड़न देने की तरह अपने आपको सताना भी आत्म-उत्पीड़न कहा जायेगा और उसकी निन्दा की जायेगी । ऐसा हुआ भी है । पारसी धर्म में उपवास को निन्दनीय ठहराया गया है क्योंकि इससे आत्म-कष्ट होता है । ऐलोपेथी चिकित्सा पद्धति भी रोगी को उपवास कराने के पक्ष में नहीं है । फ्राइड प्रभृति मनोविज्ञानी ब्रह्मचर्य को आत्मप्रताड़ना कहते हैं और उसकी ढेरों हानियाँ गिनाते हैं । सर्दी-गर्मी का दबाव, अंगों की तोड़-मरोड़, असुविधापूर्ण रहन-सहन अपनाकर जीवनी शक्ति का अपव्यय जैसे अनेकानेक तर्क इस पक्ष में पड़ते हैं कि तप-साधना की कष्ट साधना हानिकर है । 'बुद्धि चरित्र' में आता है कि तथागत जब कठोर उपवासों द्वारा काया को अत्यन्त दुर्बल बना चुके तो एक देव कन्या ने प्रकट होकर उन्हें मध्यम मार्ग पर चलने और इस दुराग्रही कष्ट प्रयोग को छोड़ देने के लिए सहमत किया । उसने सितार का उदाहरण देकर यह भी कहा था कि तारों को अधिक खींचने से वे टूट जाते हैं और वीणा की उपयोगिता नष्ट हो जाती है । शरीर को सताने का भी यही परिणाम होता है । इस तथ्यपूर्ण परामर्श को भगवान बुद्ध ने अंगीकार किया था और वे मध्यम मार्ग स्वयं अपनाकर दूसरों को भी "मज्झम मग्ग" (मध्यम मार्ग) पर चलने का उपदेश करने लगे थे ।

शरीर को बलिष्ठ बनाना एक लक्ष्य है, उसकी प्राप्ति के लिए व्यायामों में अमुक प्रकार के अमुक सीमा तक किए जाने चाहिए, इसकी उपयोगिता से कोई इन्कार नहीं कर सकता, पर यदि अत्युत्साह के आवेश में अमुक व्यायामों को ही चमत्कारी मान बैठा जाय और सब छोड़ कर उन्हीं को पकड़ बैठा जाय तो इससे लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता मिलने के स्थान पर उलटी बाधा पड़ेगी । व्यायाम के साथ-साथ उपयुक्त आहार-विहार, रहन-सहन, दिनचर्या भी आवश्यक है । इस सब बातों की उपेक्षा करके अकेले व्यायाम पर चिपट पड़ना असन्तुलित प्रयास ही कहा जायेगा । बलिष्ठता प्राप्ति के लिए व्यायाम प्रक्रिया का उपयोग एक बात है और अमुक व्यायाम को सर्वसिद्ध दाता मानकर उसी पर लट्टू हो जाना बिल्कुल दूसरी बात । तप-साधना में अक्सर ऐसी ही भूल की जाती है । यह भुला दिया जाता है कि इन प्रयोजनों का आविष्कार-आविर्भाव किस निमित्त किया गया है और उसका कितना उपयोग किस दृष्टिकोण से करने पर कितना लाभ हो सकता है, यह समस्त पृष्ठिभूमि ध्यान में रखते हुए ही यदि तप-साधना का अवलम्बन किया जाय तो ही वे लाभ मिल सकेंगे जिनका वर्णन तप विज्ञान के माहात्म्य प्रकरण में बताया गया है ।

तप-सधाना के समस्त व्यायाम उपचार इसलिए बनाए गए हैं कि आदर्शवादी जीवन प्रक्रिया अपनाने में स्वभावतः कितनी ही कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, उन्हें हँसते-खेलते, सहन करते रह सकना अपने स्वभाव का अंग बन जाय । उस तरह की कष्टसाध्य जीवन प्रणाली अभ्यास में उतर कर सहज स्वाभाविक बन जाय । स्पष्ट है कि न्यायोपार्जित आजीविका सीमित ही रहेगी, फिर उदार व्यक्ति की अन्तरात्मा भी तो निष्ठुर पाषाण जैसी न रहेगी । उसे सत्प्रयोजनों के लिए अपनी आजीविका का एक अंश अनिवार्य रूप से खर्च करते रहना पड़ेगा । सीमित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आजीविका और परमार्थ प्रयोजनों का अतिरिक्त भार इन दो कारणों से आदर्शवादी को प्रायः दूसरों की तुलना में अधिक तंगी में ही रहना पड़ता है । विलासी रीति-नीति बहुत ही खर्चीली होती है । उसकी पूर्ति के लिए अनीति उपार्जन एवं सत्प्रयोजनों की ओर से निष्ठुर कृपणता ही अपनानी पड़ती है । इसके बिना विलास के लिए, संग्रह के लिए प्रचुर पूँजी जुटेगी ही नहीं । इन तथ्यों को ध्यान में रखते हुए आदर्शवादी को आरम्भ से ही मितव्ययी रीति-नीति अपनानी पड़ती है । उसे विदित रहता है कि 'सादा जीवन उच्च विचार' का प्रथम आध्यात्म सिद्धान्त उसी आधार पर बना है कि जो उच्च विचारों की आदर्शवादिता अपनाना चाहता हो उसे प्रथम साधना मितव्ययता की, सादगी की, गरीबी की करनी चाहिए । इस अभ्यास से ही उसकी परिस्थितियाँ ऐसी रह सकेंगी जिनमें आध्यात्मवादी जीवन पद्धति का निर्वाह सम्भव हो सके ।

तपश्चर्या के बहिरंग उपचारों में से अधिकांश ऐसे हैं जो आर्थिक कठिनाई की स्थिति में जो अभाव एवं कष्ट सामने आते हैं उनका पूर्वाभ्यास करके मनोभूमि एवं शरीर स्थिति को अनुकूल बना लिया जाय । जिसे अभावग्रस्त स्थिति अखरेगी नहीं वही प्रसन्नतापूर्वक सादगी भरी शालीनता के साथ जीवनयापन कर सकेगा । ऐसी स्थिति में उसे बिना अनीति उपार्जन की अपेक्षा किए सत्कर्मों के लिए आवश्यक खर्च में बिना कृपणता बरते, बड़ी सरलता और प्रसन्नता के साथ अपना ढर्रा चलाते रह सकना सम्भव हो जायेगा । तपश्चर्या के अभ्यास इस प्रमुख प्रयोजन को भली प्रकार पूरा करा सकने की सफलता प्रदान करते हैं ।

व्रत, उपवास में नमक, शक्कर जैसी स्वादिष्टता को छोड़ने का प्रयोजन यह है कि स्वल्प, सस्ता एवं सादा भोजन भी यदि मिलता रहे तो वह गरीबी की स्थिति अखरे नहीं । न्यायोपार्जित आजीविका में से सत्प्रयोजनों का अंशदान निकालकर जो बच जाय, उस रूखे-सूखे को अमृत मानकर गुजर कर ली जाय । ऐसी सादगी का अभ्यस्त व्यक्ति अर्थ-प्रलोभन के लिए दुष्कर्म करने से सहज ही बच जाता है और सन्मार्ग पर चल सकने योग्य मनोभूमि को अक्षुण्ण रख सकता है । गरीबी में जो कठिनाई आती है उसमें आहार सम्बन्धी सादगी, सस्तापन एवं स्वल्प मात्रा को गिना जा सकता है । व्रत, उपवास इसी अभ्यास के लिए हैं । नमक, शक्कर जैसे स्वादों को छोड़कर रूखे-सूखे पर गुजर करने का अभ्यास करना आदर्शवादी मोर्चे की प्रथम लड़ाई में सफलतापूर्वक लड़ सकने की क्षमता प्रदान करता है ।

आदर्शवादी को इन्द्रियलिप्सा पर नियन्त्रण करना पड़ता है । उनके उभार मनुष्य का मस्तिष्क उद्विग्न करते हैं और उन वासनाओं की पूर्ति के लिए चिन्तन, समय, श्रम, मनोयोग, कौशल एवं धन का बहुत बड़ा अंश नष्ट करना पड़ता है । ब्रह्मचर्य की बात इसी दृष्टि से है । कामुकता की प्रेरणा से पत्नी ढूँढ़ना, पत्नी के बच्चे होना, बच्चों के उत्तरदायित्व का गरदन तोड़कर रख देने वाला भार पड़ना कितना जटिल और कितना कठिन होता है, इसे प्रत्येक भुक्तभोगी भली प्रकार जानता है । राई-रत्ती जितनी वासना का विस्तार इतना अधिक होता चला जाता है कि मनुष्य अपनी शत-प्रतिशत शक्ति को उसी जंजाल में झोंक देने के उपरान्त भी सन्तोषजनक स्थिति की परिवार व्यवस्था नहीं जुटा पाता और बेतरह रोता-कलपता संसार से विदा होता है । यदि कामुकता पर नियन्त्रण रखा जा सके तो जीवन की समस्त सम्पदा को कोल्हू में पेल कर उसका एक-एक बूँद तेल जो गृहस्थ में जलाना पड़ता है उसकी बचत सहज ही हो जाय और उस बचत से आत्म-कल्याण एवं विश्व-कल्याण का उद्देश्य सहज ही पूरा किया जा सके ।

आज के जमाने में जनसंख्या की वृद्धि विश्व की सबसे भयंकर विभीषिका है । अणु युद्ध से समस्त मानव समाज के नष्ट होने की तरह ही जनसंख्या वृद्धि के कारण इस धरती पर से मनुष्य का अस्तित्व समाप्त हो जाने का खतरा सामने है । वर्तमान गति से सन्तानोत्पादन जारी रहा हो तो अगले कुछ ही वर्षों में समस्त वायुमण्डल विषाक्त हो जायेगा । अन्न के बिना लोग तड़प-तड़प कर भूखों मरेंगे और चलने-फिरने तक को जगह न बचेगी । तब लोग मक्खी, मच्छरों की तरह जन्मते-मरते और मनुष्य स्तर को समाप्त करते दिखाई देंगे । इन आज की परिस्थितियों में सन्तान के सीमा-बन्धन युग की अनिवार्य आवश्यकता है । उसकी पूर्ति के लिए ब्रह्मचर्य ही सर्वोत्तम उपाय है । शक्तियों को सदुद्देश्य में लगाने के लिए, जनसंख्या संकट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से लड़ने के लिए ब्रह्मचर्य को मूर्धन्य स्थान प्राप्त है । इससे न केवल शारीरिक, मानसिक समर्थता का लाभ है वरन् उपर्युक्त दो लाभ ऐसे ही हैं जिन्हें आत्मिक प्रगति एवं सामाजिक स्थिरता की दृष्टि से सर्वोच्च स्थान दिया जा सकता है । कामुकता पर नियन्त्रण करने की ब्रह्मचर्य प्रवृत्ति को इसलिए सम्मानास्पद स्थान प्राप्त है । अनुष्ठानों के समय अथवा ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ, संन्यास की अवधि में ब्रह्मचर्य को आवस्यक माना गया है । विधुरों और विधवाओं के लिए भी इसे उपयोगी माना गया है । पतिवृत, पत्नीव्रत आदि के बन्धन इसी दृष्टि से हैं । गृहस्थ से भी अधिकाधिक संयम बरतने का निर्देश इन्हीं कारणों से है । ब्रह्मचर्य की तप-साधना अकारण नहीं है । उनके पीछे जिस उद्देश्य की पूर्ति का समावेश है उसे ध्यान में रखकर चला जाय तो अमुक समय तक ब्रह्मचर्य पालन की लकीर पीटने को ही पर्याप्त न माना जायेगा वरन् इस दृष्टिकोण के अनुसार अपना और अपने प्रभाव क्षेत्र का अमुक स्तर बनाने का प्रयत्न किया जायेगा ।

वाणी का मौन तथा सीमित एवं उपयोगी शब्दों का उच्चारण प्रतिबन्ध मन्त्र जप यह दोनों ही प्रयोजन वाणी पर नियन्त्रण करने की दृष्टि से हैं । आवेशग्रस्त, कटु, दुर्वचन बोलें—छल, व्यंग्य, तिरस्कार एवं गिराने वाले शब्दों का उच्चारण न करें । उच्चारण का प्रत्येक शब्द श्रेयस्कर, सदुद्देश्य के लिए बोला जाय, उसमें स्नेह, सौजन्य का समुचित समावेश होगा ।

जीवनोद्देश्य की पूर्ति के लिए जहाँ एक पक्ष व्यक्तिगत जीवन को श्रेष्ठ, संयमी, सदाचारी बनाने का है वहाँ दूसरा पक्ष यह भी है कि अपनी विभूतियों का अधिकाधिक समर्पण लोग-मंगल के लिए किया जाय । मात्र संयमी सदाचारी तो पेड़-पत्थर भी होते हैं । वे किसी का कुछ बिगाड़ते नहीं और न अनैतिक आचरण करते हैं । मनुष्य की मर्यादा की रक्षा इसी में है कि वह पशु और पिशाच जैसे अवांछनीय आचरण न करे ।

मनुष्य जीवन इसलिए मिलता है कि इस सृष्टि को सुरम्य समुन्नत बनाने के लिए अधिकाधिक तत्परता का परिचय दिया जाय । अपनी सम्पदाओं और विभूतियों को इसी दिशा में अधिकाधिक मात्रा में नियोजित किया जाय । स्वार्थ की पशु-प्रवृत्ति से ऊँचा उठकर परमार्थ की पुण्य प्रवृत्ति में संलग्न होना ही मानव जीवन की सार्थकता का दूसरा पक्ष है । इस दिशा में जो जितना चल सका समझना चाहिए कि उसने मनुष्य जन्म के लक्ष्य को समझा और उसे पूरा करने की दूरदर्शिता का परिचय दिया । इस आदर्शवादी रीति-नीति को अपनाने के लिए जिस साहसिकता का परिचय देना पड़ता है वह है—दुनियादारी से भिन्न प्रकार की रीति-नीति अपनाने में भय या संकोच का अनुभव न करना । अंधी भेड़ों की तरह एक के पीछे एक खड्डे में गिरते-मरते जाने का क्रिया-कलाप अपनाने से इन्कार करना और इसके बदले व्यंग्य, उपहास सहने के लिए समुद्यत रहना ।

सिर तथा दाढ़ी के बाल बढ़ाना, मुण्डन कराना, पंचकेश रखना, सामान्य वेषभूषा छोड़कर लँगोटी, तहमद आदि बाँधना जैसे जन-स्तर से भिन्न प्रकार की वेषभूषा धारण करना, पत्तल पर या हाथ पर खाना, कमण्डल से पानी पीना, धातु के बर्तनों का प्रयोग न करना, जैसे उपकरणों का विनियोग तप-साधना के प्रकरण में इसीलिए सम्मिलित किया गया है कि समृद्ध एवं विलासी लोगों के अनुकरण के लिए मचलने वाली आन्तरिक दुर्बलता से पिण्ड छुड़ाया जा सके और जन-प्रवाह से भिन्न स्तर का अपना स्वतन्त्र निर्णय, स्वतन्त्र आचरण कार्यान्वित कर सकने का साहस प्रदर्शित किया जा सके, लोगों के व्यंग्य, उपहास से अप्रभावित रह सकने का मनोबल विकसित किया जा सके । आदर्शवादी परम्परा अपनाने वाले में इस प्रकार का शौर्य, साहस होना अनिवार्य रूप से आवश्यक है ।

सर्दी सहना, गर्मी सहना, भूमि पर सोना, उघाड़े बदन और नंगे पैरों रहना, कठोर आसन लगाकर बैठना, खड़े रहना जैसे कठोर कर्म इस मनःस्थिति को विकसित करते हैं कि कष्ट-सहिष्णुता को परमार्थी जीवन की एक अनिवार्य साधना माना जाय । स्वार्थ का परमार्थ पर उत्सर्ग करने के लिए यही करना पड़ता है । त्याग, बलिदान का परिचय दिए बिना आत्मकल्याण की साधना में एक इंच भी प्रगति नहीं हो सकती । अपनी अमीरी और महत्त्वाकांक्षाओं को जन-कल्याण के लिए समर्पित किए बिना परमार्थ साधना सम्भव हो ही नहीं सकती । पहाड़ जैसे परिग्रह में से राई-रत्ती दान पुण्य करते रहने का कृपण प्रदर्शन लोगों के बहकाने और आत्म-प्रवंचना करने के लिए ही उपयुक्त हो सकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । सच्चे आत्मवादी को तो त्याग, बलिदान के अन्तिम चरण तक पहुँचना पड़ता है, उसकी निष्ठा एवं श्रद्धा का परिचय तो अपनी सम्पदा का किस सीमा तक विसर्जन किया जा सका, इसी कसौटी पर कसने के बाद प्राप्त होता है ।

अनिवार्य निर्वाह के अतिरिक्त अपनी समस्त सुख-सुविधाओं को, सम्पत्तियों और विभूतियों को विश्वमानव के लिए समर्पित रहना है इसी का नाम प्रभु-समर्पित जीवन है । इसी को शरणागति कहते हैं । ईश्वर भक्ति इससे कम साहस से हो नहीं सकती । इस मनःस्थिति को विकसित करने के लिए अनेकानेक तपश्चर्याओं के अभ्यास कराये जाते हैं । कहना न होगा कि तप-साधना से निखरा हुआ व्यक्तित्व अपने आपमें एक देवता होता है और उसके अपने ही चमत्कार, वरदान इतने अधिक होते हैं कि तपस्वी को देवोपम सिद्ध पुरुष की संज्ञा दी जा सके ।

तप साधना के इस उद्देश्य को समझा जा सके और इन बहिरंग क्रिया-कलापों को उसी दृष्टि से कार्यान्वित किया जा सके तो समझना चाहिए कि तपश्चर्या सार्थक हुई, अन्यथा लकीर पीटने भर को निरुद्देश्य किया जा रहा हो तो उसे समझना चाहिए कि वह आत्मप्रताड़ना की निरर्थक कष्टकर विडम्बना-भर है ।

'साधना से सिद्धि' में बाधक संचित दुष्कर्म

संचित दुष्कर्मों को यथास्थान छोड़कर आत्मिक प्रगति की साधना कर सकना, उस दिव्य स्तर तक जा पहुँच सकना किसी के लिए भी सम्भव नहीं, यह एक सुनिश्चित तथ्य है । कक्षाएँ उत्तीर्ण करके ही विद्यार्थी स्नातक की उपाधि पाते, उच्च पदाधिकारी बनते हैं । छलागें भौतिक जगत में कई क्षेत्रों में लगाई जाती हैं और सफल भी होती हैं, पर आत्मिक क्षेत्र में ऐसी सुविधा नहीं है । संचित दुष्कर्मों से विनिर्मित प्रारब्ध न केवल विपत्तियों, असफलताओं का त्रास देता है, वरन् उच्चस्तरीय प्रगति के पथ पर चलने में भी अनेकों विघ्न उपस्थित करता है । रास्ते में अड़ी इन चट्टानों को हटाने सरकाने के लिए साहसपूर्ण पराक्रम करना होता है । यही है वह प्रायश्चित्त प्रक्रिया जिसे तप साधना में वरिष्ठता तथा प्रमुखता दी गई है ।

कर्मफल की सम्भावना सुनिश्चित है । उसे विश्व व्यवस्था का एक अनिवार्य एवं अविछिन्न अंग ही समझा जाना चाहिए । इन संचयों को स्वयं ही भुगतना होता है । देव-दर्शन, नदी-स्नान, पूजा, उपचार, कथा-वार्त्ता एवं छुटपुट कर्मकाण्डों का प्रयोजन इतना ही है कि उनसे परिशोधन, परिमार्जन की ओर ध्यान मुड़े, महत्त्व समझने का अवसर मिले और वह साहस उभरे जिससे कर्मफल भुगतने का दूसरा विकल्प, प्रायश्चित्त स्वेच्छापूर्वक बन पड़े । प्रायश्चित्त के लिए किए जाने वाले व्रत तथा उपवासों के सामयिक प्रतिफल भी होते हैं, किन्तु वास्तविक एवं चिरस्थायी लाभ देने वाला तथ्य यह है कि दुष्कृत्यों के प्रति घृणा उभरे, भविष्य में वैसा न करने का संकल्प मचले, साथ ही जो किया गया हो उसकी क्षतिपूर्ति करने का सदाशयता की खाई पाटने के लिए उत्साह उत्पन्न करें ।

यह सारा संसार कर्म-व्यवस्था के आधार पर चल रहा है । भगवान ने दुनिया बनाई और उसके सुसंचालन के लिए कर्म-विधान रच दिया । 'जो जैसा करता है वह वैसा भोगता है' सिद्धान्त अकाट्य है । लोग भ्रम में इसलिए पड़ते हैं कि कई बार कर्मों का तत्काल फल नहीं मिलता । उसमें विलम्ब हो जाता है । यदि शुभ-अशुभ कर्मों का फल तत्काल मिल जाया करता तो फिर दूरदर्शिता, विवेकशीलता की आवश्यकता ही न पड़ती । आग छूते ही हाथ जल जाता है । इस प्रत्यक्ष तथ्य के कारण कोई आग में हाथ डालने की मूर्खता नहीं करता । किन्तु सुकृत्यों और दुष्कृत्यों का परिणाम तत्काल नहीं मिलता । उसके परिपाक में देरी हो जाती है । इतने में ही बाल-बुद्धि के लोग अधीर हो जाते हैं । पुण्य के सम्बन्ध में निराश और पाप के सम्बन्ध में निर्भय हो जाते हैं । जो करणीय है उसे छोड़ बैठते हैं और जो न करना चाहिए उसे करने लगते हैं । यही वह माया है जिसके बन्धनों में जकड़े हुए लोग दिग्भ्रान्त होते, भूल-भुलैयों में उलझते तथा भटकावों में खिन्न, उद्विग्न बने दिखाई पड़ते हैं ।

आज का जमाया हुआ दूध कल दही बनता है, आज का बोया बीज बहुत समय में वृक्ष बनता है, आज का अध्ययन, व्यायाम, व्यवसाय आज ही कहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

फल देता है ? परिणाम में देर लगने पर बालक निराश हो सकते हैं, पर विचारशील लोग अपनी निष्ठा विचलित नहीं होने देते और आशा, विश्वास के साथ काम करते रहते हैं । असंयम बरतने पर उसी दिन शरीर रुग्ण नहीं हो जाता, जिस दिन चोरी की जाय उसी दिन जेल भुगतनी पड़े, ऐसा कहाँ होता है ? तो भी समझदारी सुझाती है कि कल नहीं, परसों परिणाम मिलकर ही रहेगा । यही दूरदर्शिता सत्कर्मों, दुष्कर्मों के सुनिश्चित परिणाम को ध्यान में रखते हुए अपनाई जानी चाहिए । पर लोग भ्रमग्रस्त होकर कर्मफल के सम्बन्ध में विश्वास छोड़ बैठते हैं । इसी इन्कारी को वास्तविक नास्तिकता कहना चाहिए ।

दुष्कर्मों का प्रतिफल कई रूपों में भुगतना पड़ता है । लोक निन्दा होती है । ऐसे व्यक्ति दूसरों की आँखों में अप्रामाणिक अविश्वस्त ठहरते हैं । उन्हें किसी का सघन विश्वास एवं सच्चा सहयोग नहीं मिलता । श्रद्धा और सम्मान तो उसी को मिलता है, जिसकी प्रामाणिकता असंदिग्ध होती है । जन-विश्वास एवं सहयोग के आधार पर कोई व्यक्ति प्रगति करता और सफल होता है । संदिग्ध चरित्र व्यक्तियों को इस लाभ से वंचित रहना पड़ता है और वे मित्रविहीन एकाकी नीरस जीवन जीते हैं । घनिष्ठता का लाभ तो उन्हें स्वजनों से भी नहीं मिलता । वे भी सदा आशंका की ही दृष्टि से देखते हैं और दिखावे का सहयोग दे पाते हैं, आत्मप्रताड़ना का दुरूह दुःख ऐसे ही लोगों को सहना पड़ता है । दूसरों को झुठलाया जा सकता है, पर अपनी ही आत्मा को कैसे बहकाया जाय ? वह दुष्कर्मों से स्वयं खिन्न रहती है । आत्मधिक्कार से आत्मबल निरन्तर गिरता जाता है ।

समाज तिरष्कार, असहयोग, विरोध, उपेक्षा से प्रत्यक्ष हानि है । जिसके ऊपर घृणा और तिरस्कार बरसता है, उसकी अन्तरात्मा को पत्थर बरसने से भी अधिक अन्तःपीड़ा सहनी पड़ती है । धन छिन जना उतनी बड़ी हानि नहीं है जितना कि विश्वास, सम्मान और सहयोग चला जाना । दुष्कर्मों का यह सामाजिक दण्ड हर कुमार्गगामी को भुगतना पड़ता है । पाप और पारा छिपता नहीं । वह फूट-फूटकर देर-सबेर में बाहर निकलता ही है । सत्कर्म छिप सकते हैं, दुष्कर्म नहीं । हींग की गन्ध कई थैलियों में बन्द करके रखने पर भी फैलती है और दुष्कर्मों की दुर्गन्ध हवा में इस तरह उड़ती है कि किसी के छिपाये नहीं छिपती । समाज दण्ड-असहयोग बहिष्कार के रूप में तो बरसता है । कई बार वह प्रतिशोध और प्रत्याक्रमण के रूप में भी सामने आता है । लोग अनीति के विरुद्ध उबल पड़ते हैं तो दुरात्मा का कचूमर ही निकालकर रख देते हैं । न केवल आध्यात्म क्षेत्र में वरन् भौतिक जीवन में भी यही सिद्धान्त काम करता है । रक्त-विकार जैसे रोगों को दूर करने के लिए कुशल वैद्य पेट की सफाई करने के उपरान्त अन्य रक्त-शोधक उपचार करते हैं । काया-कल्प चिकित्सा में बलवर्धक औषधियों को नहीं, संचित मलों का निष्कासन करने वाले उपायों को ही प्रधान रूप से कार्यान्वित किया जाता है । नमन, विरेचन, स्वेदन आदि क्रियाओं द्वारा मल-निष्कासन का ही प्रयास किया जाता है । इसमें जितनी सफलता मिलती जाती है उसी अनुपात से जरा-जीर्ण रोगग्रस्त व्यक्ति भी आरोग्य लाभ करता और बलिष्ठ बनता चला जाता है । कायाकल्प चिकित्सा का विज्ञान इसी सिद्धान्त पर आधारित है ।

दोष-दुर्गुणों के रहते चिरस्थायी प्रगति के पथ पर चल सकना किसी के लिए भी सम्भव नहीं हुआ है । फूटे बर्तन में दूध दुहने से पल्ले कुछ नहीं पड़ता । पशु पालने और दुहने का श्रम निरर्थक चला जाता है । कषाय-कल्मषों से दोष-दुर्गुणों से लड़ने के लिए जो संघर्ष पुरुषार्थ करना पड़ता है उसी को विधि-विधानों को तप-साधना कहते हैं ।

द्रुतगामी वाहनों पर सवार होकर पैदल चलने से देर में सम्पन्न होने वाली यात्रा अपेक्षाकृत कहीं जल्दी पूरी की जा सकती है । हमारे वर्तमान प्रयत्न ही सब कुछ नहीं होते, उनमें पूर्व-संचित सत् संग्रहों का भी योगदान होता है । उनका योगदान मिलने से सफलताओं का परिणाम स्वल्प प्रयत्न से भी इतना अधिक हो सकता है कि आश्चर्यचकित रह जाना पड़े ।

शरीर को जीवित रखने और अवयवों के संचालन में भी जठराग्नि ही काम करती है । सूर्य से लेकर चूल्हे तक अग्नि का ही सर्वत्र साम्राज्य छाया हुआ है । पदार्थ में हलचल प्राणी में चिन्तन की जो सामर्थ्य काम करती दीखती है उसे अग्नि को भी भेद-उपभेदों के अन्तर्गत गिना जा सकता है । इसी अग्नि का एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नाम 'आतप' है । आध्यात्म क्षेत्र में उसके उत्पन्न करने की पद्धति का नाम 'तप' है ।

बाल विनोद की प्रारम्भिक साधनाएँ नित्य कर्म कहलाती हैं, और उनमें देव प्रतिभाओं के पूजा उपचार को भी महत्त्व दिया और माहात्म्य बताया जाता है । उच्चस्तरीय साधनाओं का सत्परिणाम भी असाधारण होता है । उसके लिए उनका मूल्य चुकाने के लिए क्लिष्ट तप-साधनों को उपयुक्त मार्गदर्शन में अपनाते हुए ही प्रगति पथ पर अग्रसर होना होता है ।

वस्तुतः तपश्चर्या का समग्र तत्वदर्शन, आत्म-शोधन की आवश्यकता पूरी करने के लिए ही गढ़ा गया है । उसका उद्देश्य देवताओं के सम्मुख हठवादिता अपनाकर मनोकामना पूरी करने का दुराग्रह ठानना नहीं, वरन् आत्म-शोधन के सहारे अपनी पात्रता का सम्वर्धन करता है । गड्ढा जितना गहरा होता है, पात्र जितना बड़ा होता है उसी अनुपात से वर्षा का जल उसमें जमा होता चला जाता है । आन्तरिक सत्पात्रता का सम्वर्धन करने के लिए तप-साधना को ही उपाय, उपचार बताया है । चिड़िया की छाती की गर्मी पाकर ही अण्डे पकते हैं । पौधों के विकसित होने और फूलने-फलने में गर्मी का कितना बड़ा योगदान होता है, इसे किसान और माली भली प्रकार जानते हैं । जप का समानान्तर शब्द तप है । बोलचाल की भाषा में प्रायः जप, तप—दोनों को मिलाकर बोलने का रिवाज है ।

ब्रह्मवर्चस अभियान से तप-साधना को प्रमुखता दी गई है । 'वर्चस' शब्द ही तप का पर्यायवाची है । उपासनाओं के साथ कई प्रकार की छोड़ी-बड़ी तप-साधनाओं की शृंखला जोड़ी गई है । उसकी आधार-शिला चान्द्रायण व्रत पर रखी गई समझी जा सकती है । यह संचित कुसंस्कारों के परिशोधन और प्रसुप्त दिव्य-शक्तियों के जागरण के लिए शरीर और मन के सुविस्तृत क्षेत्र में अनुकूल वातावरण उत्पन्न करता है । भागीरथ ने गंगा अवतरण के लिए कई प्रकार के उपासना उपचार किए थे । गंगा की आराधना और शिव की अभ्यर्थना की साधना वे लम्बे समय तक करते रहे और अपने उद्देश्य में सफल होकर रहे । पर यह सफलता हाथ तभी लगी जब उपासना उपचार के साथ तपश्चर्या को अग्नि शक्ति का समावेश हो सका । यदि वे मात्र पूजा, आराधना ही करते रहते और तप के कष्टसाध्य झंझट से बचकर रहना चाहते तो उन्हें उससे अधिक कुछ भी न मिलता जो शिव मन्दिरों और गंगा मन्दिरों के पुजारियों को नगण्य-सा प्रतिफल उपलब्ध होता है ।

ब्रह्मवर्चस साधना में सन्निहित तपश्चर्या का अभ्यास एक प्रकार से प्रखरता के उत्पादन का जीवन-दर्शन है । उसे अपनाने वाला न केवल आत्मिक क्षेत्र की सफलताओं का अधिकारी बनता है, वरन् भौतिक क्षेत्र में भी—लोकव्यवहार में भी उसकी सफलताएँ दूसरों की अपेक्षा कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी हो सकती हैं । इसलिए वह न केवल आत्मिक प्रगति के इच्छुकों के लिए वरन् भौतिक समर्थता प्राप्त करने के उत्सुकों के लिए भी उतनी ही महत्त्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं ।

यहाँ इस तथ्य को भली-भाँति समझ लेना चाहिए कि संचित कर्मों को ही भाग्य कहते हैं और यह भाग्य विधान हमारी प्रगति, अवगति में अत्यधिक महत्त्वपूर्ण निमित्त और आधारभूत कारण होता है । भाग्य की प्रतिकूलता का समाधान करने और अनुकूलता को बढ़ाने के लिए तपश्चर्या कितनी सहायक है, इसका तत्वज्ञान समझना आवश्यक है । प्रसंग कुछ-कुछ रूखा-सा अवश्य है, पर जिन्हें इस मार्ग में अभिरुचि है उन्हें धैर्यपूर्वक और मनोयोग के साथ समझना भी चाहिए ।

उपर्युक्त पंक्तियों में संचित कर्मों का—भाग्य प्रारब्ध का—स्वरूप और जीवन के उत्थान-पतन में योगदान समझाने के लिए प्रयत्न किया गया है । इसे समझने में थोड़ी कठिनाई तो पड़ेगी, पर इसे दो या तीन बार पढ़ने से वस्तु स्थिति समझ में आ जायेगी कि भाग्य-विधान की प्रतिकूलता अनुकूलता में बदलना किस प्रकार सम्भव हो सकता है । इस तथ्य को जान लेने पर प्रस्तुत अवरोधों को निरस्त करते हुए भौतिक और आत्मिक प्रगति के मार्ग पर सुनिश्चित रीति से बढ़ सकना हर किसी के लिए सम्भव हो सकता है ।

तपश्चर्या का एक सरल आरम्भ

वासना और तृष्णा की सत्यानाशी सड़क पर दौड़ते हुए मन की लगाम को खींचना आवश्यक है । यदि उस पर अंकुश न लगाया जा सका और जिधर भी वह जा रहा है उधर ही जाने दिया गया तो फिर विनाश के अतिरिक्त और कोई परिणाम निकलने वाला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं है । आध्यात्म से विमुख होकर भौतिकवाद दृष्टिकोण में प्रवृत्त मनुष्य प्रेय मार्ग में इतना आसक्ति हो जाता है कि आटे के साथ कांटा निगलने वाली मछली की तरह उसे दीन दुनिया की कुछ खबर नहीं रहती कि आगे हमारा क्या होने वाला है ।

इस प्रिय लगने वाली किन्तु पतनोन्मुख प्रवृत्ति पर अंकुश लगाना प्रत्येक आत्मवादी के लिए आवश्यक होता है । तपश्चर्या इस दृष्टि से अनिवार्य मानी गई है । जंगली हाथी को पालतू बनाने में जितना झंझट करना पड़ता है, शेर को सरकस दिखाने के उपयुक्त बनाने में जितना श्रम, चातुर्य खर्च करना पड़ता है, उतना ही मन को कुमार्ग से लौटाकर सन्मार्ग पर चलने का अभ्यासी बनाने में लगता है । इसी कठिन कार्य को साधना कहते हैं । यही तपश्चर्या भी है । यदि प्रयत्नपूर्वक मन को साध लिया गया तो वह वश में हुआ मन देवता के समान प्रत्यक्ष कर देने वाला बन जाता है । ऐसा सुसंयत मन जिसके पास है उसे इस संसार में किसी वस्तु की कमी नहीं रहती, उसे विश्वविजयी ही माना जाता है ।

इन्द्रिय-निग्रह की उपयोगिता

आत्मसंयम की साधना का प्रारम्भिक कदम "इन्द्रिय निग्रह ।" यों ज्ञानेन्द्रियाँ पाँच मानी जाती हैं, पर उनमें दो ही प्रधान हैं—(१) स्वादेन्द्रिय, (२) कामेन्द्रिय । इनमें से स्वादेन्द्रिय प्रधान है । उसके वश में आने से कामेन्द्रिय भी वश में आ जाती है । जीभ का स्वाद जिसने जीता वह विषय-वासना पर भी अकुंश रख सकेगा । चटोरा आदमी ब्रह्मचर्य से नहीं रह सकता, उसे सभी इन्द्रियाँ परेशान करती हैं । विशेष रूप से काम वासना तो काबू में आती ही नहीं । इसलिए इन्द्रिय-निग्रह की तपश्चर्या स्वाद को—जीभ को वश में करने से आरम्भ की जाती है ।

अन्न, शाक और दूध में उतना नमक और उतनी शक्कर मौजूद है जितनी स्वास्थ्य रक्षा के लिए उपयुक्त एवं आवश्यक है । सृष्टि के सभी प्राणी स्वाभाविक आहार में से ही अपनी नमक और शक्कर की आवश्यकता पूरा करते हैं । कोई भी जीव-जन्तु ऐसा नहीं है जो अलग से इन चीजों को अपने स्वाभाविक भोजन में सम्मिलित करता हो । मनुष्य ही एक ऐसा विलक्षण जीव है जिसने प्रकृतिप्रदत्त स्वाभाविक भोजन को नमक और शक्कर से चटपटा करके ऐसा बना दिया है जिससे न तो भोजन की उपयुक्तता का पता चलता है और न मात्रा का । स्वाद ही स्वाद में जीभ धोखा खाती रहती है । अखाद्य पदार्थों को अनावश्यक मात्रा में उदरस्थ करती रहती है । फलस्वरूप हमें अपने आरोग्य और दीर्घ जीवन की बलि इस चटोरेपन की बेदी पर चढ़ानी पड़ती है ।

यदि भोजन में नमक और शक्कर न मिलाया जाय, मसाले न डाले जायें तो वह अपने स्वाभाविक रूप में रहेगा । फिर यह पहचानना सरल होगा कि कौन भोजन उपयुक्त है, कौन अनुपयुक्त ? अभी तो पाक-कला के आधार पर मांस जैसे घृणित, दुर्गन्धित और सर्वथा हानिकारक पदार्थ तक को मिर्च-मसालों के बल पर स्वादिष्ट बना लिया जाता है और बेचारा मुख यह परीक्षा भी नहीं कर पाता कि यह खाद्य है या अखाद्य । यदि मसाले न पड़ें तो जीभ उसके वास्तविक गुण-दोषों को जान लेगी और तब मांस को गले से नीचे उतार सकना कठिन होगा । इसी प्रकार पेट भर जाने पर भी स्वाद ही स्वाद में जो ठूँसा-ठाँसी होती है वह भी रुक जायेगी और आरोग्य के मार्ग में खड़ी हुई एक सबसे बड़ी बाधा दूर हो जायेगी ।

अस्वाद व्रत का महत्त्व

आरोग्य ही नहीं, मन को वासनासक्त होने से रोकने की दृष्टि से भी यह आवश्यक है कि स्वादेन्द्रिय पर अंकुश लगाया जाय । इस सृष्टि से नमक और मीठा दोनों को ही छोड़ देना अच्छा रहता है । यह निराधार भय है कि इससे स्वास्थ्य खराब हो जायेगा । सच तो यह है कि इस संयम से पाचन-क्रिया ठीक होती है, रक्त शुद्ध होता है, इन्द्रियाँ सशक्त रहती हैं, तेज बढ़ता है और जीवन-काल बढ़ जाता है । इनसे भी बड़ा लाभ यह है कि मन काबू में आता है ।

चटोरेपन को रोक देने से वासना पर जो नियन्त्रण होता है वह धीरे-धीरे सभी इन्द्रियों को वश में करने वाला सिद्ध होता है । जिस प्रकार पाँचों ज्ञानेन्द्रियों में स्वादेन्द्रिय और कर्मेन्द्रिय ही प्रबल हैं, उसी प्रकार स्वाद के षट् रसों में नमक और मीठा ही प्रधान हैं । चरपरा, खट्टा, कसैला आदि तो उनके सहायक रस मात्र हैं । इन दो प्रधान रसों पर संयम प्राप्त करना षट्रसों को त्यागने के बराबर ही है । जिसने स्वाद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और काम-प्रवृत्ति को जीता उसकी सभी इन्द्रियाँ वश में हो गईं । जिसने नमक, मीठा छोड़ा, उसने छहों रसों को त्याग दिया, ऐसा ही समझना चाहिए । मन को वश में करने के लिए यह संयम-साधना हर साधक को किसी न किसी रूप में करनी ही होती है ।

हमें भी इस दिशा में एक कदम उठाना ही चाहिए । आरम्भ में वह छोटा हो तो भी हर्ज नहीं । सप्ताह में एक दिन 'अस्वाद व्रत' रखना किसी के लिए भी कठिन नहीं होना चाहिए । रविवार या गुरुवार के दिन इसके लिए अधिक उपयुक्त है । उस दिन जो भी भोजन किया जाय उसमें नमक, मीठा मिला हुआ न हो । उबले हुए आलू, टमाटर, दही, दूध, उबले हुए अन्य शाक, बिना नमक, मसाले की अलौनी दाल आदि के साथ रोटी खा लेना बिल्कुल साधारण-सी बात है । दो-चार बार चटोरापन की पुरानी आदत के अनुसार अखरेगा तो सही पर सन्तोष और धैर्यपूर्वक उस भोजन को भूख बुझाने जितनी मात्रा में आसानी से खाया जा सकेगा । दो-चार बार के अभ्यास से तो वह अलौना भोजन ही स्वादिष्ट लगने लगेगा । अलौनेपन का अपना एक अलग ही स्वाद है और वह जिन्हें पसन्द आ जाता है उन्हें दूसरे स्वाद रुचिते ही नहीं ।

आत्मिक और लौकिक दोनों ही लाभ

अस्वाद-व्रत अपने आप में एक महान व्रत है । महात्मा गाँधी ने इसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की है और अपने सप्त महाव्रतों में इसे प्रमुख स्थान दिया है । सप्ताह में एक दिन भी इसे पालन किया जाय तो मन की संयम शक्ति और दृढ़ता बढ़ती है । यह बढ़ोत्तरी धीरे-धीरे मनुष्य में उन गुणों का भी विकास कर देती है जो महान पुरुषों में होने ही चाहिए ।

अस्वाद-व्रत के दिन यदि एक ही समय भोजन किया जाय तो और भी उत्तम है । इससे पेट को विश्राम मिलेगा और राष्ट्र की खाद्य समस्या सुलझाने के लिए अन्न की मितव्ययिता का देशभक्तिपूर्ण सत्कर्म भी सहज ही बन पड़ेगा । दोपहर को भोजन लिया जाय, इसके अतिरिक्त सबेरे या रात को भूख लगे तो दूध, छाछ आदि कोई पतली चीज ली जा सकती है । दोपहर के भोजन में भी अनेक कटोरियाँ सजाने की अपेक्षा यदि रोटी के साथ शाक, दाल, दही आदि में से कोई एक ही वस्तु लगाकर खाने के लिए रखा जाय तो और भी उत्तम है । एक साथ अनेक प्रकार की चीजें खाने से पाचन क्रिया-बिगड़ती है, यह सर्वविदित तथ्य है । स्वाद के लिए ही लोग नाना प्रकार के व्यंजन बनाते और थाल सजाते हैं । स्वास्थ्य की दृष्टि से तो जितनी कम चीजें एक साथ खायी जायें उतना ही पाचन ठीक होता है । इसलिए स्वास्थ्य की दृष्टि से भी और समय की दृष्टि से भी रोटी के साथ एक ही वस्तु लगाने के लिए रखी जाय तो अधिक उपयुक्त है।

विवेकपूर्ण उपवास

यह अस्वाद-व्रत जिसमें एक समय, एक ही लगावन के साथ रोटी खाई जाय उस रूढ़िमात्र के उपवास से हजार गुना उत्तम है जिसमें केवल अन्न छोड़ा जाता है और नाना प्रकार के मिष्ठान्न, कुट्टू, सिंघाड़ा आदि के पकवान, चाट, पकौड़े, सेंधा नमक और काली मिर्च से भरपूर बनाकर साधारण दिनों से भी अधिक मात्रा में उदरस्थ किए जाते हैं । कुछ लोग अन्नाहार त्यागकर अरबी, शकरकंद, खीरा, सड़े या कच्चे सस्ते फल आदि पेट में गड़बड़ी उत्पन्न करने वाली सस्ती चीजें उपवास में खा जाते हैं । इससे उन्हें उलटी हानि उठानी पड़ती है । उपवास ही करना हो तो उसके लिए दूध या छाछ पर रहना चाहिए । फल लेना हो तो सुपाच्य और ठीक प्रकार पके हुए देख-परख कर ही उन्हें लेना चाहिए । अविवेकपूर्ण फलाहार से उपवास का उद्देश्य पूर्ण नहीं होता । करना हो तो उसे विचारपूर्वक ही करना चाहिए, अन्यथा एक समय भोजन का उपर्युक्त विधि से किया हुआ अस्वाद-व्रत भी एक प्रकार का उपवास ही है । उपवास किसी भी प्रकार का क्यों न हो उसमें अस्वाद व्रत का समावेश अवश्य होना चाहिए ।

पाप-प्रायश्चित्त के तप-व्रत

हम साप्ताहिक अस्वाद-व्रत से अपनी संयम-साधना आरम्भ करें । आगे क्रमशः इसका विकास करते हुए अन्य इन्द्रियों को तथा मन को वशवर्ती बनाये । यह संयम-साधना किसी समय चान्द्रायण आदि व्रतों के उपयुक्त भी हमारी मनोभूमि को बना सकती है, जिसके आधार पर इस जन्म के किए हुए सब पापों का प्रायश्चित्त करके अगले जन्म के लिए कोई बुरा प्रारब्ध योग शेष न रहने देने का भी महान पुरुषार्थ कर सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस जन्म में हमें पिछले प्रारब्ध भुगतने पड़ रहे हैं । पिछले सब प्रारब्ध इस जन्म में भुगत जावें । इसी हिसाब से यह जन्म मिलता है । यदि हम पिछले प्रारब्ध भुगतलें और अलगे जन्म के लिए नये प्रारब्ध बनने न दें तो सब बन्धनों से सहज ही छुटकारा मिल सकता है । अस्वाद-व्रत को आरम्भ करके परिपुष्ट हुई मनोभूमि कभी इस योग्य भी हो सकती है कि कष्टसाध्य प्रायश्चित्त के द्वारा इसी जन्म के प्रारब्धों को भी इसी जन्म में भुगत लेने का साहस उत्पन्न हो जावे ।

यदि इस सरल और शुभ आरम्भ को श्रद्धापूर्वक आगे बढ़ाया जा सका तो स्वजनों को भव बन्धनों से पार होने की प्रायश्चित्त साधना भी घर में रह कर ही बन सकेगी और तब जीवन लक्ष्य प्राप्त कर सकना कुछ भी कठिन न होगा । अन्नमय-कोश को शुद्ध करने एवं जीतने के लिए अन्न कीं शुद्धि आवश्यक है । इस सम्बन्ध में धीरे-धीरे अभ्यास डालते हुए अन्न शुद्धि की उस महान प्रक्रिया को भी पूर्ण किया जा सकेगा जिस पर मन की शुद्धि निर्भर है । अभी पहला कदम तो हमें "साप्ताहिक अस्वाद-व्रत" के सरल आधार पर ही उठाना चाहिए ।

सिद्धियाँ जगाने का यह भी एक मार्ग

योगों की शृंखला में हठयोग एक ऐसी प्रणाली है, जिसमें कष्टसाध्य प्रक्रियाओं से गुजरते हुए शरीर को हठपूर्वक साधा जाता है और अन्ततः एक ऐसी स्थिति प्राप्त करने की कोशिश की जाती है, जिसे सर्वसामान्य सिद्धि अथवा चमत्कार के नाम से पुकारते हैं ।

आरम्भ में हठयोग द्वारा सिद्धि को पश्चिमी जगत में भ्रामक और सन्देहयुक्त माना जाता था । इसके दो कारण थे—एक तो ऐसे उदाहरणों का अभाव, जो इसे सौ टंच खरा साबित कर सके एवं दूसरा विज्ञानवादी मस्तिष्क से उपजा संशयवाद । इन दोनों ने इसे अमान्य करते हुए यह घोषित किया कि औंधे-सीधे कौतुकपूर्ण कृत्यों द्वारा अतीन्द्रिय सामर्थ्य अर्जित कर लेना न सिर्फ असंगत है, वरन् इससे भारतीय योग विज्ञान का दिवालियापन भी प्रगट होता है । जिन दिनों योग विद्या की उक्त विधा के बारे में ऐसी भ्रांतियाँ फैली हुई थीं उन्हीं दिनों संयोगवश कुछ ऐसी घटनाएँ घटीं, जिन्होंने न सिर्फ उस प्रणाली को निभ्रांत सिद्ध किया, अपितु उसकी विश्वसनीयता को भी असंदिग्ध प्रमाणित कर दिया ।

ऐसी ही एक रोमांचक घटना का उल्लेख एड मोरेल ने अपनी पुस्तक "दि ट्वेण्टी-फिफ्थ मैन" में किया है । प्रसंग उनके स्वयं के जीवन से सम्बन्धित हैं एवं इस सदी के प्रारम्भ के हैं । प्रथम विश्व युद्ध के दौरान उन्हें कैद कर लिया गया तथा उन्हें सान क्वेण्टिन की जेल भेज दिया गया । मोरेल लिखते हैं कि कारावास के कुछ वर्ष आसानी से कट गए । वहाँ एकान्त की नीरसता के अतिरिक्त कोई और कष्ट नहीं था । वास्तविक लोमहर्षक व्यथा की शुरूआत तो इसके उपरान्त हुई , जब उन पर कारागार में चोरी-छिपे बन्दूक रखने का झूठा आरोप लगाया गया । इस मिथ्या आक्षेप के प्रति जेल अधिकारियों को वे हर प्रकार से आश्वस्त करने का प्रयास करते रहे, पर सब निष्फल गया । अन्ततः वही उपचार अपनाया गया, जो किसी अपराधी से गुप्त बातें उगलवाने के लिए जेलर अपनाया करते हैं ।

मोरेल को यातनाग्रह भेज दिया गया । वहाँ यन्त्रणा देकर सच्चाई जानने व अस्त्र का पता लगाने का सर्वसमत निर्णय लिया गया । तब यातना देने का तरीका भिन्न था । आज जैसे बिजली के झटके व तीक्ष्ण प्रकाश का इस्तेमाल उन दिनों प्रचलित नहीं था । जो प्रचलन में था, वह एक विशेष प्रकार का जैकेट था । लबादानुमा उक्त जैकेट में अपराधी को डालकर उसे धड़ से लेकर पैर तक बुरी तरह कस दिया जाता था । कसाब इतना भीषण होता कि व्यक्ति एक ही अवस्था में असहाय पड़ा रहता । इस स्थिति में घुटन इतनी तीव्र होती, मानों व्यक्ति को जिन्दा दफन कर दिया गया हो इसके अतिरिक्त चाकू घोंपने जैसा दर्द अंगों की सुन्नता जैसी जड़ता एवं पसीने का निकलना और पुनः त्वचा में अवशोषित हो जाना शरीर पर अम्ल-छिड़काव जैसा प्रभाव उत्पन्न करता था । इन सब अनुभूतियों से कैदी को ऐसा लगता, जैसे वह किसी विशालकाय अजगर के पेट में पड़ा मौत के क्षण गिन रहा हो ।

उपर्युक्त कटु अनुभवों के बीच उत्पीड़न का प्रथम सत्र समाप्त हुआ । मोरेल कहते हैं कि इसने उन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्दर तक झकझोर डाला और घोर निराशा की दशा में पहुँचा दिया पर इसे उनका सुखद सौभाग्य कहना चाहिए कि आगे के यातना-शिविर अलौकिक आनन्द का वरदान सिद्ध हुए ।

अगला सत्र प्रारम्भ हुआ । उन्हें जैकेट में पुनः कस दिया गया । मोरेल फर्श पर तीव्र पीड़ा से तड़प उठे । तभी उन्हें ऐसा आभास हुआ कि वे चेतनाशून्य होते जा रहे हों । कुछ समय बाद उनकी मर्मांतक वेदना दो शरीरों के पृथक्करण के साथ समाप्त हुई । वे अपने स्थूल शरीर को बन्दीग्रह के फर्श पर निर्जीव पड़े देख रहे थे और सूक्ष्मशरीर से स्वयं आकाश में उन्मुक्त विचरण करते हुए इच्छानुसार जहाँ कहीं भी आ-जा रहे थे, पर हर बार एक निश्चित अवधि के पश्चात सेल में स्थित भौतिक देह में उनका पुनर्गमन हो जाता । इस प्रकार स्वकाया प्रवेश के उपरान्त उन्हें काफी ताजगी अनुभव होती, चिन्ता, परेशानी अथवा थकान का कोई चिह्न उनके चेहरे पर नहीं झलकता । जेलर को इससे हैरानी हुई । उसने समझा कि कदाचित् यह उत्पीड़न मोरेल के लिए पर्याप्त नहीं । अतः उस तोड़ने के लिए अधिकारियों ने दोहरे लबादे का आदेश दिया । इस बार पहले के ऊपर एक और जैकेट डाला गया, किन्तु वार्डन को फिर भी असफलता ही हाथ लगी । मोरेल पूर्व की भाँति इस बार भी शान्त और प्रसन्न दिखाई पड़ रहे थे ।

बार-बार की विफलता और वार्डन के स्थानान्तरण ने अन्ततः मोरेल को इस आठवर्षीय कठिन जीवन और भीषण उत्पीड़न से मुक्ति दिलायी । इसके चार वर्ष बाद जेल से रिहा कर दिया गया ।

तप, तितिक्षा चाहे स्वेच्छा से अपनायी गई हो अथवा मजबूरीवश स्वीकारी गई हो, उसके नियमित अभ्यास से दिव्य क्षमताएँ जाग्रत होती हैं, इसकी पुष्टि मोरेल के जेल-जीवन एवं द्वितीय विश्व-युद्ध के दौरान बन्दी बनाए गए यन्त्रणा प्राप्त कैदियों की अनुभूतियों से हो जाती है । सर्वसाधारण के लिए तो हठयोग का अभ्यास न सिर्फ कठिन है, वरन् उनकी दुर्बल मनःस्थिति के प्रतिकूल भी । सामान्य लोगों को तो जपयोग, ध्यानयोग, लययोग, नादयोग जैसी सरल साधनाओं से ही काम चलाना चाहिए । निष्ठा और एकाग्रता की स्थिति में दिव्य विभूतियों के जागरण में ये भी वैसी ही समर्थ भूमिका सम्पन्न करते देखे जाते हैं, जैसे हठयोगी । अतः उन्हें ही अपनाने का मानस बनाना चाहिए । वे शरीर के अनुकूल हैं और समय के अनुरूप भी इसमें कोई दो मत नहीं ।

इन्द्रियाँ आत्मा की शत्रु नहीं, सेवक

साधना मार्ग में प्रगति करने के लिए इन्द्रियों की प्रबलता को प्रमुख शत्रु माना गया है । इन्द्रियों से प्राप्त होने वाले सुखों के प्रति राग और द्वेष मिलकर मनुष्य को दिग्भ्रांत करते रहते हैं । यही कारण है कि बाह्य जीवन की नश्वरता को स्वीकार करते हुए भी वह आत्मा के उद्धार की बात तक नहीं सोच पाता है । शास्त्रों में इस विषय में अधिक जोर दिया गया है कि मनुष्य शरीर रहते हुए अपने स्वरूप का ज्ञान कर लेना चाहिए, अन्यथा पुनः युग-युगान्तरों तक अनेकों घृणित योनियों में विचरण करना पड़ता है तब कहीं दुबारा मानव-शरीर प्राप्त करने का संयोग मिलता है । इस दुर्लभ संयोग को यों ही बर्बाद कर देना बुद्धिमानी की बात नहीं है ।

अग्नि के तेजस्वी स्वरूप को देखने के लिए ऊपर की सारी राख हटानी पड़ती है । अंधकार फैल रहा हो तो किसी भी वस्तु का साफ-साफ स्वरूप नहीं दिखाई पड़ता । उसी प्रकार अन्तःकरण के मल, विक्षेप बने रहें तो आत्म-ज्ञान प्राप्त करना सम्भव न होगा । मानासेक चंचलता और आन्तरिक मनता का उदय इन्द्रियों के असंयम से होता है । इसलिए गीताकार ने लिखा है—

"इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौहास्य परिपन्थिनौ ॥"

अर्थात् मनुष्य को चाहिए कि इन्द्रियों के अर्थ व उनमें सन्निहित जो राग और द्वेष हैं उन दोनों के वश में नहीं होवे, क्योंकि आत्म-कल्याण के मार्ग में विघ्न करने वाले ये दोनों ही प्रबल शत्रु हैं ।

जिन इन्द्रियों का आत्म-विकास की रुकावट मानते हैं यथार्थ में हमारे आत्म-कल्याण का कारण भी वही हैं । शत्रु के रूप में तो वे अपने बहिर्मुखी स्वभाव के कारण परिलक्षित होती हैं । जब तक इनका उपयोग बाह्य जीवन के सुखोपभोग में करते हैं तब तक वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शत्रु हैं किन्तु जैसे ही इन्हें आत्म-ज्ञान व आत्म-विकास की ओर मोड़ देते हैं इनके सत्परिणाम भी दिखाई पड़ने लगते हैं । परेशानी तभी तक रहती है जब तक ये अपने अर्थों में पूर्ण स्वच्छन्द होती हैं । सदुपयोग करने लगें तो इन्हीं से महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं । आवश्यकता सिर्फ इतनी है कि इनकी स्वतन्त्र विचरण की बहिर्मुखी प्रवृत्ति पर अंकुश बनाए रहें ।

किसी घोड़े को बेलगाम छोड़ दें तो वह अपने सवार को खड्डे में गिरा कर ही रहेगा । सवार की सुरक्षा सदैव इस बात पर निर्भर रहती है कि वह घोड़े के नियन्त्रण को ढीला न करे । इससे जिस दिशा में जितनी दूर जाना चाहेंगें वहीं घोड़ा सुरक्षापूर्वक आपको पहुँचा देगा । जिह्वा-इन्द्रिय को ही लीजिए । भाँति-भाँति के स्वादयुक्त व्यंजनों की उसे सदैव लालसा बनी रहती है । चटोरेपन की बहिर्मुखी प्रवृत्ति के कारण वह स्वास्थ्य को बर्बाद करती है । जिह्वा का उपयोग वस्तुतः इसलिए है कि उससे खाद्य या अखाद्य की पहचान करते रहें । अधिक कडुवा खा लेने पर जीभ छटपटाने लगती है, यह उसकी स्वाभाविक अभिव्यक्ति है कि यह अखाद्य है, उदरस्थ कर जाने का दुष्परिणाम तो बाद में मिलेगा । पाचन संस्थान को खराबी से होने वाले दुष्परिणामों से बचाने के लिए ही जीभ की तड़फड़ाहट उठी थी । किन्तु इसका लाभ तभी है जब हम खाद्य और अखाद्य के भेद को स्वीकार करें, उस पर नियन्त्रण करें ।

आँखों का कार्य है सौन्दर्य-दर्शन । आत्मा के उद्गम परमात्मा के सौन्दर्य को अन्यतम कहा जाता है । उस आन्तरिक सौन्दर्य के साक्षात्कार की लालसा स्वाभाविक है । हर किसी को सुन्दर वस्तुएँ देखने की इच्छा बनी रहती है । किन्तु अधिकांश होता यह है कि लोग बाह्य रूप-रंग, चमक-दमक को ही सौन्दर्य मानते हैं ।

बात यहीं तक रहती तब भी गनीमत थी किन्तु स्वार्थपूर्ण और वासनात्मक दृष्टिकोण के द्वारा लोग आन्तरिक सौन्दर्य पर पर्दा डाल देते हैं । विराट का सौन्दर्य इतना अभूतपूर्व और आह्लादमय है कि एक बार उसकी अनुभूति कर पायें तो आँखें सदैव उसे पाने के लिए ही तरसती रहेंगी । इसी दृष्टिकोण से इनकी उपयोगिता भी है ।

इस संसार में जो कुछ भी हो रहा है वह सब विधिवत् वैज्ञानिक तथ्य पर सन्निहित है । इस विज्ञान को समझने के लिए इन्द्रियों के विषय-विकारों से विज्ञान की ओर उन्मुख नहीं हो सकता । उसकी सारी चेष्टाएँ इन्हीं कुत्सित, घृणित, अदूरदर्शी, क्षणिक सुखोपभोग के आस-पास ही चक्कर लगाया करती हैं । फलतः विराट के साथ आत्मीयता स्थापित करने की कभी भावना तक नहीं बन पाती । तुलसीदास जी ने मानस में लिखा है—

"इन्द्रिय द्वारा झरोखा नाना ।
तहँ-तहँ सुर बैठे करि थाना ॥
आवत देखहिं विषय बयारी ।
ते हठि देहिं कपाट उघारी ॥
जब सो प्रभंजन उन गृह जाई ।
तबहि दीप विज्ञान बुझाई ॥
इन्द्रिय सुरन्ह न ज्ञान सोहाई ।
विषय भोग पर प्रीति सदाई ॥"

अर्थात् अनियन्त्रित इन्द्रियाँ बलात् विषयों की ओर ले जाती हैं । ज्ञान-विज्ञान की बातें तो यों ही रखी रह जाती हैं । विषयों में राग और द्वेषों में स्वच्छन्द विचरण करती हुई इन्द्रियों पर विचार व विवेक द्वारा ही नियन्त्रण रखा जा सकता है । भोग से कभी तृप्ति नहीं होती, इससे मनुष्य अपने जीवन लक्ष्य से भटककर दुःख, क्लेश तथा त्रासदायक परिस्थितियों में जा फँसता है । इस विचार को गहराई तक अपने अन्तःकरण में प्रवेश कर लेने से और इस पर निरन्तर चिन्तन-मनन करते रहने से भोग के दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम दिखाई दे जाते हैं । धीरे-धीरे इनसे घृणा उत्पन्न होने लगती है ।

इतना होते हुए भी यह नहीं कहा जा सकता कि इन्द्रियाँ आपके वश में आ गयीं । जब कभी अनुकूल परिस्थिति बन जाती है तो इनमें प्रबल उत्तेजना उठे बिना नहीं रह पाती । ऐसी अवस्था में सारी विचार-शक्ति लड़खड़ा जाती है और एक आवेश के साथ लोग बुरे कर्मों की ओर बलात् खिंचे चले जाते हैं । यह परिस्थिति विचारों की क्षीण शक्ति के कारण उपस्थित होती है, इसलिए अपने प्रत्येक विचार को एक संकल्प का रूप दे देना चाहिए । इसी से इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखा जा सकता है ।

अपनी आन्तरिक निर्मलता बनाए रखने से इन्द्रियाँ अपने आप संयमित होने लगती हैं । इस व्यवस्था का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आधार सदाचरण है । द्वेष, घृणा, ईर्ष्या, क्रोध आदि से ही अन्तःकरण मलिन व अपवित्र बनता है । अपनी भावनाओं में प्रेम, स्नेह, आत्मीयता, सौजन्य और सहानुभूति के बाहुल्य से ही आन्तरिक श्रेष्ठता स्थिर रहती है । जब तक ऐसी स्थिति बनी रहती है तब तक दूषित विकार उत्पन्न नहीं होते और इन्द्रियाँ नियन्त्रित बनी रहती हैं ।

इन्द्रियों को आत्मा का शत्रु नहीं सेवक मानना चाहिए । परमात्मा ने इन्हें इसलिए प्रदान किया है कि इनकी सहायता से सृष्टि संचालन की आवश्यकता पूरी हो और सुख मिले । निःसन्देह इन्द्रियाँ बड़ी उपयोगी हैं । इनसे जीवात्मा का उत्कर्ष होता है और आनन्द की प्राप्त होती है । ये आत्मा के हित व कल्याण में बाधक नहीं वरन् साधन स्वरूप हैं । इनका सदुपयोग किया जाय तो मनुष्य जीवन का मधुर रस चखता हुआ अपना जीवन-लक्ष्य पूरा कर सकता है ।

मनः संयम के सिद्धान्त

आपको अपने दोष जानने के लिए अन्तर्मुखी वृत्ति और सूक्ष्म बुद्धि रखनी चाहिए । शान्तिपूर्वक सुनसान कमरे में आँख खींचकर बैठ जाओ और मन की क्रियाओं को देखते रहो । अपने दोषों को दूर करने का ठीक उपाय जानना चाहिए । सदा मन को काम में लगाए रहिए । बराबर साधन करते रहिए । समय-समय पर जैसे सप्ताह में एक बार या महीने में एक बार अपनी उन्नति देखते रहना चाहिए और इसका ब्यौरा रखिए । यदि एक उपाय सरल नहीं हो तो दो उपायों को मिलाकर काम में लाना होगा ।

सन्तोष, लगन, श्रद्धा, दृढ़ निश्चय की साधना में आवश्यकता होती है । इन सद्गुणों को पैदा करके बढ़ाना होगा । तभी सफलता हो सकती है । मार्ग में जो-जो कठिनाइयाँ आ जाती हैं उन्हें देखिए । इसलिए आध्यात्मिक मार्ग कठिन है । हजारों मनुष्यों में से एक ही इस मार्ग का अनुकरण करता है । यत्न करने वालों में बहुत कम ही सफल होते हैं । बहुत से मनुष्य आधे मार्ग में ही साधन छोड़ देते हैं क्योंकि आगे चलना उन्हें कठिन मालूम होता है । धैर्य और उत्साह-युक्त साधक ही सच्चिदानन्द अवस्था को प्राप्त करते हैं, ऐसी आत्माओं को धन्य है ।

जो काम नहीं पसन्द करता उसके करने की आज्ञा मन को दी जाय तो विद्रोह करने लगता है । प्यार से बहलाकर यदि समझाया जाय तो यह फौरन मान लेता है ।

मन के साथ खेंचातानी मत कीजिए । इससे शक्ति क्षीण होती है । सत्य में रहिए । विचार, ब्रह्म भावना और निदिध्यासन के द्वारा आत्मा में रहिए, सारी बाधाएँ स्वयं ही नष्ट हो जायेंगी । विचार-उपाय की उपयोगिता इसके अभ्यास द्वारा समझ लीजिए ।

अपने मन और इन्द्रियों पर विश्वास मत कीजिए । स्वयं अपने अन्तर्जगत में खूब छानवीन करें । स्त्री ओर धन आपके शत्रु हैं । ध्यान से देखो कि आप आध्यात्म मार्ग में उन्नति कर रहे हो, जहाँ थे वहाँ ही हो या पीछे हट रहे हो, आपका मन एकाग्र है या व्यग्र है । यदि मन में व्यग्रता है तो धैर्यपूर्वक उपयुक्त प्रयत्नों से इस व्यग्रता के कारणों को एक-एक करके दूर करना होगा ।

जब कभी आपको बड़ी चिन्ता हो, मन में गिरावट हो, बड़ा दुःख हो तो विचार करो कि आप आनन्द के भण्डार आत्मस्वरूप हो । मन को संसारी वस्तुओं और विचारों से हटाकर आत्मा पर लगा दो । एकान्त स्थान में जाकर कहो—"मैं आनन्दमय आत्मा हूँ । मुझे दुःख कैसे हो सकता है ? दुःख तो मन का लक्षण है । मैं तो मन में ऊपर हूँ । आत्मा, आनन्द शक्ति और ज्ञान का भण्डार है । मैं अनुभव करता हूँ कि मैं शुद्ध चैतन्य, व्यापक चेतना हूँ जो इन सब रूपों के पीछे छिपी हुई है । मैं आत्मा हूँ । मैं आनन्द ही आनन्द हूँ ।" इस अभ्यास से आपको असीम आनन्द और बल प्राप्त होगा ।

मन के स्वभाव को देखो, इसका विश्लेषण करो । इस मन के तीनों दोष, मल, विक्षेप और आवरण को दूर हटाओ । मन को पवित्र बनाकर स्थिर करो । इसे ईश्वर पर लगा दो । निरन्तर तीव्र विचार के अभ्यास से मन को ईश्वर में भुला दो । मनोनाश के साधन का अभ्यास करो । मन के भुलावे और लालच से ऊँचे उठ जाओ । यह आपका धर्म है । आपका जन्म ही इसके लिए हुआ है और सारे धर्म तो अविद्या के कारण आपने स्वयं ही अपने ऊपर डाल लिए हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तृष्णा को सन्तोष, उदासीनता को दान के द्वारा नाश करो । आशाएँ मत बनाओ, आपको कभी खेद नहीं होगा । मोक्ष राज्य के चार पहरेदारों में से एक सन्तोष है । सन्तोषी मन सदा तृप्त रहता है । यदि आपको सन्तोष होगा तो दूसरे तीन पहरेदार भी आपकी सहायता करेंगे । इन चारों की सहायता से आप ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर सकते हो ।

इन तीन शब्दों को याद रखो—(१) पवित्र करना, (२) एकाग्र करना और (३) मग्न कर देना—काम और क्रोधादि मलों से मन को शुद्ध कर लो । इच्छारहित निःस्वार्थ बुद्धि से कर्म करो । इससे मन निर्मल हो जायेगा । उपासना, प्राणायाम, त्राटक और चित्तवृत्ति-निरोध का अभ्यास करो । इससे मन को एकाग्र करने में सहायता मिलेगी । फिर निरन्तर गम्भीर ध्यान का अभ्यास करो । आखिर में मन मग्न हो जायेगा ।

जल में शीतलता, अग्नि में तेज और वायु में गति किसने प्रदान की ? यह इनके स्वभाव हैं । ऐसे ही मनका स्वभाव है वस्तुओं की ओर दौड़ना, बुद्धि का स्वभाव निश्चय करना, अहंकार का स्वभाव आत्म सम्वेदन, चित्त का स्वभाव स्मृति है । जब आप अपनी छाया पर मिट्टी डालकर उसे दबाना चाहते हो तो छाया हमेशा ऊपर ही रहती है । इसी प्रकार जब आप संकल्पों को विवेक वृत्ति से नाश करने का यत्न करते हो तो वे बार-बार प्रकट हो जाते हैं । मन को वस्तुओं की ओर से हटालो और अपने गुरु के वचनों के अनुसार चलो । मन को शुद्ध करके निन्दाकाश में स्थिर करो । समय पाकर मन का क्षय हो जायेगा इसमें सन्देह नहीं है ।

मोक्ष का अर्थ यह नहीं है कि समस्त संसारी कार्यों से भौतिक वियोग कर लिया जाय, किन्तु इसका अर्थ ऐसी मानसिक स्थिति है जो सारी मलिन वासनाओं से रहित होकर संसारी वस्तुओं में सामान्य रूप से कार्य करता रहे । संसार में रहते हुए संसार के द्वारा ही ईश्वर प्राप्ति करनी चाहिए । गीता और योग वाशिष्ठ का मुख्य उपदेश यही है ।

मन की रुचि जिस वस्तु में विशेष हो उसे ही त्यागना चाहिए । यदि आप बेंगन या सेव ज्यादा पसन्द करते हैं तो पहले उनको ही छोड़ दो । आपको बहुत शान्ति, इच्छा शक्ति और मन का निग्रह प्राप्त होगा ।

मन के सारे सुखकेन्द्र नष्ट कर दो जैसे स्वादु वस्तुओं का बार-बार भोजन, ज्यादा गप-शप करना, सैर करना, गाना सुनना और स्त्रियों की संगति में रहना । इन सबको धीरे-धीरे सावधानी से छोड़ते चले जाओ, केवल तीन सात्विक सुख-केन्द्र बचाए रखो—आत्मा ज्ञान सम्बन्धी पुस्तकों का स्वाध्याय, ध्यान और मनुष्य जाति की सेवा । जब ध्यान में उन्नति हो जाय तो सेवा और स्वाध्याय को भी कुछ काल के लिए छोड़ दो । जब निर्विकल्प अवस्था में पहुँच जाओ तो गीता का ज्ञान-यज्ञ प्रारम्भ करो अर्थात् दिव्य ज्ञान का उपदेश करो, इसी का प्रचार करो और उसके लिए ही कार्य करो ।

मन जिस काम को करना नहीं चाहता वहीं करो, मन जिस काम को करना चाहता हो उसे नहीं करो । मन के निग्रह और इच्छा शक्ति को बढ़ाने का एक उपाय यह है ।

गायें अनेक रंग, शक्ल-सूरत की होती हैं परन्तु दूध वैसा ही होता है । यदि रीति, आचार, वेष-भूषा और भोजन के भेद को निकाल दिया जाय तो संसार के सारे मनुष्य समान हैं । उसके भाव और भावनाएँ संसार भर में समान ही होती हैं । अनेकों देशों में भाषा की भिन्नता होती है, परन्तु इन भाषाओं के पीछे छिपा हुआ विचार एक ही समान होता है । यदि भिन्नता, द्वेत और अनेकता में एकत्व है । निद्रा में एक रस होता है जिसका अनुभव सब समान रूप से करते हैं । निद्रा में नाना भाव नहीं होता; इसी प्रकार पदार्थों के पीछे भी एक ही सजातीय तत्व आत्मा या ब्रह्म है, यही आपका सच्चा स्वरूप है ।

संसार की किसी वस्तु में भी सुख नहीं है । यह अज्ञान का विचार है कि हमको विषय पदार्थों से अथवा मन से सुख प्राप्त होता है । जब कभी हमें वासना तृप्ति का अनुभव होता है तो हम देखते हैं कि मन अपने अधिष्ठान आत्मा में लौट जाता है और आत्मसुख का आनन्द देता है । इष्ट वस्तु की प्राप्ति करके मन अन्तर्मुख हो जाता है और आत्मानन्द प्राप्त कर लेता है ।

अनेक प्रकार के घृणा और वैरभाव से दोष निकालना चिढ़ाना, निरादर करना, असंगत आलोचना, बुरा बताना, ऊंठे किस्से फैलाना, पीछे निन्दा करना, छोटे से दोष को भी बहुत बढ़ा करके बताना और शिकायत करना—ये सब बातें निकलने लगती हैं । इसी से मनुष्य के मन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की तुच्छता का पता लगता है । इन बातों का दूर कर देना चाहिए ।

सदा प्रसन्न रहो । हँसते और मुस्कारते रहो । उदास मन ईश्वर का विचार ही कैसे कर सकता है । आपका स्वभाव ही प्रसन्नता है । इसे अनवसाद कहते हैं । सब साधकों को यह प्रसन्नता का स्वभाव बना लेना चाहिए ।

मन में हर्ष का अतिरेक मत होने दो । जैसा पहले बता चुके हैं मन सदा सीमा को उल्लंघन करता है, यह या तो असीम उदासी या असीम प्रसन्नता ग्रहण करता है । ज्यादा खुशी में मन कभी शान्त नहीं हो सकता । मन को प्रसन्न और शान्त रहने दो । हर्ष और शोक के अतिरेक से ठेस लगने पर मनुष्य की मृत्यु हो जाती है ।

गुरु वस्तुतः अपनी आध्यात्मिक शक्ति शिष्य को प्रदान करता है । एक विशेष आध्यात्मिक स्पन्दन गुरु की ओर से शिष्य के मन की ओर जाता है । श्री रामकृष्ण परमहंस ने अपनी आध्यात्मिक शक्ति यथार्थ में स्वामी विवेकानन्द को दे दी थी । ईसामसीह ने भी अपने शिष्यों के साथ ऐसा ही किया था । समर्थ गुरु रामदास ने एक वेश्या पुत्री को जो उन पर मोहित हो रही थी इसी प्रकार शक्ति प्रदान की थी । उस पर दृष्टि जमा कर समाधि प्राप्त करादी । उसकी कामवासना जाती रही । वह बहुत धार्मिक बन गई । एक महाराष्ट्र सन्त मुकुन्दराय ने बादशाह को समाधि प्राप्त करादी थी ।

बाह्य पदार्थों से मिलने वाला सुख क्षणभंगुर होता है । यह केवल नाड़ी संचालन और मानसिक भ्रम होता है । शरीर दुःख और रोग का स्थान है । धन उपार्जन करने और उसकी रक्षा करने में बड़ा कष्ट होता है । प्रत्येक संसर्ग से दुःख निकलता है । स्त्रियाँ निरन्तर चिन्ता देने वाली होती हैं । खेद है, फिर भी मनुष्य आध्यात्मिक आनन्द-पथ को छोड़ कर संसार का दुःख-पथ पर जाना पसन्द करते हैं ।

आप चाहे जिस योग मार्ग का अभ्यास करो, आपको राग, द्वेष, अहंकारादि से रहित इन्द्रिय-दमन करना चाहिए । चित्त शुद्ध और यम-नियम का पालन सारे योगों में समान रूप से आवश्यक है । कर्मयोग में मनुष्य क्या कर सकता है, यदि उसको आत्मसंयम नहीं है और वह अत्यन्त स्वार्थी है । यदि आप हर एक चीज अपने ही वास्ते चाहते हो तो आप दूसरों के लिए कोई चीज कैसे त्याग कर सकते हो ? आप विश्व के साथ प्रेम, निःस्वार्थ सेवा और दान के द्वारा ही मिल सकते हो ।

सच्चा त्याग मन के संयम में है । इसमें सारी कामनाओं और अहंकार का त्याग करना होता है, संसार की सत्ता का नहीं । तब जीवन में अमृतत्व या अहंकार से रहित ब्रह्म में सबकी एकता पर स्थिर जीवन का असीम आनन्द प्राप्त होगा । केवल चित्त त्याग ही सबका त्याग कहलाता है । मन ही सब कुछ है और इसके संयम से सबका त्याग हो जाता है । इस प्रकार के मानसिक त्याग के द्वारा आप सारे दुःख से मुक्त हो जाओगे ।

संन्यास केवल मानसिक दशा है । वास्तव में तो मन को गेरुआ रंगने की आवश्यकता है, कपड़ों को नहीं । जो अहंकार और वासनाओं से रहित है, जिसमें सारे सात्विक सद्गुण हैं वह यद्यपि संसार में परिवार के साथ भी रहता है तो भी वह सच्चा संन्यासी है । रानी चूणाला एक संन्यासिनी रानी थी यद्यपि वह राज्य का कार्य-भार सँभालती थी । जो संन्यासी जंगल में रह कर भी वासनाओं, से भरा हुआ है वह गृहस्थी और संसारी मूर्ख से भी गया बीता है । चाहे शिखिध्वज वर्षों तक जंगल में नंगा रहता रहे तो भी वह संसारी ही बना रहेगा । बहुत से मनुष्यों ने सच्चे त्याग का मतलब नहीं समझा है । सारी वासनाओं अहंकार और काम का त्याग ही सच्चा त्याग है । यदि आपका मन निर्मल है; आसक्ति, वासना और अहंकार से रहित है तो चाहे आप जंगल में रहें या शहर में, श्वेत वस्त्र पहनें या गेरुआ, सिर मुड़वालें या जटा बढ़ालें, आप संन्यासी ही हो ।

मन की शुद्धि तब होगी जब सारी कामनाओं से हीन होकर सुख और दुःख में उदासीन रहें और कोई वस्तु इसको आकृष्ट न कर सके । तब ही यह माया के फन्दे से दूर हो जायेगा । जैसे पिंजरे से निकला हुआ पक्षी भी इच्छानुसार आकाश में घूमता है । जब मन में वैराग्य उत्पन्न होता है तो ईश्वरीय ज्ञान के लिए द्वार खुल जाता है ।

संसारी वस्तुओं के भोग से सच्ची स्थायी तृप्ति नहीं मिलती । यह जानकर भी कि संसारी पदार्थ अनित्य है और संसार दुःखपूर्ण है, मनुष्य संसारी पदार्थों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की ओर ही दौड़ते हैं । यही माया है । जब मन आत्मा में स्थिर हो जायेगा तब ही नित्य तृप्ति मिलेगी क्योंकि आत्मा परिपूर्ण है । आत्मा में आपका सब कुछ मिल जाता है, आत्म-साक्षात्कार से सारी इच्छाएँ तृप्त हो जाती हैं ।

इस विद्रोही मन के निग्रह के सिवाय इस संसार में और कोई नौका नहीं है जिसके द्वारा जन्म-मरण के सागर को पार किया जा सके । जिन्होंने वासनाओं और कामनाओं से पूर्ण । मनरूपी सर्प का निग्रह कर लिया है केवल वही मोक्ष प्राप्त करेंगे ।

विवेक की वृद्धि करके एकाग्र मन के द्वारा चंचल मन के भ्रमजाल का नाश करदो, जैसे लोहे से लोहा काटा जाता है । बुद्धिमान पुरुष मैले वस्त्र को मिट्टी से ही साफ करता है । घातक आग्नेयास्त्र का प्रति-घात वरुणास्त्र से होता है । सर्पदंश का विष दूसरे विष के इन्जेक्शन से ही दूर होता है । यही बात जीव के लिए भी सत्य है ।

जो आपको ईश्वर से जुदा करता है वह मन है । इसको ॐकार चिन्तन या भक्ति के द्वारा हटा दो, तो आपको ईश्वर का दर्शन हो जायेगा ।

आत्मसंयम की साधना

मानव जीवन में संयमशीलता की आवश्यकता को सभी विचारशील व्यक्तियों ने स्वीकार किया है । सांसारिक व्यवहारों एवं सम्बन्धों को परिष्कृत तथा सुसंस्कृत रूप में स्थित रखने के लिए संयम की अत्यन्त आवश्यकता है । संसार के प्रत्येक क्षेत्र में, जीवन के प्रत्येक पहलू पर सफलता, विकास एवं उत्थान की ओर अग्रसर होने के लिए संगम की भारी उपयोगिता है । विश्व के महान पुरुषों की जीवनियों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि उन्होंने जीवन में जो भी सफलता, उन्नति, श्रेय, महानता, आत्मकल्याण आदि की प्राप्ति की इन कारणों में संयमशीलता की प्रधानता है । संयम के पथ पर अग्रसर होकर ही उन्होंने अपने जीवन को महान बनाया । इसमें कोई सन्देह नहीं कि संयमशीलता के पथ पर चल कर ही मनुष्य सही मानव बनता है, देवता बनता है और बनता है जन-जन का प्रिय, जिसके पीछे चलकर मानव जाति धन्य हो जाती है ।

अपनी मानसिक वृत्तियों, बुरी आदतों एवं वासनाओं पर काबू पाना ही संयमशीलता के पथ पर अग्रसर होना है, इससे मनुष्य की शक्तियों का व्यर्थ ही ह्रास न होकर केन्द्रीयकरण होने लगता है जो जीवन में एक विशेषता ला देती है और जिसके कारण मनुष्य जीवन में क्या से क्या बन जाता है ?

अपने विकारों पर नियन्त्रण करने तथा हानिकारक आदतों से छुटकारा पाने के लिए जो चेष्टा, जो क्रिया की जाती है उसी का नाम संयम है । किन्तु यह कार्य इतना सरल नहीं है, जितना के केवल इसके अर्थ को समझ लेना । जब इसे क्रिया क्षेत्र में अथवा साधना क्षेत्र में उतारा जाता है तो संयमशीलता का पथ बड़ा कठिन जान पड़ता है । अपनी एक छोटी-सी बुरी आदत अथवा मानसिक विकार पर नियन्त्रण कर लेना कितना मुश्किल होता है, यह वे लोग अच्छी तरह जानते हैं जो इस पथ पर चलते हैं । जो मानसिक विचार, वासनाएँ अथवा बुरी आदतें जितने समय अपना घर किए होती हैं वे उतनी ही प्रबल और दुर्दमनीय होती हैं । उन्हें पछाड़ देना साहसी एवं शूरवीरों का ही कार्य है । किसी आदत को वासना अथवा विकार को देख लीजिए, जब वह अपना घर कर लेता है तो उसे निकालना बड़े साहस का काम होता है । उदाहरणार्थ बीड़ी, तम्बाकू या पान का उपयोग करने वाले व्यक्तियों को देख सकते हैं । ये आदतें बड़ी सरलता से अपना घर कर लेती हैं, किन्तु इनका छोड़ना कितना कठिन काम होता है उनके लिए ।

संयमशीलता के उक्त दुर्गम पथ पर चलने के लिए अपने विचारों, आदतों तथा वासनाओं पर नियन्त्रण करने के लिए निम्न बातों का सहारा लेना आवश्यक है—

(१) आत्मसंयम के पथिकों को प्रतिदिन अपना आत्मनिरीक्षण करते रहना अत्यावश्यक है । अपने विचारों तथा कृत्यों के बारे में सदैव सूक्ष्म निरीक्षण करते रहना चाहिए । विचारों तथा कार्यों का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध होता है । जैसे विचार होंगे वे ही क्रिया रूप में अवश्य परिणत होंगे । इसलिए बुरी विचार-धारा से सदैव बचना चाहिए । साथ ही उन विचारों से किए जाने वाले कृत्यों से दूर रहना भी आवश्यक है । आत्मनिरीक्षण के लिए प्रातः उठते समय एवं सायंकाल को सोते समय अपने दिनभर के कार्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा विचारों का लेखा-जोखा लेना चाहिए । सांयकाल को सोने के पूर्व अपने दिनभर के कार्यों एवं विचारों का निरीक्षण करना चाहिए और समय के विरुद्ध जो कार्य, विचार आदि किए हैं उनके लिए सच्चे हृदय से प्रायश्चित्त करना तथा भविष्य में न करने का संकल्प लेना आवश्यक है । इसी प्रकार प्रातःकाल अपनी पिछली कमियों को ध्यान रखते हुए दिनभर में वे व्यवहार में न आये इससे सचेत होकर अपनी दिनचर्या की योजना बनानी चाहिए । इस प्रकार प्रतिदिन आत्मनिरीक्षण करने से संयमशीलता की और चरित्र गठन की ओर सरलता से बढ़ा जा सकता है । इस प्रकार आत्मनिरीक्षण के लिए एक डायरी बना लेनी चाहिए । इससे अपनी संयम साधना में काफी सहयोग मिलेगा ।

(२) आत्मसंयम के अभिलाषियों को अपने दोषों, बुराइयों को जानबूझ कर छिपाना, उन पर कृत्रिमता का पर्दा डालकर ढक देना अथवा उन्हें स्वीकार करने में संकोच करना सर्वथा अनुपयुक्त है । चरित्रगठन या आत्मसंयम के लिए अपनी बुराइयों को मुक्त कंठ से स्वीकार करना होगा । इसका अभ्यास स्वयं से शुरू करना चाहिए । एकान्त में बैठकर अपने हृदय के समक्ष अपनी बुराइयों, दुष्कृत्यों एवं दुर्विचारों पर विचार करके उन्हें स्वीकार करना होगा ।

(३) संयमशीलता के लिए नैतिक बल को बढ़ाना भी आवश्यक है । ज्यों-ज्यों मनुष्य का नैतिक स्तर ऊँचा होता जायेगा त्यों-त्यों ही विचारों एवं कार्यों में संयम बढ़ेगा ।

(४) संयम साधना में संगति एवं स्थान का भी काफी प्रभाव पड़ता है । दुश्चरित्र एवं दुर्विचारों वाले व्यक्तियों में तथा उन स्थानों में जहाँ असंयम का वातावरण व्याप्त होता है संयम साधना में सफलता प्राप्त नहीं की जा सकती है, क्योंकि इनसे अपनी बुरी आदतों; दुर्विचारों एवं दुष्कृत्यों को और भी प्रोत्साहन मिलता है जिसके कारण मनुष्य अपने पवित्र लक्ष्य में असफल हो जाता है । कभी-कभी संयोग से अपने इष्ट मित्रों के प्रभाव से या स्वच्छ एवं सात्विक वातावरण में रहकर ताथा महापुरुषों का संग करके मनुष्य बड़ी-बड़ी खराब आदतों एवं दुर्विचारों को त्याग देता है और जीवन में काफी उन्नति कर जाता है अतः संयमशीलता की ओर अग्रसर होने के लिए विपरीत संगति, स्थान तथा वातावरण का त्याग करना होगा ।

(५) संयम साधना के पथ पर चलना कोई आसान कार्य नहीं है । जब मनुष्य को उसकी बुरी आदतें, दुर्विचार, वासनाएँ पछाड़ कर पटकती हैं तब अच्छे-अच्छे धैर्यवानों का धैर्य टूट जाता है, निराशा टपकने लगती है और सफलता का भविष्य संदिग्ध दिखाई देता है । असंयम के शैतान से लड़कर उस पर विजय प्राप्त करना कोई आसान कार्य नहीं है, अतः इसके लिए अटूट साहस और धैर्य की आवश्यकता है । धैर्य और साहस के साथ इस ओर निरन्तर प्रयत्न करने पर अवश्य ही संयम साधना पूर्ण होती है और मनुष्य अपने लक्ष्य में सफल हो जाता है । जल्दीबाजी अथवा अधीरता से लक्ष्य तक पहुँचना प्रायः असम्भव ही होता है ।

(६) किसी भी महान उद्देश्य अथवा पवित्र लक्ष्य की ओर अग्रसर होने के लिए किसी माध्यम अथवा आधार की आवश्यकता होती है, क्योंकि प्रारम्भिक स्थिति के साधक में हृदय की दुर्बलता अथवा मानसिक कमजोरी होती है । क्योंकि सभी तो महात्मा नहीं होते, अतः चरित्र गठन अथवा संयम साधना के पथ पर अग्रसर होने के लिए बाह्य क्रिया अथवा अन्य साधना विधि की आवश्यकता पड़े तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है । इसी तथ्य को समक्ष रखकर भारतीय ऋषियों ने मनुष्य के लिए भिन्न-भिन्न साधना विधियों का निर्धारण करके उन्हें धर्म से जोड़ा एवं प्रत्येक मानव का आवश्यक धर्म कर्त्तव्य घोषित किया । अतः जप, ध्यान, धारणा, प्रत्याहार, यम नियम आदि की साधनाएँ मनुष्य की संयमशीलता के लिए बहुत ही महत्त्वपूर्ण माध्यम हैं । इनके अनुसार अभ्यास करने पर मनुष्य अपने जीवन में संयमशीलता में सफलता प्राप्त करके महान एवं पवित्र जीवन का निर्माण कर सकता है ।

जीवन साधना की व्यावहारिक तपश्चर्या

ईश्वर का प्राणी को सबसे बड़ा उपहार मनुष्य जीवन है । इससे श्रेष्ठ एवं बहुमूल्य सम्पदा ईश्वर के विभूति भण्डार में और कोई है नहीं । शरीर संरचना एवं मनःसंस्थान की दृष्टि से मनुष्य अन्य प्राणियों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तुलना में बहुत आगे है । उसे प्रकृति रहस्यों को खोज निकालने और उनके आधार पर पदार्थ वैभव का मनचाहा उपयोग करने की अद्‌भुत क्षमता मिली है । ज्ञान और विज्ञान के दिव्य अस्त्र-शस्त्रों से उसकी सत्ता सुसज्जित है । क्रियाशील विचारणा तथा भावना के तन्त्रों में इतनी उत्कृष्टता भरी पड़ी है कि उनके सहारे भौतिक एवं आत्मिक सम्पदाओं का प्रचुर परिमाण में उपार्जन कर सकना उसके बाँये हाथ का खेल है । गृहस्थ आनन्द, आजीविका के सुनिश्चित आधार अन्य किसी प्राणी को उपलब्ध नहीं हैं । ऐसा क्रिया-कौशल और किसी के भाग्य में बदा नहीं है । उपलब्धियों को देखते हुए उसे सृष्टि का मुकटमणि कहा जाना सर्वथा सार्थक है ।

जीवन सत्ता का स्वरूप, लक्ष्य एवं सदुपयोग समझा गया या नहीं, समझने के उपरान्त उत्कर्ष का मार्ग अपनाया गया या नहीं । मार्ग पर उत्साह साहस पुरुषार्थ सहित चला या नहीं ? इसी चयन निर्धारण पर उत्थान-पतन की आधारशिला रखी जाती है । मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं निर्माता है । अवाछनीयता अपनाकर पतन के गर्त में गिरने की उत्कृष्टता का वरण करके उत्कर्ष के चरम लक्ष्य तक जा पहुँचने की उसे पूरी छूट है । कोई परिस्थितियों का रोना रोता रहे और मनःस्थिति को न सुधारे तो उस विडम्बना रचे बैठे प्रमादगस्त से कोई क्या कहे ?

देवता अनेक हैं, पर तत्काल फलदायक अत्यन्त निकटवर्ती और अनुदान देने के लिए आतुर—आत्मदेव से बढ़कर और कोई नहीं । जीवन को कल्पवृक्ष कहा गया है । उसकी गरिमा समझने वाले और निर्धारित लक्ष्य के लिए उसे प्रयुक्त करने वाले वह सब कुछ प्राप्त करते हैं जो पाने योग्य है । अन्य देवताओं की अनुकम्पा संदिग्ध है, पर जीवन देवता की साधना का प्रतिफल सर्वथा असंदिग्ध है । दुःख इसी बात का है कि जीवन का महत्त्व उसका ही नहीं गया और उसे ऋद्धि-सिद्धियों से सुसम्पन्न बनाने की ओर ध्यान गया ही नहीं, अन्यथा स्थिति वैसी न होती, जैसी कि सामने है ।

भूमि की साधना से किसान फसल काटते और माली और उद्यानों को सोना उगलने के लिए विवश करते हैं । विद्या की साधना वाले विद्वान कहलाते और उच्च पदासीन बनते हैं । व्यवसाय की साधना करने वाले धन कुवेर बनते हैं । शरीर साधने वाले बलवान पहलवान अनेकों पर हावी रहते हैं । कला साधना से गायक, अभिनेता, मूर्तिकार, चित्रकार, कवि, साहित्यकार आदि यशस्वी भी बनते हैं और सम्मानित समृद्ध भी । देवताओं की साधना भी जब तब कुछ वरदान देती रहती है । इन सबसे बढ़कर जीवन साधना है । जो उसके लिए अग्रसर हुआ तो निहाल हो गया । ढेले की तरह निरर्थक दीखने वाले जीवन को यदि गहराई में उतरकर कुरेदा जा सके तो उसके अन्तराल में ऐसे अगणित परमाणु खचे मिलेंगे जिनमें से एक-एक बम विस्फोट ही धरती को हिला सकता है । उपेक्षा से तो हीरा भी कांच की तरह ठुकराया जाता है, फिर जीवन का स्वरूप और रहस्य न समझने पर उसकी साधना में विरत रहने पर कोई अभाव दारिद्रय से, शोक-संताप से, पतन-पराभव से घिरा पड़ा रहे तो इसके लिए अन्य किसी को दोष कैसे दिया जाय ? जीवन की अवहेलना से बढ़कर पाप उस संसार में और कोई नहीं । अन्य पापों से कर्त्ता को तत्काल लाभ तो मिल ही जाता है, पर जीवन की उपेक्षा का पातक ऐसा है जिसमें उस छोर से इस छोर तक, आरम्भ से अन्त तक नरक ही नरक सड़ता देखा जा सकता है । भाग्योदय का एक ही चिन्ह है कि जीवन के साथ जुड़ी हुई महान सम्भावनाओं को समझा जाय और उसे कषाय-कल्मषों के गर्त से उबार कर परिशोधन परिष्कार की प्रयोगशाला में भेजा जाय ।

प्रज्ञा युग में धरती पर स्वर्ग अवतरित होगा । इस स्मृति को प्रत्यक्ष करने की पूर्ण भूमिका होगी—मनुष्य में देवत्व का उदय । इसका स्वरूप संचित कुसंस्कारों का परिशोधन—दृष्टिकोण एवं स्वभाव व्यवहार का परिष्कार । इस प्रयास में संलग्न होने वाले योद्धा आत्मविजय करने के उपरान्त विश्वविजयी बनते हैं । गीताकार ने अपने को ही अपना भयंकर शत्रु और अपने को ही सर्व समर्थ स्नेह सौजन्य से भरपूर मित्र कहा है । अनगढ़ जीवन ही वह अभिशाप है जिसके रहते कुबेर भी दरिद्रता से, इन्द्र भी असमर्थता से संत्रस्त पाया जायेगा । जिसे जीवन को निखारने में सफलता मिल गई वस्तुतः वही सच्चा कलाकार है । उसी की सूझ-बूझ और भाग्य रेखा को दशों दिशाएँ सराहती पायी जायेंगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्प, बन्दर, भालू, शेर आदि भयानक पशुओं को सधाकर उपयोगी और कमाऊ बनाया जाता है । असभ्य, अनपढ़ और कुसंस्कारी का भी आत्मासाधना की भट्टी में अभिशप्त जीवन को गलाना और श्रेष्ठ सौभाग्य के ढाँचे में ढालना नितान्त सम्भव है । लोग जितना पुरुषार्थ साधन जुटाने प्रतिपक्षी को हराने में करते हैं उससे आधा भी यदि अपने आपका परिशोधन, परिमार्जन करने में कर सकें तो प्रतीत होगा कि यह सबसे अधिक बुद्धिमत्ता का, सबसे अधिक सम्पन्नता, सफलता, उपार्जन का काम बन पड़ा । व्यक्तित्व एक प्रकार का चुम्बक है जो अपने स्तर का सम्पर्क, समर्थन, सहयोग प्रचुर परिमाण में खींच बुलाता है । यह कठिन कार्य नहीं है । दूसरे कहना न मानें, पकड़ में न आये तो बात समझी भी जा सकती है पर यह समझ से बाहर की बात है कि अपना शरीर, अपना मन कहना न माने और अपने दृष्टिकोण, स्वभाव, रुझान, अभ्यास को बदलना, सुधारना भी अपने आप से न बन पड़े ।

पानी का नीचे ढलना, ढेले का नीचे गिरना स्वाभाविक है पर ऊँचा उठाने के लिए आगे बढ़ने के कुछ अतिरिक्त साहस करने—कोई नया मार्ग अपनाने—की आवश्यकता पड़ती है । अवांछनीय ढर्रे को तोड़ना और चिन्तन तथा व्यवहार को उत्कृष्टता के साथ जोड़ना ही जीवन साधना के निमित्त किया गया सच्चा पराक्रम एवं तप-साधना है ।

जीवन ही अपना घनिष्ठतम स्नेही, सहयोगी है । अन्यान्यों की सेवा, सहायता की बात सोचने से पहले देखना होगा कि इस अपने ऊपर सर्वथा आश्रित को सुखी, समुन्नत बनाने का प्रयत्न हुआ या नहीं, उत्तरदायित्व निभाया या नहीं ? यहाँ यह भली प्रकार समझ लेना चाहिए कि साधन सम्पदा मात्र शरीर यात्रा के काम आती है । जीवन को सुसम्पन्न बनाने के लिए गुण, कर्म, स्वभाव में उत्कृष्टता भर देने वाली विभूतियों का संचय करना पड़ता है ।

समृद्ध सम्पादन के दो ही उपाय हैं कि घाटा देने वाले छिद्रों को रोकना तथा दूसरे वैभव बढ़ाने वाले उपाय, उपचारों को अपनाना । शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक क्षेत्रों में लोग दिवालिया होते और समुन्नत बनते देखे जाते हैं । उनमें निमित्त कारण उन्हीं दो अवलम्बनों को अपनाने या न अपनाने की सूझ-बूझ काम करती है । यही बात जीवन्त साधना के माध्यम से व्यक्तित्व को पवित्र प्रखर बनाने और आत्मोत्कर्ष की आवश्यकता पूर्ण करने के सम्बन्ध में भी है । हर काम योजनाबद्ध ढंग से होता है । बिना सोचे बिना कार्य की रूपरेखा बनाए कुछ भी करते-धरते रहने वालों की परिणतियाँ भी 'घुनाक्षर न्याय' जैसी संयोग मात्र होते हैं । कार्य छोटा हो या बड़ा उसके सभी पक्षों पर विचार करने के उपरान्त कदम उठाना ही बुद्धिमानी का चिन्ह माना जाता है, यही बात आत्मिक प्रगति के सम्बन्ध में भी लागू होती है ।

जीवन साधना में मनन और चिन्तन की विद्यमानता को आवश्यक माना गया है । हर दिन सूर्योदय से पूर्व या सूर्यास्त के बाद—जब चित्त शान्त तथा एकान्त हो तब अपने अन्तरंग और बहिरंग स्थिति का लेखा-जोखा लेना चाहिए, और भूलों को सुधारने, कमियों को पूरा करने तथा भावी प्रगति के लिए जो कदम उठाने आवश्यक हैं उनका दूरगामी एवं सामयिक निर्धारण करना चाहिए । निर्धारण ऐसा होना चाहिए जो वर्तमान स्थिति बिना समय गँवाए कार्यान्वित हो सके ।

(१) आत्मसमीक्षा, (२) आत्मसुधार, (३) आत्मविकास, (४) आत्मज्ञान—यह चार चरण चारपाई के चार पायों की तरह—कमरे की चार दीवारों की तरह अनिवार्य रूप से आवश्यक माने गए हैं । आमतौर से अपने दोष-दुर्गुण समझ में न आने देने वाली पक्षपाती धारणा हर किसी पर चढ़ी रहती है । निष्पक्ष पर्यवेक्षक की दृष्टि अपनाकर गौरवास्पद व्यक्तित्व को सामने रखते हुए उसके साथ तुलना करने पर ही यह जाना जा सकता है कि इन दिनों अपनी अन्तरंग और बहिरंग स्थिति में किन भूलों और अभावों का दौर है । निदान के उपरान्त ही उपचार बन पड़ता है । न केवल भूलें ढूँढ़ते रहना चाहिए वरन् उनके सुधार का उपाय भी खोजना चाहिए । यह मनन पक्ष हुआ ।

चिन्तन में दो बातें आती हैं—(१) परिमार्जन और (२) परिष्कार—पथ्य और औषधि । व्यक्तित्व को पवित्र प्रखर बनाने वाली सत्प्रवृत्तियों को कैसे अपनाया जाय? वर्तमान स्थिति को देखते हुए इस सन्दर्भ में क्या कदम उठाया जाय, इसका निर्धारण ही नहीं उसे अपनाने का तत्परता पूर्वक प्रायस भी अविलम्ब चलना चाहिए । गुण, कर्म, स्वभाव में शालीनता और प्रतिभा के दोनों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उपायों का नियोजन रहना चाहिए । आत्म-निर्माण का यही रचनात्मक उपाय है । उसके उपरान्त चौथा चरण यह है कि जो उपलब्ध है उसे किस प्रयोजन के लिए किस अनुपात में कहाँ लगाया जाय ? उपलब्धियों का महत्त्व तभी है जब वे सत्प्रयोजन में लग सकें अन्यथा दुरुपयोग, अपव्यय ही चलता रहे तो सम्पन्नता दरिद्रता से भी महँगी पड़ती है । आत्मविकास का अर्थ है अपना दायरा बड़ा करना । दायरा बड़ा करना अर्थात् संकीर्ण स्वार्थपरता के लोभ-मोह के भव-बन्धनों को शिथिल करते हुए समष्टि के साथ अपने आपको जोड़ना । उस दृष्टिकोण को अपनाने पर वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना उमँगती है और असीम के साथ जुड़ने को जी मचलता है । दूसरों का दुःख बाँटने, अपना सुख घटाने का आत्मभाव जब विस्तृत होगा तो उसका उपयोग लोकमंगल के कार्यों के लिए समयदान, अंशदान के रूप में प्रस्तुत किए बिना चैन पड़ेगा ही नहीं ।

मनन चिन्तन के निदिध्यासन को यदि नियमित रूप से, गम्भीरतापूर्वक करते रहा जाय तो परिशोधन और परिष्कर के दोनों कदम उठते रहेंगे । परिस्थिति के अनुसार क्रमबद्ध कदम उठते रहेंगे । और पूर्णता के लक्ष्य तक पहुँचाने वाला उपक्रम सुनिश्चित रूप से बनता रहेगा।

यहाँ एक बात और समझने की है कि मनुष्य पूर्ण से उत्पन्न होने के कारण पूर्ण ही है । जन्मजात रूप से उपलब्ध विभूतियों का दुरुपयोग—अपव्यय ही एकमात्र वह कारण है जिसके कारण कामधेनु का दूध छलनी में दुहने पर जमीन पर गिरता, कपड़े चिकने करता और खेद, पश्चात्ताप का निमित्त कारण बनता है । इस दुष्प्रवृत्ति को असंयम कहते हैं । इसे रोक देने की दूरदर्शिता एवं साहसिकता को तपश्चर्या कहते हैं । तप से ऋद्धियाँ सिद्धियाँ उपलब्ध होने की बात सर्वविदित है ।

परमात्मा अदृश्य है । आत्मा का भी कोई दृश्य स्वरूप नहीं । सृष्टा ने जीवन उपहार के साथ-साथ तीन ऐसे साधन भी दिए हैं जिनको मण्डी में भुनाकर कुछ भी खरीदा जा सकता है—(१) समय, (२) चिन्तन, (३) पराक्रम की क्षमताएँ ये सभी को उपलब्ध हैं । इनके बदले हर स्तर के साधन खरीदे जा सकते हैं । प्रश्न इतना ही है कि इनका उपयोग कौन कितनी समझदारी के साथ करता है । बुद्धिमानी की परीक्षा किसी की सम्पन्नता या सफलता नहीं है । वह तो अनीतिपूर्वक तथा भाग्य-विधान के सहारे भी उपलब्ध हो सकती है । समझदारी खर्च करने में है । किसी की विवेकयुक्त दूरदर्शिता परखनी हो तो देखना पड़ेगा कि वह उपलब्धियों का खर्च किस प्रयोजन के लिए, किस प्रकार करता है ।

संयमशील ही सच्ची सम्पदा एवं समर्थता उपार्जित करते हैं । चारों विभूतियों के सम्बन्ध में हर विचारशील को संयमी होना चाहिए । समय का एक क्षण भी निरर्थक नहीं आने देना चाहिए । दिनचर्या बनानी ही चाहिए । आलस्य प्रमाद में एक क्षण का भी अपव्यय नहीं होना चाहिए । हर साँस को हीरे मोतियों से बढ़कर मूल्यवान मानना चाहिए और कार्य पद्धति अपनाकर उसमें तत्पर-तन्मय रहना चाहिए । विश्राम आलस्य का प्रतीक न बने, उसके लिए स्थान तो रहे पर ऐसा न हो कि टालटूल, अनख, आलस में समय गुजरता रहे । रावण ने काल पाटी से बाँधकर सफलताएँ अर्जित की थीं । यही मार्ग हर विवेकवान को अपनाना पड़ा है । उसने समय का एक क्षण भी बर्बाद नहीं होने दिया । योजनाबद्ध रूप से व्यस्त दिनचर्या बनाकर उसका सदुपयोग किया है । प्रगतिशील प्रज्ञा परिजनों को भी यही करना चाहिए ।

समय का सदुपयोग पराक्रम के सहारे बन पड़ता है । पराक्रम का अर्थ है—तत्परता और तन्मयता । तत्परता अर्थात् उत्साह-भरा परिश्रम । तन्मयता अर्थात् रुचिपूर्वक मनोयोग । दोनों का संयोग जहाँ भी होगा चमत्कारी प्रतिफल हस्तगत होंगे । पसीने में लक्ष्मी निवास करती है । व्यस्तता से ही आरोग्य और मनोबल स्थिर रहता है । आलस्य और दारिद्रय अभिन्न मित्र बनकर साथ-साथ रहते हैं । जैसे सूत्रों को सदा स्मरण रखना चाहिए वैसे ही हाथ में लिए कामों को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर उसे श्रेष्ठतम स्तर का बनाने के लिए अपनी समूची प्रतिभा, कुशलता का नियोजन करना चाहिए । जो समय और श्रम की संगति बिठा लेगा उसे कुशल व्यवस्थापकों की तरह हर क्षेत्र में श्रेय और सम्मान मिलेगा । जिसका समय आलस्य से और मस्तिष्क प्रमाद से घिरा रहेगा वह पतन तथा पराभव के गर्त में गिरेगा तथा पिछड़ी और दुर्गतिग्रस्त परिस्थितियों से जकड़ा रहेगा । इसलिए पराक्रम में व्यस्तता का नियोजन रहना ही चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तीसरा वैभव है चिन्तन । शरीर काम करता है किन्तु उसमें रस न लिया जाय । बेगार भुगती जाय तो उसमें मनोयोग न लगेगा । मात्र शरीर काम करता रहेगा । ऐसी दशा में खाली दिमाग शैतान की दुकान बने बिना न रहेगा । विचार ही कर्म की पूर्व भूमिका बनाते हैं । उन्हीं का स्तर उत्थान-पतन के लिए उत्तरदायी होता है । विचार दीखते नहीं किन्तु वस्तुतः वे ही सौभाग्य और दुर्भाग्य की दिशाधारा का नियोजन करते हैं । विचारों को दिशाधार देना ही वह बहुचर्चित मनोनिग्रह है जिसे एकाग्रता कहा जाता है और जिसका दैवी वरदान जैसा माहात्म्य बताया जाता है ।

विचारों को आवारा कुत्ते की तरह जहाँ-तहाँ झूठे पत्ते चाटने फिरने की—अनगढ़ विचारों को कीचड़ में लोटते रहने की छूट नहीं देनी चाहिए । उन्हें सृजनात्मक सज्जनोचित चिन्तन का अभ्यास कराना चाहिए । अवांछनीय कल्पना करते रहने पर प्रतिबन्ध लगाना चाहिए । बुरे विचार मस्तिष्क में प्रवेश करते ही उनमें मल्ल युद्ध करने के लिए प्रतिपक्षी सद्विचारों को जुटा देना चाहिए । काँटे से काँटा निकाला जाता है और अवांछनीय विचारों को उत्कृष्टता, आदर्शवादिता की मान्यताओं को उभार कर निरस्त करना चाहिए । चिन्तन के लिए विषयों का पूर्व निर्धारण हो । वैज्ञानिकों, दार्शनिकों एवं महापुरुषों की तरह अपना चिन्तन निरन्तर अभीष्ट प्रयोजनों के लिए सीमित एवं सुनिश्चित रहना चाहिए ।

चौथी सम्पदा है—धन । यह है तो पराक्रम की उपलब्धि पर उसे भी ईश्वरप्रदत्त समय, पराक्रम और चिन्तन के ईश्वरीय सम्पदा के बदले खरीदी हुई विभूति मानना चाहिए । नीतिपूर्वक कमाया जाय और सत्प्रयोजनों में खर्च किया जाय यही है सच्ची और समझदारी की अर्थ नीति । धन को अपनी, परिवार की एवं समाज की सत्प्रवृत्तियाँ बढ़ाने में खर्च करना चाहिए । दुर्व्यसनों में एक छटाँक भी खर्च न होने देने का नियन्त्रण बरता जा सके तो असंख्य दुर्व्यसनों और अनाचारों से सहज ही छुटकारा मिल सकता है । बजट बनाकर खर्च किया जाय । अपव्यय को पास न फटकने दिया जाय तो थोड़े से धन से भी अपनी तथा परिवार की सर्वतोमुखी प्रगति के अनेक रास्ते खुल सकते हैं । समय, श्रम, चिन्तन की ही तरह अर्थ साधनों का भी संयम बरता जाना चाहिए । स्मरण रहे संयम तप है । व्यावहारिक जीवन से उपर्युक्त चार सम्पदाओं का श्रेष्ठतम सदुपयोग करने के लिए उन्हें अपव्यय दुरुपयोग से बचाने की सावधानी बरती जानी चाहिए ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तः शक्ति के उभार और चमत्कार

जीव सत्ता के तीन शरीर

यह एक सर्वविदित तथ्य है कि मनुष्य का अस्तित्व को तीन हिस्सों में बंटा हुआ है । स्थूल, सूक्ष्म और कारण । यह तीनों शरीर एक से एक बढ़-चढ़ कर क्षमताएँ अपने भीतर दबाए बैठे हैं । इनमें अस्त-व्यस्तता एवं विकृति भर जाने से वे अपनी विलक्षण शक्ति गँवा बैठते हैं और फलस्वरूप जो लाभ मिलना चाहिए, वह नहीं मिल पाता । इतना ही नहीं वे रुग्ण होकर उल्टे त्रास देने लगते हैं । तब इन विभूतियों भरे शक्ति परिवार से जो हर्षोल्लास युक्त चमत्कारी उपलब्धियाँ मिल सकती थीं और सुर दुर्लभ कहलाने वाला मनुष्य-जीवन सार्थक हो सकता था, उसकी सम्भावना ही नष्ट हो जाती है । उल्टे उसे दुर्गति में पड़ना होता है, जिसमें कि आजकल अधिकांश मनुष्य फँसे हुए हैं ।

स्थूल शरीर के स्वस्थ्य रहने पर जो लाभ मिलते हैं उनकी थोड़ी बहुत जानकारी हम सभी को है। नीरोग शरीर देखने में सुन्दर और सुडोल लगता है । उसका आकर्षण खिले फूल की तरह सभी को मोहता और आकर्षित करता है । अधिक श्रम करना, कठिन कामों को सहज निबटा कर सवयं लाभान्वित होना और दूसरों पर उसकी छाप छोड़ना, निरोगता की स्थिति में ही सम्भव होता है ।

शरीर की विशेष साधना कर लेने पर लोग चमत्कारी प्रदर्शन करके गौरवान्वित होते हैं; शिल्पी, कलाकार, पहलवान, खिलाड़ी, सरकस के जादूगर दुस्साहस भरे कार्तिमान स्थापित करने वाले वस्तुतः शरीर साधना के निष्णात ही कहे जा सकते हैं । यों मनोयोग का समन्वय भी उनकी सफलताओं में जुड़ा रहता है और अकेला पंच तत्वों का शरीर तो बिना चेतन मन की सहायता के हिल-डुल तक नहीं सकता, फिर बड़ी उपलब्धियाँ तो उसके लिए सम्भव कैसे हो सकती हैं, यह मनोयोग जो शरीर संचालन के काम आता है, स्थूल शरीर का ही एक भाग माना गया है । इसी से मन को ग्यारहवीं इन्द्रिय कहते हैं ।

स्थूल शरीर की सक्षमता के फलस्वरूप ही संसार की अनेकानेक भौतिक, उपलब्धियाँ मिलती हैं । सांसारिक सुखद वस्तुओं को प्राप्त करने और व्यक्तियों को सहयोग देकर बदले में सहयोग पाने का आनन्द देने में शरीरगत सक्रियता ही प्रधान कारण होती है । कर्म की महिमा सर्वत्र दृष्टिगोचर होती है । कर्मफल से ही सुख-दुःख मिलते हैं । कर्म का स्थूल परिमाण शरीरगत सक्रियता के साथ ही जुड़ता है । दण्ड पुरस्कार इसी कर्मशीलता के आधार पर मिलते हैं । शरीर को सही स्थिति में रखना और उसे अमुक स्तर की सफलताएँ प्राप्त करने के लिए आवश्यक प्रशिक्षण देकर उपयुक्त बनाना—इसी को शरीर साधना कहते हैं ।

साधना विज्ञान का प्रथम चरण शरीर के आरोग्य का रक्षण और उसकी सक्रियता को व्यवस्थित एवं परिष्कृत करने के लिए है । इससे साधक निरोग सक्षम और दीर्घ जीवी बनता है । योग की यह प्रथम उपलब्धि है । स्वास्थ्य रक्षा के मोटे नियम सर्वविदित हैं । आहार विज्ञान के अन्तर्गत यह पढ़ाया जाता है, कि भोजन में क्या वस्तुएँ, किस अनुपात से होनी चाहिए और उन्हें किस तरह पकाया खाया जाना चाहिए । श्रम, व्यायाम, दिनचर्या, सफाई जैसी अनेक बातें स्वास्थ्य रक्षा के लिए आवश्यक बतायी जाती हैं । बीमारी की हालत में दबा दारू की व्यवस्था करने वाला एक पूरा शास्त्र बना हुआ है । यह स्थूल आरोग्य-रक्षा विधान हुआ । सूक्ष्म आरोग्य विज्ञान इससे कहीं अधिक भीतर है । उसकी जड़ें बहुत गहरी हैं । फलतः उसकी प्रतिक्रिया भी अधिक प्रखरतायुक्त होती है ।

आसन, प्राणायाम, नेति, धौति, बस्ति, न्योली वथोली, कपाल भाँति, उड्डयन बन्ध, जालंधर बन्ध, मूल बन्ध मुद्राएँ, उपवास, तप तितीक्षा, चान्द्रायण, मौन, परिक्रमा आदि कितनी ही शारीरिक साधनाएँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वास्थ्य सम्बर्धन के उस गहन अन्तराह तक प्रवेश करती हैं । जहाँ तक आहार विहार के सामान्य नियम पालने की प्रतिक्रिया नहीं पहुँचती । देखा गया है कि स्वास्थ्य रक्षा के सामान्य नियम ठीक तरह पालन करने वालों में से भी कई व्यक्ति दुर्बलता और रुग्णता से घिरे रहते हैं । इसका कारण नाड़ी देखकर नहीं जाना जा सकता । कोशिकाओं में तन्तुओं में, पाचक स्रावों में, विशिष्ट ग्रन्थियों में कुछ विलक्षण प्रकार की उलझनें ऐसी खड़ी हो जाती हैं, जो शरीर शास्त्रियों द्वारा किए गए गम्भीर परीक्षणों की पकड़ में भी नहीं आतीं और अशक्तता एवं रुग्णता की उलझी हुई गुत्थी सुलझने में नहीं आती । इन प्रसंगों में योग विज्ञान के वे प्रयोग आश्चर्यजनक सत्परिणाम उपस्थित करते देखे गए हैं, जिनकी विस्तृत व्याख्या विवेचना, प्रयोगशाला के स्तर पर तो नहीं की जा सकती, पर परिणामों की कसौटी पर यह जाना जा सकता है कि, यह उपचार कितने अधिक सफल होते हैं । गायत्री की उच्च स्तरीय साधनाओं में यह उपचार भी किए जाते हैं और गायत्री साधना के साथ किए गए यह उपचार इतने प्रभावशाली सिद्ध होते हैं जितने कि स्वतन्त्र रूप से किए गए प्रयोगों में कदाचित ही देखने को मिलें ।

पहलवानों में देखी जाने वाली वलिष्ठता, कलाकारों में पायी जाने वाली फुर्ती और सैनिकों जैसी चुस्ती ही मात्र आरोग्य की निशानी नहीं है । इसका सबसे महत्त्वपूर्ण अंश है जीवनी शक्ति की प्रचुरता, जिसे जीवट भी कह सकते हैं । रक्त अशुद्ध होने या कोई भीतरी अवयव क्षीण हो जाने पर भी इस जीवट के आधार पर कोई रुग्ण दीखने वाला मनुष्य स्वस्थ लोगों की तुलना में अधिक सक्रिय रह सकता है और अधिक महत्त्वपूर्ण काम निपटा सकता है । इसे 'जिजीविषा' का नाम ही दिया जा सकता है । इसके सहारे मौत से जूझा जा सकता है और अस्वस्थता के भार से दवे होने पर भी प्रबल पुरुषार्थियों जैसे प्रखर कर्त्तव्य सम्पन्न करते रहा जा सकता है । भीष्म के शर शैय्या पर पड़े रहने पर भी उत्तरायण सूर्य आने तक की प्रतीक्षा में जीवित रहना और आद्य शंकराचार्य के भयंकर फोड़े से संत्रस्त रहने पर भी आश्चर्यजनक सक्रियता का प्रमाण देना, जैसे असंख्यों प्रमाण ऐसे मिलते हैं, जिसमें गान्धी जैसे दुर्बल और राजेन्द्र बाबू जैसे रुग्ण मनुष्यों ने पूर्ण स्वस्थ मनुष्यों से भी आगे बढ़कर ऐसे काम करके दिखाये, जिन पर आश्चर्य चकित रह जाना पड़ता है ।

योग साधना का प्रतिफल आरोग्य के मूल संस्थानों तक पहुँचता और उस जीवट-जिजीविषा को जगाता है, जिसे पाकर हर स्तर का शरीर ऐसे काम कर सकता है, जो सामान्य लोगों को चमकार जैसे प्रतीत हों ।

सूक्ष्म शरीर अर्थात् चिन्तन की दिव्य ज्योति । इसका मोटा लाभ मस्तिष्क की तीक्ष्णता, स्मरण शक्ति, दूर-दृष्टि, गहराई में जा पहुँचने वाला पर्यवेक्षण-सूझबूझ आदि के रूप में देखा जाता है । मन्द बुद्धि और तीक्ष्ण बुद्धि होने का फैसला इस आधार पर किया जाता है कि उसकी सूझ-बूझ एवं समझदारी किस स्तर की है ? शारीरिक बलिष्ठता और सक्रियता के आधार पर मिलने वाले सुखों और लाभों की तरह मानसिक सक्षमता के सुखद प्रतिफल भी कम नहीं हैं । स्कूली पढ़ाई ऊँची श्रेणी में उत्तीर्ण करने वाले लोगों को अफसरी के ऊँचे पद मिलते हैं । वकील, डाक्टर, साहित्यकार, वैज्ञानिक आदि बुद्धिजीवी वर्ग के लोग अकल की कमाई ही खाते हैं । व्यापारी, शिल्पी, कलाकार मात्र शारीरिक मेहनत के आधार पर उन्नतिशील नहीं बनते उनकी चिन्तन प्रक्रिया भी उन कार्यों में तन्मयतापूर्वक संलग्न रहती है । शरीर की सक्रियता और मन की तन्मयता का संयोग जहाँ जितनी अधिक मात्रा में हो रहा होगा, वहाँ उसी अनुपात में एक से एक बढ़ी-चढ़ी सफलताएँ भी सामने प्रस्तुत होती चली जा रही होंगी ।

बुद्धि वैभव का मूल्य समझा जाता है और ज्ञान प्राप्ति के लिए स्कूल, कॉलेजों के माध्यम से बहुत श्रम समय एवं धन खर्च करके, उसके लिए अथक प्रयत्न किया जाता है । स्वाध्याय सम्पर्क, परिभ्रमण, विचार विनिमय, अभ्यास आदि के अन्य उपाय भी ऐसे हैं, जिनके सहारे ज्ञान वृद्धि का पथ प्रशस्त होता है । शरीर कौशल की तरह बुद्धि वैभव की भी अपनी अपनी उपलब्धियाँ हैं । अभिनव शोध कार्यों में, अन्वेषण पर्यवेक्षणों में, आवरणों के परत भेदकर वस्तु स्थिति समझने में सूक्ष्म बुद्धि ही काम करती है । यह उन अक्लमंदी से ऊपर की चीज है, जो दैनिक कार्य-व्यवसायों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में कई तरह की सफलताएँ प्रस्तुत करती है । यह किस प्रकार पायी या बढ़ाई जा सकती है, इसका कोई बहिरंग आधार अभी बन नहीं पाया है । साधारण अक्लमंदी की दृष्टि से एक-से-एक चतुर और उस्ताद लोग हर जगह भरे पड़े हैं । पर गहराई में गोता मार कर मोती बीन लाने का सौभाग्य किन्हीं विरलों को ही मिला होता है । यह कौशल जिनके भी हाथ लग जाता है वे सामान्य परिस्थितियों में जन्मने और सामान्य लोगों के बीच पलने पर भी विचित्र तरीकों से आगे बढ़ते हैं और आड़ी-टेड़ी पगडंडियाँ पार करते हुए कहीं से कहीं जा पहुँचते हैं । उनके दूसरे साथी आश्चर्य करते रह जाते हैं, कि बहुत समय तक एक सी स्थिति में रहने पर भी एक इतना आगे निकल गया और दूसरा जहाँ का तहाँ रह गया । परिस्थितियों से श्रेष्ठतम लाभ उठा लेने की सूझ-बूझ का बाहुल्य अथवा अभाव ही इस अन्तर का कारण है ।

गायत्री या योग साधना स्थूल शरीर को आरोग्य और सूक्ष्म शरीर को मनस्विता, तेजस्विता उत्पन्न करती है, तो कारण शरीर से भावभरी पुलकन प्रदान करती है । कारण शरीर तक पहुँच भी भावनाओं के द्वारा ही हों सकती है । निष्ठा, आस्था, श्रद्धा का भाव भरा समन्वय भक्ति कहलाता है । प्रेम सम्वेदना इसी को कहते हैं । यह स्थिति तर्क से ऊपर है । मन और बुद्धि का इसमें अधिक उपयोग नहीं हो सकता है । भावनाओं की उमंग भरी लहरें ही अन्तःकरण के मर्म स्थल का स्पर्श कर पाती हैं । मनुष्यों में भी दो प्रेमी जन जब मिलते हैं तो भाव-विभोर हो जाते हैं और आनन्दातिरेक का अनुभव करते हैं । भावभरी पुलकन केवल विश्वस्त परमप्रिय एवं आत्मीयों के मिलने पर ही उभरती है । इसलिए भगवान के प्रति अत्यन्त उच्च स्तरीय मान्याताएँ रखकर पुलकन भरे मिलन का एक-दूसरे में आत्मसात् हो जाने की गहन आस्था की अनुभूति को भक्ति योग कहते हैं । लययोग इसी को कहा गया है । आत्मसमर्पण तादात्म्य भी इसी का नाम है ।

'मैं' और 'तू' में से एक को मिटा देने की बात सूफी, सन्त और भक्त योगी एक स्वर से कहते रहे हैं 'मैं' मिटता है तो 'तू' रह जाता है । "मेरा मुझ को कुछ नहीं जो कुछ है सो तोर" की—"अपनी खुदी मिटादे तेरा खुदा मिलेगा ।" की—अनुभूति भक्तियोग में होती है । इसी तथ्य को थोड़े से शब्दों की उलट-पुलट में दूसरी तरह भी कहा जा सकता है—'अयमात्मा ब्रह्म-प्रज्ञानं ब्रह्म-तत्वमसि-सच्चिदानन्दोहम्' 'शिवोहम्' की मान्यता में 'तू' मिट जाता है और मैं रह जाता है । दोनों ही स्थितियों में एकता, एकरूपता, एक सत्ता का प्रतिपादन है । भक्त और भगवान के एक बन जाने की बात है । अयमात्मा ब्रह्म का आत्मा-निकृष्ट नर-पशु नहीं होता, वरन् उसकी क्रिया, विचारणा एवं आकांक्षा ठीक वैसी ही होती है, जैसी परमेश्वर की, इससे नीची स्थिति में 'शिवोहम्' की बात कहाँ बनती है । परमात्मा स्तर पर पहुँचा हुआ आत्मा अपनी अहंता को पूरी तरह खो चुका होता है । उसके साथ जुड़े हुए संकीर्ण स्वार्थपरता के सारे बन्धन भी समाप्त हो जाते हैं । ऐसा मनुष्य लोभ, मोह के बन्धनों से विरक्त-विरत जीवन जीता है और उच्चस्तरीय प्रेरणा को ईश्वर के संकेत समझ कर उनका अनुगमन करता है ।

स्थूल से अधिक शक्ति 'सूक्ष्म' में भरी पड़ी है

इस विश्व में जो कुछ दृश्यमान होता है, वह अदृश्य की परिणति है । इस विश्व ब्रह्माण्ड में जो कुछ अदृश्य सूक्ष्म बिखरा पड़ा है, उसका लाख करोड़ वाँ हिस्सा भी दृश्यमान नहीं होता है । पर जो कुछ अनुभव में आता है वह अनुभव से अगम्य-इन्द्रियातीत विराट् का एक नगण्य सा अंश मात्र ही होता है । विराट् ब्रह्माण्ड में जितना प्रचुर अग्नि तत्व भरा पड़ा है, हमारा सूर्य उसका राई रत्ती जितना अंश ही है । उस सूर्य की भी दसों दिशाओं में जितनी ऊष्मा फैलती है उसका हम लोग पृथ्वी की ओर विकीर्ण होने वाली गर्मी में से भी एक तुच्छ अंश ही अनुभव कर पाते हैं ।

शरीर में प्रत्यक्ष उष्णता के रूप में दीखने वाला बुखार वस्तुतः इन कोटि-कोटि अदृश्य रोग कीटाणुओं के उपद्रव की एक नन्हीं सी झलक ही है । वे रोग कीट हजारों तरह के उपद्रवों की पृष्ठभूमि देह के भीतर रच रहे होते हैं, पर हमें उनमें से मात्र चमड़ी पर उभरने वाली गर्मी का ही अनुभव होता है । भीतर के अंगों में जो ताप या विग्रह उन रोग कीटों ने उत्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किया होता है, वह तो विदित ही नहीं होता, मनुष्य की काया को ही लीजिए, इतना लम्बा चौड़ा शरीर वस्तुतः एक सूक्ष्म वीर्यकण और उसके भीतर रहने वाले 'जीन्स' न्यूक्लियस आदि अति सूक्ष्म तत्वों की परिणति मात्र होता है । वह अदृश्य सूक्ष्मता की काया के रूप में जितनी प्रकट होती हैं, उससे भी अधिक गुनी अधिक विशेषताएँ फिर भी अनुभव में न आने पर भी विद्यमान रहती हैं ।

विराट् ब्रह्माण्ड का वास्तविक स्वरूप उसका सूक्ष्म 'शक्ति अंश' ही है । जिसे परा और अपरा प्रकृति के नाम से जाना जाता है । उसके कर्तृत्व का नन्हा सा अंश ही स्वतः हमारी मनः चेतना की पकड़ में आता है । जो दृश्य है उसके इर्द-गिर्द अदृश्य शक्ति स्रोत की असीम प्रवाह धारा बहती रहती है । ग्रह नक्षत्रों से लेकर वन, पर्वत, सागर, सरिता तक सब पर यही बात लागू होती है । मानव शरीर और भी अधिक विचित्र है । उसकी सम्वेदनशीलता, चुम्बक क्षमता इतनी अधिक है कि वह अपनी कोमल ग्रहण शक्ति के कारण इस अदृश्य जगत की किन्हीं भी अद्‌भुत शक्तियों को अभीष्ट परिमाण में अपने अन्दर खींच सकता है, ग्रहण और धारण कर सकता है ।

शरीरशास्त्री जितना ज्ञान अब तक देह के भीतरी और बाहरी अंगों के सम्बन्ध में प्राप्त कर चुके हैं, उससे कहीं अधिक गम्भीर ज्ञान हमें अपने 'सूक्ष्म' और 'कारण' शरीर के सम्बन्ध में प्राप्त करना चाहिए । जो शोधें प्राचीन काल में हो चुकी हैं, उससे आगे का सारा क्रम ही अवरुद्ध हो गया जब कि आवश्यकता उसे निरन्तर जारी रखे जाने की थी । ज्ञान का अन्त नहीं जो प्राचीन काल में जाना जा चुका वह समग्र नहीं । मानवीय सामर्थ्य और विराट् की अनन्तता की तुलना करते हुए यही उचित है कि, उपलब्ध ज्ञान को पूर्ण न माना जाय और अन्वेषण कार्य जारी रखा जाय ।

सूक्ष्म और कारण शरीरों की स्थिति, शक्ति, सम्भावना और उपयोग की प्रक्रिया समझने में भूतकाल के साधन विज्ञानियों की जानकारियों से लाभ उठाया जाना चाहिए और अन्तरिक्ष के सूक्ष्म प्रवाह संचार में पिछले दिनों जो परिवर्तन हुए हैं, मनुष्य कलेवर के स्तर में जो भिन्नता आयी है, उसे ध्यान में रखते हुए हमें शोध कार्य को आगे बढ़ाना चाहिए ।

स्थूल दृश्य शरीर की गतिविधियाँ इस भूलोक तक सीमित हैं । सूक्ष्म शरीर भुवः लोक तक और कारण शरीर स्वः लोक तक अपनी सक्रियता फैलाये हुए हैं । इन भूः भुवः स्वः लोकों को ग्रह, उपग्रह, नक्षत्र, आदि समझने की आमतौर से भूल की जाती है । लोक और ग्रह सर्वथा भिन्न हैं । ग्रह स्थूल हैं, लोक सूक्ष्म । इस दृश्यमान अनुभव गम्य भूलोक के भीतर अदृश्य स्थिति में दो अन्य लोक समाये हुए हैं । भुवाःलोक और स्वः लोक । वहाँ की स्थिति भू लोक भिन्न है । यहाँ पदार्थ का प्राधान्य है । जो कुछ भी सुख-दुख हमें मिलते हैं, वे सब अणु पदार्थों के माध्यम से मिलते हैं । यहाँ हम जो कुछ चाहते या उपलब्ध करते हैं, वह पदार्थ ही होता है । स्थूल शरीर चूँकि स्वयं पदार्थों का बना है, इसलिए उसकी दौड़ या पहुँच पदार्थ तक ही सीमित हो सकती है । भुवःलोक विचार प्रधान होने से उसकी अनुभूतियाँ, शक्तियाँ, क्षमताएँ, सम्भावनाएँ सब कुछ इस बात पर निर्भर करती हैं कि, व्यक्ति का बुद्धि संस्थान, विचार, स्तर क्या था ।

स्व लोक भावना लोक है । यह भावना प्रधान है । भावनाओं में रस है । प्रेम का रस प्रख्यात है । माता और बच्चे के बीच, पति और पत्नी के बीच, मित्र और मित्र के बीच कितनी प्रगाढ़ता, घनिष्टता, आत्मीयता होती है, यह हम प्रत्यक्ष देखते हैं । वे संयोग में कितना सुख और वियोग में कितना दुःख अनुभव करते हैं इसे कोई सहृदय व्यक्ति अपनी अनुभूतियों की तथा उन स्थितियों के ज्वार भाटे से प्रभावित लोगों की अन्तः स्थिति का अनुमान लगाकर वस्तुस्थिति की गहराई जान सकते हैं । यह भाव सम्वेदना इतनी सघन होती है कि, शरीर और मन को किसी विशिष्ट दिशा में घसीटती हुई कहीं से कहीं ले पहुँचती है । श्रद्धा और विश्वास के उपकरणों से देवताओं को विनिर्मित करना और उन कर अपना भावारोपण करके अभीष्ट वरदान प्राप्त कर लेना, यह सब भाव संस्थान का चमत्कार है । देवता होते हैं या नहीं । उनमें वरदान देने की सामर्थ्य है या नहीं । इस तथ्य को समझने के लिए हमें मनुष्य की भाव सामर्थ्य की प्रचण्डता को समझना पड़ेगा । उसकी श्रद्धा का बल असीम है । जिसकी जितनी श्रद्धा होगी, जिसका जितना गहरा विश्वास होगा, जिसने जितना प्रगाढ़ संकल्प कर रखा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होगा, और जिसने जितनी गहरी भक्ति भावना को सम्वेदनात्मक बना रखा होगा, देवता उसकी मान्यता के अनुरूप बन कर खड़ा हो जायेगा । वह उतना ही शक्ति सम्पन्न होगा और उतने ही सच्चे वरदान देगा ।

कहना न होगा कि हर चीज सूक्ष्म होने पर अधिक शक्तिशाली बनती चली जाती है । मिट्टी में वह बल नहीं, जो उसके अति सूक्ष्म अंश अणु में है हवा में वह सामर्थ्य नहीं जो ईथर में है । पानी में वह क्षमता नहीं जो भाप में है । स्थूल शरीर के गुण-धर्म से हम परिचित हैं । वह सीमित कार्य ही अन्य जीव जन्तुओं की तरह पूरे कर सकता है । जो अतिरिक्त सामर्थ्य, अतिरिक्त प्रतिभा, अतिरिक्त प्रखरता मनुष्य के अन्दर देखी जाती है, वह उसके सूक्ष्म और कारण शरीरों की ही है । बाहर से सब लोग लगभग एक से दीखने पर भी भीतरी स्थिति के कारण उनमें जमीन आसमान जितना अन्तर पाया जाता है, यह रक्त माँस का फर्क नहीं वरन् सूक्ष्म शरीर की अन्तःचेतना में सन्निहित, समर्थता और असमर्थता के कारण ही होता है । पंच भौतिक स्थूल काया को जिस प्रकार आहार, व्यायाम, चिकित्सा आदि उपायों से सामर्थ्यवान बनाया जाता है, उसी प्रकार सूक्ष्म शरीर तथा कारण शरीर को भी योग साधनों द्वारा परिपुष्ट बनाया जाता है । मनोबल और आत्मबल के कारण जो अद्‌भुत विशेषताएँ लोगों में देखी जाती हैं, उन्हें इन सूक्ष्म शरीरों की बलिष्टता ही समझना चाहिए । साधन का उद्देश्य उसी बलिष्टता को सम्पन्न करना है ।

स्थूल शरीर की शोभा, तृप्ति और उन्नति के लिए हमारे प्रयत्न निरन्तर चलते रहते हैं । यदि सूक्ष्म शरीर और कारण शरीरों को उपेक्षित और विभुक्षित पड़े रहने देने की हानि को हम समझें और उन्हें भी स्थूल शरीर की ही तरह समुन्नत करने का प्रयत्न करें तो ऐसे असाधारण लाभ प्राप्त कर सकते हैं; जिनके द्वारा जीवन कृत-कृत्य हो सके । भूलोक में प्राप्त पदार्थ सम्पदाओं से प्राप्त थोड़े से सुख का हमें ज्ञान है, अस्तु उसी की उधेड़-बुन में लगे रहते हैं । भुवः और स्वः लोकों की विभूतियों को भी जान सकें तो सच्चे अर्थों में सम्पन्न बन सकते हैं । योग साधना का प्रयोजन मनुष्य को ऐसी ही समग्र सम्पन्नता से लाभान्वित करता है । शरीरगत शूक्ष्म संस्थानों की समर्थता बढ़ाकर जीवनक्रम में सर्वांगीण प्रगति की सम्भावना उत्पन्न करना ही योग साधनाओं का प्रयोजन है ।

आत्मविद्या के विद्यार्थियों को यह तो विदित ही रहता है कि यह मानवीय पिण्ड (शरीर) विश्व ब्रह्माण्ड का एक छोटा सा नमूना मात्र है । सूर्य चलता है और और सौरमण्डल के ग्रह उपग्रह उसकी परिक्रमा करते हैं । ठीक इसी प्रकार परमाणु भी अकेला नहीं होता, उसके साथ इलेक्ट्रॉन, प्रोटॉन, न्यूट्रॉन आदि की एक मण्डली रहती है जो 'न्यूक्लियस' से प्रभावित होकर अपना कार्य उसी तरह चलाती है, जिस तरह सौर मण्डल के साथ । विशाल वृक्ष का सारा ढाँचा छोटे से बीज के भीतर पूरी तरह विद्यमान रहता है । मनुष्य का शरीर ही नहीं उसका स्वभाव, बुद्धि, अन्तःकरण आदि महत्त्वपूर्ण सूक्ष्म चेतना संस्थान भी अति सूक्ष्म रज वीर्य में एवं पूरी तरह "जीन्स" रूप से विद्यमान रहता है । ब्रह्माण्ड की विशाल व्यापकता को यदि हम बीज रूप में देखना चाहें तो उसे मानव शरीर की सूक्ष्मता का विश्लेषण करते हुए भली प्रकार जान सकते हैं । जान ही नहीं सकते, उस व्यक्तिगत सूक्ष्मता का विश्व गरिमा के साथ जुड़े हुए अविच्छिन्न सम्बन्ध का लाभ भी उठा सकते हैं । यह सम्बन्ध सूत्र यदि प्रसुप्त न रहकर जाग्रत हो जाय, दुर्बल न रहकर परिपक्व हो जायें तो विश्वव्यापी शक्ति भण्डार से अपने लिए आवश्यक वस्तुएँ प्रचुर मात्रा में उपलब्ध आकर्षित कर सकता है, इतना ही नहीं अपनी दुर्बल इकाई को समर्थ बनाकर उससे विराट् विश्व के जड़ चेतना संस्थान को प्रभावित कर सकता है ।

साधना और तपश्चर्या वस्तुतः इसी अति महत्त्वपूर्ण विज्ञान का नाम है । प्राचीनकाल में तप साधना के द्वारा जिनने जो वरदान पाये थे, उनके इतिहास, पुराण विस्तारपूर्वक हम पढ़ते सुनते हैं । इन दिनों वैसी उपलब्धियाँ प्रत्यक्ष न होने से, वे बातें कपोल कल्पना जैसी लगती हैं । पर वस्तुतः बात ऐसी नहीं है । यदि ठीक विधि से, ठीक उपकरणों द्वारा उस विज्ञान को कार्यान्वित किया जाय तो पूर्व काल की कपोल कल्पना समझी जाने वाली बातों को आज भी प्रत्यक्ष किया जाना सम्भव है ।

तपस्वियों द्वारा साधना के फलस्वरूप प्राप्त किए वरदान और कुछ नहीं विराट् विश्व की अन्तरंग शक्तियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में से कुछ का इच्छानुकूल उपयोग कर सकने की क्षमता ही समझी जानी चाहिए, इसी प्रकार शाप वरदान दे सकने की क्षमता को अपनी व्यक्तिगत इकाई को इतना प्रबल बना लेना ही समझना चाहिए, जिससे मनुष्यों या पदार्थों को अपनी संकल्प शक्ति के प्रहार से अभीष्ट दिशा में मुड़ने के लिए विवश किया जा सके । देवताओं का अस्तित्व इस विराट् विश्व में उनकी विशालता के अनुरूप व्यापक भी हो सकता है । पर हम से देवताओं के जिस अंश का प्रत्यक्ष और सीधा सम्बन्ध है वह अंश अपने भीतर ही 'शक्ति बीजों' के रूप में विद्यमान रहता है । साधना का प्रयोजन इन्हीं शक्ति बीजों को जाग्रत और समर्थ बनाना है । समष्टिगत देवताओं का आशीर्वाद, वायु, वर्षा, धूप, शीत, दुर्भिक्ष, सुभिक्ष आदि के रूप में समग्र रूप से बरसता है और उससे सबको समान लाभ मिलता है । व्यक्तिगत वरदान आशीर्वाद देने वाले देवता अपने शरीर में ही विद्यमान रहते हैं। विविध-विधि साधनाओं द्वारा उन्हीं को स्वयं समर्थ बनाया जाता है और अपनी पात्रता एवं तपस्या के अनुरूप उन्हीं से वह लाभ पाया जाता है, जिसे 'अलौकिक' चमत्कारी, देव प्रदत्त, वरदान के रूप में आश्चर्य के साथ सुना और देखा जाता है ।

ऐसे मानवीय पिण्ड के अन्तर्गत इस प्रकार के मूल शक्ति संस्थान दो हैं । उन्हें उत्तरी ध्रुव और दक्षिणी ध्रुव की समता दी जा सकती है । इन्हीं को अग्नि और सोमप्राण और रयि—स्वाहा और स्वधा कहा जाता है । इनमें से एक को सूर्य दूसरे को चन्द्र कह सकते हैं । 'सहस्रार'—को उत्तरी ध्रुव—सूर्य केन्द्र माना जाता और 'आधार' को चन्द्र । एक को शिव कह सकते हैं, दूसरे को शक्तियों इन दोनों को ही जीवन अग्नि कह सकते हैं और परस्पर सम्बद्ध मान सकते हैं । सूर्य के प्रकाश से ही चन्द्रमा प्रकाशित होता है । कारण जो भी हो चन्द्रमा तल पर प्रकाश के समय ज्वलन्त ऊष्मा और अन्धकार के समय शून्य तापमान जैसी शीतलता रहती है । 'आधार' में भी कम अग्नि नहीं है । इसलिए वहाँ भी अग्नि कुण्ड माना गया है । सहस्रार तो सहस्र किरणों वाला प्रत्यक्ष सूर्य है ही । आकाशस्थ सूर्य में सात रंग की सात किरणें, सात शक्तियाँ, सात अग्नियाँ मानी जाती हैं, पर सहस्रार में हजार किरणों—हजार अग्नियों—हजार शक्तियों का अंकन किया गया है । उनकी संख्या और भी अधिक हो सकती है । इन्हीं किरणों को शरीरगत और मनोगत आत्म शक्तियों के रूप में आत्म विद्या के साथ जानने और उनके साथ सम्बन्धित होने का प्रयत्न करते हैं । इसे ही कुण्डलिनी योग के नाम से जाना जाता है ।

इस सन्दर्भ में योग शास्त्रों में षटचक्रों, सहस्रार दल कमल, दस प्रधान नाड़ियाँ, पाँच प्राण, पाँच कोष और बहत्तर हजार नाड़ियों का विशद् वर्णन है । शरीरगत यह सूक्ष्म, किन्तु विशाल प्रतिष्ठान् अनेक शक्तियों, सामर्थ्यों एवं विचित्रताओं से ओत-प्रोत है । जिस चक्र या मर्म का वेधन या ध्यान करते हैं, उसकी शक्तियाँ विकसित होने लगती हैं । मनुष्य जो कुछ बनना चाहता है, उसके लिए विशेष शक्ति भी इसी शरीर से मिलती है । इस शरीर में संक्षेप में वह सब कुछ है, जिसकी हम इच्छा करते हैं और जिसे जानते भी नहीं ।

उदाहरण के लिए मस्तिष्क के एक भाग प्रकाश दर्शन को ही लें तो प्रतीत होगा कि वही नेत्रों की सहायता से उन चित्रों को बनाता है, जिन्हें हम दृश्य रूप में अनुभव करते हैं । वस्तुतः पदार्थों से निकलने वाली किरणें हमारे नेत्र गोलकों से टकराती भर हैं । यही है भौतिक रूप से दृश्य की अटपटी स्थिति । यदि मस्तिष्क का 'प्रकाश दर्शन' केन्द्र ठीक से काम न करे, तो मात्र आँखों की सहायता से जो दीख पड़ता है उसका कोई सही स्वरूप बन नहीं सकेगा और देखते हुए भी अनदेखे जैसी स्थिति बनी रहेगी ।

अभी तक माना जाता था कि कोई वस्तु देखनी हो तो प्रकाश और आँखें दो ही वस्तुएँ आवश्यक हैं। प्रकाश जब आँखों की रैटीना से टकराता है तो आँखों का तन्त्रिका तन्त्र (ज्ञानकोष) एक विशेष प्रकार की रासायनिक क्रिया करके सारी सूचनाएँ मस्तिष्क को देता है । मन एक तीसरी वस्तु है; जो प्रकाश और आँखों के क्रियाकलाप को अनुभव करता है और नई तरह की योजनाएँ, आदेश, अनुभूतियाँ तैयार करके शरीर के दूसरे अवयवों में विभक्त करता है, अर्थात् मानसिक चेतना न हो तो प्रकाश और आँखों के होते हुए भी देखना सम्भव नहीं ।

भगवान का दिया हुआ एक ऐसा ही यन्त्र मनुष्य के पास भी है, जिसे दृष्टिवर्धन के आद्यावधि आविष्कारों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की सम्मिलित उपलब्धियों से भी अधिक समर्थ और व्यापक कहा जा सकता है । न इसे खरीदना पड़ता है और न संचालन की कोई बड़ी शिक्षा लेनी पड़ती है । भू मध्य भाग में अवस्थित आज्ञाचक्र अपना तीसरा नेत्र आज्ञाचक्र है । इसे खोलने की साधना करने से वह अन्तर्ज्योति विकिसत हो सकती है, जिसके माध्यम से लोक लोकान्तरों की भू-गर्भ की पंचभौतिक परिस्थितियों को देखा और समझा जा सके । इतना ही नहीं, इस नेत्र में वह शक्ति भी है कि जीवित प्राणियों की मनःस्थिति, भावना, कल्पना, योजना, इच्छा, आस्था एवं प्रकृति को भी समझा जा सके । इस आज्ञाचक्र को विकसित करने की साधना हमें दृष्टि की प्रखरता और व्यापकता का अनुपम उपहार दे सकती है ।

यों सामान्य नेत्र ही अपने आप में अद्‌भुत हैं । उनकी संरचना देखते हुए भी आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । फिर मस्तिष्क के वे संस्थान, जिनमें प्रकाश दर्शन की रहस्यमय पर्तें सन्निहित हैं, का विवेचन अपने मोटे-झोटे शब्द ज्ञान और शरीर गठन प्रक्रिया की जानकारी के आधार पर कर ही कैसे सकते हैं ?

संसार में अभी तक ऐसा फोटो कैमरा नहीं बना जो टैक्नीकलर, विस्ताविजन और थ्री डी. के टैक्नोलॉजी युक्त हो । शत-प्रतिशत साफ फोटो खींचता हो । जिसमें फोटोग्राफर की आवश्यकता न हो और फिल्म प्लेट आदि लगाने का झंझट न हो । ऐसा कैमरा बनना तो दूर किसी वैज्ञानिक के मस्तिष्क में इस तरह की सम्भावना की कल्पना भी अभी तक नहीं आयी है । यदि कोई सोचने भी लगे तो इन सारी सुविधाओं से सम्पन्न किसी विशालकाय यन्त्र की ही कल्पना की जा सकती है । इतने उपकरण होते हुए भी उसका साईज १ इंच छोटा हो, उसे तो सर्वथा असम्भव ही कहना चाहिए । यान्त्रिक जगत में ऐसा फोटो यन्त्र भले ही न बना हो, भले ही उसकी सम्भावना अशक्य मानी जाय, पर ऐसा कैमरा अपने पास मौजूद है और उसका उपयोग जन्म काल से ही हम लोग कर रहे हैं । यह जादू जैसा फोटो यन्त्र है 'नेत्र' ।

मस्तिष्क के अग्रभाग में जड़े हुए दो नेत्र सभी को दीखते हैं, पर उनके मध्यवर्ती अन्तराल में जो तीसरा नेत्र है उसकी जानकारी योगीजनों को ही थोड़ी बहुत मात्रा में मिली है ।

दोनों भौंहों के मध्य भाग में जो बाल रहित खाली स्थान है उसे भृकुटी कहते हैं, उसके नीचे अस्थि आवरण के उपरान्त एक बेर की गुठली जैसी ग्रन्थि है । इसे 'आज्ञाचक्र' कहते हैं । शरीर शास्त्र की दृष्टि से उसका कार्य और प्रयोजन अभी पूरी तरह नहीं समझा जा सका, पर आत्माविद्या के अन्वेषी उसके अति महत्त्वपूर्ण कार्य को बहुत पहले से ही जानते हैं । इसे तीसरा नेत्र या दिव्य नेत्र कहते हैं । दिव्य दृष्टि यहीं से निःसृत होती है ।

प्रकाश की सहायता से हम वस्तुओं को देखते हैं, पर यह रहस्य किन्हीं-किन्हीं को ही विदित है कि हमारे भीतरी जीवाणुओं में भी प्रकाश विद्यमान है और उनसे निकलने वाली किरणें न केवल भीतर बनाये रहती हैं, वरन् बाहर भी तेजस्विता का परिचय देती हैं । आँखों में अपना निज का प्रकाश है । आज्ञाचक्र का प्रकाश तो ऊर्जा रूप में भी विकसित हो सकता है और उससे टेलीविजन एवं सम्वाद प्रेषण जैसा कार्य भी लिया जा सकता है । इस ऊर्जा से अन्य व्यक्तियों अथवा वस्तुओं को भी प्रभावित किया जा सकता है।

प्रकाश किरणों को छवि रूप में पकड़ने की कला अब फोटोग्राफी टेलिविजन तक सीमित नहीं रही, अब वे आधार प्राप्त कर लिए गए हैं, जिनसे तीन आयामों वाले त्रिविमीय चित्र देखे जा सकें । आमतौर से फोटोग्राफी लम्बाई-चौड़ाई का बोध कराती हैं । गहराई का तो उसमें आभास मात्र ही होता है । यदि गहराई को भी प्रतिबिम्बित किया जा सके तो फिर आँखों से देखे जाने वाले दृश्य और छाया अंकन में कोई भेद नहीं रहेगा । ऐसा दृश्य प्रचलन सम्भव हो सका तो फिल्में अपने वर्तमान अधूरे स्तर की फोटोग्राफी तक सीमित नहीं रहेंगी वरन् पर्दे पर रेल, मोटर, घोड़े, मनुष्य आदि उसी तरह दौड़ते दिखायी पड़ेंगे, मानो वे अपने यथार्थ स्वरूप में ही आँखों के आगे से गुजर रहे हैं । यदि सामने से अपनी ओर कोई रेल दौड़ती आ रही हो या शेर झपटता आ रहा हो तो बिल्कुल यह मालूम पड़ेगा कि वे अब अपने ऊपर ही चढ़ बैठने वाले हैं । ऐसी दशा में आरम्भिक अनभ्यास की स्थिति में सिनेमा दर्शक को भयभीत होकर अपनी सीट छोड़कर भागते ही बनेगा ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाश विज्ञानी एर्नेस्टएये और उनके सहयोगी शिष्य डी. गैवर ने होलीग्राफ के एक नये सिद्धान्त का आविष्कार किया, जिसके आधार पर त्रिविमीय स्तर का छाया चित्रण आँखों से देखा जा सकेगा और भूतकालीन दृश्यों को इन्हीं आँखों से इस प्रकार देखा जा सकेगा, मानो वह घटनाक्रम अभी-अभी ही बिल्कुल सामने घटित हो रहा है ।

भ्रूमध्य भाग में अवस्थित आज्ञाचक्र को तृतीय नेत्र कहा जाता है । शिव और पार्वती के चित्रों में उनका एक पौराणिक तीसरा नेत्र भी दिखाया जाता है । कथा के अनुसार शंकर भगवान ने इसी नेत्र को खोलकर उसमें से निकलने वाली अग्नि से कामदेव को भस्म किया था । यह दिव्य दृष्टि का केन्द्र है । इससे टेलीविजन जैसा कार्य लिया जा सकता है । दूरदर्शन का दिव्य यन्त्र यहीं लगा हुआ है । महाभारत के सारे दृश्य संजय ने इसी के माध्यम से देखे और धृतराष्ट्र को सुनाये । चित्रलेखा द्वारा प्रद्युम्न प्रणय इस दिव्य दर्शन का ही परिणाम था ।

सूक्ष्म और कारण शरीर की दिव्य दृष्टि की मर्यादा और क्षमता बहुत बढ़ी-चढ़ी है । उसे समझने, विकसित करने और प्रयोग करने की क्षमता योगाभ्यास से उपलब्ध होती है । पर स्थूल शरीर में भी यह शक्ति बहुत व्यापक है । आँखों से ही सब कुछ नहीं देखा जाता उसके अतिरिक्त अंगों में भी देखने समझने की क्षमता मौजूद है । मस्तिष्क, नेत्र गोलकों का फोटोग्राफी कैमरे जैसा प्रयोग करता है और पदार्थों के जो चित्र आँखों की पुतलियों के सेंस खींचता है । वे मस्तिष्क में जमा होते हैं । इनकी प्रतिक्रिया के आधार पर मस्तिष्क के ज्ञान तन्तु जो निष्कर्ष निकालते हैं उसी का नाम 'दर्शन' है । आँख इसके लिए सबसे उपयुक्त माध्यम है । मस्तिष्क के रूप दर्शन केन्द्र के साथ नेत्र गोलकों के ज्ञान तन्तुओं का सीधा और समीपवर्ती सम्बन्ध है इसलिए आमतौर से हम नेत्रों से ही देखने का काम लेते हैं और मस्तिष्क उन्हीं के आधार पर अपनी निरीक्षण क्रिया को गतिशील देखता है । पर ऐसा नहीं समझना चाहिए कि दृष्टि शक्ति केवल नेत्रों तक ही सीमित है । अन्य के अंगों के मस्तिष्क के साथ जुड़े हुए ज्ञान तन्तुओं को विकसित करके भी मस्तिष्क बहुत हद तक उस प्रयोजन की पूर्ति कर सकता है । समस्त विश्व का हर पदार्थ अपने साथ ताप और प्रकाश की विद्युत किरणें संजोये हुए है । वे कम्पन लहरियों के साथ इस निखिल विश्व में अपना प्रवाह फैलाती है । ईथर-तत्व के द्वारा वे दूर-दूर तक जा पहुँचती हैं और यदि उन्हें ठीक तरह से पकड़ा जा सके, तो जो दृश्य बहुत दूर पर अवस्थित है, जो घटनाएँ सुदूर क्षेत्रों में घटित हो रही हैं, उन्हें निकटवर्ती वस्तुओं की तरह देखा जा सकता है । इन दृश्य किरणों को पकड़ने के लिए नेत्र उपयुक्त हैं । समीपवर्ती दृश्य वही दीखते हैं और दूरवर्ती दृश्य देखने के लिए तृतीय नेत्र को, भ्रूमध्य में अवस्थित आज्ञाचक्र को प्रयुक्त किया जा सकता है । इतने पर भी यह नहीं समझ लेना चाहिए कि रूप तत्व का सम्बन्ध नेत्रों से ही है । अग्नि तत्व की प्रधानता से 'रूप' कम्पन उत्पन्न होते हैं । शरीर में अग्नि तत्व का प्रतिनिधित्व नेत्र करते हैं, पर ऐसा नहीं समझना चाहिए कि अग्नि तत्व अन्यत्र शरीर के अन्य अंगों में नहीं है । समस्त शरीर पंच तत्वों के गुम्फन से बना है । यदि किसी अन्य अंग का अग्नि तत्व अनायास ही विकसित हो जायेगा या साधनात्मक प्रयत्नों द्वारा विकसित कर लिया जाय तो नेत्रों की बहुत आवश्यकता उनके माध्यम से भी पूरी हो सकती है । इसी प्रकार अन्य ज्ञानेन्द्रियों के कार्य तक, सीमा तक दूसरे अंग कर सकते हैं । स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किए गये पवहारी बाबा प्रत्यक्षतः वायु ही ग्रहण करते थे, अन्न-जल सेवन नहीं करते थे पर शरीर के अन्य अंगों द्वारा अदृश्य जगत से सूक्ष्म आहार बराबर मिलता रहता है । इसके बिना किसी के लिए भी जीवन धारण किए रहना असम्भव है ।

इजवेस्तिया (रूस में छपने वाला समाचार पत्र) में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार निझनी तागिल (रूस) की रोजा नामक युवकती पंक्तियों पर उंगली चलाकर मामूली प्रेस में छपी पुस्तकें पढ़ लेती हैं । कई समाचार पत्रों ने उसके प्रमाण सहित फोटो भी छापे हैं । आश्चर्य तो यह है, कि पुस्तकों में बने हुए किसी भी फोटो को उंगलियाँ रखकर ही वह बता देती है कि यह फोटो महात्मा गाँधी की है अथवा इब्राहीम लिंकन की है । यदि वह जानती नहीं होती तो आकृति का वर्णन कर देती है, इसके इतनी बड़ी मूँछें हैं, ऐसे कान और अमुक पोशाक पहने हुए फोटो उतारी गई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

साँप चुपचाप पड़ा होता है और अपने इस अवयव से यह जान लेता है कि किस दिशा में कहाँ पर शिकार है, बस इधर ही झपटकर उसे पकड़ लेता है ।

इसी तरह के तन्तुओं से चिड़ियों और कबूतरों के मस्तिष्क भी सजे होते हैं, जिससे वे हजारों मील की यात्रा का ज्ञान रिकार्ड करके रखते हैं । दस वर्ष बाद भी उसकी सहायता से वे अपने मूल निवास को लौट सकते हैं । मेढ़क की आँख और मस्तिष्क के बीच में इस तरह के ज्ञान तन्तु होते हैं, उन्हीं से वह अपने दुश्मनों की आक्रमण करने की इच्छा तक को पहचान लेता है (यह मनुष्य के आज्ञाचक्र भ्रूमध्य में भी एक ऐसी ही सम्वेदनशील शक्ति के होने का सबसे बड़ा प्रमाण है) और आक्रमण होने से पहले ही बच निकलता है ।

इन जानकारियों के आधार पर वैज्ञानिकों ने रौजा की जाँच की । उन्होंने प्रकाश में से 'इन्फ्रारेड किरणें' निकाला हुआ प्रकाश और उसके साथ अक्षर एक कागज पर डाले जब भी रौजा ने उन्हें पढ़ दिया । बेशक वह इस स्थिति में आकृतियाँ नहीं पहचान पायी पर वैज्ञानिकों को यह मालूम पड़ गया कि आँखें ही नहीं, शरीर के अन्य अंगों में भी दृष्टि तत्व हो सकते हैं । रौजा के हाथों में प्रति एक मिलीमीटर ऐसे दस तत्व पाये भी गए । वैज्ञानिकों ने बताया, यह असामान्य स्थिति है, हम कह नहीं सकते कि क्या शरीर में ऐसे तत्व और भी कहीं हैं या विकसित किए जा सकते हैं । हम इस बात को जानने की शोध अवश्य करेंगे कि प्रकाश को ग्रहण करने वाले तत्व अँगुलियों में कैसे आ गए । यदि इस बात को ढूँढ़ निकाला गया तो ध्यान के रूप में प्रकाश कणों को आकर्षित करने और शरीर में अतीन्द्रिय ज्ञान (एक्स्ट्रा आर्डिनरीसेन्स परसेप्शन) की क्षमता उत्पन्न करने की भारतीय योग प्राणाली पूर्ण विज्ञान सम्मत हो जायेगी ।

प्रो. फोन्टान ने एक फ्रांसीसी नाविक का ऐसा ही उल्लेख किया है । वह अन्धा व्यक्ति अँगुलियों से छूकर ऐसे विवरण बताता था जो साधारणतया आँखों के बिना नहीं बताए जा सकते । कनाडा की एक अन्धी लड़की हाथ की कुहनियों के माध्यम से ऐसा ही अदृश्य दर्शन कर सकने में समर्थ थी, ऐसे प्रमाण मिले हैं ।

फ्रांसीसी कवि जूल्स रोमेन्स की उन दिनों परोक्ष दृष्टि विज्ञान में बड़ी दिलचस्पी थी उसने अपने साहित्य में कार्यों के साथ-साथ इस विषय में भी शोध की थी और बताया है कि त्वचा में अगणित "कीट नेत्र" विद्यमान हैं जो स्पर्श सम्वेदना के द्वारा निकटवर्ती वस्तु के बारे में निरन्तर जानकारी संग्रहीत करते रहते हैं । आँखों की तरह ये छोटे नेत्र वस्तुओं की आकृति भले ही स्पष्ट रूप से न जान सकें, पर उनकी प्रकृति के सम्बन्ध में नेत्र गोलकों से भी अधिक ज्ञान प्राप्त करते हैं ।

प्रसिद्ध जादूगर गोगिया पाशा और प्रो. सरकार नेत्रों से कड़ी पट्टी बँधवाकर घनी आबादी की भीड़ भरी सड़कों पर मोटर साइकिल दौड़ाने के अपने करतब दिखा चुके हैं । इस प्रदर्शन में आँखों से देखने की कोई गुंजाइश तो नहीं रही है । इसलिए पट्टी बाँधने से लेकर उसकी जाँच करने तक का काम ऐसे कार्यों की जानकारी रखने वाले प्रामाणिक लोगों को सौंपा गया था । उन लोगों की मोटर साइकिलें मोड़ और बचाव की सही व्यवस्था बनाती हुई निर्धारित लक्ष्य पर ठीक प्रकार जा पहुँची तो दर्शकों को वह विश्वास करना पड़ा कि बिना आँखों की सहायता के भी दूसरे माध्यमों से देखने का कार्य किया जा सकना सम्भव है । स्वामी माधवानन्द जी ने राजस्थान में जल रहित प्रदेशों में कई जगह अपनी दृष्टि से जल स्रोतों की जानकारी दी थी और वहाँ कुआँ खोदने पर सचमुच यथा स्थान पानी निकला ।

भूमिगत अदृश्य वस्तुओं को देख सकने की विद्या को रेण्डोमेन्सी कहते हैं । इस विज्ञान की परिधि में जमीन में दबे खनिज रसायन, जल, तेल आदि सभी वस्तुओं को जाना जा सकता है । किन्तु यदि केवल जल तलाश तक ही वह सीमित हो तो उसे 'वाटर डाउनिंग' कहेंगे ।

आयरलैण्ड के विकलो पहाड़ी क्षेत्र में दूर-दूर तक कहीं पानी का नाम निशान नहीं था । जमीन कड़ी, पथरीली थी । प्रो. वेनेट ने खदान विशेषज्ञों के सामने अपना प्रयोग किया, वे कई घण्टे उस क्षेत्र में घूमे अन्ततः वे एक स्थान पर रुके और कहा, केवल १४ फुट गहराई पर यहाँ एक अच्छा जल स्रोत है । खुदाई आरम्भ हुई और पूर्व कथन बिल्कुल सच निकला ।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

१५ फुट जमीन खोदने पर पानी की एक जोरदार धारा वहाँ से उबल पड़ी ।

अपने भीतर की प्रकाश सत्ता को यदि योगाभ्यास द्वारा विकसित किया जा सके, तो उससे बाहरी पदार्थों को बिना आँखों के भी देखा सकता है । बल्ब अपने आप में प्रकाशित होता है, तो उसके प्रकाश में अन्य वस्तुएँ भी दिखाई पड़ती हैं । आकाश में जगमगाते तारे भी रात्रि के सघन अन्धकार को कम करते हैं और ऐसी स्थिति बनाए रहते हैं, कि आसपास की चीजों को किसी सीमा तक देखा जा सके । हमारे आन्तरिक प्रकाश कण यदि कुछ अधिक जगमगाने लगें तो संसार में अन्यत्र घटित हो रही घटनाओं को देखा समझा जा सकता है । संजय ने धृतराष्ट्र को अपनी इसी विशेषता के कारण राजमहल में बैठकर महाभारत का आँखों देखा घटना-क्रम सुनाया था । भौतिक विज्ञान में टेलीविजन प्रक्रिया के अनुसार अन्यत्र का घटना क्रम किसी अन्य स्थान पर यथावत् देखा जा सकता है । यह छविमान प्रकाश किरणों का छवि रूप में परिवर्तन करने और उनका यथावत अनुभव करना ही है । टेलीविजन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण यन्त्र हमारे आज्ञाचक्र में मौजूद हैं और उनक सहारे वह सब कुछ देखा जा सकता है जो कहीं भी घटित हो रहा हो अथवा घटित हो चुका है । इस शक्ति को अधिक विकसित कर लेने पर भविष्य की झांकी भी इसी प्रकार मिल सकती है, जिस तरह कि यन्त्रों द्वारा निकट भविष्य में आँधी तूफान आने या मौसम बदलने सम्बन्धी जानकारी मिलती है ।

दिव्य प्रकाश का उन्नयन, साधना का उद्देश्य

आध्यात्म विज्ञान में स्थान-स्थान पर प्रकाश की साधना और प्रकाश की याचना की चर्चा मिलती है । यह प्रकाश बल्ब, बत्ती अथवा सूर्य, चन्द्र आदि से निकलने वाला उजाला नहीं वरन् वह परम ज्योति है जो इस विश्व में चेतना का आलोक बनकर जगमगा रही है । गायत्री का उपास्य सविता देवता इसी ज्योति को कहते हैं । इसका अस्तित्व ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में प्रत्यक्ष और कण-कण में संव्याप्त जीवन ज्योति के रूप में प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर भी देख सकता है । इसकी जितनी मात्रा जिसके भीतर विद्यमान हो समझना चाहिए उस उसमें उनता ही अधिक ईश्वरीय अंश आलोकित हो रहा है ।

मस्तिष्क के मध्य भाग से प्रकाश कणों का एक फुब्बारा सा फूटता रहता है । उसकी उछलती हुई तरंगें एक वृत्त बनाती हैं और फिर अपने मूल उद्गम में लौट जाती हैं । यह रेडियो प्रसारण और संग्रहण जैसी प्रक्रिया है, ब्रह्मरन्ध्र से छूटने वाली ऊर्जा अपने भीतर छिपी हुई भाव स्थित को विश्व-ब्रह्माण्ड में ईथर कम्पन्नों द्वारा प्रवाहित करती रहती है, इस प्रकार मनुष्य अपनी चेतना का परिचय और प्रभाव समस्त संसार में फैंकता रहता है । फुब्बारे की लौटती हुई धाराएँ अपने साथ विश्व-व्यापी असीम ज्ञान की नवीनतम घटनात्मक तथा भावनात्मक जानकारियाँ लेकर लौटती है, यदि उन्हें ठीक तरह समझा जा सके, ग्रहण किया जा सके तो कोई भी व्यक्ति भूतकालीन और वर्तमान काल की अत्यन्त सुविस्तृत और महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त कर सकता है । व्यक्ति में प्रवाह गृहण करने की और प्रसारित करने की जो क्षमता है, उसका माध्यम यह ब्रह्मरन्ध्र अवस्थित ध्रुव संस्थान ही है । पृथ्वी पर अन्य ग्रहों का प्रचुर अनुदान आता है तथा उसकी विशेषताएँ अन्यत्र चली जाती हैं । यह आदान-प्रदान का कार्य ध्रुवों केन्द्रों द्वारा सम्पन्न होता है । शरीर के भी दो ध्रुव हैं—एक मस्तिष्क, दूसरा जनन गह्वर । चेतनात्मक विकरण मस्तिष्क से और शक्तिपरक ऊर्जा प्रवाह जननगह्वर से सम्बन्धित है । सूक्ष्म आदान-प्रदान की अति महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया इन्हीं केन्द्रों के माध्यम से संचालित होती है ।

शारीरिक और मानसिक स्थिति के अनुरप तेजोवलय की स्थिरता बनती है । यदि स्थिति बदलने लगे तो प्रकाश पुंज की स्थिति भी बदल जायेगी । इतना ही नहीं समय-समय पर मनुष्य के बदलते हुए स्वभाव तथा चिन्तन स्तर के अनुरूप उसमें सामयिक परिवर्तन होते रहते हैं । सूक्ष्मदर्शी उसकी भिन्नताओं को रंग बदलते हुए परिवर्तनों के रूप में देख सकते हैं । शान्ति और सज्जनता की मनः स्थिति हल्के नीले रंग में देखी जायेगी । विनोदी, कामुक, सत्तावान, वैभवशाली, विशुद्ध व्यवहार कुशल स्तर की मनोभूमि पीले रंग की होती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । क्रोधी, अहंकारी, क्रूर, निष्ठुर, स्वार्थी, हठी और मूर्ख मनुष्य लाल वर्ण के तेजोवलय से घिरे रहते हैं । हरा रंग सृजनात्मक एवं कलात्मक प्रवृत्ति का द्योतक है । गहरा बैगनी चंचलता और अस्थिर मति का प्रतीक है । धार्मिक ईश्वर भक्त और सदाचारी व्यक्तियों की आभा केशरिया रंग की होती है । इसी प्रकार विभिन्न रंगों के मिश्रण मनुष्य के गुण, कर्म, स्वभाव के परिवर्तनों के अनुसार बदलता रहता है । यह तेजोवलय सदा स्थिर नहीं रहता । बदलती हुई मनोवृत्ति प्रकाश पुंज के रंगों में परिवर्तन कर देती है । यह रंग स्वतन्त्र रूप से कुछ नहीं । मनोभूमि में होने वाले परिवर्तन, शरीर से निसृत होते रहने वाले ऊर्जा कम्पनों की घटती-बढ़ती संख्या के आधार पर आँखों को अनुभव होते हैं । वैज्ञानिक इन्हें "फ्रीक्वेन्सी आव दी वेयस" कहते हैं ।

दिव्य दर्शन (क्लेयर वाइन्स) दिव्य अनुभव (साइकोमेन्ट्री) प्रभाव प्रेषण (टेलिपैथी) संकल्प प्रयोग (सजैशन) जैसे प्रयोग थोड़ी आत्म-शक्ति विकसित होते ही आसानी से किए जा सकते हैं । इन विद्याओं पर पिछले दिनों से काफी शोध कार्य होता चला आ रहा है और उन प्रयासों के फलस्वरूप उपयोगी निष्कर्ष सामने आये हैं, परा मनोविज्ञान, अतीन्द्रिय विज्ञान, मैटाफिजिक्स जैसी चेतनात्मक विद्याएँ भी अब रेडियो विज्ञान तथा इलेक्ट्रोनिक्स की ही तरह विकसित हो रही हैं । अचेतन मन की सामर्थ्य के सम्बन्ध में जैसे-जैसे रहस्मय जानकारियों के पर्त खुलते हैं, वैसे-वैसे यह स्पष्ट होता जाता है कि, नर-पशु लगने वाला मनुष्य वस्तुतः असीम और अनन्त क्षमताओं का भण्डार है । कठिनाई इतनी भर है कि उसकी अधिकांश विकृतियाँ प्रसुप्त अविज्ञात-स्थिति में पड़ी हैं ।

प्रकाश रश्मियों की लम्बाई एक इंच के सोलह से तीस लाखवें हिस्से के बराबर होती है । रेडियो पर सुनी जाने वाली ध्वनि तरंगों की गति एक सेकण्ड के एक लाख छियासी हजार मील की होती है, वे एक सेकण्ड में सारी धरती की सात परिक्रमा कर लेती हैं । शब्द और प्रकाश की तरंगों का आकार एवं प्रवाह इतना सूक्ष्म एवं गतिशील है कि, उन्हें बिना सूक्ष्म यन्त्रों की सहायता से हमारी इन्द्रियाँ अनुभव नहीं कर सकती हैं ।

डॉ. जे. सी. ने 'अणु और आत्मा' ग्रन्थ में स्वीकार किया है कि मानव अणुओं की प्रकाशवाष्प न केवल मनुष्यों में वरन् अन्य जीवधारियों, वृक्ष वनस्पति, औषधि आदि में भी होती है, यह प्रकाश अणु ही जीवधारी के यथार्थ शरीरों का निर्माण करते हैं । खनिज पदार्थों से बना मनुष्य या जीवों का शरीर तो तभी तक स्थिर रहता है, जब तक यह प्रकाश अणु शरीर में रहते हैं । इन प्रकाश अणुओं के हटते ही स्थूल शरीर बेकार हो जाता है, फिर उसे जलाते या गाढ़ते ही बनता है । खुला छोड़ देने पर तो उसकी सड़ाँद से उसके पास एक क्षण भी ठहरना कठिन हो जाता है ।

स्वभाव, संस्कार, इच्छाएँ, क्रिया शक्ति यह सब इन प्रकाश अणुओं का ही खेल है । हम सब जानते हैं कि प्रकाश का एक अणु (फोटान) भी कई रंगों के अणुओं से मिलकर बना होता है । मनुष्य शरीर की प्रकाश आभा भी कई रंगों से बनी होती है । डॉ. जे. सी. ट्रस्ट ने अनेक रोगियों, अपराधियों तथा सामान्य व श्रेष्ठ व्यक्तियों का सूक्ष्म निरीक्षण करके बताया है कि, जो मनुष्य जितना श्रेष्ठ और अच्छे गुणों वाला होता है, उसके मानव अणु दिव्य तेज और आभा वाले होते हैं, जबकि अपराधी रोगी व्यक्तियों के प्रकाश अणु क्षीण अन्धकारपूर्ण होते हैं । उन्होंने बहुत से मनुष्यों के काले धब्बों को अपनी दिव्य दृष्टि से देखकर उनके रोगी या अपराधी होने की बात को बताकर लोगों को स्वीकार करा दिया था कि सचमुच रोग और अपराधी वृत्तियाँ काले रंग के अणुओं की उपस्थिति का प्रतिफल होते हैं, मनुष्य अपने स्वभाव में चाहते हुए भी तब तक परिवर्तन नहीं कर सकता, जब तक यह दूषित प्रकाश-अणु अपने अन्दर विद्यमान बने रहते हैं ।

यही नहीं जन्म-जन्मान्तरों तक खराब प्रकाश अणुओं की यह उपस्थिति मनुष्य से बलात्, दुष्कर्म कराती रहती है, इस प्रकार मनुष्य पतन के गड्डे में बार-बार गिरता और अपनी आत्मा को दुःखी बनाता रहता है । जब तक यह अणु नहीं बदलते न निष्क्रिय होते तब तक मनुष्य किसी भी परिस्थिति में अपनी दशा नहीं सुधार पाता ।

यह तो है कि अपने प्रकाश अणुओं में यदि तीव्रता है तो उससे दूसरों को आकस्मिक सहायता दी जा सकती है । रोग दूर किए जा सकते हैं । खराब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार वालों को कुछ देर के लिए अच्छे सन्त स्वभाव में बदला जा सकता है । महर्षि नारद के सम्पर्क में आते ही डाकू बाल्मीकि के प्रकाश अणुओं में तीव्र झटका लगा और वह अपने आपको परिवर्तित कर डालने को विवश हुआ । भगवान बुद्ध के इन प्रकाश-अणुओं से निकसने वाली विद्युत विस्तार सीमा में आते ही डाकू अंगुलिमाल की विचारधाराएँ पलट गई थीं । ऋषियों के आश्रयों में गाय और शेर एक घाट पानी पी आते थे, वह इन प्रकाश-अणुओं की ही तीव्रता के कारण होता था । उस वातावरण से निकलते ही व्यक्तिगत प्रकाश अणु पिर बलवान हो उठने से लोग पुनः दुष्कर्म करने लगते हैं, इसलिए किसी को आत्म-शक्ति या अपना प्राण देने की अपेक्षा भारतीय आचार्यों ने एक पद्धति का प्रसार किया था, जिसमें इन प्रकाश-अणुओं का विकास कोई भी व्यक्ति इच्छानुसार कर सकता था । देव उपासना उसी का नाम है ।

उपासना एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है, जिसमें हम अपने भीतर के काले, मटमैले और पापाचरण को प्रोत्साहन देने वाले प्रकाश-अणुओं दिव्य तेजस्वी, सदाचरण और शान्ति एवं प्रसन्नता की वृद्धि करने वाला मानव-अणुओं में परिवर्तित करते हैं । विकास की इस प्रक्रिया में किसी नैसर्गिक तत्व, पिण्ड या ग्रह-नक्षत्र की साझेदारी होती है—उदाहरण के लिए जब हम गायत्री की उपासना करते हैं, तो हमारे भीतर के दूषित प्रकाश-अणुओं की हटाने और उसके स्थान पर दिव्य प्रकाश अणु भर देने का माध्यम 'गायत्री' का देवता सविता अर्थात् सूर्य होता है ।

वर्ण रचना और प्रकाश की दृष्टि से यह मानव-अणु भिन्न-भिन्न स्वभाव के होते हैं । मनुष्य का जो कुछ भी स्वभाव आज दिखायी देता है, वह इन्हीं अणुओं की उपस्थिति के कारण होता है, यदि इस विज्ञान को समझा जा सके तो न केवल अपना जीवन शुद्ध, सात्विक, सफल रोगमुक्त बनाया आ सकता है, वरन् औरों को भी प्रभावित और इन लाभों से लाभान्वित किया जा सकता है । परलोक और सद्गति के आधार भी यह प्रकाश-अणु या मानव अणु ही है ।

वस्तुएँ हम प्रकाश की सहायता से देख सकते हैं किन्तु साधारण प्रकाश कणों की सहायता से हम शरीर के कोश (सैल) को देखना चाहें तो वह इतने सूक्ष्म कि उन्हें देख नहीं सकते । इलेक्ट्रॉनों को जब ५०००० वोल्ट आवेश पर सूक्ष्मदर्शी (माइक्रोस्कोप) में भेजा जाता है तो उनकी तंरगदैर्ध्य श्वेत प्रकाश कणों की तुलना में १/१०००० भाग सूक्ष्म होती है, तब वह हाइड्रोजन के परमाणु का जितना व्यास होता है, उसके भी ४२.४वें हिस्से छोटे परमाणु में भी प्रवेश करके वहाँ की गतिविधियाँ दिखा सकती है । उदाहरण के लिए यदि मनुष्य की आँख एक इंच घेरे को देख सकती है, तो उससे भी ५०० अंश कम को प्रकाश सूक्ष्मदर्शी और १०००० अंश छोटे भाग को सूक्ष्मदर्शी । इसी से अनुमान लगा सकते हैं कि मनुष्य शरीर के कोश (सेल्स) का चेतन भाग कितना सूक्ष्म होना चाहिए । इस तरह के सूक्ष्मदर्शी से जब कोष का निरीक्षण किया गया तो उसमें भी एक टिमटिमाता हुआ प्रकाश दिखायी दिया । चेतना या महत्त्व इस प्रकार प्रकाश की ही अति सूक्ष्म स्फुरणा है, यह विज्ञान भी मानता है ।

भारतीय योगियों ने ब्रह्मरन्ध्र स्थित जिन षटचक्रों की खोज की है, सहस्रार कमल उनसे बिल्कुल अलग सर्वप्रभुता सम्पन्न है । यह स्थान कनपटियों से दो दो इंच अन्दर भृकुटि से लगभग ढाई या तीन इंच अन्दर छोटे से पोले में प्रकाश पुंज के रूप में है । तत्वदर्शियों के अनुसार यह स्थान उलटे छाते या कटोरे के समान १७ प्रधान प्रकाश तत्वों से बना होता है, देखने में मर्करी लाइट के समान दिखायी देता है । छान्दोग्य उपनिषद में सहस्रार दर्शन की सिद्धि पाँच अक्षरों में इस तरह प्रतिपादित की 'तस्य सर्वेषु लोकेषु कामचारी भवति' अर्थात् सहस्रार प्राप्त कर लेने वाला योगी सम्पूर्ण भौतिक विज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है । यही वह शक्ति केन्द्र है जहाँ से मस्तिष्क शरीर का नियन्त्रण करता है और विश्व में जो कुछ भी मानवकृत विलक्षण विज्ञान दिखायी देता है, उनका सम्पादन करता है ।

आत्मा या चेतना जिन अणुओं से अपने को अभिव्यक्ति करनी है, वह यह प्रकाश अणु ही है, जबकि आत्मा स्वयं उससे भिन्न है । प्रकाश-अणुओं को प्राण, विधायक शक्ति, अग्नि, तेजस् कहना चाहिए । वह जितने शुद्ध, दिव्य और तेजस्वी होंगे, व्यक्ति उतना ही महान तेजस्वी, यशस्वी, वीर, साहसी और कलाकार होगा । महापुरुषों के तेजोवलय उसी बात के प्रतीक हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जबकि निकृष्ट कोटि के व्यक्तियों में यह अणु अत्यन्त शिथिल, मन्द और काले होते हैं । हमें चाहिए कि हम इन दूषित प्रकाश अणुओं को दिव्य अणुओं में बदलें और अपने को भी महापुरुषों की श्रेणी में ले जाने का यत्न करें ।

गायत्री उपासना में सविता देवता का ध्यान करने की प्रक्रिया इसीलिए की जाती है कि अन्तर के कण-कण में संव्याप्त प्रकाश आभा को अधिक दीप्तमान बनने का अवसर मिले । अपने ब्रह्म रन्ध्र में अवस्थित आदित्य सहस्र दल कमल को खिलाये और उसकी प्रत्येक पंखुरी में सन्निहित दिव्य कलाओं के उदय का लाभ साधक को मिले ।

ब्रह्म विद्या का उदगाता 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की प्रार्थना में इस दिव्य प्रकाश की याचना करता है । इसी की प्रत्येक जाग्रत आत्मा को आवश्यकता अनुभव होती है । अस्तु गायत्री उपासक अपने जप प्रयोजन में इसी ज्योति को अन्तः भूमिका में अवतरण करने के लिए सविता देवता का ध्यान करता है ।

आनन्द और उल्लास का अजस्र निर्झर : कारण शरीर

मनुष्य का कारण शरीर भाव संस्थान कहलाता है । यह वह खदान है, जिसमें प्रत्यक्ष और परोक्ष आनन्द के स्रोत उमगते रहते हैं । भावनाओं में सर्वप्रमुख है—आत्मीयता । इसका प्रकाश जिस व्यक्ति या वस्तु के ऊपर जितनी सघनता के साथ सम्बद्ध किया जाता है, वह उतना ही प्रिय लगने लगता है, प्रिय ही नहीं अपना भी । यह आत्मीयता का चमत्कार है । वस्तुतः सभी वस्तुएँ चलती बदलती रहती हैं, साथ ही निर्जीव भी हैं । ऐसी दशा में वे अपनी विशेषताओं के कारण प्रिय लगें—लगती रहें, यह सम्भव नहीं । व्यक्तियों के सम्बन्ध में भी यही बात है । उनका स्वभाव, स्तर, रुझान एवं व्यवहार बदलता रहता है । विवाह के दिनों में पत्नी जितनी मनोरम लगती है, उतनी तब नहीं जब वह रुग्ण, दुर्बल या वयोवृद्ध हो जाती है । विग्रह या तलाक हो जाने पर तो उसकी चर्चा भी नहीं सुहाती । यह भावात्मक परिवर्तन क्यों होता है ? उसमें प्रिय पदार्थों या प्रिय जनों में परिवर्तन आना ही कारण नहीं है । अपनी आत्मीयता की घनिष्ठता की, रुझान की कमीबेशी भी इसका कारण होती है ।

किसी पदार्थ या प्राणी का प्रिय, अप्रिय, नीरस, सरस लगना इस बात के ऊपर निर्भर करता है कि हम उसे कितना चाहते हैं, किस हद तक अपना समझते हैं । उद्गम अपना अन्तराल है । वस्तुओं की उपयोगिता, अनुपयोगिता भी इसी कसौटी पर कसी जाती है । जिन्हें पराया समझा जाता है, उनके प्रति उपेक्षा भाव ही रहता है । अपनी अँगूठी खो जाने पर दुःख होता है किन्तु पड़ोस में रहने वाले जौहरी की दुकान से सारे रत्न-आभूषण चोरी चले जाने पर दुःख नहीं, लोकाचार जैसा कौतूहल मात्र होता है । यद्यपि अँगूठी की तुलना में वे रत्नाभूषण अधिक सुन्दर भी थे और अधिक कीमती भी । पर उनके साथ आत्मीयता जुड़ी न होने से कोई हर्ष-विषाद नहीं होता ।

कोई कितना प्रिय या अप्रिय लगता है ? इसका आधार उसकी विशेषताएँ नहीं, वरन् यह है कि अपनी आत्मीयता की भावना उसके साथ किस कदर जुड़ी, चिपकी एवं घनीभूत हुई है । इस तथ्य के समझ लेने के उपारान्त प्रिय वस्तुओं या व्यक्तियों की तलाश नहीं करनी पड़ती । वे अपने आप में कुछ भी नहीं हैं । हमी अपने आरोपण के अनुरूप उन्हें वैसा बनते हैं जैसा कि वे प्रतीत होते हैं । पदार्थ अपने आप में जड़ पदार्थों का ढेला ढकोलसा मात्र है । इसी कारण वेदान्त तत्व-दर्शन में संसार को माया मिथ्या कहा गया है । स्वप्नवत् बताया गया है, और रज्जू-सर्प का उदाहरण देकर अपनी मान्यता को ही सब कुछ कहा गया है ।

जीवित व्यक्ति भी सम्बन्धों के अनुसार किसी का पुत्र, किसी का पिता, किसी का मित्र और किसी का शत्रु होता है । कोई उसे व्यापारी, पहलवान, चिकित्सक, विद्वान, सज्जन, आदि के रूप में देखता है, तो किसी की मान्यता उसके सम्बन्ध में ठीक उलटी या उपेक्षा भरी होती है । ऐसी दशा में यह निर्णय करना कठिन है कि सामने वाला वस्तुतः क्या है ? उसमें अनेक विशेषताएँ भी हैं और अनेक त्रुटियाँ भी । जिस पक्ष को उघाड़ा जाय, उजागर किया जाय वही भासने लगता है । जिसके सम्बन्ध में जितनी अनभिज्ञता है वह उतना ही गया गुजरा प्रतीत होता है । अनाड़ी के लिए हीरे काँच के टुकड़े में कोई अन्तर नहीं । हीरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वयं क्या है ? इसका मूल्यांकन किसी वैज्ञानिक द्वारा कराया जाय तो, वह उसे पका हुआ कोयला भर सिद्ध करेगा । जौहरी का मूल्यांकन सर्वथा दूसरा है ।

नेत्र चले जाने पर संसार के समस्त दृश्यों का लोप हो जाता है । श्रवण शक्ति न रहे तो समस्त विश्व में नीरवता भर शेष रह जायेगी । मस्तिष्क विकृत हो जाने पर हर किसी को विक्षिप्तों जैसे आचरण करते पाया जायेगा । अपनी मृत्यु हो जाने पर सभी प्रसार-प्रस्तर की समाप्ति समझी जा सकती है । अपनी सत्ता एवं मान्यता ही सब कुछ है । अपने इष्ट के प्रति श्रद्धा, विश्वास संजोया जाता है, किन्तु दूसरे की विपरीत मान्यता को असत्य कहा और उपहास उड़ाया जाता है । यहाँ यह निर्णय करना कठिन है कि वास्तविकता किस पक्ष के साथ है, यह भी हो सकता है कि दोनों ही पक्ष रंगीली कल्पनाओं की उड़ानें उड़ रहे हों ।

प्रश्न भाव सम्वेदनाओं के आधार पर आनन्द का रसास्वादन करने का है । इस सन्दर्भ में वस्तुओं या व्यक्तियों को टटोलना व्यर्थ है, वे सभी दर्पण की तरह हैं, जिनमें हम अपनी ही छवि देखते हैं । गुम्बज में अपनी ही प्रतिध्वनि गूँजती है । प्रकाश में होकर गुजरते हुए अपने ही प्रतिच्छाया साथ चलती है । यदि अन्तःकरण नीरस हो तो हर कहीं नीरसता ही भरी दिखायी देती है । स्वार्थी के लिए समस्त संसार स्वार्थपरायण है । अविश्वासी यह तक सिद्ध नहीं कर सकते कि हमारा वास्तविक पिता कौन है ? माता का यह कथन ही इस निमित्त प्राणाणिक मानकर चलना पड़ता है । पर उसमें भी सन्देह या अविश्वास करने की पूरी-पूरी गुंजाइश है । दृश्य-जगत पदार्थ विज्ञानी की दृष्टि में अणु-परमाणुओं का जखीरा भर है, किन्तु भावुक भक्त उसे परब्रह्म का विराट स्वरूप होने का पूरा और पक्का विश्वास करते हैं ।

पदार्थों में, प्राणियों में, सुन्दरता, सरसता ढूंढ़ना व्यर्थ है । अपना आत्मभाव ही उनके साथ लिपटकर प्रिय लगने की स्थिति विनिर्मित करता है । इस अपनेपन को यदि संकीर्णता के सीमा बन्धनों में बाँधा जाय तो आत्मीयता का प्रकाश विशाल क्षेत्र को आच्छादित करेगा और सर्वत्र अनुकूलता, सुन्दरता, बिखरी पड़ी दीखेगी । परिवार को, शरीर को ही अपना न मानकर यदि प्राणि समुदाय पर, प्रकृति विस्तार पर उसे बिखेरा जाय तो दृष्टिकोण बदलते ही बहिरंग क्षेत्र में आनन्द भरा हुआ प्रतीत होगा । सब कुछ परमप्रिय, परम सुन्दर लगेगा । प्रकृति की विशालता को यदि सुन्दरता की दृष्टि से देखा जाय तो हरे-भरे खेत, सघन-जंगल, ऊँचे पर्वत, दौड़ते बादल, भरे-पूरे जलाशय अतीव सुन्दर लगेंगे । कुदकते-चहकते पशु पक्षी सजीव खिलौनों की तरह क्रीड़ा कल्लोल करते हुए मन को विमोहित करेंगे । समूची सृष्टि अपनी है, यह मान्यता अपनाने में तनिक भी अवास्तविकता नहीं है । संसार के साथ हम और हमारे साथ संसार का अविच्छिन्न सम्बन्ध है । उसमें आत्मीयता का पुट भी गहरा लगा दिया जाय तो यह समूचा-जगत विशालकाय कलाकृति की तरह मनोरम दृष्टिगोचर होगा और उसे निरखते-परखते उल्लास का ठिकाना न रहेगा ।

दूसरों से अनुकूलता प्राप्त करने की कामना लेकर जिस तिस से अनुग्रह करने की याचना करना व्यर्थ है । इस मृगतृष्णा में भटकते रहने पर थकान और खीज ही हाथ लगेगी । क्यों हम विशाल विश्व पर आत्म भाव की वर्षा करें और बदले में इसे बसन्ती फूलों से खिला मुसकराता देखें ।

सुन्दर, सुयोग्य और अनुवर्ती अनुचर ढूँढ़ना व्यर्थ है । आत्म भाव की उदात्त-मान्यता अपनाकर सभी पर नये सिरे से दृष्टिपात करें और बदले हुए संसार का सुहावना चित्र आनन्द विभोर होकर देखें । दूसरों को अपने अनुकूल बनाना कठिन है । पर अपने को ऐसा बनाया जा सकता है कि सह-सौजन्य प्रदान करते हुए सन्तोष और आनन्द से अपना अन्तःकरण भर ले । विराट विश्व को श्रद्धा सम्वेदना से देखते हुए हर घड़ी विश्व ब्रह्माण्ड में परब्रह्म की झाँकी करते रहने का अमृतोपम रसास्वादन किया जा सकता है ।

कारण शरीर की एक मात्र उपलब्धि है, बहिरंग और अन्तरंग जीवन का आनन्द । इसकी कुँजी अपने भीतर है । माँगने की अपेक्षा यदि देने की बात सोची और व्यवहार में लायी जाय तो अनायास ही भीतर का आनन्द उछलकर सर्वत्र बिखर सकता है और इतना सुहावना लग सकता है कि तथाकथित स्वर्ग को उस यथार्थता पर निछावर किया जा सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर्जगत की दिव्य शक्तियाँ

मोटी लकड़ी को जमीन में गाढ़ना कठिन है । उसके लिए जमीन में गड्ढा बनाना होता है या लकड़ी की नोंक पतली करनी पड़ती । बार-बार हर आवश्यकता के लिए अलग-अलग गड्ढे खोदने की अपेक्षा यह अच्छा है कि कोई नोंकदार उपकरण बनाकर छेद करते रहा जाय । सूई से यही प्रयोजन पूरा होता है । बरमा से भी यही काम करते हैं । इन्जेक्सन की सूइयाँ भी पतली रखी जाती हैं ।

मन की बनावट ऐसी है कि उसे आगत परिस्थितियों का सामना करने के लिए अपने स्तर की कल्पनाएँ करनी पड़ती हैं । प्रस्तुत या सम्भावित विपन्नताओं का निराकरण करना एक बात है और उपयोगी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए मार्ग खोजना भी ऐसा है, जिसके लिए मन की गति तीव्र होनी चाहिए । कल्पनाएँ करने तथा काट-छाँट करने के लिए भी कम परिश्रम नहीं करना पड़ता । इन सब प्रयोजनों के लिए तीव्रता एवं तीक्ष्णता आवश्यक भी है । यदि ऐसी संरचना न होती तो मनुष्य मन्द बुद्धि या दीर्घ सूत्री बनकर रह जाता । वह आज्ञा पालन भर कर पाता । पशुओं से अधिक उसकी प्रतिभा विकसित न होती ।

आमतौर से मन की दौड़ या पहुँच उन्हीं प्रयोजनों तक जुड़ी रहती है जो उसे रोज करने पड़ते हैं । हर मनुष्य का एक निर्धारित जीवन ढर्रा होता है । निर्वाह एवं व्यवसाय के लिए एक सीमित क्षेत्र होता है । उसी में मन को उधेड़-बुन करते रहना पड़ता है । ताँगे का घोड़ा अभ्यस्त सड़क पर ही दौड़ते रहने का आदी होता है । कोल्हू के बैल को भी एक नियत दायरे में घूमते रहना पड़ता है । अभ्यास या स्वभाव इसी आधार पर बनता है । इसके लिए कुछ विशेष प्रयत्न नहीं करना पड़ता । सामान्य क्रिया-कलाप ही सभी आवश्यक बातें सिखा लेता है और अल्प बुद्धि व्यक्ति अपने निर्धारित काम पूरे कर लेता है । नौकर मालिक की इच्छा आवश्यकता को भली प्रकार समझते हैं और अपने जिम्मे के काम नियत क्रम से पूरा कर देते हैं । भले ही वे मन्द बुद्धि ही क्यों न हों ।

किसी अनभ्यस्त विलक्षण कार्य के लिए विशेष ट्रेनिंग की आवश्यकता होती है । मनुष्य ही नहीं मन भी इसी प्रकार सधाया जाता है । आत्म-निरीक्षण, आत्म-सुधार, आत्म-निर्माण और आत्म-विकास के चार चरणों में हमारा अन्तरंग जीवन बँटा हुआ है । इसकी विधि व्यवस्था जाने बिना मनुष्य अपने अन्तःजीवन में प्रवेश नहीं कर सकता । इस प्रवेश से ही कुसंस्कारों का परिशोधन और कुसंस्कारों का अभिवर्द्धन बन पड़ता है । यही है व्यक्तित्व के निखार और आत्म-सुधार की प्रक्रिया जिसके आधार पर समुन्नत अथवा प्रगतिशील बन सकना सम्भव होता है ।

बहिरंग जीवन की परिस्थितियाँ समस्याओं और आवश्यकताओं के सम्बन्ध में हम बहुत कुछ जानते हैं क्योंकि दिनचर्या का सीधा सम्बन्ध इसी क्षेत्र में रहता है । बिगाड़ से बचाव और उत्कर्ष को अग्रगामी बनाने के लिए समूची कार्यविधि इसी में लगी रहती है । पर इससे भी महत्त्वपूर्ण क्षेत्र अन्तराल की संरचना जानने और आवश्यकता के अनुरूप उपक्रम अपनाने की आवस्यकता पड़ती है । किन्तु इस परिधि में प्रवेश करने का आमतौर से अवसर ही नहीं मिलता । इसलिए उस सन्दर्भ में अनाड़ीपन ही बना रहता है ।

बहिरंग जीवन का अन्तरंग जीवन में घनिष्ठ सम्बन्ध है । मनःस्थिति के अनुरूप परिस्थितियाँ बनती हैं । प्रतिभा भीतर से उभरती है । व्यक्तित्व भीतर से निखरता है । बाहर तो उसकी परिणति प्रतिक्रिया भर दृष्टिगोचर होती है । शरीर चर्या, अर्थ व्यवस्था, लोक व्यवहार आदि तो बहिरंग क्षेत्र से ही सबन्धित रहते हैं । उतने ही दायरे में काम करने का अभ्यास होता है । किन्तु महत्त्वपूर्ण प्रगति के लिए अन्तःक्षेत्र को समुन्नत, सुविकसित करना पड़ता है । इससे पूर्व वस्तु स्थिति को निरखना, परखना पड़ता है । वही महत्त्वपूर्ण उलट-पलट करने की आवश्यकता पड़ती है । इसके बिना कोई आध्यात्मवादी नहीं बन सकता और न आत्मोत्कर्ष का प्रयोजन करना पड़ता है ।

इस प्रयोजन के लिए सर्वप्रथम अन्तर्मुखी होना पड़ता है । जिस प्रकार शल्य चिकित्सा को भीतरी अंग अवयवों के स्वरूप और क्रिया-कलाप को समझने की आवश्यकता होती है । उसी प्रकार अन्तःक्षेत्र को समझने और सुधारने के लिए अन्तर्दृष्टि की आवश्यकता होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह सब जिस आधार पर किया जा सकता है कि, उसे अन्तर्मुखी प्रवृत्तियों का पर्यवेक्षण करने की कुशलता कहा जा सकता है । यह कुशलता एकाग्रता के सहारे सधती है । मन को बहिरंग क्षेत्र में काम करने पड़ते हैं । इसलिए जैसी कुशलता उस क्षेत्र से काम करने की होती है । वैसी अन्तरंग क्षेत्र में प्रवेश करने, स्थिति समझने तथा परिवर्तन करने की नहीं होती । इस कमी की पूर्ति इसी प्रकार हो सकती है कि अभ्यस्त बहिरंग भाग-दौड़ से रोकथाम करके उसे अन्तर्मुखी होने, भीतर की विकृतियों को टटोलने, निकालने, बढ़ाने, सुधारने, उभारने, जैसी अनेकों क्रिया-प्रतियाएँ करनी पड़ती है । इसके लिए मन को सर्वप्रथम एकाग्र करना पड़ता है, ताकि उसकी भाग-दौड़ में भीतरी नव-निर्माण में विक्षेप न पड़े ।

एकाग्रता साधना को सिद्ध करना ही योग साधनाओं में से अधिकांश का मूल प्रयोजन है । इसके लिए तीन प्रयोग ही काम में लाये जा रहे हैं और लाये जाते रहेंगे—(१) तप, (२) ध्यान और (३) प्राणामय ।

मनुष्य के तीन शरीर हैं—(१) स्थूल, (२) सूक्ष्म और (३) कारण । इन तीनों का परिमार्जन करने के लिए उपर्युक्त तीन विधियाँ अपनायी जाती हैं—स्थूल शरीर के लिए जप, सूक्ष्म शरीर के लिए ध्यान और कारण शरीर के लिए प्राणायाम । इन तीनों में से प्रत्येक की कई-कई विधियाँ हैं । उनमें से अपने मार्गदर्शक की की छत्र छाया में किन्हीं का भी उपयोग किया जा सकता है ।

भौतिक जगत की शक्तियाँ वे हैं, जो प्रत्यक्षतः दृष्टिगोचर होती हैं । आत्मिक शरीर की उपस्थिति तीन क्षेत्रों में है, (१) मस्तिष्क (२) हृदय (३) जननेन्द्रिय मूल (मूलाधार) इनमें अतीन्द्रिय क्षमताओं, सिद्धियों का निवास है । मस्तिष्क के मध्य ब्रह्मरन्ध्र में सहस्रारचक्र है । उसे उत्तरी ध्रुव चुम्बक की समता दी गई है । जिस प्रकार पृथ्वी उत्तरी ध्रुव के माध्यम में ब्रह्माण्डव्यापी अन्तर्ग्रही शक्तियों को खोजती और जो काम के योग्य है उन्हें पकड़ लेती है । उसी प्रकार सहस्रार चक्र का आध्यात्मिक ध्रुव केन्द्र परब्रह्म की दिव्य शक्तियों की देव विभूतियों को आकर्षिक करती और अन्तःचेतना में धारण करती है । यही है वह शक्ति स्रोत, जिसमें कोई भी अपनी पात्रता के अनुरूप देवत्व धारण कर सकता है और महामानव, देवात्मा ऋषि एवं अवतार बन सकता है ।

अन्तःचेतना का विकास-परिष्कार

चेतना के समुद्र में काफी गहराई तक अनेक समृद्धियाँ भरी पड़ी हैं । इन्हें अतीन्द्रिय क्षमताएँ भी कहा जाता है । जिस प्रकार वैभव का धनी अपना ठाट बाट बना सकता है और दूसरों को भी सहायता देकर निहाल कर सकता है, उसी प्रकार चेतना को योगाभ्यास और तप साधना द्वारा इतना परिष्कृत किया जा सकता है कि, साधक हर किसी को चमत्कृत कर सके, अनेकों को विशेष लाभ दे सकने का द्वार खोल सके, स्वयं सिद्ध पुरुषों जैसा देवोपम जीवन जी सके । यह सफलता उपासना विज्ञान के अवलम्बन से, उसे श्रेष्ठ मार्गदर्शन एवं दैवी संरक्षण में किए जाने पर ही मिलती है । चेतना के उदात्तीकरण की इस प्रक्रिया हेतु, प्रारम्भ से ही उच्चस्तर की साधनाओं के लिए किसी को नहीं कहा जाना चाहिए, न किसी को वैसा दुस्साहस ही करना चाहिए । यही व्यावहरिक है । संजीवनी विद्या वाले पक्ष को जीवन में उतार कर यदि अपने को सुविकसित कर लिया जाता है, तो अन्तराल की गहराई में छिपे पंचकोषों, षट्चक्रों, उपत्यिकाओं, गुच्छकों को उभारनेवाली और अनेक ऋद्धि-सिद्धियों को सामने उपस्थिति करने वाली विभूतियों का अर्जन सम्भव भी हो जाता है और सरल भी ।

प्रत्यक्ष शरीर की व्यावहारिक साधना का प्रसंग चलने पर मानवी सत्ता के तीन पक्ष दृष्टिगोचर होते हैं । जैसे केले के तने में एक के भीतर दूसरी पर्त होती है, ऐसे ही शरीर में क्रिया तन्त्र रूपी काय-कलेवर, विचार तन्त्र रूपी मनःक्षेत्र एवं भाव तन्त्र रूपी अन्तःकरण इन तीन की सत्ता समाई हुई है । इन्हें आध्यात्मिक शब्दावली में क्रमशः स्थूल शरीर, सूक्ष्मशरीर और कारण शरीर कहा गया है । तीनों के मिलने से ही समग्र मनुष्य बनता है । इन्हें सुवकसित बनाने के लिए जो अनुशासन अपनाना पड़ता है, उसे आध्यात्मशास्त्र, तत्व दर्शन या उपासना विज्ञान कहते हैं ।

हम प्रायः स्थूल काया से परिचित हैं, उसी को सब कुछ समझते हैं । उसी के लिए सोचते हैं और करते रहते हैं । अपनी समग्रता उसी में समाहित देखते हैं । इसलिए जो कुछ सोचा करते हैं, वह उसी परिधि की स्वार्थ साधना के निमित्त होता है । वासनाएँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी क्षेत्र में धुंध की तरह छायी रहती हैं । शरीर का ही एक भाग मन है । उसे ग्यारहवीं इन्द्रिय कहा जाता है । इन्द्रियाँ अपने भोग तलाशती रहती हैं । मन का विचार तन्त्र लिप्साग्रस्त होकर लोभ, मोह और अहंता की पूर्ति हेतु ताने-बाने बुनता रहता है । समूची क्रिया शक्ति इसी परिधि में समाप्त हो जाती है । वह एक भी काम बन नहीं पड़ता, जिसके लिए सृष्टा ने अपनी इस सर्वोपरि कलाकृति को धरोहर के रूप में सुपुर्द किया है । आत्म परिष्कार के बिना न पुण्य परमार्थ सधता है, न लौकिक सिद्धियों एवं आत्मिक ऋद्धियों का द्वार खुलता है ।

आध्यात्म-विज्ञान का अनुशासन है कि स्थूल शरीर पर अंकुश, नियन्त्रण रखा जाय । उसे संयम बरतने के लिए संकल्पपूर्वक विवश किया जाय । इसके लिए तपश्चर्या अपनानी होती है । बड़े उद्देश्यों के लिए योगी यती पंचाग्नि विद्या जैसी प्रत्यक्ष और परोक्ष तपश्चर्या करते हैं । किन्तु सर्वासाधारण के लिए तो उसे सुलभ स्तर पर सीमित मात्रा में लागू किया जा सकता है । हलकी तपश्चर्या को संयम साधना कहते हैं ।

संयम के चार भाग बताए गए हैं—(१) इन्द्रिय संयम (२) समय संयम, (३) अर्थ संयम, (४) विचार संयम । इन्द्रिय संयम में चटोरापन और कामुकता से पीछा छुड़ाया जाता है और वाणी को साधा जाता है । समय संमय में जागने से सोने तक का सुव्यवस्थित कार्यक्रम बनाना और उस पर दृढ़तापूर्वक चलना होता हैं । अर्थ संयम में अपव्यय के हर पक्ष की रोकथाम करनी पड़ती है । अहंकारी प्रदर्शन से बचकर 'सादा जीवन उच्च विचार' का आदर्श हृदयंगम करना पड़ता है । विचार संयम का तात्पर्य है कि कल्पनाओं को स्वच्छन्द उड़ानें न भरने दें । मात्र सामने प्रस्तुत उपयोगी प्रयोजनों का ताना-बाना बुनने तक ही विचारणाओं को सीमा बद्ध रखा जाय ।

छलनी में दूध दुहकर सारा दूध जमीन पर गिरा देने जैसी मूर्खता हमें नहीं करनी चाहिए । असंयमों को छिद्र कहा जाता है । अभ्यास में आ जाने पर ईश्वर प्रदत्त अनुदान और स्व उपार्जित वैभव इन्हीं असंयम रूपी छिद्रों में से बहकर बर्बाद हो जाता है । असंयमी पर आलस्य छाया रहता है, कुकल्पनाओं और दुर्व्यसनों का आवेश चढ़ा रहता है । परिणामस्वरूप व्यक्ति—सुरदुर्लभ मनुष्य जीवन की गरिमा गिराता है और उसके सहारे मिल सकने वाली उपलब्धियों से वंचित रह जाता है । संजीवनी विद्या के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य है कि इन विडम्बनाओं से बच कर चारों प्रकार के संयमों को अपनाकर विभूतियाँ जगाए और उन्हें सद्प्रयोजनों के लिए ही लगाया जाय ।

व्यवहारिक आध्यात्म की निष्ठापरक चार धारणाएँ और भी हैं—(१) समझदारी, (२) ईमानदारी, (३) जिम्मेदारी, (४) बहादुरी । इन्हीं को अपनाते हुए साधक सामान्य स्तर का जीवनयापन करते हुए भी असंख्यों के लिए अनुकरणीय-अभिनन्दनीय बनता है । यह भी ऐसी सम्पदाएँ हैं, जिनका प्रतिफल तृप्ति, तुष्टि, शान्ति के रूप में मिलता है । जीवन में आध्यात्म अनुशासनों का समावेश कितने चमत्कारी प्रतिफल देता है, इसे तीनों शरीरों की साधना के माध्यम से प्रत्यक्षतः जीवन में कायाकल्प के रूप में देखा जा सकता है ।

मनुष्य के तीनों ही शरीर एक से एक अधिक शक्तिशाली हैं; किन्तु प्रत्यक्ष शरीर की तुलना में सूक्ष्म की महत्ता कहीं अधिक होती है । वैज्ञानिक, चिकित्सक, एडवोकेट, आर्टिस्ट, साहित्यकार, कलाकार, इंजीनियर आदि बुद्धि कौशल के आधार पर प्रख्यात भी होते हैं, सम्मान पाते और सम्पन्न बनते हैं ।

विचार शक्ति का जितना गुणगान किया जाय, उतना ही कम है । मनःक्षेत्र एक बाजीगर है । यही काया के अंग प्रत्यंगों को कठपुतली की तरह नचाता और उनसे भले-बुरे काम कराता रहता है । उसे साधना के माध्यम से परिष्कृत एवं सशक्त बनाया जा सकता है । मनोबल के आधार पर ही व्यक्तित्व निखरता है । प्राणवान आत्मबल सम्पन्न व्यक्ति ही प्रतिभावान बनते हैं और अपनी प्रखरता, प्रामाणिकता के आधार पर असंख्यों का कल्याणकारी नेतृत्व करते हैं ।

सूक्ष्म शरीर मनुष्य की काया में प्राण शक्ति के रूप में नापा व आँका जा सकता है । वह प्राण विद्युत से भरा है । शरीर के चारों ओर, विशेषतया चेहरे पर तेजोबलय के रूप में इसे देखा जा सकता है । प्रतिभा-प्रखरता, साहसिकता के रूप में उसकी विशिष्टता को न्यूनाधिक मात्रा में देखा जाता है । यही जैव चुम्बकत्व भी है, जो अपने प्रभाव से आस-पास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वालों को आकर्षित, प्रभावित करता है । सत्संग-कुसंग की प्रतिक्रिया के रूप में इसके प्रभाव को प्रकट होते हुए देखा जा सकता है । मन और प्राण का समन्वय ही सूक्ष्म शरीर है । उसमें व्यवहारिक जीवन में असाधारण काम कर दिखाने की सामर्थ्य तो है ही, इसके अतिरिक्त अतीन्द्रिय क्षमताओं का भी वहीं भण्डार है । यह दिव्य शक्तियाँ प्रायः प्रसुप्त स्थिति में रहती हैं । इन्हें जाग्रत किया जा सके तो, वे हर क्षेत्र में चमत्कार दिखाती हैं ।

सूक्ष्म शरीर की व्यवाहारिक साधना तो मनोविकारों से छुटकारा पाने के प्रयत्नों से ही पूरी हो जाती है । हल्की-फुल्की हँसती-हँसाती जिन्दगी उतने भर से ही बन जाती है । उद्वेगों महत्त्वाकांक्षाओं, आक्रोशों, अवसादों की अनेक मानसिक व्याधियों से छुटकारा मिल जाता है । इसके अतिरिक्त प्रसन्न मुख रहने की आदत चेहरे का सौन्दर्य अनेक गुना बढ़ा देती है, भले ही नख-सिख की दृष्टि से बनावट कुरूप ही क्यों न हो । शरीरगत सशक्तता को ओजस् और मानसिक शक्ति को तेजस् कहते हैं । ओजस् की अपेक्षा तेजस् की सूक्ष्मता की सामर्थ्य अनेक गुनी मानी गई है । जिसने सूक्ष्म शरीर विकसित कर लिया, समझना चाहिए कि कोई सामर्थ्यवान-देव सिद्ध कर लिया और उसकी असाधारण सहायता निरन्तर प्राप्त करते रहने का सुयोग प्राप्त कर लिया । प्रसुप्त एवं अनगढ़ स्थिति में तो वह शरीर यात्रा एवं अनगढ़ कल्पनाओं में ही अपनी क्षमता का समापन करता रहता है । इस हीरक हार को आम आदमी तो काँच के टुकड़ों वाला कूड़ा-करकट ही समझता है ।

कारण शरीर समग्र कायसत्ता का अंतिम तीसरा शरीर है । इसे यों प्रथम भी कहा जा सकता है, क्योंकि वह आत्मा और परमात्मा के मध्यवर्ती झीनी चादर का काम करता है । इसकी पृष्ठभूमि पर ही परब्रह्म का, ब्रह्माण्डीय चेतन धारा का अवतरण होता है । व्यावहारिक भाषा में यह भाव-शरीर है, इसमें सबल सम्वेदनाएँ निवास करती हैं । आत्मीयता, करुणा, मैत्री, सेवा, सहायता, सम्वेदना का इसे केन्द्र कहा जा सकता है । उत्कृष्ट आदर्शवादिता भी उसी में जड़ जमाये रहती है । जब यह क्षेत्र विकसित होता है तो नन्दनवन के कल्प वृक्ष, उपवन की तरह सुन्दर और लाभदायक सिद्ध होता है ।

आत्मीयता जिस वस्तु या व्यक्ति के साथ जुड़ती है उसी को परम प्रिय आनन्ददायक बना देती है । भगवान के साथ भक्ति के रूप में जब वह जुड़ती है तो प्रभु सान्निध्य जैसी दिव्य अनुभूति होती है । स्वजन सम्बन्धी में वह प्रेम भावना बनती है । प्रियपात्र की समीपता सदा आनन्ददायक लगती है । उस आत्म भाव का विस्तार, विराट् ब्रह्म के साथ जुड़ने से ही सम्भव होता है । 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' और 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की आस्था जब प्रगाढ़ होती है, तब संसार का कण-कण देवता जैसा अनुभव होने लगता है । भाव सम्वेदनाओं को आदर्शवादिता के साथ जोड़ते हुए, उन्हें उभारना ऐसी ही है, मानो हर घड़ी सोमपान का, अमृत तत्व के रसास्वादन का अवसर मिल रहा हो ।

साधारण रूप से यह समझा जाता है कि ऐसा आनन्द तो मरने के बाद, स्वर्ग-मुक्ति प्राप्त होने पर ही मिल सकता है । पर यदि परायेपन की नीरसता को जीता जा सके, तो सर्वत्र आत्म तत्व ही बिखरा दीखता है और प्रभु मिलन जैसा सरस अनुभव बराबर होता रहता है । भाव सम्वेदनाएँ जिस उद्गम से उभरती हैं, उसे गंगोत्री, गोमुख जैसा पावन बनाती हैं वह धारा जब अग्रगामी होती है तो सारे सम्पर्क क्षेत्र को सरसता से, शीतलता से ओत-प्रोत करती है । इसका प्रत्यक्ष स्वरूप सेवा-साधना के रूप में प्रकट होता है । इसे दैवी उपहार ही कहा जा सकता है । देवताओं के मानस एवं क्रिया-कलाप सदा सर्वदा वरदान, अनुदान, बरसाने वाले ही होते हैं । जिनका भाव क्षेत्र सम्वेदनशील हो चला है, वे देव मानव भी इसी आत्मीयता भरी सेवा साधना को अपनी जीवन धारा बनाते हैं । इसी आधार पर दिव्य आनन्द का लाभ प्राप्त करते हैं ।

कारण शरीर कहा जाने वाला भाव क्षेत्र यदि विकसित हो उठे तो, शरीर के साथ सच्चा प्यार करने, उसे स्वस्थ सक्रिय बनाने का विवेक जगाता है । परिवार के प्रति उच्च स्तरीय भाव जगे, तो उसके सदस्यों को सद्गुणी बना कर उज्ज्वल भविष्य को गढ़ने का प्रयास चल पड़ता है । मित्र, पड़ोसी, सम्बन्धियों को विचार परिष्कार की प्रेरणा मिलती है तथा उनका वास्तविक हित साधन करने के लिए जी उमंगता है । पाप,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनाचार, छल, प्रपंच के लिए तो पैर उठते ही नहीं । इस स्थिति में न केवल अपना अन्तःकरण आनन्द से ओतप्रोत होता है, वरन् सम्पर्क क्षेत्र में भी वह अमृत वर्षा होती देखी जा सकती है । प्रकृति, पदार्थ एवं दृश्य भी चित्र जैसे सुन्दर और खिलौने जैसे मनमोहक लगने लगते हैं । इन उपलब्धियों का संयोग ऐसा मंगलमय है कि अपने को स्वर्ग में पहुँचाने या स्वर्ग को अपने अन्दर प्रकट कर लेने जैसी अनुभूति होने लगती है ।

उच्च स्तरीय किन्तु सरल साधनाएँ

स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीरों का अस्तित्व भिन्न होने पर भी तीनों परस्पर जुड़े हुए हैं । एक शरीर जिस स्थान पर दूसरे से जुड़ता है, उसे ग्रन्थि या चक्र भी कहते हैं । पहला दरवाजा मकान के प्रवेश पर होता है, उसे खोलकर ही मकान के अन्दर की यथार्थ स्थिति को समझा जा सकता है । मकान के अन्दर भी दूसरा ताला, अलमारी पर लगा होता है । सामान्य वस्तुएँ तो घर के बाहर फैली रहती हैं; पर विशिष्ट वस्तुओं को अलमारी या तिजोरी के अन्दर रखने का विधान है । कीमती आभूषण तिजोरी के अन्दर भी किसी तीसरे आवरण में—लॉकर में रखे जाते हैं । इतने दरवाजे खोल लेने पर ही वहाँ तक पहुँचा जा सकता है ।

ब्रह्म की वैभव विभूतियों को इसी तरह कारण शरीर के अन्तराल में छिपा कर रखा गया है । जो इन तालों को खोल सकता है, वही उन्हें प्राप्त कर सकता है । आध्यात्मिक भाषा में इसी को ग्रन्थि या चक्र वेधन कहते हैं । इसके लिए कुछ विशिष्ट क्रियाएँ और अभ्यास करने पड़ते हैं । यह क्रियाएँ ही साधना उपचार या योगाभ्यास कहलाती हैं । हठयोग में इन साधनाओं को समर अर्थात् युद्ध कहा गया है । इन साधनाओं में कोई त्रुटि रह जाय तो वह हानिकारक हो सकती है । इसलिए कठिन साधनाओं का आग्रह हर किसी को नहीं करना चाहिए । सिद्ध महापुरुष ऐसे शिष्यों को स्वयं तलाशते हैं । रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द, स्वामी विरजानन्द ने स्वामी दयानन्द, महेन्द्रनाथ ने गोरखनाथ को स्वयं तलाश कर उच्च स्तरीय साधनाएँ कराई थीं । यह उत्तरदायित्व तो प्रवर्तक पर छोड़ना चाहिए । वह जिसे चाहेंगे उसे स्वयं ही यह कठोर साधनाएँ कराएँगे ।

विभूतियाँ प्राप्त करने का एक सौम्य उपाय भी है । अधिकारों के लिए कानूनी लड़ाई की अपेक्षा अनुग्रह प्राप्त करके, अपने माता पिता से उत्तराधिकार प्राप्त कर लेना हर किसी के लिए सरल और सुगम होता है । तीनों शरीरों की वैभव विभूतियाँ प्राप्त करने की ऐसी ही रीति-नीति शान्ति कुँज द्वारा विकसित की गई है । इसमें साधकों का अपना प्रयत्न पुरुषार्थ तो नाम मात्र का होगा; पर यहाँ के वातावरण का, समर्थ गुरुदेव के अनुग्रह का योगदान इतना होगा, जिसके सहारे सामान्य स्तर के साधक भी, मात्र अपनी जीवनचर्या में परिवर्तन करके अधिकतम अभीष्ट लाभ प्राप्त कर सकेंगे । सरल, सौम्य साधनाओं का प्रारम्भिक अभ्यास नौ दिन तक शान्ति कुँज में कराया जाता है, जिसे अपने घरों पर रहकर भी किया जा सकता है और धीरे-धीरे लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है ।

उच्च स्तरीय साधनाओं का उद्देश्य तीनों शरीरों में छिपी हुई दिव्य क्षमताओं को उभारना और उनका प्रभाव पूर्ण उपयोग करना होता है । व्यक्तिगत प्रचण्ड साधना, अथवा दिव्य अनुदान, दोनों ही क्रमों से उन्हें प्रभावित, जाग्रत किया जा सकता है । इस प्रक्रिया के लिए उनसे सम्बद्ध केन्द्रों, कमल चक्रों का प्रयोग करना लाभप्रद होता है । स्थूल शरीर का केन्द्र नाभि कमल, सूक्ष्म का हृदय कमल तथा कारण शरीर का केन्द्र सहस्रार कमल हैं । इन्हीं के जागरण से क्रमशः प्राण प्रवाह, ज्ञान प्रवाह, भाव प्रवाह पैदा होते हैं, सशक्त बनते हैं ।

स्थूल शरीर की सुन्दरता, सक्रियता, समार्थ्य आदि सभी विशेषताएँ प्राण से जुड़ी है । उसके बिना तो चमड़ी, माँस, रक्त, सब सड़ांध फैलाते हैं । उन्हें देखने से अरुचि पैदा होती है । शरीरगत प्राण तत्व और अन्तःकरणगत आत्म तत्व के संयोग से मनस्तत्व बनता है । साधना के प्रभाव से प्राण तत्व 'ओजस्' मनस्तत्व 'तेजस्' और आत्म तत्व वर्चस के रूप में प्रकट होता है । नाभि कमल का क्षेत्र मूलाधार चक्र तक है । इस क्षेत्र में स्थित महा शक्ति को कुण्डलिनी भी कहा जाता है । इस शक्ति की उपलब्धि वृद्धि है । सामान्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति में यह केवल पाचन और प्रजनन का ही काम करती है । इस स्थिति में वृद्धि शरीर पोषण तथा वंश वृद्धि तक ही सीमित रहती है । पर जब यह जागती है तो छः ऊर्जा स्रोतों षट्चक्रों को वेधती हुई सहस्रार तक जा पहुँचती है । इसे शिव से शक्ति का मिलन कहते हैं । तब ओजस् के रूप में चमत्कारी वृद्धि होती है ।

जिस प्रकार स्थूल शरीर के केन्द्र नाभि कमल का क्षेत्र मूलाधार तक है, वैसे ही सूक्ष्म शरीर के केन्द्र हृदय कमल का क्षेत्र आज्ञा चक्र तक है । इस क्षेत्र की उपलब्धि है 'सिद्धि' । सामान्य स्थिति में इस क्षेत्र से केवल प्राण संचार, जीवन रक्षा जैसे प्रयोजन सिद्ध होते हैं । जाग्रत होने पर अतीन्द्रिय शक्तियों का विकास, यश, गौरव का अनुपम विस्तार होता है ।

कारण शरीर सहस्रार कमल ब्रह्मरंध्र से सम्बद्ध है । इस चक्र का क्षेत्र ब्रह्माण्डव्यापी ब्रह्मी चेतना तक है । इसकी उपलब्धि ऋद्धि है । सामान्य स्थिति में इसके प्रभाव से सर्व समर्थ सत्ता हल्की स्मृति भर बनी रहती है । अपनी महानता का हल्का सा बोध बना रहता है । इस क्षेत्र के जागरण से, सत् चित् आनन्द से एकत्व की अनुभूति होने लगती है । वृद्धि, सिद्धि और ऋद्धि के भंडार साधना से ही खुलते हैं, और मनुष्य नर से नारायण, पुरुष से पुरुषोत्तम बन सकता है ।

तीनों शरीरों के जागरण की परम्परागत साधनाएँ बड़ी कठिन, दुरूह हैं । समय की आवश्यकता देखते हुए पूज्य गुरुदेव ने सर्वसुलभ साधना क्रम विकसित किया है । शान्ति कुँज के साधना सत्रों में उन्हीं का प्रशिक्षण दिया जाता है, अभ्यास कराया जाता है । स्थूल शरीर के लिए जप योग, सूक्ष्म के लिए प्राण योग और कारण के लिए ध्यान योग का निर्धारण है । इसे अखण्ड ज्योति के जनवरी अंक के कुण्डलिनी योग-ग्रन्थि भेदन एवं अप्रैल अंक की 'कुण्डलिनी केन्द्र की साझेदारी' का सुगम संस्करण समझा जा सकता है । मार्च की अपनों से अपनी बात में जिन नौ दिवसीय सत्रों की घोषणा की गई है, उनमें यही साधनाएँ सिखायी एवं करायी जायेंगी ।

गायत्री जप सर्वश्रेष्ठ कहा गया है । प्राण को चिनगारी से ज्वाला बना देने की इसमें चमत्कारी क्षमता है । शरीर के ऊर्जा केन्द्रों पर इसके अक्षरों के भाव भरे उच्चारण का सीधा प्रभाव पड़ता है । जैसे टाइप राइटर की चावी दबाने से सम्बन्धित अक्षर टाइप होता है, वैसे ही इसके अक्षरों के उच्चारण का, सम्बन्धित केन्द्रों पर सीधा दबाव पड़ता है । शरीरगत प्राण शुद्ध और प्रखर बनकर, सौन्दर्य, शक्ति सामर्थ्य, आरोग्य सभी को बढ़ाता है । इन सत्रों में गायत्री मन्त्र के २४००० जप का अनुष्ठान कराने की व्यवस्था है ।

सूक्ष्म शरीरों की तेजस्विता के लिए प्राणाकर्षक प्राणायाम का निर्धारण है । तीर्थ में युग ऋषि के प्राण अनुदानों को इस माध्यम से साधक बड़ी मात्रा में धारण कर सकता है । पहले प्राण के सरोवर में स्थित होने का भाव किया जाता है । फिर श्वाँस खींचते हुए दिव्य प्राण के प्रवेश का बोध किया जाता है । श्वाँस रोकते हुए दिव्य प्राण शरीर में सोखे जाने का भाव तथा श्वाँस निकालते हुए अन्तरंग की मलीनता बाहर निकलने का बोध किया जाता है । इसे १० मिनट से प्रारम्भ करके क्रमशः आधे घण्टे तक बढ़ाया जा सकता है । इससे मेधा, प्रज्ञा, विवेकशीलता, प्रखरता जैसी तेजस्विताएँ बढ़ती हैं ।

कारण शरीर सहस्रार कमल के विकास के लिए सूर्य की स्वर्णिम आभा का ध्यान किया जाता है । वह दिव्य प्रवाह, रोम-रोम में कण-कण में समाता हुआ देखा जाता है । स्वर्णिम प्रकाश और आत्मज्योति एक रूप होते अनुभव होते हैं । श्रद्धा सम्वेदनाओं, सद्इच्छाओं, सद्भावनाओं के जागरण स्थापन के लिए यह अद्भुत प्रयोग है । इन तीनों साधनाओं को शरीर के लिए अन्न, जल, वायु की तरह, आध्यात्म क्षेत्र के त्रिवेणी संगम की तरह लाभकारी कहा जा सकता है ।

भाव योग के अन्तर्गत ही एक साधना उपचार और आता है, जिसे देवाधि देव आत्मदेव की साधना कहा गया है । इसमें दर्पण के माध्यम से आत्म-परिष्कार की साधना की जाती है । दर्पण में दीख रहे अपने प्रतिबिम्ब को अपनी छाया नहीं, अपना कोई निकटवर्ती घनिष्ट सम्बन्धी-परिजन मानते हुए यह भाव करना चाहिए, कि इसमें विद्यमान त्रुटियों का परिमार्जन करना है । सत्प्रवृत्तियों के बीज विकसित करना है । अपना प्रतिबिम्ब गम्भीरता से देखा जाय व 'स्व' के परिष्कार का, उसे समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने का दृष्टिकोण अपनाया जाय । दर्पण में विद्यमान व्यक्ति का भूत, वर्तमान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सभी विदित है, यह भावना करते हुए उसका सही पर्यवेक्षण कर आदर्शों की कसौटी पर जितनी खोट मिले, उसे हटाने सुधारने का प्रयास अपनाने का संकल्प किया जाय । संजीवनी विद्या के अन्तर्गत यह एक महत्त्वपूर्ण साधना है, जिसका अवलम्बन प्रस्तुत शिक्षण में लिया जाना है ।

साधना काल में उपवास का व्रत भी अपनाना पड़ता है । अपने परिश्रम की, स्व-उपार्जित कमाई ही ग्रहण करने का, तपश्चर्याओं में सर्वोपरि विधान है, जिससे अन्न से जुड़े कुसंस्कार तंग न करें । आहार में जौ, तिल, चावल का विशिष्ट धान्य तथा औषधि कल्क भी इसी निमित्त शामिल किए जाते हैं । व्रत और उपवास के सभी आवश्यक सिद्धान्तों का समावेश होने के कारण अमृतोशन का बहुत अधिक महत्त्व है । यह सुपाच्य भी होता है, सात्विक भी । नौ दिन की तपश्चर्या में आहार साधना को स्थूल शरीर शोधन का महत्त्वपूर्ण अंग मानकर उसे अपनाना पड़ता है ।

अन्तःकरण में छिपे हुए पापों की खोज करने के लिए साधक के भूत काल का इतिहास जानना आवश्यक होता । पिछले जीवन में क्या भूलें हुई हैं, उन्हें जानने के बाद ही प्रायश्चित्य साधनाओं का निर्धारण हो सकता है । आभूषण की सामान्य टूट-फूट को थोड़े में ठीक किया जा सकता है; पर टूट-फूट अधिक हो तो भट्ठी में गलाये बिना काम नहीं चलता । प्रायश्चित्य साधनाएँ प्राचीन काल में बहुत कठोर होती थीं । इन सत्रों में उसे सुलभ तो बनाया गया है; पर पाप कर्मों का खुलासा तो करना ही पड़ता है । पिछली गाँठें खुलें नहीं, बन्धन टूटें नहीं, तो साधक मुक्तावस्था का आनन्द कैसे ले सकता है ? इसके लिए साधकों को अपने जीवन में हुई भूलों को विस्तार से लिखना पड़ता है । उन्हें वन्दनीया माता जी या गुरुदेव ही देखते हैं । किन परिस्थितियों में कब कौन से पाप बन पड़े, यह जानना ठीक उसी तरह आवश्यक होता है, जिस तरह डॉक्टर चिकित्सा से पूर्व रोग के कारणों को बार-बार पूछकर ज्ञात करता है । सारी स्थिति जान लेने पर साधक के पक्ष के कठोर प्रायश्चित तो पू. गुरुदेव अपने पर लेकर स्वयं जलाते हैं, प्रतीक प्रायश्चित्य भर साधकों से कराते हैं । स्वयं कुछ किए बिना साधक उऋण भी नहीं हो सकते ।

महाभारत का सूत्र है "पूर्व जन्म कृतं पापं व्याधि रूपेण निस्रितः" अर्थात् पूर्व जीवन में किए पाप रोगों, कष्टों के रूप में प्रकट होते हैं । उन पापों का शमन, प्रायश्चित्य एवं साधना विधान से किया जाय तो अनेक रोगों, शोकों, कष्टों से मुक्ति मिलती है । पाप निष्कासन परिष्कार की व्यवस्था, नौ दिवसीय सत्रों की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है ।

कारण शरीर की उच्चस्तरीय तपश्चर्या का नाम समर्पण योग है । इसके अन्तर्गत अपनी इच्छाएँ परमात्मा को सौंपनी पड़ती हैं । यह अभ्यास गुरु के प्रति श्रद्धा समर्पण से पूर्ण होता है । उसके लिए प्रत्येक साधक को, शान्ति कुंज को माँ का पेट, आवा समझ कर निर्धारित नौ दिन तक यहाँ का साधना, क्रिया-कलाप और अनुशासन का पालन करना पड़ता है; ताकि यहाँ प्राण ऊर्जा पूरी तरह साधक के रोम-रोम में पच जाय । यह ऊष्मा ही अगले दिनों खाद पानी की तरह अन्तरंग की शक्तियों को पुष्पित-पल्लवित और फलीभूत करती है । मिशन के सूत्र संचालकों की संकल्प शक्ति और ऊर्जा ऐसी ही स्थिति के साधकों की साधना पकाने में समर्थ होती है ।

आध्यात्म तत्वज्ञान का पहला अनुशासन

सरसरी दृष्टि से स्थूल शरीर-काय-कलेवर की समर्थता दो आधारों पर आंकी जाती है कि वह सुघड़-सुडौल हो और चेहरे पर सुन्दरता झलके । बाहर से इतना ही जाना जा सकता है । इसी जानकारी के आधार पर किसी को स्वस्थ, सुन्दर, सुदृढ़ एवं आकर्षक माना जाता है, पर यह उथली परख है । गहराई में उतर कर वस्तुस्थिति परखने वालों को यह भी निरखना-परखना पड़ता है कि, जीवनी शक्ति का समुचित भण्डार विद्यमान है या नहीं । भीतरी अवयव अपना ठीक काम करते हैं या नहीं । हृदय, मस्तिष्क, फेंफड़े, गुर्दे, जिगर, पाचनतन्त्र, विसर्जन तन्त्र के निमित्त काम करने वाले छोटे बड़े पुर्जे अपने-अपने काम को अंजाम दे सकने में समर्थ हैं या नहीं । मशीन का हर कल-पुर्जा यदि सही काम करे, तो ही मशीन ठीक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काम कर पाती है, अन्यथा एक के भी गड़बड़ा जाने से ढाँचा लड़खड़ाने लगता है ।

विकृतियाँ जब तक छोटे रूप में, आरम्भिक स्तर पर होती हैं, तो उनकी पीड़ा प्रकट नहीं होती, किन्तु ईंधन में पड़ी चिनगारी धीरे-धीरे सुलगती रहती है और समयानुसार प्रचण्ड वेग धारण कर लेती है । घुन चुपके-चुपके शहतीर को खोखला करता रहता है और उसे धराशायी बना देने की स्थिति उत्पन्न कर देता है । विषाणुओं का आक्रमण एकाकी नहीं होता । वे धीरे-धीरे अपनी जड़ें जमाते रहते हैं । आरम्भ में तो पता भी नहीं चलता, पर जब विस्फोट होता है, तो अनेक छिद्रों से अनेक प्रकार की बीमारियाँ फूट पड़ती हैं । जीर्ण-शीर्ण कपड़े की एक जगह से मरम्मत करने पर वह तनिक-सा दबाव पड़ने पर दूसरी जगह से फटने लगता है । जीवनी शक्ति का भण्डार छिपी रुग्णता से लड़ते-लड़ते प्राय समाप्त हो लेता है । तब दवा-दारू भी यत्किंचित काम ही कर पाती हैं । मनुष्य घटता, टूटता, हारता चला जाता है । गति धीमी भले ही रहे पर वह पूर्णायुष्य भोगे बिना ही अल्पावधि में जिस-तिस बहाने कालकवलित हो जाता है ।

चमड़ी को सजाने के लिए तो वस्त्राभूषण और शृंगार प्रसाधन भी किसी हद तक काम दे जाते हैं, पर भीतर घुसी दुर्बलता एवं रुग्णता धीमी गति से अपना काम करती रहती है, फलतः चेहरे से लेकर शरीर के अन्यान्य दृश्यमान अवयव कुम्हलाये, मुरझाये दीखने लगते हैं । काम करने में देर तक समर्थ नहीं रह पाते । थकान जल्दी ही आ घेती है । मन भी उदास या उद्विग्न असन्तुलित रहता है । यह सब चिह्न इस बात के द्योतक हैं कि काया का अन्तःपक्ष डगमगाने, गड़बड़ाने लगा । यह स्थिति बताती है कि भविष्य अच्छा नहीं है । उठती जवानी के नये उभार में तो कुछ पता नहीं चलता, पर जैसी ही उभार रुकता है, वैसे ही तेजी से उन क्षीणताओं का दौर चल पड़ता है, जिन्हें बुढ़ापे के रूप में देखा जाता है । जराजीर्ण स्थिति इसी को कहते हैं । क्रिया-शक्ति घटती और निराशा, उद्विग्नता बढ़ती जाती है ।

इस स्थिति का सिलसिला आरम्भ होने से पहले ही सतर्क हो जाना चाहिए और गिरावट की रोकथाम करनी चाहिए । बाहर ने कोई बड़ा रोग न दीख पड़ने पर भी भीतरी पर्यवेक्षण से पता लगाना चाहिए कि जीवनी शक्ति का समुचित भण्डार विद्यमान है या नहीं । त्वचा के भीतर ढँकी हुई अवयवों की शृंखला समग्र रूप से क्रियाशील है या नहीं । विकृतियों का छोटा बड़ा रूप दीख पड़ने से पूर्व ही उसकी मरम्मत कर लेनी चाहिए । क्रिया-कलाप सदा ऐसा रखना चाहिए कि निरन्तर हर आदेश का पालन करने में तत्पर काय-संस्थान को किसी प्रकार की अप्रकट मुसीबत का अब या भविष्य में सामना न करना पड़े ।

शरीर प्रकृति पदार्थों से बना है । उसका पोषण भी आहार-विहार में प्रयुक्त होने वाले पदार्थों से ही होता है । इतनी जानकारी तो सभी को होती है कि अन्न, जल, वायु से शरीर पोषण ग्रहण करता है । इन तीनों की स्वच्छता एवं सात्विकता बनी रहनी चाहिए । ऋतु प्रभाव के दबावों से यथासम्भव बचाव करना चाहिए और जीवनक्रम ऐसी आदतों के सहारे चलना चाहिए, जिनके सहारे समस्वरता बनी रहे । आतिवाद किसी भी स्तर का क्यों न हो ? संताप उत्पन्न करता है और ऐसे झटके लगाता है, जिनके कारण अच्छी भली गाड़ी में टूट-फूट होने लगे । अस्त-व्यस्त जीवन जीने वाले ही प्रायः रुग्णता, दुर्बलता और अकाल मृत्यु के शिकार होते हैं । इस विपन्नता से बचने के लिए उस प्रकृति अनुशासन को पालना चाहिए, जिसे अपनाकर सृष्टि के समस्त जीव-जन्तु अपनी विधि व्यवस्था और रीति-नीति को सन्तुलित करते रहते हैं । इतनी भर सतर्कता से वे निरोग जीवन जीते हैं । ऐसी विपत्तियों में नहीं फँसते, जिन्हें स्व-उपार्जित कहा जा सके ।

समझा यह जाता है कि बहुमूल्य भोजन, बलवर्धक रसायनें, चित्र-विचित्र व्यायाम आदि के कारण शरीर को परिपुष्ट रखा जा सकता है । किन्तु वास्तविकता ऐसी है नहीं । सुसम्पन्न व्यक्ति कितने ही हैं, जिन्हें आहार पर अनाप-शनाप खर्च करने की छूट है, जो पौष्टिकता के लिए प्रख्यात रसायनों का सेवन करने में भी कमी नहीं रखते, जिन्हें थकने वाला परिश्रम भी नहीं करना पड़ता तथा आवश्यकताएँ जुटाने में कोई अभाव बाधक नहीं होता । फिर भी देखा गया है कि वे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष परेशानियों में घिरे रहते हैं । इनमें लोक व्यवहार की उलझनें कम और असंयमजन्य अधिक होती हैं । शरीर को सही रखने पर उसकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जितनी आह्लादकारी सेवाएँ उपलब्ध होती हैं, उतना ही यह भी सही है कि यदि उसे अनुचित रीति से सजाया व सताया गया है, तो वह अनेक प्रकार की रुग्णताओं का त्रास उत्पन्न करके उस जीवधारी को संतप्त करके दण्डित भी करता है ।

शरीर को सन्तोषजनक स्थिति में रखे रहने के लिए आध्यात्म तत्व ज्ञान की दृष्टि से एक ही अनुशासन है—संयम । इसे यदि ठीक तरह अपनाये रहा जाय तो उसका प्रतिफल हाथों-हाथ उपलब्ध होता रहेगा । स्वस्थता भी अक्षुण्ण बनी रहेगी और सुन्दरता भी हाथ से जाने न पावेगी । क्रियाशक्ति इस योग्य बनी रहेगी कि किसी उपयोगी एवं आवश्यक कार्य के लिए अपने को असमर्थ अनुभव न करना पड़े ।

संयम ही सामान्य जीवन का तप साधन है । संचित कुसंस्कारों और सम्पर्क क्षेत्र के वातावरण से सामान्य लोग प्रभावित होते रहते हैं और जैसा कुछ प्रवाह गतिमान हो रहा है, उसी में बहने लगते हैं । हल्के तिनकों, पत्तों एवं धूल कणों को तेज हवा अपनी दिशा में उड़ा ले जाती है, उसी प्रकार साधारण जन समुदाय भी सम्पर्क क्षेत्र की परिस्थितियों से प्रभावित होते रहते हैं । संचित कुसंस्कार भी उद्दण्डता, उच्छृंखलता को, दुष्प्रवृत्तियों को दौड़कर अपनाने के लिए बाधित करते हैं । सुधार परिष्कार का प्रशिक्षण न मिलने, श्रेष्ठता का अभ्यास न बन पड़ने से भी मनुष्य ऐसी गतिविधियाँ अपनाता है, जो पतन का पथ तो प्रशस्त करती ही हैं, विशेषतया शरीर को विपन्न स्थिति में ला पटकती हैं । असंयम का अर्थव्यवस्था, प्रतिष्ठा, कार्य व्यवस्था, प्रगति सम्भावना पर तो कुप्रभाव पड़ता ही है, सबसे अधिक प्रभावित उनके कारण शरीर होता है । उसे दुर्बलता और रुग्णता आ घेरती है । चेहरे पर प्रफुल्लता के स्थान पर वेदना और दीनता टपकती है । ऐसों की मुखाकृति सुन्दर भी हो तो वह निर्जीव, निष्प्राण, निराश रहने के कारण कुरूपता से घिर जाती है ।

संयम के कई पक्ष हैं, जिनमें प्रथम है—इन्द्रिय संयम । इन्द्रिय संयम में प्रथम गणना होती है—जिह्वा संयम की । स्वाद के नाम पर चटोरेपन की आदतों के वशीभूत होकर हम दुष्पाच्य, तमोगुणी, चटपटा, तला-भुना भोजन करते हैं । जीभ की लिप्सा के वशीभूत होकर पेट की स्वाभाविक शक्ति की तुलना में प्रायः ड्यौढ़ा-दूना भोजन खा जाते हैं । जल्दी और अधिक खा जाने की उतावली में उसे पूरी तरह चबाते भी नहीं । फलतः पेट को अपनी सामर्थ्य से अधिक काम करना पड़ता है । फलतः वह अपच का शिकार रहने लगता है । बिना पचा भोजन सड़ता है और उस सड़न की विषाक्तता से शरीर के विभिन्न भागों में पीड़ा रहने का सिलसिला शुरू हो जाता है । इस विपत्ति से बचना अपने हाथ की बात है । भोजन की सात्विकता नष्ट न होने दी जाय । चटोरेपन को बढ़ाने वाली स्वादिष्टता को प्रश्रय न दिया जाय ।

आधा पेट भोजन किया जाय । इसके लिए दो बार का समय नियत रखा जाय । भोजन के एक घण्टा उपरान्त पानी भी धीरे-धीरे कई गिलास पेट में पहुँचाया जाय । गहरी साँस लेने की आदत डाली जाय ताकि प्राण वायु पर्याप्त मात्रा में मिले और अवयवों के परिपोषण में काम आ सके । मानसिक श्रम को ही पर्याप्त न माना जाय वरन् शारीरिक श्रम भी जीवनचर्या के साथ इसी प्रकार जुड़ा रखा जाय कि सभी अवयवों को गतिशीलता मिलती रहे और निष्क्रियताजन्य जकड़न अशक्तता जैसा अवरोध जमने न पाये ।

जिह्वा पर नियन्त्रण पा सकना आधी स्वास्थ्य रक्षा को सुव्यवस्थित कर लेना है । आहार के साथ विहार जुड़ा हुआ है । विहार का तात्पर्य है दिनचर्या का सुनियोजन, उसमें व्यस्तता का समावेश । श्रम को आवश्यक समझकर उसमें उत्साह बनाये रखना । इसके अतिरिक्त जिह्वा संयम में मधुर संभाषण भी आता है । अपनी नम्रता द्वारा दूसरों को सम्मानित करने का, प्रशंसा करने का अभ्यास रखा जाय, तो समूचे क्षेत्र से सद्व्यवहार लौट कर मिलता है । उससे चित्त की प्रसन्नता बढ़ती है और स्वास्थ्य सुरक्षित रहता है ।

इन्द्रिय संयम का दूसरा पक्ष है—कामुकता पर नियन्त्रण । शरीरगत यौनाचार में अति बरतने की तरह ही मानसिक अश्लील चिन्तन भी स्नायु संस्थान में ऐसी उत्तेजना भरे रहता है, जो दबाव डालने वाले अन्य वजनदार कामों को ढोने से कम सामर्थ्य को क्षीण नहीं करता । इसे चिन्तन का, दृष्टिकोण का दोष कह सकते हैं । कामुकता में, अश्लील चिन्तन में मस्तिष्क को खपाये रहना या व्यवहार में उन उत्तेजनाओं को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्रियान्वित करते रहना भी ऐसा है, जैसा जल भरे घड़े में छेद कर देना । इससे जीवनी शक्ति की सरस सम्पदा का बेतरह अपव्यय होता है और खोखला व्यक्ति अपनी स्थिरता, समर्थता को अक्षुण्ण बनाये नहीं रह सकता । कामुकता में अपनी प्रवृत्तियों को असाधारण रूप से नियोजित किए रहने का तात्पर्य है अपने पैरों आप कुल्हाड़ी मारना । आज वातावरण में कामुकता को उत्तेजना देने वाले साहित्य, संगीत, अभिनय, चित्रों आदि की भरमार है, पर विज्ञ व्यक्तियों को तो इस प्रदूषण से आत्म रक्षा करनी ही चाहिए ।

निद्रा में कमी न पड़ने दी जाय । जल्दी उठने का नियम बनाया जाय । खिलाड़ी की भावना से जीवन प्रसंग में आने वाले उतार-चढ़ावों को लिया जाय । हलका-फुलका हँसता-हँसता जीवन जिया जाय । प्रतिकूलताओं को विभीषिकाओं की तरह मन पर हावी न होने दिया जाय । महत्त्वाकांक्षाओं का घटाटोप न सँजोया जाय । साथ ही राग-द्वेषों के अतिवाद को असीम न बनने दिया जाय । अपनी साहसिकता और समझदारी के बल पर आने वाले उतार-चढ़ावों का सामना करते रहने का मनोबल बनाये रखा जाय, तो उद्विग्नता आवश्यकता से अधिक मात्रा में नहीं बढ़ने पाती और गहरी निद्रा में बाधा नहीं पड़ती ।

स्वस्थता, सम्पन्नता, सफलता, सुन्दरता, शालीनता का सम्मिलित प्रदर्शन करने का, सर्वसाधारण को अपनी तेजस्विता से प्रभावित करने का सरलतम तरीका एक ही है कि होठों पर मधुर मुस्कान बनाये रखी जाय । आँखों में आशा की ज्योति जलने दी जाय । मुखाकृति विजेता जैसी बनाये रखी जाय । अपनी स्थिति को सन्तोषजनक मानकर चलने वाले ही प्रसन्नमुख रह सकते हैं । इसके लिए असन्तोष और उद्वेग को भड़कने से रोकना पड़ता है । यह अभ्यास साध्य है और निरन्तर प्रयास करते रहने पर सफलता की स्थिति तक पहुँचने के लिए समय साध्य भी । अपने स्वभाव अभ्यास में प्रसन्नता की अभिव्यक्ति सम्मिलित करने और उसे चेहरे पर प्रदर्शित करते रहने की प्रक्रिया ऐसी है, जो स्वस्थता एवं सुन्दरता को अक्षुण्ण बनाये रखने में असाधारण रूप से सहायक होती है ।

स्थूल एवं सूक्ष्म शरीर का समन्वय

मोटी दृष्टि से देखने पर मनुष्य अन्य प्राणियों की तरह हलचल-हरकत करती हुई काया मात्र दिखायी पड़ता है । परस्पर भेद-उपभेद भी कम मालूम पड़ते हैं । मनुष्यों की कायिक संरचना और प्रकृति-प्रवृत्ति भी प्रायः एक जैसी प्रतीत होती है, पर तथ्यों के तर्क अथवा उपकरणों के माध्यम से देखने, वर्गीकरण-विश्लेषण करने पर उनमें बहिरंग एवं अन्तरंग अन्तर भी बहुत दीख पड़ता है । इसी आधार पर उनकी शक्तियों का मूल्यांकन भी किया जाता रहता है । कोई समर्थ, बुद्धिमान, साहसी, सन्तुलित, दूरदर्शी, प्रगतिशील दीख पड़ता है, तो किन्हीं में इन विशेषताओं की न्यूनता एवं अनुपस्थिति भी पायी जाती है । यों यह गुण प्रत्यक्ष आँखों से नहीं देखे जा सकते । छुए या नापे-तौले भी नहीं जा सकते, तो भी उनकी उपस्थिति से इन्कार नहीं किया जा सकता । इन्हीं के आधार पर प्रगतिशीलता एवं प्रतिगामिता के तथ्य उभरते हैं । यह विशेषताएँ सूक्ष्म क्षेत्र में अन्तर्जगत में रहती हैं । उन्हें समझने की लिए सूक्ष्मदर्शी विश्लेषण बुद्धि की आवश्यकता पड़ती है । इसी आधार पर किसी की महिमा, गरिमा एवं गुणवत्ता को आँका जा सकता है ।

स्थूल शरीर के साथ जुड़ी हुई ज्ञानेन्द्रियाँ और कर्मेन्द्रियाँ अपना-अपना काम करती हैं और कायिक जीवन की गाड़ी को आगे धकेलती रहती हैं ।

बाहर उभरे और प्रत्यक्ष दीख पड़ने वाले अवयवों के अतिरिक्त चमड़े के भीतर भी अनेक छोटी-बड़ी इकाईयाँ हैं, जो दीख नहीं पड़तीं । उनकी हलचल होती तो रहती है, पर वे प्रत्यक्ष नहीं देखी जा सकतीं । प्रत्यक्ष साधनों से उनकी गतिविधियों का पता नहीं चलता, कभी उनमें खराबी आ जाती है, तो पीड़ा, सूजन, अवरोध आदि का तो भान होता है, यह नहीं जाना जाता कि किस स्थान पर क्या गड़बड़ी चल रही है । इसके लिए अन्य सूक्ष्म माध्यमों का ही प्रयोग करना पड़ता है और उसी आधार पर उस कष्ट का उपचार सम्भव होता है ।

यह स्थूल शरीर के क्रियाकलापों का संक्षिप्त-सा विवेचन है, जिसे व्यवस्थित एवं सक्रिय होते हुए भी उसका बहुत थोड़ा अंश ही देख-समझ पाते हैं । यहाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस सन्दर्भ में यह जानना भी आवश्यक है कि, प्रत्यक्ष दीख पड़ने वाला एक स्थूल शरीर ही सब कुछ नहीं है । इसके अतिरिक्त भी अन्य शरीर एक के भीतर एक घुसे हुए हैं । कुल मिलाकर यह तीन शरीर हैं । प्रत्यक्ष दीख पड़ने वाले को स्थूल शरीर कहते हैं । इसके अतिरिक्त दो और हैं—एक सूक्ष्म दूसरा कारण । इसका शवच्छेद करके अलग-अलग पृथक्करण तो नहीं किया जा सकता, किन्तु यह नितान्त सम्भव है कि उनके गुण-धर्म को गतिशील रहते देखकर बुद्धिपूर्वक यह जाना जा सकता है कि इनकी स्वतन्त्र सत्ता मौजूद है और क्रमशः एक-दूसरे से अधिक समर्थ है । स्थूल से सूक्ष्म की और सूक्ष्म से कारण की सत्ता एवं महत्ता अधिक मानी जाती है ।

तीनों शरीर परस्पर गुँथे हुए हैं । उन्हें प्याज के छिलकों या केले के तने की तरह अलग-अलग तो नहीं किया जा सकता, किन्तु एक उदाहरण से जाना-पहचाना जा सकता है । गुलाब के फूल में रंग, महक, स्वाद एवं रासायनिक संरचना में पृथक्-पृथक् तत्वों का समीकरण होता है । यदि प्रयोगशाला में इनका पृथक्करण, वर्गीकरण किया जाय तो उन विभागों को अलग-अलग आकार-प्रकार में देखा जा सकता है ।

स्थूल और सूक्ष्म का अन्तर प्रत्यक्ष है । स्थूल शरीर पंच तत्वों के सूक्ष्म घटकों से बना है । उन्हें त्वचा, रक्त, माँस, अस्थि, मज्जा आदि के रूप में देखा जा सकता है । कर्मेन्द्रियों में शरीरचर्या एवं लोक व्यवहार के विविध विधि, क्रिया-कलाप चलते हैं । सूक्ष्म शरीर पाँच प्राणों का बना है । उसके प्रतीक पाँच शक्ति केन्द्र हैं, जिन्हें पंच कोश भी कहते हैं—प्राणमय कोश, अन्नमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश, आनन्दमय कोश के रूप में इनकी पहचान की जाती है । इन पाँचों प्राणों का समन्वय महाप्राण के रूप में समझा जाता है । जीवन चेतना यही है । इसके काया से पृथक् हो जाने पर मृत्यु हो जाती है । मरे शरीर का तात्विक विश्लेषण करने पर उसमें वे सभी रसायन पाये जाते हैं, जिनसे शरीर बना है, किन्तु उनमें से महाप्राण का, चेतना का पलायन हो जाने पर वह निरर्थक हो जाता है । स्वयं सड़ने और नष्ट होने की क्रिया आरम्भ कर देता है । जिन्हें इस निरर्थक का अन्त सुव्यवस्थित रीति से करना हो, वे उसका अग्नि, भूमि, जल के साथ जल्दी समापन कर देते हैं ।

प्रश्न यह उठता है कि मरने के उपरान्त जो वस्तु शरीर छोड़कर चली गई, वह क्या थी ? उसका स्वरूप क्या था ? जीवन काल में वह कहाँ रही ? क्या करती रही ? उसकी भावी गतिविधि क्या बनी ? इन प्रश्नों का उत्तर प्राप्त करने से पहले हमें सूक्ष्म शरीर का स्वरूप समझना चाहिए । इस प्रारम्भिक पृष्ठभूमि को समझ लेने के उपरान्त ही यह समझ सकना सम्भव होगा कि जीवनकाल में वह क्या करता है ? और मरने के उपरान्त उसकी गतिविधियों का क्षेत्र क्या हो जाता है ?

जीवन काल में सूक्ष्म शरीर का स्वरूप "ज्ञान" के रूप में होता है । इसका केन्द्रीय कार्यालय मस्तिष्क माना जा सकता है । यों वह चेतना स्थूल शरीर के कण-कण में समाहित है । ज्ञान तन्तु समस्त शरीर में फैले हुए हैं । वे अपने-अपने क्षेत्र की आवश्यक सूचनाओं को मस्तिष्क तक पहुँचाते हैं । परिस्थिति से निपटने के लिए क्या उपाय अपनाया जाना चाहिए, इसका निर्देश मस्तिष्क से तुर्त-फुर्त प्राप्त करते हैं और तद्नुसार अंग अवयव काम करने लगते हैं ।

ज्ञानेन्द्रियों में अतिरिक्त काम करने की शक्ति भी है और आनन्द प्रदान करने की क्षमता भी । आँखें दृश्यों को देखती भी हैं साथ ही दृश्य की सुन्दरता का, विचित्रता का आनन्द भी लेती हैं । यही बात जिह्वा, कान, नाक, त्वचा, जननेन्द्रियों आदि के सम्बन्ध में भी है । वे शरीर यात्रा से सम्बन्धित अपने-अपने व्यवहार कर्मों का निर्वाह भी करते हैं और भारभूत दीखने वाले इस नीरस कारखाने में सरसता का समावेश भी करते हैं । यदि इस काया के साथ बहुविधि सरसता जुड़ी न होती, तो समग्र जीवन भारभूत हो जाता । अतिरिक्त निर्वाह के लिए जो प्रयत्न करना पड़ता है, साधन जुटाने में, परिस्थितियों से निबटने में जो ताना-बाना बुनना पड़ता है, वह भी सम्भव न होता । यह सूक्ष्म शरीर का सामान्य क्रियाकलाप है, जो मृत्यु हो जाने पर अनायास ही बन्द हो जाता है ।

वस्तुस्थिति को समझने पर विदित होता है कि स्थूल शरीर के साथ सूक्ष्म शरीर की सत्ता उसी प्रकार घुली हुई है, जैसे दूध में घी और फूल में इत्र की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गंध गुंथी होती है । उन्हें चाकू से काटकर अलग नहीं किया जा सकता, किन्तु अन्य आधारों के बल पर यह अनुभव किया जा सकता है कि कोई विशेष सत्ता अपना अस्तित्व रखे हुए अवश्य है । जिसके कारण शरीर की शोभा, सक्रियता बनी हुई थी । घी निकालने पर दूध मात्र छाछ रह जाता है । इत्र निकालने पर फूल एक कचरा मात्र रह जाता है । इसी प्रकार स्थूल और सूक्ष्म शरीर की सुसम्बद्धता जब टूट जाती है, तो दोनों अपनी वास्तविक स्थिति का परिचय देने लगते हैं ।

स्थूल शरीर के विकास हेतु ध्वनि प्रयोग

शरीर और मन द्वारा बन पड़ने वाले सुसंयत लोक व्यवहार के सहारे भी प्रगति और प्रसन्नता का रसास्वादन किया जा सकता है । स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों का प्रत्यक्ष परिशोधन तो क्रिया शुद्धि से ही होता है, पर इतना भर पर्याप्त नहीं है । साथ में उनकी बीज शक्ति को उभारने के लिए विशेष साधनात्मक प्रयोग करने की भी आवश्यकता है । शरीर रक्षा के लिए आहार-विहार की व्यवस्था आवश्यक है, पर इतने भर से ही कोई विद्वान वैज्ञानिक, डाक्टर आदि नहीं बन जाता । इसके लिए विशेष अध्ययन अभ्यास करना होता है; किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं है कि विशेष शिक्षा की व्यवस्था को ही सब कुछ मान लिया जाय और आहार-विहार की व्यवस्था से मुँह मोड़ लिया जाय । दोनों का सुयोग संयोग आवश्यक है । अकेली ईंटें ही दीवार खड़ी नहीं कर देतीं । उन्हें आपस में जोड़ने के लिए चूना, सीमेण्ट भी चाहिए । गाड़ी के दो पहियों की तरह व्यवहार शुद्धि के साथ ही साधनात्मक प्रयोगों को भी अपनाना पड़ता है ।

त्रिवेणी की तीन धाराओं की तरह ब्रह्मा, विष्णु और महेश रूपी त्रिदेवों की तरह मानवी सत्ता भी तीन भागों में विभक्त है—स्थूल, सूक्ष्म और कारण । तीनों पृथक् भी हैं और समन्वित भी । तीनों का समावेश होने पर एक पूर्णता विकसित होती है । किन्तु सही स्थिति में तीनों को ही होना चाहिए अन्यथा असन्तुलन जन्य विकृति उत्पन्न होती है और व्यक्तित्व गड़बड़ी में फँस जाता है । चर्म, माँस और अस्थि का ढाँचा तभी तक सही है, जब तक तीनों अपने-अपने स्थान पर सही रूप में अवस्थित हैं । इनमें से एक का भी गड़बड़ाना उस क्षेत्र की स्वस्थ सुडौलता को आघात पहुँचाता है ।

स्थूल शरीर रासायनिक पदार्थों से बना हुआ है । उनमें किसी प्रकार की हलचल उत्पन्न करने के लिए प्रहार की आवश्यकता पड़ती है । प्रत्यक्ष आघात तो हथोड़े जैसे उपकरणों से पहुँचाए जाते हैं, किन्तु अदृश्य जगत में यह कार्य शब्द के द्वारा सम्भव होता है । सभी जानते हैं कि आघात लगने पर शब्द ध्वनि होती है, किन्तु तथ्य यह भी है कि शब्द से आघात लगता है । किसी वस्तु के गिरने, टूटने, टकराने से शब्द होता है । तोप-बन्दूक चलाने से धमाका होता है, पर यह भी ज्ञातव्य है कि शब्द की भयंकरता भी अनर्थ कर सकती है । तोपों का गर्जन, बमों के विस्फोट गर्भवतियों के गर्भ गिरा देते हैं । धड़कते हृदयों को बन्द कर देते हैं । कान बहरे हो जाते हैं । कोलाहल की अधिकता से अन्य प्रकार के शारीरिक-मानसिक उपद्रव खड़े होते हैं और अदृश्य वातावरण में भी एक प्रकार का असंतुलन आ जाता है । प्रदूषण बढ़ जाता है । जेट यानों की कम्पन लहरें जिधर होकर गुजरती हैं, उधर अस्थिरता, अस्वाभाविकता उत्पन्न करती हैं । रात को भयानक पक्षी ध्वनि करते हैं, तो डर लगता है और नींद उड़ जाती है । फौजी सिपाही कदम मिलाकर चलें, तो उस आवाज से वह लोहे के वे पुल टूट सकते हैं, जिस पर से वे लोग गुजरे थे । देखा तो यहाँ तक गया है कि किसी मजबूत हॉल में लोहे का मजबूत गार्डर लटका दिया जाय और उस पर क्रमबद्ध रूप से हल्का प्रहार छोटे पेण्डुलम द्वारा किया जाय, तो वह गार्डर टूट सकता है या हॉल फट सकता है।

यह ध्वनि की प्रहार प्रक्रिया हुई । उसका रचनात्मक उपयोग भी है । अमुक स्तर का संगीत बजाकर रोगियों की मानसिकता, जीवन क्षमता, भाव सम्वेदना लहराई जाती है । इस उभार के आधार पर रोग विषाणुओं का समापन एवं आरोग्य को पास लाने वाले तत्वों का उन्नयन होता है । संगीत चिकित्सा अब अपने आप में एक स्वतन्त्र चिकित्सा पद्धति बनती जा रही है । पुरातन काल में उसका उपयोग मेघ-मल्हार गाकर वर्षा कराने में दीपक राग गाकर बुझे दीपक जलाने के रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में होता था । बहेलिए मृगों को, सपेरे साँपों को संगीत के आधार पर वशीभूत करते और पकड़ते थे । आधुनिक वैज्ञानिक पशु-पक्षियों और जलचरों की क्षमता विकसित करने में लयबद्ध ध्वनि प्रवाह का उपयोग करते हैं । पाया गया है कि इस उपचार से गायें अधिक दूध देने लगीं । मुर्गियों से अधिक अण्डे-बच्चे मिले और मछलियाँ जल्दी परिपुष्ट हुईं और अपेक्षाकृत कहीं अधिक प्रजनन करने लगीं । यह प्रयोग पेड़-पौधों पर भी हुआ है । वे इस आधार पर अधिक तेजी से बढ़े और असामान्य रूप से फूले फले । कृषकों और उद्यान मालिकों ने अपनी फसलों को संगीत सुनाकर अधिक परिपुष्ट करने में सफलता पायी । मानवी मनोरंजन में गायन, वादन, अभिनय का असाधारण स्थान है, उससे उत्साह बढ़ता है । घोड़े नाचते हैं, हाथी झूमने लगते हैं । मेघ गर्जन की ध्वनि पर भावविभोर होकर नृत्य करते देखे गए हैं ।

प्रकृति के अन्तराल में तीन शक्ति काम करती हैं—(१) ध्वनि, (२) ताप, (३) प्रकाश । इन्हीं की सूक्ष्म तरंगें इस समूचे ब्रह्माण्ड में बिखरी पड़ी हैं । उन्हीं के द्वारा रेडियो, टेलीविजन, टेलेक्स आदि उपकरण चलते हैं । एक्स किरणें, रेडियो किरणें, लेसर किरणें, मृत्यु किरणें आदि के रूप में इन तरंगों का आश्चर्यजनक उपयोग भी किया जाने लगा है । तरंगें ही सघन होकर अणु-परमाणु के रूप में परिवर्तित होती हैं और अनेक नाम रूप वाले पदार्थों की संरचना करती हैं । इस प्रकार यह समझा जा सकता है कि, समस्त विश्व की अनेकानेक हलचलों को यह ध्वनि प्रवाह ही हिलाता-डुलाता, मोड़ता-मरोड़ता है । इसी आधार पर उत्पादन, अभिवर्धन, परिवर्तन की रीति-नीति सर्वत्र चलती रहती है । उत्साह, उमंग और उल्लास के रूप में तीनों शरीरों को भी सूक्ष्म ध्वनियाँ अपने ढंग से यथा अवसर प्रभावित करती रहती हैं । जीवन और मरण, उत्थान और पतन बहुत कुछ उन्हीं के ऊपर अवलम्बित है ।

त्रिविध तरंगों में से स्थूल शरीर को ध्वनि तरंगें, सूक्ष्म शरीर को ताप तरंगें और कारण शरीर को प्रकाश तरंगें प्रभावित करती हैं । यों अनायास ही यह संयोग बनता बिगड़ता है और अनैच्छिक प्रभाव उत्पन्न करता रहता है, किन्तु यदि उनका योजनाबद्ध रूप से वैज्ञानिक प्रयोगों की तरह उपयोग किया जा सके, तो इसके इच्छित परिणाम भी होते हैं । बारूद जला देने पर धमाका तो होता है, पर उसमें अस्त-व्यस्तता रहती है, किन्तु उसी को बन्दूक या तोप की नली में डालकर किसी लक्ष्य पर केन्द्रित करके दागा जाय तो निशाने को निश्चित रूप से धराशायी करने की प्रत्यक्ष परिणति दृष्टिगोचर होती है । ध्वनि तरंगों का उपयोग स्थूल शरीर को प्रभावित करने, उसमें अभीष्ट सुधार परिवर्तन करने के निमित्त किया जा सकता है ।

स्थूल शरीर को प्रभावित करने के लिए मन्त्र योग का, सूक्ष्म शरीर के लिए प्राण योग का और कारण शरीर में उपयोगी उभार लाने के लिए ध्यान योग का उपयोग किया जाता है । यों साधनाएँ अनेकों प्रकार की हैं । परम्परा भेद से उनका उपयोग, उपचार अनेक विधि-विधानों के रूप में किया जाता है । इस प्रकार साधना विज्ञान के अनेकानेक और उपभेद बन जाते हैं । इनमें से जिन्हें अपनी अभिरुचि के अनुरूप अपनाना होता है, वे उसका प्रयोग करते रहते हैं । देश, भाषा, परम्परा आदि भेदों के कारण तत्व दर्शन अनेक भागों में विभक्त हो गया है, पर इसे एक-दूसरे के प्रतिकूल मानना भूल होगी । एक ही नगर में पहुँचने के लिए विभिन्न दिशाओं के यात्री अलग-अलग मार्ग अपनाते हैं । इतने पर भी वे सभी उस एक ही लक्ष्य तक पहुँच जाते हैं । इसी प्रकार साधनों के स्वरूप, विनियोग अनेकानेक प्रक्रिया फलने पर भी उनके मूल आधार में कोई परिवर्तन नहीं होता ।

संसार भर में प्रचलित अनेकानेक योगाभ्यासों को तीन भागों में ही विभक्त किया जा सकता है । बहुलता को सीमाबद्धता में बाँधा जा सकता है । मन्त्र योग, प्राण योग और ध्यान योग की सीमा में प्रायः सभी साधना विधानों को बाँधा जा सकता है । मनोविकार और अनैतिक आचरण भी लोभ, मोह और अहंता की पृष्ठभूमि पर उगते हैं । साधनाएँ भी साहस, संकल्प और सम्वेदना का अवलम्बन लेकर ही आगे बढ़ती और तीनों शरीरों को प्रभावित करती हैं ।

पदार्थ परिकर को ध्वनि तरंगों से प्रभावित परिवर्तित, परिष्कृत करने के लिए 'मन्त्र योग' का उपयोग करना होता है । मन्त्र में तीन तत्व जुड़े हैं—(१) शब्दों का गठन, (२) साधक का व्यक्तित्व,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(३) तथ्य को अन्तःकरण की गहराई तक पहुँचा देने वाला अविचल विश्वास । इन तीनों का जब भी, जहाँ भी, जितना भी समावेश होगा, वहाँ उसकी उपयोगी प्रतिक्रिया निश्चित रूप से परिलक्षित होगी; किन्तु यदि उनमें से एक भी कम पड़ा या त्रुटिपूर्ण रहा, तो उसका अभीष्ट प्रतिफल उत्पन्न होना संदिग्ध हो जायेगा ।

मन्त्र का गठन दूरदर्शी अनुभवी योगाभ्यासियों द्वारा किया जाता है । वे शब्दों की सम्भावना में अर्थ को प्रधानता नहीं देते वरन् यह देखते हैं कि किस क्रम से अक्षरों का गुंथन हुआ और उनके उच्चारण में किस प्रकार का ध्वनि प्रवाह उत्पन्न हुआ । इस मन्त्र निर्धारण में प्रायः उनके सृजेताओं को अन्तःस्फुरणा से मार्गदर्शन मिलता है । इसलिए वे उसे आकाशवाणी द्वारा ईश्वरीय चेतना द्वारा उद्भूत भी कहते हैं । गायत्री मन्त्र, कलमा शरीफ, बपतिस्मा, नमोकार मन्त्र, मणिपद्मेहुँ आदि ऐसे ही सनातन कहे जाने वाले मन्त्र हैं ।

तन्त्र योग के अन्तर्गत एक अक्षर मन्त्रों का भी निर्धारण किया गया है । देवनागरी लिपि के कुछ प्रभावशाली अक्षरों के ऊपर अनुस्वार (—) लगाकर उन्हें विशेष प्रयोजनों में काम आने वाला बना दिया गया है । (कं खं गं घं चं छं जं झं पं फं वं भं) आदि की रचना इसी दृष्टि से हुई है । ऐं, श्रीं, क्लीं, हीं, हुं, फट् आदि की भी गणना एकाक्षरी मन्त्रों में ही होती है । अर्थ सहित मन्त्रों की व्याख्या विवेचना हो सकती है । उनसे शिक्षा ली जा सकती है, पर एकाक्षरी मन्त्र बीज रूप है । उनमें शक्ति की प्रधानता है । अभिव्यक्ति नहीं खोजी जा सकती है । इन सबके अपने-अपने प्रभाव हैं । उनका उच्चारण कण्ठ, जीभ, होठ, दाँत, तालु आदि के माध्यम से ही होता है, पर जो ध्वनि स्वरूप समन्वित रूप से बनता है, स्थूल शरीर के अन्तराल में रहने वाली विशिष्ट ग्रन्थियों से टकराता है । उस प्रतिक्रिया को समूचे व्यक्तित्व में वितरित करता है । शरीर के अन्तराल में अनेकों गुच्छक, उपत्यिकाएँ, चक्र, भ्रमर, अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का समुदाय है । इनमें से कुछ के क्रियाकलाप तो जान लिए गए हैं, पर कुछ अभी तक शरीर शास्त्रियों द्वारा समझे नहीं जा सके हैं । हारमोन स्रावों की विलक्षणता प्रसिद्ध है । उनका प्रभाव काया तक ही सीमित नहीं रहता, वरन् स्वभाव और व्यक्तित्व को भी प्रभावित करता है । इस प्रकार की अनेकानेक ग्रन्थियों को सन्तुलन में लाने, विकसित करने के लिए मन्त्र प्रयोगों का आश्चर्यजनक परिणाम उत्पन्न होते देखा जा सकता है ।

शरीर की तरह संसार के अन्यान्य पदार्थ भी मनुष्य को प्रभावित करते हैं । वे पास आते दूर भागते हैं । अनुकूल रहते प्रतिकूल बनते हैं । इस असन्तुलन को इच्छानुरूप बनाने में भी मन्त्र काम करते हैं । वे वरदान एवं अभिशाप के रूप में भी अपनी प्रतिक्रिया प्रकट करते हैं ।

सूक्ष्म शरीर और प्राणाकर्षण

सूक्ष्म शरीर प्राण तत्व से विनिर्मित है । जड़ और चेतन का सम्मिश्रण प्राण है । जिस प्रकार नीला और पीला रंग मिलाने से हरा रंग बनता है । पानी और मिट्टी का सम्मिश्रित रूप कीचड़ के रूप में परिलक्षित होता है, उसी प्रकार प्रकृति और पुरुष का जड़-चेतन का सम्मिलन प्राण है । इसी के आधार पर जीवन स्थिर रहता है । जब वह शरीर से पृथक् हो जाता है, तो मरण की स्थिति बन जाती है ।

प्राण तत्व शरीर में भी विद्यमान है और उसका विराट स्वरूप विश्व ब्रह्माण्ड में संव्याप्त है । जड़-चेतन की एक मात्रा जब आपस में गुंथ जाती है, तो उसे जीव की संज्ञा दी जाती है । इसी की विद्यमानता जीवन के नाम से जानी जाती है । वह शरीरगत अवयवों को गति प्रदान करता है, साथ ही अहम् की ग्रन्थि बनकर चिन्तन तन्त्र के माध्यम से अपनी चेतना का परिचय देता है । चेतना का गुण है—चिन्तन । चिन्तन को ही सजीवता का चिह्न माना जाता है । आस्था, आकांक्षा, कल्पना, विवेचना आदि उसी के भेद-उपभेद हैं, प्राणवान को साहसी समझा जाता है । पराक्रमी, पुरुषार्थी और जीवट के धनी महाप्राण प्रतिभावान होते हैं और अल्प प्राण कहकर दीन दुर्बलों, कायरों, डरपोकों का तिरस्कार किया जाता है । वैभववान होने की तरह प्राणवान होना भी किसी के समर्थ सौभाग्यवान होने का चिह्न है । उसका वर्तमान सुव्यवस्थित होता है और भविष्य उज्ज्वल ।

जिस प्रकार जमीन पर बिखरा हुआ रेत बिना किसी अड़चन के अभीष्ट मात्रा में बटोरा जा सकता है । जिस प्रकार विशाल जलाशय से अपनी आवश्यकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

का पानी उपलब्ध पात्र में भरा जा सकता है, उसी प्रकार ब्रह्माण्ड रूपी महाप्राण में से अपनी सूक्ष्म सत्ता में प्राण तत्व को इच्छित मात्रा में धारण करके अपना चेतन पक्ष बलिष्ठ बनाया जा सकता है । शरीर की शोभा समर्थता बढ़ाने का भी निमित्त कारण बनता है ।

सूक्ष्म शरीर किस स्थिति में रह रहा है, किस स्तर का है ? इसका अनुमान इसी आधार पर लगाया जा सकता है कि, उसमें प्राण तत्व कितना है ? स्थूल शरीर में उसकी विद्यमानता को ओजस् कहते हैं । सूक्ष्म शरीर में उसकी बहुलता तेजस् कहलाती है और कारण शरीर को जब वह ऊर्जा प्रदान करने लगता है तब उसे वर्चस नाम दिया जाता है ।

सूक्ष्म शरीर को लोक व्यवहार के निमित्त कुशल बनाने के लिए चिन्तन क्षेत्र की परिधि बढ़ानी पड़ती है । शिक्षा का आश्रय लिया जाता है । अनुभव एकत्रित करते हैं । साथ ही मनन-चिन्तन का मन्थन करते हुए दूरदर्शी विवेकशीलता की परिधि तक पहुँचा जाता है । प्रज्ञा का, मेधा का, भूमा का उदय कारण शरीर में होता है, पर उसके पूर्व मानसिक संतुलन की परिष्कृत दृष्टिकोण की पृष्ठभूमि बनती है ।

विचारों की तीक्ष्णता किसी तथ्य की गहराई तक पहुँचती है, जबकि अहंता बनी रहने पर उथली प्रथा परम्पराओं को अपनाकर ही काम चलाया जाता है । समीपवर्ती लोगों को जैसा सोचते, करते देखा जाता है, उसी का अनुकरण अनुगमन साधारणजनों में भी चल पड़ता है । वे कोयले के ढेर में से हीरा नहीं बीन पाते । दोनों के बीच रहने वाला अन्तर भी उनकी समझ में नहीं आता । ऐसी दशा में वे स्वतन्त्र बुद्धि, उत्कर्ष के लिए, आवश्यकता निर्धारण के लिए समर्थ नहीं होते । नर-पशुओं की तरह जिन्दगी पूरी करते हैं । पेट प्रजनन के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं । तृष्णा और अहंता उन्हें कठपुतली की तरह नचाती रहती है ।

प्रचलन का सम्मोहन जिन्हें वशवर्ती बनाए रहता है, जो समुदाय से प्रभावित परिचालित होते हैं । वे सामान्यजनों में ही गिने जाते हैं । उनसे न कुछ महत्त्वपूर्ण सोचते बनता है और न करते । आहार निद्रा की लहरों में डूबते-तैरते किसी प्रकार जिन्दगी पार करते हैं । जिन्हें आत्मबोध का प्रकाश मिलता है, वे इतने भर से संतुष्ट नहीं रहते, उन्हें महानता की आकांक्षा कचोटती है । फलतः ऐसी दिशाधारा खोजते हैं, जो व्यक्तित्व में दैवी तत्वों का समावेश कर सकें ।

इस मार्ग पर चलने, इस प्रयास में लगने के लिए लौकिक प्रयत्न तो करने ही पड़ते हैं । स्वाध्याय, सत्संग का, चिन्तन-मनन का आश्रय तो लेना ही पड़ता है, साथ ही एक कदम बढ़ाकर प्राण तत्व की अतिरिक्त मात्रा का भी संचय करना पड़ता है । सामान्यतया किसी को प्राण की एक सीमित मात्रा ही उपलब्ध होती है । उस विभूति को अधिक मात्रा में हस्तगत करने के लिए प्राणाकर्षण की विशेष साधना करनी पड़ती है । प्राणाकर्षण का अर्थ है, ब्रह्माण्ड-व्यापी महाप्राण में से खींचकर अपनी पात्रता को फुला-फैलाकर उसमें अभीष्ट वैभव को संचित, संकल्पित करना । इसी क्रिया विज्ञान को प्राणायाम भी कहते हैं ।

जन्म से मरणपर्यन्त हमें साँस लेने, छोड़ने का क्रम चलाना पड़ता है । वायु को नथुनों द्वारा लिया, फेंफड़ों में भरा, अंग-प्रत्यंगों में फैलाया जाता है । अपनी पहुँच की परिधि में वह बुहारी लगाती है और कचरे को बाहर निकाल फेंकती है । इसी प्रकार सामान्य परिशोधन होता रहता है । वायु के साथ शरीर को पोषण देने वाला ऑक्सीजन तत्व भरा रहता है । यही ईंधन बनकर जलता और शरीर संचालन के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न करता है । इतनी जानकारी हर किसी को होती है; किन्तु इस रहस्य को आध्यात्म विज्ञानी ही जानते हैं कि, ऑक्सीजन के अतिरिक्त वायु में प्राण तत्व की उपस्थिति भी रहती है । इसे ऑक्सीजन नहीं, उससे उच्चस्तरीय चेतना मिश्रित धारा कह सकते हैं । यह अनायास में नासिका मार्ग से भीतर घुसती निकलती नहीं रहती, वरन् उसे संकल्प शक्ति को उभार कर विशेष प्रयास द्वारा खींचने और धारण करने का अभ्यास करना पड़ता है । इस अभ्यास में जितनी अधिक पकड़ होती है, उतनी ही शक्ति लगाकर वह प्राण तत्व को उतनी ही मात्रा में आकर्षित करने, पकड़ने, धारण करने में समर्थ होती है । प्रयोक्ता इसे इच्छित मात्रा में प्रयत्नपूर्वक उपलब्ध कर सकते हैं और उसे जिस भी प्रयोजन में खर्च करना चाहें, उसमें खर्च कर सकते हैं । इसे प्राणविज्ञान कहा जाता है । आध्यात्म क्षेत्र की इसे एक बड़ी उपलब्धि माना जाता है । अतिरिक्त प्राण का अनेक प्रयोजनों में उपयोग होता है । ऑक्सीजन तो श्वास-प्रश्वास का प्रयोजन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही पूरा करती है; किन्तु प्राण के द्वारा साधक अपने मानस तन्त्र का स्तर भी बढ़ा सकता है और प्रभाव एवं कार्यक्षेत्र भी ।

प्राण के आधार पर सामान्य बुद्धि में वैसी तीक्ष्णता आती है, जैसी कि दार्शनिकों, वैज्ञानिकों, विशेषज्ञों में देखी जाती है । प्राण के द्वारा मनोविकारों को जलाया जा सकता है । चिन्तन क्षेत्र में आदर्शवादिता एवं विवेकशीलता का उद्यान उभारा जा सकता है । प्राण का मन पर नियन्त्रण है । चित्त-वृत्तियों के निरोध की, मनोनिग्रह की, एकाग्रता सम्पादन की, आध्यात्म उत्कर्ष के निमित्त पग-पग पर पल-पल में आवश्यकता पड़ती है । मनस्वी बनने के लिए प्राण तत्व की अधिक मात्रा संकलित करनी पड़ती है । इसके बिना ओछी चतुरता ही हाथ रह जाती है और वह कुटिलता भरे छल-प्रपंच ही रचती रहती है । महामानवों जैसी विशेषताएँ उत्पन्न करने के लिए मनःक्षेत्र को प्राण प्रेरणा के माध्यम से उभारना पड़ता है ।

प्राण की शक्ति बिजली की तरह धावमान भी है और विद्युत उत्पादक यंत्र की तरह स्थिर भी । उससे आत्मविकास के हर पक्ष में अभिनव चेतना का संचार किया जा सकता है । साधक व्यक्तिवान, प्रतिभावान, विवेकवान और सामर्थ्यवान बन सकता है । इनकी कमी से जिन कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, उनसे उवर सकता है । साथ ही यह भी सम्भव है कि इस उपार्जित सम्पदा का एक भाग किसी जरूरतमन्द के लिए हस्तान्तरित किया जा सके । इसे शक्तिपात भी कहते हैं और प्राण अनुदान-लाभदायक वरदान भी । जिस प्रकार आग की तपती भट्ठी के निकट बैठने वाले शीत से मुक्ति पाते हैं, उस ऊर्जा का अनेकानेक कार्यों में उपयोग कर सकते हैं, उसी प्रकार यह भी सम्भव है, प्राण सम्पदा के धनी द्वारा अपनी उस ऊर्जा को हस्तान्तरित किया जा सके । रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द को, चाणक्य ने चन्द्रगुप्त को, समर्थ ने शिवाजी को मात्र आशीष ही नहीं दिया था, इसके साथ ही इन शिष्यों को प्राण अनुदान भी प्रदान किया था । इसी आधार पर वे व्यक्तित्व सम्पन्न बने और महान कार्यों का सूत्र संचालन कर सके । ईसा अपनी प्राण चेतना को रोगियों और पतितों में वितरित किया करते थे ।

इस शक्ति का दुष्प्रयोजन के लिए भी प्रयोग हो सकता है । तांत्रिक, कापालिक, अघोरी इसी शक्ति के बलबूते प्रतिपक्षियों को त्रास देते हैं । मारण, मोहन, वशीकरण, उच्चाटन, स्तम्भन आदि के प्रयोगों से दूसरों को हानि पहुँचाकर अपनी अहंता का पोषण किया जाता है । चाकू से फल काटने का काम भी लिया जा सकता है और किसी पर प्राणघातक आक्रमण करने का भी । यह प्रयोक्ता की मनःस्थिति पर निर्भर है कि शक्ति साधनों को किस के लिए, किस प्रकार प्रयोग करे ?

प्राणाकर्षण की विद्या, सार्वभौम है । इसमें सम्प्रदाय भेद, भाषा भेद, जाति भेद, लिंग भेद आदि के कोई व्यवधान आड़े नहीं आते । यों इस विज्ञान के अनेकानेक भेद-उपभेद हैं और उन्हें विभिन्न कार्यों के लिए विभिन्न प्रकार से प्रयुक्त किया जाता है, पर इन पंक्तियों में प्रारम्भिक स्तर की वह प्रक्रिया ही वर्णित की गई है, जिसे सर्वसुलभ और सर्वजनीन कहा जा सके ।

इस अभ्यास के लिए प्रातःकाल का समय सर्वोत्तम है, क्योंकि रात्रि के शान्त समय में कोलाहल, प्रदूषण, अन्धड़ की सभी अनुपयुक्तताएँ नीचे बैठ जाती हैं एवं जलाशयों, वृक्ष-वनस्पतियों द्वारा सोख ली जाती हैं । प्रभात के ब्रह्ममुहूर्त में प्रकृति अपेक्षाकृत अधिक सौम्य, शान्त एवं शीतल रहती है । आध्यात्मिक साधनाओं के लिए वह समय सर्वोत्तम माना गया है । वैसे अध्ययन, व्यायाम आदि के लिए भी उस समय की अधिक उपयुक्तता है ।

प्राणाकर्षण साधना खुली जगह में करनी चाहिए, शुद्धता जितनी अधिक रह सके, उतनी उत्तम । आसन बिछाकर पूर्वाभिमुख बैठना चाहिए । समय सूर्योदय से एक घण्टा पहले से लेकर एक घण्टा बाद तक का रखा जा सकता है ।

मेरुदण्ड सीधा रहे । आँखे बन्द । हाथ गोदी में । चित्त शान्त । यह ध्यान मुद्रा है । प्राणायाम में भी इसी का उपयोग किया जाता है ।

भावना करनी चाहिए कि संसार भर में वायु के साथ-साथ जो प्राण सम्पदा भरी हुई है, उसी को उभारना और खींचना अपना उद्देश्य है । तालाब में जिस प्रकार मछली रहती है, अपनी स्थिति भी वैसी ही अनुभव करनी चाहिए कि प्राण समुद्र चारों ओर लहलहा रहा है और अपनी स्थिति उसके मध्य मछली जैसी है । प्राण सब ओर से अपने भीतर प्रवेश कर रहा है । अपना चुम्बकत्व उसे परिपूर्ण मात्रा में खींचकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अवशोषण कर रहा है । इसी मनःस्थिति में, भाव धारणा में प्रायः दस मिनट रहा जाय ।

इसके उपरान्त प्राणायाम का क्रम चलता है । दोनों नथुनों से धीरे-धीरे साँस खींची जाय और उसे जितनी अधिक मात्रा में भरा जा सकता हो, भरा जाय । साथ ही यह संकल्प भी उभरना चाहिए कि साँस के साथ प्रचुर परिमाण में प्राण तत्व भी अन्तराल में प्रवेश कर रहा है । इसी ऊर्जा अवतरण की अनुभूति भी किसी रूप में होती रहे, इसके लिए भावना क्षेत्र को उद्यत एवं तत्पर करना चाहिए ।

साँस खींच चुकने पर उसे भीतर रोका जाय । रोकने का समय खींचने से आधा रहे । इस समय में भावना की जाय कि जो प्राण भीतर पहुँचा है, उसे जीवकोशों द्वारा चूसा जा रहा है और काया का प्रत्येक घटक ऊर्जा से अनुप्राणित हो रहा है ।

अब साँस को छोड़ना आरम्भ किया जाय मान्यता अपनायी जाय कि भीतर भरे समस्त अवांछनीय तत्वों का साँस के साथ बहिर्गमन हो रहा है और उस भार से पूरी तरह मुक्ति मिल रही है । हल्कापन अनुभव हो रहा है ।

पूरी साँस निकल जाने पर जितनी देर भीतर साँस रोकी गई थी, उतनी ही बाहर भी रोकी जाय अर्थात् बिना साँस के रहा जाय और भावना की जाय संसार के बाहरी प्रभाव अपने स्थान पर रुक गए और अन्तर्मुखी स्थिति सुरक्षित हो गई ।

यह एक प्रयोग हुआ । इसे आरम्भिक दिनों में न्यूनतम दस बार किया जाय । हर सप्ताह एक-एक प्राणायाम बढ़ाया जाय । अन्ततः उसकी संख्या २५ तक पहुँचायी जाय । साधना भले ही सीमित हो पर उसके साथ भावना का गहरा पुट लगा रहे । सफलता का यही रहस्य भरा तत्वज्ञान है ।

प्राण विद्युत का सम्वर्धन तेजोवलय का अभिवर्धन

जीवात्मा के साथ लिपटे हुए तीनों शरीरों का अपना-अपना महत्त्व अपना-अपना उपयोग है । प्रत्यक्षः उनके विकास की उत्साहवर्धक उपलब्धि का प्रत्यक्ष जीवन में अनुभव किया जा सकता है । स्थूल शरीर स्वस्थ, समर्थ और सुन्दर लगे, दीर्घायुषी बने, तो उसे हरेक पसन्द करेगा और इस सफलता को अपना सौभाग्य मानेगा । अपने आपको भी अपनी सत्ता शरीर तक सीमित लगती है । दूसरे तो पूरी तरह वैसा ही मानते हैं । व्यावसायिक, पारिवारिक, सामाजिक सम्बन्ध शरीरों के साथ ही जुड़ते हैं । जन्म पर हर्ष और मरण पर शोक उसी के लिए मनाया जाता है । यह परिचय सम्पर्क पंच तत्वों से बने काय कलेवर के हैं । प्रत्यक्ष की दृष्टि से इतना ही औचित्य भी है और सम्भाव्य भी, पर जब उसकी सूक्ष्मता में प्रवेश करते हैं, तो विदित होता है कि, चेतना क्षेत्र अभी और शेष रह गया । शरीर जड़ ही नहीं, उसके भीतर सचेतन भी चमकता-झाँकता दिखाई पड़ता है । इस शरीर चेतना की अपनी उपलब्धियाँ हैं । उसे कुण्डलिनी शक्ति की विशिष्ट क्षमता समझा जा सकता है । काया रक्त ही नहीं प्राण भी है । इसके आधार पर समर्थता उपलब्ध होती है, किन्तु कायिक प्राण की क्षमता चमत्कारी होती है उसमें तेजस्विता एवं आकर्षण शक्ति भरी रहती है । विकर्षण की प्रहार क्षमता भी ।

जिसकी कुण्डलिनी जाग्रत है, उसकी काया में ओजस् का प्राण प्रवाह फूलता रहता है । वह सम्पर्क में आने वालों को अपने अनुकूल-अनुरूप बना सकता है, अपने प्रभाव से निकटवर्ती वातावरण को विशेष स्तर का बना सकता है । ऋषियों के आश्रम में सिंह, गाय एक घाट में पानी पीते थे, हिलमिल कर रहते थे, पर जब वहाँ से चले जाते थे, तो पूर्वत् व्यवहार करने लग जाते थे । प्राण शक्ति का चमत्कार सीमित क्षेत्र में चमत्कार दिखाता है । कुण्डलिनी की क्षमता से साहस और प्रभाव असीम मात्रा में उभरता है । इससे साधक का न केवल आत्म-विश्वास उभरता है, वरन् उसके क्रिया प्रभाव में भी अनेक गुण-कौशल भर जाता है । जीवन सामान्य स्तर का न रह कर असामान्य बन जाता है । अनेकों को शक्ति प्रदान करना, ऊँचा उठाना, बढ़ाना ऐसे ही लोगों से बन पड़ता है, जिनके काय कलेवर प्राण ऊर्जा की अतिरिक्त मात्रा से भरे होते हैं । यह जीवनचर्या के संयम, अनुशासन, आत्म-विश्वास और महान दायित्वों के परिवहन से ही सम्भव हो सकता है, उसका साधनात्मक तरीका यह भी हो सकता है कि कुण्डलिनी जागरण की विद्या अपनायी जाय । इसमें जननेन्द्रिय मूल में सन्निहित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महासर्पिणी जैसी प्राण ऊर्जा को जगाया जाता है । वह ज्वाल-माल की तरह ऊँची उठकर मेरुदण्ड मार्ग से मस्तिष्क, मध्य ब्रह्मरन्ध्र पहुँचती है । मेरुदण्ड मार्ग से गुजरते हुए उसे उस प्रवाह में विद्यमान छः चक्रों का, चक्रवातों का, भँवरों का वेधन करना होता है । इन केन्द्रों की प्रसुप्त शक्ति जब जाग्रत होती है, तो अपने निकटवर्ती पदार्थों और प्राणियों को प्रभावित करती है । एक सीमा तक वातावरण में भी अभीष्ट परिवर्तन करती है । ऐसी अनेक कसौटियों पर कसने से प्रतीत होता है कि स्वस्थ सामान्यजनों में पायी जाने वाली समर्थता की तुलना में उनकी क्षमता कहीं अधिक विकसित होती हैं । जिसने उस क्षेत्र की प्राण प्रक्रिया को जगा लिया है । पंचतत्वों में पंच प्राणों का समन्वय हो जाने पर अनेक स्तर के प्रभाव-चमत्कार दीख पड़ते हैं । आवश्यक नहीं कि उन्हें मैस्मरेजम-हिप्नोटिज्म की तरह प्रदर्शन के लिए प्रयुक्त किया जाय । बढ़ी हुई क्षमता को उन महत्त्वपूर्ण कार्यों के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है, जिन्हें महामानवों द्वारा सम्पन्न किए गए महान कार्यों के समतुल्य समझा जा सके । मानवी विद्युत का एक स्वरूप शरीर के इर्द-गिर्द विद्यमान तेजोवलय के रूप में जाना जाता है । यह एक समर्थ कवच है जो बाहरी आघात आक्रमणों से रक्षा करता है और अन्यान्यों को अपने अनुशासन में चलने के लिए बाधित कर सकता है । ओजस् सचमुच ही शरीर क्षेत्र का एक विद्युत भण्डार है, जिसे समयानुसार अभीष्ट प्रयोजनों के लिए सफलतापूर्वक प्रयुक्त किया जा सकता है ।

ओजस् का वैज्ञानिक पर्यवेक्षण तेजोवलय के रूप में देखा गया है । वह शरीर के चारों ओर छः इंच की दूरी तक फैला हुआ विशेष यन्त्रों द्वारा देखा जा सकता है । चेहरे पर उसकी मात्रा, सघनता की परिधि अधिक होती है । इसे एक प्रकार की भाप समझा जा सकता है । चूल्हे पर पानी चढ़ा देने से उसमें से भाप उठती है । यह भाप निकट क्षेत्र में तो खुली आँखों से भी देखी जा सकती है, पर कुछ ऊँची उठने के बाद वह बिरल एवं अदृश्य हो जाती है । फिर भी उसका अस्तित्व बना रहता है । रात्रि को शीतलता का सम्पर्क होने पर वह घास-पात पर ओस बिन्दु बनकर जमा हो जाती है । इसी प्रकार स्थूल शरीर एवं उसमें हुई प्राण चेतना का समन्वय जब क्रियाशील होता है, तो उस ऊर्जा का भीतरी क्रिया-कलाप जलने के अतिरिक्त त्वचा के बाहर भी उसका फैलाव होता है । यही ओजस् या तेजोवलय है ।

तेजोवलय अपना काम अनायास ही अपने ढंग से करता रहता है । शरीर के ऊपर वह रक्षा कवच की तरह चढ़ा रहता है । बाहरी आक्रमणों से रक्षा करता है । जो हानिकारक तत्व विषाणुओं के रूप में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष आक्रमण करते रहते हैं, उनके प्रहारों से बचाव करता है । सामान्यजनों को वातावरण के सम्पर्क का प्रभाव अपनी ओर खींच ले जाता है, हावी हो जाता है । फलतः व्यक्ति अपने को असहाय अनुभव करता है । बिल्ली के मुँह में दबे हुए चूहे की तरह समीपवर्ती प्रभावों से प्रभावित होता चला जाता है । अपनी निरोधक शक्ति प्रायः सीमित, न्यून पड़ने लगती है । जीवट भी स्वल्प मात्रा में होती है । किन्हीं कारणों से मनुष्य देखने में भला चंगा होने पर भी भीतर से खोखला बना रहता है, यही वास्तविक दुर्बलता है । इस स्तर के दुर्बल व्यक्ति न पराक्रम कर पाते हैं और न साहस दिखा पाते हैं । सृजन प्रयोजनों में उनका व्यक्तित्व बहुत हल्का पड़ता है । प्रकृतिगत वातावरण जन्य मानसिक प्रहार एवं पतनोन्मुख आकर्षण इन दुर्बलों को चाहे जिस दिशा में घसीटते और कठपुतली की तरह नचाते रहते हैं । उनकी अपनी सृजन क्षमता, संकल्प शक्ति कुछ ऐसा नहीं कर पाती कि, अपनी आकर्षण शक्ति से अभीष्ट सहयोग सम्मान, विश्वास खींचकर बुला सके । इस अभाव को आध्यात्म की भाषा में ओजस् की कमी कह सकते हैं, जिसे उपकरणों से अथवा दिव्य चक्षुओं से प्रत्यक्ष भी देखा जा सकता है, तेजोवलय वस्तुतः अन्तरंग में समाहित प्राण शक्ति का बाहर झाँकता हुआ, मँडराता हुआ स्वरूप है । इसे दृष्टि कौतुक या अविज्ञात का ज्ञान भर नहीं समझा जाना चाहिए, वरन् यह मानकर चलना चाहिए कि बलिष्ठता का यह जीवन्त प्रमाण परिधान है ।

तेजोवलय की स्थिति में प्रयत्नपूर्वक परिवर्तन किया जा सकता है । वह उच्चस्तरीय भी होता है और निकृष्टतम भी । रूप सौन्दर्य वाले व्यभिचारियों में, वेश्याओं में, ठगों में, क्रूर आक्रान्ताओं में यह भयावह स्तर का होता है । इसे असुरता का परिचायक कह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सकते हैं । इसका सघन होना धारणकर्त्ता के पतन का द्वार खोलता है । जिस पर प्रभाव छोड़ता है उसे अशक्त, असहाय बनाकर निर्जीव पराधीन की स्थिति में ला पटकता है । इस आसुरी तेजोवलय का रंग कालिख लिए हुए होता है । दैत्य-दानवों की आकृतियाँ काले रंग की चित्रित की जाती हैं, पर यह त्वचा की निरख-परख पर लागू नहीं होतीं । गोरे रंग के हिटलर एवं नीत्से जैसे महत्त्वाकांक्षी व्यक्तियों का व्यक्तित्व दानवी पाया गया । रावण आदि लंकावासी हो सकता है कि गोरे रंग के रहे हों । ऊष्ण कटिबन्ध क्षेत्र में रहने वाले सभी निवासियों की चमड़ी काली होती है, पर उनमें भी सज्जनता का बाहुल्य पाया जाता है । इस प्रकार रंगों का निर्धारण त्वचा को देखकर नहीं, तेजोवलय में घुले काले रंगों को देखकर किया जाता है । सन्त, सज्जन एवं देव प्रकृति के लोगों का तेजोवलय पीली झलक लिए हुए प्रतीत होता है । वे समीपवर्ती लोगों को विविध-विध, अनुग्रह, अनुदान अनायास ही देते रहते हैं ।

तेजोवलय की न्यूनाधिकता तथा रंगों की झलक देखते हुए व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक स्थिति का अन्तः स्वरूप जाँचा जा सकता है । भले-बुरे की, दुर्बल-सबल की, दुर्जन-सज्जन की परख की जा सकती है । उनसे बचा अथवा लिपटा जा सकता है । व्यक्तियों का विश्लेषण, इस आधार पर हो सकता है कि किसके शरीर में कहाँ किस प्रकार के विजातीय द्रव्य जमा हैं, इस प्रकार का रोग निदान जहाँ अंग परीक्षण की अन्यान्य निदान पद्धतियों द्वारा होता है, वहाँ यह कार्य विभिन्न स्थानों से शरीर में उभरने वाले भिन्न-भिन्न स्तर के तेजोवलय को देखते हुए भी वस्तुस्थिति समझ कर सम्पन्न किया जा सकता है । इसी प्रकार मानसिक न्यूनताओं, विपन्नताओं को भी समझा जा सकता है । चरित्र का भी बहुत हद तक पता लगाया जा सकता है । तेजोवलय को पढ़ सकने की प्रक्रिया यदि किसी को हस्तगत हो सके तो, वह दूसरों के बारे में इतना अधिक जान सकता है, जितना कि गहरी जाँच-पड़ताल से भी सम्भव नहीं । इस आधार पर अनुपयुक्त सम्पर्क से बचा जा सकता है और उपयुक्त सान्निध्य से शक्ति वर्षा जैसा लाभ उठाया जा सकता है ।

तेजोवलय मात्रा स्थिति का परिचायक नहीं है । उसे घटा-बढ़ाकर दूसरों की स्थिति में ऐसा परिवर्तन किया जा सकता है, जिससे समग्र सन्तुलन बन सके । विपन्नता सुधारी और सुसंस्कारिता बढ़ाई जा सके ।

जिस प्रकार पैसे के लेनदेन से रुके व्यवसाय चल पड़ते हैं, उसी प्रकार तेजोवलय की आवश्यक मात्रा किसी को हस्तान्तरित करके, उसके द्वारा शारीरिक रोगों से, मानसिक उद्वेगों से, प्रतिकूलता भरे संकटों से, अभावों से, कषाय-कल्मषों से भी छुटकारा दिलाया जा सकता है । यह एक बड़ी उपलब्धि है । शरीर में माँस तो खा-पीकर भी बढ़ाया जा सकता है, पर उसमें प्राण तत्व की प्रचुरता भर लेना, यह एक असाधारण कौशल एवं पुरुषार्थ है । इसे पाकर निजी व्यक्तित्व को समुन्नत स्तर का प्रभावशाली, प्रतिभावान बनाया जा सकता है । इसके अतिरिक्त यह भी हो सकता है कि सम्पर्क क्षेत्र में इतना अदृश्य अनुदान बाँटा जा सके, जिसकी तुलना कर्ण जैसे दानवीर से की जा सके ।

इस हेतु प्राण अभिवर्धन के लिए साधनात्मक प्रयोग करने पड़ते हैं । इसके लिए प्राण योग से सम्बन्धित ऐसी साधनाएँ करनी पड़ती हैं, जो अपने स्तर के अनुरूप हों । सभी भेड़ों को तो एक लाठी से हाँका जा सकता है, पर ऐसा नहीं हो सकता कि सभी साधकों को एक ही साधना बतायी जा सके । रोग-निदान व उनकी स्थिति में भिन्नता के आधार पर उन्हें भिन्न-भिन्न औषधियाँ दी जाती हैं । भले ही वे स्वस्थता के लिए लालायित एक जैसी मनःस्थिति के क्यों नहीं हों ? यह बात साधना के सम्बन्ध में भी है । प्राण योग के अन्तर्गत प्राणाकर्षण का, प्राणायाम प्रक्रिया का, सर्वसुलभ आकर्षक प्रयोग है, पर उसे अन्त नहीं, आरम्भ समझना चाहिए और उसका अभ्यास बन पड़ने पर अपने अनुकूल प्राणायाम चुनना चाहिए । लोम-विलोम प्राणायाम, सूर्य वेधन प्राणायाम तथा नाड़ी शोधन प्राणायाम आदि के अपने-अपने विधान हैं । जिनका विस्तार प्रसंग आने पर उपयुक्त मार्ग-दर्शक से समझा जा सकता है ।

संकल्प शक्ति को बढ़ाना भी इसी प्रक्रिया का व्यावहारिक पक्ष माना गया है । इसके लिए आत्म संयम एवं परमार्थ के छोटे-छोटे पुण्य प्रयासों के ऐसे संकल्प लेने चाहिए, जो सरल भी हों और नियत अवधि में निश्चित रूप से पूरे भी हो सकें । जो अपनी स्थिति एवं रुचि के अनुरूप हों, उसके लिए व्रत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लेने का साहस करना चाहिए, उसे हर हालत में करते रहने का प्रण करना चाहिए । इतनी तत्परता और तन्मयता उसमें नियोजित करनी चाहिए, जिससे उसका पूरा कर सकना सुनिश्चित रूप से सम्भव हो सके । ऐसे छोटे-छोटे व्रत लेते रहने और पूरे करते चलने की शृंखला मनोबल बढ़ाने में अत्यन्त सहायक होती है । घरेलू एवं व्यावसायिक क्रियाकलापों को नित्य ही करना पड़ता है । उनका अनुमान अभ्यास भी रहता है, किन्तु व्रत धारण एवं पुण्य परमार्थ की दिशा में कहना-सुनना ही बन पड़ता है । उसे व्यवहार में उतारने का यदा-कदा ही अवसर मिलता है । इस अपेक्षित दिशा में प्रगति होनी चाहिए, तभी प्राण चेतना को बढ़ा सकना सम्भव है ।

प्राण तत्व ही मनुष्य में उच्चस्तरीय समर्थता का आधार है । तेजोवलय के रूप में उसी की व्याख्या-विवेचना होती है । इस दिव्य क्षमता को उपलब्ध करने के लिए जहाँ योग साधनाओं का महत्त्व है, वहाँ संकल्प शक्ति का भी स्थान है । जिन्हें इच्छा उत्कण्ठा है, उन्हें अपना संकल्प बल विकसित करने के लिए पुण्य-परमार्थ के साधना व्रत-संयम निभाते हुए सम्पन्न करते रहना चाहिए ।

कारण शरीर की विकासोन्मुख ध्यान धारणा

ईश्वर, जीव, प्रकृति की विवेचना ही आध्यात्म तत्वज्ञान का प्रमुख विषय है । इन तीनों की सत्ता मानवी काय-कलेवर में विद्यमान है । स्थूल शरीर प्रकृति का प्रतिनिधित्व करता है, सूक्ष्म शरीर जीव चेतना का और कारण शरीर अन्तःकरण का तारतम्य परब्रह्म के साथ जोड़ता है । इस समस्त ब्रह्माण्ड का प्रसार-विस्तार मनुष्य की प्रत्यक्ष सत्ता में अप्रत्यक्ष रूप से अपने मनोरम स्वरूप को दर्शाता है ।

क्रिया और कल्पना यह दोनों तत्व अन्यान्य प्राणियों में न्यूनाधिक मात्रा में पाये जाते हैं । मनुष्य में जो अतिरिक्त भाव तत्व है, वही उसकी आध्यात्मिक विशेषता है । यही वह सीढ़ी है, जिसके सहारे परब्रह्म के साथ सगन सायुज्य बनता है । यही वह विशेषता है, जिसके कारण उसे ईश्वर का युवराज कहा जाता है ।

क्रियायोग को सांसारिक सफलता के लिए, वैचारिक तत्व दर्शन को प्रज्ञा की उपलब्धि के लिए और भाव योग को दिव्य तत्व के साथ एकात्मकता प्राप्त करने के लिए आवश्यक माना जाता है । भक्ति योग सबसे ऊँचा है । मीरा कहती थी "सबसे ऊँची प्रेम सगाई" प्रेम के बन्धनों में बँधकर माता-सन्तान में, पति-पत्नी में, मित्र-मित्र में घनिष्ठता पैदा होती है, उसका आनन्द लेने सभी भावुक जन देखे जाते हैं । यही जब आदर्शों के समुच्चय परब्रह्म के साथ जुड़ जाता है, तो आत्मा परमात्मा में समर्पित होकर तद्रुप बन जाता है । इसी को जीवन का परमलक्ष्य माना गया है । चेतन जगत की विशालता ही परमेश्वर है, उस के अनुरूप भक्तजन अपने को सुविस्तृत करते हैं । समर्पण साधना यही है । अद्वैत चिन्तन इसी को कहते हैं । तादात्म्यता में ही ईश्वर दर्शन का ऐसा रसास्वादन मिलता है, जिसकी प्यास में जीव कस्तूरी के हिरन की तरह दिशा-दिशा में तलाशता भागता फिरता है ।

उच्चस्तरीय भाव सम्वेदना विकसित करने के लिए आरम्भिक अभ्यास यह है कि किसी परमार्थ प्रतीक को अपना इष्ट बनाकर उसके साथ आत्मीयता का सघन सम्बन्ध जोड़ता है । साकार उपासक इसके लिए किसी देव प्रतिमा को अपना आराध्य बनाते हैं और उसकी प्रत्यक्ष स्थापना करके भाव भरा सर्वोच्च रिश्ता जोड़ते हैं । देव प्रतिमाओं के माध्यम से निराकार परब्रह्म की अचिंत्य छवि को दृश्यमान-साकार बनाते हैं । इस साकार उपासना में दो परिकल्पनाएँ करनी होती हैं । एक यह कि प्रस्तुत प्रतिमा धातु या पाषाण नहीं वरन् उच्च आदर्शों की संगठना है । इसके प्रत्येक अवयव में अपने-अपने स्तर की उत्कृष्टता झलकती है । इस प्रकार की मान्यता 'विश्वास' कहलाती है । इस स्थापना पर श्रद्धा का, आत्मीयता का आरोपण किया जाता है । उसके प्रति प्रेम भाव दर्शाने के लिए नवधा भक्ति प्रयुक्त होने वाले पूजा अर्चन के पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि अर्पित करने होते हैं । वस्तुओं का यह उत्पादन वस्तुतः अपनी विभूतियों को विराट् ब्रह्म के लिए स्थायी समर्पण करने की मानसिकता को जगाता है ।

प्रकारान्तर से साकार पूजा अर्चना इस मानसिक पृष्ठभूमि का निर्माण है कि आदर्शों के प्रति अपना, श्रम मनोयोग एवं साधन इस स्तर का अर्पित किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जायेगा कि जिसमें उदासीनता का पुट नहीं गहरी उमंगों का भावुक समावेश हो इस प्रयास को परमार्थ परायणता की तैयारी कह सकते हैं । बुद्ध जीव संकीर्ण स्वार्थपरता के छोटे दायरे में नाली के कीड़ों की तरह हाथ-पैर पटकता रहता है । गूलर के पेड़ों में उगते रहने वाले भुनगों की तरह अंधी हलचलें करता रहता है, पर जब उसके अन्तराल में प्रेम भावना का उदय होता है, तो 'स्व' को 'पर' में समर्पित करने के लिए आतुर हो उठता है ।

प्रेम को प्रतिमा के माध्यम से गुरु या महामानव को आधार मानकर तो किया जा सकता है, पर उसे उस दायरे में सीमित नहीं रखा जा सकता । सूर्य पूर्व से उदय तो होता है पर सदा उदयाचल पर ही नहीं बैठा रहता । उसे समस्त जगत पर अपनी ऊर्जा-आभा बखेरनी पड़ती है । भक्तजन किसी छोटे भगवान के साथ लिपटकर छोटे नहीं बने रहते, वरन् महान के साथ जुड़कर अपना दृष्टिकोण, चिन्तन एवं प्रयास सम्पर्क क्षेत्र से आगे बढ़ाकर अधिकाधिक सुविस्तृत करते जाते हैं । अग्नि के लिए समर्पित होने वाला ईंधन अग्नि रूप ही हो जाता है । भक्त की समस्त भाव सम्वेदनाएँ ईश्वर जैसी उदार एवं महान बनती जाती हैं । उसे सत्य प्रवृत्ति सम्वर्धन के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं ।

निराकार साधना का एक ही उपाय-उपचार है, ध्यान । तत्परता, तन्मयता की प्रतिक्रिया ही एकाग्रता के रूप में दृष्टिगोचर होती है । महान प्रयोजन के साथ जुड़ते ही चंचलता चली जाती है और उद्देश्य के प्रति ऐसी लगन लगती है कि अन्य कहीं मन दौड़ता ही नहीं । मनोनिग्रह को शक्तियों का, सिद्धियों का, विभूतियों का केन्द्र माना गया है । यह मनोयोग साधने के लिए ध्यानयोग का आश्रय लेना पड़ता है । ध्यान का अर्थ है—मानसिक बिखराव को रोककर उसे तीक्ष्ण बनाना और बाण की तरह निर्धारण में अपने साधनों को प्रविष्ट करवाना । अर्जुन को मत्स्य वेध की सफलता इसी आधार पर मिली थी । आतिशी शीशे के छोटे से दायरे में सूर्य किरणों को एकत्रित करने पर बिन्दु पर आग जलने लगती है । ठीक इसी प्रकार ध्यान की सघनता से अन्यान्य विषयों पर मन नहीं भटकता । इष्ट और भक्त एक हो जाते हैं । ध्यान योग की यही पृष्ठभूमि है ।

जार्ज बर्नार्डशा जैसे साहित्यकार, राममनोहर लोहिया जैसे समाज सेवी बहुत आग्रह करने पर भी विवाह के लिए तैयार नहीं हुए, वे कहते थे, इससे ध्यान बँटेगा और जिस एकाग्रता पूर्वक निर्धारित लक्ष्य में लगे, उतनी तन्मयता फिर न रह सकेगी और कार्य में व्यवधान आ जायेगा । ध्यान योग का स्वरूप यही है कि चित्तवृत्तियों की भगदड़ रुक जाय और एक केन्द्र पर पूरी तरह टूटे । बिखरी भाप निरर्थक चली जाती है, पर जब उसे एक केन्द्र पर नियोजित किया जाता है, तो रेलगाड़ी ले दौड़ती है । बारूद फैली हुई रहे, तो चिनगारी लगने पर 'भक' से जल जाती है, पर जब उसे बन्दूक की छोटी नाली में भरकर एक निशाने पर दागा जाता है, तो उसे बिस्मार करके रख दिया जाता है । फायर ब्रिगेड का पानी भी जब एक छोटी नली में होकर फेंका जाता है, तो उसकी तेज धार अग्निकाण्ड को बात ही बात में बुझा देती है ।

ध्यान धारणा के लिए कोलाहल और हलचलों रहित स्थान चुनना चाहिए । पूर्व में मुख रखें । प्रातःकाल का वह समय निकालें जिसमें सूर्य क्रमशः उदय होता हो । ऐसा स्थान या तो सबसे ऊपर वाली छत पर हो सकता है या ऐसा मैदान जिसमें पहाड़ियों, पेड़ों की ऊँचाई प्रातःकालीन सूर्य दिशा में बाधा न पहुँचाती हों । एक-दो सेकण्ड ही खुले सूर्य का दर्शन करके आँखें बन्द कर लेनी चाहिए और भावना करनी चाहिए कि चारों ओर संव्याप्त प्रकाश को अपने तीनों शरीरों में खींचा और भरा जा रहा है ।

शरीर के तीन शक्ति केन्द्र हैं । नाभि स्थूल शरीर से सम्बन्धित । मस्तिष्क-सूक्ष्म शरीर का केन्द्र बिन्दु । हृदय कारण शरीर की भाव सम्वेदनाओं का उद्गम । इन तीनों ही स्थानों पर छोटे कमल केन्द्रों की स्थापना भावनापूर्वक नियोजित करनी चाहिए । सूर्य का प्रकाश पाते ही कमल पुष्प खिलने लगते हैं । वही उपक्रम अन्तराल के तीनों कमलों को सविता देव के अरुणोदय प्रकाश से खिलते हुए अनुभव करना चाहिए । कमल पुष्पों के प्रातःकालीन सूर्य प्रकाश के साथ खिलने की स्थूल और सूक्ष्म शरीरों सहित विशेषतया हृदय-कमल खिलने की अनुभूति उभारनी चाहिए । खिले कमल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुष्प से सुगन्ध, शोभा, कोमलता और सात्विकता का अधिकाधिक समावेश होता जाता है । भावना करनी चाहिए कि कारण शरीर हृदय कमल में इसी प्रकार सर्वतोमुखी विकास के दिव्य अनुदानों से लाभान्वित हो रहा है । इस साधना को पन्द्रह मिनट से आरम्भ कर क्रमशः बढ़ाते हुए आधे घण्टे तक पहुँचाने का निर्धारण करना चाहिए । इस प्रक्रिया से जो उपलब्धियाँ हस्तगत होती हैं, वे साधक को निहाल कर देती हैं ।

समग्र साधना का व्यावहारिक स्वरूप

तीनों शरीरों के परिष्कार एवं उन्नयन के लिए अपना प्रयास उसी प्रकार नियमित रूप से जारी रखना चाहिए, जिस प्रकार पहलवान बनने वाले अखाड़े में, विद्वान बनने वाले विद्यालय में और धनी बनने वाले कारखाने-दफ्तर में नियमित रूप से जाते रहे हैं । जादूगरी में तो यह कौतुक हो सकता है कि 'हाथ की सफाई' वाली चालाकी को किसी प्रवीण से थोड़ी ही देर में सीख लिया जाय और दस-पाँच दिन के अभ्यास से ही उस कौतुक को दर्शकों में दिखाकर उन्हें चमत्कृत किया जा सके । किन्तु यह आतुरता आत्मिक प्रगति के लिए काम नहीं आ सकती । उसके लिए दीर्घकालीन योजना बनाने और व्रतशील बनकर संकल्पपूर्वक निभानी पड़ती है । जो तुर्त-फुर्त आत्मिक उपलब्धियों से अपना भण्डार भर लेने के लिए आतुर हों, उन बाल बुद्धि वालों को निराशा ही हाथ लगती है । बरगद का वृक्ष अपनी अवधि पर ही विकसित होता और फूलता है ।

तीन शरीरों को जाग्रत करने, प्रखर बनाने के लिए दैनिक उपासना का क्रम इस प्रकार बनाना चाहिए—

प्रातःकाल सूर्योदय के समीपवर्ती समय में उपासना के लिए शुद्ध होकर बैठा जाय । गायत्री की छवि सामने रखी जाय । उसका जल, अक्षत, पुष्प, धूप, नैवेद्य से पूजन वन्दन किया जाय । भावना की जाय कि उस आद्य शक्ति, महाशक्ति की विशिष्ट प्राण चेतना उस उपासना वातावरण में भर गई । उस ऊर्जा का सहज प्रभाव साधक को उपलब्ध होने लगा ।

इसके बाद गायत्री मन्त्र का जप आरम्भ किया जाय होठ, जीभ, कण्ठ तो गतिशील रहें, पर उच्चारण इतना अस्पष्ट हो कि उसे अन्य कोई समीप बैठा हुआ व्यक्ति भी न सुन सके । यह जप न्यूनतम पन्द्रह मिनट होना चाहिए ।

जप के साथ-साथ ध्यान भी चलना चाहिए । ध्यान में प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य को माध्यम बनाया जाना चाहिए । भावना की जानी चाहिए कि, सविता की सूक्ष्म प्राण चेतना अपने काय कलेवर में प्रवेश कर रही है । उसका नाभि चक्र में, हृदय चक्र में और मस्तिष्क मध्य के सहसार चक्र में प्रवेश हो रहा है । यह तीनों ही कमल चक्र मुँदी कली की स्थिति में प्रसुप्त प्राय रहते हैं । सूर्य की ऊर्जा से प्रभावित होकर वे खिलने लगते हैं । साथ ही इन तीनों केन्द्रों में सन्निहित शारीरिक, मानसिक एवं अन्तःकरण में समाहित अनेकानेक दिव्य प्रभाव विकसित एवं सक्रिय समुन्नत होने लगते हैं । यह ध्यान जप के साथ-साथ ही चलता रहता है । इसमें शरीर और मन दोनों का कार्य चलता है, फलतः चंचलता का अवरोध मिटता है और एकाग्रता सिद्धि का लाभ मिलने लगता है ।

जप और ध्यान की मध्यवर्ती कड़ी है प्राण विनिमय या प्राणायाम । इसे अपनाया जाना अत्यन्त आवश्यक है । भावना करनी चाहिए कि समग्र ब्रह्माण्ड में विशेषता अपने इर्द-गिर्द महाप्राण का भरा-पूरा भण्डार विद्यमान है । उसे साँस के साथ खींचा और आत्मसत्ता के कण-कण में प्रतिष्ठित किया जा सकता है ।

जितनी गहरी साँस खींचना सम्भव हो धीरे-धीरे उसे खींचा जाय । खींचना के आधे समय तक उसे भीतर रोका जाय । इसके उपरान्त खींचने जितने समय में धीरे-धीरे उसे बाहर निकाला जाय । खींचने को पूरक, रोकने को कुंभक और निकालने के रेचक कहते हैं । खींचते समय प्राण वायु का नासिका, फुफ्फुस आदि में होकर समस्त शरीर में उसके पहुँचने की भावना करनी चाहिए । रोकते समय यह विश्वास किया जाय कि वह खींचा गया तत्व, कण-कण में समाविष्ट, स्थिर हो रहा है । साँस छोड़ते समय यह धारणा की जानी चाहिए कि संचित समस्त मलीनताएँ बहिर्गत निष्काषित हो रही हैं । यह एक प्राणायाम हुआ । इसी की पुनरावृत्ति जप के साथ-साथ चलती रहनी चाहिए । ध्यान तो अपने क्रम से चलता ही रहेगा । जप से स्थूल शरीर, प्राणायाम से सूक्ष्म शरीर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और ध्यान से सहस्र दल कमल चक्र का विकास होने से कारण शरीर परिपुष्ट होता है । जप ध्यान के अन्त में सूर्य को अर्ध्यजल चढ़ाने की बात भुला न दी जाय ।

प्रातः बिस्तर पर आँख खुलते ही नया जन्म मिलने की खुशी मनानी चाहिए और उसको दिन भर का एक आयु खण्ड मानकर उसका श्रेष्ठतम सदुपयोग करने की योजना बनानी चाहिए । रात्रि को सोते समय बिस्तर पर मृत्यु का ध्यान करना चाहिए और निद्रा को मरणोत्तर काल मानना चाहिए । इस प्रकार जनम और मरण के साथ जुड़े हुए महान दायित्वों का स्मरण हर दिन होता रहता है और जीवन काल के बहुमूल्य दिनों में से एक का भी दुरुपयोग करने के लिए मन नहीं बहकता ।

कहा जा चुका है कि उपासना, साधना और आराधना का त्रिविध संयोग मिलने से ही एक समग्र साधना प्रक्रिया बन पड़ती है । अन्न, जल, वायु की तरह यह तीनों ही आत्मिक प्रगति की बात सोचने वालों के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक हैं । यह तीनों ही साथ-साथ चलनी चाहिए । जिस प्रकार जप, प्राणायाम और ध्यान, साथ-साथ उपासना काल में चल सकते हैं, उसी प्रकार समूची जीवन चर्या को ही साधना अवधि मानकर उसमें उपासना, आराधना का सुनिश्चित समावेश रखना चाहिए । उपासना प्रातःकाल पन्द्रह मिनट नियमित रूप से करते रहने से भी काम चल सकता है, किन्तु साधना-आराधना का समावेश तो उठने से लेकर सोने तक की अवधि में समग्र रूप से समाविष्ट रहना चाहिए ।

उपासना चिन्तन की, साधना चरित्र की और आराधना व्यवहार की उच्च स्तरीय प्रक्रिया है । साधना का तात्पर्य है, आत्मशोधन, आत्मपरिष्कार । इसके लिए इन्द्रिय निग्रह प्रथम है । स्वादेन्द्रिय और जननेन्द्रिय पर अंकुश रखा जाना चाहिए । चटोरेपन और कामुकता से बचा जाना चाहिए । मानवी गरिमा के अनुरूप, विवेक सम्पन्न और आदर्शवादी कार्यक्रम बनाकर समय गुजारना चाहिए । इसमें मुस्कराते रहने की आदत डालना आवश्यक है । दिनचर्या को इस प्रकार सुनियोजित किया जाना चाहिए कि एक क्षण भी आलस्य प्रमाद में न गुजरे ।

इन्द्रिय संयम की ही तरह अर्थ संयम, समय संयम, विचार संयम भी आवश्यक है । कमाई नीतिपूर्ण हो और उसका उपयोग मितव्ययतापूर्वक सत्प्रयोजनों में ही किया जाय । समय को परोक्ष दैवी सम्पदा का प्रत्यक्ष स्वरूप मानकर उसका एक-एक पल श्रेष्ठतम सदुपयोग में नियोजित रखने की सतर्कता बरतनी चाहिए । विचार संयम का तात्पर्य है कि एक भी अनैतिक या निरर्थक विचार मस्तिष्क में प्रवेश न करने दिया जाय । यह तभी सम्भव है, जब मन को कर्त्तव्य परायणता एवं पुण्य परमार्थ के निमित्त ताना-बाना बुनते रहने, योजना बनाते रहने के लिए नियोजित रखा जाय ।

उपासना साधना के अतिरिक्त तीसरा पक्ष है—आराधना । आराधना अर्थात् सेवा संलग्नता । सेवा धर्म का उच्च स्तरीय निर्वाह जनमानस के परिष्कार और सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन से ही हो सकता है । इसके साथ ही पिछड़ों को आगे बढ़ाना और प्रगतिशीलों को ऊँचा उठाना भी सामयिक कार्य है । सम्पर्क क्षेत्र में आवश्यकता पड़ने पर इसे कार्यान्वित किया जा सकता है, इसलिए इस प्रकार के कार्यों को आपत्ति धर्म कहा गया है । जब आवश्यक हो तब उन्हें भी करना चाहिए, पर मान्यता यह ही बनाये रहना चाहिए कि व्यक्तित्वों को सद्भावनाओं और सत्प्रवृत्तियों के साथ जोड़ सकता हो, दूरगामी, चिरस्थायी सत्परिणाम उत्पन्न कर सकने वाला कार्य ही वास्तविक पुण्य परमार्थ है ।

निजी जीवन निर्वाह को औसत नागरिक स्तर का रखना, भविष्य के लिए स्वार्थ संलिप्त महत्त्वाकांक्षाओं का उन्माद न अपनाना ही वह प्रथम चरण है, जिसे सम्पन्न कर लेने के उपरान्त ही सेवा साधना की, आराधना की, सुनियोजित व्यवस्था बन पड़ती है । समय, श्रम मनोयोग एवं साधनों को परमार्थ में लगाया जा सकता है । तभी आदर्शवादी, उच्च स्तरीय, महामानवों जैसे क्रियाकलाप अपना सकने की सम्भावना मूर्तिमान हो सकती है ।

तीन शरीरों को समुन्नत करने पर आत्म सन्तोष, लोक सम्मान और दैवी अनुग्रह के वास्तविक जीवन लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं । इस मार्ग पर चलते हुए ही व्यक्तित्व को सद्गुणों की दिव्य विभूतियों से सम्पन्न किया जा सकता है । अनुकरणीय और अभिनन्दनीय महापुरुषों जैसे कार्य कर सकने की प्रतिभा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी मार्ग पर चलते हुए हस्तगत होती है । अनेकानेक अतीन्द्रिय क्षमताएँ, दिव्य विभूतियाँ इसी अवलम्बन को अपनाने से उपलब्ध होती हैं । प्रगति, प्रसन्नता और सुख-शान्ति का, उज्ज्वल भविष्य के निर्माण का यह एकमेव सुनिश्चित मार्ग है ।

उच्चस्तरीय व्यक्तित्व एवं विशिष्ट स्तर की प्रतिभा प्राप्त करने के लिए ऋद्धि-सिद्धियों का अधिकारी बनने के लिए जहाँ निजी साहस, संकल्प एवं प्रयास आवश्यक है वहाँ यह भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि, किसी समृद्ध प्रेरणा स्रोत के साथ जुड़ा जाय । उसका भाव भरा सहयोग प्राप्त किया जाय । विद्यार्थी पढ़ता तो अपनी ही मेहनत से है, पर उसे अभिभावकों की, अध्यापकों की, सही सहायता मिलना भी आवश्यक है । यदि वह न मिले तो विद्यार्थी के लिए अपना निर्वाह ही कठिन हो जायेगा, फिर विद्वान, पहलवान, धनवान आदि प्रगतियों का लाभ प्राप्त कर सकना किस प्रकार सम्भव होगा ? अपनी छोटी पूँजी के आधार पर तो छोटा ही व्यापार किया जा सकता है, पर यदि बैंकों से ऋण और शेयर खरीदने वालों का सहयोग मिलने लगे, तो देखते-देखते कोई भी क्रिया-कुशल बढ़ा-चढ़ा कारोबार खड़ा कर सकता है ।

बिजलीघर से तार जोड़ लेने पर नगर के अनेकों पंखे, बल्ब, हीटर, कूलर आदि चलने लगते हैं । भरी टंकी के साथ जुड़ा हुआ नल बराबर पानी देता रहता है । हिमालय के साथ जुड़ी हुई नदियाँ सदा प्रवाहित रहती हैं । पति की कमाई पर पत्नी, बाप की कमाई पर औलाद मोज मनाती हैं । यही बात साधना क्षेत्र में भी है । एकाकी साधक अपने बलबूते कुछ तो कर ही सकता है और देर सबेर लम्बी यात्रा भी पूरी कर लेता है । इसलिए एकाकी प्रयास को भी झुठलाया तो नहीं जा सकता, पर सुविधा इसी में है कि किसी शक्ति भण्डार के साथ जुड़कर अपनी प्रगति सम्भावना को सुनिश्चित किया जाय ।

गुरु वरण इसी को कहते हैं । यह एक अनुबन्ध है, जिसमे दोनों पक्ष अपनी-अपनी जिम्मेदारी का निर्वाह करते और परस्पर पूरक बनकर दोनों पक्ष प्रसन्नता एवं सफलता उपलब्ध करते हैं । अंधे-पंगे के संयोग से नदी पार करने लेने वाली बात इसी प्रकार बनती है ।

नारद के साथ जुड़कर पार्वती, सावित्री, बाल्मीकि, ध्रुव, प्रह्लाद आदि ने अपने साधारण स्तर को असाधारण बनाया था । बुद्ध के साथ जुड़कर अंगुलिमाल, अम्बपाली, अशोक जैसों ने अपने स्तर का कायाकल्प कर लिया था । चाणक्य, चन्द्रगुप्त, समर्थ शिवा, परमहंस विवेकानन्द, गाँधी, बिनोवा आदि के अगणित युग्म ऐसे हैं, जिनमें शक्ति सम्पनों के साथ जुड़कर असमर्थों ने भी उच्चस्तरीय सफलता पायी । पारस लोहा, स्वाति-सीपी, चन्दन-अंखाड़ आदि के उदाहरण भी ऐसे हैं, जिनमें समर्थों का सहयोग प्राप्त करके असाधारण प्रगति का वातावरण बनता है । गुरू शिष्य का गठबन्धन इसीलिए आध्यात्मिक प्रगति के लिए आवश्यक माना गया है । यह सब सुयोग मिलकर एक सफल फलदायी साधना की पृष्ठभूमि बनाते हैं । अन्तःशक्ति के उभार से अपने चमत्कार, इसके माध्यम से सहज ही देखे जा सकते हैं ।

स्थूल शरीर की समर्थता

कल्पपरक साधनाओं में स्थूल शरीर कायकलेवर की दुर्बलता, रुग्णता हटाने और समर्थता, निरोगता बढ़ाने के लिए तीन साधनाओं का अभ्यास कराया जाता है—(१) अमृताशन, (२) जड़ी-बूटी कल्प, (३) योग व्यायाम । इन तीनों का विवरण इस प्रकार है—

(१) **अमृताशन** : जैसा खाय अन्न वैसा बने मन वाली उक्ति स्वयं सिद्ध है । तमोगुणी, गरिष्ठ, दुष्पाच्य, अभक्ष्याहार करने वाले शरीर से भी रोग क्रान्त, विकृतिग्रस्त रहते हैं भले ही वे देखने में मोटे मजबूत दिखायी पड़ें । भुने, तले, मशाले वाले, नशीले, दूसरों को पीड़ा देकर उपलब्ध किए गए खाद्य पदार्थ पाचन क्षेत्र को खराब करते हैं । इस सड़न से विषाक्तता उत्पन्न होती है और वह रक्त के साथ घूमती फिरती जहाँ कहीं भी टिक जाती है वहीं किसी न किसी प्रकार का रोग उत्पन्न कर देती है । इस प्रकार स्वास्थ्य के बनने बिगड़ने का प्रधान कारण आहार ही सिद्ध होता है । जिन्हें वस्तुतः आत्म प्रगति के क्षेत्र में प्रवेश करना है, उन्हें सर्वप्रथम आहार शुद्धि पर ध्यान देना पड़ता है, यात्रा यहीं से आरम्भ होती है । ऋषियों के आहार का यदि पर्यवेक्षण किया जाय तो प्रतीत होता है कि उन्होंने इस सन्दर्भ में असाधारण सावधानी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बरती और संयम अपनाया । पिप्पलाद ऋषि मात्र पीपल के फलों पर निर्वाह करते थे । कणाद का नाम इसी आधार पर पड़ा है कि वे जंगली धान्य के कण संचित करके उदर पूर्ति करते थे । फल, दूध, शाक पर तो अभी भी कितने ही लोग निर्भर रहते हैं । कइयों ने अंकुरित अधपके अथवा उबले अन्नों को अपना आहार बनाया है । यह साधना का प्रथम सोपान है । अनुष्ठानों में उपवास का महत्त्व भी ब्रह्मचर्य के ही समान माना जाता है । उपवास काल में जो आहार लिया जाता है, वह फलाहार न सही, निश्चित रूप से सात्विक स्तर का तो होना ही चाहिए ।

कल्प साधना में प्रथम पाठ आहार बिहार में प्रकृति अनुशासन का समावेश करने और खाद्य पदार्थों को कम से कम भूनने-जलाने, यथासम्भव उनके प्राकृतिक रूप में ही उपयोग करने के रूप में अभ्यास कराया जाता है ।

अच्छा होता साधक फलाहार पर न सही शाकाहार पर ही रह लेते । पर दुर्बल संकल्प वालों के लिए ढर्रे से जूझते हुए कंप-कंपी छूटते देखकर काम चलाऊ निर्धारण यही किया गया है कि कम से कम अमृताशन का व्रत तो निभाया ही जाय । यह एक महीने की प्रताड़ना नहीं है, वरन् भविष्य में आहार सम्बन्धी संयमशीलता अपनाने के लिए कराया गया प्रारम्भिक अभ्यास है । साधकों से आशा की जाती है कि वे इसे मूक बन्दी की विवशता या सामयिक प्रताड़ना न समझें, वरन् भविष्य में आहार सम्बन्धी मर्यादा पालन का अभ्यास मानें ।

कल्पकाल में जो भी आहार लिया जाता है, उसके बारे में शर्त है कि, वह कम से कम अग्नि संस्कार वाला उबला भर होना चाहिए । साथ ही उसमें एक समय में एक या दो से अधिक का सम्मिश्रण न हो । नवरात्रि के उपवासों में जो फलाहार, शाकाहार, दूध, छाछ आदि पर नहीं रह सकते उन्हें अमृताशन का निर्देश दिया जाता है । उपवास की न्यूनतम मर्यादा यही है । अमृताशन का अर्थ है उबला अन्न । दाल-चावल, दलिया, दाल आदि का सम्मिश्रण इसी वर्ग में आता है । दाल के स्थान पर दूध या दही भी प्रयुक्त किया जा सकता है । साधना काल में यथासम्भव ऐसे ही आहार पर रहने की विधि है । उबले शाक भी इसी श्रेणी में आते हैं ।

कल्प साधना के साधकों के लिए एक महीने एक अमृताशन का एक वर्ग नियत किया जाता है और पूरे महीने उसी क्रम को निभाते रहने का निश्चय किया जाता है । रुचि, प्रकृति और स्थिति को ध्यान में रखते हुए साधक और मार्गदर्शक परस्पर विचार विनिमय करके यह निर्धारित कर लेते हैं कि, कल्प अवधि में क्या आहार चलेगा ? उसका परिणाम कितना होगा और खाने का समय क्या रहा करेगा ? यह आहार भी दिन में दो बार से अधिक नहीं लिया जा सकता ।

सेंधा नमक, काली मिर्च, नीबू, जीरा, हल्दी, अदरक जैसे हानि रहित मसाले अपवाद स्वरूप थोड़ी मात्रा में ही इस अमृताशन में मिलाये जा सकते हैं । लाल मिर्च, हींग, आमचूर, अचार जैसी उत्तेजक वस्तुओं का इस भोजन में पूर्णतया निषेध है ।

शान्ति कुंज में कल्प साधना सत्रों के साधकों के लिए भाप से भोजन पकाने की प्रक्रिया विकसित की गई है । भाप बनाने वाले दो बॉयलर लगाये गए हैं । उनके साथ दो बड़े स्टीम चैम्बर है । चैम्बरों में अमृताशन पकाने के छोटे-छोटे भगौने रखने के लिए सौ खाने बने हैं । प्रत्येक साधक को स्टेनलैस स्टील की भगौनी, ढक्कन, थाली, गिलास आदि सभी सामान आश्रम की ओर से मिलता है । साधक अपने लिए निर्धारित अमृताशन, निर्धारित मात्रा में खाद्यान्न डालकर माताजी के सुपुर्द कर जाते हैं । सभी पात्रों में अभिमन्त्रित गंगाजल, तुलसी पत्र डाला जाता है, उन्हें एक साथ भाप चैम्बर में पकाने रख दिया जाता है ।

एक घण्टे बाद सभी साधक लाइन में आते हैं और अपने नम्बर का भगौना लेकर वापस चले जाते हैं । यही क्रम प्रातः सायं दोनों समय चलता है । मूँग की दाल, गेहूँ का दलिया, चावल, सेंधा नमक, काली मिर्च सभी शुद्ध स्वच्छ करके सस्ते भाव में आश्रम के सहकारी स्टोर में उपलब्ध होती हैं ।

(२) **जड़ी बूटी कल्प** : प्रातः ५·३० पर तथा मध्यान्तर १·३० पर सभी कल्प साधकों को दो बार प्रज्ञा पेय मिलता है । इसे दिव्य जड़ी बूटियों का क्वाथ कहना चाहिए । स्वाद और रंग में यह प्रायः प्रचलित चाय से मिलता जुलता होता है । इसलिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन्हें इस प्रकार की आदत है, उनका समाधान भी हो जाता है ।

जड़ी बूटी कल्प में किसके लिए किसका उपयोग निर्धारित हुआ । यह शरीर के निदान-परीक्षण पर निर्भर है । जड़ी बूटी कल्प का अपना पृथाक् विधान है । किस व्यक्ति की शारीरिक और मानसिक स्थिति के अनुरूप किस बूटी के रासायनिक पदार्थ उपयोगी पड़ते हैं, इसका तालमेल बिठाते हुए ही इसका निर्णय करना पड़ता है, कि किसके लिए, किसका उपयोग समाधानकारक रहेगा ।

कल्प साधना में आहार कल्प की तरह बूटी कल्प भी कराया जाता है । इसके लिए उसे एक महीने तक ५० ग्राम कल्प पेट में पहुँचाया जाता है । कल्प से तात्पर्य है पतली चटनी । लगभग ठण्डाई से कुछ गाढ़ी सीरप स्तर की । निर्धारित कल्प प्रातःकाल खाली पेट लिया जाता है । कल्प के लिए पाँच बूटियाँ ली गई हैं—(१) तुलसी, (२) शंख पुष्पी, (३) ब्राह्मी, (४) शतावर, (५) अश्वगंधा । यों उनके अतिरिक्त कई कल्प व्यवस्था में आयुर्वेद में प्रचलित हैं जिनमें (१) त्रिफला, (२) हरीतकी, (३) पुनर्नवा, (४) आँवला, (५) विधारा, (६) गिलोय, (७) सोंठ, (८) बिल्व, (९) निर्गुण्डी, (१०) मूशली, (११) अडूसा, (१२) पिप्पली आदि प्रमुख हैं । किन्तु उन्हें विशेष परिस्थितियों में, विशेष व्यक्तियों के लिए ही प्रयुक्त किया जाता है । सामान्यता उपर्युक्त पाँच में से भी सभी अपने गुणों के अनुरूप, सभी प्रकृति के व्यक्तियों की काया तथा मानवीय संरचना के अनुसार सन्तुलन बिठाने में काम दे जाती हैं । बूटी कल्प में गंगाजल ही प्रयोग होता है । उसे पीसते-छानते-बनाते समय उस प्रयोजन के लिए निर्धारित नियमों का पालन करने वाले हाथ ही काम करते हैं । अन्नाहार एवं शाकाहार में पकाने की पद्धति में भी आध्यात्म स्तर के साथ जुड़ी हुई पद्धतियाँ, अपने-अपने प्रभाव का समावेश कर देती हैं और वह सामग्री अपने ढंग की आन्तरिक विशिष्टताओं से सम्पन्न हो जाती है ।

अमृताशन में अन्न, बूटी कल्प और प्रज्ञा पेय में जल तथा नित्य के अग्निहोत्र में सम्मिलित रहने पर वायु भूत आहार को मुख नासिका तथा अन्यान्य छिद्रों के माध्यम से भीतर पहुँचाया जाता है । यह समय समुच्चय ऐसा है, जिसमें तीनों शरीरों के परिशोधन एवं सम्वर्धन के दोनों ही उद्देश्य भली प्रकार पूर्ण होते हैं । अन्य चिकित्सा पद्धतियाँ मात्र व्यक्ति के अंग विशेषों का उपचार करती हैं और कारण समझे जाने वाले विष को अन्य बिषाक्त द्रव से मारने का प्रयत्न करती हैं । किन्तु कल्प साधना में प्रयुक्त होने वाला आहार उपचार ऐसा है, जिसमें मात्र निवारण-निराकरण नहीं वरन् परिवर्तन भी जुड़ा हुआ है । बूटी कल्प को काया कल्प हेतु स्थूल शरीर की तैयारी का एक अनिवार्य आधार माना जा सकता है ।

(३) **योग व्यायाम :** रोग निवृत्ति एवं शरीर स्वास्थ्य सम्वर्धन दोनों की ही दृष्टि से आसन व्यायामों की महत्ता असंदिग्ध है । 'योग' जैसे छोटे से शब्द का प्रभाव क्षेत्र अपरिमित है । स्थूल व्यायाम से प्रारम्भ होकर सूक्ष्म व्यायामों द्वारा चक्र-उपत्यिकाओं-ग्रन्थि समुच्चय पर दबाव डालने वाला यह क्रम आहार चिकित्सा, बूटी कल्प के साथ मिलकर न केवल कल्प प्रक्रिया के स्थूल पक्ष की पूर्ति हेतु अनिवार्य भूमिका निभाता है अपितु जीवनी शक्ति बढ़ाने अन्य साधना उपचारों हेतु आवश्यक प्रखर बल सम्पादन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है ।

ब्रह्मवर्चस द्वारा सारी प्रचलित पद्धतियों का विषद विवेचन विश्लेषण कर ऋषि प्रणीत आसन प्राणायाम मिश्रित कुछ विशिष्ट योगों का निर्धारण किया गया है । गहरे श्वास प्रश्वास के साथ सम्पादित किए जाने वाले ये आसन-योग सारी काया का भली भाँति आन्तरिक मर्दन कर डालते हैं तथा प्राण वायु को परिभ्रमण द्वारा स्थान विशेषों तक पहुँचाकर सक्रियता, तेजस्विता बढ़ाते हैं ।

शास्त्रीय विधानों के अनुसार तो कई प्रकार के आसन प्रचलित हैं, जिनमें कुछ ही सुगम हैं । शेष तो आज के प्रचलन के अनुसार एवं व्यक्ति के आहार-बिहार उपक्रम में प्रारम्भिक सावधानी न बरतने के कारण ढले ढर्रे में फिट भी नहीं बैठते । इन्हें पढ़कर तो भ्रम अधिक होता है कि किसे अपनाएँ, किसे छोड़ें । यदि गहरी श्वास प्रक्रिया के साथ अंग विशेषों के संचालन के महत्त्व को समझ लिया जाय तो ब्रह्मवर्चस द्वारा निर्धारित पैर पेट-पेडू, रीढ़, फेफड़े, हृदय, कन्धों के जोड़, गर्दन तथा चेहरे के लिए निर्धारित १२ आसन योगों में से किसी को भी मार्ग दर्शक के निर्देशानुसार अपनाया जा सकता है । इस क्रमबद्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सम्मिश्रण से जब "डीप ब्रीदिंग" (गहरी श्वास) प्रक्रिया जुड़ जाती है तो, वे सूक्ष्म अवयव, जो स्थूल काया की निरोगता के लिए उत्तरदायी हैं, की भली भाँति मालिश हो जाती है, रक्त प्रवाह बढ़ता है एवं स्फूर्ति आती है । थोड़े से शिक्षण मात्र से ही इन्हें समझा जा सकता है । कड़ी माँसपेशियाँ जैसे-तैसे नरम पड़ती जाती हैं, समग्र काया में लचीलापन आ जाता है और व्यायाम क्रम भी बन जाता है ।

स्वास्थ्य सम्बर्धन की दृष्टि से योग व्यायामों को सरलता से चार प्रमुख वर्गों में बाँटा जा सकता है (१) खिंचाव प्रधान आसन, (२) प्राणायामयुक्त आसन, (३) बल-शक्तिवर्धक आसन, (४) स्नायु संचालन में सहायक आसन । इनमें से प्राणायाम के साथ आसनों का सम्मिश्रित क्रम ही साधकों के लिए अनुकूल बैठता है । ब्रह्मवर्चस द्वारा प्रकाशित "आसनों द्वारा काय चिकित्सा" तथा "प्राणायाम से आधि व्याधि निवारण" नामक दो पुस्तकों में इसका वर्णन विस्तार से किया गया है । यहाँ तो उनकी संक्षेप झलकी भर दी जा रही है ।

सुखासन अथवा वज्रासन में बैठकर प्राणायाम के साथ किए जाने वाले योग-व्यायाम विशेष लाभकारी होते हैं । प्राणायाम भी नथुने बन्द करके नहीं, गहरी श्वास प्रश्वास खींचकर किया जाता है । सामान्य उथली श्वास ग्रहण करने की प्रक्रिया को गहरे खींचने व छोड़ने का अभ्यास बना लिया जाय तो, यह स्नायु संचालन-प्राण धारण प्रक्रिया में विशिष्ट लाभ पहुँचाता है । लेकिन इस प्रकार के अभ्यास को क्रमशः ही बढ़ाना चाहिए, यदि साँस गहरी खींच कर बलपूर्वक रोकी जाय तो इससे लाभ के स्थान पर हानि अधिक होती है । प्रातः काल का समय सर्वोत्तम है । वातावरण में प्राण वायु भी प्रचुर मात्रा में विद्यमान होती है । नित्य कर्म आदि से निवृत्त होकर अपने सहज स्वाभाविक आसन में बैठा जाय । स्थान शुद्ध हो तथा आसपास शुद्ध वायु के आवागमन की सुविधा रहे । कपड़े तंग न हों ढीले हों । पहले थोड़ा हाथ पैर हिला कर शरीर गर्म कर लिया जाय । यदि बैठना कष्टप्रद लगे तो लेटे-लेटे भी हाथ पैर डुलाने, विभिन्न जोड़ों को हिलाने, बाल मचलन, गर्दन को मोड़कर ठोढ़ी को छाती से लगाने एवं पैरों को मोड़कर घुटना पेट के समीप लाने का अभ्यास आरम्भ किया जा सकता है । प्रत्येक क्रिया अस्त-व्यस्त न होकर सुव्यवस्थित हो । सबके साथ श्वास-प्रश्वास का वही क्रम मिला हुआ हो, तो ही पूरा लाभ मिल पाता है । प्रारम्भ में ही अति पर उतर आना एवं सर्वांगासन, शीर्षासन जैसी प्रक्रियाओं को आरम्भ करने की आतुरता उचित नहीं है ।

प्रत्येक व्यायाम प्रक्रिया के साथ यह चिन्तन होना चाहिए कि प्रति श्वास-प्रश्वास के साथ प्राण शक्ति का अन्दर प्रवेश हो रहा है, जो शरीर को परिपुष्ट, बलवान, मन को पवित्र, प्रज्ञावान एवं अंतरग को प्रखर, श्रद्धायुक्त बनाती चली जा रही है ।

सहज स्थिति में सीधे खड़े होकर गहरी श्वास खींचते हुए एक ओर का घुटना मोड़कर हनुमान बैठक की तरह बैठते हुए हाथ जोड़ना व फिर धीरे-धीरे श्वास छोड़ देना, यह भी एक सरल प्रक्रिया है, जिसे हर कोई सुगमता से कर सकता है । सुषुम्ना नाड़ी गुच्छकों व चक्र-उपत्यिकाओं के महत्त्वपूर्ण केन्द्र पेट व पेडू में होते हैं । श्वसन केन्द्र गहरी श्वास लेने व छोड़ने से उत्तेजित होते हैं तथा अपना प्रभाव सुषुम्ना के माध्यम से उत्सर्जित-प्रवाहित करते हैं । सीधे पैर फैलाकर बैठने व दाएँ हाथ से बाँया पंजा व बाएँ हाथ से दायाँ पंजा छूने का क्रम भी ऐसा है, जिसमें इन नाड़ी गुच्छकों का भली भाँति उत्तेजन हो जाता है ।

वज्रासन या मुखासन में बैठकर दोनों हाथ ऊपर उठाते हुए गहरी साँस खींचने व धीरे-धीरे आगे की ओर झुकते हुए सिर को धरती से टिकाते हुए साँस छोड़ने से फेफड़ों व हृदय का व्यायाम हो जाता है, अनाहत चक्र को उत्तेजना मिलती है । इन योग व्यायामों के अतिरिक्त अशक्त स्थिति में किए जाने वाले व्यायाम भी आहार चिकित्सा की प्रक्रिया सम्पादित कर रहे व्यक्तियों के लिए निर्धारित हैं । लेटे-लेटे ही एक-एक करके पैर उठाना, गहरी साँस खींचना व धीरे से पैर को धरती पर रखते हुए साँस छोड़ देना एक क्रम हो सकता है । कमर को सुविधापूर्वक बाएँ-दाएँ लुढ़काना व हर स्थिति में श्वास खींचते हुए ३० सेकण्ड बने रहना भी एक सरल व्यायाम है ।

वस्तुतः योग व्यायाम का उपक्रम शरीर की आन्तरिक निष्क्रियता को सक्रिय बनाने के लिए है, ताकि अमृताशन व बूटी कल्प से शरीर को समुचित लाभ मिल सके । डीप ब्रीदिंग वाला प्राणायाम साथ जुड़ने से तो स्थूल शरीर को समर्थ बनाने वाली यह साधना समग्र बन जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूक्ष्म शरीर की प्रतिभा का निखार

मनः संस्थान को सूक्ष्म शरीर कहते हैं । यह न केवल कुशलता, चतुरता, बुद्धिमत्ता का केन्द्र है, वरन् श्रद्धा, प्रज्ञा, निष्ठा का भी उद्गम स्रोत है । दूरदर्शिता, विवेकशीलता, महाप्रज्ञा इसी क्षेत्र का उत्पादन है । अतीन्द्रिय क्षमताओं और ऋद्धि सिद्धियों के भण्डार भी यहीं भरे पड़े हैं । इस क्षेत्र की जाग्रति पर मानवी गरिमा प्रतिभा और प्रखरता बहुत कुछ निर्भर रहती है । कल्प साधना में इसी क्षेत्र को जाग्रत, समुन्नत, बनाने के लिए तीन साधनाओं का निर्धारण है । इनके आधार पर मन, बुद्धि और चित्त की विशेषताओं का विकास परिष्कार होता है । इसी हेतु (१) प्रज्ञाराधन, (२) प्राणायाम साधन, (३) बन्ध मुद्रा अभ्यास की परम्परा है ।

(१) प्रज्ञाराधन

मेधा की अधिष्ठात्री महाप्रज्ञा गायत्री है । वही युगान्तरीय चेतना अथवा युग शक्ति है । अवतार कालों के आधार पर साधना प्रचलन भी बदलते रहे हैं । राम, कृष्ण, बुद्ध आदि अवतारों के समय उनकी लीलायें भी प्रखर और साधनाएँ भी उन्हीं की अपनायी गई । यह प्रज्ञा युग की सन्धि वेला है । यों आद्य शक्ति गायत्री की उपासना अनादिकाल से आद्यावधि समान महत्त्व की रही और देवताओं से लेकर मनुष्यों तक अपनायी जाती रही है । पर यह समय तो विशेषतया इसी साधना की प्रमुखता का है । प्रतिफल भी सर्वाधिक है ।

सामान्य गायत्री उपासना प्रज्ञा योग के आधार पर की जानी चाहिए । इसमें उपासना, साधना, आराधना के तीनों तत्वों का समावेश है । जब इसके साथ कोई विशेष अनुष्ठान जुड़ जाते हैं, तब प्रज्ञा योग को ही प्रज्ञाराधन कहते हैं । कल्प साधना में मानसिक परिष्कार के लिए सूक्ष्म शरीर को प्रखर, परिष्कृत बनाने के लिए प्रज्ञा-आराधन करना चाहिए । एक महीने की अवधि में तीन अनुष्ठान करने चाहिए । यह मन, बुद्धि, चित्त का परिशोधन करने के लिए हैं । यह २४ हजार जप के अनुष्ठान हैं । नवरात्रि वाला विधान यहाँ लागू होता है ।

हर दिन २७ माला का जप, शतांश अग्नि होत्र का क्रम नियमित रूप से चलाने पर एक अनुष्ठान पूरा होता है । आत्म शुद्धि के लिए षटकर्म । गायत्री प्रतिमा का पंचोपचार पूजन । नियमित जप । अग्नि और जल की साक्षी । अन्त में सूर्यार्घ्य दान । संक्षेप में यही है गायत्री उपासना का विधान । इसी का निर्वाह अनुष्ठान काल में भी किया जाता है ।

(२) प्राणायाम साधना

प्राणायामों के अनेकानेक भेद-प्रभेद हैं, उनमें से सूक्ष्म शरीर की साधना में (१) नाड़ी शोधन (२) प्राणाकर्षण (३) सूर्यवेधन प्राणायामों को प्रमुखता दी गई है । इन तीनों की अपनी-अपनी विशेषता उपयोगिता परिणति एवं उपलब्धि है ।

प्राणायाम की दो प्रतिक्रियाएँ हैं : एक दिव्य प्राण को बाहर से भीतर ले जाना और जीवनी शक्ति की स्थापना करना । दूसरा संचित मल विक्षेपों को निकाल बाहर करना । श्वास-प्रश्वास क्रिया में यह कार्य वायु के माध्यम से होता रहता है । ऑक्सीजन प्रदान करना और कार्बन गैस को निकाल बाहर करना इसी आधार पर शरीर की जीवनी शक्ति स्थिर रहती है । यही कार्य प्राणायाम द्वारा चिन्तन क्षेत्र के परिष्कार प्रयोग में चरितार्थ होता है । ब्रह्माण्ड में व्याप्त दिव्य प्राण इस आधार पर साधक को प्राप्त होता है और चिन्तन क्षेत्र में घुसी हुई अवाँछनीयता को निकाल बाहर करने का सुयोग बनता है । मनः क्षेत्र के परिशोधन एवम् परिष्कार में प्राणायाम साधना की उपयोगिता असाधारण मानी गई है तथा मन की स्थिरता का लाभ मिलने की बात योग शास्त्रों में विस्तारपूर्वक कही गई है ।

नाड़ी शोधन को एक प्रकार से आयुर्वेदोक्त पञ्चकर्म के समतुल्य माना जा सकता है । शारीरिक मलों के निष्कासन में वमन, विरेचन, स्नेहन, नस्य के पाँच उपाय अपनाए जाते हैं एवं इसके उपरान्त ही बलवर्धक रसायन पूरी तरह काम करते और प्रभाव दिखाते हैं । नाड़ी शोधन प्राणायाम का भी सूक्ष्म क्षेत्र में वही प्रभाव पड़ता है । पंचकर्म में प्रत्यक्ष मल इन्द्रिय छिद्रों से होकर निकलते हैं । नाड़ी शोधन प्राणायाम में वही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बात सूक्ष्म का निष्कासन करने के रूप में शवासन क्रिया के माध्यम से सम्पन्न होती है ।

प्राणाकर्षण प्राणायाम में ब्रह्माण्डव्यापी प्राण तत्व से अपने लिए जिस स्तर का प्राण आवश्यक होता है, उसे खींचा जाता है । प्राण की अनेक धाराएँ जिस प्रकार वायु में ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, हाइड्रोजन, कार्बन आदि अनेकों रासायनिक सम्मिश्रण रहते हैं, उसी प्रकार संव्याप्त प्राण चेतना में भी ऐसे तत्व घुले हुए हैं जो विभिन्न स्तर के हैं और विभिन्न प्रकार के प्रयोजनों में प्रयुक्त होते हैं । उनमें से जिसकी जितनी मात्रा आवश्यक हो उसे उस अनुपात में खींचकर अपने किसी अंग विशेष में प्रतिष्ठापित किया जा सकता है । इसकी पद्धति और विधा कल्प साधना काल में बतायी जाती है ।

सूर्य वेधन प्राणायाम में प्रकाश पुंज को आर-पार करने की प्रक्रिया बनती है । चीरते हुए गुजरने में मध्यवर्ती ऊर्जा के साथ सम्पर्क बनता है और सतही प्रभाव के हल्कापन से उलझे रहने के स्थान पर अन्तराल में पायी जाने वाली प्रखरता के साथ जुड़ने की बात बनती है । सूर्य को इस विश्व का प्राण माना गया है । सविता सचेतन प्राण ऊर्जा केन्द्र है । उपर्युक्त तीनों प्राणायामों की विधि संक्षेप में इस प्रकार है—

(१) नाड़ी शोधन प्राणायाम

मुद्रा पूर्व की तरह । दायीं नासिका का छिद्र बन्दकर बाएँ से साँस खींचे और उसे नाभि चक्र तक ले जायें, ध्यान करें कि नाभि स्थान में पूर्णिमा के चन्द्र के समान शीतल प्रकाश विद्यमान है । साँस उसे स्पर्श कर स्वयं शीतल एवं प्रकाशवान बन रहा है । इसी नथुने से साँस बाहर निकालें व थोड़ी देर साँस रोक कर बायीं ओर से ही इड़ा के इस प्रयोग को तीन बार करें । अब दाएँ नथुने से इसी प्रकार पूरक, अन्तः कुम्भक, रेचक व बाह्य कुम्भक करें व नाभिचक्र में चन्द्रमा के स्थान पर सूर्य का ध्यान करें । भावना कीजिए कि नाभि स्थित सूर्य को छूकर लौटने वाली वायु पिंगला नाड़ी से होते हुए उष्मा और प्रकाश उत्पन्न कर रही है । इस क्रिया को भी तीन बार करें । अन्त में नासिका के दोनों छिद्र खोल कर साँस खींचकर व भीतर रोक कर मुँह खोलकर एक बार में ही बाहर निकाल दें । प्रारम्भ में एक ही नाड़ी शोधन का अभ्यास करें, पीछे धीरे-धीरे संख्या बढ़ायी जा सकती है।

(२) प्राणाकर्षण प्राणायाम

पूर्वाभिमुख हो पालथी मारकर बैठें । दोनों हाथ घुटनों पर, मेरुदण्ड सीधा, आँखें बन्द । ध्यान करें कि अखिल आकाश प्राण तत्व से व्याप्त है । सूर्य के प्रकाश में चमकते बादलों की शक्ल के प्राण का उफान हमारे चारों और उमड़ता चला जा रहा है । नासिका के दोनों छिद्रों से साँस खींचते हुए यह भावना कीजिए कि प्राण तत्व के उफनते हुए बादलों को हम अपने अन्दर खींच रहे हैं । यह प्राण हमारे विभिन्न अंग अवयवों में प्रवेश कर रहा है । जितनी देर आसानी से रोक सकें साँस को भीतर रोकें, भावना करें कि प्राण तत्व में सम्मिश्रित चैतन्य बल, तेज, साहस, पराक्रम जैसे घटक हमारे अंग-प्रत्यंगों में स्थिर हो रहे हैं । इसके बाद साँस धीरे-धीरे बाहर निकालें, साथ ही चिन्तन कीजिए कि प्राण का सार तत्व हमारे अंग-प्रत्यंगों द्वारा पूरी तरह सोख लिया गया । थोड़ी देर तक बिना साँस के रहें व भावना करें कि जो दोष बाहर निकाले गए हैं, वे हमसे बहुत दूर चले जा रहे हैं व उन्हें अब अन्दर प्रवेश नहीं होने देना है । इस पूरी प्रक्रिया को पाँच प्राणायामों तक ही सीमति रखा जाय ।

(३) सूर्य वेधन प्राणायाम

पूर्वाभिमुख, सरल पद्मासन, मेरुदण्ड सीधा, नेत्र अधखुले, घुटने पर दोनों हाथ । यह ध्यान मुद्रा है । बाएँ हाथ को मोड़ें उसकी हथेली पर दाएँ हाथ की कोहनी रख कर, दाहिने नथुने पर अनामिका अंगुलियों से बाएँ नथुने को बन्द कर गहरी साँस खींचें । साँस इतनी गहरी हो कि पेट फूल जाय, वह फेंफड़े तक सीमित न रहे । ध्यान करें की प्रकाश प्राण से मिलकर बाएँ नासिका-छिद्र से पिंगला नाड़ी में होकर अपने सूक्ष्म शरीर में प्रवेश कर रहा है । साँस रोकें व दोनों नथुने बन्द कर यह ध्यान करें कि, नाभिचक्र के प्राण द्वारा एकत्रित यह तेज पुंज यहाँ अवस्थित चिरकाल से प्रसुप्त पड़े सूर्य चक्र को प्रकाश वान कर रहा है । वह निरन्तर प्रकाशवान हो रहा है । अब बाएँ नथुने को खोल दें और ध्यान करें कि सूर्य चक्र को सतत घेरे रहने वाले, धुँधला, बनाने वाले कल्मष छोड़ी हुई साँस के साथ इड़ा नाड़ी से बाहर निकल रहा है ।

अब दोनों नथुने फिर बन्द कर फेफड़ों को बिना साँस खाली रखें व भावना करें कि नाभिचक्र में एकत्रित

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राण पुंज की तरह ऊपर उठ रहा है, सुषुम्ना नाड़ी से प्रस्फुटित हुआ यह प्राण-तेज सारे अन्तः प्रदेश को प्रकाशवान बना रहा है । सर्वत्र तेजस्विता व्याप्त हो रही है । यही प्रक्रिया फिर बाएँ नथुने से साँस खींचते व रोककर दाएँ से बाहर फेंकते हुए दुहराएँ व भावना उसी प्रकार करें जैसा ऊपर वर्णित है । यह पूरी प्रक्रिया लोम विलोम सूर्यवेधन प्राणायाम कहलाती है ।

प्राण धारणा प्रक्रिया 'डीप ब्रीदिंग' के सामान्य शवास-प्रश्वास अभ्यास से अलग है । इसमें साधक महाप्राण के भण्डागार से अपनी पात्रता के अनुरूप प्राण रूपी आध्यत्मिक ऊर्जा ग्रहण करते व उसका सदुपयोग प्रसुप्त की जागृति में करते हैं । अनेकानेक फलश्रुतियों से भरा यह साधन उपक्रम हर कल्प साधक को संक्षेप में ही सही जानना अनिवार्य है ।

मुद्राओं में से तीन ली गई हैं (१) शक्तिचालिनी मुद्रा, (२) खेचरी मुद्रा, (३) शिथिलीकरण मुद्रा । इनमें से शक्ति चालिनी का सम्बन्ध मूलाधार से है । कुण्डलिनी का निवास केन्द्र वही है । पौरुष, प्रजनन, उत्साह इसी केन्द्र से सम्बन्धित हैं । शक्तिचालिनी के आधार पर मूलाधार को जाग्रत, नियन्त्रित एवं अभीष्ट उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है । उस स्थान पर जीवनी शक्ति बलिष्ठता एवं तेजस्विता का सम्बन्ध है । भावनाओं को दिशा देना भी इसी क्षेत्र के प्रयत्नों से बन पड़ता है । तीसरी खेचरी मुद्रा है । इसका सम्बन्ध ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रार कमल से है । पुराणों में इसी को क्षीरसागर, कैलाश पर्वत की उपमा दी गई है । यहाँ मन बुद्धि, चित्त से सम्बन्धित सभी तन्त्र विद्यमान हैं । खेचरी मुद्रा के द्वारा उनमें से किसी को भी किसी भी प्रयोजन के लिए जाग्रत एवं तत्पर किया जाता है । मन्दता तनाव से लेकर मनोरोगों तक में इस केन्द्र की सहायता ली जा सकती है ।

आध्यात्म विज्ञान में सूक्ष्म शरीर की तीन रहस्यमयी शक्तियों का उल्लेख है—(१) ब्रह्म ग्रन्थि (२) विष्णु ग्रन्थि (३) रुद्र ग्रन्थि । ब्रह्म ग्रन्थि खेचरी मुद्रा से, विष्णु ग्रन्थि शिथिलीकरण से और रुद्र ग्रन्थि शक्ति चालिनी से सम्बन्धित है ।

इन तीनों के स्वरूप, कारण, रहस्य, अभ्यास एवं प्रतिफल साधना ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक बताये गए हैं उन सबका सार संक्षेप इतना ही है कि मस्तिष्क हृदय और प्रजनन तन्त्र में वरिष्ठता उत्पन्न करने के लिए उपर्युक्त तीन मुद्राओं की साधनाओं का प्रयोग किया जा सकता है और उनका चमत्कारी प्रतिफल देखा जा सकता है ।

सूक्ष्म शरीर के परिष्कार में मुद्रा बन्धों का भी असाधारण उपयोग है । मुद्राएँ अनेक हैं उनमें—(१) शक्तिचालिनी मुद्रा (२) शिथिलीकरण मुद्रा (३) खेचरी मुद्रा प्रमुख हैं और बन्धो में—(१) मूल बन्ध, (२) उड्डयन बन्धों, (३) जालन्धर बन्ध की वरिष्ठता है ।

(१) **शक्तिचालिनी मुद्रा**—यह मुद्रा वज्रासन या सुखासन में बैठकर की जाती है । इसमें मल एवं मूत्र संस्थान को संकुचित करके उन्हें ऊपर की ओर खींचा जाता है । खिंचाव पूरा हो जाने पर उसे धीरे से शिथिल कर देते हैं । प्रारम्भिक स्थिति में दो मिनट व धीरे-धीरे पाँच-पाँच मिनट तक बढ़ाते हुए यही क्रिया बार-बार दुहराएँ । उड्डियान बन्ध में स्थित आँतों को ऊपर की ओर खींचा जाता है । यह क्रिया स्वतः शक्ति चालिनी मुद्रा के साथ धीरे-धीरे होने लगती है । पेट को जितना ऊपर खींचा जा सके खींचकर पीछे पीठ से चिपका देते हैं । उड्डियान का अर्थ है—उड़ना । कुण्डलिनी जाग्रत करने, चित्तवृत्ति को अधोमुखी से ऊर्ध्वमुखी करने की यह पहली सीढ़ी है । इसमें सुषुम्ना नाड़ी का द्वार खुलता है, मूलाधार चक्र में चेतना आती है । इन दोनों क्रियाओं के द्वारा समूचे कुण्डलिनी क्षेत्र पर ऐसा सूक्ष्म विद्युतीय प्रभाव पड़ता है, जिससे इस शक्ति स्रोत का जागरण व मेरुदण्ड मार्ग से ऊर्ध्व गमन के दोनों उद्देश्य पूरे होते हैं ।

(२) **शिथिलीकरण मुद्रा योगनिद्रा**—इस मुद्रा का अभ्यास शवासन में लेटकर अथवा आराम कुर्सी पर शरीर ढीला छोड़कर किया जाता है । यह क्रिया शरीर, मन, बुद्धि को तनाव से मुक्त करके नयी चेतना से अनुप्राणित कर देती है । साधक को शरीर से भिन्न अपनी स्वयं सत्ता की प्रत्यक्ष अनुभूति होती है ।

कोलाहल मुक्त वातावरण में शवासन में लेटकर पहले शरीर शिथिलीकरण के स्वयं को निर्देश दिए जाते हैं । शरीर के निचले अंगों से आरम्भ करके शनैः-शनैः यह क्रम ऊपर तक चलाते हैं । हर अंग को एक स्वतन्त्र सत्ता मानकर उसे विश्राम का स्नेह भरा निर्देश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देते हैं । कुछ देर उस स्थिति में छोड़कर धीरे-धीरे श्वास तीव्र करके शरीर को कड़ा और फिर ढीला होने का निर्देश दिया जाता है । धीरे-धीरे शारीरिक शिथिलीकरण सधने पर क्रमशः मानसिक शिथिलीकरण एवं दृश्य रूप में शरीर पड़ा रहने देखने, चेतन सत्ता के सरोवर में ईश्वर को समर्पित कर देने की भावना की जाती है ।

(३) **खेचरी मुद्रा**—शान्त मस्तिष्क को ब्रह्मलोक और निर्मल मन को क्षीर सागर माना गया है । मनुष्य सत्ता और बह्म लोकव्यापी समष्टि सत्ता का आदान-प्रदान ब्रह्म रन्ध्र मार्ग से होता है । यह मस्तिष्क का मध्य बिन्दु है, जीव सत्ता का नाभिक है, यही सहस्रार कमल है । मस्तिष्क मज्जारूपी क्षीर सागर में विराजमान विष्णु सत्ता के सान्निध्य एवं अनुग्रह का लाभ लेने के लिए खेचरी मुद्रा की साधना की जाती है । ध्यान मुद्रा शान्त चित्त से बैठकर जिह्वाग्र भाग को तालु मूर्धा से लगाया जाता है । सहलाने जैसे मन्द-मन्द स्पन्दन किए जाते हैं । इस उत्तेजना से सहस्र दल कमल की प्रसुप्त स्थिति जागृति में बदलती है । बन्द छिद्र खुलते हैं और आत्मिक अनुदान जैसा रसास्वादन जिह्वाग्र भाग के माध्यम से अन्तःचेतना को अनुभव होता है; यही खेचरी मुद्रा है ।

तालु मूर्धा को कामधेनु की उपमा दी गई है और जीभ के अगले भाग से उसे सहलाना-सोमपान, पयपान कहलाता है । इस क्रिया से आध्यात्मिक आनन्द की, उल्लास की अनुभूति होती है । यह दिव्यलोक से आत्म लोक पर होने वाली अमृत वर्षा का चिह्न है । देवलोक से सोमरस की वर्षा होती है । अमृत कलश से प्राप्त अनुदान आत्मा को अमरता की अनुभूति देते हैं ।

कारण शरीर की दिव्य विभूतियाँ

अन्तःकरण की गहन पर्तों तक जिन योग साधनाओं की पहुँच है, उनमें (१) बिन्दु योग, (२) नाद योग, (३) लय योग को प्रमुख माना गया है । इनमें मान्यता, भावना एवं आकांक्षा नेत्रों में सुधार परिवर्तन कर सकने की विशिष्ट क्षमता है ।

बिन्दु योग को त्राटक साधना भी कहा जाता है नाद योग को 'अनाहत ध्वनि' भी कहते हैं । लय योग को आत्मदेव की साधना कहते हैं । छाया पुरुष जैसे अभ्यास इसी के अन्तर्गत आते हैं । स्थूल शरीर के साथ लय योग, सूक्ष्म के साथ बिन्दु योग और कारण शरीर के साथ नादयोग का सीधा सम्बन्ध है । इन साधनाओं के आधार पर इन तीनों चेतना क्षेत्रों को अधिक परिष्कृत, अधिक प्रखर एवं अधिक समर्थ बनाया जा सकता है ।

प्रत्येक योगाभ्यास से पूर्व ध्यान मुद्रा का अभ्यास करना पड़ता है । ध्यान मुद्रा का तात्पर्य है—शरीर तथा मन की हलचलों को अधिकाधिक मात्रा में शिथिल तथा स्थिर कर देना । उत्तेजित शरीर एवं चंचल मन रहने पर ध्यान धारणा बन नहीं पाती । इसलिए उस प्रयास का आरम्भ करने से पहले शिथिलीकरण मुद्रा जैसी स्थिति बनानी पड़ती है । इस अर्द्ध तन्द्रित स्थिति को योग मुद्रा भी कहते हैं ।

योग साधना के लिए शान्त-एकान्त-कोलाहल रहित-खुली हवा, प्रकाश वाला स्थान ढूँढ़ना चाहिए । कुशासन या खजूर बाँस की चटाई सर्वोत्तम है । सूती या ऊनी आसन भी काम आ सकते हैं । चमड़े का आसन नहीं लेना चाहिए । आजकल ऐसे चर्म प्राचीन काल की तरह स्वाभाविक मृत्यु से मरे प्राणियों से उपलब्ध नहीं होते । हिंसा से प्राप्त किया चमड़ा साधक के मन में विक्षेप उत्पन्न करता है ।

स्थिर शरीर शान्त चित्त, कमर सीधी-हाथ गोदी में आँखें बन्द-यह है ध्यान मुद्रा का स्वरूप, अनुशासन । ध्यान धारणा आरम्भ करने से पूर्व साधक को अपनी स्थिति ऐसी ही बना लेनी चाहिए ।

निर्धारित तीनों योगों का विवरण इस प्रकार है—

(१) **बिन्दु योग**—त्राटक साधना को आज्ञा चक्र का जागरण एवं तृतीय नेत्र उन्मीलन कहा जाता है । दोनों भौंवों के बीच मस्तक के भृकुटी भाग में सूक्ष्म स्तर का तृतीय नेत्र है । भगवान शंकर की देवी दुर्गा की तीन आँखें चित्रित की जाती हैं । दो आँखे सामान्य—एक भृकुटी स्थान पर दिव्य । इसे ज्ञान चक्षु भी कहते हैं, अर्जुन को भगवान ने इसी के माध्यम से विराट् के दर्शन कराये थे । भगवान शिव ने इसी को खोल कर ऐसी अग्नि निकाली थी, जिसमें उपद्रवी कामदेव जलकर भस्म हो गया । दयमन्ती ने भी कुदृष्टि डालने वाले व्याध को इसी नेत्र ज्वाला के सहारे भस्म कर दिया था । संजय इसी केन्द्र से अद्भुत दिव्य दृष्टि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का टेलीविजन की तरह—दूरबीन की तरह उपयोग करते रहे और धृतराष्ट्र को घर बैटे महाभारत का सारा आँखों देखा हाल सुनाते रहे ।

आज्ञाचक्र को शरीर विज्ञान के अनुसार पीनियल और पिट्ट्यूटरी ग्रन्थियों का मध्यवर्ती सर्किल माना जाता है और उसे एक प्रकार का द्विदलीय चक्र-दिव्य दृष्टि केन्द्र कहा जाता है । टेलीविजन, राडार, टेलिस्कोप के समन्वय युक्त क्षमता से इसकी तुलना की जाती है । जो चक्षुओं से नहीं देखा जा सकता, वह इसमें सन्निहित अतीन्द्रिय क्षमता के सहारे परिलक्षित हो सकता है, ऐसी मान्यता है । दूर-दर्शन-विचार संचालन जैसी विभूतियों का उद्गम इसे माना जाता है । साधारणतया यह प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता है और उसके अस्तित्व का कोई प्रत्यक्ष परिचय नहीं मिलता, किन्तु यदि इसे प्रयत्नपूर्वक जगाया जा सके, तो यह तीसरा नेत्र विचार संस्थान की क्षमता को अनेक गुनी बढ़ा देता है । चूँकि यह केन्द्र दीपक की लौ के समान आकृति वाला बिन्दु माना जाता है, इसलिए उसे जाग्रत करने की साधना को बिन्दुयोग कहते हैं । इसी का एक नाम त्राटक साधना भी है ।

यह साधना सरल है । आमतौर से पालथी मारकर, कमर सीधी कर एकान्त स्थान में इस साधना के लिए बैठते हैं । तीन फुट दूरी पर कन्धे की सीध में ऊँचाई पर एक घृत दीप जलाकर रखते हैं । दस सेकण्ड तक उसकी लौ को खुली आँख से देखना । फिर एक मिनट बन्द रखना । फिर दस सेकण्ड देखने, पचास सेकण्ड बन्द रखने का अभ्यास अनुमान से ही करना पड़ता है । घड़ी का उपयोग इस बीच बन पड़ना सुविधाजनक नहीं रहेगा । दूसरा कोई चुपके से धागे आदि का संकेत दे, तो दूसरी बात है ।

दीपक के प्रकाश की लौ आँखें बन्द करके आज्ञाचक्र के स्थान पर प्रज्ज्वलित देखने का अभ्यास करना होता है, साथ ही यह भी धारणा करनी होती है कि, वह प्रकाश समूचे मस्तिष्क में फैलकर उसके प्रसुप्त शक्ति केन्द्रों को जाग्रत कर रहा है । आरम्भ में यह ध्यान दस मिनट से आरम्भ करना चाहिए और बढ़ाते-बढ़ाते दूनी-तिगुनी अवधि तक पहुँचा देना चाहिए । खोलने बन्द करने का समय एक सा ही रहेगा । दीपक का सहारा आरम्भ में ही कुछ समय लेना पड़ता है । इसके बाद आज्ञा चक्र के स्थान पर प्रकाश लौ जलने और उसकी आभा से समूचा मनः संस्थान आलोकमय हो जाने की धारणा बिना किसी अबलम्बन के मात्र कल्पना, भावना के आधार पर चलती रहती है ।

दीपक की ही तरह प्रभातकालीन सूर्य का प्रकाश पुंज लक्ष्य इष्ट माना जा सकता है । गायत्री का प्राण 'सविता' भी है । आज्ञा चक्र के स्थान पर उस उदीयमान सूर्य का ध्यान करते हैं । साथ ही यह धारणा करते हैं कि सविता देवता की ज्योति किरणें स्थूल शरीर में प्रवेश करके पवित्रता, प्रखरता, सूक्ष्म शरीर में दूरदर्शी विवेकशीलता, कारण शरीर में श्रद्धा, सम्वेदना का संचार करती और समग्र काय कलेवर को ज्योति पुंज बनाती है । दीपक या सूर्य में से किसी को भी माध्यम बनाकर आज्ञाचक्र का जागरण—तृतीय नेत्र का उन्मीलन हो सकता है ।

(२) **नादयोग**—यह साधना सूक्ष्म कर्णेन्द्रियों द्वारा सम्पन्न की जाती है । खुले कान तो एक सीमा तक की समीपवर्ती प्रत्यक्ष ध्वनि ही सुन पाते हैं । किन्तु सूक्ष्म कर्णेन्द्रिय में श्रवणातीत दिव्य ध्वनियाँ सुनने की भी क्षमता है । प्रकृति का मूल 'शब्द' है । वह अनादिकाल से ओंकार के ध्वनि गुंजन से ही विकसित हुआ है । उसकी समस्त गतिविधियों परमाणुओं के अन्तराल में चलने वाली हलचलों और तरंगों के प्रवाहों पर अवलम्बित दीखती है । यदि इससे भी गहराई में उतरा जा सके तो प्रतीत होगा कि चरम मूल तक पहुँचते-पहुँचते मात्र शब्द गुंजन ही शेष रह जाता है । ओंकार एवं उसके परिकर की अन्यान्य ध्वनियाँ उस समस्त विश्व ब्रह्माण्ड की भूतकालीन घटनाओं, वर्तमान की परिस्थितियों तथा भावी सम्भावनाओं का सारा ढाँचा इन्हीं चित्र-विचित्र स्तर की ध्वनि तरंगों पर खड़ा पाया जाता है । प्रकाश ऊर्जा आदि की अन्यान्य तरंगें तो ध्वनि की परिणति एवं सहचरी मात्र हैं । नादयोग में इन्हीं को सुनने, समझने का अभ्यास किया जाता है, ताकि उस आधार पर अपनी आन्तरिक स्थिति का विश्लेषण, पर्यवेक्षण किया जा सके एवं प्रकृति में चल रही सामयिक हलचलों का आधारभूत कारण समझकर अपनी ज्ञान परिधि को अत्यधिक व्यापक बनाया जा सके एवं भूतकाल के स्मृति कम्पनों और भविष्य में घटित होने वाले प्रकरणों का पूर्वाभास उपलब्ध हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सके । नादयोग की शब्द साधना को 'कालजयी' कहा जाता है । उस आधार पर हम इन्द्रियों के द्वारा प्राप्त होने वाले सर्वविदित प्रचलन से छलांग लगाकर दिव्य ध्वनियों के माध्यम से अपनी गान सम्पदा को न केवल अधिक प्रखर वरन् उच्चस्तरीय भी बना सकते हैं । ऋषियों को दृष्टा, त्रिकालदर्शी, सर्वज्ञ आदि की सिद्धियाँ इसी आधार पर उपलब्ध होती थीं ।

परब्रह्म को शब्द ब्रह्म एवं नाद ब्रह्म के नाम से भी जाना जाता है । शब्द ब्रह्म कथन प्रवचन, परामर्श को कहते हैं । नाद ब्रह्म संगीत के रूप में गतिशील ध्वनि प्रवाह को कहते हैं । सामान्य से लेकर उच्चस्तरीय ज्ञान तथा भाव सम्वेदना के लिए इन्हीं दोनों का प्रयोग किया जाता है । छन्द शास्त्र की संरचना इसी आधार पर हुई है ।

सामवेद को सामगान भी कहा गया है । सामगान का उद्देश्य यह है कि ध्वनि शक्ति को ज्ञान प्रयोजन के लिए ही नहीं, विज्ञान के निमित्त भी प्रयुक्त किया जा सके । दीपक राग, मेघ मल्हार, मृग मोहन, मयूर नर्तन जैसे राग, रागनियों से इस तथ्य का अनुभव और भी अच्छी तरह किया जा सकता है । नादयोग के अभ्यास से प्रकृति के अन्तराल में भूत-भविष्य-वर्तमान के सम्बन्ध जो हाँड़ी पकती रहती है, उसे नादयोग के अभ्यासी सरलतापूर्वक उघाड़ कर देख सकते हैं । प्रकृति परक विज्ञान और ब्रह्म परक ज्ञान की रहस्यमय पर्तों को नादयोग के अभ्यास से जाना जा सकता है ।

बिन्दु योग की तरह नादयोग में भी ध्यान मुद्रा पर एकान्त स्थान में बैठते हैं । स्थूल ध्वनियों को रोकने के लिए कान में रुई लगा लेते हैं । इसके उपरान्त प्रयत्न करते हैं कि प्रकृति के गर्भ में प्रवाहित दिव्य ध्वनि तरंगों का सुनना सम्भव हो सके । आरम्भ में बहुत धीमा अनुभव होता है । जो सुनाई पड़ता है, वह वंशी, नफीरी बजने, झींगुर बोलने, भ्रमर गूँजने, बादल बरसने, झरना झरने जैसा हल्का होता है । बाद में अधिक प्रखरता, उत्तेजना और उतार-चढ़ाव भी उत्पन्न होने लगता है । यह दिव्य ध्वनियाँ बड़ी मोहक और आनन्ददायक होती हैं । इनकी तुलना सर्प को, मृग को मोहने वाले वीणा निनाद से दी जाती है । ओंकार जप, सोऽहम्, धारणा, मन्दिरों में शंख-घड़ियाल की ध्वनि का आधार भी यही है । नारद की वीणा, शंकर का डमरू, सरस्वती का सितार अलंकार रूप में इस नादयोग के रहस्यों का ही उद्घाटन करने वाले संकेत हैं ।

(३) **लययोग**—कला साधना में तीसरा अनिवार्य अभ्यास लययोग का है । इसमें शरीराभ्यास को आत्मसत्ता के साथ समर्पित विसर्जित करना पड़ता है । आमतौर से मनुष्य अपने आपको शरीर भर मानता है और उसी की इच्छा, आवश्यकता पूरी करने में जुटा रहता है । आत्मा को उसके स्वरूप, लक्ष्य एवं उत्तरदायित्व को तो एक प्रकार से विस्मृत ही किए रहता है । यह वह भटकाव है जिसे मायापाश, भव बन्धन आदि नामों से पुकारते हैं ।

यदि अपना सनातन-शाश्वत-स्वरूप समझा जा सके, क्षमताओं का अनुमान लग सके, लक्ष्य का स्मरण आ सके और भावी सम्भावनाओं की सुखद कल्पना उठ सके, तो मनुष्य निश्चय ही वर्तमान की मृगतृष्णा, भटकन, विसंगति, दुर्गति से ऊँचा उठकर उस महान के साथ संयुक्त होता है, जिसकी विवेचना आत्मबोध, स्वर्ग, लक्ष्यबोध, ईश्वर दर्शन, दिव्य जीवन आदि नाम के साथ की जाती है । पुरुष से पुरुषोत्तम, नर से नारायण, क्षुद्र से महान अर्द्ध-मृतक से अमर होने की बात इसी स्थिति से सम्बन्ध में कही जाती है । इस प्रयास को महान साहस, परम पुरुषार्थ एवं चरम सौभाग्य कहा जाता है ।

ध्यान मुद्रा में बैठकर दर्पण को सामने रखा जाता है । अपने चेहरे पर सज्ञा सौन्दर्य की नहीं, एक विशेष दृष्टि डाली जाती है कि इस मास-पिण्ड के भीतर स्रष्टा का प्रतिनिधित्व करने वाली आत्म सत्ता विद्यमान है । वही इस काया की अधिष्ठात्री है । उसी का उत्कर्ष परम लक्ष्य है । काया उसी प्रयोजन की पूर्ति का वाहन, साधन, उपकरण मात्र है । शरीर की सार्थकता आत्मा के प्रति वफादार, जिम्मेदार और ईमानदार रहने में ही है । आत्मा काया का पोषण तो सही रूप से करे पर साथ ही यह भी ध्यान रखे कि उसे उच्छृंखल बनाने वाली वासना, तृष्णा, अहंता के आक्रमण से सुरक्षा का प्रबन्ध भी होता रहे । जीवन यज्ञ है, इसे भ्रष्ट करने वाले सुबाहु, मारीच और ताड़का से तुलना नहीं उपर्युक्त दानवी महत्त्वाकांक्षाओं से की गई है, जो पतन के सरंजाम ही रचती रहती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छाया पुरुष साधना से अपने समतुल्य एक और व्यक्तित्व का निर्माण कर लिया जाता है और वह एक अभिभ मित्र एवं समर्थ सेवक की तरह निरन्तर साथ देता तथा सहायता करता है । दर्पण साधना से भी उस छाया साधना की उद्देश्य पूर्ति होती है ।

वेदान्त साधना में आत्मा को परमात्मा से मिलाने की अद्वैत साधना की जाती है । सोऽहम् साधना का तत्व दर्शन, समर्पण, विलय, विसर्जन की एकात्मकता में समाहित है । आत्म साक्षात्कार, आत्मबोध की स्थिति प्राप्त करने में भी यह साधना बहुत सहायक सिद्ध होती है ।

कल्प साधना में उपर्युक्त तीनों साधनाओं को न केवल अनिवार्य माना गया है वरन् सरल माना गया है । दीपक और सूर्य के स्थान पर नीलाभ विद्युत दीप साधकों के हर कमरे में लगाए गए हैं । नादयोग का आरम्भिक अभ्यास करने के लिए टेपरिकार्डर के माध्यम से उपयोगी स्वर लहरियाँ सुनाई जाती हैं, ताकि सूक्ष्म नाद को अधिक स्पष्ट होने का मार्ग खुले । उपयुक्त साइज का दर्पण हर कमरे में पहले से ही रखा मिलता है । तीनों साधनाएँ आरम्भिक स्तर के साधक भी सरलतापूर्वक चला सकें, इसके लिए यथा सम्भव अधिकाधिक सुविधा, सरलता उत्पन्न की गई है व्यवस्था ऐसी है जिसमें उपर्युक्त तीनों योगाभ्यास साधनाएँ बिना किसी कठिनाई के आरम्भ की जा सकें । वे जैसे-जैसे विकसित परिपक्व होती हैं, वैसे-वैसे अपने सत्परिणाम भी प्रत्यक्ष करती चली जाती हैं ।

उपयुक्त स्थान मिल सके तो इन तीन साधनाओं में से बिन्दुयोग, लय योग की साधनाएँ ब्रह्मवर्चस शान्ति कुंज से लौटकर घरों में भी की जा सकती हैं । नाद योग के लिए उपयुक्त ध्वनि प्रसारण की व्यवस्था में थोड़ी दिक्क आ सकती है । जिनके पास टेपरिकार्डर उपलब्ध हो वह उसका भी प्रबन्ध करके इन साधनाओं को सफलता के चरम बिन्दु तक पहुँचाने में कर सकते हैं, पर प्रारम्भ में कई तरह की दिक्कतें, नये अवरोध खड़े होते हैं । इसलिए मात्र पढ़ कर ही किसी को अपने घरों में यह अभ्यास प्रारम्भ नहीं कर देने चाहिए । जिस तरह पौष्टिक औषधियों के सेवन से पूर्व मल शोधन की क्रिया अनिवार्य होती है, उसी तरह इन साधनाओं को प्रारम्भ करने पर खड़े होने वाले अवरोधों का निराकरण करना भी अनिवार्य होता है शान्ति कुंज—ब्रह्मवर्चस में साधना के उपयुक्त वातावरण ही नहीं अन्य व्यवस्थाएँ भी की गई हैं । इनमें सूक्ष्म दैवी सत्ताओं का समर्थ संरक्षण सर्वोपरि है । वह अन्यत्र उपलब्ध नहीं हो सकता । इसलिए घरों पर अभ्यास से पूर्व एक माह या दस दिन शान्ति कुंज रहकर अभ्यास कर लिया जाय, यह आवश्यक है । इसके लिए पत्र-व्यवहार करके अनुमति प्राप्त करना अनिवार्य है ।

चेतना को अन्तराल में खोजा जाना चाहिए

शरीर से कर्म और मन से चिन्तन सभी करते हैं । निष्क्रिय रहने पर तो यह दोनों ही गलने लगते हैं और अपना अस्तित्व ही गँवा बैठते हैं । इस कर्म और चिन्तन में स्तर प्रायः उतना ही पाया जाता है, जितना निर्वाह के साधन जुटाने के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक है । दूरदर्शी लोग इन दोनों की साज-सम्भाल करने और समुन्नत बनाने पर ध्यान देते हैं । फलतः उनकी स्थिति सामान्य लोगों की तुलना से कहीं अच्छी होती है । आहार-विहार के नियम पालन करने वाले निरोग दीर्घजीवी पाये जाते हैं । अध्ययन सन्तुलन के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति विद्वान बुद्धिमान बनते और उपार्जित प्रतिभा के बल पर वैभव एवं ऐश्वर्य अर्जित करते हैं । आमतौर से इसी परिधि में शरीर और मन की परिपोषण एवं उपार्जन-प्रक्रिया चलती रहती है ।

व्यवहार में इतना स्वल्पांश प्रयुक्त होने पर भी जो शेष रह जाता है, वह अत्यधिक है । यदि आत्मसत्ता के सभी पक्षों पर समुचित ध्यान दिया जा सके । उसे उभारने और सत्प्रयोजनों में प्रयुक्त करने का विशिष्ट प्रयास चल पड़े तो, उतने भर से मनुष्य ऐसी उपलब्धियों का अधिपति बन सकता है, जो वैभव एवं ऐश्वर्य की तुलना में कहीं अधिक मूल्यवान हैं ।

अविज्ञात को खोजने और अनुपलब्ध को पाने के लिए जब हर दिशा में दौड़-धूप हो रही है, तो आत्म-सत्ता के बहिरंग एवं अन्तरंग को खोजने उभारने के लिए भी विशेष प्रयत्न क्यों न किया जाय ? मनोविज्ञान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं परमनोविज्ञान के नाम पर मनः संस्थान की कुछ खोजें प्रारम्भ हुई हैं । उनके सत्परिणाम भी सामने आये हैं और कई प्रकार के उपयोगी निष्कर्ष सामने आये हैं । इतने पर भी उनमें एक मौलिक कमी यह रह जाती है, कि मस्तिष्कीय संरचना एवं उसकी कार्य पद्धति को ही सब कुछ मानकर इसी छोटे क्षेत्र में अनुसन्धान होता रहता है । भौतिक विज्ञान में पदार्थ ही एक मात्र सत्ता है । मस्तिष्कीय कोशाओं की गतिविधियों का विवेचन, विश्लेषण करने तक ही वह सीमा मर्यादा समाप्त हो जाते और भौतिक विज्ञानी उस क्षेत्र में प्रवेश करने की अपेक्षा बाहर ही खड़ा रह जाता है, जिससे चेतना के स्वरूप को जानने और उसके पराक्रम का अनुसन्धान नहीं हो पाता ।

शरीर आहार-बिहार की सुविधा के सहारे जीवित रहता है । मस्तिष्क को आस्थाएँ, आकांक्षाएँ उत्तेजित करती हैं । सामान्य जीवन में भूख, वासना, अहंता, आत्म-रक्षा जैसी शरीर सम्बन्धित प्रवृत्तियाँ ही मन पर छाई रहती हैं पर बात इतने से समाप्त नहीं हो जाती । आस्थाओं, इच्छाओं एवं सम्वेदनाओं का अपना स्वतन्त्र श्रेय है । यह शरीर की आवश्यकता से प्रभावित नहीं होती और न मस्तिष्कीय रचना से उनका कोई सम्बन्ध है । इतने पर भी उनकी बलिष्ठता इतनी बढ़ी-चढ़ी है कि समूची आत्म-सत्ता को हिलाकर रख देती है । कई बार तो सामान्य एवं आवश्यक कहे जाने वाले प्रवाह को भी उलटती देखी गई है । भूख, प्यास को तृप्त करने की शरीर की आवश्यकता विवशता से नहीं, व्रत-उपवास के साथ जुड़ी हुई आस्था के सहारे अमुक समय के लिए निरस्त कर दिया जाता है । कामुकता को मनोविज्ञानी भौतिक आवश्यकता मानते हैं, पर ब्रह्मचर्य के महान उपलब्धियों से इन्कार नहीं किया जा सकता । ब्रह्मचर्य की व्रतशीलता न केवल क्रिया को वरन् चिन्तन तक को मोड़-मरोड़कर दूसरी दिशा में नियोजित करती देखी गई है । आत्म रक्षा और संकट में भय वचाब करना स्वाभाविक है, किन्तु वीर हँसते-हँसते प्राणाहुतियाँ देते देखे गए हैं । सुविधा के लिए शरीर का हर अवयव लालायित रहता है, पर तप-तितीक्षा के हठयोग से कष्ट-साध्य प्रक्रिया स्वेच्छापूर्वक अपनायी और प्रसन्नतापूर्वक पूरी की जाती है ।

भौतिक मनोविज्ञान के प्रतिपादकों से यहाँ गतिरोध उत्पन्न होता है कि शरीर एवं मन की संरचना ही चिन्तन को प्रभावित करती है । आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए ही विचार प्रवाह गतिशील होता है । यदि इतना ही था तो, सदुद्देश्यों के लिए जो काय कष्ट सहते हैं । उदार अनुदान देने पड़ते हैं, उनका कोई कारण ही शेष न रह जाता । भौतिक मनोविज्ञान का प्रतिपादन कितना ही तर्क और तथ्यसंगत क्यों न हो, वह एक पक्षीय ही कहा जायेगा और समग्र ही माना जायेगा । दूसरा पक्ष भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है, जिसके अनुसार भावनाएँ समूचे काय तन्त्र पर छाई रहती हैं और न केवल उसका संचालन ही करती हैं वरन् अभ्यास से लेकर संरचना तक को नये ढाँचे में ढालकर ऐसा बदल देती हैं, जिसे ऊपरी दबाव का चमत्कार कहा जा सके । आवश्यकता और आदतें भी मस्तिष्क को प्रभावित करती हैं और अनुकूलता उत्पन्न करने के लिए दबाव डालती हैं । पर भावना पक्ष इतना दुर्बल नहीं है कि उसे उपेक्षणीय ठहराया जा सके । सच तो यह है कि भाव सम्वेदना का प्रभाव इतना अधिक होता है, जिसे देखते हुए काम प्रवृत्तियों को नक्कार खाने में तूती की आवाज कहा जा सके । जीवन क्रम को प्रभावित करने में जिस आस्था पक्ष का अत्यधिक दबाव है उसकी चर्चा भौतिक मनोविज्ञान में मानसिक संरचना कार्य पद्धति एवं चिरसंचित आदतों को प्रमुख बताया गया है । इस प्रकार से भाग्यवादी और परावलम्बी ठहरता है । भौलिक स्वतन्त्रता एक प्रकार से समाप्त ही हो जाती है, जब मनोगत प्रवृत्तियों की ही दास बनकर रहना है तो फिर आदर्शवादी चिन्तन और चरित्र की गुंजाइश ही कहाँ रही ? प्रवृत्तियों में अधिकांश पाश्विक है । इच्छाओं में कामुकता, आत्म रक्षा के लिए छल, या आक्रमण का आश्रय, अहंता का क्रोध प्रकटीकरण में जैसी नियति हो यदि मनःसंरचना के माध्यम में मनुष्य के भाग्य में वदी है तो फिर उसे पशु की तरह ही जीना भी होगा । यह निषेधात्मक प्रतिपादन मनुष्य को पतन के गर्व में ही धकेलता है ।

आध्यात्म पक्ष ने मनोविश्लेषण दूसरे आधार पर किया है । उसका प्रतिपादन है आत्मा मूल रूप से उत्कृष्टता सम्पन्न है जीवन यात्रा के सन्दर्भ में उस पर अवांछनीय प्रचलनों की छाप पड़ती और मैल जमता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । इसकी समय-समय पर सफाई न होने से वह दुष्प्रवृत्तियों की पक्षधर मनोभूमि बनती और आचरण की निकृष्टता पनपती है । यह अस्वाभाविक एवं अवांछनीय स्थिति है । इसे स्वाध्याय, सत्संग, मनन, चिन्तन आदि शोधन उपचारों से सही करना और चेतना को उसके स्वाभाविक स्तर पर रखे रहना सम्भव हो सकता है । इसके आन्तरिक आत्म पक्ष का दूसरा प्रतिपादन यह भी है कि कायगत चेतना में ईश्वर स्तर की कभी उत्कृष्टताएँ एवं समर्थताएँ बीज रूप में विद्यमान हैं । उन्हें साधना उपचार के सहारे उगाया, उठाया और सक्षम बनाया जा सकता है । इस विकास क्रम पर चल पड़ने वाली चेतना स्तर उत्कृर्षता के साथ-साथ प्रगति पथ पर द्रुत गति से अग्रसर होती है और महान मानवों, ऋषियों, देवताओं अवतारों की भूमिका निभाती हुई पूर्णता को लक्ष्य तक जा पहुँचती है ।

मानसिक विश्लेषण का भौतिक पक्ष ही इन दिनों शिक्षा का अंग बनकर रह रहा है । बुद्धिवादी समर्थन भी उसी को मिल रहा है । फलतः मानसिक संशोधन का पुरुषार्थ लगता ही नहीं नियति के आगे सिर झुकाने और पशु प्रवृत्तियों को अपनाए रहने का ही औचित्य लगता है । इस स्थिति में मनुष्य को नर पशु—नर कीटक की तरह निर्वाह करने में ही अपनी खैर दीखती है । मानसिक संरचना से जूझना और उसके फलस्वरूप मानसिक ग्रस्थियाँ उत्पन्न करने और उनका कष्ट सहने का जोखिम कोई क्यों उठायेगा । निश्चित रूप से सही पतन प्रवाह को न केवल मान्यता देना है, वरन् उसे सभी स्वाभाविक मानकर समर्थन करना भी है । कहना न होगा कि इस भौतिकवादी मनःशास्त्र ने मनुष्य की आदर्शवादिता और उत्कृष्टता पर बेतरह कुठाराघात किया है । इससे मानवी भविष्य और विश्व सन्तुलन के डगमगाने की स्थिति बनी है ।

आध्यात्म पक्ष का मनोविज्ञान ठीक इससे उल्टा है । वह चेतना को मूलतः उत्कृष्ट मानता है और उसी में रमण करता, उसको स्वाभाविक नियति कहता है । उसका प्रोत्साहन यह है कि, परिष्कार की योग विचारणा और प्रवृत्तियों के उत्थान की तप साधना अपनाकर न केवल मानवी गरिमा को बनाए रखा जा सकता है, वरन् दैवी उत्कृष्टता को अपनाते हुए आत्मिक प्रगति के उच्चतम् स्तर तक भी पहुँचा जा सकता है । यह मात्र प्रतिपादन नहीं है । इतिहास का परिपूर्ण समर्थन इसे प्राप्त है । आध्यात्म क्षेत्र की विभूतियाँ अपनी गरिमा बढ़ाने एवं लोक साधना की दृष्टि में बहुत कुछ कर गुजरने में सफल होती रही हैं । भारतीय संस्कृति एवं परम्परा में मानसिक उत्कृष्टता का परिपोषण करने वाले तत्वों का बाहुल्य रहा है । फलतः यहाँ की मूर्धन्य प्रतिभाओं से लेकर लोक-प्रवृत्तियों में सर्वत्र उत्कृष्टता छायी रही है और उसका सुखद प्रतिफल समूची विश्व वसुधा को मिलता रहा है ।

उज्ज्वल भविष्य की संरचना को ध्यान में रखते हुए आज की महती आवश्यकता है कि पाश्विकता के पक्षधर प्रतिगामी मनोविज्ञान की अवास्तविकता और आत्मवादी मनःशास्त्र की यथार्थता एवं उपयोगिता को जनसाधारण् के सम्मुख रखा जाय । इसी में प्राचीनकाल की तरह चिन्तन प्रवाह में आदर्शवादिता का समावेश बढ़ेगा और उसका प्रतिफल सुखद सम्भावनाओं के रूप में प्रकट होगा ।

मनःशास्त्र की आधुनिक खोजों में भी ऐसे तथ्यों की कमी नहीं, जो चेतना की मूल-प्रवृत्ति में उत्कृष्टता का समर्थन करते हैं । गलती इतनी भर होती रही है कि उनकी व्याख्या विवेचना करने में भ्रान्तियों का बोलवाला रहा और पूर्वाग्रह निष्कर्षों की निकृष्टता का पक्षधर बना दिया । आज की आवश्यता यह है कि मनःशास्त्र पर लगे हुए ग्रहण को परिशोधित किया जाय और उसके स्थान पर चेतना की उत्कृष्टता को समझने और उसे विकसित करने का वातावरण उत्पन्न किया जाय । उज्ज्वल भविष्य की संरचना के लिए यह अनिवार्य रूप से आवश्यक है । सर्वविदित है कि दर्शन की उत्कृष्टता निकृष्टता के ज्वार-भाटे ही इतिहास से भले और बुरे कार्य-कलापों और लोक-प्रवाहों के लिए उत्तरदायी रहे हैं । भविष्य के निर्धारण में भी इस दार्शनिक उत्कृष्टता को प्रमुखता देनी होगी कि आत्म-सत्ता के स्वरूप एवं प्रवाह के सम्बन्ध में भ्रान्तियों का निराकरण किया जाय और इस क्षेत्र में विशिष्टता से परिचित एवं लाभान्वित होने के लिए आधार प्रस्तुत किया जाय । इस सन्दर्भ में यदि मनःशास्त्र का नये सिरे से संशोधन किया जाय, तो ऐसे तर्क और तथ्य प्रचुर परिमाण में मिल सकते हैं, जिनके सहारे मानवी गरिमा को फिर सतयुग की तरह देवकाल की तरह, उच्चस्तरीय बनाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सके । तथ्य सुनिश्चित है । मात्र भ्रान्तियों का निराकरण भर करना है । यदि मनीषा उस कार्य को हाथ में लेती है, तो निश्चित रूप से आत्म-बोध का एक नया आयाम सामने प्रस्तुत होगा और उसका सुखद परिणाम नवयुग के सृजन में अत्यधिक सहायक सिद्ध होगा ।

इसके लिए बहुत कुछ करने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी । मनःसंरचना का प्रतिपादन जिस प्रकार आधुनिक मनोविज्ञानियों ने किया है, उसमें भी आध्यात्म पक्ष के समर्थन की सामग्री इतनी अधिक है कि उसे अमान्य ठहराने की आवश्यकता नहीं है । मात्र इतना भर करना है कि व्याख्या, विवेचना करते समय जो प्रतिगामी पूर्वाग्रह काम करता रहा है, उसकी अवास्तिवकता को सिद्ध करना है । यह बहुत आसानी से हो सकता है, क्योंकि सच्चाई का पक्ष अपने आप ही इतना प्रखर होता है कि उसके लिए तिनके का सहारा भर मिलने से अपने पैरों आप खड़े होने का सहज हो अवसर मिल जाता है । जोर तो अवास्तविक को वास्तविक सिद्ध करने में लगाना पड़ता है ।

मनःशास्त्र का सामान्य पक्ष है—विचार विज्ञान । विचारों की सामर्थ्य असीम है । सच तो यह है कि जीवन प्रवाह का सूत्र संचालन पूरी तरह विचार संस्थान के ही हाथ में है । मनुष्यों के बीच पाये जाने वाली उत्कृष्टता, निकृष्टता एवं निरर्थकता में अन्तर वस्तुतः मान्यताओं और विचारणाओं की प्रतिक्रिया भर होता है । जीवन को दिशा धारा देने में वातावरण, सम्पर्क, परामर्श और आकर्षण भी किसी हद तक अपनी भूमिका निभाता है, पर अन्ततः बात आस्थाओं की प्रमुखता पर ही टिकती है । आकर्षण, परामर्श वातावरण का प्रभाव भी तभी पड़ता है, जब उसकी पक्षधर मनोभूमि पहले से ही बनी हुई हो । संसार से भलाई और बुराई के पर्वत खड़े हैं । इनमें से जो रुचिकर है वही प्रबल बनकर सामने आता है । जो अरुचिकर है उसके पैर ही नहीं जमते । रुचिकर वातावरण, परामर्श और जन समुदाय ही घनिष्ठता बढ़ाता और प्रभाव छोड़ता है । शेष जो अरुचिकर है, वह उपेक्षा की फटकार सुनकर उल्टे पैरों वापस लौट जाता है ।

विचार मस्तिष्क को सोचने की दिशा देते हैं । जिसमें रुचि होती है, उसकी जानकारी से लेकर सफलता पाने तक के समस्त साधन एक-एक करके अनायास ही उपलब्ध होते चले जाते हैं । विचार प्रवाह ही वस्तुतः जीवन प्रवाह है । इस महाशक्ति का स्वरूप और प्रभाव यदि समझा जा सके तो परिस्थितियों को बदलने में जितना परिश्रम किया जाता है, उतना ही प्रयास विचारधारा को व्यवस्थित और परिष्कृत करने में किया जाने लगे, तो श्रेष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण एवं वर्तमान समस्याओं का समाधान मिल सकना सम्भव है । आश्चर्य यह है कि लोग विचार शक्ति का उपयोग तो दिन-रात करते हैं, पर यह नहीं जानते कि उसे व्यवस्थित कैसे रखा जाय और उपयुक्त दिशा में किस प्रकार प्रयुक्त किया जाय ? विचार जीवन पर हावी रहते हैं यह सच है, पर यह उससे भी अधिक सच है कि यदि प्रज्ञा सजीव हो तो विचार संस्थान को सुनियोजित करने और उसके सहारे आनन्द भरा प्रगतिशील जीवन का लाभ ले सकता है । उत्थान और पतन तो विचार वृक्ष के कडुए मीठे प्रतिफल मात्र हैं । नवनिर्माण में सुविधा सम्वर्धन के प्रयासों को प्रमुखता मिलती है, किन्तु उससे भी अधिक आवश्यकता इस बात की है कि विचार संशोधन की कला से जन-जन को परिचित कराया जाय । मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है । उस सूत्र के पीछे एक ही रहस्य सन्निहित है कि प्रयत्नपूर्वक विचार संस्थान को सुनियोजित कर देने पर जीवन रथ प्रगतिशीलता के राजमार्ग पर चलने लगता है और गरिमा के चरम लक्ष्य तक जा पहुँचता है । इसके विपरीत यदि विचार भ्रान्तियों और दुष्प्रवृत्तियों में उलझे रहे तो उनकी दुःखद प्रतिक्रिया ही होगी और संकटों तथा विक्षोभों का घटाटोप खड़ा होता जायेगा । यही है भाग्य और भविष्य निर्धारण में मनुष्य की अपनी भूमिका ।

संकटों को हटाने और सुविधाओं को बढ़ाने का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए अन्य प्रयास जो भी किए जायें, इस तथ्य को अनिवार्य रूप से जोड़कर रखा जाय कि जनमानस को शालीनता का, विचारधारा का, महत्त्व समझाने और अभ्यास कराने के प्रयास को प्रमुखता दी जाय । अन्यथा सारे प्रयत्न एक प्रकार से निष्फल ही चले जायेंगे । सम्पन्नता बढ़ा ली गई तो भी कुविचारों के रहते उसका सदुपयोग सम्भव न हो सकेगा और आग में घी पड़ने की तरह वैभव उल्टे दुर्गुणों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भटकाने में सहायता करता चलेगा । उत्कृष्टता का पक्षधर विचार विज्ञान आज उपेक्षित स्थिति में पड़ा है कुविचार भड़काने वाली मान्यताओं की साधनों का समर्थन मिला हुआ है । यह स्थिति बदली जानी चाहिए । विचार विज्ञान का नये सिरे से सांगोपांग पर्यवेक्षण होना चाहिए । आज की इस मान्यता को निरस्त करना चाहिए कि कुटिलता एवं धूर्तता ही लाभदायक होती है । सभ्यता और संस्कृति के समर्थक विचार किस प्रकार भौतिक और आत्मिक क्षेत्र की विभूतियाँ उपार्जित करने में समर्थ होते हैं—कुविचार किस प्रकार घुन, तेजाब और चिन्गारी की तरह गलाते जलाते हैं—इस तथ्य, को यदि तर्क, तथ्य, प्रमाण, विज्ञान और व्यवहार की समस्त कसौटियों पर खरा सिद्ध करके दिखाया जा सके तो विश्वास किया जाना चाहिए कि आज जिस प्रकार कुविचारों के आधिपत्य ने जनजीवन नष्ट किया है । उसी प्रकार सद्विचारों को प्रमुखता मिलने पर श्रेय और श्रेष्ठ का ही दर्शन होता चला जायेगा । फलतः सुखद सम्भावनाएँ ही फलित होती चली जायेंगी । मनःशास्त्रियों का कर्त्तव्य है कि वे इस उत्तरदायित्व को संभालें और श्रेष्ठता समर्थन का ऐसा सुदृढ़ आधार खड़ा करें, जिसके सहारे उज्ज्वल भविष्य की संरचना सम्भव हो सके ।

इसके आगे के दो चरण और हैं । एक यह है कि स्वभाव में जड़ जमाकर बैठे हुए कुसंस्कारों को उलट कर सुसंस्कारों की स्थापना का उद्देश्य कैसे पूरा हो ? दूसरा यह है कि मनःसंस्थान में जो अतीन्द्रिय क्षमताओं तथा उत्कृष्ट आस्थाओं का भाण्डागार भरा पड़ा है उसे किस प्रकार जगाने और क्रियान्वित करने का लाभ उठाया जाय ? यह दोनों आधार भी विचार विज्ञान के आध्यात्मवादी पक्ष को उभारने की तरह आवश्यक हैं । कुसंस्कारों की जड़ें गहरी भी होती हैं और मजबूत भी । अध्ययन परामर्श से शालीनता की सुखद और दुर्बुद्धि की दुःखद प्रतिक्रिया को जाना जा सकता है और प्रतिपादन की दृष्टि से उसका औचित्य भी माना जा सकता है । इतने पर भी मान्यताओं और आदतों के सहारे चलने वाले ढर्रे को बदलना अति कठिन होता है । न दुष्प्रवृत्तियों छूटती हैं और न सत्प्रवृत्तियों स्वभाव में सम्मिलित होती हैं । ऐसी दशा में सद्विचारों के महत्त्व को समझना, समझाना एक प्रकार से निरर्थक ही चला जाता है ।

ठीक ऐसी ही कठिनाई मनोबल एवं आत्मबल बढ़ाने, एकाग्रता एवं संकल्प के सहारे प्रसुप्त क्षमताओं को जगाने और सामान्य से विशिष्ट बनाने में भी आती है । मनोबल का महत्त्व जान लेने भर से उसकी उपलब्धि तो नहीं हो जाती । प्रखरता न जगे तो मनःसंस्थान का कायाकल्प किस उपाय, कारण से सम्भव बने ?

शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिए कठिन व्यायाम करने पड़ते हैं । विष ग्रन्थियों को हटाने के लिए ऑपरेशन करने पड़ते हैं । कैन्सर जैसे संकटों से लड़ने में रेडियो विकिरण प्रयुक्त करना पड़ता है । नट-नटनियाँ सहज ही कला प्रदर्शन का श्रेय प्राप्त नहीं कर लेतीं, उन्हें विशिष्ट अभ्यासों के लिए लगातार प्रयत्न करना पड़ता है । सर्कस के जानवरों को पुरानी आदतें छोड़ने और नई अपनाने के लिए कैसी कष्टसाध्य प्रक्रिया में होकर गुजरना पड़ता है इसे निकटवर्ती वातावरण में रहने वाले भली प्रकार जानते हैं । दूर रहने वाले इन सबकी विशिष्टता को दैवी वरदान का अनायास उपहार भर मान सकते हैं । कहा और माना जो भी जाता रहे, तथ्य यही है कि विशिष्ट अपलब्धियाँ विशिष्ट पुरुषार्थ के सहारे ही करतलगत होती हैं । अन्तराल की गहरी पर्तों को छूने, कुरेदने, उभारने और प्रत्यक्ष कर दिखाने के लिए जो प्रबल प्रयास करने होते हैं, उन्हीं का नाम साधना है । साधना का अपना दर्शन और अपना विज्ञान है । विचार विज्ञान का उपयोग दैनिक व्यवहार में होता है उसका प्रभाव अपनी चिन्तन शैली, कार्य पद्धति एवं स्वभाव व्यवहार पर पड़ता है । उसका प्रतिफल आत्मसन्तोष, आत्मगौरव, लोक सम्मान एवं जन सहयोग के रूप में अनेकानेक सुखद सम्भावनाएँ साथ लेकर सामने आता है । साधना विज्ञान इससे आगे की स्थिति है । विचार विज्ञान का सम्बन्ध मन की सचेतन परत से है । इसे व्यवहार बुद्धि की संज्ञा दी जा सकती है । मन की अगली परत अचेतन और उससे गहरी उच्च चेतन है । मन और बुद्धि की गतिविधियाँ सचेतन क्षेत्र की हैं, आदतें अचेतन की । आस्थाएँ उच्च चेतन की । मन और बुद्धि को लाभ का लोभ और हानि का डर दिखाकर आसानी से मोड़ा-मरोड़ा जा सकता है । किन्तु आदतों को बदलना, आस्थाओं की चीर फाड़ एवं प्लास्टिक सर्जरी करना हँसी खेल नहीं है । धरती की ऊपरी पर्त पर धूलि कंकड़ भर है । बहुमूल्य खनिज गहरी खुदाई करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर उपलब्ध होते हैं । भूगर्भ में डूबने का दुःसाहस करने और बहुमूल्य उपकरण जुटाने वाले ही उस छिपी सम्पदा के अधिकारी बनते हैं । समुद्र के ऊपर निरर्थक झाग तैरते रहते हैं । गहरी डुबकी लगाने वाले मणि मुक्तक ढुँढ़ते हैं । धूल कण की गहराई को स्पर्श करने वाले ही अणु शक्ति के स्वामी बनते हैं । यह गहराई में प्रवेश और वहाँ की उछाड़-पछाड़ का उपक्रम आत्म चेतना के क्षेत्र में भी सम्भव हो सकता है और उसका ऐसा प्रतिफल उपार्जित किया जा सकता है जिसे चमत्कारी ऋद्धि सिद्धियों के नाम से जाना जाता रहा है ।

मानवी उत्कर्ष की सही दिशा उसकी अन्तःचेतना का अभ्युदय ही हो सकता है । जो इस दिशा में जितना आगे बढ़ा वह सांसारिक दृष्टि से भी ऊँचा उठा है । महामानव भले ही कृषि व्यापार न करते रहे हों, भले ही उन्हें धनी शासक बनने का अवसर न मिला हो, पर लोक श्रद्धा अर्जित करने और जनकल्याण के क्षेत्र में महान प्रयोजन करने की दृष्टि से उनने जो अनुकरणीय कृत्य किए, उनके लिए मानवता उनकी सदा कृतज्ञ रहेगी । आत्मसन्तोष और आत्मगौरव प्राप्त करने के अनुपयुक्त और अस्थिर अवसर तो मद्यपों और आततायियों को भी मिल जाते हैं, पर जिन्हें वास्तविक और चिरस्थायी कहा जा सके वे मात्र महामानवों को ही उपलब्ध होते हैं । स्पष्ट है कि महामानवों का स्तर प्राप्त करना मात्र आत्मिक दृष्टि से समुन्नत व्यक्तियों को ही प्राप्त होता है । भौतिक साधनों के सहारे किसी को भी गौरवास्पद पद पर पहुँचना सम्भव नहीं हुआ है । सम्पन्नता कितनी ही बढ़ी चढ़ी क्यों न हो शालीनता जन्य विभूतियों की तुलना नहीं कर सकती । इस लक्ष्य को समझने में जो समर्थ हैं वे मनुष्य जीवन के अन्तरंग और बहिरंग सफलता का एक मात्र आधार चेतना के उत्कर्ष को ही मानते हैं । उन्हें निजी उपार्जन नहीं करना पड़ता वरन् लोक श्रद्धा ही सम्पत्ति बरसाती है जिसके कारण वे सुसम्पन्नों से भी अधिक वैभववान बनते हैं । बुद्ध, गाँधी, ईसा आदि की गतिविधियों को धन की कमी नहीं रही । यशस्वी, मनस्वी, ओजस्वी और तेजस्वी होने का सर्वतोमुखी लाभ चेतनात्मक दृष्टि से विकसित व्यक्तियों को ही मिलता है और वह इतना बड़ा है, कि उसकी तुलना अन्य किसी उपार्जन के साथ नहीं की जा सकती । सम्पन्नों की सम्पदा से उनका शरीर एवं परिवार ही लाभान्वित होता है, किन्तु महानता के वैभव से समूचे समाज एवं समय को कृतकृत्य बनने का अवसर मिलता है । विचारशील को यह तथ्य शिरोधार्य रहा है और वे विश्वासपूर्वक आन्तरिक महानता का वैभव स्वयं उपार्जित करने और दूसरों को उसके लिए उत्साहित करते रहे हैं ।

अन्तःक्षेत्र में विभूतियों के भाण्डागार भरे पड़े हैं उनमें से जो जितना चाहता है वह उतना सहज ही प्रयत्नपूर्वक उपलब्ध कर लेता है । अतीन्द्रिय क्षमताएँ सिद्ध पुरुषों को प्राप्त होती हैं, और वे अपनी दिव्यदृष्टि से दिव्य शक्तियों से असंख्यों की ऐसी सेवा करते हैं जो सामान्य मनुष्यों के लिए किसी भी प्रकार सम्भव नहीं होती । सभी जानते हैं । इस संसार में सर्वविदित और सर्व उपलब्ध उतना ही है, जितना के निर्वाह के लिए आवश्यक है । इसके अतिरिक्त जो कुछ विशिष्ट है, वह सभी रहस्यमय है और इस स्थिति में रह रहा है कि उसे गहराई में उतर कर ही खोजा पाया जा सके प्रकृति के रहस्यों को बड़ी कठिनाई से खोजा गया है । जैसे-जैसे वे मिले हैं शक्ति और सम्पत्ति के भण्डार करतलगत होते चले गए हैं । बिजली, भाप, अणुशक्ति, ईथर आदि की प्रगति शक्तियाँ थीं तो अनादिकाल से, पर उनका लाभ उठाना कठिन प्रयत्नों से ही सम्भव हो सका । मानवी चेतना में भी ऐसी रहस्यमय परतें मौजूद हैं, जिन्हें उखाड़ा और उछाला जा सके । तो दिव्य शक्ति सम्पन्न सिद्ध पुरुषों की विशिष्टता प्राप्त हो सकती है और उन उपलब्धियों का लाभ उपार्जनकर्त्ता को ही नहीं समस्त संसार को मिल सकता है ।

प्रकृति की शक्तियों का परिचय प्राचीनकाल में था, पर उसका लाभ थोड़े से लोग उठाते थे । रावण, अहिरावण, हिरण्यकश्यप, वृत्तासुर आदि ऐसे ही वैज्ञानिक थे, जिन्होंने प्रकृति रहस्यों को जाना और उनकी उपलब्धियों से स्वयं ही लाभ उठाया । आज की स्थिति दूसरी है, प्रकृति रहस्यों को वैज्ञानिक खोजते हैं और उनसे लाभान्वित होने का अवसर सभी को मिल जाता है । आध्यात्म क्षेत्र की रहस्यमय शक्तियों के सम्बन्ध में भी यही होना चाहिए । दिव्य सिद्धियों से अभी भी थोड़े से लोग लाभ उठाते, चमत्कारी कहलाते देखे गए हैं । यह सीमा बन्धन अनुपयुक्त है । दुरुपयोग का खतरा तो बिजली से लेकर माचिस तक में है, फिर इसी कारण उनका उपयोग रोका तो नहीं जाता । यही नीति आत्मिक शक्तियों के सम्बन्ध में भी होनी चाहिए उन्हें छिपाने की नहीं प्रकट करने और सर्वसाधारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को उनसे लाभान्वित हो सकने की स्थिति होनी चाहिए दुरुपयोग कैसे रुके यह दूसरा प्रश्न है । उसका हल ढूँढ़ा जाना चाहिए, पर वह यह नहीं होना चाहिए । कि महत्त्वपूर्ण भण्डार से किसी को परिचित ही न होने दिया जाय ।

अतीन्द्रिय क्षमताओं की वास्तविकता एवं प्रामाणिकता के सम्बन्ध में परामनोविज्ञान क्षेत्र के शोधकर्त्ताओं ने भारी खोजबीन की है और इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मनुष्य उतना ही नहीं है जितना कि उसे सामान्यतः जाना जाता है । उसके अन्तराल में प्रकृति के रहस्यों की तरह ही अगणित विचित्रताएँ छिपी पड़ी हैं । मानवी काया पूरी जादू की पिटारी है । उसमें से कभी-कभी कुछ फुलझड़ियाँ फूट पड़ती हैं, तो प्रतीत होता है कि पर्दे के पीछे हतप्रभ करने वाला तिलस्म भरा पड़ा है । ऐसे विलक्षण व्यक्तियों को अभी भी कमी नहीं है जो ऐसी विचित्रताओं का परिचय देते हैं, जिन पर सहज विश्वास नहीं होता । फिर भी सचाई तो सचाई है । भ्रम निवारण के लिए जब हजार बार, हजार तरीके से परीक्षा कर ली जाय तो और तथ्य ज्यों का त्यों रहे तो इस कारण इन्कार भी नहीं किया जा सकता कि उन विचित्रताओं का कारण बुद्धि एवं विज्ञान के आधार पर समझ में नहीं आता ।

अतीन्द्रिय क्षमता का अस्तित्व अब न तो अप्रामाणिक रह गया है और न अविश्वस्त । पर उसे रहस्य रोमांच कहकर अविज्ञात विचित्रता मानकर सन्तोष भी नहीं किया जा सकता । विशेषतया उस स्थिति में जबकि यह आशा बँधती है कि इन सामर्थ्यों का अधिपति बनने पर मनुष्य उससे भी अधिक साधन सम्पन्न बन सकता है, जितना कि प्रकृति शक्तियों के सहारे इन दिनों बना हुआ है । यह सम्भावनाएँ काफी आकर्षक हैं । इन्हें जन-जन के लिए उपलब्ध करने के लिए यह आवश्यक है कि उन रहस्यों का उद्घाटन किया जाय जिन पर अतीन्द्रिय क्षमताओं का आधार एवं उद्भव आश्रित है । विज्ञान ने बिजली का उपयोग लाभ ही नहीं बताया है, वरन् उसका स्वरूप, आधार, प्रवाह भी जाना समझाया है । सिद्धान्त और प्रयोग का समन्वय ही किसी तथ्य का प्रतिपादन है । अतीन्द्रिय क्षमताओं से यदि मनुष्य को अवगत और लाभान्वित बनाने का व्यापक उद्देश्य हो तो, उसके समग्र दर्शन एवं आधार का पता लगाना होगा । प्राचीनकाल में आध्यात्म विज्ञान भले ही समुन्नत स्थिति में रहा हो, किन्तु आज तो उस क्षेत्र में भ्रान्तियों का ही बोलवाला है । तथ्यों से तो वे भी परिचित नहीं हैं जो साधना के नाम पर कुछ न कुछ उल्टा सीधा करते रहते हैं ।

आवश्यकता इस बात की है कि न केवल अतीन्द्रिय क्षमताओं को लाभान्वित होने के उपचारों को पर्याप्त माना जाय, वरन् उस क्षेत्र की संरचना, कार्य पद्धति, उतार-चढ़ाव, विधि-निषेध की समग्र जानकारी उपलब्ध की जाय और इस निष्कर्ष पर पहुँचा जाय कि, चेतना की अविज्ञात शक्तियों की स्थिति और सम्भावना क्या है ? उनका उत्पादन एवं उपयोग किन सिद्धान्तों एवं उपाय उपकरणों के सहारे सम्भव हो सकता है ? आज के शोध प्रयोजनों में यह अति महत्त्वपूर्ण पक्ष गिना जाना चाहिए । प्रकृति निर्मित ब्रह्माण्ड की रहस्यमयी परतें जैसे-जैसे प्रकट होती और प्रयोग में आती हैं, वैसे-वैसे मनुष्य अधिक समर्थ एवं सम्पन्न बनता जाता है । चेतना के कार्य क्षेत्र काय-पिण्ड की रहस्यमय परतें प्रकृति पिण्ड से कम नहीं, वरन् अधिक ही हैं । जब शोध का उपक्रम चल रहा है, तो उसे पदार्थ तक ही क्यों सीमित रखा जाय ? चेतना के उस क्षेत्र में भी रहस्योद्घाटन की दृष्टि से प्रवेश क्यों न किया जाय, जो प्रकृति शक्तियों की तुलना में असंख्यों गुनी उपयोगी और परम कल्याणकारी विभूतियों से भरा पड़ा है । इस क्षेत्र को उपेक्षित इसलिए रहना पड़ा है कि भौतिक विज्ञान को उसकी प्रामाणिकता पर ही विश्वास नहीं हुआ । आज स्थिति बदल गई । तथ्यों ने मनुष्य को प्राणी नहीं, रहस्यमय क्षमताओं का भाण्डागार सिद्ध कर दिया है । ऐसी दशा में यह अनिवार्य रूप से आवश्यक है कि उन रहस्यों पर से पर्दा उठाने वाले शोध प्रयत्न सुनियोजित रीति से आरम्भ किए जायें । इस क्षेत्र की सफलता निश्चित रूप से मनुष्य का स्तर और वैभव अत्यधिक बढ़ाने, नये द्वार खोलने, नये आधार खड़े करने में समर्थ हो सकती है ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना के विविध स्तर एवं पक्ष

साधना का स्वरूप और प्रतिफल

आध्यात्म साधना को ज्ञान और विज्ञान—इन दो पक्षों में विभाजित कर सकते हैं । ज्ञान पक्ष वह है जो पशु और मनुष्य के बीच का अन्तर प्रस्तुत करता है और प्रेरणा देता है कि इस सुरदुर्लभ अवसर का उपयोग उसी प्रयोजन के लिए किया जाना चाहिए जिसके लिए वह मिला है । इसके लिए किस तरह सोचना और किस तरह की रीति-नीति अपनाना उचित है ? इसे हृदयंगम कराना ज्ञान पक्ष का नाम है । स्वाध्याय, सत्संग, कथा, प्रवचन, पाठ, मनन, चिन्तन जैसी प्रक्रियाओं का सहारा उसी प्रयोजन के लिए लिया जाता है ।

इसी पक्ष का दूसरा चरण यह है कि धर्म, सदाचार, संयम कर्त्तव्य-पालन के उच्च सिद्धान्तों को अपनाकर आदर्शवादी जीवन जिया जाय । अवांछनीय चिन्तन और कर्त्तव्य में ही मनुष्य की अधिकांश शक्तियों का अपव्यय होता रहता है । दुर्बुद्धिग्रस्त और दुष्कर्म निरत व्यक्ति अपना ओजस् नष्ट करते रहते हैं और उस प्राण शक्ति को गँवा बैठते हैं जो उच्चस्तरीय प्रगति के लिए उसी प्रकार आवश्यक है, जैसे मोटर के लिए पैट्रोल । बिना तेल के मोटर कैसे चलेगी, बिना प्रखर प्राण शक्ति के आत्मिक प्रगति किस प्रकार सम्भव होगी ? अस्तु ज्ञान साधना द्वारा चिन्तन को उत्कृष्ट और कर्त्तव्य को आदर्श बनाया जाता है । यह जमीन को जोतकर खाद, पानी लगाकर उर्वर बना लेने की तरह है । ऐसी ही परिष्कृत मनोभूमि पर उपासना का बीजारोपण किया जाता है । तभी बोई हुई फसल लहलहाती है । ऐसी ही उर्वरा भूमि पर लगाया गया उद्यान फलता-फूलता देखा जाता है ।

साधना का दूसरा पक्ष उत्तरार्द्ध उपासना है । विविध-विधि शारीरिक और मानसिक क्रिया कृत्य इसी प्रयोजन के लिए पूरे किए जाते हैं । शरीर से व्रत, मौन, अस्वाद, ब्रह्मचर्य तीर्थयात्रा, परिक्रमा, आसन, प्राणायाम, जप, कीर्तन, पाठ, बन्ध, मुद्राएँ, नेति, धोति वस्ति, न्योलि, बज्रोली, कपाल भाति जैसे क्रियाकृत्य किए जाते हैं । मानसिक साधनाओं में प्रायः सभी चिन्तनपरक होती हैं और उनमें कितने ही स्तर के ध्यान करने पड़ते हैं । नाद योग, बिन्दु योग, लय योग, ऋजु योग, प्राण योग, हंस योग, षट्चक्र वेधन, कुण्डलिनी जागरण जैसे बिना किसी श्रम या उपकरण के किए जाने वाले मात्र मनो योग के सहारे सम्पन्न किए जाने वाले सभी कृत्य ध्यान योग की श्रेणी में गिने जाते हैं । इसके साकार और निराकार दो वर्ग हैं । साकार में अमुक देवी-देवताओं के स्वरूप एवं सान्निध्य की भावना की जाती है । प्रकाश का, सूर्य का ध्यान भी साकार ध्यान में ही गिना जाता है । इसे कई लोग निराकार कहते हैं । उनकी परिभाषा के अनुसार मनुष्याकृति के भगवान ध्यान को साकार और सूर्य प्रकाश जैसे हाथ-पाँव रहित स्वरूप को निराकार कहा जाता है, पर बात ऐसी है नहीं । सूर्य प्रकाश की, षट्चक्रों की, कुण्डलिनी चक्र की, सहस्रार कमल की आकृतियाँ भी साकार ध्यान में ही गिनी जानी चाहिए ।

आकार का अर्थ ही स्वरूप है । जहाँ किसी भी प्रकार की आकृति को ध्यान बनाया जा रहा होगा वे सब साकार ध्यान गिने जायेंगे । निराकार वर्ग में वे ध्यान आते हैं जो शब्द, रस, गन्ध, स्पर्श इन चार तन् मात्राओं के सहारे सम्पन्न किए जाते हैं । सूक्ष्म कर्णेन्द्रिय से कई प्रकार की दिव्य ध्वनियों को सुनना नाद योग कहलाता है । जीभ पर मिश्री, मिर्च आदि का स्पर्श कराकर कुल्ला कर लेते हैं और उसी स्वाद की अनुभूति करते रहते हैं । इसी प्रकार अमुक गन्ध को एकबार सूँघकर, नासिका द्वारा पीछे भी उसकी कल्पना की जाती रहती है । किसी ठण्डे, गर्म या मृदुल कठोर स्पर्श को हाथों से छूकर उसे हटा दिया जाता है और उसके हट जाने पर भी स्पर्श का अनुभव करने पर ध्यान केन्द्रित किया जाता है । कान, नासिका, जिह्वा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं त्वचा की—शब्द, स्वाद एवं स्पर्श की अनुभूतियों को निराकार ध्यान कहा जा सकता है । रूप तन्मात्रा नेत्र इन्द्रिय का विषय है इसकी अनुभूति में किसी आकार की जरूरत पड़ती है, चाहे वह मनुष्याकृति का हो अथवा अन्य किसी न किसी आकार का । इन पर ध्यान केन्द्रित करने को साकार उपासना कहा जायेगा ।

स्थूल शरीर से श्रमपरक, सूक्ष्म शरीर से चिन्तन-परक उपासनाएँ की जाती हैं, कारण शरीर से केवल भावना की पहुँच है । निष्ठा, आस्था, श्रद्धा का भाव भरा समन्वय 'भक्ति' कहलाता है । प्रेम सम्वेदना इसी को कहते हैं । यह स्थिति तर्क से ऊपर है । मन और बुद्धि का इसमें अधिक उपयोग नहीं हो सकता है । भावनाओं की उमंग भरी लहरें ही अन्तःकरण के मर्मस्थल का स्पर्श कर पाती हैं । मनुष्यों में भी दो प्रेमीजन जब मिलते हैं तो भाव-विभोर हो जाते हैं और आनन्दातिरेक का अनुभव करते हैं । भाव भरी पुलकन केवल विश्वस्त, परमप्रिय एवं आत्मीयों के मिलन पर ही उभरती है । इसलिए भगवान के प्रति अत्यन्त उच्चस्तरीय मान्यताएँ एवं भावनाएँ रखकर पुलकन भरे मिलन का—एक-दूसरे में आत्मसात् हो जाने की गहन आस्था की अनुभूति को भक्ति योग कहते हैं । लय योग इसी को कहा गया है । आत्म-समर्पण तादात्म्य भी इसी का नाम है । जीवन मुक्ति का वर्णन करते हुए सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सायुज्य के चार भेदों में इसी स्थिति का विवेचन किया गया है । द्वैत को मिटाकर अद्वैत की अनुभूति, नदी का समुद्र में विलय, अग्नि में आहुति द्रव्य, दीपक पर पतंगों का जलना जैसे उदाहरण देकर इसी भाव स्तर का स्वरूप समझाया जाता है । गोपियों का कृष्ण की वंशी ध्वनि पर थिरकने वाले रास नृत्य में इन्द्रिय समूह एवं चिन्तन धाराओं का परब्रह्म के उदात्त संकेतों का अनुगमन ही है । 'मैं' और 'तू' में से एक को मिटा देने की बात सूफी सन्त और भक्ति योगी एक स्वर से कहते रहे हैं । मैं मिटता है तो तू रहा जाता है । "मेरा मुझ को कुछ नहीं जो कुछ है सो तोर" की—"अपनी खुदी मिटादे तेरा खुद मिलेगा" की—अनुभूति भक्ति योग में होती है । इसी तथ्य को थोड़े से शब्दों की उलट-पुलट में दूसरी तरह भी कहा जा सकता है—'अयमात्मा ब्रह्म-प्रज्ञानं ब्रह्म-तत्वमसि-सच्चिदानन्दोऽहम्'—शिवोऽहम् की मान्यता में 'तू' मिट जाता है और मैं रह जाता है । दोनों ही स्थितियों में एकता, एकरूपता—एक सत्ता का प्रतिपादन है । भक्त और भगवान के एक बन जाने की बात है । अयमात्मा ब्रह्म का आत्मा-निकृष्ट नर-पशु नहीं होता वरन् उसकी क्रिया, विचारणा एवं आकांक्षा ठीक वैसी ही होती है, जैसी परमेश्वर की । इससे नीची स्थिति में 'शिवोऽहम्' की बात कहाँ बनती है ? परमात्मा स्तर पर पहुँचा हुआ आत्मा अपनी अहंता को पूरी तरह खो चुका होता है । उसके साथ जुड़े हुए संकीर्ण स्वार्थपरता के सारे बन्धन भी समाप्त हो जाते हैं । ऐसा मनुष्य लोभ, मोह के बन्धनों से विरक्त होकर वैरागी जीवन जीता है और उच्चस्तरीय प्रेरणाओं को ईश्वर के संकेत मानकर उनका अनुगमन करता है ।

इसके लिए मात्र मस्तिष्क द्वारा सम्भव होने वाले ध्यान चिन्तन से काम नहीं चलता, वरन् प्रियतम के साथ एकीकार होने के भावोन्माद को जगाना पड़ता है मीरा, चैतन्य, रामकृष्ण परमहंस आदि में यह उन्माद मुखरित हो उठा था । ऋषियों में तत्वदर्शी मनीषियों में यह सौम्य शान्त रस बनकर रचनात्मक प्रयोजनों में लगा रहता है । आवश्यकता पड़ने पर वह बुद्ध और गाँधी की तरह सामयिक समस्याओं के समाधान में अवतारी महामानवों की भूमिका भी सम्पन्न करता है ।

इस स्थिति को प्राप्त करने के लिए भक्ति का भावोन्माद उभारने वाले साधक भी देखे गए हैं । दूसरे अत्यन्त शान्तिपूर्वक हिमालय में अपनी काया को गला कर हिम रूप बना देने जैसी अनुभूतियों से भी काम चला लेते हैं । तात्पर्य द्वैत को मिटा देने से है । आत्मा और परमात्मा की एकता की भावना जिस भी भाव-प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न की जाय, वे सभी भक्ति योग के लय योग के अन्तर्गत गिनी जायेंगी ।

उपरोक्त तीनों प्रकार की साधनाएँ एक साथ चलती रहती हैं । आवश्यक नहीं कि एक के बाद दूसरी आरम्भ की जाय । एक ही कक्षा में गणित, इतिहास और साहित्य जैसे कई वर्ग चलते रहते हैं । एक में अनेकों का सम्मिश्रण भी होता है, पोलो जैसे कई खेलों में शारीरिक स्फूर्ति और मानसिक सूझ-बूझ का समान रूप से समन्वय करना पड़ता है । भोजन में रोटी दाल, शाक की मिली-जुली व्यवस्था रहती है । शरीर यात्रा के लिए अन्न, जल और वायु का सन्तुलन बनाना पड़ता है । जीवन-यात्रा में सिर, धड़ और पैर के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तीनों ही अंग साथ-साथ काम करते रहते हैं । इसी प्रकार स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों का समन्वित साधना क्रम भी चलता है । साथ-साथ तीनों का समान रूप से विकास भी होता चलता है ।

साधना का सबसे स्थूल रूप पार्थिव पूजा है जो मात्र उपकरण से धन एवं पदार्थों से सम्पन्न हो जाता है । प्रतिमा पूजन यही प्रथम बाल कक्षा है । देव मन्दिरों में स्थापित प्रतिमाओं को वस्त्र, नैवेद्य आरती, पुष्पहार, धूप, दीप आदि से पूजा जाता है । सूर्य को अर्घ्य, धन दान, ब्रह्मभोज, भोग, प्रसाद जैसे कार्य पार्थिव पूजा में गिने जाते हैं । इनमें से कुछ तो हवन, यज्ञ अपंग असमर्थों की सहायता, सत्प्रवृत्तियों के अभिवर्धन में दान-पुण्य जैसे लोकोपयोगी भी होते हैं, शेष उपकरणों की सहायता से किए जाने वाले कर्मकाण्डों तक सीमित रहती है । उन्हें भी निरर्थक नहीं कहा जा सकता है । पदार्थों और चेष्टाओं की सहायता से उच्चस्तरीय चिन्तन को उभारना भी जीवन को दिशा देने की दृष्टि से आवश्यक है । यथासमय इन सभी प्रयोजनों के समन्वय की आवश्यकता पड़ती है और यदि वह सब उद्देश्यपूर्ण रीति से किया गया हो, तो समुचित लाभ भी मिलता है ।

उपासना के सम्बन्ध में एक महत्त्वपूर्ण तथ्य यह है कि उसमें केवल पूजापरक कर्मकाण्ड ही काफी नहीं वरन् साथ में भावनात्मक समावेश भी होना चाहिए । ज्यों-त्यों कुछ पूजा-पत्री कर देने, थोड़ा जप कर लेने या कुछ पाठ कर लेने मात्र से काम नहीं चलेगा । आमतौर से लोग इतना ही करते हैं और समझ लेते हैं, कि उनकी उपासना पूर्ण हो गई । कर्मकाण्ड पूजा का एक महत्त्वपूर्ण अंग तो है पर उतने मात्र से उसमें पूर्णता नहीं आ सकती । उपासना के हर कर्मकाण्ड के साथ आवश्यक भावनाओं का समन्वय रहे, तभी उनमें प्रखरता आयेगी ।

श्रद्धा में विश्वास का समुचित पुट रहना चाहिए । उपेक्षा, अवज्ञा और कौतूहल की तरह विधि-विधान की लकीरें पीट लेने से काम नहीं चल सकता । शारीरिक क्रियाओं के साथ-साथ आत्मिक उद्‌गारों का समन्वय भी अभीष्ट है । उसी आधार पर उपासना प्राणवान बनती है ।

इसलिए हम सदा से इस बात पर जोर देते रहे हैं कि कोई साधक केवल मात्र पूजन, जप कर लेने से संतुष्ट न हो जाय, अन्यथा उसे वैसा ही खाली हाथ रहना पड़ेगा, जैसे कि और हजारों, लाखों लोग निराशा के अतिरिक्त और कुछ प्राप्त नहीं कर पाते । हमने अपने जीवन का लगभग सारा ही समय उपासना में लगाया है और मंथन, चिन्तन, मार्गदर्शन, अध्ययन एवं अनुभव के आधार पर यह पाया है कि उपासना में पूजा के अतिरिक्त भावना और साधना का भी समन्वय होना चाहिए, तभी वह अभीष्ट परिणाम प्रस्तुत करने में समर्थ हो सकती है । जितना ध्यान पूजा पद्धति पर दिया जाता है, उससे भी अधिक भावना तथा साधना पर दिया जाना चाहिए । तीनों का सम्मिश्रण जहाँ भी होगा वहाँ सफलता निश्चित रूप से मिलेगी ।

हमने अपना जीवन प्रयोग इसी क्रम पर आधारित रखा और सन्तोषजनक परिणाम प्राप्त किया । जिन लोगों की एकांगी उपासना रही, जो मात्र पूजा पद्धति को ही सब कुछ समझते रहे और उसी में संलग्न रहे, वे हमसे अधिक श्रम करते रहने पर भी आज खाली हाथ हैं । हमारा व्यक्तिगत अनुभव और शास्त्रों तथा ऋषियों का निर्देश समग्र साधना करने के पक्ष में है । हमारा अटूट विश्वास है कि यदि सर्वांगपूर्ण उपासना थोड़ी भी की जाय तो वह आशाजनक परिणाम उत्पन्न करेगी । उसके विपरीत एकांगी पूजा पद्धति तक सीमित रहा गया, तो किसी महत्त्वपूर्ण परिणाम की आशा नहीं की जा सकती । उपासना में भावना और साधना का जो जितना समन्वय कर लेगा, उसका श्रम उतना ही सार्थक होगा । यह एक सुनिश्चित तथ्य है और उसकी उपेक्षा किसी भी विवेकवान आध्यात्मवादी को नहीं करना चाहिए ।

उपासना की भाँति ही साधना भी आत्मिक प्रगति का अनिवार्य अंग है । जीवन-शोधन और परमार्थ प्रक्रिया का समन्वय करने से साधना का प्रयोजन पूरा होता है । जिस प्रकार उपासना को पूजन, जप और ध्यान—इन तीनों भागों में बाँटा जा सकता है, उसी प्रकार आत्म-निर्माण, परिवार-निर्माण और समाज-निर्माण साधना के अविच्छिन्न अंग हैं । भगवान के स्मरण पर जितना ध्यान देना आवश्यक है, उतनी ही आवश्यकता जीवन शोधन की भी है । आदर्शवादी, उत्कृष्ट जीवन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आस्तिकता का सबसे प्रमुख प्रमाण हैं । ऐसे भक्त जो अपने आचरण की शुद्धता लेकर ईश्वर के सन्मुख उपस्थित होते हैं, वह अपने प्रभु को प्रसन्न एवं द्रवित करने में निःसन्देह समर्थ होते हैं ।

साधना—जीवन शुद्धि—जिसमें आत्म-शोधन और परमार्थ दोनों ही सन्निहित है, उपासना की सफलता का पथ प्रशस्त करती है । जमीन अच्छी हो तो बीज उगने में सरलता होती है । भूमि बहुत दाम की खरीदी जाती है । बहुत परिश्रम उसको उर्वर बनाने में लगता है । खाद, पानी, जुताई, मेंड़बन्दी आदि की भारी व्यवस्था बना कर उस जमीन को जब उर्वर बना लिया जाता है, तब कोई भी फसल उसमें बोई, उगाई जा सकती है । साधना भूमि निर्माण और उपासना का बीज बोना है । बीज बोना थोड़े समय में, थोड़े खर्च में पूरा हो जाता है । इसी प्रकार उपासना घण्टे, आधे घण्टे करने से काम चल जाता है, पर साधना में चौबीसों घण्टे निरत रहना पड़ता है । हर घड़ी यह ध्यान रखना पड़ता है कि किसी भी समय कोई अनुचित विचार या कार्य अपने से न बन पाये । अधिक पुरुषार्थ इसी में करना होता है । उपासना में भावना को और साधना में विवेक का समावेश करना होता है । भावना, उपासना का और विवेकशीलता साधना को समर्थ बनाती है । इसलिए अपने आध्यात्मिक क्रिया-कलापों में इनका जुड़ा रहना आवश्यक है ।

ब्रह्मवर्चस के ज्ञान-विज्ञान की तात्विक पृष्ठभूमि

व्यक्तित्व का वृक्ष जैसा भी कुछ बाहर से दीखता है, उसकी निर्मात्री जड़ें अन्तःकरण में जमी रहती हैं । विभिन्न कार्यों को किस प्रकार सम्पन्न किया जाता है और उसका लाभ किस प्रकार मिलता है ? इस प्रश्न का आधारभूत उत्तर व्यक्ति की अन्तःचेतना ही दे सकती है । बहिरंग प्रयत्नों की निन्दा, प्रशंसा जो कुछ भी होती है, वस्तुतः वह कर्त्ता के अन्तरंग की प्रतिक्रिया मात्र होती है ।

अन्तरंग न तो पदार्थों से बना है और न बौद्धिक शिक्षण का उस पर अधिक प्रभाव रहता है । यदि ऐसा होता तो अमुक आहार खिला कर अथवा अमुक पुस्तकें पढ़ाकर किसी को भी समुन्नत स्तर का बना सकना सम्भव हो गया होता । मानवी सत्ता का उद्गम मर्मस्थल उसका अन्तःकरण है । यह आस्थाओं का बना है । अचेतन मस्तिष्क तक तर्कों से प्रभावित नहीं होता और समझाने-बुझाने वालों को अँगूठा दिखाकर अपने अभ्यस्त ढर्रे को अपनाये रहता है, फिर भावों का सम्वेदना संस्थान, जिसे कारण शरीर एवं अन्तःकरण कहते हैं—उससे बहुत ऊपर की वस्तु है । उस पर चढ़े जन्म-जन्मान्तरों के पशु संस्कारों को छुड़ा सकना अति कठिन कार्य है । इसके लिए कांटे से कांटा निकालने की नीति अपनानी पड़ती है । आस्थाओं को काटने के लिए आस्थाएँ ही समर्थ हो सकती हैं । लोहे को लोहा ही काटेगा । भावनाओं से ही भावनाओं के क्षेत्र में परिष्कार परिवर्तन का प्रयोजन सिद्ध होगा ।

मनुष्य की सत्ता तीन भागों में विभक्त है—(१) स्थूल शरीर, (२) सूक्ष्म शरीर, (३) कारण शरीर । प्रथम को पंच तत्वों से बनी काया—दूसरे को मन और बुद्धि का विचार संस्थान और तीसरे को आस्थाओं, भावनाओं एवं सम्वेदनाओं से विनिर्मित अन्तःकरण कह सकते हैं । भौतिक मनोविज्ञान चिन्तन की चेतन और आदतों की अचेतन के नाम से व्याख्या करता है । उसकी दृष्टि से कारण शरीर-भाव संस्थान अचेतन की ही एक गहरी पर्त है, जिसे सुपर चेतन—ईगो आदि नाम दिए जाते हैं । आध्यात्मिक मनोविज्ञान को दृष्टि से कारण शरीर ही जीव चेतना का केन्द्र है । आस्थाओं की जैसी पर्तें उस पर चढ़ी होती हैं वैसी ही गतिविधियों का संचालन मन और शरीर द्वारा सम्पन्न होता रहता है ।

जीवन क्रमिक गति से आगे बढ़ता और ऊँचा उठता हुआ मनुष्य स्तर तक पहुँचा है । उसकी यह सफलता सराहनीय है, फिर भी एक कठिनाई बनी ही हुई है कि जीवन के आरम्भ से लेकर अब तक की लम्बी यात्रा में जिन स्वभाव, संस्कारों के सहारे काम चलता रहा, अब वे ओछे पड़ते हैं । छोटे बच्चे के लिए जो कपड़े उपयुक्त थे, वे ही बड़ी आयु में निरर्थक बन जाते हैं । अस्तु संचित संस्कारों की मानवी गरिमा को ध्यान में रखते हुए छोटा, ओछा या खोटा ही कहा जा सकता है । इन्हें अपनाया नहीं जा सकता । अभी तो मनुष्य से आगे की स्थिति तक बढ़ना है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मा को—महानात्मा, देवात्मा एवं परमात्मा स्तर तक विकसित होना है ।

अन्तस्तल में परिष्कृत परिवर्तन कैसे सम्पन्न किया जाय ? इसका उत्तर एक ही है—आस्थाओं के सहारे आस्थाओं को सुधारा जाय । दलदल में फँसे हाथी को दूसरे सुशिक्षित हाथी ही चतुरता पूर्वक बाहर निकाल कर लाते हैं । पशु-प्रवृत्तियों के दलदल से जीव चेतना को निकाल सकना मात्र उन उच्चस्तरीय आस्थाओं के लिए ही सम्भव है जो आध्यात्मवाद के ढाँचे में समाहित की गई हैं । जीव चेतना को उत्कृष्टता की दिशा में अग्रसर करने में इन आदर्शवादी आस्थाओं को हृदयंगम कराने के अतिरिक्त और कोई मार्ग हो ही नहीं सकता ।

समाज निष्ठा के अनुरूप व्यक्ति निष्ठा को ढालने के लिए भौतिकवादी दर्शन खड़ा तो किया गया है, पर उसमें उपयोगिता के नाम पर प्रतिपादित सिद्धान्तों के खण्डन का भी विधान है । ऐसी दशा में वे नीति मात्र बनकर रह जाते हैं, आदर्श नहीं । आदर्शों के प्रति आस्था को जब उपयोगिता के नाम पर निरस्त किया जाता है, तो आस्थाएँ सामाजिक उपयोग की भले ही रह जायें, उनसे अन्तःस्थिति को प्रभावित नहीं किया जा सकता । फिर भी श्रद्धा विश्वास स्तर की नहीं रह जाती । यही कारण है कि भौतिकवादी समाज निष्ठा दर्शन के उद्घोषक ही आये-दिन कलामुण्डी खाते और समाजद्रोही घोषित किए जाते रहते हैं ।

व्यक्तित्व के मर्मस्थल को स्पर्श कर सकने वाला एक मात्र तत्व श्रद्धा है । पशु योनियों में जो आस्थाएँ परिस्थिति वश जम गई हैं, वे अभी भी उखड़ने को तैयार नहीं, इससे उनकी समर्थता का पता चलता है । प्रगति के लिए परिवर्तन आवश्यक है । अन्तःश्रद्धा को परिष्कृत किए बिना व्यक्ति चेतना सुसंस्कृत हो नहीं सकेगी और इसके बिना उच्चस्तरीय प्रगति की कोई सम्भावना नहीं है । इस धर्म संकट का समाधान तत्वदर्शियों ने देव स्तर की आस्थाओं का ढाँचा खड़ा करके किया है । यही आध्यात्मवाद है । इसी को अपनाने से अन्तःकरण का उच्चस्तरीय बन सकना सम्भव बताया गया है । चिरकालीन अनुभव ने इस प्रतिपादन को सही भी प्रमाणित किया है ।

मनुष्य में घुसी हुई पशुता के निराकरण और देवत्व के समावेश का आधार जिस तत्व दर्शन को (आध्यात्मवाद को) बताया गया है । वह चिन्तन और क्रिया के दो भागों में विभक्त है । चिन्तन में उत्कृष्टता का समावेश करने वाले प्रतिपादन को ब्रह्म विद्या कहते हैं । इसमें ईश्वरीय निर्देश, देव सन्देश, ऋषि अनुभव के तत्व इस प्रकार जोड़े गए हैं कि मानवी भाव सम्वेदना उसे श्रद्धापूर्वक स्वीकार कर लें । मान्यताओं को मान्यताओं से काटने के लिए शास्त्र चिन्तन का स्वाध्याय सत्संग का चिन्तन-मनन का विधान है । आध्यात्म दर्शन की यही पृष्ठभूमि है ।

आध्यात्म का दूसरा पक्ष है साधना । इसे भौतिक मनोवैज्ञानिक भाषा में स्व संकेत, स्व शिक्षण, आत्म निर्देश आदि कह सकते हैं । आध्यात्मिक मनोविज्ञान की दृष्टि से यह सूक्ष्म जगत से, ब्रह्म चेतना से सम्पर्क स्थापित करके उपयुक्त आदान-प्रदान का द्वार खोलना है । इस प्रयास को उपासना (साधना) के नाम से जाना जाता है । भक्ति-भावना के साथ आध्यात्म साधनाओं में निरत रहने की प्रक्रिया अभिनव और उपयोगी आस्थाओं की प्रतिष्ठापना अन्तःकरण के मर्मस्थल में कर सकना सम्भव हो जाता है । स्पष्ट है यह स्थापना पुरानी अनुपयुक्तता का उन्मूलन भी करती है । सुसंस्कारों की अभिवृद्धि से कुसंस्कारों का निरस्त होते जाना स्वाभाविक है । मात्र अवांछनीयता के उन्मूलन का प्रयास सफल नहीं हो सकता । उस स्थान पर परिष्कृत स्थापना की नितान्त आवश्यकता रहती है । साधनात्मक क्रिया-कलापों से श्रेष्ठता के प्रति श्रद्धा विकसित करने के साथ-साथ निकृष्टता के उन्मूलन का प्रयोजन भी साथ-साथ सिद्ध होता चलता है ।

यह तो समीक्षक का विश्लेषण हुआ । तथ्यों की दृष्टि से आध्यात्म विज्ञान के दोनों पक्ष—(१) चिन्तन परक ब्रह्म-विद्या और (२) साधना परक तपश्चर्या, दोनों ही हर दृष्टि से तथ्यपूर्ण हैं । वे आस्था की दृष्टि से ही उपयोगी नहीं हैं, वरन् तर्क, तथ्य और प्रमाणों की दृष्टि से भी स्वीकार करने योग्य हैं । उनके समर्थन में इतना कुछ कहा जा सकता है कि अनास्था के लिए कम ही गुंजाइश रह जायेगी । अनुभवों की कसौटी पर कस कर इसके प्रभाव की स्वयं परीक्षा की जा सकती है । दूसरों से प्रमाण पूछने की अपेक्षा यह आत्म-साक्षी और भी अधिक समाधान कारक हो सकती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ब्रह्म शब्द से ब्रह्म विद्या का ज्ञान भाग और वर्चस् शब्द से साधना का विज्ञान भाग जाना जा सकता है । उच्चस्तरीय आस्थाओं को स्वीकार कर सकने की कोमलता जिसमें हो सके, उसे ऋतम्भरा प्रज्ञा कहते हैं । साधना को सफलता भी उसी स्तर की मनोभूमि में सम्भव होती है । ऋतम्भरा भाव-भूमिका को आध्यात्म विज्ञान में 'गायत्री' कहा गया है ।

गायत्री उपासना का उच्चस्तरीय सोपान ही ब्रह्म वर्चस् कहलाता है । इसमें दो शब्द हैं—ब्रह्म तथा वर्चस् । ब्रह्म अर्थात् ब्रह्म विद्या, ब्रह्मज्ञान । वर्चस् अर्थात् तेजस्, ब्रह्मतेज । अतः ब्रह्मवर्चस के दो पक्ष हुए—प्रथम ब्रह्म विद्या अर्थात् दृष्टिकोण का, क्रिया-कलाप का परिष्कार एवं भावनात्मक कायाकल्प । दूसरा वर्चस् अर्थात् प्रसुप्त अन्तःशक्तियों का जागरण, ओजस्, तेजस् का सम्वर्धन । इस प्रकार ब्रह्मवर्चस उस समग्र आध्यात्म का समन्वय है, जिसमें आध्यात्म, तत्वज्ञान एवं आत्मिक प्रखरता दोनों का समुचित सुसन्तुलित समावेश है ।

गाड़ी की पूर्णता दो पहियों के मिलने से है । एक के रहने से वह अधूरी रहती है । एक हाथ, एक पैर से किसी प्रकार काम चल तो सकता है, किन्तु उसमें सहज गतिमयता, प्रखरता और परिपूर्णता नहीं आ पाती । चिन्तन तथा क्रिया दोनों का समन्वय ही समग्र आध्यात्म साधना है । चिन्तन की उत्कृष्टता ब्रह्म विद्या या आध्यात्म-तत्वज्ञान का ज्ञान पक्ष है । क्रिया की प्रखरता उसका विज्ञान पक्ष है । ज्ञान एवं कर्म का समन्वय ही ब्रह्मवर्चस है । परिपोषण तथा उन्मूलन दोनों ही तथ्य इसमें समाविष्ट हैं ।

ईश्वर का अवतार दो प्रयोजनों के लिए होता है—धर्म की स्थापना और अधर्म का नाश । पुण्य से प्रेम तथा पाप से घृणा की उभयपक्षीय प्रवृत्तियों का सन्तुलन बनाये रखने की प्रेरणा को ब्रह्मवर्चस कह सकते हैं । सदाशयता के सम्वर्धन में उदारता और सहकारिता की नितान्त आवश्यकता है, किन्तु दुष्टता के प्रति यही नीति नहीं अपनाई जा सकती, अन्यथा सर्प को पालने, दूध पिलाने, आतातायी का सहयोग देने या सहन करने के अतिवादी और भयपरक उदारता के अनर्थकारी दुष्परिणाम उत्पन्न होंगे । सज्जनता एवं सत्प्रवृत्तियों के प्रति उदार सहयोग तथा आन्तरिक दोष-दुर्गुणों एवं समाजगत अनाचारों का उग्र प्रतिकार दोनों ही आवश्यक हैं । असुरता और पाशविकता के तत्व अपने भीतर और इस संसार में कम नहीं । उनसे जूझने के लिए मात्र सदाशयता और सज्जनता अपर्याप्त है । उनके प्रति 'मन्यु' सिद्धान्तनिष्ठ आक्रोश का उभरना, स्वयं के प्रति कठोर होना आवश्यक है ।

रावण द्वारा मारे गए ऋषियों के अस्थिपंजरों के पहाड़ जैसे विशाल ढेर देखकर भगवान राम ने 'मन्यु' की ही अभिव्यक्ति की थी और भुजा उठाकर प्रण किया था—"निशिचर हीन करौं महि ।" इसी प्रकार दुर्योधन पक्ष की दुर्नीति एवं दुराग्रह के दलन के लिए भगवान कृष्ण को महाभारत रचना पड़ा था और सुदर्शन चक्र भी घुमाना पड़ा था । तेजस्विता तथा उदारता परस्पर सम्बद्ध रहनी चाहिए । पवित्रता एवं प्रखरता दोनों ही समन्वित रहें, यही उचित है । ब्रह्मवर्चस इसी समन्वयात्मक रीति-नीति को जीवन में उतारने की प्रशिक्षण प्रक्रिया को कहते हैं । इसे आगम एवं निगम, वैदिक एवं तान्त्रिक पक्षों का समन्वय कहा, समझा जाना चाहिए ।

मानवीय चेतना में दैवी एवं आसुरी दोनों ही तत्व कार्यरत रहते हैं । दैवी अंश को उत्कृष्टता, सद्भावना और सज्जनता का खाद-पानी देकर बढ़ाया जाता है । आसुरी अंश का उन्मूलन करने की आवश्यकता पड़ती है । माली पौधों को सींचता है तो साथ ही अनावश्यक कुरूप टहनियों की काट-छाँट भी करता है और बगीचे में उगे हुए खरपतवार की सफाई भी करता है । किसान उपयोगी पशुओं को पालता है, साथ ही हानि पहुँचाने वाले जंगली जानवरों को भगाता भी है । अपने भीतर एवं अपने समाज के भीतर सत्प्रवृत्तियों, सद्भावनाओं का अभिवर्धन जितना आवश्यक है, दुष्प्रवृत्तियों का उन्मूलन, प्रायश्चित एवं इष्टापूर्ति भी उतनी ही आवश्यक है । भक्ति एवं प्रायश्चित दोनों ही उपासना के अंग हैं । श्रेष्ठता को प्रोत्साहन और निकृष्टता पर बन्धन दोनों ही आवश्यक हैं ।

द्रोणाचार्य के कन्धे पर धनुष, पीछे तरकश, और हाथों में वेद देखकर किसी ने प्रश्न किया । 'आचार्य प्रवर ! बाण और वेद एक साथ क्यों ? द्रोणाचार्य ने उत्तर दिया—"अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनु । इदं ब्रह्मं इदं क्षात्रं शास्त्रादपि शरादपि ।" अर्थात् आगे हैं चारों वेद तो पीछे धनुष बाण । वेद ब्राह्मण धर्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, तो धनुष-बाण क्षात्र-धर्म । शास्त्र एवं शस्त्र दोनों ही के द्वारा सदाचरण का पथ प्रशस्त किया जाता है ।" विद्या और बल, ज्ञान और भक्ति दोनों ही महत्त्वपूर्ण एवं आवश्यक है । यही प्राचीन आर्ष परम्परा रही है । श्रीराम को महर्षि विश्वामित्र ने दोनों ही प्रकार का शिक्षण दिया था । श्रीकृष्ण को भी संदीपन के आश्रम में उभयपक्षीय शिक्षा प्रदान की गई थी । प्राचीन गुरुकुल परम्परा में यह प्रशिक्षण क्रम समन्वय सर्वत्र विद्यमान था । आध्यात्म क्षेत्र में यही परम्परा भक्ति और कर्म का समन्वय करने वाले तत्वज्ञान के रूप में है । अर्जुन और हनुमान दोनों ही उत्कृष्ट भक्त थे, साथ ही दानों को सदा सक्रिय जीवन जीना पड़ा । दोनों को ही भगवान द्वारा निरन्तर कर्म की प्रेरणा एवं शिक्षा दी गयी । आत्मोत्कर्ष और लोक-कल्याण की यही समन्वित व्यवस्था भारतीय आध्यात्म की आर्ष परम्परा है । ब्रह्मवर्चस उसी परम्परा को गतिशील बनाने वाली प्रक्रिया है ।

एकांगी दृष्टिकोण अपूर्ण ही नहीं, हानिकर भी होता है । जिन दिनों भारत में उदारता, सहनशीलता और भक्तिभाव तक ही चिन्तन को सीमाबद्ध किया गया और अहिंसा के अतिवाद में पराक्रम को अनावश्यक ठहराया गया, उन दिनों तेजस्विता-प्रखरता की उपेक्षा होती चली गई और एशिया से आये मुट्ठीभर अक्रान्ता इस विशाल देश को पराधीन बनाने में सफल होते चले गए । इसी प्रकार तेजस्विता का अभ्यास होने पर भी उसके साथ में विवेक का मार्गदर्शन न होने पर एक समय आक्रान्ताओं की कुटिल चालों के सामने असंगठित तेजस्वी योद्धा हारते चले गए । भक्ति एवं कर्म, भावना एवं तेजस्विता दोनों को समन्वित रखने वाला तत्वज्ञान ही भारतीय आध्यात्म विद्या का समग्र आधार रहा है । उसके स्थान पर एकांगी चिन्तन अपनाने की भूल जब भी की गई है तो दुर्गति का सामना करना पड़ा है, जबकि दोनों के समन्वय से सफलता और प्रगति का द्वार प्रशस्त होता है । गाँधी जी के सत्याग्रह में सत्य और अहिंसा का जितना समावेश था, अनीति के निर्भीक प्रतिकार का उतना ही प्रखर संकल्प एवं साहस भी था । यह समन्वय ही ब्रह्मवर्चस की साधना-प्रक्रिया का पथ है ।

ब्रह्मज्ञान एवं ब्रह्मतेज दोनों के समन्वय से ब्रह्मवर्चस-साधना सम्पन्न होती है । महान ऋषियों द्वारा प्रतिपादित समग्र आध्यात्म यही है । प्रज्ञा और पराक्रम का यही युग्म ब्रह्मवर्चस की लक्ष्य-प्राप्ति में समर्थ बनाता है । आध्यात्म परम्परा में इन्हें ही ब्रह्म विद्या एवं तपश्चर्या कहा गया है । पौराणिक कथाओं में ब्रह्मा जी की दो पत्नियों बताई गई हैं—एक गायत्री, दूसरी सावित्री । गायत्री को ब्रह्म विद्या पक्ष की और सावित्री को तपश्चर्या पक्ष की माना जाता है । तपश्चर्या किस की ? ब्रह्माग्नि की स्फुरमा उद्भव की । आन्तरिक अग्नि-चेतन ऊर्जा ही ब्रह्माग्नि (प्राणाग्नि) है । गायत्री या ब्रह्म विद्या से शान्ति का, भोक्ष का द्वार खुलता है तो सावित्री से सर्वतोन्मुखी समर्थता, प्रखरता की उपलब्धि होती है । दोनों ही परस्पर अविच्छिन्न जुड़े हैं । सुसंस्कार और सत्सामर्थ्य दोनों ही परस्पर अन्योन्याश्रित कहे जा सकते हैं । इन दोनों का सम्मेलन ही प्रगति का पार्थय बनता है । प्रज्ञा की उदारता, पवित्रता, उत्कृष्टता से मिलने वाली उपलब्धियों को गायत्री-उपासना से प्राप्त अमृत, पारस और कल्प वृक्ष कहते हैं । प्रखरता, पराक्रम और पुरुषार्थ की उपलब्धियाँ ब्रह्मास्त्र, पराक्रम और ब्रह्मपाश के रूप में सामने आती हैं । गायत्री और सावित्री के रूप में दोनों के सम्मिलन का प्रतिपादन किया गया है । साधना विज्ञान की भाषा में इसे योग और तप का समन्वय कहा जाता है । योग से आत्मा को देवात्मा, परमात्मा स्तर तक विकसित होने का अवसर प्राप्त होता है । तप से शक्ति उत्पन्न होती है । सशक्तता ही प्रगति, समृद्धि और विभूति के त्रिविध सत्परिणाम उत्पन्न करती है । साधना से मिलने वाली सिद्धियाँ शक्ति-सम्पादन का ही परिणाम हैं । योग एवं तप दोनों की समन्वित साधना, प्रक्रिया ब्रह्मवर्चस का आधार है ।

योग और तप पवित्रता तथा प्रखरता, आस्था और क्रिया, ज्ञान एवं तेज दोनों पक्षों की समन्वित साधना ही गायत्री की समग्र साधना है । उच्चस्तरीय सत्परिणाम इसी से मिलते हैं । ब्रह्मज्ञान और ब्रह्मतेज दोनों के समन्वय द्वारा ही सर्वांगपूर्ण साधना सम्भव हो पाती है । अभीष्ट दोनों हैं—तत्वज्ञान भी तथा तेजस्विता भी । एक के बिना दूसरा अपूर्ण है । यह गायत्री साधना विधान की विशेषता है कि इसमें दोनों ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रतिफलों की प्राप्ति होती है तथा व्यक्ति ओजस्, तेदस्, वर्चस् का समुच्चय बनता है । अर्थव वेद के मन्त्र "स्तुता मया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ताम्·····" में जिस सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि की बात कही गई है, वह ब्रह्मवर्चस ही है । साथ ही यह भी कहा गया है कि यही ब्रह्मलोक में जाने वाला, बन्धनों से मुक्ति दिलाने वाला एक मात्र मार्ग है । ब्रह्मवर्चस की साधना ही आत्मबल प्रदान करती है ।

ब्रह्मवर्चस की योगाभ्यास साधना

ब्रह्मवर्चस साधनाओं का तपश्चर्यापरक पक्ष आत्मा पर चढ़े मल आवरण के विक्षेप की धुलाई और सफाई के लिए है । दुष्प्रवृत्तियों, दुष्कर्मों की जड़ मनुष्य का मन है, उसमें भरी पड़ी गन्दगी को कुरेदने के लिए बुराइयों की आत्म स्वीकृति और उसका प्रायश्चित आवश्यक होता है । ब्रह्मवर्चस साधनाओं का यह पक्ष खेत में बीज बोने की अपेक्षा कहीं अधिक आवश्यक है । उससे कम में मनोभूमि साधना के संस्कारों को आत्मसात करने योग्य बन ही नहीं पाती । उसकी समस्त लालसाएँ और लिप्साएँ भौतिक जीवन के सुखों में ही अटकी पड़ी रहती हैं । जौंक शरीर के किसी अंग से चिपक जाय तो फिर उसे चिमटी से मजबूती से पकड़कर ही बाहर निकाला जा सकता है । भौतिक और इन्द्रियजन्य सुखों के पीछे पड़ी जोंक को भी तप और तितीक्षाओं की चिमटी से ही निकाला जा सकता है । ब्रह्मवर्चस का चान्द्रायण परायण पक्ष उसी की पूर्ति करता है ।

उसके बाद अन्तरात्मा की अनुभूति का दूसरा पक्ष प्रस्तुत होता है । इसे ब्रह्मवर्चस-साधना का उत्तरार्द्ध या दूसरा खण्ड कहते हैं । जब तक आत्म सत्ता के अस्तित्व का बोध नहीं होता, भौतिकतावादी जड़ता पूरी तरह समाप्त नहीं होती, तब तक श्रेय पथ पर देर तक चलते रह सकना सम्भव नहीं होता । इस स्थिति तक ले जाने के लिए आत्म-बोध की योग साधनाओं का अभ्यास अनिवार्य है । मनुष्य अपने जीवन का यथार्थ स्वरूप जान ले तो, प्रतिकूल परिस्थितियाँ होने पर भी साधक पतित नहीं हो सकता । कोतवाल को सामने खड़ा देखकर अपराधी की हिम्मत टूट जाती है और वह सामने रखे खजाने में भी हाथ डालने का साहस नहीं कर सकता । आत्म-बोध प्राप्त व्यक्ति ही महान हुआ करते हैं, इन्हीं पर जन-श्रद्धा, जन-विश्वास और ईश्वरीय अनुग्रह बरसता देखा जाता है । आत्म-परायणता की इस स्थिति तक पहुँचने के लिए साधनाओं का अभ्यास अनिवार्य है, उससे कम में किसी को भी आत्मानुभूति, आत्म-साक्षात्कार का सुयोग मिला नहीं ।

साधना विज्ञान विशुद्ध रूप से आध्यात्मिक वैद्यक है । किस रोग में क्या औषधि दी जाय ? इस बात का ज्ञान होने पर भी कोई रोगी व्यक्ति अपनी चिकित्सा आप नहीं करने लग जाता । रोग के प्रधान लक्षणों से बीमारी का निर्धारण तो हो सकता है, किन्तु औषधि सेवन के सन्दर्भ में यह सिद्धान्त लागू नहीं होता है । बीमारी के साथ-साथ रोगी किस प्रकृति का है, यह भी ज्ञान होना आवश्यक है । एक ही बीमारी में पित्त-प्रधान रोगी के लिए मूल औषधि के साथ अन्य औषधियाँ भी दी जाती हैं । कफ-प्रधान रोगी के लिए उसमें दूसरी तरह का अन्तर आ जाता है । बात-प्रधान रोगी के लिए भिन्न ही प्रकार की औषधि बनती है । औषधि ही नहीं विधि-निषेध खान-पान और आहार-विहार तक में हर रोगी की प्रकृति के अनुरूप ध्यान देना होता है । इस बात को केवल वैद्य ही समझ सकता है । मात्र भेषज की पुस्तकें पढ़ लेने से कोई यह निर्धारण नहीं कर सकता । ठीक यही स्थिति साधना विज्ञान की भी है । उसका क्षेत्र और भी विस्तृत होने से और अधिक व्यापक दृष्टि की आवश्यकता होती है । साधक की प्रकृति, उसके वातावरण, शारीरिक सहिष्णुता के साथ-साथ उसके पिछले अनेक जन्मों के संस्कार कौन देख सकता है ? कोई आत्मबेधी सिद्ध तपोधन ही उस सत्य का निराकरण कर सकते हैं । इसी कारण सदैव से ही समर्थ गुरुओं के आश्रम ढूँढ़े जाते रहे हैं । योग्य मार्गदर्शक ही साधक को सही रास्ता दिखा सकता है । ब्रह्मवर्चस साधना अभियान को जहाँ गंगा की पावन गोद हिमालय का पुनीत अंचल और सप्त ऋषियों की साधना का पुण्य क्षेत्र प्राप्त है, वहीं वह समर्थ संरक्षण भी । जहाँ साधक थोड़े समय में ही उतनी प्रगति कर सकता है, जितने के लिए सैकड़ों स्थान घूमने और अनेकों के आगे नाक रगड़ने पर भी नहीं हो सकती है । मात्र साधक की मनोभूमि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परखने और उसके योग्य साधनाएँ चयन करने का सुयोग ही नहीं, यहाँ साधना के साथ-साथ शरीर में होने वाले परिवर्तनों के अध्ययन के लिए साधन सम्पन्न प्रयोगशाला भी है, जिसमें किसी भी साधक को उसकी प्रगति से आश्वत किया जा सकता है ।

ब्रह्मवर्चस शिविरों में साधनाएँ सबकी एक जैसी नहीं होतीं । उसमें साधकों की स्थिति का गहरा पर्यवेक्षण करके तदुपरान्त यह निर्णय किया जाता है कि किसकी क्या साधना होनी चाहिए । स्कूली विद्यार्थियों में एक कक्षा का एक पाठ्यक्रम होता है, पर अस्पताल में एक मर्ज के सभी मरीजों का एक जैसा इलाज नहीं होता । हर रोगी की स्थिति में कुछ न कुछ अन्तर रहता है । तदनुसार उनकी चिकित्सा में भी अन्तर रहता है । आध्यात्म साधनाओं में अब तक की साधना, मान्यता, श्रद्धा का, पूर्व संचित संस्कारों का, स्वभाव अभ्यास का, विशेष रूप से ध्यान रखना पड़ता है । संचित कुसंस्कार आत्मिक प्रगति के मार्ग में विशेष रूप से बाधक होते हैं । बन पड़े पापों का, कषाय-कल्मषों का संचय इतना विषम होता है कि साधना को सफल होने देना तो दूर, उल्टे उसे असफल बनाने वाले विद्रोह खड़े कर देता है । साधना का प्रथम चरण इसी परिशोधन के साथ आरम्भ होता है । इस जन्म के पापों का प्रायश्चित प्रथम चरण है । सर्वप्रथम इसी धुलाई की व्यवस्था करनी पड़ती है । रंगाई का कार्य इसके पश्चात ही ठीक तरह बन पड़ता है । भूमि जोतने के बाद बीज बोने का समुचित लाभ है । पथरीली, झाड़-झंखाड़ों से भरी जमीन में उपयोगी साधना के बीज बोने पर भी उपयोगी उत्पादन की आशा नहीं की जा सकती । ब्रह्मवर्चस साधना में प्रथम निदान परीक्षण, पीछे परिशोधन क्रम चलता है प्रायश्चित क्या, कितना, किस प्रकार किया जा सकता है ? उसका निर्णय-निर्धारण भी प्रत्येक साधक की स्थिति के अनुरूप ही किया जा सकता है ।

साधना अभ्यासों में दो क्रम हैं और वे दोनों साथ-साथ चलते हैं । शरीर में संव्याप्त प्राण ऊर्जा के परिष्कार के लिए तपश्चर्या । मनःक्षेत्र की चिन्तन चेतना को उच्चस्तरीय प्रखरता के साथ जोड़ने के लिए योगपरक ध्यान-धारणा । दोनों का तारतम्य साथ-साथ मिलाकर समन्वयात्मक साधना विधि का निर्धारण किया जाता है । यह निर्णय करते समय इस बात का ध्यान विशेष रूप से रखा जाता है कि साधक को क्या छोड़ना और क्या ग्रहण करना है । छोड़ने और अपनाने की प्रक्रिया किस क्रम से चलनी चाहिए उसमें फौजी निर्देश देने और उसका परिपालन करने का ऐसा दबाव नहीं डाला जाता, जिसमें मन विद्रोह पर उतारू हो जाय । सहन शक्ति के साथ तालमेल बिठाकर साधक की सहमति से ही ऐसी साधना विधि निर्धारित की जाती है जो सरलतापूर्वक क्रमिक गति से आगे बढ़ती रह सके ।

तप-तितिक्षा में आहार सम्बन्धी विशेष निर्धारण, ब्रह्मचर्य, मौन, ऋतु-प्रभावों को सहना, अपनी शरीर सेवा स्वयं करना आदि अमुक नियम-मर्यादाओं का पालन जैसी विधि व्यवस्था बना दी गई है और उसका निष्ठापूर्वक पालन करने के लिए साधक को कहा जाता है ।

ब्रह्मवर्चस के योगाभ्यास कई प्रकार के हैं । उनमें जप और ध्यान की प्रमुखता रहती है । सवा लक्ष जप का गायत्री पुरश्चरण सभी के लिए अनिवार्य नियम है । जप के समय ध्यान साकार और निराकार दोनों हो सकते हैं, साकार उपासना में हंसवाहिनी गायत्री माता के कमण्डल में से स्नेह सौजन्य की अमृत वर्षा का रोम-रोम में प्रवेश और उससे अन्तरात्मा का पुलकित होना अनुभव किया जाता है । निराकार उपासना में प्रभातकालीन अरुणोदय (सविता की दिव्य किरणों) का साधक पर अवतरण और उसमें ओजस्-तेजस् और ब्रह्मवर्चस की प्रचण्ड उपलब्धि की अनुभूति उभारी जाती है । सोऽहम्, मुद्राएँ, शिथिलीकरण, प्राणायाम, आसनसिद्धि, बन्ध-प्रयोग, नाद योग, चक्र जागरण के लिए प्राण ऊर्जा के घर्षण की अनेक योग क्रियाएँ इस अवधि में प्रत्येक साधक की स्थिति के अनुरूप बतायी जाती रहती हैं । जप, तितीक्षा, तप तथा योगाभ्यास की क्रियाएँ सभी साथ-साथ चलती हैं, पर उनमें प्रत्येक साधक की अन्तर्बाह्य परिस्थितियों को ध्यान में अवश्य रखा जाता है ।

जो योग साधनाएँ सामान्य रूप से सभी को करनी पड़ेंगी, उनकी पूर्व जानकारी रहे तो अभ्यास में अधिक सुविधा रहती है । यहाँ बताये जाने वाले अभ्यास परामर्श के बाद कराये जाते हैं, पर पाँच क्रियाएँ सर्वथा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निरापद होने से आगे दी जा रही हैं, उनका अभ्यास ब्रह्मवर्चस सत्र में आने से पूर्ण भी प्रारम्भ किया जा सकता है । उनमें किसी प्रकार जोखिम की कोई आशंका नहीं है ।

योग साधना का उद्देश्य एवं स्वरूप

मानवी सत्ता दो भागों में विभक्त है—काया और चेतना । काया का परिशोधन करने के लिए तप का और चेतना को परिष्कृत करने के लिए योग का विधान है । आध्यात्म विज्ञान इन्हीं दो धाराओं में गंगा यमुना की तरह विभक्त है । दोनों का समन्वय होने पर जो संगम बनता है, वही परम पवित्र तीर्थराज है । पूजा पाठ इसी प्रगति पक्ष के आरम्भिक चरण हैं । उच्चस्तरीय साधना में इन्हीं का विकसित रूप, योग साधना और तपश्चर्या के रूप में क्रियान्वित होता है ।

योग का अर्थ है जोड़ना, तप का अर्थ है तपाना । आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ देने का तात्पर्य है—क्षुद्रता को महानता के साथ, कामना को भावना के साथ, स्वार्थ को परमार्थ के साथ बाँध देना, बदल देना, तदनुसार बना देना । योग का व्यावहारिक रूप है समर्पण । इसी स्तर के दूसरे नाम हैं—विलय, विसर्जन, समन्वय, समापन, शरणागति । इस शुभारम्भ की पूर्णाहुति जीव और ब्रह्म के साथ पूर्ण एकता स्थापित होने के रूप में होती है । इसी स्थिति का अद्वैत कहते हैं । यही ईश्वर प्राप्ति है ।

विराट् समुद्र में जीव बिन्दु का विसर्जित हो जाना सायुज्य है । यही परम पद की प्राप्ति है । व्यष्टि का समष्टि में विसर्जन होने का नाम ही प्रभु समर्पित जीवन है । ईंधन और आग की, नदी और नाले की, दूध और जल की, दीप और पतंग की उपमा इसी स्थिति के लिए दी जाती है । व्यक्ति का अपना स्वार्थ समाप्त हो जाता है, उसके स्थान पर एक मात्र परमार्थ ही छाया रहता है । अहंता शरीर और परिवार तक सीमित न रहकर सोऽम्—विशोऽम् सच्चिदानन्दोऽम्—तत्व मसि—अयात्मा ब्रह्म—शुद्धोसि—बुद्धोसि, निरजनोसि की स्थिति में पहुँच जाता है । अपना सब में और सब अपने में दृष्टिगोचर होते हैं । वसुधैव कुटुम्बकम्, आत्मवत् सर्वभूतेषु की अनुभूति इसी स्तर पर पहुँचने में होती है । यही योग की सिद्धावस्था है । परम पद इसी को कहते हैं । जीवन मुक्ति इसी स्थिति का नाम है । व्यक्ति की अपनी महत्त्वाकांक्षाओं का समाप्त हो जाना और मात्र ईश्वरेच्छा ही रोम-रोम में समायी रहना यही है जीव और ब्रह्म की एकता का लक्षण । दोनों में खींचतान, शिकायत, उपालम्भ का कोई चरण ही शेष नहीं रहता । दोनों की एक भावना एक कामना, एक योजना और एक दिशा धारा होती है । इसी का नाम है—योग साधन; प्रभु मिलन ।

योग चेतना का विषय है, इसलिए यह चिन्तन प्रधान है । तप काया का विषय है । शरीर और मन पर चढ़े हुए कषाय-कल्मषों की अशुद्धियों को तपश्चर्या की आग में तपाकर शुद्ध किया जाता है । खदान में से निकलने वाली मिट्टी मिली कच्ची धातुओं को जिस प्रकार भट्टी में तपाकर शुद्ध किया जाता है उसी प्रकार तपश्चर्या से जीवन शोधन का उद्देश्य पूरा होता है । जाग्रत और परिशोधित आत्मा में उन समस्त शक्तियों, विभूतियों और विशेषताओं का परिचय मिलता है जो ईश्वर में विद्यमान है । सिद्धावस्था इसी को कहते हैं । तप से ऋद्धियाँ मिलती हैं और योग से सिद्धियाँ । ऋद्धियाँ भौतिक होती हैं और सिद्धियाँ आत्मिक । इन दोनों की उपलब्धि योग और तप की समन्वित साधना पर निर्भर है ।

चेतना को जीव ब्रह्म की ऐकत्व स्थिति में अद्वैतावस्था में पहुँचा जेने का उद्देश्य पूरा करने के लिए कुछ साधनों, प्रयोगों, अभ्यासों और उपायों का अवलम्बन करना पड़ता है । उन्हीं को योग साधना या योगाभ्यास कहते हैं । इन साधनों, विधानों की संख्या असीम है तो भी उनको प्रमुख धाराएँ पाँच ही हैं । उच्चस्तरीय गायत्री साधना को पंचकोशी कहा जाता है । गायत्री माता के पाँच मुखों के अलंकार में इसी तथ्य का संकेत है ।

सूक्ष्म शरीर के भी पाँच विभाग हैं । उन्हें अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश, आनन्दमय कोश कहते हैं । चेतना की गतिविधियाँ प्राणतत्व के आधार पर चलती हैं । यह प्राण भी पाँच हैं । प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान । यों इन्हीं की सहायक प्रक्रिया का निर्वाह करने के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाँच उप-प्राण और हैं । सूक्ष्म शरीर की अनेकों गतिविधियाँ विशेषताएँ, विभूतियाँ जिन पाँच विभागों में विभक्त की जाती हैं उन्हें पंचकोश कहते हैं । ऊपर की पंक्तियों में उन्हीं की चर्चा है । इन कोशों के जागरण से जो विशेषताएँ विभूतियाँ, साधक में द्रिष्टिगोचर होती है उनकी तुलना प्रसिद्ध पाँच देवताओं की अनुकम्पा से, मिलने वाली सिद्धियों से की जाती है ।

योगाभ्यास की साधनाएँ पाँच हैं—(१) ध्यान, (२) प्राणायाम, (३) त्राटक, (४) नाद, (५) मुद्रा । इन्हीं के भेद उपभेद अनेकानेक सादना विधानों में विभक्त होते चले गए हैं । साधक की स्थिति के अनुरूप अभ्यास करने के लिए अनुभवी मार्गदर्शक उपयुक्त परामर्श देते हैं । इन सबका उद्देश्य जीव और ईश्वर के बीच एकता स्थापित करना है । अभ्यास भिन्नता इसलिए रखी गई है कि सूक्ष्म शरीर के पाँच विभाग—विभाजनों को उनकी प्रकृति के अनुरूप साधना में लगाकर परम लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अग्रसर बनाया जाय ।

जप और पूजन स्थूल योग साधन हैं । जप में वाणी का और पूजन में पदार्थों का उपयोग होता है । यह बाल कक्षाएँ हैं । वाणी से स्वाध्याय, पाठ, कीर्तन, स्तवन आदि की जो भी क्रिया सम्पन्न होती हैं, वे भी सभी जप वर्ग की हैं । पूजन में हवन, तर्पण, षोडशोपचार, अभिषेक, देव दर्शन, आरती, परिक्रमा, आदि पदार्थ और हलचलपरक उपक्रमों का समावेश है । विचारों और क्रियाओं के समन्वय से संस्कार बनते हैं । स्वाध्याय, ससंग, मनन आदि के द्वारा विचारणा विकसित की जाती है और धर्मानुष्ठानों के क्रियाकृत्य, कर्मकाण्ड अपनी हलचलों से चेतना पर प्रभाव संस्कार डालते हैं । श्रीगणेश इसी क्रम से होता है । प्राथमिक कक्षाओं में इन सब की वैसी ही उपयोगिता है जैसी उच्च भूमिका में पहुँचने पर योगाभ्यास और तप साधना की ।

चेतना की बहुर्मुखी प्रवृत्ति को अन्तर्मुखी बनाना, अन्तर्जगत की विशेषताओं को देखना, आत्मा के स्वरूप और लक्ष्य को समझना जैसे प्रयोजन ध्यान द्वारा ही सम्पन्न होते हैं । ईश्वर पदार्थ परिधि से ऊपर है, उसकी समीपता शरीर से नहीं चेतना के समीप चेतना के पहुँचने से ही बन पड़ती है । यह कार्य भी ध्यानावस्था में ही सम्पन्न हो सकता है । ईश्वर प्रत्यक्ष नहीं है इसलिए इसका सान्निध्य अनुभव भी काय कलेवर और उसकी इन्द्रियों की सहायता से नहीं हो सकता । ध्यानावस्था के अतिरिक्त ईश्वर की निकटता एवं अनुभूति प्राप्त करने का और कोई मार्ग नहीं है ।

ध्यान धारणा

ध्यान, योग का क्षेत्र बहुत बड़ा है । सच तो यह है कि प्रकारान्तर से अन्य सभी साधनाएँ इसी परिधि के अन्तर्गत आ जाती हैं । विभिन्न माध्यमों से ध्यान को भौतिकतावादी पशु प्रवृत्तियों से हटाकर आत्मवादी देव प्रवृत्तियों के साथ जोड़ा जाता है । प्राणायाम, त्राटक, नाद, मुद्रा की चार अन्य साधनाओं पर भी दृष्टिपात करने से पता चलता है कि उनकी क्रिया पद्धतियों में भिन्नता आवश्यक है, किन्तु तथ्यतः वे उद्देश्य ध्यान को ही पूरा करती हैं । चिन्तन के उच्च उद्देश्यों पर केन्द्रीकरण ही इन सबका एक मात्र आधार है । मानसिक बिखराव को एक केन्द्र पर केन्द्रित करने से एकाग्रताजन्य ऊर्जा उत्पन्न होती है, उसे जिस दिशा में भी नियोजित किया जायेगा उसी में चमत्कार उत्पन्न करेगी । आत्मिक प्रगति के लिए उसे लगाया जाय तो उस दिशा में भी उसका लाभ मिलेगा ही । वैज्ञानिक, शोधकर्त्ता जैसे प्रबुद्ध व्यक्ति इस मानसिक केन्द्रीयकरण के फलस्वरूप ही अपने-अपने कार्यों में विविध सफलताएँ प्राप्त करते हैं । आत्मिक प्रगति के लिए योगीजन इसी शक्ति का उपयोग करके अपने लक्ष्य तक पहुँचते हैं । ध्यान, योग के चेतनात्मक पुरषार्थों में अत्यन्त उच्चकोटि का समझा जा सकता है । ध्यान का विषय अधिक विस्तृत होने से उस पर अन्यत्र विशेष प्रकाश डाला जायेगा ।

रूप परक ध्यान में प्रायः भगवान की अनेक छवियों को भी माध्यम बनाया जाता है । खुले नेत्रों से देखने के लिये मूर्तियों अथवा तस्वीरों का प्रयोग होता है । प्रत्यक्ष ध्यान का यही तरीका है । आँखें बन्द करके जो छवि कल्पना क्षेत्र में भाव पटल पर उतारी जाती है, उसे रूप ध्यान कहते हैं । इससे इष्ट देव के प्रति घनिष्ठता उत्पन्न होती है । भक्ति भावना के सहारे आत्मीयता बढ़ती है । इस प्रकार आत्मा और परमात्मा की दूरी घटती और समीपता बढ़ती है । इष्ट प्रतिमा के साथ तादात्म्य स्थापित होने पर मन उस आकृति में रस लेने लगता है और उसके अंग प्रत्यंगों को, वस्त्र आभूषण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आयुध, वाहन आदि को अपना क्रीणा क्षेत्र बनाकर क्रमशः अधिक घनी एकाग्रता का अभ्यास बढ़ता चलता है ।

कीट और भृंग का उदाहरण सर्वविदित है । झींगुर की, भृंग की आकृति और गुंजार देर तक मस्तिष्क पर छाई रहती है तो उसी ढाँचे में ढल जाता है । उसकी आकृति और प्रकृति बदल कर वैसी ही हो जाती है । साँचे में ढल कर उसी आकृति के खिलौने, आभूषण, औजार, पुर्जे आदि बनते चले जाते हैं । साधक श्री भगवान के जिस स्तर का, जिस स्वरूप का, ध्यान करता है उसकी स्थिति तदनुरूप बनती जाती है । टिड्डा जब तक हरी घास पर रहता है तब तक उसका रंग हरा रहता है, किन्तु जब घास सूखकर पीली हो जाती है, तब उसका शरीर भी पीला बन जाता है । फल, शाक एवं वृक्षों पर जो कीड़े पाये जाते हैं, वे प्रायः उसी रंग के होते हैं जो उनके सामने रहता है ।

भले, बुरे चिन्तन से मनुष्य के स्वभाव बनते, बदलते आये दिन देखे जाते हैं । कामुक चिन्तन से मनुष्य की गतिविधियाँ उसी दिशा में बढ़ने लगती हैं और स्वप्न दोष तक होने लगते हैं । यही बात चिन्तन की प्रत्येक भली बुरी धारा पर लागू होती है । विचार शक्ति के चमत्कारों के सम्बन्ध में सभी जानते हैं । मनुष्य की प्रकृति बदलना, व्यक्तित्व बनाना और भविष्य का निर्माण करना बहुत कुछ विचार शक्ति पर ही निर्भर रहता है । ध्यान वस्तुतः विचारों को घनीभूत करके एक दिशा विशेष में लगा देना है । इसका परिणाम बारूद को बन्दूक की नली में बन्द करके एक दिशा विशेष में दागने और गोली को निशाने तक पहुँचाने की तरह ही प्रभावशाली होता है । ध्यान के आधार पर साधक अपने व्यक्तित्व की गहरी पर्तों में आवश्यक परिवर्तन और परिष्कार करके यह तथ्य अपने उदाहरण से प्रमाणित करता है कि मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है और स्वयं ही अपने भविष्य की संरचना अपने हाथों करता है ।

नादानुसन्धान

छविपरक ध्यान की ही तरह दूसरी धारा नादानुसन्धान है । इसे नाद योग भी कहते हैं । नाद योग में शब्द के माध्यम से ध्यान किया जाता है । अनन्त अन्तरिक्ष में सूक्ष्म जगत की हलचलें और घटनाएँ दृश्य रूप में बदल कर ध्वनि बन जाती हैं । उन श्रवणातीत धवनियों को स्थूल कानों से तो नहीं, पर कर्णेन्द्रिय की सूक्ष्म शक्ति को विकसित करके सुन सकने और उनके मूल कारण को जान सकने में सफलता मिल सकती है । टेलीफोन से की हुई वार्ता तार में जाकर बिजली के रूप में बदल जाती है । दूसरे छोर पर उसी बिजली को फिर ध्वनि बना लिया जाता है । टेलीविजन में दृश्य और इसी प्रकार तरंगें बनतीं और निर्दिष्ट स्थान पर जाकर फिर दृश्य बन जाती हैं । इसी प्रकार संसार में घटित हो रही एवं हो चुकी घटनाएँ भी आकाश में तरंग बन कर भ्रमण करती रहती हैं । उन्हें नाद योग का अभ्यासी अपनी सूक्ष्म कर्णेन्द्रियों द्वारा पकड़ सकता है और जान सकता है कि कहाँ क्या हो रहा है, क्या हो चुका है ? इतना ही नहीं भावी सम्भावनाओं की खिचड़ी भी सूक्ष्म जगत की हाँडी में पकती रहती है । उसकी गन्ध पता चल जाती है कि निकट भविष्य में कब, कहाँ क्या होने वाला है ? गर्भस्थ शिशु का लिंग एवं स्वरूप आँखों से नहीं दिखाई पड़ता किन्तु विशेषज्ञ अपने उपकरणों से यह पता चला लेते हैं कि भावी सन्तान की क्या स्थिति है । ठीक इसी प्रकार नाद योग के ज्ञाता इस भौतिक जगत की भावी हलचलों के सम्बन्ध में पूर्ण जानकारी प्राप्त कर लेते हैं और तदनुसार गतिविधियाँ अपना कर भवितव्यता का लाभ उठाते हैं ।

नाद योग में कानों के छिद्र बन्द कर सूक्ष्म कर्णेन्द्रियों को जाग्रत करने का विधान है । श्रवणातीत ध्वनियों से कई प्रकार के वाद्य यन्त्रों तथा मेघ गर्जन, निर्झर, आँधी, गुंजन जैसी ध्वनियों का श्रवण करते हैं । उनके उतार-चढ़ावों को देखकर न केवल प्रकृति की परिस्थितियों का, वरन् शरीर के विभिन्न अवयवों के भीतर चल रही अदृश्य गतिविधियों का भी पता लगा लेते हैं । यह निदान एवं आभास शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से बहुत ही उपयोगी सिद्ध होता है ।

यह प्रकृतिगत नाद-श्रवण हुआ । इससे आगे की अनाहत ध्वनियों का सूक्ष्म जगत है । निखिल ब्रह्माण्ड में ईश्वरीय सन्देशों एवं संकेतों का परिभ्रमण होता रहता है । दैवी शक्तियाँ अपना काम करती रहती हैं । उनकी इच्छाएँ, गतिविधियाँ एवं योजनाओं का पता उन दिव्य ध्वनियों के सहारे लग सकता है, जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चेतन दिव्य शक्तियों द्वारा पृथ्वी निवासियों के लिए भेजी जाती हैं । नाद योग की प्रारम्भिक स्थिति में तो मात्र सन्देशों, संकेतों एवं सम्भावनाओं की जानकारी होती है, किन्तु साधना की ऊँची स्थिति में नाद योगी को सन्देश प्रसारण की योग्यता भी प्राप्त हो जाती है । तब वह इस बिना तार के सन्देश वाहक से साधना की देव शक्तियों के साथ वार्तालाप का आदान-प्रदान का माध्यम बना सकता है । दिव्य ध्वनियों का श्रवण उच्चकोटि की पुष्टाई की तरह सूक्ष्म, स्थूल और कारण शरीरों को परिपुष्ट करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका सम्पादित करता है । दिवंगत आत्माओं से, सिद्ध पुरुषों से, सूक्ष्म शरीर धारी देवात्माओं से सम्पर्क बनाने में नाद योग का अभ्यास उपयोगी माध्यम का काम करता है । तान्त्रिक साधना में कर्ण पिशाचिनी, यक्षिणी आदि ऐसी सिद्धि साधनाओं का वर्णन है जो अविज्ञात तथ्यों की जानकारियाँ बताती, सुनाती रहती हैं ।

मधुर संगीत के आकर्षण और प्रभाव की पुष्टि भावना स्तर पर ही नहीं, वैज्ञानिक परीक्षणों से भी होती है । संगीत की मादकता पर सर्प और हिरण तक मोहित होते और पकड़े जाते हैं । संगीत लहरी की मस्ती में सामान्य लोगों का भी मन मयूर नाचने लगता है । भावनाएँ उद्वेलित करने वाले संगीत प्रवाह का आनन्द कितनों ने ही चखा है । दीपक राग से बुझे दीपक जलने और मेघ मल्हार से बादल बरसने की बात संदिग्ध भले ही हो पर इतना निश्चित है कि बुझे मनों को प्रकाशवान् बनाने और उमंगों की वर्षा कराने में संगीत का विशिष्ट महत्त्व है । पेड़-पौधों और खेतों में मधुर संगीत के प्रभाव से अधिक बढ़ोत्तरी और उपज होती देखी गई है । दुधारू पशु अधिक दूध देते और पक्षी अधिक अण्डे देते हैं । स्नायविक और मानसिक रोगों की चिकित्सा में संगीत के प्रभाव का उपयोग आशाजनक सत्परिणाम उत्पन्न करता है । मनोरंजन को दृष्टि से उसका उपयोग संसार भर में सबसे अधिक होता है ।

यह सब संगीत के भौतिक लाभ हुए । आध्यात्म क्षेत्र में उसकी गरिमा और भी अधिक बढ़ी-चढ़ी है । चारों वेदों की समस्त रचनाएँ छन्द बद्ध हैं । सामवेद तो पूरी तरह गायत्री ही है उसकी संरचना स्वर शक्ति के आधार पर ही हुई है । तन्त्र शास्त्र में लय, ध्वनि और ताल के आधार पर वाक् शक्ति को विद्युत रूपी बनाया जाता है और उसका उपयोग शब्द भेदी बाण की तरह लक्ष्य प्राप्ति के लिए किया जाता है । तन्त्र शास्त्र के बीज मन्त्रों में ध्वनि विज्ञान की ही महत्ता है ।

नाद योग में सूक्ष्म जगत की गीतमयी दिव्य ध्वनियों को सुनने का अभ्यास किया जाता है । इससे मन की चंचलता दूर होने और शान्ति मिलने का लाभ तो स्पष्ट ही है, इसके अतिरिक्त इस मार्ग पर चलते हुए परमेश्वर को शब्द ब्रह्म के रूप में (परब्रह्म के रूप में) प्राप्त किया जा सकता है । आत्मा तक ईश्वर की वाणी पहुँचाने में और ईश्वर तक आत्मा की वाणी पहुँचाने में नाद योग का माध्यम अत्यन्त शक्तिशाली है । योगाभ्यास में नाद योग में असाधारण प्रचलन हैं । कबीर पन्थ, नाथ सम्प्रदाय, राधा स्वामी आदि में तो इसी की प्रधानता है । अन्य साधक भी अपने-अपने ढंग से नाद ब्रह्म का उपयोग करते रहते हैं ।

मन्त्र विद्या में लय और ताल के आधार पर विशिष्ट प्रकार के शब्द चक्र विनिर्मित किए जाते हैं और वे अपने-अपने ढंग के विचित्र प्रभाव उत्पन्न करते हैं । उनका शक्तिशाली प्रवाह वातावरण को विशेष प्रकार के आवेशों से भर सकता है । व्यक्ति विशेष के लिए शुभ कामनाएँ एवं सहायताएँ इसी ध्वनि प्रवाह के माध्यम से भेजी जा सकती हैं । भले ही वह किनती ही दूरी पर रहता हो । नाद योग, साधना-शास्त्र का उच्चस्तरीय अभ्यास है । उसके प्रतिफल का अनुभवी साधकों ने विस्तारपूर्वक उल्लेख किया है ।

अन्तः त्राटक

योग साधना में ध्यान धारणा के कितने ही प्रयोग विनियोग हैं । इनमें त्राटक का अपना विशिष्ट स्थान है । इसे एक प्रकार से निराकार ब्रह्म के ज्योति स्वरूप का ध्यान कह सकते हैं । आरम्भिक अभ्यास में भगवान की मनुष्याकृति छवियों का अवलम्बन लिए बिना काम नहीं चलता । उसके साथ भावनात्मक आदान-प्रदान सरल पड़ता है । भक्ति योग की साधना भगवान की मनुष्याकृति छवि के साथ आत्मीयता साधन करने के अभ्यास से ही आरम्भ होती है । प्रेम की सरलता इसके बिना आती नहीं और श्रद्धा की परिपक्वता का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अवलम्बन बनता नहीं । मन की एकाग्रता के लिए आरम्भ में यही अभ्यास सरल पड़ता है ।

ऊँची कक्षा में जब ज्ञान की प्रधानता होती है तब भावुकता के अवलम्बन की आवश्यकता नहीं पड़ती । विवेक और तत्वदर्शन भी उतना ही आनन्द देने लगता है जितना कि आरम्भिक छात्रों को भक्ति भावना के सहारे मिलता है । आत्म दर्शन, आत्म साक्षात्कार, आत्मानुभूति, ब्रह्म परायणता की स्थिति में तत्व निष्ठा ही प्रधान होती है । ऋतम्भरा प्रज्ञा का उदय होने पर आत्मा और परमात्मा का चेतन स्वरूप भली प्रकार दृष्टिगोचर हो जाता है । तब फिर कल्पित आकृतियों का अवलम्बन अपनाना बाल बुद्धि जैसा लगता है । प्रौढ़ावस्था में ज्ञान की गरिमा ही सर्वोपरि हो जाती है । आत्मबोध और तत्वबोध से ही पूरा समाधान हो जाता है । तब सहज ही स्वाभाविक आनन्द की प्रधानता रहने लगती है । भगवान का सत्चित् आनन्द स्वरूप ही आराध्य बन जाता है, पर उस स्थिति में सत्यं शिवं सुन्दरम् की जो तात्विक अनुभूति होती है वह भक्ति भावना की तुलना में न्यून नहीं, वरन् अधिक ही होती है । समाधान तो तथ्य से ही होता है । व्यापक सत्ता का निराकार होना ही तथ्य है । उच्चस्तरीय साधना तत्व बोधिनी ब्रह्म विद्या पर अवलम्बित होती है । वेदान्त विज्ञान की यही पृष्ठभूमि है ।

ध्यान के लिए आकार का आश्रय आवश्यक है । साधना का प्रमुख अवलम्बन ध्यान है । इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए ब्रह्म को प्रकाश पुन्ज माना जाता है । प्रकाश पुन्ज की ईश्वर प्रदत्त प्रतिमा सूर्य है । उसी की छोटी-बड़ी आकृतियाँ बनाकर निराकारवादी ध्यान करते हैं । दृश्यमान प्रकाश को ज्ञान और ऊर्जा का प्रतीक माना जाता है । परब्रह्म, परमात्मा की सविता के रूप में इसी आधार पर प्रतिष्ठापना की गई है । गायत्री का प्राण सविता है । सविता की आकृति प्रायःकाल के उदीयमान स्वर्णिम सूर्य जैसी मानी गई है ।

प्रकाश रूप में ध्यान साधना के सभी प्रकार 'त्राटक' कहलाते हैं । सिद्धान्त यह है कि आरम्भ में खुले नेत्रों से किसी प्रकाश प्रतीक को देखा जाय । फिर आँखें बन्द करके उस ज्योति का ध्यान किया जाय । उगते हुए सूर्य को दो, पाँच सेकण्ड खुली आँखों से देखकर आकाश में उसी स्थान पर देखने का कल्पना चित्र बनाया जाता है । वह अधिक स्पष्ट अनुभूति के साथ दीखने लगे, इसके लिए चिन्तन क्षमता पर अधिक दबाव दिया जाता है । सूर्य की ही तरह चन्द्रमा पर, किसी तारक विशिष्ट पर भी यह धारणा की जाती है । प्रकाश को भगवान का प्रतीक माना जाता है और उसकी किरणें अपने तक आने की, चेतना में प्रवेश कर जाने की, दिव्य बलिष्ठता प्रदान करने की धारणा की जाती है । मोटे तौर से इसी को त्राटक साधना का आरम्भिक अभ्यास कहा जा सकता है ।

इससे आगे का अभ्यास अन्तःत्राटक का है । दोनों नेत्रों के बीच आज्ञाचक्र है । इसे तृतीय नेत्र भी कहते हैं । शिव और दुर्गा की देवियों में तीन नेत्र दिखाई पड़ते हैं । यह विशिष्ट अवयव प्रत्येक मनुष्य में होता है, किन्तु प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता है । जगाने से जाग जाता है । इसके जाग्रत होने पर दिव्य दृष्टि जाग्रत होती है । दिव्य दर्शन (दूरदर्शन) इसी जागरण का नाम है । गान्धारी ने इसी दिव्य दृष्टि को जगा लिया था और उसी के सहारे उसने अपने पुत्र दुर्योधन का शरीर बज्रवत् बनाया था । संजय ने इसी जाग्रत क्षमता के सहारे महाभारत के सारे दृश्य घर बैठे देखे और धृतराष्ट्र को सुनाये थे । भगवान शिव ने तृतीय नेत्र को खोलकर उसकी ऊर्जा से कामदेव को जलाकर भस्म किया था । ऐसे-ऐसे कितने ही प्रसंगों का वर्णन मिलता है, जिनसे प्रतीत होता है कि जाग्रत तृतीय नेत्र की, आज्ञाचक्र की समर्थता कितनी महत्त्वपूर्ण है ?

अन्तःत्राटक से प्रकाश ज्योति की धारणा सूक्ष्म शरीर के अन्तर्गत विद्यमान अतीव क्षमता सम्पन्न शक्ति केन्द्रों पर की जाती है । षट् चक्रों का वर्णन साधना विज्ञान में विस्तारपूर्वक दिया गया है । उन्हें जाग्रत बनाने के लिए जिन उपायों को काम में लाया जाता है । उनमें एक यह भी है कि उन केन्द्रों पर प्रकाश ज्योति जलने का ध्यान किया जाय । मूलाधार, स्वाधिष्ठान मणिपूर, अनाहद, विशुद्धि और आज्ञाचक्र—यह षट् चक्र हैं । उनके स्थान सुनिश्चित है । उन्हीं स्थानों पर प्रकाश को धारण करने से उनमें हलचल उत्पन्न होती है और मूर्छना जाग्रति में बदल जाती है । दक्षिण मार्गी साधना में जागरण की प्रक्रिया ऊपर से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

नीचे की ओर चलती है और वाम मार्ग में नीचे से ऊपर । गायत्री की उच्चस्तरीय पंचकोशी साधना में आज्ञा चक्र प्रथम है और कुण्डलिनी जागरण में मूलाधार से यह जागरण प्रक्रिया आरम्भ होती है ।

ध्यान योग में अन्तःत्राटक का अभ्यास आज्ञा चक्र से आरम्भ होता है । सूर्य या दीपक की लौ का प्रकाश आज्ञा चक्र के स्थान पर किया जाता है और विश्वास किया जाता है कि उस अतिरिक्त ऊर्जा के पहुँचने से उस केन्द्र में आलोक उत्पन्न होता है और प्रकाश से सूक्ष्म शरीर में अभिनव ऊष्मा का शक्ति संचार बढ़ता है ।

दीपक सर्वसुलभ है । वह हर समय सर्वत्र, सरलतापूर्वक उपलब्ध हो सकता है । सूर्य तो देखने योग्य तभी तक रहता है जब तक वह स्वर्णिम है । श्वेत होते ही उसकी उपयोगिता चली जाती है । हर जगह, हर किसी को, हर दिन यह सुविधा भी नहीं होती कि वह नियत समय पर स्वर्णिम सूर्य का दर्शन करने के साथ-साथ त्राटक का अभ्यास कर सके । कुछ दिन बाद तो बिना किसी प्रकाश अवलम्बन के ही संकल्प मात्र से दिव्य नेत्रों द्वारा प्रकाश ज्योति के दर्शन होने का क्रम चल पड़ता है, पर आरम्भ में तो माध्यम चाहिए । इसके लिए दीपक को सरल माना गया है । पाँच सेकण्ड खुले नेत्रों से दीपक की लौ को देखकर आखें बन्द कर ली जाती हैं और भ्रूमध्य भाग के भीतर खोखले में उस ज्योति के जाग्रत होने की भावना की जाती है । उस प्रकाश से सूक्ष्म शरीर का सारा क्षेत्र ज्योतिर्मय एवं सशक्त होने की धारणा की जाती है । जब प्रकाश दर्शन धूमिल होने लगे तो आँखें खोलकर उसे देखने और फिर पलक बन्द कर लने की प्रक्रिया अपनाकर उस क्रिया को चलाते रहते हैं । यह अभ्यास दस मिनट से आरम्भ किया जाता है और उसे धीरे-धीरे बढ़ाकर आधा घण्टे तक पहुँचाया जाता है ।

भ्रूमध्य भाग की सीध में मस्तिष्कीय मध्य भाग में पीनियल और पिट्यूटरी नामक दो ग्रन्थियाँ हैं । उनके हारमोन स्राव तथा ऊर्जा प्रवाह शरीर और मस्तिष्क को विभिन्न प्रकार के अनुदान प्रदान करते हैं । शरीर शास्त्री इन ग्रन्थियों के असाधारण महत्त्व को स्वीकार करते हैं । मनःशास्त्र के सूक्ष्म विज्ञानी इन ग्रन्थियों में चेतना की अतीन्द्रिय क्षमताओं की रहस्यमय पर्तें समाविष्ट मानते हैं ।

इन ग्रन्थियों को अधिक सक्रिय, सक्षम बनाने के लिए अन्तःत्राटक द्वारा प्रकाश-प्रवेश का अभ्यास किया जाता है । इसमें क्रमशः जितनी सफलता मिलती जाती है, उसी अनुपात में आज्ञा चक्र की जगृति का तृतीय दिव्य नेत्र खुलने का लाभ मिलने लगता है । इस जागरण के सत्परिणामों की, असाधारणा महिमा एवं फलश्रुति का, साधना विज्ञान में विस्तारपूर्वक वर्णन विवेचन हुआ है । आज्ञा चक्र के जागरण की भौतिक और आत्मिक सिद्धियों के अतिरिक्त लक्ष्य प्राप्ति का उच्चस्तरीय उद्देश्य भी इस साधना से प्राप्त होता है । परब्रह्म का अन्तर्जगत में प्रकाश पुन्ज सविता के रूप में दर्शन करना । यह गायत्री मन्त्र की प्राण चेतना का ही साक्षात्कार है । समीपता बढ़ने से ज्योति से ज्योति मिलाकर साधक परम ज्योति बनाता है । 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' सूत्र में आत्मा की परम यात्रा का लक्ष्य परम प्रकाश की प्राप्ति को ही बताया गया है । त्राटक अन्तरंग हो या बहिरंग, यह साधक की स्थिति पर निर्भर है । दोनों से ही अन्धकार छूटने और परम प्रकाश को पाने का उद्देश्य पूरा होता है ।

प्राण योग

ध्यान, नाद और त्राटक के उपरान्त योग साधना का चौथा चरण प्राणायाम में नासिका द्वारा विशेष विधि और विशेष क्रम से साँस खींचने और निकालने की प्रतिक्रिया अपनायी जाती है । साथ ही संकल्प शक्ति का उपयोग भी किया जाता है । इससे वायुमण्डल में संव्याप्त प्राण तत्व खिंचकर शरीर में प्रवेश करता है और स्थूल तथा सूक्ष्म शरीर में प्राण शक्ति की प्रखरता का संचार सम्वर्धन करता है ।

कई व्यक्ति हवा में मिले ऑक्सीजन भाग को प्राण मानते हैं, पर बात ऐसी नहीं है । ऑक्सीजन मनुष्य जीवन के लिए आवश्यक तत्व है । वायु में घुली रहने के कारण वह प्रचुर मात्रा में सर्वसुलभ है । इतने पर भी वह मात्र पदार्थ है । प्राण चेतन तत्व है । जो ईश्वर तत्व की तरह अदृश्य रहते हुए भी सर्वत्र संव्याप्त है । साँस के साथ मात्र हवा और उसके साथ घुली गैसें ही शरीर में प्रवेश करती हैं । संकल्प

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति चेतन है । उसका चुम्बकत्व ही आकाश में भरे हुए जीवन तत्व को, प्राण को, अपनी समर्थ्य के अनुरूप खींचती है । प्राणायाम में श्वास लेने की विशेष विधि और विशेष प्रकार की संकल्प शक्ति का समन्वय ही वैसा अनुकूल उत्पन्न करता है, जिससे साधकों को अधिकाधिक प्राणवान बनने का अवसर मिलता चला जाय । प्राण शक्ति का परिचय शरीर में जीवनी शक्ति के बलिष्ठता, दृढ़ता, प्रतिकूलताओं को सहन करने की क्षमता के रूप में मिलता है । मनमें प्राण की मात्रा का आभास साहस, स्फूर्ति, पराक्रम पुरुषार्थ, धैर्य सन्तुलन जैसे गुणों के रूप में मिलता है । अन्तःकरण में प्राण शक्ति को श्रद्धा, निष्ठा, प्रज्ञा के सुनिश्चित दृष्टिकोण एवं प्रचण्ड शक्ति के रूप में पाया जाता है । इन विशेषताओं के कारण व्यक्तित्व हर दृष्टि से निखरता और सुसम्पन्न होता है । सर्वतोन्मुखी प्रगति के पथ पर चल सकना इन्हीं विभूतियों के सहारे सम्भव होता है । बाहरी साधनों एवं परिस्थितियों को भी अपनी उपयोगिता है, किन्तु व्यक्तित्व जिस आधार पर अन्तःप्रतिभा से सुसम्पन्न होते और उच्चस्तरीय प्रयोजन पूरे करते हैं, उन्हें प्राण शक्ति के रूप में ही जाना जाता है । इस तत्व का जो जितना संचय कर सके, समझना चाहिए कि उसने उतनी ही मात्रा में वास्तविकता समर्थता का सम्पादन कर लिया ।

प्राणायामों में उच्चस्तरीय प्राण विनियोग, सोऽहम् साधना है । इसे हंस योग के नाम से जाना जाता है । शरीर में श्वास के प्रवेश के साथ 'सो' की और निकलने के साथ 'हम् की सूक्ष्म ध्वनि होती है । श्वास-प्रश्वास क्रिया के साथ अनायास ही चलने वाले इस ध्वनि प्रवाह पर मन केन्द्रित करके, उस दिव्य ध्वनि को श्रवण करने का अवसर मिलता है, जो जीव और ब्रह्म के संयोग समन्वय से उत्पन्न होती है । प्रकृति और ब्रह्म के मिलन केन्द्र से ॐकार की ध्वनि निसृत होती है । उसी समागम से उत्पन्न महत्त्व से यह सारा सृष्टि संचार-प्रपंच चल रहा है । जीव और ब्रह्म के मिलन संयोग में 'सोऽहम्' का संचार होता है । इन दोनों ही ध्वनि प्रवाहों के सहारे ब्रह्म तत्व तक पहुँच सकना सम्भव हो सकता है ।

साँस के शाथ शरीर में प्राण प्रवेश के साथ 'सो' शब्द का श्रवण प्रयत्न इस भावना के साथ करते हैं । 'स' वह परमात्मा इस कलेवर में प्रवेश करकें साँस के साथ-साथ कण-कण को प्रभावित, परिपोषित करता है । साँस छोड़ते समय 'सम्' ध्वनि की अनुभूति की जाती है और निष्ठा जमाई जाती है कि अहम् अहंकार, मैं पन, बाहर निकल रहा है, बहिष्कृत हो रहा है । अहंता का विसर्जन, दिव्यता का संस्थापन यही है । वह प्रत्यावर्तन जिसके आधार पर मानवी काया में देवत्व का दर्शन होता है । सोऽहम् प्राण साधना को अजपा गायत्री भी कहते हैं । इसकी महिमा योगाभ्यासों की पंक्ति में बहुत उच्चस्तरीय गिनाई गई है ।

सामान्य प्राणायामों में सूर्य वेधना, लोम-विलोम, प्राणाकर्षण भस्त्रिका, भ्रामरी, शीतली शीत्कारी, उज्जाई, आदि ८४ प्रमुख प्राणायामों की गणना है । उन्हें शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य सम्वर्धन के लिए, विकृतियों के निराकरण के लिए, चिकित्सा उपचार की तरह प्रयोग किया जाता है । प्राण विद्या का अपना स्वतन्त्र विज्ञान है । योगाभ्यास के आध्यात्म प्रयोजनों में उसकी उच्चस्तरीय विधियों का ही प्रयोग होता है ।

मुद्रा सिद्धि

योग साधना का पाँचवाँ सोपान है—मुद्रा । बन्ध और मुद्राओं का विस्तृत उल्लेख "घेरण्ड संहिता" "शिव संहिता" "गोरख पद्धति" आदि साधना ग्रन्थों में विस्तार पूर्वक मिलता है । "मूल बन्ध" जालन्धर बन्ध" "उड्डियान बन्ध" प्रमुख हैं । महा बन्ध और त्रि बन्ध इन्हीं के संयोग से बनते हैं । शक्ति चालिनी मुद्रा, महामुद्रा, उन्मनी मुद्रा, आश्विन मुद्रा, योनि मुद्रा अथवा खेचरी मुद्रा आदि के नाम मुद्रा प्रकरण में विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । मुद्रा और बन्धों का युग्म है । दोनों की गणना एक ही प्रकरण में होती है । मुद्राओं में खेचरी मुद्रा को गायत्री उपासना की उच्चस्तरीय साधना में प्रमुखरता दी गई है ।

जिह्वा को पलट कर तालु से लगाना, जीभ की नोंक से तालु को धीरे-धीरे सहलाना, उस सहलाने से रसानुभूति का अनुभव करना । संक्षेप में यह खेचरी मुद्रा का मोटा रूप है । सिर शीर्ष को ब्रह्माण्ड की उपमा दी गई है । उसकी पोल में भरे हुए द्रव को क्षीर सागर कहते हैं । इसके मध्य में अवस्थित सहस्त्रार चक्र को सहस्र फन वाला शेष सर्प कहा गया है, जिस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर विष्णु भगवान सोए हुए हैं । ब्रह्मलोक की प्रतिकृति ब्रह्मरन्ध्र को मस्तिष्कीय गह्वर को माना गया है । तीनों देवताओं के लोक भी इसी गह्वर को अपनी निष्ठा के अनुरूप अनुभवी आचार्यों ने बताया है । ब्रह्माजी के काकचंचु को कामधेनु गौ का स्तन बताया गया है । अमृत कलश इसी शीर्ष भाग को कहते हैं । अमृत वर्षा की बूँदें यहीं से टपकती हैं । ऐसे-ऐसे अनेकों प्रतिपादन, विभिन्न साधना विज्ञानियों ने अपने-अपने तर्क, प्रमाण और अनुभवों को साक्षी देते हुए प्रस्तुत किए हैं ।

खेचरी मुद्रा के सहारे तालु संस्थान के साथ जिह्वा के अग्र भाग का समन्वय होता है, तो क्रमशः कई प्रकार की मधुर सम्वेदनाएँ उभरती हैं । तन्त्र ग्रन्थों में इसे रतिक्रिया के समतुल्य सरल बताया गया है । उसका एक नाम आत्म-रति भी मिलता है । माता के स्तन के दूध पीते समय बालक को जैसी तुष्टि-पुष्टि और सन्तुष्टि का आनन्द मिलता है वैसी ही खेचरी मुद्रा के अभ्यास में भी कही गई है । 'ख' कहते हैं आकाश को, 'च' कहते हैं विचरण करने को । आकाश में विचरण करने वाले पक्षियों एवं ग्रहण क्षेत्रों को 'खेचर' कहते हैं । स्वच्छ आकाश में परिभ्रमण करने वाली मनःस्थिति को खेचरी कहा गया है । जिस प्रकार पिंजड़े से निकलकर पक्षी आकाश में उड़ता है उसी प्रकार इस साधना के सहारे भव-बन्धनों से मुक्त होकर स्वच्छन्दतापूर्वक अभीष्ट दिशा में उड़ चलने का अवसर जिस स्थिति में मिले, उसे खेचरी मुद्रा नाम दिया गया है । इस साधना में सफलता मिलने पर साधक को जीवन मुक्त स्थिति में पहुँचने का लाभ मिलता ।

ब्रह्म लोक, विष्णु लोक, शिव लोक अपने काय-कलेवर में विद्यमान हैं । ब्रह्म गह्वर उसका केन्द्र है । तालु को उसका प्रवेश द्वारा माना गया है । द्वार खटखटाने पर खोलने वाले उसे खोल देते हैं । तालु और जिह्वा के अग्र भाग का समागम एक प्रकार से परब्रह्म का द्वार खटखटाना ही है । उस अनुरोध प्रवेश की सम्भावना बढ़ती है । बच्चा स्तन-पान करता है तो उसे दूध भी मिलने लगता है । खेचरी मुद्रा के अभ्यास को इन्हीं प्रयोजनों से मिलती-जुलती प्रक्रिया समझा जाना चाहिए ।

योगाभ्यास के पाँच प्रकरणों में खेचरी मुद्रा अन्तिम है, किन्तु उसका प्रभाव ध्यान, नाद, त्राटक, प्राणायाम के पूर्व चरणों की तुलना में किसी प्रकार कम नहीं है । इनमें से कौन, किस तरह, कितनी मात्रा में सम्पन्न करे, यह अपनी स्थिति का उचित पर्यवेक्षण करते हुए किसी अनुभवी साधक से ही निर्णय निर्धारण किया जाना चाहिए ।

तपोनिष्ठ जीवनचर्या

दूध को गर्म करने से उसका घृत वाला अंश मलाई के रूप में ऊपर तैरने लगता है । गर्मी से पिघल कर विशेष पत्थरों के भीतर रमा हुआ शिलाजीत बाहर निकल आता है । सूर्य की गर्मी बढ़ते ही सभी प्राणी निन्द्रा त्याग कर जाग पड़ते हैं और काम में लगते हैं । तप की गर्मी से मनुष्य की अन्तःचेतना जाग्रत सक्रिय और सक्षम बनती है । झकझोरने से सोया व्यक्ति जाग पड़ता है । आन्तरिक मूर्छा और उदासी को दूर करने के लिए तपश्चर्या से उत्पन्न उत्तेजना अपना चमत्कार दिखाये बिना नहीं रहती । उसका प्रभाव संचित कुसंस्कारों को जलाता है और ऐसी अभिनव शक्ति प्रदान करता है जिसके सहारे प्रगति पथ पर द्रुत गति से बढ़ चलना सम्भव हो सके । आग तापने से ठण्डक दूर होती है । अगति और अकर्मण्यता को निरस्त करने में तप की गर्मी से भी वैसा ही उद्देश्य पूरा होता है ।

तप साधना वाला प्रकरण भी पाँच भागों में विभक्त है । पाँच तत्वों से बना हुआ काय-कलेवर, पाँच प्राणों से बने हुए चेतना संस्थान भी पाँच प्रकार की तपश्चर्याओं से प्रभावित, परिष्कृत होते हैं । गायत्री उपासना को सफल बनाने वाली पाँच तपश्चर्यायें— (१) उपवास, (२) ब्रह्मचर्य, (३) मौन, (४) तितीक्षा, (५) अनुदान । इन पाँच नामों से प्रसिद्ध हैं । साधना के साथ-साथ इनका समन्वय जितना हो सकेगा, उसी अनुपात से उसकी कार्यक्षमता बढ़ती चली जायेगी ।

उपवास का प्रयोजन है आहार की संयमशीलता और सात्विकता, पापों के प्रायश्चित के लिए तो चान्द्रायण, सन्तापन आदि कितने ही विशिष्ट व्रत हैं । अमावश्या, पूर्णिमा, एकादशी एवं साप्ताहिक उपवासों का क्रम कितने ही लोग चलाते हैं । श्रावण, कार्तिक माघ, वैसाख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महीने के पूरे व्रत साधनों का विस्तृत माहात्म्य है । रमजान में रोजे तो मुसलमान भी रखते हैं । जन्माष्टमी, राम नवमी, शिव रात्रि, गंगा दशमी, नवरात्रि आदि के पार्वों पर उपवासों की परम्परा है । आहार न करने से पेट को विश्राम मिलता और उसका नई शक्ति, नई स्फूर्ति अर्जित करना स्वास्थ्य की दृष्टि से तो हितकर है ही, उसका प्रभाव मन पर भी पड़ता है । शारीरिक आवश्यकता भूख के रूप में प्रकट होती और आहार माँगती है । धर्म श्रद्धा के साथ जुड़ी हुई संकल्प शक्ति उस माँग को पूरा करने से इन्कार करती है । संस्कार और संकल्प के बीच विग्रह खड़ा होता है । समझाकर या बलपूर्वक संस्कार का दमन किया जाता है और धर्म बुद्धि के सहारे शरीर को सन्तोष समाधान कराया जाता है । इस अनुशासन स्थापना को तपश्चर्या कहा गया है । इस अभ्यास में अन्यान्य प्रकार की वासनाओं का दमन समाधान हो सकता है । इन्द्रिय निग्रह और मनोनिग्रह से इस सफलता में क्रमशः उत्साह साहस बढ़ता चलता है । मन को जीतना सबसे बड़ी विजय है । जो इस क्षेत्र में पूरी तरह सफल हो सके तो उसे जीवन मुक्त ही कहा जायेगा । उपवास की तपश्चर्या के सहारे आत्मानुशासन स्थापित करने का महत्त्वपूर्ण प्रयोजन सिद्ध होता है ।

उपवास किसे, किस प्रकार, कितना करना चाहिए ? यह साधक की मनःस्थिति और परिस्थिति पर निर्भर है । पूर्ण उपवास तो वही है जो मात्र जल पर ही रहा जाय । आंशिक उपवास के कितने ही प्रकार हैं । (१) दूध-छाछ, फलों का रस, शाकों का रस जैसे पेय पदार्थों पर रहना; (२) अन्नाहार को छोड़कर शाक फल, दूध आदि पर निर्वाह करना; (३) एक समय भोजन करना; (४) एक अन्न एक लगावन, रोटी, शाक, दाल, भात आदि से पेट भरना; (५) खिचड़ी दलिया जैसी एक ही वर्तन में पकाई वस्तु से काम चलाना । उपवास को इन प्रक्रियाओं में से जो जितना कठिन सरल चुनाव कर सके, वह उसे अपना सकता है ।

अस्वाद व्रत इसी उपवास प्रक्रिया का एक अतिरिक्त भाग है । नमक, शक्कर, मसाले छोड़कर बिना स्वाद का भोजन करना, इन्द्रिय निग्रह का एक बड़ा कदम है । स्वास्थ्य की दृष्टि से इसमें तानिक भी हानि नहीं । खाद्य पदार्थों में उपयोगी क्षारों की मात्रा प्रकृतिवत् होती है । उसमें ऊपर से नमक, शक्कर आदि मिलाना स्वास्थ्य की दृष्टि से तनिक भी आवश्यक नहीं है । सृष्टि का कोई भी प्राणी ऊपर से नमक मसाले नहीं खाता । शरीर के लिए सभी आवश्यक तत्व सामान्य खाद्य पदार्थों में ही मिल जाते हैं । जीव को चटोरेपन की आदत डालकर भोजन को अखाद्य बनाया जाता है और उसे अनावश्यक मात्रा में खाकर पेट खराब किया जाता है । मन में चंचलता और तामसिकता की वृद्धि भी उन मिलावटों के कारण ही उत्पन्न होती है ।

अस्वाद व्रत जिह्वा इन्द्रिय का संयम है । जीभ को चटोरेपन के दुर्गुण से छुड़ा लेने में साहसिकता का समावेश है । इसे जीत लेने पर अन्य सभी इन्द्रियों पर अनुशासन स्थापित कर सकना सरल हो जाता है । इसमें भी आत्म निग्रह का आत्मानुशासन का संकल्प प्रखर होता है, और इससे बढ़ा हुआ साहस अन्य कुसंस्कारों, दुष्प्रवृत्तियों पर विजय पा सकने में समर्थ हो जाता है । स्वाद छूटने पर जो कुछ खाया जायेगा प्रायः वह सीमित और सात्विक ही रहता है । आहार का समय मन का संयम होता है, और उससे आत्मिक प्रगति में बड़ी सहायता मिलती है । इसलिए उपवास और उसकी एक महत्त्वपूर्ण शाखा अस्वाद व्रत का पालन तपश्चर्या में ही सम्मिलित है । उसका लगातार कितने समय तक पालन किया जाय, यह साधक की इच्छा पर निर्भर है । न्यूनतम सप्ताह में एक बार इस तप के पालन का अभ्यास करना ही चाहिए ।

जप स्तवन, कीर्तन, पठन आदि जिह्वा से किए जाते हैं । इस उपकरण की शुद्धि नितान्त आवश्यक है । जिस जीभ रूपी बन्दूक से मन्त्र रूपी कारतूस चलाया जाता है, उसकी सफाई पहले ही कर लेनी चाहिए । नली में कूड़ा-करकट भरा हो, दबाने का घोड़ा तथा दूसरे पुर्जे अस्त-व्यस्त हों तो अच्छे कारतूस होने पर भी निशान लगाना कठिन है । वंशी बजाने वाले यह देख लेते हैं कि उसके छेद साफ हैं या नहीं । मैले बर्तन में दूध दुहने या उबालने से उसके फटने की आशंका रहेगी । यही बात अशुद्ध जिह्वा के सम्बन्ध में भी है । उसके द्वारा किए गए पूजा उपचार एवं मन्त्र साधना सफल नहीं होते । अस्तु उपासना को सार्थक बनाने के लिए जिह्वा शुद्धि की प्रक्रिया पर पूरा ध्यान देना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कहा जा चुका है कि अभक्ष्य आहार से जिह्वा की पवित्रता और आध्यात्मिक क्षमता नष्ट होती है । इसलिए भोजन की सात्विकता पर पूरा-पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है । स्वाद को जीतना आवश्यक है । इसके बिना आहार को सात्विक रखा ही न जायेगा । चटोरापन न केवल पेट को (स्वास्थ्य को) बिगाड़ता है वरन् मानसिक चंचलता और तामसिकता का भी निमित्त होता है । भोजन पवित्र हाथों का बनाया हुआ हो पकाने और परोसने वाले के संस्कार आहार में रहते हैं । इसलिए साधक को अपने हाथ का अथवा सुसंस्कारी हाथों का पकाया परोसा आहार लेने की व्यवस्था करनी चाहिए और हर हालत में भूख से कम ही खाना चाहिए । बेईमानी से कमाया हुआ, युद्ध में पाया हुआ धन भी बुद्धि भ्रष्ट करने का बड़ा कारण है । ऐसे धन से खरीदे गए खाद्य पदार्थ वस्त्र तथा दूसरे उपकरण आध्यात्मिक प्रगति में घोर बाधा पहुँचाते हैं । इन सब बातों का ध्यान रखा जाय तो उपासना की सफलता सुनिश्चित होती है ।

जिह्वा का एक कार्य है आहार ग्रहण, दूसरा है उच्चारण । उच्चारण का तात्पर्य है साधक के सम्भाषण में पवित्रता का समावेश । असत्य भाषण, छल, शेखी खोरी, अवांछनीय परमार्श, अपमान, तिरस्कार, कटु वचन, चुगली, हिम्मत गिराना जैसे अनेक वाणी दोष हैं । इनके रहते भी वाणी की पवित्रता नहीं बन पाती । साधक को नपा-तुला बोलना चाहिए । व्यर्थ की बकझक करते रहने की आदत पड़ गई हो तो, वह दूर करनी चाहिए । अन्य वाणी दोषों को सुधारने के लिए पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए । इस सन्दर्भ में वाणी का विश्राम, निरीक्षण, संशोधन करने के लिए मौन का अभ्यास करना चाहिए । मौन को वाणी का तप कहा गया है ।

सुविधानुसार हर दिन जाग्रत स्थिति में एक-दो घण्टे मौन रहने का अभ्यास करने का प्रयत्न करना चाहिए । भोजन के समय, मल-मूत्र विसर्जन में, उपासना के समय तो मौन रहने की परम्परा भी है । इसके लिए जिस समय कम जन-सम्पर्क रहता है, उस समय एक-दो घण्टे का मौन रखने का नियम बनाना चाहिए । सप्ताह में या महीने में एक दिन पूरा मौन रखना भी जिह्वा की अवांछनीय गतिविधियों पर रोक लगाने तथा पुरानी आदतें भुलाने का एक अच्छा उपाय है ।

शक्ति संचय की दृष्टि से कम बोलना उपयोगी है । जब मनुष्य अधिक दुर्बल हो जाता है तो उसकी वाणी बन्द हो जाती है या लडखड़ाने लगती है । यद्यपि होश-हवास बने रहते हैं । बोलने में अन्तः शक्तियों पर बहुत जोर पड़ता है । अनेकों अवयवों की संयुक्त शक्ति के अतिरिक्त उसमें शरीर की विद्युत शक्ति का भी एक बहुत बड़ा भाग खर्च होता है । दुर्बलता की स्थिति में उतनी सामर्थ्य न रहने से ही बोलने में कठिनाई होती है ।

'वायस ऑफ साइलेन्स' ग्रन्थ में थियोसोफी के जन्मदाताओं ने यह बताया है कि मौन रहने की स्थिति में दैवी वाणी को सुनने का अवसर मिलता है । कहने और सुनने की दोनों क्रियाएँ साथ-साथ चलाने से कितनी कठिनाई होती है, यह सभी जानते हैं । ईश्वर की वाणी सुनने, अदृश्य लोक के दिव्य सन्देशों को पकड़ने के लिए मौन धारण का अभ्यास करना उचित ही है । गायत्री उपासकों के लिए उपवास, अस्वाद एवं मौन का अभ्यास करने के साथ में जिह्वा के माध्यम से की जाने वाली दोनों ही तपश्चर्याएँ आवश्यक हैं । आहार की तामसिकता और अनर्गल वार्ता का संयम करने से जिह्वा में वह शक्ति उत्पन्न होती है, जिससे उसके द्वारा किया गया जप, आराधना सफल हो सके ।

तीसरा तप—ब्रह्मचर्य का मोटा अर्थ है—वीर्य रक्षा । स्वास्थ्य सुरक्षा की दृष्टि से भी यह आवश्यक है । इस बहुमूल्य धातु का सूक्ष्म रूप ओजस् है । नेत्रों में ज्योति, वाणी में प्रभाव, मस्तिष्क में स्मृति, व्यक्तित्व में प्रतिभा, शरीर में स्फूर्ति, चेहरे पर तेजस्विता, मन में साहसिकता के रूप में यह ओजस् ही काम करता है । जीवन ज्योति का आलोक जिस तेल के आधार पर प्रकाशवान रहता है, वह वीर्य रक्षा से ही संचित होता है । आत्मिक प्रगति के लिए प्रचण्ड संकल्प शक्ति की आवश्यकता पड़ती है । भौतिक आकर्षणों से लेकर कुसंस्कारों के अवरोधों से पग-पग पर जूझता रहता है, इसके लिए योद्धाओं जैसे शौर्य, साहस की आवश्यकता पड़ती है । इसके लिए अभीष्ट शक्ति संचय की दृष्टि से ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है । दाम्पत्य जीवन का अर्थ आत्म-घात नहीं ।

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

पति-पत्नी भी दो भाइयों और मित्रों की तरह, दो बहिनों और दो सहेलियों की तरह मित्रता और प्रसन्नता भरा जीवन सरलता और सफलतापूर्वक जी सकते हैं ।

ब्रह्मचर्य का सूक्ष्म और महत्त्वपूर्ण भाग वह है, जिसमें नर नारी को और नारी नर को कामुकता की दृष्टि से न देखकर, सामान्य प्राणी की तरह देखते हैं अश्लील विचारों का, वासनात्मक कुदृष्टि का समन्वय नहीं होने देते । यदि स्नेहपूर्वक एक दूसरे को देखना आवश्यक हो तो पुत्री भागिनी या माता की, पुत्र, भाई या पिता की पवित्र दृष्टि से रखते हुए घनिष्ठता एवं मित्रता का भी निर्वाह हो सकता है । मस्तिष्क को अनावश्यक रूप से उत्तेजित करने में, चिन्तन को उच्चस्तरीय प्रयोजनों में संलग्न न होने देने में कामुकता के विचार ही अत्यधिक बाधक होते हैं । कल्पना शक्ति का महत्त्वपूर्ण भाग इन्हीं कुप्रसंगों का ताना-बाना बुनने में नष्ट हो जाता है । कामुकता की दृष्टि रहने पर नेत्रों की दिव्य दृष्टि का बुरी तरह अपव्यय होता रहता है । ऐसा चिन्तन वीर्य पात से भी अधिक हानिकारक होता है । रति कर्म से स्थूल शरीर में जैसी हानि होती है, वैसी कामुक चिन्तन से सूक्ष्म शरीर की प्राण प्रतिभा को क्षति उठानी पड़ती है । इसलिए ब्रह्मचर्य की तप साधना में केवल वीर्य की रक्षा का ही नहीं, वरन् कामुक दृष्टि से निरस्त करने का भी अनुशासन है ।

गायत्री माता का चित्र युवा नारी का है । उसमें पवित्रता भरी मातृ बुद्धि की श्रद्धा जमाने का एक उद्देश्य यह भी है कि नारी यौवन पर दृष्टि जाते ही उत्कृष्ट चिन्तन, उभारने का अभ्यास होता रहे । सरस्वती, लक्ष्मी काली आदि अन्य देवियों की प्रतिमाओं में भी यौवन के साथ भाव भरी श्रद्धा संजोये रहने की मान्यता है । इसी प्रकार देवताओं को रूप यौवन सम्पन्न बनाकर नारी को यह अभ्यास करने का अवसर दिया गया है कि वे नर यौवन-कामुक उत्तेजना ग्रहण न करें वरन् ईश्वर तुल्य पवित्र मान्यताओं का अभ्यास करें । मीरा आदि की आराधना इसी स्तर की थी । यौवन विकारों को पवित्र चिन्तन में परिणत करने की साधना ही वास्तविक ब्रह्मचर्य है । इसका अभ्यास देव प्रतिमाओं के सहारे किया जा सकता है । सामान्य जीवन क्रम में इस सम्बन्ध में अधिक अनुशासन बरतने की मर्यादाएँ बनानी और पालन करनी चाहिए ।

चौथी तपश्चर्या है—तितीक्षा । तितीक्षा का अर्थ है सुविधाओं का स्वेच्छापूर्वक परित्याग और कष्ट साध्य जीवन क्रम का अभ्यास । यह कई कारणों से आवश्यक है । मितव्ययी ब्राह्मण जीवन की स्थिति अपनाने पर ही परमार्थ प्रयोजनों के लिए समय, मन और धन बच सकता है । विलासी व्यक्ति की आवश्यकताएँ, आकांक्षाएँ इतनी बढ़ी-चढ़ी होती हैं कि उनके लिए परमार्थ प्रयोजन के लिए कुछ कर सकना तो दूर सोच सकना भी कठिन पड़ता है । अल्प व्यय में निर्वाह करने वाले को कई प्रकार की असुविधाएँ सहन करनी पड़ती हैं । इसका पूर्वाभ्यास तितीक्षा से ही करना पड़ता है ।

लोक-मंगल की सेवा साधना ईश्वर उपासना का अविच्छिन्न अंग है । विराट् ब्रह्म की—विशाल विश्व की सेवा आराधना से विरत रह कर मात्र पूजा अर्चा से कोई भी जीवन लक्ष्य प्राप्त नहीं कर सकता । सेवा साधना से विरत व्यक्तियों को कितने ही प्रकार के कष्ट सहने पड़ते हैं । परिव्राजक जीवन की कठिनाइयाँ तो सर्वविदित ही हैं । वानप्रस्थ संन्यास में भी कष्ट साध्य जीवन-यापन ही करना पड़ता है । तितीक्षा इसी का पूर्वाभ्यास है, ताकि समय आने पर अभ्यास प्रक्रिया अपनाने में कठिनाई अनुभव न हो ।

सच्चाई और न्याय निष्ठा अपनाने वाले को अनति के विरुद्ध संघर्ष भी करना पड़ता है । इससे प्रतिपक्षी असुरता के प्रत्याक्रमण होने स्वाभाविक हैं । ईसा, गाँधी, सुकरात, दयानन्द, मंसूर, वन्दा वैरागी, गुरु गोविन्द सिंह के बालक जैसे असंख्य पुरुषों को प्राणों से हाथ धोने पड़े हैं । त्रास तो असंख्य ने सहे हैं । हिंस्र, व्याघ्र आदि आक्रमण करने पर प्रतिरोध करने वाले पर ही टूट पड़ते हैं । असुरता की भी यही नीति रही है कि वह सज्जनता को अपने अस्तित्व का संकट मानती है और उस पर आक्रमण करती है । जिनके स्वार्थों को क्षति पहुँचाती है, वे सब अपने विराने आध्यात्मवादी से रुष्ट रहते और उसे हानि पहुँचाने का प्रयत्न करते हैं । ऐसी विपत्तियों में फँसने की जानकारी एवं तैयारी पहले से ही बनी रहे इसलिए कई प्रकार के काय कष्ट सहने की तितीक्षा को तपश्चर्या माना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गया है और साधक को उसका अभ्यास करते रहने के लिए कहा गया है ।

सर्दी, गर्मी, भूख, प्यास सहने का अभ्यास तितीक्षा है । भूमि शयन, बिना जूते चलना, कम वस्त्रों का उपयोग भी इसी श्रेणी में आता है । बिना दूसरों की सहायता के स्वावलम्बी जीवन, अपने शरीर यात्रा के कार्य अपने हाथों करने का अभ्यास भी इसी प्रयोजन के लिए है । कपड़े धोना, हजामत बनाना जैसी दैनिक आवश्यकता के काम बिना दूसरों की सहायता लिए करने के नियम इसी तितीक्षा तप के अन्तर्गत आते हैं । अपनी स्थिति के अनुरूप इनमें से जिससे जो जितनी मात्रा में बन पड़े उतना कुछ-कुछ करते रहने का प्रयत्न करना चाहिए ।

पाँचवाँ तप है अनुदान । अपनी सुविधा साधनों में कमी करके उस बचत को सत्प्रयोजन में लगाते रहना अनुदान अथवा अंशदान है । समय दान, श्रम दान, धन दान आदि इसी वर्ग में आते हैं । अपने धर्म कृत्यों में से प्रत्येक के साथ किसी न किसी रूप में दान लेने का विधान जुड़ा हुआ है । विविध प्रकार के दान, पुण्य, परमार्थ एवं धर्म-कृत्य माने गए हैं । गायत्री अनुष्ठान के अन्त में यज्ञ, हवन, ब्रह्म भोजन, प्रसाद वितरण से पूर्णाहुति की जाती है । यह लोक-मंगल के लिए अंशदान की ही एक प्रक्रिया है । दान का अर्थ यों मोटे रूप में पैसा देना ही लगाया जाता है । प्रत्यक्ष दृश्यमान और अधिक स्थूल होने के कारण इसी का एक दृश्य आँखों से देखा और यश कानों से सुना जा सकता है । अस्तु धन दान ही, त्याग बलिदान का, अंशदान अनुदान का प्रतीक बन गया है । जिनके पास धन नहीं है वे भी किसी महादानी की भूमिका समय, श्रम, बुद्धि, प्रभाव आदि ईश्वर की प्रदत्त सम्पदाओं को सत्प्रयोजनों में लगाकर निभा सकते हैं । ब्राह्मण साधु, वानप्रस्थी तथा सेवाभावी स्वयं सेवक धन दान भले ही न कर पाते हों, पर उनके पास मूल वैभव की कमी नहीं होती और लोक हित के लिए धन और धनियों से भी अधिक कार्य कर सकते हैं ।

अंशदान का अर्थ है, अपना उपार्जन तो अधिकाधिक बढ़ाना पर उसका एक न्यूनतम अंश ही अपने निर्वाह में खर्च करना । शेष बचता हो तो परमार्थ प्रयोजनों में लगा देना । यह अंशदान भी तपश्चर्या का एक रूप है । उसमें अपनी वासना और तृष्णा पर तथा लोभ और मोह पर अंकुश रखना पड़ता है । अपनी सुविधाओं को दूसरे उपयोगी कार्यों या व्यक्तियों के लिए निछावर करना पड़ता है । इतनी उदार साहसिकता को जो भी परमार्थ प्रयोजनों के लिए नियोजित कर सके, उसे तपस्वी ही कहा जायेगा । समय दान और धन दान का न्यूनतम अनुदान युग निर्माण, परिवार के सदस्यों को ज्ञान यज्ञ के लिए प्रस्तुत करना पड़ता है । ज्ञान घटों की स्थापना से इसी तपश्चर्या का शुभारम्भ होता है । अपने युग का सबसे बड़ा परमार्थ ज्ञान यज्ञ ही माना गया है । हमें प्राचीन काल के ऋषियों, महामानवों और देव पुरुषों की तरह बढ़ा-चढ़ा अंशदान पीड़ा और पतन का समग्र निवारण कर सकने वाले ज्ञान दान के निमित्त करते रहना चाहिए ।

तपश्चर्या के पंचम चरण—अनुदान के बिना कोई भी व्यक्ति ईश्वरनिष्ठ जीवन नहीं जी सकता । लोभ मोह से ऊपर उठकर अपने साधन ही नहीं, अपने प्रभाव, ज्ञान, पुरुषार्थ आदि विभूतियों को ईश्वरीय कार्यों के लिए अधिकाधिक लगाने की व्यवस्था बनानी पड़ती है ।

उपयुक्त तपश्चर्याओं की अनेक साखा-प्रशाखाएँ हैं । साधक के स्तर, उसकी मनो भूमि को देखकर के तदनुसार उसी प्रकार व्यवस्था बनायी जाती है ।

ऊपर वर्णित पाँचों सत्र शृंखलाएँ अपने आप में महत्त्वपूर्ण हैं । जो व्यक्ति जिस सत्र का लाभ उठाने की स्थिति में अपने आपको ला सके, उसी के लिए तैयारी कर सकते हैं । किसी प्रसंग में विशेष स्पष्टीकरण अपेक्षित हो तो, जवाबी पत्र द्वारा उसे प्राप्त किया जा सकता है ।

देवत्व के जागरण की सौम्य साधना पद्धति

जड़ और चेतन से तत्वों के सम्मिश्रण से बने मनुष्य की स्थूल शारीरिक व्यवस्था तो एक सीमा तक लोगों ने जानी है और आहार-विहार की अनुकूलता उपलब्ध कर स्वस्थ एवं सुन्दर बनने का यथा सम्भव प्रयत्न किया है, किन्तु चेतन तत्व की, सूक्ष्म और कारण शरीर की व्यवस्था कैसे रखी जाय इसे, कोई बिरले ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जानते हैं । इस ज्ञान के अभाव में मानव जीवन के द्वारा उपलब्ध हो सकने वाले महत्त्वपूर्ण लाभों से हम प्रायः वंचित ही रह जाते हैं ।

मानुषी अस्तित्व को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है—(१) स्थूल, (२) सूक्ष्म, (३) कारण । आध्यात्म शास्त्र में मनुष्य के यह तीन शरीर बताये गए हैं । जिस प्रकार केले के तने को चीरने पर उसमें एक के भीतर एक पर्त निकलते हैं, प्याज के छिलके उतारते चलने पर उसके भीतर और छिलके निकलते हैं, उसी प्रकार आँखों से दीख पड़ने वाले रक्त, माँस से बने इस स्थूल शरीर के भीतर एक सूक्ष्म शरीर है, इसके भी भीतर एक कारण शरीर का अस्तित्व विद्यमान है । जिस प्रकार हम शरीर के ऊपर बनियान, उसके ऊपर कुर्त्ता, उसके ऊपर जाकिट पहनते हैं । उसी प्रकार आत्मा ने भी अपने ऊपर उपरोक्त तीन आवरण धारण किए हुए हैं ।

स्थूल शरीर वह है, जिससे हम खाने, सोने, चलने, बोलने आदि की क्रियाएँ सम्पन्न करते हैं जो माँ के पेट से आरम्भ होता और श्मशान में समाप्त हो जाता है । सांसारिक जीवन इसी से चलता है । रोटी कमाने, शुभ, अशुभ कर्म करने, इन्द्रिय सुख भोगने आदि प्रयोजन इसी शरीर से पूरे होते हैं । इसके सम्बन्ध में बहुत कुछ जानकारियाँ प्राप्त भी कर ली गई हैं ।

इसके भीतर सूक्ष्म शरीर है । मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार इन चार वर्गों में विभाजित अन्तःकरण मनुष्य का एक प्रकार से सूक्ष्म शरीर ही है । विचारणा, प्रतिभा, स्फूर्ति, आकांक्षा, अभिरुचि, क्रीड़ा जैसी मानसिक गतिविधियाँ इसी शरीर में सन्निहित हैं । यों यह आवरण स्थूल शरीर में दूध में घुले हुए घी की तरह समाविष्ट है, फिर भी इसका प्रधान स्थूल मस्तिष्क माना गया है ।

तीसरा कारण शरीर आत्मा के अति समीप होने के कारण उच्चस्तरीय दिव्य भावनाओं का आधार है । उसमें केवल भावनाएँ संचारित होती हैं । जिनका आन्तरिक अधःपतन अत्यधिक हो चुका है, उनको छोड़कर शेष सभी के कारण शरीर में दया, प्रेम, करुणा, सेवा, सम्वेदना, धर्म, कर्त्तव्य, संयम और उच्च भाव उठते रहते हैं । जिन्होंने दुष्टता में परिपक्वता प्राप्त कर ली है, उन्हीं का कारण शरीर नर-पिशाचों जैसी—'कनपटी मार बाबा' जैसी—कुचेष्टाएँ करने पर सहमत हो जाता है ।

तीन शरीरों का संक्षिप्त परिचय यहाँ इसलिए दिया गया है कि मानव-जीवन में देवत्व की सर्वांगीण प्रतिष्ठापना का वैज्ञानिक स्वरूप समझने में हमें सुविधा हो । युग परिवर्तन की नव-निर्माण प्रक्रिया उन व्यक्तियों के द्वारा सम्पन्न होगी, जिनमें देवत्व का प्रकाश समुचित मात्रा में प्रखर हो चला है । लेखक, वक्ता, नेता, अभिनेता, कलाकार, आन्दोलनकारी, प्रतिभावान व्यक्ति अपने साधनों के आधार पर कुछ समय के लिए चमत्कार जैसा जादू खड़ा कर सकते हैं, पर उसमें स्थिरता तनिक भी न होगी । बालू की दीवार की तरह उनकी कृतियाँ देखते-देखते धूल-धूसरित हो जाती हैं और जिसका आज बहुत जयघोष था, कल उसके अस्तित्व का पता लगाना भी कठिन हो जाता है । स्थिरता तो सच्चाई और आत्मबल की गहराई में सन्निहित है । युग निर्माण जैसे महान कार्य ठोस आधार की शिला पर ही प्रतिष्ठापित हो सकते हैं । उनका भारी उत्तरदायित्व बहन कर सकने की क्षमता केवल देवत्व सम्पन्न महामानवों में ही मिलेगी । अतएव नव-निर्माण के कर्णधारों, सत्र संचालकों, सेनानायकों एवं दिग्पालों का देवत्व के प्रकाश से प्रकाशवान बनना या बनाया जाना आवश्यक है ।

स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों की चर्चा इसलिए करनी पड़ी कि इन तीनों को समान रूप से देवत्व सम्पन्न बनाने से ही समग्र देवत्व की आवश्यकता पूरी होती है । इन तीनों को ठीक तरह साधने-सम्भालने का नाम 'साधना' है । साधना से ही मनुष्य में देवत्व का उदय होता है । यहाँ हमें यह भी जान लेना चाहिए कि उपासना प्राथमिक शिक्षा है और साधना उच्चस्तरीय प्रशिक्षण । भजन, पूजन, जप ध्यान, व्रत, उपवास, कथा, कीर्तन आदि कर्मकाण्डपरक उपासना से मन की प्रवृत्ति माया से ब्रह्म की ओर मुड़ जाती है । ईश्वर के स्मरण और सान्निध्य की उपयोगिता प्रतीत होती है । आत्मकल्याण का मार्ग मिलता है । इससे आगे का प्रयोजन साधना के द्वारा पूर्ण होता है । मनोवृत्तियों को वासना और तृष्णा से विरत कर संयम और परमार्थ में प्रवृत्त करना साधना का उद्देश्य है । इस मार्ग पर जितना आगे बढ़ा जाता है उतनी ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आन्तरिक पवित्रता निखरती है और ईश्वरीय प्रकाश का दिव्य दर्शन होता है ।

मानवीय व्यक्तित्व में देवत्व का अधिकाधिक समावेश करने के लिए हर श्रेयार्थी को जीवन साधना का अवलम्बन लेना पड़ता है । साधना के दो वर्ग हैं—(१) एक विशिष्ठ लोगों की, विशिष्ट प्रयोजन के लिए विनिर्मित विशिष्ट प्रक्रिया, (२) सर्वसाधारण के लिए—सहज सुगम सौम्य पद्धति । विशिष्ट प्रक्रिया योगी, यती, एकान्तवासी, सांसारिक उत्तरदायित्वों से निवृत्त असाधारण मनोबल सम्पन्न, कठोर तपश्चर्या के लिए समुद्यत लोगों के लिए है । हठ योग, षट् चक्र वेधन, कुण्डलिनी जागरण, लय योग, ऋजु योग, तन्त्र योग, प्राण योग आदि साधनाएँ इसी प्रकार की हैं । इनसे ऐसी चमत्कारी ऋद्धि-सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं जो किन्हीं विशेष अवसरों पर प्रयुक्त किया जा सकें । सरकस के अभिनेता जिस प्रकार अपने शारीरिक कला-कौशलों से दर्शकों को चमत्कृत कर देते हैं । वैसे ही इन विशिष्ट साधन प्रक्रियाओं द्वारा ऐसी सिद्धियाँ प्राप्त की जा सकती हैं जो लोगों को अद्भुत चमत्कारी, आकर्षक एवं कौतूहलवर्धक प्रतीत हों । जिनके पास ऐसे चमत्कार होते हैं, उनसे लाभ पाने के लिए अनेक मनुष्य पीछे फिरते रहते हैं । सिद्ध पुरुष इसमें अपने अहंकार की पूर्ति कर लेते हैं और तात्कालिक किसी का कष्ट निवारण कर थोड़ा सन्तोष भी पा लेते हैं, किन्तु यह मार्ग कठिन बहुत है । भूल होने पर जोखिम भी बहुत है । इस एक ही काम का होकर मनुष्य रह जाता है, इसलिए इस मार्ग पर कोई बिरले ही चलते हैं । जो चमत्कारों के लोभ में कदम तो बढ़ा देते हैं पर साधन की कठिनाई और मार्ग की लम्बाई को देखकर अक्सर निराश हो बैठते हैं । उनमें से कितने ही असफलता की झेंप मिटाने के लिए धूर्तता के आधार पर लोगों को चमत्कृत करने का निकृष्ट धन्धा अपना लेते हैं और अपना तथा दूसरों का पतन करते हैं ।

उपरोक्त मार्ग कुछ विशिष्ट परिस्थितियों वाले दुस्साहसी लोगों के लिए ही है । सर्वसाधारण के लिए जो राजमार्ग प्रशस्त है, उसमें आत्म-कल्याण, ईश्वर प्राप्ति और लोक-मंगल की सभी सम्भावनाएँ विद्यमान हैं । जादूगरी जैसा चमत्कार भले ही न हो पर नर को नारायण की स्थिति तक पहुँचा देने का वास्तविक चमत्कार उसमें परिपूर्ण मात्रा में विद्यमान है । आजीवन उपार्जन तथा सामान्य गृहस्थ जीवन-यापन करते हुए इस साधना क्रम को अपनाया जा सकता है और बिना किसी कठिनाई के श्रेय पथ पर गतिशील रहा जा सकता है । इस सौम्य पद्धति को अपनाने के लिए ही शास्त्रकारों और ऋषियों ने सर्वसाधारण को प्रोत्साहित किया है । देवत्व के व्यापक जागरण के लिए यह सौम्य पद्धति ही काम में लायी जाती है । प्रस्तुत साधना के अन्तर्गत तीन प्रयोग हैं—(१) कर्म योग, (२) ज्ञान योग तथा (३) भक्ति योग । इन्हीं के द्वारा तीनों शरीर का संस्कार, परिष्कार, परिमार्जन, अभिवर्धन सम्भव होता है । स्थूल शरीर को कर्म योग द्वारा, सूक्ष्म शरीर को ज्ञान योग द्वारा और कारण शरीर को भक्ति योग द्वारा परिष्कृत किया जाता है । गीता में इसी योग क्रिया का वर्णन है । वेदों का प्रधान विषय कर्म, ज्ञान एवं उपासना ही है । धर्मशास्त्रों का विशालकाय कलेवर इस त्रिविधि तत्वज्ञान की विवेचना में ही खड़ा किया गया है । हमारी विचार-पद्धति, कार्य-पद्धति और भावस्थिति में यदि इन आस्थाओं का समुचित समावेश हो सके तो निःसन्देह हम नर-पशु और नर-पिशाच की नारकीय स्थिति से छुटकारा पाकर, इसी शरीर से, इसी जीवन में अपने अन्दर देवत्व का उद्भव हुआ देख सकते हैं ।

वस्तुतः 'साधना' अपने आप में एक बड़ा व्यापक शब्द है । इसका अर्थ हुआ "आत्मसत्ता के परिष्कार के लिए किए गए अनेकानेक पुरुषार्थ-प्रयास ।" अपने को कुमार्ग से हटाकर, भली प्रकार साधकर सही दिशा में मोड़ देना व उस पथ पर तेजी से चल पड़ना इसी शब्द की विवेचना के अंग हैं । विडम्बना यह है कि आज इससे अभिप्राय जप, ध्यान, पूजा-उपचार, विभिन्न यौगिक क्रियाओं इत्यादि तक ही सीमित होकर रह गया है । जबकि ये सभी उच्चस्तरीय प्रयोजन अपने स्थान पर सही होते हुए भी एकांगी है—निष्फल हैं, यदि प्रारम्भिक पुरुषार्थ, आत्म-पर्यवेक्षण एवं आत्म-विकास का नहीं हुआ तो व्यावहारिक जीवन की साधना के बाद ही वे विधि-विधान आरम्भ होते हैं, जिनमें सबको सहज कौतूहल रहता है ।

अन्तरंग तो उपेक्षित पड़ा रहे वहाँ कभी झाँका भी न जाय तो बहिरंग कैसे सधेगा ? जिसने भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहिरंग में वास्तविक सुख-शान्ति चाही है, सबसे पहले अपने अन्तरंग में प्रवेश किया है । साधन सम्पन्न व्यक्तियों के सम्बन्ध में यही कहा जाता है कि वे सर्वथा सुखी हैं, पर यदि उन्हें समीप से देखा जाय तो 'कुम्भीपाक' जैसी नरक-योनियों के दृश्य प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होते हैं । शान्ति के लिए बेचैन व्यक्ति अपने अन्दर झाँकने का साहस भी नहीं जुटा पाता । साधना की यहीं पर आवश्यकता है । यह एक तथ्य है कि आन्तरिक उत्कृष्टता के अभाव में पायी गई सम्पदा एक ज्वरग्रस्त रोगी को मिष्ठान्न भर पेट खिला देने की तरह ही भयावह सिद्ध होती है । उदात्त दृष्टिकोण के अभाव में वैभव का दुरुपयोग होता है तथा आत्म-अहंकार की पूर्ति में संलग्न व्यक्ति अपना सर्वनाश देखते-देखते कर बैठता है ।

'ब्रह्मविद्या' का अर्थ यही है कि दृष्टिकोण में दूरदर्शी विवेकशीलता का, आदर्शवादिता का, समन्वय हो, जो चिन्तन में, व्यवहार में तथा फिर साधना के क्रिया क्षेत्र में परिलक्षित हो । व्यक्तित्व सम्पन्नता साधना की परिणति सुपात्र हैं । व्यक्तित्व का सारा आधार ही दृष्टकोण है । अन्तरंग जैसा भी कुछ है, इसी आधार पर बनता है कि अपने आन्तरिक विकास के लिए क्या सोचा गया और उसकी रूपरेखा किस प्रकार बनायी गई ?

उस सारे ऊहापोह को तत्ववेत्ताओं ने 'कर्मयोग' की संज्ञा दी है, जिसमें व्यक्ति अपने अन्तःक्षेत्र के कुसंस्कारों के विरुद्ध खड़ाकर तपश्चर्या की नीति अपनाता है । वह अन्तः पर छाये कषाय-कल्मषों की निवृत्ति करता है तथा क्रिया-कलापों में आदर्शवादिता का समावेश, ताकि निर्वाह से बचने वाली सामर्थ्य का परमार्थ प्रयोजनों में प्रयोग हो सके ।

'ज्ञान योग' की साधना वह है जिसमें मस्तिष्कीय गतिविधियों पर, वैचारिक प्रवाहों पर विवेक का अंकुश बिठाया जाता है । चाहे जो कुछ सोचने की छूट नहीं दी जाती । मात्र औचित्य को ही चिन्तन का आधार बनाया जाता है । अपने गुण, कर्म, स्वभाव को परिष्कृत करने, अपना चिन्तन व्यापक (दूरदर्शी) बनाने के लिए जिन आधारों की सहायता ली जाती है, वे ज्ञान योग की साधना के अन्तर्गत आते हैं । स्वाध्याय, चिन्तन, मनन, सत्संग आदि इसी के अंग हैं ।

सद्भावना के रूप में अन्तर्जगत में वास करने वाले परमेश्वर की साधना 'भक्ति योग' के अन्तर्गत की जाती है । उच्च आदर्शों के प्रति सघन निष्ठा, भक्ति-भावना कही जाती है । इसका अर्थ याचना, मनुहार या व्यक्तिमूर्ति से प्रेम नहीं अपितु आदर्शों के समुच्चय के रूप में श्रद्धा तत्व का स्वरूप लिए विद्यमान निराकार ईश्वर को अपने ही अन्तः में ढूँढ़ना, पाना और उसमें अवगाहन करना है । उपासना आदि उपचार इसी के अन्तर्गत आते हैं ।

कर्म योग स्थूल शरीर की, ज्ञान योग सूक्ष्म शरीर की तथा भक्ति योग कारण शरीर की साधना का, परिष्कार का, विज्ञान है ।

इन्हीं तथ्यों को उपनिषद्कारों ने अपने-अपने ढंग से समझाया है ।

नारद परिब्राजकोपनिषद् में स्वयं पितामह ब्रह्मा ने नारदादि की जिज्ञासाओं का समाधान करते हुए कहा है—

इन्द्रियाणां प्रसंगेन दोषमृच्छत्यसंशयः ।
संनियम्य तुतान्येव ततः सिद्धि निगच्छति ॥
न जातु कामः कामानुपभोगेन शाम्यति ।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एकाभिबर्धति ॥

३/३६-३७

अर्थात्—इन्द्रियों के विषय में आसक्त रहने के कारण अनेक दोषों का प्रादुर्भाव होता है । यदि वे ही इन्द्रियाँ भली प्रकार वशीभूत हो जायें तो वह सिद्धिदायिनी होती हैं । भोगों का उपभोग करने से विषयों की कामनाएँ कभी शान्त नहीं होतीं, भोग तो घृत द्वारा अग्नि प्रदीप्त होने के समान उनकी वृद्धि ही करते हैं ।

स्थूल शरीर के परिष्कार की, कर्म योग की साधना की ओर जब साधक आगे बढ़ता है, तो उसे इन्हीं व्यवधानों को पार करते हुए आगे बढ़ना होता है । आत्म-परिष्कार की साधना के लिए उसे मन पर ही अंकुश लगाना होता है । चंचल वृत्तियों की ओर प्रवृत्त करने वाली ज्वाला भी वही तो है । अपने संचित कुसंस्कार में प्रदीप्त ज्वाला रूपी अन्तरात्मा पर कषाय-कल्मषों की तरह छाये रहते हैं । न वह स्वयं प्रकाशवान हो पाती है, न ही जीवन को प्रकाशवान करने, औरों को प्रखर-प्रेरणा दे सकने योग्य बन पाती है । पहले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आत्म पर्यवेक्षण कर, अन्तर्मुखी बनकर अपने वर्तमान क्रिया-कलापों, भूत व भविष्य का सुनियोजन करना होता है, ताकि अल्पावधि के लिए मिला यह जीवन इन्द्रिय उपभोगों में नष्ट न हो जाय ।

इन्द्रिय-लिप्सा के लिए नहीं, जीवन धारण किए रहने के लिए जब आहार-विहार का सन्तुलित समन्वित क्रम निर्धारित कर लिया जाता है तो फिर शरीर के व्याधिग्रस्त होने का कोई कारण नहीं रह जाता । स्वस्थ शरीर (सधा शरीर) ही साधना का उपयुक्त वाहन बन सकता है । मात्र इन्द्रियों रूपी सारथियों को सम्भालना पड़ता है । महामानव दुबली-पतली काया के होते हुए भी अन्तः से प्रखर जीवन्त बने रहते हैं— यह मात्र कर्म योग की महत्ता है । जिस भी व्यक्ति ने शरीर को मन्दिर माना, लिप्साओं को शत्रुवत माना, उनसे मोर्चा लिया, औषधि रूप सात्विक आहार ग्रहण किया और सन्तुलित श्रम साधना का निर्धारण किया उसे अपने इस कर्म योग का प्रतिफल सुदृढ़ आरोग्य और दीर्घ जीवन के रूप में मिलता ही रहेगा ।

अवांछनीयता की ओर प्रेरित करना, दुष्ट दृष्टिकोण अपनाने के लिए बाध्य करना तो अचेतन में बैठे कुसंस्कारों का 'कर्त्तव्य' है । वे अपना काम करते हैं मानवी अन्तः साहस की परीक्षा लेते हैं । आत्मबल सम्पन्न व्यक्ति इन परामर्शों को बलपूर्वक कुचल देते हैं । इसके लिए आवश्यक तप तितिक्षा को शरीरगत एवं मनोगत करके अपने आपको मजबूत बनाते हैं । व्रत, उपवास, अस्वाद, भू-शयन, पद यात्रा, मौन, ब्रह्मचर्य जैसी तितिक्षायें इसी प्रयोजन से की जाती हैं कि शरीर अपनी मनमानी ने बरते, उच्छृंखल क्रिया-कृत्यों की ओर न बढ़े, औचित्य की मर्यादा में ही रहें । कर्म योग का उत्तरार्द्ध है—अपने निर्वाह से बची व निरोध द्वारा संचित सामर्थ्य को सत्प्रयोजनों में नियोजित कर देना । पीड़ा-पतन निवारण में ऐसा व्यक्ति अपने भाव भरे अनुदान प्रस्तुत करता है । इसे चाहे नैतिकी कहा जाय अथवा समाज-शास्त्र, धर्मशास्त्र कहा जाय अथवा व्यवहार-विज्ञान सिद्धान्त, एक ही है । अपने लक्ष्य को जान-पहचानकर प्रभु समर्पित ब्राह्मण जैसा जीवन जीना और साधु जैसी परमार्थ परायणता का परिचय देकर अपनी सामर्थ्य को सेवा धर्म में लगाना ।

ज्ञान योग में अपने अन्दर विवेकरूपी ऋृषि की प्रतिष्ठापना करायी जाती है । मात्र कर्म योग ज्ञान योग के बिना अधूरा है । औचित्य-अनौचित्य का निर्धारण तो अपने क्रिया-कलापों को सुनियोजित बनाने के लिए करना ही होगा ! चिन्तन को अस्त-व्यस्त उड़ान, भटकावों से रोककर एक लक्ष्य निर्धारित कर, उस विचार-तरंगों को केन्द्रीभूत करना । यंही प्रक्रिया ध्यान में भी अपनायी जाती है, जो ज्ञान योग का ही एक अंग है ।

शरीरगत क्रिया-कलाप तो चर्म चक्षुओं से भी देखे जाते हैं, पर मानसिक हलचलें अदृश्य होती हैं उन्हें देखने और समझने के लिए सूक्ष्म दृष्टि विकसित करनी होती है । स्थूलतः धर्म-आध्यात्म जैसे विषयों का पठन—उन पर मनन, चिन्तन, श्रवण-स्वाध्याय ज्ञान योग की साधना के अन्तर्गत आता है । कथा, सत्संग, प्रवचन इसी उद्देश्य से सुने भी जाते हैं, पर ये तो मात्र निर्देश हैं । उस दिशा में चलने के संकेत भर हैं । जीवन की दिशा निर्धारित करने के आधार नहीं । मस्तिष्क को वांछित प्रवाह में चलने देने के लिए अवतारों के (ऋृषियों के), महामानवों के विचारों व चरित्र का अवलोकन-श्रावण-स्वाध्याय के माध्यम से करके हम अपनी मनःस्थिति को उत्कृष्टता परायण बना सकते हैं । विचार संस्थान हमेशा परिष्कृत पवित्र-विधेयात्मक चिन्तन से युक्त हो यही लक्ष्य रहे । अपनी मानसिक हलचलों का सूक्ष्म दृष्टि से अध्ययन कर यह सतत् देखा जा सकता है कि अवांछनीय प्रवाह का दमन व दिव्य चिन्तन का अनुसरण कितना हो पा रहा है ?

भक्ति योग कारण शरीर को सुसंस्कृत, सुविकसित बनाता है । प्रेम का, भक्ति का प्रकटीकरण सद्भावनाओं, आदर्शों के प्रति प्रगाढ़ प्यार के रूप में प्रकट होता है । साधक सबसे पहले स्वयं इस साधना का लाभ पाता है । "रसो वै सः" का सही स्वरूप जान वह अन्तःकरण में छिपे यथार्थ रस का आस्वादन करता है । जिह्वा तथा इन्द्रिय लिप्सा में नष्ट होने वाले रस उसे नष्ट नहीं कर पाते । आत्म क्षेत्र का पर्यवेक्षण कर उसके अन्दर शरीर के प्रति करुणा जागती है । ब्रह्मचर्य के प्रति कठोर रहने की बुद्धि जाग्रत होती है । ये ही सद्भावनाएँ जब परायों पर आरोपित होती हैं तो सबके प्रति करुणा, सहज ममत्व जाग

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उठता है और व्यवहार में उतरा यह सौदार्य-सहकारिता आत्म विस्तार की वृत्ति के रूप में प्रकट होता है ।

विचार बाहर से आते हैं, ज्ञान अर्जित कर व शिक्षण-अनुभव से प्रविष्ट होते हैं । भाव भीतर से उठते हैं । वे अन्तःकरण के उत्पादन हैं । ज्ञान से बुद्धि तो परिपक्व होती है, पर आन्तरिक उत्कृष्टता उभरेगी ही, यह कोई निश्चित नहीं । अपना अन्तः तो प्रत्यक्षतः भगवान का मन्दिर है । भावों का भाण्डागार है । यहाँ से निसृत सद्भावनायें साधक के आस-पास ऐसा चुम्बकीय क्षेत्र बनाती हैं कि सद्विचार अपने आप समीप आते चले जाते हैं, एक अभिरुचि के सत्यपरायण व्यक्ति अपने आप समीप आते हैं व भाव सम्वेदनाओं का आदान-प्रदान करते हैं । सद्भावयुक्त अन्तःकरण कभी घाटा या प्रत्यक्ष लाभ जैसी बात मस्तिष्क में नहीं आने देता । सारे तर्कों को परे रखकर कोई अन्तः का उल्लास ऐसा उठता है जो उच्चस्तरीय भाव सम्वेदनाओं की भूख बुझाने के लिए त्याग-बलिदान की माँग करता है । वह देश के प्रति भी हो सकता है, समाज के प्रति भी, कर्त्तव्यों, आदर्शों, महामानवों के प्रति भी । होता वह अन्ततः भगवान के लिए ही है ।

भक्ति योगी सतत् सघन निष्ठा, भक्ति भावना, आत्मिक आकांक्षाओं में मग्न रहता है । वह गुण, कर्म, स्वाभाव की उत्कृष्टता को सबसे बड़ी सम्पदा, बड़प्पन मानता है । ऐसी आत्माएँ ही देवदूत कहलाती हैं, असंख्य प्राणियों का उद्धार स्वयं के साथ कर सकने में समर्थ होती हैं । संयम शरीर में बैठा भगवान है तथा सद्विचार मस्तिष्क में विराजमान परमेश्वर । पहली स्थूल शरीर की परिष्कृति से प्राप्त कर्म योग की उपलब्धि है । सद्विचार सूक्ष्म शरीर की उपलब्धि हैं, जो ज्ञान योग द्वारा सम्पादित कर अर्जित की जाती हैं । सद्भाव कारण शरीर के परिष्कार की फलश्रुति है, जो प्रत्यक्षतः ईश्वर—परम पिता के रूप में अन्दर बैठे होते हैं ।

स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीरों का परिष्कार करने के लिए कर्म योग, ज्ञान योग, भक्ति योग का साधना क्रम व्यावहारिक जीवन में उतारा जाय, ताकि आत्मिक प्रगति की दिशा में अग्रसर हुआ जा सके । 'साधना' शब्द को भ्रम जंजाल में न उलझाकर मानव जन्म रूप में सहज प्राप्त इस अनुदान को न भुलाकर, यदि इन तीन शरीरों की ही साधना करली जाय तो वह सब कुछ हस्तगत हो सकता है, जिसकी चर्चा सिद्धियों तथा चमत्कारों के रूप में की जाती रही है । पथ है तो कठिन पर इसे पार किए बिना उच्चस्तरीय सोपानों पर पहुँचने वालों के प्रयास निष्फल ही रहेंगे ।

सकल किन्तु सर्वांगपूर्ण साधना-पद्धति

योग विज्ञान को त्रिवेणी संगम की तरह तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है । हमारे कायिक आवरण भी तीन है—स्थूल, सूक्ष्म और कारण । इन तीनों की स्वच्छता और प्रगति के लिए तीन स्तर के उपाय-उपचारों का प्रचलन है ।

स्थूल शरीर को स्वस्थ रखना आवश्यक है । बीमार व्यक्ति तो अपने तथा दूसरों के लिए भारभूत ही होता है । उससे न भौतिक प्रगति सधती है । न आत्मिक । इसीलिए योगी को सर्वप्रथम शरीर से सम्बन्धित क्रिया योग को अपनाना पड़ता है । इसके दो प्रमुख आधार हैं । एक आहार, दूसरा व्यायाम । साधना हेतु आहार की सात्विकता आवश्यक है । उसका स्तर और अनुपात भी ऐसा रहना चाहिए, जिससे आलस्य या अपच का प्रकोप न होने पाये । इसके अतिरिक्त इसी क्षेत्र में व्यायाम का महत्त्व माना गया है । आसनों का अभ्यास इसी के निमित्त किया जाता है । बन्ध-मुद्राओं के अभ्यास भी इस प्रयोजन में मदद करते हैं । संचित मलों के निष्कासन के लिए हठ योग के अन्तर्गत इसी निमित्त नेति, धोति, वस्ति, कपाल भाति इत्यादि का प्रयोग किया जाता है । यह क्रिया प्रधान होने से क्रिया योग के नाम से जानी जाती है । इसी निमित्त कई बार चान्द्रायण व्रत, दूध-तक्र कल्प आदि किए जाते हैं ।

योग का दूसरा चरण है—मनोनिग्रह । इसे सूक्ष्म शरीर की साधना कहा गया है । मन की कुकल्पनाएँ और इच्छाएँ इसके अन्तर्गत नियन्त्रित की जाती हैं । एकाग्रता की साधना अपने विभिन्न रूपों में इसी निमित्त करते हैं । ध्यान के अनेकानेक प्रयोग प्रचलन इसी निमित्त हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मन की चंचलता का निरोध इन्द्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम, विचार संयम इन चार अनुशासनों से बँधा हुआ है । निरंकुश स्वेच्छाचारी मन न नीति मर्यादा का अंकुश मानता है और न सही मार्ग पर चलने के लिए सहमत होता है । उसे सरकस के रिंगमास्टर की तरह हण्टर के बल पर अनुशासन मानने के लिए बाधित किया जाता है । यही मनोनिग्रह है एक काम से छुड़ाने का एक ही उपाय है वह यह कि दूसरी आदत छुड़ाने के लिए नई कार्य पद्धति में उसे जुटा दिया जाय । जप या ध्यान का युग्म मनोनियन्त्रित करके उसे लक्ष्य बिन्दु पर केन्द्रित होना सिखाता है ।

कारण शरीर की साधना में अन्तःकरण का उदात्तीकरण करना पड़ता है । आस्थाएँ, भावनाएँ, आकांक्षाएँ, विचारणाएँ आदर्शों के अनुरूप ढालनी पड़ती हैं । जन्म जन्मान्तरों के संचित कुसंस्कार इस मार्ग में पग-पग पर बाधा पहुँचाते हैं । इसलिए उनकी ओर से विमुख होने की बैरागी प्रवृत्ति अपनानी होती है और आदर्शों के समुच्चय भगवान के साथ आन्तरिक भक्ति भावना जोड़नी पड़ती है । यही योग है, इसी को अद्वैत एवं समर्पण की स्थिति कहते हैं । जिस प्रकार आग में ईंधन डाल देने पर वह सामान्यता खोकर असामान्य बन जाता है, उसी प्रकार 'प्रेम' रूपी भगवान में अपने आपको होम देने पर मनुष्य का जीवनक्रम विश्व प्रेम से ओत-प्रोत हो जाता है । आत्मीयता की परिधि सीमित न रहकर असीमित हो जाती है । जिससे भी प्रेम किया जाता है, उसकी प्रसन्नता के लिए सेवा सहायता करने की उत्कण्ठा होती है । विराट विश्व को ईश्वरमय मानते हुए लोक-मंगल के कार्यों में निरत होना पड़ता है । भगवान की विश्व-वाटिका को सींचना, उसे हरी-भरी, सुरम्य-सुविकसित बनाना वास्तविक ईश्वर प्रेम है । यह कल्पना लोक की उड़ानें उड़ने से नहीं, जनकल्याण की सेवा-साधना का व्रत लेने से सम्भव होती है । योग की यही तीन धाराएँ हैं, जिनका साधक को समुचित समन्वय करते हुए ही आगे बढ़ना होता है ।

यह संसार जड़ और चैतन्य दो तत्वों से मिलकर बना है । जड़ सृष्टि अर्थात् पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश के न्यूनाधिक सम्मिश्रण से बने पहाड़ नदियाँ, जंगल, समुद्र, ग्रह-नक्षत्र आदि । जड़ प्रकृति अपने आप में कितनी उपयोगी और कितनी समर्थ है ? आज स्कूलों में पढ़ाये जाने वाले विज्ञान से उसे भली प्रकार समझा जा सकता है । यान्त्रिकी शल्य-शिल्प, रसायन, औषधि विज्ञान आदि के क्षेत्र में हुई प्रगति इतनी आश्चर्यजनक है कि उसके सहारे आज का मनुष्य दूरवर्ती ग्रह-नक्षत्रों तक जा पहुँचा । परमाणु विद्या पकड़ में आ जाने से एक ही झटके में सारे संसार का विनाश कर डालने वाली शक्ति मनुष्य के हाथ में आ गई है ।

चेतना सृष्टि का दूसरा पक्ष है । इसके अन्तर्गत वे सभी जीव आते हैं, जिनमें इच्छा, अनुभूति, अहं, भावना पायी जाती है । जीव जगत को प्राणधारी भी कहते हैं । संकल्प, विचारणाएँ और भावनाएँ प्राण तत्व में भरी हुई हैं । जीवनी शक्ति के रूप में यह प्राण ही सक्रिय है । इसी की कमी से व्यक्ति निस्तेज मुर्दा-सा दीखने लगता है और इसी के संचार से तेजस्वी बनता है । इसी को समझने, बढ़ाने के नियन्त्रण और मनोवांक्षित उपयोग करने को आध्यात्म विज्ञान कहा जाता है । आज इस विज्ञान की सर्वथा उपेक्षा हो रही है, पर यह बात बहुत आसानी से समझ में आने वाली है कि जड़ का उपयोग करने वाली शक्ति चेतना ही है । अतएव इस विद्या को भौतिक विज्ञान की अपेक्षा बहुत अधिक शक्तिशाली और समर्थ कहा गया है । इसी विज्ञान की प्रगति के आधार पर प्राचीन काल के लोगों ने ऋद्धियों-सिद्धियों के भण्डार प्राप्त किए थे ।

इन दिनों भौतिक विज्ञान को तो बहुत महत्त्व दिया गया, पर चेतना के गुण, कर्म, स्वभाव के परिष्कार की ओर से आँखें मूँद ली गईं । परिणाम यह हुआ कि भौतिक विज्ञान ने जितनी प्रगति की, अन्तः चेतना उतनी ही अधःपतित हुई । औषधियाँ बढ़ीं, उससे हजार गुने अधिक बीमारियाँ बढ़ गईं । जितने भौतिक साधन बढ़े, मनुष्य उतना ही विपन्न हो गया । जबकि प्राचीनकाल में आध्यात्म साधनाओं पर बहुत अधिक जोर दिया जाता था । आश्रम, आरण्यक, तीर्थ इसी प्रयोजन के लिए विनिर्मित हुए थे, जहाँ पर अन्तःचेतना के विकास की साधनाओं का शिक्षण और अभ्यास किया जाता था । आश्रम परम्परा जीवित तो अभी भी हैं पर वे केवल मूर्ति दर्शन, कथा, कीर्तन रामधुन या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक से अधिक योगाभ्यास कहे जाने वाले आसनों प्राणायामों तक सीमित हैं । यह योग व्यायाम निरर्थक नहीं उनकी उपयोगिता अपने स्थान पर यथावत है परन्तु योग का असली भाव तो उच्चतम से जुड़ना है इसके लिए तप भी करने पड़ते हैं । तपश्चर्या अर्थात् अन्तःचेतना में गहराई तक प्रवेश कर गए कुसंस्कारों का दमन और निष्कासन ।

आध्यात्म तत्वज्ञान का प्रारम्भिक चरण है—'व्यावहारिक जीवन में उत्कृष्ट आदर्शवादिता का समावेश । इसे चेतना का सुसंस्कारीकरण कह सकते हैं । लौकिक प्रगति इसी पर निर्भर है । इसे जीवन जीने की कला, संजीवनी विद्या भी कहा गया है । इतना कर गुजरने पर ही गहराई में प्रवेश करना बन पड़ता है ।

चेतना के समुद्र में काफी गहराई तक अनेक समृद्धियाँ भरी पड़ी हैं । इन्हें अतीन्द्रिय क्षमताएँ भी कहा जाता है । जिस प्रकार वैभव का धनी अपना ठाट-बाट बना सकता है और दूसरों को भी सहायता देकर निहाल कर सकता है । उसी प्रकार चेतना को योगाभ्यास और तप साधना द्वारा इतना परिष्कृत किया जा सकता है कि साधक हर किसी को चमत्कृत कर सके, अनेकों को विशेष लाभ दे सकने का द्वार खोल सके, स्वयं सिद्ध पुरुषों जैसा देवोपम जीवन जी सके । यह सफलता उपासना विज्ञान के अवलम्बन से उसे श्रेष्ठ मार्गदर्शन एवं दैवी संरक्षण में लिए जाने पर ही मिलती है । चेतना के उदात्तीकरण की इस प्रक्रिया हेतु प्रारम्भ से ही उच्चस्तर की साधनाओं के लिए किसी को नहीं कहा जाना चाहिए, न किसी को वैसा दुस्साहस ही करना चाहिए । यही व्यावहारिक है । संजीवनी विद्या वाले पक्ष को जीवन में उतार कर यदि अपने को सुविकसित कर लिया जाता है, तो अन्तराल की गहराई में छिपे पंचकोशों, षट्चक्रों उपत्यिकाओं, गुच्छकों को उभारने वाली और अनेक ऋद्धि-सिद्धियों को सामने उपस्थित करने वाली विभूतियों का अर्जन सम्भव भी हो जाता है और सरल भी ।

प्रत्यक्ष शरीर की व्यावहारिक साधना का प्रसंग चलने पर मानवीय सत्ता के तीन पक्ष दृष्टिगोचर होते हैं । जैसे केले के तने में एक के भीतर दूसरी पर्त होती है, ऐसे ही शरीर में क्रियातन्त्र रूपी काय-कलेवर, विचार तन्त्र रूपी मनःक्षेत्र एवं भाव तन्त्र रूपी अन्तःकरण इन तीन की सत्ता समायी हुई है । इन्हें आध्यात्मिक शब्दावली में क्रमशः स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर कहा गया है । तीनों के मिलने से ही समग्र मनुष्य बनता है । इन्हें सुविकसित बनाने के लिए जो अनुशासन अपनाना पड़ता है, उसे आध्यात्म शास्त्र तत्व दर्शन या उपासना विज्ञान कहते हैं ।

हम प्रायः स्थूल काया से परिचित हैं, उसी को सब कुछ समझते हैं । उसी के लिए सोचने और करते रहते हैं । अपनी समग्रता उसी में समाहित देखते हैं । इसलिए जो कुछ सोचा करते हैं, वह उसी परिधि की स्वार्थ साधना के निमित्त होता है । वासनाएँ इसी क्षेत्र में धुन्ध की तरह छायी रहती हैं । शरीर का ही एक भाग मन है । उसे ग्यारहवीं इन्द्रिय कहा जाता है । इन्द्रियाँ अपने भोग तलाशती रहती हैं । मन का विचारतन्त्र लिप्साग्रस्त होकर लोभ, मोह और अहन्ता की पूर्ति हेतु ताने-बाने बुनता रहता है । समूची क्रिया शक्ति इसी परिधि में समाप्त हो जाती है । वह एक भी काम बन नहीं पड़ता जिसके लिए सृष्टों ने अपनी इस सर्वोपरि कला-कृति को धरोहर के रूप में सुपुर्द किया है । आत्म परिष्कार के बिना न पुण्य परमार्थ सधता है, न लौकिक सिद्धियों एवं आत्मिक ऋद्धियों का द्वार खुलता है ।

आध्यात्म-विज्ञान का अनुशासन है कि स्थूल शरीर पर अंकुश नियन्त्रण रखा जाय । उसे संयम बरतने के लिए संकल्पपूर्वक विवश किया जाय । इसके लिए तपश्चर्या अपनानी होती है । बड़े उद्देश्यों के लिए योगी, यती पंचाग्नि विद्या जैसी प्रत्यक्ष और परोक्ष तपश्चर्या करते हैं, किन्तु सर्वसाधारण के लिए तो उसे सुलभ स्तर पर सीमित मात्रा में ही लागू किया जा सकता है । हल्की तपश्चर्या को संयम साधना कहते हैं ।

संयम के चार भाग बताये गए हैं—(१) इन्द्रिय संयम, (२) समय संयम, (३) अर्थ संयम, (४) विचार संयम । इन्द्रिय संयम में चटोरेपन और कामुकता से पीछा छुड़ाया जाता है और वाणी को साधा जाता है । समय संयम में जागने से सोने तक का सुव्यवस्थित कार्यक्रम बनाना और उस पर दृढ़तापूर्वक चलना होता है । अर्थ संयम में अपव्यय के हर पक्ष पर रोकथाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

करनी पड़ती है । अहंकारी प्रदर्शन से बचकर 'सादा जीवन उच्च विचार' का आदर्श हृदयंगम करना पड़ता है । विचार संयम का तात्पर्य है कि कल्पनाओं को स्वच्छन्द उड़ानें न भरने दें । मात्र सामने प्रस्तुत उपयोगी प्रयोजनों का ताना-बाना बुनने तक ही विचारणाओं को सीमाबद्ध रखा जाय ।

छलनी में दूध दुहकर सारा दूध जमीन पर गिरा देने जैसी मूर्खता हमें नहीं करनी चाहिए । असंयमों को छिद्र कहा जाता है । अभ्यास में आ जाने पर ईश्वर प्रदत्त अनुदान और स्व-उपार्जित वैभव इन्हीं असंयम रूपी छिद्रों में से बह कर बर्बाद हो जाता है असंयमी पर आलस्य छाया रहता है, कुकल्पनाओं और दुर्व्यसनों का आवेश चढ़ा रहता है । परिणामस्वरूप व्यक्ति सुरदुर्लभ मनुष्य जीवन की गरिमा गिराता है और उसके सहारे मिल सकने वाली उपलब्धियों से वंचित रह जाता है । संजीवनी विद्या के शिक्षण का मुख्य उद्देश्य है कि इन बिडम्बनाओं से बच कर चारों प्रकार के संयमों को अपनाकर विभूतियाँ जगाये और उन्हें सद्प्रयोजनों के लिए ही लगाया जाय ।

व्यावहारिक आध्यात्म की निष्ठापरक चार धारणाएँ और भी है—(१) समझदारी, (२) ईमानदारी, (३) जिम्मेदारी, (४) बहादुरी । इन्हीं को अपनाते हुए साधक सामान्य स्तर का जीवनयापन करते हुए भी असंख्यों के लिए अनुकरणीय-अभिनन्दनीय बनता है । यह ऐसी सम्पदाएँ है, जिनका प्रतिफल तृष्टि, तुष्टि, शान्ति के रूप में मिलता है । जीवन में आध्यात्म अनुशासनों का समावेश कितने चमत्कारी प्रतिफल देता है, इसे तीनों शरीरों की साधना के माध्यम से प्रत्यक्षतः जीवन में कायाकल्प के रूप में देखा जा सकता है ।

मनुष्य के तीनों ही शरीर एक से एक अधिक शक्तिशाली हैं, किन्तु प्रत्यक्ष शरीर की तुलना में सूक्ष्म की महत्ता कहीं अधिक होती है । वैज्ञानिक, चिकित्सक, एडवोकेट, आर्टिस्ट, साहित्यकार, इंजीनियर आदि बुद्धि कौशल के आधार पर प्रख्यात भी होते हैं, सम्मान पाते और सम्पन्न बनते हैं ।

विचार शक्ति का जितना गुण गान किया जाय, उतना ही कम है, मनःक्षेत्र एक बाजीगर है । यही काया के अंग प्रत्यंगों को कठपुतली की तरह नचाता और उनसे भले-बुरे काम कराता रहता है । उसे साधना के माध्यम से परिष्कृत एवं सशक्त बनाया जा सकता है । मनोबल के आधार पर ही व्यक्तित्व निखरता है । प्राणवान आत्मबल सम्पन्न व्यक्ति ही प्रतिभावान बनते हैं और अपनी प्रखरता, प्रामाणिकता के आधार पर असंख्यों का कल्याणकारी नेतृत्व करते हैं ।

सूक्ष्म शरीर मनुष्य की काया में प्राण शक्ति के रूप में नापा व आँका जा सकता है । वह प्राण विद्युत से भरा है । शरीर के चारों ओर विशेषतया चेहरे पर तेजोवलय के रूप में इसे देखा जा सकता है । प्रतिभा-प्रखरता, साहसिकता के रूप में उसी विशिष्टता को न्यूनाधिक मात्रा में देखा जाता है । यह जैव चुम्बकत्व भी है, जो अपने प्रभाव से आस-पास वालों को आकर्षित प्रभावित करता है । सत्संग-कुसंग की प्रतिक्रिया के रूप में इसके प्रभाव को प्रकट होते हुए देखा जा सकता है । मन और प्राण का समन्वय ही सूक्ष्म शरीर है । उस में व्यावहारिक जीवन में असाधारण काम कर दिखाने की सामर्थ्य तो है ही, इसके अतिरिक्त अतीन्द्रिय क्षमताओं का भी वही भण्डार है । यह दिव्य शक्तियाँ प्रायः प्रसुप्त स्थिति में रहती हैं । इन्हें जाग्रत किया जा सके तो, वे हर क्षेत्र में चमत्कार दिखाती हैं ।

सूक्ष्म शरीर की व्यावहारिक साधना तो मनोविकारों से छुटकारा पाने के प्रयत्नों से ही पूरी हो जाती हैं हल्की-फुल्की हँसती-हँसाती जिन्दगी उतने भर से ही बन जाती है । उद्वेगों, महत्त्वाकांक्षाओं, आक्रोशों, अवसादों की अनेक मानसिक व्याधियों से छुटकारा मिल जाता है । इसके अतिरिक्त प्रसन्न मुख रहने की आदत चेहरे का सौन्दर्य अनेक गुना बढ़ा देती है, भले ही नख शिख की दृष्टि से बनावट कुरूप ही क्यों न हो । शरीरगत सशक्ति को ओजस् और मानसिक शक्ति को तेजस् कहते हैं । ओजस् की अपेक्षा तेजस् की सूक्ष्मता की सामर्थ्य अनेक गुनी मानी गई है । जिसने सूक्ष्म शरीर विकसित कर लिया, समझना चाहिए के कोई सामर्थ्यवान देव सिद्ध कर लिया और उसकी असाधारण सहायता निरन्तर प्राप्त करते रहने का सुयोग प्राप्त कर लिया । प्रसुप्त एवं अनगढ़ स्थिति में तो वह शरीर यात्रा एवं अनगढ़ कल्पनाओं में ही अपनी क्षमता का समापन करता रहता है । इस हीरक हार को आम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदमी तो काँच के टुकड़ों वाला कूड़ा-करकट ही समझता है ।

कारण शरीर समग्र काय-सत्ता का अन्तिम तीसरा शरीर है । इसे यों प्रथम भी कहा जा सकता है, क्योंकि वह आत्मा और परमात्मा के मध्यवर्ती झीनीं चादर का काम करता है । इसकी पृष्ठभूमि पर ही परब्रह्म का, ब्रह्माण्डीय चेतन धारा का अवतरण होता है । व्यावहारिक भाषा में यह भाव शरीर है । इसमें सबल सम्वेदनाएँ निवास करती हैं । आत्मीयता, करुणा, मैत्री, सेवा, सहायता, सम्वेदना का इसे केन्द्र कहा जा सकता है । उत्कृष्ट आदर्शवादिता भी उसी में जड़ जमाये रहती है । जब यह क्षेत्र विकसित होता है तो नन्दनवन की, कल्पवृक्ष उपवन की तरह सुन्दर लाभदायक सिद्ध होता है ।

आत्मीयता जिस भी वस्तु या व्यक्ति के साथ जुड़ती है उसी को परम प्रिय आनन्ददायक बना देती है । भगवान के साथ भक्ति के रूप में जब वह जुड़ती है, तो प्रभु सान्निध्य जैसी दिव्य अनुभूति होती है । स्वजन सम्बन्धी में वह प्रेम भावना बनती है । प्रियपात्र की समीपता सदा आनन्ददायक लगती है । उस आत्मभाव का विस्तार विराट् ब्रह्म के साथ जुड़ने से ही सम्भव होता है । 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' और 'वसुधैव कुटुम्बकम' की आस्था जब प्रगाढ़ होती है, तब संसार का कण-कण देवता जैसा अनुभव होने लगता है । भाव सम्वेदनाओं को आदर्शवादिता के साथ जोड़ते हुए उन्हें उभारना ऐसा ही है, मानो हर घड़ी सोमपान का, अमृत तत्व के रसास्वादन का अवसर मिल रहा हो ।

साधारण रूप से यह समझा जाता है कि ऐसा आनन्द मरने के बाद, स्वर्ग-मुक्ति प्राप्त होने पर ही मिल सकता है, पर यदि परायेपन की नीरसता को जीता जा सके, तो सर्वत्र आत्म तत्व ही बिखरा दीखता है और प्रभु मिलन जैसा सरस अनुभव बराबर होता रहता है । भाव सम्वेदनाएँ जिस उद्गम से उभरती हैं उसे गंगोत्री, गोमुख जैसा पावन बनाती हैं । वह धारा जब अग्रगामी होती है तो सारे सम्पर्क क्षेत्र को सरसता से, शीतलता से ओत-प्रोत करती है । इसका प्रत्यक्ष स्वरूप सेवा-साधना के रूप में प्रकट होता है । इसे दैवी उभार ही कहा जा सकता है । देवताओं के मानस एवं क्रिया-कलाप सदा सर्वदा वरदान, अनुदान, बरसाने वाले ही होते हैं । जिनका भाव क्षेत्र सम्वेदनशील हो चला है, वे देव मानव भी इसी आत्मीयता भरी सेवा साधना को अपनी जीवन धारा बनाते हैं । इसी आधार पर दिव्य आनन्द का लाभ प्राप्त करते हैं ।

कारण शरीर कहा जाने वाला भाव क्षेत्र यदि विकसित हो उठे तो शरीर के साथ सच्चा प्यार करने उसे स्वस्थ सक्रिय बनाने का विवेक जगाता है । परिवार के प्रति उच्चस्तरीय भाव जगे तो उसके सदस्यों को सद्गुणी बना कर उज्ज्वल भविष्य को गढ़ने का प्रयास चल पड़ता है । मित्र पड़ोसी, सम्बन्धियों को विचार परिष्कार की प्रेरणा मिलती है तथा उनका वास्तविक हित साधन करने के लिए जी उमंगता है । पाप, अनाचार, छल, प्रपंच के लिए तो पैर उठते ही नहीं । इस स्थिति में न केवल अपना अन्तःकरण आनन्द से ओत-प्रोत होता है, वरन् सम्पर्क क्षेत्र में भी वह अमृत वर्षा होती देखी जा सकती है । प्रकृति, पदार्थ एवं दृश्य भी चित्र जैसे सुन्दर और खिलौने जैसे मनमोहक लगने लगते हैं । इन उपलब्धियों का संयोग ऐसा मंगलमय है कि अपने को स्वर्ग में पहुँचाने या स्वर्ग को अपने अन्दर प्रगट कर लेने जैसी अनुभूति होने लगती है ।

प्रस्तुत पंक्तियों में प्रत्यक्ष शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर के व्यावहारिक उत्कर्ष का अनुभव अभ्यास तीन शरीरों की विशिष्ट साधना प्रक्रिया के प्रशिक्षण के अन्तर्गत सुझाया गया है । यह आवश्यक तो है और प्रथम चरण के रूप में अनिवार्य भी, पर बात इतने से समाप्त नहीं हो जाती । इसके लिए सूक्ष्म शक्ति केन्द्रों के जागरण हेतु विशिष्ट साधनाएँ भी करनी पड़ती हैं । श्रद्धा सम्वर्धन के विविध कर्मकाण्ड किए जाते हैं । अन्तःकरण की चिकित्सा हेतु संस्कारिता औषधि कल्प से लेकर प्रायश्चित इष्टापूर्ति के विभिन्न उपचार करने होते हैं ।

तीन शरीरों की एक उथली स्वल्प मात्रा दैनिक जीवन में कार्यरती रहती है, पर उस समर्थता को तीनों क्षेत्रों में प्रचण्ड करना हो तो यह भी अनिवार्य हो जाता है कि इस प्रयोजन के निमित्त जप योग, प्राण योग, भाव योग रूपी उन आध्यात्म विज्ञान समस्त उपचारों को अपनाया जाय, जिन्हें विशिष्ट साधनाएँ कहते हैं । तीनों शरीरों की अन्तरंग क्षमता को प्रचण्ड

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाने के लिए भिन्न प्रकार की साधना-विधियाँ हैं, पर उपरोक्त साधनाएँ ऐसी हैं, जिसे हर स्तर के साधक आसानी से कर सकते हैं और उसका लाभ उठा सकते हैं ।

प्रज्ञा के पाँच स्तरों के जागरण का व्यावहारिक स्वरूप

मानवी सत्ता के रहस्यों के ज्ञाता मनीषियों ने अपनी तत्वदर्शी दृष्टि से देखकर बताया है कि मानवी चेतना की सक्रियता को मुख्यतः पाँच स्तरों में वर्गीकृत किया जा सकता है । इन पाँच स्तरों का समुच्चय ही सूक्ष्म शरीर कहलाता है ।

सूक्ष्म शरीर के पाँच कलेवर हैं, जिन्हें अन्नमय कोश, प्राणमय कोश, मनोमय कोश, विज्ञानमय कोश एवं आनन्दमय कोश कहते हैं । मूलाधार और सहस्रार को छोड़कर पाँच चक्र भी इन्हीं से सम्बद्ध हैं । इन्हें पाँच आणविक विद्युत भण्डार कहा जा सकता है । इन्हें अन्तरिक्ष में संव्याप्त असंख्य शक्ति धाराओं के साथ सम्बन्ध जोड़ने वाले शक्तिशाली इलेक्ट्रॉनिक्स संयन्त्र कह सकते हैं । आत्मा और परमात्मा के बीच अगणित आदान-प्रदान इन्हीं पाँच कोशों के द्वारा होते हैं । इन पर अधिकार करने वाला व्यक्ति अशक्ति और तुच्छता का उल्लंघन करके, असम्भव को सम्भव बनाने वाले, अमृत पायी, देवताओं की पंक्ति में जा विराजता है ।

मनुष्य में समस्त देव शक्तियों का अंश विद्यमान है । अतः वह अपने भीतर निहित इनमें से किसी भी शक्ति का अथवा सभी या अनेक शक्तियों के सम्न्वित स्वरूप का विकास कर सकता है । पदार्थवाद अभी तक इस मार्ग में बाधा बनने का प्रयास कर रहा था । अब वही इस मार्ग का नया व्याख्याकार बनने जा रहा है ।

अन्नमय कोश को 'मैटर', प्राणमय कोश को 'सेल', मनोमय कोश को "माइण्ड", विज्ञानमय कोश को "पर्सनालिटी" तथा आनन्दमय कोश को "इण्ट्यूशन" कहा जा सकता है । "मैटर" के बारे विज्ञान उल्लेखनीय जानकारियाँ जुटाने में सफल हुआ और उन्हीं जानकारियों ने उसे चतुर्थ आयाम की सम्भावनाओं के द्वार पर ला खड़ा किया है । "सेल" तथा "माइण्ड" के क्षेत्र में शीघ्र ही उल्लेखनीय प्रगति की आशा की जा सकती है । आवश्यकता है "पर्सनालिटी" और "इण्ट्यूशन" के क्षेत्र में अधिकाधिक अन्वेषण, प्रगति की । सामान्य मानसिक क्रियाशीलता को सभी सूक्ष्म गतिविधियाँ ऐन्द्रिक अनुभवों द्वारा नहीं जानी जा सकतीं । फिर चेतना के उच्चतर आयामों के लिए तो ऐन्द्रिक अनुभवपरक उपकरणों की सीमाएँ स्पष्ट हैं ।

चतुर्थ आयाम के अस्तित्व को अतीन्द्रिय ज्ञान की असंख्य घटनाएँ प्रमाणित करती रहती हैं । प्रेत शरीर के रूप में या स्वप्नों को सही संकेतों के रूप में अथवा दूर-दर्शन, दूर श्रवण, विचार-संचार आदि के रूप में हम अदृश्य जगत की सत्ता को प्रत्यक्षवत् देखते हैं । यह चौथे आयाम की पुष्टि है । पाँचवाँ आयाम वह है, जिसमें ब्रह्माण्डीय चेतना और आत्म-चेतना को परस्पर सम्बद्ध करके मानवी सत्ता को ईश्वर तुल्य बनाया जा सकना और उतना ही शक्ति सम्पन्न सिद्ध कर सकना सम्भव हो जायेगा । प्रति विश्व, प्रति कण आदि के रूप में ही संसार से बिल्कुल सटे हुए एक ऐसे विश्व का अस्तित्व अगले दिनों सिद्ध होने जा रहा है जिसे पौराणिक काल से दैत्य लोक के समतुल्य कहा जा सके । यह क्षेत्र भी पंचम आयाम की परिधि में ही आ जायेगा ।

संक्षेप में आयामों को स्थूल सूक्ष्म प्रकृति का क्षेत्र कह सकते हैं । स्थूल की अनुभूतियाँ स्थूल शरीर और सूक्ष्म उपकरणों से होती हैं । सूक्ष्म के लिए मस्तिष्क-प्राण जैसे उच्चस्तरीय चेतनायुक्त औजार प्रयुक्त करने पड़ते हैं ।

अतीन्द्रिय क्षमताएँ मनुष्य के मस्तिष्क केन्द्र में उत्पन्न होती हैं । वे आती इसी अपने संसार के अदृश्य क्षेत्र से हैं । इसलिए यह सब प्रकृति का अदृश्य-अविज्ञात क्षेत्र कहा जा सकता है । सामान्य प्रचलन में न रहने वाली हर बात अद्भुत लगती है । चुतर्थ आयाम के आश्चर्यजनक लगने का भी यही कारण है ।

पाँचवाँ आयाम विशुद्ध चेतनात्मक है । उसे ब्रह्माण्डीय चेतना के साथ, जीव-चेतना के साथ जोड़ने की और उस स्थिति का असाधारण लाभ उठाने की प्रक्रिया कहा जा सकता है । आत्मा और परमात्मा का मिलना कितना आनन्ददायक, कितना शक्तिशाली, कितना प्रभावोत्पादक हो सकता है, इसकी आज की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समुचित चर्चा कर सकना भी अपनी भौतिक-मनःस्थिति में सम्भव नहीं है, पर तत्वज्ञानी सूक्ष्मदर्शी उसका रसास्वादन कर रहे हैं । इसी आधार पर वे देवात्मा बने हैं और दूसरों को अपनी नाव पर बिठा कर पार लगाया है ।

पंचम आयाम में भी जीव और शक्ति का, विष्णु और लक्ष्मी का संयोग है । ब्रह्म और प्रकृति का वहाँ भी समन्वय है । अति सूक्ष्म प्रकृति को शक्ति, लक्ष्मी, दुर्गा, सरस्वती आदि कह सकते हैं । अति सूक्ष्म-ब्रह्म को शिव, विष्णु, ब्रह्मा आदि कहा जाता है । इन देवी-देवताओं की उपासना से जीव किस स्थिति तक जा पहुँचता है, इसकी चर्चा पौराणिक कथा-गाथाओं में अलंकारिक रूप से विस्तारपूर्वक होती रही है, वह वस्तु स्थिति है । बुद्धिवाद और प्रयोगवाद भले ही अपने स्वल्प साधनों से उस स्थिति का अनुभव न कर सकें फिर भी सम्वेदनाओं और अनुभूतियों के क्षेत्र की विशिष्टता अस्वीकार नहीं की जा सकती । नर-पशुओं और नर-नारायणों के बीच देखा जाने वाला अन्तर भी अकारण नहीं होता । उसमें पंचम आयाम की विशेषताएँ ही काम कर रही होती हैं ।

पाँच कोश इन्हीं पाँच आयामों के प्रतिनिधि हैं । गायत्री के पाँच मुख इन्हीं पाँच कोशों की प्रतीक हैं । इन्हें प्रज्ञा के पाँच वर्ग एवं स्तर कह सकते हैं । इन पाँच कोशों में प्रथम कोश-अन्नमय कोश विशुद्ध पदार्थ-परक है । प्राणमय कोश पदार्थ की ऊर्जा का क्षेत्र समझना चाहिए । व्यति-चेतना का ज्ञान क्षेत्र दो भागों में विभक्त है—एक ज्ञात, दूसरा अविज्ञात । ज्ञात क्षेत्र को मनोमय कोश कहते हैं । उसका प्रशिक्षण, सम्वर्धन, परिष्कार और उपयोग-प्रधानतः विचार-विमर्श एवं बौद्धिक आदान-प्रदान की प्रक्रिया द्वारा होता है । इस क्षमता का विकास व्यक्ति की बुद्धिमत्ता का विकास कहलाता है और मनोमय कोश की साधना द्वारा बुद्धि शक्ति के सहारे मिलने वाले लाभ प्राप्त किए जाते हैं ।

अविज्ञात ज्ञान क्षेत्र विज्ञानमय कोश का क्षेत्र है । यही अतीन्द्रिय क्षमताओं की क्रियाशीलता का क्षेत्र है । यह मनःचेतना की गहरी पर्त है, जिसकी चित्त और अहंकार के रूप में व्याख्या की जाती है । ऋद्धि-सिद्धियाँ विज्ञानमय कोश की साधना से ही उपलब्ध होती हैं । सूक्ष्म जगत में प्रवेश कर अपने संसार का कारण भूत स्थिति के साथ सम्बन्ध जोड़ सकना, इसी आधार पर सम्भव होता है ।

आनन्दमय कोश की स्थिति वह है, जिसमें जीवसत्ता और परमसत्ता के मिलन की, आत्मा-साक्षात्कार, ब्रह्म साक्षात्कार की दिव्य अनुभूतियाँ होती हैं । स्थिति प्रज्ञ, अवधूत, तत्वदर्शी, ब्रह्म ज्ञानी, जीवन मुक्त इसी स्थिति में परिपक्व होते हैं । इनसे परे वह अनिर्वचनीय स्थिति आती है, जिनमें जीव और ब्रह्म का अन्तर समाप्त होता है, पिटकर अद्वैत बनता है । यह ऋतम्भरा प्रज्ञा की, परमोत्कर्ष की स्थिति है ।

आध्यात्मिक विचारों को व्यावहारिक रूप में परिणत करने का नाम साधना है । आत्मिक स्तर को सभी दिशाओं से विकसित करने के लिए यह सर्वतोन्मुखी पंचसूत्री साधना पिछले पृष्ठों पर प्रस्तुत की गई है । यह शास्त्रोक्त है । तैत्तिरीयोपनिषद् की तृतीय बल्ली (भृगु बल्ली) में पिता वरुण और पुत्र भृगु के संवाद रूप में इसका विवेचन हुआ है । पुत्र भृगु ब्रह्म को जानने की इच्छा करता है । पिता वरुण उसे तप करने का आदेश देते हैं । जब तप करने से उसकी आत्मा शुद्ध हो जाती है, तब वरुण ब्रह्म प्राप्ति की प्रमुख साधना के रूप में अन्नमय, मनोमय, प्राणमय, विज्ञानमय तथा आनन्दमय कोशों की चर्चा करते हैं और उनके अनावरण द्वारा वे अनन्त आनन्ददायी ब्रह्म साक्षात्कार का होना सम्भव बताते हैं । साधना की यही परम्परा योग शास्त्र में अपना स्थायी स्थायित्व अनन्त काल से बनाये हुए है ।

सर्वसुलभ साधना

यह साधना वनवासी योगियों के लिए भी सम्भव है और गृहस्थ कार्य में व्यस्त लोगों के लिए भी सरल है । योगी लोग अपनी विशेष परिस्थितियों में पूरा समय इसी साधना में लगाये रहने से ऋद्धि-सिद्धियों के अधिकारी बन सकते हैं, और प्रकृति के अगणित रहस्यों को जानकर सूक्ष्म जगत पर अपना नियन्त्रण स्थापित कर सकते हैं । गृहस्थों के लिए उतना सम्भव नहीं, वे थोड़ा समय और हल्का-सा श्रम ही इसमें लगा सकते हैं । फलस्वरूप चमत्कारी सिद्धियों से तो उन्हें वंचित रहना पड़ता है, पर आत्म-कल्याण का मार्ग योगीजनों की भाँति ही खुला रहता है और वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस साधारण श्रम की साधना का सहारा लेकर भी पूर्णता का लक्ष प्राप्त कर सकते हैं । इस अंक में प्रस्तुत साधना इसी प्रकार की है ।

अन्नमय कोश

अन्नमय कोश की साधना में अपना लक्ष्य एवं दृष्टिकोण भौतिकवादी ही न रखकर आध्यात्मिक बनाने का प्रयत्न करना पड़ता है । इस मोड़ को देने के लिए तपश्चर्या आवश्यक मानी गई है । तप का अर्थ है, इन्द्रिय संयम के लिए कष्ट सहना । इस उद्देश्य के लिए 'अस्वाद व्रत' की सरल साधना बतायी गई है । सप्ताह में एक दिन बिना नमक और बिना शक्कर का भोजन करना किसी के लिए भी कष्टकर नहीं हो सकता ।

मनोमय कोश

मनोमय कोश की साधना में मन से कुविचारों को हटाकर उनका स्थान सद्विचारों को दिलाना पड़ता है । इसके लिए स्वाध्याय और सत्संग दो ही उपाय है । इसके लिए एक घण्टा समय नियत कर लिया जाना चाहिए । जीवन को समुन्नत बनाने की प्रेरणा देने एवं उनका उपाय बताने वाला साहित्य ही स्वाध्याय के लिए चुना जाय । धीरे-धीरे समझ-समझ कर उसे पढ़ें और उस पर मनन एवं चिन्तन करें तो ही स्वाध्याय की प्रेरणा अन्तःकरण में गहराई तक उतर सकेगी । इस प्रयोजन के लिए 'अखण्ड ज्योति' से भी काम चल सकता है । उसका एक-एक लेख नित्य इसी दृष्टि से पढ़ा जाय । महीने में दो-तीन बार भी उन लेखों को दुहराया जा सकता है । अब अखण्ड-ज्योति दैनिक स्वाध्याय के उपयुक्त ही पाठ्य सामिग्री प्रस्तुत किया करेगी ।

उपयुक्त सत्संग का आजकल सर्वथा अभाव ही दीखता है । इसलिए इस प्रक्रिया को हमें स्वयं आरम्भ करना पड़ेगा । संगठित रूप से गायत्री परिवार की शाखाएँ साप्ताहिक सत्संग का आयोजन करती हैं । जहाँ वह क्रम चलता हो वहाँ उसे सक्षम बनाने में पूरा सहयोग करना चाहिए । जहाँ न चलता हो वहाँ आरम्भ करना चाहिए । कुछ भी न बन पड़े तो अपने घर के बच्चों को रात को सोते समय इकट्ठा कर लिया जाय और उन्हें रोचक ढंग से कथा, कहानियाँ सुनाई जायें । कहने की शैली अच्छी हुई तो इसे सुनने के लिए घर की स्त्रियाँ भी इकट्ठी हो जाया करेंगी । कथा प्रसंगों के बीच-बीच में उपदेशात्मक शिक्षा भी देते चलना चाहिए । इस शैली का सत्संग हम में से हर व्यक्ति चला सकता है और उससे अपने सत्संस्कारों की परिपुष्टि के साथ-साथ दूसरों को भी सन्मार्ग की प्रेरणा दे सकता है ।

एक छोटा पुस्तकालय हम में से हर एक को चलाना चाहिए । अपनी अब तक की संगृहीत श्रेष्ठ पुस्तकों को जिल्द बाँधकर सुसज्जित रूप से अलमारी में लगा लिया जाय और कम से कम पाँच सदस्य ऐसे बनाये जायें, जिन्हें स्वाध्याय में रुचि उत्पन्न हो जाय । ऐसी रुचि उत्पन्न करना आज के समय को देखते हुए कुछ कठिन है, पर प्रयत्न करने से वह भी असम्भव न रहेगा । लोगों के घरों पर अपनी पुस्तकें पढ़ने देने तथा फिर वापस लेने जाने का कार्य कुछ अटपटा-सा, तौहीन जैसा लगने वाला तो है पर इसमें अत्यधिक उच्चकोटि की आध्यात्मिक सेवा सन्निहित है । ब्रह्मदान का पुण्य और सत्परिणाम असाधारण है । इसलिए इस छोटे दीखने वाले किन्तु असाधारण महत्त्व के कार्य को हमें आरम्भ कर ही देना चाहिए । इससे अपना ही नहीं दूसरों का भी मनोमय कोश विकसित हो सकने की व्यवस्था बनेगी ।

प्राणमय कोश

प्राणमय कोश की साधना के लिए "प्राणाकर्षण प्राणायाम" की प्रक्रिया सरल पड़ती है । पाँच प्राणायामों में १५-२० मिनट समय लगता है । प्रातः काल इसे एक आत्मिक व्यायाम के रूप में नियमित रूप से करना चाहिए । मनोबल, संकल्प शक्ति एवं आत्मतेज बढ़ाने के लिए यह सरल प्राणायाम बहुत प्रभावशाली सिद्ध होता है ।

प्राण संचार एवं क्रमिक शक्तिपात का लाभ प्राप्त करना हर किसी के लिए सम्भव नहीं, क्योंकि उसमें किसी अत्यन्त प्राणवान् व्यक्ति के अनुग्रह, सहयोग एवं दान की आवश्यकता पड़ती है । ढोंगी बहुत हैं पर वस्तुतः जिनमें प्राणदान करके किसी में शक्ति संचार की क्षमता हो और उसे निस्स्वार्थ भाव से देने की उदारता भी हो ऐसे गुरुजन आज कहाँ मिलते हैं ? जिनके पास ऐसी शक्ति होती भी है, वे अपनी सीमित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामर्थ्य से कुछ थोड़े ही सत्पात्रों का भला कर पाते हैं । सबकी सहायता तो वे भी नहीं कर सकते । इस कठिनाई को देखते हुए उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा में ही हमें सन्तोषपूर्वक बैठना होगा और अपनी पवित्रता बढ़ानी पड़ेगी । पवित्रता बढ़ने पर भगवान ऐसे लाभ का कोई संयोग उपस्थित कर देते हैं ।

विज्ञानमय कोश

विज्ञानमय कोश की साधना में भावना का परिष्कार प्रधान तत्व है । कृतघ्नता के घृणित पातक से अपनी मनोभूमि को उबारें तो यह एक बहुत बड़ी बात होगी । धीरे-धीरे एक-एक करके भी इन प्रमुख पातकों को हटाया जाता रहा तो दस वर्ष में हमारी मनोभूमि पूर्ण पवित्र बन जायेगी । रात को सोते समय दिन भर के उपकारियों का स्मरण करना और प्रातःकाल चारपाई से उठते ही लोगों के अब तक के प्रमुख उपकारों का स्मरण करना और उन सबके लिए मन ही मन हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करते हुए अभिनन्दन करना हमारा नित्य कर्म होना चाहिए ।

गुरुजनों के नित्य चरण स्पर्श करना भारतीय संस्कृति का एक अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण अंग है । इसे आरम्भ करना ही चाहिए । प्रातःकाल के नित्य कर्म में इस धर्म-कर्त्तव्य का भी स्थान रखा जाय ।

आनन्दमय कोश

आनन्दमय कोण की साधना का उद्देश्य अपनी प्रेम भावना को बढ़ाना, अपने चारों ओर प्रेमपूर्ण वातावरण उत्पन्न करना है । इसके लिए गायत्री जप करते हुए अपने को एक वर्ष के बालक के रूप में और गायत्री माता को अपनी सगी जननी मानकर उसके साथ क्रीड़ा करने, स्नेह पाने का ध्यान धारण बहुत ही उपयुक्त है इससे भजन में मन ही नहीं लगता, वरन् प्रेम का मुरझाया हुआ अंकुर भी अंकुरित, पल्लवित और विकसित होकर चारों ओर अपनी दिव्य सुगन्धि से परम आनन्दमय वातावरण उत्पन्न कर देता है । मानव-जीवन में यदि कोई रस है, यदि कोई सार है तो वह प्रेम ही है । इसे ही परमात्मा भी कहा जाता है । भगवान को वश में करने का भक्ति-भावना ही एकमात्र उपाय है यह भक्ति और कुछ नहीं व्यक्तिगत प्रेम का ही एक व्यापक स्वरूप है । इसी से अद्वैत ब्रह्म की प्राप्ति होती है ।

साधना की दिनचर्या

प्रातःकाल सोकर उठते ही उपकारियों के उपकारों का स्मरण करना, गुरुजनों के चरण स्पर्श करना, फिर नित्यकर्म से निवृत्त होकर ५ प्राणायाम, तत्पश्चात मातृ-प्रेम की ध्यान धारणा के साथ गायत्री का जप करना, इतने कार्यों के साथ प्रातःकाल का कार्यक्रम पूर्ण हो जाता है । प्राणायाम और जप में एक घण्टा लगाना चाहिए । जिन्हें कम समय हो वे इसमें भी कमी कर सकते हैं ।

स्वाध्याय के लिए दिन में कोई भी सुविधा का समय नियत किया जा सकता है । अपना पुस्तकालय, 'ज्ञान मन्दिर' चलाने के लिए तथा उसके सदस्यों के गले पड़कर सत्साहित्य पढ़ाने के लिए नित्य कुछ समय देना चाहिए । यह ज्ञान सेवा छोटी दीखते हुए भी अत्यन्त उच्चकोटि की है । सत्संग की व्यवस्था अपनी ओर से करने का कोई प्रबन्ध बन सके तो उत्तम है अन्यथा घर में कथा-कहानियाँ कहने या कोई अच्छी पुस्तकें पढ़कर दूसरों को सुनाने का कोई क्रम बन सकता है । आरम्भिक झिझक को जीत लिया गया तो यह कार्यक्रम अपने लिए भी बड़ा मनोरंजक तथा आनन्ददायक प्रतीत होने लगेगा । रात को सोते समय पुनः दिन भर के उपकारियों का स्मरण करते हुए भगवान का ध्यान और धन्यवाद करते हुए सो जाना चाहिए ।

सप्ताह में एक दिन अस्वाद-व्रत रखना चाहिए । उस दिन सामूहिक सत्संग का कोई क्रम बन पड़े तो और भी उत्तम है । पुस्तकालय चलाने के लिए जिन्हें रोज समय न मिलता हो वे इस दिन अपने ५ सदस्यों से मिलें और पिछले सप्ताह दी हुई पुस्तकें वापस लेकर अगले सप्ताह के लिए एक-एक पुस्तकें दें दें । इसी प्रकार से उन पाँचों से कुछ ज्ञान चर्चा भी करें ।

अत्यन्त सरल किन्तु महान प्रभावोत्पादक

इस प्रकार यह पंच-कोशी साधना क्रम बिना कोई विशेष अतिरिक्त समय खर्च कराये तथा बिना कोई विशेष कष्ट दिए एक-दो घण्टा समय ही नित्य लगाते रहने से बड़ी आसानी से चलता रह सकता है । यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह साधारण-सी साधना है पर इसका अन्त और परिणाम असाधारण है । यह आरम्भिक कदम है । प्रगति के पथ पर बढ़ते रहे तो यही कदम हमें लक्ष्य तक पहुँचा देंगे और हम वह सब कुछ प्राप्त कर सकेंगे, जिसमें इस सुरदुर्लभ मानव-जीवन की सार्थकता सन्निहित है ।

ग्रन्थिवेध : एक समग्र साधना

तीनों शरीरों के विकास परिष्कार के लिए यों अनेकों साधनाएँ प्रचलित हैं, पर उनका वर्गीकरण किया जाय तो सभी को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है । जप, ध्यान और प्राणायाम । इन्हीं त्रिविध आधारों के भेद-उपभेद अनेकानेक साधनाओं का स्वरूप विनिर्मित करते हैं । उन्हें समेटा-सिकोड़ा जाय तो फिर वे तीन में सिकोड़ा भी जा सकता है । इसके अतिरिक्त और कोई ऐसा प्रयोग नहीं है, जिसे इस परिधि से बाहर किया जा सके ।

जप में किसी मन्त्र विशेष की अनवरत रट लगाई जाती है । पुनरावर्तन एक गतिचक्र विनिर्मित करता है । उसमें अपने प्रकार की विशेष शक्ति होती है । ब्रह्माण्ड के ग्रह-नक्षत्र अपनी कक्षा में अनवरत भ्रमण करते हैं । उसी घुमाव परिभ्रमण से वह चुम्बकत्व उत्पन्न होता है, जिसके सहारे स्वयं भी अपनी कक्षा में सुस्थिर रहते हैं और अपने सम्पर्क क्षेत्र के अन्यान्य ग्रह पिण्डों को भी जकड़े रहते हैं । यदि वह परिभ्रमण क्रिया बन्द हो जाये तो उसका परिणाम बिखराव के रूप में ही होगा । यों शरीर के मूल घटक यह प्रक्रिया अपनाये रहते हैं, पर उसमें तीव्रता, तालबद्धता और सुव्यवस्था लाने के लिए जप की शब्द प्रक्रिया एक विशेष भूमिका निभाती है । पुनरावर्तन कालान्तर में स्वभाव का अंग बन जाता है और बिना प्रयास के ही अपनी धुरी पर परिभ्रमण करने लगता है । पत्थर से उपकरण को घिस-घिस कर ही धारदार और चमकीला बनाया जाता है ।

स्थूल शरीर का केन्द्र नाभिचक्र माना गया है पर उसका प्रभाव क्षेत्र अधोभाग की दिशा में एक बड़ी परिधि तक फैला हुआ है । मूलाधार और स्वाधिष्ठान चक्रों वाला मेरुदण्ड भाग इसी का प्रभाव क्षेत्र समझा जाता है । विशेषतया जननेन्द्रिय मूल और सुषुम्ना का अन्तिम छोर नाभि चक्र से प्रभावित होता है । कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया पूरी तरह इसी परिकर से सम्बद्ध है । कुण्डलिनी स्थूल शरीर की बीज शक्ति है, जो जननेन्द्रिय मूल से उठकर मेरुदण्ड का देवयान मार्ग पार करती हुई मस्तिष्क के मध्य वाले ब्रह्मरन्ध्र सहस्रार कमल तक पहुँचती है और आज्ञाचक्र द्वारा बाहर निकलकर सम्पर्क क्षेत्र को अपनी विद्युत शक्ति से प्रभावित करती है ।

जप के साथ-साथ पूजन अर्चन वाली प्रक्रिया भी जुड़ी हुई है । उनके माध्यम से आत्म परिष्कार का प्रशिक्षण क्रम चलता है । चंदन, अक्षत, धूप-दीप, नैवेद्य, जल आदि को सद्गुणों में से एक-एक को प्रतीक मानकर अपने आप को यह सिखाया, समझाया जाता है कि सर्वतोन्मुखी शालीनता की अवधारणा, अभिवृद्धि किस प्रकार की जानी चाहिए । मन्त्र जप के साथ इष्ट देव की छाँव को सम्मुख रखना होता है और उस पर श्रद्धा समर्पण का आरोपण करते हुए अपने क्रिया-कलापों में आदर्शवादिता का बढ़ा-चढ़ा समावेश करने की मनःस्थिति बनानी पड़ती है । उसे उस स्तर तक बढ़ाना पड़ता है, ताकि व्यावहारिक जीवन में उसका कार्यान्वयन भी हो सके । इन समस्त पक्षों के समन्वय से स्थूल शरीर में उत्कर्ष अभ्युदय बन पड़ने की सम्भावना परिपक्व होती है ।

नाभिचक्र में कमल पुष्प का ध्यान करना पड़ता है, जिसमें उसकी प्रत्येक पंखुड़ी उस क्षेत्र की अगणित दिव्य शक्तियों का प्रतीक बन कर निरन्तर विकसित होती रहे और समग्र रूप में विकसित शोभायमान कमल का रूप प्रस्तुत कर सके ।

दूसरा शरीर सूक्ष्म शरीर है जिसे एक शब्द में मानसिक संस्थान कह सकते हैं । कल्पना, विचारणा, निर्धारणा इसी के अंग हैं । तर्क वितर्क इसी में उठते हैं । शिक्षण, अनुभव, स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन-मनन आदि उपायों के द्वारा व्यावहारिक रूप में इसे विकसित किया जाता है । बुद्धिमान, विद्वान, कुशल, पारंगत समुन्नत बनने का अवसर इसी क्षेत्र के परिसर में बन पड़ता है ।

मनःक्षेत्र को विकसित करने के लिए प्राण प्रवाह का अवलम्बन लेना पड़ता है । प्राण एक ऐसी विद्युत शक्ति है और वायु के साथ घुली रहती है । इसे संकल्प शक्ति से खींचा और धारण किया जाता है । साधारणतया साँस चलती रहती है । उसके साथ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवनोपयोगी ऊर्जा प्रदान करने वाली ऑक्सीजन भी समुचित मात्रा में घुलती रहती है । गहरी साँस लेना इसी दृष्टि से आवश्यक माना गया है कि ऑक्सीजन की समुचित मात्रा फेफड़ों से लेकर छोटे-छोटे सभी घटकों को आवश्यक ऊर्जा मिल सके । साथ ही भीतरी क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली गंदगी की सफाई भी होती रहे । गहरी साँस लेना और छोड़ना एक स्वसंचालित व्यायाम है । इसे अपनाया तो जाना चाहिए पर इतना ही जो सूक्ष्म शरीर के परिष्कार के लिए पर्याप्त हो ।

प्राणायाम में संकल्प भरी इच्छा शक्ति का समुचित प्रयोग होता है । भावना करनी पड़ती है कि ब्रह्माण्डव्यापी प्राण तत्व साँस के साथ खिंचता चला आता है और नाक द्वारा प्रवेश करके स्थूल शरीर में ही नहीं सूक्ष्म शरीर के अदृश्य प्रकोष्ठों में भी भर जाता है । इस प्रकार की संकल्प युक्त साँस खींचने की प्रक्रिया जितनी लम्बी हो सके करनी चाहिए । इसके बाद साँस रोकने का कुम्भक आता है । इसे खींचने में जितना समय लगा था, उससे आधा समय ही रोकने को कुम्भक में लगाना चाहिए । साथ ही अवधारणा करनी चाहिए कि साँस में घुला हुआ जो प्राण तत्व कण-कण में भरा है, वह नव जीवन प्रदान कर रहा है ।

अवधारणा के समय मस्तिष्क क्षेत्र के अन्तराल का विशेष रूप से ध्यान रखना चाहिए । उसमें सद्प्रवृत्तियाँ और सद्विचारणाएँ, अतीन्द्रिय क्षमताएँ प्रसुप्त स्थिति में छिपी पड़ी रहती हैं । प्राणायाम द्वारा खींचा गया प्राण उन्हें झकझोरता और प्रसुप्ति के जाग्रत स्थिति में लाता है । संतुलन, उत्साह, विवेक इस आधार पर सरलतापूर्वक उभारा जा रहा है और जो अवांछनीय तत्व सूक्ष्म शरीर के किसी क्षेत्र में जम गए हैं, उन्हें प्राण युक्त साँस छोड़ने की रेचक प्रक्रिया द्वारा बाहर निकाला जा सकता है ।

सूक्ष्म शरीर का प्रतिनिधि केन्द्र हृदय चक्र माना गया है । साधारण स्थिति में वह मुँदी हुई कली जैसा रहता है, पर प्राण की ऊर्जा एवं प्रातःकालीन उदीयमान सूर्य सविता के ध्यान द्वारा उसे खिले कमल की स्थिति में लाया जाय । इसकी पंखुड़ियाँ मानसिक विशेषताओं की कुँजियाँ हैं । हृदय जब खिलता है तो उससे सम्बन्धित मानसिक विशेषताएँ भी उभर पड़ती हैं । साधक के अधिक प्राणवान होने की सम्भावना बढ़ती है ।

तीनों शरीरों के जागरण उन्नयन का क्रम एक साथ चलता है । एक-एक करके अलग-अलग समयों में प्रथक-प्रथक विकास की परम्परा नहीं है । शरीर के सभी अंगों का साथ-साथ विकास होता है । ऐसा नहीं कि पहले हाथ पुष्ट करले इसके बाद पैर को सँभालेंगे । स्कूलों में, छात्रों में, भाषा, गणित, भूगोल, इतिहास आदि की पुस्तकें एक ही समय में क्रमपूर्वक चलानी पड़ती हैं । ऐसा नहीं होता कि पहले भाषा पढ़ले, पीछे गणित, व्याकरण । इसी प्रकार तीनों शरीरों का उन्नयन क्रम विविध चक्रों को प्रस्फुटित करने की प्रक्रिया के साथ चलाना पड़ता है । साधना क्रम में तीनों का समावेश साथ-साथ, किन्तु क्रमिक रूप से करना पड़ता है । इस समग्र साधन को ग्रन्थिभेदियोग कहते हैं । इसमें नाभि, हृदय और ब्रह्मरन्ध्र के अतिरिक्त तीनों कमलों की मुदी हुई प्रसुप्त स्थिति से उबारकर जाग्रति में परिणत करना होता है । मुँदी कलियों को खिले हुए कमलों के स्तर तक पहुँचाना होता है । इसके लिए प्रातःकालीन सूर्य सविता की ऊर्जा को ध्यान धारणा द्वारा तीनों शरीरों में उनके प्रतीक केन्द्रों में ओतप्रोत करना होता है ।

तीसरा कारण शरीर भाव शरीर कहलाता है, इसमें आस्थाएँ, मान्यताएँ, आकांक्षाएँ, सम्वेदनाएँ निवास करती हैं । इस सभी को आदर्श की दिशा में धकेलना पड़ता है और मैत्री, करुणा, मुद्रिता के स्तर पर सेवा साधना में नियोजित करना होता है । पुण्य परमार्थ की ओर बढ़ चलने के लिए प्रोत्साहित करने वाली योजना एवं क्रिया-प्रक्रिया में नियोजित करना होता है । उसे संयम और उदारता का समन्वय भी कह सकते हैं ।

मध्य मस्तिष्क, जिसे ब्रह्मरन्ध्र या सहस्रार कमल कहते हैं । यही कारण शरीर के सम्वेदन परिकर का मध्य केन्द्र है । यहाँ भी मुँदी कली की स्थिति रहती है । इसे ध्यानयोग द्वारा कमल पुष्प की तरह खिलाया जाता है । पूर्व दिशा में प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य का ध्यान इस समूचे प्रयोग के लिए आधारभूत अवलम्बन है । उदीयमान सूर्य को एक सेकण्ड खुली आँख से देखने के उपरान्त उसी दृश्य की ध्यान धारणा प्रायः

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दस पन्द्रह सेकण्ड तक आँखें बन्द करके करनी होती है । जब अनुभूति झीनी होने लगे तो फिर आँख खोलकर एक सेकण्ड उदीयमान सूर्य को देखा जा सकता है और पुनः आँखें बन्द करके उसी दृश्य की अनुभूति की क्रिया दुहरायी जा सकती है । सूर्य के प्रत्यक्ष दर्शन का उपरोक्त क्रम अधिक से अधिक एक सप्ताह चलाना चाहिए और वह अवधि पन्द्रह मिनट से अधिक नहीं होनी चाहिए । क्योंकि जैसे-जैसे सूर्य के प्रकाश में तीव्रता आती जाती है, वैसे-वैसे वह खुली आँखों से देखने जैसी स्थिति में नहीं रहता । विकसित सूर्य को देखने पर आँखों को हानि पहुँचती है । उदीयमान को भी देर तक नहीं देखना चाहिए । यह प्रयोग आरम्भिक अभ्यास के लिए है । प्रायः एक सप्ताह में ऐसी स्थिति बन जाती है कि बिना प्रत्यक्ष दर्शन के ही भावनात्मक ध्यान द्वारा भी सविता देव का दिव्य दर्शन होने लगे । इस आलोक को नाभि चक्र, हृदय चक्र और ब्रह्म चक्र में अपनी आभा को प्रवेश कराते हुए अनुभव करना चाहिए ।

सूक्ष्म शरीर को सक्रिय बनाने वाली त्रिविध मुद्राएँ

शरीर के स्थूल अवयवों के विशिष्ट व्यायामों को 'आसन' कहते हैं । वे साधारण कसरतों से भिन्न हैं । कसरतों की पहुँच प्रधानतया माँसपेशियों तक सीमित रहती है । नस-नाड़ियों पर भी उनका प्रभाव पड़ता है, किन्तु आसनों की विशेष व्यवस्था में ऐसे आधार सन्निहित हैं, जिनके सहारे भीतरी अवयवों को भी प्रभावित किया जा सके । आमाशय, आँखें, जिगर, गुर्दे, फेफड़े, हृदय आदि प्रमुख अवयवों को उनके द्वारा प्रभावित किया जाता है । उनकी असमर्थता एवं रुग्णता के निवारण में आसनों द्वारा विशेष सहायता मिलती है । किस स्थिति में, किस आसन का उपयोग, कितने समय तक किया जाय, इसके लिए साधक की शारीरिक, मानसिक स्थिति का पर्यवेक्षण आवश्यक है । निदान के उपरान्त ही उपयुक्त उपचार की बात बनती है । इस संदर्भ में व्यायाम को अधिक स्थूल एवं आसनों को अधिक गहरी पहुँच वाला सूक्ष्म माना जाता है ।

इनके उपरान्त गहराई की तीसरी पर्त में मुद्राओं का नम्बर आता है । वे प्रधानतया इन्द्रियों की रहस्यमयी शक्तियों से सम्बन्धित हैं । उनका प्रभाव इतनी गहराई तक पहुँचता है कि ज्ञानेन्द्रियों की क्षमता अधिक प्रखर बनायी जा सके और यदि उनमें किसी प्रकार की दुर्बलता, रुग्णता का समावेश हो गया हो तो, उसका निवारण आरम्भ हो सके ।

हठयोग के प्रयोगों में बीस मुद्राओं का उपयोग होता है । उनमें से कुछ का प्रभाव शारीरिक, कुछ का मानसिक, कुछ का कारण क्षेत्रों की गहराई तक होता है । इनमें से सभी को जानना, सीखना सामान्य साधकों के लिए न तो आवश्यक है और न ही उपयोगी । उनमें से जो प्रमुख प्रभावोत्पादक, अधिक सरल एवं अधिक उपयोगी परिणाम उत्पन्न करने वाली हैं । मात्र ऐसी ही तीन मुद्राओं का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है । त्रिविध प्राणायामों की तरह मुद्राओं में भी तीनों के प्रयोग साधक की स्थिति के अनुरूप सुनिश्चित किए जाते हैं ।

यह तीन मुद्राएँ हैं—(१) शक्तिचालिनी मुद्रा, (२) शिथिलीकरण मुद्रा और (३) खेचरी मुद्रा । इनमें से शक्तिचालिनी का सम्बन्ध मूलाधार से है । कुण्डलिनी का निवास केन्द्र वही है । पौरुष, प्रजनन, उत्साह इसी केन्द्र से सम्बन्धित हैं । शक्तिचालिनी के आधार पर मूलाधार को जाग्रत, नियन्त्रित एवं अभीष्ट उद्देश्यों के लिए प्रयुक्त किया जाता है । शिथिलीकरण मुद्रा का सम्बन्ध हृदय चक्र से है । यह स्थान भाव सम्वेदनाओं, शक्ति एवं तेजस्विता का केन्द्र है । भावनाओं को दिशा देना भी इसी क्षेत्र के प्रयत्नों से बन पड़ता है । तीसरी मुद्रा—खेचरी मुद्रा है । उसका सम्बन्ध ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रार कमल से है । पुराणों में इसी को क्षीर सागर, कैलाश पर्वत की उपमा दी गई है । यहाँ मन, बुद्धि, चित्त से सम्बन्धित सभी तन्त्र विद्यमान हैं । खेचरी मुद्रा द्वारा उनमें से किसी को भी किसी भी प्रयोजन के लिए जाग्रत एवं तत्पर किया जाता है । बुद्धि मंदता एवं तनाव से लेकर मनोविकारों तक में इस केन्द्र की सहायता ली जा सकती है ।

आध्यात्म विज्ञान में सूक्ष्म शरीर से सम्बन्धित तीन रहस्यमयी ग्रन्थियों का उल्लेख है । वे ग्रन्थि—(१) ब्रह्म ग्रन्थि, (२) विष्णु ग्रन्थि और (३) रुद्र गन्थि । ब्रह्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ग्रन्थि का सम्बन्ध खेचरी मुद्रा से एवं विष्णु ग्रन्थि का शिथिलीकरण से है, जबकि रुद्र ग्रन्थि शक्तिचालिनी मुद्रा से सम्बन्धित है । इन तीनों के स्वरूप, कारण, रहस्य, अभ्यास एवं प्रतिफल साधना ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक बताये गए हैं । उन सबका सार संक्षेप इतना ही है कि मस्तिष्क, हृदय और प्रजनन तन्त्र में वरिष्ठता एवं पवित्रता, प्रखरता उत्पन्न करने के लिए उपरोक्त तीन मुद्राओं की साधनाओं का प्रयोग किया जा सकता है और उनका चमत्कारी प्रतिफल देखा जा सकता है ।

तीनों मुद्राओं का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

(१) शक्तिचालिनी मुद्रा

शक्तिचालिनी मुद्रा वज्रासन या सुखासन में बैठकर की जाती है । इसमें मल एवं मूत्र संस्थान को संकुचित करके उन्हें ऊपर की ओर खींचा जाता है । खिंचाव पूरा हो जाने पर उसे धीरे से शिथिल कर देते हैं । प्रारम्भिक स्थिति में दो मिनट व धीरे-धीरे पाँच मिनट तक बढ़ाते हुए यही क्रिया बार-बार दुहरायी जाती है । शक्तिचालिनी मुद्रा के साथ ही उड्यागान बन्ध अधोमुखी शक्ति को ऊर्ध्वगामी बनाने के लिए प्रयुक्त होता है । यह क्रिया स्वतः शक्तिचालिनी मुद्रा के साथ धीरे-धीरे होने लगती है । पेट को जितना उपर खींचा जा सके, खींचकर पीठ से चिपका देते हैं । उड्डयान का अर्थ है—उड़ना । कुण्डलिनी महाशक्ति को जाग्रत करने, चित्तवृत्ति को अधोमुखी से ऊर्ध्वमुखी करने की यह पहली सीढ़ी है । इससे सुषुम्ना नाड़ी का द्वार खुलता है, मूलाधार चक्र में चेतना आती है । इन दोनों क्रियाओं के द्वारा समूचे कुण्डलिनी क्षेत्र पर ऐसा सूक्ष्म विद्युतीय प्रभाव पड़ता है, जिससे इस शक्ति स्रोत के जागरण व मेरुदण्ड मार्ग से ऊर्ध्वगमन के दोनों उद्देश्य पूरे होते हैं । विवेकवान साधक इस शक्ति केन्द्र को जगाकर अनेक गुना प्रखर बनाते हैं और जागरण की इस प्रखरता का उपयोग व्यक्तित्व को प्रतिभा सम्पन्न बनाने, उच्चस्तरीय कार्य सम्पादन करने में प्रयुक्त करते हैं ।

(२) शिथिलीकरण मुद्रा

योगनिद्रा का यह प्रथम चरण है । अचेतन को विश्राम देने, नयी स्फूर्ति दिलाने तथा अन्तराय के विकास, आत्मशक्ति के उद्‌भव का पथ प्रशस्त करने की यह प्रारम्भिक क्रिया है । इस मुद्रा का अभ्यास शवासन में लेटकर आराम कुर्सी पर शरीर ढीला छोड़कर किया जाता है । यह क्रिया शरीर, मन, बुद्धि को तनाव से मुक्त करके नयी चेतना से अनुप्राणित कर देती है । साधक को शरीर से भिन्न अपनी स्वयं की आत्मचेतना की प्रत्यक्ष अनुभूति होती है ।

कोलाहल रहित वातावरण में शवासन में लेटकर पहले शरीर-शिथिलीकरण के स्वयं को निर्देश दिए जाते हैं । शरीर के निचले अंगों से आरम्भ करके शनैः-शनैः यह क्रम ऊपर तक चलाते हैं । हर अंग को एक स्वतन्त्र सत्ता मानकर, उसे विश्राम का स्नेह भरा निर्देश देते हैं । कुछ देर उस स्थिति में छोड़कर धीरे से श्वास तीव्र करके शरीर को कड़ा और फिर ढीला होने का निर्देश दिया जाता है । धीरे-धीरे शारीरिक शिथिलीकरण सधने पर क्रमशः मानसिक शिथिलीकरण का अभ्यास करते हुए दृश्य रूप में शरीर पड़ा रहते देखने, चेतनसत्ता के सरोवर में ईश्वर को समर्पित कर देने की भावना की जाती है । ध्यान योग की यह प्रक्रिया आध्यात्मिक दृष्टि से उपलब्धियों से भरी हुई है । शरीरगत तथा मनोगत इसके सत्परिणामों से आज विज्ञानवेत्ता भी परिचित हैं ।

(३) खेचरी मुद्रा

शान्त मस्तिष्क को ब्रह्मलोक और निर्मल मन को क्षीर सागर माना गया है । मनुष्य की व्यष्टि सत्ता और विश्व-ब्रह्माण्डव्यापी समष्टि सत्ता का आदान-प्रदान ब्रह्मरन्ध्र मार्ग से होता है । यह मस्तिष्क का मध्य बिन्दु है, जीवसत्ता नाभिक है, यही सहस्रार कमल है मस्तिष्कीय-मज्जारूपी क्षीर सागर में विराजमान विष्णुसत्ता के सान्निध्य और अनुग्रह का लाभ लेने के लिए खेचरी मुद्रा की साधना की जाती है । ध्यान मुद्रा में शान्त चित्त से बैठकर जिह्वाग्र को तालु मूर्धा से लगाया जाता है । सहलाने जैसे मन्द-मन्द स्पन्दन किए जाते हैं । इस उत्तेजना से सहस्र दल कमल की प्रसुप्त स्थिति जागृति में बदलती है । बन्द छिद्र खुलते हैं और आत्मिक अनुदान जैसा रसास्वादन जिह्वाग्र भाग के माध्यम से अन्तःचेतना को अनुभव होता है । यही खेचरी मुद्रा है ।

तालु मूर्धा को कामधेनु की उपमा दी गई है और जीभ के अगले भाग से उसे सहलाना-सोमपान, पयपान कहलाता है । इस क्रिया से आध्यात्मिक आनन्द की,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उल्लास की अनुभूति होती है । यह दिव्यलोक से आत्मलोक पर होने वाली अमृत वर्षा का चिह्न है । देवलोक से सोमरस की वर्षा होती है । अमृतकलश से प्राप्त अनुदान आत्मा को अमरता की अनुभूति देते हैं । इन तीनों मुद्राओं में से साधक अपनी स्थिति के अनुरूप अपनाकर उनसे मिलने वाले लाभों से सहज ही लाभान्वित हो सकते हैं ।

प्राणायाम एवं सोऽहम् साधना के फलितार्थ

अंग-अवयवों से समुचित काम लिया जाय, तो उनकी क्रियाशीलता बनी रहती है । यदि उन्हें निरर्थक पड़ा रहने दिया जाय अथवा क्षमता से कम काम लिया जाय, तो उनकी स्वाभाविक शक्ति घटने लगती है । इसका परिणाम पीछे अहितकर होता है चला जाता है ।

हाथ-पैरों से काम न लिया जाय तो वे अपनी क्षमता गँवा बैठते हैं और जरा-जरा से कामों के लिए नौकर का सहारा लेना पड़ता है । पैरों से काम कम लिए जाय, तो वे जकड़ जाते हैं और सवारी की जरूरत पड़ती है । दूर तक पैदल चलना पड़े, तो दर्द होने लगता है और ऐंठन मचती रहती है, किन्तु यदि अभ्यास बनाये रहा जाय तो अस्सी वर्ष से अधिक उम्र हो जाने पर भी बुढ़िया चक्की चलाती, सूत कातती रहती है । जिन अवयवों का अभ्यास बना रहता है, वे अपनी शक्ति गँवाते नहीं, वरन् गति चक्र चलते रहने से उसे बढ़ाते रहते हैं । विनोबा अस्सी के करीब हो गए, तो भी उनकी क्रिया शक्ति बनी हुई थी और दस मील नित्य पैदल चल लेते थे ।

जो बात हाथ-पैरों के सम्बन्ध में है, वही फेफड़ों के सम्बन्ध में लागू रहती है । नियम यह है कि छाती को सीधी तनी रखा जाय और गहरी साँस ली जाय छाती सीधी रखने से सीने के सभी भागों में पूरी हवा का आवागमन होता रहता है, किन्तु यदि झुककर बैठा रहा जाय, तो सिकुड़न वाले हिस्से में पूरी हवा नहीं पहुँच पाती । छाती सिकुड़ने लगती है और आधे तिहाई हिस्ते को निकम्मा पड़ा रहना पड़ता है । इसका फल यह होता है कि जो हिस्सा खाली रहता है, उसमें दमा, क्षय, खाँसी आदि के कीटाणु जमा होने लगते हैं, अपने लिए गड्ढा बना लेते हैं और उनमें छिपे बैठे रहते हैं । अपने लिए अधिक स्थान बनाते रहते हैं, और बीमारी का क्षेत्र बढ़ाते रहते हैं । झुककर बैठने की आदत से कमर झुकने लगती है । कभी कमर के ऊपर का हिस्सा झुकने लगता है, कभी नीचे का । इस प्रकार चलने में आदमी कुरूप लगता है । पीछे लाठी का सहारा लेकर चलने की आदत बन पड़ती है । उसके बिना काम नहीं चलता । कम आयु में इस प्रकार कमर झुकने वाले लोगों में से अधिकांश वे होते हैं, जिन्हें झुककर चलने या बैठने की आदत पड़ जाती है ।

साँस में केवल हवा ही नहीं होती, जो बुहारी लगाने का काम करती रहती है । साँस के साथ ऑक्सीजन का भी एक बड़ा भाग है उसी के कारण जीवकोशों का पोषण होता है और रक्त में लालिमा तथा ऊर्जा बनी रहती है । यदि हल्की साँस लेने की आदत है, तो शरीर को कम ऑक्सीजन मिलेगी । फलतः उस आदत से दुर्बलता तथा रक्ताल्पता (एनीमिया) आदि रोग बढ़ने लगते हैं । हल्की साँस लेने वालों को अपेक्षाकृत बुढ़ापा जल्दी आता है ।

मिलिट्री में सामान्यतया चलना सिखाने में भी, दोनों हाथ हिलाते हुए, सीना तना हुआ लेकर चलना सिखाया जाता है । इससे फेफड़े मजबूत होते हैं और अधिक प्राणवायु मिलने पर चेहरे पर लालिमा बनी रहती है । दौड़ने का अवसर आने पर वे लम्बी दूरी तक उछलते चले जाते हैं । यदि यह आदत न रहे, तो उनका शरीर जल्दी थकेगा और दम फूलने लगेगा ऐसे लोग सदा दौड़ की प्रतियोगिता में फिसड्डी रह जाते हैं ।

साँस का एक काम और भी है कि जीव कोशिकाएँ टूटती रहती हैं, उनका मलवा साँस के द्वारा बाहर निकाल दिया जाता है । जब फेफड़े से शरीर को रक्त जाता है, तब वह शुद्ध और लाल होता है, किन्तु जब वापस लौटता है, तो उसके साथ गन्दगी भरी रहती है । साँस उस सारी गन्दगी को निकाल कर बाहर कर देती है । रक्त में संचित हुई गन्दगी, ली गई साँस के साथ बाहर निकल जाती है और फिर रक्त शुद्ध होकर लाल रंग में परिणत होता हुआ, वापस लौटता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लम्बी गहरी साँस लेने के कितने ही लाभ हैं, रक्त शुद्धि, फेफड़े का सही संचालन, सीने का चौड़ा रहना, भीतरी गन्दगी न जमने पाना आदि । गहरी साँस लेने पर यह विकृतियाँ सहज ही दूर हो जाती हैं ।

साँस को क्रमबद्ध लेने का तरीका प्राणायाम कहलाता है । निकालने को रेचक, भरने को पूरक और रोकने को कुम्भक कहते हैं । इन तीनों का यदि एक व्यवस्थित क्रम बिठा लिया जाय तो ताल की एक विशिष्ट प्रक्रिया बन जाती है और उनसे नाड़ियों का विद्युत प्रवाह अपनी गति पकड़ लेता है । फिर वह क्रम आगे भी बना रहता है । तालबद्ध श्वास का बहुत महत्त्व बताया गया है । सबसे बड़ी बात यह है कि साँस की कमी नहीं पड़ती और अधिक कठोर परिश्रम करने पर भी थकान नहीं आती । जुकाम, सर्दी, खाँसी जैसी बीमारियाँ उन्हें घेरे होती हैं, जो साँस के बारे में लापरवाही बरतते हैं, गहरी नहीं लेते । स्वास्थ्य-रक्षा का जिन्हें ध्यान है, उन्हें गहरी साँस लेने की आदत डालनी चाहिए । जब वे अभ्यास में आ जाती हैं, तो इसके लिए अलग से ध्यान देना या प्रयत्न करना नहीं पड़ता । वह एक उपयोगी आदत बन जाती है ।

प्राण का मन से बड़ा सम्बन्ध है । प्राणायाम का अभ्यास होने पर मन की तन्मयता बढ़ जाती है, स्मरण शक्ति में बढ़ोत्तरी होती है, अपनी प्रतिभा निखरती है । बुद्धि वृद्धि का यह सरल उपाय है कि प्रातःकाल खुली हवा में सीना तानकर गहरी साँस लेने और छोड़ने का अभ्यास किया जाय ।

साँस पर ध्यान केन्द्रित किया जाय, तो ग्रहण करते समय 'सो' की ओर छोड़ते समय 'हम' की आवाज होती है । यह सुनने के लिए श्रवणेन्द्रियों को एकाग्र करना पड़ता है । तब साँस के साथ ध्वनियाँ भी बहुत बारीकी से सुनाई पड़ती हैं । अभ्यास होने पर यह स्पष्ट सुनाई पड़ने लगती हैं ।

'सोऽहम्' का अजपा जप करते हैं । साँस के साथ 'सोऽहम्' का जप चलता रहे, तो इसका आध्यात्मिक दृष्टि से बहुत लाभ है । अजपा गायत्री का सूक्ष्म रूप में । बिना प्रयत्न के ही अजपा गायत्री का जप होता रहता है और यह ध्वनि योग की विशेष साधना अनायास ही चलती रहती है ।

'सो' कहते हैं परमात्मा को । 'हम' जीव के लिए आत्मा के लिए प्रयुक्त होता है । 'सोऽहम्' का संयुक्त अर्थ है—"जो परमात्मा है, वही मैं हूँ ।" इसे अद्वैतयोग भी कहते हैं । अपने को ईश्वर का प्रतिनिधि मानकर चलने से उस स्वरूप में परमात्मा के साथ कुम्हार के बर्तन होने का ध्यान बना रहने से जीवन का वह महत्त्वपूर्ण प्रसंग भी याद आ जाता है कि अपनी अपूर्णता पूरी करके व्यक्तित्व का निखार-परिष्कार करते हुए जीवन मुक्त की स्थिति प्राप्त करेंगे । मनुष्य को यह सुरदुर्लभ मानव शरीर इसलिए तो दिया ही गया है कि गुण, कर्म, स्वभाव में अधिकाधिक सत्प्रवृत्तियों का समावेश करें । इसके अतिरिक्त दूसरा प्रयोजन यह है कि लोक-मंगल के, जनसेवा के कार्यों में निरत रहकर पुण्य परमार्थ का सम्वर्धन करे । 'सोऽहम्' जप में आत्म-बोध होता है । इसी को आत्म-साक्षात्कार भी कहते हैं । इसके अतिरिक्त वह सभी तत्व स्मरण हो आते हैं, जो जीवन की सफलता और गरिमा के साथ जुड़े हुए हों । इस प्रकार आत्म जागरण, आत्म साक्षात्कार जीवन मुक्त होने का लाभ भी सोऽहम् साधना से मिलता है । प्राणायाम का प्रथम महत्त्व लयबद्ध रूप से गहरी साँस लेने के रूप में है और दूसरा प्रयोजन है, आत्म साधना की अजपा जप साधना, जो जीवन मुक्ति का उद्देश्य पूरा करती है ।

प्राण विद्या का अभिन्न अंग स्वरयोग की साधना

प्रकृति के अन्तराल में प्राण शक्ति का अनन्त वैभव बिखरा पड़ा है । योगी इसे अपने अन्दर प्रविष्ट कर धारण करने की क्षमता अर्जित करते हैं और इसी के माध्यम से आत्मिक ऋद्धियों और भौतिक सिद्धियों के खजाने की 'मास्टर की' पा सकने में सफल होते हैं । स्वर विज्ञान एवं प्राण विद्या का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है । स्वर विज्ञान की धुरी के चारों ओर ही प्राण योग साधना का विधान विनिर्मित है । 'स्वर योग' की इस साधना द्वारा सूक्ष्म प्राण ऊर्जा के रूप में संव्याप्त महाप्रज्ञा की ही प्रत्यक्षतः उपासना की जाती है । प्राण शक्ति का सन्तुलन उत्कर्ष और अभिवर्द्धन प्रज्ञा उपासना का अनिवार्य अंग माना जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसे-जैसे इसकी प्रखरता मानवी सत्ता के सूक्ष्म कलेवर में बढ़ती है, आनन्द व उल्लास की मात्रा बढ़ती जाती है तथा आत्मिक विभूतियों की वर्षा होने लगती है ।

व्यष्टि प्राण समष्टिगत महाप्राण के प्रवाह का ही एक अंग है । यह शरीर में बहत्तर हजार नाड़ी-नाड़िकाओं के माध्यम से प्रवाहित होता है । इसका बोध भी किया जा सकता है, इसीलिए इसे बोधेन्द्रिय कहते हैं । इनसे सम्बन्धित सभी साधना विधान, स्वर-विधान के अन्तर्गत आते हैं, क्योंकि स्वर वस्तुतः प्राण प्रवाह ही है ।

प्राण प्रवाहों का बोध पाँच प्रकार का होता है, इन्हें पंच प्राण कहते हैं—प्राण, अपान, समान, व्यान तथा उदान । 'प्राण' वह शक्ति है जो शरीर के बाह्योद्भव बोधांशों को श्वास, आहार आदि के रूप में धारण करती है तथा शब्दोच्चारण व शरीर में बल संचरण के रूप में व्याप्त होती है । 'अपान' मल-मूत्र, कफ, वीर्य, रज आदि विसर्जन क्रियाओं में मुख्य भाग लेने वाली शक्ति है । पाचक रसों—एन्जाइम्स आदि का उत्पादन एवं वितरण 'समान' का कार्य है । रक्त संचार, सम्वेदना, ग्रहण करने वाले तन्तुओं में प्रवाहित विद्युत आदि का बाध व धारण 'व्यान' का कार्य है तथा धातुगत बोधांशों को धारण कर शरीर को सबल-उन्नत बनाये रखना 'उदान' के हिस्से में आता है । इन पंच प्राणों के अतिरिक्त पाँच उप-प्राण भी हैं—धनंजय, देवदत्त, कूर्म, नाग व कृकल । इन सभी का प्राण-प्रवाह इड़ा, पिंगला तथा सुषुम्ना इन तीन प्रधान परिपथों में होकर बहता है । इन तीनों से जो शाखा-प्रशाखाएँ निकलती हैं, वे ही ७२ हजार नाड़ियों के रूप में पूरे शरीर में व्याप्त होती हैं । इस प्राण प्रवाह से ही तीन प्रकार के स्वरों की उत्पत्ति होती है ।

इड़ा नाड़ी का प्रवाह दाहिनी ओर चलता है एवं इसे सूर्य स्वर अथवा उत्तेजक प्राण प्रवाह भी कहते हैं । पिंगला नाड़ी का प्रवाह बायीं ओर चलता है तथा इसे शामक प्राण प्रवाह भी कहते हैं । इन्हें शास्त्रों में क्रमशः गंगा और यमुना भी कहा गया है । मध्यस्था सुषुम्ना नाड़ी की संज्ञा सरस्वती से दी जाती है । यह सन्धि की स्थिति है जो अल्पकाल के लिए ही होती है । प्रधानतः इड़ा और पिंगला का ही कार्य व्यापार चलता रहता है ।

ये दोनों ही प्राण प्रवाह शरीर में अंग-प्रत्यंगों के विभिन्न मिलन बिन्दुओं पर, जहाँ चक्र उपत्यिकाएँ स्थित होती हैं, एक-दूसरे के प्रभावों को निरस्त कर प्राण प्रवाह से साम्य बिठाये रखते हैं । यह सन्तुलन ही वस्तुतः स्वर विज्ञान की साधना है । स्वर विज्ञान इड़ा व पिंगला की सन्धि स्थिति में सन्तुलन बिठाना है । असन्तुलन की स्थिति में इड़ा की प्रधानता से उत्तेजना, आक्रामकता बढ़ जाती है । विज्ञानवेत्ता इड़ा की संगति सिम्पेथेटिक आरोनॉमिक नर्वस सिस्टम से बिठाते हैं ।

योग विज्ञान के अनुसार दोनों स्वर सूर्य व चन्द्र नाड़ी के रूप में क्रमशः दाहिने व बाएँ नथुने से प्रवाहित होते हैं, पर दोनों से एक ही समय में वायु प्रवाह नहीं होता । स्वर बदलते समय मात्र कुछ क्षणों के लिए दोनों स्वर एक साथ चलते हैं, जिसे सुषुम्ना-मध्य नाड़ी का प्रवाह कह सकते हैं । जिस प्रकार समुद्र की लहरों पर सूर्य-चन्द्र का प्रभाव पड़ता है । इसी प्रकार हमारी श्वास-प्रक्रिया भी प्रभावित होती है । सूर्य स्वर के समय शरीर में दिन तथा चन्द्र स्वर के समय शरीर में रात्रि होती है । दिन रात्रि में मनुष्य शरीर में २१६०० बार श्वास का आवागमन स्वाभाविकतः होता है, अर्थात् १ मिनट में १५ या १६ बार । इस प्रकार प्रत्येक जीवधारी का पूर्ण आयु प्राप्त करना, दीर्घजीवी होना, उसकी श्वास क्रिया पर आश्रित है । जो इस सम्पदा का अपव्यय करता है, अर्थात् १ मिनट में अधिक बार श्वास लेता है वह आयु उतनी ही कम करता जाता है । व्यसनी, भोगी, रोगी इसी श्रेणी में आते हैं । जो कम श्वास लेता है वह अपने खजाने का दुरुपयोग कम करने से दीर्घायु होता है । प्रति मिनट श्वास की संख्या जैसे-जैसे घटती है, आयुष्मकाल वैसे ही गुणित क्रम में बढ़ता चला जाता है।

ऐसा कहते हैं कि प्रत्येक पखवारे में श्वास की गति बदलती है और प्रायः एक नासिका से एक घण्टा श्वास चलकर बदल जाती है । शुक्लपक्ष की प्रतिपदा को सूर्योदय के समय इड़ा नाड़ी अर्थात् दाँया स्वर चलना चाहिए, उसी प्रकार कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा को इसी समय पिंगला नाड़ी अर्थात् बाँया स्वर चलना चाहिए प्रत्येक दिन में पाँच बार स्वर का परिवर्तन होता है । श्वास चलने का यह नैसर्गिक नियम सब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में शाश्वत है । इस क्रम को जानकर और परिस्थिति के अनुकूल साधकर स्वर विज्ञानी अपने हर कार्य को सफल बनाते हैं । योगी बताते हैं कि विवेकपूर्ण स्थायी नीति नियोजन सम्बन्धी कार्य तब किए जाने चाहिए जब चन्द्र नाड़ी का प्रवाह गतिमान हो । उत्तेजक—आवेश, जोश वाले कार्यों के लिए उचित समय वही बताया गया है जब सूर्य नाड़ी का प्राधन्य हो ।

योगियों का यह निष्कर्ष पूर्णतः वैज्ञानिक है । साइन्स डायजेस्ट (जून १९८१) में प्रकाशित एक शोध लेख के अनुसार बाँये व दाँये मस्तिष्क की गतिविधियों का बाँये व दाँये नथुने से श्वास लेने के क्रम से बड़ा गहरा सम्बन्ध है । डॉ. रेमण्ड क्लीन एवं रोजीन आर्मीटेज (डलहौजी यूनिवर्सिटी—नोवास्कॉटिया) ने पाया कि प्रति ९० या १०० मिनट में दाहिना मस्तिष्क विराम चाहता है व बाँया मस्तिष्क गतिशील हो जाता है । ऐसे में यदि नथुने से श्वास द्वारा इस चक्र से जिसे "नेजल सायकल" कहते हैं, संगति बिठा ली जाय तो कार्य क्षमता में उल्लेखनीय परिवर्तन हो सकता है, साथ ही कई प्रसुप्त पड़े केन्द्रों की जागृति में भी इससे सहायता मिल सकती है हिमालयन इन्स्टीट्यूट पैंसिलवानिया ने तो इस विषय पर पूरी एक प्रयोगशाला ही स्थापित की है और इससे वे मानस रोगों सम्बन्धी महत्त्वपूर्ण निष्कर्षों पर भी पहुँचे हैं ।

स्वर विज्ञान बताता है कि सही ढंग से श्वास नाड़ी चलने की प्रक्रिया से संगति बिठाते हुए यदि अपना श्वास क्रम सुनियोजित कर लिया जाय तो न केवल जीवन व्यापार में सन्तुलन साधने हेतु, वरन् आत्मिक प्रगति के लिए भी इस योग विद्या का उपयोग हो सकता है । प्राण प्रवाह पर नियन्त्रण कर योगी अपनी सूक्ष्म चेतना को विकसित कर लेते हैं । भविष्य के गर्भ में छिपी कई घटित होने वाली बातें वे पहले से ही जानते हैं और तद्नुसार ही अपनी गतिविधियों का निर्धारण करते हैं । इसे दिव्य दृष्टि एवं अतीन्द्रिय सामर्थ्य भी कह सकते हैं । न केवल प्राण शक्ति के संरक्षण व सम्वर्धन हेतु, वरन् स्वर योग के माध्यम से दिव्य उपलब्धियों के लिए भी स्वर ज्ञान तथा श्वसन क्रिया का नियमन सुनियोजन जरूरी है । भगवान शंकर ने स्वरयोग की महत्ता बताते हुए कहा है—

सर्वशास्त्र पुराणादि स्मृति वेदाङ्ग पूर्वकम् ।
स्वर ज्ञानात्परं तत्वं नास्ति किंचिद्वरानने ॥

अर्थात्—सम्पूर्ण शास्त्र, पुराणादि, स्मृति और वेदाङ्ग आदि ये सब स्वर ज्ञान से श्रेष्ठ नहीं अर्थात् इनका ज्ञान भी स्वर के ही बल से होता है ।

गुह्याद गुह्यतरं सारमुपकार प्रकाशकम् ।
इदं स्वरोदयं ज्ञानं ज्ञाननां मस्केमणिः ॥

अर्थात्—यह स्वर ज्ञान गुप्त से भी गुप्त वस्तु है । इसमें छिपा रहस्य उपकारों का प्रकाशक है और सब ज्ञानों में शिरोमणि है ।

प्राण विद्या की इस विधा को आज के वैज्ञानिक युग में भी पूर्णतः मान्यता मिल चुकी है । स्वर साधना की सिद्धि के लिए, उत्सुक साधकों के लिए, इससे सुगम प्राण योग की साधना और कोई नहीं । प्राण शक्ति के संतुलन, उत्कर्ष और अभिवर्धन में यह साधना बहुत सहायक सिद्ध हो सकती है ।

श्वास-प्रश्वास ही जीवन है । विश्व के समस्त प्राणियों में जो जीव जितनी कम श्वास लेता है, वह उतने ही अधिक काल तक जीवित रहता है । खरगोश एक मिनट में ३८ बार श्वास लेता है वह ८ वर्ष की ही आयु प्राप्त करता है । जबकि १९ बार प्रति मिनट श्वास लेने वाला घोड़ा ३५ वर्ष की पूर्णायु को प्राप्त करता है । सांप प्रति मिनट ८ बार श्वास लेता है और कछुआ ५ बार इन दोनों की पूर्णायु क्रमशः १ हजार तथा दो हजार वर्ष मानी गई है । स्पष्ट है कि प्रति मिनट श्वास की संख्या जैसे-जैसे घटती है, आयुष्य काल वैसे ही वैसे गुणित-क्रम में बढ़ता जाता है ।

मनुष्य साधारण काम-काज करने में १२ बार, दौड़-धूप करने में १८ बार और रतिकर्म के समय २६ बार प्रति मिनट के हिसाब से श्वास लेता है । इसीलिए विषयी और लम्पट मनुष्य की आयु जल्दी घट जाती है और प्राणायाम करने वाले योगाभ्यासी दीर्घकाल तक जीवित रहते हैं । यहाँ यह न समझ लेना चाहिए कि चुपचाप बैठे रहने से कम साँसें चलती हैं, इसलिए निष्क्रिय बैठे रहने से आयु बढ़ जायेगी । ऐसा मान लेने से शरीर के अन्य अंग निर्बल और अशक्त हो जायेंगे तदनुसार उनकी साँस का बेग बहुत बढ़ जायेगा इसीलिए पर्याप्त एवं नियमित श्रम अत्यावश्यक है और वह प्राण साधना का आवश्यक अंग है ।

साँस सदा पूरी व गहरी चाहिए तथा झुककर कभी नहीं बैठना चाहिए । नाभि तक पूरी साँस लेने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर एक प्रकार से कुम्भक हो जाता है और श्वासों की संख्या कम हो जाती है । मेरुदण्ड के भीतर एक तरल जीवन तत्व प्रवाहित होता रहता है, जो सुषुम्ना को बलवान् बनाये रखने में सहायक होता है, तदनुसार मस्तिष्क की पुष्टि होती रहती है । यदि मेरुदण्ड को झुका हुआ रखा जाय तो उस तरल तत्व का प्रवाह रुक जाता है और निर्बल सुषुम्ना मस्तिष्क का पोषण नहीं कर पाती ।

शीतलता से अग्नि मन्द पड़ जाती है और उष्णता से तीव्र होती है । इसका प्रभाव हमारे अमाशय पर भी पड़ता है । सूर्य स्वर में पाचन शक्ति की वृद्धि रहती है, अतएव इसी श्वर से भोजन करना उत्तम रहता है । इस नियम को साधारणतः सभी लोग जानते हैं कि भोजन करने के पश्चात बाँये करवट लेटना चाहिए । उद्देश्य यही है कि बाँये करबट लेटने से दक्षिण स्वर चलता है, जिससे पाचन-शक्ति प्रदीप्त होती है । इसी प्रकार चित्त लेटना इसीलिए अनुचित है कि इस स्थिति में सुषुम्ना स्वर चलेगा, जिससे नीद में विघ्न हो जाता है ।

कुछ विशेष कार्यों के सम्बन्ध में स्वर शास्त्रज्ञों के जो अनुभव हैं उनकी जानकारी सर्वसाधारण के लिए बहुत ही सुविधाजनक होगी । उन्होंने बताया है कि प्रस्थान करते समय चलित स्वर से शरीर भाग को हाथ से स्पर्श करके उसे चलित स्वर वाले कदम को आगे बढ़ाकर प्रस्थान करना चाहिए । यदि किसी क्रोधी के पास जाना है तो अचलित स्वर के पैर को पहले आगे बढ़ाकर प्रस्थान करना चाहिए और अचलित स्वर की ओर उस पुरुष को करके बातचीत करनी चाहिए । इस रीति से उसकी बढ़ी हुई उष्णता को आपके अचलित स्वर की ओर का शान्त भाग अपनी आकर्षण-विद्युत से खींचकर शान्त बना देगा और मनोरथ में सिद्धि प्राप्त होगी । गुरु, मित्र, अधिकारी आदि को वाम स्वर के समय वार्तालाप अधिक अच्छा होता है ।

इड़ा को सूर्य स्वर तथा पिंगला को चन्द्र स्वर कहा जाता है । इन्हें क्रमशः गंगा और यमुना भी कहा गया है । मध्यस्था सूक्ष्म नाड़ी सुषुम्ना को सरस्वती की संज्ञा दी जाती है । उसे वायु भी कहा जाता है । यह संधि की स्थिति है, जो थोड़ी ही देर के लिए होती है । प्रधानतः इड़ा और पिंगला का ही कार्य व्यापार चलता रहता है । इन दोनों में सन्तुलन आवश्यक है । यह सन्तुलन स्वर विज्ञान के सहारे साधा जाता है । असन्तुलन की स्थिति में इड़ा की प्रधानता से उत्तेजना, आक्रामकता का प्राबल्य हो जाता है तो पिंगला का प्राधन्य शिथिलता, निष्क्रियता को जन्म देता है । स्वर-विज्ञान के ज्ञाता और प्राण विद्या के साधक इन दोनों में सन्तुलन बनाये रखकर प्रगति पथ पर बढ़ते जाते हैं ।

स्वरयोग की साधना के यों कई अभ्यास हैं, पर उनमें अधिक सरल और अधिक सफल सोऽहम् साधना ही रहती है । यह विशुद्ध रूप से प्राणयोग है । उसमें प्राणायाम के, षटचक्र वेधन, ग्रन्थि वेधन, गुण्डलिनी जागरण, स्वर साधन, गन्धानुभूति भावोत्कर्ष जैसी योगाभ्यास की अनेक ऐसी धारायें समाविष्ट हैं, जिनके माध्यम से साधक को उच्चस्तरीय आत्मविकास का लाभ मिल सकता है ।

ओजस्, तेजस् और वर्चस् के जागरण की साधना

मनोविज्ञान की आधुनिकतम शोधों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि मानवी विकास की सम्भावनाएँ असीम हैं । प्रकारान्तर से आध्यात्म भी मनः शास्त्र है, जिसके द्वारा चित्त, बुद्धि मन की गहराई में प्रवेश करके उन्हें कुरेदने, उभारने एवं समुन्नत बनाने का प्रयास किया जाता है । इन तीनों के समन्वय से समग्र मानस का स्वरूप बनता है । अब यह अनुभव किया जा रहा है, इसके परिष्कृत एवं विकसित होने पर ही मनुष्य एवं समाज को समुन्नत एवं सुसंस्कृत बनाया जा सकता है । जनमानस के परिष्कार के लिए चल रहे विचार-क्रान्ति अभियान, भाव भरे प्रज्ञावतार के जो प्रयास चल रहे हैं, उन्हें प्रकारान्तर ने चिन्तन पद्धति के परिष्कृत एवं विकसित करने की सुनियोजित प्रक्रिया समझा जा सकता है । नव निर्माण का अभीष्ट लक्ष्य उसी के द्वारा पूरा होगा ।

जन जीवन से सम्बन्धित सभी पक्षों की सुनियोजन भावना एवं विचारणा में श्रेष्ठता का समावेश होने से ही सम्भव हो सकता है । सामयिक परिस्थितियों में से प्रतिकूलता का निवारण और अनुकूलता का निर्धारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्ततः इसी एक उपाय द्वारा बन पड़ेगा कि लोक-चिन्तन में शालीनता का अधिकाधिक समावेश किया जाय । यह विशुद्ध रूप से मनःशास्त्र का विषय है । भले ही प्रयोजन की पूर्ति के लिए उपाय, उपचार किसी भी स्तर के नाम में क्यों न बनाये जायें, परिवर्तन दण्ड विधान के आधार पर होता है या दार्शनिक सम्वेदनाओं का प्रभाव सफल हो जाता है अथवा दोनों का समन्वय का काम देता है । यह प्रयोक्ताओं की सूझ-बूझ और परिस्थितियों के तालमेल से सम्बन्धित है । इससे आगे की गहराई पर दृष्टिपात करने पर ये सारा खेल मनोविज्ञान की क्रिया-प्रक्रिया की परिधि में आता है । परिवर्तन, चिन्तन की दिशाधारा का ही होता है । युग परिवर्तन का तात्विक स्वरूप यही है । एक शब्द में सुधार परिवर्तन के लिए चल रहे प्रयत्नों को जड़ में मनःतत्व के परिमार्जन को ही नव सृजन का केन्द्रबिन्दु माना जा सकता है । उत्थान और पतन के समस्त स्रोत इसी मर्मस्थल पर केन्द्रीभूत हो रहे हैं ।

योगाभ्यास में अतीन्द्रिय क्षमताओं के विकास को एक महत्त्वपूर्ण विषय माना जा रहा है । कौतुक कौतूहल सभी को आकर्षित करतेहैं । ऐसे प्रदर्शनकारी प्रायः आकर्षण के केन्द्र होते हैं । ऐसी विलक्षणता देखकर कोई भी दूसरों को चमत्कृत कर सकता है भले ही उस प्रदर्शन की कुछ विशेष उपयोगता न हो । बाजीगर कई प्रकार के कौतूहल दिखाते हैं । उस प्रदर्शन में किसी की ज्ञान वृद्धि होती हो या जो कमाया गया है वह किसी के काम आता हो ऐसी भी कुछ नहीं है । फिर भी लोग बाजीगरों का तमाशा मजे में देखते हैं अतीन्द्रिय क्षमताओं का स्तर बाजीगरी से ऊँचा है । बाल-बुद्धि के लोगों की चमत्कृत करके उन पर अपनी विशिष्टता की छाप डालना और उस छाप से प्रभावित लोगों से मनमर्जी पूरा करा लेना सरल है । इस लोभ का संवरण न करने स भी कितने ही लोग चमत्कारी सिद्धियाँ प्राप्त करने का प्रयत्न करते हैं । यह उसका स्तर आध्यात्म क्षेत्र में सदा हेय माना जाता रहा है । यद्यपि अधिकांश की प्रयत्नशीलता इसी दृष्टि से होती है । इतने पर भी एक तथ्य तो स्पष्ट है कि मनुष्य के अन्तराल में कुछ विलक्षण शक्तियाँ विद्यमान हैं । कार्यान्वित न होने के कारण वे मूर्छित स्थिति में पड़ी रहती हैं, यदि उन्हें विकसित किया और काम में लाया जा सके तो निश्चय ही उस विकसित स्थिति का व्यक्ति कई दृष्टि से कहीं अधिक सामर्थ्यवान माना जाय । उस विशिष्ट सामर्थ्य का यदि प्रयत्नपूर्वक किन्हीं उच्च प्रयोजनों में उपयोग हो सके तो यह भी स्पष्ट है कि उसका प्रतिफल व्यक्ति और समाज के सामने अधिक महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ उपस्थित करता दिखाई देगा । अतीन्द्रिय क्षमताओं का क्षेत्र इन्द्रिय शक्ति के सहारे चल रहे क्रिया-कलाप की तुलना में कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । उसमें प्रवेश और उपार्जन का प्रबन्ध हो जाता है, तो भौतिक विज्ञान के द्वारा जैसे अद्‌भुत लाभ इन दिनों उठाये जा रहे हैं, अगले दिनों उससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण प्रयोजन आध्यात्म विज्ञान के सहारे उठाये जाने लगेंगे ।

प्रगति की हर दिशा में इन दिनों भाग-दौड़ हो रही है । शक्ति के नये स्रोत ढूँढने में प्रतिभावान वर्ग का पूरा उत्साह है । खर्चीले और कष्टसाध्य प्रयत्नों में शोधकर्त्ता जुटे हुए हैं । इनमें सबसे महत्त्वपूर्ण क्षेत्र मानवी अन्तराल की गहरी पर्तों का अनुसंधान करना है । प्राचीनकाल में अनेकों द्वारा अतीन्द्रिय क्षमताओं के माध्यम से असम्भव जैसे कठिन कार्य को सम्भव कर दिखाने के उदाहरण हैं । कथा-पुराणों का पन्ना-पन्ना इस प्रकार की क्षमताएँ मनुष्य में होने की साक्षी देता है । इसके अतिरिक्त इतिहास के प्रामाणिक उल्लेख भी उतने अधिक हैं कि उनके सहारे यह विश्वास किया जा सकता है कि सामान्य मनुष्य जितनी सामर्थ्य का उपभोग करता है । वस्तुतः उससे कहीं अधिक उसके अन्तराल में विद्यमान है, जो एक के लिए सम्भव हुआ वह दूसरे के लिए भी सम्भव हो सकता है । इतिहास में पुराणों की बात छोड़ भी दें तो भी वर्तमान में ऐसी कितनी प्रतिभाएँ मौजूद हैं, जिन्होंने प्रत्यनपूर्वक अथवा अनायास ही अतीन्द्रिय क्षमता विकसित कर ली है और वे इस सम्भावना के सन्दर्भ में शंका सन्देहों का निवारण करते हैं कि दिव्य क्षमताओं का आधार मानवी अन्तराल में है या नहीं ।

प्रयत्नपूर्वक जब प्रकृति की रहस्यमयी शक्तियों का पता लगाने और उन्हें उपयोग में लाने में जब सफलता मिल सकती है तो कोई कारण नहीं कि अतीन्द्रिय शक्तियों के क्षेत्र में खोजने और वहाँ से ऐसा कुछ पाने में सफलता न मिले जो मनुष्य का स्तर एवं भविष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही बदल दे । सर्वविदित है कि कुछ आविष्कारों ने परिस्थितियों में क्रान्तिकारी परिवर्तन किए हैं । अग्नि का आविष्कार, मुद्रा का प्रचलन, बिजली का उपयोग, भाषा और लिपि का उद्‌भव जैसी आज सामान्य दीखने वाली समस्त बातें अपने आरम्भ काल में महान क्रान्तिकारी आँकी गई होंगी । इन आविष्कारों ने आदिम काल की विपन्न परिस्थितियों को आज की सुसम्पन्नता तक पहुँचाने में भारी योगदान दिया है । अतीन्द्रिय क्षमताओं के विकास का क्षेत्र इन सबसे बड़ा है । साधन कितने ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हों, व्यक्तित्व की समर्थता की तुलना में उनका मूल्य नगण्य ही माना जायेगा । असमान्य स्तर की अतीन्द्रिय क्षमताओं की उपलब्धि से मनुष्य आज की तुलना में कहीं अधिक सामर्थ्यवान हो सकता है और उस उपलब्धि से मानवी प्रगति का एक नया अध्याय आरम्भ हो सकता है ।

अतीन्द्रिय क्षमताएँ किसी देवी-देवता के अनुग्रह उपहार नहीं हैं । उनकी सुनिश्चित सम्भावना मनःक्षेत्र की संरचना के साथ जुड़ी हुई है । जो काम में नहीं लाया जायेगा, वह निष्क्रिय बन जायेगा । यह सिद्धान्त पदार्थों और प्राणियों पर समान रूप से लागू होता है । अन्तराल का असामान्य यदि खोजा और प्रयुक्त किया जा सके तो उस क्षेत्र की उपलब्धियाँ भी उसी प्रकार सामान्य हो सकती हैं, जिस प्रकार कि प्राचीनकाल में थीं । इस देश के नागरिक संसार भर में देव मानव कहे जाते और सम्मानित होते थे । इनमें उनके गुण, कर्म, स्वभाव की उत्कृष्टता तो कारण थी ही साथ ही विकसित मनोबल भी सम्मिलित था जो कौतूहलवर्धक सही प्रतिभा और क्षमता को नये स्तर पर उभारने में तो निश्चित रूप से समर्थ होता है । अधिकाधिक सम्पदा और समर्थता प्राप्त करने के लिए आतुर मनुष्य के लिए यह काम आवश्यक और कम महत्त्वपूर्ण नहीं है कि वह अन्तराल में छिपे विशिष्ट को खोजे, उपलब्ध करे और उस उपार्जन के सहारे आज की तुलना में कहीं अधिक ऊँचे स्तर पर जा पहुँचे ।

अतीन्द्रिय क्षमता की कार्य संरचना मौलिक संरचना से सम्बन्धित है । इससे आगे का क्षेत्र है— चेतनात्मक आध्यात्मिक । उसकी विशिष्टता ऋद्धि सिद्धियों के क्षेत्र से अधिक वरिष्ठ है । सिद्धियाँ—पदार्थों, शारीरिक गतिविधियों एवं मनोबल के सहारे उपार्जित की जाती हैं । उस समूचे क्षेत्र को प्रकृति विस्तार के अन्तर्गत ही माना जायेगा । ऋद्धि-सिद्धियों के नाम से जानी जाने वाली उपलब्धियाँ वरिष्ठ होते हुए भी भौतिक जगत की समर्थता एवं सफलता ही गिनी जायेगी । इन्द्रियाँ स्थूल हैं । उनकी सामर्थ्य को इन्द्रिय शक्ति कहा जाता है । इसी की सूक्ष्म पर्तें अतीन्द्रिय हैं । दिव्य श्रवण, दिव्य दर्शन आदि को कर्णेन्द्रिय एवं नेत्रेन्द्रिय की सूक्ष्म क्षमता तन्मात्रा का विकास कहा जायेगा । चेनता और प्रकृति का समन्वय ही मस्तिष्क है । मस्तिष्कीय क्षमताओं की स्थूल उपलब्धियाँ बुद्धिमत्ता एवं प्रतिभा के नाम से जानी जाती हैं और उनकी सूक्ष्म पर्तें अतीन्द्रिय क्षमता का परिचय देती हैं ।

चेतना का अधिक उच्चस्तरीय क्षेत्र अन्तःकरण है । आस्थाएँ, आकांक्षाएँ एवं सम्वेदानाएँ समन्वित होकर अन्तःकरण का स्तर बनाती हैं । वस्तुतः यही असली व्यक्तित्व है । इसी की प्रेरणा से मस्तिष्क को चिन्तन और शरीर को कार्य करने के लिए विवश होना पड़ता है । ड्राइवर की इच्छानुसार गाड़ी की चाल और दिशा बनती है । इसी प्रकार अन्तःकरण तो अपने इच्छित प्रसंग के समर्थन में तर्क गढ़ने और उपाय खोजने में संलग्न होता है । मन का आज्ञानुवर्ती शरीर है । असुविधा अनुभव करने पर भी शरीर और मन का अन्तःकरण का अनुशासन मानना पड़ता है । इन दोनों बफादार नौकरों की गतिविधियाँ अपने संचालक की इच्छानुसार ही चलती हैं । थोड़ा झाड़ भले ही लें, पर अवज्ञा कभी नहीं करते । अन्तःकरण के अनुशासन में चलने वाला शरीरगत और मनोगत क्रियाकलाप को ही व्यक्तित्व और पुरुषार्थ के नाम से जाना जाता है । मनुष्य का मूल्यांकन उसी स्तर के आधार पर होता है । उत्थान-पतन की, सम्मान-अपमान की, जय-पराजय की धुरी यही है । स्वयं की विशिष्टता इसी के साथ जुड़ी हुई है ।

यशस्वी एवं श्रद्धास्पद महामानवों का अन्तःकरण उदात्त व उच्चस्तरीय होता है । उनकी आकांक्षाओं में जो उमंगें उभरती हैं, उसी के सहारे दृष्टिकोण विकसित होता है और पुरुषार्थ को दिशा निर्देश मिलता है । उत्कृष्ट अन्तःकरण की परणिति मनुष्य को महामानव के स्तर तक पहुँचा देती है । ऋषियों, मनीषियों, देवदूतों में अन्तःकरण की विशिष्टता ही वह कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होती है, जिसके कारण वे सांसारिक दृष्टि से सामान्य होते हुए भी असामान्य बनते हैं । अपनी विशिष्टता से समूचे समाज को प्रभावित करते और स्वयं श्रद्धास्पद बनते हैं ।

अन्तःकरण यों चिरकालीन संचित संस्कारों से बना होता है और सहज ही बदलने के लिए सहमत नहीं होता । फिर भी आध्यात्म प्रयत्नों में ऐसे आधार विद्यमान हैं जो इस मर्मस्थल को कुरेदने और बदलने मे सफल हो सकें । योगाभ्यास और तप साधना के छोटे-बड़े अनेक स्तर हैं । उन दोनों के सहारे शरीर की समर्थता और मस्तिष्क की प्रखरता को बढ़ाया जा सकता है । इतना ही नहीं, उच्चस्तरीय साधना से अन्तःकरण का काया-कल्प कर सकना भी सम्भव हो सकता है । इस स्तर की सफलता सम्पादित करने वाले ही महामानवों की भूमिका निभाते हैं । भले ही उनकी परिस्थितियाँ कितने ही व्यवधान उत्पन्न करती रहें ।

आध्यात्म विज्ञान की चरम उपलब्धियों में स्वर्ग-मुक्ति की, ब्रह्मानन्द परमानन्द की, ऋद्धि-सिद्धि की चर्चा होती रहती है । इस क्षेत्र में सफल व्यक्तियों को दैवी वरदान और ईश्वरीय अनुदान मिलने के वर्णन मिलते हैं । उनकी सहायता से अनेकों अवरोध हटाने और उत्कर्ष का अवलम्बन वरदान पाने का अवसर मिलता है । समय की समस्याओं का समाधान करने में उनकी प्रचण्ड क्षमता, असाधारण भूमिका निभाती है । यह स्तर प्राप्त करने के लिए अन्तःकरण में जमी हुई कुसंस्कारिता उखाड़ना और उत्कृष्टता जमानी पड़ती है । योग और तप की साधनाएँ इसी प्रयोजन की पूर्ति के लिए करनी पड़ती हैं । इतने भर से सभी प्रयोजन पूरे हो जाते हैं, जो आध्यात्म साधना की सफलता के फलस्वरूप विभिन्न उपलब्धियों के रूप में शास्त्रकारों ने अलंकारिक एवं आकर्षक भाषा में बताये समझाये हैं । परिष्कृत दृष्टिकोण से विनिर्मित मनःस्थिति से प्रतीत होता है, कि संसार में सुन्दरता, सज्जनता, उदारता एवं सद्भावना की कमी नहीं । उसके साथ घनिष्ठता बढ़ाना और आदान-प्रदान का द्वार खोलना ही स्वर्ग है । उसे प्राप्त करने के लिए मरणोत्तर समय आने की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती । परिष्कृत दृष्टिकोण के कारण उत्पन्न आत्म-सन्तोष, निष्कर्ष-निर्धारण और सुखद आदान-प्रदान वास्तविक स्वर्ग है, जिस अन्तःकरण को परिष्कृत करने से सफल व्यक्ति हर घड़ी, हर स्थिति में रसास्वादन करता रह सकता है । मुक्ति वह स्थिति है, जिससे घटिया आकर्षणों, दबावों तथा परामर्शों को अस्वीकृत करने में तनिक भी कठिनाई नहीं होती । भीतरी कुसंस्कार और प्रलोभन ही भव बन्धन हैं । इन्हें तोड़ने और मात्र उत्कृष्टता को अपनाने की साहसिकता ही मुक्ति है । क्षुद्रता के बन्धन टूटने और महानता के स्तर तक पहुँचने पर नर को अपना स्तर नारायण जैसा प्रतीत होता है । वेदान्त दर्शन का छात्र इसी स्थिति की यथार्थता स्वीकार करते हुए शिवोऽहं-मुक्तोऽहं की अनुभूति का आनन्द लेता है ।

परिष्कृत आत्मा ही परमात्मा है । अति-मानस, अति-मानव का उल्लेख इसी स्तर की विवेचना में होता रहता है । अन्तराल में देवत्व का उदय यही है । देवताओं के वरदान ईश्वर को अनुदान मिलने के घटनाक्रमों में वस्तुतः अपने ही अन्तराल की महान उपलब्धियाँ उभर कर आती हैं । देखने वाले इन्हें किसी दिव्य सत्ता का अनुग्रह-अनुदान मानते हैं । पेड़ पर पल्लव, पुष्प और फल वस्तुतः जमीन में दबी जड़ों के ही अनुदान होते हैं । देखने वाले भले ही उन्हें आसमान से टपकने का अनुमान लगाते रहें । उत्कृष्टता के साथ अःकरण की बढ़ी-चढ़ी घनिष्ठता ही ब्रह्मानन्द-परमानन्द का रसास्वादन करती है । आत्म सत्ता के वास्तविक स्वरूप, लक्ष्य और सदुपयोग को यदि अन्तराल के आस्था क्षेत्र में स्थान मिल सके तो, भ्रान्तियों का, माया का पर्दा हटा और आत्म साक्षात्कार लाभ मिल गया ईश्वरीय अनुशासन को सच्चे मन से स्वीकार करने का नाम ही शरणागति है । समर्पणकर्त्ता को तत्काल ईश्वर दर्शन होता है, अर्थात् उस आग में घुस पड़ने वाली लकड़ी की तरह अपने में ईश्वरीय सत्ता ओत-प्रोत होने की सुनिश्चित अनुभूति होती है—यहि ईश्वर प्राप्ति है । आत्म साक्षात्कार, ब्रह्म साक्षात्कार के नाम से इसी स्थिति का वर्णन विवेचन होता रहता है । कहना न होगा कि परिष्कृत चेतना का प्रभाव और पराक्रम जिस क्षेत्र में भी मुड़ पड़ेगा उसी में ऋद्धि-सिद्धियों की वर्षा होने लगेगी । इसी स्तर तक पहुँचना जीवन लक्ष माना जाता है । इसी को पूर्णता की उपलब्धि कहा गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यष्टि और समष्टि को बहिरंग और अन्तरंग परस्थितियों को हेय स्तर से ऊँचा उठाकर चरम उत्कर्ष तक पहुँचा देने का अवलम्बन एक ही है—चेतना का परिष्कार । इसी को शरीर क्षेत्र में ओजस् मनःक्षेत्र में तेजस् और अन्तःकरण में वर्चस् कहते हैं । मनः शक्ति की सही जानकारी ब्रह्म विद्या के सहारे उपलब्ध की जाती है और उसको उत्कृष्ट प्रयोजनों में जुटाकर स्वर्गीय उपलब्धियाँ प्राप्त करना साधना के सहारे सम्भव होता है । मनस को धरती का ईश्वर ही कहना चाहिए इसी के चमत्कार से यह समस्त संसार चमत्कृत हो रहा है ।

ओजस्, तेजस् एवं वर्चस् के जागरण हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ

स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीरों का अस्तित्व भिन्न होने पर भी तीनों परस्पर जुड़े हुए हैं । एक शरीर जिस स्थान पर दूसरे से जुड़ता है, उसे ग्रन्थि या चक्र भी कहते हैं । पहला दरवाजा मकान के प्रवेश पर होता है, उसे खोल कर ही मकान के प्रवेश पर होता है । उसे खोल कर ही मकान के अन्दर की यथार्थ स्थिति को समझा जा सकता है । मकान के अन्दर भी दूसरा ताला, अलमारी पर लगा होता है । सामान्य वस्तुएँ तो घर के बाहर फैली रहती हैं, पर विशिष्ट वस्तुओं को आलमारी या तिजोरी के अन्दर रखने का विधान है । कीमती आभूषण तिजोरी के अन्दर भी किसी तीसरे आवरण में लॉकर रखे जाते हैं । इतने दरवाजे खोल लेने पर ही वहाँ तक पहुँचा जा सकता है ।

ब्रह्म की वैभव विभूतियों को इसी तरह कारण शरीर के अन्तराल में छिपा कर रखा गया है । जो इन तालों को खोल सकता है, वही उन्हें प्राप्त कर सकता है । आध्यात्मिक भाषा में इसी को ग्रन्थि या चक्र वेधन कहते हैं । इसके लिए कुछ विशिष्ट क्रियाएँ और अभ्यास करने पड़ते हैं । यह क्रियाएँ ही साधना उपचार या योगाभ्यास कहलाती हैं । हठयोग में इन साधनाओं को समर अर्थात् युद्ध कहा गया है । इन साधनाओं में कोई त्रुटि रह जाय तो वह हानिकारक हो सकती है । इसलिए कठिन साधनाओं का आग्रह हर किसी को नहीं करना चाहिए । सिद्ध महापुरुष ऐसे शिष्यों को स्वयं तलाशते हैं । रामकृष्ण परमहंस ने विवेकानन्द, स्वामी विरजानन्द से, स्वामी दयानन्द मछिन्द्रनाथ, गोरखनाथ को स्वयं तलाशकर उच्चस्तरीय साधनाएँ कराई थीं । यह उत्तरदायित्व तो प्रवर्तक कर छोड़ना चाहिए । वह जिसे चाहेंगे उसे स्वयं ही यह कठोर साधनाएँ करायेंगे ।

विभूतियाँ प्राप्त करने का एक सौम्य उपाय भी है । अधिकारों के लिए कानूनी लड़ाई की अपेक्षा अनुग्रह प्राप्त करके, अपने माता-पिता से उत्तराधिकार प्राप्त कर लेना हर किसी के लिए सरल, सुगम होता है । तीनों शरीरों की वैभव विभूतियाँ प्राप्त करने की ऐसी ही रीति-नीति शान्ति कुंज द्वारा विकसित की गई है । इसमें साधकों का अपना प्रयत्न पुरुषार्थ तो नाम मात्र का होगा, पर यहाँ के वातावरण का, समर्थ गुरुदेव के अनुग्रह का योगदान इतना होगा, जिसके सहारे सामान्य स्तर के साधक भी मात्र अपनी जीवनचर्या में परिवर्तन करके अधिकतम अभीष्ट लाभ प्राप्त कर सकेंगे । सरल, सौम्य साधनाओं का प्रारम्भिक अभ्यास नौ दिन तक शान्ति कुंज में कराया जाता है, जिसे अपने घरों पर रहकर भी किया जा सकता है और धीरे-धीरे लक्ष्य तक पहुँचा जा सकता है ।

उच्चस्तरीय साधनाओं का उद्देश्य तीनों शरीरों में छिपी हुई दिव्य क्षमताओं को उभारना और उनका प्रभावपूर्ण उपयोग करना होता है । व्यक्तिगत प्रचण्ड साधना अथवा दिव्य अनुदान, दोनों ही क्रमों से उन्हें प्रभावित जाग्रत किया जा सकता है । इस प्रक्रिया के लिए उनसे सम्बद्ध केन्द्रों, कमल चक्रों का प्रयोग करना लाभप्रद होता है । स्थूल शरीर का केन्द्र नाभि कमल, सूक्ष्म का हृदय कमल तथा कारण शरीर का केन्द्र सहस्रार कमल है । इन्हीं के जागरण में क्रमशः प्राण प्रवाह, ज्ञान प्रवाह, भाव प्रवाह पैदा होते हैं तथा सशक्त बनते हैं ।

स्थूल शरीर की सुन्दरता, सक्रियता, सामर्थ्य आदि सभी विशेषताएँ प्राण से जुड़ी है । उसके बिना तो चमड़ी, माँस, रक्त, सब सडाँध फैलाते हैं । उन्हें देखने से अरुचि पैदा होती है । शरीरगत प्राण तत्व और अन्तःकरणगत आत्म तत्व के संयोग से मनस्तत्व बनता है । साधना के प्रभाव से प्राण तत्व 'ओजस्' मनस्तत्व 'तेजस्' और आत्म तत्व वर्चस् के रूप में प्रकट होता है । नाभि कमल का क्षेत्र मूलाधार चक्र तक है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस क्षेत्र में स्थित महाशक्ति को कुण्डलिनी भी कहा जाता है । इस शक्ति की उपलब्धि वृद्धि है । सामान्य स्थिति में यह केवल पाचन और प्रजनन का ही काम करती है । इस स्थिति में वृद्धि शरीर पोषण तथा यश वृद्धि तक ही सीमित रहती है, पर जब यह जागती है तो छः ऊर्जा स्रोतों षट्चक्रों को वेधती हुई सहस्रार तक जा पहुँचती है । इसे शिव से शक्ति का मिलन कहते हैं । तब ओजस् के रूप में चमत्कारी वृद्धि होती है ।

जिस प्रकार स्थूल शरीर के केन्द्र नाभि कमल का क्षेत्र मूलाधार तक है, वैसे ही सूक्ष्म शरीर के केन्द्र आज्ञाचक्र तक है । इस क्षेत्र की उपलब्धि है 'सिद्ध' । सामान्य स्थिति में इस क्षेत्र से केवल प्राण संचार जीवन रक्षा के जैसे प्रयोजन सिद्ध होते हैं । जाग्रत होने पर अतीन्द्रिय शक्तियों का विकास, यश, गौरव का अनुपम विस्तार होता है ।

कारण शरीर सहस्रार कमल ब्रह्मरन्ध्र से सम्बद्ध है । इस चक्र का क्षेत्र ब्रह्माण्डव्यापी ब्रह्मी चेतना तक है । इसकी उपलब्धि ऋद्धि है । सामान्य स्थिति में इसके प्रभाव से सर्वसमर्थ सत्ता की हल्की स्मृति भर बनी रहती है । अपनी महानता का हल्का-सा बोध बना रहता है । इस क्षेत्र के जागरण से सत् चित् आनन्द से एकत्व की अनुभूति होने लगती है । वृद्धि, सिद्धि और ऋद्धि के भण्डार साधना से ही खुलते हैं, और मनुष्य नर से नारायण, पुरुष से पुरुषोत्तम बन सकता है ।

तीनों शरीरों के जागरण की परम्परागत साधनाएँ बड़ी कठिन दुरूह हैं । समय की आवश्यकता देखते हुए पूज्य गुरुदेव ने सर्वसुलभ साधना क्रम विकसित किया है । शान्ति कुंज के साधना सत्रों में उन्हीं का प्रशिक्षण दिया जाता है, अभ्यास कराया जाता है । स्थूल शरीर के लिए जप योग, सूक्ष्म के लिए प्राण योग और कारण के लिए ध्यान योग का निर्धारण है ।

गायत्री जप को सर्वश्रेष्ठ कहा गया है । प्राण को चिनगारी से ज्वाला बना देने की इसमें चमत्कारी क्षमता है । शरीर के ऊर्जा केन्द्रों पर इसके अक्षरों के भाव भरे उच्चारण का सीधा प्रभाव पड़ता है । जैसे टाइप राइटर की चाबी दबाने से सम्बन्धित अक्षर टाइप होता है, वैसे ही इसके अक्षरों के उच्चारणों का सम्बन्धित केन्द्रों पर सीधा दबाव पड़ता है । शरीरगत प्राण शुद्ध और प्रखर बनकर, सौन्दर्य, शक्ति सामर्थ्य, आरोग्य सभी को बढ़ाता है । इन सत्रों में गायत्री मन्त्र के २४,००० जप का अनुष्ठान कराने की व्यास्था है ।

सूक्ष्म शरीरों की तेजस्विता के लिए प्राणाकर्षक प्राणायाम का निर्धारण है । तीर्थ में युग-ऋषि के प्राण अनुदोनों को इस माध्यम से साधक बड़ी मात्रा में धारण कर सकता है । पहले प्राण के सरोवर में स्थित होने का भाव किया जाता है । फिर श्वास खींचते हुए दिव्य प्राण के प्रवेश का बोध किया जाता है । इसे १० मिनट से प्रारम्भ करके क्रमशः आधे घण्टे तक बढ़ाया जा सकता है । इससे मेधा, प्रज्ञा, विवेकशीलता, प्रखरता जैसी तेजस्विताएँ बढ़ती हैं ।

कारण शरीर सहस्रार कमल के विकास के लिए सूर्य को रोम-रोम में, कण-कण में समाता हुआ देखा जाता है । स्वर्णिम आभा का ध्यान किया जाता है वह दिव्य प्रवाह रोम-रोम में, कण-कण में, समाता हुआ देख जाता है । स्वर्णिम प्रकाश और आत्म ज्योति एक रूप होते अनुभव होते हैं । श्रद्धा, सम्वेदनाओं सदेच्छाओं, सद्भावनाओं के जागरण स्थापना के लिए यह उद्भूत प्रयोग है । इन तीनों साधनाओं को शरीर के लिए अन्न, जल, वायु की तरह, आध्यात्म क्षेत्र के त्रिवेणी संगम की तरह लाभकारी कहा जा सकता है ।

भाव योग के अन्तर्गत ही एक साधना उपचार और आता है, जिसे देवाधिदेव-आत्मदेव की साधना कहा गया है । इसमें दर्पण के माध्यम से आत्म परिष्कार की साधना की जाती है । दर्पण में दीख रहे अपने प्रतिबिम्ब को अपनी छाया नहीं, अपना कोई निकटवर्ती घनिष्ट सम्बन्धी, परिजन मानते हुए यह भाव करना चाहिए, कि इसमें विद्यान त्रुटियों का परिमार्जन करना है । सत्प्रवृत्तियों के बीज विकसित करना है । अपना प्रतिबिम्ब गम्भीरता से देखा जाय व 'स्व' के परिष्कार का, उसे समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने का दृष्टिकोण अपनाया जाय । दर्पण में विद्यमान व्यक्ति का भूत, वर्तमान सभी विदित है । यह भावना करते हुए उसका सही पर्यवेक्षण कर आदर्शों की कसौटी पर जितनी खोट मिले, उसे हटाने, सुधारने का प्रयास अपनाने का संकल्प किया जाय । संजीवनी विद्या के अन्तर्गत यह एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महत्त्वपूर्ण साधना है, जिसका अवलम्बन प्रस्तुत शिक्षण में लाया जाना है ।

साधना काल में उपवास का व्रत भी अपनाना पड़ता है । अपने परिश्रम की, स्व-उपार्जित कमाई ही ग्रहण करने का तपश्चर्याओं में सर्वोपरि विधान है, जिससे अन्न से जुड़े कुसंस्कार तंग न करें । आहार में जौ, तिल, चवाल का विशिष्ट धान्य तथा औषधि कल्क भी इसी निमित्त शामिल किए जाते हैं । व्रत और उपवास के सभी आवश्यक सिद्धान्तों का समावेश होने के कारण अमृताशन का बहुत अधिक महत्त्व है । यह सुपाच्य भी होता है और सात्विक भी । नौ दिन की तपश्चर्या में आहार साधना को स्थूल शरीर शोधन का महत्त्वपूर्ण अंग मानकर उसे अपनाना पड़ता है ।

अन्तःकरण में छिपे हुए पापों की खोज करने के लिए साधक के भूत काल का इतिहास जानना आवश्यक होता है । पिछले जीवन में क्या भूलें हुई हैं, उन्हें जानने के बाद ही प्रयाश्चित साधनाओं का निर्धारण हो सकता है । आभूषण की सामान्य टूट-फूट को थोड़े में ठीक किया जा सकता है, पर टूट-फूट अधिक हो तो भट्ठी में गलाये बिना काम नहीं चलता । प्रायश्चित साधनाएँ प्राचीन काल में बहुत कठोर होती थीं । इन सत्रों में उसे सुलभ तो बनाया गया है, पर पाप कर्मों का खुलासा तो करना ही पड़ता है । पिछली गाँठें खुलें नहीं, बन्धन टूटें नहीं, तो साधक मुक्तावस्था का आनन्द कैसे ले सकता है ? इसके लिए साधकों को अपने जीवन में हुई भूलों को विस्तार से लिखना पड़ता है । उन्हें मिशन के सूत्र संचालक ही देखते हैं । किन परिस्थितियों में कब कौन-से पाप बन पड़े, यह जानना ठीक उसी तरह आवश्यक होता है, जिस तरह डॉक्टर चिकित्सा से पूर्व रोग के कारणों को बार-बार पूछकर ज्ञात करता है । सारी स्थिति जान लेने पर साधक के पक्ष में कठोर प्रायश्चित तो सूत्र संचालक अपने पर लेकर स्वयं जलाते हैं, प्रतीक प्रायश्चित भर साधकों से कराते हैं, स्वयं कुछ किए बिना साधक उऋण भी नहीं हो सकते ।

महाभारत का सूत्र है "पूर्वजन्मकृत पापं व्याधि रूपेण निस्रित" अर्थात् पूर्व जीवन में किए पाप, रोगों कष्टों के रूप में प्रकट होते हैं । उन पापों का शमन, प्रायश्चित एवं साधना विधान से किया जाय तो अनेक रोगों, शोकों, कष्टों से मुक्त मिलती है । पाप निष्कासन, परिष्कार की व्यवस्था नौ दिवसीय सत्रों की अत्यधिक महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया है ।

कारण शरीर की उच्चस्तरीय तपश्चर्या का नाम समर्पण योग है । इसके अन्तर्गत अपनी इच्छाएँ परमात्मा को सौंपनी पड़ती हैं । यह अभ्यास गुरु के प्रति श्रद्धा समर्पण से पूर्ण होता है । उसके लिए प्रत्येक साधक को शान्ति कुंज को माँ का पेट, आवा समझ कर निर्धारित नौ दिन तक, यहाँ की साधना, क्रिया-कलाप और अनुशासन का पालन करना पड़ता है, ताकि यहाँ प्राण ऊर्जा पूरी तरह साधक के रोम-रोम में पच जाय यह ऊर्जा ही अगले दिनों खाद-पानी की तरह अन्तरंग की शक्तियों को पुष्पित, पल्लबित और फलीभूत करती है । सूत्र संचालकों की संकल्प शक्ति और ऊर्जा ऐसी ही स्थिति के साधक की साधना पकाने में समर्थ होती हैं ।

वर्चस की प्राप्ति एवं आत्मिक प्रगति का एकमात्र अवलम्बन

प्रगति का क्षेत्र भौतिक हो या आध्यात्मिक उसमें एक ही नियम काम करता है और उसी से 'अभीष्ट' सफलता प्राप्त होती है । वह नियम है—तश्पचर्या । भौतिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को अभीष्ट श्रम करना पड़ता है । किसान, मजदूर, विद्यार्थी, सैनिक, पहलवान, कलाकार, चपरासी, शिल्पी आदि, सभी सफलताएँ उनमें प्रयत्न, पुरुषार्थ श्रम और सहास पर निर्भर रहती है । इस प्रयत्न परायणता को एक प्रकार से महाप्रज्ञा का तत्व दर्शन कहा जा सकता है, जो कि आत्मिक जीवन में भी एक समान लागू होता है । उस क्षेत्र की प्रगति पूरी तरह इस तथ्य पर निर्भर है कि साधन में तपश्चर्या या साहसिकता किस मात्रा तक प्रचण्ड हो सकी है । उपासना और साधना का तात्विक पर्यवेक्षण करने पर प्रतीत होता है कि आध्यात्म विज्ञान का सारा ढाँचा ही प्रगति के लिए आवश्यक ऊर्जा उत्पन्न करने की प्रेरणा देता है । यह ऊर्जा तपश्चर्या के माध्यम से ही उत्पन्न होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तित्व को अन्तःचेतना को ऊपर उठाने के लिए भी तपश्चर्या से उत्पन्न ऊर्जा के बिना काम नहीं चल सकता है । पैदल चलने को शरीर में शक्ति चाहिए । मोटर चलाना हो तो भी शक्ति की व्यवस्था जुटानी होती है । जीवन को ऊँचा उठाना हो, आगे बढ़ाना हो तो भी समर्थता उत्पन्न करके अपनी पात्रता विकसित करनी होगी ।

आत्मिक प्रगति की दिशा में अभीष्ट सफलताएँ प्राप्त करने वालों का इतिहास आदि से अन्त तक एक ही तथ्य प्रामाणित करता है कि उन्होंने आवश्यक तपश्चर्या करके अपनी पात्रता विकसित की । फलतः उन्हें विभूतियों, सिद्धियों से लाभान्वित होने का अवसर मिला । महामानवों से लेकर ऋषि महर्षियों तक की सफलताएँ पूर्णतया उनकी तप साधना, पर निर्भर रही हैं ।

यथार्थता यह है कि भौतिक क्षेत्र की तरह ही आत्मिक क्षेत्र में भी आत्म परिष्कार के लिए प्रबल पुरुषार्थ करने पड़ते हैं । उन्हीं के आधार पर वह क्षमता विकसित होती है जो अन्तर्जगत की प्रसुप्त दिव्य क्षमताओं को लगाकर किसी को विभूतिवान् बना सके । इसी आधार पर दैवी अनुग्रह भी आकर्षित किए जाते हैं । वृक्षों का चुम्बकत्व बादलों को अपनी ओर खींचता है और उन्हें पानी बरसाने के लिए विवश करता है । धातुओं की खदानें भी इसी आधार पर बनती और बढ़ती हैं कि जमा हुआ धातु भण्डार अपनी आकर्षण क्षमता से दूर-दूर तक फैले हुए सजातीय कणों को खींचता रहता है और उनके खिंच-खिंचकर जमा होते रहने से खदान का आकार, भण्डार बढ़ाता है । फूल खिलता है तो भौंरे प्रशंसा करने, मधुमक्खी याचना करने और तितली शोभा बढ़ाने के लिए अनायास ही जा पहुँचती हैं, यही बात सिद्धान्ततः आत्मिक प्रगति की दिशा में अक्षरशः लागू होती है । साधक की पात्रता का विकास जिस अनुपात से होता है । उसी क्रम में उसका वर्चस्व बढ़ता चला जाता है । इन दिव्य उपलब्धियों का उद्गम अन्तःक्षेत्र में भी है और व्यापक ब्रह्म सत्ता से भी अजस्र अनुग्रह बरसते हैं । दोनों ही क्षेत्रों की उपलब्धियों से साधक निहाल होता है । इतने पर भी मूल तत्व जहाँ का तहाँ है । जो पाया है उसका मूल्य चुकाया ही जाना चाहिए ।

भौतिक क्षेत्र में पुरुषार्थ और उनके प्रतिफल का कर्म और भाग्य का सिद्धान्त पग-पग पर चरितार्थ होता है । पुरुषार्थी सफलता पाते और अन्य शेखचिल्ली कल्पनाओं के पंख लगाकर कल्पना लोक में उड़ते रहते हैं । आत्मिक क्षेत्र में प्रगति प्रदान करने वाला पुरुषार्थ तपश्चर्या ही है । गायत्री महाशक्ति की उपासना करने वालों के आत्मिक विभूतियों को प्राप्त करने के लिए उपयुक्त पुरुषार्थ करने का सिद्धान्त सहज ही समझ में आ सकता है, यदि वे यह समझ सकें कि आत्मिक पुरुषार्थ का नाम तपश्चर्या है । इसी मार्ग पर चलते हुए प्राचीन काल के महान आत्मवेत्ता उच्चस्तरीय सफलताएँ प्राप्त कर सकने में सफल हुए हैं । भगीरथ का गंगावतरण, पार्वती का शिव वरण तप साधना से ही सम्भव हो सका था । तपस्वी दधीचि की अस्थियों से ही व्यापक असुर साम्राज्य को ध्वस्त करने वाला वज्र बना । ध्रुव को परम पद तप से ही मिला । सप्त ऋषियों को उच्चस्तरीय गरिमा इसी आधार पर प्राप्त हुई । विश्वामित्र ने इसी शक्ति के आधार पर नई दुनिया बनाने का साहस किया था । परशुराम का तप ही उनके कुठार के रूप संसार भर के अनाचार से लड़ सकने की क्षमता बनकर प्रकट हुआ था । शृंगी ऋषि के तप बल से ही उनकी मन्त्र शक्ति इतनी समर्थ हो सकी कि उनके आचार्यत्व में किया गया दशरथ का पुत्रेष्टि यज्ञ सार्थक हो सका । मध्यकाल में भी भगवान बुद्ध से लेकर इसी सदी के योगी अरविन्द तक की परम्परा में तपश्चर्या ही प्रधान रही है ।

असुर वर्ग की क्षमताएँ भी तपश्चर्या के आधार पर ही उभरी थीं । पुराण साक्षी है कि हिरण्यकश्यप, रावण, कुम्भकरण, मेघनाद, वृत्तासुर, भस्मासुर, सहस्रबाहु असुरों ने प्रचण्ड सामर्थ्य, तप के बल पर ही प्राप्त की थी । भले ही वे उन सामर्थ्यों का सुनियोजन न कर पाये हों । गृहस्थ जीवन में रहते हुए कितने ही नर-नारी तप साधना के सहारे उच्चस्तरीय आत्म-शक्ति का सम्पादन कर सके हैं । गान्धारी की नेत्र शक्ति, संजय की दिव्य, कुन्ती की देव सन्तान, सुकन्या का पति की वृद्धता निवारण, सावित्री का यम संघर्ष, अनुसूया द्वारा तीनो देवों को बाल स्वरूप जैसे घटनाक्रमों में तप की क्षमता ही उभरती हुई दिखाई पड़ती है । लोक हित के अनेक महत्त्वपूर्ण कार्य कर सकने वाले महामानवों में विलक्षण क्षमता का विकास साधना शक्ति के सहारे ही हो सका था । चाणक्य, समर्थ रामदास,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गुरु नानक, ज्ञानेश्वर, शंकराचार्य, रामकृष्ण परमहंस आदि के द्वारा लोकहित के जो महत्त्वपूर्ण काम बन पड़े, उससे उनके तपस्वी जीवन की गरिमा प्रकट होती है । तप साधना के स्वरूप भिन्न-भिन्न हो सकने पर उन सबमें, व्यक्तित्व को पवित्र, परिष्कृत, और प्रखर बनाने वाली कष्टसाध्य जीवनयापन प्रक्रिया का समावेश तो निश्चित रूप से ही रहेगा । सरलतापूर्वक, स्वल्प श्रम में पूजा-पाठ करके गायत्री का अनुग्रह और आलोत्कर्ष का लाभ किसी को भी नहीं मिल सका है । भगवद् भक्ति भावुकता मात्र नहीं है । जीवनयापन की रीति-नीति में आदर्शवादियों के लिए कष्ट सहन करने की नीति का समावेश किए बिना उपासना का मूल प्रयोजन पूरा ही नहीं होता ।

सामान्य व्यक्तियों में स्वार्थ परायणता, लोक-लालसा और विषय तृष्णा ही छायी रहती है, जबकि महामानव दैवी परम्पराओं को इस प्रखरता के साथ अपनाते हैं कि उसके सम्मुख पशुता को परास्त होते और पलायन करते ही देखा जा सकता है । स्वार्थ और परमार्थ के संघर्ष में कौन विजयी होता है ? पशु और देवता में से कौन जीतता है ? उसका उत्तर इसी बात पर निर्भर है कि मानवी श्रमशीलता अपना समर्थन और योगदान किस पक्ष को प्रदान करती है । इस सन्दर्भ में धर्म युद्ध होना सुनिश्चित है । उस धर्म युद्ध में जिसको जितना शौर्य, साहस एवं त्याग, बलिदान प्रस्तुत करना पड़े, उसे उसी स्तर का तपस्वी कहा जा सकता है । जिसने जितनी तप शक्ति अर्जित की समझना चाहिए । वह आत्मिक प्रगति के लक्ष्य की ओर उतना ही आगे बढ़ा, महाप्रज्ञा का अनुदान उसे उतना ही मिला ।

आत्मिक प्रगति का जिन्हें महत्त्व समझना हो उन्हें उस उपलब्धि का उचित मूल्य चुकाने का साहस उत्पन्न करना चाहिए । सिद्धियाँ सदा ही पुरुषार्थियों को प्राप्त रही हैं । विजयश्री शूरवीरों के ही हिस्से में आयी है । आध्यात्मिक क्षेत्र का शौर्य साहस-पौरुष पराक्रम तप साधना के रूप में ही जाना जाता है । यहाँ एक बात पूरी तरह स्मरण रखी जानी चाहिए कि काया अकारण कष्ट देने को नहीं । उच्चस्तरीय आदर्शों के परिपालन में शारीरिक और मानसिक कष्ट सहना आवश्यक है । इसी को प्रसन्नतापूर्वक स्वीकार करना तप साधन कहलाता है । गायत्री की कृपा इससे कम में नहीं मिलती ।

शक्ति-उपासना और मानव जीवन में सक्रियता

ब्रह्म की सक्रिय अवस्था का नाम ही शक्ति है । जिस प्रकार उष्णता अग्नि से अभिन्न है, उसी प्रकार शक्ति भी ब्रह्म से अभिन्न है । माया, महामाया, मूल प्रकृति, अविद्या, विद्या, महेश्यरी, आदि शक्ति, आदिमाया, पराशक्ति, परमेश्वरी, जगदीश्वरी इत्यादि 'शक्ति' के ही पर्यायवाची हैं । नवदुर्गा काली, अष्टलक्ष्मी, नवशक्ति देवी आदि एक पराशक्ति' की ही अभिव्यक्तियाँ हैं । महालक्ष्मी, महासरस्वती और महाकाली, शक्ति के तीन व्यक्त स्वरूप हैं ।

जिसे अंग्रेजी में 'नेचर', कहते हैं, यह व्याकृत अथवा व्यक्त 'प्रकृति' है । मूल प्रकृति अव्याकृत अथवा अव्यक्त है । यही इस भेद-रूप जगत का बीज है । मूल प्रकृति अथवा 'अव्यक्त' में जड तथा चेतन अभिन्न रूप से रहते हैं । अव्यक्त के अन्दर चेतन शक्ति अव्याकृत रूप से ही रहती है । सत, रज, तम के द्वारा शक्ति अपना कार्य करती है । इस स्थूल जगत की सृष्टि के लिए आकाश, वायु, तेज, अप (जल) और पृथ्वी, ये पाँच तत्व अथवा पंच महाभूत उसके साधन हैं । पृथ्वी, जल, अग्नि वायु आकाश, मन, बुद्धि और अहंकार मिल कर जड़ अथवा अपरा प्रकृति कहलाते हैं । यह निम्न श्रेणी की है, अपवित्र है, खराबी पैदा करती है और स्वयं संसार के लिए बन्धन रूप है । परा-प्रकृति विशुद्ध है । वह स्वयं आत्मा रूप है, क्षेत्रज्ञ है । वही जीवन को धारण करने वाली है । यह समस्त जगत के भीतर प्रवेश करके उसे धारण किए हुए है । इसे चैतन्य प्रकृति भी कहते हैं ।

शक्ति ही सब कुछ है । शक्ति के बिना हम न सोच सकते हैं, न बोल सकते हैं, न हिल-डुल सकते हैं, न देख सकते हैं, न सोच-समझ सकते हैं । शक्ति के बिना हम न तो खड़े हो सकते हैं और न चल फिर सकते हैं । फल, अनाज, शाक, भाजी, दाल, चीनी आदि सब शक्ति से ही उत्पन्न होते हैं । इन्द्रिय और प्राण भी शक्ति के ही परिणाम हैं । विद्युत शक्ति, आकर्षण शक्ति तथा चिन्तन शक्ति आदि सभी शक्ति के व्यक्त रूप हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समस्त विश्व के अन्दर रहने वाली निर्विकार सत्ता का नाम शिव है । उनकी शक्ति के अनन्त रूप हैं, जिनमें प्रधान हैं, चित्, आनन्द, इच्छा, ज्ञान और क्रियाशक्ति । तत्व छत्तीस माने गए हैं । जब शक्ति चित् रूप में अपना कार्य करती है तो उस समय निर्विशेष ब्रह्म विशुद्ध अनुभवमय हो जाता और इसी को शिव-तत्व कहते हैं । आनन्द शक्ति के व्यापार से जैसे ही जीवन का संचार होता है, वैसे ही ब्रह्म की दूसरी अवस्था हो जाती है, जिसे शक्ति तत्व कहते हैं । अपने अभिप्राय को व्यक्त करने की इच्छा से ही तीसरी अवस्था की प्राप्ति होती है । इसके अनन्तर ब्रह्म की ज्ञानावस्था होती है । यह है ईश्वर तत्व, जिसमें जगत को उत्पन्न करने की इच्छा और शक्ति करती रहती है । इसके आगे की अवस्था में इच्छा और ज्ञेय का भेद उत्पन्न हो जाता है । यहाँ से क्रिया का प्रारम्भ हो जाता है । यही शुद्ध विद्या की अवस्था है । इस प्रकार से पाँच अलौकिक तत्व 'शिव' की पंचधा शक्ति के अभिव्यक्त रूप हैं ।

शक्ति के उपासक इस जगत को ३६ तत्वों का बना मानते हैं । जिस प्रकार सांख्य इसे केवल २५ तत्वों से बना स्वीकार करता है । सांख्य के पुरुष के ऊपर शाक्त पंच कंचुक अर्थात पांच आवरण मानते हैं, जिनके नाम हैं—नियति, काल, राग, विद्या और कला । कला के ऊपर माया, शुद्ध विद्या, ईश्वर सदाशिव, शक्ति और शिव हैं । इस प्रकार ये २५ तत्वों के अतिरिक्त ११ तत्व और स्वीकार करते हैं ।

शक्ति की दो अवस्थाएँ होती हैं—शुद्ध साम्यावस्था और वैषम्यावस्था । पहली अवस्था वह है, जिसमें तीनों गुण—सत्व, रज, तम साम्यावस्था में स्थित रहते हैं । यह अवस्था प्रलय काल में होती है । उस समय असंख्य जीव अपने संस्कारों तथा अधिष्ठाता के साथ अव्यक्त अवस्था में रहते हैं । अधिष्ठाता का अर्थ है कर्म की अदृश्य शक्ति अथवा फल दायिनी शक्ति, जो कर्म के भीतर छिपी रहती है ।

प्रलय की अवधि समाप्त होने पर साम्यावस्थित शक्ति में स्पन्द अथवा स्फूर्ति होती है और वह इस लिए कि तिरोहित जीवों को अपने-अपने कर्मों का फल भोगने की इच्छा होती है । यही वैषम्यावस्था है । अब ब्रह्म सृष्टि को उत्पन्न करने के लिए बाध्य हो जाते हैं । उनके संकल्प मात्र से सृष्टि उत्पन्न हो जाती है साम्यावस्था में रजोगुण शुद्ध और शान्त रहता है, विकास अथवा सृष्टि से समय वह अशुद्ध एवं क्षुब्ध हो जाता है । सृष्टि के समय जब आदि शक्ति के अन्दर क्षोभ होता है तो तीनों गुण—सत्व, रज, तम व्यक्त हो जाते हैं । सत्व गुण प्रधान चैतन्य का नाम विष्णु है, जो ब्रह्म की संरक्षिका शक्ति है । रजोगुण प्रधान चैतन्य ब्रह्मा है, जो ब्रह्म की उत्पादिका शक्ति है । तमोगुण प्रधान चैतन्य शिव है, जो ब्रह्म की पुनःनिर्माण करने वाली अथवा संहारिका शक्ति है ।

जो व्यक्ति शक्ति के इस स्वरूप को समझकर साधना करता है उसे इसके द्वारा शक्ति अथवा ईश्वर प्राप्ति हो सकती है । साधना और अभ्यास पर्यायवाची शब्द हैं । सिद्धि का अर्थ है शक्ति अथवा पूर्णता की प्राप्ति । साधना का क्रम तब तक चलते रहना चाहिए जब तक साधक सिद्ध न हो जाय । साधक की योग्यता, स्वभाव, रुचि, ज्ञान तथा विकास के भेद से साधना में भेद होता है । अधिकारी पुरुष की प्रकृति के अनुसार ही साधना में अन्तर पड़ता है । इस प्रकार साधना के चार भेद माने गए हैं । सर्वोपरि भाव—ब्रह्म-भाव है, जिसमें साधक भावना करता है कि सब कुछ ब्रह्म ही है और जीवात्मा परमात्मा से अभिन्न है । इसे अद्वैत भाव कहते हैं । इसके उपरान्त ऊँची श्रेणी के योगियों और भक्तों का ध्यान भाव आता है, जिसमें भक्त अथवा योगी अपने शरीर के भिन्न-भिन्न चक्रों में अपने इष्टदेव का ध्यान करता है । इससे नीचे का भाव वह है, जिसमें केवल जप, प्रार्थना और स्तुति आदि से सम्बन्ध रहता है । चौथी अथवा सबसे निम्न श्रेणी का भाव वह है, जिसमें केवल बाह्य पूजा से ही सम्बन्ध है ।

शाक्त अथवा शक्ति का उपासक अपने प्रत्येक मनुष्योचित कर्म को यज्ञ और पूजा का एक पवित्र कार्य बना देता है । खाते-पीते, उठते-बैठते अथवा अन्य किसी भी शारीरिक क्रिया को करते समय वह कहता ही नहीं, अपितु मानता और विश्वास करता है कि उसके द्वारा और उसके अन्दर 'शक्ति' ही सब कुछ करा रही है । वह अपने जीवन और उसकी प्रत्येक क्रिया को इस रूप में देखता है, मानो प्रकृति में जो ईश्वर की क्रिया हो रही है, उसी का यह भी एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंग है—'शक्ति' ही मनुष्य के रूप में व्यक्त होकर यहाँ अपना कार्य कर रही है । इस प्रकार की भावना से प्रेरित होकर कर्म करने से अकर्म की ओर प्रवृत्ति ही नहीं होती और यदि पहले से कोई बुरा अभ्यास होता है तो, वह स्वयं जाता रहता है । जो इस प्रकार बनने का प्रयत्न करते हैं, इन्द्रियों को वश में करते हैं, सच्चे हृदय से माता के नाम की रट लगाते हैं, उन पर आदि शक्ति की अवश्य की कृपा होती है ।

आत्म शुद्धि की साधना

अपने कर्त्तव्य से दूसरों के अधिकार को सुरक्षित रखना धर्म है, अर्थात् सेवा के लिए सभी को अपना समझो, किन्तु अपनी प्रसन्नता के लिए केवल सर्वसमर्थ भगवान को ही अपना मानो । ऐसी भावना दृढ़ होने पर एक विचित्र अनुपम बल आ जाता है, जिससे प्राणी कर्त्तव्यपरायण होकर अपने ही में अपने परम प्रेमास्पद भगवान को अनुभव कर लेता है ।

मन के दूषित हो जाने पर ही प्राणी दुःखी होता है । पराये दोष न देखने से, किसी का बुरा न चाहने से, संसार को असत्य समझने से, प्राप्त परिस्थिति का सदुपयोग करने से मन शुद्ध हो जाता है । मन के शुद्ध हो जाने पर व्यर्थ चिन्तन मिट जाता है । व्यर्थ चिन्तन मिटते ही सार्थक चिन्तन अर्थात् स्मरण, चिन्तन, ध्यान, स्वतः होने लगता है । अतः मन को शुद्ध करने के लिए प्राणी को सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए । इसमें हार स्वीकार करना भूल है, क्योंकि मन को शुद्ध करने के लिए प्रत्येक प्राणी सर्वदा स्वतन्त्र है । परतन्त्रता केवल उपभोग में है, उपार्जन में नहीं ।

वर्तमान गतिशील क्षण भंगुर जीवन को सत्य समझना प्रमाद है, जिसे मिटाना चाहिए । प्रत्येक कार्य भगवत नाते, योग्यता, ईमानदारी तथा परिश्रमपूर्वक करते रहना चाहिए और कार्य के अन्त में सहज भाव से चलते-फिरते उठते-बैठते हृदय से प्रेम पात्र को पुकारना चाहिए । यही सच्चा भजन है ।

विचारशील उसी का स्मरण करते हैं, जिसे प्राप्त करना है और सेवा उसी की करते हैं, जिससे छुटकारा पाना है ।

अपने को शरीर से असंग कर प्रेमी बन जाओ । शरीर से मिलाकर तो प्रत्येक प्राणी किसी न किसी का प्रेमी बना ही रहता है, परन्तु उसकी प्रीति की वही दशा होती है जो नदी के शुद्ध जल की दशा किसी गड्ढे में आबद्ध हो जाने से होती है । अतः प्रीति जैसे अलौकिक प्रवाह को किसी वस्तु, अवस्था एवं परिस्थिति में आबद्ध मत होने दो । प्रीति का प्रवाह जाग्रत होते ही मन, इन्द्रिय आदि सभी अपने-अपने स्वभाव को त्याग कर प्रीतिमय बन जाते हैं, परन्तु यह तभी सम्भव है जब हम स्थूल, सूक्ष्म कारण तीनों शरीरों से अपने को असंग कर प्रेमी बन जायें । शरीर से असंग होने के लिए विचार के अतिरिक्त किसी अभ्यास की आवश्यकता नहीं है । विचाररूपी सूर्य उदय होते ही देह-अभिमानरूपी अन्धकार सदा के लिए मिट जाता है ।

स्मरण करने योग्य केवल वही है, जिसे सदैव के लिए प्राप्त करना है । जिसे प्राप्त करना है वह वास्तव में सर्वदेश, सर्वकाल में सर्वत्र, सर्व रूप से विद्यमान है, अथवा यों कहो कि सब कुछ उससे ही प्रकाशित है उसका स्मरण करते ही जगत का विस्मरण हो जाता है ।

जिससे देश-काल की दूरी नहीं होती, उससे केवल न जानने की दूरी होती है । न जानने की दूरी यथार्थ विचार से ही मिटती है, किसी अभ्यास से नहीं ।

अभ्यास तो केवल अपनी बनायी हुई आदतों तथा इच्छाओं के परिवर्तन के लिए किया जाता है । भला, बुरा, ऊँचा, नीचा प्राणी अपने को इच्छाओं में आबद्ध करके ही मानता है । प्राणी वास्तव में तत्व में महान तथा पवित्र है । प्रेम-पात्र का नित्य सखा एवं साथी है । अर्थात् स्वभाव से ही निर्विकार है । अतः अपनी इच्छा तथा आदतों से मुक्त होना ही संसार से मुक्त होना है ।

मन की शुद्धि अशुद्ध संकल्पों के त्याग करने मात्र से ही हो जाती है । उसके लिए किसी बाह्य अभ्यास की आवश्यकता नहीं होती । बाह्य अभ्यास उन्हीं प्राणियों को करना पड़ता है, जो अशुद्ध संकल्पों को सहज भाव से मिटा नहीं सकते ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अशुद्ध संकल्प मिटने पर विवेक उत्पन्न होता है, जिससे मोह की निवृत्ति हो जाती है । मोह मिट जाने पर स्वतः अनुराग की गंगा लहराने लगती है ।

प्रथम आगे-पीछे के व्यर्थ संकल्पों का त्याग करो उसके पश्चात अशुद्ध संकल्प मिटा दो । फिर शुद्ध संकल्पों द्वारा वर्तमान कार्य कर डालो । कार्य के अन्त में निःसंकल्पता आ जायेगी । ज्यों-त्यों निःसंकल्पता स्थायी होती जायेगी, छिपी हुई शक्ति का विकास एवं विवेक उत्पत्ति स्वतः होती जायेगी । अतः निःसंकल्पता प्राप्त करना ही प्राणी का पुरुषार्थ है ।

उनकी अद्वैतुकी कृपा का विधान अलौकिक है । उसे वही प्रेमी जानते हैं जो सब प्रकार से उनके होकर अचिन्त्य हो गए हैं । उसमें बुद्धि के व्यापार के लिए कोई स्थान नहीं है । उनके हो जाने का स्वाभिमान ही उनका परम पुरुषार्थ है । उनका होने पर प्राणी अपना मूल्य संसार से अधिक कर लेता है और अपने से उनका मूल्य अधिक मान लेता है, अर्थात् उनकी कृपा का भरोसा ही उसका मुख्य साधन बन जाता है ।

अभ्यास उन्हीं प्राणियों को करना पड़ता है जो अपने से संसार का मूल्य अधिक मानते हैं । जिन्होंने सरल विश्वास तथा गुरुजनों की कृपा से उनके हो जाने का महत्त्व भली-भाँति समझ लिया है, उनके लिए कोई अभ्यास शेष नहीं रहता । ऐसा कौन-सा दोष है जो उनका हो जाने पर मिट नहीं जाता ? ऐसा कौन-सा गुण है जो उनकी कृपा से आ नहीं जाता ? यह भली भाँति समझ लो कि अभ्यास का बोझ उन्हीं को उठाना है, जिन्होंने वस्तुओं के बदले में अपने को बेच दिया है ।

तत्व साधना एक महत्त्वपूर्ण सूक्ष्म विज्ञान

योग विद्या में तत्व साधना का अपना महत्त्व एवं स्थान है । पृथ्वी आदि पाँच तत्वों से ही समस्त संसार बना है । विद्युत आदि जितनी भी शक्तियाँ इस विश्व में मौजूद हैं, वे सभी इन पंच तत्वों की ही अन्तर्हित क्षमता है । आकृति-प्रकृति की भिन्नता युक्त जितने भी पदार्थ इस संसार में दृष्टिगोचर होते हैं, वे सब इन्हीं तत्वों के योग-संयोग से बने हैं ।

न केवल शरीर की वरन् मन की भी बनावट तथा स्थिति में इन्हीं पंच तत्वों की भिन्न मात्रा का कारण है । शारीरिक, मानसिक दुर्बलता एवं रुग्णता में भी प्रायः इन तत्वों की ही न्यूनाधिकता पर्दे के पीछे काम करती रहती है । शरीर विश्लेषणकर्त्ता यों रासायनिक पदार्थों की न्यूनाधिकता अथवा अमुक-जीवाणुओं की उपस्थिति-अनुपस्थिति को शारीरिक असन्तुलन का कारण मानते हैं, पर सूक्ष्मदर्शियों की दृष्टि में तत्वों का असन्तुलन ही इन समस्त सम्भ्रान्तियों का प्रधान कारण होता है ।

किस तत्व की शरीर में, अथवा मनःक्षेत्र में कमी है, उसकी पूर्ति के लिए क्या किया जाय, इसका पता लगाने के लिए तत्व विज्ञानी आध्यात्मवेत्ता किसी व्यक्ति में क्या रंग कम पड़ रहा है, क्या घट रहा है, यह ध्यानस्थ होकर देखते हैं और औषधि उपचारकर्त्ताओं की तरह जो कमी पड़ी थी, जो विकृति बढ़ी थी, उसे उस तत्व प्रधान आहार-विहार में अथवा अपने में उस तत्व को उभारकर उसे अनुदान रूप, रोगी या अभावग्रस्त को देते हैं । इस तत्व उपचार का लाभ सामान्य औषधि चिकित्सा की तुलना में कहीं अधिक होता है ।

फिल्टरों से युक्त नियोनआर्क लेम्प, लेसर किरणों के उपकरण, एक्सरेज की विशिष्ट धाराएँ, क्वाण्टा किरणें, रिऐक्ट वाईजेक्शन इनरगो थ्रैपी, इनर्जेटिक्स, क्वाण्टम इलेक्ट्रॉनिक्स आदि का प्रस्तुतीकरण सूर्य किरणों की विशेष रंग धाराओं का विश्लेषण करके ही सम्भव हो सका है । अब यह विज्ञान दिन-दिन महत्त्वपूर्ण स्तर पर उभरता चला आ रहा है और लगता है रंगों के भले-बुरे प्रभावों को अधिक अच्छी तरह जानना और उनका उपयुक्त प्रयोग करके लाभान्वित होना, मनुष्य के लिए निकट भविष्य में ही सम्भव हो जायेगा । रंग यों देखने में मात्र दृष्टि आकर्षण एवं शोभा सज्जा के लिए काम आते दीखते हैं, पर वस्तुतः उनकी गरिमा और क्षमता कहीं अधिक है । सामान्य रंगाई भी अपना प्रभाव रखती है, फिर सूक्ष्म रूप से काम करने वाली तत्वों से सम्बन्धित रंग शक्ति का तो कहना ही क्या ।

लाल रोशनी का उत्तेजनात्मक प्रभाव असंदिग्ध है प्रातःकाल और सायंकाल जब सूर्योदय और सूर्यास्त की लालिमा आकाश में छायी रहती है तब पेड़-पौधे,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जलचर और पक्षिवृन्द अधिक क्रियाशील और बढ़ते विकसित होते पाये जाते हैं । वनस्पंतियों की वृद्धि किस समय, किस क्रम से होती है, इसका लेखा-जोखा रखने वालों का निष्कर्ष यही है कि प्रातः, सायंकाल के थोड़े से समय में वे जितनी तीव्र गति से बढ़ते हैं । उतने अन्य किसी समय नहीं । मछलियों की उछल-कूद इसी समय सबसे अधिक होती है । पक्षियों का चहचहाना जितना दोनों संध्या काल में होता है, उतना चौबीस घण्टों में अन्य किसी समय नहीं होता । इसी प्रकार पीला, हरा, बेंगनी, गुलाबी आदि अन्य रंगों का अपना-अपना प्रभाव होता है । रंगों की शोभा सर्वविदित है, पर उनकी सूक्ष्म शक्ति की जानकारी बिरलों को ही होती है ।

तत्वों के रंगों के सम्बन्ध में पाश्चात्य वैज्ञानियों की मान्यता यह है कि आकाश तत्व का रंग नीला, अग्नि का लाल, जल का हरा, वायु का पीला और पृथ्वी का भूरा, मटमैला सफेद है । शरीर में जिस तत्व की कमी पड़ती है या बढ़ोत्तरी होती है उसका अनुमान अंगों के अथवा मलों के स्वाभाविक रंगों में परिवर्तन देखकर लगाया जा सकता है । त्वचा तो नस्ल के हिसाब से काली, पीली, सफेद या लाल रहती है, पर उसके पीछे भी रंगों के उतार-चढ़ाव झाँकते रहते हैं । साधारण स्थिति में त्वचा का जो रंग था, उसमें तत्वों के परिवर्तन के अनुपात से परिवर्तन आ जाता है । यह हेर-फेर हाथ-पैरों के नाखूनों में, जीभ में, आँख की पुतलियों में अधिक स्पष्टता के साथ देखा जा सकता है । इसलिए शरीर में होने वाले तत्वों की न्यूनाधिकता को इन्हें देखकर आसानी से समझा जा सकता है । मल-मूत्र में भी यह अन्तर दिखाई पड़ता है । सन्तुलित स्थिति में पेशाब, साधारण स्वच्छ जल की तरह होगा, पर यदि कोई बीमारी होगी तो उसका रंग बदलेगा । डॉक्टर मल-मूत्र, रक्त आदि का रासायनिक विश्लेषण करके अथवा उनमें पाये जाने वाले विषाणुओं को देखकर रोग का निर्णय करता है । तत्ववेत्ता अपने ढंग से जब तत्व चिकित्सा करते हैं तो यह पता लगाते हैं कि शरीर के आधार पंच तत्वों में से किसकी कितनी मात्रा घटी-बढ़ी है । यह जानने के लिए उन्हें रंगों का शरीर में जो हेर-फेर हुआ है उसे देखना पड़ता है ।

तत्ववेत्ता मनःशास्त्रियों को अपनी दिव्यदृष्टि इतनी विकसित करनी पड़ती है कि मनुष्य के चेहरे के इर्द-गिर्द विद्यमान तेजोवलय की आभा को देख सकें और उसमें रंगों की दृष्टि से क्या परिवर्तन हुआ है, इसे समझ सकें ।

मानवीय विद्युत की ऊर्जा शरीर के हर अंग में रहती है और वह बाह्य जगत से सम्बन्ध मिलाने के लिए त्वचा की पर्तों में अधिक सक्रिय रहती है । शरीर का कोई भी अंग स्पर्श किया जाय, उसमें तापमान की ही तरह विद्युत ऊर्जा का अनुभव किया जायेगा । यह ऊर्जा सामान्य बिजली की तरह उतना स्पष्ट झटका नहीं मारती या मशीनें चलाने के काम नहीं आती, फिर भी अपने कार्यों को सामान्य बिजली की अपेक्षा अधिक अच्छी तरह सम्पन्न करती है ।

मस्तिष्क स्पष्टतः एक जीता-जागता बिजलीघर है । समस्त काया में बिखरे पड़े अगणित तन्तुओं में सम्वेदना सम्बन्ध बनाये रहने, उन्हें काम करने की प्रेरणा देने में मस्तिष्क को भारी मात्रा में बिजली खर्च करनी पड़ती है । उसका उत्पादन भी खोपड़ी के भीतर ही होता है । अधिक समीपता के कारण अधिक मात्रा में बिजली उपलब्ध हो सके; इसीलिए प्रकृति ने महत्त्वपूर्ण ज्ञानेन्दियाँ सिर के साथ जोड़कर रखी हैं । आँख, कान, नाक, जीभ जैसी महत्त्वपूर्ण ज्ञानेन्द्रियाँ गर्दन से ऊपर ही हैं । इस शिरो भाग में सबसे अधिक विद्युत मात्रा रहती है इसलिए तत्वदर्शी आँखें हर मनुष्य के सिर के इर्द-गिर्द प्रायः डेढ़ फुट के घेरे में एक तेजोवलय का प्रकाश लाल, गोल चेहरा चमकता देख सकती हैं । देवताओं के चित्रों के उनके चेहरे के इर्द-गिर्द एक सूर्य जैसा प्रकाश-गोलक बिखरा दिखाया जाता है । इस अलंकार चित्रण में तेजोवलय की अधिक मात्रा का आभास मिलता है । अधिक तेजस्वी और मनस्वी व्यक्तियों में स्पष्टतः यह मात्रा अधिक होती है, उसी के सहारे वे दूसरों को प्रभावित करने में समर्थ होते हैं ।

तेजोवलय में इन्द्र धनुष जैसे अलग-अलग रेखाओं वाले तो नहीं पर मिश्रित रंग घुले रहते हैं । उनका मिश्रण मनः क्षेत्र में काम करने वाले तत्वों की न्यूनाधिकता के हिसाब से ही होता है । तत्वों की सघनता के हिसाब से रंगों का आभास इस तेजोवलय की परिधि में पाया जाता है । पृथ्वी सबसे स्थूल और भारी है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके बाद क्रमशः जल, अग्नि, वायु और आकाश का नम्बर आता है । तेजोवलय की स्वाभाविक स्थिति में रंगों की आभा भी इसी क्रम से चलती है ।

स्थूल शरीर—स्थूल पंच तत्वों से बना है । आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी यह पाँच तत्व सर्वविदित हैं । काय-कलेवर में विद्यमान रक्त, माँस, अस्थि, त्वचा तथा विभिन्न अंग-प्रत्यंग इन्हीं के द्वारा बने हैं । सूक्ष्म शरीर में तन्मात्राओं के रूप में यह तत्व भी सूक्ष्म हो जाते हैं । आकाश की तन्मात्रा—शब्द, वायु का—स्पर्श अग्नि का—रूप, जल का—रस और पृथ्वी की गन्ध है । सूक्ष्म शरीर की संरचना अग्नि, जल आदि से नहीं वरन् सूक्ष्म तन्मात्राओं से हुई है, फिर भी उन्हें तत्व तो कह ही सकते हैं । सूक्ष्म शरीर की नाड़ियों में बहने वाले प्राण प्रवाह में ज्वार-भाटे की तरह तत्व तन्मात्राओं के उभार आते रहते हैं । लहरों की तरह उनमें से एक आगे बढ़ता है, तो दूसरा उसका स्थान ग्रहण कर लेता है । अन्तः क्षेत्र में कब कौन-सा तत्व बढ़ा हुआ है ? यह पता साधना द्वारा मनःस्थिति लगा सकती है । हर तत्व की अपनी विशेषता है । उसी के अनुरूप व्यक्तित्व में भी उतार-चढ़ाव आते रहते हैं । प्रकृति और सामर्थ्य में हेर-फेर होता रहता है । सूक्ष्म शरीर में कब कौन-सा तत्व बढ़ा हुआ है और किस तत्व की प्रबलता के समय क्या करना अधिक फलप्रद होता है ? यदि इस रहस्य को जाना जा सके तो किसी महत्त्वपूर्ण कार्य का आरम्भ उपयुक्त समय पर किया जा सकता है और सफलता का पक्ष अधिक सरल एवं प्रशस्त बनाया जा सकता है ।

पृथ्वी तत्व का केन्द्र मल द्वार और जननेंद्रिय के बीच है । इसे मूलाधार चक्र कहते हैं । जल तत्व का केन्द्र मूत्राशय की सीध में—पेडू पर है, इसे स्वाधिष्ठान चक्र कहते हैं । अग्नि तत्व का निवास—नाभि और मेरुदण्ड के बीच में है इसे मणिपूर चक्र कहते हैं । वायु केन्द्र हृदय प्रवेश के अनाहत चक्र में है । आकाश तत्व का विशेष स्थान कण्ठ में है—इसे विशुद्ध चक्र कहा जाता है ।

कब किस तत्व की प्रबलता है, इसकी परख थोड़ा सा साधना अभ्यास होने पर सरलतापूर्वक की जा सकती है । पृथ्वी तत्व का रंग पीला, जल का श्वेत, अग्नि का लाल, वायु का हरा और आकाश का नीला है । आँखें बन्द करने पर अपने भीतर एवं बाहर जो रंग अधिक मात्रा में बिखरा दिखाई पड़े तब उसके अनुसार तत्व की प्रबलता आँकी जा सकती है । जिह्वा इन्द्रिय को सधा लेने पर मुँह से स्वाद बदलते रहने की प्रक्रिया को समझकर भी तत्वों की प्रबलता जानी जा सकती है । पृथ्वी तत्व का स्वाद मीठा, जल का कसैला, अग्नि का तीखा, वायु का खट्टा और आकाश का खारी होता है । गुण एवं स्वभाव की दृष्टि से यह वर्गीकरण किया जाय तो अग्नि और आकाश-सतोगुण-वायु और जल को रजोगुण तथा पृथ्वी को तमोगुण कहा जा सकता है ।

व्यक्ति की त्वचा का रंग—चेहरे पर उड़ता हुआ तेजोवलय, उसकी स्वाद सम्बन्धी अनुभूतियाँ—रंग विशेष की पसन्दगी को कुछ परख कर यह जाना जा सकता है कि उसके शरीर में किस तत्व की न्यूनता एवं किस की अधिकता है । जिसकी न्यूनता हो उसे पूरा करने के लिए उस रंग के वस्त्रों का उपयोग, कमरे की पुताई, खिड़कियों के पर्दे, उसी रंग के काँच में कुछ समय पानी रखकर पीने की प्रक्रिया अपनाई जाती है । आहार में अभीष्ट रंग के फल आदि का प्रयोग कराया जाता है । रंगीन बल्ब की रोशनी पीड़ित भाग या समस्त अंग पर डाली जाती है, प्रयोक्ता अपने शरीर में अमुक तत्व आवश्यकतानुसार बढ़ाने और उसका प्रयोग जरूरतमन्दों पर करने की साधना भी करते है । यह साधना उसकी आवश्यकता भी पूरी करती है और किसी अन्य की कठिनाई हल करने में भी इसका प्रयोग होता है ।

तत्व साधना आध्यात्म विज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण विधान है । इस लुप्त प्रायः विद्या का यदि विकास हो सके तो मनुष्य की शारीरिक और मानसिक कठिनाइयों के समाधान का एक नया मार्ग खुल सकता है ।

सार्थक एवं समग्र जीवन साधना

पदार्थ से शरीर और शरीर से आत्मा का महत्त्व अधिक है । इसी प्रकार समृद्धि सम्पन्नता का, प्रगति और योग्यता का, आत्मिक प्रखरता, प्रतिभा का स्तर भी क्रम से, एक से एक सीढ़ी ऊँचाई का समझा जा सकता है । आन्तरिक आस्थाएँ ही वे विभूतियाँ हैं, जो व्यक्ति के चिन्तन, चरित्र और व्यवहार को परिष्कृत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करती हैं । व्यक्तित्व को प्रखर, प्रामाणिक एवं प्रतिभावान बनाती हैं । इसी आधार पर वे क्षमताएँ उभरती हैं, जो अनेकानेक सफलताओं की उद्‌गम स्रोत हैं ।

आत्मबल के आधार पर अन्य सभी बल हस्तगत किए जा सकते हैं । इसी के आधार पर उपलब्धियों का सदुपयोग बन पड़ता है । परिस्थितियों की प्रतिकूलता रहने पर भी उन्हें व्यक्तित्व की उत्कृष्टता के आधार पर अनुकूल बनाया जा सकता है । संसार के इतिहास में ऐसे अगणित व्यक्ति हुए हैं, जिनकी प्रारम्भिक परिस्थितियाँ गई-गुजरी थीं । निर्वाह के साधनों तक की कमी पड़ती थी, फिर प्रगति के सरंजाम जुट सकना और भी कठिन, लगभग असम्भव दीख पड़ता था । इतने पर भी वे व्यक्तित्व की प्रामाणिकता के आधार पर सभी के लिए विश्वस्त एवं आकर्षक बन गए । उनका चुम्बकत्व व्यक्तियों, साधनों और परिस्थितियों को अनुकूल बनाता चला गया और वे अपने पुरुषार्थ के साथ उस सद्‌भाव का ताल-मेल बिठाते हुए दिन-दिन ऊँचे उठते चले गए और अन्ततः सफलता के सर्वोच्च शिखर तक जा पहुँचने में समर्थ हुए । ऐसे अवसरों पर व्यक्तित्व की उत्कृष्टता को ही श्रेय दिया जाता है इस उपलब्धि को ही आत्मबल का चमत्कार कहते हैं ।

इसके विपरीत ऐसे भी अनेकानेक प्रसंग सामने आते रहते हैं, जिनमें सभी अनुकूलताएँ रहने पर भी लोग अपनी दुर्बुद्धि के कारण दिन-दिन घटते और गिरते चले गए । पूर्वजों के कमाये धन को दुर्व्यसनों में उड़ा दिया । आलस्य और प्रमाद में ग्रसित रहकर अपनी क्षमताओं और सम्पदाओं को गलाते चले गए कई अनाचार के मार्ग पर चल पड़े और दुर्गति भुगतने के लिए मजबूर हुए । इसमें उनके मानस की गुण, कर्म, स्वभाव की निकृष्टता ने अनेक सुविधाएँ रहते हुए भी उन्हें असुविधा भरी परिस्थितियों तक पहुँचा दिया ।

चेतना की शक्ति संसार की सबसे बड़ी शक्ति है । मनुष्य ही रेल, जहाज कारखाने आदि बनाता है । विज्ञान के नित नये आविष्कार करता है । यहाँ तक कि धर्म और दर्शन, आचार और विचार भी उसी के रचे हुए हैं । ईश्वर को साकार रूप में कल्पना तथा स्थापना करना भी उसी का बुद्धि कौशल है । इस अनगढ़ धरातल को, सुविधाओं, सुन्दरताओं, उपलब्धियों से भरा-पूरा बनाना भी मनुष्य का ही काम है । यहाँ मनुष्य शब्द से किसी शरीर या वैभव को नहीं समझा जाना चाहिए । विशेषताएँ चेतना के साथ जुड़ी होती हैं । इसे भी प्रयत्नपूर्वक उठाया या गिराया जा सकता है । शरीर को बलिष्ठ या दुर्बल बना लेना प्रायः मनुष्य की अपनी रीति-नीति पर निर्भर रहता है । सम्पन्न और विपन्न भी लोग अपनी हरकतों से ही बनते हैं । उठना और गिरना अपने हाथ की बात है । मनुष्य को अपने भाग्य का निर्माता आप कहा जाता है । यहाँ व्यक्ति का मतलब आत्म चेतना से ही समझ जाना चाहिए । वही प्रगतिशीलता का उद्‌गम है । उसी क्षेत्र में पतन, पराभव के विषैले बीजांकुर भी जमे होते हैं । सद्‌गुणी लोग अभावग्रस्त परिस्थितियों में भी सुख-शान्ति का वातावरण बना लेते हैं । अन्तः चेतना के समुन्नत होने पर समूचा वातावरण, सम्पर्क क्षेत्र सुख शान्ति से भर जाता है । इसके विपरीत जिनका मानस दोष दुर्गुणों से भरा हुआ है, वे अच्छी भली परिस्थितियों में भी दुर्गति और अवगति का कठोर दुःख सहते हैं ।

वैभव अर्जित करने के अनेक तरीके सीखे और सिखाए जाते हैं । शरीर को निरोग रखने के लिए भी व्यायामशालाओं, स्वास्थ्य केन्द्रों से लेकर अस्पतालों तक की अनेक व्यवस्थाएँ देखी जाती हैं । औद्योगिक, वैज्ञानिक, शैक्षणिक, शासकीय प्रबन्ध भी अनेक हैं, पर ऐसी व्यवस्थाएँ कम ही कहीं दीख पड़ती हैं, जिनसे चेतना को परिष्कृत एवं विकसित करने के लिए सार्थक, समर्थ एवं बुद्धि संगत, सर्वोपयोगी आधार बन पड़ा हो ।

प्रज्ञायोग एक ऐसी ही विद्या है । इसे बोलचाल भी भाषा में "जीवन साधना" भी कहा जा सकता है । इसमें जप, ध्यान, प्राणायाम, संयम जैसे विधानों की व्यवस्था है, पर सब कुछ उतने तक ही सीमित नहीं है, उपासना में ध्यान धारणा स्तर के सभी कर्मकाण्ड आ जाते हैं । इसके साथ ही जीवन के हर क्षेत्र में मानवी गरिमा को उभारने और रुकावटें हटाने जैसे सभी पक्षों को जोड़कर रखा गया है । शरीर संयम, समय संयम, अर्थ संयम, विचार संयम इस धारा के अलग न हो सकने वाले अंग हैं । दुर्गुणों के, कुसंस्कारों के निराकरण पर जहाँ जोर दिया गया है, वहाँ यह भी अनिवार्य माना गया है कि अब की अपेक्षा अगले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिनों अधिक विवेकवान, चरित्रवान और पुरुषार्थ परायण बनने के लिए चिन्तन तथा अभ्यास जारी रखा जाय । वास्तव में यह समग्रता ही जीवन साधना की विशेषता है । साधक को कर्त्तव्य क्षेत्र में धार्मिकता, मान्यता क्षेत्र में आत्म-परायणता और आध्यात्म क्षेत्र में दूरदर्शी विवेकशीलता उत्कृष्ट आदर्शवाद को अपनाने के लिए कहा जाता है । इन सर्वतोन्मुखी दिशा-धाराओं में समुचित जागरूकता बरतने पर ही वह लाभ मिलता है, जिसे आत्म परिष्कार के नाम से जाना जाता है । यह हर किसी के लिए सरल, सम्भव और स्वाभाविक भी है ।

आत्म परिष्कार के अन्य उपाय भी हो सकते हैं, पर जहाँ तक प्रज्ञा परिवार के प्रयोगों का सम्बन्ध है, वहाँ यह कहा जा सकता है कि वह अपेक्षाकृत अधिक सरल, तर्क संगत और व्यवस्थित है । इस सन्दर्भ में अनेक अभ्यास रत अनुभवियों की साक्षी भी सम्मिलित हैं ।

आत्मिक प्रगति का महत्त्व समझा जाना चाहिए । व्यक्ति या राष्ट्र की उन्नति उसकी सम्पदा, शिक्षा, कुशलता आदि तक ही सीमित नहीं होती । शालीनता सम्पन्न व्यक्तित्व ही वह उद्‌गम होता है, जिसके आधार पर अन्यान्य प्रकार की प्रगतियाँ तथा व्यवस्थाएँ अग्रणी बनती हैं । समर्थता का केन्द्र बिन्दु यही है । इस विभूति के बल पर किसी भी उपयोगी दिशा में अग्रसर हुआ जा सकता है, किन्तु यदि आत्म बल का अभाव रहा तो संकीर्ण स्वार्थपरता ही छायी रहेगी और उसके रहते कोई ऐसा महा प्रयोजन सध न सकेगा, जिसे आदर्शवादी एवं लोकोपयोगी भी कहा जा सके । यहाँ वह उक्ति पूरी तरह फिट बैठती है, जिसमें कहा गया है कि **"एकै साधे सब सधे, सब साधे सब जाय ।"**

अनेक प्रकार की समृद्धियों और विशेषताओं से लदा हुआ व्यक्ति अपने कौशल के बलबूते सम्पदा बटोर सकता है । सस्ती वाहवाही भी लूट सकता है, पर जब कभी मानवी गरिमा को कसौटी पर कसा जायेगा तो वह खोटी ही सिद्ध होगी । खोटा सिक्का अपने अस्तित्व से किसी को भ्रम में डाले रह सकता है, पर उस सुनिश्चित प्रगति का अधिकारी नहीं बन सकता, जिसे महामानव के नाम से जाना जाता है । जिसके लिए सभ्य, सुसंस्कृत, सज्जन, समुन्नत जैसे शब्दों का प्रयोग होता है ।

सन्त परम्परा के अनेकानेक महान ऋषियों, लोक सेवियों एवं युग निर्माताओं से जो प्रबल पुरुषार्थ बन पड़े, उनमें उनकी आन्तरिक उत्कृष्टता ही प्रमुख कारण रही । उसी के आधार पर वे निजी जीवन में आत्म सन्तोष, लोक सम्मान और दैवी अनुग्रह ही निरन्तर वर्षा होती अनुभव करते हैं । अपने व्यक्तित्व कर्तृत्व के रूप में ऐसा अनुकरणीय उदाहरण पीछे वालों के लिए छोड़ जाते हैं, जिनका अनुकरण करते हुए गिरों को उठाने और उठों को उछालने जैसे अवसर हस्तगत होते रहें । यही है जीवन की लक्ष्य पूर्ति एवं एकमात्र सार्थकता । प्रज्ञायोग की जीवन साधना इसी महती प्रयोजन की पूर्ति करती है ।

यह साधना सर्वसुलभ है एवं सर्वथा हानि रहित है । इसे हर वर्ण, वर्ग, जाति, लिंग, आयु का व्यक्ति बिना किसी भेदभाव के, बिना किसी भय, संकोच के कर सकता है । इसमें पुरातन ज्ञान योग, कर्म योग और भक्ति योग का समुचित समावेश है । नवरात्रि आदि अवसरों पर, जिन्हें विशेष साधना करनी हो, उन्हें भी उसमें प्रज्ञा योग के तत्वों का समावेश रखना चाहिए । इसका समूचा विधि-विधान संक्षेप में इस प्रकार है—

(क) ज्ञान योग (भावना एवं धारणा)

प्रातःकाल आँख खुलते ही आत्मबोध का चिन्तन करें । मनुष्य जन्म को ईश्वर का सर्वोपरि उपहार अनुभव करें । इस अमानत को आत्म-कल्याण का स्वार्थ और विश्व-कल्याण का परमार्थ साधते हुए लक्ष्य प्राप्ति का अलभ्य अवसर मानें । हर साँस को मणि-मुक्तकों से भी बढ़कर बहुमूल्य समझें ॥ आज के दिन को एक सम्पूर्ण जीवन मानकर उसके श्रेष्ठतम सदुपयोग की दिनचर्या बनायें । उसे निभाने की सुव्यवस्थित योजना बनायें । पन्द्रह मिनट इस आत्म बोध साधना में लगने चाहिए ।

रात्रि को सोने से पूर्व शैय्या पर पड़े-पड़े जीवन के अन्त का स्मरण करें । मृत्यु को अनिवार्य अतिथि मानें । उसके उपरान्त ईश्वर के दरबार में पहुँचने और जीवन सम्पदा के सदुपयोग-दुरुपयोग के सम्बन्ध में लेखा-जोखा माँगे जाने की बात सोचें । बरते हुए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रमाद की परिणति निकृष्ट योनियों में भटकने, यन्त्रणाएँ सहने और पतन पराभव के गर्त में गरने की यथार्थता को समझें, लोक के साथ परलोक को भी जोड़ें । वर्तमान ऐसा बनायें, जिससे निर्वाह ही नहीं भविष्य भी सधे । सोते समय इन्हीं भावनाओं को लेकर चिर निद्रा की तरह दैनिक निद्रा की गोद में चले जायें । आज के दिन की समीक्षा करें । बन पड़े तो दोष-दुर्गुणों का पश्चाताप प्रायश्चित करें और कल के लिए ऐसा विचार करें कि इसे आज की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ समुन्नत बनाना है ।

प्रातः आत्मबोध की साधना के साथ पन्द्रह मिनट तक 'चिन्तन' में निमग्न रहें और रात्रि को सोते समय पन्द्रह मिनट 'मनन' में निरत रहें चिन्तन में परिमार्जन की और मनन में परिष्कार की प्रक्रिया है । दोनों को मिला कर ज्ञान योग बनता है ।

चिन्तन में चार असंयमों के वे चार छिद्र बन्द करने होते हैं, जिनमें होकर ईश्वर प्रदत्त वैभव का सारा रस बहता, धूल में मिलता रहता है । (१) इन्द्रिय संयम, (२) समय संयम, (३) अर्थ संयम, (४) विचार संयम । इन चारों को व्यावहारिक जीवन की तप साधना कहते हैं । जीभ का चटोरापन और कामुक चिन्तन की रोकथाम इन्द्रिय संयम है ।

समय संयम में ऐसी व्यस्त दिनचर्या बनानी पड़ती है, जिससे व्यर्थ या अनर्थ की हरकतें बन पड़ने की कोई गुंजाइश ही न रहे । अर्थ संयम में औसत भारतीय स्तर का निर्वाह, न्यायोचित उपार्जन एवं समाज ऋण से मुक्त होने के लिए अनुकरणीय अंशदान का बजट बनाकर चलना पड़ता है । विचार संयम में चिन्तन को निरर्थक असामयिक, अनैतिक कल्पनाओं से हटाकर मात्र उपयोगी योजना, कल्पना एवं भावना के क्षेत्र में ही सीमाबद्ध रखना पड़ता है । इन चारों संयमों को ही व्यावहारिक तप साधन कहा गया है ।

मनन के चार अंग हैं—(१) आत्म चिन्तन, (२) आत्म-सुधार, (३) आत्म निर्माण, (४) आत्म विकास । इनका स्वरूप इस प्रकार है—

(१) **आत्म चिन्तन**—वर्तमान मनःस्थिति की समीक्षा करके उसमें से उचित-अनुचित का पर्यवेक्षण, वर्गीकरण करना पड़ता है । यह आत्म समीक्षा हुई ।

(२) **आत्म सुधार**—आत्म सुधार में यह योजना बनानी पड़ती है कि अभ्यस्त अनुपयुक्तताओं से किस प्रकार पीछा छुड़ाया जाय ।

(३) **आत्म निर्माण**—आत्म निर्माण में उन सत्प्रवृत्तियों को बढ़ाने की योजना बनानी पड़ती है, जो अब तक अपने में उपलब्ध नहीं, किन्तु प्रगति प्रयास के लिए आवश्यक है ।

(४) **आत्म विकास**—आत्म विकास में अपने आपको विश्व नागरिक मानना पड़ता है और वसुधैव कुटुम्बकम् की उदार व्यापकता को व्यवहार में सम्मिलित करना पड़ता है । संकीर्ण स्वार्थपरता से प्रेरित लोभ-मोह के भव-बन्धन तोड़ने होते हैं और सबमें अपने को, अपने में सबको, समझते हुए सुख और दुःख बाँटने की उमंगें उछालनी पड़ती हैं । संक्षेप में यही व्यावहारिक जीवन का योग साधन है । चिन्तन को तप और मनन को योग कहा गया है । इन दोनों को अपनाकर बढ़ते हुए कदम परम लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं । संक्षेप में प्रज्ञा योग का ब्रह्मविद्या का ज्ञान पक्ष इतना ही है ।

(ख) कर्म योग (पूजा उपचार)

पूजा उपचार को क्रिया योग कहते हैं । इसे नित्यकर्म में सम्मिलित रखें । शौच-स्नान से निवृत्त होकर नियत स्थान, नियत समय पर शान्त चित्त से बैठें । तीन माला गायत्री मन्त्र का जप आवश्यक है । इतना कृत्य प्रायः आधा घण्टे में सम्पन्न हो जाता है ।

प्रज्ञा योग के क्रिया परक पाँच प्रमुख अंग हैं—(१) आत्म शोधन, (२) देव पूजन, (३) जप, (४) ध्यान, (५) विसर्जन । इन पाँचों को चिह्न पूजा की तरह नहीं निपटाना चाहिए, वरन् समग्र श्रद्धा विश्वास भी उसमें जुड़ा रहना चाहिए । क्रिया के साथ भावना का जितना सघन समन्वय होगा, उतना ही उसमें आनन्द आयेगा, मन लगेगा और सत्परिणाम मिलेगा । उपरोक्त पाँचों कृत्यों का सार संक्षेप में इस प्रकार है—

(१) **आत्म शोधन**—पालथी पर बैठें । पाँच कृत्य करें—(१) पवित्रीकरण-शरीर पर जल छिड़कना, (२) आचमन-चम्मच से तीन आचमन, (३) शिखा स्पर्श वन्दन, (४) प्राणायाम श्वास को धीमी गति से गहरी खींचना-रोकना और बाहर निकालना, (५) न्यास—बायीं हथेली पर जल रखकर दाएँ हाथ की पाँचों अंगुलियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से निर्धारित क्रम के अनुसार शरीर के प्रमुख अंगों से स्पर्श करना ।

इन पाँच कृत्यों के साथ पवित्रता एवं प्रखरता की अभिवृद्धि की, मलीनता अवांछनीयता की निवृत्ति की, भावना जुड़ी रहनी चाहिए । पवित्रता एवं प्रखर व्यक्ति ही ईश्वर के दरबार में प्रवेश पाने और अनुग्रह उपलब्ध करने के अधिकारी होते हैं । इसलिए आत्म कल्याण के मार्ग पर चलने वाले को सर्वप्रथम आत्म शोधन करना पड़ता है । इस तथ्य का स्मरण करने के लिए उपर्युक्त पाँच कृत्य करने होते हैं ।

(२) **देव पूजन**—प्रज्ञा योग के अवतरण की इस सन्धि बेला में महा प्रज्ञा-ऋतम्भरा को सभी जाग्रत आत्माएँ अपनी उपासना का आधार केन्द्र मानें । महाप्रज्ञा का प्रतीक गायत्री माता का चित्र है । इसे सुसज्जित पूजा वेदी पर रखें और विश्वव्यापी महाप्रज्ञा का करबद्ध नतमस्तक होकर नमन वन्दन करें ।

घनिष्ठता स्थापना के पाँच उपाय हैं, इन्हें विधिवत् सम्पन्न करें । (१) जल, (२) अक्षत, (३) धूप-दीप, (५) नैवेद्य । इन प्रतीक समर्पणों को आराध्य के सम्मुख करने को पंचोपचार कहते हैं । एक-एक करके एक छोटी तश्तरी में इन पाँचों को पूजा अभ्यर्थना के उद्देश्य से समर्पित करते चलें । जल का अर्थ नम्रता, सहृदयता । अक्षत का अर्थ है—प्रसन्नता, प्रगति, शोभा । धूप-दीप अर्थात् स्वयं जलकर अलोक का वितरण—पुण्य परमार्थ । नैवेद्य-अर्थात् स्वभाव, चरित्र एवं व्यवहार में सज्जनता का माधुर्य । पाँच उपचार— कृत्यों के द्वारा व्यक्तित्व को सत्प्रवृत्तियों से सुसम्पन्न करने का संकल्प उभारा जाता है कि उन सत्प्रवृत्तियों को जानना आवश्यक है, जो इन पंचोपचार कृत्यों के साथ भाव रूप में अविच्छिन्न रूप से सम्बद्ध हैं ।

(३) **जप**—गायत्री मन्त्र का जप न्यूनतम तीन माला अर्थात् प्रायः पन्द्रह मिनट नियमित रूप से किया जाय । अधिक बन पड़े तो अधिक उत्तम । माला का उद्देश्य घड़ी से भी पूरा होता है । होठ, कण्ठ, मुख हिलते रहें या आवाज इतनी मन्द हो कि दूसरे इस उच्चारण को ठीक तरह सुन न सकें । जप को एक प्रकार की मन शोधक रगड़ माना जाय, जिस तरह बार-बार घिसने पर वस्तुएँ चिकनी हो जाती हैं । साबुन रगड़ने से कपड़े का मैल छूटता और स्नान के समय अवयवों को मलने से वे स्वच्छ होते हैं । बर्तनों की सफाई के लिए धुलाई बुहारी लगती है । इन सब में एक ही कार्य की कई-कई बार पुनरावृत्ति होती है । इसी प्रकार ईश्वर का नाम बार-बार लेने की जप प्रक्रिया को कषाय-कल्मषों, कुसंस्कारों का निवारण उपचार मानें । अन्तराल में, जीवनक्रम में, घुल जाने के लिए ईश्वर को आग्रहपूर्वक आमन्त्रित करना ही जप का प्रयोजन है ।

(४) **ध्यान**—शरीर के अंग अवयव जपकृत्य करते हैं मन को खाली न छोड़ें, परम् तत्व में नियोजित रखे रहने के लिए जप के साथ-साथ ध्यान भी करना पड़ता है । साकार ध्यान में गायत्री माता के अंचल की छाया में बैठने तथा उसका सुधार भरा प्यार अनवरत रूप से प्राप्त होने की भावना की जाती है ।

निराकार ध्यान में प्रभातकालीन स्वर्णिम सूर्य की किरणों को शरीर में श्रद्धा, मस्तिष्क में प्रज्ञा, काया में निष्ठा के दिव्य अनुदान उतरने की मान्यता परिपक्व की जाती है । जप और ध्यान के समन्वय से ही चित्त एकाग्र रहता है और आत्म सत्ता पर उस कृत्य का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है ।

(५) **सूर्य अर्घ्यदान विसर्जन**—पूजा वेदी पर रखे छोटे कलश का जल सूर्य में अर्घ्य रूप में चढ़ाया जाय । इसके लिए घर में तुलसी का थाँवला रहे तो और भी उत्तम । जल को आत्मसत्ता का प्रतीक प्रतिनिधि माना जाता है और सूर्य को विराट् ब्रह्म-विश्व का । अपनी सत्ता, सम्पदा को समष्टि के लिए समर्पित विसर्जित करने का भाव सूर्यार्घ्य में है । अर्घ्यजल वाष्प बनकर आकाश में उड़े । सुदूर क्षेत्र में मेघ न सही, ओस, बिन्दु तो बन कर बरसे ही । सर्वशक्तिमान भगवान के प्रति एकत्व, अद्वैत, समर्पण-विसर्जन, शरणागति आदि अभिव्यक्तियों का व्यावहारिक स्वरूप एक ही हमारा जीवन-जल छोटे कलश तक सीमित न रहे । वह बाहर निकले, भगवान के, समष्टि के काम आये, व्यापकता में परिणत कर देना ही सूर्यार्घ्य का भाव उद्देश्य है ।

सप्ताह में एक दिन रविवार या गुरुवार एक समय भोजन करें अथवा अस्वाद व्रत का निर्वाह करें । ब्रह्मचर्य रखें, दो घण्टे का मौन रखें । प्रातःकाल का समय इसके लिए अधिक उपयुक्त है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन दिनों हिमालय के अदृश्य ध्रुव केन्द्र से जाग्रत आत्माओं को युग धर्म का निर्वाह कर सकने की विभिन्न विशिष्ट शक्ति धाराओं का प्रवाह अनुदान प्रेरित किया जा रहा है । वह प्रातः सूर्योदय से एक घण्टा पूर्व से लेकर सूर्योदय तक और रात्रि को सूर्यास्त से एक घण्टे तक चलता है । हर दिन उसे ग्रहण करने का साहस किन्हीं विशिष्टों को ही करना चाहिए और उस सम्बन्ध में शान्ति कुंज से परामर्श करना चाहिए, किन्तु सप्ताह में एक बार एक समय उसका लाभ लेने की छूट सभी प्रज्ञा परिजनों को है । जिस दिन उपर्युक्त तीनों व्रत निर्वाह किया जाय उसी दिन शक्ति प्रवाह का अवधारण भी किया जाना चाहिए ।

नियत समय पर किसी शान्त एकान्त स्थान में हिमालय की ओर मुख करके बैठें । स्थिर शरीर—शान्तचित्त-कमर सीधी, दोनों हाथ एक के ऊपर एक रखकर गोदी में, आँखें बन्द यह ध्यान मुद्रा है । ध्यान धारणा के लिए इसी स्थिति में बैठा जाता है ।

भावना एवं धारणा करनी चाहिए कि हिमालय के मध्यवर्ती हिमाच्छादित सुमेरु शिखर पर प्रातः कालीन स्वर्णिम सूर्य का उदय हुआ । उसकी सुनहरी किरणें फैलीं । किरणें हिमालय से चलकर साधक तक पहुँचीं उसके तीनों शरीर में तीन केन्द्रों द्वारा प्रवेश करने लगीं । स्थूल शरीर में नाभि केन्द्र से । सूक्ष्म शरीर में भ्रू-मध्य भाग—आज्ञा चक्र से । कारण शरीर में हृदय केन्द्र से । यह तीनों ही शरीर प्रकाशवान प्राण अर्जा से भरते चले गए । रोम-रोम में, कण-कण में, नस-नस में दिव्य प्रकाश का प्रवेश हुआ और समूची काय सत्ता ज्योति पिण्ड-प्राण पुंज बन गई । प्रकाश परमात्मा का प्रतीक । ज्योतिर्मय काय कलेवर आत्मा का घर । दोनों के मध्य सघन एकता । भक्त का समर्पण । भगवान का अनुग्रह । दोनों का आदान-प्रदान । समर्पण विसर्जन, विलय, एकत्व, अद्वैत स्तर का अनुभव । अमृत वर्षा की अनुभूति । रस विभोर-आनन्द से सराबोर मनःस्थिति । उपलब्धि—स्थूल शरीर में निष्ठा । सूक्ष्म शरीर में प्रज्ञा । कारण शरीर में श्रद्धा । अनुभति-तृप्ति, तुष्टि, शान्ति ।

यह ध्यान धारणा आरम्भ में पन्द्रह मिनट किया जाय । हर सप्ताह एक-एक मिनट बढ़ाते हुए आधा घण्टे तक पहुँचाया जाय । उसके लिए अलार्म घड़ी का उपयोग किया जा सकता है ।

समापन के समय 'तमसो मा ज्योतिर्गमय-असतो मा सद्गमय, मृत्योर्माऽमृतंगमय' का मौन पाठ किया जाय और अन्त में पाँच बार मानसिक ओंकार का गुंजन करते हुए संचार की इस साप्ताहिक साधना का समापन किया जाय ।

स्नान करके बैठा जा सके तो सर्वोत्तम अन्यथा हाथ-पैर धोकर शुद्धतापूर्वक बैठा जा सकता है । इस साधना में समय निर्धारण प्रमुख है । इसलिए जप आदि का उपक्रम इसके उपरान्त करना चाहिए ।

देव जीवन की त्रिविधि साधना

प्रचलन और प्रवाह में अन्यायों की तरह बहते रहने की दीनता का आवरण उतर सके तो अपनी गरिमा, अवसर की महिमा और समय का सदुपयोग बन पड़ने से उज्ज्वल भविष्य की सम्भावना पर विश्वास कर सकना भी बन पड़ता है । अन्यथा बिना झंझट का तरीका वही है कि भेड़ों के झुण्ड की तरह झुण्ड के पीछे चलता रहा जाय और जिस गर्त में वे गिरने जा रही हैं उसी में स्वयं भी बिना विचारे गिर पड़ा जाय । परिणाम भला या बुरा, यह बात आगे की है, किन्तु वर्तमान में नये सोचने, नया कार्यक्रम बनाने और नया संकल्प चरितार्थ करने में जिस पराक्रम की आवश्यकता पड़ती है, उस झंझट से तो बचा ही जा सकता है ।

महत्त्वपूर्ण पाने के लिए महत्त्वपूर्ण कर गुजरने का साहस किन्हीं-किन्हीं में होता है । खतरों के साथ खेलने का मनोबल किसी-किसी में ही पाया जाता है । वास्तविक शौर्य पराक्रम का क्षेत्र यही है । दूसरों की गर्दन पर तलवार चलाने का कौशल दिखाने वाला कहा तो योद्धा ही जाता है, पर वास्तविक शूरवीर वे हैं जो अपने आपे से जूझ सके । अपनी हथकड़ी बेड़ी अपने दाँतों चबा कर काट सके । जो अंगुलियों के सहारे बन्दीगृह में छेद करें और निकल भागें । इतना पराक्रम जो अर्जित कर सकें उनके लिए देव लोक में प्रवेश पाना उस समूचे परिकर पर आधिपत्य जमा लेना सम्भव है । वैरागी उन्हें नहीं कहते जो घर परिवार के असहाय आश्रितों के साथ विश्वासघात करके अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए स्वर्ग होटल में निवास करने की निष्ठुरता का परिचय दें । सच्चे अर्थों में सन्त वे हैं जो जीवन क्षेत्र में घुसी हुई मलीनता को पवित्रता में और हीनता को प्रखरता में बदलने वाली आत्म साधना में तपस्वी की तरह जुट पड़ें । अपना उद्धार करें और दूसरों को उबारने का श्रेय, सौभाग्य कमाएँ ।

देवत्व न तो वरदान है न उपहार, उसे विशुद्ध आत्म बल के आधार पर अर्जित करना पड़ता है । दूरदर्शी विवेकशीलता इसमें प्रमुख भूमिका निभाती है । सत्य में हजार हाथी के बराबर बल होता है । यदि लक्ष्य को उत्कृष्टता के साथ जोड़ दिया जाय तो फिर एकाकी चल पड़ने की हिम्मत भी भीतर से ही उपजती है । जो अकेला जन्मा है, जो अकेला करने वाला है, जो खाने, पीने, सोने, शौच आदि के नित्यकर्म अकेला ही बिना साथी सहयोगी के सम्पन्न कर लेता है । उसके लिए यह भी कुछ कठिन न होना चाहिए कि अपना भला-बुरा भी स्वयं सोचे । अपना रास्ता आप चुने और अपने पराक्रम के सहारे इस देव दुर्लभ मानव जीवन को कृत-कृत्य करने के लिए अपने पैरों आप चल पड़े । कवीन्द्र, रबीन्द्र का "एकला चलो रे·····।" वाला गीत ऐसे लोगों का उद्‌बोधन, उत्साह प्रकाश और साहस प्रदान करने के लिए एक अच्छा अवलम्बन सिद्ध हो सकता है ।

जिन्हें विलास की तुलना में विकास का वजन भारी प्रतीत होता हो वे अनिश्चय के झूले में ही झूलते न रहें, वरन् आत्मबोध का बिगुल बजते ही प्रौढ़ परिपक्व सैनिकों की तरह असमंजस और द्रुति गति से कदम बढ़ाते हुए झण्डे के नीचे जा पहुँचें । ईसा कहते थे कि कुछ देने का मन आये तो बाएँ हाथ से दाएँ हाथ तक ले जाने का मुहुर्त मत खोजो । जो देना है उसे उसी समय दे डाल भले ही वह बाएँ हाथ में ही क्यों न हो । हो सकता है कि एक हाथ से दूसरे हाथ तक उस राशि को ले जाने के बीच शैतान बहका ले और तेरा इरादा बदल जाय ।" यह सच है । निष्कृष्टता जड़ जमाकर बैठ जाती है, किन्तु श्रेष्ठता तो प्रयत्नपूर्वक बुलायी और स्थिर रहने, फलने-फूलने तक पहुँचने के लिए प्रयत्नपूर्वक संजोयी जाती है । जिन दिनों उत्कृष्टता की पक्षधर अन्तःचेतना उमगे, उसे उन्हीं दिनों चरितार्थ करने की बात सोचनी चाहिए । इसके लिए ईमान और भगवान दो परामर्श पर्याप्त हैं । इसके बाहर वाले तो बहकाने का ही प्रयास करेंगे ।

गीता के अनुसार "योगी को रात में जागना और दिन में सोना पड़ता है ।" इसका तात्पर्य यह है कि लोक प्रवाह से अलग हटकर आदर्शवादियों को स्वतन्त्र निर्णय करना पड़ता है और अपने एकाकी निश्चय के सहारे स्वयं प्रयास करना होता है । देवत्व इससे कम साहस वाले किसी को उपलब्ध नहीं हुआ । जो अवसर आने की प्रतीक्षा करते रहते हैं । अमुक कार्य निपटने के बाद वैसा साहस करने की बात सोचते रहते हैं, उन्हें नोट करना चाहिए, उनकी कल्पित निश्चिन्तता न कल होने वाली है, न परसों, न कभी । एक के बाद दूसरी आवश्यकताएँ और कठिनाइयों की शृंखला इतनी अविच्छिन्न है कि वह सदा-सर्वदा बनी रहने वाली है । एक के हटते ही दूसरा झंझट उसका स्थान पकड़ लेता है । इस लिए जिनमें आदर्शों के प्रति वास्तविक निष्ठा उभरे वे अब या कभी नहीं की सच्चाई को गम्भीरतापूर्वक समझें और जो करना हो कर गुजरें ।

इस दिशा में क्या करना होता है, उसके लिए समुद्र मन्थन का उदाहरण पर्याप्त है । आत्म-मन्थन ही शाश्वत समुद्र मन्थन है । मन्थन में उल्टी और सीधी दिशा में रस्सी घुमानी पड़ती है । अर्थात् विलास और विकास दोनों के प्रतिफल का तुलनात्मक अध्यवसाय करना होता है, जो दूरदर्शी विवेक की सच्चाई इस ऊपापोह की सही रीति से सही समय पर कर सके उन्होंने मात्र नवनीत ही नहीं पाया, वरन् पौराणिक चौदह रत्नों की तरह असाधारण श्रेय सौभाग्य भी कमाया । चिन्तन में मन्थन स्तर की प्रखरता उत्पन्न न हो तो फिर अन्यान्य रंगीली कल्पनाओं की तरह ही आत्मिक उत्कर्ष भी एक दिवा स्वप्न बना रहेगा । उसके फलित होने का अवसर कदाचित कभी न आयेगा । स्वप्न लोक का न कहीं आदि है न अन्त । उसमें न जाने कितने बबूले एक क्षण उठते और दूसरे क्षण समाप्त होते रहते हैं । सप्त रंगी इन्द्र धनुष देखने भर के काम आता है, उस पर प्रत्यंचा चढ़ाने और शर संधानने का अवसर किसी को भी नहीं मिला है । आदर्शवादी चिन्तन के साथ संकल्प और पराक्रम भरा साहस न हो तो समझना चाहिए कल्पना लोक में बिना पंखों की उड़ानें उड़ी जा रही हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पशु प्रवृत्तियों की कीचड़ में सड़ते रहने से जिसे अरुचि होगी वह जरा दल-दल से निकलकर किनारे तक पहुँचने का पुरुषार्थ करेगा । हाथ-पैर चलने की स्थिति इतना पराक्रम कर लेने के उपरान्त ही उत्पन्न होती है । यह मानवी गरिमा का अवलम्बन है । पशु योनि से छुटकारा दिलाने और मनुष्य योनि में प्रवेश पाने का भावात्मक कायाकल्प यही है । इसी को 'द्विजत्व' कहते हैं । यह प्रयास ही अति कठिन है । भव-बन्धनों से छूटते ही स्वर्गीय दृष्टिकोण वाला देवत्य हस्तगत होना फिर अधिक कठिन नहीं रह जाता । 'पशु को मनुष्य बनने में जितना पराक्रम करना पड़ता है, उसकी तुलना में मनुष्य के लिए देवत्व में प्रवेश पाना अत्यन्त सरल है ।

असमंजस टल सके और निश्चय पर पहुँचने का संकल्प बन सके तो फिर जो करने के लिए शेष रह जाता है, वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण होते हुए भी प्रयोग अभ्यास की दृष्टि से कठिन नहीं है । इसके लिए जो प्रयास करना पड़ता है, उसकी उपमा शास्त्रकारों ने त्रिवेणी संगम का अवगाहन करने से दी है । रामायण के अनुसार त्रिवेनी स्थान की महिमा "मज्जन फल देखिए तत्काला । काक होहिं पिक बकहु मराला ।" के रूप में व्यक्त की गई है । कौए और कोयल की—बगुले और हंस की आकृति तो प्रायः एक जैसी ही रहती है पर उनकी प्रकृति में अन्तर पाया जाता है । आत्म लोक का निवासी पिक और हंस जैसी दिव्य प्रकृति का परिचय देता है और हर दृष्टि से बड़भागी बनकर रहता है ।

त्रिवेणी की तीन धाराओं का आध्यात्मिक प्रयोजन है—(१) उपासना, (२) साधना और (३) आराधना । इस आध्यात्म संगम का अवगाहन कर के किसी की भी दिशा धारा पलट सकती है और किसी को भी कायाकल्प जैसा सुयोग मिल सकता है । इन्हीं तीनों के अलंकारिक नाम दूसरे भी हैं—(१) अमृत, (२) पारस, (३) कल्पवृक्ष । (१) सत्यम्, (२) शिवम्, (३) सुन्दरम् । (१) स्वर्ग, (२) मुक्ति, (३) सिद्धि । (१) आत्म सन्तोष, (२) लोक सम्मान, (३) दैवी अनुग्रह । इन प्रतिपादनों, विवेचनों में यह बताने का प्रयत्न किया गया है कि आत्मोत्कर्ष के लिए इन त्रिविध—प्रयासों की जहाँ अनिवार्य आवश्यकता है, वहाँ उनकी उच्चस्तरीय परिणति भी सुनिश्चित है । आत्मिक क्षेत्र के यही तीन पुरुषार्थ माने और वरिष्ठ वरदान बखाने गए हैं इनका अवलम्बन हाथों-हाथ अपना पुण्य फल प्रदान करता है । इन उपलब्धियों के लिए मरने के समय की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती । परलोक में जिस प्रकार की सुविधाएँ मिलने का वर्णन है वैसा तो कुछ नहीं जा सकता, किन्तु इन्हीं परिस्थितियों में इसी लोक में जो नकद धर्म की तरह मिलता है, उसके सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि वह महानता की गरिमा, विलासी सुविधाओं की तुलना में अत्यधिक भारी है । उसे प्राप्त कर सकना उन सभी पराक्रमियों के लिए निश्चित रूप से सम्भव है जो उपासना, साधना और आराधना की त्रिविध उत्कृष्टता का अवलम्बन करने के लिए कृत संकल्प बन सके ।

मानवी सत्ता के तीन पक्ष हैं—(१) भावना, (२) विचारणा, (३) क्रिया-प्रक्रिया । इन तीनों को परिष्कृत बनाने के लिए पुरातन प्रतिपादन के अनुसार भक्ति योग, ज्ञान योग और कर्म योग के अभ्यास की आवश्यकता बताई गई है । यह एक नियत समय या नियत स्थान पर, नियत विधान के साथ हो सकने वाले कृत्य नहीं हैं, वरन् ऐसे उच्चस्तरीय निर्धारण हैं, जिनके अनुसार कारण शरीर, सूक्ष्म शरीर और स्थूल शरीर की गति विधियों का नियमित रूप से निरन्तर सूत्र संचालन करना पड़ता है । उपासना में अन्तःकरण को साधना में मनःसंस्थान को और आराधना में क्रिया-कलापों को उच्चस्तरीय उद्देश्यों के अनुरूप गतिशील रखना पड़ता है श्वास-प्रश्वास, आकुंचन-प्रकुंचन, निमेष-उन्मेष, गृहण-विसर्जन जैसी गति विधियाँ अनवरत रूप से निरन्तर चलती रहती हैं । ठीक इसी प्रकार आत्म सत्ता के उपरोक्त तीनों पक्षों को इस प्रकार प्रशिक्षित करना पड़ता है कि वे अभ्यस्त कुसंस्कारिता से छुटकारा पाकर सुसंस्कारी शालीनता के ढाँचे में ढलने के लिए विवश हो सकें ।

पूजा पाठ के समस्त उपचारों का एक मात्र लक्ष्य यह उत्कृष्टता सम्पादन ही है । परब्रह्म को किसी उपहार मनुहार के सहारे फुसलाया नहीं जा सकता । उसने नियति क्रम जड़ चेतन सभी को बाँधा है और स्वयं भी बँध गया है । प्रशंसा के बदले अनुग्रह और निन्दा के बदले प्रतिशोध लेने पर यदि भगवान उतर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़े तो समझना चाहिए कि व्यवस्था परक अनुबन्ध समाप्त हो गए और सर्वतोन्मुखी अराजकता का उपक्रम चल पड़ा ऐसा होता नहीं है । लोगों का भ्रम है जो सृष्टा को फुसलाने और निर्यात क्रम का उल्लंघन करने वाला अनुदान इसलिए माँगते हैं कि वे पूजा करने के कारण पक्षपात के अधिकारी हैं । यह बाल बुद्धि जितनी जल्दी हट सके उतना ही अच्छा है । पूजा-उपचार का तात्पर्य चेतना संस्थान की उत्कृष्टता के ढाँचे में ढालने का प्रभावी व्यायाम पराक्रम प्रशिक्षण मात्र है । इस या उस प्रकार जो अपने चेतना क्षेत्र को जितना समुन्नत बना सकेगा वह उतना ही ऊँचा उठेगा, आगे बढ़ेगा और दवत्य के क्षेत्र में प्रवेश पाने का अधिकारी बनेगा ।

उपासना का उद्देश्य है—आत्मा को परमात्मा के साथ जोड़ देना । आत्मा अर्थात् अन्तःकरण, भाव संस्थान जिसके साथ मान्यताएँ आकांक्षाएँ लिपटी रहती हैं । परमात्मा अर्थात् उत्कृष्ट आदर्शवादिता । स्मरण रहे, परमात्मा कोई व्यक्ति विशेष नहीं, सृष्टि में जितना भी देव पक्ष है उसके समुच्च को—आत्माओं के समष्टि समुदाय को—परमात्मा कहते हैं । संक्षेप में व्यापक क्षेत्र की सत्प्रवृत्तियों का समाग्र रूप ही मनुष्य का इष्ट-उपास्य है । इसी के साथ आत्मसात, घनिष्टतम, एकाकार होते जाना ही परमात्मा की उपासना है । सर्वविदित है उपासक का स्तर ऊँचा होगा और उपास्थ वास्तविक होगा तो उन दोनों की घनिष्ठता का प्रभाव इसी रूप में प्रगट होगा कि उपासक उपास्य के तद्रूप बनता चला जाय ।

ईंधन आग के जितना समीप पहुँचता है, उतना ही गरम होता जाता है । जब वह कष्ट से लिपट जाता है, उसकी सत्ता अग्नि रूप में प्रकट होती है । नाला नदी में, बूँद समुद्र में, नमक पानी में मिलने पर उन्हें एकात्म होते देखा जाता है । चन्दन के निकट उगे हुए झाड़-झंखाड़ सुगन्धित होते हैं । लोहा पारस का स्पर्श करके सोना बनता है । पेड़ से लिपट कर बेल उतनी ही ऊँची चढ़ती जाती है । पत्नी का समर्पण पति के समस्त यश वैभव-स्नेह सहयोग की भागीदारी खरीद लेता है । यह प्रक्रिया भावभरी उपासना से सम्पन्न होती है । परमात्मा के साथ आदर्शवादी देव परिवार के साथ मनुष्य जितना भाव और कर्म से एकीभूत होता जाता है । उसी अनुपात में उसका प्रभाव भी हाथों हाथ बढ़ता है । बिजली घर के साथ सम्बन्ध जुड़ते ही बल्ब जलने और पंखे चलने लगते हैं । दो तालाबों के बीच नाली बना दी जाय तो ऊँचे वाले पानी नीचे वाले का में चलता रहता है । जब तक कि दोनों की सतह एक नहीं हो जाती । उपासना यदि कर्मकाण्ड की चिह्न पूजा मात्र हो, उपहार, मनुहार की लकीर पिट रही हो तो बात दूसरी है, अन्यथा आत्मा के परिष्कृत एवं विशद रूप परमात्मा के बीच यदि घनिष्ठ आत्मीयता जुड़े तो उसकी परिणति स्पष्टतः यही हो सकती है कि मनुष्य में देवत्व उभर पड़े उसका चिन्तन चरित्र और व्यवहार वैसा बन पड़े जैसा उदात्त दृष्टि वाले भगवत भक्तों का होना चाहिए । इस सन्दर्भ में विभिन्न सम्प्रदायों ने कई प्रकार के पूजा विधान बनाये हैं, उनमें से कोई भी चुना जा सकता है, किन्तु उस कलेवर के अन्तराल में आदर्शों के प्रति आत्म समर्पण की, जीवन को उसी स्तर का पवित्र प्रखर बनाने की ललक होनी चाहिए । इसी ललक को भक्ति भावना कहते हैं । इष्ट की आकृति मनुष्य जैसी या सूर्य शिवलिंग जैसे प्रकृति पदार्थ की प्रयुक्त हो सकती है, पर ध्यान रहे उसे विराट की प्रतीक प्रतिमा भर माना जाय । ऐसा न हो कि उस सीमित में असीम को सीमावद्ध करने की भूल की जाय । उपासना यदि निभ्रान्त और श्रद्धा विश्वास से भरी-पूरी है तो कोई नहीं कि उसका प्रभाव भक्त में स्तर से क्रमशः उच्च से उच्चतर, उच्चस्तर से उच्चतम बनाने का प्रगति क्रम निरन्तर गतिशील न बना रहे । यह यात्रा परम लक्ष्य तक पहुँच कर ही रुकती है ।

उपासना का उपरोक्त तत्व दर्शन समझ लेने के उपरान्त शेष इतना ही रह जाता है कि उसे भावनात्मक व्यायाम की तरह पूजा-उपचार के क्रिया-कृत्यों के सहारे आगे बढ़ाया जाय । इसके लिए किस पद्धति का अवलम्बन किया जाय । इसका उत्तर प्रज्ञा परिजनों के लिए एक ही है कि उनकी जैसी मनोभूमि के लिए 'प्रज्ञा योग' की विधि व्यवस्था ही सर्वोत्तम सिद्ध योगी । यह सर्वांग पूर्ण है । इसमें उपासना, साधना और आराधना के तीनों तत्वों का समान रूप से समावेश है । जबकि अन्य पद्धतियों में से अधिकांश एकांगी पायी जाती हैं । प्रज्ञा योग की संक्षिप्त किन्तु सारगर्भित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूपरेखा अगले पृष्ठों पर अलग से प्रस्तुत है । कारण शरीर में सन्निहित भाव श्रद्धा को दिशा देने और ऊँचा उठाने के लिए उपासना आवश्यकता की पूर्ति प्रज्ञा योग के सहारे सम्पन्न की जानी चाहिए ।

साधना अर्थात् अपने आपे को साधना । उसके अनगढ़पन, पिछड़ेपन, कुसंस्कार का निराकरण संशोधन, निम्नयोनियों से क्रमिक यात्रा करते हुए मनुष्य जन्म तो प्राणी भगवान के अनुग्रह से प्राप्त कर लेता है, पर पिछली कुसंस्कारिता से पीछा छुड़ाना और मानवी गरिमा के उपयुक्त विशिष्टता उत्पन्न करना उसका अपना काम है । भगवान इसी आधार पर किसी की पात्रता जाँचते हैं और उसे अधिक ऊँचे उत्तरदायित्व, पद, वैभव प्रदान करते हैं । महामानव मनीषी, ऋषि, सिद्ध पुरुष, देवात्मा, अवतार आदि इसी स्तर की प्रगति पदोन्नति हैं, जिन्हें मनुष्य पात्रता, प्रामाणिकता सिद्ध करने के उपरान्त विजेता की तरह उपहार में प्राप्त करता है । चिन्तन और चरित्र में अधिकाधिक उत्कृष्टता का समावेश ही साधना है । इसके लिए पिछले कुसंस्कारी ढर्रे से पग-पग पर जूझना पड़ता है । कुविचारों के सम्मुख सद्विचारों की सेना खड़ी करते हुए उन्हें मल्ल युद्ध में परास्त करना पड़ता है । कुविचार कुकर्मों के आधारभूत कारण ही हैं, जिनके कारण पतन पराभव के गर्त में गिरना पड़ता है । विपत्तियाँ भी वे ही उत्पन्न करते हैं । अस्तु आत्मिक प्रगति के लिए अभ्यस्त चिन्तन स्वभाव, रुझान का ढर्रा उलटना पड़ता है । उसी पुरुषार्थ को संयम की साधना या तपश्चर्या कहते हैं । यही साधना समर है, जिसकी तुलना में आध्यात्मिक क्षेत्र के उप-महाभारत से की गई है जिसे लड़ना भगवान की मैत्री प्राप्त करने के लिए अनिवार्य रूप से आवश्यक है ।

मन को मारना अर्थात् साधना, आध्यात्म क्षेत्र का सबसे बड़ा पुरुषार्थ माना गया है । जो मन के पीछे चलते हैं वे अनगढ़ घोड़े की पूँछ में अपनी गर्दन बाँधकर झाड़-झंखाड़ों में खिचते घिसटते फिरते और लहू लुहान होकर बेमौत मरते हैं, जिस मनो निग्रह को-चित्तवृत्ति निरोध को आत्मिक प्रगति का मेरुदण्ड माना गया है, उसे नट बाजीगरों द्वारा बरती जाने वाली एकाग्रता मात्र नहीं समझना चाहिए । उसका तात्पर्य है, मन को कुसंस्कारी भटकावों से रोककर उत्कृष्टता के, लक्ष्य के राजमार्ग पर संकल्पपूर्वक चल पड़ने की अटूट भाव श्रद्धा । कहा गया है—"जिसने अपने को जीता वह विश्व विजयी है ।" इस युक्ति में बहुत कुछ सार है । जिसका दबाव अपने स्वभाव तक को बदलने में सफल न हो सका, उस असफल व्यक्ति को कौन मान्यता देगा ? कौन उसकी बात सुनेगा ? कौन उसके कहने पर चलेगा ? व्यक्तित्व की प्रामाणिकता इसी कसौटी पर कसी जाती है कि वह अनगढ़ मन के इशारे पर कठपुतली की तरह नाचता है अथवा मनस्वी घुड़सवार की तरह अपने वाहन को अभीष्ट दिशा में अभीष्ट गति से चलाने दौड़ाने में समर्थ रहता है ।

साधना हो या उपासना उसकी चाबी भरने के लिए कोई समय नियत हो सकता है, किन्तु काम इतने भर से बनने वाला नहीं । घड़ी के पुर्जों को अनवरत क्रम से चलना और सुइयों को बिना विश्राम के चलते रहना पड़ता है । यह दोनों ही प्रक्रिया ऐसी हैं, जिनमें अपनी क्रिया, विचारणा और आकांक्षा को हर घड़ी परखना और सुधारना-सम्भालना पड़ता है । खजाने के रक्षक, जेल के वार्डर और सीमा के प्रहरी निरन्तर चौकस रहते हैं । जीवन सम्पदा में व्यतिक्रम न उत्पन्न होने पाये, इसके लिए जो सर्वदा जागरुक रहता है और अवांछनीयता के प्रवेश करते ही रक्त के श्वेत कणों की तरह विजातियों से गुँथ पड़ता है, उसी को विजेता कहते हैं । प्रशंसा, प्रतिष्ठा, सम्पन्नता, सफलता जैसी विभूतियाँ अर्जन करने में ऐसे पराक्रमी लोग ही समर्थ होते हैं ।

आत्मिक प्रगति के लिए जिन तीन सोपानों पर चढ़ना पड़ता है, उनमें उपासना, साधना के अतिरिक्त तीसरा मोर्चा आराधना का रह जाता है । आराधना के लिए अन्तःकरण कुरेदना पड़ता है । साधना के लिए परिवार की प्रयोगशाला में अपने निर्धारणों को परिपक्व करना पड़ता है । आराधना का अर्थ है—लोक मंगल के सर्वोत्तम उपाय—सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन में निरस्त होना । संक्षेप में इसी को समाज सेवा, लोक साधना, जन कल्याण, पुण्य परमार्थ आदि नामों से पुकारते हैं । यह भी मानवी गरिमा का एक सुनिश्चित पक्ष है । इसकी उपेक्षा करने पर सत्प्रवृत्तियों को स्वभाव का अंग बना सकना सम्भव ही नहीं हो पाता । तालाब में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रवेश किये बिना तैरना कैसे आये ? अखाड़े में लोटपोट किये बिना दंगल जीतने का अवसर कैसे आये ? अध्ययन के बिना विद्वान बनना कैसा ? क्रीड़ांगन में धमा चौकड़ी मचाये बिना खिलाड़ी का कौशल कैसे मिले ? मौर्चे पर हाथ दिखाये बिना सेना नायक को गौरव क्यों मिले ? सिद्धान्तों का समझना, पढ़ना, सुनना पर्याप्त नहीं । इतने भर से मनोविनोद भर होता रहता है, पल्ले कुछ नहीं पड़ता । श्रेष्ठता को स्वभाव का अंग बनाने के लिए एक ही मार्ग है—पुण्य परमार्थ का प्रयोग अभ्यास । इसलिए सेवा-साधना को मानवी गरिमा का अविच्छिन्न अंग ठहराया गया है और स्वार्थपरायण को अपराधी की तरह घृणित बताया गया है । मनुष्य का अस्तित्व पारस्परिक सहयोग पर निर्भर है । अन्य प्राणी तो कुछ दिन ही माता की सहायता लेकर स्वावलम्बी बन जाते हैं, पर मनुष्य को आजीवन दूसरों की सहायता पर निर्भर रहना पड़ता है । अन्न, वस्त्र, पुस्तक, औषधि आजीविका जैसे साधनों से लेकर पत्नी, पिता, माता, सास, श्वसुर आदि सम्बन्धियों की उदार सहायता बिना एक पल भी काम नहीं चलता । एकाकी जीवन अन्य प्राणी जी सकते हैं, पर मनुष्य की संरचना को देखते हुए वैसा सम्भव नहीं । समाज सहयोग से रहित व्यक्ति को रामू भेड़िये जैसा वनचर, मूक-वधिर होकर रहना पड़ेगा । इस उपकार का प्रत्युपकार होना ही चाहिए । सहयोग आदान-प्रदान का उदारता का सिलसिला चलना ही चाहिए । यही प्रकारान्तर से पुण्य-परमार्थ है । ऋण मुक्ति, सद्गुणों की उपलब्धि, आत्मीयता विस्तार की है । विभूति जैसी अनेकों सुखद सम्भावनाएँ लोक-मंगल की साधना के साथ जुड़ी हुई हैं । भजन का वास्तविक तात्पर्य परमार्थ है । संस्कृत की 'भज्—सेवायां' धातु से भजन शब्द बना है, जिसका अर्थ होता है—सेवा को जीवन क्रम में सम्मिलित रखना । व्यक्ति समाज को समुन्नत बनाये । समाज व्यक्ति को सुसंस्कृत बनाने का अवसर प्रदान करे । यही है—"देवान् भावयतानेन्.....।" का गीता प्रतिपादन । हम देवत्व का सम्वर्धन् परिपोषण करने वाली सेवा-साधना में निरत रहें, तो बदले में वह परिपुष्ट हुआ देवत्व हमें सर्वतोन्मुखी प्रगति के साथ जुड़ी हुई अगणित विभूतियाँ से सुसज्जित करेगा और कृत-कृत्य बनाकर रहेगा ।

जीवन साधना के दो विशिष्ट पर्व

मोटर के पहियों में भरी हवा धीरे-धीरे कम होने लगती है । उसमें थोड़े समय के बाद नई हवा भरनी पड़ती है । रेल में कोयला पानी फुकता है तो दुबारा भरना पड़ता है । पेट खाली होता है तो नई खुराक लेनी पड़ती है । जीवन का एक-सा ढर्रा नीरस बन जाता है, तब उसमें नई-स्फूर्ति संचारित करने के लिए नया प्रयास करना पड़ता है । पर्व, त्यौहार इसीलिए बने हैं कि एक नया उत्साह उभरे और उस आधार पर मिली स्फूर्ति से आगे का क्रिया-कलाप अधिक अच्छी तरह चले । रविवार की छुट्टी मनाने के पीछे भी नई ताजगी प्राप्त करना और अगले सप्ताह काम आने के लिए नई शक्ति अर्जित करना है । संस्थाओं के विशेष समारोह भी इसी दृष्टि से किये जाते हैं, कि उस परिकर में आयी सुस्ती का निराकरण किया जा सके । प्रकृति भी ऐसा ही करती रहती है । घनघोर वर्षा और खिलखिलाती वसन्त ऋतु ऐसी ही नवीनता भर जाती है । विवाह और निजी पुरुषार्थ की कमाई, इन दो आरम्भों को भी मनुष्य सदा स्मरण रखता है । उनमें उत्साहवर्धक नवीनता है ।

जीवन साधना के दो विशेष पर्व हैं—एक साप्ताहिक, दूसरा अर्द्धवार्षिक । साप्ताहिक आमतौर से लोग रविवार, गुरुवार को रखते हैं, पर परिस्थितियों के कारण यदि कोई अन्य दिन सुविधाजनक पड़ता है तो उसे भी अपनाया जा सकता है । अर्द्धवार्षिक में आश्विनी और चैत्र की दो नवरात्रियाँ आती हैं । इनमें साधना नौ दिन की करनी पड़ती है । इन दो पर्वों की विशेष उपासना को भी अपने निर्धारण में सम्मिलित रखने से बीच में जो अनुत्साह की गिरावट आने लगती है, उसका निराकरण होता रहता है । इनके आधार पर जो विशेष शक्ति उपार्जित होती है, उससे शिथिलता आने का अवसाद निबटता रहता है ।

साप्ताहिक विशेष साधना में चार विशेष नियम विधान अपनाने पड़ते हैं । ये हैं—(१) उपवास, (२) ब्रह्मचर्य, (३) प्राण संचय, (४) मौन । इनमें से कुछ ऐसे हैं जिनके लिए मात्र संयम ही अपनाना पड़ता है । दो के लिए कुछ विशेष कृत्य करने पड़ते हैं । जिह्वा और जननेन्द्रिय यही दो दसों इन्द्रियों में प्रबल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । इन्हें साधने से इन्द्रिय संयम सध जाता है । यह प्रथम चरण पूरा हुआ तो समझना चाहिए कि अगले चरण मनोनिग्रह में कुछ विशेष कठिनाई न रह जायेगी ।

जिह्वा का असंयम अतिमात्रा में अभक्ष्य भक्षण के लिए उकसाता है । कटु असत्य, अनर्गल और असत्-भाषण भी उसी के द्वारा बन पड़ता है । इसलिए एक ही जिह्वा को रसना और वाणी इन दो इन्द्रियों के नाम से जाना जाता है । जिह्वा की साधना के लिए अस्वाद का व्रत लेना पड़ता है । नमक, मसाले, शक्कर, खटाई आदि के स्वाद जिह्वा को चटोरा बनाते हैं । तले-भुने तेज मसाले वाले, मीठे पदार्थों में जो चित्र विचित्र स्वाद मिलते हैं, उनके लिए जीभ ललचाती रहती है । इस आधार पर अभक्ष्य ही रुचिकर लगता है । ललक में अधिक मात्रा उदरस्थ कर ली जाती है, फलतः पेट खराब रहने लगता है । सड़न से रक्त विषैला होता है और दूषित रक्त अनेकानेक बीमारियों का निमित्त कारण बनता है । इस प्रकार जिह्वा की विकृतियाँ जहाँ सुनने वालों को पतन के विक्षोभ के गर्त में धकेलती हैं, वहाँ अपनी स्वस्थता पर भी कुठाराघात करती हैं । इन दोनों विपत्तियों से बचाने में जिह्वा का संयम एक तप साधना का प्रयोजन पूरा करता है नित्य न बन पड़े तो सप्ताह में एक दिन तो जिह्वा को विश्राम देना ही चाहिए, ताकि वह अपने उपरोक्त दुर्गुणों से उबरने का प्रयत्न कर सके ।

उपवास पेट का साप्ताहिक विश्राम है । इससे छः दिन की विसंगतियों का संतुलन बन जाता है और आगे के लिए सही मार्ग अपनाने का अवसर मिलता है । जल लेकर उपवास न बन पड़े तो शाकों का रस या फलों का रस लिया जा सकता है । दूध, छाछ पर भी रहा जा सकता है । इतना भी न बन पड़े तो एक समय का निराहार तो करना ही चाहिए । मौन पूरे दिन का न सही किसी उचित समय दो घण्टे का तो कर ही लेना चाहिए । इस चिह्न पूजा से भी दोनों प्रयोजनों का उद्देश्य स्मरण बना रहता है और भविष्य में जिन मर्यादाओं का पालन किया जाना है उन पर ध्यान केन्द्रित बना रहता है । साप्ताहिक विशेष साधना में जिह्वा पर नियन्त्रण स्थापित करना प्रथम चरण है ।

द्वितीय आधार है ब्रह्मचर्य । नियत दिन शारीरिक ब्रह्मचर्य तो पालन करना ही चाहिए । यौनाचार से तो दूर ही रहना चाहिए, साथ ही मानसिक ब्रह्मचर्य अपनाने के लिए यह आवश्यक है कि कुदृष्टि का, अश्लील कल्पनाओं का निराकरण किया जाय । नर नारी को देवी के रूप में और नारी नर को देवता के रूप में देखे तथा श्रद्धा भरे भाव मन पर जमायें । भाई-बहिन, पिता-पुत्री, सन्तान की दृष्टि से ही दोनों पक्ष एक दूसरे के लिए पवित्र भावनाएँ उगायें । यहाँ तक कि पति-पत्नी भी एक दूसरे के प्रति अर्धांग की उच्चस्तरीय आत्मीयता सँजोये । अश्लीलता को अनाचार का एक अंग मानें और उस प्रकार के दुश्चिन्त को पास न फटकने दें । सम्पूर्ण ब्रह्मचर्य तभी सधता है जब शरीर संयम के साथ-साथ मानसिक श्रद्धा का भी समन्वय रखा जाय । इससे मनोबल बढ़ता है और कामुकता के साथ जुड़ने वाली अनेकानेक दुर्भावनाओं से सहज छुटकारा मिलता है । सप्ताह में हर दिन इस लक्ष्य पर भावनायें केन्द्रित रखी जायें तो प्रभाव भी अगले छः दिनों तक बना रहेगा ।

तीसरा साप्ताहिक अभ्यास है—प्राण संचय । एकान्त में नेत्र बन्द करके अन्तर्मुखी होना चाहिए और ध्यान करना चाहिए कि समस्त विश्व में प्रचण्ड प्राण चेतना भरी हुई है । आमन्त्रित आकर्षित करने पर वह किसी को भी प्रचुर परिमाण में कभी भी उपलब्ध हो सकती है । इसका विधि प्राणायाम है । प्राणायाम के अनेक विधि-विधान हैं, पर उनमें से सर्वसुलभ यह है कि मेरुदण्ड को सीधा रखकर बैठा जाय । आँखें बन्द रहें दोनों हाथ दोनों घुटनों पर, शरीर को स्थिर और मन को शान्त रखा जाय ।

साँस खींचते समय भावना की जाय कि विश्वव्यापी प्राण चेतना खींचती हुई नासिका मार्ग से सम्पूर्ण शरीर में प्रवेश कर रही है । उसे जीवकोष पूरी तरह अपने में धारण कर रहे हैं । प्राण प्रखरता से अपना शरीर, मन और अन्तःकरण ओत-प्रोत हो रहा है । साँस खींचने के समय इन्हीं भावनाओं को परिपक्व करते रहा जाय । साँस छोड़ते समय यह विचार किया जाय कि शारीरिक और मानसिक क्षेत्रों में घुसे हुए विकार साँस के साथ बाहर निकल रहे हैं और उनके वापस लौटने का द्वारा बन्द हो रहा है । इस बहिष्करण के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साथ अनुभव होना चाहिए कि भरे हुए अवांच्छनीय तत्व हट रहे हैं और समूचा व्यक्तित्व हल्कापन अनुभव कर रहा है । प्रखरता और प्रामाणिकता की स्थिति बन रही है ।

चौथा साप्ताहिक अभ्यास मौन वाणी की साधना है । मौन दो घण्टे से कम का नहीं होना चाहिए । मौन काल में प्राण संचय की साधना साथ-साथ चलती रह सकती है । इस निर्धारित कृत्य के अतिरिक्त दैनिक साधना, स्वाध्याय, संयम, सेवा के उपक्रमों में से जो जितना बन सके उसके लिए उतना करने का प्रयास करना चाहिए । सेवा कार्यों के लिए प्रत्यक्ष अवसर सामने न हो तो इसके बदले आर्थिक अंशदान की दैनिक प्रतिज्ञा के अतिरिक्त कुछ अधिक अनुदान बढ़ाने का प्रयत्न करना चाहिए । यह राशि सद्ज्ञान सम्वर्धन के, ज्ञान यज्ञ के निमित्त लगनी चाहिए । पीड़ितों की सहायता के लिए हर अवसर पर कुछ न कुछ करते रहना सामान्य क्रम में भी सम्मिलित रखना चाहिए । ज्ञान यज्ञ तो उच्चस्तरीय ब्रह्म यज्ञ है, जिसके साथ प्राण मात्र का कल्याण जुड़ा हुआ है । साप्ताहिक साधना का दिन ऐसे ही श्रेष्ठ सत्कर्मों में लगाना चाहिए ।

अर्द्ध-वार्षिक साधनाएँ आश्विनी और चैत्र के नवरात्रियों में नौ-नौ दिन के लिए की जाती हैं । इन दिनों गायत्री मन्त्र के २४ हजार जप की परम्परा पुरातन काल से चली आ रही है । उसका निर्वाह सभी अस्थावान साधकों को करना चाहिए । बिना जाति या लिंग भेद के इसे कोई भी आध्यात्म प्रेमी निःसंकोच कर सकता है । कुछ कमी रह जाने पर भी इस सात्विक साधना में किसी प्रकार के अनिष्ट की आशंका नहीं करनी चाहिए । नौ दिनों में प्रतिदिन २७ माला गायत्री मन्त्र के जप कर लेने से २४ हजार की निर्धारित जप संख्या पूरी हो जाती है । अन्तिम दिन कम से कम २४ आहुतियों, अग्निहोत्र करनी चाहिए । अन्तिम दिन अवकाश न हो तो हवन किसी अगले दिन किया जा सकता है ।

अनुष्ठानों में कुछ नियमों का पालन करना पड़ता है—(१) उपवास अधिक न बन पड़े तो एक समय का भोजन या अस्वाद व्रत का निर्वाह तो करना ही चाहिए (२) ब्रह्मचर्य पालन—यौनाचार एवं अश्लील चिन्तन का नियमन । (३) अपनी शरीरिक सेवाएँ यथासम्भव स्वयं ही करना । (४) हिंसायुक्त चमड़े के उपकरणों का प्रयोग न करना । पलंग की अपेक्षा तख्त या जमीन पर सोना । इन सब नियमों का उद्देश्य यह है कि नौ दिन तक विलासी या अस्त-व्यस्त निरंकुश जीवन न जिया जाय । उसमें तप संयम की विधि-व्यवस्था का अधिकाधिक समावेश किया जाय । नौ दिन का अभ्यास अगले छः महीने तक अपने ऊपर छाया रहे और ध्यान बना रहे कि संयमशील जीवन ही आत्म-कल्याण तथा लोक-मंगल दी दोहरी भूमिका सम्पन्न करता है । इसलिए जीवनचर्या को इसी दिशाधारा के साथ जोड़ना चाहिए । अनुष्ठान के अन्त में पूर्णाहुति के रूप में प्राचीन परम्परा ब्रह्मभोज की है । उपयुक्त ब्राह्मण न मिल सकने के कारण इन दिनों वह कृत्य नौ कन्याओं को भोजन करा देने के रूप में भी पूरा किया जाता है । कन्याएँ किसी भी वर्ण की हो सकती हैं, इस प्रावधान में नारी को देवी स्वरूप में मान्यता देने की भावना सन्निहित है । कन्याएँ तो ब्रह्मचारिणी होने के कारण और भी पवित्र मानी जाती हैं ।

ब्रह्मभोज का दूसरा प्रचलित रूप प्रसाद वितरण भी है । यों प्रसाद में कोई मीठी वस्तु थोड़ी-थोड़ी मात्रा में बाँटने का भी नियम है । इसमें अधिक लोगों तक अपने अनुदान का लाभ पहुँचने का उद्देश्य है, भले ही वह थोड़ी-थोड़ी मात्रा में ही क्यों न हो ? एक का पेट भर देने की अपेक्षा सौ का मुँह मीठा कर देना इसीलिए अच्छा माना जाता है कि इसमें देने वाले तथा लेने वालों को उस धर्म प्रयोजन के विस्तार की महिमा समझने और व्यापक बनाने की आवश्यकता का अनुभव होता है ।

यह कार्य मिष्ठान वितरण की अपेक्षा सस्ता युग साहित्य वितरण करने के रूप में अभीष्ठ उद्देश्य की पूर्ति कर सकता है । अतः नवरात्रि अनुष्ठानों में ब्रह्मभोज के सत्साहित्य के रूप में प्रसाद वितरण की प्रक्रिया भी जुड़ी रहनी चाहिए ।

स्थानीय साधक मिल-जुलकर एक स्थान पर नौ दिन की साधना करें । अन्त में सामूहिक यज्ञ करें सहभोज का प्रबन्ध रखें । साथ ही कथा-प्रवचन, कीर्तन, उद्बोधन का क्रम बनाये रह सकें तो उस सामूहिक आयोजन से सोने में सुगन्ध जैसा उपक्रम बन पड़ता है । यह प्रकारान्तर से समष्टिगत सूक्ष्म जगत के उपचार की प्रक्रिया है । नवरात्रि के दिनों तो इनका विशेष महत्त्व है ही ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आध्यात्मिक कायाकल्प की भाव-साधना

आध्यात्मिक भाव-कल्प को आयुर्वेदीय शरीर कल्प का समानान्तर ही समझा जाना चाहिए । एक में काया की दुर्बलता, रुग्णता, जीर्णता आदि को अनपेक्षित परिस्थितियों से मुक्त किया जाता है, दूसरी में आस्था, आकांक्षा एवं अभ्यास पर चढ़ी हुई कुसंस्कारिता से त्राण पाने का प्रयत्न किया जाता है ।

शरीर की प्रकृति संरचना ऐसी अद्‌भुत है कि यदि उस पर असंयमजन्य अस्त-व्यस्तता न लादी जाय तो वह शतायु की न्यूनतम परिधि को पार करके सैकड़ों वर्ष जी सकता है । मरण तो प्रकृति धर्म है पर जीर्ण शीर्ण होकर जीना मनुष्य का अपना उपार्जन है । आरम्भ में ही सुपथ पर चला जाय तब तो कहना ही क्या, अन्यथा मध्य काल में रुख बदल दिया जाय तो भी ऐसा सुधार हो सकता है, जिसे अद्‌भुत अप्रत्याशित कहा जा सके ।

चेतना तन्त्र की संरचना भी ऐसी ही है । ईश्वर का अंश होने के कारण मानवी चेतना में उच्चस्तरीय विभूतियाँ भरी पड़ी हैं । पिण्ड ब्रह्माण्ड का छोटा रूप ही तो है । परमात्मा की ही छोटी प्रतिकृति आत्मा है । शरीर में वे सभी तत्व विद्यमान हैं, जो प्रकृति के अन्तराल में बड़े एवं व्यापक रूप में पाये जाते हैं ।

कल्प साधना से न केवल आरोग्य लाभ मिलता है, वरन् तपश्चर्या की ऊर्जा से स्वयं को पका कर ऐसा भी बहुत कुछ पाया जा सकता है, जो प्रकृति की रहस्यमयी पर्तों में खोजा जाता है । सिद्ध पुरुषों का प्रकृति पर आधिपत्य होता है । इसका आधारभूत कारण यह है कि काया में उन्हीं रहस्यों की बीज रूपी उपस्थिति को कृषि कार्य जैसे साधनों से विकसित कर लिया जाता है । फलतः काया समूची माया का प्रतिनिधित्व करने लगती है । काया और प्रकृति के बीच आदान-प्रदान होने लगता है । जिस प्रकार पृथ्वी के ध्रुव केन्द्र व्यापक ब्रह्माण्ड से अपनी आवश्यक सामग्री खींचते उपयोग करते रहते हैं, उसी प्रकार सिद्ध पुरुषों की काया न केवल ब्रह्माण्डव्यापी माया से, प्रकृति से आदान-प्रदान करती है, वरन् चेतनात्मक विशेषता के कारण कई बार उस पर अधिपत्य भी करने लगती है । तपस्वियों की अलौकिक चमत्कारी सिद्धियों का यही रहस्य है ।

आत्मा के नाम से पुकारी जाने वाली ब्रह्म ऊर्जा की छोटी चिन्गारी का मौलिक स्वरूप भी प्रायः वैसा ही है । है वह भी उतनी ही जाज्वल्यमान-प्रदीप्त । उसकी तीव्रता में मन्दता एवं ऊर्जा में कमी तो कषाय-कल्मषों के कारण आती है । पतित-पराजित तो यह आवरण करता है । दर्पण के सामने जो भी वस्तु आती है, उसका प्रतिबिम्ब दीखने लगता है । मूढ़ता और दुष्टता सामने हो तो आत्मा का स्वरूप भी वैसा ही दीखने लगता है । यदि पर्दा हटा दिया जाय तो दृश्य बदलते देर न लगे ।

पुरुष-पुरुषोत्तम की, जीव ब्रह्म की, नर-नारायण की एकता का प्रतिपादन काल्पनिक नहीं है । योगीजनों का प्रमाण-उदाहरण सामने है । उन्हें ईश्वर नहीं तो ईश्वरवत्-ईश्वर का प्रतिनिधि तो माना ही जाता है इस स्थिति को प्राप्त कर सकना हर किसी के लिए सम्भव है । मनुष्य शरीर में अनेकों देवदूत समय-समय पर आये हैं और ऐसे काम करते रहे हैं, जिससे उन्हें अवतार की, भगवान की मान्यता मिली । इस स्थिति को उपलब्ध करने में किसी दैवी वरदान की आवश्यकता नहीं पड़ती । मनुष्य अपने ही पराक्रम पुरुषार्थ से कषाय-कल्मषों के आच्छादन को तोड़ता है और चक्रव्यूह वेधकर बाहर जा निकलता है । चक्र-वेधन जैसी प्रक्रियाएँ भव-बन्धनों की जकड़न तोड़ने और चक्र-व्यूह से बाहर निकलने की भावनात्मक प्रक्रिया है । उसे पूरी करने वाले योगी उस जीवनमुक्त स्थिति को प्राप्त करते हैं जिनका सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य, सायुज्य नामों से वर्णन-विवेचन किया जाता है ।

'योग' किसी शारीरिक या पदार्थपरक हलचल का नाम नहीं है । जैसा कि आमतौर से आसन प्राणायाम या नेति, धौति आदि को बताया जाता है । ये तो शरीर और मन का व्यायाम भर है जो प्रकारान्तर से आत्म-परिष्कार में सहायक सिद्ध होते हैं । तत्वतः योग अन्तराल पर चढ़े हुए अवांछनीय आच्छादनों को हटाने और उनके स्थान पर उच्चस्तरीय परिधान पहनाने की भावनात्मक प्रक्रिया है । उसमें अभ्यस्त आदतों के रूप में स्वभाव का अंग बनी हुई कुसंस्कारिता की जड़ें काटनी होती हैं और उन झाड़-झंखाड़ों के स्थानों पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उच्चस्तरीय आस्थाओं को अन्तराल में उगाना-परिपुष्ट करना होता है । अन्तःक्षेत्र का यह समुद्र-मन्थन ही 'योग' है । खारे जल से युक्त सागर को मथकर किसी समय विष वारुणी को हटाया और अमृत जैसी अनेकों विभूतियों को हस्तगत किया गया था । योग व्यक्तिगत 'समुद्र मन्थन' है, जिसकी सारी प्रक्रिया अन्तःक्षेत्र में चलती हैं । उखाड़ने और जमाने के ऊहापोह से धातुओं का ताप भट्टी में गर्म होता है और गलाने-ढालने का काया-कल्प प्रस्तुत करता है । इसी को योग साधना कहते हैं । संक्षेप में आन्तरिक परिष्कार का नाम 'योग' और क्रिया-प्रक्रिया में संयम, अनुशासन का समावेश 'तप' कहा जाता है इन प्रयोजनों की पूर्ति के लिए कुछ न कुछ प्रत्यक्ष प्रयोगोपचार भी चलाने पड़ते हैं । योग साधना—तपश्चर्याओं की समस्त ध्यानपरक-तितीक्षा परक क्रिया-प्रक्रिया ऐसे ही निर्धारणों से भरी पड़ी है । इतने पर भी इस तथ्य को समझ ही लेना चाहिए कि उपचारों की आवश्यकता इसीलिए पड़ती है कि व्यक्तिगत के अदृश्य स्तर का, अन्तराल का काया-कल्प सम्भव हो सके । दृष्टिकोण और कार्य-प्रवाह में निकृष्टता यथावत् बनी रहे और क्रिया-प्रक्रिया के रूप में चित्र-विचित्र उपचार चलते रहें तो समझना चाहिए कि जड़ की उपेक्षा करके, पत्ते धोने जैसी विडम्बना चल रही है ।

मन्थन में रई घुमायी जाती है । उसकी रस्सी एक बार आगे चलती है, दूसरी बार पीछे लौटती है । पीछे लौटना चिन्तन है और आगे बढ़ना-मनन । चिन्तन को आत्म समीक्षा और आत्म-सुधार कह सकते हैं । उसे वस्तुतः तपश्चर्या को संयम अनुशासन अपनाने की पृष्ठभूमि कहना चाहिए । मनन को आत्म-निर्माण एवं आत्म-विकास की पृष्ठभूमि कहना चाहिए । क्षुद्रता को महानता के साथ जोड़ देना ही योग है । इस उद्देश्य के लिए कामना को भावना में, तुच्छ को महान में, सीमित को असीम में परिवर्तित करना होता है । यही योग है । उसमें अपनी आस्थाएँ, आकांक्षाएँ एवं चिरसंचित आदतें किस प्रकार उच्चस्तरीय बन सकें, इसका निर्धारण एवं कार्यान्वयन करना होता है । प्रगतिक्रम को व्यवहार में उतारने की योजनाबद्ध साहसिकता की पृष्ठभूमि मनन के माध्यम से ही बनती है ।

साधनावधि में आस्था एवं विचारणा क्षेत्र के नव-निर्माण का प्रयत्न पूरी तत्परता के साथ चलना चाहिए । शरीर तप-अनुशासन में संलग्न रहे । समयचर्या उन्हीं अनुबन्धों के शिकंजे में कसी रहे, किन्तु विचार प्रवाह को सतत् भौतिक क्षेत्र से हटाकर अन्तर्मुखी रहने के लिए विवश किया जाता रहे । इन दिनों भौतिक क्षेत्र की चिन्ता-समस्याओं से उबार ही लेना चाहिए । जो गम्भीरतापूर्वक कभी विचारा ही नहीं गया । जिस उद्देश्य के लिए यह जन्म हुआ था उस पर चिन्तन ही नहीं किया गया, उसे इन दिनों सोचना चाहिए । जिस क्षेत्र में कभी बुहारी तक नहीं लगी, कभी दृष्टि ही नहीं गई, उसे इन दिनों साफ-सुथरा बनाने से लेकर सुन्दर-सुसज्जित बनाने के लिए तत्परता एवं तन्मयता के साथ जुटे रहना चाहिए ।

साधनाकाल में जप-अनुष्ठान के समय एकाग्रता, तल्लीनता ईश्वरीय गुणों से तद्रूपता का ध्यान किया जाता है । इस समय के अतिरिक्त शेष सारा ही समय ऐसा है जिसमें विचार मन्थन सतत् किया जाना चाहिए । साधना का अर्थ है—अनुशासन, मजबूती से विचारों को साध लेना । यह तभी सम्भव है, जब मनन पल-पल चले । तभी नित्य की क्रियाओं में साधना अपना चमत्कार दिखाने लगेगी । अपने क्रिया-कलापों में वे सारी उपलब्धियाँ साकार होती दिखाई देने लगेंगी, जिनकी चर्चा आप्त वचनों व शास्त्रों में की गई है ।

चिन्तन-मनन के लिए सतत् मन्थन के अतिरिक्त एक घण्टा नित्य अलग से निकाल लिया जाय, जिसमें मात्र आत्म समीक्षा, सुधार व विकास की प्रक्रिया में ही निरत रहा जाय । इसके अतिरिक्त भी कभी भी, खाली रहने या काम करते रहने की स्थिति में यह चिन्तन-मनन का उपक्रम जारी रखा जा सकता है । चिन्तन का विषय है—आत्म शोधन, मनन का उद्देश्य है आत्म परिष्कार । दोनों को एक-दूसरे का पूरक कहना चाहिए । मल त्याग करने के उपरान्त ही पेट खाली होता है, तभी भूख लगती है और भोजन गले उतरता है । धुलाई के उपरान्त रंगाई होती है । नींव खोदने पर ही दीवार चुनी जाती है । साँस छोड़ने पर नई साँस मिलती है । प्रयाण में पिछला पैर उठता और अगला बढ़ता है । आत्म-परिष्कार प्रथम और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-विकास द्वितीय है । जो लोग चिन्तन और चरित्र से निकृष्टता हटाने की उपेक्षा करके सीधे ईश्वर तक जा पहुँचने—साक्षात्कार करने या योग सिद्धियों की बात करते हैं, उन्हें हवा में तैरने वाले कल्पना लोक के पखेरू ही कहा जा सकता है । ऐसे शेखचिल्ली आध्यात्म क्षेत्र में भी कम नहीं हैं जो जिस-तिस क्रिया-प्रक्रिया को ही सब कुछ मान बैठते हैं और बिना चिन्तन सुधारे श्रम-प्रयास के आधार पर ही साधना की सफलता का स्वप्न देखते हैं ।

शरीर कल्प में कुटी प्रवेश की, आहार-विहार अपनाये रहने की आवश्यकता पड़ती है । साथ ही चिन्तन को भी कायिक परिवर्तन की परिधि में ही घुमाना पड़ता है । उस नियत क्षेत्र में चिन्तन करते रहने पर ही शरीर-कल्प सम्भव हो पाता है । यदि वैसा न बन पड़े तो कुटी प्रवेश की स्थिति में प्रयोग की असफलता, व्यर्थता का सन्देह छाया रहे, जी घबराने लगे एवं उद्विग्नता छायी रहे । ठीक इसी प्रकार साधना-अनुष्ठान की अवधि में साधक यदि मात्र आहार संयम एवं मुँह से जीभ हिलाकर जप की बेगार भुगते और आत्म-चिन्तन की उपेक्षा करे तो समझना चाहिए कि शरीर श्रम का जितना लाभ मिल सकता है, उतना ही मिलेगा । मनोयोग के अभाव में उस उच्चस्तरीय प्रतिफल की आशा न की जा सकेगी जो शास्त्रकारों ने, अनुभवी सिद्ध पुरुषों ने बतायी है ।

समझा जाय कि चिन्तन का विषय अनुशासन है, इसी को 'संयम' कहा जाता है । इन्द्रिय, अर्थ, समय, विचार संयम के अन्तर्गत विभिन्न पक्षों की चर्चा होती रही है । साधक को अपने वर्तमान स्वभाव, अभ्यास में इन प्रसंगों में कहाँ क्या त्रुटि रहती है, इसकी निष्पक्ष निरीक्षक एवं कठोर परीक्षक की तरह जाँच-पड़ताल करना चाहिए । आत्म पक्षपात मनुष्य का सबसे बड़ा दुर्गुण है । दूसरों के प्रति कठोरता—उन के दोष ढूँढना और अपने छिपाना आम लोगों की आदत होती है । कड़ाई से आत्म समीक्षा कर सकने की क्षमता आध्यात्मिक प्रगति का प्रथम चिह्न है । चित्त में, गुण, कर्म, स्वभाव में घुसी हुई अवांछनीयताओं को बारीकी से ढूँढ़ निकालना, उन्हें किस प्रकार निरस्त करना तथा अभ्यास हेतु दिनचर्या का ऐसा ढाँचा बनाना जिसे अपनाकर चारों संयमों का क्रमबद्ध अभ्यास चलता रहे, इसी में साधक का पुरुषार्थ है ।

इतना बन पड़ने पर आगे का आत्मिक प्रगति-पथ सरल हो जाता है । जीवन लक्ष्य की पूर्ति, पूजा उपचारों से नहीं हो सकती । वे तो मात्र आत्म-जागरण भर की क्रिया पूरी करते हैं । उसके लिए आत्मा को श्रद्धा, निष्ठा एवं प्रज्ञा जैसी उच्चस्तरीय आस्थाओं से अभ्यस्त कराना होता है । अपना सुधार करने में, ईश्वर के विश्व उद्यान को सुविकसित बनाने में कुशल माली की भूमिका निभाई जाय । सृष्टा की विश्व-व्यवस्था में उत्कृष्टता बनाने-बढ़ाने से ईश्वर की इच्छा तो पूरी होती है, साथ-साथ आत्म-कल्याण का, आत्मोकर्ष का प्रयोजन भी पूरा होता है ।

जप के साथ ध्यान, प्राण साधना का महाविज्ञान

सन् १९६२ की बात है, शिकागो के टेड सीरियस नाम के एक व्यक्ति ने कल्पना दूरवर्ती वस्तुओं के चित्र फिल्म कैमरे पर उतार कर न केवल वैज्ञानिकों को अचम्भे में डाल दिया, अपितु विज्ञान के समक्ष एक चुनौती खड़ी कर दी । क्या उसे प्रकृति, पदार्थ और ब्रह्माण्ड की जानकारियों के लिए मात्र भौतिक उपकरणों तक ही सीमित रहना पड़ेगा ? क्या मनुष्य शरीर उससे भी समर्थ उपकरण नहीं है, जिसके द्वारा ब्रह्माण्ड व्यापी हलचलों की इतनी स्पष्ट जानकारी ली जा सकती है जितनी भौतिक उपकरणों के द्वारा भी सम्भव नहीं है ।

वस्तुतः बात यह हुई कि एक दिन टेड सीरियस नामक उक्त व्यक्ति अपने एक फोटो ग्राफर मित्र से फोटो खिंचवाने जा रहा था । रास्ते में किसी परिचित मित्र को बताया कि वह अभी उसकी ससुराल से आ रहा है, जहाँ उसकी धर्मपत्नी अत्यन्त संकटग्रस्त अवस्था में बीमार है । टेड सीरियस को प्रातःकाल ही धर्मपत्नी का पत्र मिला था । जिसमें किसी तरह की अस्वस्थता का कहीं कोई उल्लेख नहीं था, तो भी इस समाचार से उसकी स्मृति धर्म-पत्नी के लिए घनीभूत होती चली गई । जिस समय वह कैमरे के सामने बैठा उस समय वह पूरी तरह अपनी पत्नी के ही विचारों में खोया हुआ था, उसी स्थिति में जोहान्स-नामक उसके फोटोग्राफर ने उसका फोटो लिया, जब उसने फिल्म धोई तो वह यह देखकर आश्चर्यचकित रह गया कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिस नम्बर की फिल्म में उसने टैड सीरियस का चित्र उतारा था, उसमें चारपाई पर लेटी हुई एक महिला का चित्र था । उसके आस-पास एक पुरुष, एक महिला, दो युवतियाँ खड़े थे और एक अन्य व्यक्ति जो डॉक्टर लगता था, स्टेथिस्कोप से उस महिला के शरीर की जाँच कर रहा था । पीछे पता चला कि सचमुच उसकी पत्नी बीमार थी और उसी स्थिति में सचमुच उसी डॉक्टर ने उसका मुआयना किया था ।

डेट सीरियस ने यह चित्र देखा तो चिल्ला पड़ा अरे यह स्त्री तो मेरी धर्मपत्नी है, पास खड़े लोग उसी की ससुराल के ससुर, सास व कुटुम्बी थे डॉक्टर उन्हीं का फेमिली डॉक्टर था, जिसे टेड अच्छी तरह पहचानता और नाम आदि भी जानता था ।

यह विशेषता फिल्म की थी ? या कोई फोटोग्राफर को हिप्नोटाइज कर रहा था या टेड के दिमाग में कोई चक्कर था ? यह प्रश्न फोटो ग्राफर के दिमाग में पर्त के पर्त उभरते रहे उसने कई तरह की फिल्मों से, कैमरे कवच बदल कर स्वस्थ चित्त से कई तरह से टेड के चित्र लिए । वह हरबार यह देख हैरान रह जाता था कि टेड जिस भी वस्तु का ध्यान कर रहा होता कैमरे की फिल्म में वही ध्यान वाला चित्र उतरता । यह एक ऐसी घटना थी जो वैज्ञानिकों को भी आश्चर्य चकित करने वाली थी, सो उसने उसकी सूचना पत्रकारों को दी, पत्रकारों की उपस्थिति में टेड के चित्र खींचे गए तब भी टेड की सशक्त कल्पना के ही चित्र आये । टेड अखबारों के आकर्षण का विषय बन गया, उसकी कल्पना के फोटो सहित उसके तरह-तरह के फोटो अखबारों में छपे, उसे देखने परीक्षण करने वालों का ताँता लग गया । इस बीच उसके परीक्षण के तौर पर जो फोटो लिये गए उसमें, नैपोलियन बोनापार्ट, उसकी सेना, इटली और कोर्सिका के किले, मिस्र के पिरामिड तथा कुछ ऐसे ऐतिहासिक स्थलों के चित्र भी कल्पना से खींचे जो अब केवल पुरातत्व सामग्री के रूप में ही उपलब्ध थे । इन कल्पना चित्रों और यथार्थ में उतना अन्तर तो होता था कि कल्पना चित्र कुछ धुँधले होते थे पर आकृति, कटाव और वस्तु में राई-रत्ती भर भी अन्तर नहीं होता । नैपोलियन बोनापार्ट की सेना, जो सैकड़ों वर्ष पूर्व थी, के चित्र देखकर पुरातत्ववेत्ताओं ने यह सिद्ध किया था कि नैपोलियन बोनापार्ट के सिपाही ठीक यही वेषभूषा धारण करते थे । नवम्बर १९६८ की कादम्बनी अंक में फतेहपुर सीकरी के बुलन्द दरवाजा और लाल किले के उसके ध्यान फोटो छापकर उन्हें कैमरे फोटो से मिलाया गया तो उनमें रत्ती भर भी अन्तर नहीं है जबकि टेड सीरियस ने भारत वर्ष का मात्र नक्श देखा है, भारतवर्ष की भूमि पर पैर रखने का उसे कहीं कोई सुयोग नहीं मिला ।

इन आश्चर्यजनक घटनाओं से दो प्रश्न उभरते हैं—(१) क्या सचमुच ध्यान से "ध्येय और ध्याता" के बीच कोई भौतिक सम्पर्क हो सकता है और उस सम्पर्क से दोनों के बीच कोई रासायनिक आदान-प्रदान की क्रिया सम्भव हो सकती है ? (२) क्या सृष्टि में ऐसे भी कोई तत्व हैं जो मानवीय चेतना का सम्बन्ध भूत और भविष्य से जोड़ सकते हैं ?

इस समय तक माइक्रोवेव, माइक्रो फिल्म तथा माइक्रोट्रान्समीटर का आविष्कार हो चुका था, जिससे यह बात तो सिद्ध हो चुकी थी कि "शब्द" और "आकार" को शक्ति तरंगों (एनर्जी वेव) में बदलकर उन्हें नियन्त्रित अवस्था में एक स्थान से दूसरे स्थान में भेजा जा सकता है । इस प्रणाली को "टेलीविजन" कहते हैं, जिसके द्वारा एक स्थान से शक्तिशाली विद्युत तरंगों के सहारे चित्र और ध्वनियाँ चारों ओर प्रक्षेपित की जा सकती हैं । यह तरंगें जितनी अधिक विद्युत शक्ति से अनुप्रेरित होंगी, प्रेषण उतनी ही दूर तक ग्रहण किया जा सकता है । इससे स्पष्ट है कि टेलीविजन प्रसारणों में जबर्दस्त विद्युत शक्ति नियोजित की जाती है अन्यथा इन प्रसारणों को एक दो मील में भी पकड़ना असम्भव हो जाय ।

उपर्युक्त घटना की वस्तु स्थिति की जाँच वैज्ञानिकों, फोटोग्राफरों, बुद्धिजीवियों की एक सम्मिलित टीम ने की, जिसकी अध्यक्षता "इलिनाएस सोसाइटी फॉर साइकिक रिसर्च" की उपाध्यक्षा पालिन ओहलर ने की । जाँच कमेटी ने जो प्रतिवेदन प्रस्तुत किये, उनमें इन घटनाओं की पुष्टि तो की गई पर यह स्पष्ट स्वीकार किया गया कि विज्ञान अभी तक तथ्यों का पता लगाने में असमर्थ है ।

सुप्रसिद्ध अमेरिकी "जीव रसायनज्ञ" डॉ. कैमरान ने चूहों पर तरह-तरह के प्रयोग करके यह बताने का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

प्रयास किया कि मनुष्य शरीर जिन कोशाओं (सेल्स) से बना है उनमें "न्यूक्लिक एसिड" नामक ऐसा तत्व पाया जाता है, जिसे ध्यान के द्वारा निरन्तर प्रशिक्षित करने के बाद बहुत शक्तिशाली रूप में कहीं भी प्रक्षेपित किया जा सकता है । उससे दो वस्तुओं के बीच जो सम्बन्ध स्थापित होते हैं, उसमें विचार प्रणाली का आदान प्रदान हो सकता है । ऐसा तो अभी खोजने में नहीं आ पाया, किन्तु यह सुनिश्चित तथ्य है कि एक के कुछ तत्व और उनके गुण दूसरे में और दूसरे के पहले में निश्चित रूप से हस्तान्तरित होते हैं । ध्यान द्वारा जब किसी वस्तु को एक व्यक्ति के मन से जोड़ा जाता है तो इस न्यूक्लिक एसिड की विचार माला के माध्यम से उस वस्तु का प्रतिबिम्ब परिलक्षित हो सकता है । इससे भी यह सिद्ध होता है कि भारतीयों का 'ध्यान विज्ञान' एक दुर्लभ खोज थी । उसी के सम्बन्ध से ऋषि, मुनि, तपस्वी, योगी सृष्टि की सुदूर हलचलों की अपनी मस्तिष्क की टेलिविजन प्लेट पर उतार लिया करते थे और भूत, भविष्य, वर्तमान को खुली हुई पुस्तक के रूप में पढ़ लिया करते थे ।

इंग्लैण्ड की बी. एफ. गुडरिच कम्पनी के रिसर्च डाइरेक्टर डॉ. डब्लू. एल. सेमान तथा इटली के जीव विशेषज्ञों ने ध्यान के साथ जप की महत्ता को भी सूक्ष्म ध्वनि तरंगों का आविष्कार कर प्रतिपादित कर दिया है । उन्होंने एक प्रयोग में देखा कि रात के अन्धकार में भी बिजली के बहुत से तार फैले होने पर भी चिमगादड़ वहाँ उड़ते समय तारों से टकराता नहीं । उन्होंने चिमगादड़ की आँखों में पट्टी बाँधकर उड़ाया और जिस स्थान पर उड़ाया गया वहाँ बहुत बारीक से बारीक धागे असंख्य मात्रा में बाँध दिये इस जटिल स्थिति में भी चिमगादड़ बिना धागों से टकराये उड़ते रहे । बिना आँखों की सहायता के चिमगादड़ वस्तुओं की उपस्थिति का किस तरह पता लगाता है । इस अध्ययन के दौरान पता चला कि चिमगादड़ उड़ते समय मुँह से अत्यन्त सूक्ष्म ध्वनि निकालता है यह कर्णातीत ध्वनि तारों से टकराकर चिमगादड़ के रेटीक्युलर फार्मेशन (मस्तिष्क का यह भाग जहाँ हिन्दू शिखा रखते हैं) से टकराती हैं और ध्यान वाले स्थान तक पहुँचकर चिमगादड़ को वस्तु की उपस्थिति का भान करा देती है ।

मन्त्रोच्चारण में कर्णातीत ध्वनि के निरन्तर कम्पन को ध्यान द्वारा, "नाभिकीय रसायन" बहुत दूर से दूर अज्ञात स्थान तक पहुँचाने तक समर्थ हो जाता है । ध्यान उखड़ा हो तो पता भले न चले, पर यह इतना प्रगाढ़ होता जाता है । टेड सीरियस की तरह लक्ष्य के सन्देश, प्राण और प्रकाश अन्तःकरण में उतरने लगते हैं इसे ही अपने इष्ट का स्वप्न, सन्देश, सहायता आदि जो भी कहें मान सकते हैं ।

गायत्री मन्त्र की ध्वनि तरंगें तार के छल्ले की तरह ऊपर उठती है और ब्रह्माण्ड के सूक्ष्म अन्तराल को माध्यम बनाकर सूर्य तक जा पहुँचती हैं । यह ध्वनि वहाँ से प्रतिध्वनि होकर अपने साथ गर्मी, प्रकाश और विद्युत अणुओं की फौज जप करने वाले के शरीर में उसी तरह उतारती चली जाती हैं, जिस तरह टेड सीरियस के ध्यान करने पर ध्येय का प्रतिबिम्ब में छाया चित्र की तरह उतरता चला आता है । टेड इस प्रयास में भी है कि वह टेलीविजन की तरह आकृतियों को समय की निर्धारित सीमा में लगातार उतार दे अर्थात् मस्तिष्क के चित्र मूवी कैमरे में उतारे, जिससे प्राचीन काल में हुई घटनाओं को भी टेलीविजन की तरह देखा जा सके ।

सूर्य हमारे ब्रह्माण्ड का केन्द्रक नाभिक अथवा आत्मा है, हमारी सृष्टि का प्रारम्भ विकास और विनाश यहीं से होता है । यदि कोई चेतना से पूरी तरह सूर्य में आत्मसात हो सके तो टेड सीरियस भले ही मूवी कैमरे में चित्र उतार पाये अथवा नहीं, पर उस तरह का व्यक्ति निःसन्देह न केवल भूत, भविष्य का ज्ञाता अपितु सृष्टि के सूक्ष्मतम रहस्यों का ज्ञाता भी हो सकता है । सिद्धावस्था ध्यान द्वारा चेतना की इसी प्रगाढ़ मिलन की अवस्था को कहते हैं, जिसमें साधक और इष्ट गायत्री उपासक और गायत्री माँ, साधक का मन और सविता के प्राण दोनों एक हो जाते हैं ।

सिद्धावस्था न भी प्राप्त हो तो भी क्रमिक जप उपासना और ध्यान से साधक उसी मात्रा में प्रत्यावर्तित प्राण और आत्म बल सम्पन्न होता चलता है । गायत्री उपासना में जप के साथ सविता देवता के ध्यान के पीछे यही महाविज्ञान काम करता है जिसे न जानने वाला भी लाभान्वित होता है और जानने वाला तो लाभान्वित होता ही है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जापान की जेन साधना में ध्यान की प्रमुखता रहती है

जापान तथा उसके समीपवर्ती देशों में "जेन" साधना का अभी भी अच्छा खासा प्रचलन है । यों अब उस क्षेत्र में भी वैज्ञानिकता के साथ नास्तिकता बढ़ी है और भौतिक सुविधा समृद्धि पर ध्यान केन्द्रित हो गया है तो भी आत्मवाद पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ है । उसका स्वरूप मात्र विचार दर्शन जैसा नहीं रह गया है, वरन् अभी भी उसे सांस्कृतिक परम्पराओं में सम्मिलित करके किसी न किसी रूप में जीवन व्यवहार में कार्यान्वित किया जाता है ।

ताओधर्म, कनफ्यूशियस परम्परा और बौद्ध धर्म का समन्वय उस देश में हुआ है । तीनों के प्रतिपादन एक-दूसरे से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं । इसके लिए उनका समन्वय सरलतापूर्वक हो गया है । सब ओर से एक शैली का प्रतिपादन बन पड़ने से उस सन्दर्भ में श्रद्धा बढ़ती है और शंका-कुशंकाओं का सिलसिला समाप्त होता है । जिस विचारधारा को तर्कों और विग्रहों के बीच नहीं गुजरना पड़ता, उसकी नींव गहरी और मजबूत होती चली जाती है । जापान से लेकर चीन, कोरिया जैसे मंगोल क्षेत्रों की भावनात्मक एकता का भी यही कारण है ।

उपासना क्षेत्र में वहाँ अन्यान्य पूजा-प्रार्थनाएँ भी चलती हैं, पर असाधारण वरिष्ठता और प्रतिभा 'जेन' साधना की है । जापान के तोकुफु मंदिर में इसके उप-देष्टाओं एवं अभ्यासियों का अच्छा खासा जमघट रहता है । कभी-कभी तो अभ्यासियों की संख्या हजारों तक पहुँच जाती है । मौसम प्रतिकूल होने तथा व्यस्तता के दिन आने पर भी तोकुफु का प्रांगण साधकों से भरा ही रहता है ।

जिसने प्रवीणता प्राप्त कर ली है, वे वापस लौटकर अपने-अपने क्षेत्र में इस उपासना पद्धति के लिए प्रचार करते हैं । इसके लिए उन्हें पुरातन बौद्ध मंदिरों की खाली पड़ी जगह उपयोग के लिए आसानी से मिल जाती है ।

'जेन' साधना में जीवन की पवित्रता प्रथम शर्त है । साधकों को अपना आहार सात्विक रखना पड़ता है । बीच-बीच में उन्हें कुछ दिन उपवास करते हुए भी बिताने पड़ते हैं । ब्रह्मचर्य सम्बन्धी मर्यादाओं का पालन भी सभी साधकों के लिए आवश्यक है, जो गृहस्थ जितने समय के लिए आश्रम में प्रवेश करते हैं उन्हें उतने समय ब्रह्मचर्य व्रत पालन का व्रत धारण करना पड़ता है । वे पुरातन काल की संस्कृति से जुड़े हुए वस्त्र पहनते हैं । यों आधुनिक वस्त्र पहने रहने की भी छूट किन्हीं-किन्हीं प्रार्थियों को मिल जाती है । सभी को नम्र रहना पड़ता है, एक-दूसरे के साथ मधुर भाषण और प्रेम प्रदर्शन में सभी आश्रमवासी उत्साह दिखाते हैं ।

'जेन' साधना का प्रत्यक्ष स्वरूप है—मौन रहकर आत्म चिन्तन में निरत रहना । साधना की अधिकांश अवधि इसी ध्यान करने में बीतती है । इस बीच वातावरण को इतना शान्त रखा जाता है कि साधकों के ध्यान में किसी प्रकार का विघ्न न पड़े ।

ध्यान में ज्योति के ध्यान की प्रधानता रहती है । साधक द्वारा धारणा की जाती है कि यह सर्वव्यापी प्रकाश ऊर्जा सचेतन रूप से समस्त ब्रह्माण्ड में संव्याप्त है और वही साधक के ध्यानाकर्षण से विशेष मात्रा में आकर्षित होकर काय-कलेवर के प्रत्येक कण में संव्याप्त हो रही है । इस मान्यता को अधिकाधिक परिपक्व करने के लिए साधक नेत्र बन्द करके प्रत्येक अंग का क्रमशः ध्यान करता जाता है और अनुभव करता जाता है कि उसकी काया का कोई अंग ऐसा तो नहीं बचा, जिसमें ज्योति ऊर्जा की स्थापना परिलक्षित न होती हो । इस क्रम को कई घण्टे लगातार जारी रखा जाता है । बीच में पानी पीने, पेशाब जाने जैसी निवृत्तियों के लिए साधक सीमित समय के लिए उठ भी सकता है, पर वह विराम, विश्राम अधिक देरी करने वाला नहीं होना चाहिए ।

कुछ साधकों की पसंदगी बुद्ध की छवि के साथ तादात्म्य करने की होती है, वैसा कर सकते हैं । इसमें भी द्वैत को अद्वैत में विकसित करने का प्रयत्न रहता है । आरम्भ में प्रकाश ज्योति की तरह बुद्ध प्रतिमा भी निकट से कल्पित करनी पड़ती है, पर प्रयत्न यह चलता है कि इस की पृथकता घनिष्ठता में बदलती जाय और वह निकट से निकटतम होने लगे दो शरीर मिलें और भक्त में भगवान और भगवान में भक्त पूरी तरह समा जायें । ज्योति धारण के बीच भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यही धारणा कहती है । आरम्भ में प्रकाश पिण्ड कुछ दूरी पर रहता है । उसके उपरान्त साधना में जैसे-जैसे आध्यात्म परिपक्व होता जाता है, वैसे-वैसे प्रकाश निकटतम आता जाता है और उसे प्रचण्ड ज्वाला माल की तरह विकसित करते हुए साधक अपनी काया को उसमें होम देता है । आग में पड़ा हुआ ईंधन भी अग्निवत् हो जाता है । ठीक उसी प्रकार सन्त अपनी सत्ता को प्रकाश पंज में विसर्जित करके पूरी तरह एकात्म स्थापित कर लेता है । इस अभ्यास में अवयवों को ज्योतिर्मय तो देखा ही जाता है, साथ ही उस ज्योति को पवित्रता और प्रखरता का प्रतीक मानकर यह धारणा भी विकसित की जाती है, कि वे दोनों सत्प्रवृत्तियाँ अपने स्वभाव का अंग बनती जा रही हैं । इस ध्यान से उठते ही साधक को अपने भीतर और बाहर पवित्रता और प्रखरता की आभा फैली अनुभव होती है । मनोवांछित स्थिति का अनुभव करते हुए साधक उत्साह और आनन्द से भर जाता है ।

यही बात बुद्ध आकृति के साथ तादात्म्य करने का अभ्यास करने पर भी अनुभूति होती है । दूरी को निकटता में लाना और फिर उसमें तादात्म्य हो जाना यह तो प्रयास रहता है । फलतः इसकी प्रगति भी उसी प्रकार होती है । इष्ट देव अपनी सत्ता में समा जाते हैं और स्वयं की आत्मसत्ता का विलय इष्ट देव में हो जाता है । माता के गर्भ में जिस प्रकार भ्रूण रहता है, उस स्थिति की अनुभूति आरम्भिक दिनों में होती है । पीछे पूर्ण सफलता की स्थिति में अनुभव यह होने लगता है कि इस प्रकार रक्त नलिकाओं में उक्त देवता रहता है, वैसे ही इष्ट देव को नाड़ी समूह मानकर उसके भीतर स्वयं के रंग रूप में भ्रमण करने की धारणा की जाती है । इस अनुभूति से बुद्ध की आध्यात्मिक गरिमा, साधक को अपने में प्रवेश करती एवं कार्यरत होती दीख पड़ती है ।

ज्योति के साथ एकात्मता में भी यही भाव मन में उठाया जाता है कि प्रकाश परब्रह्म का प्रतिनिध है । भगवान समस्त सद्गुणों के भण्डार हैं, उसकी उपस्थिति में दृष्टिकोण में उत्कृष्टता एवं आदर्श का भरपूर समन्वय है । ज्योति धारण करने पर वे विशिष्टताएँ भी साधक को उपलब्ध होती हैं और वह अपने में देवोपम विभूतियाँ उगते और लहराते देखता है । साकार और निराकार मत से बुद्धताओं या प्रकाश का ध्यान अपनी रुचि के अनुरूप चुना जा सकता है । श्रद्धा के अनुरूप मन को एकाग्र एवं तन्मय होने में सुविधा रहती है और आनन्द भी आने लगता है । विश्वास की सुनिश्चितता, श्रद्धा की परिपक्वता और प्रसन्नता की प्रफुल्लता की अनुभूति होने लगती है तो समझा जाता है कि साधक सिद्ध स्तर के समीप पहुँच पाया ।

'जेन' साधनाओं में इर्द-गिर्द के वातावरण को कोलाहल रहित रखा जाता है । तोकुफु मन्दिर में आरती तो होती है पर घण्टे नहीं बजते । किसी प्रयोजन के लिए आने-जाने वाले इस बात का पूरा ध्यान रखते हैं कि उनका आवागमन इतना धीमा हो कि किसी साधक की ध्यान धारणा में विघ्न न पड़े । किसी को किसी से बात करनी होती है, तो संकेत से उसे अलग बुलाकर इस प्रयोजन के लिए बने हुए विशेष कक्ष में ले जाता है और जो कुछ पूछना, बताना होता है, वह इसे इतने धीमे स्वर में व्यक्त करता है कि किसी का ध्यान न बंटे, घुसपुस को सुनकर मन न उचटे । बाहर की इस सतर्कता और बाह्य क्षेत्र के प्रति उपेक्षा भाव रहने से साधारण हलचलें उसके आध्यात्म प्रयोजन में कोई विशेष विघ्न उत्पन्न नहीं कर पातीं और वे अपने मन पर काबू रखकर बिना विचलित हुए आराधना पथ पर आरूढ़ रहते हैं ।

सभी जेन साधक कमर को सीधा रखकर बैठते हैं ताकि मेरुदण्ड चौड़ी, उच्च गुच्छक, चक्र भ्रासर जाग्रत हो और साधक की सत्ता में अभिनव शक्ति संचार का प्रयोजन पूरा करे ।

जप और ध्यान सूक्ष्म ही नहीं स्थूल परिणाम

पिछले दिनों ध्यान की वैज्ञानिकता पर प्रकाश डालते हुए शिकागो के "टेड सेरियस" और उनके मित्र जोहन्स का उदाहरण दिया गया था । यह दोनों मित्र मिलकर इच्छा-शक्ति द्वारा हजारों मील दूर की फोटो कैमरे पर उतार देते हैं । यही नहीं वे मानसिक एकाग्रता द्वारा युगों पूर्व घटित छोटी-से-छोटी घटना को कैमरा फोटो खींच देते हैं । कादम्बिनी के एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंक में उनकी कल्पना द्वारा खींचा गया लाल किले का और फतेहपुर सीकरी के बुलन्द दरवाजे के चित्र छपे हैं, जो लगभग हूबहू हैं । यहाँ एक ऐसा उदाहरण दिया जा रहा है जो भारतीय धर्म और दर्शन के नाम, स्मरण, ध्यान और रूप स्मरण द्वारा आन्तरिक क्षमताओं के विकास का प्रमाण प्रस्तुत करता है । यदि मनुष्य तदाकार साधना में मन को इतना एकाग्र कर ले कि मन के एक बिन्दु पर इष्ट का कोई रूप ज्यों का त्यों उतार दे तो भले ही वह चित्र, देवी-देवता या काल्पनिक ही क्यों न हो मन में वह सामर्थ्य है कि वह शरीर रक्त, प्राण, बुद्धि और प्रज्ञा शक्तियों को ठीक उसी तरह का बना देता है, जिस प्रकार का इष्ट होता है ।

साधना काल में शिष्य गुरु का ध्यान करता है, साकार और सगुण उपासक भगवान राम, भगवान कृष्ण, नृसिंह, परशुराम, हनुमान, भैरव आदि की उपासना करते समय उनके रूप का ध्यान करते हुए जप और नाम संकीर्तन करते हैं । देखने में समय गँवाने जैसी इस क्रिया में भी वैज्ञानिकता हो सकती है, केवल मात्र ध्यान और स्मरण से जिसका ध्यान किया जा रहा है उसकी समस्त क्षमताओं का अपने अन्दर विकास किया जा सकता है । स्थूल बुद्धि के लोगों के लिए यह कुछ अटपटा-सा लगता है, किन्तु वैज्ञानिकों द्वारा पूर्ण परीक्षित निम्न उदाहरण यह बताता है कि ध्यान एक पूर्ण विज्ञान सम्मत विधान है जो सामान्य व्यक्ति में भी इच्छित असामान्य गुणों और शक्तियों का विकास कर सकता है ।

कोनेर सेरिथ (बेवेरिया) की थेरेसी न्यूमेन का जन्म गुड फ्राइडे के दिन हुआ । २० वर्ष तक की आयु में थेरेसी के जीवन में किसी भी प्रकार की विशेषता दिखाई नहीं दी । २० वर्ष की आयु में एकाएक एक दुर्घटना हुई जिसमें उनकी दोनों आँखें और दोनों हाथ-पाँव जाते रहे । मनुष्य जब तक सांसारिक सुखों के भोग की क्षमता रखता है तब तक कम ही लोग आध्यात्मिक सत्यों की शोध की ओर तत्पर होते हैं पर यह कैसी विडम्बना है कि कष्ट पड़ते ही मनुष्य भगवान की, आध्यात्मिकता की शरण लेता है यदि मनुष्य अशक्त होने से पहले ही अपना जीवन लक्ष्य निर्धारित कर ले तो उसे मनुष्य शरीर सार्थक करने में असुविधा न हो समय की चूक अन्ततः पश्चाताप का ही कारण बनती है और जो जीव भगवान के घर से असीम क्षमताएँ लेकर जन्मता है, वह सब कुछ यहाँ खोकर हाथ मलता हुआ चला जाता है ।

अन्धी और अपंग हो जाने पर थेरेसी न्यूनमेन को याद आया कि बेवेरिया में कोई थेरेसी नाम के महान सन्त हैं, उन्होंने सन्त थेरेसी से सम्पर्क स्थापित किया और उन्हें आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक के रूप में याद करने लगीं । १९२३ में पहली बार उनके जीवन में एक विलक्षण घटना घटी, वह था उनका अन्धापन और अपंगुता का दूर हो जाना । अब थेरेसी न्यूनमैन को सांसारिकता से पूर्ण अरुचि हो गई और वे भगवान ईसामसीह का ध्यान और जप करने लगीं, उन्हें धीरे-धीरे स्वादयुक्त भोजन और पेय से भी अरुचि हो गई, क्योंकि मन की चंचलता के वही सब से बड़े कारण थे । भगवान में मन एकाग्र करने के लिए शुद्ध और सात्विक आहार की आवश्यकता थी । थेरेसी ने वही लिया । पूजा में चढ़ाई गई एक छोटी-से-छोटी केक ही वह लेती और उठते-बैठते महाप्रभु ईसा का ही ध्यान करती ।

महाप्रभु ईसा की आत्मा से तदाकार के सूक्ष्म आत्मिक गुणों को समझना सम्भवतः शक्य न होता पर १९२६ में ही जब उनके मस्तक, छाती, हाथ और पैरों में ईसा के घाव पैदा होने शुरू हो गए तो लोग यहाँ तक कि वैज्ञानिक भी आश्चर्य चकित हुए बिना न रह सके । भावनाओं का अस्तित्व विज्ञान सिद्ध हो जाने पर भी उसकी महत्ता और विज्ञान न जानने के कारण जो वैज्ञानिक भावनाओं की उपेक्षा करते रहते हैं; उन्हीं वैज्ञानिकों ने इसकी पुष्टि की । १६ जुलाई, १९२७ को प्रोटेस्टेंट जर्मन समाचार पत्र के सम्पादक डॉ. फ्रिट्ज गैरलिक कोनेर सेरुथ जाकर थेरेसी से मिले । वे लम्बे अर्से से थेरेसी की—आलोचना करते आ रहे थे । उन्होंने थेरेसी के पास कई दिन रहकर बिताये उन्होंने देखा कि वे कुल एक छोटी-सी केक पर दिन भर बिताती हैं । पूछने पर उन्होंने बताया, मैं अपने लिए प्रकाश से सारे जीवन-तत्व ग्रहण कर लेती हूँ । उन्होंने बताया में हर शुक्रवार को ईसा के कथित स्वरूप का ध्यान करती हूँ, उस समय उनकी अनुभूतियाँ एकाकार हो उठती हैं । डॉ. फ्रिट्ज गैरलिक लिखते हैं—"मैने देखा कि उन्हें शुक्रवार के दिन प्रातःकाल से ही अचेतनता पढ़ने लगी, उसी अवस्था में उनके हाथ, मस्तक और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाँवों के घावों से अनायास बिना किसी दबाव के रक्त रिसने लगा । सामान्यतः वे १२१ पौण्ड वजन की थीं पर उस दिन उनका भर १० पौण्ड कम हो गया । गुरुवार की रात बारह बजे से दर्द बढ़ना शुरू होता है और शुक्रवार के उपरान्ह एक बजे तक बड़ी ही व्यथापूर्ण स्थिति रहती है । उस कष्ट के बीच थेरेसी के मुख मण्डल पर अपूर्व कान्ति दिखायी देती थी । कई बार तो मुझे यह भ्रम हो जाता था कि थेरेसी की मुखाकृति में ईसा की मुखाकृति प्रतिबिम्बित हो उठी है । इसके बाद स्थिति सुधरने लगती है और दूसरे दिन तक घाव ठीक हो जाता है । उस दिन उनकी मानसिक चेतना विक्षुब्ध हो जाती और एक दिव्य जगत में प्रवेश कर जाती । तब वे हिब्रू भाषा में प्रवचन प्रारम्भ करतीं और यह प्रवचन कई बार तो अक्षर व अक्षर ईसा मसीह के प्रवचन होते । आत्मिक साहचार्य और सायुज्य द्वारा कोई व्यक्ति किसी दैवी शक्ति या महान आत्मा के गुणों से परिपूर्ण हो सकता है, यह देखकर मैं दंग रह गया और आज भी उसका कारण जानने के लिए लालायित हूँ पर लगता है कि उसका उत्तर देने में विज्ञान नितान्त असहाय और असमर्थ है ।"

यह विवरण उन्होंने अपने अखबार में छापा था । स्वामी योगानन्द ने भी थेरेसी से भेंट की थी और अपनी प्रसिद्ध पुस्तक "आटोबाईग्राफी ऑफ ए योगी" में इस घटना का ऐसा ही उल्लेख किया है । वस्तुतः ध्यान की गहराई में प्रवेश करने पर एक ऐसा समय आता है, जब मनुष्य संसार को भूल कर ऐसे शान्तिमय प्रदेशों में पहुँचता है, जहाँ आत्मा स्वरूपस्थित रहती है, परमात्मा के सन्निकट रहती है ।

तब अन्तःकरण की समस्त वासनाएँ विलीन हो जाती हैं, इन्द्रियों की चेष्टाएँ शान्त हो जाती हैं । केवल ईश्वर रहता है ।

एक शुद्ध मन जो परमात्मा में स्थित है, उससे पवित्र कोई मन्दिर नहीं है । उस पवित्र देश में, जिस में परमात्मा में स्थिर हुआ मन प्रवेश करता है, दूसरा कोई पवित्र स्थान नहीं है । परमात्मा में उठते हुए विचार की माप नहीं की जा सकती । पवित्रता, शान्ति, आनन्द, इन्हीं से ध्यान की अवस्था प्राप्त होती है । इसी एकान्त और पवित्र समय में धार्मिक विचारों का उदय होता है । आत्मा उद्‌गम स्थान के अत्यन्त समीप रहती है । इसी व्यक्तित्व का स्रोत विकसित हो कर एक महान शीघ्रगामी नद का स्वरूप धारण कर, उस सत्य सनातन कैवल्य पद की ओर प्रवाहित होता है जो परमात्मा का समुद्रवत् चित्त है । वह केवल एक है ।

ध्यान के समय जीवात्मा महान (परमात्मा) से उन दैवी गुणों को आकर्षित करती है, जो उसके स्वाभाविक हैं । जैसे निर्भयता, सत्यता, अमरत्व आदि । इसीलिए साधना में ध्यान धारणा का महान महत्त्व है ।

पर्यवेक्षण योग की साधना, ध्यान धारणा

पीला और नीला रंग मिलाकर हरा रंग बनता है । हरे रंग का स्वतन्त्र कोई अस्तित्व नहीं । यदि इस सम्मिश्रण को बदल दिया जाय तो स्थिति दूसरी बन जायेगी । पीला लाल से मिलकर नारंगी बन जाता है । इसी प्रकार जीव भी एक सम्मिश्रण है । वह शरीर के साथ घुला रहता है तो प्राणी या जीव कहलाता है । उस पर प्रकृति का बड़ा भाग शरीर के ऊपर आवरण आच्छादन की तरह बढ़ा होता है । इसलिए वह अपने आप को शरीर मानता रहता है और उसी की सुख-सुविधा को प्रधान रूप से ध्यान में रखता है । लिप्सा और लालसाएँ उसे घसीटती रहती हैं । इन्द्रियों के रस उसे ललचाते रहते हैं । मन की तरंगें गहरे नशे की तरह उस पर छायी रहती है । सामान्यतया यही स्थिति एवं व्याख्या है, औसत जीवधारी की ।

किन्तु यह सामान्य नहीं असामान्य, स्वाभाविक नहीं, अस्वाभाविक स्थिति है । वैसी जैसी नदी में बहते हुए रीछ को किसी अनजाने ने तैरकर उस कम्बल को लूट लाने का प्रयास किया था और तैरते हुए समीप पहुँचने पर रीछ ने उसे पकड़ लिया था । प्रयत्न करने पर भी उसे छोड़ नहीं रहा था । दोनों गुत्थम गुत्था हो रहे थे । किनारे पर खड़ा साथी यह सब देख रहा था । उसने यह दृश्य देखा तो आवाज लगाई कि कम्बल पकड़ में नहीं आता तो उसे छोड़ दो और लौटकर आ जाओ । कम्बल के साथ गथे हुए आदमी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने कहा मजबूरी आ गई । मैं तो कम्बल को छोड़ता हूँ पर, यह कम्बल ही मुझे नहीं छोड़ता । किसी ने किसी को छोड़ा नहीं आखिर दोनों ही डूब गए ।

शरीर घोड़ा है और आत्मा सवार । घोड़े पर सवार बैठा हो तो यह स्वाभाविक है, किन्तु जब सवार पर घोड़ा लद ले, तब कैसा विचित्र लगेगा । नाव आदमियों को पार लगाती है, पर यदि वही नाव आदमियों के सिर पर लदे तो कैसा अजीब लगेगा । शरीर की प्रभुता और आत्मा की पराधीनता में ऐसी ही विलक्षणता है, जिसके हम सब दर्शक ही नहीं भुक्तभोगी भी हैं । असमंजस इसी द्विविधा का रहता है । शरीर के सहारे सन्मार्ग पर चलते हुए जीवधारी को अपना लक्ष्य पूरा करना था पर होता उल्टा है । आने के समय खाली हाथ नंगे शरीर आता है, पर जाते समय पापों का पिटारा और पश्चात्ताप लदा होता है ।

स्थिति को कैसे बदला जाय ? समय रहते कैसे सम्भाला जाय ? उसका उपाय एक ही है कि अपना विकृत दृष्टिकोण बदला जाय । शरीर के और प्राणी के सम्बन्धों में जो अवांछनीय भ्रान्ति लद गई है, उसे मिटाया जाय । उसे मिलना परमात्मा के साथ था और जिस प्रकार लोहा पारस को छू कर सोना बनाता है, उसी प्रकार लघु से विभु, तुच्छ से महान और नर से नारायण बनना था, पर बन गया कुछ ऐसा जिसे देखकर दया भी आती है और हँसी भी ।

रंगों के मिश्रण का उदाहरण आरम्भ में इसी विसंगति को देखते हुए दिया था, नारंगी रंग की शाल ओढ़नी थी तो पीले का लाल के साथ सम्मिश्रण करना था । नीले के साथ मिल जाने में सर्वथा दूसरी स्थिति हो गई ।

शरीर और जीव का सम्बन्ध जिस प्रकार जुड़ गया है, उसे शोचनीय ही रहना चाहिए । वह तो ऐसा ही हो गया जैसे कि किसी पुरुष का किसी स्त्री के साथ विवाह हो जाय और अपना घर छोड़कर सुसराल में जोरू का गुलाम बनकर रहे । मालिक को नौकर के यहाँ नौकर रहना पड़े और दासानुदास कहलाना पड़े ।

स्थिति में परिवर्तन लाना आवश्यक है । जिसके साथ जुड़ना चाहिए उसको उसी का साथी अनुयायी बनकर रहना चाहिए । आत्मा परमात्मा का अंश है उसकी शोभा उसी के साथ रहने में है । पुष्प की शोभा देवता के चरणों में चढ़ने में ही है । कीचड़ की नाली में पड़ने से नहीं । मनुष्य के सम्मुख सबसे बड़ी समस्या यही है कि उसका योग परमात्मा के साथ होना चाहिए न कि सुविधा के लिए मिले हुए उपकरण औजारों का गट्ठा सिर पर लादे फिरने में ।

स्थिति को वास्तविक बनाने के लिए जो प्रयत्न करने होते हैं उनमें से एक पर्यवेक्षण योग भी है । इसी को कहते हैं सरसरी निगाह से देखते रहने की अपेक्षा उसे गम्भीर वैज्ञानिक दृष्टि से देखना । सामान्य मनुष्य संसार को एक मेला समझकर बाल बुद्धि से कौतुक कौतूहल की तरह देखते रहते हैं, किन्तु जिन्हें सूक्ष्म दृष्टि मिली है, वह उसी दृश्य में से अनेकों काम की बातें जान लेते हैं और कई उपयोगी शिक्षाएँ एवं प्रेरणाएँ साथ लेकर वापस लौटते हैं । इसी को वैज्ञानिक दृष्टि कहते हैं । वैज्ञानिक सूक्ष्म बुद्धि होते हैं । उनकी पर्यवेक्षण क्षमता पैनी और गहरी होती है । सामान्यों और असामान्यों के बीच यही अन्तर रहता है ।

पर्यवेक्षण योग इस विडम्बना से निवृत्ति पाने का अच्छा तरीका है । उसका विधान भी बहुत सरल है । शिथिलीकरण मुद्रा (शरीर और मन को पूरी तरह ढीला छोड़ देना) की स्थिति का सामान्य अभ्यास जब हो जाय तो उसे कुछ और गहरा करना चाहिए । गहराई इस भावना तक ले जानी चाहिए कि जीव अपने आपको शरीर से सर्वथा प्रथक् हो जाने की स्थिति अपने को अनुभव करे । जीव को किसी बहुत ऊँचे पर उड़ने वाले वायुयान पर सवार होकर अपनी वस्तुस्थिति का संसार के वास्तविक स्वरूप का निरीक्षण पर्यवेक्षण करना चाहिए ।

ऊँचे आकाश में गरुड़ पक्षी की तरह देखना चाहिए कि अपना शरीर मृत स्थिति में पड़ा है । कुटुम्बी लोग उसकी अन्त्येष्टि की तैयारी कर रहे हैं । इस कत्य को करते समय वे रोते कलपते भी हैं, पर कुछ ही समय उपरान्त वे अपने-अपने ढँग से स्वावलम्बी हो जाते हैं और कुछ ही महीनों बाद ऐसी स्थिति आ जाती है, जिसमें वे एक प्रकार से भूल ही जाते हैं । यदाकदा ही नाम लेने की जरूरत पड़ती है । मोह के बन्धनों से सभी स्वजन परिजन छुट्टी पा लेते हैं ।

अब और आगे बढ़ा जाय, कितने ही जन्मों की ऐसी ही कल्पना की जाय जिसमें अगणित बार जन्मना मरना पड़ा । अनेक सम्बन्धी, कुटुम्बियों के साथ संयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बिछोह हुआ । जन्मते समय खुशी और मरते समय रंज मनाया गया । सम्बन्धों में कटुता एवं मिठास भी चलती रही और अन्त में सिनेमा बन्द होने की तरह घण्टी बजी और चमकते दमकते हाल में अँधेरा छा गया । अन्य योनियाँ तो मात्र भोगा योनि ही हैं, पर मनुष्य जीवन कर्म योनि भी है । कर्मों का अवलोकन किया गया तो प्रतीत हुआ कि सार्थक कम ही बन पड़ा जो किया गया वह या तो निरर्थक था या अनर्थ । प्रतिफल हाथों हाथ नहीं भुगते जाते । वे पीछे के लिए प्रारब्ध बनते रहते हैं । स्वर्ग-नरक के रूप में या पीड़ा-व्यथाओं के रूप में जो भुगतना पड़ता है । उस संचय की गठरी लेकर ही हर बार चलना पड़ा और चिरकाल तक उस कर्मफल का त्रास सहना पड़ा ।

यह निषेधात्मक पक्ष हुआ अब उसी स्थिति में जीव को गरुड़ बनकर बहुत ऊँचे आकाश में उड़ते हुए यह भी देखा जाय कि शरीर की घनिष्ठता घटा कर उसे परमात्मा के साथ जोड़ दिया जाय और उनके अनुशासन में चला जाय, सान्निध्य में रहा जाय तो कितने आनन्द का रसास्वादन करने को मिलता है । महामानव, ऋषि एवं देवताओं की स्थिति में रहने अथवा और असंख्यों का भला करने का अवसर मिलता है ।

दोनों स्थितियों की अच्छाई-बुराई सोचते हुए शरीर से अलग होने की भाव स्थिति से ही यह निर्णय करना चाहिए कि दोनों में से कौन-सी स्थिति का चुनाव श्रेयस्कर है । उपयुक्त हो उसे वरण कर लिया जाय । उसी आधार पर जीवन बिताने का प्रण करते हुए शिथिलीकरण मुद्रा समाप्त करके शरीर में लौट आया जाय और जो ज्ञान लाभ उस स्थिति में मिला उसे शेष जीवन में कार्यान्वित किया जाय । इस पर्यवेक्षण योग को धारण नित्य नियमित रूप में करते रहने पर मनुष्य उस स्थिति को प्राप्त कर लेता है जो प्रत्येक का लक्ष्य है ।

साधना स्वर्ण जयन्ती वर्ष का विशेष साधना-क्रम

हमारे अनवरत साधना-क्रम को चलते हुए सन् १९७६ में पचास वर्ष पूरे हो गए । उत्सव परम्परा के अनुसार २५ वर्ष में रजत-जयन्ती, पचास वर्ष में स्वर्ण-जयन्ती मनाई जाती है । हमारा आध्यात्मिक दिन बसन्त-पंचमी है । अब से ५० वर्ष पूर्व उद्देश्य पूर्ण जीवन में प्रवेश करते हुए उसी मुहूर्त में नव-जीवन धारण किया था । इसलिए सन् ७६ की बसन्त-पंचमी से सन् ७६-७७ की बसन्त पंचमी तक के समय को साधन स्वर्ण जयन्ती वर्ष घोषित किया गया है ।

बसन्त पर्व को ही हमारे समस्त महत्त्वपूर्ण कार्य आरम्भ होते रहे हैं—(१) २४ लक्ष जप के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की शृंखला, (२) अखण्ड घृत दीप की स्थापना, (३) स्वाधीनता संग्राम के सैनिकों में प्रवेश, (४) अखण्ड-ज्योति पत्रिका का प्रकाशन, (५) गायत्री तपोभूमि का शिलान्यास, (६) चार लाख धर्मेनिष्ठों का अभूतपूर्व सम्मेलन सहस्र कुण्डी गायत्री महायज्ञ के रूप में, (७) युग-निर्माण आन्दोलन का शुभारम्भ, (८) चारों वेदों के सायण भाष्य का श्रीगणेश, (९) उपनिषद, दर्शन, स्मृति, ब्राह्मण, आरण्यक, सूत्र ग्रन्थ एवं पुराणों के हिन्दी भाष्य का प्रारम्भ, (१०) अनेक भाषाओं की पत्रिकाएँ तथा पुस्तकें प्रकाशित करके विचार-क्रान्ति का विस्तार, (११) शान्ति कुंज की स्थापना, (१२) साधना सत्रों की आरण्यक पद्धति का पुनर्जन्म, (१३) महिला जागरण अभियान का सूत्र संचालन । यह तेरह कार्य ऐसे हैं जो सर्वविदित हैं । अविदित प्रयासों का उल्लेख इनमें नहीं है । उनकी चर्चा का समय अभी नहीं आया । समुद्र मन्थन से १४ रत्नों का निकलना प्रसिद्ध है । अपने जीवन मन्थन के १३ प्रयास ऊपर मौजूद हैं । इस शृंखला का चौदहवाँ प्रयास इस साधना वर्ष के विशेष साधना अभियान को कहा जा सकता है ।

स्वर्ण-जयन्ती वर्ष साधना वर्ष होगा । इसमें एक लाख निष्ठावानों को साधनात्मक मार्ग-दर्शन एवं सहयोग करने का निश्चय किया है । यह संख्या देखने भर में बड़ी है, पर वह अपने विशाल परिवार को देखते हुए बहुत छोटी है । सब इच्छुकों में से काट-छाँट करके ही एक लाख की संख्या सीमित करनी पड़ेगी ।

इस साधना अभियान में सम्मिलित होने वालों के लिए बसन्त पर्व ५ फरवरी सन् ७६ गुरुवार से, प्रतिदिन ४५ मिनट का एक गायत्री साधना परक साधना-क्रम निर्धारित किया गया है । यह समय सूर्योदय से ४५ मिनट पूर्व से आरम्भ होकर सूर्योदय होने तक समाप्त हो जाना चाहिए । यथासम्भव इसमें नियमितता बरती जाय । सूर्य उदय का समय प्रायः हर महीने बदलता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहता है । इसलिए घड़ी के हिसाब से हर महीने पंचांग देखकर अपनी साधना के समय में हेर फेर करते रहना चाहिए ।

सूक्ष्म विज्ञान के अनुसार एक समय में अनेक व्यक्तियों में एक जैसी मानसिक क्रिया की अन्तरिक्ष में जो विशेष प्रतिक्रिया होती है; वह बिखराव की स्थिति में सम्भव नहीं । अपने एक लाख साधक प्रस्तुत विशिष्ट उपासना के समय, क्रिया और भावना की दृष्टि से एकता, एकात्मता को आधार मानकर अपना कृत्य करेंगे तो असामान्य शक्ति उत्पन्न होगी । भारतीय धर्म में प्रातः सायं सूर्योदय को संध्याकाल माना गया है और उस समय की उपासना का विशेष महत्त्व बताया गया है । इस्लाम धर्म में भी नमाज के लिए समय नियत है और उसका सतर्कतापूर्वक पालन किया जाता है ।

गायत्री मन्त्र की महत्ता असाधारण है । वह सार्वभौम-उपासना है । मत-मतान्तरों की चपेट में उसे सीमित नहीं किया जाना चाहिए । इसी प्रकार प्रस्तुत ४५ मिनट के साधन मण्डल में अन्य प्रक्रियाएँ सम्मिलित की गई हैं, वे भी सर्वजनीन हैं । उन्हें बिना किसी सम्प्रदाय भेद के प्रयुक्त किया जा सकता है । अन्य कोई उपासना चल रही हो या चलानी हो तो उसे निर्धारित ४५ मिनट का समय छोड़कर आगे-पीछे किया जा सकता है ।

हमारा स्वयं का अनुभव इसी साधना-क्रम का है उसके सभी उतार-चढ़ावों का हमें ज्ञान है । अस्तु उसी को सन् ७६ के साधना वर्ष के लिए निर्धारित किया था । हम प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में मार्ग-दर्शन और सहयोग करेंगे; साथ ही हमारी बागडोर सम्भालने वाली शक्ति के द्वारा मण्डली पर विशेष प्रकाश, प्रेरणा मिलने का लाभ मिलता रहा । यह सब सूक्ष्म व्यवस्था बन जाने पर ही इस संघ साधना का उपक्रम किया गया था ।

निर्धारित ४५ मिनट में १५ मिनट अन्य साधनाओं के लिए और ३० मिनट गायत्री जप के लिए निर्धारित हैं । औसतन इस अवधि में ६०० मन्त्र जप हो जाना चाहिए । एक लाख व्यक्तियों द्वारा हर दिन ६०० मन्त्र जपे जाने से कुल संख्या ६ करोड़ होती हैं । वर्ष में यह संख्या ३६०× ६=२१६० करोड़ हो जाती है । इन्हीं साधकों में से जिन्हें सुविधा हो उनसे चैत्र और आश्विन की नवरात्रियों में २४ हजार के नौ दिवसीय अनुष्ठान करने के लिए कहा है । ऐसे लोग न्यूनतम एक हजार भी निकले, उनका यह नवरात्रि जप २४० हो जाता है । इस प्रकार कुल मिलाकर २४०० करोड़ जप की यह एक वर्ष की संयुक्त जप संख्या हुई । यह उस युग का अभूतपूर्व अनुष्ठान है । इतनी बड़ी संख्या में सुनियोजित साधना-क्रम की संघ शक्ति से जुड़ी हुई साधना अब तक कभी कदाचित ही हुई हो एक दिन में ६ करोड़ गायत्री जप होने का अर्थ है २४ लक्ष के २४ महापुरश्चरणों का हर दिन सम्पन्न होना । दूसरे शब्दों में इसी बात को यों भी कहा जा सकता है कि जितनी साधना हमने २४ वर्ष में की थी, उतनी इस साधना मण्डल द्वारा हर दिन पूरी हो जाया करेगी ।

आज की व्यापक क्षेत्र में उलझी परिस्थितियों को सुलझाने में इसके द्वारा विशेष चेतना उत्पन्न होने की आशा की जा सकती है । सम्मिलित होने वालों का विशेष लाभ भी इसमें है । सहकारिता और संघ शक्ति का लाभ जड़ और चेतन दोनों ही क्षेत्रों में अति स्पष्ट है । अल्प बचत योजना के अनुसार थोड़ा-थोड़ा पैसा जमा करके एक केन्द्र के हाथों सौंपा जाय, तो उससे अधिक ब्याज भी मिलता है और देश के उद्योगों में भी उस धन से विशेष सहायता मिलती है : इस साधना मण्डल में सम्मिलित होकर हर साधक अपना लाभ भी अनेक गुना बढ़ा लेगा और छाये हुए अन्धकार का निवारण कर सकने वाला प्रकाश उत्पन्न करने का परमार्थ भी करेगा । निर्धारित उपासना क्रम इस प्रकार हैं—

(१) सूर्योदय का ठीक समय मालूम कर । उससे ४५ मिनट पूर्व साधना पर बैठें । बैटने से पूर्व स्नान करना और धुले वस्त्र बदल लेना सर्वोत्तम है; पर यदि किसी असमर्थता के कारण वैसा सम्भव न हो तो शौच आदि से निवृत्त होकर हाथ-पैर मुँह धोकर भी बैठा जा सकता है । शरीर को छूने वाले वस्त्र अण्डर-वियर, वनियान, धोती, पायजामा आदि तो धुले हुए बदल ही लेने चाहिए स्वेटर, कोट, कम्बल आदि गरम कपड़े रोज धुले होना आवश्यक नहीं ।

(२) पूजा की छोटी चौकी बनानी चाहिए । उस पर पीले रंग का वस्त्र बिछा रहे । मध्य में गायत्री

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माता का चित्र, बायीं ओर छोटी लुटिया में पानी भर कर जल कलश, दाहिनी ओर अगरबत्ती स्टेण्ड स्थापित करना चाहिए । मध्य में एक छोटी तश्तरी पूजा उपकरण चढ़ाने के लिए स्थापित की जाय ।

(३) दैनिक पूजा उपचार के लिए इन वस्तुओं की जरूरत पड़ती है, इनका पहले से ही प्रबन्ध करके रखा जाय । (१) जल के लिए पंचपात्र (छोटा गिलास) चमची, (२) चावल, (३) चन्दन अथवा रोली, (४) नैवेद्य (शक्कर की गोलियाँ किशमिश आदि), (५) पुष्प (न मिलने पर केशर चन्दन में रंगे हुए चावल) पंचोपचार पूजन के लिए यहाँ यह वस्तुएँ एक तश्तरी में रखनी चाहिए । पूजा पात्र को नित्य साफ करना चाहिए । अगरबत्ती, माचिस इसके अतिरिक्त हैं ।

(४) आसन कुश या चटाई का होना चाहिए । ठण्ड हो तो कम्बल बिछाया जा सकता है । पालथी मारकर सुखासन से सीधी कमर रखकर बैठना चाहिए ।

(५) समस्त पूजा उपचार में एक गायत्री मन्त्र का ही प्रयोग किया जाना है । भिन्न-भिन्न क्रियाओं के साथ यों, भिन्न-भिन्न मन्त्रों का भी विधान है, पर सम्प्रदाय भेद से उनमें विविधता भी कम नहीं है । शिक्षा के अभाव अथवा बाल-वृद्धि स्तर के लोगों के लिए अनेक मन्त्रों को शुद्ध याद करना कठिन पड़ता है । इस लिए एकता, एक रूपता को ध्यान में रखते हुए मात्र गायत्री मन्त्र ही हर प्रक्रिया में प्रयुक्त होने की व्यवस्था बनाई गई है ।

(६) गायत्री मन्त्र में कई लोग कई-कई ॐ लगाते हैं । अपने साधना-क्रम में एक ही ॐ प्रयुक्त होना है । उसका शुद्ध स्वरूप इतना ही है ।

'ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं, भर्गो देवस्य धीमहि । धियो योनः प्रचोदयात्' ।

(७) उपासना के लिए बैठने पर सबसे पहले पूजा उपचार के सभी साधनों पर एक दृष्टि डाल लेनी चाहिए ताकि बीच में उठने का विक्षेप न पड़े । जल-कलश में पानी भरकर उसे छोटी कटोरी से ढक दिया जाय । अगरबत्तियाँ जला ली जायें । घी का दीपक उसी दशा में रखना चाहिए जब धृत की शुद्धतापूर्ण विश्वास हो । समय जानने के लिए मालाया घड़ी का उपयोग किया जाता है । माला जपनी हो तो वह जमीन, शरीर या अन्य वस्त्रों को न छुए, इसलिए गौमुखी थैली की अथवा धुले तौलिए आदि की व्यवस्था करनी चाहिए ।

(८) उपासना क्रम छः भागों में इस प्रकार विभक्त है—(अ) आत्म-शोधन के लिए षट्कर्म, (आ) प्रतीक पूजा उपचार, (इ) सोऽहम् प्राण योग, (ई) गायत्री जप और ध्यान, (उ) खेचरी मुद्रा, (ऊ) सूर्य अर्ध्य दान ।

(अ) आत्म-शोधन—(१) बायें हाथ की हथेली पर जल लेकर दाहिने हाथ से ढकें । गायत्री मन्त्र का उच्चारण करते हुए जल अभिमन्त्रित करें । उसे सिर पर ले जाकर समस्त शरीर पर छिड़कें और भावना करें कि पवित्रता की दिव्य वर्षा से शरीर को पवित्र बनाया गया ।

(२) चमची में जल भरकर गायत्री मन्त्र के साथ उसे मुख में डालें । इस प्रकार तीन बार आचमन करें । स्थूल शरीर, सूक्ष्म शरीर और कारण शरीर को मन्त्र-मानसरोवर में स्नान कराने के लिए यह तीन आचमन है । वैसी ही भावना करते जाना चाहिए ।

(३) शिखा में गाँठ गलायें । शिखा स्थान पर बाल न हों तो उस स्थान पर जल स्पर्श करें ।

(४) प्राणायाम—कमर सीधी, बायाँ हाथ मुड़ा हुआ, हथेली चौड़ी, दाहिने हाथ की कोहनी बायाँ हाथ की हथेली पर बीचों-बीच चारों अँगुलियाँ बन्द । यह प्राणायाम मुद्रा । अँगूठे से दाहिनी नाक का छेद बन्द करके बायें नथुने से धीरे-धीरे पूरी साँस खींचना । यह एक पूरक हुआ । साँस भीतर रोकना, दायें हाथ की तर्जनी और मध्यमा अँगुलियों से बायाँ नथुना भी बन्द कर लेना अर्थात् दोनों नथुने बन्द—यह 'अन्तः कुम्भक' हुआ । अँगूठा हटाकर दाहिना नथुना खोल देना—उसमें से साँस को धीरे-धीरे बाहर निकालना यह 'रेचक' हुआ । इसके बाद कुछ समय साँस बाहर रोक देनी चाहिए । बिना साँस के रहना चाहिए, इसे 'बाह्य कुम्भक' कहते हैं । इन चारों क्रियाओं के करने से एक प्राणायाम पूरा होता है ।

साँस खींचने के साथ-साथ भावना करनी चाहिए कि संसार में संव्याप्त प्राण-शक्ति और श्रेष्ठता के तत्वों को साँस द्वारा खींच रहे हैं ।

साँस रोकते समय भावना करनी चाहिए कि प्राणवान दिव्य शक्ति तथा श्रेष्ठता अपने रोम-रोम में प्रवेश करके उसी में रम रही है । जैसे मिट्टी पर जल डालने से वह उसे सोख लेती है, उसी तरह शरीर और मन में प्राणायाम की जो साँस भीतर पहुँची उसमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से समस्त श्रेष्ठता को सोखकर अपने भीतर धारण कर लिया ।

साँस छोड़ते समय भावना करनी चाहिए कि जितने दोष, दुर्गुण अपने में थे, वे साँस के साथ निकल कर बाहर चले गए और अब कभी लौटकर वापस नहीं आयेंगे ।

इसके उपरान्त कुछ समय बिना साँस के ग्रहण किये रहना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि निकाले हुए दोष, दुर्गुणों को सदा के लिए बहिष्कृत कर दिया गया, उन्हें कभी भी वापस न आने के लिए दरवाजा बन्द कर दिया गया ।

यह एक प्राणायाम है । ऐसे तीन प्राणायाम करने चाहिए । कृत्य आरम्भ में करने से पूर्व तीन बार गायत्री मन्त्र जप लेना चाहिए । क्रिया के साथ मन्त्रोच्चार की आवश्यकता नहीं है ।

(५) न्यास—बायें हाथ की हथेली पर जल लेना-दाहिने हाथ की पाँचों अँगुलियों को एकत्र करना, उन एकत्रित अँगुलियों को हथेली वाले जल में डुबोना । इसके बाद गायत्री मन्त्र मन ही मन ही मन उच्चारित करते हुए (१) मुँह, (२) दोनों नासिका छिद्र, (३) दोनों नेत्र, (४) दोनों कान, (५) दोनों भुजाएँ, (६) दोनों जंघाएँ इन अंगों को भीगी अँगुलियों से पहले दाहिनी ओर पीछे बायीं ओर क्रम से स्पर्श किया जाय । यह न्यास कृत हुआ । इसका उद्देश्य शरीर के महत्त्वपूर्ण अंगों में पवित्रता की भावना भरना उसमें देव चेतना उत्पन्न करना है ।

मुख के स्पर्श में भावना की जाय कि जिह्वा में सन्निहित रसना तथा वाणी दोनों को संयत रखा जायेगा । नासिका से दूसरों की सुगन्ध (प्रशंसा) ही सूँघी जायेगी । नेत्रों से उत्तम ही पढ़ा, देखा जायेगा । कानों से उत्तम ही पढ़ा-देखा जायेगा । कानों से हितकारी तथा सत्प्रेरणादायक शब्द ही सुनेंगे । भुजाओं को श्रमशील और कर्मनिष्ठ रखेंगे । कुकर्म या अनाचार में हाथ न डालेंगे । दूसरों की सहायता को हाथ बढ़ाते रहेंगे । जंघाओं के स्पर्श का अर्थ है—गतिशीलता तथा जननेन्द्रिय संयम । जड़ होकर न बैठा जाय, प्रगति के पथ पर चला जाय, मर्यादाओं का उल्लंघन न किया जाय, सन्तान की संख्या न बढ़ायी जाय । इसके उपरान्त शेष जल को समस्त शरीर पर आरम्भिक पवित्रीकरण की तरह फिर छिड़कें और भावना करें कि सभी ज्ञानेन्द्रियाँ कर्मेन्द्रियाँ सत्पथ पर चलती रहेंगी ।

(६) पृथ्वी पूजन—गायत्री माता की तरह ही धरती माता, मातृ भूमि भी पूजनीय है । जल, अक्षत, पुष्प, चन्दन से उसकी पूजा के लिए भूमि पर अथवा उपचार सामग्री की तश्तरी में अर्पित करें । मातृ भूमि के लिए, विश्व मानवता के लिए, बढ़-चढ़ कर त्याग बलिदान करने की भावना इस कृत्य के साथ रहनी चाहिए । यह आत्म शोधन कृत्य पूर्ण हुआ ।

(आ) देव पूजन—जल कलश को शान्तिदायक धर्म संस्थापक रचनात्मक देव शक्तियों का संयुक्त प्रतीक माना गया है । दीपक या अगरबत्तियों में जलने वाली अग्नि अधर्म उन्मूलक सुधार संघर्ष की शक्तियों का प्रतिनिधित्व करती है । कलश नर तत्व और अग्नि नारी तत्व है । अवांछनीयताओं का उन्मूलन और सत्प्रवृत्तियों की स्थापना एक ही प्रक्रिया के दो अविच्छिन्न अंग माने गए हैं । भगवान ने अपने अवतरण का उद्देश्य अधर्म का विनाश और धर्म की स्थापना "यदा यदा हि धर्मस्य....." श्लोक में बताया है । साधक को व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक क्षेत्र में उन दोनों ही प्रवृत्तियों को कार्यान्वित करना है । इस भावना को जीवन्त रखने के लिये जल देवता और अग्नि देवता को साक्षी रूप में पूजा पीठ पर स्थापित किया जाता है ।

आरम्भ में देव सत्ता के आह्वान की भावना करते हुए गायत्री मन्त्र सहित हाथ जोड़ कर मस्तिष्क नवाया जाय । इसके पश्चात क्रमशः एक चमची जल, थोड़े से अक्षत, नैवेद्य, चन्दन या रोली (कुंकुम) पुष्प समर्पित किये जायें । प्रत्येक अर्पण के साथ गायत्री मन्त्र मन ही मन बोला जाय । पूजन की वस्तुएँ चौकी पर रखी छोटी तश्तरी में चढ़ाई जायें, ताकि चौकी का वस्त्र खराब न हो ।

जल अर्पण में ईश्वरीय प्रयोजन के लिए श्रम-स्वेद देने की, अक्षतों के साथ अपनी आजीविका का एक अंश देने की, नैवेद्य के साथ मधुरता का वातावरण बनाने की, चन्दन के साथ अपने क्रिया-कलाप को लोकोपयोगी बनाने की, पुष्प के साथ अन्तःकरण में कोमल सद्भाव, सम्वेदनाएँ उत्पन्न करने की तत्परता उभारनी चाहिए । अन्त में हाथ जोड़ कर मस्तिष्क

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

झुकाते हुए परमात्मा के, विश्वात्मा के सम्मुख समर्पित भावना के साथ नमन करने की भावाभिव्यक्ति करनी चाहिए ।

आत्म-शोधन और देव पूजन यह दो कृत्य विधि विधान की हलचलों एवं उपकरणों की सहायता से किये जाते हैं । इससे आगे के (१) सोऽहम् प्राणयोग, (२) जप ध्यान । (३) खेचरी मुद्रा । यह तीन कृत्य प्रधानतया ध्यानपरक एवं भावपरक हैं । मात्र जप में ही इच्छानुसार माला का उपयोग किया जाता है । घड़ी रहने पर वह भी अनिवार्य नहीं ।

(इ) सोऽहम्-प्राण योग—बायाँ हाथ नीचे दाँया ऊपर गोदी में रखें—नेत्र अधखुले । साँस धीरे-धीरे दोनों नथुनों से खींची जाय । नथुने बन्द करने या खोलने की इसमें आवश्यकता नहीं होती । धीरे-धीरे साँस खींचें, पूरे फेफड़े वायु से भरें, साथ ही ध्यान करें कि अखिल ब्रह्माण्ड में संव्याप्त प्राण साँस के साथ खिंचकर अपने शरीर में प्रवेश कर रहा है । प्रवेश के साथ 'सो' की सीटी जैसी ध्वनि हो रही है । पूरी साँस भर जाने पर उसे रोकें नहीं, वरन् तुरन्त धीरे-धीरे बाहर निकालना आरम्भ कर दें । इस विसर्जन के साथ 'हम्' की फुसकार जैसी ध्वनि होने की भावना करें । इस साधना में अन्तः-कुम्भक एवं बाह्य-कुम्भक की आवश्यकता नहीं होती । साँस का आवागमन क्रम लगातार चलता रहता है । साँस खींचते समय—'सो' वह परमात्मा अपने भीतर प्रवेश करके समूची जीवन सत्ता को अपने अधिकार में ले रहा है, ऐसी भावना करनी चाहिए और 'हम्' विसर्जन के साथ हमारी स्थूल अहंकारिता, संकीर्ण स्वार्थपरता बहिष्कृत हो रही है । ऐसी मान्यता सुदृढ़ बनानी चाहिए । विश्वात्मा में अपनी आत्मा को होम देने की, व्यष्टि को समष्टि परायण बनाने की, अपने कण-कण में विश्वात्मा को ओत-प्रोत कर लेने की यह दिव्य साधना है । वह अजपा जाप एवं हंस-योग भी कहलाने वाली 'सोऽहम्' प्रक्रिया पाँच बार करनी चाहिए ।

(ई)—आधा घण्टा गायत्री जप के लिए रखा गया है । माला या घड़ी से काल गणना की जा सकती है । नियत स्थान, नियत समय और नियत संख्या के तीनों तथ्यों का समन्वय रहने से हर साधना अधिक सफल होती है । जप में कण्ठ, होठ, जीभ आदि सभी स्वर यन्त्र चलते रहें, पर उच्चारण इतना धीमा हो कि उसे समीप बैठे व्यक्ति भी ठीक तरह समझ न सकें । माला का उपयोग हो रहा हो तो तर्जनी काम में नहीं लानी चाहिए । अँगूठा, मध्यमा और अनामिका अँगुलियों के सहारे ही दाने खिसकाने चाहिए । बड़े मध्य दाने का उल्लंघन नहीं करते । जब १०८ दाने पूरे हो जाते हैं तो माला को उलट देते हैं ।

जब के साथ-साथ प्रभात कालीन अरुणाभ सूर्य का प्रभा पुंज सविता देवता का ध्यान करना चाहिए । पूर्व दिशा से पीत वर्ण सूर्य निकल रहा है, उसकी दिव्य किरणें हमारी समूची सत्ता में 'एक्सरेज' की तरह प्रवेश कर रही हैं । तीन शरीरों के तीन विशिष्ट केन्द्र हैं इनमें होकर यह सविता देवता का प्रकाश उन शरीरों में प्रवेश करता है ।

स्थूल शरीर का केन्द्र नाभि है—यहाँ रुद्र ग्रन्थि मानी जाती है । प्रज्ञा पुंज सविता देवता की किरणें इस रुद्र केन्द्र में होकर रक्त माँस से बने शरीर के प्रत्येक जीवाणु में प्रवेश करती हैं और शक्ति, सक्रियता एवं सच्चरित्रता की प्रचुर मात्रा भर देती हैं ।

सूक्ष्म शरीर का केन्द्र मस्तिष्क है । उसकी विष्णु ग्रन्थि भ्रू-मध्य भाग में है । इसी को आज्ञाचक्र कहते हैं । इसमें होकर सविता देवता का तेजस् प्रवेश करता है और समूचे विचार संस्थान को आच्छादित कर लेता है । विवेकशीलता, बुद्धित्ता एवं सृजनात्मक सद्विचारों की बहुलता यह तीन अनुदान सविता देव अपने सूक्ष्म शरीर को प्रदान करते हैं ।

कारण शरीर का केन्द्र दोनों पसलियों के जोड़ पर आमाशय स्थान पर अवस्थित 'हृदय' केन्द्र में है । यह आध्यात्मिक 'हृदय'—शरीर में धड़कने वाले रक्त के थैले से भिन्न है । इसे विष्णु ग्रन्थि अथवा सूर्य चक्र कहते हैं । यहाँ होकर प्रज्ञा पुंज सविता देवता कारण शरीर में प्रवेश करते हैं और उच्चस्तरीय आदर्शवादी आस्था, आत्मज्ञान से प्रभावित देव उमंगें आत्मीयता, करुणा, उदारता जैसी सद्भावनाएँ-अनुदान रूप में प्रदान करते हैं ।

अपनी सारी सत्ता सूर्य पिण्ड जैसी ज्योतिर्मय हो रही है । अज्ञानांधकार मिट रहा है । उसके साथ रहने वाली अनेकों कुत्साएँ, कुण्ठाएँ पलायन कर रही हैं । भीतर सद्भावनाओं की और बाहर सत्प्रवृत्तियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की हिलोरें उठ रही हैं । ज्योतिर्मय आत्म सत्ता अपने आलोक से सारे वातावरण को प्रकाशवान बना रही है ।

जप के साथ-साथ उपर्युक्त ध्यान करने से मन उसी चिन्तन धारा में बहने लगता है और एकाग्रता का वह अभ्यास हो जाता है, जिसे धारा प्रवाह कहते हैं । मन का एक केन्द्र बिन्दु पर केन्द्रीभूत रहना बहुत आगे की, लगभग समाधि स्थिति पर पहुँची हुई तुरीयावस्था है । आरम्भिक साधकों को उस समय साध्य सफलता के लिए आतुर नहीं होना चाहिए, प्रारम्भिक प्रयास में इतनी ही एकाग्रता पर्याप्त है, कि मनःसंस्थान की विचार शक्ति एक निर्धारित धारा प्रवाह में बहने लगे । गायत्री माता की गोदी में छोटे बच्चे की तरह खेलना, पय-पान करना । सूर्य रूपी अग्नि कुण्ड में आत्म-सत्ता को भविष्य के रूप में होम देना—दीपक पर पतंगे का आत्मार्पण जैसे ध्यान चित्र भी इसी भाव प्रवाह के अंग हैं । जिन्हें इनका अभ्यास बन गया हो वे उन्हें भी अपनाये रह सकते हैं अन्यथा प्रज्ञा पुंज सविता देवता का नाभि, भ्रू-मध्यभाग एवं हृदय में होकर तीनों शरीरों में दिव्य प्रकाश की तरह प्रवेश करना और रोम-रोम में कर्त्तव्यनिष्ठा, विवेकशीलता एवं आदर्शवादिता को ओत-प्रोत कर देने वाला ध्यान ही सर्वश्रेष्ठ समझा जाय और उसी को अपनाया जाय । ध्यान के समय आँखें लगभग बन्द ही रखी जायें । अधखुले नेत्र में भी पुतली ऊपर ही रखनी पड़ती है ताकि बाहर के दृश्य ध्यान में बाधा उत्पन्न न करें ।

(उ) खेचरी मुद्रा—ध्यान मिश्रित गायत्री जप का आधा घण्टा पूरा हो जाने पर अन्त में खेचरी मुद्रा का सम्पुट लगाया जाय । इसके लिए पाँच मिनट पर्याप्त हैं । जीभ को उलटकर तालु से लगायें । ध्यान करें ब्रह्मचेतना का अमृत-कलश अपने ब्रह्मलोक में-मस्तिष्क में भरा पड़ा है । जीव सत्ता की प्रतीक जिह्वा को, ब्रह्म सत्ता के प्रतिनिधि तालु से स्पर्श कराया जा रहा है । इस दिव्य समागम में आनन्द एवं उल्लास की अनुभूति होती है । बछड़ा जिस प्रकार अपनी माता का दूध पीता है; अनुभव करना चाहिए कि ब्रह्म चेतना की कामधेनु का सोमरस, पयपान, जीवात्मा द्वारा किया जा रहा है और उसे नवजीवन की उपलब्धि हो रही है ।

ध्यान मिश्रित जप मध्यवर्ती मुख्य प्रक्रिया है । उसके आदि से सोऽहम् प्राणयोग का बीज और अन्त में खेचरी मुद्रा का सम्पुट लगा है । इन चारों के मिलने से एक पूर्ण साधना पद्धति बनती है । इस साधना यज्ञ की पूर्णाहुति सूर्यार्घ्य के रूप में इसी प्रकार सम्पन्न की जाती है, जैसे अग्निहोत्र की पूर्णाहुति घृत की धार—वसोधारा चढ़ाते हुए की जाती है ।

(ऊ) सूर्यार्घ्यदान—पूर्व दिशा में मुँह करके पूजा स्थान पर रखे हुए देव शक्तियों के सम्मिलित स्वरूप जल-कलश को सूर्य भगवान के निमित्त धार बाँधकर चढ़ाना चाहिए । सूर्य दर्शन सम्भव हो तो ठीक, अन्यथा उनका ध्यान करते हुए यह जल चढ़ाया जाय । पानी गन्दी जगह पर न बहने पाये, पैरों के नीचे न कुचलने पाये, इसका ध्यान रखा जाय और तुलसी अथवा अन्य किसी पौधे के गमले में ही उसे गिराया जाय । गमला न हो तो पानी को थाली में गिरा लिया जाय और उसे किसी वृक्ष की जड में लगाने के लिए भेज दिया जाय ।

जलधार चढ़ाते समय भावना की जाय कि सूर्य अर्थात् विश्वात्मा—जलधार अर्थात् जीवन रस । जीवन को परमात्मा के चरणों में समर्पित किया जा रहा है अर्थात् जल कलश को सूर्य नारायण के चरणों में चढ़ाया जा रहा है । सूर्य जल को भाप बनाकर सुविस्तृत वायुमण्डल में बिखेर देता है । भावना की जानी चाहिए कि हमारे जीवन रस को, आन्तरिक और भौतिक वैभव को विश्व सम्पदा बना दिया जायेगा । भाप, ओस-बिन्दु बनकर पौधों का पोषण करती है । अपनी जीवन सम्पत्ति भी-विश्व सम्पदा बनकर अनेकों का सिंचन कर सके । इसी भावना का प्रतीक यह सूर्य अर्घ्यदान है ।

इतना सब कृत्य पूरा कर लेने के बाद पूजा स्थल पर आकर विदाई का करबद्ध नतमस्तक नमस्कार किया जाय और सब वस्तुओं को समेट कर यथास्थान रख दिया जाय । पूजा में प्रयुक्त अक्षतों को चिड़ियों को डाल दिया जाय । नैवेद्य को प्रमाद रूप स्वयं ले लिया जाय । पानी पौधों के गमले में डाला जाय । अगरबत्ती में आग हो तो उसके कारण कोई दुर्घटना न होने पाये ऐसी व्यवस्था कर दी जाय । पूजा स्थान साफ-सुधरा बनाकर वस्तुओं को यथास्थान रखकर ही कृत्य समाप्त करना चाहिए । उपकरण जहाँ-तहाँ छितराये पड़े नहीं रहने चाहिए ।

सूर्योदय के समय ४५ मिनट तक किया जाने वाला यह दैनिक उपासना क्रम है । इसके अतिरिक्त प्रातः आँख खुलते ही १५ मिनट का आत्मबोध चिन्तन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और रात्रि को सोते समय १५ मिनट का तत्व बोध मनन भी इसी साधन प्रक्रिया में सम्मिलित है । इस सब को मिलाकर ही पूर्ण साधन प्रक्रिया बनती है ।

आत्म बोध एवं तत्व बोध—इस साधना के अन्तर्गत "हर दिन नया जन्म, हर रात नयी मौत" की मान्यता लेकर जीवनक्रम बनाकर चला जाय तो वर्तमान स्तर से क्रमशः ऊँचे उठते चलना सरल पड़ेगा । मस्तिष्क और शरीर की हलचलें अन्तःकरण में जड़ जमाकर बैठने वाली आस्थाओं की प्रेरणा पर अवलम्बिन रहती हैं । आध्यात्मिक साधनाओं का उद्देश्य इस संस्थान को प्रभावित एवं परिष्कृत करना ही होता है । इस उद्देश्य की पूर्ति में वह साधना बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती है । जिसमें उठते ही नये जन्म की और सोते ही नयी मृत्यु की मान्यता को जीवन्त बनाया जाता है ।

प्रायः बिस्तर पर जब आँख खुलती है तो कुछ समय आलस को दूर करके शैया से नीचे उतरने में लग जाता है । प्रस्तुत उपासना के लिए यही सर्वोत्तम समय है । मुख से कुछ भी कहने की आवश्यकता नहीं, पर यह मान्यता-चित्र मस्तिष्क में अधिकाधिक स्पष्टता के साथ जमाना चाहिए कि "आज का एक दिन एक पूरे जीवन की तरह है; इसका श्रेष्ठतम सदुपयोग किया जाना चाहिए । समय का एक भी क्षण न तो व्यर्थ गँवाया जाना चाहिए और न अनर्थ के कार्यों में लगाना चाहिए ।" सोचा जाना चाहिए कि "ईश्वर ने अन्य किसी जीवधारी को वे सुविधाएँ नहीं दीं, जो मनुष्य को प्राप्त हैं । यह पक्षपात या उपहार नहीं, वरन् विशुद्ध अमानत है । जिसे उत्कृष्ट आदर्शवादी रीति-नीति अपना कर पूर्णता प्राप्त करने—स्वर्ग और मुक्ति का आनन्द इसी जन्म में लेने के लिए दिया गया है । यह प्रयोजन तभी पूरा होता है जब ईश्वर की इस सृष्टि को अधिक सुन्दर, समुन्नत एवं सुसंस्कृत बनाने के लिए उपलब्ध जीवन सम्पदा का उपयोग किया जाय उपयोग के लिए यह सुरदुर्लभ अवसर मिला है । यह योजना बद्ध सदुपयोग करने में ही ईश्वर की प्रसन्नता और जीवन की सार्थकता है ।"

मन्त्र जप की तरह इन शब्दों को दुहराने की जरूरत नहीं है, वरन् अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक इस तथ्य हो हृदयंगम किया जाना चाहिए । कल्पना चित्र सिनेमा फिल्म की तरह स्पष्ट उभरने चाहिए और उनके साथ इतनी गहरी आस्था का पुट देना चाहिए कि यह चिन्तन, वस्तुस्थिति बनकर मस्तिष्क को पूरी तरह आच्छादित कर ले ।

शौच जाने की आवश्यकता अनुभव हो तो विलम्ब नहीं करना चाहिए और शैय्या त्याग कर नित्य कर्म में लग जाना चाहिए । थोड़ी गुंजाइश हो तो उठने से लेकर सोने के समय तक की दिनचर्या इसी समय बना लेनी चाहिए । दृष्टिकोण यह रहना चाहिए कि आलस्य, प्रमाद में एक क्षण भी नष्ट न हो और सारी गतिविधियाँ इस प्रकार चलती रहें, जिनमें आत्मकल्याण, परिवार निर्माण एवं लोक-मंगल के तीनों तथ्यों का समुचित समावेश बना रहे । इस सारे क्रिया-कलापों में आदर्शवादी दृष्टिकोण अपनाया जाय । समय, श्रम, चिन्तन एवं धन का तनिकसा अंश भी अवांछनीय प्रयोजन में नष्ट न होने दिया जाय ।

रात्रि को सोते समय वैराग्य एवं संन्यास जैसी स्थिति बनानी चाहिए । बिस्तर पर जाते ही यह सोचना चाहिए कि निद्रा काल एक प्रकार की मृत्यु विश्राम है । आज का नाटक समाप्त, कल दूसरा खेल खेलना है । परिवार ईश्वर का उद्यान है, उसमें अपने को कर्त्तव्यनिष्ठ माली की भूमिका निभानी थी । शरीर, मन, ईश्वरीय प्रयोजनों को पूरा करने के लिए मिले जीवन रथ के दो पहिये हैं, इन्हें सही राह पर चलाना था । धन, प्रभाव, पद यह विशुद्ध धरोहर है उन्हें सत्प्रयोजनों में ही लगाना था । देखना चाहिए कि वैसा ही हुआ या नहीं ? जहाँ गड़बड़ी हुई दिखाई दे वहाँ पश्चात्ताप करना चाहिए और अगले दिन वैसी भूल न होने देने में कड़ी सतर्कता बरतने की अपने आपको चेतावनी देनी चाहिए ।

सोचना चाहिए कि मिली हुई अमानतें और सौंपी हुई जिम्मेदारियाँ आज ईमानदारी के साथ सम्भाली गई । यदि कल वे फिर मिलीं तो फिर उन्हें ईश्वरीय आदेश मानकर सम्भाला जायेगा । अपना स्वामित्व किसी भी व्यक्ति या पदार्थ पर नहीं । यहाँ जो कुछ है सो सब ईश्वर का है । अपना तो केवल कर्त्तव्य एवं उत्तरदायित्व भर है । उसे पूरी ईमानदारी और पूरी तत्परता से निवाहते भर रहना अपने लिए पर्याप्त है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सोते समय ईश्वर की अमानतें ईश्वर को सौंपने और स्वयं खाली हाथ प्रसन्नचित्त विदा होने की निद्रा देवी की गोद में जाने की बात सोचनी चाहिए । हल्के मन से शान्तिपूर्वक गहरी नींद में सो जाना चाहिए चिन्ता, आशंका, खीज, क्रोध जैसा किसी भी उद्विग्नता को मन पर लादकर नहीं सोना चाहिए । यह प्रयास शान्त निद्रा लगने की दृष्टि से भी उपयोगी है । साथ ही आत्म परिष्कार की दृष्टि से भी अति महत्त्वपूर्ण है ।

मृत्यु को भूलने से ही जीवन सम्पदा को निरर्थक कामों में गँवाते रहने की चूक होती है, यदि यह ध्यान बना रहे कि मृत्यु का निमन्त्रण कभी भी सामने आ सकती है, तो यह ध्यान बना रहेगा कि इस महान अवसर का सही उपयोग किया जाय और पूरा लाभ उठाया जाय । निद्रा की तुलना मृत्यु में करते रहने पर मौत का भय मन से निकल जाता है और अलभ्य अवसर के सदुपयोग की बात चित्त पर छाई रहती है।

प्रातः उठते समय नये दिन की मान्यता—जीवनोद्देश्य की स्पष्टता तथा सुव्यवस्थित दिनचर्या बनाने का कार्य सम्पन्न करना चाहिए । रात्रि को सोते समय मृत्यु का चिन्तन, आत्म निरीक्षण, पश्चात्ताप और कल के लिए सतर्कता—वैरागी एवं संन्यासी जैसी मालिकी त्यागने की हल्की-फुल्की मनःस्थिति लेकर शयन किया जाय । दिन भर हर घड़ी चुस्ती-फुर्ती मुस्तैदी और दिलचस्पी के साथ प्रस्तुत कार्यों को निपटाया जाय । भीतर दुर्भावनाओं और बाहरी दुष्प्रवृत्तियों को उभरने का अवसर आते ही उनसे जूझ पड़ा जाय और निरस्त करके ही दम लिया जाय । यह है वह जीवन साधना जिसमें चौबीसों घण्टे निमग्न रहकर इसी जीवन में स्वर्ग जैसे सुख और मुक्ति जैसे आनन्द उल्लास का हर घड़ी अनुभव करते रहा जा सकता है ।

साधना की सिद्धियाँ

साधना शब्द का प्रयोग देवी-देवताओं की उपासना के लिए भी होता है, जिससे अभीष्ट महान कार्य की सिद्धि होती है । देश, काल, क्रिया, वस्तु और कर्त्ता में पाँचों जप साधना के लिए उपयुक्त होते हैं, तभी साधना सिद्ध होती है ।

साधना दो प्रकार की होती हैं दैवी और आसुरी इन्हीं को शास्त्र में दक्षिण और वाम मार्ग कहा गया है । दक्षिण मार्ग की साधना में साधक को लाभ चाहे न हो, परन्तु हानि तो होती ही नहीं, पर वाम मार्ग की साधना में लाभ नहीं होता तो नकुसान जरूर होता है । दक्षिण मार्ग में तत्काल लाभ नहीं दिखता, धीरे-धीरे कल्याण होता है, परन्तु वाम मार्ग में तत्काल ही लाभ अथवा हानि हो जाती है ।

दोनों में ही अक्रोध, शौच और ब्रह्मचर्य का पालन आवश्यक है । इनका पालन न करने से दक्षिण मार्ग में कोई फल नहीं मिलता, परन्तु वाम मार्ग में बड़ा नुकसान हो जाता है । कभी-कभी तो प्राणों पर आ बीतती है । वाम मार्ग में जरा भी कहीं चूके कि बलिदान होते देर नहीं लगती ।

एक व्यक्ति ने किसी मन्त्र की सिद्धि के लिए ग्रहण के दिन शमशान में एक आक के पेड़ के नीचे बैठकर साधना शुरू की । उन्हें सामने के पहाड़ से एक अघोरी उतरता दिखाया दिया । अघोरी ने श्मशान में पहुँचकर एक बच्चे की गड़ी हुई लाश निकाली और उसे सेक कर खा गया । फिर वहीं गुम हो गया । यह देखकर व्यक्ति का शरीर मारे डरके पसीने-पसीने हो गया, वे बड़े जोर से चीख मारकर वहीं ढुलक पड़े । वहाँ उनकी कौन सुनता ? ग्रहण शुद्ध होने पर लोग नहाने की आये, चन्द्रमा का उजियाला हुआ, तब किसी ने उनको वहाँ पड़े देखा । उठाकर मन्दिर में लाया गया । जोर से ज्वर चढ़ा था । तीन-चार दिनों बाद बुखार उतरा, पर वे पागल हो गए और कुछ ही वर्षों के बाद शरीर छोड़ कर चल बसे ।

वेद में ब्राह्मण और मन्त्र—ये दो विभाग हैं । किसी भी देव की सिद्धि के लिए उस देवता की मूर्ति, यन्त्र और मन्त्र की जरूरत है । प्रयोग के समय वहाँ एक-दो आदमी उपस्थित रहने चाहिए । कभी-कभी तो मनुष्य एकांत से ही डर जाता है और यों उसका सब काता-बुना कपास हो जाता है ।

इसी तरह एक अन्य व्यक्ति देवी के उपासक थे । वह अपने घर में रात्रि को सदा उनके मन्त्र का जप करता । एक दिन उसने एकाएक अपने शरीर पर कुछ बिच्छुओं को चढ़ते देखा । वह काँप उठा । बिच्छुओं को झड़काने लगा । फिर मन्त्र शुरू किया, बिच्छू फिर चढ़ने लगे । बस, तब से उसे सिद्धि तो मिली ही नहीं, परन्तु जहाँ तप शुरु किया कि लगे कपड़े भड़काने !

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

उसके मन में निश्चय हो गया कि मेरे कपड़े पर अभी बिच्छू चढ़ रहे हैं । ऐसे समय में कोई दूसरा पुरुष पास होता तो, शायद वे रास्ते पर आ सकते ।

डामर-तन्त्र के मन्त्र तत्काल सिद्धि देते हैं, पर उनका फल थोड़े ही समय के लिए रहता है । स्थायी नहीं रहता । वे मन्त्र केवल चमत्कार दिखाने में ही काम करते हैं ।

उग्र देवता की साधना और उग्र फल की प्राप्ति के लिए बहुत बार अपने प्राणों को हथेली पर रख देना पड़ता है । गाँवों और शहरों में कितने ही ऐसे साधु फकीर मिलते हैं, तो कुछ शून्य साधना करते हैं और जरूरत पड़ने पर किसी-किसी समय वे उन्हें आजमाते हैं । बिच्छू और साँपों का जहर उतारने वाले मन्त्र-साधक तो हम लोग बहुतेरे देखते हैं । हमारे राज्य में तो ऐसे एक सज्जन सौ रुपये मासिक वेतन पर नियुक्त हैं ।

लक्ष्मी की प्राप्ति के लिए एक ब्राह्मण ने लक्ष्मी सूक्त का 'कांसोत्मिता' मन्त्र सिद्ध करने का निश्चय किया । दुर्गापाठ में बतायी हुई विधि के अनुसार न्यास और ध्यान सहित उक्त मन्त्र का सम्पुट देकर जप शुरू कर दिय । लगभग पन्द्रह सम्पुट शतचण्डी पूरी हो गई, परन्तु साधना सफल नहीं हुई । इस पर भी प्रयोग को चालू ही रखा । एक दिन एकाएक उसके मन में स्फुरणा हुई कि इन मन्त्रों को भी महादेवजी ने कौल रखा है । निष्कोल किए बिना सिद्धि नहीं मिलती । तब उसने मन्त्र को निष्कोल किया । बस, तुरन्त ही घी और तेल के जो दीपक स्वाभाविक जल रहे थे, उनमें ज्योति पैदा हुई और वह मेरी आँखों तक ऊपर की ओर उठी । देवता का सिंहासन मेरे सामने था । दुर्गापाठ की पोथी खुली पड़ी थी । पाठ लगभग पूरा होने का आया था । रात्रि के बारह बजे थे । जन्माष्टमी के कारण पास ही देव मन्दिर में दर्शनों के लिए दौड़-धूप हो रही थी और कोलाहल मचा हुआ था ।

इसी बीच इस घटना के बन जाने पर मैंने सोचा, मेरी आँखों में जल भर आया होगा, इसीसे मुझे ऐसा लगता होगा । इसलिए मैंने आसन से उठकर आँखों पर जल छिड़का, मुँह धोया और फिर पाठ करना शुरु कर दिया । पाठ शुरु करना था कि फिर वही हाल ।

मुझे कुछ डर-सा लगा कि कहीं मैं जल न जाऊँ अतएव मैं उठाकर दर्शन करने चला गया । फिर नहा धोकर अधूरा पाठ पूरा करने बैठा । पाठ शुरू करते ही फिर वही हाल हुआ । इस समय रात्रि के दो बजे थे । मनुष्यों के पैरों की आहट शान्त हो गई थी । चारों ओर सुनसान थी । सारी पोथी और सिंहासन तेजोमय हो रहे थे । जैसे-तैसे पाठ पूरा करके मैं उठा । उस समय सबेरे के पाँच बजे थे ।

नवमी के दिन मैंने पाठ न करके केवल जप शुरु किया । जप करने में भी वैसा ही हुआ । तब से मेरे लक्ष्मी जी आने लगीं । मेरी भजन की प्रैक्टिस बढ़ती ही गई । यहाँ तक कि किसी-किसी समय तो खाने पीने का भी अवकाश नहीं मिलता और अधिकांश समय तो मुझे सिर्फ चाय और चिउरों पर चलाना पड़ा था । रात के दो बजे तक फुरसत नहीं मिलती ।

मैं अपने एक मित्र के साथ गिरनार पहाड़ पर जा रहा था । साधु-सन्तों की चर्चा चल रही थी । मित्र ने कहा, तुम्हें यह सब एकाएक कैसे हो गया ? मैंने कहा—'चमत्कार देखने हों तो अभी दिखाऊँ ।' मैंने तुरन्त ही 'कांसोस्मिकां' मन्त्र का जप शुरु किया । हम लोग बहुत आगे बढ़ गए, परन्तु कुछ भी हुआ नहीं, मैं कुछ सकुचाया । जप तो चालू था । इतने में ही एक पेड़ की ओट से आवाज आयी—ओ वकील साहेब । आवाज सुनकर मेरे मित्र और मैं स्तब्ध होकर इधर-उधर देखने लगे । एक फकीर ने केवड़े की एक फली और नकद पन्द्रह रुपये पैरों में रखकर मेरे चरण छुए । मेरे मित्र यह देखकर मन्त्रमुग्ध से रह गए । मुझे याद नहीं था कि इस फकीर को लगभग डेढ़ वर्ष पहले मैंने फौजदारी से छुड़ाया और ये रुपये उसी की फीस के थे ।

कई मन्त्र देवता अन्धे होते हैं । कई बहरे, गूंगे और लूले-लंगड़े भी होते हैं । ऐसे देवताओं की साधना कष्टसाध्य है । द्वादश मुद्राओं के साधन से इनकी सिद्धि प्राप्त हो सकती है, परन्तु अगर कहीं जरा भी चूके कि फिर चौकड़ी भूलते देर नहीं लगती ।

किसी-किसी देवता से साधक की पूरी पटती ही नहीं, इससे वह चाहे कितनी ही साधना करें, हाथ में आयी हुई बाजी भी छटक जाती है और साधना व्यर्थ होती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिद्ध-देव की साधना सिद्धि प्राप्त होने के बाद भी साधक को चालू रखनी चाहिए, नहीं तो, उस दैवी सिद्धि को अदृश्य होते देर नहीं लगती और फिर उसका हाथ लगना असम्भव हो जाता है ।

साधक के लिए प्राप्त हुई सिद्धि का उपयोग स्वार्थ में न करके परमार्थ में ही करना श्रेयस्कर है । थोड़े समय के लिए साधक को स्वार्थ-साधन होता देखकर सुख होता है, परन्तु इसके लिए आगे चलकर उसे बहुत कुछ सहन करना पड़ता है ।

'क्लौ काली-विनायकौ' कलियुग में काली और विनायक की साधना शीघ्र सिद्ध होती है । बस, इतना सुनकर मेरे एक वकील मित्र ने गणपति की साधना आरम्भ की । जप, तर्पण, मार्जन, होम और ब्रह्माण भोजन सभी साधनों में आवश्यक हैं । कुछ खास-खास जप-तप प्रायश्चित्तादि तो दोष निवारण के लिए करने पड़ते हैं । इस प्रकार करते उक्त वकील मित्र को लगभग तीन महीने बीत गए । ब्रह्मचर्य का व्रत भंग हुआ । इससे चौथे महीने के चौथे दिन उन्हें रात को स्वप्न में हाथी दिखायी दिये, वे उन्हें मारने के लिए आगे बढ़ रहे थे, एक-दो बार जागे, परन्तु विशेष ध्यान नहीं दिया फिर एकाएक जाग उठे और 'मुझे ये हाथी मार रहे हैं, बचाओ-बचाओ' पुकारते हुए दौड़ने लगे । चिल्लाहट सुनकर स्त्री-बच्चे जागे और उन्हें पकड़कर जल पिलाकर शान्त किया । सबेरे देखा गया, उनके मुँह पर सूजन थी । एक सप्ताह तक दवा हुई । आखिर ऑपरेशन कराकर दो महीने अस्पताल में रहना पड़ा । मुश्किल से मौत के मुँह से बचे ।

काली और विनायक बहुत उग्र देवता हैं और उनकी सिद्धि भी बहुत उग्र है । सूरत के मेरे एक परिचित सज्जन ने दानों चौथ शुरू कीं । वे जाति के ब्रह्माण हैं और भिखारी की हालत में थे । परन्तु प्रभु कृपा से इस समय उनकी ऋद्धि-ऋद्धि लाखों की समझी जाती है । साधना के बाद ही उनका विवाह हुआ । इस समय वे बाल-बच्चे वाले और ढेले-तबेले वाले सुखी हैं ।

'साधना' हिन्दू को ही सिद्ध होती है, ऐसी बात नहीं है । कोई भी हो आस्तिकता और श्रद्धा के साथ करने पर साधना सभी को फल देती है ।

'One who runs can reach' जो दौड़ता है, वह पहुँच सकता है । हमें कुछ करना तो है नहीं । फिर, 'शास्त्रों में सब गपोड़े भरे हैं, यों कहने से कोई भी काम सिद्ध नहीं होगा । 'साधना' का शास्त्र 'वरदान' या 'शाप' का शास्त्र नहीं है । यह तो 'कर' और 'देख' का शास्त्र है । साधना से भड़कने का कोई भी कारण नहीं है । भूख मिटाने के लिए हमें रोज का अन्न सिद्ध करना पड़ता है । यह जैसे हमेशा का 'रुटीन' है; इसी प्रकार किसी बड़े काम की सिद्ध के लिए हम बड़े लोगों की मदद लिया करते हैं । ठीक, इसी प्रकार हमें देवताओं को साधना करनी चाहिए । देवताओं की साधना से हमें चिरस्थायी सुख मिल सकता है, यह निर्विवाद बात है । मैं तो ऐसा मानता हूँ कि किसी भी साधना के बिना मनुष्य महान बन ही नहीं सकता । किसी एक वस्तु को तो अवश्य सिद्ध कर रखना ही चाहिए । कर्ण, भीष्म, द्रोण आदि के पास महान सिद्धियाँ थीं । इसी से वे महान बन सके थे ।

महायोगी गोरखनाथ और उनका योग-मार्ग

महात्मा गोरखनाथ अपने समय के एक बहुत प्रसिद्ध योगी हो गए हैं । वैसे योगाभ्यास करने वालों की भारतवर्ष में कभी कमी नहीं रही, अब भी हजारों योग विद्या के जानकार और अभ्यासी इस देश में मिल सकते हैं, पर गोरखनाथ योग विद्या के बहुत बड़े आचार्य और सिद्ध थे और अपनी शक्ति द्वारा बड़े-बड़े असम्भव समझे जाने वाले कामों को भी कर सकते थे ।

गोरखनाथ का समय खोज करने वाले विद्वानों ने विक्रम संवत् ११०० के लगभग माना है । कहा जाता है कि एक बार उनके भावी गुरु मत्स्येन्द्रनाथ फिरते-फिरते अयोध्या के पास "जयश्री" नाम के नगर में पहुँचे । वहाँ एक ब्राह्मणी के घर जाकर भिक्षा माँगी और उसने बड़े आदर सम्मान से उनको भिक्षा दी । ब्राह्मणी का भक्ति भाव देखकर मत्स्येन्द्रनाथ बड़े प्रसन्न हुए और उसके चेहरे पर उदासीनता का चिह्न देखकर कारण पूछने लगे । ब्राह्मणी ने बताया कि उसके कोई सन्तान नहीं है, इसी से वह उदासीन रहती है । यह सुन योगीराज ने अपनी झोली से जरा-सी भभूत निकाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उसे देकर कहा कि "इसको खा लेना, तेरे पुत्र हो जायेगा ।" उनके चले जाने पर उसने इस बात की चर्चा एक पड़ोसिन से की । पड़ोसिन ने कहा "कहीं इसके खाने से कोई नकुसान न हो जाय ?" इस बात से डरकर भभूत नहीं खायी और गौओं के बाँधने के स्थान के निकट एक गोवर के गड्ढे में उसे फेंक दिया ।

इस बात को बारह वर्ष बीत गए और एक दिन फिर मत्स्येन्द्रनाथ फेरी लगाते उस ब्राह्मणी के यहाँ जा पहुँचे । उन्होंने उसके द्वार पर 'अखल' जगाया । जब ब्राह्मणी बाहर आयी तो उन्होंने पूछा—"अब तो तेरा पुत्र १२ वर्ष का हो गया होगा, देखूँ तो वह कहाँ है ?" यह सुनकर स्त्री घबरा गई और डरकर उसने समस्त घटना उनको सुना दी । मत्स्येन्द्रनाथ ने भभूत को फेंकने का स्थान पूछा और वहाँ जाकर "अलख' की ध्वनि की । उसे सुनते ही एक बारह वर्ष का तेजपुंज बालक बाहर निकल आया और उसने योगीराज के चरणों में मस्तष्क नवाया । यही बालक आगे चलकर "गोरखनाथ" के नाम से प्रसिद्ध हुआ । मत्स्येन्द्रनाथ ने उसे शिष्य बनाकर योग की पूरी शिक्षा दी । गोरखनाथ ने गुरु की शिक्षा से और स्वानुभाव से भी योग मार्ग में बहुत अधिक उन्नति की और उसमें हर प्रकार से पारम्गत हो गए । लोगों की तो धारणा है कि योग की सिद्धि के प्रभाव से उन्होंने "अमर स्थिति" प्राप्त की थी और आज भी वे कभी किसी भाग्यशाली को दर्शन दे जाते हैं । अनेक विद्वानों का मत है कि गोरखनाथ ने भारतीय संस्कृति के संरक्षण में बहुत अधिक सहयोग दिया है । शंकराचार्य और तुलसीदास के मध्यकाल में इतना प्रभावशाली और महिमान्वित व्यक्ति भारतवर्ष में, कोई नहीं हुआ था । उनके विषय में "गोरक्षविजय" ग्रन्थ में लिखा है—

ए बलिया जतिनाथ आसन करिल ।
लंग महालंग दुई संहति लइल ॥
आसन करिया नाथ सून्ये कैल भरा ।
साचन उड़ऐ जेन गगन ऊपर ॥
आड़े-आड़े चाहे नाथ शून्ये भर करि ।

"गोरखनाथ योगासन लगाकर आकाश मार्ग में पहुँच गए और बाज की तरह उड़ते हुए एक देश से दूसरे देश को जाने लगे ।"

बंगाल के राजा गोपीचन्द की माता मयनावती गोरखनाथ की शिष्या थी और योग साधन तथा तपस्या द्वारा महान ज्ञान की अधिकारिणी बन गई थी । उसने अपनी विद्या के बल से देखा, कि उसके पुत्र के भाग्य में थोड़ी ही अवस्था लिखी है और वह उन्नीस वर्ष की अवस्था में ही मर जायेगा । इससे बचने का एक मात्र उपाय है, कि वह किसी महान योगी से दीक्षा लेकर योग साधना करके मृत्यु पर विजय प्राप्त करे । इस लिए उसने जालंधरनाथ से गोपी चन्द्र को योग-मार्ग की शिक्षा दिलाकर उसे उच्च कोटि का योगी बनाया ।

गोरखनाथ योग-विद्या के आचार्य थे । वर्तमान समय में जो हठ योग विशेष रूप से प्रचलित है । उसका उन्होंने अपने अनुयायियों में बहुत प्रचार किया और उनके लिए गुप्त शारीरिक तथा मानसिक शक्तियों का मार्ग खोल दिया । इस सम्बन्ध में उन्होंने "गोरख-संहिता", "गोरख विजय", "अमरौध शासन" "काया बोध" आदि बहुत से ग्रंथ रचे थे जिनमें से कुछ अब भी प्राप्त हैं । उन्होंने स्पष्ट कहा है कि अगर तुम शरीर और मन पर अधिकार प्राप्त करना चाहते हो तो इसका एक मात्र यही मार्ग है । यदि मनुष्य सोचे कि वह धन सम्पत्ति द्वारा समस्त अभिलाषाओं को पूरा कर लेगा अथवा जड़ी-बूटी रसायनों की सहायता से शरीर को सुरक्षित रख सकेगा तो यह उसका भ्रम है—

सोनै रूपै सीझें काल ।
तौ कत राजा छाँड़े राज ॥
जड़ी-बूटी भूले मत कोई ।
पहली राँड वैद की होई ॥

अमर होने का उपाय तो योग का पंथ ही है जिसमें अमृत प्राप्त करने का मार्ग बताया गया है—

गगन मण्डल में औंधा कुँवा,
तहाँ अमृत का वासा ।
सगुरा होइ सु भर-भर पीया,
निगुरा जाय पियासा ॥

शून्य गगन अथवा मनुष्य के ब्रह्म रन्ध्र में औंधे मुँह का अमृत कूप है, जिसमें से बराबर अमृत निकलता रहता है । जो व्यक्ति सतगुरु के उपदेश से इस अमृत का उपयोग करना जान लेता है, वह अक्षरामर हो जाता है और जो बिना गुरु से विधि सीखे केवल मन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लड्डू खाया करता है, उसका अमृत सूर्य तत्व द्वारा सोख लिया जाता है और वह साधारण मनुष्य की तरह आधि-व्याधि का ही शिकार बना रहता है । योग द्वारा इस अमृत को प्राप्त करने का सर्वप्रथम उपाय ब्रह्मचर्य-साधन का वीर्य रक्षा (बिन्दु की साधना) है—

व्यंदहि जोग, व्यंद ही भोग ।
व्यंदहि हरै जे चौंसठ रोग ॥
या व्यंद को काई जाणै भेव ।
सो आपै करता आपै देव ॥

बिन्दु (वीर्य) का रहस्य समझकर उसकी पूर्ण रूप से रक्षा करने पर मनुष्य सर्वशक्तिशाली और देव स्वरूप बन जाता है । इस प्रकार का साधन कर लेने से मनुष्य स्वयं शक्ति और शिव स्वरूप हो जाता है, और उसे तीनों लोक का ज्ञान प्राप्त हो जाता है—

यहु मन सकती यहु मन सीव ।
यहु मन पंच तत्व का जीव ॥
यह मन लै जो उन्मन रहै ।
तौ तीनों लोक की बाथैं कहै ॥

गोरखनाथ का मत समन्वयवादी है । वे स्वयं बाल योगी थे और यह भी कहतें थे, कि जो वास्तव में योग में सिद्धि प्राप्त करना चाहता है, उसे युवावस्था में ही कामदेव को वश में करना चाहिए, पर वह अन्य कितने साधना-मार्गों की तरह शरीर को अनावश्यक कष्ट देने, दिखावटी तपस्या करने के पक्ष में नहीं थे । उनका कहना था—

देव-कला ते संजम रहिबा ।
भूत-कला आहारं ।
मन पवन ले उनमन धरिया ।
ते जोगी ततसारं ॥

"साधक को देव-कला (आध्यात्मिक मार्ग) पर चलकर आत्मशक्ति प्राप्त करनी चाहिए और भूतकला (पार्थिव-विधि) से आहार की व्यवस्था करनी चाहिए ऐसा करने पर ही वह योगाभ्यास में सफलता प्राप्त कर सकेगा ।" इस प्रकार साधना मार्ग में अग्रसर होते रहने पर अन्त में साधक "निष्पत्ति" अवस्था में पहुँच जाता है, जिससे उसकी समदृष्टि हो जाती है, राग द्वेष का अन्त हो जाता है, सांसारिक माया-मोह सर्वथा निष्ट हो जाते हैं और वह काल के भय से भी छूट कर जीवन्मुक्त हो जाता है—

निसपति जोगी जाणिवा जैसा ।
अगनी पाणी लोहा जैसा ॥
राजा परजा सम कर देख ।
तब जानिवा जोगी निसपति का भेख ॥

गोरखनाथ की आध्यात्म ज्ञान सम्बन्धी अनेक "वाणियाँ" भी प्राप्त होती हैं, जिनकी भाषा काल-प्रभाव से बहुत बदल गई हैं । उनमें से कुछ कबीर की उल्टावासियों की तरह हैं । यहाँ पर उनमें से केवल एक ही नमूने के तौर पर दी जा रही है ।

वाणी वाणी रे मेरे सत गुरु की वाणी,
जोती परणवी बापे मुआ घर आनी ॥१॥
खीला दूझे रे मारे भैंस विलौवै ।
सासुजी परण औ बहू झुलावै ॥२॥
खेत पक्यौ तो रखवाण कूँ खायौ ।
उलटौ मरधा पारिधि कूँ बाँधौ ॥३॥
नीचे हाँड़ी ऊपर चूल्हा चढ़ियो ।
जल में की मछली बगुलाकूँ निगलियो ॥४॥
आभ परसे रे जमी बरसे ।
नेवानां नीर ते मोभेज चड़शे ॥५॥
बाबा बोल्या रे मछन्दर को पूत ।
छाँडी ममता औ भयो अवधूत ॥६॥

अर्थात् "सतगुरु कहते हैं कि गोरखनाथ जब माया रूपिणी नारी के सम्पर्क में आया तब वह जीवित थी, पर उसने माया को वशीभूत करके उसे मृत (नष्ट) कर दिया ।।१।। पहले तो माया रूपी भेंस संसारी सुख रूप दूध देती थी, जिससे उसका मान होता था, पर जब साधना द्वारा उसका आवरण अलग कर दिया तो उल्टी स्थिति हो गई । तब भैंस को बाँध रखने वाला खीला (खूँटा) तो अपार्थिव आनन्द रूपी दूध देने लगा और माया रूपी भैंस ज्ञान की दासी बनकर उस दूध को बिलोने लगी, जिसके द्वारा ब्रह्मानन्द रूपी मक्खन प्राप्त हुआ । माया सास है और मानवीय इच्छा बहू है । यही इच्छा माया का पालन करती है (अर्थात् उसे पालने में झुलाती है) ।।२।। मनुष्य के कायारूपी खेत में साधन रूपी खेती की जाती है और परिपक्व हो जाती है, तब वह अहंकार को खा जाती है (नष्ट कर देती है) । इसी प्रकार काम-क्रोध रूपी पारधी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(शिकारी) पहले मन का शिकार करता रहता है अर्थात् उससे इच्छानुसार अनुचित कार्य कराता है, पर जब मन जाग्रत हो जाता है, साधना में सफलता प्राप्त कर लेता है, तो वह उल्टा इस शिकारी की ही बाँध लेता है ।।३।। पहले कुण्डलिनी शक्ति रूप हाँडी नीचे (नाभि कमल) में सुप्त अवस्था में पड़ी थी, पर जब वह जाग्रत होकर चैतन्य हो गई तो ऊपर चढ़ती गई । पहले मन रूपी मछली को माया रूपी बगला खाता रहता था, जब मन अपने स्वरूप को समझकर सावधान हो गया तो, वह उल्टा माया को ही निगलने लग गया ।।४।। आरम्भ में मिथ्या जगत रूपी आकाश क्षणिक आनन्द की वर्षा करता था, पर जब (परब्रह्म का) ज्ञान हृदय रूपी धरती पर जाग्रत हुआ तो, भूमि को वर्षा करने लगी और आत्मा स्पर्श करने लगी, इस प्रकार यह जल ऊपर की तरफ चढ़ने लगा । इसका आशय यह है कि पहले माया का प्रभाव अधोगामी था, पर कुण्डलिनी शक्ति के जाग्रत होने से साधना ऊर्ध्वगामी होने लग गई ।।५।। मत्स्येन्द्रनाथ का पुत्र (शिष्य) गोरखनाथ कहता है कि अब मैं ममता माया-मोह को त्याग कर अवधूत हो गया हूँ ।।६।।"

इस प्रकार गोरखनाथजी ने एक "अगम-अगोचर" परमात्मा की अनुभूति का मार्ग दिखाकर लोगों में फैले अनेक भ्रांत मतों का निराकरण किया और साधना की एक ऐसी स्पष्ट विधि बतायी जिससे साधारण जन भी आत्मोन्नति कर उच्च शिखर पर पहुँच सकते हैं ।

युग के अनुरूप साधन प्रक्रिया में हेरफेर

सतयुग में सब प्रकार की सुख-शान्ति थी । प्रगति की कहीं कुछ कमी न थी । भावात्मक दृष्टि से सभी उदारचेता और आदर्शवादी थे । इसलिए क्लेश, कलह, के अभाव दारिद्रय के कोई अवसर ही कभी नहीं आते थे । सर्वत्र सद्भावना का उत्कर्ष अभ्युदय का वातावरण भरा-पूरा रहता था । कमी लेने वालों की रहती थी, देने वालों की नहीं । सभी इसके लिए लालायित रहते थे कि उन्हें परमार्थ, परोपकार के लिए अवसर मिले, पर वैसी परिस्थितियाँ ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलती थीं । जब जन साधारण की परिस्थितियाँ सुसम्पन्नता युक्त हों और मनःस्थिति में सन्तोष, पराक्रम और उदारता का बाहुल्य हो तो फिर कोई किसी की सहायता के लिए क्यों आशा करे और मिलने पर भी कोई क्यों उसे ग्रहण करे ?

मनुष्य में उपार्जन की क्षमता भी है और अभ्युदय की भी । बिना कुछ किये कोई निरर्थक बैठा भी नहीं रह सकता । ऐसी दशा में करने के लिए कोई उपयोगी दिशा तो तलाश करनी ही पड़ती थी । पुरुषार्थ को कहीं तो प्रयुक्त करना ही होगा । इस खोज-बीन में एक ही प्रयोजन हस्तगत होता था, वह था—आत्मोत्कर्ष । जब दूसरों को अपनी सेवा सहायता की आवश्यकता नहीं तो फिर पराक्रम प्रिय व्यक्ति एक ही काम कर सकता है कि अपनी चेतना को अधिकाधिक परिष्कृत बनाने के लिए जो उपाय सम्भव हों, उन्हें अपनाया जाय । इस सन्दर्भ में योग और तप दो ही पुरुषार्थ सामने रहते थे । इनके माध्यम से व्यक्तित्व को अपेक्षाकृत अधिक पवित्र, परिष्कृत बनाया जाता था । चिन्तन, चरित्र और व्यवहार में अधिकाधिक उत्कृष्टता का समावेश किया जाता था । इस उत्कर्ष का प्रतिफल मनुष्य में देवत्व के उद्भव के रूप में दृष्टिगोचर होता था ।

यों मनुष्य आकृति वालों में प्रकृति भेद पाया जाता है । पिशाच, पशु भी देखे जाते हैं । पशु वर्ग के लोग आलसी, प्रमादी, गन्दे, दरिद्र और पिछड़ेपन से घिरे रहते हैं । पिशाचों को पाप कर्मों में लिप्त पाया जाता है । वे अपराध, अनाचार, कुकर्म, दुर्व्यसन, मनोविकार आदि में लिप्त रहकर ऐसी स्थिति में जीवन गुजारते हैं, जिसे दैत्य, दानव, असुर, दुष्ट दुराचारी आदि नामों से सम्बोधित किया जा सके । ऐसे मनुष्यों का बाहुल्य कलियुग में होता है । तब उनसे निपटने, सुधारने के लिए भी प्रयास करने पड़ते हैं और प्रतिबन्ध लगाने के साथ-साथ प्रताड़ना के विधान भी निर्धारित करने होते हैं । यह पिशाच वर्ग के लिए किए जाने वाले उपचार हैं । पशु वर्ग आयु की दृष्टि से भले ही वयस्क हों पर उसे बाल बुद्धि की स्थिति में रहते हुए ही माना जाता है । अपंग, असमर्थ, असहाय, पिछड़े लोग इसी स्तर के होते हैं । उन्हें न कर्त्तव्य का बोध होता है और न अनुशासन का । पराक्रम, सहास और विवेक के अभाव में वे वैसा कुछ कर नहीं पाते जैसा कर सकने की क्षमता उनमें सहज ही विद्यमान है । अकर्मण्य को अभावग्रस्त रहना ही पड़ेगा । उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परावलम्बन सहन करना ही पड़ेगा और उपेक्षा, अवमानना, भर्त्सना सहन करने के साथ-साथ दीन, दरिद्र भी रहना पड़ेगा । यह परिस्थितियाँ कलियुग की हैं जिनमें मनुष्य देहधारी पशुओं और पिशाचों की बहुलता बिखर पड़ती है ।

परिस्थितियों के इस अन्तर को देखते हुए विचारशीलों की अपनी गतिविधियों में, योजनाओं में, दिशा धारा और क्रिया-कलापों में भी अन्तर करना आवश्यक हो जाता है । सतयुग और कलियुग में जितना असाधारण अन्तर है उसी अनुपात से विवेचना, निर्धारण, क्रिया-प्रतिक्रिया में भी अन्तर करना पड़ता है । विवेक का यही तो तकाजा है । परिस्थितियों के अनुरूप क्रिया पद्धति में भी हेर-भेर करना अनिवार्य हो जाता है ।

सतयुग में न कोई पशु था और न पिशाच कहीं दृष्टिगोचर होते थे । इसलिए उनके लिए कुछ सोचने करने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती थी । अविकसित पशुओं की सेवा सहायता की आवश्यकता पड़ती है । इसके बिना वे अपना निर्वाह ठीक नहीं कर सकते । पशुओं को चारा, पानी, छाया आदि का प्रबन्धन किया जाय तो वे भूखे, प्यासे रहकर सर्दी, गर्मी से प्रभावित होकर अपनी जान गँवा बैठेंगे । रोगियों को परिचर्या चिकित्सा न मिले, अपंगों को सहारे की व्यवस्था न हो तो वे भी अपने बलबूते जीवित नहीं रह सकते । कैदियों, पागलों के लिए भी उनके संरक्षकों को ही व्यवस्था बनानी पड़ती है । पिछड़े हुओं के लिए सेवा-सहायता की अनिवार्य रूप से आवश्यकता पड़ती है । उदार चेताओं के मन में उनके लिए करुणा भी उमगती है और सेवा सहायता करने की भाव-भरी प्रेरणा भी उठती है ।

पिशाच वर्ग को वशवती रखने के लिए ही उपाय है—प्रताड़ना, प्रतिबन्ध, अवरोध, संघर्ष । इसके बिना वे और किसी उपाय से अपनी दुष्टता से विरत नहीं होते सिंह, व्याघ्र भेड़िये, सर्प, बिच्छू आदि को न तो सदुपदेशों से सन्मार्ग पर लाया जा सकता है और न विनय, नम्रता, क्षमा आदि का ही कोई प्रभाव पड़ता है । वे सज्जनता की भाषा समझते ही नहीं । क्षमा को वे कायरता या दुर्बलता के अर्थ में लेते हैं । समझते हैं असमर्थता अपनी जान बचाने के लिए दयालुता का आडम्बर बना रही है । इस उपाय को अपनाने से उनके हौसले बढ़ते हैं । अपने कुकृत्यों के लिए द्वार खुला देखकर वे चौगुने-सौगुने उत्साह से दुष्टता पर उतारू होते हैं । अनाचार निर्भय होकर अपना कार्य क्षेत्र अनेक गुना बढ़ा लेता है । इसकी चपेट में सबसे पहले वे ही आते हैं जो दया धर्म की दुहाई देकर किसी प्रकार झगड़ा टालने की बात सोचते हैं ।

सतयुग और कलियुग की परिस्थितियों में जमीन आसमान जैसा अन्तर हुआ । इसलिए विचार शैली और क्रिया पद्धति में भी तदनरूप हेर-फेर आवश्यक हो जाता है । जब कोई दीन-हीन है ही नहीं, पिछड़ा और अभावग्रस्त दीख ही नहीं पड़ता तो सेवा सहायता किसकी की जाय ? जब कोई अनाचारी, आततायी है ही नहीं सो प्रताड़ित किसे किया जाय ? संघर्ष किससे ठाना जाय ? ऐसा दिशा में पुरातन काल का वह सतयुगी व्यवहार उचित ही था कि योगाभ्यास, तप साधना जैसे आत्मोत्कर्ष के प्रयासों में निरत हुआ जाय । इसका लाभ भी था कि चेतना की प्रसुप्त क्षमता को अधिक समुन्नत बनाने का अवसर मिलता था । देवत्व की मात्रा बढ़ाकर महामानव बनने का ऋषि, मनीषी बनने का सुयोग हस्तगत होता था । जिस भूमि में देव समुदाय की अभिवृद्धि होती थी, उसे 'स्वर्गादपि गरीयसी' कहलाने का सुयोग मिलता था । उस समय के लिए वही चिन्तन, निर्धारण एवं क्रिया-कलाप उचित था, कि सामाजिक जीवन में कोई अस्त-व्यस्तता न रहने पर आत्म-कल्याण की आत्मोत्कर्ष की बात सोची जाय स्वर्ग की मुक्ति की, सिद्धि की सुखद कल्पनाओं एवं चेष्टाओं में निरत रहा जाय ।

पुरातन काल का रहन-सहन दूसरे ढंग का था, आबादी कम थी, जंगल बहुत । लोग कृषि, पशु पालन के लिए अपने-अपने क्षेत्र बाँट कर दूर-दूर झोंपड़े बनाकर रहते थे । स्वावलम्बी निर्वाह करते थे । समाज का सघन विकास नहीं हुआ था ऐसी दशा में कोई सार्वजनिक समस्याएँ या आवश्यकताएँ थी भी नहीं उन परिस्थितियों में व्यक्ति की मानसिकता एवं व्यवहारिकता व्यक्तिवादी रही हो तो आश्चर्य ही क्या ? व्यक्तिवादी चिन्तन या तो भौतिक वैभव बटोरता है सतयुग की यही विशेषता थी कि तब न तो सामूहिकता इस सीमा तक विकसित हुई थीं कि किन्हीं समस्याओं को सुलझाने की आवश्यकता पड़े और न व्यक्ति ही इस स्तर के थे, कि जिनके पास सज्जनता, सम्पन्नता की कमी हो । ऐसी दसा में उन दिनों पशु वर्ग के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए आवश्यक सेवा सहायता के सम्बन्ध में भी विचार नहीं करना पड़ता था और न मनुष्यों में कोई पिशाच वर्ग के ऐसे दुष्ट भ्रष्ट ही होते थे, जो मर्यादाओं की उपेक्षा, वर्जनाओं की अवहेलना करें । ऐसी दशा में प्रतिरोध, संघर्ष करने और प्रताड़ना देने प्रतिबन्ध लगाने की भी योजना नहीं बनानी पड़ती थी । दोनों ही प्रकार के आपत्तिकाल सामने नहीं आते थे । इसलिए लोगों की कल्पनाएँ स्वर्ग लोक मुक्ति की, स्वतन्त्रता सिद्धियों की प्रगतिशीलता तक ही प्रयत्नशीलता सीमित रही होगी । पारस्परिक व्यवहार में शालीनता का ही भरपूर समावेश रहा होगा ।

उन दिनों पारस्परिक व्यवहार के चार सूत्र थे । मैत्री, करुणा, मुदिता, उपेक्षा । सज्जनों से मैत्री । व्यथितों के प्रति करुणा, सुखियों को देखकर मुदिता, प्रसन्नता और गड़बड़ाने वाले बाल बुद्धिहीन लोगों के प्रति उपेक्षा । यह चारों ही प्रयोग ऐसे हैं जिन्हें मध्यवृत्ति के लोगों के साथ व्यवहृत किया जा सकता है । उन दिनों न तो पशु वर्ग के लोग थे और न पिशाच वर्ग के । इसलिए उपरोक्त चार निर्धारणों को ही पर्याप्त मान लिया गया, उनमें सेवा और संघर्ष के दो अन्य तथ्यों को जोड़ना आवश्यक नहीं समझा गया, क्योंकि तब न तो असंयमी लोग पनपे थे और न आतातायिओं ने पैर पसारना आरम्भ किया था ।

जो समस्या सामने ही नहीं थी उसका समाधान भी क्या सोचा खोजा जाय, किन्तु आज की स्थिति सर्वथा भिन्न है । जो परिस्थितियाँ सतयुग में दृष्टिगोचर तक नहीं होती थी । वे अब सर्वत्र तूफानी गति से बड़ी है और घटाटोप की तरह छा गई हैं । संसार में दो तिहाई लोग आर्थिक, नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक दृष्टि से दयनीय स्थिति में रह रहे हैं । पिछड़ेपन का अभावग्रस्त दीन-हीन जीवन जी रहे हैं इनकी गुहार उदार चेताओं से सेवा सहायता की है, जिसके सहारे वे कुछ ऊँचे उठकर आगे बड़े सकें और राहत प्राप्त कर सकें । बाड़, दुर्भिक्ष, महामारी, भूकम्प, दुर्घटना जैसी आकस्मिक विपत्तियों के आ जाने पर भावशील लोग निजी काम में हर्ज करते और धन, श्रम लगाकर आपत्तिग्रस्तों की सहायता करते थे । आज भी संसार के बहुसंख्यक लोग ऐसी ही सेवा सहायता की आशा करते हैं ।

पिशाच वर्ग का उत्पीड़न असंख्यों को असहनीय त्रास देता है । निर्दोषों को अकारण अनाचार करने वालों के उद्वत कुकर्म जहाँ अशक्तों का उत्पीड़न करते रहे । वहाँ उस सफलता को पाकर अपनी उद्दण्डता को अनेक गुना बढ़ा लेते हैं और लाभ उपार्जन से लेकर अहंकार प्रदर्शन तक के लिए घिनौने स्तर की उद्दण्डता पर उतर आते हैं । इस सस्ती सफलता के लिए मन ललचाता है । सहज ही साथियों का समुदाय जुट जाता है और अनाचारियों की चाण्डाल चौकड़ी बन जाती है ।

इनसे निपटने के लिए असहयोग, विरोध, संघर्ष जैसे उपाय अपनाये बिना उन्हें रोकने का कोई और उपाय नहीं है । इन दिनों दो तिहाई पशु जीवन जी रहे हैं । एक तिहाई से कुछ ही कम पिशाच प्रवृत्ति में समलग्न हैं । सज्जनों, सदाचारियों, विवेकवानों और कर्त्तव्यपरायणों की संख्या इतनी कम है, जिन्हें कठिनाई से ही एक प्रतिशत ढूँढ़ा खोजा जा सकता है । ऐसी दशा में आत्म-कल्याण की साधना किसी के लिए भी कठिन है । आत्म-कल्याण के लिए व्रत पालन और पूजा उपचार का नियमित रूप से कर पाना कदाचित ही किन्हीं के लिए सम्भव हो सकता है । उन प्रयत्नों में पशु या पिशाच पग-पग पर अड़चन उत्पन्न करते हैं और सफलता के स्तर तक पहुँचने ही नहीं देते । वातावरण का प्रभाव एक कदम भी आगे नहीं बढ़ने देता ।

युग धर्म को देखते हुए दीन दुर्बलों की सेवा और दुष्ट, भ्रष्ट पिशाचों के लिए अवरोध खड़े करना आज की सर्वप्रधान, सर्वोपरि, सामयिक साधना है । इनको अपनाने पर भी आत्म-कल्याण का प्रयोजन पूरा हो सकता है, क्योंकि सेवा सहायता भी सद्भावना के बिना नहीं हो सकती और दुष्टता से निपटने के लिए भी त्याग बलिदान की विवेक और साहस की अनिवार्य आवश्यकता रहती है । इन सत्प्रवृत्तियों का सम्वर्धन भी आत्मिक प्रगति का वैसा ही द्वार खोलता है, जैसा कि सतयुग में जप, तप के माध्यम से सम्पन्न किया जाता था ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सर्वोपयोगी सुलभ साधनाएँ

आत्म-परिष्कार की सरल किन्तु महान साधनाएँ

मानवीय अस्तित्व को तीन भागों में बाँट सकते हैं—(१) स्थूल, (२) सूक्ष्म, (३) कारण । आध्यात्मशास्त्र में इन्हें ही मनुष्य के तीन शरीर कहा गया है । केले के तने की तरह अथवा प्याज की तरह परत-दर-परत उधेड़ते जाने पर हमें रक्तमाँस निर्मित स्थूल शरीर के भीतर सूक्ष्म शरीर और उसके भी भीतर कारण शरीर का बोध होता है । मानो शरीर के ऊपर क्रमशः बनियान, कुर्ता, जाकेट पहन रखी गई हों ।

स्थूल शरीर माँ के पेट से प्रारम्भ होकर श्मशानघाट में समाप्त हो जाता है । इहलौकिक क्रिया-कलापों का यही माध्यम है । खाने, सोने, चलने, रोटी कमाने, शुभ-अशुभ कर्म करने, इन्द्रिय-सुख भोगने आदि के प्रयोजन इसी शरीर से पूरे होते हैं ।

सूक्ष्म शरीर चिन्तन-मनन, आकांक्षा, अभिरुचि आदि मानसिक गतिविधियों का केन्द्र व माध्यम है । इसका प्रधान कार्यस्थल मस्तिष्क ही है, यद्यपि सामान्यतः यह पूरे स्थूल शरीर में उसी तरह व्याप्त है, जैसे दूध में घी ।

तीसरा कारण शरीर आत्मा के अति समीप है तथा उच्चस्तरीय दिव्य भावनाओं का आधार है । दया, प्रेम, कर्त्तव्यनिष्ठा, संयम, करुणा, सेवा, धर्म, कोमल सम्वेदनादिक उच्च भाव इसी में उठते रहते हैं । जो लोग क्रूरता और दुष्टता में ही परिपक्व हो जाते हैं, उनका कारण शरीर भी क्रूर चेष्टाओं हेतु सहमत हो जाता है ।

साधना का अर्थ है इन तीनों ही शरीरों की समुचित साज-सँभाल और उत्कर्ष की व्यवस्था । साधना की दिशा में प्राथमिक पग है—उपासना । भजन-पूजन, जप-ध्यान, व्रत-उपवास आदि उपासना-अभ्यास मन की प्रवृत्ति को पदार्थपरकता से चेतना की ओर मोड़ते हैं । विश्वव्यापी चेतना के स्मरण और सान्निध्य की अनुभूति की आकांक्षा जाग्रत हो जाने पर मनोवृत्तियों का वासना और तृष्णा की दिशा में भटकाव, समय, शक्ति और पुरुषार्थ का भयानक दुरुपयोग प्रतीत होने लगता है । तब मनःशक्ति को संयमित कर परमार्थ में नियोजित करने की प्रवृत्ति दृढ़ होती जाती है । यही साधना है । उपासना दिन के एक छोटे से अंश में, निश्चित समय तक की जाती है, साधना एक अविच्छिन्न प्रक्रिया है । वह पूरे जीवन का ही नाम है । साधनामय जीवन आन्तरिक पवित्रता को निखारता जाता है और ईश्वरीय प्रकाश का दिव्य दर्शन कराता है । मानवीय व्यक्तित्व में देवत्व के अवतरण की यही प्रक्रिया है ।

साधना के दो वर्ग हैं—(१) विशिष्ट लोगों की—विशिष्ट प्रयोजन हेतु विनिर्मित विशिष्ट प्रक्रिया । (२) सर्वसाधारण के लिए सहज सुगम सौम्य पद्धति ।

विशिष्ट प्रक्रियाएँ असाधारण मनोबल-सम्पन्न, कठोर तपश्चर्या के लिए समुद्यत, सांसारिक उत्तरदायित्वों से निवृत्त लोगों—योगी यती एकान्तवासी लोगों के लिए हैं । हठयोग, षट्चक्र वेधन, कुण्डलिनी जागरण, लययोग, ऋजुयोग, तन्त्रयोग, प्राणयोग आदि की साधनाएँ इसी वर्ग की हैं । पर यह मार्ग अत्यन्त कठिन है । भूल होने पर इस राह में खतरे ही खतरे हैं । निश्चय ही इसमें ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त होती है । पर उन उपलब्धियों से चमत्कार-प्रदर्शन द्वारा लोगों को विस्मित-चकित कर देने की बात-आकांक्षा मात्र अहंकार ही बढ़ाती है । सिद्धियों द्वारा किसी का तात्कालिक कष्ट निवारण भी सम्भव है और उसमें थोड़ा बहुत आत्मसन्तोष भी प्राप्त हो जाता है । लेकिन यह मार्ग है जोखिम भरा ही ।

चमत्कारों के लोभ से इस राह पर चल पड़ने वाले अधिकांश साधक साधना-पथ की कठिनाइयों और लम्बाई से निराश होकर या तो विरत हो जाते हैं या फिर अपनी असफलता की झेंप मिटाने के लिए धूर्तता के द्वारा लोगों को चमत्कृत करने का निकृष्ट व्यवसाय अपनाकर स्वयं भी पतित होते और दूसरों को भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गड्ढे में धकेलते हैं । मात्र असामान्य साहसी व्यक्ति ही इस मार्ग में बढ़ सकते हैं, सो भी विशिष्ट परिस्थितियाँ बन पड़ें तभी ।

सौम्य साधना पद्धति का राजमार्ग सर्वसाधारण के लिए सुगम है । आजीविका-उपार्जन तथा सामान्य गृहस्थ जीवन-यापन करते हुए इस साधना क्रम को अपनाया जा सकता है । इस पथ पर सहज ही गतिशील रहा जा सकता है । इसीलिए शास्त्रकारों और ऋषियों ने सर्वसाधारण को इसी पथ के अवलम्बन हेतु प्रोत्साहित किया है । इस मार्ग द्वारा जादूगरी जैसे चमत्कार भले न प्राप्त हों, पर नर को नारायण की स्थिति तक पहुँचा देने का वास्तविक चमत्कार निश्चित ही सम्भव है ।

इस सौम्य साधना पद्धति द्वारा स्थूल, सूक्ष्म, कारण तीनों शरीरों का संस्कार-परिष्कार, परिमार्जन और परिवर्धन किया जाता है । इसके तीन प्रयोग हैं—(१) कर्मयोग, (२) ज्ञानयोग, (३) भक्तियोग । तीनों की सुसंतुलित क्रियापद्धति का अवलम्बन ही श्रेयस्कर है । श्रीमद्भागवद् गीता में इसी प्रक्रिया का विवेचन है । धर्मशास्त्रों का विशालकाय-कलेवर भी इसी त्रिविध तत्वज्ञान की विवेचना में ही खड़ा किया गया है । अपनी विचारपद्धति, कार्यपद्धति और भावस्थिति में यदि इन आस्थाओं का समुचित समावेश कर लिया जाय, तो हम अपनी असह्य यन्त्रणा की वर्तमान मनोभूमि से मुक्त होकर इसी शरीर से अपने जीवन में देवत्व के अभ्युदय की अनुभूति कर सकते हैं । देश, काल, पात्र की स्थिति के अनुरूप साधनाओं को मूल उद्देश्य सुरक्षित रखते हुए कार्यपद्धति में सामयिक हेर-फेर किए जाते रहे हैं और किए जाने ही चाहिए । सृष्टि के आरम्भ से आज तक समय-समय पर ऋषियों ने इसी त्रिविध साधना का—विभिन्न विधि-विधानों के रूप में, अपने समय के साधकों की मनोभूमि तथा सामाजिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए मार्ग-निर्देश किया है । इस क्रिया-विधान में कर्मयोग, भक्तियोग एवं ज्ञानयोग तीनों का इस ढंग से समावेश किया गया है कि व्यक्ति के तीनों शरीर परिपुष्ट होते चलें और समाज में विकास के पुण्य-प्रयोजन का भी कार्य होता चले ।

कर्मयोग की आधारशिला है प्रातःकाल आँख खुलते ही चारपाई पर पड़े-पड़े 'हर दिन नया जन्म, हर रात नई मौत' की विचारणा-प्रक्रिया को अपनाना तथा प्रस्तुत दिन के सर्वोत्तम सदुपयोग की तैयारी कर निश्चित कार्यक्रमों, गतिविधियों एवं विचार-प्रक्रिया का निर्धारण । सम्पूर्ण दिन मन में किस स्तर की भावनाएँ किस काम के साथ संयोजित की जायेंगी, यह भी निश्चित कर लेना अनिवार्य है । दिनभर इसी निर्धारण का दृढ़ता से पालन सामान्य जीवन क्रम को ही कर्म-योग की साधना का फल प्रदान करेगा ।

फिर रात्रि में शयन पूर्व बिस्तर पर पहुँचते ही दिन की गतिविधियों का लेखा-जोखा कर सफलताओं के लिए ईश्वर को धन्यवाद देना तथा भूलों के लिए सच्चे पश्चात्ताप के साथ क्षमा प्रार्थना कर, पूर्ण निश्चिन्तता के साथ, शान्तिपूर्वक माता निद्रादेवी की गोद में सो जाना ।

कर्मयोग की इस साधना के साथ ही ज्ञानयोग की साधना भी जुड़ी है । उस हेतु मन में उत्कृष्ट विचारों का अनवरत समावेश आवश्यक है । प्रेरक स्वाध्याय ही इसका मार्ग है । रूढ़िवादी रीति से किन्हीं पुरानी, किस्से कहानी जैसी किताबों का बासी रहना घोटना स्वाध्याय नहीं । व्यावहारिक जीवन में आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता की दिशा दिखलाने वाला स्वाध्याय ही आवश्यक है और उसे दैनिक जीवन का एक नित्य कर्म मानकर किया ही जाना चाहिए । व्यक्ति एवं समाज के नव-निर्माण हेतु उपयोगी उत्कृष्ट साहित्य के दैनन्दिन स्वाध्याय के लिए समय अनिवार्यतः निकालना ही चाहिए ।

यह हुई ज्ञान योग की निजी साधना ! इसे ज्ञान-यज्ञ का रूप देना चाहिए । समाज में सद्विचारों का सर्वाधिक अभाव है । विश्वव्यापी शोक सन्ताप का यही कारण है । जन-मानस का स्तर परिवर्तित करने पर ही दुःख दारिद्र्य की प्रचण्ड आग बुझेगी । विचारक्रांति आज की सर्वोपरि आवश्यकता है । ज्ञान-यज्ञ इसी आवश्यकता की पूर्ति करने वाला महान अभियान है । एक घण्टा समय और दस पैसा नित्य खर्च करना देखने में तो एक छोटा ही काम है, पर उसका सम्मिश्रित परिणाम अत्यधिक है, युग-परिवर्तन का वह एक सशक्त माध्यम है । साधक का आत्म-कल्याण एवं विश्व-कल्याण दोनों ही ज्ञान-यज्ञ द्वारा सहज सम्भव हैं ।

भक्तियोग का अर्थ है अन्तरात्मा में दिव्य भावनाओं का अनवरत प्रवाह । परम ब्रह्म से अपने अनन्य प्रेम का स्मरण, तादात्म्य की प्रचण्ड अनुभूति और जघन्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उभय पक्षीय प्रेम-हिलोर की प्रखर अनुभूति का स्मरण-अभ्यास अवरुद्ध आन्तरिक रसस्रोतों को पुनः मुक्त करता है इन गहरे प्रेमस्रोतों का प्रांजल प्रवाह सम्पूर्ण परिवेश में सरसता, सौमनस्य तथा प्रफुल्लता की वृद्धि करता है । सच्चा प्रेमी—सच्चा भक्त मात्र ईश्वरीय ध्यान-छवि को प्यार नहीं करता है अपितु ब्रह्माण्ड में संव्याप्त ईश्वरीय सत्ता से—प्राणिमात्र से—अनन्य आत्मीयता भरा प्रेम सम्बन्ध प्रस्थापित कर लेता है । यह तादात्म्य—भावना पग-पग पर करुणा, उदारता, सद्भाव, सहृदयता, सहानुभूति, सेवा, सज्जनता के रूप में कार्यरूप में प्रकट-परिणत होती रहती है । ईश्वर भक्त परिग्रही या स्वार्थी कैसे हो सकता है ? उसके लिए तो एक ही मार्ग है—अपनी समस्त उपलब्धियों को विश्वमानव के चरणों में व्यवहारतः समर्पित कर देना । इससे कम में कभी भी ईश्वरीय अनुकम्पा प्राप्त भी नहीं हो सकती । लोकमंगल में अपना सर्वत्र, समर्पण करने वाला परमार्थ परायण व्यक्ति ही सच्चा ईश्वर भक्त कहा जा सकता है । अपने परिवार का पालन भी वह इसी भावभूमि के आधार पर ही करता है सभी लोगों के साथ उसके व्यवहार का भी यही आधार होता है । वासना-तृष्णा से सर्वथा रहित, निर्मल-निश्चित अन्तःकरण वाला व्यक्ति ही, भक्तियोग का अधिकारी है । शबरी, मीरा, सूर, तुलसी आदि भक्तों ने तथा सभी ऋषि-मुनियों ने इसी भावभूमि पर पहुँचकर ईश्वर दर्शन आत्म-साक्षात्कार का परमानन्द प्राप्त किया था और सभी दूसरों के लिए भी वही राजमार्ग खुला है ।

स्थूल शरीर का कर्मयोग से परिष्कार सूक्ष्म शरीर का ज्ञानयोग द्वारा उत्कर्ष एवं कारण शरीर में भक्तियोग द्वारा परमेश्वर की प्रतिष्ठापना ही सार्वभौम राजमार्ग है ।

कारण शरीर में परमेश्वर की प्रतिष्ठापना

उपनिषद ने परमात्मा के भावनात्मक स्वरूप का वर्णन करते हुए कहा है—"रसो वै स" अर्थात् प्रेम ही परमेश्वर है । आँखों से भगवान जिस भी रूप में देखा जा सके, अन्तरात्मा में उसकी सम्वेदना प्रेम रूप में ही पायी जाती है । जिसके अन्तःकरण में—स्वभाव में—व्यवहार में प्रेम भावना का जितना समन्वय है समझना चाहिए कि उसमें उतना ही ईश्वरतत्व घुला हुआ है ।

'प्रेम' वह केन्द्र बिन्दु है जिसके इर्द-गिर्द अनेकों आध्यात्मिक सद्गुण विद्यमान रहते हैं । फूल खिलता है तो उस पर अनेक भौंरे, तितली, मधुमक्खी घुमड़ती दिखाई पड़ती हैं । 'प्रेम' तत्व जिसके अन्तःकरण में उगेगा उसमें सौजन्य, सहृदयता, दया, करुणा, सेवा, उदारता, क्षमा, आत्मीयता आदि अनेकों सत्प्रवृत्तियाँ अनायास ही दृष्टिगोचर होंगी । प्रेम-पात्र के प्रति अपार सहानुभूति होती है । उसे अधिक सुखी और समुन्नत बनाने के लिए अन्तःकरण में निरन्तर हिलोरें उठती रहती हैं । जो अपने पास है उसे प्रेमी पर उत्कर्ग करने की अभिलाषा रहती है । इस प्रकार आकांक्षा, अभिलाषा के होने पर स्वभावतः प्रिय-पात्र के प्रति अधिक सज्जनता का व्यवहार बन पड़ता है और प्रेम किसी व्यक्ति विशेष तक सीमित न रह कर यदि विश्व-मानव के प्रति—जनता जनार्दन के प्रति—व्यापक हो गया हो तो ऐसा व्यक्ति सन्त, ऋषि, सज्जन, देव से कम कुछ हो ही नहीं सकता । मानवोचित—देवोपम समस्त, सद्गुण उसमें सुविकसित पाये जायेंगे । जिसमें ऐसी महानता हो उसे इस धरती पर ईश्वर का प्रतीक-प्रतिनिधि ही कहा जायेगा ।

प्रेमी का दाम्पत्य-जीवन स्वर्ग जैसा पाया जायेगा । दूसरी ओर से समुचित प्रत्युत्तर न मिले तो वह अकेला अपने ही सद्व्यवहार से सन्तोष और शान्ति का आधार बनाए रह सकता है । इसी प्रकार कहीं भी—किसी भी परिस्थिति में—कैसे भी लोगों के बीच प्रेमी स्वभाव का व्यक्ति सौजन्यपूर्ण वातावरण बनाए रह सकता है।

नारकीय दुष्टताएँ, दुष्प्रवृत्तियाँ उन हृदयों में उगती हैं जो रूखे, नीरस, शुष्क, कठोर, निर्दय प्रकृति के हैं । उनमें एक-एक करके समस्त, दानवी दुर्गुण एकत्रित होते चले जायेंगे । रंग का गोरा और रूप का सुन्दर होते हुए भी ऐसा मनुष्य भयावह नर-पिशाच की तरह अपना आतंक उत्पन्न करके वातावरण को विक्षुब्ध बनाए रहता होगा । शोक, सन्ताप, क्लेश कलह, द्वेष, दुर्भाव ही उसके चारों ओर उमड़ते-घुमड़ते पाये जायेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कारण शरीर की उत्कृष्टता प्रेम भावना की अभिवृद्धि पर निर्भर है । "भक्ति के वश में भगवान" के होने की उक्ति प्रसिद्ध है । भक्ति का अर्थ प्रेम ही तो है । जो प्रेमी है वही भक्त है । जिसके अन्तःकरण में जितनी प्रेम भावनाएँ उमड़ती हैं ईश्वर उसके उतना ही समीप खिंचता चला आता है । सच तो यह है कि प्रेम ही परमेश्वर है । यह उदात्त भावना जहाँ भी निवास करती है वहाँ अमृत का निर्झर झरता है और इसकी छाया जिस पर पड़ जाती है वह अपने आपको धन्य अनुभव करता है ।

कारण शरीर में देवत्व का अभिवर्धन करने के लिए हमें अपनी उपासना में प्रेम-भावना का समावेश करना चाहिए । सामान्यतया गायत्री उपासना की शिक्षा दी गई है । आत्मा की परिपुष्टि के लिए विभिन्न अन्यान्य विधियाँ एवं पद्धतियाँ भी प्रयुक्त की जाती हैं । अपने-अपने स्थान पर यह सभी उपयुक्त हैं । आरम्भ में नाम जप, कीर्तन, पूजन, हवन, शृंगार, उपवास, भोग प्रसाद आदि के माहात्म्य से यह पूजा पद्धतियाँ की जाती हैं पर इनका क्रमिक विकास प्रेम भावनाओं की अभिवृद्धि के साथ-साथ ही होता है । मीरा, शबरी, गोपी, सूर, तुलसी आदि की प्रखर भक्ति में उनकी प्रेम भावना ही प्रधान आधार थी ।

मन की एकाग्रता प्रेम-भावना की मात्रा पर ही निर्भर है, मन प्रेम का गुलाम है । जिन वस्तुओं से हमें प्रेम होता है उन्हीं में मन रमा रहता है । ध्यान उन्हीं का रहता है और सुख उन्हीं के चिन्तन में मिलता है । अक्सर भजन में चित्त न लगने की—मन के अन्यत्र भाग जाने की शिकायत की जाती रहती है । इसका कारण एक ही है—सांसारिक पदार्थों से वास्तविक प्रेम और ईश्वर से औपचारिक बाँध-बँधाव । जिससे वास्तविक प्रेम हो मन उसी में रमेगा । जो पदार्थ, प्राणी अथवा दृश्य प्रिय लगते हैं उन्हीं में भ्रमण करने के लिए मन भाग जाता है । न तो हम ईश्वर के वास्तविक स्वरूप को जानते हैं और न उसके प्रति प्रेम भावना—आत्मीयता—जैसी कोई वस्तु अपने पास है । ज्यों-त्यों करके पूजा की लकीर पिटती रहती है । ऐसी दशा में मन लगने की आशा भी कैसे की जा सकती है और मन न लगने पर उपासना का उच्च-स्तरीय प्रतिफल कहाँ मिलेगा ?

उच्च-स्तरीय उपासना में प्रेम भावना का समावेश अनिवार्य रूप से आवश्यक है । परिजनों को इसके लिए बहुत समय से प्रेरणा दी जाती रही है । गायत्री माता की गोद में उसके अबोध शिशु की तरह क्रीड़ा करने, पय पान करने का ध्यान इन प्रयोजनों की पूर्ति के लिए बहुत ही उपयुक्त है । रुचि भिन्नता से जिनको वह ध्यान ठीक तरह न जम पाता हो उनके लिए दो ध्यान और भी हैं जो साधक के अन्तःकरण में तत्काल पुलकन उत्पन्न करते हैं ।

(१) दो बालक समान वय तथा समान स्थिति के सहज स्नेह से वशीभूत होकर गले मिलते हैं, परस्पर एक-दूसरे से लिपटते हैं, उसी प्रकार जीव और ब्रह्म के अबोध आलिंगन का ध्यान करना चाहिए । आत्मा और परमात्मा अपनी दूरी—पृथकता-भिन्नता दूर कर एक-दूसरे के समीप, अति समीप, आकर अभिन्नता की स्थिति में पहुँचने का प्रयत्न करते हैं । द्वैत की स्थिति उत्पन्न करते हैं ।

राम लक्ष्मण, राम भरत अथवा कृष्ण बलराम के बालकपन का परस्पर प्रेम मिलन चित्र इस प्रयोजन के लिए उपयोगी हो सकता है । अपनी वैसी ही स्थिति अनुभव करनी चाहिए । जीव और परमात्मा के बीच बहुत अन्तर होना, छोटे-बड़े का भाव रहना आत्मीयता एवं एकता में बाधक होता है । समानता में स्नेह का आदान-प्रदान अधिक सुविधा से होता है । पति-पत्नी के प्रेम में जो उभार रहता है उसमें यह समानता ही कारण है, मीरा के योग की यही विशेषता थी । सखी सम्प्रदाय तथा गोपी प्रेम के वर्णन में रामलीला में इसी आत्मा और परमात्मा के दाम्पत्य भाव से मिलन का संकेत है । छोटे बालक के रूप में भी दोनों रह कर समानता का आनन्द ले सकते हैं ।

आत्मा अपनी समस्त श्रद्धा और समस्त उपलब्धियाँ परमात्मा को समर्पण करती है और बदले में परमात्मा उसे ज्ञान, विवेक, प्रकाश, आनन्द और परमपद प्रदान करता है । इसे पाकर अन्तःकरण उल्लास, आनन्द और सन्तोष से परितृप्त होकर अमृतत्व का रसास्वादन करता है ।

(२) दूसरा ध्यान दीपक पर पतंगे के जलने की तरह आत्मा का परमात्मा में प्रेम विभोर होकर आत्म-समर्पण करने का है । जीव और ब्रह्म के बीच

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माया ही प्रधान बन्धन है । वही दोनों को एक-दूसरे में पृथक किए हुए है । अहंता, स्वार्थपरता, ममता, संकीर्णता का कलेवर ही जीव को अपनी पृथकता एवं सीमा बाँधता है । उसी की ममता में वह ईश्वर को भूलता और आदेशों की उपेक्षा करता है । इस अहंता कलेवर को यदि नष्ट कर दिया जाय तो जीव और ब्रह्म की एकता असंदिग्ध है । ईश्वरीय प्रेम में प्रधान बाधक यह ममता अहंता ही है ।

ब्रह्म को दीप ज्योति का और अहंता कलेवर युक्त जीव को पतंग का प्रतीक माना गया है । पतंगा अपने कलेवर को प्रिय पात्र दीपक में एकीभूत होने के लिए परित्याग करता है । आत्म-समर्पण करता है । कलेवर का उत्सर्ग करता है । अपनी सम्पदा विभूति एवं प्रतिभा को प्रभु की प्रसन्नता के लिए सर्वमेध यज्ञकर्ता की तरह होम देता है । विश्व-मानव की पूजा प्रसन्नता के लिए साधक का परिपूर्ण समर्पण यही आत्म-यज्ञ है । इसमें अपने को होमने वाला नरमेध करने वाला-ईश्वरीय सान्निध्य की सर्वोच्च गति को पाता है ।

जिस माया मग्नता के कारण ईश्वर और जीव में विरोध था उसका समर्पण कर देने पर ईश्वरीय अनन्त विभूतियों का अधिकारी साधक बन जाता है और उसे प्रभु का असीम प्यार प्राप्त होता है । बिछुड़न की वेदना दूर होती है और दोनों एक-दूसरे के गले मिलकर अनिर्वचनीय आनन्द का रसास्वादन करते हैं ।

यह दोनों ही ध्यान समानता और समर्पण की भावनाओं से ओत-प्रोत होने के कारण बड़े सरल, आकर्षक एवं उल्लासपूर्ण हैं । मन आसानी से लगता है और ध्यान में क्रमशः तन्मयता बढ़ती जाती है । इन ध्यानों में याचना की नहीं आत्मदान की भावना है । उच्चस्तरीय साधना की यही आधार भी है । निम्न स्तर की प्राथमिक उपासना में ईश्वर से सांसारिक लाभ अथवा आत्मिक अनुदान माँगे जाते हैं, पर जैसे-जैसे स्तर ऊँचा होता जाता है, साधक माँगने की तुच्छता छोड़ कर समर्पण की महानता अपनाने के लिए व्याकुल होता है । ध्यान अथवा भावना तक ही उसकी यह साधना सीमित नहीं रहती वरन् वस्तुतः वह विश्व के लिए, लोक-मंगल के लिए बड़े से बड़ा अनुदान देकर अपनी गणना बड़े से बड़े भक्तों में कराने का आत्मसन्तोष उपलब्ध करता है । उसका व्यवहार अपने जीवन, परिवार एवं समाज के प्रति इतना सज्जनतापूर्ण हो जाता है कि प्रतिक्रिया उसे दैवी वरदान की तरह चारों ओर पुष्प वर्षा करती हुई परिलक्षित होती है । स्वर्ग सुख यही तो है । अहंता और ममता वासना और तृष्णा के बन्धनों से मुक्त जीव को मरने पर मुक्ति मिलने की प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती । वह जीवित रहते हुए ही जीवनमुक्त होता है ।

आत्म-समर्पण द्वारा प्रभु प्राप्ति

भगवान कृष्ण द्वारा गीता का महत्त्वपूर्ण उपदेश, ज्ञान देने पर भी महारथी अर्जुन का विषाद दूर नहीं हुआ । वैसे अर्जुन स्वयं भी एक नैष्ठिक साधक दृढ़व्रती थे । जीवन में कठोर साधनाओं और तपश्चर्या के द्वारा उन्होंने अनेकों उत्कृष्ट सफलताएँ अर्जित की थीं । किन्तु इन सबके बावजूद भी रणक्षेत्र में हुए विषाद खिन्नता को वे शान्त न कर सके, न अपने कर्तव्य का निर्धारण ही । मोह और विषाद से खिन्नमना अर्जुन अन्त में भगवान के चरणों में गिरकर कहने लगे:—

"जानामि धर्म न च मे प्रवृत्तिः जानाम्यधर्म न च मे निवृत्तिः त्वया हृषीकेश हृदि स्थितेन-यथा नियुक्तोऽस्मि तथा करोमि ॥"

अर्थात् "मैं धर्म को जानता हूँ, पर उसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं होती । मैं धर्म को भी जानता हूँ, पर उससे मेरा छुटकारा नहीं होता । इसलिए हे हृषीकेश आप मेरे हृदय में निवास कीजिए, आप जिधर चलाइए, उधर चलूँगा ।

महान विचारक, परम सन्त कबीर ने कहा है:—

"मेरा मुझ में कुछ नहीं, जो कुछ है सो तोर ।
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागत है मोर ॥"

जीवन भर की साधना, साधु संगति, उपासना ज्ञानार्जन के बावजूद भी सन्त कबीर अपने आप में सन्तुष्ट नहीं हुए, अन्त में अपने समस्त जीवन को प्रभु समर्पण करने में ही उनको जीवन का सन्तोष लाभ मिला ।

सन्त विनोबा भावे ने कहा है "चित्त शुद्धि के लिए की जाने वाली विविध साधनाओं को मैं सोडा या साबुन की उपमा दूँगा और ईश्वर के प्रति आत्म-समर्पण के भाव को जल की संज्ञा दूँगा । सोडा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साबुन जल के बिना काम नहीं दे सकते किन्तु सोडा साबुन के बिना निर्मल जल से भी सफाई का काम हो जाता है ।''

आत्मा की परिपूर्णता प्राप्त कर परमात्मा में प्रतिष्ठित होने के दो मार्ग हैं—एक प्रयत्नपूर्वक प्राप्त करना और दूसरा अपने आपको सौंप देना । एक में विभिन्न साधनाएँ करनी पड़ती हैं, चिन्तन, मनन, ज्ञान के द्वारा विभिन्न उपक्रमों में सचेष्ट रहना पड़ता है । दूसरी ओर सम्पूर्ण भाव से परमात्मा के प्रति अपने आपका समर्पण करना पड़ता है । तरह-तरह की साधनाएँ, विधि-विधानों का अवलम्बन लेकर प्रयत्न द्वारा ईश्वर प्राप्ति की आकांक्षा रखने वाले बहुत मिल सकते हैं किन्तु सम्पूर्ण भाव से अपने परमदेव के समर्पण हो जाने वाले, जीवन में सर्वत्र ही परमात्मा को प्रतिष्ठित करने वाले, अपनी समस्त बागडोर प्रभु के हाथों सौंप कर उसकी इच्छानुसार संसार के महाभारत में लड़ने वाले अर्जुन विरले ही होते हैं ।

विभिन्न साधनाओं, व्रत, तपश्चर्याओं में अपनी शक्ति का परिचय देकर अपनी साधना का हिसाब लगाने वाले साधकों में एक प्रकार का विशेष सात्विक अहंकार पैदा हो जाता है और यही एक दीवार बनकर आत्मा और परमात्मा के बीच अवरोध खड़ा कर देता है । इसे ही शास्त्रकारों ने ज्ञानजन्य अन्धकार कहा है । यही कारण है कि ज्ञानी, ध्यानी, तपस्वी, सिद्ध योगी बनना दूसरी बात है किन्तु सम्पूर्ण भाव से परमात्मा की उपलब्धि करना, उसमें प्रतिष्ठित होना सर्वथा भिन्न है ।

विभिन्न साधनाओं के रहते भी अपने समस्त कतृत्व, अहंकार, निजत्व की भावनाओं को मिटा कर समस्त जीवन को प्रभु चरणों में समर्पण किए बिना परमात्मा में प्रतिष्ठित होना सम्भव नहीं है ।

वस्तुतः ''परमात्मा को प्राप्त करना है'' यह कहना ही अयुक्त है । वे तो सर्वत्र विराजमान हैं, व्याप्त हैं, जन-जन के हृदय में प्रतिष्ठित हैं । ''ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्ज्जुन तिष्ठति । एको विश्वस्य भुवनस्य राजा'' (ऋग्वेद) । वे सब लोकों के एकमात्र स्वामी हैं । ''तस्मिन हतस्थूर्भुवनानि विश्वा'' (ऋ.) उनमें ही सम्पूर्ण लोक स्थित हैं । किन्तु फिर भी हम उन्हें नहीं देख पाते, परमपिता के पावन अंक में नहीं खेल पाते, उनमें एकाकार नहीं हो पाते, इसका कारण हमारी अपनी ही कमी है । हम अपने आपको (अहं) के क्षुद्र संकीर्ण घेरे में आबद्ध किए बैठे हैं । हमारी उपासना, हमारी साधना परिपूर्ण भाव से स्वयं को उन्हें सौंप देने को नहीं होती वरन् गणना और मूल्यांकन द्वारा अपने कर्तृत्व के अभिमान की सुखद मादकता से युक्त होने की, अपने आपको विशेष समझने, सिद्ध करने के लिए है । तभी तो हम उनसे विलग हैं ।

हमारे समस्त दुःख वेदनाएँ इसलिए हैं कि हम अहं की गठरी में जीवन के सकल हानि-लाभ, हार-जीत, सुख-दुःख, उतार-चढ़ाव के भारी बोझ को बाँधकर सदैव अपने ऊपर लादे फिरते हैं और क्षण-क्षण अनेक आघात संघात सहते रहते हैं । जिस क्षण अपने अहं को मिटाकर सर्वभावेन प्रभु के समझ अपने आपको समर्पित कर देंगे तो यह समस्त बोझा हमसे तत्क्षण ही छूट जायेगा । अहंकार की मृत्यु के साथ ही जीवन के समस्त विरोधी भाव, प्रवृतियाँ, नकारात्मक विचार शान्त हो जायेंगे । हमारा जीवन प्रभु की ओर उसी तरह बहने लगेगा जैसे अनुकूल हवा की लहरों का संयोग पाकर मन्जिल की ओर बढ़ने वाली नाव ।

लम्बे बीहड़ और दुर्गम पथ पर एक अबोध अक्षम बालक का चल सकना कितना कठिन होता है ? उसके दुर्बल कमजोर हाथ-पैर और अल्प जीवन शक्ति के भरोसे मन्जिल प्राप्त करने की आशा नहीं की जा सकती । किन्तु वही बालक पिता के अंक में बैठकर सहज ही उस लम्बे पथ को पार कर लेता है । किन्तु यह तभी सम्भव है जब सम्पूर्ण भाव से अपने आपको पिता के अंक में सौंप दिया जाय । तब पिता की गोद ही उसके लिए मंजिल बन जाती है । परमात्मा में प्रतिष्ठित होने के लिए भी यह पथ सहज और सुलभ है । इसी का अवलम्बन लेकर ही तो अर्जुन ने जीवन भर पूर्ण समाधान पाने के लिए भगवान से कहा था, ''भगवन् ! मैं धर्म जानता हूँ पर उसमें मेरी प्रवृत्ति नहीं, मै अधर्म जानता हूँ पर उससे छूट नहीं पाता । अतएव जो निर्णय कर पाता हूँ वह यही है आप मेरे हृदय में विराजमान होकर मुझे जो भी आदेश देंगे, मुझे जिस ओर चलाना चाहेंगे, जो कुछ कराना चाहेंगे, मैं वही करूँगा, उधर ही चलूँगा ।''

परमात्मा से साक्षात्कार, उनमें प्रतिष्ठित होने का सरल और सहज मार्ग है अपने शक्ति सामर्थ्य, कर्तव्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के अभिमान का त्याग करना और सम्पूर्ण भाव से परमात्मा को अपने आप का निवेदन समर्पण करना । तब सर्वत्र ही सबके साथ समानता, नम्रता, उदारता आत्मीयता का सम्बन्ध बढ़ता जाता है । तब हममें सबसे ऊपर और सब के आगे रहने की प्रवृत्ति नहीं होगी वरन् सबके पीछे और नीचे प्रभु के चरण कमलों में हमारा स्थान होगा । अपने लिए नहीं वरन् सबके लिए हमारा जीवन होगा । सबके हित में अपना हित, सबके सुख में अपना सुख, यदि इन उदार भावनाओं और चरित्र का गठन नहीं होता है तो हमारा आत्म-समर्पण अधूरा है, अथवा हम आत्म-समर्पण का स्वाँग रच रहे हैं ।

ईश्वर के प्रति आत्म-समर्पण करने का यह अर्थ नहीं है कि हम जो कुछ करें वह सब ईश्वर कर रहे हैं । यदि यह धारणा बना ली जायेगी तो एक बहुत बड़ी भूल होगी और हमारे आध्यात्मिक जीवन में एक गंभीर दुर्घटना समझी जायेगी । आत्म-समर्पण के बल पर अपनी बुराइयों, दुष्कृत्यों को पोषण देना, अपनी अकर्मण्यता के नाम पर भाग्यवाद को प्रश्रय देना, अपने कृत्यों द्वारा प्राप्त असफलता को ईश्वर के मत्थे मढ़ना, आत्म समर्पण की भावना के अनुकूल नहीं है । यह तो एक तरह की विडम्बना और आत्म-प्रवंचना है । समर्पण का अर्थ है—पूर्णरूपेण प्रभु को हृदय में स्वीकार करना, उनकी इच्छा प्रेरणाओं के प्रति सदैव जागरूक रहना, जीवन के प्रत्येक क्षण में उसे परिणत करते रहना ।

प्रभु आपकी क्या इच्छा है ? आपका क्या आदेश है देव ! यह प्रश्न निरन्तर अन्तर में उठता रहे तो इसमें कोई सन्देह नहीं कि परमात्मा अपनी इच्छा, प्रेरणानुसार हमें सहज ही लक्ष्य तक पहुँचा देंगे । दिव्य प्रेरणाओं से मानव जीवन दिव्य कर्मों में प्रयुक्त होने लगता है और मनुष्य सहज ही श्रेय की प्राप्ति कर लेता है । आत्मा की परिपूर्णता प्राप्त होकर परमात्मा में गति मिलती है ।

इसलिए मनीषियों ने ज्ञान-विज्ञान उपासना-साधना के क्षेत्र में पर्याप्त खोज करने के उपरान्त ही कहा है "पिता नोऽसि ।" "आप हमारे पिता हैं । हे प्रभु ! आप हमारे पिता हैं, आप ही हमारी माँ हैं, आप ही बन्धु सखा सर्ब कुछ आप ही हैं । आप ही सर्वोपरि विद्या धन सम्पदाएँ हैं । आप ही हमारे जीवन के देवाधिदेव सर्वेश्वर प्रभु हैं ।"

परमात्मा में प्रतिष्ठित होने के लिए, उन्हें प्राप्त करने के लिए अपने समस्त जीवन की बागडोर उन्हीं के हाथों सौंपनी पड़ेगी । उन्हें ही हृदय मन्दिर में प्रतिष्ठित करना होगा । उन्हीं की इच्छा प्रेरणा को जीवन का मन्त्र बनाना पड़ेगा । सम्पूर्ण भाव से उनकी ही शरण में जाना पड़ेगा । अन्यथा हमारा अभिमान, आकांक्षाएँ, कर्तृत्व की भावना, इच्छाएँ, कामनाएँ, ऐष्णाएँ न जाने हमें कहाँ दुर्गति के गर्त में ले जा पटकेंगी ।

मन मान जाता है, मनाइए तो सही

प्रायः लोगों की यह शिकायत होती है कि हमारा मन बुराई से हटता नहीं । इच्छा तो बहुत करते हैं, धर्मानुष्ठान भी चलाते हैं, जप और उपासना भी करते हैं किन्तु मन विषयों से हटता नहीं । बुराइयाँ हर क्षण मस्तिष्क में आती रहती हैं । जब ऐसी बातें सुनने को मिलती हैं तो लगता है मन ही सब कुछ है, वही जीवन की सम्पूर्ण गतिविधियों का संचालन करता है ।

यह बात अगर मान भी लें तो यह नहीं कह सकते कि मन स्वभावतः अधोमुखी है क्योंकि सन्त-हृदय पुरुषों के मन की भी गति होती है । उनकी प्रवृत्तियाँ, रुचि और क्रिया व्यापार जब सदाचार मूलक होते हैं तो यह कैसे कह सकते हैं कि मन स्वतः बुराइयों की ओर चला जाता है ।

वस्तुतः हमारी रुचि जिन विषयों में होती है उन्हीं का चिन्तन करते हैं और उन्हीं में तृप्ति अनुभव करते हैं । मन को जब किसी विषय में रुचि नहीं तभी यह अन्यत्र भागता है । विषयों की ओर भटकता हुआ मन ही दुःख का कारण होता है । इस अवस्था से तब तक छुटकारा नहीं पा सकते तब तक मन की लगाम नहीं खींचते और उसे कल्याणकारी विषयों में नहीं लगाते । प्रसिद्ध दार्शनिक बर्क का यह कथन बिल्कुल सत्य प्रतीत होता है—"मनुष्य पानी जैसी चंचलता से ऊपर नहीं उठता ।" इन शब्दों में मन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के इधर-उधर भागते रहने के फलस्वरूप जो मनुष्य का पतन होता है उसी की ओर संकेत है ।

मन तो आपकी इच्छानुसार रुचि लेता है । जिन व्यक्तियों को तरह-तरह की स्वादिष्ट वस्तुएँ खाते रहने में रुचि होती रहती है, वे इसी में भटकते रहते हैं । स्वादिष्ट चीजें बार-बार खाते रहते हैं पर किसी से तृप्ति ही नहीं होती । एक के बाद दूसरे पदार्थ में अधिक स्वाद प्रतीत होता है । इस स्वाद में उन्हें न तो अपने स्वास्थ्य का ध्यान रहता है, न भविष्य का उनकी पाचन-प्रणाली बिगड़ जाती है, स्वास्थ्य खराब हो जाता है तो कहते हैं हम क्या करें, हमारा तो मन नहीं मानता । मन तो आपका सहायक मात्र है वह जिस वस्तु में आपकी रुचि देखता है उसी ओर कार्य किया करता है ।

दूसरे व्यक्ति को स्वस्थ रहना अधिक पसन्द होता है । दंगल में कुश्तियाँ पछाड़ने, भरती होकर शौर्य प्रदर्शन की इच्छा होती है तो वह कसरत करता है, कुश्ती लड़ता है, मालिश और पौष्टिक पदार्थों के लिए समय, श्रम और धन जुटाता है । अनेकों क्रियाएँ केवल इसीलिए करता है कि उसे स्वास्थ्य अधिक प्रिय है । मन इस तरह आपकी रुचि, आपकी इच्छाएँ पूर्ण करने का एक महत्त्वपूर्ण साधन है । इसे शत्रु नहीं मित्र समझना चाहिए ।

अतः मन को किसी उत्तम और उपयोगी विषय पर टिकाए रहना सुगम है । जिस विषय में आप अपनी उन्नति या श्रेय समझते हैं उसमें अपने मन को प्रवृत कीजिए । मन आपको बताएगा कि आप उसकी सफलता के लिए क्या करें ?

आपका मन कल्याणकारी विषयों में लगा रहता है इसका ध्यान रखिए । "हमारे किए कुछ न होगा ।" ऐसा निराशापूर्ण दृष्टिकोण ही मनुष्य की असफलता का कारण है । जब हम यह मान लेते हैं कि इस कार्य को हम करके ही छोड़ेंगे तो वह कार्य जरूर सफल होता है । आशा और आत्म-विश्वास में बड़ी उत्पादक शक्ति है । आप इन्हें अपने जीवन में धारण कीजिए आपका मानसिक निरोध किसी प्रकार कामयाब नहीं होगा ।

जिस विषय में ध्यान दीजिए उसके अच्छे-बुरे पहलुओं का एक सर्वांगपूर्ण रेखाचित्र अपने मस्तिष्क में बनाते रहिए । जिधर कमी या अनुपयुक्तता दिखाई दे उधर ही मन की दीवार खड़ी कर दीजिए और अपनी रुचि की दिशा को सन्मार्ग की ओर मोड़े रहिए । निरन्तर अभ्यास से वह स्थिति बन जाती है तब मन स्वयं कोई विकल्प उत्पन्न नहीं करता । सत्संकल्पों में ही अवस्थित बनने के लिए गीताकार ने भी यही प्रयोग बताया है । लिखा है:—

असंशय महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेनतुकौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥

हे अर्जुन ! निश्चय ही यह मन चंचल और अस्थिर है । इसका वश में करना निश्चय ही कठिन है, किन्तु अभ्यास और वैराग्य भावना से वह भी वशवर्ती हो जाता है ।

अभ्यास का अर्थ है आप जिस विषय में रुचि रखते हैं बार-बार अपने मन को उसी में लगाइए । मान लीजिए आपको विद्याध्ययन करना है तो आपका ध्यान इस प्रकार रहे कि कहाँ से पुस्तकें प्राप्त करें ? कौन सी पुस्तक अधिक उपयुक्त है ? किसी से सहायता भी लेनी पड़ेगी । अच्छे नम्बर प्राप्त करने के लिए परिश्रम भी वैसा ही करना है । इससे आपके विचारों की आत्मनिर्भरता, सूझ और अनुभव बढ़ेंगे और उसी में लगे रहने से आपको सफलता भी मिलेगी ।

अपनी इस हीन प्रवृत्ति के कारण ही मनुष्य प्रायः अशुभ विचारों और अप्रिय अवस्थाओं का चिन्तन करते रहते हैं । इसी कारण उनके मस्तिष्क में निरन्तर द्वन्द्व छिड़ा रहता है । कामुकतापूर्ण विचारों वाला व्यक्ति सदैव वैसे ही विचारों से घिरा रहता है । थोड़े से विचार आत्म-कल्याण के बनाता भी है तो अनिश्चयात्मक बुद्धि के कारण तरह-तरह के संशय उठते रहते हैं । जब तक एक तरह के विचार परिपक्व नहीं होते तब तक उस दिशा में अपेक्षित प्रयास भी नहीं बन पाते । यही कारण है कि मनुष्य किसी क्षेत्र में प्रगति नहीं कर पाता ।

सद्विचार जब जाग्रत होते हैं तो मनुष्य का जीवन स्वस्थ, सुन्दर और सन्तोषयुक्त बनता है । अपना संकल्प जितना बलवान बनेगा उतनी ही मन की चंचलता दूर रहेगी और संयम बना रहेगा । इससे शक्ति जो मनुष्य को उत्कृष्ट बनाती है विश्रृंखलित न होगी और मनुष्य दृढ़तापूर्वक अपने निश्चय पथ पर बढ़ता चलेगा ।

आप सदैव ऐसे ही काम करें जिससे आपकी आत्मा की अभिव्यक्ति हो । जिन कार्यों में आपको

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन्तोष न होता हो उन्हें अपने जीवन का अंग न बनाइए । जब तक मनुष्य अपने कार्यों में मानवोचित स्वतन्त्रता की भावना का विकास नहीं करता तब तक उसकी आत्मा व्यक्त नहीं होती । दूसरों के लिए सही मार्गदर्शन वही दे सकता है जिसमें स्वतन्त्र रूप से विचार करने की शक्ति हो । इस शक्ति का उद्रेक मनुष्य के नैतिक साहस और उसके प्रबुद्ध मनोबल से ही होता है । बलवान मन जब किसी शुभ कर्म में संलग्न होता है तो मनुष्य के जीवन को सुख-सम्पदाओं से ओत-प्रोत कर देता है । उसकी भावनाएँ संकीर्णताओं के बन्धन तोड़ कर अनन्त तक अपने सम्बन्धों का विस्तार करती हैं । वह लघु न रहकर महान् बन जाता है । अपनी इस महानता का लाभ अनेक दूसरों को दे पाने का यश-लाभ प्राप्त करता है ।

इसलिए जीवन साधना का प्रमुख कर्त्तव्य यही होना चाहिए कि हमारी मानसिक चेष्टाएँ पतनोन्मुख न हों । मन जितना उदात्त बनेगा, जीवन उतना ही विशाल बनेगा । सुख और शान्ति मनुष्य जीवन की इस विशालता में ही सन्निहित है । दुःख तो मनुष्य स्वार्थपूर्ण प्रवृत्तियों के कारण पाता है ।

अतः अपने आप को सुधारने का प्रयत्न कीजिए । वश में किया हुआ मन ही मनुष्य का सहायक है और उससे बढ़कर अपना उद्धारकर्ता संसार में शायद ही कोई हो । इस परम हितैषी मन पर अनुकूल न होने का दोषारोपण लगाना उचित नहीं लगता । जिस मन पर ही मनुष्य की उन्नति या अवनति आधारित है उसे सुसंस्कारित बनाने का प्रयत्न सावधानी से करते रहना चाहिए । मन को विवेकपूर्वक समझाएँ तो वह मान जाता है और कल्याणकारी विषयों में रुचि लेने लगता है । यह प्रक्रिया अपने जीवन में प्रारम्भ हो तो हम जीवन लक्ष्य प्राप्ति के सही मार्ग पर चल रहे हैं, यही मानना चाहिए ।

उच्च स्तरीय आध्यात्म साधना के तीन चरण

उच्च स्तरीय आध्यात्म साधना के भाव पक्ष के तीन चरण हैं—(१) भजन, (२) मनन, (३) चिन्तन । इन तीनों को मिला देने से ही एक समग्र साधन प्रक्रिया का निर्माण होता है । अन्न, जल और वायु के तीनों अंग मिलकर पूर्ण आहार बनता है । इनमें से एक भी कम पड़ जाय तो जीवन यात्रा न चल सकेगी । इसी प्रकार आत्मिक जीवन के लिए भजन, मनन और चिन्तन का सूक्ष्म आहार प्रस्तुत करना पड़ता है । अन्तःकरण की स्वस्थता, प्रखरता, परिपुष्टता एवं प्रगति इन तीन आधारों पर ही निर्भर है । गायत्री महामन्त्र के तीन चरणों की सूक्ष्म प्रेरणा भी इसी त्रिवेणी को कहा जा सकता है ।

सर्वोच्च साधना स्तर अद्वैत स्थिति का है । इसमें प्रवेश किए बिना न तो मनोलय होता है और न ईश्वर प्राप्ति । जब तक ईश्वर से भिन्न अपनी अलग सत्ता बनी रहेगी, जब तक अपना विलय परमेश्वर में न होगा तब तक अपूर्णता का, पृथकता का अन्त न होगा । लययोग ही समाधि की—मुक्ति की—परम स्थिति तक पहुँचा सकता है ।

उच्च स्तरीय 'भजन' के लिए शरीर को शिथिल और मन को उदासीन करना पड़ता है ताकि न शरीर की माँसपेशियों पर कोई तनाव रहे और न मस्तिष्क में कोई आकर्षण उत्तेजना पैदा करे । यह स्थिति कुछ ही दिन के अभ्यास से उपलब्ध हो जाती है । किसी आराम कुर्सी, कोमल बिस्तर या दीवार, पेड़ आदि का सहारा लेकर शरीर को निद्रित एवं मृतक स्थिति जैसा शिथिल कर देना चाहिए । इसे शवासन एवं शिथिलीकरण मुद्रा कहते हैं । शारीरिक दृष्टि से यह पूर्ण विश्राम है । मानसिक दृष्टि से इसे ध्यान भूमिका कहा जाता है । उत्तेजित तनी हुई नाड़ियाँ एवं माँसपेशियाँ होने पर कभी किसी का ध्यान लग ही नहीं सकता । इसलिए पद्मासन, वद्धपद्मासन जैसे तनाव उत्पन्न करने वाले आसन और किसी प्रयोजन के लिए उपयोगी भले ही हों—ध्यान के लिए उल्टे बाधक होते हैं ।

यही बात मन के सम्बन्ध में भी है, समस्त संसार शून्यता संव्याप्त है । प्रलय काल की तरह नीचे अथाह नील जल राशि और ऊपर नीला आकाश है । सर्वत्र परम शान्तिदायिनी नीलिमा एवं नीरवता संव्याप्त है । कहीं कोई व्यक्ति या पदार्थ नहीं । मन को आकर्षित करने वाली कोई स्थिति परिस्थिति शेष नहीं । उस परम शून्यता में बालक की तरह अपनी निर्मल चेतना कमल पत्र पर लेटी हुई तैर रही है । अपने पैर का अगूँठा अपने मुँह में लगा हुआ है और आत्मा स्वरस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का पान कर रही है । प्रलय काल का ऐसा चित्र बाजार में बिकता भी है । मनःस्थिति को उसी स्तर का बनाने का प्रयत्न किया जाय तो शून्यता की मानसिक स्थिति बनती और बढ़ती चली जाती है । शारीरिक शिथिलता और मानसिक रिक्तता की—उपर्युक्त स्थिति भजन साधना की उपर्युक्त पूर्व भूमिका समझी जानी चाहिए ।

शिथिल शरीर एवं मनःस्थिति में ही भजन ठीक प्रकार हो सकता है । भावपरक ध्यानयोग का यही पूर्वार्द्ध है । आपरेशन कराते—इन्जेक्शन लगाते समय हिलने-जुलने पर प्रतिबन्ध रहता है । एक का रक्त दूसरे के शरीर में प्रवेश कराते समय दोनों व्यक्ति अपने हाथों को हिलाते-डुलाते नहीं हैं । भजन के समय भी मानसिक संस्थान को इसी प्रकार शान्त रहना चाहिए ।

भजन का उत्तरार्द्ध यह है कि उस सर्वशक्तिमान—सर्व वैभववान्—सर्व उत्कृष्टताओं से सम्पन्न—सर्वाधिक प्रेमी परमेश्वर को अपनी सत्ता में प्रविष्ट होते हुए—घुलते हुए अनुभव किया जाय । ब्रह्माण्डव्यापी दिव्य प्रकाश के सागर में अपने आपको मछली की तरह निमग्न अनुभव किया जाय । जिस प्रकार मिट्टी के ऊपर जल गिरने से दोनों के मिश्रण का एक नया रूप 'कीचड़' बनता है वैसे ही भावना की जानी चाहिए कि परम प्रकाश अपने रोम-रोम में संव्याप्त हो रहा है । (१) शरीर के अंग-प्रत्यंग में वह संयम एवं बलिष्ठता का रूप धारण कर रहा है । (२) मस्तिष्क में विवेक और प्रखर प्रतिभा परक तेजस् बनकर बिखर रहा है । अन्तरात्मा के हृदय संस्थान में वह देवत्व और आनन्द रूप बना बैठा है । इस प्रकार स्थूल, सूक्ष्म और कारण तीनों शरीरों में परमात्मा की परम ज्योति को ज्वलन्त अग्नि की तरह समाविष्ट देखना अपने को उस आलोक से आलोकित अनुभव करना भजन साधना की प्रधान ध्यान विद्या है ।

इस संयोग की वेला में आनन्दानुभूति उठनी चाहिए । माता-पुत्र का तथा प्रेमी-प्रेयसी का मिलन जितना सुखद होता है उससे भी अधिक तृप्तिदायक यह आत्म-परमात्म मिलन है । इस मिलन की प्रतिक्रिया को भी अनुभूति में उतारना चाहिए । शरीर और मन परमेश्वर को समर्पित किया गया और उसे स्वीकार कर लिया । इसके बाद यही होना चाहिए कि अपना काय कलेवर पूर्णतया परमेश्वर की इच्छानुसार गतिशील रहे । अपनी कोई इच्छा कामना परमेश्वर पर न थोपी जाय, उसी की इच्छा में अपनी इच्छा मिलाई जाय । परमेश्वर जिसमें प्रसन्न हो वही सोचना और वही करना सच्चे भजन परायण भक्त के लिए उचित है । बदला पाने के लिए किया गया भजन तो वेश्यावृति है ।

कहा जा चुका है कि भावनात्मक साधनाओं के लिए संध्यावंदन की तरह ब्रह्ममुहूर्त का बन्धन नहीं है । उसे सुविधानुसार नित्य उपासना के साथ या आगे-पीछे किया जा सकता है । यही बात मनन साधना पर लागू होती है । उसे भजन के साथ या आगे पीछे किया जा सकता है । वातावरण शान्त और स्थान एकान्त होना चाहिए । आँखें बन्द करके आराम कुर्सी पर पड़े हुए यह सोचना चाहिए कि—"शरीर मृत अवस्था में पड़ा है और प्राण उसमें से निकल कर किसी ऊँचे स्थान पर हंस पक्षी की तरह जा बैठा । अब पड़ी हुई लाश के अंग-प्रत्यंगों को पोस्टमार्टम के समय उघाड़े गए अवयवों की तरह उलटना-पलटना चाहिए और समझना चाहिए कि कपड़ों से भरी हुई पेटी की तरह ही यह काया अपने सामयिक उपयोग के लिए मिली थी । इसी प्रकार मस्तिष्क को एक छोटे डिब्बे की तरह खोलकर देखना चाहिए कि उसमें मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार के चार आभूषण, उपकरण औजार सुसज्जित रखे थे ।"

इस ध्यान को जितनी गहराई से जितनी देर किया जा सकना सम्भव हो करना चाहिए और इस निष्कर्ष पर पहुँचना चाहिए कि प्राण—हंस, की आत्म सत्ता सर्वथा स्वतन्त्र है । शरीर की वस्त्र पेटी और मस्तिष्क की उपकरण पिटारी, जीवन रथ के दो अश्व वाहनों की तरह थी । काय कलेवर लक्ष्य पूर्ति के लिए सहायक के रूप में मिला था । उसकी शोभा सुसज्जा के लिए आत्म कल्याण के लक्ष्य को तिलांजलि नहीं दी जानी चाहिए ।

मृग मरीचिका को, कुछ भी साथ न जाने वाले वैभव की मृत्यु को, आयुष्य की क्षणभंगुरता को, विषयों की निरर्थकता को यदि मनुष्य गम्भीरतापूर्वक समझे तो उसकी आँखें खुलें कि क्या करना चाहिए था और क्या किया जा रहा है ? किधर चलना चाहिए था और किधर चला जा रहा है । जीवन और मृत्यु दोनों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक-दूसरे के साथ इस प्रकार जुड़े हुए हैं कि किसी के कभी भी नीचे-ऊपर होने में तनिक भी आश्चर्य नहीं किया जाना चाहिए । यह वस्तुस्थिति समझ में आये तो हर व्यक्ति अपने बहुमूल्य क्षणों का ठीक प्रकार उपयोग करना सीखे, और उन निरर्थक बाल-क्रीड़ाओं में न उलझे, जिनमें आमतौर से लोग अपने को भुलाये रहते हैं । मृत्यु की विस्मृति ही वह कारण है जिसने नर जन्म के श्रेष्ठतम सदुपयोग के प्रति उदासीनता उत्पन्न कर रखी है ।

मनन का दूसरा अर्थ है—आत्मबोध । अपना वास्तविक स्वरूप, जीवन का उद्देश्य, शरीर और आत्मा का सम्बन्ध, श्रेय और प्रेय में से एक का चुनाव—अपनी गतिविधियों और रीति-नीतियों का सुनियोजित निर्धारण जैसे अनेक महत्त्वपूर्ण निर्णय इसी केन्द्र पर टिके हुए हैं कि आत्मबोध हुआ या नहीं । यह चेतना तब तक जगेगी नहीं तब तक लोभ और मोह की लिप्सा प्रचण्ड ही बनी रहेगी, तृष्णा और वासना की प्रबलता उभरी ही रहेगी, मायापाश के भव-बन्धनों से छुटकारा मिलेगा ही नहीं, फलतः व्यथा वेदनाओं में झुलसते रहने की दुर्गति से छुटकारा भी नहीं मिलेगा । यदि आत्मबोध का लाभ न मिल सका तो समझना चाहिए कि मानव का उद्देश्य और आनन्द हाथ से चला गया ।

भजन अर्थात् ईश्वरीय सत्ता के साथ आत्म सत्ता का समीकरण परस्पर विलय समन्वय की अनुभूति । मनन अर्थात् आत्मबोध । शरीर और आत्मा के स्वार्थों और सम्बन्धों का पृथक्करण । जीवन लक्ष्य के प्रति आस्था और रीति-नीति का साहसपूर्वक निर्धारण । दोनों की साधना विधियाँ सरल हैं । एक ही समय या दो पृथक-पृथक सुविधा के समय और शान्त एकान्त स्थान में, सुसन्तुलित चित्त से यह दोनों ध्यान, चिन्तन, किए जा सकते हैं । भावनाओं की जितनी गहराई इन में लगेगी उतनी ही अन्तर्ज्योति प्रखर होती चली जायेगी और आत्मा के साथ परमात्मा का प्रणय परिणाम होने पर जिन दिव्य सम्पदाओं की उपलब्धि होनी चाहिए वे सहज ही करतलगत होती चली जायेंगी ।

भाव साधना का तीसरा चरण है—चिन्तन । चिन्तन अर्थात् शारीरिक गतिविधियों का आदर्शवादिता के और मानसिक हलचलों का उत्कृष्टता के आधार पर सुसन्तुलित निर्धारण । इसके लिए प्रातःकाल उठते ही "हर दिन नया जन्म—हर रात नई मौत" का तथ्य सामने रखकर आज की—समयपरक और भावपरक दिनचर्या निर्धारित करनी चाहिए । एक ही दिन के लिए यह जन्म है । आज ही रात की मृत्यु निद्रा की गोदी में जाता है इसलिए ईश्वर प्रदत्त समय सम्पदा और भाव वैभव का श्रेष्ठतम सदुपयोग करने के लिए—जीवन लाभ लेने के लिए साहसपूर्वक तत्पर होना चाहिए । किसी भी व्यवधान को इस निर्धारण में बाधक नहीं होने देना चाहिए ।

प्रातःकाल से लेकर सोने के समय तक की समयचर्या निर्धारित करनी चाहिए । नित्य कर्म, विश्राम, उपार्जन से लेकर परमार्थ प्रयोजनों तक के लिए उचित रीति से समय विभाजन किया जाय । उपार्जन के और परिवार पोषण के उत्तरदायित्व अभी जिनके कन्धों पर हैं उन्हें भी आठ घण्टा कमाने के लिए, छः घण्टा सोने के लिए, चार घण्टा नित्य नैमित्यिक कर्मों के लिए लगाकर सांसारिक प्रयोजनों के लिए अधिकतम २० घण्टे ही खर्च करने चाहिए । शेष ४ घण्टे जीवनोद्देश्य की पूर्ति में लगाने चाहिए ।

हर क्रिया के साथ एक विचारणा अनिवार्य रूप से जुड़ी रहती है, क्या कार्य, किस लाभ या प्रयोजन के लिए किया जा रहा है, उसमें रुचि या उत्साह किस लिए है, इसका कुछ न कुछ कारण आकर्षण होना ही चाहिए । मनोगत आकांक्षा और शरीरगत क्रिया दोनों के सम्मिश्रण से समग्र कर्म बनता है, उसी के आधार पर संस्कार बनते हैं, पाप पुण्य का निर्धारण होता है, और कर्मफल की प्रतिक्रिया उत्पन्न होती है । भाव रहित क्रिया तो मात्र उछल-कूद भर होती है । हमें अपने हर क्रिया-कलाप के साथ उच्च आदर्शों से भरी-पूरी भावना नियोजित रखनी चाहिए । पत्नी को अपने संरक्षण में रखी गई ईश्वर की पुत्री समझा जाना चाहिए और वह पिता के घर से जिस स्थिति में आयी थी उसकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ, सुयोग्य, सुविकसित, प्रसन्न, प्रफुल्लित बनाने का प्रयास निरन्तर करते रहने की बात सोचनी चाहिए । यदि उसके प्रति कर्त्तव्य, स्नेह, सौजन्य बरसाया जाता रहा तो वह पत्नी भौतिक सुविधा और आत्मिक प्रगति की दोनों ही दृष्टि से बड़ी सुखद श्रेयस्कर सिद्ध होगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बालकों को ईश्वर के उद्यान में उगे हुए सुरभित पुष्प माना जाय और उन्हें माली की तरह सींचा, सँभाला जाय । अपनी सम्पदा, बुढ़ापे की लकड़ी, वंश चलाने वाले उत्तराधिकारी, मात्र प्रियपात्र यदि उन्हें माना समझा जायेगा तो वे ही बालक बन्धन रूप सिद्ध होंगे और लोक-परलोक में विविध विधि दुर्गति का कारण बनेंगे । दृष्टिकोण का अन्तर रहने के कारण एक व्यक्ति के लिए शिशु पोषण, परिवार पालन अपार उद्वेग उत्पन्न करेगा जबकि परिष्कृत चिन्तन शैली से की गई परिवार सेवा—गृहस्थयोग साधना बन जाती है । पिता-माता, भाई-बहिन, आदि का भरा-पूरा कुटुम्ब किसी भावनाशील व्यक्ति के लिए अपने सद्गुणों के विकास के लिए विनिर्मित प्रयोगशाला ही सिद्ध होता है । इन थोड़े व्यक्तियों की सुव्यवस्था बनाना एक छोटे राज्य का सुशासन चलाने के समान है । नेतृत्व, सुसंचालन, सुव्यवस्था की दिशा में किसने कितनी योग्यता प्राप्त की उसकी परीक्षा पारिवारिक जीवन में बरती गई रीति-नीति से होती है । जो उसमें उत्तीर्ण होते हैं उन्हें भगवान अधिक बड़े क्षेत्र का—अधिक महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व सौंपते हैं । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए परिवार के लिए उपार्जन एवं सुविधा व्यवस्था में लगने वाला अधिकांश समय तथा मनोयोग नियोजित किया जाय तो घर ही तपोवन बन सकता है ऐसे लोगों को तपोवन में घर बनाने की आवश्यकता नहीं है ।

शरीर को भगवान का मन्दिर—भगवान के प्रयोजनों में काम आने वाला वाहन माना जाय और उसे स्वस्थ सुव्यवस्थित बनाने वाले क्रिया-कलाप अपनाये जायें तो शरीर यात्रा के लिए किया गया पुरुषार्थ प्रकारान्तर से ईश्वर की सेवा, पूजा स्तर का ही रहेगा । उपार्जन में यदि ईमानदारी, उचित लाभ, जनता की आवश्यकता पूर्ति, परिवार व्यवस्था के लिए श्रम साधना के रूप में किया जाय तो वही व्यापार, नौकरी, कृषि, शिल्प, बुद्धि श्रम आदि एक प्रकार से कर्मयोग का क्रिया-कृत्य ही माना जायेगा । शरीर को यदि वासना प्रदर्शन, अहंकार अनाचार के लिए अनीति और उच्छृंखलतापूर्वक सजाया पोषा और बलिष्ठ बनाया जा रहा है तो उसे शरीराध्यास के बन्धनकारक स्वार्थपरता की श्रेणी में गिना जायेगा । भोजन यदि भगवान का प्रसाद, शरीर इन्जन का ईंधन, क्षुधा रोग की औषधि की तरह किया जा रहा है तो वह परमार्थ है किन्तु यदि चटोरेपन की लालसा से अनुपयुक्त आहार किया जा रहा है तो वही सामान्य दीखने वाली भोजन प्रक्रिया पाप परिणाम प्रस्तुत करेगी ।

तात्पर्य यह है कि दिन भर की समस्त कार्य-पद्धति के साथ उच्च कोटि की भावनाएँ नियोजित रखी जायें । हर दिन कागज पर पूरी दिनचर्या नोट कर ली जाय जिसमें दिन भर का समय विभाजन और हर कार्य के साथ जुड़ी रखी जाने वाली भावनाओं का विवरण लिखा रहे । यह कागज मेज पर या जेब में रखा रहे । निर्धारित कार्य पद्धति और विचार प्रक्रिया में कितनी सफलता मिल रही है, कितनी असफलता, इसका निर्णय हर घण्टे करते रहा जाय । इस प्रकार चलता हुआ क्रम रात को सोते समय यह बतायेगा कि सब मिलाकर कुल कितने प्रतिशत सफलता मिली, कितनी असफलता । सफलता के लिए प्रसन्न हुआ जाय और जो भूलें हुई हों उन्हें दूसरे जन्म में—दूसरे दिन सुधारने के लिए अधिक सतर्कता जाग्रत की जाय ।

रात्रि को सोने के लिए जब बिस्तर पर जाया जाय तब संन्यास जैसी भावनाओं को हृदयंगम किया जाय । जो कुछ कर्तव्य थे वे ईश्वर के सौंपे हुए थे, ईमानदारी से पूरे किए गए । जो शेष हैं उन्हें ईश्वर पूरा करेगा । कुटुम्ब परिवार, धन वैभव आदि सब भगवान का था । उसकी धरोहर उसे सौंपकर निश्चिन्तता पूर्वक निर्लिप्त मन से अनासक्त कर्मयोगी की तरह निद्रा मृत्यु की गोद में शयन किया जा रहा है । अन्तिम मृत्यु के लिए यह श्रेष्ठतम साधना है । इस मनःस्थिति में यदि महाप्रयाण किया जाय तो परलोक में निश्चित रूप से परम शान्ति और सद्गति ही मिलेगी ।

चिंतन का स्वरूप शारीरिक और मानसिक गतिविधियों को आदर्शवादिता और उत्कृष्टता के खाँचे में इस तरह कस देना है कि असावधानी के कारण पनपने वाली दुष्प्रवृत्तियों के पनपने की कोई गुंजाइश न रहे । ढीली-पोली जीवनचर्या पर ही विकृतियाँ सवार होती हैं । यदि जागरूकता और सतर्कता बनी रहे तो दुष्ट दुर्भावों को सेंध लगाने का अवसर नहीं मिले । यदि वे कदाचित आक्रमण करें भी तो चिन्तनशील उसके लिए विरोधी विचारों की सेना सदा लड़ने और अड़ने के लिए तैयार रखता है । कभी कामुकता के विचार मन में उठें तो उसे निरस्त करने के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यभिचार से उत्पन्न होने वाले असंख्य अनर्थों का, संयम ब्रह्मचर्य से उपलब्ध होने वाले सत्परिणामों की लम्बी सूची तैयार रखता है और जैसे ही उस स्तर के दुष्ट विचार उठे कि प्रतिरोधी सदाचार परायण विचार शृंखला पर गम्भीरतापूर्वक ऊहापोह आरम्भ कर देता है । जहाँ यह प्रक्रिया आरम्भ हुई वहाँ कुविचारों के निराकरण में तनिक भी देर नहीं लगती ।

उच्चस्तरीय भावनात्मक साधना के लिए भजन, मनन और चिन्तन की त्रिवेणी प्रवाहित की जानी चाहिए । गायत्री महामन्त्र के उपासनात्मक कर्मकाण्ड की प्राण प्रतिष्ठा इस भाव समन्वय से ही सम्भव होती है और इसी संयोग के फलस्वरूप यह सब कुछ उपलब्ध होता है जिसका माहात्म्य वर्णन विभिन्न आध्यात्म प्रसंगों में किया गया है ।

आत्मबोध एक दिव्य वरदान

अपने को जान लेना सबसे बड़ा ज्ञान है । साधारणतया लोग अपना अस्तित्व शरीर और मन से बने कायकलेवर तक ही सीमित मानते हैं । वासना और तृष्णा की ही आकांक्षाएँ चित्त में उठती रहती हैं पेट और प्रजनन के लिए ही उसके क्रिया-कलाप होते हैं । लोभ, मोह और अहंकार की पूर्ति से आगे का कोई पुरुषार्थ उससे बन ही नहीं पड़ता । इसका कारण अपने दिव्य अस्तित्व को मानव-जीवन की गरिमा को—सामने प्रस्तुत तथ्य को—न समझना ही होता है । इसी अज्ञान में भटकते हुए यह जन्म बीत जाता है और अन्ततः पछताने के अतिरिक्त और कुछ हाथ नहीं रहता ।

आत्म-बोध को जीवन की सबसे बड़ी उपलब्धि माना गया है । जिसने अपने को जान लिया और जीवन-लक्ष्य की पूर्ति की आवश्यकता को समझ लिया, वह महामानव बनता है । देव-संज्ञा में सम्मिलित होकर अपना ही नहीं, अन्य असंख्यों का कल्याण करता है ।

अपने में ब्रह्मसत्ता ओतप्रोत है । उसे जाग्रत करना अपने में देवत्व तथा ईश्वरत्व का उदय करना है । आत्मचेतना की शक्ति इतनी प्रचण्ड है कि वह जिधर मुड़ती-झुकती है, उधर ही प्रगति होती जाती है और वैसी ही परिस्थितियाँ बनती जाती हैं । बाह्य-जगत में जो कुछ भला-बुरा सामने है, उसका मूल उत्तरदायित्व अपनी मनःस्थिति पर ही होता है । हम सुधरे तो बाहरी परिस्थितियों को सुधरते देर न लगे । इस सत्य और तथ्य को जानने के उपरान्त ही आत्म-शोधन और आत्म-निर्माण की आवश्यकता अनुभव होती है । इस मार्ग पर चलते हुए ही जीवन-लक्ष्य को प्राप्त कर सकना सम्भव होता है । इस सन्दर्भ में शास्त्रों का प्रतिपादन इस प्रकार है—

नानोपनिषदभ्यासः स्वाध्यायो यज्ञ ईरितः ।
ज्ञानयज्ञः स विज्ञेयः सर्वयज्ञोत्तमोत्तमः ॥

—शाट्यायनीयोपनिषद् १६

आत्मज्ञान के स्वाध्याय को यज्ञ कहा गया है । ज्ञान-यज्ञ समस्त यज्ञों में सर्वोत्तम है ।

आत्मावलोकने यत्नः कर्तव्यो भूतिमिच्छता ।
सर्वदुःखशिरश्छेद आत्मालोकेन जायते ।।२।।

—योगवाशिष्ठ

जो अपना कल्याण चाहता हो उसे आत्मज्ञान प्राप्त करने का प्रयत्न करना चाहिए । दुःखों का नाश इसी से होता है ।

एकः शत्रुर्नद्वितीयोऽस्ति—
शत्रुरक्तान तुल्यः पुरुषस्य राजन् ।
येन्नावृतः कुरुते संप्रयुक्तो—
घोराणि कर्माणि सुदारुणानि ॥

—महाभारत

इस संसार में मनुष्य का एक ही शत्रु है, उसके समान दूसरा कोई नहीं । यह शत्रु आन्तरिक-अज्ञान है । इसी से ग्रसित होकर मनुष्य दारुण कर्मों को करने लगता है ।

आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ।
आत्मात्मना न चेत्त्रातस्तदुपायोऽस्ति नेतरः ॥
अभ्यासवैराग्ययुतादाक्रान्तेन्द्रियपन्नगात् ।
नात्मनः प्राप्यते यत्तत्प्राप्यते न जगतत्त्रयात् ।
आराधयात्मनात्मानमात्मनात्मानमर्चयेत् :
आत्मनात्मानमालोक्य संतिष्ठस्वात्मनात्मनि ॥
सर्वेषामुत्तमस्थानां सर्वासां चिरसंपदाम् ।
स्वमनोनिग्रहो भूमिर्भूमिः सस्यश्रियामिव ॥

—योगवाशिष्ठ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मा ही अपना बन्धु और अपना शत्रु—स्वयं है । यदि अपना उद्धार आप नहीं किया जा सकता तो दूसरा कोई और उपाय नहीं है । अभ्यास, ज्ञान वैराग्य और संयम से ही आत्मा की प्राप्ति होती है, बाह्य कर्मकाण्डों से नहीं । इसलिए आत्मा की ही पूजा करो, उसी की आराधना में लगो । उसी का दर्शन करके उसी में अवस्थित हो जाओ जैसे भूमि से सब अन्न उत्पन्न होते हैं, उसी तरह परिष्कृत मनोभूमि से सब सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ।

खेदोल्लासविलासेषु स्वात्मकर्तृवयैकया ।
स्वसंकल्पे क्षयं याते सगतैवावशिष्यते ।।३।।

—महोपनिषद् ६।३

खिन्नता और उल्लास की स्थिति उत्पन्न करना मनुष्य के अपने हाथ की बात है । यह तथ्य समझ लेने पर मन में शान्ति और समता ही शेष रह जाती है ।

उत्थितानुत्थितानेतानिन्द्रयारीन् पुनः पुनः ।
हन्याद्विवेकदण्डेन वज्रेणेव हरिर्गिरीन् ।।२१।।

—महोपनिषद् ६।२१

मनोविकार भले ही छोटे हों या बड़े, यह शत्रु के समान हैं और प्रताड़ना के ही योग्य हैं । जिस प्रकार छोटा-सा इन्द्र-वज्र बड़े-बड़े पर्वतों को गिरा देता है, वैसे ही विवेक के प्रहार से इन शत्रुओं को निरस्त करना चाहिए ।

कुम्भकारो घटमिव चेतो हन्ति करोति च ।
सर्वं संकल्परूपेण चिच्चमत्कुरुते चिति ॥

—योगवाशिष्ठ

जैसे कुम्हार मिट्टी को तोड़ता है और बर्तन बनाता रहता है, वैसे ही मन अपनी सृजन-शक्ति से अपनी अभीष्ट दुनिया रचता रहता है । जैसे स्वप्नों की रचना मन स्वयं ही करता है, वैसे ही अपनी दुनिया भी आप ही बनाता है ।

फलं ददाति कालेन तस्य तस्य तथा तथा ।
तपो वा देवता वापि भूत्वा स्वैव चिदन्यथा ।
फलं ददात्यथ स्वैरं नभः फलनिपातवत् ॥

—योगवाशिष्ठ

जीव अपनी इच्छा से ही देवता, तपस्वी बनता रहता है । प्रगति और अवनति का आधार मनुष्य का अपना कर्तृत्व ही है ।

चित्तमेव हि संसारस्तत्प्रयत्नेन शोधयेत् ।
यच्चित्तस्तन्मयो भाति गुह्यमेतत्सनातनम् ।।६।।

—मैत्रेय्युपनिषद् १।११

जैसा अपना मन है, वैसा ही अपना संसार है । इसलिए संसार को सुधारने की अपेक्षा अपने मन को सुधारना चाहिए । यह सनातन रहस्य है ।

समासक्तं यदा चित्तं जन्तोर्विषयगोचरे ।
यद्येवं ब्रह्मणि स्यात्तत्को न मुच्येत बंधनात् ।।११।।

—मैत्रेय्युपनिषद् १।११

मनुष्य का चित्त जितना बाहरी विषयों में संलग्न रहता है, उतना ही यदि ब्रह्म में रहने लगे तो सहज ही सब बन्धनों से छूट जाय ।

मनो हि जगतां कर्तृ मनो हि पुरुषः स्मृतः ।
स्वरूपं सर्वकृत्वं च शक्तत्त्वं च महात्मनः ।।१।।
प्रतिभासमुपायाति यद्यदस्य हि चेतसः ।
तत्तत्प्रकटतामेति स्थैर्यं सफलतामिपि ।।३।।

—योगवाशिष्ठ

मन ही आत्मा का दृश्य रूप है । वह जैसी चाहता है, वैसी अपनी दुनिया गढ़ लेता है । उसमें असीम शक्तियाँ सन्निहित हैं । चित्त में जैसी कल्पनाएँ उदय होती हैं, संसार में परिस्थितियाँ भी वैसी ही बनने लगती हैं ।

चित्तं प्रवर्तते चित्तं चित्तमेव विमुच्यते ।
चित्तं हि जायते नान्यच्चित्तमेव निरुध्यते ॥

—लङ्कावतार सूत्र

चित्त से ही प्रवृत्ति होती है, चित्त से ही निवृत्ति । चित्त से ही सब कुछ उत्पन्न होता है । चित्त से ही अवरोध होता है ।

सर्वः स्वसङ्कल्पवशाल्लधुभवति वा गुरुः ।

सब कोई अपने संकल्पों के कारण ही छोटा अथवा बड़ा बन जाता है ।

भजन्ते विश्वे देवत्वं नाम ऋत सपन्तो अमृत मेवैः ।

—ऋग्वेद

अपने आचार-व्यवहार को श्रेष्ठ रखकर सभी कोई देवत्व को प्राप्त कर सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एनं मनोमणिं ब्रह्मद् बहुपङ्ककलंकितम् ।
विवेकवारिणा सिद्ध्यै प्रक्षाल्यालोकवान् भव ॥

—महोपनिषद् ५/८३

मन रूपी मणि को विवेक-जल से स्वच्छ कर डालो । इसी से तुम्हें तेजस्वी सिद्धियाँ मिलेंगी ।

मनुष्य हाड़-माँस का पुतला नहीं है, उसके कण-कण में दिव्य तत्वों का समावेश है । ईश्वर की सत्ता उसमें समाई हुई है । ऋषियों और देवताओं का इसी काया में समावेश है । यदि उन्हें जान और समझ लिया जाय और अज्ञान का आवरण चीरकर आत्मज्ञान की—आत्मकल्याण की साधना की जाय तो अपने भीतर ही वह सब कुछ मिल सकता है, जिसकी हमें खोज है ।

इस सन्दर्भ में आप्त वचन इस प्रकार मिलते हैं—

सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे,
सप्त रक्षन्ति सर्वं अप्रमादम् ।

—यजु. ३४/५५

शरीर में सात ऋषि निवास करते हैं, वे प्रमाद रहित होकर सावधानी के साथ उसकी रक्षा करते हैं ।

इमामेव गौतम भारद्वाजौ अयमेव गौतमोऽयं भारद्वाजः इमावेव विश्वामित्र जमदग्नि अयमेव विश्वामित्रोऽयं जमदग्नि इमामेव वशिष्ठ कश्यपौ अयमेव वशिष्ठो, अयं कश्यपो, वागेव अत्रि । वाचा ह्यन्नमद्यतेऽत्रि ह्वै नामैतद्यदत्रिरिति सर्वस्य अत्ता भवति ।

—बृहदारण्यक ३०-२/२/४

सीधा कान गौतम है, बायाँ कान भारद्वाज । सीधी आँख विश्वामित्र, बायीं आँख जमदग्नि । दायीं नाक वशिष्ठ, बायीं नाक कश्यप । वाणी अत्रि । जो खाता है, सो अत्रि है । अति ही अत्रि है ।

ता एता देवताः सृष्टा अस्मिन् महत्यर्णवे प्रापतंस्तमशनायापिपासाभ्यामन्ववार्जत् ता एनमब्रुवन्नायतनं नः प्रजानीहि यस्मिन् प्रतिष्ठता अन्नमदामेति ।।१।। ताभ्यो गामानयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति ताभ्योऽश्वमानयत्ता अब्रुवन्न वै नोऽयमलमिति ।।२।। ताभ्यः पुरुषमानयत्ता अब्रुवन् सुकृतं बतेति । सुरुषोबाव सकृतम् । ता अब्रवीद्यथायतनं प्रविशतेति ।।३।। अग्निर्वाग्भूत्वा मुखं प्राविशद्वायुः प्राणो भूत्वा नासिके प्राविशदादित्यश्चक्षुर्भूत्वाक्षिणी प्राविशद्दिशः श्रोत्रं भूत्वा कर्णौ प्राविशन्नोषधिवनस्पतयो लोमानि भूत्वा त्वचं प्राविशंश्चंद्रमा मनोभूत्वा हृदयं प्राविशन्मृत्युरपाना भूत्वा नाभि प्राविशदापो रेतो भूत्वा शिश्नं प्राविशन् ।।४।।

—एतरेय—२/१ से ४

परमात्मा ने देवताओं को इस संसार में भेजा । उनमें भूख, प्यास और अनुभूति उपन्न की । देवताओं ने परमात्मा से कहा—हमारे लिए शरीर-निर्माण करो जिसमें रहकर हम अपनी आवश्यकताएँ पूर्ण करें । परमात्मा ने उन्हें गौ, अश्व आदि के शरीर दिखाए, जिसे उन्होंने अनुपयुक्त बताया । तब परमात्मा ने उन्हें मनुष्यदेह दिखायी । देवताओं ने कहा—हाँ, यही बहुत ठीक और सुन्दर है । तब परमात्मा ने कहा—अपने-अपने उपयुक्त स्थानों में घुस जाओ । तब अग्नि वाणी बनकर मुख में, वायु प्राण बनकर नासिका में, सूर्य नेत्रों में, दिशाएँ कानों में , औषधि त्वचा में, चन्द्रमा मन बनकर हृदय में, यम अपान बनकर नाभि में और वरुण रेतस् बनकर जननेन्द्रिय में प्रविष्ट हुआ ।

पुरुषो वाव गौतमाग्निस्तस्य वागेव समित्प्राणो धूमो जिह्वार्चिश्चक्षुरङ्गाराः श्रोत्रं विस्फुलिंगा ।।१।। तस्मिन्नेतस्मिन्नग्नौ देवा अन्नं जुह्वति तस्या आहुते रेतः सम्भवति ।।२।।

—छान्दोग्य ५/७/१२

यह पुरुष की अग्नि है । वाणी समिधा है । प्राण धुआँ है । जिह्वा ज्वाला है । नेत्र अंगार हैं । कान चिनगारियाँ । इस अग्नि में देवगण हवन करते हैं और उससे पराक्रम उत्पन्न होता है ।

आत्म-चिन्तन को ज्ञान-तप कहा गया और आत्मनिर्माण को आध्यात्मिक अग्निहोत्र । बहिर्जगत में स्वाध्याय, सत्संग को ज्ञान का आधार माना गया है । किन्तु अन्तर्जगत में आत्मचिन्तन को ज्ञानदेव की—आत्मदेव की आराधना माना है । अपनी अन्तः स्थिति में उत्कृष्ट-तत्वों की स्थापना करके हम आत्मदेव की आराधना करते हैं । आत्मदेव को तत्व-दर्शन ने सर्वोच्च उपास्य माना है और उसकी आराधना का निर्देश किया है—

अव्युत्पन्नधियो ये हि बालपेलवचेतसः ।
कृत्रिमार्चामयं तेषां देवार्चनमुदाहृतम् ॥
संवेदनात्मकतया गतया सर्वगोचरम् ।
न तस्याह्वानमन्त्रादि किंचिदेवोपयुज्यते ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न दीपेन न धूपेन न पुष्पविभवार्पणैः ।
नान्नदानादिदानेन न चन्दनविलेपनैः ॥
न च कुंकुमकर्पूरभोगैश्चित्रैर्न चेतरैः ।
शमबोधादिभिः पुष्पैर्देव आत्मा यदर्च्यते ।
तत्तु देवार्चनं विद्धि नाकारार्चनमर्चनम् ॥

—योग वाशिष्ठ

जिनकी बुद्धि चैतन्य नहीं हुई है, चित्त चंचल है, उनके लिए बाहरी देवार्चन कृत्रिम रूप से बनाया गया है ।

जो परमदेव सब जगह मौजूद है और ज्ञानरूप में सब प्राणियों के भीतर विद्यमान है, उसके लिए मन्त्रानुष्ठान की आवश्यकता नहीं है ।

आत्मदेव की पूजा के लिए दीपक, धूप, पुष्प, नैवेद्य, चन्दन, दक्षिणा, केशर, कपूर आदि की आवश्यकता नहीं होती ।

शम और बोध की पुष्पांजलि से आत्मदेव की आराधना ही सच्ची पूजा है । बाह्य आकृतियों का पूजन अवास्तविक है ।

तस्य निश्चिन्तनं ध्यानम् । सर्वकर्म निराकारण मावाहनम् । निश्चलज्ञानमासनम् । समुन्मनं भावः पाद्यम् । सदामनस्कमर्घ्यम् । सदादीप्तिराचमनीयम् । वराकृतप्राप्तिः स्नानम् । सर्वात्मकत्वं दृश्यविलयो गन्धः । दृगविशिष्टात्मानः अक्षतः । चिदादीप्तिः पुष्पम् । सूर्यात्मकत्वं दीपः । परिपूर्णचन्द्रामृतरसैकीकरणं नैवेद्यम् । निश्चलत्वं प्रदक्षिणम् । सोऽहंभावो नमस्कारः । परमेश्वरस्तुर्मौनम् । सदासन्तोषी विसर्जनम् । एव परिपूर्णराजयोगिनः । सर्वात्मकपूजोपचारः स्यात् सर्वात्मकत्वं आत्माधारो भवति । सर्वनिरामयपरिपूर्णोऽहमस्मीतिमुमृक्षणां मोक्षैक सिद्धिर्भवति ॥ इत्युपनिषत् ॥

—आत्मपूजोपनिषद्

आत्मा का ध्यान—उसका निरन्तर चिन्तन ही है । स्थिर ज्ञान ही उसका आसन है । उन्मन पाद्य है । तन्मयता अर्घ्य है । निष्ठा आचमन है । समर्पण स्नान है । लय गन्ध है । अन्तर्दृष्टि अक्षत है । विश्वास पुष्प है । अन्तः प्रकाश दीपक है । शान्ति नैवेद्य है । श्रद्धा प्रदक्षिणा है । 'सोऽहं भाव' नमस्कार है । मौन ही स्तुति है । सन्तोष विसर्जन है । यह आत्म-पूजा ही सर्वात्मा की सच्ची पूजा है । मैं परिपूर्ण निरामय ब्रह्म हूँ, यह मान्यता ही मोक्ष तक पहुँचाती है । यही उपनिषद् है ।

अस्य शरीरयज्ञस्य यूपरशनाऽशोभितस्यात्मा यजमान बुद्धिः पत्नी वेदा महऋत्विजः अहंकारोऽध्वर्युः चित्तं होता प्राणो ब्रह्मणाच्छंसी अपानः पतिप्रस्थाता व्यानः प्रस्तोता उदान उद्गाता समानो मैत्रा-वरुणः शरीर वेदिः नासिकाऽन्तर्वेदिः मूर्धा द्रोणकलशः पादो रथः दक्षिणहस्तः स्रुवः सव्य आज्यस्थाली श्रोत्रे आधारौ चक्षुषी आज्यभागौ ग्रीवा धारा पोता तन्मात्राणि सदस्याः महाभूतानि प्रयाजाः गुणा अनुयाजाः जिह्वोडा दन्तोष्ठौ सूक्तवाचः तालुः शंयोर्वाकः स्मृतिदया क्षान्तिरहिंसा पत्नीसंयाजाः ओंकारो यूपः आशा रशना मनोरथः कामः पशुः केशा दर्भाः इन्द्रियाणि यज्ञपात्राणि कर्मेन्द्रियाणि हवीषि अर्हिसा इष्टयः त्यागो दक्षिणा अवभृथं मरणात् सर्वाण्यस्मिन् देवता शरीरेऽधिसमाहिताः ।।२२।।

—प्राणाग्नि होत्रोपनिषद् २२

इस जीवन-यज्ञ का आत्मा-यजमान, बुद्धि-यजमानपत्नी, वेद-ऋत्विक्, अहं-अध्वर्यु, चित्त-होता, प्राण-ब्राह्मणच्छमी, अपान-प्रति प्रस्थाना, व्यान-प्रस्तोता, उदान-उद्गाता, समान-मैत्रावरुण, शरीर-वेदी, नासिका-अन्त वेदी, शिर-द्रोण कलश, पैर-रथ, दाहिना हाथ-स्रुवा, बायाँ हाथ-घृत-पात्र, कान-आधार, नेत्र-आज्य भाग, गर्दन-धारा, तन्मात्राएँ-सदस्य, पंचभूत-प्रयाजा, जीभ-इडा, दाँत होठ-सूक्त, वाक-तालु शयोर्वाक, स्मृति-दया, ॐकार-यूप, आशा-रसना, काम-पशु, काल-कुशाएँ, ज्ञानेन्द्रियाँ-यज्ञ-पात्र, कर्मेन्द्रियाँ-हवि, अहिंसा-इष्टियाँ मृत्यु-अवभृत स्थान है । यह यज्ञ पूर्ण फलदायक है, इसमें सभी देवता समाहित हैं ।

आत्म विस्मृति से उबरकर स्वयं को जान लेना सबसे बड़ी उपलब्धि है । साधारणतया लोग अपना अस्तित्व शरीर और मन से बने कलेवर तक ही सीमित मानते हैं । वासना और तृष्णा में ही उलझा चित्त इससे ऊपर कुछ सोच भी नहीं पाता । सारे क्रिया-कलाप मात्र पेट प्रजनन के लिए होते हैं । इसका एकमात्र कारण है अपनी गरिमा को, देवत्व को भुला देना । ईश्वर के युवराज के रूप में अवतरित मनुष्य मार्ग पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चलते हुए भटक जाता है । अज्ञानान्धकार में भटकते-भटकते यह जीवन तो बीत जाता है और अन्ततः पछताने के अतिरिक्त कुछ और हाथ नहीं लगता ।

इसीलिए आत्म तत्व की गहराई को समझना सबसे बड़ी उपलब्धि माना गया है । जिसने स्वयं को जानकर जीवन लक्ष्य की पूर्ति की आवश्यकता को समझ लिया, महामानव बनता है और देव समुदाय में सम्मिलित होकर अपना ही नहीं अन्य असंख्यों का कल्याण भी करता है । अपने में ओत-प्रोत ब्रह्मसत्ता को जाग्रत करना और स्वयं में देवत्व तथा ईश्वरत्व का उदय करना ही आत्मबोध की परिणति है और यह आत्मबोध ही ज्ञान साधना का चरम लक्ष्य है । जिसने अपने को जान लिया, उसने संसार को इच्छानुकूल बनाने और पदार्थों तथा प्राणियों को उल्लास प्रदान कर सकने का मार्ग हस्तगत कर लिया ।

दर्पण में अपनी ही छाया दिखाई पड़ती है, जैसे भी कुछ भले बुरे हम हैं, उसी के अनुरूप यह विशालकाय दर्पण—संसार हमें दृष्टिगोचर होता है । अज्ञानवश हम बाह्य परिस्थितियों अथवा बाहरी व्यक्तियों को अपने सुख-दुःख का, उत्थान-पतन का कारण मानते हैं पर वास्तविकता इस मान्यता से सर्वथा भिन्न है । जिस प्रकार समुद्र की अगणित लहरों पर एक ही चन्द्रमा के अगणित प्रतिबिम्ब दिखाई पड़ते हैं, उसी प्रकार संसार के अगणित प्राणियों एवं पदार्थों पर अपनी ही मान्यताएँ और क्रियाएँ अपनी ही भावनाएँ और प्रवृत्तियाँ थिरकती दिखाई पड़ती हैं ।

दृष्टिकोण का दोष दूषण—जगत में प्रतिबिम्बित प्रतिध्वनित होता है । इसलिए तत्वदर्शी सदा से यह कहते रहे हैं कि बाह्य परिस्थितियों में यदि सुधार करना हो तो उसका प्राथमिक सुधार आत्म-परिष्कार से आरम्भ करना चाहिए ।

आत्म-परिष्कार का प्रयास आरम्भ करने से पूर्व अपना स्वरूप समझना होता है और किस प्रकार अपना आपा बाह्य जगत पर प्रतिबिम्बित होता है, इस तथ्य को हृदयंगम करने की आवश्यकता पड़ती है । यही आत्मज्ञान है । इसी को आत्मबोध कहते हैं । आध्यात्म विज्ञान का समस्त आवरण इसी लक्ष्य की पूर्ति के लिए विनिर्मित हुआ है कि मनुष्य अपने को जाने और उस तथ्य के आधार पर अपने चिन्तन एवं क्रिया-कलाप का नए सिरे से निर्धारण करे । आत्मदेव की साधना इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर की जाती है ।

इसी तथ्य को तत्व-दर्शियों ने अनेक शास्त्रों में अनेक प्रकार से लिखा कहा है । जिस प्रकार अक्षर जान अ, आ इ, ई से आरम्भ होता है उसी प्रकार आत्मोत्कर्ष, आत्म-साक्षात्कार और आत्म-कल्याण की ब्रह्म विद्या का, साधना विज्ञान का आरम्भ भी आत्मबोध से होता है । अपने आपको जानने के लिए गम्भीर चिन्तन, मनन, अध्ययन और निदिध्यासन करने के लिए अग्रसर होने का निश्चय ही आत्म-साधना का—उपासना, तपश्चर्या और योग साधना का प्रथम द्वार सोपान है । शास्त्रकारों का इस सन्दर्भ में निर्देश, परामर्श इस प्रकार है—

स्वयमेवात्मनाऽऽत्मानमानन्दं पदाप्स्यसि ।

—महोपनिषद् ६।७८

अर्थात् समस्त आध्यात्म शास्त्रों का सार इतना भर है कि विषयों से मुक्त चित्त ही आत्मा है । सो स्वच्छ अन्तःकरण द्वारा अपने आपे को ही देखो ।

आत्मनि रक्षते सर्वं रक्षितं भवति ।
आत्मायत्तौ वृद्धि विनाशौ ॥

—चाणक्य सूत्र १।८२,८३

अर्थात् अपनी रक्षा करने से सब की रक्षा होती है । वृद्धि या विनाश करना अपने हाथ की बात है ।

अपने आपको सत्-चित् आनन्द परमात्मा का स्वरूप माना जाना चाहिए और काय कलेवर के साथ जुड़े हुए इन्द्रिय समूह को—मन, बुद्धि, चित्त अहंकार के अन्तःकरण चतुष्टय को अपना वाहन, उपकरण, सेवक स्तर का प्रयोग साधन मात्र मानना चाहिए । इस मान्यता की जितनी परिपक्वता होती है, आत्म और अनात्म का भेद जितनी गहराई तक अन्तःकरण में निष्ठा बनकर प्रतिष्ठित होता है, उतने ही अंशों में आत्म-बोध प्राप्त हुआ समझा जाना चाहिए ।

मनुष्य प्रायः भ्रमग्रस्त स्थिति में ही रहता है । जीव अपने को शरीर मात्र अनुभव करता है और उसी के सुख-साधन जुटाने में जीवन सम्पदा को नियोजित किए रहता है । ऐसे ज्ञानवानों को भी अज्ञानी ही कहना चाहिए । आत्मबोध का उदय आत्म तत्व की स्पष्ट एवं सघन मान्यता से ही आरम्भ होता है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह मान्यता इतनी प्रबल होती है कि आत्मज्ञानी अपने चिन्तन एवं क्रिया-कलाप को आत्मानुगामी, परमार्थ परायण बनाए बिना रह ही नहीं सकता । ऐसे ही यथार्थ आत्मज्ञान का स्वरूप समझाते हुए ईशोपनिषद् में कहा गया है "ज्ञान और अज्ञान के, अवलम्बन के परिणाम अत्यन्त भिन्न हैं । यह अनुभव हमने उनसे सुना है जिन्होंने तत्व का गहन अवगाहन किया है ।"

त्वं राजा सर्वलोकस्य पित्रो रिपो रिपुः ।
यत्न्याः पतिः पिता सूनो कस्त्वां भूप वदाम्यहम् ।।३६
त्वं किमेतच्छिरः कि तु शिरस्तव तथोदरम् ।
किमु पादादिकं त्वं तवैतत्किं महीपते ।।३७
समस्तावयवेभ्यस्त्वं पृथम्भूतो व्यवस्थितः ।
कोऽहमित्यत्र निपुणं भुत्वा चिन्तय पार्थिव ।।
तच्छुत्वोच राजा तमवधूत द्विजं हरिम् ।।३८

—अग्नि पुराण

अर्थात्—तू इस विश्व वसुधा का शासक है । पिता का पुत्र है । शत्रु का शत्रु है । पत्नी के लिए पति है । पुत्र के लिए पिता है । बता तुझे मैं क्या कहकर पुकारूँ ।

क्या तू सिर है—नहीं, सिर तो तेरा है । क्या तू पेट है—नहीं पेट तो तेरा है । क्या तू पैर है—नहीं पैर तो तेरा है ? यह समस्त अंग तेरा उपकरण मात्र हैं । तू इससे कुछ पृथक् ही है । हे मिट्टी के पुतले । मैं कौन हूँ, इस पर अत्यन्त गम्भीरता और सावधानी के साथ विचार कर ।"

नाहं पदार्थस्य न मे पदार्थ इति भावते ।
अन्तःशीतलया बुद्ध्या कुर्वतो लीलया क्रियाम् ॥

—महोपनिषद् ६।४३

अर्थात्—न मैं मन पदार्थों का हूँ और न ये मेरे हैं । अन्तःकरण में शान्ति और प्रफुल्लता प्राप्त हो, हे ईश्वर ! मेरी यही प्रार्थना है ।"

आत्मा का विकसित, परिष्कृत रूप ही परमात्मा है । जीव की सुविकसित स्थिति का नाम ही ब्रह्म है । अज्ञानजन्य अन्धकार से निवृत्त हो जाने का नाम ही आत्म साक्षात्कार अथवा ईश्वर दर्शन है । यह प्रक्रिया अपने से बाहर संसार में अन्यत्र कहीं सम्भव नहीं । तीर्थ, गुरु सत्संग आदि से मार्ग दर्शन एवं प्रोत्साहन भर मिलता है । अभीष्ट वस्तु की उपलब्धि तो अपने भीतर अन्तःकरण में ही होती है । तप करने से लेकर ईश्वर दर्शन करने तक का प्रयोजन पूर्ण करने के लिए हृदय गुफा रूपी तीर्थ को, तपोवन को ही एकमात्र उपयुक्त स्थान माना गया है ।

हृदिस्था देवताः सर्वा हृदि प्राणाः प्रतिष्ठिताः हृदि प्राणश्च ज्योतिश्च त्रिवृत्सूत्रं च तद्विद्धृदि चैतन्येतिष्ठति ॥

—ब्रह्मोपनिषद् ४-५

अर्थात् हृदय में समस्त देवता निवास करते हैं । हृदय में ही प्राण और प्रकाश है । परमात्मा के इन तीन आधारों की अभिव्यक्ति के लिए यज्ञ सूत्र यज्ञोपवीत पहना जाता है ।"

हृदय में परब्रह्म का निवास है । यह तथ्य यज्ञोपवीत प्रकट करता है । जो इस तथ्य को जानता है वही देवज्ञ ब्राह्मण है ।"

नवद्वारे पुरे देहि हँसो लेलयात बहिः ।
वशी सर्वस्य लोकस्य स्थावरस्य चरस्य च ।।१८

—श्वेताश्वेतर

अर्थात् सम्पूर्ण स्थावर-जंगम विश्व का नियामक परमेश्वर नौ द्वार वाले देह रूप पुर में स्थित में निवास करता और बाह्य संसार में भी वही क्रीड़ा कर रहा है ।

तस्मादिदं गुहेव हृदयेम् ।

—शतपथ ११।२।६।५

अर्थात् यह हृदय ही गुफा है ।

अणोरणीयान् महतो महीया
नात्मास्य जन्तोर्निहितो गुहायाम् ।
तमक्रतुः पश्यति वीतशोको,
धातुः प्रसादान्महिमा महात्मनः ॥

अर्थात् छोटे से भी वह छोटा है, बड़े से भी बड़ा इस जीव की हृदय रूपी गुफा में भी वह विराजमान है । उस परमात्मा की महिमा को उसी परमात्मा की कृपा से कामनाशून्य वीतशोक पुरुष देखते हैं ।

निश्चय ही मानवीय काय संरचना का सबसे महत्त्वपूर्ण घटक हृदय है । भौतिक-विदों एवं आध्यात्म वेत्ताओं ने इसकी श्रेष्ठता को अपने-अपने ढंग से माना और उसे क्रमशः शरीर एवं आत्मा का, परमात्मा का, केन्द्र स्थल निरूपित किया है । शरीरशास्त्रियों के अनुसार भौतिक दृष्टि से हृदय सीने में बायीं ओर नाशपाती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसे आकार की साढ़े तीन ग्राम की एक छोटी सी माँसल संरचना है जो अपने रचना प्रयोजन के अनुसार समस्त शरीर को धमनियों और छोटी नलिकाओं द्वारा रक्त फेंकती और अशुद्ध रक्त को खींचती रहती है । इसकी हर धड़कन उस स्थान पर हाथ रखकर आसानी से पहचानी जा सकती है । इसी पर रक्तचाप की न्यूनाधिकता का प्रभाव पड़ता है और क्रिया-कलाप थोड़ी देर के लिए रुकते ही प्राणान्त हो जाता है ।

आध्यात्म क्षेत्र का हृदय भौतिक हृदय से भिन्न है । तत्वदर्शियों ने इसे 'गुफा' कहा है । शतपथ ब्रा. ११-२-६-५ का सूत्र "तस्त्दिदं गुहेव हृदयम्" अर्थात् यह हृदय ही गुफा है, इसी तथ्य की पुष्टि करता है । अन्धकार से प्रकाश की ओर, असत् से सत् की ओर, मृत्यु से अभृत की ओर जाने का मार्ग अन्तर्मुखी होकर इस दिव्य गुफा में प्रवेश करने पर ही प्राप्त होता है । षटचक्रों में इसे 'अनाहत चक्र' का क्षेत्र माना गया है । इसे भौतिक हृदय की सीध में तनिक पीछे हटकर अपनी स्वतन्त्र सत्ता बनाए रहने वाला माना गया है । संक्षेप में यही अन्तराल या अन्तःकरण है—आदर्शवादी भाव सम्वेदनाओं का केन्द्र । रक्त संचार करने वाली ग्रन्थि संरचना से यह सर्वथा भिन्न है । हिम्मत, साहस, बहादुरी, आत्मीयता, करुणा, उदारता, ममता आदि के सन्दर्भ में भी उसी आत्मिक हृदय का उल्लेख किया जाता है । इसी हृदय गुफा में एक ऐसी शक्ति काम करती है जो सन्मार्ग पर चलने से प्रसन्न सन्तुष्ट हुई दिखाई पड़ती है और कुपंथ अपनाने पर खिन्नता, उद्विग्नता का अनुभव करती है । अन्तरात्मा की इसी परत में ईश्वरीय सत्ता को झाँकता हुआ देखा जा सकता है ।

मनीषियों के अनुसार मस्तिष्क में मात्र कल्पना और सूझ-बूझ उठती है, पर वह उपलब्ध ज्ञान और मन्थन से उत्पन्न हुए मन्थन द्वारा ही उत्पन्न होती है । दिव्य प्रेरणाएँ हृदय देश से ही उभरती हैं । ईश्वरीय सन्देश वहीं मिलते हैं और वहीं से अविज्ञात प्रकृति रहस्यों की जानकारियाँ हस्तगत होती हैं । जिन वैज्ञानिकों ने अद्भुत आविष्कार किए हैं, उनसे जब पूछा गया कि ऐसा अनोखा विचार आपको कैसे हस्तगत हुआ तो उनमें से प्रत्येक ने यही कहा कि "यह भीतर से उभरा ।" भीतर शब्द से उनका तात्पर्य मस्तिष्क से नहीं वरन् अन्तराल में उभरने से है । यद्यपि दोनों परस्पर सम्बद्ध हैं । यही वह क्षेत्र है, जहाँ अतीन्द्रिय शक्तियों का भण्डार है । बुद्धि क्षेत्र से बाहर की कितनी ही बातें कभी-कभी ऐसी सूझ पड़ती हैं जो विलक्षण प्रतीत होती हैं, पर परीक्षा की कसौटी पर वे सही उतरती हैं । ऋद्धि-सिद्धियों का क्षेत्र यही माना गया है । जिस किसी का यह क्षेत्र जग पड़ता है या जो व्यक्ति हृदय गुफा में प्रवेश पा लेता है उसे अविज्ञात भी—भूत और भविष्य भी उसी प्रकार दृष्टिगोचर होता है मानों उसकी प्रत्यक्ष जानकारी उन्हें पहले से हो रही है ।

मनोविज्ञानी—परामनोविज्ञानी जिसे सुपर-चेतन कहते हैं और जिसकी संगति अलौकिक आभासों के साथ जोड़ते हैं वह मस्तिष्क का नहीं वरन् अन्तःकरण का हृदय का क्षेत्र है । मानसिक संरचना में चेतन और अचेतन के दो ही पक्ष हैं । मस्तिष्कीय संरचना का दो भागों में विभाजन हुआ है । अतः उसका कार्य क्षेत्र ज्ञानवान् सचेतन और स्वसंचालित अचेतन के साथ ही जुड़ता है । जिसे अविज्ञात कहा गया है, जिसे सुपर चेतन भी कहते हैं वह मनीषियों के अनुसार हृदय गुफा हिरण्यमय कोश ही है ।

उसे किन्हीं ग्रन्थों में सूर्य चक्र भी कहा गया है । जिस प्रकार सूर्य का प्रकाश उदय होने पर अन्धकार तिरोहित हो जाता है और प्रत्येक वस्तु प्रत्यक्ष दीख पड़ती है उसी प्रकार इस कोश में प्रकाशित दिव्य ज्योति की छत्रछाया में व्यक्ति अपना स्वरूप, लक्ष्य और कर्तव्य भी देख सकता है । अभीष्ट वस्तु की उपलब्धि अपने भीतर अन्तःकरण में ही होती है । तप करने से लेकर ईश्वर दर्शन करने तक प्रयोजन पूर्ण करने के लिए हृदय गुफा रूपी तीर्थ को तपोवन की ही एक मात्र उपयुक्त स्थान माना गया है । ब्रह्मोपनिषद-४-५ के अनुसार हृदय में समस्त देवता निवास करते हैं । हृदय में ही प्राण और प्रकाश है । शंख संहिता का कथन है—"हृदय देश में परम ज्योति प्रकाशवान है । उसी में समस्त देवता निवास करते हैं । जीवात्मा का आश्रम स्थल यही है । उसी हृदय में अँगूठे के अग्र भाग के बराबर आकार में जलती ज्योति के रूप में कठोपनिषद् का ऋषि उसका दर्शन करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नादबिन्दूपनिषद के ऋषि इसी हृदय क्षेत्र में अंगुष्ठ मात्र उस परम ज्योति का ध्यान करने का निर्देश करते हैं । गीता १५-१० के अनुसार प्रयास करने पर योगी जन अपने हृदय क्षेत्र में स्थित आत्मतत्व को खोज निकालते हैं पर जिनका हृदय शुद्ध नहीं है, भावनाएँ दूषित हैं वे प्रयत्न करने पर भी इस आत्मा को नहीं जान पाते । अन्तःकरण की पवित्रता आत्मविद होने की अनिवार्य शर्त है ।

हृदय क्षेत्र अन्तराल को दिव्य लोक भी कहते हैं । प्रख्यात ग्रीक दार्शनिक प्लेटो के अनुसार मनुष्य की आत्मा ईश्वर से सीधे प्रकट होकर इसी दिव्य लोक में प्रवेश करती और स्थूल शरीर से जुड़ती है । उनका कहना है कि जीवात्मा का धरती पर जब सर्वप्रथम अवतरण होता है तो वह दिव्य सूक्ष्म शरीर वायवीय शरीर रूप में अवतरित होकर स्थूल देह में प्रवेश करता है । यह सूक्ष्म शरीर आत्मा का पारलौकिक वाहन कहा जाता है । ईश्वर, जो चराचर जगत का केन्द्र है, उसी के आदेश से जीवात्मा मनुष्य के हृदय गुफा में प्रवेश करता और अपने पारलौकिक वाहन-अर्थात् सूक्ष्म शरीर के माध्यम से स्थूल काया से जुड़ता है, उसे नियन्त्रित-संचालित करता है ।

हृदयस्थ आत्मा को परमात्मा से मिलने की इच्छा रहती है । मनुष्य आन्तरिक शान्ति के लिए उसे जहाँ-तहाँ जिस-तिस निर्जीव जड़ पदार्थों-साधनों में ढूँढता भी रहता है, हस्तगत कुछ नहीं होता । व्यक्तियों का परिचय भी शरीर रूप में हो पाता है । वे कभी रुष्ट या पृथक् भी हो सकते हैं, होते रहते हैं । ऐसी दशा में अभीष्ट लक्ष्य की पूर्ति नहीं हो पाती और न जिनकी तलाश है, वह परमात्मा ही मिल पाता है ।

सर्वव्यापी होते हुए भी ईश्वर को किसी ऐसे स्थान पर जब नहीं पाया जा सकता तो फिर उसका मिलन कहाँ सम्भव हो ? इस समस्या को सुलझाते हुए तत्वदर्शियों ने कहा है ऐसा स्थान केवल अपना हृदय है जहाँ आत्मा का परमात्मा से साक्षात्कार होता है । यही दिव्य गुफा है, मन्दिर है जहाँ सूक्ष्म रूप में परम ज्योति के दर्शन होते हैं । कठोपनिषद् में ऋषि ने उसे अणोरणीयान् सुहतो महीयान्" कहा है और उसका निवास जीव की हृदय रूपी गुफा में बताया है । गीता (१०-२०-१३-१७,१५-१५,१८-६१) में भगवान कहते हैं—"ईश्वर सब प्राणियों के हृदय देश में रहता है । उसी का अनुग्रह प्राप्त करने से परम शान्ति का अनुभव होता है । "व्यास भाष्य में उल्लेख है" उस परमेश्वर को देवालयों, सरिताओं, तीर्थों, वनों में, पर्वतों में कहीं भी ढूँढ़ते रहा जाय, पर जब वह मिलेगा तो हृदय गुफा ही उसका सुस्थिर स्थान दृष्टिगोचर होगा । जो वहाँ उसे ढूँढ़ता है, तृप्त होकर रहता है ।

अन्यान्य शास्त्रकारों, आप्त पुरुषों ने भी इसकी पुष्टि की है । योगवाशिष्ठ का कथन है—जो हृदय गुफा में निवास करने वाले भगवान को छोड़कर अन्यत्र ढूँढ़ता फिरता है वह हाथ की कौस्तुभमणि की उपेक्षा करके जहाँ-तहाँ काँच के टुकड़े बीनते फिरने वाले के समान है ।

कस्तूरी होती मृग की अपनी नाभि में ही है पर उस सुगन्ध को वह जहाँ-तहाँ ढूँढ़ता फिरता है । यही स्थिति मनुष्य की है । परमात्मा उसके अपने अन्तःकरण में बैठा है । पर वह उसे बाह्य जगत में खोजता फिरता है । तत्ववेत्ता उस अविनाशी परमेश्वर को अपनी आत्म गुहा में ही पाता और कृतकृत्य होता है । मुण्डकोषनिपद् में कहा गया है—"इस सम्पूर्ण जगत को बनाने वाला और सब में समाया हुआ परमेश्वर ढूँढने पर हृदय गुफा में ही विराजमान मिलता है । वह प्रकाश स्वरूप है, जो उसे देखता है वह उसी में विलीन होकर रहता है । परन्तु जो लोग इस तथ्य को नहीं जानते उनकी गणना शास्त्रकार अन्धों में करते हैं ।"

श्वेताश्वर उपनिषद् में उल्लेख है—"जो सूक्ष्म से भी सूक्ष्म हृदय प्रदेश में प्रवेश करके विद्यमान महेश्वर को नहीं देख पाता; वह अन्धे के समान है ।" ऐसे लोगों को न तो ईश्वर साक्षात्कार का सुयोग मिलता है और न चिरस्थायी सुख शान्ति ही उपलब्ध होती है । वे जहाँ-तहाँ भटकते ही रहते हैं ।

जाबाल्युपनिषद् का कथन है कि परमेश्वर को हृदय देश में ढूँढो । अन्यत्र मत भटको । वह प्रकाश रूप में आपके भीतर ही ज्वलन्त है ।

ज्ञान विज्ञान के उद्गम केन्द्र अन्तःकरण में स्थित परब्रह्म को जो हृदय में देखता और उसका सान्निध्य अपनाता है, वह तद्रूप हो जाता है, ऐसा तैत्तिरीय उपनिषद् का कथन है । इसी की पुष्टि महोपनिषद्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

योगकुण्डल्योपनिषद् आदि ग्रन्थों में की गई है और कहा गया है कि अंगुष्ठ आकृति की प्रकाश ज्योति हृदय देश में सदा जलती रहती है । उसी के फैले हुए प्रकाश में ध्यान करने वाला साधक अपने अभीष्ट को प्राप्त कर लेता है ।

उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए ही हृदय क्षेत्र को आध्यात्म शास्त्रों में अत्यधिक महत्ता दी गई है और उसे निर्मल-पवित्र बनाये रखने पर जोर दिया गया है । महात्मा बुद्ध ने तो अन्तःकरण की पवित्रता के लिए करुणा, मैत्री, मुदिता और उपेक्षा जैसे चार ब्रह्मविहार अपने शिष्यों के लिए अनिवार्य विधान बताये थे । महर्षि पतंजलि ने यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार आदि पाँच चरणों की व्यवस्था पहले बनाई जिससे साधक अपने अंतराल को उसमें सन्निहित भाव सम्वेदनाओं को पवित्र एवं उत्कृष्ट बना सके । इसके बिना आत्म-साक्षात्कार अथवा ईश्वर दर्शन सम्भव नहीं ।

ताओ धर्म के प्रणेता मनीषी लाओत्से कहते हैं "मनुष्य अपने पथ को अविकारी बनाए, अशुद्धता से बाहर निकल आये, तो फिर स्वतः ही आत्म-साक्षात्कार हो जाता है, जो वस्तुतः ईश्वर दर्शन ही है । वे कहते हैं कि ईश्वर असीम है, अनन्त है, रोम-रोम में समाया हुआ है । हम मात्र उसकी अनुभूति अपने हृदय स्थल में कर सकते हैं, उसे कोई नाम नहीं दे सकते । इसीलिए वह सनातन होने के साथ-साथ अविकारी भी है ।

अतीन्द्रिय क्षमताएँ प्रतिभा, कुशलता, विशिष्टता बाहर से नहीं उतरतीं भीतर से ही उभरती हैं । ये आत्मसाक्षात्कार की ही चमत्कारी फलश्रुतियाँ हैं । प्रसुप्त रूप में उन समस्त सम्भावनाओं के बीज इसी हृदय प्रदेश में प्रसुप्त स्तर पर पड़े हुए हैं । उसमें प्रवेश पाकर जो जिस मात्रा में उन्हें जगा लेते हैं वे उसी अनुपात में देवात्मा होने का गौरव प्राप्त करते हैं ।

वस्तुतः इस आत्म गुहा में आश्रय वाले उस परम पुरुष विश्वरूप-हिरण्यमय तथा बुद्धिमानों की परागति के स्वरूप वाले आत्मा को जो जानता है वही बुद्धिमान है और वह बुद्धि का अतिक्रमण करके ही स्थित रहा करता है । यह शास्त्र वचन हर क्षण एक ही सत्य की प्रतिष्ठापना करता है व उद्घोष करता है कि अपने को परमात्मा का अविनाशी अंश मानकर जीवन नीति निर्धारण करना ही जीवनमुक्ति का एकमात्र साधन है । इसके विपरीत जो शरीराभ्यास में क्रीड़ा-कल्लोल में निमग्न रहकर अपने आपको देहधारी मात्र मानते हैं और भौतिक सुखों के लिए आत्म-कल्याण की अभीष्ट गतिविधियाँ अपनाने से इन्कार करते हैं, उन्हें आत्महंता, माया मोहग्रस्त अज्ञानी जीव कहा गया है । शास्त्रों में ऐसे पथभ्रष्ट लोगों की भर्त्सना ही की गई है एवं सत्पथ अपनाने वालों की प्रशस्ति कर उन्हीं का अनुगमन करने का निर्देश दिया गया है ।

यह तथ्य है कि आत्मज्ञान प्राप्त मनुष्य का घर ही तपोवन बन जाता है । अन्तर की महानता घर-परिवार से लेकर समीपवर्ती कार्य व्यवसाय में भी आनन्द, उल्लास का, उत्कृष्टता का वातावरण उत्पन्न करती है और उन परिस्थितियों में रहता हुआ मनुष्य श्रेष्ठ बनता है और अपने आप को सब प्रकार धन्य हुआ अनुभव करता है ।

वसिष्ठोस्मि वरिष्ठोऽस्मि वसे वास गृहेष्वपि ।
वसिष्ठत्वाच्च वासाच्य वसिष्ठ इति विद्धिमाम् ॥

—महाभारत

अर्थात् "घर में रहते हुए भी मैं वशिष्ठ हूँ । सबमें बसा हुआ हूँ । सब मुझमें बसते हैं । इससे मैं वशिष्ठ हूँ ।"

यह विशिष्टता मानवी-जीवन की श्रेष्ठता ही मानव को वशिष्ठ का ऋषि पद देती है एवं उसे गौरवान्वित करती है । मनुष्य की चरमोपलब्धि यही है—आत्मज्ञान । जिसे वह प्राप्त हो गया, उसे ऋषि स्तर पर पहुँचा माना चाहिए ।

आत्मिक प्रगति हेतु आत्मबोध की साधना

आत्म कल्याण के पथ पर अग्रसर करने वाले आध्यात्म विधि विज्ञान की दो धाराएँ हैं—(१) आत्म दर्शन (२) विश्व दर्शन । इन्हें आत्मबोध एवं तत्वबोध भी कहते हैं । ब्रह्मविद्या का समग्र ढाँचा इन्हीं दो धाराओं की सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक विधि-व्यवस्था समझाने के लिए खड़ा हुआ है । 'आत्मबोध' और 'तत्वबोध' की यह दो धाराएँ हिमालय से निकलने वाली पतित पावनी गंगा और तरण तारिणी यमुना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की तरह हैं । आत्मबोध का अर्थ है—अपने उद्गम, स्वरूप, उत्तरदायित्व एवं लक्ष्य को समझना, तदनुरूप दृष्टिकोण एवं क्रियाकलाप का निर्धारण करना । तत्व बोध का अर्थ है कि शरीर—उसके उपयोग और अन्त के सम्बन्ध में वस्तुस्थिति से परिचित होना । सांसारिक पदार्थों एवं सम्बन्धित व्यक्तियों के साथ जुड़े हुए सम्बन्धों में घुसी हुई भ्रान्तियों का निराकरण करना तथा इनके सम्बन्ध में बरती जाने वाली नीति का नये सिरे से मूल्यांकन करना । संक्षेप में चेतना की सत्ता की यथार्थता को समझना आत्म-बोध और उसके काम आने वाले पदार्थों एवं प्राणियों के साथ उचित तामेल बिठाने को तत्वबोध कहते हैं । यदि इतना भर भी ठीक तरह जान लिया जाय, तो समझना चाहिए कि ज्ञान साधना का उद्देश्य पूरा हो गया ।

यों जीवन साधना का क्रम सारे दिन हर समय चलने का है, पर उसका प्रारम्भ, शुभारम्भ एक चिन्तन पद्धति के साथ किया जाना चाहिए । इस पद्धति के तीन अंग हैं—जीवन के स्वरूप, उद्देश्य एवं उपयोग को समझना और उसके अनुरूप गतिविधियों का निर्धारण करना, "हर दिन नया जन्म, हर रात नई मौत" सूत्र के अनुसार जीवन का श्रेष्ठतम उपयोग करने के लिए दिन भर की शारीरिक कार्य पद्धति एवं मानसिक विचार पद्धति का निर्धारण करना । रात को सोते समय, मृत्यु के समय होने वाले वैराग्य का अनुभव करना । इसे तीन चिन्तन क्रम में से दो को प्रातः और तीसरे को रात्रि के सोते समय प्रयुक्त करना चाहिए । हर दिन प्रातःकाल उठते ही बिस्तर पर बैठकर अपने आपसे इन सन्दर्भ में तीन प्रश्न पूछने चाहिए और उनके उत्तर भी स्वयं ही उपलब्ध करने चाहिए, पर प्रश्नोत्तर प्रातःकाल जीवन का क्रम आरम्भ करते हुए नित्य ही दुहराने चाहिए ताकि जीवन का स्वरूप, उद्देश्य और उपयोग सदा स्मरण बना रहे और उस स्मरण के आधार पर अपनी दिशाएँ ठीक रखने में भूल-चूक न होने पावे ।

अपने आप से तीन प्रश्न पूछने चाहिए—

(१) भगवान को सभी प्राणी समान रूप से प्रिय पात्र हैं । फिर मनुष्य को ही बोलने, सोचने, लिखने एवं असंख्य सुख, सुविधाएँ प्राप्त करने का विशेष अनुदान क्यों मिला ? मनुष्य को हर दृष्टि से उत्कृष्ट स्तर का प्राणी बनाने में इतना असाधारण श्रम क्यों किया ?

उत्तर एक ही हो सकता है—"अपने उद्यान—इस संसार को अधिक सुन्दर और सुव्यवस्थित बनाने के लिए परमेश्वर को साथी सहचरों की जरूरत पड़ी और अपनी क्षमता से सुसज्जित एक सर्वांगपूर्ण प्राणी-मनुष्य इस प्रयोजन की पूर्ति के लिए बनाया । विशेष साधन सुविधाएँ इसलिए दीं कि उनके द्वारा वह ईश्वरीय प्रयोजनों की पूर्ति ठीक तरह कर सके ।"

(२) दूसरा प्रश्न अपने आपसे पूछना चाहिए—"जो सुविधाएँ, विभूतियाँ, सम्पदाएँ हमें उपलब्ध हैं—उनका लाभ यदि हम अकेले ही उठाते हैं, तो इसमें क्या कोई हर्ज है ?"

उत्तर एक ही मिलेगा—"अन्य प्राणियों के अतिरिक्त जितनी भी बौद्धिक, आर्थिक, प्रतिभायुक्त एवं अन्य किसी प्रकार की विशेषताएँ हैं, वे विश्व मानव की ही पवित्र अमानत हैं और इनका उपयोग लोक-मंगल के लिए ही किया जाना चाहिए । शरीर रक्षा भर के आवश्यक उपकरणों के अतिरिक्त इन साधनों का विश्व कल्याण के लिए ही उपयोग किया जाय ।"

(३) तीसरा प्रश्न अपने आप से करना चाहिए कि—"क्या इस सुर दुर्लभ मानव शरीर का सदुपयोग हो रहा है ?"

उत्तर यही मिलेगा—"हम सदाचारी, संयमी, परिश्रमी, उदार, सज्जन, हँसमुख, सेवाभावी बने बिना मानव जीवन को सार्थक नहीं बना सकते । इसलिए इन साधनों का अभ्यास बढ़ाने के लिए जीवन-यापन की रीति-नीति में उत्कृष्टता और आदर्शवादिता का, सभ्यता और सज्जनता का, पुरुषार्थ और साहस का समुचित समावेश करना चाहिए ।"

इन्हीं प्रश्नोत्तरों में आध्यात्म-तत्वज्ञान का सार सन्निहित है । यदि यह प्रश्न महान समस्या के रूप में सामने आयें और उन्हें सुलझाने के लिए हम अपने पूरे विवेक का उपयोग करें तो भावी जीवनयापन के उपयोग के लिए एक व्यवस्थित दर्शन और कार्यक्रम सामने आ खड़ा होगा । यदि इस तत्वज्ञान को ठीक तरह हृदयंगम किया जा सका, तो आकांक्षाओं और कामनाओं का स्वरूप बदला हुआ होगा । रीति-नीति और कार्यपद्धति में वैसा परिवर्तन परिलक्षित होगा जैसे आत्मज्ञान सम्पन्न मनुष्य में प्रत्यक्षतः होना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"हर दिन नया जन्म और हर रात नयी मौत" का सूत्र आत्म-बोध और तत्व-बोध की दोनों साधनाओं का प्रयोजन पूरा करता है । प्रातःकाल नींद खुलते ही हर रोज यह भावना जाग्रत करनी चाहिए कि आज हमारा नवीनतम जन्म हुआ है और वह सोते समय तक एक रोज के लिए ही है । इसे हर दृष्टि से श्रेष्ठतम और आदर्श रीति-नीति अपनाते हुए जिया जाय । इसके लिए शैय्या त्याग से लेकर रात को सोते समय तक का कार्यक्रम बनाना चाहिए । दिनचर्या ऐसी हो, जिसमें आलस्य के लिए तनिक भी गुंजाइश न हो, पूरी तरह व्यवस्था रहे । आजीविका-उपार्जन, नित्य कर्म, पारिवारिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह, स्वाध्याय आदि के क्रिया-कलापों का समुचित समन्वय करते हुए इस प्रकार निर्धारण करना चाहिए, जिसमें आलस्य-प्रमाद के लिए कोई गुंजाइश न रहे । विश्राम के लिए रात्रि का समय ही पर्याप्त है । जल्दी सोना और जल्दी उठने की आदत डाली जानी चाहिए । समय का एक क्षण भी बर्बाद न जाने पावे और उसका उपयोग निरर्थक कामों में नहीं वरन् जीवन को सार्थक बनाने वाले निर्वाह की उचित आवश्यकता पूरी करने वाले कार्यों की प्रमुखता में हो । मनोरंजन के लिए-थकान दूर करने के लिए गुंजाइश रखी जा सकती है । किन्तु गपशप, मटरगश्ती, यारवासी में, आलस्य-ऊँघने में बेकार समय न गँवाना पड़े, इसकी समुचित सतर्कता बरतनी चाहिए । समय ही जीवन है, श्रम ही सम्पत्ति है—इस मन्त्र को पूरी तरह से याद रखा जाय । निर्धारित समय विभाजन को अनिवार्य अड़चन आ पड़े, तो बात दूसरी है अन्यथा यथासम्भव पूरा करने का ही प्रयत्न करना चाहिए ।

जो काम किया जाय उसमें पूरा-पूरा मनोयोग लगाया जाय । हाथ में लिए काम को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर इस कुशलता के साथ सम्पन्न किया जाय कि उनका स्तर ऊँचा बना रहे । आधे-अधूरे मन से उपेक्षापूर्वक बेगार भुगतने की तरह लापरवाही के साथ जो भी काम किए जायेंगे वे फूहड़, भौंड़े, अस्त-व्यस्त और अनगढ़ होंगे । ऐसे काम कर्त्ता के गए-गुजरेपन के प्रमाण हैं । काम का स्तर अच्छा रहना इस बात पर निर्भर है कि पूरे मनोयोग के साथ पूरी जिम्मेदारी के लिए अपनी कुशलता और सतर्कता का समुचित समावेश करते हुए सम्पन्न किया जाय । जिस कार्य को उत्साहपूर्वक, तन्मयता के साथ किया जायेगा, उसमें समय भी कम लगेगा और चित्त प्रसन्न रहेगा अन्यथा बेगार भुगतने पर थोड़े से काम में बेहद थकान चढ़ेगी और थोड़े से काम में ढेरों समय लग जायेगा । आलस्य और प्रमाद हमारे सबसे बड़े शत्रु हैं । आलस्य शरीर को अपाहिज की तरह बना देता है और वह विक्षिप्त जैसे आचरण करता है, जिस पर प्रमाद चढ़ा रहता है । ऐसे आदमी पग-पग पर असफल होते हैं और अपनी कर्महीनता के कारण उपेक्षित रहते और तिरस्कृत बनते हैं ।

प्रातः उठते ही हमें अपनी सुसन्तुलित दिनचर्या निर्धारित करनी चाहिए । साथ ही इस बात का ध्यान रखा जाय कि उन्हें करते समय आदर्शवादी दृष्टिकोण का समन्वय बना रहे । तृष्णा, लिप्सा, स्वार्थपरता, धूर्तता, अनैतिकता का दृष्टिकोण लेकर किए जाने वाले कार्य भले ही उपयोगी ही क्यों न लगते हों, उनमें ऐसी त्रुटियाँ बनी रहेंगी, जिससे समाज का अहित होगा और अपना स्तर गिरता हुआ दृष्टिगोचर होने लगेगा । सामान्य कार्यों को भी यदि लोकहित और आत्म-कल्याण के आदर्शवादी सिद्धान्तों का समावेश करते हुए किया जाय, तो वे कर्मयोग की श्रेणी में गिने जायेंगे और प्रत्यक्षतः परमार्थ न लगते हुए भी लगभग वैसी ही उद्देश्य पूर्ति करेंगे । दैनिक कार्यों में यह ध्यान रखा जाय कि जिन पर भी उनका प्रभाव पड़े—सम्बन्ध रहे—वे दुष्टता और दुर्बुद्धि का आक्षेप न लगा सकें, अपने हर कृत्य में, ईमानदारी, सच्चाई, कर्तव्य परायणता और सद्भावना का समावेश होना चाहिए । इस दृष्टि को अपनाते हुए जो कुछ किया जायेगा वह नैतिक भी होगा और लोकोपयोगी भी । जिसके सोचने का ढंग ऊँचा है, वे समाज के लिए अहितकर काम कभी चुनेंगे ही नहीं, भले ही उन्हें भूखा क्यों न मरना पड़े । लोकोपयोगी कार्य करते हुए उचित पारिश्रमिक लेकर यदि भलमनसाहत का जीवन-यापन किया जा सके, तो उस क्रिया-कलाप को, कर्मयोग की ही संज्ञा दी जायेगी ।

दिन भर के उत्तम काम उत्कृष्ट दृष्टिकोण रखते हुए सम्पन्न किए जाते रहें, जिन्हें उस दिनचर्या को उस दिन कों सार्थक बनाने वाली कहा जा सकता है । बीच-बीच में जब भी कुसंस्कारों की प्रबलता से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आलस्य-प्रमाद अथवा अनैतिक दृष्टिकोण का समावेश होने लगे, तो उसे तत्काल रोका जाय । जिस तरह मुँह पर मक्खी बैठते ही तत्काल उसे उड़ाने का प्रयत्न किया जाता है, उसी प्रकार अवांछनीयता का अपने क्रियाकृत्य एवं चिन्तन में तनिक भी समावेश न होने पाये, इस पर तीखी नजर रखी जाय । जब कुछ ऐसा होता दिखाई पड़े तो उसे रोकने के लिए अपने आपको सजग किया जाय । अभ्यस्त दुष्प्रवृत्तियों से हर घड़ी जूझते रहने के लिए जागरूक प्रहरी की हमें भूमिका निभानी चाहिए । चोर घर में घुसने न पाये, घुसने का दुस्साहस करे, तो मार भगाया जाय, इसी में सतर्कता की सराहना है । इस सम्बन्ध में हमें निरन्तर जागरूक रहना चाहिए । दिन भर यह ध्यान रखा जाय कि आज का दिन हमें श्रेष्ठतम आदर्शवादी रीति-नीति अपनाते हुए पुण्य परमार्थ से भरा-पूरा बनाना है । उसमें शरीर निर्वाह एवं परिवार पालन के लिए जितना अनिवार्य रूप से आवश्यक है उतना ही संलग्न रहना है । प्रातःकाल इसी आधार पर दिन भर का कार्यक्रम बनाया जाय और उस पर दृढ़तापूर्वक आरूढ़ रहा जाय, तो निःसन्देह संकल्प के अनुरूप वह दिन ऐसा ही व्यतीत होगा, जिस पर गर्व एवं सन्तोष किया जा सके ।

सब कामों से निवृत्त होकर जब निद्रा देवी की गोद में जाने की घड़ी आये, तब कल्पना करनी चाहिए कि—"एक सुन्दर नाटक का अब पटाक्षेप हो चला । यह संसार एक नाट्यशाला है । आज का दिन अपने को अभिनय करने के लिए मिला था, सो उसको अच्छी तरह खेलने का ईमानदारी से प्रयत्न किया । जो भूलें रह गयीं उन्हें याद रखेंगे और अगले दिन उनकी पुनरावृत्ति न होने देने के लिए अधिक सावधानी बरतेंगे ।"

"अनेक वस्तुएँ इस अभिनय में प्रयोग करने को मिलीं । अनेक साथियों का साथ रहा । उनका सान्निध्य एवं उपयोग जितना आवश्यक था कर लिया गया, अब उन्हें यथासमय छोड़कर पूर्ण शान्ति के साथ अपनी आश्रयदात्री निद्रा-मृत्यु की गोद में निश्चिंत होकर शयन करते हैं ।"

इस भावना में वैराग्य का अभ्यास है । अनासक्ति का प्रयोग है । उपलब्ध वस्तुओं में से एक भी अपनी नहीं, साथी व्यक्तियों में से एक भी अपना नहीं । वे सब अपने परमेश्वर के और अपने कर्तृत्व की उपज हैं । हमारा न किसी पर अधिकार है, न स्वामित्व । हर पदार्थ और हर प्राणी के साथ कर्तव्य बुद्धि से ठीक व्यवहार कर लिया जाय, यही अपने लिए उचित है । इससे अधिक मोह, ममता के बन्धन बाँधना—स्वामित्व और अधिकार की अहंता जोड़ना निरर्थक है । हर रात्रि को सोते समय यह मानकर निद्रा की गोद में जाना चाहिए कि यह जीवन के एक अध्याय का सन्तोषजनक अन्त हुआ । अब मृत्यु जैसी शान्ति को गले लगाना है । रात्रि निद्रा को मृत्यु जैसी शान्ति माना जाय । इससे अति महत्त्वपूर्ण आध्यात्मिक लाभ मिलता है । हम मृत्यु को एक प्रकार से भूले रहते हैं । अस्तु, जीवन का मूल्य और स्वरूप समझ पाना ही हमारे लिए सम्भव नहीं हो पाता । आमतौर से जब तक वस्तु हाथ में रहती है, तब तक उसका न तो महत्त्व समझ में आता है और न उपयोग । जब वह छिन जाती है, तब पता चलता है कि वह उपलब्धि कितना बड़ा सौभाग्य थी । उसका समय रहते कितना अच्छा सदुपयोग हो सकता है ।

प्रगति पथ पर धीरे-धीरे बढ़ते हुए मनुष्य जन्म तक पहुँच सकना सम्भव हुआ है । यह उपहार ईश्वर का सर्वोपरि अनुग्रह है । इसमें जो सुविधाएँ हैं वे किसी भी अन्य योनि में नहीं हैं । बहुमूल्य अनुदानों का सदुपयोग कर सकने की दूरदर्शिता जिनमें हो उन्हें और भी श्रेष्ठ अवसर मिलने की अपेक्षा करनी चाहिए । यह हमारी अग्नि परीक्षा है कि ईश्वर प्रदत्त मनुष्य जन्म को हम किन प्रयोजनों के लिए किस प्रकार उपयोग में लाते हैं । पेट और प्रजनन में तो सृष्टि के निकृष्ट प्राणी भी संलग्न हैं । मानवीय गरिमा की सफलता इसमें है कि इस जन्म को आत्म-कल्याण और लोक-कल्याण के उच्च प्रयोजन में ईश्वर की इच्छा के अनुरूप लगाए रखा जाय । जो इसके लिए प्रयत्नशील रहते हैं, उन्हें महात्मा-देवात्मा के उच्च पद प्राप्त करते हुए अन्ततः परमात्मा बनने का अवसर मिलता है । जो पशु-प्रवृत्तियों में ही उलझे रह जाते हैं, उनके हाथ से यह भी छिन जाता है । पात्रता सम्पादन के लिए उन्हें फिर निम्न योनियों में भटकना पड़ता है । यह बहुमूल्य तथ्य विदित रहने पर भी अविदित जैसे बने रहते हैं । वह जानकारी व्यर्थ है, जो क्रिया को प्रभावित न कर सके ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रात्रि को सोते समय दैनिक निद्रा को चिर-निद्रा, मृत्यु के समतुल्य मानकर चलना चाहिए । शैय्या पर जाते ही कल्पना करनी चाहिए कि 'हर दिन नया जन्म-हर रात नई मौत' जीवन सूत्र के अनुसार अब मरणकाल आ गया । एक दिन का जीवन अब समाप्त हो चला । निन्द्रा रूपी मृत्यु अपने अंचल में प्राण को ढक लेने के लिए निकट आ गई ।

इस अवसर के लिए कल्पना यह होनी चाहिए कि शरीर में से जीव निकलकर ऊँचे प्रकाश में उड़ने लगा । मृत शरीर शैय्या पर पड़ा है । उसके जलाने, गलाने, की क्रिया-अन्त्येष्टि होने जा रही है । अपनी जीव सत्ता पृथक है और शरीर कलेवर का अस्तित्व उसके प्रयोग में आते रहने पर भी उससे सर्वथा भिन्न है । शरीर और आत्मा की भिन्नता यों कहने-सुनने में सदैव आती रहती है, पर उसकी अनुभूति कभी भी नहीं होती । किसी मृत को श्मशान में पहुँचाते समय, उसके अग्नि संस्कार के समय शरीर आत्मा की भिन्नता-जीवन की नश्वरता एक हल्की झाँकी की तरह अन्तःकरण में उभरती है किन्तु कुछ ही क्षण में बिजली की कौंध की तरह विस्मृति में विलीन हो जाती है । अपनी स्वयं की मृत्यु का भावना दृश्य यदि गम्भीरतापूर्वक देखा जाय तो उससे आत्म-ज्ञान का वह प्रकाश उदय हो सकता है, जो आध्यात्मिकता का मूलभूत आधार है । मृत्यु को निद्रा के रूप में अपनी नित्य सहचरी होने की बात सोचते हुए शयन किया जाय और उसके फलितार्थों पर विचार करते रहा जाय, तो इसकी प्रतिक्रिया आत्मोत्कर्ष का पथ प्रशस्त कर सकती है ।

नित्य सोते समय अपनी मृत्यु की अनुभूति करने की भावना यदि गहरी हो, तो उसके साथ ही कई प्रश्न उभरते हैं । मनुष्य जीवन ईश्वर का सर्वश्रेष्ठ अनुदान होने और उसके अमानत की तरह विश्व उद्यान को समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने के लिए दिए जाने की बात अधिक स्पष्ट रूप से समझ में आती है । शरीर की ही साज-सज्जा में लगे रहने, आत्म-कल्याण का तथ्य भुला देने की मूर्खता को छोड़ने के लिए व्याकुलता उत्पन्न होती है । शरीर उपकरण मात्र है, वह आत्मा के उच्च क्रिया-कलाप पूरे करने भर के लिए मिला है । इन्द्रियों की वासना और मनोगत तृष्णा अहंता जैसे क्षुद्र कार्यों में यह अलभ्य अवसर नष्ट हो जाय और आत्मिक लक्ष्य पूरा ही न हो, तो वह एक भयानक दुर्घटना ही कही जायेगी, इस प्रकार सोच सकना तभी सम्भव होता है, जब मृत्यु को सिर पर खड़ी देखा जाय । इसके बिना आत्म विस्मृति की खुमारी ही छाई रहती है और मौज मजा करते हुए दिन गुजारने के अतिरिक्त और कुछ सूझ ही नहीं पड़ता । लक्ष्य भ्रष्ट जीव के लिए लोभ और मोह की पूर्ति करते रहना ही परम प्रिय बना रहता है ।

सोते समय मृत्यु को सहचरी की तरह लेकर सोया जाय तो वह सद्गुरु की तरह जीवन का मूल्य, स्वरूप एवं सदुपयोग इतनी अच्छी तरह समझाती है, जितना कोई अन्य ज्ञानी-विज्ञानी भी नहीं समझा सकता । उन घड़ियों में वैरागी की, अनासक्त कर्मयोगी की भावनाएँ मन में भरी रहनी चाहिए । वैरागी, संन्यासी उसे कहते हैं, जो सम्बद्ध पदार्थों और प्राणियों पर से स्वामित्व की भावना हटा लेता है । मालिकी छोड़कर माली का पद स्वीकार करता है । इस चिन्तन से विवेक दृष्टि उपलब्ध होती है । कर्तव्य पालन अपनी आकांक्षा बनकर रह जाता है । "स्वामित्व भगवान का—सेवा धर्म अपना" इतना सोच लिया जाय तो समूचा दृष्टिकोण ही बदल जाता है । तृष्णा-अहंता के कारण जो अकर्म करने पड़ते हैं और अनावश्यक चिन्ताओं के बोझ सिर पर लादे रहते हैं, उन सबसे सहज ही छुटकारा मिल जाता है ।

जीवन का आनन्द उसे मिलता है, जो उसे खिलाड़ियों द्वारा खेले जाने वाले खेल की तरह जीता है । नाटक के पात्रों को तरह-तरह के अभिनय करने पड़ते हैं, वे उनसे अत्यधिक प्रभावित नहीं होते । विवेकशीलता इसी में है कि अपना प्रत्येक कर्तव्य पूरी ईमानदारी और तत्परतापूर्वक सम्पन्न करते रहा जाय और उतने भर को अपने सन्तोष एवं उत्तरदायित्व निर्वाह का केन्द्र बिन्दु मानते रहा जाय । मनोकामनाओं को कर्तव्य पालन तक सीमित कर दिया जाय और परिणामों की बात परिस्थितियों पर निर्भर होने का तथ्य स्वीकार कर लिया जाय तो सिर पर चढ़ी रहने वाली भविष्य की आवश्यक चिन्ताएँ अनायास ही तिरोहित हो जाती हैं । सफलता और असफलता दोनों का जो समान रूप से स्वागत करने को तैयार है, उस सन्तुलित मनःस्थिति के व्यक्ति को तत्वदर्शी और विज्ञानी कह सकते हैं । ऐसा व्यक्ति ही जीवन नाटक का आनन्द ले सकता है । स्वयं प्रसन्न रहना व साथियों को प्रसन्न रखना उसी के लिए सम्भव होता है । वैराग्य, संन्यास इसी मनःस्थिति का नाम है । अनासक्त कर्मयोगी एवं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति प्रज्ञ-प्रज्ञावान ऐसे ही लोगों को कहा जाता है । रात्रि को सोते समय अपनी मनःस्थिति ऐसी ही बनाकर सोया जाय, तो गहरी नींद आयेगी, चित्त बहुत हल्का रहेगा और प्रातःकाल ताजगी के साथ उठना सम्भव हो सकेगा ।

भारतीय धर्म वर्णाश्रम धर्म है । उसकी मर्यादा है कि जीवन के अन्तिम अध्याय में संन्यासी होकर मरना चाहिए । अब तो वे परम्पराएँ तिरोहित ही होती जाती हैं, पर जब तक वे मान्यताएँ जीवित थीं, तब तक यह प्रचलन भी था कि यदि कोई व्यक्ति मरने जा रहा है और संन्यास नहीं ले सका है, तो उसे 'त्वरा संन्यास' दिलाया जाता था । संन्यास लेने की प्रक्रिया कुछ ही समय में चिह्न पूजा की तरह सम्पन्न कर दी जाती थी । वह कृत्य हम प्रतिदिन सोते समय स्वयं ही पूरा कर लिया करें, तो इसे उच्च कोटि की आध्यात्मिक साधना ही कहा जायेगा । दिन भर जिस परिवार की सेवा की गई वह ईश्वर का उद्यान था । उसे सुविकसित बनाने के लिए अपना उत्तरदायित्व निबाहा गया, अब मालिक को सौंपकर छुट्टी पर जाया जा रहा है । धन-वैभव जो कुछ भी अपने सुपुर्द था, वह ईश्वर की सम्पत्ति था उसे उस के हवाले करके स्वयं खाली हाथों विदाई ली जा रही है । शरीर और मन यह औजार वाहन भी ईश्वर के कारखाने से किराये पर मिले थे, उन्हें भी यथास्थान जमा करके एकाकी अपने घर लौटा जा रहा है । यह भावनाएँ सोते समय की हैं । उनके कल्पना चित्र मनःक्षेत्र पर उतारते हुए शयन करने का नित्य नियम बना लिया जाय, तो संन्यासी एवं वैरागी की वह कुछ समय के लिए उत्पन्न की गई मनःस्थिति अगले चौबीस घण्टों तक आत्म-जागृति का उत्साह बनाए रह सकती है । दूसरे दिन फिर इस प्रकार उसे सजग-सजीव किया जा सकता है ।

प्रातःकाल उठते ही एक दिन के लिए मिला जीवन रूपी सौभाग्य और उसके श्रेष्ठतम सदुपयोग की बात मनःक्षेत्र पर भली प्रकार उभारी जाय । आँख खुलने से लेकर शैय्या त्याग कर जमीन पर पैर रखने तक के नये जीवन की प्रसन्नता और उसके श्रेष्ठतम सदुपयोग की सुव्यवस्था बनाने की बात ही सोचते रहा जाय । उतने ही समय में दिनचर्या का निर्धारण उसके साथ मनोयोगपूर्वक आदर्शवादी चिन्तन का नियोजन किस प्रकार होगा, इसकी रूपरेखा बना लेनी चाहिए । यह कार्य प्रातःकालीन ब्रह्म संध्या की तरह है । इसे अवकाश न मिलने की शिकायत किए बिना, कोई भी बिना किसी कठिनाई, विधि-विधान या साधन उपकरण के अत्यन्त सरलतापूर्वक करता रह सकता है । इसे 'आत्मबोध' की योग साधना कहा जाता है ।

सायं संध्या के लिए रात्रि को सोते समय 'हर रात नयी मौत' के सूत्र को अन्तःक्षेत्र में भावनापूर्वक चित्रित किया जाना चाहिए, सम्वेदना जितनी गहरी होगी, प्रतिक्रिया उतनी ही प्रखरतापूर्वक उभरेगी । वस्त्र साधारण पहने हुए भी, काम-काज गृहस्थों जैसा करते हुए भी संन्यासी की, अनासक्त कर्मयोगी की मनःस्थिति इस साधना के आधार पर जितनी सरलतापूर्वक बन सकती है, उतनी अन्य किसी प्रकार भी नहीं । 'तत्वबोध' की यह साधना भी ऐसी है, जिसके लिए समय न मिलने, साधन न होने, भन न लगने जैसी शिकायत करने का कोई अवसर नहीं है ।

सूर्योदय और सूर्यास्त काल को संध्या कहते हैं । उस पुण्य बेला को आत्म-साधना के लिए सुरक्षित रखे जाने का विधान है । इसी विधान की निद्रा को रात्रि और जागृति को दिन मानते हुए उनकी सन्धि वेला को संध्याकाल कहा जा सकता है । इस प्रकार उठते समय की 'आत्मबोध' और सोते समय की 'तत्वबोध' साधना को व्यावहारिक जीवन को प्रभावित करने वाली उच्चस्तरीय साधना कहा जा सकता है । सरलता और प्रभावोत्पादक क्षमता की दृष्टि से उसे अद्वितीय माना जा सकता है । 'हर दिन नया जन्म, हर रात नई मौत' का जीवन सूत्र जो जितनी गहराई के साथ हृदयंगम और कार्यान्वित कर सकेगा वह उतनी ही तीव्रतापूर्वक आत्मिक प्रगति की दिशा में अग्रसर होगा, यह निश्चित है ।

आन्तरिक उत्कर्ष के दो सुदृढ़ अवलम्बन : चिन्तन-मनन

आत्मिक प्रगति का भवन चार दीवारों से मिलकर बनता है । इस तख्त में चार पाये हैं । चारों दिशाओं के चार मुखों से निकले हुए चार वेदों में इसी ज्ञान-विज्ञान का वर्णन है । चार वर्ण, चार आश्रमों का विभाजन इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया गया है । इन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१) आत्म-चिन्तन (२) आत्म-सुधार (३) आत्म-निर्माण और (४) आत्म-विकास के नाम से पुकारा जाता है । इन्हें एक-एक करके नहीं वरन् समन्वित रूप से सम्पन्न किया जाता है ।

(१) आत्म चिन्तन अर्थात् अपने चेतन, अजर अमर शुद्ध चेतन स्वरूप का भान । शरीर और मन में अपनी स्वतन्त्र एवं पृथक सत्ता की प्रगाढ़ अनुभूति । (२) आत्म-सुधार अर्थात् अपने ऊपर चढ़े हुए मल आवरण विक्षेप—कषाय कल्मषों का निरूपण निरीक्षण और सुसम्पन्न स्थिति को विपन्नता में बदल देने वाली विकृतियों की समुचित जानकारी । (३) आत्म-निर्माण अर्थात् विकृतियों को निरस्त करके उनके सस्थान पर सद्भावनाओं सत्प्रवृत्तियों की उत्कृष्ट कर्तृत्व और आदर्श कर्तव्य स्थापित करने का सुनिश्चित संकल्प एवं साहसिक प्रयास । (४) आत्म विकास अर्थात चिन्तन और कर्तृत्व को लोक मंगल के लिए सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन के लिए व परमात्मस्तर पर विकसित होने के लिए अधिकाधिक समय, तप त्याग बलिदान को सन्तोष एवं आनन्द की अनुभूति । इन चार चरणों में आत्म-कल्याण का लक्ष्य प्राप्त होता है । अतः आत्म-उत्कर्ष के लिए (१) अपनी अवांछनीयताओं को ढूँढ़ निकालना (२) कुसंस्कारों के प्रति प्रबल संघर्ष करके उन्हें परास्त करना (३) जो सत्प्रवृत्तियाँ अभी स्वभाव में सम्मिलित नहीं हो पायी हैं, उन्हें प्रयत्नपूर्वक सीखने का, अपनाने का प्रयत्न करना (४) उपलब्धियों का प्रकाश दीपक की तरह सुविस्तृत क्षेत्र में वितरित करना । यह चार कार्य समन्वित रूप से सम्पन्न करते चलने की आवश्यकता पड़ती है । इन्हीं चारों को तत्ववेत्ताओं ने आत्म-चिन्तन, आत्म-सुधार, आत्म-निर्माण और आत्म-विकास के नाम से निरूपित किया है ।

इन चारों प्रयोजनों को दो भागों में बाँट कर दो-दो युग्म बनते हैं । एक को मनन तथा दूसरे को चिन्तन कहते हैं । मनन से आत्म-समीक्षा का और अवांछनीयताओं का परिशोधन आता है । चिन्तन से आत्म-निर्माण और आत्म-विकास की प्रक्रिया जुटती है ।

इन दोनों को आत्म-साधन का अविच्छिन्न अंग माना गया है । प्रातःकाल उठते समय, रात्रि को सोते समय अथवा अन्य किसी निश्चिंत, शान्त, एकान्त स्थिति में न्यूनतम आधा घण्टे का समय इस प्रयोजन के लिए निकाला जाना चाहिए । मनन को प्रथम और चिन्तन को द्वितीय चरण माना जाना चाहिए । दर्जी पहले कपड़े काटता है, पीछे उसे सींता है । डाक्टर पहले नस्तर लगाता है, पीछे मरहम-पट्टी करता है । पहले नींव खुदती है और पीछे इमारत चुनी जाती है । यों यह दोनों ही कार्य मिले-जुले हैं और तनिक से अन्तर के साथ प्रायः साथ-साथ ही चलते हैं, फिर भी यदि प्रथम-द्वितीय का प्रश्न हो, तो मनन को पहला और चिन्तन को दूसरा चरण कहा जायेगा । इस प्रक्रिया के लिए पूजा-उपचार की तरह कोई विशेष शारीरिक, मानसिक स्थिति बनाने की या पूजा-उपचार जैसी साधना-सामग्री एकत्रित करने की आवश्यकता नहीं है । चित्त का शान्त और वातावरण का कोलाहल रहित होना ही इसके लिए पर्याप्त है । प्रातः-सायं का समय खाली न हो तो सुविधा का कोई अन्य समय निर्धारित किया जा सकता है । आधा घण्टे की सीमा भी अनिवार्य नहीं है, यह कामचलाऊ मापदण्ड है । इसे आवश्यकतानुसार कम या अधिक भी किया जा सकता है, पर अच्छा यही है कि उसमें क्रम, समय का निर्धारण रहे । नियत समय पर नियमित रूप से अपनाई गई कार्य पद्धति अस्त-व्यस्त एवं अव्यवस्थित क्रिया-प्रक्रिया से कितनी अधिक फलदायक होती है, इसे हर कोई जानता है ।

आत्म-चिन्तन वस्तुतः अपने आप की समीक्षा है । अपने दोष-दुर्गुणों को ढूँढ निकालने का प्रयास भी इसे कहा जा सकता है । प्रयोगशालाओं में पदार्थों का विश्लेषण वर्गीकरण होता है और देखा जाता है कि इस संरचना में कौन-कौन से तत्व मिले हुए हैं ? शवच्छेद की प्रक्रिया में देखा जाता है कि भीतर के किस अवयव की क्या स्थिति थी, उसमें कहीं चोट या विषाक्तता के लक्षण तो नहीं थे । रोगी की स्थिति जानने के लिए उसके मल, मूत्र, ताप, रक्त, धड़कन आदि की जाँच-पड़ताल की जाती है । निदान के उपरान्त ही सही उपचार बन पड़ता है । ठीक यही बात आत्म-विश्लेषणों के सम्बन्ध में है । आत्म-चिन्तन का, आत्म-समीक्षा का यही उद्देश्य है ।

एक सज्जन, शालीन, संभ्रान्त, सुसंस्कृत नागरिक का स्वरूप क्या होना चाहिए ? उसके गुण, कर्म, स्वभाव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में किन शालीनताओं का समावेश होना चाहिए । इसका एक ढाँचा सर्वप्रथम अपने मस्तिष्क में खड़ा किया जाय । मानवीय मर्यादा और स्थिति क्या होनी चाहिए ? इसका स्वरूप निर्धारण कुछ कठिन नहीं है । दिनचर्या की दृष्टि से सुव्यवस्थित, श्रम की दृष्टि से स्फूर्तिवान, मानसिक दृष्टि से सक्षम, व्यवहार की दृष्टि से कुशल, चिन्तन की दृष्टि से दूरदर्शी विवेकवान, आत्मानुशासन की दृष्टि से प्रखर, व्यक्तित्व की दृष्टि से आत्मावलम्बी और आत्म-सम्मानी हर श्रेष्ठ मनुष्य में यह विशेषताएँ होनी चाहिए । चरित्र की दृष्टि से उदार और स्वभाव की दृष्टि से मृदुल एवं हँसते-हँसाते रहने वाला होना चाहिए । सादगी और सज्जनता मिले-जुले तत्व हैं । आन्तरिक विभूतियाँ और बाह्य साधन सम्पत्तियों का सुव्यवस्थित सदुपयोग कर सकने वालों को सुसंस्कृत कहते हैं । अपने कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों को समझने वाले और उनके पालन को प्रतिष्ठा का प्रश्न बनाकर चलने वालों को सभ्य कहा जाता है । ऐसी ही विशेषताओं से सम्पन्न व्यक्ति को सच्चे अर्थों में 'मनुष्य' कहा जा सकता है । 'मानवता' से, मानवीय सद्गुणों से विभूषित व्यक्ति ही मानव समाज का सभ्य सदस्य कहला सकता है । ऐसे सद्गुण सम्पन्न मनुष्य को मापदण्ड मानकर उसके साथ तुलनात्मक समीक्षा करने से ही आत्म-चिन्तन का उद्देश्य पूर्ण होता है । मानदण्ड न हो तो अपने दोषों और गुणों का कुछ पता ही न चलेगा । दुष्टों से अपनी तुलना की जाय तो जो कुछ हम हैं वह भी आत्मिक श्रेष्ठता की अनुभूति होगी और यदि अत्यधिक उच्च स्थिति के महामानवों से तुलना की जाय तो सामान्य स्थिति रहते हुए भी अपनी स्थिति असन्तोषजनक और गई-गुजरी प्रतीत होती रहेगी । नाप-तौल के लिए बाँट, गज, मीटर आदि की जरूरत पड़ती है । तुलनात्मक आधार अपनाने पर ही समीक्षा सम्भव होती है अन्यथा वस्तुस्थिति का निरूपण सम्भव ही न हो सकेगा । शरीर का तापमान कितना रहना चाहिए, यह विदित रहने पर ही बुखार चढ़ने का, शीत के दबाने की बात जानी जा सकती है । मध्यवर्ती रक्तचाप का ज्ञान रहने पर ही नापने वाला यह बता सकता है कि 'ब्लड प्रेशर' घटा हुआ है या बढ़ा हुआ । इसी प्रकार एक सज्जनता एवं मानवतावादी मनुष्य का जीवन स्तर निर्धारित करने और उसके साथ अपने को तौलने में ही अपनी हेय, मध्यम एवं उत्तम स्थिति का विवेचन, विश्लेषण, निर्धारण सम्भव हो सकेगा ।

हम जिन दुष्प्रवृत्तियों के लिए दूसरों की निन्दा करते हैं, उनमें से कोई अपने स्वभाव में सम्मिलित तो नहीं है, जिनके लिए हम दूसरों से घृणा करते हैं, वैसी दुष्प्रवृत्तियाँ अपने में तो नहीं हैं ? जैसा व्यवहार हम दूसरों से अपने लिए नहीं चाहते, वैसा व्यवहार हम दूसरों के साथ तो नहीं करते ? जैसे उपदेश हम आये दिन दूसरों को दिया करते हैं, वैसे आचरण अपने हैं या नहीं ? जैसी कि हम प्रतिष्ठा एवं प्रशंसा चाहते हैं वैसी विशेषताएँ अपने में हैं या नहीं ? ऐसे प्रश्न अपने आप से पूछने और सही उत्तर पाने की चेष्टा की जाय तो अपने गुण-दोषों का वर्गीकरण ठीक तरह हो सकना सम्भव हो जायेगा ।

यों यह कार्य है अति कठिन । हर मनुष्य में अपने प्रति पक्षपात करने की दुर्बलता पायी जाती है । आँखें बाहर को देखती हैं, भीतर का कुछ पता नहीं । कान बाहर के शब्द सुनते हैं, अपने हृदय और फेफड़ों से कितना अनवरत ध्वनि प्रवाह गुंजित होता है, उसे सुन ही नहीं पाते । इसी प्रकार दूसरे के गुण-अवगुण देखने में रुचि भी रहती है और प्रवीणता भी, पर ऐसा अवसर कदाचित ही आता है, जब अपने दोषों को निष्पक्ष रूप से देखा और स्वीकारा जा सके । आमतौर से अपने गुण ही गुण दिखते हैं, दोष तो एक भी नजर नहीं आता । कोई दूसरा बताता है तो वह शत्रुवत् प्रतीत होता है । जिस कार्य को कभी भी न किया हो, वह बन ही नहीं पड़ता । आत्म-समीक्षा कोई कब करता है ? अस्तु, वह प्रक्रिया ही कुण्ठित हो जाती है । अपने दोष ढूँढ़ने में काफी कठोरता बरतने की क्षमता उत्पन्न हो जाय, तो वस्तुस्थिति समझने और सुधार के लिए प्रयत्न करने का अगला चरण उठाने में सुविधा होती है ।

दोष-दुर्गुणों के सुधारने के लिए अपने आप से संघर्ष करने के अतिरिक्त और कोई उपाय नहीं । गीता में जिस महाभारत का उल्लेख और जिसमें भगवान ने हठपूर्वक जो कार्य नियोजित किया था, वह अन्तःसंघर्ष ही था । भगवान के अवतरण में अधर्म के नाश और धर्म के संस्थापन की प्रतिज्ञा जुड़ी हुई है । अवतार, इसी प्रयोजन के लिए होते हैं । अन्तःकरण में जब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी भगवान अवतरित होते हैं, जब विचार और व्यवहार के साथ लिपट कर सम्बन्धियों जैसी प्रिय लगने वाली असुरता से लड़ने के लिए कटिबद्ध होना पड़ता है । हर अवतार को असुरों को परास्त करने और देवत्व को जिताने का कार्य अनिवार्य रूप से करना पड़ा है । इस प्रक्रिया को वैयक्तिक जीवन की दुष्प्रवृत्तियों का निराकरण और सत्प्रवृत्तियों का सम्वर्धन कह सकते हैं । ईश्वर की दिव्य ज्योति जिस भी अन्तरात्मा में प्रकट होगी उसमें प्रथम स्फुरणा यही होगी कि जीवन के जिस भी क्षेत्र में दुष्ट, दुर्बुद्धि छिपी पड़ी है और दुष्कर्मों के लिए ललचाती है उसे ताड़का, सूर्पणखा, पूतना की तरह निरस्त कर दिया जाय ।

बुरे विचारों को अच्छे विचारों से काटा जाता है और बुरी आदतों के स्थान पर नई आदतों को अभ्यास में लाना पड़ता है । इस कार्य में एक प्रकार से अन्तः युद्ध जैसी परिस्थिति उत्पन्न होती है । यह परिवर्तन अनायास ही, इच्छा मात्र से हो सकना सम्भव नहीं । प्रचण्ड मनोबल और संकल्प शक्ति का उपयोग करने से ही यह हेर-फेर होता है । विष को विष से मारा जाता है । काँटे को काँटे से निकाला जाता है और चाँटे का जवाब घूँसे से दिया जाता है । सेना के साथ सेना लड़ती है । टैंक तोड़ने के लिए तोप के गोले बरसाने पड़ते हैं । संघर्ष में समतुल्य बल का प्रयोग करना पड़ता है । मस्तिष्क में भरे हुए कुविचारों को सद्विचारों से काटना पड़ता है । निकृष्टता की ओर आकर्षित करने वाले वातावरण के प्रभाव को निरस्त करने के लिए उत्कृष्टता के लोक में अपने को पहुँचाना होता है । यह कार्य स्वाध्याय और सत्संग की सहायता से ही सम्भव हो सकता है । अपने समीपवर्ती लोग प्रायः स्वार्थपरता और निकृष्टता की दिशा में प्रेरणा देते हैं । इसका प्रतिद्वन्द्वी वातावरण इर्द-गिर्द कठिनाई से दीख पड़ेगा । ऐसी दशा में यही उचित है कि श्रेष्ठ सज्जनों के, महामानवों के विचार उनके सद्ग्रन्थों के सहारे पढ़ने, ग्रहण करने का प्रयत्न करें । उनके जीवन चरित्र पढ़ें और आदर्शवादी प्रेरणाप्रद प्रसंगों एवं व्यक्तियों को अपने सामने रखें । उस स्तर के लोग प्रायः सत्संग के लिए सदा उपलब्ध नहीं रहते, यदि होते भी हैं तो उनके प्रवचन और कर्म में अन्तर रहने से समुचित प्रभाव नहीं पड़ता । ऐसी दशा में सरल और निर्दोष तरीका यही है कि ऐसे सत्साहित्य का नित्य-नियमित रूप से अध्ययन किया जाय, जो जीवन की समस्याओं को सुलझाने, ऊँचा उठाने और आगे बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता हो । ऐसा साहित्य न केवल पढ़ा ही जाय वरन् प्रस्तुत विचारधारा को व्यावहारिक जीवन में उतारने के लिए उत्साह भी दिखाया जाय और सोचा जाय कि इस प्रकार की आदर्शवादिता अपने में किस प्रकार उत्पन्न की जा सकती है । इसके लिए योजनाएँ बनाते रहा जाय और परिवर्तन काल में जो उलट-पुलट करनी पड़ेगी उसका मानसिक ढाँचा खड़ा करते रहा जाय । यही है आन्तरिक महाभारत की पृष्ठभूमि । प्रत्यक्ष संग्राम तब खड़ा होता है, जब अभ्यस्त गन्दे विचारों को उभरने न देने के लिए कड़ी नजर रखी जाती है और जब भी वे प्रबल हो रहे हों, तभी उन्हें कुचलने के लिए प्रतिपक्षी सद्विचारों की सेना सामने ला खड़ी की जाती है । व्यभिचार की ओर जब मन चले तो इस मार्ग पर चलने की हानियों का फिल्म चित्र मस्तिष्क में घुमाया जाय और संयम से हो सकने वाले लाभों का, उदाहरणों का सुविस्तृत दृश्य आँखों के सामने उपस्थित कर दिया जाय । यह कुविचारों और सद्विचारों की टक्कर है । यदि मनोबल प्रखर है और न्यायाधीश जैसा विवेक जाग्रत हो तो कुविचारों का परास्त होना और पलायन करना सुनिश्चित है । सत्य में हजार हाथी के बराबर बल होता है । आसुरी तत्व देखने में तो आकर्षक और प्रबल प्रतीत होते हैं, पर जब सत्य की अग्नि के साथ उनका पाला पड़ता है तो फिर उनकी दुर्गति होते भी देर नहीं लगती । काठ की हाँडी की तरह जलते और कागज की नाव की तरह गलते हुए भी उन्हें देखा जा सकता है ।

अभ्यस्त कुसंस्कार आदत बन जाते हैं और व्यवहार में अनायास ही उभर-उभर कर आते रहते हैं । इनके लिए भी विचार संघर्ष की तरह कर्म संघर्ष की नीति अपनानी पड़ती है । थल सेना से थल सेना लड़ती है और नभ सेना के मुकाबले नभ सेना भेजी जाती है । जिस प्रकार कैदियों को नयी बदमाशी खड़ी कर देने से रोकने के लिए जेल के चौकीदार उन पर हर घड़ी कड़ी नजर रखते हैं, वही नीति दुर्बुद्धि पर ही नहीं दुष्प्रवृत्तियों पर भी रखनी पड़ती है । जो भी उभरे उसी से संघर्ष खड़ा कर दिया जाय । बुरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आदतें जब कार्यान्वित होने के लिए मचल रही हों, तो उनके स्थान पर उचित सत्कर्म ही करने का आग्रह खड़ा कर देना चाहिए और मनोबलपूर्वक अनुचित को दबाने और उचित को अपनाने का ही हठ ठान लेना चाहिए । मनोबल दुर्बल होगा तो ही हारना पड़ेगा अन्यथा सत्साहस जुटा लेने पर श्रेष्ठ स्थापना से सफलता ही मिलती है । घर में बच्चे जाग रहे हों, बुड्ढे खाँस रहे हों, तो भी मजबूत चोर के पाँव काँपने लगते हैं और वह उल्टे पैरों लौट जाता है । ऐसा ही तब होता है, जब दुष्प्रवृत्तियों की तुलना में सत्प्रवृत्तियों को साहसपूर्वक अड़ने और लड़ने के लिए खड़ा कर दिया जाता है ।

छोटी बुरी आदतों से लड़ाई आरम्भ करनी चाहिए और उनसे सरलतापूर्वक सफलता प्राप्त करते हुए क्रमशः अधिक कड़ी, अधिक पुरानी और अधिक प्रिय बुरी आदतों से लड़ाई आरम्भ करनी चाहिए । छोटी सफलताएँ प्राप्त करते चलने से साहस एवं आत्म-विश्वास बढ़ता है और इस आधार पर अवांछनीयताओं के उन्मूलन एवं सत्प्रवृत्तियों के संस्थापन में सफलता मिलती चली जाती है । यह प्रयास देर जक जारी रहना चाहिए । थोड़ी-सी सफलता से निश्चिन्त नहीं हो जाना चाहिए । लाखों योनियों के कुसंस्कार विचार मात्र से समाप्त नहीं हो जाते । वे मार खाकर अन्तर्मन के किसी कोने में जा छिपते हैं और अवसर पाते ही छापामारों की तरह घातक आक्रमण करते हैं । इनसे सतत सजग रहने की आवश्यकता है । यह सतर्कता अनवरत रूप से आजन्म बरती जानी चाहिए कि कहीं बेखबर पाकर दुर्बुद्धि और दुष्प्रवृत्ति की घातें फिर न पनपने लगें ।

आत्म-निर्माण का तीसरा चरण इस प्रयोजन के लिए है कि श्रेष्ठ सज्जनों में गुण, कर्म, स्वभाव की जो विशेषताएँ होनी चाहिए उनकी पूर्ति के लिए योजनाबद्ध प्रयत्न किया जाय, सद्गुणों की प्रतिष्ठापना भी तो होनी चाहिए । कटीली झाड़ियाँ उखाड़कर साफ कर दी गयीं वह तो आधा ही प्रयोग हुआ । आधी बात तब बनेगी, जब उस भूमि पर सुरम्य उद्यान लगाया जाय और उसे पाल-पोस कर बड़ा किया जाय । बीमारी दूर हो गई यह आधा काम है । दुर्बल स्वाध्याय को बलिष्ठता की स्थिति तक ले जाने के लिए जिस परिष्कृत आहार-विहार को जुटाया जाना आवश्यक है, उसकी ओर भी तो ध्यान देने और प्रयत्न करने में लगना चाहिए ।

आलस्य दूर करने की प्रतिक्रिया श्रमशीलता में समुचित रुचि एवं तत्परता के रूप में दृष्टिगोचर होनी चाहिए । प्रमाद से पिण्ड छूटा हो, लापरवाही और गैर-जिम्मेदारी हटा दी हो, तो उसके स्थान पर जागरूकता, तन्मयता, नियमितता, व्यवस्था जैसे मनोयोग का परिचय मिलना चाहिए । मधुरता, शिष्टता, सज्जनता, दूरदर्शिता, विवेकशीलता, ईमानदारी, संयमशीलता, मितव्ययता, सादगी, सहृदयता, सेवा भावना जैसी सत्प्रवृत्तियों में ही मानवीय गरिमा परिलक्षित होती है । उन्हें अपनाने स्वभाव का अंग बनाने के लिए सतत प्रयत्नशील रहा जाना चाहिए । आमतौर से लोग धन उपार्जन को प्रमुखता देते हैं और उसी के लिए अपना श्रम, समय, मनोयोग लगाये रहते हैं । उत्कर्ष के इच्छुकों को सम्पत्ति से भी अधिक सद्गुणों की विभूतियों को महत्त्व देना चाहिए । परिष्कृत व्यक्तित्व ही वह कल्पवृक्ष है, जिस तक पहुँचने वाला भौतिक और आत्मिक दोनों ही क्षेत्रों में सफलता प्राप्त करता है । धन उपार्जन में जितनी तत्परता बरतनी पड़ती है, उससे कम नहीं वरन् कुछ अधिक ही तत्परता सद्गुणों को, स्वभाव का अंग बनाने में बरतनी पड़ती है । धन तो उत्तराधिकार में, स्वल्प श्रम से, संयोगवश अथवा ऋण अनुदान से भी मिल सकता है, पर सद्गुणों की सम्पदा एकत्रित करने में तो तिल-तिल करके अपने ही प्रयत्न जुटाने पड़ते हैं । यह पूर्णतया अपने ही अध्यवसाय का प्रतिफल है । उत्कृष्ट चिन्तन और आदर्श कर्तृत्व अपनाये रहने पर यह सम्पदा क्रमिक गति से संचित होती है । चंचल बुद्धि वाले नहीं संकल्पनिष्ठ सतत प्रयत्नशील और धैर्यवान् व्यक्ति ही इस वैभव का उपार्जन कर सकने में समर्थ होते हैं । चक्की के दोनों पाटों के बीच से गुजरने वाला अन्न ही आटा बनता है । सद्विचार और सत्कर्म के दबाव से व्यक्तित्व का सुसंस्कृत बन सकना सम्भव होता है । अपना लक्ष्य यदि आदर्श मनुष्य बनना हो तो इसके लिए आवश्यक उपकरण अलंकार जुटाये जाते रहेंगे । इन्हीं प्रयत्नों का परिणाम समयानुसार आत्म-निर्माण के रूप में परिलक्षित होता दिखाई देगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्मोत्कर्ष की अन्तिम सीढ़ी आत्म विकास है । इसका अर्थ होता है—आत्मभाव की परिधि का अधिकाधिक विस्तृत क्षेत्र में विकसित होना । जिनका स्वार्थ अपने शरीर और मन की सुविधा तक सीमित है, उन्हें नर-कीटक कहा जाता है । जो इससे कुछ आगे बढ़कर ममता को परिवार के लोगों तक सीमाबद्ध किए हुए हैं वे नर पशु की श्रेणी में आते हैं । आमतौर से सामान्य मनुष्य इन्हीं वर्गों में गिने जाने योग्य चिन्तन एवं क्रिया-कलाप अपनाये रहते हैं । उनका स्वार्थ इस परिधि से आगे नहीं बढ़ता । जीवन सम्पदा के इसी कुचक्र में भ्रमण करते हुए कोल्हू के बैल जैसी जिन्दगी पूरी कर लेते हैं । मनुष्य का पद बड़ा है । अन्य प्राणियों की तुलना में ईश्वर ने उसे अनेकों असाधारण क्षमताएँ दिव्य धरोहर की तरह दी हैं और अपेक्षा की है कि उन्हें इस संसार को समुन्नत, सुसंस्कृत बनाने के लिए प्रयुक्त किया जाय । मानवीय कलेवर ईश्वर की संसार की सबसे श्रेष्ठ कलाकृति है । इसका सृजन उच्च उद्देश्यों की पूर्ति के लिए हुआ है । इस निर्माण के पीछे जो श्रम लगा है, उसमें स्रष्टा का यह उददेश्य है कि मनुष्य उसके सहयोगी की तरह सृष्टि की सुव्यवस्था में संलग्न रहकर उसका हाथ बँटाये । यदि इस जीवन रहस्य को भुला दिया जाय और पेट प्रजनन के लिए लोभ-मोह के लिए, वासना-तृष्णा के लिए ही इस दिव्य अनुदान को समाप्त कर दिया जाय तो समझना चाहिए कि पिछड़ी योनियों के तुल्य ही बने रहा गया और जीवन का उद्देश्य नष्ट हो गया ।

सृष्टि के मुकुटमणि कहे जाने वाले मनुष्य का गौरव इसमें है कि उसकी चेतना व्यापक क्षेत्र में सुविस्तृत हो । शरीर और परिवार का उचित निर्वाह करते हुए भी श्रम, समय, चिन्तन और साधनों का इतना अंश बच रहता है कि उससे परमार्थ प्रयोजनों की भूमिका निभाई जाती रह सके । आत्मीयता का विस्तार होने से शरीर और कुटुम्बियों की ही तरह सभी प्राणी अपनेपन की भाव श्रृंखला में बँध जाते हैं और सबका दुःख-सुख अपना दुःख सुख बन जाता है । वसुधैव कुटुम्बकम की, विश्व परिवार की, आत्मवत् सर्वभूतेषु की भावनाएँ बलवती होने पर मनुष्य का स्वार्थ परमार्थ में परिणत हो जाता है । जो अपने लिए चाहा जाता था वही सबको मिल सके ऐसी आकांक्षा जगती है । जो व्यवहार, सहयोग दूसरों से अपने लिए पाने का मन रहता है, उसी को स्वयं दूसरों के लिए देने की भावना उमगती रहती है । लोकमंगल की, जन कल्याण की, सेवा-साधना की इच्छाएँ जगती हैं और योजनाएँ बनती हैं । ऐसी स्थिति में पहुँचा हुआ व्यक्ति ससीम न रहकर असीम बन जाता है और उसका व्यक्तित्व व्यापक परिधि में सत्प्रवृत्तियों का सम्वर्धक बन जाता है । ऐसे व्यक्ति अपनी व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं को पैरों तले कुचल कर फेंक देते हैं । अपनी आवश्यकताओं को घटाते हैं और निर्वाह की न्यूनतम आवश्यकताएँ पूरी करने के उपरान्त अपनी समस्त क्षमताओं और सम्पदाओं को विश्व-कल्याण के सत्प्रयोजनों में लगाये रहते हैं । देश, धर्म, समाज, संस्कृति के उत्कर्ष के लिए किए गए प्रयत्नों में उन्हें इतना आनन्द आता है, जितना स्वार्थपरायण व्यक्तियों को विपुल धन प्राप्त करने पर भी नहीं मिल सकता । संसार के इतिहास में, आकाश में महामानवों के जो उज्ज्वल चरित्र झिलमिला रहे हैं, वे सभी इसी आत्मविकास के मार्ग का अवलम्बन करते हुए महानता के उच्च शिखर पर पहुँचे थे । सन्त, सुधारक, शहीद यह तीनों सामाजिक जीवन के सर्वोच्च सम्मान हैं । महात्मा, देवात्मा और परमात्मा यह तीन आध्यात्म जीवन की समग्र प्रगति के परिचायक स्तर हैं । इन्हें प्राप्त करने के लिए आत्म-विकास के सिवाय और कोई मार्ग नहीं । व्यक्तिवाद को समूहवाद में विकसित कर लेना विश्व शान्ति का आधार माना गया है । अपनेपन को हम जितने व्यापक क्षेत्र में विस्तृत कर लेते हैं, उतने ही विश्वासपूर्वक यह कह सकते हैं कि मनुष्य जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने का सुनिश्चित मार्ग मिल गया ।

देवाधिदेव आत्मदेव की साधना

देवत्व और असुरत्व इस संसार में सर्वत्र विद्यमान है । वह मानवीय अन्तरंग में भी मौजूद है । दोनों में से जो जिसे वरण करता है, वह उसे प्राप्त कर लेता है । संसार में दुष्ट अनाचारी तत्व भरे पड़े हैं यदि उन्हें ढूँढा जाय, सम्पर्क बनाया और अपनाया जाय, तो सहज ही उनके भीतर-बाहर असुरता का ही बाहुल्य होगा । अभिरुचि का आकर्षण सब दिशाओं से अपने स्तर के व्यक्ति तथा साधन इकट्ठे कर लेता है और जिस रंग में मन रँगा था देखते-देखते उसी तरह का वातावरण पूरी तरह घिर जाता है । यही बात असुरता के सम्बन्ध में लागू होती है, यही देवत्व के सम्बन्ध में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी । आसुरी प्रकृति के मनुष्य को साधन, सहयोगियों तथा परिस्थितियों, सफलताओं की निरन्तर उपलब्धि होती जाती है और आकांक्षा के अनुरूप असुरता के सुदृढ़ दुर्ग में दैवी आकांक्षाएँ प्रदीप्त हों, उसी दिशा में कदम बढ़ रहे हों, तो सन्त-सज्जनों का सम्पर्क-सत्कर्म करने का वातावरण, सन्मार्ग प्रेरक साधन सहज ही बनने लगते हैं और जीवन-क्रम में देवत्व का सागर हिलोरें लेने लगता है ।

बाह्य जगत में संव्याप्त सत और तम देवत्व और असुरत्व की तरह अन्तरंग में भी यह दोनों प्रवृत्तियाँ यथास्थान विद्यमान रहती हैं । इनमें से जिसे अपनाया बढ़ाया जाय वही पनपती चली जाती है और विचारणा तथा क्रियाशीलता में वही आस्था सक्रिय बनकर झाँकने लगती है । आसुरी अभिरुचि वाले व्यक्ति उसी स्तर के विचारों में डूबे रहते हैं, जैसा सोचते हैं वैसे ही उपाय सूझते हैं—साधन ढूँढ़ते हैं और प्रयास करते हैं । फलस्वरूप जीवनक्रम में उसी दिशा चल पड़ता है । अन्तरंग में बोया हुआ आकांक्षाओं का बीज कुछ ही समय में विशाल जीवन वृक्ष बनकर खड़ा हो जाता है । यदि आस्थाएँ सतोगुणी हों, आकांक्षाएँ देव स्तर की हों तो स्वभावतः मन और बुद्धि का प्रवाह उसी ओर बहेगा । बूँद-बूँद से घट भरने की तरह सत् चिन्तन और सत्कर्मों की सम्पदा मनुष्य को स्वर्गीय विभूतियों से सुसज्जित कर देती है और क्रमशः व्यक्तित्व में देव मानव के अधिक स्पष्ट दर्शन होते चले जाते हैं ।

देवाधिदेव परब्रह्म को अद्वैत तत्व विज्ञान ने आत्मदेव के रूप में देखा है । 'सोऽहम्, शिवोऽहम्, तत्वमसि, अयमात्मा ब्रह्म' जैसे सूत्रों में आत्मा और परमात्मा की अभिन्नता का प्रतिपादन किया गया है । जीव स्थिति तो तभी तक है, जब तक मल आवरण, विक्षेप और कषाय कल्मष अन्तःकरण पर चढ़े हुए हैं । इन विकारों का शोधन हो जाने पर तो आत्मा निःसन्देह परमात्मा ही है । तत्वदर्शी सदा से कहते रहे हैं कि ईश्वरीय समस्त महत्ताएँ नर में बीज रूप से विद्यमान हैं, यदि उन्हें विकसित किया जा सके तो नर में नारायण की झाँकी तत्काल देखी जा सकती है । साधना का एकमात्र प्रयोजन आत्मशोधन है । अपनी शारीरिक, मानसिक और भावनात्मक मलीनताओं को शुद्ध करने के लिए ही तपश्चर्या उपासना की जाती है । भौतिक विज्ञानी भी यही मानते हैं कि ब्रह्माण्ड की विशालता और परमाणु-जीवाणुपरक सत्ता उन समस्त शक्तियों और हलचलों की प्रतिलिपि है, जो इस विशाल ब्रह्माण्ड में संव्याप्त है । काय कलेवर एक प्रकार से छोटा ब्रह्माण्ड ही है । यों वह नर कीटकों का घृणित घोंसला भर दीखता है, पर यदि उसे सुव्यवस्थित और परिष्कृत बनाया जा सके, तो शरीर भूलोक का, मन भुवः लोक का और अन्तरात्मा स्वःलोक का प्रतिनिधित्व करता प्रतीत होगा । तीनों लोकों की त्रिविध सम्पदाएँ अपने भीतर सार रूप से कूट-कूटकर भरी हुई हैं । जीवन का प्रबलतम पुरुषार्थ उस अप्रकट का प्रकटीकरण करना ही है । उसी को साधना तपस्या आदि के नाम से पुकारते हैं ।

वेदान्त प्रतिपादित आत्म-ब्रह्म के तत्व-दर्शन का साधना शास्त्र में आत्मदेव के माहात्म्य, विस्तार एवं साधन विधान पर विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है । शरीर और मन के किन-किन अंग-प्रत्यंगों में कौन-कौन से देवता नदी, पर्वत, सागर, लोक, तत्व, तीर्थ, शक्तिपीठ आदि विद्यमान हैं, इसकी चर्चा, भली प्रकार की गई है और बताया गया है कि जो कुछ बहिरंग जगत में पाया जाता है, उसकी बीज सत्ता अन्तरंग में मौजूद है । अस्तु, काय कलेवर को तुच्छ नहीं समझा जाना चाहिए वरन् उसमें श्रेष्ठतम सत्ता की झाँकी की जानी चाहिए । भौतिक सम्पदा का अहंकार तो हेय है, पर आत्मदेव का गौरव हर किसी को अनुभव करना चाहिए और आत्म-गौरव की रक्षा करने वाली, आत्म-गरिमा को ज्योतिर्मय करने वाली रीति-नीति अपनानी चाहिए ।

आत्म देव की साधना, उपासना के विधि-विधानों का आध्यात्म विज्ञान के अन्तर्गत सुविस्तृत उल्लेख है । निराकार साधना में अपने कण-कण को नील वर्ण प्रभाज्योति से ज्योतिर्मय देखने का अभ्यास किया जाता है । आकाश में आत्म-सत्ता तनिक-सी नील आभा लिए हुए सूर्य के समान प्रकाशवान है और उसकी दिव्य एवं प्रखर किरणें शरीर के रोम-रोम में प्रवेश करके बलिष्ठता बढ़ा रही हैं, मन में प्रवेश करके मनस्विता को प्रखर कर रही हैं । अन्तरात्मा के भाव संस्थान (हृदय) में प्रवेश करके आत्मशक्ति को ज्वलन्त बना रही हैं । अपना सब कुछ ज्योतिर्मय हो रहा है । प्रकाश के सागर में जल मत्स्य की तरह स्वच्छन्द विचरण किया जा रहा है ।

प्रकाश ध्यान का अभ्यास करने के लिए आरम्भ में आँख में दीपक की नील वर्ण शुभ ज्योति की स्थापना की जाती है और उस पर त्राटक की तरह पलक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खोलते-बन्द करते हुए ज्योति धारणा का अभ्यास किया जाता है । पीछे यह प्रकाश ध्यान बिना किसी दीपक आदि के स्वतः ही दृश्यमान होने लगता है । हल्का नील वर्ण शान्ति एवं सात्विकता का प्रतीक है । राम, कृष्ण आदि भगवान के सभी अवतार नील कमल की आभा वाले शरीर धारण किए हुए हैं । दिव्यात्माओं का तेजोवलय भी ऐसा ही नीलिमा युक्त होता है । अस्तु, आत्म-ज्योति की ज्योति अवतरण साधना में नील झलक युक्त प्रकाश को ही ध्यान चेतना में प्रतिष्ठापित किया जाता है । दीपक पर त्राटक करते समय उस पर नील आवरण चढ़ा लेते हैं ताकि प्रत्यक्ष प्रकाश भी उसी आभा से युक्त दिखाई पड़े ।

साकार आत्म साधना में अपने शरीर का चित्र ही देव स्थान पर प्रतिष्ठापित किया जाता है । उसी का पूजन, वन्दन और साधन करते हैं । तान्त्रिक विधान के अनुसार 'छाया पुरुष' की सिद्धि में अपने ही सूक्ष्म शरीर की सत्ता को प्रखर बनाया जाता है और वह उस साधना क्रम के कारण इतनी सत्तावान हो जाती है कि एक सामर्थ्यवान् अदृश्य मित्र की तरह अभीष्ट सहायता करते रहने के लिए प्रस्तुत रहे । छाया पुरुष के द्वारा दूरवर्ती समाचार मालूम करना, वस्तुएँ मँगाना, कामों में सहायता करना जैसे प्रयोजन सिद्ध किए जाते हैं । विक्रमादित्य के पास 'पाँच वीर वैताल'' बताये जाते हैं, अलादीन के चिराग के साथ सहायक जिन्नों के सहयोग की किम्वदन्ती प्रचलित है । इस स्तर के कार्य छाया पुरुष कर सकता है । मनुष्य काया में अन्नमय कोष, प्राणमयकोश, मनोमयकोष, विज्ञानमयकोष, आनन्दमयकोष यह पाँच कोश आवरण हैं । इन पाँचों को ही स्वतन्त्र चेतना के रूप में विकसित किया जा सकता है । पाँच देव यही हैं । इन्हें जो जाग्रत कर सके वह पाँच सशक्त सहायकों की महत्त्वपूर्ण सहायता का लाभ निरन्तर उठाता रह सकता है । यह सभी प्रकारान्तर से छाया पुरुष ही कहे जायेंगे । यों सच बात तो यह है कि प्रत्येक वरदानी देवता अपनी स्वनिर्मित मानस सन्तान ही है । उसमें उतना ही बल रहता है, जितनी अपनी निष्ठा प्रखर होती है । श्रद्धा विश्वास की प्रतिक्रिया का नाम ही देव अनुकम्पा है । देव अनुग्रह से जो कुछ प्राप्त किया जाता है तत्वतः वह आत्म-देवता का ही वरदान होता है । अपनी गरिमा से अपरिचित व्यक्ति को बहिरंग देवता की संचरना करके एक मनोवैज्ञानिक लाभ ही देव साधना द्वारा मिलता है, वस्तुतः उसे अपने लिए अपना अनुदान ही समझा जाना चाहिए ।

साकार आत्म साधना के लिए दर्पण का उपयोग किया जाता है । बड़ा दर्पण सामने रखकर उसमें अपना आधा या सम्पूर्ण शरीर ध्यानपूर्वक देखते हैं और उसे परिष्कृत स्तर का देव मानकर उसका पंचोपचार पूजन, ध्यान, वन्दन, स्तवन करते हैं । साथ ही यह आस्था जमाते हैं कि इस काय कलेवर में निवास करने वाली 'दिव्य ज्योति' यदि आत्म भाव की भूमिका में जाग्रत हो उठे तो निश्चित रूप से देव सत्ता सम्पन्न हो सकती है । विश्ववन्द्य महामानवों की पंक्ति में बैठने का उसे अवसर मिल सकता है । मल आवरणों के कषाय-कल्मषों से उसे मुक्ति मिलने वाली है, उसका परिष्कार परिशोधन अब सम्पन्न होने ही वाला है । यह देव अपने अवतरण का पुण्य प्रयोजन पूरा करके ही रहेगा । इस भावना के साथ की गई आत्म देव उपासना अपना दिव्य प्रभाव तत्काल ही दिखाना आरम्भ कर देती है । अपने काय कलेवर में परमेश्वर की सत्ता और महत्ता की अनुभूति जितनी गहरी होगी उतनी ही उत्कृष्ट रीति-नीति अपनाने की भावना उमड़ेगी । कहना न होगा कि अन्तःकरण में उत्कृष्टता का उभार ही नर को नारायण बनाया करता है ।

दर्पण के माध्यम से आत्म परिष्कार की साधना

पशु-पक्षियों और कीट-पतंगों की तुलना में अशिक्षित एवं अनगढ़ व्यक्ति भी कहीं अधिक सांसारिक जानकारियाँ संग्रह किए होता है । पर वे होतीं सब बाहरी क्षेत्र की ही हैं । अपने सम्बन्ध में प्रायः सभी महत्त्वपूर्ण जानकारियों से वह अनभिज्ञ ही रहता है । कुछ जानता भी है तो वह मात्र प्रयोगात्मक ही होता है । वस्तुस्थिति समझ सकने योग्य गहराई में प्रवेश पाना प्रायः उससे बन ही नहीं पड़ता । जो आँखें केवल सामने की हलचलों स्थापनाओं को ही देख पाती हैं वे उलट कर भीतर कैसे देखें ? गह्वर में कैसे प्रवेश करें ? पर्दे के पीछे छिपी हुई यथार्थताओं को कैसे समझें ।

त्वचा के भीतर किस अंग अवयव में क्या गड़बड़ है उसे जानने के लिए टटोलना भर पर्याप्त नहीं होता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके लिए कितने ही पैथोलॉजीकल टेस्ट कराने पड़ते हैं । एक्सरेज तथा थर्मोग्राफी के माध्यम से अन्दर की स्थिति का मापन कर परिस्थितियों को समझा जाता है । यही बात मानव जीवन के अन्तराल पर भी लागू होती है । दूसरों की समीक्षा में प्रवीण अपनी निजी जाँच-पड़ताल में व्यक्ति उतना ही असफल रहता है । समझा जाता है कि संसार भर में बुद्धि का परिमाण डेढ़ है । इसमें से एक अपने हिस्से में आयी है और बाकी आधी से संसार के सब लोग मिल बाँट कर काम चलाते हैं । यही बात दोष दुर्गुणों के सम्बन्ध में भी है । दो-तिहाई दोष दूसरों में है और अपने में तो वे नगण्य सी मात्रा में हैं । इसी भ्रम में सारी दुनिया आकण्ठ मग्न है । अपने दोष और दूसरों के गुण तो किसी की समझ में आते ही नहीं ।

किन्तु जब तक वस्तुस्थिति न समझी जाय तब तक अवगति से उबरना और प्रगति पथ पर आगे बढ़ चलना सम्भव कैसे हो ? सुधार परिष्कार यदि अभीष्ट हो तो उसके लिए आत्म-समीक्षा नितान्त आवश्यक है । यह बन पड़े तो ही परिमार्जन बन पड़े और उसी स्थिति में अभ्युदय के लिए आवश्यक सरंजाम जुटे ।

इस प्रयोजन के लिए साधना क्षेत्र का एक सरल उपाय है—दर्पण का अवलम्बन । इसके लिए, एक बड़े दर्पण की आवश्यकता पड़ती है । उसके सामने ध्यान मुद्रा में बैठकर वक्ष स्थल से ऊपर का अपना शरीर ध्यानपूर्वक देखा जाना ही आत्म-परिष्कार की आत्मबोध की प्रत्यक्ष विद्या है । अधिक बड़े साइज का दर्पण उपलब्ध हो तो पूरे शरीर को भी देखा जा सकता है । पर अपनी छवि लगभग उतनी ही बड़ी दीखनी चाहिए जितनी कि वह माप में होती है । छोटे दर्पण को दूर रखकर यों पूरा शरीर भी देखा जा सकता है पर उसमें आकृति बहुत छोटी हो जायेगी, इससे काम नहीं चलेगा । इसीलिए सामान्यतया ऐसा ही करना पड़ता है कि डेढ़ फुट ऊँचा दर्पण किसी छोटी मेज पर इस तरह रख लिया जाय कि वह सामने लगभग ढाई फुट की दूरी पर रहे । इस दर्पण में अपने स्वरूप को देखना चाहिए और उसका दार्शनिक विवेचन विश्लेषण गम्भीर मनःस्थिति में करना चाहिए ।

वेदान्त के स्वर्णिम सूत्र आत्मसत्ता का निरूपण करते हुए कहते हैं तत्व भास—अयमात्मा ब्रह्म—प्रज्ञानं ब्रह्म—सोऽहमशिवोहम् सच्चिदानन्दो हम् । इन विवेचनों में आत्मसत्ता को ब्रह्मसत्ता का एक अविनाशी अंश एवं घटक बताया गया है । वस्तुतः वह वैसा ही है भी । किन्तु भ्रान्तियों और मलीनताओं के कीचड़ में फँस कर उसी तरह दयनीय बन गया जिस प्रकार भारी दल-दल में गरदन तक फँसा हुआ हाथी अपने उद्धार का कोई रास्ता न पाकर हृदय विदारक करुण क्रन्दन करता है । प्रायः हर दुनियादार मनुष्य की यही स्थिति है । बाहर से देखने में कोई साधन सम्पन्न, वैभववान या प्रतिष्ठित सत्ताधारी भी हो सकता है पर भीतर उसे कितने उद्वेग, आक्रोशों का सामना करना पड़ रहा है इसका सही चित्रण सम्भव हो सके तो प्रतीत होगा कि अभावग्रस्त ही नहीं सम्पत्तिवान भी दयनीय मनः स्थिति में अगणित व्यथा वेदनाएँ सहते हुए निकृष्ट स्तर का जीवन-यापन कर रहे हैं । बाहर सम्पन्नता—भीतर विपन्नता यह कैसी विचित्र विडम्बना है, पर पायी सर्वत्र जाती है । प्रायः हर दुनियादार व्यक्ति इन्हीं भवबन्धनों से बँधा हुआ—दुर्भावनाओं और दुष्प्रवृत्तियों का सताया हुआ रुदन क्रन्दन करता हुआ संक्षोभों की आग में जलता हुआ जी रहा है ।

दर्पण में अपना स्वरूप देखते हुए आत्मबोध के साधक को अपनी इसी दयनीय स्थिति पर करुणा व्यक्त करनी चाहिए । ईश्वर का अविनाशी अंश इस धरती पर ईश्वरीय प्रयोजन पूरे करने के लिए—पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए आया था । पर वह सब तो एक प्रकार से सर्वथा विस्मरण ही हो गया । पैर उस जंजाल में फँस गया जिसे आटे के लोभ में गला फँसाने वाली मछली—पिंजड़े में धँसे चूहे अथवा जाल में तड़पने वाले पक्षी के समतुल्य दुर्दशाग्रस्त स्थिति कहा जा सकता है । यह विडम्बना इतनी दुर्भाग्यपूर्ण है कि अपनी स्थिति पर आठ-आठ आँसू बहाए जा सकते हैं ।

परमात्मा ने मनुष्य को इतनी सुविधाएँ प्रदान की हैं जितनी सृष्टि के किसी भी प्राणी को उपलब्ध नहीं । सोचना, बोलना, लिखना, पढ़ना, शिक्षा, शासन, वाहन, चिकित्सा, परिवार, उत्पादन, पाकविद्या, वस्त्र, अग्नि, औजार आदि के वे साधन जो गए गुजरे मनुष्यों को भी प्राप्त हैं अन्य किसी प्राणी को कहाँ मिले हैं ? यदि यह सब विलासिता के लिए ही दिया गया होता तो सृष्टि के कई कोटि प्राणी भगवान से शिकायत करते कि जबकि वह सभी का पिता है—सभी उसके समान प्रियपात्र पुत्र हैं तो अकेले मनुष्य को ही वे साधन क्यों दिए ? अन्यों को क्यों वंचित रखा गया ? न्याय और निष्पक्षता का तकाजा भी यही था । केवल मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को ही जब इतना वैभव अनुदान प्रदान किया गया है तो उसके पीछे निश्चित रूप से कुछ विशेष कारण होना चाहिए । वह कारण यही है कि मनुष्य भगवान के सहायक—मन्त्री, मिनिस्टर, प्रशासक, शिल्पी, माली के रूप में उस विश्व वसुधा के उद्यान को अधिकाधिक सुरम्य, सुविकसित एवं समुन्नत बनाने में भरपूर योगदान करे । उसकी जीवन यात्रा इसीलिए सुलभ और सुविधाजनक बनाई गई है कि शरीर यात्रा पर न्यूनतम शक्ति खर्च करके अधिक मात्रा में अपना योगदान प्रस्तुत कर सकें । मिनिस्टरों एवं अफसरों को अधिक वेतन, अच्छे बंगले, मोटर, नौकर आदि इसीलिए दिए जाते हैं कि वे अधिक मात्रा में अधिक अच्छी तरह, अधिक ऊँचे स्तर का काम कर सकें । मनुष्य को जो कुछ अन्य प्राणियों से अतिरिक्त मिला है वह इसी प्रयोजन के लिए है । यदि वह कर्तव्यविमुख होकर पशु-प्रवृत्तियों में फँसकर स्वार्थ भरा संकीर्ण जीवनक्रम अपनाता है तो समझना चाहिए कि ईश्वर के उस आधार को ही नष्ट करता है जिसके लिए उसका सृजन किया गया था । ईश्वर का अंश अविनाशी राजकुमार ही वस्तुतः मानवीय जीवात्मा है । उसे अपने कर्तव्य और लक्ष्य का ध्यान रखना ही चाहिए ।

शास्त्रीय मान्यता के अनुसार चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने के उपरान्त एक बार ही मनुष्य जन्म मिलता है । वह चाहे तो ईश्वरीय निर्देश और आध्यात्म कर्तव्य का पालन करते हुए पूर्णता के लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है—अपूर्णता से मुक्त होकर पूर्णता का वरण कर सकता है । यदि वैसा न करके पशुता एवं पैशाचिकता की दुष्प्रवृत्तियों में उलझ पड़े तो उसे फिर चौरासी लाख योनियों में भ्रमण करने का दीर्घकालीन दुसह दुःख सहना पड़ेगा । औसत एक वर्ष की एक योनि मानी जाय तो चौरासी लाख वर्ष असीम कष्ट सहते हुए केवल एक बार पचास-चालीस वर्ष के लिए अनिश्चित अवधि के लिए मनुष्य शरीर मिलता है । यदि कोई चाहे तो उस अवधि का सुदुपयोग करके भव बन्धनों के कुचक्र से निकल सकता है अन्यथा फिर उतनी ही लम्बी अवधि तक अपने सामने कोल्हू में पेले जाने और चक्की में पीसे जाने की स्थिति आँखों के सामने खड़ी है ।

दर्पण के सामने बैठकर—अपनी छवि शीशे में देखते हुए—आत्म विश्लेषण किया जाता है । ईश्वर का अविनाशी राजकुमार—विश्व में सुरम्य परिस्थितियाँ उत्पन्न करने के लिए नियुक्त किया गया विशेष प्रतिनिधि—पूर्णता का लक्ष्य प्राप्त कर सकने के सुअवसर से सम्पन्न सौभाग्यशाली—यह है जो दर्पण में बैठा हुआ है । इसके काय कलेवर में ईश्वर की समस्त शक्तियाँ और विभूतियाँ भरी पड़ी हैं । इसका एक-एक कण ऐसी विशेषताओं से सँजोया गया है कि चाहे तो सहज ही महामानवों की—देवदूतों की—पंक्ति में बैठ सकता है । सूक्ष्म रूप में मानव शरीर में समस्त देवताओं की, ऋषियों की दिव्यसत्ता विद्यमान रहती है, उसे थोड़ा भी पोषण मिले तो यह बीज विशालकाय वट वृक्ष में परिणत होकर अपने को धन्य और विश्व मानव को सुख सम्पन्न बना सकता है । इसमें गाँधी, बुद्ध, ईसा, राम, कृष्ण बनने की परिपूर्ण सम्भावनाएँ विद्यमान हैं ।

इतना सब कुछ होते हुए भी अवांछनीय गतिविधियाँ अपनाने के कारण यह दर्पण में बैठा हुआ महामानव किसी दयनीय दुर्दशा से ग्रसित हो रहा है । यह कैसे आश्चर्य और दुर्भाग्य की बात है । लोभ और मोह के—वासना और तृष्णा के—स्वार्थ और संकीर्णता के बन्धनों ने इसे किस बुरी तरह जकड़ रखा है । जीव और जननेन्द्रिय का गुलाम बनकर इसने अपने शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य को किस बुरी तरह चौपट कर डाला । परिवार के उचित उत्तरदायित्वों को निभाना और परिजनों को सुसंस्कृत बनाना तो कर्तव्य था, पर उनके लिए ही सब कुछ करना—उन्हीं की इच्छानुकूल चलना यह कहाँ की बुद्धिमानी थी । केवल चार-छः व्यक्तियों के इस छोटे समुदाय के लिए ही अपनी समस्त क्षमताओं को नियोजित कर देना और आत्म-कल्याण के—देश, धर्म, समाज, संस्कृति के समस्त कर्तव्यों से उसी निमित्त मुख मोड़ लेना यह कहाँ की समझदारी थी । कुत्साओं और कुण्ठाओं से ग्रसित जीवन का क्रम और स्वरूप बना लेने की उसी की पूरी जिम्मेदारी है जो इस दर्पण में बैठा है । मकड़ी का जाला उसी ने बुना है और उसमें स्वयं ही फँसा है । वह चाहे तो जाले को समेटकर पेट में फिर वापस भर सकता है और स्वच्छन्द विचरण की—जीवन मुक्ति की—स्थिति प्राप्त कर सकने में पूर्ण सफल हो सकता है ।

दर्पण में दृष्टिगोचर प्रतिबिम्ब के सहारे आत्म विश्लेषण की—अधिक गहराई में प्रवेश किया जा सकता है और पतन से ऊँचे उठकर उत्थान के उच्च शिखर पर पहुँच सकने का पथ निर्धारण किया जा सकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । भविष्य के लिए ऐसी सुसन्तुलित गतिविधियों का निर्धारण किया जा सकता है जिसमें भौतिक और आत्मिक उत्तरदायित्वों के निर्वाह की सुसन्तुलित गुंजाइश बनी रहे । शरीर निर्वाह और परिवार उत्तरदायित्व निभाये जायें सो ठीक है, पर इससे कम महत्त्व आत्म-कल्याण के लिए जीवनोद्देश्य की पूर्ति का भी नहीं है । उसके लिए भी समय, श्रम, बुद्धि, प्रतिभा, धन, चिन्तन एवं कर्तृत्व जैसी अपनी सम्पदाओं का एक बड़ा अंश लगना ही चाहिए । सब कुछ भौतिक जीवन ही नहीं है—समस्त विभूतियों को उसी पर निछावर नहीं कर दिया जाना चाहिए । कुछ आत्मा और परमात्मा द्वारा निर्देशित महान निर्देशों की पूर्ति के लिए भी लगाया जाना चाहिए । यह विभाजन यदि न हो सका तो इस दुर्भाग्यपूर्ण क्रिया-कलाप को अपनाये रहने का परिणाम आज नहीं तो कल अनन्त और पश्चाताप के रूप में ही सामने आयेगा । प्रतिबिम्ब के माध्यम से अपने आपको समझाया जाना चाहिए कि वह उचित-अनुचित का, लाभ हानि का, बुद्धिमत्ता, मूर्खता का अन्तर करना सीखें और समय रहे तो वे गतिविधियाँ अपनाये जिससे शेष रही थोड़ी-सी आयु का सदुपयोग हो सके और अन्धकारमय भविष्य की विभीषिका से बचा जा सके ।

दर्पण एक माध्यम है आत्म बोध का । आमतौर से हम बाह्य जगत में इतने घुले और व्यस्त रहते हैं कि अपने को एक प्रकार से भूले ही बैठे होते हैं । याद तो शरीर और मन की क्षुधा तृष्णा ही रहती है । आत्मा भी कोई होता है—हम भी आत्मा हैं—आत्मा के कुछ अपने स्वार्थ और कर्तव्य भी हैं क्या—यह बात पढ़ी तो कई बार होती है पर उसने तथ्य के रूप में कभी हृदय की गहराई तक प्रवेश नहीं किया होता । यदि आत्मबोध की यथार्थता अन्तःकरण में सजग हुई होती तो निश्चित रूप से भौतिक सुख सुविधाएँ प्राप्त करने की तरह आत्मोत्कर्ष के लिए भी कुछ करने की प्रेरणा उठी होती और उस दिशा में भी कुछ तो बना ही होता ।

यह भ्रम बे-सिर-पैर का है कि उथली पूजा उपासना के छुटपुट कर्मकाण्ड पूरे कर देने मात्र से ईश्वर की प्रसन्नता या आत्म-कल्याण की आवश्यकता पूरी हो सकती है । ईश्वर न खुशामदी है न रिश्वतखोर । उसे स्तोत्र पाठ के वाक् छल से भ्रमाया या पुष्पप्रसाद के लालच से लुभाया नहीं जा सकता है । जीभ का उच्चारण और वस्तुओं की हेराफेरी जैसी बाल क्रीड़ा आत्म-कल्याण की—जीवनोद्देश्य की पूर्ति की—ईश्वर प्राप्ति की आवश्यकता किसी भी प्रकार पूरी नहीं कर सकती । इनका प्रयोजन मात्र इतना ही है जितना कि दर्पण के माध्यम से आत्मबोध स्तर तक पहुँचने का । अकेला दर्पण आत्मबोधन, आत्म दर्शन करा दे यह किसी भी प्रकार सम्भव नहीं । पूजा उपासना के पीछे जो प्रेरणाएँ भरी पड़ी हैं उनसे प्रभावित होकर उपयुक्त चिन्तन और कर्तृत्व अपनाते हुए दिव्य जीवन की रीति-नीति अपनाई जा सके तो ही इन पूजा-परक कर्मकाण्डों का महत्त्व है । आत्मबोध की विचारधाओं से अन्तःकरण को भरने में सहायता करना ही दर्पण का उद्देश्य है । उसी प्रकार पूजा का उपयोग यही है कि वह जीवन निर्माण की प्रेरणाओं को उभारे और उन्हें सक्रिय बनाये । लकीर पीटने जैसी चिह्न पूजा से न तो आत्म कल्याण हो सकता है और न दर्पण का मनुहार करने से आत्मलाभ का प्रयोजन पूरा हो सकता है ।

गीता की उस सूक्ति में ब्रह्मविद्या का सागर भरा हुआ है जिसके अनुसार अपना उद्धार आप ही किया जाता है, आत्मा ही मित्र की और आत्मा ही शत्रु की भूमिका सम्पादित करती है । मायाग्रस्त भवबन्धनों से जकड़ा हुई आत्मा—अपने लिए और समस्त विश्व के लिए महान विपत्ति है । स्वर्गीय दृष्टिकोण और उन्मुक्त चिन्तन की अभ्यस्त आत्मा मूर्तिमान परमेश्वर है, वह स्वयं धन्य बनती है और समस्त विश्व के लिए वरदान सिद्ध होती है । अस्तु, आत्मोद्धार को ही परम पुरुषार्थ माना गया है । दर्पण की साधना इसी का पथ प्रशस्त करने में महत्त्वपूर्ण योगदान करती है, गर्हित गतिविधियाँ और भ्रमग्रसित मान्यताएँ अपनाने के कारण अब तक के जीवन का जिस तरह अपव्यय हुआ उस दुर्भाग्य पर दुःखी होने का अवसर इस साधना से मिलता है । बिना समय गँवाए भूल को सुधार लेने, गतिविधियों के उलट देने की प्रचण्ड प्रेरणा उठती है । इस समुद्र मन्थन से भावी जीवन की रीति-नीति निर्धारण करने पर अनमोल रत्न निकलते हैं और पूर्वाग्रहों को—तिलांजलि देने तथा कथित शुभचिन्तकों के दबाव को अस्वीकार करने की ऐसी दिव्य दृष्टि प्राप्त होती है जिससे परिष्कृत भावी गतिविधियों का नव-निर्माण सरल और सम्भव हो जाता है ।

आत्म बोध की—आत्मविश्लेषण की साधना दर्पण के सहारे की जाती है । इसके लिए प्रायः पैंतालीस मिनट निर्धारित हैं । उनमें आत्म-तत्व से सम्बन्धित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रायः सभी समस्याओं पर प्रकाश पड़ जाता है । आत्मबोध, आत्मनिरीक्षण, आत्मसुधार और आत्मविकास की पृष्ठभूमि क्या हो सकती है ? आस्थाओं तथा आकांक्षाओं में क्या हेर-फेर होना चाहिए ? गतिविधियों, रीति-नीति एवं कार्य पद्धतियों में क्या उलट-पुलट की जानी चाहिए इनकी एक प्रभु प्रेरित सुविस्तृत रूपरेखा सामने आती है । यदि प्रस्तुत दिव्य सन्देशों को अन्तःकरण की गहन भूमिका में प्रतिष्ठापित किया जा सका और उन्हें क्रिया रूप में परिणत करने का प्रबल पराक्रम भरा आत्मबल उपलब्ध हो सका तो समझना चाहिए कि दर्पण के माध्यम से की जाने वाली आत्मबोध की साधना देवी वरदान बनकर सामने आ गई ।

आत्म-दर्शन का दर्पण प्रयोग

भारत में तैंतीस कोटि देवताओं की मान्यता है । जैन, बौद्ध, आदि के अलग-अलग देवता हैं । जन-जातियों, आदिवासियों में अपने-अपने कबीले और गाँव के अलग-अलग देवता हैं । मिस्र, रोम, जापान, चीन के देवताओं की प्रायः इतनी ही बड़ी संख्या है । इसके अतिरिक्त सतियों, पीरों, ऋषियों की मान्यता भी उसी गणना में सम्मिलित होती है । ग्राम देवताओं या कुल देवताओं या क्षेत्र देवताओं की संख्या इनके अतिरिक्त है।

इनमें से किन्हें माना पूजा जाय यह एक विचित्र समस्या है । विशेषतया जब ऐकेश्वरवादी एक ही ब्रह्म को ब्राह्मणों द्वारा अनेक प्रकार से कहा गया बताते हैं और वेदान्त सिद्धान्त के अनुसार अपनी आत्मा ही अपने लिए परमेश्वर है ।

इष्ट धारण देव-पूजन की आवश्यकता इसलिए पड़ती है कि विपत्तियों में अपनी सहायता करें और समृद्धियों सफलताओं को बढ़ावें । अपनी पीठ पर किसी समर्थ की छत्रछाया अपने ऊपर बनी रहे । देव पूजन उपर्युक्त आधारों में से सर्वश्रेष्ठ यह है कि जब प्रतिमाएँ, मूर्तियाँ काल्पनिक ही हैं वास्तविक नहीं तो अपनी आत्म-सत्ता को ही अपने लिए एक स्वतन्त्र देव क्यों न मान लिया जाय प्राचीन काल में विशाल भारत की आबादी तैंतीस कोटि थी, तब देवताओं की मान्यता भी तैंतीस कोटि ही थी । इसका तात्पर्य यह हुआ कि हर व्यक्ति की अपनी एक स्वतन्त्र मान्यता थी । जब सृष्टि के प्राणियों में से किसी का चेहरा किसी से नहीं मिलता और हर पत्ते की कतरन न्यारी है तो अपने लिए एक स्वतन्त्र देवता का अस्तित्व मान लेने में कोई हर्ज नहीं है । वेदान्त दर्शन के अनुसार तो इस मान्यता का समर्थन ही होता है जिसमें सोऽहम्, शिवोऽहम्, सच्चिदानन्दोऽहम्, तत्वमसि, अयमात्मा ब्रह्म के रूप में परमेश्वर की विवेचना की गई है । अन्य सिद्धान्तों की तुलना में यह इसलिए भी अधिक उत्तम है कि इससे किसी दूसरे का पराधीन परावलम्बी नहीं होना पड़ता । अपने स्वाभिमान और स्वावलम्बन की सहज रक्षा हो जाती है । सूफी सन्तों ने भी इस मान्यता का समर्थन किया है । मंसूर जैसे सन्त प्राण संकट उत्पन्न होने पर भी इस सिद्धान्त को यथार्थ बताते रहे । उन्होंने शूली पर चढ़ते समय 'अनल हक' कहा ।

धर्म शास्त्रों में अन्य मन्तव्यों की तरह आत्मा में परमात्मा के दर्शन करने की बात पर कम जोर नहीं दिया है । वेदान्त प्रतिपादन का समर्थन आधुनिक बुद्धिवाद और विस्तारवाद भी करता है ।

जीव को ईश्वर का अंश भी माना गया है । उदाहरण के रूप में लहरों पर चमकने वाले सूर्य को एक ही तत्व का प्रतिबिम्ब दीखने की बात कही जाती है । घटाकाश, मठाकाश का उदाहरण यही सिद्ध करता है । ब्रह्म की व्याख्या विवेचना भी तत्वदर्शियों ने इसी प्रकार की है ।

उपासना की दृष्टि से आत्म दर्शन, या ईश्वर दर्शन का यह स्वरूप सर्वोत्तम प्रतीत होता है कि अपने भीतर के परब्रह्म परमात्मा की झाँकी की जाय । इसके लिए उपचार माध्यम यह है कि एक बड़ा सा दर्पण सुसज्जित रूप में सामने रखा जाय । उसमें जो अपने शरीर की छवि दृष्टिगोचर होती है उसे दिव्य देवालय माना जाय और उसके भीतर निराकार भगवान की स्थापना अपनी प्रखर भावना के आधार पर की जाय ।

मनुष्य में कई क्षमताएँ एवं त्रुटियाँ भी होती हैं । उन्हें उसी प्रकार माना जाय जैसे कि सूर्य, चन्द्र पर कभी-कभी ग्रहण लग जाता है । होली के हुड़दंग में भी कभी-कभी शरीर और कपड़ों पर कीचड़ या रंग पड़ जाते हैं । उस समय वह कुरूप लगता है किन्तु जब साबुन लगाकर उस भद्दे रंग को साफ कर डाला जाता है तो वह पूर्ववत् अपने प्राकृतिक स्वरूप में आ जाता है । दोष-दुर्गुण आत्मा के स्वभाव में नहीं हैं । वह तो सत्, चित्, आनन्द स्वरूप हैं । मलीनताएँ प्रकृति की विकृतियाँ हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मल मूत्र त्यागते समय मनुष्य गन्दा गलीज लगता है । पर जब वह शुद्ध होकर स्वच्छ वस्त्र धारण कर लेता है तो उसके चरण छूने, गले मिलने, गोदी में उठाने से किसी को कोई आपत्ति नहीं होती । यही अवधारणा अपने दोष-दुर्गुणों के सम्बन्ध में रखनी चाहिए । वे पश्चात्ताप, प्रायश्चित एवं रीति-नीति बदल देने पर शुद्ध किए जा सकते हैं । ऐसे तो मन्दिर की दीवारें भी ऋतु प्रभाव से मलीन हो जाती हैं । पुताई, रँगाई के उपरान्त वे पहले की तरह फिर चमकने लगती हैं ।

दर्पण में अपनी आकृति को देखते हुए समझना चाहिए कि यह ईंट-चूने के द्वारा बनी हुई इमारत है । देवता इसके अन्दर बैठा है । वह निराकार है तो भी विश्व में काया में भी सर्वत्र समाया हुआ है । उसे देखने के लिए अर्जुन जैसे दिव्य चक्षुओं को प्रकाशवान बनाना पड़ता है । दूध में मक्खन समाया होता है पर वह आँखों से नहीं विवेक से ही जाना जाता है, या मन्थन क्रिया द्वारा पृथक किया जाता है । यही बात पंचतत्व विनिर्मित काया के अन्तराल में समाहित परमात्मा के प्रतिनिधि आत्मा की झाँकी करने के रूप में सही उतरती है ।

काया में आत्मा की उपस्थिति का विश्वास जमाना दर्पण देखने की क्रिया का प्रथम चरण है । द्वितीय चरण में उसे सर्व समर्थ और स्वभावतः पवित्र होने की भावना का विकास करना होता है । "मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है," इस सत्य की पुष्टि इसी रूप में होती है कि अपनी आत्मा यदि उच्च दृष्टिकोण मान्यताओं और भावनाओं को अपना ले तो उसके गुण-कर्म-स्वभाव में तदनुरूप परिवर्तन आरम्भ हो जाता है । उत्कृष्ट चिन्तन, आदर्श कर्तव्य और शालीन व्यवहार की रीति-नीति अभ्यास में उतर जाने के उपरान्त व्यक्तित्व निखरता और प्रतिभाओं, विभूतियों के चमकने में देर नहीं लगती । पवित्रता और प्रखरता का उदय होते ही व्यक्ति सामान्य से असामान्य स्थिति में पहुँच जाता है । उसे गई गुजरी में डाले रखने का अनाचार तो दुर्गुणों और दुष्प्रवृत्तियों का ही होता है । पर साथ ही यह बात भी है कि अनात्मतत्व से सम्बन्धित होने के कारण उन्हें धोया और हटाया जाता है ।

पूजा वेदी के निकट जाते ही सर्वप्रथम स्वच्छता का काम हाथ में लेना पड़ता है । पुजारी मन्दिर में प्रवेश करने से पूर्व स्नान करता और धुले कपड़े पहनता है । फिर देवालय में प्रयुक्त होने वाले सभी उपकरणों की सफाई करता है । प्रतिभा के आवरण आच्छादनों को सुव्यवस्थित करता है । देवालयों में बुहारी लगाता है । पूजा पात्रों को माँज-धोकर चमकदार बनाता है । इसके पश्चात् पूजा-कृत्य आरम्भ होता है ।

दर्पण में अपनी आकृति देख लेना भर ही पर्याप्त नहीं है । वरन् उसमें प्राण-प्रतिष्ठा कराने जैसी भावना का समावेश करना चाहिए और यह विश्वास गहराई तक जमाना चाहिए कि इस पंच तत्वों से बने शरीर के अन्तराल में दिव्य देव सत्ता विद्यमान है । उसकी सामर्थ्य में कोई कमी नहीं । अपनी सूझ-बूझ और प्रतिभा को निखारते हुए पुरुषार्थपूर्वक प्रयत्न करने से ही संसार के महामानवों ने अपने को श्रेष्ठ, वरिष्ठ एवं सफल बनाया है । हमें भी यही करना है । सर्वप्रथम इसके ऊपर छाये हुए कुसंस्कारों का परिमार्जन करना है । उन्हें बारीकी से देखना-परखना है । साथ ही उन्हें दूर हटाने का स्वच्छता अभियान हाथ में लेना है । जो दुर्गुण अब तक की आदतों में सम्मिलित रहे हैं, उन्हें गन्दगी मानकर हटाने का प्रबल प्रयास करना चाहिए । आरम्भ में यह उत्साह दर्पण देखते समय भावना क्षेत्र में उतारना होता है । संकल्प को सुदृढ़ करना होता है । पीछे तो वह परिमार्जन क्रिया जीवनचर्या का अंग बन जाती है और अपने ऊपर सुधार की पैनी दृष्टि रखने में निर्दोषता का अंश दिनो-दिन बढ़ता जाता है । भावना की प्रगाढ़ता के अनुरूप दुष्प्रवृत्तियाँ स्वयं ही घटने लगती हैं ।

पूजा का तीसरा चरण है प्रतिमा की सुसज्जा । उसे भगवान का प्रतिनिधि मान लेने और स्वच्छता का उपक्रम पूरा कर लेना आवश्यक तो है पर पर्याप्त नहीं । इस कमी को पूरा करने के लिए पूजा उपचार की सामग्री का समर्पण करना, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, जल, अक्षत आदि यह सभी प्रतिमा की सुसज्जा के लिए तथा मन्दिर का वातावरण सुवासित करने के लिए किए जाते हैं । इस स्थूल प्रक्रिया का सूक्ष्म स्वरूप दर्पण साधना के साधक को करना होता है । सद्गुण ही आत्मदेवता की सर्वोत्तम शोभा सज्जा है । संयम, सदाचार, साहस, पराक्रम पुरुषार्थ जैसी उच्च भावनाओं की दृढ़ता जैसे-जैसे अन्तराल में उपस्थित रहने लगती है, वैसे ही आत्मा का सौन्दर्य कमल पुष्पवत् निखरने लगता है, भले ही वह शरीर की दृष्टि से काला, कुरूप, रुग्ण या जर्जर क्यों न हो ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बाहरी प्रकाश बाहरी क्षेत्र को प्रकाशवान करता है, और आन्तरिक प्रकाश अन्तःक्षेत्र को । आत्मा ऐसे तो निराकार है पर उसकी कल्पना अंगुष्ठ मात्र प्रकाश ज्योति में की गई है और उसका स्थान उपनिषद्कारों ने हृदय बताया है । अपने शरीर की लक्ष्य की दृष्टि से झाँकी करते हुए आत्म-ज्योति का दर्शन भाव नेत्रों से हृदय स्थान में करना चाहिए । उसका प्रकाश अन्तराल की सभी दिव्य विभूतियों, सूक्ष्म शक्तियों को ज्योतिर्मय करना है । वे सब भी प्रकाशित हो उठती हैं और अन्तराल देवत्व की विशेषताओं से जगमग करने लगता है ।

इतनी-सी साधना आरम्भ में दस मिनट में की जा सकती है और फिर उसे क्रमशः आधे घण्टे तक बढ़ाया जा सकता है । मन की चंचलता को देखते हुए ध्यान प्रक्रिया एवं भाव साधना को आरम्भ में थोड़े में करके पीछे उसे क्रमशः बढ़ाने की परम्परा है । वही विषय इस प्रसंग में भी निर्वाह होना चाहिए ।

यह दर्पण हर काम में न लाया जाय । मात्र पूजा के लिए ही प्रयुक्त किया जाय । उस पर कपड़े का पर्दा पड़ा रहने दिया जाय । तभी उसे उल्टा जाना चाहिए, जब साधना करनी हो । प्रातःकाल का समय सर्वोत्तम है । पर जिन्हें कोई अन्य समय उपयुक्त जँचता हो वे उसका अपना नियम बना सकते हैं । एक बड़ा सा शीशा इसके लिए प्रयुक्त करना चाहिए । दर्पण ऐसा हो कि पालथी मारकर बैठने पर पूरा शरीर दिख सके । किन्तु दूरी अधिक न हो । ऐसे बड़े आकार का वह मिल सके तो सर्वोत्तम अन्यथा छोटे साइज से भी काम चलाया जा सकता है । गर्दन तक चेहरा साफ-साफ दिखे तो भी समझना चाहिए कि काम चल गया ।

दर्पण में दिखने वाले अपने प्रतिबिम्ब को अपना नहीं अपने किसी निकटवर्ती घनिष्ठ सम्बन्धी का मानना चाहिए और भाव यह रखना चाहिए कि इसकी त्रुटियों का परिमार्जन करना है । सत्प्रवृत्तियों के बीजांकुर विकसित करना है । सही राह पर चलने से यदि भटकाव हो गया है, तो उसे यथार्थता समझा कर सही रास्ते लाया जाता है । जो सम्पदा पास में है, उसके सदुपयोग का अभिवर्धन का उपाय समझाया जाता है । इन उद्देश्यों को ध्यान में रखकर अपना प्रतिबिम्ब गम्भीरतापूर्वक देखा जाय और उसे समुन्नत सुसंस्कृत बनाने का दृष्टिकोण अपनाया जाय । आदर्शों की कसौटी पर जितनी खोट मिले, उसे सुधारने के लिए उपयुक्त प्रयास करने हेतु संकल्पित हुआ जाय ।

सबसे बड़ी भूल आम आदमी से यह होती है कि वह अपने स्वरूप जीवन के उद्देश्य और शरीर के साथ इसके प्रयोजन सम्बन्ध के बारे में जो समझना चाहिए, जिस प्रकार तालमेल बिठाना चाहिए उसे प्रायः पूरी तरह भूल जाता है । मनुष्य जीवन एक ऐसा सुयोग है, जो चौरासी लाख योनियों में परिभ्रमण करने के उपरान्त एक बार अमानत के रूप में मिला है । यह सृष्टा की सर्वोपरि कलाकृति है । इसे सौंपा इसीलिए गया है कि निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति में उसका उपाय समग्र सतर्कता के साथ किया जाय । प्रसुप्त विभूतियों को जगाने के लिए तपश्चर्या का आश्रय लिया जाय । जन्म-जन्मान्तरों के संचित कुसंस्कारों को धोने के लिए आत्मशोधन का प्रबल प्रयास किया जाय । अपूर्णता को पूर्णता में बदला जाय । साथ ही सेवा, सम्वेदना को उभार कर अपने स्वभाव में अधिकाधिक पुण्य परमार्थ का समावेश किया जाय । मानव की गरिमा इसी में सन्निहित है कि वह संकीर्ण स्वार्थपरता के भवबन्धनों से निकलकर लोकहित में—जनकल्याण में—कितना निष्ठापूर्वक संलग्न होता है । सृष्टा के विश्व उद्यान को सींचने-सँजोने में कितनी तत्पर तन्मयता का परिचय देता है । जीवन के इस उच्च उद्देश्य को निभाने में जो जिस सीमा तक सफल होता है, वह उसी सीमा तक मनुष्य जन्म को सार्थक बनाने में सफल होता है । इस सफलता का उपहार, पुरस्कार उसे देव मानव बनने के रूप में और सब प्रकार भविष्य को उज्ज्वल बनाने के रूप में उपलब्ध करता है । शालीनता अपनाने के फलस्वरूप व्यक्ति अपने लोक और परलोक दोनों को सुधारता है । निजी क्षेत्र में उल्लास भरा सन्तोष सम्पर्क क्षेत्र में सम्मान भरा सहयोग और देवी क्षेत्र में अदृश्य अनुग्रह के रूप में उतना कुछ मिलता है जिससे कि तुष्टि, तृप्ति और शान्ति का हर घड़ी उल्लास भरे आनन्द का रसास्वादन किया जा सके ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति एवं संदेश संचार की साधना

शक्ति एवं सन्देश संचार की प्राण-विद्या

राजा दिवोदास के पुत्र प्रतर्दन को एक बार स्वर्ग देखने की इच्छा हुई । पिता की आज्ञा लेकर वे स्वर्ग गए । प्रतर्दन के पुरुषार्थ और रण-चातुर्य से—इन्द्र अत्यन्त प्रभावित थे । उन्होंने प्रतर्दन का आदर-सत्कार किया और कहा—"मैं आपको क्या वर दूँ ?" प्रतर्दन ने कहा—"भगवन् ! मैं धन-धान्य, प्रजा-पुत्र, यश-वैभव सब प्रकार से परिपूर्ण हूँ । आपसे क्या माँगूं मुझे कुछ नहीं चाहिए ।"

इन्द्र हँस कर बोले—"वत्स, यह मैं जानता हूँ कि पुरुषार्थी व्यक्ति को संसार में कोई अभाव नहीं रहता । अपने सुख-समृद्धि के साधन वह आप जुटा लेता है तो भी उसे विश्व-हित की कामना करनी चाहिए । लोक-सेवा के पुण्य से बढ़कर पृथ्वी में और कोई सुयश नहीं तुम उससे ब्रह्म को प्राप्त होगे । इसलिए मैं तुम्हें लोक का कल्याण करने वाली प्राण विद्या सिखाता हूँ ।"

इसके बाद इन्द्र ने प्रतर्दन को प्राण तत्व का उपदेश दिया । उन्होंने कहा—"प्राण ही ब्रह्म है । साधनाओं द्वारा योगी, । ऋषि-मुनि अपनी आत्मा में प्राण धारण करते और उससे विश्व का कल्याण करते हैं ।"

'कौषीतकि ब्राह्मणोपनिषद्' के दूसरे अध्याय में भगवान इन्द्र ने प्रतर्दन को यह प्राण विद्या सिखाई है, उसका बड़ा ही मार्मिक एवं महत्त्वपूर्ण उल्लेख है । इसी सन्दर्भ में इन्द्र ने, एक व्यक्ति अपनी असीम प्राण-शक्ति को दूसरों तक कैसे पहुँचाता है, प्राणशक्ति के माध्यम से दूसरों तक अन्तःप्रेणाएँ और विचार किस तरह पहुँचाता है, इस रहस्य का उद्घाटन करते हुए बताया है—

अथ खलु तस्मा देतमेवोक्थ मुपासीत । यो वै प्राणः सा प्रज्ञा या वा प्रज्ञा स प्राणः ..... स यदा प्रतिबुध्यते यथ ऽग्नेर्विस्फुर्लिंग । विप्रतिष्ठन्ते प्राणेभ्यो देवो देवभ्यो लोका ..... ।

अर्थात्—जब मन विचार करता है, तब अन्य सभी प्राण उसके सहयोगी होकर विचारमान हो जाते हैं, नेत्र किसी वस्तु को देखने लगते हैं तो अन्य प्राण उनका अनुसरण करते हैं । वाणी जब कुछ कहती है, तब अन्य प्राण उसके सहायक होते हैं । मुख्य प्राण के कार्य में अन्य प्राणों का पूर्ण सहयोग होता है ।

अन्यत्र श्लोक में बताया है कि मन सहित सभी इन्द्रियों को निष्क्रिय करके आत्म-शक्ति (संकल्प-शक्ति) को प्राणों में मिला देते हैं । ऐसा पुरुष 'दैवी परिमर' का ज्ञाता होता है । वह अपनी प्राण-शक्ति से किसी को भी प्रभावित और प्रेरित कर सकता है । उसके सन्देश को कहीं भी सुना और हृदयंगम किया जा सकता है । उसके प्राणों में अपने प्राणों को घुलाकर स्वल्प क्षमता के लोग भी अपने प्राण जाग्रत कर सकते हैं । जिस पुरुष को दैवी परिमर का ज्ञान होता है । उसकी आज्ञा को पर्वत भी अमान्य नहीं कर सकते । उससे द्वेष रखने वाले सर्वथा नष्ट हो जाते हैं ।

इसी उपनिषद् में यह भी निर्देश है कि जब पिता को अपने अन्तकाल का निश्चय हो जाय तो पुत्र (अथवा गुरु, शिष्य या शिष्यों) में अपनी प्राण-शक्ति को प्रतिष्ठित कर दे । वह वाक्, प्राण, घ्राण, चक्षु, श्रोभ, गतिशक्ति, बुद्धि आदि प्रदान करें और पुत्र उसे ग्रहण करे । इसके बाद पिता या गुरु संन्यासी होकर चला जाय और पुत्र या शिष्य उसका उत्तराधिकारी हो जाय ।

प्राचीनकाल में यह परम्परा आधुनिक सक्त यन्त्रों की बेतार-के-तार की भाँति प्रचलित थी । प्राण विद्या के ज्ञाता गुरु अपने प्राण देकर शिष्यों के व्यक्तित्व और उनकी क्षमताएँ बढ़ाया करते थे । इसी कारण श्रद्धा विनत होकर लोग ऋषि आश्रमों में जाया करते थे । ऋषि अपने प्राण देकर उन्हें तेजस्वी, मेधावान् और पुरुषार्थी बनाया करते थे । महर्षि धौम्य ने आरुणि को, गौतम ने जावालि को, इन्द्र ने अर्जुन को, यम ने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नचिकेता को, शुक्राचार्य ने कच को इसी तरह उच्च स्थिति में पहुँचाया था । योग्य गुरुओं द्वारा यह परम्पराएँ, अब भी चलती रहती हैं । परमहंस स्वामी रामकृष्ण ने विवेकानन्द को शक्तिपात किया था । स्वामी विवेकानन्द ने सिस्टर निवेदिता में प्राण प्रत्यार्पित किए थे । महर्षि अरविन्द ने प्राण शक्ति द्वारा ही सन्देश भेजकर पांडिचेरी आश्रम की संचालिका, मदिति-सह भारत-माता' की सम्पादिका 'श्री यज्ञ शिखा माँ' को पेरिस से बुलाया था और उन्हें विद्या देकर भारतीय दर्शन का निष्णात बनाया था ।

कहते हैं जब राम वनवास में थे, तब लक्ष्मण अपने तेजस्वी प्राणों का संचालन करके प्रत्येक दिन की स्थिति के समाचार अपनी धर्मपत्नी उर्मिला तक पहुँचा देते थे । उर्मिला उन सन्देशों को चित्रबद्ध करके रघुवंश परिवार में प्रसारित कर दिया करती थी और बेतार-के-तार की तरह के सन्देश सबको मिल जाया करते थे ।

अनुसुइया आश्रम में अकेली थीं । भगवान ब्रह्मा, विष्णु और महेश भेष बदलकर परीक्षार्थ आश्रम में पहुँचे । अत्रि मुनि बाहर थे । उन्होंने ही भगवान के त्रिकाल रूप को पहचाना था और वह गुप्त सन्देश अनुसुइया को प्राणशक्ति द्वारा ही प्रेषित किया था । ऐसी कथा-गाथाओं से सारा हिन्दू-शास्त्र भरा पड़ा है ।

आज का विज्ञान मुखी समाज इन उपाख्यानों को तर्क की दृष्टि से देखता है । लोग शक और सन्देह करते हैं । कहते हैं, ऐसा भी कहीं सम्भव है कि एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को बिना किसी उपकरण या माध्यम के सन्देश पहुँचा सके ।

यदि विचारपूर्वक देखें तो विज्ञान भी इसकी पुष्टि ही करेगा । बेतार-के-तार के सिद्धान्त को कौन नहीं जानता ? शब्द को विद्युत तरंगों में बदल देते हैं । यह विद्युत तरंगें ईथर तत्व में धाराएँ बनकर प्रवाहित होती हैं । ट्रान्समीटर जितना शक्तिशाली होता है, विद्युत तरंगें उतनी ही दूर तक दरदराती चली जाती हैं । उसी फ्रीक्वेंसी में लगे हुए वायरलेस या रेडियो उन ध्वनि तरंगों को पकड़ते हैं और पुनः शब्दों में बदल देते हैं, जिससे वे पास बैठे हुए लोगों को सुनाई देने लगती हैं । अब इस बात में कोई अविश्वास कर ही नहीं सकता ।

जो बात बोली जाती है, वह पहले विचार रूप में आती है, अर्थात् विचारों का अस्तित्व संसार में विद्यमान है । ऊपर के श्लोक में बताया गया है कि मन या विचार शक्ति प्राण में मिल जाती है तो सभी प्राण उसके सहायक हो जाते हैं, अर्थात् प्राणों के माध्यम से अपने शरीर की सम्पूर्ण चेतना को जिसमें हाव-भाव, क्रिया-कलाप, विचार भावनाएँ सम्मिलित होती हैं, किसी भी दूरस्थ व्यक्ति तक पहुँचाया जा सकता है ।

१६ जुलाई, १६६४ धर्मयुग के पेज २० में श्री अजीत कृष्ण वसु ने अपने जीवन की एक घटना का उल्लेख किया है । वे लिखते हैं—"हमारे एक मित्र के घर पार्टी थी । उसमें हमारे अनेक मित्र सम्मिलित थे । हमारे साथ एक जादूगर भी थे । संयोगवश टेलीपैथी पर बात चल पड़ी । गृहस्वामी ने बताया कि उनका टेलीपैथी में कोई विश्वास नहीं । एक साथी ने कहा कि भाई दूर बैठे व्यक्ति को केवल मानसिक शक्ति द्वारा ही सन्देश दिया जा सकता है, उन्होंने ईथर में तरंगों वाली बात भी बताई तो भी कोई उसे मानने को तैयार न हुआ ।

इसी बीच जादूगर मित्र ने कहा—"क्यों न प्रत्यक्ष देख लिया जाय कि विचार संचालन और प्रेषण सम्भव है क्या ? उसके लिए सब लोग तैयार हो गए ।

पहला प्रयोग गृहस्वामी और उक्त मित्र ने किया जो काफी दिनों से विचार प्रेषण का अभ्यास कर रहे थे । उन्होंने अपने प्रयोग के लिए अपना एक साथी भी चुना था पर वे उस समय उपस्थित न थे । जादूगर ने कहा—"मैं अपने मन में एक रंग निश्चित करूँगा, फिर संकल्प द्वारा उसे मन-ही-मन में तुम्हें बताऊँगा । मेरा प्रसारण इतना तीव्र होगा कि तुम्हारे मन में भी उसी रंग का नाम और छाया-चित्र आयेगा ।" इसके बाद उन्होंने एक चिट में कुछ लिखा और उसे एक मित्र की जेब में डाल दिया । दोनों व्यक्ति ५० गज के फासले पर बैठे । जादूगर ने ध्यान-मग्न होकर सन्देश भेजा । इसके बाद गृहस्वामी से पूछा गया तुम्हारे मन में कौन-सा रंग आया तो उन्होंने कहा—"हरा" इसके बाद वह चिट निकालकर देखी गई तो लोग आश्चर्यचकित रह गए कि उसमें 'हरा' ही लिखा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इतने पर भी गृहस्वामी सन्तुष्ट न हुए उन्होंने कहा—"संयोग से ही ऐसा हुआ ।" इस पर जादूगर ने कहा—"अब आप लोग मुझे कोई भी गिनती दीजिए । मैं उसे अपने प्रयोग वाले मित्र' को प्रेषित करूँगा । आप फोन पर पता लगाइये, वह घर हैं या नहीं ।" संयोग से वह घर पर ही थे । ६ की संख्या दी गई । इधर जादूगर ने ध्यान मग्न होकर अपने मित्र को वह संख्या विचार संचालन द्वारा मन-ही-मन सुनाई । जब वे उठ बैठे तो फोन से पूछा गया, आपने कौन-सी संख्या सुनी तो उधर से उत्तर आया—"ऐसा लगता है ६ की संख्या भेजी गई है । इस पर सभी लोग दंग रह गए और उपस्थित सभी व्यक्तियों ने यह मान लिया कि विचार संचालन विद्या गलत नहीं है ।

एक ही समय में परस्पर उन्मुख या याद करते हुए व्यक्ति को चलते-फिरते कितनी ही दूरी पर प्राण प्रेषित करने का एक उदाहरण मालवीय जी के परिवार में घटित हुआ । "एक दिन स्वर्गीय मदनमोहन मालवीय जी के पुत्र श्री गोविन्द मालवीय एकाएक बेचैन हो उठे । सर्दी के दिन थे पर उनका शरीर एकाएक आग की तरह गर्म हो उठा । बहुत जाँच की गई पर पता न चला ऐसा क्यों हो रहा है ? रात के नौ बजे तक उनकी बेचैनी बढ़ती ही गई ।"

मालवीय जी की धर्मपत्नी इलाहाबाद में थीं । रात नौ बजे यहाँ से टेलीफोन गया और तब पता चला कि वे (श्री गोविन्द मालवीय की माताजी) आग सेंकते हुए बुरी तरह जल गई हैं । दादीजी उन्हें बहुत प्यार करती थीं । इसलिए जलने के बाद से ही वे बराबर इन्हीं का ध्यान करती रहीं । उनकी मृत्यु भी तभी हुई जब श्री गोविन्द मालवीय प्रयाग आ गए । जैसे ही उनकी मृत्यु हुई उनकी जलन और बुखार एकदम समाप्त हो गया । इस घटना से यह पुष्टि होती है कि तीव्र स्मृति किवा ध्यान के माध्यम से अपने समीपवर्ती वातावरण तक चित्रण किया जा सकता है ।

अंग्रेज आविष्कारक चार्ल्स बैवेज ने इसी सिद्धान्त के आधार पर एक यन्त्र बनाने का भी प्रयत्न किया, जिसमें कोई ऐसा 'क्रिस्टल' फिट किया जा सके, जिससे स्वेच्छा से मनुष्य के मस्तिष्क की तरह ही काम लिया जा सके । उन्होंने एक यन्त्र बनाया भी उसका नाम 'इलेक्ट्रॉनिक' या यान्त्रिक मस्तिष्क रखा गया । यद्यपि वह स्मरण-शक्ति वाला प्रयोग तो सफल नहीं कर सके पर विचारों की मस्तिष्क में सूक्ष्म कार्य-विधि को अच्छी तरह समझा सके । यह यन्त्र जोड़ बाकी के छोटे-छोटे प्रश्नों का उत्तर तत्काल गणना करके दे देता था, उससे यह सिद्ध होता था कि यदि मस्तिष्क के तमाम यन्त्रों का पूर्ण विश्लेषण प्राप्त किया जा सके तो ऐसी मशीन भी बनाना सम्भव हो सकता है जिससे दूरवर्ती प्रसारणों को ही नहीं पूर्व जन्मों एवं अतीतकाल की स्मृतियों को भी रिकार्ड किया जा सकता है ।

वैसा तो तभी सम्भव है, जब कोई बिल्कुल मनुष्य शरीर के कलेवर जैसा ही शरीर बन सके पर आध्यात्म विज्ञान में ऐसी सम्भावनाएँ बहुत अधिक हैं, जिनसे यन्त्रों की क्षमता को और भी अधिक सूक्ष्म और प्रभावशाली ढंग से अन्तरंग शरीर द्वारा किया जा सके । जो ऐसी विद्याएँ जानते हैं, वह दूर के सन्देश प्राप्त भी कर सकते हैं और लोगों को दे भी सकते हैं ।

यह सब ध्यान और प्राण विद्या के छोटे-छोटे चमत्कार हैं । उसकी सम्पूर्ण और अगाध जानकारी तो किन्हीं योग्य और साधना-निष्ठ व्यक्तियों को होती है । ऐसे महापुरुषों का सान्निध्य उनके समीप्य और ध्यान का लाभ उठाकर कोई प्राणवान बन सकता है ।

विचार संप्रेषण की अद्भुत शक्ति सामर्थ्य

अप्रत्यक्ष होते हुए भी विचारों की सामर्थ्य एवं प्रभाव प्रत्यक्ष अन्य शक्तियों से कहीं अधिक है । जीवन से उनका घनिष्ठ सम्बन्ध है । विकास अथवा पतन में उनका महत्त्वपूर्ण योगदान है । परा-मनोवैज्ञानिकों के अनुसार भौतिक जगत की चुम्बकीय तरंगों से विचार तरंगों की गति एवं शक्ति असंख्यों गुनी है । जिस विज्ञान के अन्तर्गत विचार तरंगों का स्वरूप एवं प्रभाव ज्ञात होता है उसे योग दर्शन में विचार वैगिकी कहते हैं । तत्व दर्शियों का मत है कि संसार में शुभ एवं अशुभ विचार तरंगों का निरन्तर प्रसारण होता है जिनमें त्रिविध गुण विकार मिश्रित होते हैं । जिस प्रकार प्रकाश तरंगों में तीव्रता, तरंग दैर्ध्य तथा आवृत्ति होती है उसी प्रकार विविध तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की विचार तरंगों में विविध प्रकार की तीव्रता, तरंग दैर्ध्य एवं आवृत्ति होती है । वे सूक्ष्म अन्तरिक्ष में घूमती रहती तथा चैतन्य संसार को प्रभावित करती है ।

शुभाशुभ विचार तरंगें मनुष्य के मानसिक स्तर में परिवर्तन करने में भी समर्थ हैं, पर यह इस बात पर निर्भर करता है कि उनके साथ किस स्तर की प्राण शक्ति जुड़ी हुई है । समर्थ प्रभाव क्षमता, प्रबल प्राण शक्ति पर ही अवलम्बित है । प्राण शक्ति का संयोग पाकर विचार तरंगें घनीभूत होतीं तथा विचार प्रवाह का रूप ग्रहण कर लेती हैं । प्रवाह बन जाने पर उनकी गति एवं सामर्थ्य असीम हो जाती है । प्राण सम्पन्न व्यक्तियों की प्रभाव क्षमता अन्यों की तुलना में कहीं अधिक होती है । अपनी ओर वे असंख्यों को आकर्षित करते तथा अपने साथ मनचाही दिशा में चलने को विवश कर देते हैं । वह दिशा सृजन और ध्वंस दोनों ही की हो सकती है । महापुरुष अपनी उस सामर्थ्य का उपयोग सृजन में करते हैं जबकि हिटलर, मुसोलिनी जैसे क्रूर अति मानव ध्वंस में उस शक्ति को गवाँते देखे गए हैं ।

तत्वदर्शी ऋषियों का मत है कि त्रिगुणात्मक प्रभावों के अनुरूप मनुष्य के शरीर के अनेकों प्रकार की रश्मियाँ निकलती रहती हैं । धर्मग्रन्थों में इन्हें आभा-मण्डल कहा गया है । किर्लियन फोटोग्राफी के माध्यम से विचार तरंगों की फोटोग्राफी सम्भव हो गई है । उससे पता चला है कि भावनात्मक संवेगों के अनुरूप प्रभा-मण्डलों के रंग रूप में भी परिवर्तन होता रहता है । हर व्यक्ति का अपना अलग प्रभा-मण्डल एवं स्तर होता है । प्रभा-मण्डल में दूसरों को आकर्षित अथवा विकर्षित करने की विशेषता होती है । आन्तरिक संवेगों, विचारों एवं भावों के परिवर्तन से प्रभा-मण्डल भी बदलता रहता है । विचार तरंगों में अगणित प्रकार के रंग रूप होते हैं । वे अलौकिक और लौकिक स्तरों में विभक्त होती हैं । वासना, घृणा, द्वेष एवं प्रतिशोध की विचार तरंगें काली होती हैं जबकि भय एवं आतंक की विचार तरंगें भूरे रंग की होती हैं । चमकीले लाल रंग की विचार तरंगें क्रोध की होती हैं । प्रेम की विचार तरंगें गहरे लाल रंग की, वासना-जनित प्रेम की तरंगें भूरे लाल रंग की, अहंकार एवं महत्त्वाकांक्षा की विचार तरंगें चमकीले नारंगी रंग की, बौद्धिक शक्ति तथा आन्तरिक पवित्रता का भाव दर्शाने वाली विचार तरंगें पीले रंग की, उच्च आध्यात्मिक भाव प्रकट करने वाली चमकीले हल्के नीले रंग की होती हैं । ऐसा विश्लेषण वैज्ञानिकों ने किया है । सूक्ष्म विचार तरंगों के स्वरूप का रहस्य समझना भी एक ऐसी विद्या है जिसके विशेषज्ञ मनोविज्ञान के ज्ञाता नहीं, अतीन्द्रिय सामर्थ्य सम्पन्न योगी होते हैं ।

समर्थ योगी, सिद्ध पुरुष, व्यक्ति की आकृति देखकर उसकी मनःस्थिति एवं मन में चल रहे विचारों को बिना बताये जान लेते हैं । वस्तुतः इसका परिचय उन्हें उस आभा मण्डल को देखकर मिल जाता है जो उस व्यक्ति के इर्द-गिर्द छाया रहता है जो सामान्यतया अन्य व्यक्तियों को नहीं दिखायी देता । पर योगियों की—सिद्ध पुरुषों की अन्तर्दृष्टि उस ह्यूमन ऑरा के आधार पर उसके मन में चल रहे भले-बुरे विचारों को जानने में समर्थ हो जाती है । कितने ही उसे बता भी देते हैं । जिनका अन्तःकरण निर्मल है उनमें भी विचारों के पढ़ने की सामर्थ्य विकसित हो सकती है । कितनी ही बार तो मनुष्य की बदली आकृति उनकी मनःस्थिति का परिचय दे देती है । क्रोध, भय, आवेश, दुःख, निराशा के भाव मनुष्य के मुखमण्डल पर स्पष्ट तैरते रहते हैं जिसे कोई भी विचारशील थोड़े प्रयत्नों से पढ़ने में सफल हो सकता तथा आन्तरिक स्थिति का चल रहे विचार प्रवाह के स्वरूप का वर्णन करने में समर्थ हो सकता है । कितनी बार तो मानवी आकृति भी उसकी प्रकृति का संक्षिप्त परिचय दे देती है । मनःचिकित्सक भी इसी आधार पर अपना आरम्भिक निदान शुरू करते हैं ।

विचार तरंगों का आदान-प्रदान अथवा प्रसारण जिस प्रक्रिया द्वारा सम्पन्न होता है उसे मनोवेत्ता 'टेलीपैथी' कहते हैं । इस प्रक्रिया में बिना इन्द्रियों का सहारा लिए विचार तरंगों को एक मन से दूसरे मन तक प्रेषित किया जाता है । इस क्रिया में देश काल सम्बन्धी भौतिक सीमाएँ आड़े नहीं आ पातीं । टेलीपैथी के सफल सम्प्रेषण में मन की एकाग्रता का असाधारण महत्त्व है । उस एकाग्रता का सम्पादन ध्यान के विविध आध्यात्मिक प्रयोगों में अधिक सफलता से होता है । प्रायः भौतिक उपचार उस उपलब्धि में अधिक सफल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं हो पाते । कारण कि जिस गहरे स्तर की एकाग्रता विचार सम्प्रेषण के लिए चाहिए वह भौतिक प्रयत्नों से नहीं बन पाती । शरीर एवं बुद्धि से परे जाकर मन की विचार तरंगों को प्राण-शक्ति के माध्यम से घनीभूत कर पाना ध्यान साधना के माध्यम से ही सम्भव हो पाता है ।

इन दिनों वैज्ञानिक क्षेत्र में भी विविध प्रकार के प्रयोग टेलीपैथी पर चल रहे हैं । सुप्रसिद्ध रूसी वैज्ञानिक त्सियोलको वोस्की ने १९३० में यह कहा था कि निकट भविष्य में सफल एवं सुरक्षित अन्तरिक्ष यात्रा के लिए विचार सम्प्रेषण का ज्ञान आवश्यक होगा । सन् १९५९ में अमेरिकी आणविक पनडुब्बी नाटिलस द्वारा टेलीपैथी पर एक सफल प्रयोग किया भी गया । उस प्रयोग से यह सम्भावना प्रबल हो गई कि मानव मस्तिष्कों के बीच मानसिक विचारों का आदान-प्रदान रेडियो संचार व्यवस्था से कहीं अधिक निर्बाध गति से चल सकता है । क्योंकि समुद्र के अत्यन्त निचले तल में रेडियो संचार व्यवस्था भंग हो जाती है पर ऐसा कोई व्यवधान मानसिक सम्प्रेषण में नहीं आने पाता । कारण कि इस संचार व्यवस्था में देशकाल की सीमाओं का प्रभाव नहीं पड़ता ।

अमेरिकी वैज्ञानिक डगलस डीन ने १९६० में एक नई खोज की थी जिसका विवरण १९६४ में वैज्ञानिकों ने एक सम्मेलन में प्रस्तुत किया । डीन एक विशिष्ट यन्त्र से यह प्रदर्शित किया कि विचार सम्प्रेषण द्वारा जब विचार तरंगों का प्रसारण किया जाता है तो उससे कोश-क्रियाओं पर भी प्रभाव पड़ता है तथा रक्त प्रवाह की गति में भी अन्तर आता है । डीन का कहना था कि प्रयोग की महत्त्वपूर्ण बात यह है कि विचार सम्प्रेषण प्रक्रिया अधिक सफलता से उनके बीच सम्पन्न हो सकती है जो भावनात्मक सम्बन्धों से अधिक घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं ।

विश्व के मूर्धन्य वैज्ञानिक यह स्वीकार करने लगे हैं कि मानव शरीर टेलीविजन प्रणाली से भी अधिक समर्थ एक अद्‌भुत इलेक्ट्रॉनिक यन्त्र है । शरीर से भी अधिक सामर्थ्यवान उसकी मन मस्तिष्क की सूक्ष्म परतें हैं जो सूक्ष्म सम्वेदनाओं तथा वैचारिक तरंगों को आकर्षित विकर्षित करते रहते हैं । इस प्रक्रिया का सम्बन्ध सूक्ष्म शरीर, कारण रूप सूक्ष्म जगत तथा कार्यरूप स्थूल जगत के परस्पर परोक्ष सम्बन्धों से है ।

विचार जगत एवं उसकी सामर्थ्य के सम्बन्ध में जितनी जानकारियाँ मिली हैं, उसकी तुलना में अविज्ञात का क्षेत्र कहीं अधिक है । जिस दिन उसकी सामर्थ्य का पूरा परिचय मनुष्य को मिलेगा, वह एक अद्‌भुत समय होगा । यह उपलब्धि परमाणु के नाभिकीय शक्ति के आविष्कार से भी बड़ी होगी ।

विचार सम्प्रेषण को यों अभ्यास द्वारा उच्च शक्ति सम्पन्न भी बनाया जाता है पर दैनिक जीवन में भी उसके प्रमाण कम नहीं मिलते । वे घनिष्ठ प्रियजनों के बीच आन्तरिक एकात्मा के आधार पर एक की बात दूसरे तक पहुँचाते रहते हैं । इसमें टेलीफोन, टेलीविजन जैसे उपकरणों की आवश्यकता नहीं पड़ती । आन्तरिक घनिष्ठता ही यह कार्य सहज सम्पन्न कर देती है ।

उत्तरी इंग्लैण्ड के कॉनिस्टन वाटर शहर की घटना है । श्रीमती जॉन सेवर्न सन् १८८० की एक प्रातः अत्यधिक व्यग्र-व्यथित और उत्तेजित अवस्था में सोने से यकायक चौंक कर जाग पड़ीं । उन्हें ऐसा जान पड़ा कि मानो किसी ने मुख पर तीव्र घूंसा प्रहार किया है जिससे निचला होठ पूरी तरह दाँतों तले कट चुका है । अतः बहते हुए खून को रोकने के लिए आँखें मलते हुए हड़-बड़ाकर रूमाल ढूँढ़ा और ज्यों ही होठ के बहते रक्त को पोंछकर रूमाल को आँखों के सामने लायीं, तो उसमें यत्किञ्चित भी खून का निशान न पाकर वह और भी हक्की-बक्की रह गयीं । इस अनिश्चय की स्थिति में ज्यों ही दर्पण में अपना मुँह देखा तो किसी भी प्रकार की चोट लगने एवं होठ कटने जैसी बात नजर नहीं आयी । इससे तो उनकी हैरानी और भी बढ़ गई । पति आर्थर के बिस्तर पर नजर डाली तो बिस्तर खाली पाया । घड़ी पर नजर डाली तो पाया कि प्रातः के ७ बज रहे हैं । अतः उसने समझा कि वह प्रातः नौका विहार के लिए चला गया है । वह बड़ी असमंजस और उधेड़-बुन की धुन में गृह कार्यों में लग गई ।

आर्थर के लौटने पर नाश्ते के लिए मेज लगायी इसी बीच उसने पाया कि उसका पति उसके रूमाल को बार-बार अपने मुँह से लगा रहा है जिज्ञासावश उसने पूछ ही लिया कि आज क्या मजाक सूझी है जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेरे रूमाल का बार-बार चुम्बन ले रहे हो । इस पर चेहरे पर अत्यधिक विषाद लाते हुए कहा कि आज मुझे नया जीवन मिला है, नौका विहार करते समय यकायक समुद्री चक्रवातीय झंझावात में वह बुरी तरह में फँस गया । हवा के तीव्र वेग से उत्पन्न उत्ताल तरंगों के बीच अथाह जलराशि में नौका अपने असन्तुलन को खोकर डगमगाने लगी । इस विपन्नावस्था में नाव में बैठे हुए कृषक के ऊपर गिरा, वह भी जीवन-मौत की क्षणों से गुजर रहा था । अतः रोष में आकर उसने मेरे मुँह पर एक तीव्र प्रहार किया, जिससे निचला होठ दाँतों तले आ जाने से रक्त-रंजित हो गया था । मैं तुम्हारी सहायता पाने के लिए छटपटाने लगा । इसी बीच धीरे-धीरे चक्रवात का प्रकोप शान्त हुआ, तब कहीं जाकर जान में जान आयी और घर की राह ली ।

इस प्रकार का आत्मिक चमत्कार विचार सम्प्रेषण की अनेकों घटनाओं का उल्लेख "कानिस्टन वाटर इपीसोड" नाम के शोध-निबन्ध में किया गया है, जिसमें हजारों ही घटनाएँ परीक्षा करने पर सत्य सिद्ध हुई हैं ।

कुछ लोग इस प्रकार की घटनाओं को अतीन्द्रिय क्षमताओं के विकास की फलश्रुति मानते हैं, तो फ्राँस के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक कैमायल—फ्लैमेरियन अपने प्रसिद्ध शोध ग्रन्थ "लिनकोनू" में टेलीपैथी नाम देते हैं । उन्होंने इस ग्रन्थ में उल्लेख किया है कि 'टेलीपैथी' उस विधा का नाम है जिसके अन्तर्गत किसी दूरस्थ व्यक्ति की भाव-सम्वेदनाओं वैचारिक निर्देशों से प्रभावित किया जा सके । इस तथ्य को उन्होंने एक घटना के माध्यम से समझाने का प्रयास किया है । एक बार गृह मालिक की अनुपस्थिति में एक गृहिणी ने अपनी मित्र-मण्डली को अपने घर पर सामूहिक प्रीति-भोज के लिए आमन्त्रित किया । संयोगवश उस दिन उसका पति शिकार के लिए जंगल में गया हुआ था । यद्यपि आज का दिन अत्यधिक शान्त, स्वच्छ आकाश व सुहावना मौसम था । यकायक 'डाइनिंग रूम' की पहले से ही खुली खिड़की तीव्र आवाज के साथ बन्द हुई और पुनः तीव्र आवाज के साथ खुल गई ।

गृहिणी के हृदय में अपूर्व स्पन्दन होने लगा, उसकी मनोदशा यकायक विलक्षण हो गई । उसने अपने मित्रों को विदा करते हुए कहा कि आज कुछ अनहोनी अप्रत्याशित दुःखद घटना घटित हुई है, इसको सुनने के लिए मुझे तैयार रहना है । मुश्किल से पौन घण्टा बीता ही था कि उसके पति का मृतक शरीर लाया गया जिसकी किसी व्यक्ति ने गोली मारकर हत्या कर दी थी ।

इस प्रकार डॉ. फ्लैमेरियम का कहना है कि टेलीपैथी की घटना वह होती है जिसमें किसी दूरस्थ स्थान से किसी भावी विपत्ति की सूचना दे दी जाती है । इस प्रकार की घटनाओं के हजारों उदाहरण पाये गए हैं, इनमें से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण घटनाओं को उन्होंने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ 'लिनकोन्यू' में रिकार्ड किया है ।

इस प्रसिद्ध ग्रन्थ 'लिनकोन्यू' में सर्वाधिक चर्चित एवं प्रामाणिक घटना फ्रांस की है । फ्रांस के थल सेना के कैप्टन सेनेगल सन् १८८६ में एक रात्रि को ११.३० बजे पर अपने बिस्तर पर प्रगाढ़ निद्रा में सोए हुए थे इसका उल्लेख करते हुए वे लिखते हैं कि "तभी मैंने यकायक यह महसूस किया कि किसी ने मेरी छाती पर अत्यधिक दबाव डाला, जिससे तहस-नहस हो मैं अत्यधिक भयभीत हो गया । जब आँख मलते हुए कुहनी के बल बिस्तर से उठा और इधर-उधर निगाह डाली तो अपनी बूढ़ी दादी माँ यह कहते हुए दिखाई पड़ी "मेरे प्रिय मुन्ने, मैं तुझे अन्तिम अलविदा करने आयी हूँ, अब तू मुझे फिर कभी नहीं देख सकेगा ।" जैसे ही मैं उस छाया-प्रकाश की तरफ आगे बढ़ा, वैसे ही वह अदृश्य हो गया । मैं यह सभी देख सुन स्तम्भित सा रह गया । निश्चित रूप से यह स्वप्न नहीं था ।" उन्होंने आगे अत्यधिक विस्मित होते हुए बताया कि मुझे आश्चर्य तो तब और अधिक बढ़ गया जब प्रातः टेलीग्राफ से रात्रि के ११.३० बजे दादी माँ की मृत्यु यह कहते हुए हुई कि मृत्यु की गोद में जाने से पूर्व मैं अपने मुन्ने को अब कभी नहीं देख सकूँगी ।" श्री फ्लैमेरियम ने इस प्रकार की घटनाओं का जहाँ उल्लेख किया है वहाँ ठोस प्रमाण और पुष्टियाँ भी दी हैं ।

'बीयोण्ड टेलीपैथी' ग्रन्थ से प्रसिद्ध विद्वान लेखक एन्द्रिजा पुहेरिच ने बोस्टन शहर के एक बैल्डिंग करने वाले कर्मचारी जैक सुलेवन के जीवन की एक आश्चर्यजनक घटना का विवरण देते हुए लिखा है कि एक बार जब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह वाशिंगटन नगर की एक स्ट्रीट में कार्य कर रहा था जहाँ पर, अन्य कोई सहायक उस समय उसके पास नहीं था, दुर्भाग्य से उसका पैर कीचड़ की नाली में फिसल गया । फिर क्या था शारीरिक यन्त्रणाओं में जिन्दगी मौत से जूझते हुए प्राण रक्षा के लिए छट-पटा रहा था उसे इस विपन्नावस्था में अपने मित्र भिट्टेकर की याद आ रही थी, जिसने हर संकट में, विपत्ति मुसीबत में साथ दिया था, मृत्यु से पहले वह उससे मिलना चाहता था । भिट्टेकर के हृदय में यकायक स्फुरणा होने लगी, उसे एकदम अपने घनिष्ठ मित्र सुलेवन की याद आयी, उसे उस रोज पता नहीं था कि सुलेवन आज कहाँ कार्य कर रहा है । उसके मस्तिष्क में रह-रहकर ये विचार कोंध रहे थे कि वाशिंगटन स्ट्रीट में कोई अप्रत्याशित घटना घट रही है उसे ऐसा लग रहा था मानो कि उस दिशा में उसे कोई खींचे लिए जा रहा है । तह अपनी ड्यूटी के कार्य भार को ज्यों का त्यों छोड़कर आनन-फानन में वाशिंगटन स्ट्रीट में दाखिल हुआ, वहाँ उसने देखा कि वैल्डिंग करने वाली जनरेटर मशीन चल रही है, किन्तु चालक कर्मचारी कोई भी नजर नहीं आया । अत्यधिक घबराहट और हड़-बड़ की स्थिति में उसने उस सड़क का नक्शा तैयार किया तभी उसे नाली के गन्दगी लगे ढेर में किसी के छटपटाने और तड़पने जैसा दिखाई दिया । कोई व्यक्ति हाथ को ऊपर किए सहायता के लिए संकेत कर रहा था । पास पहुँचकर अपने प्रिय मित्र सुलेवन को अर्ध मृतक और अचेतन अवस्था में उस कीचड़ से निकाला ।"

ऐसे सहज स्वाभाविक प्रसंग घनिष्ठता के आधार पर अनायास ही घटित होते रहते हैं । अभ्यास के द्वारा इसे और भी अधिक विकसित किया जा सकता है ।

दृश्य से परे विचारों की विलक्षण दुनिया

सृष्टि में सब कुछ भरा है । अपनी आवश्यकता एवं प्रकृति के अनुरूप जीवधारी प्राणी एवं पेड़-पादप उससे पोषण तथा विकास के लिए साधन प्राप्त करते हैं । वायुमण्डल में ऑक्सीजन भी है तथा कार्बन डाइऑक्साइड भी । जीव-जन्तु ऑक्सीजन को प्राणवायु के रूप में ही ग्रहण करते हैं, पर वृक्ष पर वनस्पतियाँ विषाक्त समझी जाने वाली गैस कार्बन डाइऑक्साइड का स्वेच्छा से पान करती हैं । जमीन में अनेकों प्रकार के तत्व मौजूद हैं । पर जीव-जन्तु तथा पेड़-पादप उससे अलग-अलग प्रकार के तत्व खींचते हैं एक ही समुदाय ही विभिन्न जातियों की तत्वों, खनिज पदार्थों के पृथ्वी से अवशोषण करने में भिन्नता भी दिखाई पड़ती है । वृक्ष-वनस्पतियों की आकृति एक प्रकृति में—गुण धर्म में भिन्नता दिखाई पड़ती है । उसका प्रमुख कारण है उनके द्वारा भूमि से विभिन्न तत्वों का ग्रहण किया जाना ।

प्राणियों की आकृति-प्रकृति में भी जो मौलिक अन्तर दिखाई पड़ता है । उसमें आनुवांशिक विशेषताओं के अतिरिक्त सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तथ्य यही कार्य करता है कि वे प्रकृति से किस प्रकार के तत्व-पोषण प्राप्त करते हैं । शाकाहारी जीव-वृक्ष वनस्पतियों पर गुजारा करते हैं । माँसाहारी जीव माँस भक्षण करते हैं । आहार की इस भिन्नता से उनकी आकृति एवं प्रकृति में भी अन्तर स्पष्ट दिखाई पड़ता है । बगीचे में भौरे पहुँचते हैं तथा गुबरीले कीड़े भी । एक फूलों पर रसपान करता है दूसरा गोबर पर बैठा मोद मनाता है । केचुए मिट्टी का भक्षण करके जीवित रहते हैं जबकि उनके भीतर लोहा, सोना, फॉस्फोरस, नाइट्रोजन आदि तत्व भरे होते हैं । वृक्षों की तरह उन्हें अलग से खींच पाना उसके लिए सम्भव नहीं हो पाता ।

भू-मण्डल तथा जल-मण्डल से भी बहुमूल्य सम्पदाएँ अन्तरिक्ष में भरी पड़ी हैं । पृथ्वी थल स्थूल हैं, आकाश सूक्ष्म । पृथ्वी पर बहुमूल्य अनुदान आकाश से ही होकर बरसते हैं । सूर्य की रोशनी, ताप इसी माध्यम से होकर आता है । पानी इसी के गर्भ में बनता तथा बरसता है । प्राण की पर्जन्य की, अन्तरिक्षीय अनुदानों की वर्षा इसी तल से होती है । उसका मात्र क्षेत्र ही विस्तृत नहीं है । वरन् सम्पदाएँ भी बढ़ी-चढ़ी हैं । ईथर तत्व उसके पोल में भरा है जो संचार तन्त्र का प्रमुख स्रोत है । ये वे पदार्थ हैं जिनकी जानकारी प्रायः हर विज्ञान वेत्ता को रहती है । तत्वदर्शियों ने अन्तरिक्षीय गर्भ में अधिक सूक्ष्म पर्तों तथा उनमें समाहित अगणित बहुमूल्य तथ्यों का रहस्योद्घाटन किया है । शरीर स्थूल है जो दीखता है । पर सभी जानते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि कार्य कर रही चेतना उस कलेवर में फैली रहती तथा वही काया की संचालक भी है । ठीक इसी प्रकार अन्तरिक्ष की भी अनेकों सूक्ष्म परतें हैं । अदृश्य जीवधारी भूत, प्रेत, पितर, किन्नर, देवता आदि का अस्तित्व उसी सूक्ष्म क्षेत्र में है । "देवता आकाश में निवास करते हैं, इस तथ्य की संगति भी उपर्युक्त तथ्य से बैठती है । मृत्यु के बाद, हलचल करने वाली—प्रेरणा देने वाली अदम्य कार्य कर दिखाने वाली चेतना आखिर कहाँ चली जाती है तथा वह अनायास कहाँ से प्रकट हो जाती है, उसकी खोजबीन करने पर सुनिश्चित रूप में एक अविज्ञात सूक्ष्म दुनिया की सम्भावना को स्वीकार करना पड़ता है । सम्भव है वह सूक्ष्म अन्तरिक्षीय परतों से अपना जाल फैलाये हुए हो तथा दृश्य दुनिया की हलचलों की प्रेरणा स्रोत हो ।

पदार्थों तथा चैतन्य जीवधारियों के अतिरिक्त विचारों का भी एक संसार है जो और भी अद्‌भुत है, अति सामर्थ्यवान है । मनुष्येत्तर जीवधारी तो स्थूल जड़ संसार तक ही सीमित रहते, उससे ही जीवनयापन की आवश्यक सामग्री प्राप्त करके किसी तरह गुजारा करते हैं । उनकी पहुँच विचार जगत तक नहीं है । पर मनुष्य उसके भी अधिक बहुत कुछ प्राप्त कर सकता है । अच्छा भी बुरा भी । देव-दानव का, जड़-चेतन का, रात-दिन का, प्रकाश-अन्धकार का, पाजिटिव-निगेटिव का युग्म प्रत्यक्षतः देखा जाता है । विचार जगत में भी दोनों तरह के तत्व विद्यमान हैं । भले एवं बुरे दोनों ही तरह के विचारों का उसमें अस्तित्व है । पदार्थों की दुनिया की तरह इसमें से भी अपनी इच्छा के अनुरूप भले-बुरे विचारों को खींचा एवं संग्रहीत किया जा सकता है ।

आणविक जीव विज्ञानी जैम्बिसमोनाड नामक विद्वान ने एक पुस्तक लिखी है—'चान्स एण्ड नेसेसिटी' उन्होंने यह रहस्योद्‌घाटन किया है कि मैटेरियल वर्ल्ड से जुड़ी बायोस्फीयर की स्ट्रैटोस्फीयर जैसी परतों के अतिरिक्त एक सूक्ष्म परत भी मौजूद है । इस परत का उन्होंने नाम—आइडियो स्फीयर रखा है । उनका मत है कि आइडियोस्फीयर में वैचारिक सम्पदा का वह भण्डार छुपा पड़ा है जो सृष्टि से लेकर अब तक मानव मस्तिष्क द्वारा आविष्कृत हुआ है तथा अपनी समर्थता के कारण समय-समय पर मानव जाति के उत्थान पतन का आधार बना है ।" वे लिखते हैं कि "सशक्त विचार कभी भी समाप्त नहीं होते—अचेतन ब्रह्माण्ड में विद्यमान रहते हैं । जीवधारियों की तरह विचार भी अपनी वंश-परम्परा में ही यथावत् न बने रहकर विकास के लिए सतत आतुर रहते हैं । समधर्मी विचार आपस में मिलते अनुकूल का चुनाव करते तथा धनीभूत होते रहते हैं ।"

साथ ही इस तथ्य का भी उन्होंने उल्लेख किया है कि जिन विचारों की आवृत्ति जितनी अधिक होती हैं वे उतने ही सक्षम-समर्थ बनते जाते हैं । उनकी तरंगें आडडियोस्फीयर में मौजूद रहती तथा अपनी प्रेरणाएँ सम्प्रेषित करती रहती हैं । वे तरंगें कई प्रकार की होती हैं । सभी सूक्ष्म वातावरण में प्रवाहित होती रहती हैं । प्रयोग होने पुनरावृत्ति होने अथवा न होने पर उनकी सामर्थ्य बढ़ती या घटती रहती है, पर मूलतः समाप्त कभी नहीं होती ।

विचारों की पुनरावृत्ति एवं उनके प्रभाव से तैयार होने वाले वातावरण की भली-बुरी अनुभूतियाँ भी किन्हीं-किन्हीं स्थानों पर होती हैं । मन्दिर, मस्जिद, गिरजाघर आदि स्थलों पर पावन सात्विक विचारों का आह्वान किया जाता है । उनकी ही बारम्बार आवृत्ति होती रहती है । उसका स्थानीय प्रभाव अनुभव किया जा सकता है । दर्शन के लिए पहुँचने वालों के मन को शान्ति मिलती, आशा की ज्योति जगती, निराशा की भावना मिटती है । कसाईखानों में पशु मारे जाते हैं । उनके कारुणिक क्रन्दन के सूक्ष्म प्रभावों से वह वातावरण घिरा रहता है । अनायास ही उसकी अनुभूति घृणा एवं भय जुगुप्सा के रूप में होती है । युद्ध भूमि में भय की भावना का संचार युद्धोपरान्त भी होता रहता है । हिमालय का उत्तराखण्ड क्षेत्र आदि काल से ही ऋषियों की तपःस्थली रहा है, जो तीर्थाटन परिभ्रमण अथवा साधना के लिए पहुँचते हैं, उन्हें सहज ही यह अनुभूति होती है, जैसे सात्विक विचारों की वर्षा हो रही हो । मन अपने आप लगने लगता तथा किसी समर्थ सत्ता के अस्तित्व में विश्वास जमने लगता है ।

स्थानीय प्रभावों तक ही विचारों की सीमा नहीं है । सूर्य की, वायु की नमी की तरह उनका प्रभाव व्यापक क्षेत्र में पड़ता है । जिस तरह वायु के झोंके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एवं सूर्य की किरणें गतिशील बने रहते हैं, उसी प्रकार विचार भी व्यापक अन्तरिक्ष में परिभ्रमणशील रहते हैं । गंगा एवं जमुना दोनों ही नदियों का स्रोत हिमालय है । पर गति एवं दिशा अलग-अलग होने से वे भिन्न-भिन्न क्षेत्रों को अपनी लपेट में ले लेती हैं । जिन्हें गंगा के पावन एवं स्वास्थ्यवर्धक जल का लाभ लेना हो उन्हें गंगा के तटवर्ती क्षेत्रों में जाने पर अवश्य ही मिलता है ।

सूक्ष्म विचार जगत में अस्तित्व तो हर तरह के विचारों का है पर उनमें उन्हीं का लाभ उठा सकना सम्भव है जिसका आह्वान-अवगाहन किया जायेगा । ग्रहण करने तथा अभीष्ट प्रकार के विचारों से अपनी झोली भर लेने में मनुष्य की मानसिक स्थिति की भी एक बड़ी भूमिका होती है । विचार जगत से आदान-प्रदान का क्रम भी उसी के अनुरूप चलता है । मानवी मस्तिष्क में दोनों तरह के विचार चलते हैं । अच्छे भी, बुरे भी, विधेयात्मक भी, निषेधात्मक भी, सृजनशील भी, विध्वंसक भी । मन पर जिस तरह के विचार हावी होंगे, मनःस्थिति उसी के अनुरूप बनेगी । मनःक्षेत्र में प्रभावी विचारों का आह्वान भी अपने सजातियों के लिए होता है । मस्तिष्क से वे निकलते खोजी दलों की तरह सूक्ष्म अन्तरिक्ष का परिभ्रमण करते तथा प्रवाहित विचार तरंगों में अपने सजातियों का संग्रह कर लेते हैं ।

एक जैसे वातावरण तथा एक-सी परिस्थितियों में रहने के बावजूद भी दो व्यक्तियों का विकास भिन्न स्तर का हो जाता है । एक सन्त ऋषि, महामानव बन जाता है । दूसरा दुष्ट, दुराचारी, नर पिशाच बन जाता है । इस अन्तर का कारण ढूँढ़ना हो तो उनकी मनःस्थिति का गम्भीरतापूर्वक अध्ययन-पर्यवेक्षण करना चाहिए । समाधान इस बात में मिलेगा कि उनमें किस तरह के विचार हावी थे । विचार जगत से वस्तुतः उसी के अनुरूप पोषण मिला तथा भला-बुरा व्यक्तित्व ढलता गया ।

समष्टिगत चिन्तन के अनुरूप ही युग का स्वरूप तथा प्रत्यक्ष वातावरण बनता है । तत्वदर्शियों का मत है कि इन दिनों परिस्थितियाँ अत्यन्त विस्फोटक हो चली हैं । उसका प्रत्यक्ष कारण कुछ भी लगाया जाय पर परोक्ष तथा सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण कारण ध्वंसकारी विचार चक्र की गति एवं स्थिति का तीव्र एवं सुदृढ़ हो जाना है, जिसकी स्थूल प्रतिक्रिया निकृष्ट चिन्तन तथा भ्रष्ट आचरण के रूप में सर्वत्र दिखाई पड़ रही है । युग परिवर्तन में इसी विचार चक्र को तोड़ना तथा क्षीण पड़ गए सृजनधर्मी विचार चक्र को सुदृढ़ करना व गति देना पड़ता है ।

जिन विचारों का आह्वान किया जायेगा उसी के अनुरूप विचार जगत से अनुदान मिलेगा । इन दिनों सर्वत्र बोलबाला निषेधात्मक, विध्वंसक विचारों का हो रहा है । फलस्वरूप सूक्ष्म विचार जगत न केवल उसी के अनुरूप प्रेरणाएँ सम्प्रेषित कर रहा है वरन् बारम्बार ध्वंस की आवृत्ति पाकर अपने उस स्तर को मजबूत बना रहा है । यह संकट दूर होने के स्थान पर और भी घनीभूत होता जा रहा है । उसे परिपोषण मानवी चिन्तन द्वारा विभिन्न अभिव्यक्तियों के माध्यम से सतत् मिल भी रहा है । पर ये परिस्थितियाँ उलट भी सकती हैं, यदि सामूहिक चिन्तन को मोड़ा-मरोड़ा जा सके ।

विचारों के आधार पर ही मानवी व्यक्तित्व बनता है । तद्नुरूप आचरण प्रस्तुत होता है पर यह खुली छूट है कि मनुष्य किस तरह के विचारों का चयन करे । मूलतः मानव दैवी सत्ता का अंश है । प्रकृति आसुरी तत्वों से युक्त है । सत्ता में दोनों का ही अंश एवं प्रभाव है । जिसका पलड़ा भारी होगा उधर ही मनुष्य का रुझान होगा । उसी के विचारों का चिन्तन होगा तथा विचार जगत से भी उसी अनुरूप आदान-प्रदान चलेगा, वस्तुतः मानव की संकल्पशक्ति में गजब का बल है । वह पतन की ओर ढकेलने वाले मन-मस्तिष्क पर छाये निषेधात्मक विचारों के परिकर को एक झटके से तोड़ सकती है । यह सम्भव हो सके तो विचार जगत से श्रेष्ठ विचारों के आदान-प्रदान का अविराम क्रम आरम्भ हो सकता है । जिसके फलस्वरूप यह सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है, जो पदार्थ जगत से भी करतलगत कर सकना सम्भव नहीं हो सका है ।

प्रार्थना और कुछ नहीं केवल भाव प्रवण विचार सम्प्रेषण है, जो श्रद्धासिक्त मन में उठते हैं और चहुँ ओर ईथर तत्व में फैलकर तदनुरूप विचारों, भावनाओं, प्रतिक्रियाओं को समेट कर कर्त्ता के पास फिर से वापस आ जाते हैं । प्रार्थना द्वारा मनुष्य अपने विचारों को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने इष्ट तक भगवान तक प्रेषित करता है और बदले में धन्य बनता है ।

वस्तुतः आत्म-चेतना को परमात्मा सत्ता से जोड़ने उससे वार्तालाप करने तथा उसमें निवास करने का सर्वोत्तम उपाय प्रार्थना है । यह वह उपक्रम है जिसके द्वारा मनुष्य अपनी अन्तरात्मा की भूख को मिटाता है । शरीर की क्षुधा अन्न-जल से मिटती है और उससे उसको शक्ति मिलती है । उसी तरह अन्तरात्मा अपनी आकुलता को मिटाने, अपने ऊपर चढ़े मल-विक्षेपों-कषाय-कल्मषों को हटाने और उसमें बल तथा प्रकाश भरने, अपूर्णता से पूर्णता की ओर ले चलने की प्रार्थना भगवान से करता है । पितु, मातु-सहायक, स्वामि सखा की भावना रखकर आराध्य के सम्मुख की गई प्रार्थना कभी निष्फल नहीं जाती है । परमात्मा चेतना को जहाँ-कहीं जब-कभी भी श्रद्धासिक्त भावभरी हार्दिक अभिव्यक्ति मिलती है तो उनकी प्रत्यक्ष या परोक्ष सहायता उभरे बिना रह नहीं सकती । ऐसी अनेकों घटनाएँ अनादि काल से लेकर अब तक के पुराण एवं इतिहास के पृष्ठों पर अंकित हैं जिसमें सनातन सत्ता के मानवी प्रार्थना पर द्रवीभूत होते और उसकी सहायता मिलते रहने को प्रमाणित करते हैं ।

सुप्रसिद्ध मनीषी नार्मन विन्सेन्ट पील ने अपनी कृति "ट्रेजॅरि ऑफ कॅरेज एण्ड कान्फीडेन्स" में कहा है कि जीवन को पवित्र, प्रखर, सुखमय एवं अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न बनाने के लिए नियमित रूप से प्रार्थना करना अनिवार्य है । प्रार्थना न केवल पूजा-अर्चना का विषय है, अपितु आत्मसत्ता को विराट् चेतना के साथ जोड़ने की प्रचण्ड प्रक्रिया है । प्राण ऊर्जा उत्पन्न करने की शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य सम्बर्धन की सर्वोच्च साधना है । शारीरिक दृष्टि से इसका प्रभाव हारमोन ग्रन्थियों पर तो पड़ता ही है, साथ ही मानसिक स्तर को भी उत्कृष्ट चिन्तन की दिशाधारा मिलती है । विधेयात्मक दृष्टिकोण इसी की परिणति है । पृथ्वी की गुरुत्वाकर्षण के समतुल्य ही प्रार्थना भी ईश्वरीय सहायता को अपनी ओर आकर्षित करने में सक्षम है । भौतिक-वेत्ताओं एवं चिकित्साविज्ञानियों ने भी अब प्रार्थना को समर्थ आध्यात्मोपचार के रूप में मान्यता प्रदान की है । उनका मानना है कि प्रार्थना से न केवल उदासीनता और निराशा जन्य लाइलाज मानसिक व्याधियों वरन् असाध्य समझी जाने वाली शारीरिक बीमारियों का निदान भी प्रार्थना की शक्ति से सम्भव है । पाश्चात्य देशों में इसके लिए नियमित रूप से सामूहिक प्रार्थना सभाएँ आयोजित की जाती हैं और उनके प्रतिफल भी उत्साहवर्धक रूप के सामने आते हैं ।

इस सन्दर्भ में मूर्धन्य विद्वान फ्रैंक एडवर्ड्स ने अपनी पुस्तक "स्ट्रैन्ज वर्ल्ड" में अमेरिका के टेनेसी राज्य के शेखुड स्थान की मार्गेट-जेक्शन नामक एक बालिका का उदाहरण प्रस्तुत किया है । मार्गेट तब दो ही वर्ष की थी कि अचानक बीमार पड़ गई । चिकित्सकों ने बहुत जाँच-पड़ताल की, पर रोग की भयंकरता उनके समझ में न आ सकी । अतः उसे नेशविले के वांडरबिल्ट अस्पताल ले जाया गया । महीनों की सघन चिकित्सा के बावजूद भी उसको अन्धी होने से बचाया न जा सका । बालिका अपने घर लौट आयी ।

पता नहीं यह बीमारी आगे चलकर क्या स्वरूप धारण करे, यह भय मार्गेट के पिता को जो एक विद्युतकर्मी था, सताता रहता है । अतः उन्होंने अपनी यह व्यथा एपिसकोपल मिशन के पादरी रेवेण्डजॉन हस्के को बताई और कहा कि इस लड़की की बीमारी का निदान डॉक्टर ठीक से नहीं कर पा रहे हैं, क्या किया जाय ? पादरी ने लड़की के माता-पिता को प्रार्थना की शक्ति में विश्वास कराते हुए नियमित रूप से लगातार प्रार्थना करते रहने का सुझाव दिया । अब तो मार्गेट सहित उसके माता-पिता दो वर्ष तक नियमित रूप से उसकी आँख की दृष्टि से लौट आने के लिए प्रार्थना करते रहे । बीच-बीच में पादरी महोदय भी सामूहिक प्रार्थना में सम्मिलित हो जाते । दो वर्ष पूरे होने को आये ही थे कि एक दिन फिर से पूर्व हुई बीमारी का पुनरावर्तन हुआ जिसके कारण उसे अस्पताल में भर्ती कराना पड़ा । चार वर्ष की मार्गेट पर फिर अनेकों परीक्षण किए गए, पर इस बार भी रोग का सही पता लगा पाने में चिकित्सकों को असफलता ही हाथ लगी । रोग को असाध्य मानकर उसे अस्पताल से छुट्टी दे दी गई । नेत्रहीन लड़की को भाग्य-भरोसे छोड़कर उसके माता-पिता साथ लेकर घर आ गए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

और उसकी स्वास्थ्य रक्षा के लिए अपने उपासना गृह में बराबर ईश्वर से प्रार्थना करते रहे ।

कुछ ही दिन बीते थे कि एक रात्रि मार्गेट के पिता ने सिगरेट सुलगाने के लिए ज्यों ही माचिस जलाई, उसके प्रकाश को देखकर वह उसे पकड़ने को दौड़ी लोगों के आश्चर्य का ठिकाना न रहा कि ढाई वर्ष की लम्बी बीमारी के पश्चात मार्गेट की आँखों की रोशनी लौट आयी थी । इस घटना के बाद उसकी दृष्टि में सुधार होता गया और कुछ ही महीनों में वह पूर्ण स्वस्थ हो गई । आँखों पर किसी प्रकार के चश्मे की भी आवश्यकता नहीं रही । पादरी हस्के ने इस घटना को प्रार्थना की शक्ति का जीवन्त उदाहरण बताया है और कहा कि मनुष्य यदि अपने भीतर ईश्वरीय शक्ति में सच्ची श्रद्धा उत्पन्न कर सके तो उस आधार पर बड़े-से बड़े-संकटों पर भी विजय प्राप्त कर सकता है ।

इसी तरह की एक अन्य घटना का वर्णन "बियॉन्ड रीजन मिरेकल्स कैन चेन्ज योर लाइफ" नामक अपने ग्रन्थ में पी. राबर्टसन ने किया है । बारबरा कास्की नामक एक किशोरी ६ वर्ष से "मल्टिपिल स्केलोरिसिस' नामक महाव्याधि से ग्रस्त थी जिसकी चिकित्सा अमेरिका के इलिनोइस राज्य के एक अस्पताल में चल रही थी । उसकी देखभाल कर रहे उसी राज्य के प्रसिद्ध चिकित्सा विज्ञानी डॉ. थॉमस मारसल के अनुसार यद्यपि बारबारा मरणासन्न स्थिति में पहुँच चुकी थी, फिर भी उसकी आँखों में जिजीविषा की चमक विद्यमान थी । उन्होंने अपनी सूझबूझ के सहारे निराश के घने अन्धकार में डूबते हुए कास्की के माता-पिता को धैर्य बँधाते हुए कहा कि जब जगत के सब दरवाजे बन्द दीखते हों तब अदृश्य चेतना महासागर के आवश्यक सहायता खींच बुलाने के लिए ईश प्रार्थना ही एक मात्र कारगर उपाय-उपचार शेष रह जाता है । कारण बारबारा की स्थिति भी ऐसी ही हो गई थी जिसमें मानवी प्रयत्नों की चिकित्सकीय उपचारों की इति श्री हो चुकी थी । मानवी बुद्धि के माध्यम से जो कुछ भी सम्भव था, अस्पताल में किया जा चुका था ।

डॉ. थामस न केवल भौतिक चिकित्सा विज्ञानी थे, वरन् प्रार्थना की शक्ति में उनका अटूट विश्वास था जिसके माध्यम से वे अब तक सैकड़ों मरीजों को स्वस्थ करने की ख्याति अर्जित कर चुके थे । उन्होंने लड़की के पिता का ध्यान अस्पताल की मुख्य दीवाल पर लिखे हुए महाकवि टेनीसन के एक महावाक्य की ओर आकर्षित किया जिसमें लिखा था—'सांसारिक मनुष्य जो सोचता और करता है, उससे कहीं अधिक समर्थ शक्ति प्रार्थना में है ।' चूँकि बारबारा के रोग को चिकित्सकों ने असाध्य घोषित कर दिया था, अतः उन्होंने उसके माता-पिता को आध्यात्मोपचार की ओर प्रेरित किया । अस्पताल में ही टी. वी. पर प्रतिदिन 'प्रार्थना द्वारा रोगोपचार' विषय पर कार्यक्रम दिखाए जाने लगे कि किस प्रकार रोगी औषधि उपचार की अपेक्षा प्रार्थना की आध्यात्मोपचार प्रक्रिया द्वारा अनेक गुनी शक्ति प्राप्त करता है और पूर्ण निरोग हो जाता है । इस प्रक्रिया से बारबारा का खोया आत्म-विश्वास वापस लौटने लगा और वह स्वयं प्रार्थना में उन शब्दों को गुनगुगाने लगी । अब उसके मन में जिजीविषा की आकांक्षा प्रबल हो उठी थी और नर्स की सहायता से प्रतिदिन सामूहिक प्रार्थना में सम्मिलित होने लगी । एक वर्ष एक यही क्रम चलता रहा ।

अमेरिका के इलिनोइस प्रान्त में डॉ. एफ. डिविनिटी पेट राबर्टसन ने 'क्लब ७००' नामक एक संस्था स्थापित की है । यह संस्था टी. वी. प्रसारण के माध्यम से आध्यात्मिक रोग शमन में विभिन्न कार्यक्रम प्रसारित करती है । रोगियों से मुलाकातें तथा उनके उपचार, प्रार्थना सभाओं का आयोजन आदि की जानकारी केबिल टी. वी. के जरिए लगभग ढाई करोड़ व्यक्तियों तक पहुँचाई जाती है । बारबारा के लिए भी उन्होंने सामूहिक प्रार्थनाएँ आयोजित करनी आरम्भ कर दीं जिसमें उसके साथ सैकड़ों लोग शीघ्र स्वास्थ्य लाभ के लिए प्रार्थनाएँ करने लगे । फलस्वरूप जो लड़की पहले विस्तर से उठ नहीं पाती थी, धीरे-धीरे क्रमशः ठीक होने लगी । मल्टिपिल स्केलोरिसिस नामक जिस महाव्याधि से वह पीड़ित थी, उसका लक्षण ही यह है कि जिस प्रकार किसी विद्युत उपकरण में जिन तारों से बिजली पहुँचाई जाती है, उन पर चढ़ी प्लास्टिक खोल यदि जल जाती है तो दो तार जहाँ सटे हुए होते हैं, वहाँ शॉर्ट सर्किट होने लगती है और शक्ति स्रोत सम्बन्ध विच्छेद हो जाने के कारण उपकरण निरुपयोगी हो जाता है । इसी प्रकार मस्तिष्क से

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विभिन्न अंगों को नियन्त्रण में रखने के लिए संकेत स्नायु-मण्डलों के माध्यम से दिए जाते हैं । इन स्नायु तन्तुओं पर भी 'माइलिन' नामक एक वसीय परत चढ़ी होती है जो इस बीमारी के कारण गलने लगती है । बारबारा के स्नायु तन्त्र की माइलिन भी गलने लगी थी । फलस्वरूप हाथ-पैरों से लेकर क्रमशः सभी शारीरिक प्राणलियाँ एक के बाद एक बेकार होती चली गईं । साँस लेना तक दूभर हो गया था । अतः कृत्रिम श्वास पर इसे जीवित रखा जा रहा था । ६ वर्षों तक वह इसी प्रकार कृत्रिम यन्त्रों के माध्यम से किसी प्रकार जीवित रही । सातवें वर्ष सामूहिक प्रार्थना की शक्ति ने अपना चमत्कारिक प्रभाव दिखाना आरम्भ कर दिया । सर्वप्रथम फेफड़ों की क्षमता धीरे-धीरे लौटने लगी । इसके बाद कैथेटर की सहायता में भी कमी आने लगी । जैसे-जैसे प्रार्थना में उसकी अभिरुचि बढ़ती गई, आत्मविश्वास जगने लगा त्यों-त्यों उसके स्नायु-मण्डल की माइलिन परतें जो विगलित हो गई थीं, पुनर्स्थापित होने लगी और चिकित्सकों के प्रयत्न भी सफल होने लगे ।

पी. राबर्ट्सन के अनुसार बारबारा के ही शब्दों में '७ जून सन् १९७१ को जब डॉ. थॉमस मुझे देखने आये थे तब मैंने जीने की आशा छोड़ दी थी, लेकिन उनकी सद्भावना एवं विशाल चिकित्सकीय अनुभव के साथ प्रार्थना शक्ति को जोड़ने की अद्भुत कुशलता ने मुझे नया जीवन प्रदान किया । 'मेडीकल साइन्स' के साथ 'स्पिरिचुअल साइन्स' का बेमिसाल समन्वय, लोगों की सद्भावना तथा विश्वासपूर्वक सच्ची लगन से अन्तःकरण की पुकार का मनोविज्ञान क्या-क्या चमत्कार नहीं कर सकता है, अपने आप में एक अवर्णनीय सत्य है । ठीक दस वर्ष बाद अर्थात् ७ जून, १९८१ में सोलह वर्ष की उम्र में वह पूर्ण स्वस्थ हो गई और चलने-फिरने लगी । डॉ. थॉमस सहित सभी चिकित्सकों के लिए यह सुखद आश्चर्य था । सभी ने उस परमसत्ता की अनुकम्पा के प्रति जो अहो-भाव अनुभव किया था, वह वर्णनातीत है ।

प्राचीनकाल से ही प्रायः सभी देशों में इस प्रकार की असाध्य बीमारियों में आध्यात्मिक उपचारों का सहारा लिया जाता रहा है । यूरोप, अमेरिका आदि पाश्चात्य देशों इन्द्रियगम्य उपचारों के अतिरिक्त 'फेथ हीलिंग' जैसे आध्यात्मोपचारों में प्रार्थना के बल पर अनेकानेक आधि-व्याधियों से मुक्त दिलाई जाती है । इसके लिए अशरीरी आत्माओं की भी सहायता ली जाती है । उदाहरण के लिए इटली की एक घटना को लिया जा सकता है । इस देश के ब्रसिया काउन्टी के मोन्टीकियारो नगर में पेरिनागिली नामक एक नर्स रहती थी । १३ जुलाई १९४७ के दिन अचानक उसने हवा में तैरती हुई एक दिव्य नारी को देखा जिसके सीने पर सफेद, पीले और लाल रंग के तीन फूल थे । उस देवी ने उसे बताया कि यदि लोग सामूहिक प्रार्थना करके रोगग्रस्त व्यक्तियों की आधि-व्याधि दूर करने का सच्चे हृदय से संकल्प करेंगे तो उनकी बीमारियाँ दूर होने लगेंगी । नर्स ने जब यह बात अस्पताल में बतायी तो वहाँ का सारा स्टाफ और रोगियों के मित्रों ने मिलकर सामूहिक प्रार्थना सभा का आयोजन किया जिसका आश्चर्यजनक सत्परिणाम निकला । रोगियों में नई आशा की किरणें उभरने लगीं जिसकी कोई उम्मीद तक नहीं थीं तब से न केवल उस अस्पताल में वरन् पूरे नगर में उस दिन सामूहिक आयोजित की जाती हैं जिसे 'रोजामिस्टिका' पर्व नाम दिया गया है । दैवी सहायता को खींच बुलाने का प्रार्थना से बढ़कर दूसरा कोई कारगर उपाय नहीं है ।

रेडियो प्रसारण में एक स्थान से बोले हुए शब्द आकाशीय तरंगों से सभी दिशाओं में दूर-दूर तक फैलते हैं । जहाँ भी उसको सुन जाने वाले यन्त्र रखे होते हैं, वहाँ उन्हें आसानी से सुन लिया जाता है । दूरदर्शन में भी यही होता है । एक स्थान से दृश्यों को विद्युतशक्ति के सहारे आकाश में फैंका जाता है, वे दृश्य प्रकाश तरंगों के रूप में अन्तरिक्ष में बिखरते हैं । उन्हें जहाँ भी देखे जाने वाले उपकरण लगे होते हैं, वहीं वे बटन दबाते ही दिखाई देने शुरू हो जाते हैं । मस्तिष्क भी इसी प्रकार का एक शक्ति उत्पादक केन्द्र है । यहाँ से विचार उठते हैं और वे समस्त आकाश में फैल जाते हैं, किन्तु वे पकड़ में नहीं आते हैं, जहाँ उन्हें ग्रहण किए जाने हेतु अनुकूल स्थिति होती है ।

अनुकूल स्थिति से तात्पर्य है—पकड़ने वाले मस्तिष्क की स्थिति लगभग वैसी होनी चाहिए जैसी कि भेजने वाले की थी । दोनों के बीच समस्वरता होने पर ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदान-प्रदान का सिलसिला ठीक से चल पड़ता है । हर मस्तिष्क में भेजने और ग्रहण करने की क्षमता है । अन्तर इतना ही होता है कि किन्हीं मस्तिष्कों में विचार संचालन के उपयुक्त विद्युत शक्ति कम होती है और किन्हीं में बढ़ी-चढ़ी जिनमें सशक्तता होती है । वे विचार संचालन ठीक प्रकार कर पाते हैं । पर यदि वह धीमी हो तो भी उठने वाली विचार फैलते तो हैं पर उनकी सामर्थ्य इतनी नहीं होती कि उन्हें सुनने के इच्छुक आसानी से सुन सकें । कभी-कभी मनुष्य की स्थिति उत्तेजना भरी होती है तब वह विचार सम्प्रेषण भी तीव्र हो जाता है और उसे झटके के साथ अप्रत्याशित रूप से सुना जा सकता है । ऐसे झटके शोक, दुर्घटना उत्पीड़न आपत्ति जैसी स्थिति में होते हैं । देखा गया है कि मरण के समय या किसी दुर्घटना में फँस जाने पर व्यक्ति चीत्कार जैसी मनःस्थिति में अपने घनिष्ठ सम्बन्धियों तक अपने विचार पहुँचाना चाहता है । उस समय उसकी ऊर्जा बढ़ी-चढ़ी होती है, अस्तु वे विचार भी विशिष्ट स्थान तक पहुँचने में बिना किसी अड़चन के सफल हो जाते हैं । ऐसी कितनी ही घटनाएँ सुनी गई हैं कि मरने वाले या दुर्घटना किसी व्यक्ति ने अपने प्रियजन को याद किया और सुदूर बैठे उस व्यक्ति को अचानक वैसी ही अनुभूति हुई ।

प्रिय पात्रों के बीच में विचारों का आदान-प्रदान चलता रहता है । दूर-दूर रहने वाले प्रेमीजन अपनी भावनाओं को एक दूसरे तक पहुँचाते रहते हैं और वे अधिकतर सही अनुभूतियाँ होती हैं । मित्रता की तरह शत्रुता में भी यह गुण होता है । कारण यह है कि शत्रु का व्यक्तित्व भी मित्र की तरह ही मस्तिष्क पर छाया रहता है । पारस्परिक तादात्म्य किसी प्रकार बन जाय तो तो व्यक्तियों के बीच विचार-संचालन का क्रम चल पड़ेगा । इस परिकर में दोनों के स्थान पर भी कई व्यक्ति सम्मिलित हो सकते हैं । संसार के अगणित स्थानों पर रेडियो, टेलीविजन प्रसारण यन्त्र लगे हैं । वे अपनी कुछ न कुछ बात लगातार कहते रहते हैं । इन्हें सुनने के लिए तनिक अधिक सशक्त ग्रहण यन्त्र या ट्राँजिस्टर क्रिस्टल चाहिए । रेडियो-टेलीविजन में यह विशेषता है कि प्रसारण के लिए बहुमूल्य यन्त्र और अधिक बड़ी शक्ति की बिजली चाहिए । निकटवर्ती होने पर वही कार्यक्रम शक्ति से भी चल पड़ता है, किन्तु उसकी प्रसारण शक्ति न्यून होती है । विचारों के सम्प्रेषण में भी यही बात है । किसी के भेजे हुए विचार तो आकस्मिक स्मृति के रूप के अलावा स्वप्न में तन्द्रिय स्थिति में भी अपनी झलक दिखा जाते हैं, किन्तु लम्बा सम्प्रेषण तभी सम्भव है जब प्रेरक का मनःक्षेत्र और अधिक सामर्थ्यवान् हो जाय और जिसे कुछ बताना है उसका ध्यान अन्यत्र लगा होने पर उसे रोक कर अपनी ओर आकृष्ट करने के लिए सहयोगी बना लिया जाय ।

आरम्भ में यह वैयक्तिक विचार संचरण समग्र एवं निर्दोश नहीं होता । उससे कुछ बातें प्रेषित तो होती हैं, पर कुछ ग्रहीता की निज की कल्पनाएँ भी मिल जाती हैं । इस प्रकार बात आधी-अधूरी रह जाती है, पर यह अभ्यास जारी रखा जाय । सम्प्रेषण का समय नियत रखा जाय । दोनों पक्ष उसकी तैयारी में संकल्पपूर्वक बैठें तो उस प्रक्रिया में रहने वाली त्रुटियाँ घटती जायेगी और समग्रता बढ़ती जायेगी ।

यह व्यक्तिगत विचार सम्प्रेषण की बात हुई । इससे रेडियो टेलीविजन का काम बिना किसी यन्त्र की सहायता के हो सकता है । व्यक्तिगत विचार विनिमय में प्रायः निजी बातें रहती हैं, किन्तु पारमार्थिक विचारणाओं का घेरा विशेष रूप से बनाया जा सकता है । जिसे एक प्रकार से एक विचारों का प्रभामण्डल या आयडियोस्फियर कहा जा सकता है । जिस प्रकार सत्संग गोष्ठी या सभा इत्यादि में एक वक्ता उस परिकर में उपस्थित अनेक लोगों को अपनी बात सुना सकता है, वैसा ही प्रयोग आदर्शवादी परामर्श के लिए नियमित व्यवस्था बनाकर उस प्रकार का प्रयोग किया जा सकता है । समर्थ आत्मविज्ञानी नियत समय पर नियमित रूप से अपने शिष्यों को परामर्श देते रहे हैं । अरुणाचल में महर्षि रमण जिन दिनों मौन रहते थे, उन दिनों भी उनका मौन सत्संग चलता था । वे मौन स्थिति में ही अपनी परा-पश्यन्ति वाणी द्वारा प्रवचन करते थे । उपस्थित जन उस सूक्ष्म कथन की प्रतिध्वनि अपनी-अपनी अन्तः चेतना में श्रवण किया करते थे । परस्पर पूछने पर बात एक ही मिलती थी कि सबने क्या सुना, किस क्रम से, किन-किन प्रमाणों को उद्धरण सहित सुना । इस प्रकार का लाभ पहुँचाने में अन्य साधक भी निष्णात हो सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुविचारों का क्षेत्र बहुत बड़ा अपेक्षाकृत अधिक सशक्त है । वह अनायस ही दुर्बल मन वालों को अपने चंगुल में फँसा लेते हैं । अपनी इच्छा के अनुरूप ढाल लेते हैं । गुरुत्वाकर्षण की शक्ति सहज ही अपना काम करती रहती है । ऊपर से गिरने वाले को लपक कर नीचे खींच लेती है । पानी ढलान की दिशा में अनायास ही बहने लगता है । इसी प्रकार कुविचार दुर्बल मस्तिष्क वालों पर अपना शासन सहज ही स्थापित कर लेते हैं ।

सत्संग और कुसंग के बारे में उनका प्रभाव वर्णित करते हुए मनीषियों ने बहुत कुछ कहा है । उन्हें जिस प्रकार के वातावरण में रहना पड़ता है, वे अनायास ही उस माहौल में ढलने लगते हैं । ऋषियों के आश्रम के समीपवर्ती क्षेत्र में सिंह और गाय एक घाट पानी पीते थे । कारण इतना भर था कि प्राणवान तपस्वियों की आत्मप्रेरणा उस क्षेत्र के पशु-पक्षियों तक को प्रभावित करती थीं और वे अपना स्वाभाविक बैर-भाव भूल जाते थे । स्वभाव के विपरीत स्नेह सौजन्य के साथ रहने लगते थे । यह प्रयोग मनुष्यों पर भी हो सकता है । कोई सामर्थ्यवान् आध्यात्मवेत्ता विपरीत विचार वालों को अपने प्रभाव से प्रभावित करके अपने ढाँचे में ढाल सकते हैं । आसुरी प्रवृत्ति वालों का प्रभाव और भी अधिक बढ़ा-चढ़ा रहता है । दुर्गुणी, दुर्व्यसनी, अनाचारी अपने समीपवर्ती लोगों में अनेक को अपनी कुटेवें लगा देते हैं । इसके लिए उन्हें कुछ विशेष कहना समझाना नहीं पड़ता । बुरे लोग बुरे प्रयोजनों के लिए ढुलमुल मन वालों को सहज ही अपनी ओर खींच लेते हैं परन्तु कुटेवें छुटाने के लिए आदर्शों में प्रवृत्त करने के लिए अधिक बढ़ी-चढ़ी सामर्थ्य चाहिए । वह उन्हीं में उत्पन्न होती है, जिनका चिन्तन-चरित्र और व्यवहार ऊँचे दर्जे का होता है, जिनकी प्राण-विद्युत साधना प्रयोगों द्वारा बढ़कर ऊँची स्थिति में पहुँचायी गई होती है ।

सत्संग का महत्त्व मात्र इसीलिए नहीं है कि वहाँ सुनने को सत्परामर्श मिलता है, वरन् इस दृष्टि से भी है कि वहाँ उपस्थित जनों में से जो ज्यादा प्रतिभावान होते हैं वे अपनी तेजस्विता से समीपवर्ती क्षेत्र पर भी प्रभाव छोड़ते हैं और अपने मानस के अनुरूप उपस्थित लोगों का भी मानस बनाते हैं । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कुसंग से दूर रहने का परामर्श दिया जाता है, क्योंकि वे भले ही अपनी प्रत्यक्ष वाणी से कुछ न कहें परन्तु उनका सूक्ष्म प्रभाव काम करने लगता है, और जो भी उनसे प्रभावित होते हैं, उन्हें अपनी रीति-नीति का अनुकरण करने के लिए सहमत कर लेता है । इतनी प्रचण्ड है—विचारों की शक्ति ।

बिना बोले विचार भेजना

क्या मनुष्य एक स्थान पर बैठ कर बिना बोले अपने विचार दूसरे मन तक संचालित कर सकता है ? बाह्य दृष्टि से प्रश्न जटिल प्रतीत होता है, किन्तु वास्तव में ऐसा नहीं है । हमारे पूर्वज ऋषि मुनि योगी अपने विचार बिना शब्दोच्चारण किए हुए दूसरों पर स्पष्ट प्रकट कर दिया करते थे । योग की आश्चर्यजनक सिद्धियों की प्राप्ति से मनुष्य क्या नहीं कर सकता । एक ओर योगी ब्रह्म समाधि में लीन होकर अनिर्वचनीय आनन्द का अनुभव करता है, तो दूसरी ओर वह योगबल से अनेक चमत्कार प्रदर्शन कर संसार को आश्चर्य में डाल सकता है । योगबल द्वारा विकसित मानसिक शक्तियों के द्वारा योगी दूसरे मनुष्यों पर अपना प्रभाव डाल सकते हैं और साथ ही अपने पुष्ट विचार उनके मन में प्रविष्ट करा सकते हैं । मेस्मेरेजम, हिप्नोटिज्म इत्यादि योग के ही कुछ चमत्कार हैं ।

प्रसिद्ध उपन्यासकार श्री एच. जी. वेल्स ने अपने एक उपन्यास में सौ वर्ष आगे का काल्पनिक चित्र प्रस्तुत किया है । एक स्थान पर आप एक वक्ता का उल्लेख करते हुए निर्देश करते हैं कि वह एक विशाल जन-समुदाय में खड़ा हुआ वक्तृता दे रहा था । आत्म-तेज से उस वक्ता का मुखमण्डल प्रदीप्त हो रहा था । उसके नेत्रों से आकर्षण शक्ति की सूक्ष्म तरंगें निकल रही थीं । उसके होठ हिलते थे, हाथों द्वारा संकेत भी होते थे, किन्तु ध्वनि बिल्कुल नहीं आ रही थी । उस श्रोता समाज में इटैलियन, फ्रेंच, रूसी, भारतीय, अंग्रेज इत्यादि सभी देशों के व्यक्ति सम्मिलित थे, किन्तु प्रत्येक व्यक्ति भाषण का प्रत्येक अक्षर स्पष्टतः समझ रहा था । हम लोग भी उसी समुदाय में सम्मिलित हो गए । हमें भय था कि कदाचित् विदेशी भाषा में होने के कारण हम वक्तृता का आनन्द प्राप्त न कर सकेंगे किन्तु हमारे आश्चर्य की सीमा न रही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जब हमने अनुभव किया कि हमारी मातृभाषा में परिवर्तित होकर प्रत्येक अक्षर स्पष्ट समझ में आता था ।

वास्तव में वक्ता किसी विशेष भाषा में न बोल रहा था । प्रत्युत भाषा के स्थान पर अपने विचारों को श्रोतागणों के मस्तिष्क में फेंक रहा था और उसके विचार प्रत्येक श्रोतों की भाषा में परिवर्तित होकर हर व्यक्ति के पास पहुँच रहे थे । श्री एच. जी. वेल्स का अनुमान है कि एक समय ऐसा आयेगा जब हमारी मानशक्ति इतनी परिपुष्ट हो जायेगी कि डाक, तार, टेलीफोन, रेडियो इत्यादि ध्वनि व विचार संचालन करने वाले यन्त्र बेकार हो जायेंगे तथा तेजस्वी मानव अपने मन की तीव्र शक्ति द्वारा अपने सन्देश (Messages) एक दूसरे के पास विचार संचालन या क्रोरावेन्स से भेज दिया करेंगे ।

पशु, पक्षियों, पेड़ों की गुप्त शक्तियाँ

मनुष्य के मन की आश्चर्यजनक शक्तियों के विवेचन से पूर्व हम वृक्षों पशु-पक्षियों की अद्‌भुत शक्तियाँ विद्यमान हैं जिनसे आश्चर्यजनक कार्य किया करते हैं । एक छोटा पौधा प्रायः दलदल में उगता है । इसे अंग्रेजी में सनड्यू या ड्रोसेरा कहते हैं । यह अपना भोजन मिट्टी तथा पानी इत्यादि से तो ग्रहण करता ही है, किन्तु साथ ही यह छोटे-छोटे कीड़ों, तितलियों, मच्छरों इत्यादि को भी पकड़ा करता है । उसकी पत्तियाँ मक्खियाँ पकड़ने के लिए विशेष रूप से बनी होती हैं । ये पत्तियाँ पतली टहनियों पर तीन-तीन इंच की दूरी पर लगी रहती हैं । प्रत्येक पत्ती में कुछ रोएँ तथा उन रोओं पर गोंद की भाँति का एक मीठा चिपकने वाला पदार्थ लगा रहता है । मिठास के लोभ में वैसे ही मक्खी आकर पत्ती पर बैठती है, वैसे ही आस-पास के रोएँ उसे फाँस लेते हैं । वे इतनी मजबूती से मक्खी को जकड़ लेते हैं कि वह भाग नहीं पाती । तदनन्तर मक्खी के प्राण, रक्त इत्यादि चूस लिए जाते हैं । यदि मरी हुई मक्खी सुई की नोक में बींध कर इस पौधे के पास लायी जाती है, तो ऐसा प्रतीत होता है जैसे वह पत्तियों की ओर खिंच रही हो । पत्तियाँ तथा बारीक रोएँ छोटे-छोटे मच्छरों को खींचता है ।

यह पौधा न देख सकता है, न सूँघ, स्वाद, या सुन सकता है किन्तु अपनी अद्‌भुत शक्ति से अनेक कीटाणुओं को खा जाता है । जीवों को लीजिए । उनकी ज्ञानेन्द्रियाँ इतनी तीव्र न होने पर भी उन्हें दूसरे जीवों के आगमन की प्रतीति हो जाती है । श्री सन्तराम जी लिखते हैं, एक बार इंग्लैण्ड में कोई सज्जन एक विशेष प्रकार के पंखदार कीड़ों का एक जोड़ा लाये । इसके पूर्व वहाँ वैसे कीड़े बिल्कुल न थे । न जाने कैसे उसमें से नर कीड़ा उड़ गया । नारी कीड़ा एक छोटे से पिंजड़े में बन्द करके रात्रि के समय बाहर लटका दिया गया । सबेरे उस कीड़े पालने वाले सज्जन ने बड़े आश्चर्य से देखा कि नर-कीड़ा पिंजड़े के बाहर चिपटा हुआ है । कीड़े अपने जोड़ीदारों को गुप्त मानसिक शक्तियों द्वारा अपने साथियों को आकर्षित करते हैं । जिन्होंने चीटियों का हाल पढ़ा है वे प्राणिशास्त्र-वेत्ता जानते हैं कि चींटियाँ एक दूसरे से बहुत दूर से ही बातें कर लेती हैं । श्री सन्तराम जी ने एक बड़ा मनोरंजक प्रयोग इस प्रकार लिखा है—एक बार एक प्रोफेसर ने चींटियों का पिंजड़ा एक पत्थर के बने हुए कमरे में रख दिया । इस कमरे की दीवारें १६ इंच मोटी थीं, उसमें दरार, छिद्र या खिड़की कहीं भी न थीं । केवल एक द्वार था और वह भी ऐसी सख्ती से बन्द था कि कोई उसमें घुस न सकता था । जब कभी प्रोफेसर चींटियों की बस्ती की परिवृद्धि का अवलोकन करने उस कमरे में आता, तब सदैव देखता कि दूसरी चींटियाँ दीवार के पास एकत्रित हैं और पत्थरों के भीतर घुसने का यत्न कर रही हैं । जब कभी वह कमरे के अन्दर पिंजड़े में बन्द चींटियों का स्थान बदल कर कमरे से बाहर निकलता, तब-तब क्या देखता कि बाहर की चींटियाँ भी उसी दीवार के पास और ठीक उसी जगह बाहर एकत्र हैं जहाँ कि भीतर वे पिंजड़े की चींटियाँ हैं । अन्दर पिंजड़े में परिवर्तन के साथ, बाहर की चींटियों में भी परिवर्तन होता जाता ।

अनेक बार देखा जाता है कि कुत्ते बिल्लियाँ घर से कई मील दूर छोड़े जाने पर भी, पुनः वापिस वहीं आ जाते हैं । कबूतर कितने ऊँचे आकाश में उड़ जाते हैं, किन्तु फिर अनेक घरों को छोड़ कर अपने ही घर पर उतरते हैं । स्थानों, व्यक्तियों तथा वस्तुओं से सूक्ष्म तरंगें निकला करती हैं । इन्हीं के द्वारा वे बातचीत करते, तथा अपने विचार एक दूसरे के पास भेजते हैं । सब एक दूसरे पर मानसिक प्रभाव डालते

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । जीव, जन्तुओं पौधों में वशीभूत, आकर्षित एवं सम्मोहित करने की अनेक अदृष्ट शक्तियाँ निवास करती हैं । इधर से उधर वे अनेक बार अपने विचार संचालन किया करते हैं ।

श्री सन्तराम जी ने एक प्रोफेसर का उल्लेख करते हुए लिखा है कि उक्त प्रोफेसर एक बार एक जंगल में गुजर रहे थे । ये प्राणिशास्त्र-वेत्ता थे और अणुओं की गुप्त शक्तियों का निरीक्षण करते थे । मार्ग में एक ओर सरिता थी, दूसरी ओर झाड़ियों में ढकी हुई चट्टान । उक्त प्रोफेसर कहते हैं कि एकाएक मैं क्या देखता हूँ कि विविध प्रकार के पक्षी मार्ग के आर-पार, आगे पीछे कलरव करते हुए मार्ग के एक विशेष स्थान पर घूम रहे हैं । ध्यान से देखने पर मालूम हुआ कि एक बड़ा भारी नाग कुण्डली मारे फन उठाए टकटकी बाँधे बैठे हैं । उस नाग की आँखें हीरे की तरह चमक रही हैं । यही नाग पक्षियों की गति का केन्द्र था । प्रोफेसर लिखते हैं कि यद्यपि मनुष्य की आहट से साँप तो छिप गया परन्तु पक्षी ऐसे मुग्ध थे कि वे न उड़ सके, न भाग सके । सर्प की मानसिक शक्ति ने जैसे उन पर जादू कर दिया हो । शहद की मक्खी पुष्पों में मधु एकत्रित करने के लिए कई मील दूर के पुष्पों तक जाती है, किन्तु पर्वत, नदियाँ, अनेक स्थानों के ऊपर होकर मानसिक शक्ति से पुनः छत्ते तक पहुँच जाती हैं ।

पशु-पक्षियों में अनार्भूत शक्ति कैसी बलबती होती है, यह सर्व विदित है, किन्तु मनुष्य की मानसिक शक्ति इन सबसे कई गुनी प्रभावशालिनी है । उसके विचारों में वह शक्ति है कि सैकड़ों मील पर बैठे हुए दूसरे मनुष्य पर असर करते हैं । अनेकानेक बार सिद्ध हुआ है कि विचार की इस असाधारण शक्ति द्वारा मनुष्य अनेक मील दूर पर होने वाली घटनाओं को देखने और बातों को सुनने समझने में समर्थ हैं । स्वप्नावस्था में अनेक मनुष्य विदेश में बैठे हुए लोगों से संभाषण करने में समर्थ हुए हैं । अनेक बार दूर-दूर की आवाजें कान में ऐसी आ पड़ती हैं कि मालूम होता है जैसे सब कुछ हमारे पास ही हुआ हो ।

श्री संतराम जी ने एक ओर घटना इस प्रकार लिखी है, यह राईट आनरेबल सर जानड्रमंड है के साथ घटी थी । वे लिखते हैं कि १८७६ में मेरा पुत्र परिवार सहित मोगडोर में रहता था । उस जगह वह पोलिटिकिल कौंसल था । फरवरी का महीना था । मुझे अपने पुत्र और उसके परिवार के कुशल समाचार सुने थोड़े ही दिन हुए थे । रात के एक बजे जब मैं प्रगाढ़ निन्द्रा में निमग्न था तो मुझे मेरी पुत्र वधू की आवाज सुनाई दी और मैं तुरन्त जग उठा । उसने कहा—"हा ! मैं चाहती हूँ कि पिता जी को मालूम हो जाय कि उनका पुत्र राबर्ट इतना बीमार है ।" कमरे में जलाने के लिए लैम्प रखा था । मैं उठ बैठा और उसे जलाकर चारों ओर देखकर आवाज को सुनने लगा परन्तु कमरे में मेरी स्त्री के अतिरिक्त कोई न था और वह चुपचाप दूर सो रही थी । मैं कुछ देर तक चुपचाप हतबुद्धि सा मूक बैठा रहा । सुनसान रात ६ बजे से ही साँय साँय करती रही । अतः मैंने परमात्मा को धन्यवाद दिया कि जो ध्वनि मैंने सुनी थी वह केवल भ्रम था । मैं पुनः लेट गया किन्तु मैंने मुश्किल से नेत्र मूंदे थे कि वही आवाज सुन पड़ी । तब मैंने अपनी पत्नी को जगाया और जो घटना घटी थी, वह कह सुनाई । इसके बाद उठकर मैं अपने वाचनालय में गया वहाँ जाकर यह घटना मैंने अपनी नोट बुक में लिख ली । दूसरे दिन मैंने सारी बातें अन्य व्यक्तियों से भी कहीं । इस घटना के थोड़े दिन बाद मेरी पुत्र वधू का मुझे पत्र मिला जिसमें लिखा था कि मेरा पुत्र सांनिपातिक ज्वर से सख्त बीमार है । यह दैवयोग देखकर कि मेरा पुत्र भी उसी रात को व्याधिग्रस्त हुआ जिस दिन मैंने वह आवाज सुनी थी मैंने बहू को लिखा कि जो कुछ घटना घटी हो उसका सम्पूर्ण वृतान्त लिख कर भेजो । उसने लौटती डाक से उत्तर दिया कि अपने पति को ऐसा सख्त बीमार देखकर और उस दूर देश में अपने को अकेले होने का अनुभव करके उसने ठीक वे ही शब्द बोले थे, जिन्होंने मुझे निद्रा से जाग्रत किया था । सैकड़ों मील पार कर अदृश्य माध्यम द्वारा पुत्रवधू के विचार अपने सुनिश्चित केन्द्र पर पहुँच गए थे ।

टेलीपैथी द्वारा पशु-पक्षी, वृक्ष परस्पर विचार संचालन किया करते हैं । मधुमक्खियाँ, कीड़े मकोड़े, सर्प, चींटियाँ किस प्रकार बिना बोले बातचीत करते हैं—इसका वर्णन लार्ड एवीबरी तथा अन्य प्राणिशास्त्र वेत्ताओं ने सविस्तार से किया है । लार्ड एवीबरी का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो विचार है कि निम्न श्रेणी के पशुओं के पास टेलीपैथी के अतिरिक्त विचार संचालन का अन्य कोई साधन ही नहीं है ।

रेडियो के अविष्कारकर्त्ता श्री मारकोनी ने शब्द की तरंगों, लहरों इत्यादि के कम्पन की व्याख्या करते हुए एक बार निर्देश किया था कि अनेक शताब्दियों पूर्व आदिमयुग का असभ्य प्रेमी कितनी ही दूर किसी कन्दरा या गुफा में बैठी हुई अपनी प्रेमिका के पास अपना प्रेम सन्देश भेज दिया करता था और उसका उत्तर भी पा लिया करता था । इस वक्तव्य में गहन सत्यता निहित है ।

सूडान में जनरल गोरडन मृत्यु को प्राप्त हुआ था, किन्तु उसकी मृत्यु का सन्देश अदृश्य माध्यम द्वारा चार हजार मील दूरी पर रहने वाले उनके देशवासियों को उसी क्षण ज्ञात हो गया था जिस समय उनकी मृत्यु हुई थी । कुछ दिन पूर्व इंग्लैण्ड के एक पत्र में "मानवीय वायरलेस" शीर्षक के अन्तर्गत एक महत्त्वपूर्ण समाचार प्रकाशित हुआ था जिसमें कुछ अंग्रेज यात्रियों ने एक एसकिमो (Eskimo) के विषय में लिखा था कि उक्त व्यक्ति ने उन्हें उनके एक साथी के विषय में बताया कि वह मध्य अमेरिका के एक नगर में कत्ल कर दिया गया है । उस बृद्ध एस्किमो ने, दो हजार मील दूरी पर ही उक्त दुर्घटना के समस्त वृत्तान्त इस बारीकी से बताये जैसे वह स्वयं सब कुछ आँख से देख आया हो । एक वर्ष के पश्चात जब ये यात्री उक्त नगर में पहुँचे और मामले की तहकीकात की तो उन्हें विदित हुआ कि उक्त वृद्ध की छोटी से छोटी बात भी अक्षरशः सत्य थी ।

जोजेफ़ सिनेल लिखते हैं कि वे दक्षिणी सूडान की यात्रा में (South Eastern Sudan) वहाँ के निवासियों की मनोवृत्तियों के अध्ययन के लिए गए हुए थे । वहाँ उन्हें ज्ञात हुआ कि उन व्यक्तियों में अप्रत्यक्ष रूप से अपने आप विचार-संचालन चला करता है । दैनिक कार्यों में वे अनेक बार उसका सफल प्रयोग करते हैं । जोजेफ़सिनेल लिखते हैं कि एक बार हमारी मंडली के दो कैम्प थे, जो चार-चार मील की दूरी पर लगे थे । मध्य में एक पगडण्डी थी । एक दिन सायंकाल मैं अकेला पैदल ही निकल पड़ा और दूसरे कैम्प तक जाना चाहा । मार्ग में रात हो गई और मैं मार्ग भूल गया । बड़े अस्त-व्यस्त होकर मैंने मार्ग ढूँढ़ने का प्रयत्न किया । मन में यह बात रही कि क्या ही अच्छा होता यदि मेरा कोई सूडानी नौकर आ जाता । हिंस्रजन्तु ने मुझे और भी भयभीत कर दिया । थोड़ी दूर पर मुझे एक छोटी सी रोशनी दृष्टिगत हुई । वहाँ गया तो क्या देखता हूँ कि एक सूडानी मज़दूर ने एक झोंपड़ी में अग्नि जला रखी है तथा ताप रहा है । रात में यहीं रहा । ज्योंही दिन निकला क्या देखता हूँ कि सूडानी मज़दूर कुछ अस्त-व्यस्त है । उसने कहा—"आपको ढूँढ़ने के लिए आपका एक आदमी यहाँ आ रहा है ।" मेरे विस्मय का ठिकाना न रहा जब कोई आध घण्टे पश्चात सचमुच मेरे कैम्प का एक व्यक्ति वहीं आ पहुँचा । मैंने उनसे पूछा कि उसे मेरे वहाँ होने का वृत्तान्त क्यों कर ज्ञात हुआ तो उसने बताया कि सूडानी लोग अनायास ही सब कुछ मालूम कर लेते हैं ।

दैनिक जीवन में विचार संचालन

विचार-संचालन परिपुष्ट मस्तिष्क वाले मानव के लिए साधारण-सी बात है । हम प्रायः सभी थोड़ी बहुत मात्रा में विचार संचालन क्रिया से कार्य लेते हैं । आपने बहुधा देखा होगा कि किसी को स्मरण करते ही तुरन्त वह व्यक्ति गृह में प्रविष्ट होता दिखाई पड़ता है । हम ऐसा सोचते हैं कि अमुक व्यक्ति आता होगा, वह आ जाना चाहिए, समय हो गया—ऐसी मनःक्रिया होते ही न जाने क्यों कर वह व्यक्ति हम तक पहुँच जाता है तथा हम कह उठते हैं—"अरे ! तुम आ गए । हम तुम्हें याद ही कर रहे थे । तुम्हारी बड़ी उम्र है ।"

यह क्रिया बिना कारण के ही नहीं हो जाती । उसके पीछे एक गहन सत्य अन्तर्निहित है । टेलीपैथी विशेषज्ञ इसकी व्याख्याएँ करते हैं—"आने वाला व्यक्ति अपने मस्तिष्क द्वारा आने से पहले आते-आते अपने परिपुष्ट मस्तिष्क द्वारा विचार तरंगें संचालित कर रहा था । ये विचार तरंगें आकाश में व्याप्त ईथर (Ether) माध्यम में होकर क्रमशः हमारे मस्तिष्क में आ रही थीं । हमारा मस्तिष्क उन विचार तरंगों का ग्राहक केन्द्रस्थान (Receiving centre) बन गया । मस्तिष्क में वही थरथराहट उत्पन्न हुई जो संचालक के मस्तिष्क में थी । संचारक (Transmitter) के मस्तिष्क की समस्त तरंगें ग्राहक (Receiver) के मस्तिष्क में आकर पुनः विचारों में परिवर्तित हो गईं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार संचालन का यन्त्र

जिस प्रकार वृक्ष की समस्त शक्तियाँ उसकी जड़ में हैं, इसी प्रकार मस्तिष्क ही मानव शरीर की जड़ है । मस्तिष्क ज्ञान का भण्डार, शक्तियों का स्रोत, तथा पंच इन्द्रियों का स्वामी है । कान सुनते हैं, नाक सूँघती है, जिह्वा चखती है, त्वचा को स्पर्श का ज्ञान होता है, नेत्र देखते हैं—ये समस्त शक्तियों मस्तिष्क में निवास करती हैं । मन की विभूतियाँ एवं अतुल सामर्थ्य का प्रदर्शन उत्तम मस्तिष्क द्वारा ही सम्भव है । मानसिक शक्तियों को भली-भाँति प्रकट करने के लिए तीन तत्वों की नितान्त आवश्यकता है—उत्तम मस्तिष्क, मानसिक शक्तियों की परिपुष्टि एवं उनको कार्य में लेने की रीतियाँ । क्रमशः हम तीनों पर विचार करेंगे ।

विचार शक्ति को उत्पन्न करने वाला यन्त्र मस्तिष्क है । मस्तिष्क एक अति सूक्ष्म विचार ग्राहक एवं विचार संचालक यन्त्र या डायनमो समझिये । विद्युत् उत्पन्न करने वाले एक साधारण डायनमो की भाँति मस्तिष्क विचार पैदा करता है । मस्तिष्क के विशेष भाग विशेष विक्षेप कार्य करते हैं । मस्तिष्क को निकम्मा छोड़ दिया जाय, तो फिर इसमें शनैः-शनैः व्यर्थ क्रियाएँ करने के अतिरिक्त अन्य किसी महत्त्वपूर्ण कार्य की क्षमता नहीं रह जाती । यहाँ तक कि यदि मस्तिष्क के विशेष भागों की ओर उचित ध्यान न दिया जाय, तो वे निर्बल और निकम्मे हो जाते हैं । मस्तिष्क के जिस भाग में जो शक्तियाँ निवास करती हैं, उस भाग में स्थित कोषों (Cells) की संख्या के परिणाम में वे शक्तियाँ कम या अधिक होती हैं । इन कोषों की सूक्ष्मता बढ़ाने से मस्तिष्क की शक्ति बढ़ती है । ये कोष जितने ही सूक्ष्म होंगे, एक घन इंच में जितने ही वे अधिक आयेंगे, उतनी ही उच्च प्रकार की शक्तियाँ उनमें गर्भित होंगी और वह मस्तिष्क उतना ही उत्तम समझा जायेगा ।

विचारों में प्रगाढ़ श्रद्धा का समावेश कर एकाग्र करने से हम मस्तिष्क के कोषों की सूक्ष्मता तथा संख्या में वृद्धि कर सकते हैं । समर्थ विचारक और तत्वज्ञ पुरुषों के मस्तिष्क में साधारण मनुष्यों की अपेक्षा ये कोष संख्या में बहुत अधिक होते हैं । ये तत्वक्ष निरन्तर विचार में निमग्न रहते हैं, ध्यान करने से अलौकिक मानसिक शक्तियाँ प्रकट की जा सकती हैं और मनोबल से अनेक रोग-दोष दूर किया जा सकते हैं ।

एकाग्रता से कोषों में वृद्धि क्यों होती है ? बात यह है कि मन को शरीर के किसी भाग पर एकाग्रतापूर्वक लगाने से उस भाग में रुधिर की गति तीव्र हो जाती है । इसी प्रकार विचार, ध्यान द्वारा रक्त की गति मस्तिष्क के किसी भी भाग में बढ़ाने से तथा शरीर के विद्युन्मय सामर्थ्य का उस प्रदेश में संचार करने से मस्तिष्क के उस भाग के अणुओं में वृद्धि और सुधार किया जा सकता है । हमारे प्राचीन योगियों ने मूर्धा, त्रिकुटी आदि स्थानों में मन को एकाग्र करने की जो क्रियाएँ बतलाई हैं, उनका तात्पर्य मस्तिष्क को बलवान बनाने का इसके अन्दर के अणुओं की वृद्धि और शक्ति के विकास का जान पड़ता है । सभी योग की, ध्यान तथा समाधि की क्रियाएँ शरीर को, मन को तथा विचार बल को विकसित करने वाली हैं । क्लोरावेन्स, टेलीपैथी या समाधि अवस्था आध्यात्मिक चिन्तन की ही एक साधना है ।

विचार संचालन के लिए मस्तिष्क को परिपुष्ट करने में एकाग्रता का मुख्य हाथ है । इस साधना का निम्नतम श्रेणी के मनुष्य से लगाकर सर्वोच्चतम योगी तक के लिए केवल एक ही उपाय है—एकाग्रता । वस्तुतः जिन प्रयोगों से एकाग्रता प्राप्त हो सके, उनको करने से ही समाधि अवस्था प्राप्त हो सकती है । जहाँ समाधि अवस्था प्राप्त हुई कि आपका मस्तिष्क दूर-दूर तक विचार भेजने का शक्तिशाली डायनमो बन गया समझिए । समाधि अवस्था में पहुँचने से मन की लचक क्रमशः बढ़ जाती है । वह अत्यन्त सूक्ष्मातिसूक्ष्म कम्पनों को पकड़ सकता है । विचार दूसरे के मस्तिष्क में बलपूर्वक प्रविष्ट करा सकता है और अनेक गुप्त बातें अनायास ही मालूम कर सकता है । ऐसे योगी प्रायः दूसरे के मन की बात यकायक ताड़ जाते हैं, कभी-कभी स्पष्ट कह भी देते हैं ।

मानसिक शक्तियों की परिपुष्टि

योगशास्त्र का यह एक अखण्डनीय सिद्धान्त है कि ध्यान करने वाला जिसका ध्यान करता है, उसी के समान हो जाता है । ध्यान से मानसिक शक्तियों की परिपुष्टि होती है । जिसका ध्यान किया जाय उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनः चित्र इतना स्पष्ट हृदय-पटल पर अंकित किया जाना चाहिए । मानो वह चित्र बोलने ही वाला हो, जैसे बातें ही कर रहा हो । सद्गुरु की मूर्ति का ध्यान करने वाला ध्याता सद्गुरु की इतनी निखरी हुई मूर्ति हृदय चक्षु के सन्मुख लाता है कि जैसे महाप्रभु उससे वार्तालाप ही करते हों । ध्यान करने वाले को चाहिए कि जिसका वह ध्यान करता हो, उसका स्वरूप सर्वप्रथम अपनी बुद्धि में उतारने का प्रयत्न करे । शास्त्रों का ध्यान का अभ्यास करने और उससे अपनी बुद्धि को सूक्ष्म बनाने का तात्पर्य यही है । शास्त्राभ्यास से परमेश्वर के सम्बन्ध में वृत्ति आरूढ़ होती है, तद्नुसार धारणा, ध्यान अथवा निद्ध्यासन होता जाता है ।

जिस मानसिक शक्ति के विकास का हमने निश्चय किया है, उसके ऊँचे से ऊँचे स्वरूप की, जहाँ तक हमारी बुद्धि की पहुँच हो वहाँ तक मूर्तिमयी कल्पना करनी चाहिए और उस उच्च कल्पना में समस्त मन की समस्त प्रवृत्तियों को आरूढ़ करना चाहिए । पूर्वोक्त क्रिया से कल्पना और अधिक स्पष्ट होने लगेगी और उसका उत्तम सामर्थ्य वाला स्वरूप भी साधक में प्रकट होने लगेगा ।

टेलीपैथी का प्रथम तत्व एकाग्रता

एकाग्रता से विचार संगठन प्राप्त होता है । असंगठित विचार एक निकम्मी वस्तु है । जिस व्यक्ति के मन में अनेक बैसिर पैर की बातें, नाना, ऊलजलूल कल्पनाएँ, असंगठित विचार, अव्यवस्थित चिन्तन रहता है वह मानसिक संघर्ष का शिकार होता है । मन की समता (Harmony) नष्ट हो जाती है, चित्त अस्थिर हो जाता है और मस्तिष्क विक्षिप्त विचारों का डेरा बन जाता है । दुर्बल भावना, अव्यवस्थित मंतव्य, जर्जर कल्पना मन को शिथिल एवं अशान्त कर देती हैं । यदि विचार विक्षिप्त हो गए तो नाड़ी-संस्थान में क्षोभ उत्पन्न हो जाता है तथा चिन्ता, उद्वेग, भ्रांति, भय तथा संक्षय दिमाग को व्याकुल एवं चलायमान रखते हैं । हम अपने असंगठित विचारों के आधीन रहकर दास बने रहते हैं ।

विचार संचालन के लिए सर्वप्रथम आपको विचार संगठन सीख लेना चाहिए । असंगठित विचार एक निकम्मी चीज है, किन्तु संगठित विचार संसार में सबसे महान शक्ति है । दुनिया में रुपया सर्व शक्तिमान माना जाता है, किन्तु संगठित विचार उससे भी बलवान है । रुपया इसके वश में है तथा दरिद्रता भी इसके डर से भाग जाती है । जिन तत्वों से मानसिक सामर्थ्यों की वृद्धि होती है, वे सब विचार संगठन पर निर्भर हैं ।

जल को लीजिए । यदि बूँद-बूँद कर जल को इधर-उधर फेंक दें तो उसमें कोई शक्ति नहीं, किन्तु यदि पिचकारी द्वारा पानी की उन बूँदों को संगठित करके फेंकें तो शक्ति उत्पन्न होती है । बारूद के दानों की शक्ति बन्दूक की नालिका में भरकर संगठित रूप दे देने से प्रकट होती है । सूर्य की रश्मियाँ एकाग्र होकर भयानक अग्नि उत्पन्न कर देती हैं । इसी प्रकार यदि विचार इधर-उधर चलायमान रहें तो उनमें कुछ शक्ति नहीं रहती । यदि उन्हें संगठित स्वरूप देकर एक स्थान पर एकाग्र कर लिया जाय तो अतुलित सामर्थ्य की उत्पत्ति होती है । मन की समग्र शक्तियों के बल का आधार चित्त की स्थिरता, विचार संगठन तथा वृत्तियों को केन्द्रीभूत चित्त की स्थिरता, विचार संगठन तथा वृत्तियों को केन्द्रीभूत करना है । योगी समस्त अनावश्यक विषयों से मन को हटाकर मानसिक शक्ति को अपनी बिखरी हुई शक्ति को संचित कर एक ही स्थान पर केन्द्रीभूत कर देते हैं । योग एवं समाधि में संचित शक्ति को केन्द्रीभूत करना, उसको किसी विशेष वस्तु की प्राप्ति के लिए प्रवर्त करना प्रधान है । तप से इस नकारात्मक रूप को संयम तथा सकारात्मक रूप को साधना कहते हैं ।

विचार संयम, स्थिरता, भावना केन्द्रीकरण, वृत्तिसाधन, प्राणायाम बौद्धिक विकास के विभिन्न रूप हैं । ये विचार की महान शक्तियों को प्रकट करने के उपाय हैं । आत्मोन्नति के लिए विचार एकाग्र करने का अभ्यास करना चाहिए । विचार संचालन के सामर्थ्य का अधिकांश भाग हम प्रायः निकम्मी क्रियाओं में नष्ट कर देते हैं । बैठे-बैठे पैर हिलाते रहेंगे, मुँह से वे अर्थ की बातें कहते रहेंगे तथा मन से सार रहित चीजें सोचते रहेंगे । इसके अतिरिक्त क्रोध, शोक, चिन्ता, भय आदि विविध विकारों से भी पोषक शक्ति का ह्रास होता है । इन सभी प्रकार के क्षयों से बचने के लिए जिस प्रकार मन की अत्यन्त समाधार वाली शान्त स्थिति की आवश्यकता है, उसी प्रकार वाणी तथा शरीर के व्यर्थ के प्रपंच छोड़ने की भी आवश्यकता है ।

समाधि अवस्था मन को समाधान वाली शान्त स्थिति में रखने से प्राप्त होती है । विचार संचालन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्रिया की मूलभित्ति समाधान वाली चित्त की शान्त निर्लेप अवस्था ही है । अतएव साधक को योग की क्रियाओं तथा अन्य साधनों से चित्त की एकाग्रता का अभ्यास करना चाहिए । मेरे कई मित्रों के प्रयत्न इसी कारण निष्फल रहे क्योंकि वे चित्त की एकाग्रता की पर्याप्त साधना न कर सके । मानस प्रदेश की निम्न भूमिका में ही पड़े रहे । उनके विचारों में चंचलता बनी रही ।

विचार संचालन के अभिलाषियों ! सर्वप्रथम मानसिक क्रिया द्वारा एकाग्रता का अभ्यास करो । जैसे-जैसे तुम एकाग्रता द्वारा विचार संगठन करोगे, वैसे-वैसे तुम अपने भीतर एक अद्‌भुत ओजस शक्ति का अनुभव करोगे, और तुम्हें ज्ञात होगा कि तुम निर्बल पददलित नगण्य प्राणी नहीं हो, अपितु एक आकर्षण पिंड हो, जो उन्नत देदीप्यमान और प्रभावशाली होने के लिए बना है । विचार केवल एकाग्रता द्वारा ही मजबूत हो सकते हैं । एकाग्रता की ही अभिवृद्धि के लिए तुम यह मानकर और विश्वास करके चलो कि तुममें यह शक्ति पहले से ही प्रस्तुत है और तुम उसे अवश्य विकसित कर सकते हो । तदुपरान्त नियमित रूप से अपनी विचार और मानसिक क्रिया को अभीष्ट लक्ष्य पर एकाग्र करो । यह प्रयत्न दस पन्द्रह दिन तक एकान्त स्थान पर नेत्र मूंद कर रात्रि के समय उत्तम रहता है ।

शिथिलीकरण का प्रयोग

रात्रि के समय विचार अन्तर्मन में सुदृढ़ होते हैं तथा पुनः तदनुकूल क्रिया दूसरे दिन करते हैं । बिस्तर पर लेटकर शरीर के समस्त अंग प्रत्यंगों को शिथिल कर लो, जैसे मशीन के सब पुर्जे पृथक-पृथक पड़े हों । अवयवों को बिल्कुल ढीला छोड़ दो । शरीर के किसी भी भाग में तनाव न रहे । किसी वस्तु का आधार लेकर हम अपने हाथ को ऊँचा करते हैं और उस आधार को हटाते ही जैसे धड़ाम से हाथ गिर जाता है, उसी प्रकार बिस्तर पर पड़े हुए कोई अंग यदि उठाया जाय तो तुरन्त नीचे गिर जाना चाहिए । आरम्भ में यह क्रिया कठिन प्रतीत होगी, किन्तु अभ्यास से शिथिलीकरण स्वाभाविक हो जायेगा । शरीर को शिथिल करने के पश्चात दिन में जो चिन्ता, भ्रम, परिताप, ग्लानि, शोक, भय आदि के समस्त विचारों के प्रवाह को दूर करो, स्मृति को हटा दो, कल्पना द्वारा एक ही केन्द्र लेकर उस पर मनः क्रिया एकाग्र कर दो । बाह्य जगत् का भान भूल जाओ । केवल एक ही केन्द्र तुम्हारे सन्मुख रहना चाहिए । दस मिनट तक इस एक ही भावना पर चित्त को एकाग्र रखो । दृढ़ता से मन लगाये रहो । इस प्रकार क्रमशः मन की एकाग्रता में वृद्धि होती जायेगी ।

एकाग्रता के लिए पहले एक वस्तु लो । उनका चित्र, स्मृति द्वारा खूब स्पष्ट करो । जैसा तुम बाह्य जगत में देखते हो वैसा ही मानस चित्र स्पष्ट हो जाय । एक-एक लकीर साफ-साफ दिखाई दे । वस्तुओं के पश्चात दृश्य लेकर एकाग्र करो । फिर उत्तम भावनाएँ लो । इस भावना को मस्तिष्क के केन्द्र (Focus) के सन्मुख रखो और अविचल उसी पर सोचते रहो । मन को इधर-उधर न भागने दो, प्रत्युत दृढ़ता से उसी पर जमाये रहो । इसी क्रिया के अभ्यास से विचारों में संगठन एवं परिपक्वता आ जायेगी और तुम जिस अभीष्ट पर चित्त को एकाग्र करना चाहोगे सफलतापूर्वक कर सकोगे । एकाग्रता का अभ्यास करते समय शुद्ध रीति से श्वास-प्रश्वास लेने से विचार संगठन में अतीव सहायता प्राप्त होती है । विचार की एकाग्रता की इस प्रचण्ड पुष्ट एवं उत्पादक शक्ति द्वारा ही एक व्यक्ति अन्य व्यक्ति तक अपने विचार भेजने में सफल होता है । अतएव इसका साधन अत्यन्त महत्त्व का है ।

टेलीपैथी का द्वितीय तत्व उर्वरा कल्पना

विचार संचालन में लचीली या उर्वरा कल्पना से काम लिया जाता है । जिस समय जिस व्यक्ति के पास विचार भेजना हो प्रायः उसका मानस चित्र खींचना पड़ता है । वस्तुतः साधक को समयानुसार मानस चित्रों के निर्माण की आवश्यकता पड़ती है । कल्पना शक्ति से ही मनुष्य अज्ञात को ज्ञात में परिणत कर देता है । सर्वप्रथम एक अस्पष्ट और धुंधला चित्र सामने आता है और फिर क्रमशः इस भौतिक जगत में एक साकार रूप प्राप्त करता जाता है । अनेक वस्तुओं की कल्पना आज के युग में साकार रूप धारण करके प्रकट हुई है । मनुष्य जितनी ही स्पष्टता से अपनी मनोभिलाषित अवस्था की चित्र अपने मानस नेत्रों से देखता है, उतनी ही वह उसके लिए सुलभ होती है । इसके विपरीत जो व्यक्ति सन्देह एवं संक्षय में अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मानस चित्र अस्पष्ट एवं धुँधले रखते हैं, वे किसी योग्य नहीं बन पाते । कल्पना शक्ति अथवा सृजनात्मक ध्यान के द्वारा न केवल हम अपने भौतिक जगत में ही निर्माण करते हैं प्रत्युत उसी के आश्रय से परमात्मा का साक्षात्कार कर उस लोक के सुख को भी प्राप्त करते हैं ।

विचार संचालन के लिए कल्पना शक्ति अत्यन्त पैनी होनी चाहिए, व्यर्थ इधर न दौड़कर वह सर्वदा एक स्पष्ट एवं सुनिश्चित केन्द्र पर चले । एक ही वस्तु, स्थान, व्यक्ति, वातावरण, की सृष्टि एक बार में करे । उसे इतना स्पष्ट बना दे कि वह सत्य जीती जागती, बोलती प्रतिमा-सी प्रतीत हो । जब कोई विचारणीय विषय आ जाय, तो सर्वप्रथम तो वस्तु का खाका खींचे किन्तु फिर उसे स्पष्ट कर दें ।

कल्पना द्वारा कई भावनाओं का एक साथ मेल कराना भी सीखना चाहिए । सामंजस्य, एकीकरण, वस्तुओं का संयोग कल्पना द्वारा होना चाहिए । जितने ही अधिक विषयों में मनुष्य की पैंठ रहेगी, उतनी ही उर्वरा उसकी कल्पना होगी । कल्पना ऐसी हो कि सर्वदा विचारों को एक सुनिश्चित स्थान (केन्द्र) पर पहुँचा कर छोड़े । चाहे वे विचार कैसे ही हों, उन्हें मानस चित्र तक पहुँचा दे । प्रत्येक मनुष्य के विचारों का प्रवाह एक सुनिश्चित दिशा में होता है । अतः इस साधना के लिए अपनी अभिरुचियों को केन्द्रीभूत करना आवश्यक है । एक से अधिक केन्द्र रखने पर विचार बीच में ही भटकते रहते हैं । किसी सुनिश्चित स्थान पर पहुँचना उनके लिए कठिन हो जाता है । जब तक मनुष्य अपनी कल्पना द्वारा मानस चित्रों को दृढ़तापूर्वक स्थिर नहीं रखता, तब तक उसके विचारों का प्रवाह भटकता रहेगा । विचारों का प्रवाह निरन्तर मानस चित्र की ओर अखण्ड रूप से चलना चाहिए । जब सब विचार एक बिन्दु पर एकाग्रतापूर्वक डाले जाते हैं, तो आश्चर्यजनक कार्य होते हैं । जिस साधना में चित्त की समस्त वृत्तियाँ किसी विशेष उद्देश्य से एक ही मानसचित्र पर एकाग्र होकर किसी विशेष लक्ष्य की ओर प्रवृत्त कर दी जाँच वही कल्पना तथा एकाग्रता की सिद्धि है ।

श्री अयोध्याप्रसाद जी लिखते हैं कि एकाग्रता की यह सिद्धि कठिन है । मन पर अधिकार करने में कुछ अधिक समय लगता है । इस कठिनाई का कारण यह है कि हम अपनी चित्त-वृत्तियों को रोकना चाहते हैं, किन्तु उसके उद्‌गम स्थान की उपेक्षा करते हैं । यह उद्‌गम स्थान हमारा ध्यान मानसिक केन्द्र अथवा मानसिक दृष्टि बिन्दु का मानसिक चक्षु है । जिस विषय की ओर हमारा ध्यान आकर्षित हो जाता है, वैसे ही विचार हमारे मन में आने लगते हैं और हमारा मन इस पर एकाग्र हो जाता है । इसलिए आरम्भ में उचित होगा कि हम अपने ध्यान को वस्तुओं पर केन्द्रित करें । फिर कल्पना द्वारा अपने परिचित कुटुम्बियों, मित्रों, शिष्यों आदि के मानस चित्र बनायें और उन पर मानसिक दृष्टि बिन्दु को केन्द्रित करें । धीरे-धीरे निमग्नावस्था प्राप्त होने लगेगी और आप मानस जगत में सब परिचितों को प्रत्यक्ष चलते फिरते, बोलते कार्य करते देखने लगोगे । मौनाभ्यास द्वारा इस समाधि को प्राप्त करना सर्वश्रेष्ठ है । मौनाभ्यास में हमारा आसन सुस्थिर और सुखपूर्ण हो जिससे साधन के समय हमें अपने मन, शरीर, वातावरण एवं परिस्थितियों का कुछ भी ज्ञान न रहे । मानसिक मूर्ति तथा हममें बातचीत का क्रम चलता रहे ।

जो कुछ भी तुम चाहते हो या भविष्य में बनना चाहते हो, वैसा स्पष्ट चित्र अपने मन के समक्ष रखो । यदि तुम कोई बात दूसरे को बताना चाहते हो तो वह भी इस मानस चित्र से श्रद्धापूर्वक कहो । उर्वरा कल्पना द्वारा तुम्हें स्पष्ट चित्रण में सहायता मिलेगी ।

तृतीय तत्व : दृढ़ इच्छा-शक्ति

इच्छा के विरुद्ध आप कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकते । आप विचार-संचालन करने जा रहे हैं अतएव आपको अपनी शक्तियों में पूर्ण विश्वास का समावेश करना चाहिए । विश्वास आपकी नींव है । विश्वास ऐसी शक्ति है, जिसको प्राप्त करने से ही मनुष्य चमत्कारपूर्ण कार्य करता है । विश्वास ही आत्मा का अन्न है आत्मा का प्राण है । विश्वास के शब्दार्थ में ही गुह्य तत्व भरा है । "विशेषेण श्वस्ति यस्मिन स विश्वास" अर्थात् विशेष प्रकार से जिसमें पुरुष श्वास लेता है, वह ही विश्वास है । विश्वास नष्ट कर दो, बस आत्मा-आत्मा नहीं रह सकता । विश्वास आत्मा की आँखें हैं जिससे सर्व अदृष्ट पदार्थों को भी दृष्टवत् करता है ।

जिस व्यक्ति को अपनी शक्तियों में विश्वास है, वह अवश्यक विचार संचालन कर सकेगा । इस विश्वास में तीन तत्व मिले हुए हैं, पूर्ण निर्भरता, आशा, सन्तोष

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न प्रसन्नता । जिस मनुष्य में विश्वास जाग्रत होता है, उसमें यह तीनों शक्तियाँ पायी जाती हैं । सर्वप्रथम उसमें पूर्ण निर्भरता की शक्ति आती है वह जिसके लिए प्रयत्न कर रहा है उसमें पूर्ण भरोसा रखता है । द्वितीय आशा से पूर्ण रहता है तृतीय सदैव संतुष्ट तथा अपने मनोरथों में सफल होने में भरोसा रखता है ।

विचार संचालक को यह पूर्ण विश्वास रखना चाहिए कि वह जिसके पास विचार संचालित करेगा, उसमें अवश्यमेव सफल होगा । जिस कार्य को करने का निश्चय उसने किया है, वह अक्षरशः सफल होगा । कोई ऐसी शक्ति नहीं है, जो उसके मार्ग में बाधा उपस्थित कर सके । जितने अंशों में आपको दूसरे तक विचार भेज देने में विश्वास होगा, उतने ही अंशों में आप इस समाधि की क्रिया में सफल हो सकेंगे ।

विश्वास का प्रभाव हमारे गुप्त मन पर पड़ता है । गुप्त मन की शक्ति सब मानसिक शक्तियों में प्रबल है । हमारे जीवन का कर्त्ताधर्त्ता गुप्त मन ही है । गुप्त मन से संक्षय, शक, शुबा, निराशा निकाल फेंको और कहो कि तुम वास्तव में विचार संचालित कर सकोगे । जैसे-जैसे तुम्हारे गुप्त मन में यह विश्वास जमेगा, वैसे-वैसे जादू सा तत्काल प्रभाव डालने वाली शक्ति तुममें प्रकट होगी । इस आन्तरिक शक्ति को दृढ़ निकालो, उसे स्वीकार करो और अपना प्रभुत्व जमा लो । विचार संचालन की सम्भावना जहाँ तुम्हारे गुप्त मन में दृढ़ता से जमी कि तुम इस महान कार्य के लिए योग्य हो गए । गुप्त मन की रचनात्मक शक्ति से ही तुम विचारों की लहरें उत्पन्न कर सकोगे । स्मरण रखिए, यदि आप अपनी विचार संचालन शक्तियों के प्रति अविश्वासी रहेंगे, तो कुछ भी न कर पायेंगे । कितने ही व्यक्ति अपनी सूचना शक्तियों के प्रति संशयात्मक भावनाएँ रखते हैं और अश्रद्धा के कारण विचारों में दृढ़ता नहीं ला पाते । आप इस क्रिया को करने से पूर्व पूरा-पूरा विश्वास रखिए कि आप विचार संचालन में अवश्यमेव फलीभूत होंगे और अपने मनोबल से अपने विचार अपने मित्र सम्बन्धियों तक भेज दिया करेंगे ।

विचार की लहरें और कम्पन

विचार तत्व आज तक पूर्ण रीति से प्रकट नहीं किया गया । निःसन्देह विचार की उत्पत्ति परमाणुमयी है । यदि वह छोटे-छोटे परमाणुओं से विनिर्मित न होता तो प्रकृति के नियमानुसार यह अन्तरिक्ष में एक स्थान से दूसरे स्थान पर कैसे जाता ?

जैसे प्रकाश या ध्वनि छोटे-छोटे परमाणुओं या कणों से बने होते हैं, उसी प्रकार विचार भी तरंगमाला में चलते हैं । प्रत्येक कण अपने पास के कण को गति देता है । प्रत्येक कण या परमाणु अपनी बारी में क्षोभ का एक केन्द्र बनकर लहरें उत्पन्न करने लगता है । इन लहरों की लम्बाई अत्यन्त सूक्ष्म होती है और वे अमितवेग से चलती हैं । जैसे जल में पत्थर फेंकने से लहरें उत्पन्न होती हैं, उसी प्रकार विचार की लहरें चलती हैं ।

विश्व में जो अनेक शक्तियाँ मौन और प्रकट रूप में कार्य कर रही हैं, उनमें ध्वनि तथा विचार महान शक्तियाँ हैं । ध्वनि तथा विचार के कम्पन एक सेकिण्ड में इतने होते हैं कि हम इनकी गिनती नहीं कर पाते । आजकल ऐसे यन्त्रों का अविष्कार किया गया है कि इन सूक्ष्म कम्पनों की गणना भी की जाती है और चित्र भी ले लिए जाते हैं । जैसे कान के अन्दर पर्दे पर एक सेकण्ड में १६ से ५६००० हजार तक कम्पन आघात करते हैं, ऐसे ही मस्तिष्क के सूक्ष्मतम पर्दे पर न जाने विचारों के कितने कम्पन निरन्तर आघात किया करते हैं । मस्तिष्क को रेडियो की भाँति विचार ग्राहक एवं संचालक यन्त्र समझिए । इसमें भेद इतना ही है कि मानव मस्तिष्क अन्य सब ज्ञात यन्त्रों से अधिक शक्ति सम्पन्न और अधिक सूक्ष्म रचना रखता है । मनुष्य इस यन्त्र की शक्ति का अन्दाज कम ही लगाते आये हैं । कारण यह कि वह स्वभाव से मस्तिष्क की ऐसी प्रचण्ड विचार संचालक शक्ति को कल्पना में भी नहीं ला सकता ।

माध्यम ईथर पदार्थ

विचार मस्तिष्क के केन्द्र स्थान से निकल कर ईथर (Luminiferous Ether) के माध्यम द्वारा दूसरे केन्द्र स्थान में पहुँचता है । ईथर या आकाश एक अदृश्य माध्यम है । ईथर सर्वव्यापी है, इससे सम्पूर्ण अन्तरिक्ष परिपूर्ण है । अन्तरिक्ष में से प्रकाश के आवागमन के लिए वैज्ञानिकों ने इसे एक आवश्यक वस्तु मान्ना है क्योंकि वहाँ वायु इत्यादि कोई अन्य माध्यम नहीं पाया जाता । वैज्ञानिक इसे एक साफ और गाढ़े रस जैसा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पदार्थ बताते हैं । रोजीक्रूश्यन लोग इसे एक सजीव अग्निशिखा जैसा समझते हैं ।

इस बात को सभी तत्ववेत्ता मानते हैं कि आकाश में लहरें उठती हैं । उन्हीं के कारण सब शक्तियों का प्रादुर्भाव होता है । अर्थात् आकाश (ईथर) के कण अपने स्थान पर कम्पायमान होते हैं । इससे सिद्ध है कि ईथर के दो कणों के मध्य में कुछ न कुछ अन्तर अवश्य होना चाहिए । ईथर एक ऐसा पदार्थ है जिससे अधिक सूक्ष्म पदार्थ सृष्टि में नहीं है । जो कुछ स्थूल या सूक्ष्मरूप से विद्यमान है, सभी ईथर से प्रादुर्भूत है। इसे यदि सृष्टि का बीज कहें तो अत्युक्ति नहीं । विद्युत आकाश, उष्णता, गुरुत्वाकर्षण स्नेहाकर्षण, विचार शक्तियाँ जो संसार की प्रचालक हैं और जो इन मनोहर एवं विचित्र सृष्टि के आधार हैं, सभी ईथर के विकार हैं । वे शक्तियाँ ईथर के ही कम्पन से उत्पन्न होती हैं और तरंगों (Waves) के ही द्वारा एक केन्द्र से दूसरे केन्द्र पर जाती हैं । आपने विद्युत तरंग, चुम्बक, त्तरंग, प्रकाश तरंग और उष्ण तरंग (Heat waves) के नाम से सुने होंगे । ये सब तरंगें आकाश (ईथर) के माध्यम में ही उत्पन्न होती हैं । ये शक्ति (Energy) के विभिन्न रूप हैं । आकाश की सहायता से, बहुरूपिये की तरह इस सृष्टि में शक्ति ने नाना रूप धारण किए हैं ।

ईथर के कणों के कम्पन का नाम शक्ति है और वह तरंगों के द्वारा एक केन्द्र से चारों ओर फैलती है । जैसे दीपक का प्रकाश चारों ओर फैलता है, और जैसे बिजली उत्पन्न करने वाले यन्त्र से बिजली की धारा सर्वत्र फैलती है, वैसे ही ये तरंग भी एक निर्दिष्ट केन्द्र से सब जगह फैलती है परन्तु याद रहे कि जैसे जल ऊँचे धरातल से निम्न धरातल की ओर प्रवाहित होता है तथा उष्णता, अधिक उष्ण पदार्थ से कम उष्ण पदार्थ की ओर जाती है, उसी प्रकार विचार एक परिपुष्ट दृढ़ एवं शक्तिशाली मस्तिष्क से, अधिक शक्ति सम्पन्न धरातल से न्यून शक्ति सम्पन्न धरातल की ओर जाते हैं । सारांश यह है कि शक्ति चाहे जिस रूप में हो, वह स्थान परिवर्तन तभी कर सकती है, जब अन्य पदार्थों की अपेक्षा वह उच्च शक्ति सम्पन्न धरातल (At a bighar potential stage) हो । अतएव आकाश में कम्प या तरंगों का होना तभी सम्भव है जब दो स्थानों के मध्य में सम्भाष्य-शक्ति सम्पन्न धरातल का अन्तर हो । यदि सम्पूर्ण सृष्टि में सारे पदार्थ एक से धरातल पर प्रतिष्ठित हो जायें तो सृष्टि के सम्पूर्ण कार्य बन्द हो जाय । सूर्य प्रतिदिन ठण्डा होता जा रहा है । जब यह उतना ही ठण्डा हो जायेगा जितने अन्य ग्रह हैं, तो सौर जगत नाश को प्राप्त हो जायेगा । सृष्टि व्यापार चलाने के लिए सम्भाष्य-शक्ति सम्पन्न धरातल के अन्तर की आवश्यकता है । पदार्थ विज्ञानवेत्ता यह भी कहते हैं कि शक्ति निम्न से उच्च धरातल पर स्वयं नहीं जा सकती । अवश्य कोई शक्ति या व्यक्ति ऐसी होनी चाहिए जो सदैव धरातल में अन्तर करती रहे । हम इस शक्ति को परमात्मा मानते हैं ।

यही आकाश (ईथर) हमारे विचार का माध्यम है । वह हमें उन विचार तरंगों से मिलता है जो दूर-दूर से हमारे सगे सम्बन्धी नित्य भेजा करते हैं । इस माध्यम के द्वारा हम पुष्ट विचार को जहाँ अन्य व्यक्ति हों, चिरकाल से दूर रहते हों सब स्थानों में भेज सकते हैं । आकाश हमारे सारे शरीर में व्याप्त है । आकाश में विचार की क्रिया का विचार करते समय पाठकों को आकाश अपने से बाहर की वस्तु न मान लेना चाहिए । विचार को एक अज्ञात, दुर्बल या साधारण सी निसत्व वस्तु न मान लें । विचार आकाश के अद्भुत और अदृश्य माध्यम द्वारा, चुम्बक शक्ति और इसी प्रकार की अन्य ज्ञात वस्तुएँ विश्व ब्रह्माण्ड में से द्रव्य को अपने पास आकर्षित कर सकती हैं । इन वस्तुओं से भी कई गुनी शक्ति विचार में है । जितनी शक्ति विचार में है इतनी अन्य किसी पदार्थ में नहीं है । संसार का कोई पदार्थ इसके आकर्षण को नहीं रोक सकता, चाहे इसके और इसकी अभिलाषित वस्तु (केन्द्र) में कैसी ही बाधा क्यों न हो ।

जितना बलवान मस्तिष्क होता है, उसकी विचार तरंग का क्षेत्र उतना ही विस्तृत एवं वेगवान होता है । जब किसी मनुष्य की विचारधारा में शक्ति आने लगे, तब उसे समझ लेना चाहिए कि वह भी बड़ा व्यक्ति बनने वाला है । शक्ति सर्वप्रथम विचारों में आती है । तद्पश्चात सम्पूर्ण मानव शरीर में व्याप्त हो जाती है ।

जैसे जल में पत्थर से तरंगें उत्पन्न होती है, वैसे ही अब हम विचार करना प्रारम्भ करते हैं, तो आस-पास

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के वातावरण में एक भयंकर थरथराहट उत्पन्न होती है, यकायक ईथर का समस्त वायुमण्डल कम्पायमान हो उठता है । विचार तरंगें इच्छा शक्ति के संयोग से छूटने लगती हैं और आसपास के प्रदेश में व्याप्त हो जाती है । अपने गुणों से ये समस्त वातावरण को प्रभावित कर देती हैं । ऋषियों की इन्हीं विचार तरंगों के कारण बड़े-बड़े हिंसक जन्तु एवं राक्षस भी उनका कुछ नहीं बिगाड़ पाते थे । इनका वेग, शक्ति, सामर्थ्य बड़ा उन्नत है । इन अदृश्य तरंगों के समक्ष बड़े-बड़े बली तथा धनाढ्य भी परास्त हो जाते हैं । इन्हीं शक्तियों का सामूहिक नाम "आत्म तेज" भी है जो व्यक्ति इन तरंगों के क्षेत्र में आ जाता है, वह उनसे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सकता ।

हम निर्देश कर आये हैं कि विचार की रचना परमाणुमयी है । हमारे विचार अत्यन्त छोटे-छोटे अणुओं के योग से विनिर्मित हुए हैं । विचार के सूक्ष्म अणु अत्यन्त द्रुतगामी हैं । विचार-संचालन में मुख्य वस्तु विचार परमाणुओं के कद (Size) तथा रूप (Shape) के ऊपर निर्भर है । यदि ये परमाणु छोटे-छोटे हैं, तो आस-पास के क्षेत्र में कम कम्पन थरथराहट उत्पन्न करेंगे । यदि ये कुछ बड़े तथा शक्तिशाली हैं, तो भीषण वेग से प्रवाहित होंगे, चारों ओर का ईथर मण्डल क्षुब्ध हो उठेगा और ये चारों ओर व्याप्त हो जायेंगे । इनका प्रभाव भी दूर-दूर तक फैल जायेगा । यदि इन विचारों के पीछे दृढ़ इच्छा शक्ति एवं निश्चय बल है तो इनके क्षेत्र में आने वाला प्रत्येक व्यक्ति इनसे प्रभावित होता जायेगा । प्राचीन योगियों के लिए विचार एक प्रकार के कवच का कार्य करते थे ।

आपके विचार वातावरण में भयंकर थरथराहट उत्पन्न कर देते हैं और विद्युत की तरंगमालिका की भाँति अग्रसर होते हैं । ईथर तो समस्त वायुमण्डल में व्याप्त है । हमारे मस्तिष्क में भी यह माध्यम प्रस्तुत है । अतएव विचार के सूक्ष्म परमाणु हमारे मस्तिष्क से प्रकाशित होकर बाहर निकल आते हैं । इस कम्पन से समस्त वायुमण्डल थरथरा उठता है । एक मस्तिष्क से दूसरे मस्तिष्क तक ये कम्पनें पहुँच जाती हैं । जिस प्रकार रेडियो ध्वनि की तरंगों को खींचकर पुनः आवाज उत्पन्न कर देता है, उसी प्रकार विचारों की लहरों के कम्पन भी पुनः विचार का ही रूप धारण कर लेते हैं और एक व्यक्ति का मनः सन्देश बखूबी दूसरे तक पहुँच जाता है । या यूँ समझिए कि सन्देश लेने वाले के मस्तिष्क की वही अवस्था हो जाती है, जो सन्देश भेजने वाले के विचार-यन्त्र की है । यदि विचारों में इच्छा का योग नहीं है तो उसकी थरथराहट कुछ ही दूर के आकाशमण्डल में विस्तीर्ण होने के उपरान्त विनष्ट हो जाती हैं और वे दूसरे मस्तिष्क तक नहीं पहुँच पाती, यदि पहुँचते भी हैं तो वे इतने धुँधले होते हैं कि ग्राहक को समझ में नहीं आते ।

क्या कारण है कि एक व्यक्ति सफलतापूर्वक अपना सन्देश दूसरे तक पहुँचा सकता है, किन्तु दूसरा नहीं ? कारण स्पष्ट ही है । एक की विचार कम्पन प्रचण्ड है, तीव्र इच्छा एवं दृढ़ निश्चय के संयोग से वह पूर्ण परिपक्व है । उसके विचार परमाणु अत्यन्त वेगवान हैं । उनका रूप आकार अत्यन्त परिपुष्ट है । वे ईथर में दूर तक अपना क्षोभ उत्पन्न कर सकते हैं और तीव्र गति से विकीर्ण होते हैं । दूसरे के विचार निर्बल संक्षययुक्त हैं । उनमें दृढ़ इच्छा का मनोबल नहीं है । अतएव वे आस-पास के वातावरण में ही तरंगें उत्पन्न करने के पश्चात नष्ट हो जाते हैं । उनके विचारों के अणु परमाणु अपने केन्द्र स्थान से निकल कर थोड़ी दूर पर ही फीके निर्जीव से हो जाते हैं । अतः विचार संचालन के इच्छुक को अपने मनोबल तथा इच्छा शक्तियों को खूब परिपुष्ट करना चाहिए । मेरा अनुभव है कि जब तक साधक की विचार शक्ति निरन्तर अभ्यास द्वारा जाग्रत होकर पूर्ण संगठित न हो जाय, तब तक कोई स्थायी फल प्राप्त नहीं होता । संगठित विचार ही एक मस्तिष्क से दूसरे मस्तिष्क तक फेंका जा सकता है । संगठित विचार एकाग्रता से प्राप्त हो सकता है । मन को एक ही वस्तु पर एक ही स्थान पर रोके रखना, जब तक कि समस्त वृत्तियाँ उसे ग्रहण न कर लें सच्ची एकाग्रता से विचार संचालन मामूली योग की क्रिया है ।

समाधि

बाह्य जगत के कम्पनों द्वारा हमारे नेत्र, कान त्वचा आदि के स्पर्श से हम देखते, सुनते, तथा शीतोष्ण आदि का अनुभव करते हैं । सूक्ष्म अवस्था में पहुँच जाने पर ये कम्पन पारदर्शी होने से दूर दूर देशों की यात्रा कराने वाले, दूर की दशा का ज्ञान करा देने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाले होते हैं । अन्तःकरण निर्मल, एकाग्र करके परमतत्व की स्फूर्ति का अनुभव करते हुए स्थिति करना ही वास्तविक समाधि है ।

मान लो तुम्हारा एक मित्र चीन में निवास करता है । उसे तुम स्थूल अवस्था में देख, सुन, बोल नहीं सकते किन्तु ईथर माध्यम के सूक्ष्म तत्व में जब स्थिति हो जाती है तो उस तत्व के प्रभाव से मनुष्य दूर के दृश्य देख सकता है तथा दूर की आवाज सुन सकता है । इसका क्या कारण है ? प्रत्येक वस्तु में कम्पन होते हैं अथवा प्रत्येक वस्तु कम्पनमय होती है । यह समस्त संसार कम्पनों का समुद्र है । मनुष्य जिस वस्तु को जानना चाहता है, उसके कम्पनों का वह मस्तिष्क निष्क्रिय अवस्था में या ध्यानावस्था में स्पर्श करता है । उसी से उस वस्तु का उस समय प्रत्यक्ष ज्ञान होता है । समाधि अवस्था के लिए उन्हीं साधनों की आवश्यकता है जिनका उल्लेख एकाग्रता, कल्पना एवं चिन्तन के अन्तर्गत बताया गया है । स्मृति, चिन्तन समाधि ये परस्पर इतने अभिन्न हैं कि इनमें भेद करना कठिन हो जाता है । एक ही वृत्ति तीनों स्थानों पर कार्य करती है । स्मृति द्वारा विगत दृश्यों को मूर्तिमान करते हैं । चिन्तन से उन्हें और अधिक स्पष्ट एवं पूर्ण (Perfect) बनाते हैं और समाधिवस्था में इन कम्पनों द्वारा नवीन दृश्यों, वस्तुओं, चित्रों, विभिन्न अवस्थाओं का अवलोकन करते हैं ।

जिनकी स्मृति तथा कल्पना तीखी और क्रियाशील होती है, वे मानस चित्र (Mental images) खींचने में कुशल होते हैं । उन्हें समाधि अवस्था प्राप्त करने में कोई विशेष कष्ट नहीं होता । सर्वप्रथम अपनी स्मृति को विशुद्ध एवं तीव्र बनाना चाहिए । इसके अभ्यास के लिए नियत समय पर किसी शान्त स्थान पर बैठकर ध्यान करना चाहिए । स्मृति पट पर एक-एक कर चित्र खींचने चाहिए । क्रमशः मानस चित्रों में कुशल होने पर तुम देखोगे कि उस स्थान के दृश्य मूर्तिमान बनाकर तुम्हारे स्मृति पट पर एक-एक करके आने लगेंगे । इस अभ्यास से स्मृति विशुद्ध और तीव्र बनती है ।

पं. शिवदत्त जी शर्मा ने स्मृति को पुष्ट करने के लिए यात्रा का अभ्यास बड़े महत्त्व का बताया है । नियत समय यात्रा करो । जैसे तुम अमुक स्थान पर जाना चाहते हो—ऐसा सोच लो । फिर ऐसा ध्यान करो कि तुमने वस्त्र पहने ट्रंक, बिस्तर इत्यादि साथ लिया, तांगे में बैठकर स्टेशन पर आये, स्टेशन के प्लेटफार्म पर गाड़ी की प्रतीक्षा में बैठे, फिर ट्रेन आयी, ट्रेन में सफर किया और ट्रेन से उतरकर निश्चित स्थान पर बैठे जिनसे मिलना भेंटना है, उनसे मिलो भेंटो, बातचीत करो, रहो और फिर गृह को लौट आओ । इस प्रकार के अभ्यास से कल्पना की दूरदर्शन शक्ति शतगुण अधिक हो सकती है । इसका सूक्ष्म अंकुर प्रायः सभी के मस्तिष्क में आरम्भ से ही रहता है, जिसे प्रतिभा कहकर पुकारते हैं और जिसका कवियों के लेख में पूर्ण उद्गार देखा जाता है । मानस चित्र के निर्माण में चातुर्य्य प्राप्त करने के लिए यह अभ्यास उत्तम है ।

स्मरण रखिए, ध्यानाभ्यास के परिपाक होने पर ध्याता और ध्यान की प्रतीति दुर्बल और ध्येय की प्रतीति बलवान रहने लगे—ऐसी अन्तःकरण की स्थिर अवस्था का नाम समाधि है, यह अन्तःकरण की सम्यक् निश्चलता है । ध्यान के समय स्मृति पट का धुंधलापन धीरे-धीरे स्वच्छ होता है, धुंधलापन हटकर हृदयपटल साफ हो जाता है । इसी पर दूर की वस्तुओं के दर्शन होते हैं तथा विविध चित्र खींचे जाते हैं ।

पं. हरिवल्लभ शर्मा कहते हैं कि समाधि का अभ्यास करने वाला योगी अपने चित्त को पीछे खींचकर माया के प्रदेश में ले जाता है तथा माया को दूर करने का प्रयत्न करता है, जिससे माया योगी के अनुकूल व्यवहार करने लगती है । अभ्यासी की बाह्य स्थिति, शारीरिक स्थिति तथा अन्तःकरण और इन्द्रियों का सात्विक बल प्रशंसनीय होता है । उसकी इच्छा शक्ति इतनी बलवान हो जाती है कि उसके अभिघात का प्रसंग कदाचित् ही आता हो ।

समाधि के अभ्यास में सावधानी

(१) समाधि के अभ्यास करने वाले को विषयाशक्ति से दूर रहना चाहिए । समाधि के साधक को इस लोक की सुन्दरी स्त्रियाँ मोहित करने का प्रयत्न करती हैं । इनसे योगप्रदीप की रक्षा कीजिए ।

(२) समाधि के अभ्यास द्वारा मुझे कोई हानि होगी—ऐसा भय त्याग देना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(३) मैं अवश्य अपना सन्देश, दूसरे मनुष्य तक भेज सकता हूँ, बातें कर सकता हूँ । उसका सन्देश ग्रहण कर सकता हूँ—ऐसा दृढ़ विश्वास रखना चाहिए ।

(४) नेत्र मूँदने पर मन को इधर-उधर भटकने न देना चाहिए । प्रत्युत कल्पना को गंतव्य स्थान पर एकाग्र करना चाहिए । समस्त वृत्तियाँ उसी में लय हो जाना जरूरी है ।

(५) सब दृश्य प्रपंचों को तुच्छ गिनने वाला, सबकी भलाई के लिए प्रयत्नशील व्यक्ति, आत्मलाभ से भिन्न लाभ को मिथ्या मानने वाला साधक, समाधि के अनुष्ठान द्वारा उत्तरोत्तर आनन्दधन परमात्मा की समीपता में आ जाता है ।

(६) तीव्र आकांक्षा तथा दृढ़ विश्वास द्वारा मानस चित्र इधर-उधर भेजे जा सकते हैं । इसीसे परमात्मा का साक्षात्कार भी हो सकता है ।

टेलीपैथी

टेलीपैथी वास्तव में एक मस्तिष्क में वैसी ही क्रियाएँ (Movements) उत्पन्न कर देना है, जैसी कि दूसरे के मस्तिष्क में हो रही हैं । दोनों में एक प्रकार के ही कम्पन्न उत्पन्न होने अनिवार्य हैं । विचार परमाणुओं से विनिर्मित है । प्रत्येक अणु कम्पन करता है । एक के मस्तिष्क जैसा कम्पन ही दूसरे में उत्पन्न होने की क्रिया टेलीपैथी है । विश्व की सूक्ष्म या स्थूल वस्तुएँ कम्पनों से पूर्ण रहती हैं । अतएव चाहे काल और स्थान में वह वस्तु कितनी ही दूर होने पर भी प्रत्येक वस्तु का प्रत्येक वस्तु से कम्पन सम्बन्ध रखता है । जैसा फ्रान्सिस थाम्पसन ने कहा है—वृक्ष से एक पुष्प तोड़ने का झटका तारा मण्डल तक को कम्पायमान को देता है ।

टेलीपैथी का अर्थ है एक मस्तिष्क का दूसरे निर्बल मस्तिष्क पर प्रभाव । मछलियों को लीजिए । झुण्ड का झुण्ड एक ओर चलते-चलते यकायक विचार संचालक से एकदम निश्चय करके एक ही ओर मुड़ता है । एक बड़ी मछली का मस्तिष्क तेजी से दूसरे मस्तिष्कों में एक ही प्रकार के विचार फेंकता है । जब हम किसी व्यक्ति के लिए कहते हैं कि अमुक व्यक्ति दूसरे के विचार ताड़ लेता है, तो हमारा अभिप्राय यह होता है कि वह अपने मस्तिष्क को इस प्रकार संवारता तथा उस दशा में (Adjust) रखता है कि वे कम्पन अनायास ही उसमें उत्पन्न हो जाते हैं । जब जल शान्त, निश्चेष्ट, स्थिर अवस्था में होता है तो तनिक सा कम्पन समस्त धरातल पर फैल जाता है इसी प्रकार जब मन शान्त, स्थिर और शिथिल होता है (Passive non thinking condition) सब प्रकार खाली (Blank) और भ्रान्ति से सर्वथा मुक्त होता है तो दूसरे के विचारों की परछाहीं बड़ी सरलता से उस पर अंकित हो उठती है । जितनी शान्ति होगी, शरीर एवं मन की जितनी शिथिलता होगी, विचार, चिन्ता, भ्रान्ति से जितनी मुक्ति होगी उतनी ही आसानी से विचारों की तरंगें आती हैं और हम विचार जान लेते हैं ।

मस्तिष्क के केन्द्र में इतना प्रचण्ड बल है कि वह प्रायः सर्वथा स्थिर और शान्त प्रतीत होता है । इस स्थिर केन्द्र से विचार बाहर की ओर विकीर्ण होते हैं । इस विचार राशि और उसके दूर तक पहुँचने का आधार इच्छा शक्ति एवं मनोबल पर है । उत्पन्न करने की क्रिया मनुष्य के विश्वात्मा के प्रबल संयोग द्वारा होती है । शुद्ध रीति से श्वास लेने से इस संयोग को प्रायः बहुत कुछ सहायता मिलती है । शुद्ध रीति से साँस लेने पर विचार की एकाग्रता पर बड़ा अद्भुत परिणाम होता है । जिस वस्तु पर ध्यान लगाया जाता है, उसकी ओर बलवान और उन्नत इच्छा के जोर से विचार सीधा जाता है । यह ध्यान जितना अधिक प्रचण्ड होगा उतना ही अधिक शीघ्र और सीधी उस विचार की यात्रा होगी । यह भली-भाँति समझ लीजिए कि यदि यह असंगठित मन का चंचल और अनिश्चित विचार है, तो अपनी यात्रा में टेढ़े-मेढ़े मार्ग का अनुसरण करता है । इसकी शक्ति बदलती रहती है और अन्ततः अपने लक्ष्य पर पहुँचे बिना ही यह नष्ट हो जाती है ।

कुछ विद्वानों का विचार है कि मनुष्य के अचेतन मस्तिष्क में (Super-Couscions) नाम का एक और मानसिक स्तर है । यह बड़ा सूक्ष्म तथा ग्रहणशील है । विचार की कम्पन इसी में टकराकर पुनः विचार बन जाती हैं । समाधि अवस्था में अर्ध-चेतन (Sub-Conscions) तथा चेतन (Conscions) मन तो निश्चेष्ट हो जाते हैं पर (Unconscions) अचेतन मन अत्यन्त क्रियाशील बन जाता है । इसका Super conscions स्तर ही विचार ग्रहण एवं विचार संचालन जैसा अद्भुत कार्य किया करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

टेलीपैथी का आरम्भ करने के लिए तुम किसी बहुत मनभावी वस्तु को लो । आँख बन्द कर शरीर को निश्चेष्ट कर लो, एकान्त स्थान में शान्त चित्त होकर बैठ जाओ, शरीर और मन को शिथिल कर लो । सब ओर से विचार हटाकर अपने भीतर विज्ञानमय कोष में, जहाँ आत्मा का निवास है, उसमें प्रवेश करो । एक मिनट के लिए उस चुनी हुई वस्तु को मानसिक नेत्रों के सन्मुख रखो । उतावले न बनो प्रत्युत धीरे-धीरे उसे और स्पष्टतर बनाओ, उसे अपनी कल्पना में बिल्कुल साफ-साफ देखने का प्रयत्न करो । प्रारम्भ में अन्दर धुंधला-धुंधला प्रतीत होगा अभ्यास से मानसिक चित्र खिंचने लगेगा, फिर स्पष्ट होता जायेगा । यदि तुम्हें ऐसा करने में सफलता प्राप्त न हो, तो कुछ देर ठहरकर पुनः उद्योग करो । साफ-साफ मानस चित्र खींचने का प्रयत्न करो ।

अपने मस्तिष्क को एक महान आकर्षण केन्द्र मानो । "मैं एक समुन्नत तेज पिण्ड हूँ ज्योतिर्मय, सचेतन, चुम्बक हूँ । शक्ति की किरणों को, विचार की तरंगों को ईथर में फेंकता हूँ एकाग्रता द्वारा विचार बिखेरता हूँ । मेरे सारे शरीर में ऐसे आकाश-तरंग व्याप्त हो रहे हैं, जो अनन्त में से सब चीजों के लिए माध्यम का काम देते हैं । मैं जीवन का नियम हूँ । शक्ति हूँ । प्रेम हूँ । मेरा सारा शरीर प्रेम से परिपूर्ण हो रहा है ।" इस संकेत को स्वीकार करो, इसमें सराबोर हो जाओ । तुम्हारा मस्तिष्क एक सचेतन चुम्बक है और एक विशेष प्रकार के विचार को बाहर बिखेर कर यह वैसा ही आकर्षण केन्द्र बन जाता है । "मैं वही प्रभावशाली केन्द्र हूँ ।" ऐसा उद्बोधन करते ही जिस विचार पर तुम मनः नेत्र एकाग्र करते हो, वे एकदम एक विशेष विचार अनुक्रम उत्पन्न कर देते हैं । ज्यों ही तुम एक विशेष प्रकार के विचार करने लगते हो, झट विचार तरंगें छूटने लगती हैं । ये निरन्तर चारों ओर छूटने लगती हैं और तुम्हारे लिए संसार के पास जो सर्वोत्तम पदार्थ है, उसके साथ तुम्हारा मानसिक संसर्ग उत्पन्न कर देती हैं । यह सर्वोत्तम पदार्थ कुछ भी हो सकता है । अपने विचारों की दशा निर्धारित अवश्य करो अन्यथा विचार तरंगें चारों ओर विकीर्ण होकर नष्ट हो जायेगी । तुम्हारे मन में जो मानस चित्र है उसी को तुम लक्ष्य बना सकते हो । अपनी विचार किरणों को इसी केन्द्र की ओर तेजी से फेंको ।

क्रोध, ईर्ष्या, बैर, प्रतिशोध दूसरे का अनिष्ट, पाप रूप, दोष रूप या अहितकर विचार बड़ा कलुषित वातावरण उत्पन्न कर देंगे । ये चुम्बकीय शक्ति को पंगु कर देंगे । अतः तुम्हें यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि शुभ भावना कल्याण की उच्च कल्पना में आरूढ़ हुए चित्र स्थूल रूप में विचार संचालन में सहायक होते हैं । इसीलिए वेदों में निर्देश किया गया है कि तुम्हारी कल्पना सदैव शिवसंकल्पमयी हो । अपने अन्तःकरण में विशुद्ध पवित्र अनन्त स्वरूप चेतन सत्ता के प्रबल मानसिक चित्र की रचना करो । एकान्त स्थान में, रात्रि के समय सुखासन से बैठ जाओ और कुछ क्षण आकाश की ओर देखकर नेत्र मूँद लो और अपनी वृत्ति को मूर्धा में स्थिर करो । इन्द्रियों को विषयों से वृत्ति को हटा लो और ध्यान में ऐसे डूब जाओ कि सम्पूर्ण संसार तुम्हारे लिए अदृश्य हो जाय । इस समाधि अवस्था में पराबुद्धि जाग्रत होती है । दिव्य आध्यात्मिक योग की अद्भुत शक्तियाँ महान व्यक्तियों को इसी उच्च लोक में प्रवेश करने से प्राप्त हुई है । ये गुप्त शक्तियाँ इतना तर्क या बुद्धि द्वारा प्राप्त नहीं होती जितनी किसी अज्ञात क्षेत्र (Unconscions mind) से ही अपने आप उतरती हैं ।

डॉ. दुर्गाशंकर जी का निर्देश है कि—यह केवल उच्च कल्पना मात्र ही नहीं हैं किन्तु यथार्थ सत्य है और शास्त्र बतलाया गया है कि—"मूर्ध ज्योतिषिसिद्ध दर्शनम्"—"प्रातिभाद्वा सर्वम्"—मस्तिष्क में ब्रहरूध्र नाम का एक छिद्र है । यह प्रकाश का तेजोमय केन्द्र है । इस स्थान पर चित्त एकाग्र करने से सिद्ध पुरुषों का साक्षात्कार होता है मन में स्वयं स्फूर्ति से जो ज्ञान प्राप्त होता है, उसी से विचार संचालन होता है । जिसकी आज्ञा से प्राण जीवित रहते हैं, जिसकी प्रेरणा से बुद्धि कार्य करती है, जो वाणियों की वाणी है, जो आत्मा है, जो दूर से भी दूर है, और समीप से भी समीप है, वह चेतन सत्ता है । यह गुप्त चेतन सत्ता हमें समाधि अवस्था में प्राप्त होती है जो मनुष्य इस गुप्त सत्ता के उच्च शिखर पर पहुँच जाता है, उसमें विचार संचालन का गुण अनायास ही आ जाता है । वही एक सत् चित्त आनन्द घन सर्वत्र भरा हुआ है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गतिमान-सा प्रतीत होता है, वही बाहर भीतर सभी स्थानों में व्याप्त है, वही हमें दूसरे के विचार देता और हमारे ले जाता है । इसी आत्म तत्व पर विचार केन्द्रित करो ।

विचार संचालन की क्रिया के अभ्यास

रात्रि में किसी एकान्त स्थान में शान्त, ध्यानावस्थित हो बैठ जाओ । सुखासन सर्वोत्तम है । लेटना भी ठीक है । सम्पूर्ण शरीर को शिथिल कर लो, मन को निश्चेष्ट करो और खाली (Blank) कर दो । माँसपेशियों को ढीला छोड़ दो । शरीर में, मन तथा मस्तिष्क में किंचित भी तनाव न रहे । तुम्हारे मन में यह दृढ़ विश्वास रहे कि तुम अपना सन्देश दूसरे व्यक्ति को भेज सकोगे । जिसके पास तुम सन्देश भेजना चाहते हो उससे तुम्हें प्रेम तथा सौहार्द होना अनिवार्य है । यदि हो सके तो उसे पहले ही से बता दो कि आज रात्रि में ९ बजे या अमुक समय पर हम तुम्हें अपना सन्देश भेजेंगे ।

नियत समय पर शिथलीकरण कीजिए । श्वास धीरे-धीरे स्वाभाविक गति से चलता रहे । मन से समस्त चिन्ता, व्याधि, वैर भाव निकालकर उसे खाली (Blank) कर डालो । अब चित्त में अपनी सृजनात्मक कल्पना द्वारा उस व्यक्ति को मूर्तिमान करो जिसके पास तुम्हें अपना सन्देश भेजना है । उसका साफ बोलता-सुनता मानस चित्र (Mental imege) अन्तर्जगत् में प्रस्तुत करो ।

अब पूरे विश्वास के साथ अपना सन्देश इस मानक मूर्ति के सन्मुख कहो । धीरे-धीरे शब्द दृढ़ता से निकालो जल्दी न करो । अपने सन्देश को दो से तीन बार तक इस मानसिक मूर्ति से कहते जाओ किन्तु आत्म श्रद्धा को ढीला न होने दो ।

मान लीजिए आप किसी मित्र, सम्बन्धी, सुहृद, बहिन, पत्नी इत्यादि को बुलाना चाहते हैं । शिथलीकरण कर कल्याण से मानसचित्र खींचो और उसके पास यह सन्देश भेजो—मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे पास आ जाओ ? मुझे तुम्हारी अत्यन्त आवश्यकता है । मैं अपने जीवन में पग-पग पर तुम्हारी आवश्यकता प्रतीत कर रहा हूँ । बिना तुम्हारे मेरे कई आवश्यक कार्य रुके पड़े हैं । अतएव बुलाने का यह सन्देश मैं तुम्हारे पास भेजता हूँ । तुम इसे मिलते ही तुरन्त चले आना । आओ ! तुम अवश्यमेव आओ ।"

अब श्वास अन्दर खींचो तो इसी सन्देश पर चित्त को एकाग्र रखो और उस व्यक्ति का मानस चित्र अपने आगे बनाये रहो । बारम्बार इसी की पुनरावृत्ति करते रहो । अधीर मत हो । तुम इसमें शीघ्रता नहीं कर सकते । यह कला काफी अभ्यास चाहती है । इसके लिए दीर्घकालीन अभ्यास चाहिए । हमारी सृजनात्मक कल्पनाशक्ति एकाग्रता (Concentration) और इच्छाशक्ति पर विचार गति का प्रवाह निर्भर है । इन तत्वों के उचित विकास से पूर्व विचार में कम्पन उत्पन्न नहीं होते । दो हफ्तों के अभ्यास से तुम्हारे सन्देश तुम्हारे सुहृद मित्र के पास पहुँचने लगेंगे ।

शुरू-शुरू के प्रारम्भिक अभ्यास में तुम्हें यह करना चाहिए । अपने प्रेमी मित्र को अपने दो गज दूरी पर कुर्सी पर बैठाओ । मेज उसके आगे रहे । कागज पेन्सिल लेकर उससे कहा कि जो कुछ तुम सन्देश उसे भेजो वह लिखता रहे । तुम स्वयं विचार का सन्देश भेजने के लिए एक कागज का भौंपू, जैसा ग्रामोफोन बाजे में टीन का बना होता है, लेकर दूसरी ओर कुछ ऊँचे स्थान पर बैठ जाओ । इस अभ्यास में आपस में इन्द्रिय स्पर्श की आवश्यकता नहीं है । इसमें केवल अपने आमने-सामने बैठकर एक दूसरे के मनोगत विचार आकर्षण द्वारा एक दूसरे को सूचित करने की आवश्यकता होती है । इसमें अपने विचार तेजी से दूसरे मस्तिष्क में फेंकने होते हैं । विचार भेजना (Project) या उन्हें ग्रहण करने (Receive) में शान्तवृत्ति और एकाग्रता की बहुत जरूरत रहती है ।

कागज के भौंपू को एक आँख में लगा लीजिए । उसका खुला हुआ चौड़ा भाग बैठे हुए ग्राहक (Receiver) की तरफ कर लीजिए । एक नेत्र मूँद लीजिए । दूसरे नेत्र से एकाग्र दृष्टि कर देखना शुरू कीजिए । ग्राहक से कहिए कि वह भौंपू के चौड़े मुँह पर एकाग्र दृष्टि लगाकर एकाग्रता पूर्वक देखता रहे । पूर्ण एकाग्र हो जाने पर नेत्र मूँदकर दृष्टि की एकाग्रता वैसी ही स्थिर रखने का अभ्यास डालना चाहिए । "तुम्हारा कौन-सा सन्देश कागज पर लिखूँ ?"—ऐसा प्रश्न ग्राहक को शान्त चित्त से पूछना चाहिए । उसका मन भी खाली (Blank) रहे । कुछ देर पश्चात भेजने वाले की तरफ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से विचार की लहरें ग्राहक के मन में प्रविष्ट होने लगेंगी । उस समय तुम्हारा दिमाग जो कुछ भी लिखने को प्रेरित करे, उसी सन्देश को नोट करते जाओ । आरम्भ में इन सन्देशों में गलती होना सम्भव है, किन्तु अभ्यास से धीरे-धीरे साफ विचार की लहरें समझ में आने लगेंगी ।

मान लीजिए एक मित्र दिल्ली में है तथा द्वितीय कोटा में है । यह परस्पर एक नियत निश्चित समय में एक दूसरे को सन्देश भेजना चाहते हैं । यह मजे में विचार संचालन की रीति से यह किया जा सकता है, किन्तु ऐसा प्रयोग करने के लिए यह पहले ही निश्चित कर लेना चाहिए कि कौन सन्देश किस समय भेजेगा और कौन सुनेगा । ऐसी दिशा में भौंपू का चौड़ा मुँह सन्देश ग्रहण करने वाले (Receiver) को अपने कमरे की सामने वाली दीवार पर अपनी तरफ चौड़ा मुँह करके टाँग लेना चाहिए और नियत समय पर उस पर एकाग्रचित्ता से देखना चाहिए । जब दिमाग में स्वयं विचार की लहरें (Waves) प्रारम्भ हो तो कागज पर लिखना चाहिए । दूसरी ओर विचार विक्षेपक (Sender) को भौंपू का छोटा मुँह नेत्र पर लगाकर "सन्देश ग्राहक मेरे सामने है ।"—ऐसी कल्पना करनी चाहिए और अपना मानसिक संकेत भेजना चाहिए ।

विचार पुष्टीकरण के दो और उपाय

स्वयं रात्रि में एकान्त में बैठ जाइए और नेत्र मूँद लीजिए । शरीर और मन को शिथिल कर लीजिए । एक पुस्तक हाथ में ले लीजिए । अब नेत्र बन्द किए-किए पुस्तक का कोई पृष्ठ खोल लीजिए । फिर मन में सोचिए कि यह कौन-सा पृष्ठ है । संख्या धीरे-धीरे खाली दिमाग में घूमने लगेगी जो अंक प्रथम बार मन में उत्पन्न हो वही मन पर अंकित कर लो और आँख खोल कर देखो । तुम्हें आश्चर्य होगा कि कैसे वही अंक मन में आया । प्रारम्भ में चार-पाँच अंकों का अन्तर सम्भव है, किन्तु धीरे-धीरे कम होकर, अभ्यासी उस अंक को ठीक-ठीक बता सकता है ।

विचार विनियम की बुद्धि बढ़ाने का एक यह भी उपाय है कि दो मित्र एक कमरे में, एकान्त में एकाग्र चित्त करके स्वस्थ अन्तःकरण से बैठ जायें । उनमें से एक अपने मन में विचार करना प्रारम्भ करे । दूसरा तीव्र मानसिक दृष्टि से जानने की चेष्टा करे । अभ्यास से मन की बात मालूम होने लगेगी । इस प्रकार अन्तःचक्षु खुल जायेंगे । यह अभ्यास छः महीने तक चलता रहे । दोनों मित्र हेर-फेर कर विचार विनिमय मौन रहकर करते रहें । एक बार सिद्ध हो जाने पर दोनों एक-दूसरे से कितनी ही दूरी पर क्यों न हों, अपने विचार बखूबी भेज सकते हैं । प्रयोग और अभ्यास करते समय यदि अपनी विचार शक्ति पंगु होती हुई या थकी हुई सी जान पड़े तो अभ्यास बन्द कर देना चाहिए ।

स्मरण रखिए, श्रद्धापूर्वक जो शब्द तुम्हारे मन में मानस चित्र के सन्मुख दुहराये जायेंगे, उनमें बड़ा बल है । इस उद्‌बोधन से विचार तरंगें तुरन्त ईथर प्रवेश में हलचल पैदाकर दूसरे से तुम्हारा मानसिक संसर्ग उत्पन्न कर देते हैं । फिर तुम्हारे विचार क्रमशः दूसरे के दिमाग में घुस जाते हैं ।

इस क्रिया से प्रेम, सहानुभूति, रक्षा, भलाई, शान्ति, आरोग्य, भ्रातृभाव, सुख के शुद्ध परमाणु ही बिखेरने चाहिए । यदि तुम इससे दूसरे को हानि पहुँचाने की कोशिश करोगे तो वे विचार उलटकर तुम्हीं को नुकसान पहुँचायेंगे । क्रोध, ईर्ष्या, व्याधि, लड़ाई, झगड़े के विचार स्वयं भेजने वाले के पास लौट आते हैं जिससे भेजने वाले पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है ।

प्रत्येक साधक का यह कर्त्तव्य है कि वह जब कभी किसी के गृह में प्रवेश करें तो मन ही मन सुख, शान्ति, आरोग्य, भातृभाव और प्रेम के विशुद्ध परमाणुओं को फैलाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना करें कि इस घर में शान्ति हो, शान्ति हो, शान्ति हो । ओउम् शान्तिः शान्तिः शान्तिः ।

इस विद्या के अन्य उपयोग

जीवन में सफलता प्राप्त करने के लिए, प्रेम भाव फैलाने, प्रभाव डालने, उन्नत होने के लिए यह विद्या बड़े महत्त्व की है । नित्य रात्रि में या प्रातःकाल तुम कोई उत्तम सन्देश लेकर ध्यान में प्रविष्ट हो जाओ । तुम्हारे सम्पूर्ण शरीर में ऐसी किरणें हैं, ऐसा प्रभा-मण्डल है जिसका प्रभाव दूर-दूर तक पड़ता है । इस प्रभा-मण्डल को (Light of the illuminated mind) या विकसित मन की आभा कहते हैं । तुम्हारे व्यक्तिगत विचारों के अनुसार इसमें परिवर्तन चला करते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन्हीं अदृश आभामयी किरणों के प्रभाव से अच्छा या बुरा वातावरण उत्पन्न होता है ।

तुम ऐसा ध्यान करो जैसे तुम्हारे सम्पूर्ण शरीर से आकाश की तीव्र किरणें निकल रही हैं । तुम वातावरण से उत्तम तत्व खींच-खींचकर अपने अन्दर एकत्रित कर रहे हो । फिर उन एकत्रित किरणों को बाहर प्रकाशित कर रहे हो ।

ध्यान करो कि "मैं प्रेमपुंज हूँ । मेरा पूर्ण शरीर प्रेम तत्व से परिपूर्ण हो रहा है । संसार का प्रत्येक अणु परमाणु मुझे प्रेम कर रहा है । मैं प्रेम का महान आकर्षक केन्द्र बन गया हूँ ।" इस प्रकार का एक उत्तम सन्देश बना लो और उसे बार-बार श्रद्धापूर्वक दुहराते रहो । तुम देखोगे कि तुम्हारी इस भावना से संसार के सभी व्यक्तियों का व्यवहार तुम्हारे साथ बदल जायेगा । तुम्हारे ऑफिसर तुम्हें श्रद्धा की दृष्टि से देखने लगेंगे । सभी तुम्हें प्रेम करेंगे । तुम जैसी किरणें बाहर निकालते हो, उसी के अनुसार दूसरे तुमसे व्यवहार भी करते हैं । जिन तत्वों के संकेत तुम दुहराते हो कुछ काल पश्चात वैसे ही बन जाते हो ।

कुछ स्मरणीय तत्व

विचार संचालन साधना का विषय है । इसके अध्ययन तथा अभ्यास में जितना परिश्रम और जितना समय जिज्ञासु लगायेगा, उतना ही चिरस्थायी उसके फल होंगे, और उतना ही अधिक सफलता उसे प्राप्त होगी । इसलिए यदि प्रारम्भ में कुछ कम एकाग्रता हो तो घबराना न चाहिए । यथाशक्ति मनोबल का संचय करते रहना चाहिए । नये अभ्यासी पहले एकाग्रता का अभ्यास करें । यह मानना भारी भूल है कि मनोबल तथा मानसिक एकाग्रता केवल ईश्वर प्राप्ति के लिए ही उपयोगी है, वरन् यह स्मरण रखना चाहिए कि मानसिक एकाग्रता से विचार संचालन आसानी से हो सकती है । आध्यात्मिक विकास की यह उच्च स्थिति में प्रविष्ट करना है ।

जब कोई व्यक्ति किसी तुच्छ से तुच्छ विषय पर भी विचार करने बैठता है, तो उसके विचार परमाणु एकदम ईथर में क्षोभ उत्पन्न करते हैं । इससे उनके चारों ओर का मण्डल क्षुभित हो उठता है । यदि इन परमाणुओं के पीछे दृढ़ मनोबल नहीं है तो यह कम्पन उसी स्थान पर रहता है किसी दूसरे पर उसका कुछ प्रभाव नहीं पड़ता । यदि कोई दृढ़ निश्चयी इन विचारों को तेजी से फेंकती है तो ये विचार भूमण्डल के एक स्थान से दूसरे स्थान तक ढकेले जा सकते हैं ।

जब टेलीपैथी के उद्देश्य से दो मस्तिष्क कार्य कर रहे हों, तब उनमें से एक का धनात्मक (+) तथा दूसरे का ऋणात्मक (–) होना आवश्यक है । परस्पर की सहानुभूति, प्रेम, शुभ विचार द्वारा वे आकाश पर दबाव डालते हैं और विचार क्षेत्र इस प्रकार कार्य करते हैं कि उनमें एक से परिवर्तन होने लगते हैं । ये परिवर्तन ही विचारों में परिणत हो जाते हैं । अतः भेजने वाला और विचार ग्रहण करने वाला परस्पर वैमनस्य न रखें ।

जिन व्यक्तियों में अच्छे सम्बन्ध होते हैं उन्हें आपस में विचार संचालन करना सुगम होता है । परस्पर का अच्छा परिचय और आत्मभाव दो व्यक्तियों को एक सम्बन्ध सूत्र बनकर बाँधे रहता है । इस सम्बन्ध सूत्र के सहारे विचारधारा उसी प्रकार दौड़ती है, जैसे तारों के सहारे बिजली की धारा दौड़ा करती है । इसलिए आरम्भिक अभ्यासी को विचार प्रेषण का अभ्यास अपने घनिष्ठ मित्रों या आत्मीयजनों पर करना चाहिए । जिनके साथ शिथिल सम्बन्ध हैं, साधारण परिचय है, भीतर ही भीतर मनोमालिन्य है ऐसे लोगों पर आरम्भिक प्रयोग कठिनता से सफलता होते हैं ।

अच्छे साथी का चुनाव विचार संचालन विद्या के आरम्भिक अभ्यास के लिए बहुत जरूरी है । शान्त चित्त, सात्विक स्वभाव, श्रद्धालु तथा आत्मवाद पर विश्वास रखने वाले व्यक्ति का अन्तर्मन ऐसा लचीला होता है कि वह दूसरे के स्वल्प बल से प्रेरित किए हुए विचारों को भी आसानी से पकड़ लेता है । इसके विपरीत अस्थिर चित्त, अविश्वासी तथा उच्छृंखल व्यक्ति सबल विचारों को भी ग्रहण नहीं कर पाते । यदि अभ्यास के लिए अच्छा साथी मिल जाता है तो सफलता बहुत शीघ्र और स्वल्प काल में ही प्राप्त होने लगती है ।

अपने आत्मबल को बढ़ाना चाहिए, चित्तवृत्तियों को पवित्र एवं सात्विक बनाना चाहिए, स्वभाव में सरलता लानी चाहिए और सद्भावों से अन्तःकरण को ओत-प्रोत करना चाहिए । नित्य परमात्मा की उपासना करने से आध्यात्मिक गुप्त शक्तियों का विकास होता है और बढ़े हुए मनोबल द्वारा विचार संचालन की शक्ति आती है । इसलिए अपने जीवन को तपश्चर्या और ईश्वर परायणता में संलग्न रखना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार संचालन विद्या कोई खेल तमाशे की या बाजीगरी की वस्तु नहीं है । यह सुविकसित उच्च अन्तःकरण की एक महत्त्वपूर्ण क्रिया है । उसे तुच्छ मनोरंजन की बातों में खर्च न करना चाहिए । जिनके लिए भी जो भी विचार भेजे जायें वे आत्मा को ऊँचा उठाने वाले हों, कल्याण मार्ग पर ले जाने वाले हों । साधारण काम-काज की बातें जो एक पोस्टकार्ड से तार या टेलीफोन से चन्द पैसे खर्च करके दूसरों के पास भेजी जा सकती हैं उनके लिए यह श्रम साध्य शक्ति व्यय क्यों की जाय ?

हमें सदा दूसरों के लिए ऐसे आध्यात्मिक भाव प्रेरित करने चाहिए जो उन्हें ऊँचा उठायें, महान उद्देश्य के लिए, दिव्य प्रयोजन के लिए विचार बल का उपयोग होना चाहिए । साधकों को विचार संचालन विद्या की शिक्षा प्राप्त करनी चाहिए, पर उसका उपयोग तुच्छ या नीच प्रयोजन के लिए नहीं, परमार्थ के लिए—स्वपर कल्याण के लिए करना चाहिए ।

आत्म शक्ति द्वारा वार्तालाप

पाश्चात्य मनीषी श्रीमती एलेक्जेण्ड्रा डेविड नील ने अपने एक संस्मरण में लिखा है कि तिब्बत के लामा योगियों के सम्बन्ध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के निमित्त एक बार मैं उस सीमा प्रान्त में पहुँची, जो अब जेचुएन और कांसू नामक चीनी प्रान्तों में मिला लिया गया है । तागन से कुंका दर्रे तक छः अन्य यात्री भी हमारे साथ थे, क्योंकि वहाँ घना जंगल था और तिब्बती डाकुओं की बड़ा डर था । हम लोग अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित थे, इसलिए अन्य साथियों को हमारे ऊपर बड़ा भरोसा था । इन यात्रियों में पाँच तो चीनी व्यापारी थे, छटा 'वोनपो' न्गैग्स्पा (आदि तिब्बती तान्त्रिक) था । इसके बाल इतने लम्बे थे कि सिर पर पगड़ी की तरह बँध जाते थे ।

इस तान्त्रिक को अपना साथी पाकर मुझे विशेष प्रसन्नता हुई क्योंकि मैं तो तिब्बत की आध्यात्मिक खोजों के लिए यात्रा ही कर रही थी । मैंने उसको सस्वादु भोजन कराना आरम्भ किया और अपने निकट सम्पर्क में लाने के लिए उससे वार्तालाप का क्रम बढ़ाया । बातचीत करने पर पता चला कि वह अपने गुरु वोनपो के पास उसके बड़े भारी 'दवथाव' (अनुष्ठान) में सम्मिलित होने के लिए जा रहा था । यह अनुष्ठान किसी बलवान प्रेतात्मा को वश में करने के लिए किया जा रहा था । मेरी उत्कण्ठा बढ़ी और मैंने चाहा कि मैं भी उसके गुरु का अनुष्ठान देखूँ । पर उसने स्पष्ट कह दिया कि 'यह असम्भव है' आप उनके अनुष्ठान में सम्मिलित नहीं हो सकतीं ।'

फिर भी मैंने अपने प्रयत्न को छोड़ा नहीं और निश्चय किया कि इसके साथ अवश्य जाऊँगी । मैंने अपने नौकरों को होशियार कर दिया कि 'इस पर गुप्त दृष्टि रखना, कहीं भाग न जाय । हमें इसी के पीछे-पीछे चलना है ।' न जाने कैसे वह 'न्गैग्पा' हमारी चालाकी को ताड़ गया । उसने मुझसे नम्रतापूर्वक सरल स्वभाव से कहा—"मैं किसी कपट के कारण आपको वहाँ जाने से नहीं रोकता । वहाँ बाहर के आदमियों का जाना वास्तव में ही वर्जित है । न मानने से गुरु के कार्य में विघ्न पड़ेगा और आपको भी हानि उठानी पड़ेगी । मैंने आपके आगमन और इच्छा की सूचना आत्म शक्ति के द्वारा गुरु जी को दे दी है, यदि वे उचित समझेंगे, तो आपको स्वयं बुला लेंगे ।"

उसके कथन पर मुझे विश्वास न हुआ और सोचती थी, कई बार यह शिष्य लोग झूँठ बोलते हैं, वैसे ही शायद यह भी कह रहा होगा । मैं चुप हो गई, पर अपने इरादे में जरा भी परिवर्तन नहीं किया । दर्रा पार करने के पश्चात डाकुओं का खतरा कम हो गया था, इसलिए चीनी व्यापारी तो हमारा साथ छोड़कर अपने इच्छित स्थानों को चले गए । अब उनमें से एक न्गैग्स्पा ही हमारे साथ था । आगे की यात्रा करते हुए हम लोग चले जा रहे थे । हमने देखा कि छः घुड़सवार तेजी से हमारी ओर दौड़े हुए चले आ रहे हैं । वे मेरे सामने आकर ठहर गए और मक्खन आदि का कुछ प्रसाद देकर बोले कि आचार्य वोनपो न्गैग्स्पा ने हमें आपके पास सन्देश कहने भेजा है कि 'कीलीखोर' (तन्त्र वेदी) के निकट केवल दीक्षित शिष्य ही जा सकते हैं । आप अपना विचार छोड़कर इस समय वापिस ही चली जायें ।

मैंने उनकी बात मान ली और वापस लौट आयी । तब मैंने जाना कि सचमुच यह लोग आत्मशक्ति द्वारा समाचार कहने और सुनने की क्रिया को जानते हैं ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हिप्नोटिज्म एवं वशीकरण की सच्ची सिद्धि

सम्मोहन विज्ञान

जनता की भीड़ एकत्रित है, तरह-तरह की बातें हो रही हैं, गपशप चल रही है । कोई व्यक्ति अपने घर की परिस्थिति की बातें कर रहा है, कोई बाजार की तेजी-मन्दी पर टीका टिप्पणी कर रहा है, कोई राजनैतिक घटनाचक्र पर आलोचना कर रहा है—इतने ही में वहाँ एक विशाल देह वाला तेजस्वी, सबल, सुदृढ़ व्यक्ति आ उपस्थित होता है । उसका डीलडौल देख कर अनायास ही सबकी दृष्टि उसकी ओर फिर जाती है । सब पर उसके शरीर के पुरुषत्व का अलक्ष प्रभाव पड़ता है । यदि इस व्यक्ति में प्रतिभा का सर्वतोन्मुखी विकास भी हो और वह कोई ऐसी चर्चा छेड़े जिसमें दूसरों की अपेक्षा वह अधिक जानता हो, तो वह जल्दी ही वहाँ के वार्त्तालाप का केन्द्र बन जाता है । वह ऐसी पते की बातें करता है कि बरबस दूसरों का ध्यान उसी की ओर आकृष्ट हो जाता है । अन्य उपस्थित व्यक्ति तो उसकी वार्त्ता में थोड़ा-थोड़ा योगमात्र दे पाते हैं । निःसन्देह इस पुरुष में सम्मोहक एवं वशीकरण व्यक्तित्व के गुण यथेष्ट संख्या एवं परिमाण में मौजूद हैं ।

वैयक्तिक आकर्षण शक्ति की अदृश्य लहरें प्रत्येक मनुष्य के चरित्र से चेतन अथवा अचेतन रूप में निकला करती हैं । आधुनिक मनोविज्ञान ने ऐसे गुणों की विशेष रूप से छानबीन की है और आधुनिक शिक्षण में व्यक्तित्व निर्माण की विद्या का विशेष महत्त्व है । वह युग गया, जब मनुष्य प्रारब्ध का रोना रोया करते थे । प्रारब्ध, व्यक्तित्व, सफलता, तेजस्विता, क्रियाशीलता, जीवन-शक्ति, विपुलता—मनुष्य की साधना के परिणाम हैं । मनुष्य का उद्योग और परिश्रम ये दैवी गुण हैं जिनसे वह अपने व्यक्तित्व में प्रत्येक प्रकार के मानसिक मार्ग निर्माण कर सकता है ।

मनुष्य को बनाने वाला कौन है ? उसके विचार-शुभ या अशुभ, जिन्हें वह मजबूती से पकड़े हुए है और जो उसके स्वभाव के अंश हैं । जब हम कोई भी विचार दृढ़ता से अपनाते हैं तो वह हमारे मानसिक संस्थान का एक अंग बन जाता है और कार्या में परिणत होकर हमारे सन्मुख आता है ।

व्यक्तित्व निर्माण में विचारों का बड़ा महत्त्व है । हमें चुन-चुन कर उन गुणों के बीज अन्तःस्थल में लगाने चाहिए । उन्हीं को आदतों में परिवर्तित कर स्वभाव का अंग बना लेना चाहिए । जिन विचारों को आप आन्तरिक मन से स्वीकार करते हैं, जिन पर आपको विश्वास हो गया है, उनका प्रभाव अत्यन्त व्यापक होता है । आपका विचार आपका सबसे मूल्यवान धन है । अपनी विचारशक्ति के उचित प्रयोग द्वारा हममें से प्रत्येक व्यक्ति ऊँचे दर्जे का व्यक्तित्व प्राप्त कर सकता है, किन्तु इसके लिए प्रतिक्षण जागरूक और प्रयत्नशील बनना पड़ेगा ।

सबल एवं पूर्ण विकसित शरीर

सबसे पहले मनुष्य के शरीर का दूसरें पर प्रभाव पड़ता है । शरीर स्वस्थ हो, प्रत्येक अंग-प्रत्यंग पूर्ण विकसित एवं पुष्ट हो, अनुपात में हो तो मनुष्य रंग-रूप के अभाव में भी सुन्दर प्रतीत होता है । प्राचीन मनुष्य बड़ा स्वस्थ और फुर्तीला होता था, शारीरिक श्रम करने भागने दौड़ने, आखेट करने, पेड़ों और पर्वतों पर चढ़ने में उसे तनिक भी आलस्य न था, किन्तु हम देखते हैं कि विज्ञान की आश्चर्यजनक प्रगति के बावजूद आज का मनुष्य दुबला पतला क्षीणकाय पीत वर्ण का है । आर्थिक उन्नति के साथ मनुष्य की शारीरिक उन्नति नहीं हुई । आराम पसन्द जीवन व्यतीत करने के कारण वह कमजोर और रोगी बन गया, उसका कद भी छोटा हो गया, उसकी कोमलता बढ़ गई, अंग शिथिल से हो गए, वह बेकाम हो गया, हमारे शरीर का निर्माण इस प्रकार किया गया है कि उसे सशक्त एवं सजीव रखने के लिए शारीरिक श्रम की परमावश्यकता है । यदि काफी मेहनत न की जाय, अर्थात् किसी न किसी रूप में समुचित व्यायाम न किया जाय, तो प्रतिक्रियास्वरूप शरीर के अंग-प्रत्यंग निर्बल पड़ने लगेंगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और अन्त में वे बेकार तक हो सकते हैं । परमेश्वर चाहता है कि हम अपने शरीर के प्रत्येक अवयव से खूब कार्य लें, सब मेहनत मशक्कत करें, अच्छी तरह भरपेट खायें और शरीर गठीला बना लें ।

यह देखकर अत्यन्त दुःख होता है कि लोग अपने शरीर के कद का ख्याल नहीं करते । यदि हाथों और पाँवों की कसरतें अच्छी तरह की जायें और हड्डी बढ़ाने वाला भोजन पर्याप्त मात्रा में लिया जाय, तो ऊँचाई बढ़ सकती है । शारीरिक विकास में व्यायाम (डम्बल, डण्ड बैठक, मुग्दर, तैरना, खेलना, कूदना, टहलना) चाहे वह किसी भी रूप में क्यों न हो, अत्यन्त आवश्यक है । आकर्षक बनने के लिए व्यायाम कीजिए, अंगों को माँस से परिपुष्ट कीजिए , शरीर को शक्ति से भरा पूरा कर लीजिए, सुन्दर बनिए । पुरुष का सौन्दर्य उसकी शक्ति में है । आपका प्रत्येक अंक बलवान, शक्तिवान और सुडौल होना चाहिए । सुन्दर और सुडौल शरीर के लिए पर्याप्त श्रम करना सीखिए । धीरे-धीरे शरीर को श्रम पूर्ण कार्य करने की आदत डालिए ।

शरीर के शक्तिशाली होने से हम अपनी मानसिक क्रियाएँ सुव्यवस्थित कर सकते हैं । जिस शरीर पर हमारे सुख-दुःख, हर्ष, आह्लाद, धूप-छाया, गर्मी, सर्दी, सफलता, प्रभाव इत्यादि निर्भर हैं, यदि उसी को नगण्य और तुच्छ माना जाय तो हम किस प्रकार प्रसिद्धि और समृद्धि प्राप्त कर सकते हैं ?

आपका शरीर एक यन्त्र है जिससे आप संसार का वैभव, प्रतिष्ठा, उत्तमोत्तम वस्तुएँ, आनन्द पहचानते और धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इत्यादि की प्राप्ति करते हैं । शरीर स्वास्थ्य से ही जीवन सार्थक बनता है ।

आपका शरीर परमेश्वर का पुनीत मन्दिर है । उसके प्रत्येक अवयव का उद्देश्य अत्यन्त पवित्र है । प्रत्येक की उपयोगिता और एक हेतु है । इसकी रचना अत्यन्त नाजुक और सूक्ष्म है । उसे समझिए और शरीर के प्रत्येक अंग का सानुपात विकास कीजिए । यदि शरीर को अच्छी तरह सम्हाल कर रखा जाय, प्रत्येक अवयव को पूर्ण विकसित एवं परिपक्व होने का अवसर प्रदान किया जाय तो मनुष्य अपने वास्तविक रूप में आ सकता है ।

आपके पास मजबूत फेफड़े, दीर्घ छाती, पुष्ट बाजू, मजबूत रीढ, माँसपेशियों एवं पुट्ठों से भरे हुए पाँव होने चाहिए । ऐसा कसरती व्यक्ति बड़ा रौबीला होता है, उसके नेत्रों से पौरुष की सूक्ष्म तरंगें प्रकाशित हुआ करती हैं, इनका प्रभाव साधारण विकसित मनुष्यों पर तेजी से पड़ता है । ऐसा व्यक्ति प्रथम दृष्टि से सरदार सा मालूम होता है ।

संसार के महापुरुषों की जीवनियाँ पढ़ने से यह ज्ञात होता है कि उन्होंने स्वास्थ्य और व्यायाम का महत्त्व अच्छी तरह समझा था । सर्वश्री रबीन्द्रनाथ ठाकुर, खान अब्दुल गफ्फार खाँ, गोविन्द बल्लभ पन्त प्रभृति नेताओं के शरीर इतने अच्छी तरह विकसित रहे और उनके शरीर का प्रभाव भी कम न रहा और अब भी है । स्वास्थ्य के लिए महात्मा गाँधी ने सदा सर्वदा सुबह का टहलना न छोड़ा । स्वामी विवेकानन्द ने अपनी वकृता में निर्दोश किया, "स्वस्थ और निरोग रहने के लिए मैं नित्य प्रति जितना भी हो सकता है पैदल भ्रमण करता हूँ, करने की चेष्टा करता हूँ । पैदल चलने से अधिक अच्छी बात मुझको कोई नहीं जँचती यद्यपि शक्ति बढ़ाने के लिए और उसे स्थायी रखने के लिए मैं नित्य ही कई एक भारतीय व्यायाम करता हूँ ।

हम व्यायाम और स्वास्थ्य के विषय में कोई उपदेश देना नहीं चाहते । स्वयं मनुष्य को प्रभावशाली शरीर बनाना चाहिए । कसरतों का चुनाव ऐसा किया जाय, जिससे शरीर के प्रत्येक अंग पर जोर पड़े । महर्षि सुश्रुत ने व्यायाम के लक्षण इस प्रकार लिखे हैं— "शरीरायासजननं कर्म व्यायाम संक्षितम्" अर्थात् जिससे शरीर के सब अंगों को श्रम पड़े, उसी कर्म को व्यायाम कहते हैं । चरक ने लिखा है—"शरीर चेष्टा के द्वारा देह की स्थिरता और शक्ति वर्द्धित होती है । इसे देह व्यायाम कहते हैं, उपयुक्त मात्रा में व्यायाम करना चाहिए । व्यायाम द्वारा शरीर में हल्कापन आता है, कार्य करने की शक्ति, स्थिरता, क्लेश, सहिष्णुता, जठराग्नि वृद्धि होती है और देह के विविध दोष नष्ट होते हैं ।

जिस अंग से कार्य नहीं लिया जाता वह निर्बल बनता है और बेकार हो जाता है । श्रम और मेहनत से, व्यायाम और शारीरिक परिश्रम से हाथों की माँसपेशियाँ मजबूत बनती हैं । हम नित्य निरन्तर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने अंगों से पर्याप्त परिश्रम लेने से ही अपना विकास कर सकते हैं । जो तन्तु काम न करने से बहुत पतले और निर्बल बन गए थे, वे व्यायाम से पुनः फैलने लगते हैं, रक्त-प्रवाह तेज हो जाता है । ताजा खून दौड़ने से शरीर लाल हो जाता है । चेहरा प्रभावशाली बन जाता है । श्रम कीजिए, आलस्य में कभी न बैठिए । श्रम ही जीवन है, आलस्य ही मृत्यु है ।

शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिए पहलवानों के निम्न अनुभव बड़े उपयोगी हैं—(१) सादा जीवन क्रम, (२) नियमित आहार-विहार, (३) नित्य का व्यायाम, (४) मालिश और स्नान, (५) मनोरंजन । सभी कामों में मनोबल (Will power) की अत्यन्त आवश्यकता होती है । यदि आप दृढ़ता से अपनी शक्ति में विश्वास करने लगें और सतत् उद्योग करें तो जैसा आप सोचते हैं, वैसे ही बन सकते हैं । कसरत धीरे-धीरे बढ़ाइये, कसरत उतनी ही कीजिए जितनी शरीर में सामर्थ्य हो । अनियमित रूप से कसरत अत्यन्त हानिकारक है । एक पुरानी कहावत है—"दूसरे-चौथे कसरत करै, देव न मारे, आपहि मरै ।" फेफड़ों का व्यायाम तो अवश्य ही किया कीजिए ।

स्वास्थ्य और व्यायाम के विषय में श्री महामाया प्रसाद सिंह के कुछ अनुभव हम पाठकों के लाभार्थ यहाँ उद्धृत करते हैं—"हिन्दुस्तान के जितने बड़े-बड़े पहलवान हैं वे कसरत से अधिक महत्त्व मालिश को देते हैं, सबसे महत्त्वपूर्ण चीज है—'ब्रह्मचर्य का पालन' । व्यायाम में इसकी बहुत जरूरत पड़ती है । ब्रह्मचर्य से मेरा मतलब गाँधी जी वाले ब्रह्मचर्य से नहीं है । यदि वैसे ब्रह्मचर्य का पालन किया जाय, तब तो 'सोने में सुगन्ध' वाली बात है । मेरा अनुभव है कि ब्रह्मचर्य-सम्बन्धी नियमों का यदि ठीक तरह पालन किया जाय, तो मनुष्य बहुत कुछ कर सकता है । मेरे विचार में हिन्दुस्तानी प्रणाली से कसरत करने से अधिक लाभ होगा । दंड-बैठक से शरीर भी सुन्दर होता है और ताकत भी ज्यादा आती है । अखाड़े में कुश्ती लड़ने से एक बहुत बड़ा लाभ यह होता है कि शरीर में मिट्टी लगने से शरीर में खूब ताकत आती है । कसरत के बाद टहलना चाहिए । बड़े-बड़े पहलवान अखाड़े से निकलने के बाद 'दम' पचाने के लिए खूब दौड़ लगाते हैं । तैरना भी कुछ कम महत्त्व नहीं रखता । तैरने से फेफड़े मजबूत होते हैं और बाहों में खूब शक्ति आती है ।"

शरीर को खूब विकसित होने दीजिए । अच्छा पौष्टिक भोजन जिसमें दूध, मलाई, घृत, दही, फल, तरकारियाँ ही पर्याप्त मात्रा में मौजूद हों लीजिए, स्नान द्वारा शरीर को खूब चमकाइये । मुँह, नाक, त्वचा, मल-मूत्र के मार्गों को खूब स्वच्छ रखिए । उत्तम स्वास्थ्य, भरा हुआ पुष्ट शरीर, प्रशस्त ललाट प्रभावशाली व्यक्तित्व के विविध उपकरण हैं, इन्हें प्राप्त करना आपके हाथ की बात है । प्रत्येक युवा पुरुष पुरुषार्थ और उद्योग से इन्हें प्राप्त कर सकता है ।

पोशाक एवं वेश-भूषा इत्यादि

जैसे-जैसे मनुष्य की प्रसिद्धि में वृद्धि हो, वैसे-वैसे उसकी पोशाक भी साधारण होती जानी चाहिए । पहला प्रभाव शरीर और वेश-भूषा का पड़ता है । किसी भी सभ्यतापूर्वक पहने हुए वस्त्रों वाले व्यक्ति की ओर हम आकर्षित हो जाते हैं । बहुत वर्षों तक अंग्रेजी पोशाक—टोप इत्यादि की ओर लोगों की विशेष श्रद्धा रही, किन्तु अब वह धीरे-धीरे कम हो रही है । शरीफाना पोशाक पहने हुए व्यक्ति से प्रत्येक व्यक्ति बातें करना पसन्द करता है, क्योंकि मनुष्य की वेश-भूषा, वस्त्र आदि निरन्तर उसके चरित्र को प्रकाशित किया करते हैं । आप ऐसी पोशाक पहनिए कि वह साधारण नागरिकों से अच्छी हो, ध्यान आकर्षित करे किन्तु सब प्रकार की टीप-टाप से मुक्त हो, रंगीन कपड़े ओछेपन की निशानी हैं ।

ज्यों-ज्यों जनता आप के चरित्र के विशिष्ट गुणों से आकर्षित होती जाय, त्यों-त्यों पोशाक को साधारण बनाते जाइये । महात्मा गाँधी की अन्तिम दिनों की पोशाक एक खादी की धोती मात्र थी, किन्तु उनकी वैयक्तिक विद्युत् का प्रभाव अत्यन्त तीक्ष्ण था । यह उनके चरित्र के आत्मबल, बुद्धिबल एवं सबल मस्तिष्क का ज्वलन्त उदाहरण था । अपने जीवन के उषाकाल में गाँधी जी सूट-बूट नेकटाई इत्यादि का प्रयोग करते रहे । प्रसिद्धि के साथ-साथ पोशाक सादा होती गई । अन्त में एक धोती के अतिरिक्त कुछ भी न रही । यदि कोई प्रारम्भ में ही एक धोती पहने तो वह एक किसान ही कहलायेगा । कोई उसका मान या प्रतिष्ठा न करेगा । प्रारम्भ अच्छे भलेमानुषों जैसी स्वच्छ पोशाक से होना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानसिक-समृद्धि की साधना

(१) **निश्चित ध्येय**—आप किस दिशा में, जीवन के किस क्षेत्र में विजय प्राप्त करने निकले हैं ? व्यापार, पेशा, नौकरी, साहित्य, डॉक्टरी, विद्वत्ता, सार्वजनिक जीवन । आपकी महत्त्वाकांक्षाएँ क्या हैं ? अपने सब निरुद्देश्य घूमते हुए विचारों को एक स्थान पर केन्द्रीभूत कर लीजिए । यह काम कठिन है अवश्य, किन्तु बिना महत्त्वाकांक्षा के मनुष्य मिट्टी का पुतला मात्र है । आप मन की सबल भावना से तन, मन, धन की तथा मन और आत्मा की क्षण-क्षण परिवर्तित होती हुई स्थिति को एकाग्रता द्वारा बदल सकते हैं ।

(२) **अटूट विश्वास**—विश्वास कीजिए कि वर्तमान निम्न स्थिति को बदल देने की सामर्थ्य प्रत्येक मनुष्य में पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है । आप जो सोचते हैं, विचारते हैं, जिन बातों को प्राप्त करने की योजनाएँ बनाते हैं, वे आन्तरिक शक्तियों के विकास से अवश्य प्राप्त कर सकते हैं ।

विश्वास कीजिए जो कुछ महत्ता, सफलता, उत्तमता, प्रसिद्धि, समृद्धि अन्य व्यक्तियों ने प्राप्त की है, वह आप भी अपनी आन्तरिक शक्तियों द्वारा प्राप्त कर सकते हैं । आप में वे सभी उत्तमोत्तम तत्व वर्तमान हैं, जिनसे उन्नति होती है । न जाने कब, किस अवसर पर, किस परिस्थिति में आपके जीवन का आन्तरिक द्वार खुल जाय और आप सफलता के उच्चतम शिखर पर पहुँच जायँ । अमेरिका के सुप्रसिद्ध विद्युत, टेलीफोन, ग्रामोफोन के आविष्कारक एडिसन के पास न रहने के लिए मकान था, न पर्याप्त अन्न और वस्त्र । वह न्यूयार्क के एक बगीचे में अपना समय काटता था । उसमें विचार-शक्ति का प्रवाह आया । एक दिन जब वह अपने बगीचे में लेटा था तो उसके गुप्त मानसिक स्तर से एक नवीन यन्त्र के आविष्कार की योजना सूझी और उसी यन्त्र के निर्माण से उसे बीस हजार रुपए प्राप्त हुए थे ।

विश्वास कीजिए आप में अद्भुत आन्तरिक शक्तियाँ निवासी करती हैं । अज्ञानवश आप मन की अज्ञानता, विचित्र और रहस्यमय शक्तियों के भण्डार को नहीं खोलते । आप जिस मनोबल, आत्मबल या निश्चयबल का करिश्मा देखते हैं, वह कोई जादू नहीं, वरन् आपके द्वारा सम्पन्न होने वाला एक दैवी नियम है । सब में ये असाधारण एवं चमत्कारिक शक्तियाँ समान रूप से व्याप्त हैं । संसार के अगणित व्यक्तियों ने जो महान कार्य किए हैं, वे आप भी कर सकते हैं ।

विश्वास कीजिए, परमात्मा के इस लीलामय जगत् में कोई भी क्रिया अन्धा-धुन्ध और अनियन्त्रित नहीं होती । बिना कार्य तथा योजना के, बिना बलिदान और समुचित परिश्रम के कुछ भी सम्भव नहीं । परमात्मा की सृष्टि में परिश्रम का ही फल मिलता है । जो मनुष्य जितना परिश्रम, उद्योग, कार्य और बलिदान करता है, जिसने अपनी सामर्थ्य को जितना बढ़ाया है, उसमें उतना ही आकर्षक बल विद्यमान है।

विश्वास कीजिए कि शक्ति का केन्द्र आप ही हैं, सफलता, प्रभाव आनन्द और सुख-दुःख की जड़ आपके अन्तःकरण में ही है । सफलता-असफलता का निर्णय करने वाली आपके अन्तःकरण की स्थिति है । अपने मानसिक संग्रहालय में पश्चात्ताप, निराशा, असफलता, विपत्ति, कमजोरी की भावना को तिलांजलि दे दीजिए, उसके स्थान पर दृढ़ता, आशा, सामर्थ्य, प्रसन्नता, अनुकूलता, सौभाग्य, समृद्धि इत्यादि सद्भावों को मानसिक चित्रपटी में सजाइये । इसी पूँजी से आप व्यावहारिक-जीवन में प्रवेश कीजिए ।

(३) **एकाग्रता की सिद्धि**—एकाग्रता के क्षीण होने का प्रधान कारण आन्तरिक अशान्ति तथा मन की चंचलता है । अशान्ति, उद्वेग, मोह, भय, शंका, घबराहट, क्रोध, चिन्ता, ईर्ष्या के प्रबल संघर्ष से आन्तरिक अशान्ति पैदा होती है । कभी हम यह सोचते हैं कि यह कार्य कर डालें, कभी कुछ शंका, कभी भय, मोह इत्यादि उत्पन्न हो जाता है, प्रचंड द्वन्द्व मच जाता है । इस प्रकार हमारे मानस संरोवर में विक्षेप, क्षोभ और विभ्रम का व्यापार चला करता है ।

स्मरण रखिए, समस्त शक्तियों एवं बल का आधार चित्त की स्थिरता, स्वस्थता और सन्तुलन में है । प्रभाशाली व्यक्तित्व वाले नर पुंगवों की सफलता का एक रहस्य यह है कि वे अपनी समग्र मानसिक शक्तियों को अपने लक्ष्य, उद्देश्य-सिद्धि, प्रधान कार्य पर एकाग्र कर देते थे । अन्य विचारों को अपने मस्तिष्क से बिल्कुल निकाल डालते थे । आप एकाग्रता की सिद्धि प्राप्त कीजिए, बिखरे हुए विचारों को एक स्थान पर केन्द्रित कीजिए । मन में ऐसी शक्ति है कि हम उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिन विचारों पर आरूढ़ रखना चाहें, रख सकते हैं । अपनी वृत्तियों को दृढ़ता से अपने लक्ष्य पर एकाग्र कीजिए ।

इच्छा, ज्ञान और क्रिया इन तीनों तत्वों को केन्द्रित कर आप प्रचण्ड शक्ति उत्पन्न कर सकते हैं । जो-जो क्रियाएँ हम दैनिक जीवन एवं व्यवहार में करते हैं, उन सब क्रियाओं के गर्भ भाग अर्थात् जड़ में अपने विचारों को केन्द्रित करने से मानव-शक्तियों की पूर्णता प्रकट होती है । जैसे यदि आप व्यायाम द्वारा उत्तम स्वास्थ्य एवं बल प्राप्त करना चाहते हैं, तो केवल व्यायाम द्वारा ही लाभ न होगा । व्यायाम के साथ-साथ आप दृढ़तापूर्वक अपने विचारों को भी क्रियाओं के गर्भ में केन्द्रित कीजिए । अर्थात् सब प्रकार के विचारों को हटाकर मन में शक्ति, बल और दृढ़ता की भावना का संचार कीजिए । प्रत्येक क्रिया के साथ-साथ मूल में विचारों की एकाग्रता उत्पन्न कीजिए ।

मन से व्यर्थ की कल्पनाएँ, अनहोनी बातें, मिथ्या राग, द्वेष, भय इत्यादि निकाल डालिए । एक समय में एक ही लक्ष्य के ऊपर विचार तथा क्रियाएँ केन्द्रित कीजिए । मन को पुनः-पुनः एक ही बात, विषय, परिस्थिति या समस्या पर आरूढ़ कीजिए । यदि चित्त उचाट ले तो इसे पुनः उसी विषय पर स्थिर कीजिए ।

एकाग्रता की सिद्धि केवल सतत् अभ्यास द्वारा हो सकती है । एक विषय लेकर थोड़ी-थोड़ी देर तक उसी पर विचार किया कीजिए और सब बातें या मन्तव्य विस्मृत कर दीजिए । एकाग्रता के लिए एक लक्ष्य, एक प्रबल उद्देश्य, एक तत्व, एक बात ही होनी चाहिए ।

या तो कोई कर्म ही न कीजिए । यदि कोई क्रिया आप प्रारम्भ करते हैं तो उसमें दत्तचित्त हो जाइये, अपने मन को उसी में तन्मय कर दीजिए, वह यदि इधर-उधर भागे तो भी उसे दृढ़ता से खींचकर उसी में लगाये रखिए । ध्यान का अभ्यास कीजिए । महर्षि पंतजलि ने कहा है—'तत्र प्रत्ययैकतानता ध्यानम् ।' ध्येय वस्तु के साथ मन की एकता होना ही एकाग्रता का रहस्य है । इसका अभ्यास प्रारम्भ कीजिए ।

(४) बुद्धि और अन्तर्दृष्टि—महान व्यक्तित्व वाले व्यक्तियों के तीन गुण यह हैं कि वे यह जानते हैं कि उन्हें क्या करना है ? अपनी कुशाग्र बुद्धि और अन्तर्दृष्टि से वे यह अनुमान कर लेते हैं कि उन्हें अपना उद्देश्य और लक्ष्य किस प्रकार प्राप्त कर लेना चाहिए । तीसरे उनमें इच्छा शक्ति की इतनी दृढ़ता होती है कि उनकी मानसिक, शारीरिक तथा अन्य समस्त शक्तियाँ एक ही स्थान पर केन्द्रीभूत रहती हैं ।

बुद्धि और अन्तर्दृष्टि स्वाभाविक एवं प्रकृतिदत्त तत्व हैं । वे हमारे शौक व दिलचस्पी से प्रभावित होते हैं । मनुष्य की दिलचस्पी जिस ओर होती है, उसी की ओर बुद्धि का विकास होता जाता है । एक विशेष दिशा में बढ़ी हुई प्रतिभा अन्त में मनुष्य की अन्तर्दृष्टि विकसित करती है । प्रारम्भ में मनुष्य थोड़ा-थोड़ा ज्ञान प्राप्त करता है, फिर यही संचित ज्ञान उसके मस्तिष्क के तन्तुओं को ऐसा सूक्ष्म कर देता है कि वे आने वाली आपत्ति या सफलता की सूचना दे देते हैं ।

गौरडन बेनेट एक बार एक नार्वे के एक बोट में यात्रा कर रहे थे । एक स्थानीय मल्लाह को उन्होंने नौका चलाने के लिए ले लिया था । एक दिन बेनेट साहब ने मल्लाह से कहा, 'मैं समझता हूँ कि तुम जल के इस भाग में अन्दर छिपी हुई प्रत्येक चट्टान से परिचित होगे ।' मल्लाह प्रशंसा के इस वाक्य से तनिक भी न हँसा और बोला, 'नहीं ऐसा तो नहीं है', लेकिन मैं यह भली-भाँति जानता हूँ कि जल के किस हिस्से में छिपी हुई चट्टानें नहीं हैं ।'

एक नेता इसी प्रकार की स्पष्ट और विशेष बुद्धि से सम्पन्न होता है । वह दुनिया की हर चीज जानने की इतनी इच्छा नहीं करता, जितनी अपने काम की वस्तुओं के विषय में पूरी और खरी जानकारी । (१) वह अपने काम के योग्य ज्ञान को शेष में से चुन लेता है । (२) उसका उचित वर्गीकरण कर लेता है । (३) उस ज्ञान से कहाँ काम लेना चाहिए—यह बात अपने अनुभव द्वारा प्राप्त करता है । अपने उद्देश्य या विभाग सम्बन्धी प्रत्येक बात की वह अच्छी जानकारी रखता है ।

अपने व्यक्तित्व में वह अन्तर्दृष्टि जाग्रत कीजिए । प्रत्येक निश्चय करते समय खूब सोच-समझकर प्रत्येक दृष्टि से विचार करना सीखिए । आगा-पीछा सोच कर बुद्धि का अधिक से अधिक उपयोग करते हुए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तर्दृष्टि का विकास कीजिए । अन्तर्दृष्टि बढ़ी हुई मनः शक्तियों के फल से प्राप्त हो सकती है ।

(५) **प्रतिभा और मौलिकता**—प्रतिभा और मौलिकता हमारे गुप्त मन के अद्भुत चमत्कार हैं । संसार की महान विभूतियों में हमें जो आश्चर्यजनक वस्तु दिखाई देती है, वह गुप्त मन की शक्तियों के कारण है । वास्तव में हमारी उन्नति, अवनति, उत्थान एवं पतन का मूल कारण गुप्त मन ही है । किसी ठेस लगने से अनायास ही गुप्त मन की शक्तियों का भण्डार खुल जाना है और तीव्र गति से मनुष्य की उन्नति प्रारम्भ होती है ।

प्रतिभा की उन्नति के मुख्य उपाय हैं—(१) ज्ञान संग्रह, (२) गहराई से सोचने की आदत, (३) कल्पना का सही प्रयोग, (४) दूर दृष्टि, (५) दूसरों की अनुभूतियों से लाभ उठाने की मनोवृत्ति, (६) वस्तुओं को अच्छी तरह देखना, उन्हें स्मरण रखना और समय आने पर इस स्मृति से काम लेना, (७) पूर्व संगृहीत अनुभव को नए-नए तरीकों और रूपों में प्रकट करना, (८) मनोमय कोषों (Subconscious state) का विकास ।

ज्ञान संग्रह के लिए नई-नई पुस्तकों, समाचार-पत्रों, भिन्न-भिन्न भाषाओं के ग्रन्थों का अध्यन्न करना चाहिए । दूसरों की विचारधारा से परिचय पुष्ट कर अपने विचारों से उनका मिलान करना चाहिए । महान विचारों का तथा दार्शनिकों से मिलना तथा उनकी वाणी में अवगाहन करना चाहिए । जितना भी स्वाध्याय हो सके कीजिए । जहाँ तक मनुष्य पहुँच गया है, वहाँ तक आप भी पहुँच जाइये और फिर पुराने अनुभवों तथा ज्ञान के सहारे नए-नए योग (Combinations) बनाइये । पुराने ज्ञान के नए-नए योग ही जगत में नाना प्रकार की करामात दिखाते हैं ।

संसार में नया कुछ भी नहीं है । जो कुछ है, वह पहले से मौजूद है । सिर्फ साधारण शक्ति और कल्पना के सहारे नए-नए मानसिक चित्रों का निर्माण होता है । कल्पना में जिन मानसिक चित्रों का निर्माण होता है, वे पुराने अर्जित ज्ञान के नए-नए जोड़ हैं । मानसिक चित्रों पर ही प्रतिभा और मौलिकता का आधार है ।

मौलिकता केवल भाव या वस्तुओं के नवीन रूप से प्रकाशन में है । पुरानी चीज को इस रूप में प्रकट कीजिए कि ये नये से लगें । मानसिक चित्रों का निर्माण आप स्वेच्छानुसार कर सकते हैं ।

अपने ज्ञान को मौलिक ढंग से प्रकट करना प्रारम्भ कर दीजिए । आप जो कुछ करें, लिखें, पढ़े या व्याख्यान दें, उसमें अपने व्यक्तित्व की छाप अवश्य लगा दें अर्थात् उसे अपने निजी तरीके से प्रकट करें । दूसरों का अनुकरण न करें वरन् अपने व्यक्तित्व को प्रकाशित होने दें । मौलिकता आप में भरी पड़ी है, केवल कलात्मक ढंग से उसे विकसित करना है ।

अपने मस्तिष्क को नये विचारों, नई कल्पनाओं तथा नई दिशाओं में लगाइये । आप अपने आपको इस प्रकार के संकेत दिया कीजिए—"मेरे अन्तर में परमात्मा का दिव्य प्रकाश मौजूद है । मैं अनन्त ज्ञान के समुद्र का स्वामी हूँ । मैं अपने अन्तःस्थित ज्ञान, भीतरी प्रकाश का अवलम्बन कर अपनी प्रतिभा को प्रकट कर रहा हूँ । मेरे मस्तिष्क में ज्ञान सूर्य का प्रकाश उदय हो रहा है । अब मैं नई बात ही सोचता हूँ । प्रत्येक वस्तु को नवीन दृष्टिकोण से देखता हूँ, मेरे मन में मौलिकता है । विचारधारा में नवीनता है । मेरी बुद्धि का व्यापार बड़ी तीव्र गति से चलता है । मैं अपने मस्तिष्क के सम्पूर्ण भाग का उपयोग करता हूँ । मेरी स्मरण शक्ति, कल्पना शक्ति, धारणा शक्ति मेरी प्रतिभा को निरन्तर विकसित कर रही है । मैं बात-बात में दूसरों का सहारा नहीं लेता, स्वयं सोचता हूँ, स्वयं कार्य करता हूँ । मेरा प्रत्येक कार्य उत्कृष्ट होता है । मैं विचार रूपी यन्त्र का ठीक उपयोग करना जानता हूँ ।"

मस्तिष्क को पुनः-पुनः ऊपर लिखे संकेत दीजिए । जितनी निष्ठा एवं आत्मा-विश्वास से आप संकेत देंगे, जितना अपनी महान इच्छा-शक्ति में विश्वास करेंगे, उसी के अनुसार मानसिक शक्तियाँ जाग्रत होती चली जायेंगी । यह बात कल्पना मात्र नहीं, अनेक मानसशास्त्री विशेषज्ञों के अनुभवों से प्रकट हो चुकी है ।

नवीनता का जन्म कल्पना से होता है । कल्पना द्वारा नये-नये योग (Combination) बनते हैं, नई बातों, योजनाओं, वस्तुओं, मशीनों, आविष्कारों का जन्म होता है, हमारा अनुभव नये-नये गुच्छों में सम्बद्ध होकर नवीन वस्तु की सृष्टि करता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आपकी कल्पना का कुछ भी विकास नहीं हुआ । उसके विकास के लिए प्रायः बहुत गुंजाइश रहती है । जब कल्पना अपनी सूक्ष्मता को पहुँचती है, तो मनुष्य बड़े-बड़े अद्‌भुत आविष्कार करने में समर्थ होता है । प्रतिभा और मौलिकता हमारे अन्दर है । ज्ञान को पचाने के पश्चात जब मानसिक चित्रशाला में नये-नये चित्रों की सृष्टि होती है तो मौलिकता की वृद्धि प्रारम्भ होती है ।

आपका गुप्त मन मौलिकता एवं अन्तर्ज्ञान का वृहत् भण्डार है । न जाने कब किस समय, किस अवसर और किन परिस्थितियों में आपका अन्तर्ज्ञान खुल पड़े ? किस क्षण आपको अपनी महत्ता, आत्म-सत्ता का ज्ञान हो जाय ? मानसिक क्रियाएँ बड़ी अद्‌भुत हैं । अपनी खोज कीजिए, गुप्त शक्तियों को प्रकट कीजिए, गुप्त खजाने पर आपका अधिकार है । मानसिक उद्योग से ही प्रतिभा और मौलिकता का जन्म होता है ।

(६) पुरुषार्थ—मनुष्य संसार में सबसे अधिक गुण, समृद्धियाँ, शक्तियाँ लेकर अवतरित हुआ है । शारीरिक दृष्टि से हीन होने पर भी परमेश्वर ने उसके मस्तिष्क में ऐसी-ऐसी गुप्त आश्चर्यजनक शक्तियाँ प्रदान की हैं, जिनके बल से वह हिंस्र पशुओं पर भी राज्य करता है, दुष्कर कृत्यों से भयभीत नहीं होता, आपदा और कठिनाई में भी वेग से आगे बढ़ता है ।

मनुष्य का पुरुषार्थ उसके प्रत्येक अंग में कूट-कूट कर भरा गया है । मनुष्य की सामर्थ्य ऐसी है कि वह अकेला समय के प्रवाह और गति को मोड़ सकता है । धन, दौलत, मान ऐश्वर्य सब पुरुषार्थ द्वारा हो सकते हैं ।

अपने गुप्त मन से पुरुषार्थ की गुप्त सामर्थ्य निकालिए । वह आपके मस्तिष्क में है । जब तक आप विचारपूर्वक इस अन्तःस्थिति वृत्ति को बाहर नहीं निकालते, तब तक आप भेड़-बकरी बने रहेंगे । जब आप इस शक्ति को अपने कर्मों से बाहर निकालेंगे, तब प्रभावशाली बन सकेंगे ।

संसार के चमत्कार कहाँ से प्रकट हुए ? संसार के बाहर से नहीं आप और बाह्य शक्ति आकर उन्हें प्रस्तुत नहीं कर गई हैं । उनका जन्म मनुष्य के भीतर से हुआ था । संसार की सभी शक्तियाँ, सभी गुण, सभी तत्व, सभी चमत्कार मनुष्य के मस्तिष्क में से निकले हैं । उनका उद्‌गम स्थान हमारा अन्तःकरण ही है ।

संसार में छोटे-मोटे लोगों के तुम क्यों गुलाम बनाते हो ? क्यों मिमियाते, झींकते या बड़बड़ाते हो ? दुःख, चिन्ता और क्लेशों से क्यों विचलित हो उठते हो ? नहीं, मनुष्य के लिए इन सबसे घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है, वह तो अचल, दृढ़, शक्तिशाली और महाप्रतापी है ।

इसी क्षण से अपना दृष्टिकोण बदल दीजिए । अपने आप को महाप्रतापी पुरुषार्थी पुरुष मानना शुरू कर दीजिए । तत्पर हो जाइये । सावधानी से अपनी कमजोरी और कायरता छोड़ दीजिए । बल और शक्ति के विचारों से आपका सुसुप्त अंश जाग्रत हो उठेगा ।

सामर्थ्य आपके अन्दर है बल का केन्द्र आपका मस्तिष्क है, वह नित्य स्थायी और निर्विकार है । फिर किस वस्तु के अभाव को महसूस करते हो ? किस शक्ति को बाहर ढूँढते फिरते हो ? किसका सहारा ताकते हो ? अपनी ही शक्ति से आपको उठना और उन्नति करनी है । उसी से प्रभावशाली व्यक्तित्व बनाना है । आपको किसी भी बाहरी वस्तु की आवश्यकता नहीं है । आपके पास पुरुषार्थ का गुप्त खजाना है । उसे खोल कर काम में लाइये ।

मनुष्य को संसार में महत्ता प्रदान करने वाला पुरुषार्थ ही है । उसी की मात्रा से एक साधारण तथा महान व्यक्ति में अन्तर है । पुरुषार्थ की वृद्धि पर ही मनुष्य की उन्नति निर्भर है । सामर्थ्य सम्पन्न मनुष्य ही सुख, सम्पत्ति, यश कीर्ति एवं शान्ति प्राप्त कर सकता है ।

पुरुषार्थ का निर्माण कई मानसिक तत्वों के सम्मिश्रण से होता है । (१) साइंस इन सबमें मुख्य है । दैनिक जीवन नये कार्यों तथा कठिनाई के समय हमें कोई भी बाह्य शक्ति आश्रय प्रदान नहीं कर सकती । साहसी वह कार्य कर दिखाता है जिसे बलवान भी नहीं कर पाते । साहस का सम्बन्ध मनुष्य के अन्तःस्थित निर्भयता की भावना से है । उसी से साहस की वृद्धि होती है । (२) दृढ़ता दूसरा तत्व है जो पुरुषार्थ प्रदान करता है । दृढ़ व्यक्ति अपने कार्यों में खरा और पूरा होता है । वह एकाग्र होकर अपने कर्त्तव्य पर डटा रहता है । (३) महानता की महत्त्वाकांक्षा पुरुषार्थी को नवीन उत्तरदायित्व—जिम्मेदारी अपने ऊपर लेने का निमन्त्रण देती है और मुसीबत में धैर्य एवं आश्वासन प्रदान करती है । ऐयरमार्डन साहब के अनुसार बड़प्पन की भावना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रखने से हमारी आत्मा की सर्वोत्कृष्ट शक्तियों का विकास होता है, वे जाग्रत हो जाती हैं । इस गुण के बल पर पुरुषार्थी जिस दिशा में बढ़ता है, उसी में ख्याति प्राप्त करता चलता है । वह अपने महत्त्व को समझता है और अपनी सभी शक्तियों के द्वारा सदा आत्म-महत्त्व को बढ़ाता रहता है । (४) निश्चयात्मक योजनाएँ और विचार से उसकी निर्माण शक्ति बढ़ती है । वह क्षण-क्षण में अपना मन परिवर्तित नहीं करता, उसका मन उत्पादक शक्ति की ओर झुकता है । मन, वचन, कर्म से वह जो आदर्श एक बार स्थिर कर लेता है, उसे निश्चयात्मक दृष्टि से देखता है ।

पुरुषार्थ आपका जन्मसिद्ध अधिकार है । अपनी हीनता, आलस्य, शैथिल्य को दूर कीजिए । ये आपके भाग्य में नहीं आयी हैं । आपको दुर्बल एवं अस्थिर बनाने वाले अशुभ विचारों से दलित नहीं होना है । अतएव आप दृढ़ निश्चय कीजिए कि आज से अशुभ, अभद्र और बुरे संकल्प के वशीभूत न होंगे, विचार संयम रखेंगे, अपना मन, बुद्धि, इन्द्रियाँ तथा समस्त मानसिक शक्तियों में नवीन स्फूर्ति का संचार करेंगे, तर्क से काम लेंगे और अपने विरुद्ध लगाये हुए मिथ्या आरोपों को स्वीकार न करेंगे ।

मनुष्य पुरुषार्थ का पुतला है । पुरुषार्थ के अनुरूप रुचि, रुचि के अनुरूप कार्य और कार्य के अनुरूप सदा फल मिला करता है ।

(७) भावात्मक एवं बौद्धिक स्वावलम्बन—मनुष्य के शरीर एवं मस्तिष्क में एक ऐसा आभ्यन्तरिक शक्ति का केन्द्र है जिसमें उसकी शक्तियाँ पूर्णरूपेण भरी हुई हैं । इस केन्द्र को विकसित करना ही स्वावलम्बन है । स्वावलम्बन का अर्थ है कि हम किसी भी बाह्य शक्ति, सहायता या प्रोत्साहन के लिए प्रतीक्षा न करें । हम केवल अपनी शक्ति, अपना भरोसा और अपने ही बाहुबल का आश्रय ग्रहण करें ।

जो गुण हमारे व्यक्तित्व में नहीं हैं, उन्हें हम आत्म-विश्वास द्वारा उत्पन्न कर सकते हैं । मानसिक समृद्धि का आधार यह विश्वास ही है । आप यदि यह विश्वास करने लगें कि हमारे अन्दर वे सभी शक्तियाँ मौजूद हैं जिनकी हमें आवश्यकता है तथा हमें किसी बाहरी सहायता की आवश्यकता नहीं है, तो इस जीवन-संग्राम में पीछे नहीं रह सकते ।

परावलम्बन सबसे प्रधान गुलामी है । जो व्यक्ति बात-बात पर दूसरों की सहायता की बाट देखता है, वह न स्वयं कुछ कर सकता है, न दूसरों को ही कुछ लाभ पहुँचा सकता है । जिस प्रकार संसार की सभी वस्तुएँ—मान, पद, धन, यौवन इत्यादि क्षणिक हैं, उसी प्रकार दूसरों की सहायता भी अस्थायी एवं अनिश्चित है । जो दूसरों की राय, विचारधारा, आदेश, योजनाओं, मन्तव्यों पर अपने आपको चलाता है, उसे स्वतन्त्र रूप से अपना व्यक्तित्व विकास करने का अवसर प्राप्त नहीं होता ।

विश्वास रखिए, संसार का कोई व्यक्ति सदा सर्वदा आपको मदद देने वाला नहीं है, आपके मित्र भी धोखा दे सकते हैं । आपके पुत्र, पत्नी, सगे सम्बन्धी भी आड़े समय मुँह फेर सकते हैं । फिर क्यों आप उनके मुँह की ओर देखते हैं ? क्यों वृथा उनसे आशा बाँधे बैठे हैं ? क्यों उनकी टाँगों पर खड़े होते हैं ? क्यों उनके मुख, मस्तिष्क और सहायता का आश्रय ग्रहण करते हैं ? प्रारम्भ से ही मन को इन बाहरी सहायताओं से निर्लिप्त रखिए । मन में ऐसी भावना ही उत्पन्न न होने दीजिए कि वह दूसरों का मुँह ताकता रहे ।

तुम्हें केवल अपने मन, बुद्धि, मस्तिष्क, अपनी ही इच्छाओं, क्रियाओं, आन्तरिक विद्युत प्रवाह पर निर्भर रहना है । तुम्हारे प्रारब्ध को बनाने और बिगाड़ने वाली कोई बाहरी सत्ता नहीं है । तुम स्वयं ही अपने निर्माता हो, अपने परिश्रम, अपने उत्साह, अपनी ही शक्ति से विकसित होने वाले हो । प्रारब्ध, भाग्य, किस्मत कुछ भी नहीं, केवल उन्नत अथवा न्यून स्वावलम्बन के ही विविध नाम हैं । जितने परिमाण में यह आपमें वर्तमान हैं, उतने ही प्रभावशाली आप वस्तुतः हैं भी । मन को दूसरों की सहायता से विमुख कीजिए, अपनी ही शक्ति पर स्थिर रहिए ।

एडवर्ड विलसन ने लिखा है—"मन के उलझन भरे यत्र में अनेक गुप्त शक्तियाँ, जब तक कुशलता और बुद्धि से उनका अन्वेषण न किया जाय सुस्त (निष्क्रिय) पड़ी रहती हैं । मनुष्य का मन एक विक्षिप्त यन्त्र है । लोग जैसा सोचते हैं, वास्तव में यह वैसा सुगम और सादा नहीं है । उसकी गम्भीरता में कई मार्ग और वस्तुएँ परिलक्षित और छिपी पड़ी हैं । आजकल के मनोवैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक-दृष्टि से उस पर प्रकाश डाल कर उनका कुछ पता चलाया है—अपरिमित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुशलता और बुद्धिमत्ता मस्तिष्क के केन्द्रों में वर्तमान हैं । यदि उस तक एक ही नई आवाज, एक ही आज्ञा, एक ही प्रेरणा, एक ही सूचना ध्यानपूर्वक पुनः-पुनः पहुँचाई जाय, तो वे ही गुप्त शक्तियाँ जाग्रत होकर तुम्हारे सामने आयने की भाँति प्रतिबिम्ब के समान खड़ी हो जायेंगी, किन्तु इसके लिए साहस और दृढ़ता की आवश्यकता है ।"

मानसिक परावलम्बन के भाँति-भाँति स्वरूप हैं, किन्तु मूलतः यह दो प्रकार का होता है—

(१) **बौद्धिक**—अर्थात् हमारी बुद्धि, मन और मस्तिष्क हमारी विचारधारा से सम्बन्धित परावलम्बन ।

(२) **भावात्मक**—अर्थात् हमारे भावों, हृदयाकांक्षाओं से सन्नद्ध परावलम्बन ।

बौद्धिक परावलम्बन के मुख्य कारण अशिक्षा, मानसिक संकीर्णता एवं अविकसित मन, बुद्धि इत्यादि हैं । जिन व्यक्तियों को अध्ययन, पठन-पाठन, अथवा ठीक शिक्षा नहीं मिली, जो अपने मानसिक सामर्थ्यों से अपरिचित हैं, जो अशिक्षित एवं रूढ़िवादी हैं, वे अपने पुराने संस्कारों के कारण एक प्रकार की मानसिक गुलामी के रोगी हैं । ये जरा-जरा-सी बात में दूसरों से सम्मति लेते हैं और स्वतन्त्र रूप से कुछ नहीं कर पाते । वर्तमान स्थिति को ये बदल नहीं पाते हैं ।

भावात्मक परावलम्बन भावों की अपरिपक्वता से उत्पन्न होता है । प्रायः लोग बड़े हो जाने पर भी बच्चों जैसे भाव रखते हैं, वृद्ध हो जाने पर, जब उनसे यह आशा की जाती है कि वे उद्वेग, भय, क्रोध, घबराहट से उद्विग्न न हों, वे छोटी-चोटी बातों पर चिंतित और अस्थिर हो जाते हैं । वे बालक सदृश कामों पर उतर आते हैं । उनका अन्तर्मन उस अनुपात से विकसित नहीं हो पाता, जिस अनुपात से बाह्य मन हुआ है । ऐसे बुड्ढे, बच्चों के कुछ साधारण लक्षण श्री कन्हैयालाल सहगल ने इस प्रकार लिखे हैं—

"कुछ मनुष्य ऐसे होते हैं, जो वयस्क होने पर भी बचपन को साथ-लिए फिरते हैं । मेरे एक मित्र हैं, जिनमें कष्ट झेलने का माद्दा है ही नहीं । जरा-सी कहीं चोट आ जाय तो दूसरों को दिखलाते फिरेंगे, कहीं खरोंच भी लग जाय, तो आप चाहेंगे कि दूसरे उनके साथ सहानुभूति प्रदर्शित करें, यदि कहीं से सहानुभूतिसूचक पत्र अथवा तार मिल जाय, तब तो आप बांसों उछल पड़ेंगे । एक बार आपकी उंगली कट गई । उंगली अच्छी होने पर भी आप महीनों तक केवल इसीलिए पट्टी बाँधे रहे कि अनायास ही उनके मित्रों की सहानुभूति उन्हें मिल सके ।"

"एक २० वर्षीय रईस युवक को मोटर में बैठकर बाहर जाना था । उसे गोद में लेकर मोटर में बिठलाया गया । वह पंगु नहीं था, किन्तु माता-पिता के अत्यधिक लाड़-चाव के कारण वह २० वर्ष का होने पर भी बच्चा ही बना रहा । वह तो सच्चे अर्थ में बच्चा ही था ।"

ऐसे व्यक्ति बच्चों की तरह इस बात की आशा रखते हैं कि वे जो कुछ कहें, उसे ब्रह्म वाक्य समझ लिया जाय । वे ग्रीस के नार्सिसस की तरह हैं जो सरोवर में अपने ही रूप को देखकर मुग्ध हो उठा था ।

श्री सहगल जी ने जो उदाहरण दिए हैं, उनसे यह स्पष्ट है कि आयु और मानसिक वृद्धि हो जाने पर भी मनुष्य का भावात्मक जीवन अविकसित, अपरिपक्व, अनिश्चित, बालकपन की भूलों से परिपूर्ण, असामंजस्य युक्त तथा पाशविक रह जाता है । भावात्मक दृष्टि से उनका आन्तरिक मन प्रौढ़ नहीं हो पाता, उनमें बुजुर्गपन नहीं आता । विकसित चेतन मन तथा अपरिपक्व अचेतन में प्रायः अन्तर्द्वन्द्व बना रहता है । इस विषमता से मानसिक जगत में भयंकर विक्षोभ उत्पन्न होकर विक्षिप्तता, ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध, अनियन्त्रित वासना, परमुखापेक्षिता तथा हीन-ग्रन्थियाँ उत्पन्न होती हैं । इस विषमता के कारण मनुष्य शंकाशील बना रहता है । कभी यकायक जरा-सी बात पर अधीर हो उठता है, कभी थोड़े से प्रलोभन से ललचा जाता है, बच्चों की तरह रूठता, मचलता, चिल्लाता और भिन्न-भिन्न प्रकार की भावनाओं के वशीभूत हो उठता है ।

प्रायः देखा जाता है कि बौद्धिक दृष्टि से सम्पन्न विद्वान तथा अविकसित बुद्धि वाले व्यक्ति भावात्मक जीवन को उचित रूप से विकसित नहीं कर पाते । फलतः विक्षिप्तता के शिकार बनते हैं । आप अपनी आत्म परीक्षा करके देखिए कि आपके बौद्धिक एवं भावनात्मक विकास में पूर्ण सामंजस्य और मेल है या नहीं ? आप सहानुभूति, प्रशंसा, प्रेम, उत्साह के लिए पग-पग पर दूसरों का आश्रय तो नहीं देखते ।

अचेतन मन की शिक्षा अपने चेतन मन को शुभ प्रेरणाएँ देने से ही होता है । भावों और विचारों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दमन से आन्तरिक संघर्ष और अन्तर्द्वन्द्व बढ़ता है । भावों को चेतना की सतह पर लाकर उनके प्रकाशन से यह दूर हो जाता है । अब दुराव-छिपाव से बचिए । मानसिक जगत में किसी के आश्रय में रहने की भावनाएँ न टिकने दीजिए । अपने आप को ऐसे आत्म-निर्देश दीजिए कि परमुखापेक्षिता दूर होकर आत्म-निर्भरता का विकास हो । आत्म-निर्देश द्वारा दलित भावों का वेग कम होता है और बौद्धिक तथा भावात्मक जीवन का विरोध कम होता है ।

हम स्वावलम्बी कैसे बनें ? इसके लिए सतत् अभ्यास एवं प्रयत्न आवश्यक हैं । मन में इस प्रकार की भावना ही प्रविष्ट न होने दीजिए कि कोई दूसरा हमारी सहायता करेगा या हमें किसी बाह्य शक्ति की आवश्यकता ही है । जो कुछ हैं, आप ही हैं, जो कुछ शक्ति है, आप में है, आप हर दृष्टि से परिपूर्ण हैं, दृढ़ और मजबूत हैं, किसी दूसरे के सम्मुख आपको हाथ नहीं फैलाना है, आपका मन ही रचनात्मक शक्तियों का केन्द्र है, निकम्मे और निरुपयोगी विचार आपका कुछ नहीं बिगाड़ सकते । आप निर्विकार, निष्कलंक, सत्चित्, आनन्द स्वरूप, असीम शक्ति-पुंज आप की है—इन आत्म-निर्देशों को पुनः-पुनः चेतन मन में दुहराइये, मनन कीजिए, दृढ़ता से मन को उस पर केन्द्रित कीजिए, इन्हीं में रमण कीजिए । आत्म-निर्देश द्वारा स्वावलम्बन की भावना चेतन मन से अचेतन में प्रविष्ट हो जाती है । मानसिक स्वावलम्बन ही भौतिक और बौद्धिक स्वावलम्बन का मूल है ।

(८) गुप्त सामर्थ्य—हमारे मन आइसबर्ग की भाँति हैं । जिस प्रकार इन तैरते हुए बर्फ के पर्वतों का एक छोटा-सा भाग (आठवाँ हिस्सा) बाहर रहता है और सात भाग जलमग्न रहते हैं, उसी प्रकार मनुष्य की कुछ ही शक्तियों का अंश विकसित दीखता है । वास्तव में उसका सात गुना अंश अविकसित पड़ा रह जाता है । हमारे गुप्त मन में शक्तियों एवं सामर्थ्य का विशाल अंश मौजूद है । वह हमारी दृष्टि में नहीं आता, मन की गुप्त कन्दराओं में सुप्तावस्था में पड़ा रहता है । हमारी चेतना हमारे मन की एक छोटा सा अंश है । शक्ति का केन्द्र गुप्त मन ही है । उसमें सर्वशक्तिमान सामर्थ्य, हमारी गुप्त योग्यताएँ निवास करती हैं । हमारी चेतनता के गुप्त भाग में शक्ति का वह केन्द्र है जिसे हम अज्ञात चेतना (Sub-conscions or Unconscions) कहते हैं । अभी तक मनोवैज्ञानिक शक्तियों के इस केन्द्र को अच्छी तरह नहीं समझ पाये हैं । हमारी इस चेतना में प्रस्तुत संकल्प दलित अनुभूतियाँ, विचार एवं अंधविश्वास हमारे जाग्रत जीवन को क्षण-क्षण परिवर्तित किया करते हैं, इसी पर हमारी विजय, सफलता, प्रभाव इत्यादि निर्भर हैं ।

अज्ञात चेतना का अचल क्षेत्र इतना व्यापक, गहन एवं अगाध है कि हमारी सभी टूटी-फूटी इच्छाएँ, प्रसुप्त वासनाएँ, कुचली हुई हसरतें, असृप्त वृत्तियाँ निर्द्वन्द्व मनोवांच्छानाएँ सामूहिक रूप से इसी अज्ञात क्षेत्र में क्रांतिकारियों के दलों के समान छिपी रहती हैं । हमारा कोई भी विचार, इच्छा, या योजना कभी मिटती नहीं, न मरती या लुप्त होती हैं, प्रत्युत जब तक विवेक बुद्धि का प्रभुत्व रहता है, नैतिकता सतर्कता से कार्य करती है, तब ये अतृप्त मनोविकार कुछ काल के लिए अज्ञात चेतना के गहन गह्वर में चुपचाप बैठे रहते हैं ।

अज्ञात चेतना जाग्रत चेतना से अधिक सजग, सचेत और जागरुक है । तुच्छ से तुच्छ, हल्की से हल्की, छोटी से छोटी अनुभूति का सूक्ष्मातिसूक्ष्म आभास यहाँ अंकित मिलता है । दिन-रात चौबीसों घण्टे अन्तश्चेतना का व्यापार यहाँ चला करता है । जाग्रत चेतना से अज्ञात चेतना का क्षेत्र दीर्घतर है । इसका क्षेत्र इतना व्यापक है कि इसके अन्दर देवत्व तथा दानवत्व के समस्त मनोभाव समान रूप से अवगुंठित हैं । यह दुर्वाद, अपवाद, निंदा, दुरभिसंधि, प्रवंचना, धूर्तता, ठगी, स्वार्थ के लिए भी उतनी ही जागरूक है जिसकी दया, प्रेम, करुणा के लिए । हमारे सामर्थ्य का कारण वास्तव में यह कौतुकमयी अन्तश्चेतना ही है । एक महात्मा ने अन्तश्चेतना का प्रतिपादन करते हुए लिखा है—"मेरे हृदय में किसी अज्ञात देव-शक्ति का निवास है, वह मुझसे जैसा करवाता है, वैसा ही मैं करता हूँ ।"

अन्तर्मन पर अधिकार कीजिए । यहीं से शक्ति का स्रोत फूट निकलेगा । शरीर की सभी सूक्ष्म पेशियों को शक्ति देने वाला आपका गुप्त मन ही है । गुप्त मन के विकास के लिए सूचना या सजेश्चन का उपयोग कीजिए । जो कुछ गुण आप मन में पैदा करना चाहते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं, उन्हें दृढ़तापूर्वक गुप्त मन में सूचना द्वारा जमाइये । सूचनानुगामिता अर्थात् सजेश्चनों के अनुसार कार्य करना; यह गुप्त मन का प्रधान गुण है । इस गुण से लाभ उठाकर आप अन्तर्मन का पुनः निर्माण कर सकते हैं, रोगपरिहार कर सकते हैं, वाक्सामर्थ्य उत्पन्न कर सकते हैं । डॉ. गणचुले का विचार है कि "अन्तर्मन की सूचनानुगामिता की कोई सीमा नहीं है । इसी नींव पर मानसोपचार की इमारत खड़ी की जा सकती है । अन्तर्मन यदि सूचनानुगामी न होता तो मानसोपचार शायद ही सम्भव हो सकता ।"

अन्तर्मन की मानसिक-शक्ति को जाग्रत कर मानव-प्रगति सहज ही में की जा सकती है । इसी के द्वारा स्मरण-शक्ति, कल्पना, इत्यादि का विकास हो सकता है । सम्मोहन तथा हिप्नोटिज्म इसी के महान चमत्कार हैं । यदि हम अन्तर्मन को शुभ सूचनाएँ देना प्रारम्भ कर दें, तो धीरे-धीरे वह उन्हें ग्रहण करने लगेगा, और उसी प्रकार का व्यवहार मानने लगेगा । व्यक्ति मात्र को इसी महान शक्ति के शोधन द्वारा आन्तरिक प्रेरणाओं को जाग्रत और ऊँचा उठाना चाहिए । प्रभावशाली व्यक्तित्व का निर्माण बिना गुप्त मन के विकास, शोधन (Sublimation) एवं पुनः-निर्माण के बिना नहीं हो सकता ।

गुप्त मन के विकास के लिए नई-नई पुस्तकें पढ़िए समाचार-पत्र पढ़िए, शुभ चिंतन आत्म-कल्याण के पवित्र विचारों में मग्न में रहिए, नई-नई बातें सोचिए, कल्पना द्वारा मौलिक कला-कृतियों का निर्माण कीजिए ।

गुप्त मन के शोधन के लिए मन को उच्च भावनाओं में तन्मय रखिए । प्रेम, सहानुभूति, दया, करुणा, भावुकता, अहं का विस्तार, कीजिए । निम्न वृत्तियों से मन को उठाकर मन, वचन, कर्म से सत्कर्मों में प्रवृत्त होइये । समाज सेवा, दीन गरीबों की सहायता, पशु पालन, ललित कलाओं के अध्ययन एवं उनके अनुसार जीवन ढालने से गुप्त मन का शोधन होता है ।

गुप्त मन के पुनः निर्माण के लिए नये स्वास्थ्यप्रद, प्रगतिशील विचारों को सूचना-विधि (Auto-suggestion) द्वारा गुप्त मन में जमाइये ।

वाक्-शक्तियाँ एवं आत्म-प्रकटीकरण

आपके व्यक्तित्व के महान गुणों का प्रदर्शन केवल बोलने, व्याख्यान देने, दूसरों के सन्मुख अपनी योजनाएँ रखने और उन्हें अपने विचारानुकूल बनाने से ही हो सकता है । व्यक्तित्व का प्रकाशन अत्यन्त महत्त्वपूर्ण अंग है । यदि मनुष्य गूंगा, शर्मीला और लज्जायुक्त बना रहे, दूसरों को अपने ज्ञान और विशालता से परिचित न कराये, व्याख्यान या वक्तृताएँ न दे, लेख न लिखे तो किस प्रकार दूसरे उसके सद्गुणों से परिचित हो सकेंगे ?

मनुष्य का जीवन एक खुली पुस्तक होनी चाहिए । जीवन की प्रत्येक फंक्ति, प्रत्येक अक्षर, प्रत्येक पृष्ठ स्पष्ट रूप से जनता के सामने आना चाहिए । वे उसे पढ़े, देखें, परखें और आपके व्यक्तित्व से लाभ उठाएँ । यदि आप अपनी विशालता, बुद्धि, ज्ञान, विवेक, अध्ययन जनता के सामने साफ-साफ रख देंगे, तो अवश्य वे आपकी उपयोगिता समझ सकेंगे । आपको समुचित मान प्राप्त होगा ।

आप बड़े विद्वान हैं, आपका अधिकांश जीवन ज्ञान तथा दूसरों के अनुभवों की प्राप्ति में व्यतीत हुआ है, भाषा पर आपका अधिकार है, किन्तु यदि जनता के सामने आप दो शब्द न रख सके, उनकी शंकाओं का समाधान न कर सके या उन्हें अपनी नई-नई योजनाएँ, विचारधाराएँ प्रस्तुत न कर सके, तो आपके ज्ञान और बुद्धि से समाज को क्या लाभ हुआ ?

आपको चाहिए कि दूसरों पर प्रभाव डालने के लिए आप सार्वजनिक भाषण करना सीखें और अपनी महान शक्ति-वाक्शक्ति का विकास करें । जब तक आप बात-चीत, बोल-चाल, वक्तृत्वकला में निपुण नहीं होते, तब तक आप मूक पशुओं की भाँति जीवन-यापन करेंगे । जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में बोलने-चालने और विचार प्रकट करने की योग्यता आवश्यक है । जिस व्यक्ति में वक्ततत्व शक्ति का विकास है, वह जब बोलता है तो हजारों लाखों को वशीभूत कर लेता है, उसकी मोहनी शक्ति बड़ी-बड़ी मजलिसों, श्रोता समूहों, कार्य सम्मेलनों में अद्भुत प्रभाव डालता है । वकील, प्रोफेसर, ऑफीसर, जज, व्यापारी, बीमे के एजेन्टों, बैंक के मैनेजरों, लेखकों, कन्वेंसरों, पादरियों, डॉक्टरों, दुकानदारों, पत्रकारों के लिए वाक्-शक्ति का विकास ही सफलता लाभ करा सकता है ।

वक्ततत्वकला के विकास के लिए इन नियमों का पालन कीजिए—(१) जब कभी बोलने का अवसर मिले अवश्य बोलिए । यह न समझिए कि आप कुछ भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न कह सकेंगे । वक्ततत्व शक्ति का विकास अभ्यास और केवल अभ्यास से ही होता है । ज्यों-ज्यों आप बोलेंगे, त्यों-त्यों अपने आप में दृढ़ता और स्पष्टता, आत्म-विश्वास और भाषा पर अधिकार होता जायेगा । (२) भाषण में पूर्ण तन्मय हो जाइये । (३) अपने भाषण को अच्छी तरह लिखकर तैयार कीजिए । उसकी गहराई पहले से ही सोच लिया कीजिए । (४) जनता की मनोवृत्तियों का अध्ययन कीजिए तथा जनता की विचार-शक्ति भावना से दबी रहती है । जनता प्रायः सोचती समझती नहीं, भावावेश में पागल-सी होकर जैसा वक्ता कहता है, वैसा ही करने को तत्पर हो जाती है । जनता सोचते-समझते भी विवेकशून्यता जैसे कार्य करती है । उसकी भावनाओं और क्षोभ (Emotion) को उत्तेजित कर वक्ता को अपना काम निकालना चाहिए । प्रायः हस्त संचालन, नेत्रों के घुमाव-फिराव, आवाज को ऊँचा-नीचा करने से जनता वश में आ जाती है । जनता पर संगीत एवं गाने बजाने का प्रभाव अधिक पड़ता है । विवेक, तर्क एवं निर्णय करने के स्थान पर जनता केवल अनुकरण करना जानती है । (५) वक्तृत्व कला का प्रारम्भिक अभ्यास एकांत में शीशे के सम्मुख करना चाहिए ।

नित्यप्रति के दैनिक व्यवहार में भी बोलना-चालना, अपनी राय देना, दूसरे के सन्मुख अपना दृष्टिकोण रखना अत्यन्त आवश्यक है । जो गुण दूसरों को आपकी ओर आकर्षित करते हैं, वे सब आत्म-प्रकटीकरण से सम्बद्ध हैं ।

आदिम प्रवृत्तियों का परिष्कार

मनुष्य एक उन्नत, अधिक विकसित एवं परिष्कृत पशु है । अपने संघर्ष एवं संयम के बल पर वह निरन्तर ऊँचा उठा है और अब भी उठता जा रहा है । इस उन्नति का मूल कारण निम्न प्रकार की दुष्प्रवृत्तियों को दबाकर या तो उन्हें बिल्कुल ही विनष्ट कर देना है, अथवा उनके प्रकट होने का नवीन उत्पादक मार्ग प्रदान कर देना है ।

मनुष्य और पशु में सामान्यतः चार आदिम प्रवृत्तियाँ बहुत बलवान हैं । सर्वप्रथम काम है । काम का मूल अभिप्राय आत्म-प्रभुत्व, अहं का विस्तार और अपने आपको दूसरे में उँडेलकर अमर रखने की भावना है । काम की प्रवृत्ति अत्यन्त शक्तिशाली है किन्तु यदि ठीक देखभाल न की जाय तो यह मनुष्य को उन्नत्त कर देती है । उसे भले-बुरे, उचित-अनुचित का विवेक नहीं रहता । इच्छा शक्ति क्षीण हो जाती है । यदि यह प्रवृत्ति वासना के रूप में प्रकट होने लगे तो मनुष्य व्यभिचार की ओर अग्रसर हो जाता है, अर्थ, धर्म, समाज का आदर, इज्जत सब कुछ खो बैठता है, कहीं का नहीं रहता । अनेक मानसिक तथा शारीरिक रोगों का शिकार होकर वह मृत्यु को प्राप्त होता है । मृत्यु का कारण काम वासना की मौजूदगी नहीं है, नाश का कारण तो उसका दुरुपयोग है । अच्छी चीज का भी ठीक तरह उपयोग न किया जाय तो वह विष बन जाती है । इसी प्रकार काम का अनुचित उपयोग दीन, धर्म, इज्जत-आबरू, स्वास्थ्य सबको नष्ट करने वाला है ।

दूसरी है—युद्ध प्रवृत्ति । मनुष्य तथा पशु किसी से दबना नहीं चाहते वरन् वे उन्नति के लिए संघर्ष युद्ध करना चाहते हैं । वे उत्तरोत्तर प्रभुत्व प्राप्त करना चाहते हैं । दूसरों के सामने नीचा नहीं झुकना चाहते । 'महत्त्व' की प्रवृत्ति में रहना चाहते हैं । अपने आपको दूसरे से ऊँचा, विकसित, श्रेष्ठ, मजबूत, श्रेष्ठतर सिद्ध करना हम सबका स्वभाव है । प्रत्येक पशु में यह प्रवृत्ति प्रस्तुत है । मनुष्य अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिए अनेक प्रकार के प्रपंच करता है, षड्यन्त्रों में सम्मिलित होता है और अन्त में लड़ मरता है ।

तृतीय प्रवृत्ति— भूख या क्षुधा है । क्षुधा निवारण के लिए हम हर प्रकार का कार्य करने को तैयार हो जाते हैं । रुपया पैसा कमाते हैं, व्यापार करते हैं, नौकरी के चक्र में फँसते हैं । किसी कवि की उक्ति है—'अरे! यह पेट पापी जो न होता, तो लम्बी तान कर मैं खूब सोता ।' मानव तथा पशु में भूख की निवृत्ति के लिए ही युग-युग में नाना प्रकार के कार्य किए गए ।

चौथी प्रवृत्ति है—भय । पशु तथा मनुष्य भयभीत होकर शीघ्र ही आत्मरक्षा के उपाय करता है । आत्मरक्षा के लिए उसने नाना प्रकार के हथियार, औजार, हिंसात्मक चीजों की सृष्टि की है । जितने व्यक्ति व्याधि से मृत्यु को प्राप्त होते हैं, उनसे अधिक केवल भय की प्रवृत्ति, डर की कल्पना तथा दोषों की भावना से मरते हैं । भय का विश्वास मन में आते ही मनुष्य थर-थर काँपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगता है, मृत्यु की बातें उसके मन में डेरा जमाने लगती हैं । मृत्यु के कारणों की यदि मनोवैज्ञानिक दृष्टि से जाँच-पड़ताल की जाय तो विदित होगा कि अधिकांश व्यक्ति डर के भ्रम से काल के ग्रास बनते हैं ।

इन चारों प्रवृत्तियों से लड़ते-लड़ते मनुष्य को हजारों वर्ष व्यतीत हो गए हैं । इन वर्षों को हम सभ्यता का इतिहास कहते हैं । इन वर्षों में मनुष्य को पशु श्रेणी से उन्नत होने में बड़ी साधना और संयम से काम लेना पड़ा है । अनेक अवसरों पर उसे प्रलोभन से बचकर भविष्य के लिए अपनी शक्तियाँ संगृहीत करनी पड़ी हैं । तुरन्त के थोड़े से लाभ को टालकर भविष्य के बड़े लाभ की चिन्ता करनी पड़ी है । यदि मनुष्य इन प्रलोभनों, आकर्षक विषयों, काम वासनाओं के हेतुओं को उच्च दिशा में विकसित न करता तो कदापि वह सर्वश्रेष्ठ पशु न बन पाता ।

मनुष्य ने काम, युद्ध क्षुधा और भय—इन चारों मूल प्रवृत्तियों के खिलाफ युद्ध किया और दीर्घकाल तक किया । इस लम्बे युद्ध के पश्चात् उसे नई प्रवृत्तियाँ मिलीं, शील गुण विकसित हुए, वह अनेक सिद्धियों से सम्पन्न परमेश्वर का श्रेष्ठतम पुत्र—राजकुमार बना । आदर्शवाद की नकारात्मक शब्दाबली में इन चारों प्रवृत्तियों को उसने निष्काम, निःशस्त्र निरत्न, निरात्मा के नये नाम दिए । इनके विकास को गुण माना गया । मनुष्य के चरित्र में इनका प्रभुत्व विशेष आदर का पात्र हुआ । जिस अनुपात में इनकी उन्नति हुई, उसी अनुपात में मानव संस्कृति की उन्नति हुई ।

महात्मा गाँधी ने इन चारों प्रवृत्तियों को राजनीति में प्रवृष्टि कराया । काम से उन्होंने 'अनाशक्ति', युद्ध प्रवृत्ति से 'अहिंसा', क्षुधा से 'उपवास', भय से 'असहयोग' को जन्म दिया । अनासक्ति, अहिंसा, उपवास, असहयोग उन्होंने मानव जीवन के दूरस्थ लाभ के लिए आवश्यक तत्व समझे । इन चारों तत्वों की साधना से मनुष्य पशुत्व से ऊँचा उठकर देवत्व की श्रेणी में जा बैठता है । इन्हीं के अभ्यास से उसका व्यक्तित्व स्थूल से सूक्ष्म, भौतिकता से आध्यात्मिकता की ओर बढ़ता है ।

कामवृत्ति का परिष्कार करने के लिए ललित कलाओं का अभ्यास करना चाहिए । संगीत, कविता, चित्रकला, स्थायित्व, मूर्तिकला, नृत्य इत्यादि ऊँचे स्वरूपों से काम-प्रवृत्तियाँ परिष्कृत होकर निकलती हैं । उसे भजन, पूजन, ईश्वराधना, धर्म ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए । भक्त तथा सन्तकवियों की वाग्धारा में ऐसा मधुर साहित्य भरा पड़ा है, जिसमें अवगाहन करने से अमित शान्ति प्राप्त होती है ।

युद्ध प्रवृत्ति के परिष्कार के लिए मनुष्य को अपनी गन्दी बातों से संघर्ष करना सीखना चाहिए । अपनी कठिनाइयों, दुर्बलताओं, परिस्थितियों से युद्ध करते हुए हम बहुत ऊँचे उठ सकते हैं । युद्ध करने के लिए हमारे पास अनेक शत्रु हैं । यदि हम श्रेष्ठता का भाव दूसरों में जाग्रत करना चाहते हैं, तो हमें अपने शील, गुण, ज्ञान, अध्ययन द्वारा करना चाहिए । अपने 'अहं' का विस्तार करना चाहिए । उसमें पशु, पक्षी, दीन-हीन व्यक्तियों को सम्मिलित करना चाहिए । हम जितना सम्भव हो दूसरों को प्यार करें—उनके लिए यथासमय प्रत्यन करें, उनका शुभ चाहें । दूसरों से हम जितना प्रेम करेंगे, जितना त्याग करेंगे, उतना ही इस प्रवृत्ति का परिष्कार होगा ।

क्षुधा कई प्रकार की होती है—भोजन, काम, प्रसिद्धि, यश, कीर्ति इत्यादि इन सभी की प्राप्ति के लिए मनुष्य विविध उद्योग करते हैं । पेट की भूख मिटाने के लिए समस्त जगत् कुछ न कुछ करता है । प्रसिद्धि की भूख के लिए वह नीति-अनीति तक का विवेक नहीं करता, कामवासना की शान्ति के लिए वह उन्मत्त हो जाता है । क्षुधा पर संयम पाने के लिए हमें उपवास का अभ्यास करना चाहिए । उपवास आत्म-विकास, आत्म-शुद्धि की एक आध्यात्मिक प्रतिक्रिया है । इसी प्रकार काम-वासना के संयम के लिए ब्रह्मचर्य का अभ्यास आवश्यक है । उपवास के समय प्रार्थना, स्वाध्याय, भजन, ध्यान इत्यादि करना चाहिए ।

भय को दूर करने के लिए साहस, शौर्य, पुरुषार्थ, शक्ति का विकास करना चाहिए । निराशा और चिन्ता, उद्वेग और आन्तरिक संघर्ष इसी विकार के अगणित परमाणु हैं । भय की स्थिति के निवारण के लिए मनुष्य को आन्तरिक साहस का उद्रेक करना चाहिए । आत्मा सदैव निर्भय है । वह परमेश्वर का अक्षय अंश है । उसे न कोई मार सकता है, न डरा सकता है । उसी का ध्यान करने से साहस का संचार होता है । भय को मार भगाने के लिए आत्म-श्रद्धा की आवश्यकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, एकमात्र आत्म-श्रद्धा की । अपनी आत्मा का प्रतिपादन करो, अपने अन्दर उसका सच्चा स्वरूप अनुभव करो तो मन में अनात्म विपत्तियों का आवरण हट जायेगा । निर्भयता की निम्न भावनाओं पर मन को एकाग्र कीजिए ।

"मैं किसी से नहीं डरता, भूलकर भी डर के जंजाल में नहीं फँसता । मैं स्वतन्त्र और मुक्त आत्मा हूँ । मेरी आत्मा यहाँ सर्वदा निर्भय है । मैं भीतर-बाहर सब जगह आत्मदेव को देखता हूँ । घातक भय के भाव मेरे मन मन्दिर में उदय हो ही नहीं सकते । मैं आत्मा पर पूर्ण विश्वास करता हूँ, मुझे अपने आप में असीम श्रद्धा है । मैं निर्भय रहने का व्रत लेता हूँ ।"

उपरोक्त चारों विकारों से मुक्ति प्राप्त कीजिए । स्वच्छन्द जीवन ही वास्तविक जीवन है । आत्म-संयम द्वारा ही वह प्राप्त हो सकता है ।

मानसिक दक्षता का रहस्य

दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करने के छः नियम हैं—

(१) सद्भावनापूर्ण व्यवहार—प्रसिद्धि और सफलता आपके सामाजिक व्यवहार पर अवलम्बित हैं । दूसरे नागरिक ही आपको प्रतिष्ठा और सम्मान देने वाले हैं । उनके दृष्टिकोण पर आपका बहुत अंशों में आपकी सफलता और प्रसिद्धि निर्भर करती है । जैसा आपको आपके मित्र, पड़ोसी, मातहत, अफसर, आस-पास वाले, धनी, निर्धन देशवासी समझते हैं, वैसे ही आप प्रसिद्ध या अप्रसिद्ध हैं ।

समाज में आपके एक-एक कार्य का कुछ प्रभाव पड़ता है । आपके प्रत्येक शब्द, वाक्य और लिखे हुए वचन की प्रतिक्रिया (Reaction) होती है । आपके विचार घूमते हैं और दुगुनी-तिगुनी ताकत से पुनः लौटकर आपकी प्रसिद्धि या अप्रसिद्धि करते हैं ।

आपकी पोशाक का अप्रत्यक्ष प्रभाव न केवल आपके घर वालों पर प्रत्युत आस-पास के पड़ोसियों तथा दूर के व्यक्तियों तक पर पड़ता है ।

भलाई, शराफत, मृदुता का एक बार का किया हुआ सद्व्यवहार वह धन है जो दिन-दूना रात-चौगुना बढ़ता है । यदि आप यह नियम बना लें कि हम जिन लोगों के सम्पर्क में आयेंगे उनमें से प्रत्येक के साथ सद्भावनायुक्त व्यवहार करेंगे, तो आपके मित्रों और हितैषियों की संख्या निरन्तर बढ़ेगी । वे हमारे प्रशंसक होंगे और हमारे आचरण के दृष्टान्त से वे भी मूर्खता और कुमार्ग के गड्ढों से बाहर निकल आयेंगे ।

आप दूसरों को जितना प्रेम देंगे, जितनी उदारता प्रदर्शित करेंगे, उससे अधिक आपको प्राप्त होगी । मनुष्य के व्यक्तित्व को आकर्षक बनाने वाली यदि कोई चीज है तो वह है उसकी दूसरों के प्रति प्रेम, सहानुभूति उदारता । प्रेम को अपने व्यवहार का आधार बनाइये । जिस व्यवहार का आधार सहानुभूति और प्रेम होता है, वह सदैव आकर्षक लगता है । उदारता को अपने जीवन का एक नियम बना लीजिए । "उदार मनुष्य दूसरों से प्रेम अपने स्वार्थ साधन के हेतु नहीं करता, वरन् उनके कल्याण के लिए करता है । उदारता में प्रेम सेवा का रूप धारण कर लेता है । उदार मनुष्य दूसरे के दुःख से स्वयं दुःखी होता है । उसे अपने दुःख-सुख की उतनी चिन्ता नहीं रहती जितनी दूसरे के दुःख-सुख की रहती है ।"

सहानुभूति एक प्रोमोसरी नोट के समान है । इससे संसार के किसी भी व्यक्ति को वश में किया जा सकता है । जब सहानुभूति आदत का एक अंग बन जाती है, अर्थात् जब चेतन मन ही नहीं अचेतन मन भी उसी से परिपूर्ण हो जाता है, तो उसका प्रभाव छोटे बच्चों से लेकर बड़े से बड़े व्यक्ति पर पड़ता है ।

संसार में कुछ ऐसी वस्तुएँ हैं जो देने से बढ़ती हैं न देने से घटती हैं, विद्या यदि दी जाय तो बढ़ेगी । इसी प्रकार सहानुभूति, प्रेम और मान प्रतिष्ठा हैं । जो मनुष्य अपने मन को जितना ही सद्भावनायुक्त व्यवहार में लगाता है, वह दूसरों से उतना ही अधिक पाता है ।

(२) दूसरों को सम्मान दीजिए—प्रसिद्धि के लिए दूसरों के सम्मान की रक्षा कीजिए । प्रत्येक व्यक्ति 'अहं' की रक्षा करना चाहता है । प्रत्येक में कुछ न कुछ मात्रा में गर्व, मान, अपने आपको बहुत श्रेष्ठ समझने की उच्च भावना है । प्रत्येक अपने को सज्जन, उच्चतम, पवित्र, ईमानदार, सच्चा, बहादुर, बुद्धिमान, विज्ञ, वफादार, कुलीन समझता है । अपनी समझदारी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तर्क-शक्ति, ज्ञान, अध्ययन, पूर्णता, उच्चता में नगण्य से नगण्य व्यक्ति को विश्वास है ।

आप किसी से भी यह न कहिए कि "तुम नीच हो, तुम्हें बुद्धि, समझदारी, तर्क-शक्ति, ज्ञान, सतर्कता नहीं । तुम कमजोर, दुर्बल, डरपोक, अस्थिर, अविवेकी हो । तुम्हें सोचने-समझने की शक्ति नहीं । तुम में सहनशीलता, सन्तुलन और सुस्थिरता नहीं । तुममें स्वास्थ्य या तेजस्विता, शक्ति, पूर्णता, प्रेम का अभाव है । तुम्हें अपनी कार्य-शक्ति में विश्वास नहीं ।" इस प्रकार के नकारात्मक अभावयुक्त शब्द अपने विषय में कोई भी सुनना पसन्द नहीं करता । दूसरों के गर्व को चूर्ण करने वाले ऐसे अनेक शब्द पारस्परिक वैमनस्य, कटुता, शत्रुता और लड़ाई के कारण बनते हैं ।

आप दूसरे से इस प्रकार बातचीत कीजिए जिससे उसके सम्मान और गर्व की रक्षा होती चले । वह यह अनुभव करे कि आप उसकी इज्जत करते हैं, उसकी राय की कद्र करते हैं, उससे कुछ सीखना चाहते हैं । अपने आपसे उसे कुछ अंशों में अधिक योग्य समझते हैं । यदि किसी व्यक्ति के मन पर अप्रत्यक्ष या प्रत्यक्ष रूप से यह बातें बैठ जायँ कि आप उसका सम्मान करते हैं, तो वह सदैव आपकी प्रतिष्ठा करता रहेगा ।

सम्मान देने में कभी-कभी आपको झूठी प्रशंसा और दिखावा भी करना होगा । कुछ ऐसे उत्साहवर्द्धक शब्द बोलने पड़ेंगे जिनसे उसके गर्व की रक्षा हो सके । इन शब्दों के प्रयोग में बड़े सतर्क रहिए । कहीं ऐसा न हो आपकी असावधानी में कुछ ऐसे शब्द निकल जायें या अशिष्ट व्यवहार हो जाय, जिससे दूसरे व्यक्ति को भ्रम हो जाय ।

(३) **प्रशंसा की मिठाई बाँटिए**—आप लोगों की प्रशंसा और अभिवादन करना सीखें । प्रशंसा इस प्रकार से की जाय कि दूसरा यह न समझे कि उसे बनाया जा रहा है या उसकी हँसी उड़ाई जा रही है । प्रशंसा से दूसरा अत्यन्त उत्साहित होता है तथा अपना हृदय खोलकर रख देता है । जितना ही मनुष्य दूसरे की प्रशंसा करता है, उतना ही उसमें अच्छा काम करने की शक्ति आती है, यहाँ तक कि कुछ समय के पश्चात आपको अप्रत्यक्ष रूप से वह प्रेम करने लगता है । आकर्षण का नियम प्रतिपादन और पुरस्कार का नियम निरन्तर हमारे मानसिक जीवन में कार्य कर रहा है । प्रशंसा देने से मिलती है और घृणा, क्रोध, तिरस्कार, कुआलोचना से ये ही सब हमें प्राप्त होती हैं ।

(४) **गुण ग्राहक बनिये**—दूसरों में जो उत्तम बातें हैं, उन्हें प्रकट में लाने के लिए आप अवसर ढूँढते रहिए । तनिक-सी गुण ग्राहकता से दूसरा व्यक्ति एक दम आपकी ओर आकर्षित हो जाता है । यह एक मनोवैज्ञानिक नियम है कि जब दूसरा देखता है कि आप उसमें दिलचस्पी ले रहे हैं, उसकी महत्ता स्वीकार कर रहे हैं, गुणों की तारीफ कर रहे हैं, तो वह अनायास ही आपसे प्रभावित हो जाता है । सम्भव है कि कोई किसी समय हतोत्साहित हो रहा हो और आपकी गुण ग्राहकता से उसका टूटता साहस पुनः जाग्रत हो जाय और इस कारण वह आपकी ओर आकर्षित हो । जब हम लोगों को गुण-ग्राहक दृष्टि से निरीक्षण करने लगते हैं तो हर प्राणी में कितनी ही अच्छाइयाँ और विशेषताएँ दिख पड़ती हैं ।

(५) **दूसरे की सुनिये**—प्रत्येक व्यक्ति अपनी कहते नहीं थकता । वह एक ऐसा आदमी चाहता है जो उसकी बातें, मनोव्यथाएँ, आप बीती घटनाएँ, उसी के विचार और दृष्टिकोण सुनता रहे । प्रत्येक आदमी अपने विचारों में दिलचस्पी रखता है और अपने विचार दूसरों पर प्रकट करना चाहता है ।

लोग जब आपसे वार्त्तालाप करें, तो आप अपनी बातें कहने के स्थान पर उनकी सुनने के लिए तैयार रहिए । उन्हें उन्हीं के विषय में बोलने दीजिए । आपका व्यवहार ऐसा हो कि वे अपनी बातों में खूब दिलचस्पी लेकर सुनते रहें । मध्य में ही हतोत्साहित न हो जाएँ । आप उन्हें उनकी दिलचस्पी की वस्तुओं, व्यक्तियों, दृश्यों, विचारों, स्थानों के विषय में कहने दीजिए । उनकी रुचि और सुविधा का ध्यान रखिए ।

दूसरों की बातें धैर्यपूर्वक सुनना बहुत बड़ी बात है । मनोविज्ञान की दृष्टि से यह एक प्रकार से दूसरे के 'अहं' को उत्तेजित करना है । आप देखेंगे कि उनकी बातों में आत्म-प्रशंसा, अपनी वीरता, बुद्धि, धैर्य, कुशलता, सन्तुलन, ईमानदारी, वफादारी, तेजस्विता, सावधानी, विज्ञता, विपुलता इत्यादि के उदाहरण भरे पड़े होंगे । आपको चाहिए कि जैसा अवसर हो और जैसा वह व्यक्ति अपने लिए चाहता हो, उसी गुण को आप उसके चरित्र में स्वीकार कर लें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आप उन्हें यह कहने का अवसर दीजिए कि वे कैसे योग्य वकील हैं, किस उत्तमता से अपना तर्क करते हैं, अपने तर्क की पुष्टि के लिए कैसे उपयुक्त उदाहरण प्रस्तुत करते हैं । अथवा वे कैसे कुशल व्यापारी हैं और कैसे अच्छे सौदे पटा सकते हैं, कैसे अच्छे अध्यापक हैं और किस कुशलता से विद्यार्थियों को पढ़ा सकते हैं । उन्हें कहने दीजिए कि वे कैसे चुस्त, चालाक समझदार हैं, उनके बच्चे, पत्नी और कुटुम्बी कैसे योग्य हैं । ये और इसी प्रकार की अनेकों ऐसी बातें मनुष्यों के अन्तर्मन में बन्द पड़ी रहती हैं जिन्हें कोई नहीं सुनना चाहता । यदि आप धैर्य से उन्हें सुनते जायें, उनमें दिलचस्पी और उत्सुकता दिखाकर उन्हें उत्साहित करते रहें, तो वे सदा के लिए आपके प्रशंसक बन जायें ।

आप प्रत्येक व्यक्ति की आपबीती बड़े ध्यान से सुनने की आदत डालिए, मानो वास्तव में आप उससे भी अधिक बातें सुनने की प्रतीक्षा कर रहे हैं । अतः अपनी-अपनी मत तानिए दूसरे की सुनिए और उसे अपने विषय में अधिक कहने का अवसर दीजिए ।

(६) व्यर्थ की आलोचना अथवा दोषारोपण न कीजिए—दूसरों की आलोचना करना बड़ा खतरनाक है । आलोचना इस ढंग से की जाय कि दूसरे की कमजोरियों पर एक इशारा-मात्र हो जाय । भौंड़े तरीके से की गई आलोचना या व्यर्थ का दोषारोपण बड़ी हानि पहुँचाता है । अच्छा तो यह है कि आप इस कार्य से दूर ही रहें और इस काम को किसी दूसरे ही को करने दें । यदि करना ही पड़े तो घुमा-फिरा कर दूसरे की निर्बलताओं की ओर संकेत ही कीजिए ।

मान लीजिए आपकी पत्नी ने भोजन अच्छा नहीं बनाया । उसमें मिर्च अधिक है, नमक बहुत कम और सो भी ठण्डा पड़ा है । यदि आप उत्तेजित होकर यों ही कह दें, तो गृह-युद्ध अवश्य छिड़ जायेगा । आप यों कहिए—"आज भोजन का स्टैण्डर्ड रोजाना से कुछ नीचा रह गया है । यदि मिर्च कुछ कम होती तो बड़ा जायकेदार बन जाता । नमक कुछ चटक रखतीं तो भोजन में आनन्द आ जाता । कल को अधिक अच्छा भोजन मिलेगा ।" इत्यादि—

आलोचना करते समय यदि किसी दुर्गुण का जिक्र करना पड़े तो पहले किसी सद्गुण से शुरू कीजिए । सद्गुण का बखान करने से दूसरे का 'अहं' उत्तेजित हो जायेगा और वह आपके द्वारा संकेत किए गए दुर्गुण को दूर करेगा ।

दूसरा जब यह समझता है कि उसके विषय में आपके हृदय में अति धारणाएँ हैं, तो वह केवल आपको प्रसन्न करने मात्र के लिए उसी स्टैण्डर्ड तक आने की चेष्टा करता है । यदि उसमें कोई दुर्गुण भी होता है, तो उसको भी त्याग देता है । प्रत्येक व्यक्ति में दिलचस्पी लेकर उसकी गुप्त दुनिया में प्रवेश कीजिए, उसके गुण-दोष देखिए । फिर प्रीतियुक्त दृष्टिकोण और शहद-सी मधुर भाषा में उसे समझाइये ।

(७) दूसरों को देखकर प्रसन्न होइये—जब आप दूसरों को प्रसन्न-मुख से अपनी ओर बुलाते हों या बातचीत करते हों, तो उसे हार्दिक प्रसन्नता और उत्साह होता है । प्रसन्नता दैवी-आकर्षक तत्व है । आप सदैव प्रसन्नता से ही बातें कीजिए । जब आप दूसरे के पास मिलने जायें, तो भी आपको प्रसन्नता प्रदर्शित करनी चाहिए । प्रसन्नता से दूसरा व्यक्ति भी पुष्प की भाँति खिल उठता है ।

अगर आप कुशल व्यक्ति हैं तो आप इस बनावटी प्रसन्नता से ही सन्तुष्ट न रहेंगे, बल्कि आन्तरिक आह्लाद प्रदर्शित करेंगे । आन्तरिक प्रसन्नता न होने से उतना व्यापक प्रभाव नहीं पड़ता तथा आपको जो सन्तोष होना चाहिए वह नहीं होता । प्रसन्नता, प्रफुल्लता, हर्ष, खुशी, उत्साह, जिंदादिली, उल्लास और आनन्द शब्द नहीं रत्न हैं । इनमें से प्रत्येक भाव आश्चर्यजनक प्रभाव डालने वाला है । फूल सा हँसता हुआ मुख किसे आकर्षित न करेगा ? इन शब्दों के अन्दर छिपे हुए भावों को जीवन में उतारिए और अपने स्वभाव का एक अंग बनाइये ।

वन्दनीय पुरुष कौन है ? इसका उत्तर देखिए—

वदनं प्रसादसदनं सदयं हृदयं सुधामुचो वाचः ।
करणं परोपकरणं येषां केषां न ते वन्दयाः ॥

"जिनका मुख प्रसन्नता का घर है, हृदय दया युक्त है, वाणी अमृत सी मधुर है तथा क्रिया परोपकार-मयी है, वे किनके वन्दनीय नहीं हैं ?

प्रसन्न-मुख एक ऐसे पुष्प के समान है जिसे मुस्कराता देख हम अनायास ही उसकी ओर आकर्षित हो जाते हैं । प्रसन्न मुख आकर्षण का केन्द्र बना रहता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्मरण रखिए, लोग आपका रोना नहीं सुनना चाहते, उनके पास अपनी ही मुसीबतें कम नहीं हैं । वे मुहर्रमी सूरत पसन्द नहीं करते । उन्हें तो आपके हास्य, विनोद, उत्तम स्वभाव, प्रसन्न मुख, आकर्षण करने वाली बातें, नई-नई चमत्कारपूर्ण उक्तियाँ, सरसता की आवश्यकता है । आप जितनी मात्रा में ये वस्तुएँ वितरित कर सकते हैं, उतनी ही मात्रा में प्रसिद्धि प्राप्त कर सकते हैं ।

लोगों को अपने विचारानुकूल बनाने की ११ रीतियाँ

(१) बहस मत करो—जब हम दूसरे से बहस करते हैं तो उसे अपनी तमाम बुद्धि, तर्कशक्ति, ज्ञान और अध्ययन के बल पर अपनी प्रतिष्ठा एवं गर्व की रक्षा करने पर विवश कर देते हैं । सम्भव है, हम दूसरे से अधिक योग्य हों और शास्त्रार्थ में उसे हरा लें । ऐसी स्थिति में उस व्यक्ति की विज्ञता और बड़प्पन को बड़ी ठेस पहुँचती है । वह हमारे खिलाफ हो जाता है ।

बहस हमारी महत्ता तथा दूसरे की कमजोरी पर आश्रित होती है । उससे दूसरे को अपनी हार का सदैव डर रहता है । अतः दूसरा व्यक्ति कभी बहस से आपके विचारानुकूल नहीं बन सकता ।

आप दूसरों से बातचीत करते समय बहस न कीजिए, न कठोर वचन उच्चारण कीजिए वरन् अपने मुँह से शुद्ध, उत्तम, मधुर और शिष्टतायुक्त वाक्यों को ही निकालिए । दूसरे को अपनी बातें कहने दीजिए । फिर बिना बहस किए केवल अपनी तर्क-शक्ति से उन्हें उनकी गलती समझाइये । गाली-गलौज, मजाक, ऊँचे स्वर या उखड़ने से काम न चलेगा । जितनी भी नम्रतापूर्वक आप बातचीत करेंगे, उतना ही आप दूसरे को अपने विचारानुकूल बनायेंगे ।

(२) दूसरे को झूठा मत बताओ—दूसरे को विचारनुकूल बनाना है तो एक दम यह न कह बैठिए कि वह झूठा और ना समझ है या मूर्खतापूर्ण बात कर बैठा है । स्मरण रखिए, दूसरा व्यक्ति कैसा ही चोर, मूर्ख, क्रोधी, अन्यायी, दुष्ट क्यों न हो, वह आपके मुँह से यह सुनना नहीं चाहता कि वह चोर, दुष्ट, कायर या झूठा है । वह आपसे आदर चाहता है । अतः शुरू में आपको उसकी बातों का भी आदर करना चाहिए । बाद में सद्भावनापूर्ण एवं प्रीतियुक्त शब्दों और मैत्रीपूर्ण वार्त्तालाप से उसकी भूल समझाओ ।

साधारण बात-चीत में रुखाई, कठोरता, तानेबाजी, उद्दण्डता और शीघ्रता न होनी चाहिए । चरित्र की कमजोरी की ओर संकेत भी प्रेम और शिष्टतायुक्त शब्दों में होना चाहिए । यदि उसे बुलाना हो तो सम्मानसूचक शब्दों से उसका उच्चारण करो ।

(३) अपनी भूल फौरन स्वीकार कर लो—जब कोई व्यक्ति भूल कर बैठता है तो उसे अपनी भूल स्वीकार करते हुए बड़ा भय प्रतीत होता है । वह सोचता है कि अपना दोष और अपराध स्वीकार कर लेने पर मैं दूसरों के सामने अपराधी समझा जाऊँगा, मेरी बेइज्जती होगी, लोग मुझे बुरा-भला कहेंगे और गलती का दण्ड मुझे भुगतना पड़ेगा । वह सोचता है कि इन सब झंझटों से बचने के लिए यह अच्छा है कि अपनी गलती को स्वीकार ही न करूँ, उसे छिपा लूँ, या किसी दूसरे के सिर मढ़ दूँ ।

यह मनुष्य की मनोवैज्ञानिक प्रतिक्रिया है, किन्तु हमें इस प्रकार की कमजोरियों के ऊपर विजय प्राप्त करनी चाहिए । दूसरा व्यक्ति अपनी गलती तब तक स्वीकार न करेगा, जब तक आप उसके सामने अपनी भूलों को स्वीकार न करें । आपकी भूलों को सुनकर वह भी अपनी भूलों को अवश्य मान लेगा ।

एक दोष को छिपा लेने से पुनः उसी त्रुटि को छिपाने को जी चाहता है । चरित्र में एक स्थान पर कमजोरी होते ही, वह दुर्बलता बढ़ने लगती है और अनेक गलतियों को करने और छिपाने की आदत पड़ जाती है । दोषों से मानसिक ग्रन्थियों का निर्माण होता है और वे जटिलतर बनती जाती हैं । मानसिक ग्रन्थियों के भार से अन्तःकरण दिन प्रतिदिन मैला, भद्दा और दूषित होता जाता है और अन्ततः वह व्यक्ति दोंनों और कमजोरियों की खान बन जाता है । गलती करना उसके स्वभाव का एक अंग बन जाता है ।

भूल को स्वीकार करने में मनुष्य की महत्ता कम नहीं होती वरन् उसकी महान आध्यात्मिकता का पता लगता है । जो लोग अपनी भूल को स्वीकार करते हैं और भविष्य में वैसा न करने की प्रतिज्ञा करते हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे क्रमशः सुधरते और आगे बढ़ते जाते हैं । गलती मानना और उसे सुधारना—यही व्यावहारिक कुशलता का मार्ग है । जब आप दूसरे के समक्ष अपनी भूल स्वीकार करते हैं, तो दूसरा व्यक्ति यह समझता है कि उसी की प्रेरणा से ऐसा हुआ है । अतः उसे भी आन्तरिक सुख का अनुभव होता है ।

(४) **बातचीत मित्रता के ढंग से शुरू करो**—अनेक बार लोग बातचीत करने में असफल होते हैं । उसका प्रधान कारण यह है कि वे बातचीत की कला से अनभिज्ञ हैं । बातचीत मित्रता के ढंग से प्रारम्भ करनी चाहिए । वे अपनी ही अपनी गाए जाते हैं । दूसरे की बातें सुनना नहीं चाहते । यदि उन्हें ऐसा अवसर आ जाय तो वे नाराज हो जाते हैं और उखड़ बैठते हैं ।

अनेक व्यक्ति ऐसे अक्खड़ और क्रोधी होते हैं, या घमण्ड में इतने चूर रहते हैं कि उनसे बातचीत प्रारम्भ करना ही कठिन है । किस प्रकार उनसे बातचीत शुरू की जाय ? आप उनसे इस प्रकार वार्त्तालाप प्रारम्भ कीजिए मानो आपकी पुरानी मित्रता है, बहुत दिनों पश्चात आप उनसे मिले हैं । बाचचीत में 'महाशय', 'जनाब,' 'श्रीमान', 'मित्र', 'मेहरवान', 'साहिब', 'बाबू', 'भाई' आदि शिष्टाचारसूचक शब्दों का यथायोग्य व्यवहार करो । मान्य पुरुषों के साथ शिष्टतायुक्त शब्दों में शान्ति और नम्रता के साथ अत्यन्त बुद्धिमानी से बातचीत करना चाहिए । ऐसा न हो कि आप उनकी दृष्टि में उद्दण्ड, मूर्ख अथवा घमण्डी ठहरें ।

दूसरे के स्वभाव को परख लीजिए और उसी के अनुसार अधिक या कम गम्भीर बातें कीजिए ।

(५) **अहंकार तृप्ति का ध्यान रखिये**—बीसवीं सदी के एक मनोवैज्ञानिक का कथन है कि मनुष्य के सभी कार्यों और व्यवहारों के मूल में प्रधानतः अहंकार रहता है । अहंकार क्या है ? डंगी साहब के अनुसार, "अहंकार का अर्थ है कि महत्त्वपूर्ण बनने की आकांक्षी" आदमी अपने आपको बड़ा देखना चाहता है । वह मान, इज्जत और बड़प्पन का भूखा है । हर व्यक्ति किसी न किसी रूप में अपने को बड़ा सिद्ध करने की चेष्टा कर रहा है । उसका 'अहं' किसी न किसी रूप में प्रकट हो रहा है । अब्राहम लिंकन ने कहा है, "दुनिया में कौन ऐसा है, जो यह न चाहता हो कि दुनिया उसका सम्मान करे ।" विलियम जेम्स ने अहंकार की रक्षा के विषय में लिखा है—"मानव-स्वभाव की गहनतम प्रवृत्ति है—महत्त्वपूर्ण बनने की प्यास ।"

आप इस अहं भाव की उपेक्षा कर किसी के प्रिय भाजन नहीं बन सकते । प्राचीन वैराग्यवादियों ने 'अहंकार' की बड़ी तीखी आलोचना की है और उसे मनुष्य की एक बड़ी कमजोरी बताया है । मनुष्य चाहे कितना भी विद्वान् अमीर, बड़ा क्यों न हो जाय, वह अपने को महत्त्वपूर्ण समझने और महत्त्वपूर्ण बनने की भावना से ग्रस्त रहता है । महत्त्वपूर्ण बनने की आकांक्षा से ही सत्यता और संस्कृति का विकास होता है । प्रत्येक साधारण व्यक्ति असाधारण बनने की प्रबल आकांक्षा से प्रेरित होकर महान पद प्राप्त कर सका है ।

आप अपने वार्त्तालाप में दूसरे को महत्त्वपूर्ण साबित करते चलिए और उनके हृदय के अहंकार की रक्षा करते रहिए । आत्म प्रशंसा और अहंकार की रक्षा के लिए महत्त्वपूर्ण ढंग निकालिए ।

अनेक बार 'अहं' की तृप्ति के लिए मनुष्य पागल तक हो जाते हैं । पागलखानों के अध्यक्षों का कथन है कि ५० प्रतिशत व्यक्ति केवल अहंकार—तृप्ति के लिए प्रमाद के शिकार बनते हैं । पागलपन के जगत में उन्हें अपनी इसके प्यास को तृप्त करने का अवसर प्राप्त हो जाता है । कई बार बीमारी में लोग अपनी महत्ता की प्रवृत्ति को शान्त करते पाये जाते हैं ।

श्री अटल ने आगरा एक पागलखाने की एक स्त्री की आप बीती लिखी है । इस कहानी से स्पष्ट है कि केवल पुरुषों ही में नहीं स्त्रियों में तो अहंकार तृप्ति की भावना और भी प्रबल होती है—"एक सुशिक्षित स्त्री पागल हो गई । वह एक बड़े गरीब और निर्धन घर में पैदा हुई थी, लेकिन भाग्य से वह पढ़-लिख गई थी और उसके सपने बहुत ऊँचे हो गए थे । वह चाहती थी कि किसी बड़े घर में उसका विवाह हो, उसका पति उसे उपन्यास नायकों की भाँति प्यार करे, उसके बच्चे हों और समाज में उसकी प्रतिष्ठा बढ़े, किन्तु जीवन ने उसके सारे सपने तोड़ दिए । निर्धनता के कारण उसका विवाह एक अनपढ़ लड़के से हुआ जो बहुत ही दुश्चरित्र था और पत्नी की जरा भी परवाह नहीं करता था । थोड़े दिन बाद वह पागल हो गई । अपने पागलपन में वह अपनी ध्वस्त भावना की तृप्ति किया करती थी । उसने कल्पना कर ली थी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि उसका विवाह एक प्रोफेसर से हो गया है, वह बहुत धनी है, उसके तीन बच्चे हैं । जब कभी डॉक्टर उसे देखने आता था तो वह एक विचित्र काल्पनिक मातत्व के गर्व से मुस्करा कर कहती थी—"डॉक्टर मेरे बच्चे खेलने गए हैं, अभी आते होंगे ।" उसने अपने मन में ही अपने उस व्यक्तित्व का एक काल्पनिक जगत निर्माण कर लिया था, जिससे उसके 'अहं' भाव की सन्तुष्टि हो सके ।"

आप किसी भी व्यक्ति के अहं भाव को ऊँचा उठाइये, फिर देखिए वह आपका बन जाता है । अपनी बातचीत या अपने कार्यों को ऐसा संवारिए कि आप दूसरों के अहं भाव को सन्तुष्ट कर सकें । अहं भाव को पुष्ट करने के व्यवहार पर आपकी कुशलता निर्भर है ।

दूसरे व्यक्तियों की दिलचस्पी और अहं भाव की तुष्टि के लिए अवसर ढूँढ़ निकालिए, उनके अच्छे गुणों तथा कार्यों की प्रशंसा कीजिए । प्रत्येक उन्नति और हर उन्नति की हार्दिक प्रशंसा कीजिए ।

(६) इस प्रकार बातें करो कि दूसरा तुम्हारी बातों को मंजूर करता चले—पहले ऐसी साधारण-सी बात लीजिए, जिसे आप समझते हैं, दूसरा व्यक्ति बिना पशोपेश और शंका के स्वीकार कर लेगा । ऐसा करने से उसका स्वभाव कुछ नर्म हो जायेगा और वह आपकी और बातें भी क्रम-क्रम से स्वीकार करता चलेगा । अपनी प्रत्येक बात को तर्क और बुद्धि से धीरे-धीरे समझाते चलिए । स्मरण रखिए, यदि दूसरा व्यक्ति अस्वीकार करने के मानसिक रुख (Mood) में आ गया, तो वह आपकी तर्क-सम्मत बात भी अस्वीकार कर देगा ।

(७) दूसरे को अधिक बातें करने का अवसर दीजिए—प्रत्येक मनुष्य अपनी राम कहानी कहना चाहता है । अतः आप इस प्रकार बातें कीजिए कि दूसरा उत्साहित होकर आपसे अपनी गूढ़ से गूढ़ बातें स्पष्ट रूप से कह दे । थोड़ी-सी दिलचस्पी लेने से और धैर्यपूर्वक दूसरे की बातें सुनने से यह कार्य हो सकेगा । धैर्य से दूसरे की बातें सुनना भी एक कला है । प्रत्येक व्यक्ति यह गुण नहीं जानता । जब दूसरा बोलता है और अपने हृदय की गुत्थियाँ खोलना चाहता है तो वह अपनी हाँकने लगता है । यह अत्यन्त बुरा व्यवहार है । आप यदि दूसरों को अपनी ओर आकर्षित करना चाहते हैं तो दूसरों को ज्यादा बातें करने का मौका दीजिए ।

(८) दूसरों को यह अनुभव कराओ कि सूझ उन्हीं की है—यदि अपनी ओर से आप कुछ योजनाएँ दूसरों पर लादने की चेष्टा करेंगे, तो दूसरे उसे स्वीकार करने में आनाकानी करेंगे, बुरा भी मानेंगे । किन्तु यदि आप बातें इस प्रकार करें कि ऐसा प्रतीत हो कि सूझ उन्हीं की है, तो वे चटपट वह कार्य करने को प्रस्तुत हो जायेंगे । यह कुशलता अभ्यास और बुद्धि के ठीक प्रयोग से आ सकती है ।

(९) दूसरे के दृष्टिकोण से देखिए—अपने दृष्टिकोण से प्रत्येक व्यक्ति आदर्श है, सर्वोत्कृष्ट शक्तियों का पुंज है, कोई गलती नहीं करता, ठीक ही कार्य करता है । अतः आप यदि किसी की गलती समझते भी हैं, तो उसे दूसरे के दृष्टिकोण से देखकर समझाइये । अपने को उसकी स्थिति में रखिए और तब अपने मार्ग का निर्णय कीजिए । दूसरों के दृष्टिकोण से सहानुभूति रखकर हम अनेक उलझनों से बच सकते हैं ।

(१०) दूसरों के उच्च विचार जाग्रत कीजिए—प्रत्येक मनुष्य के मन की दो भूमिकाएँ हैं । एक निम्न दूसरी उच्च । खराब व्यक्ति भी अपने चिन्तन के क्षणों में उच्च भूमिका में प्रवेश करता है । उसमें आत्मशक्ति निवास करती है, अतः कभी-कभी उसका विवेक, उसकी शुद्ध बुद्धि, उसका तर्क जाग्रत हो उठता है । आपका व्यवहार एवं बातचीत ऐसी तर्कपूर्ण और युक्तिसम्मत होनी चाहिए कि दूसरे का विवेक जाग्रत हो उठे । इस चेतनावस्था में आकर वह व्यक्ति आपकी योजनाओं एवं विचारधाराओं में विशेष दिलचस्पी लेने लगेगा ।

(११) अपने विचारों का जादू चलाइये—आपमें जो सर्वश्रेष्ठ है, उत्तम और पुष्ट है—ऐसी मौलिक योजनाओं और विचारधाराओं को दूसरों पर सगय और उपयुक्त अवसर निकालकर अवश्य प्रकट कीजिए । यदि आपके विचारों में शक्ति है तथा आपमें विश्वास भरा है; तो अवश्य आपके विचारों का, दूसरे पर जादू जैसा प्रभाव होगा, वह आपके दृष्टिकोण के वशीभूत हो जायेगा । हिप्नोटिज्म या सम्मोहन-विज्ञान कुछ नहीं केवल पुष्ट संकेतों (Suggestions) के ही अद्‌भुत खेल हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्मोहन विज्ञान या हिप्नोटिज्म है क्या ?

सम्मोहन विज्ञान का वर्णन हमें सर्वप्रथम महाभारत के विराट पर्व में मिलता है । पाण्डवगण विराट राज के यहाँ अज्ञातवास कर रहे थे । कौरव उनका पता लगाते-लगाते उन्हें पहचानने के लिए विराट् गए और उन्होंने विराट् राज की गौओं को घेर लिया । उस समय उनसे युद्ध करने के लिए उनके पुत्र के साथ बृहन्नला रूपी अर्जुन भी गए । बहुत देर तक युद्ध होता रहा । कौरव योद्धा पृथक्-पृथक् धर्म के विरुद्ध दल बाँध-बाँध कर अर्जुन पर आक्रमण करने लगे । तब अर्जुन ने गाण्डीव पर चढ़ाकर प्रचण्ड गरज के साथ एक ऐसा सम्मोहन बाण छोड़ा कि आहत होकर कौरव दल मूर्छित-सा हो गया । उन्हे कुछ समय के लिए एक प्रकार की कृत्रिम निद्रा (Artificial Sleep) आ गई । वे मोहनी विद्या के कारण थोड़ी देर के लिए अपनी सुध-बुध विस्मृत कर बैठे । उस समय राजकुमारी उत्तरा की बात अर्जुन को स्मरण हो आयी । उन्होंने उत्तरा से कहा—

"हे, उत्तरा ! कौरवगण इस समय सम्मोहित होकर कुछ काल के लिए मूर्छित हो गए हैं । यह दिव्य सम्मोहन-अस्त्र का प्रयोग है । अतएव रथ से उतरकर तुम उनके वस्त्र राजकुमारी के लिए ले आओ । देखो सावधान रहना । भीष्म इस सम्मोहन-अस्त्र को तोड़ना जानते हैं । इसलिए उनके अश्वों के मध्य से सावधानी से होकर जाना । तब सम्मोहित पड़े हुए वीरों के मध्य में जाकर द्रोण और कृपा के श्वेत कपड़े, कर्ण के पीले कपड़े और अश्वत्थामा तथा दुर्योधन के नीले कपड़े लेकर फिर अपने रथ पर जा चढ़ें और घोड़ों की रास थामें गायों के पीछे नगर की ओर चलें ।"

उपर्युक्त उदाहरण में हिप्नोटिज्म के प्रयोग का एक संकेत उपलब्ध है । पाश्चात्य देशों में हिप्नोटिज्म का यथेष्ट प्रचार हो रहा है तथा उत्तमोत्तम ग्रन्थ प्रकाशित हो रहे हैं, किन्तु यह विद्या मूलतः भारतीय है । प्राचीन भारत के मानसशास्त्र में मारण, मोहन, वशीकरण, आकर्षण, उच्चाटन और स्तम्भन इत्यादि छः प्रधान अंग हैं । इनमें मोहन, अर्थात् मोहिनी विद्या का भी विवेचन है । यह मोहिनी विद्या ही हिप्नोटिज्म है । श्रीयुत प्रकाश लिखते हैं, 'हिप्नोटिज्म' शब्द अंग्रेजी-भाषा का है, जो 'निद्रा' के अर्थ में प्रयुक्त होने वाले ग्रीक-भाषा के 'हिप्नस्' शब्द से बना है । यही कारण है कि लेखकों ने हिप्नोटिज्म शब्द का अनुपान 'निद्राकर्षण' किया है । किन्तु निद्राकर्षण की क्रिया हिप्नोटिज्म के लिए अत्यन्त प्रयोजनीय होने पर भी वहीं तक समाप्त नहीं हो जाती, वरन् हस्त संचालन के द्वारा निद्राकर्षण करने के बाद सम्मोहन का कौतुक दिखाना ही हिप्नोटिज्म विद्या का मुख्य उद्देश्य होता है । इसलिए हिप्नोटिज्म का 'सम्मोहन' नाम देना अत्यन्त समीचीन प्रतीत होता है ।

शारीरिक स्पर्श के बिना उत्पन्न की गई निद्रा का नाम ब्रेड साहब ने हिप्नोस (Hypnos) रखा । इसी से इस पद्धति का नाम हिप्नोटिज्म प्रचलित हुआ । मेस्मैरेजम तथा हिप्नोटिज्म के मध्य में यही सूक्ष्म भेद है । मेस्मैरेजम तथा हिप्नोटिज्म दोनों से ही निद्रा पैदा की जाती है । निद्रा उत्पन्न करने की ये दो भिन्न-भिन्न पद्धतियाँ हैं । दोनों का अन्तिम उद्देश्य तो एक है, किन्तु विधि एवं साधन में पृथकता है । मेस्मरिष्ट लोग समझते थे कि बिना स्पर्श के निद्रा नहीं आ सकती और मानसिक उपचार सम्भव नहीं है, किन्तु ब्रेड़ साहब ने स्पष्ट रूप से प्रयोग द्वारा सिद्ध किया कि संकेत अथवा सम्मोहन द्वारा मनुष्य को मोह निद्रा में निमग्न किया जा सकता है । हिप्नोटिस्ट दूसरे के अन्तर्मन को दृढ़तापूर्वक सूचना या संकेत देता है और अपनी इच्छानुसार उससे कार्य करता है । सम्मोहित हो जाने के गुण प्रायः प्रत्येक मनुष्य में बीज रूप में वर्तमान हैं, किन्तु किस समय, किसके हृदय में किस प्रभाव से यह उत्तेजित होकर अपना कार्य करेगी, यह हममें से कोई नहीं जानता, किन्तु 'सम्मोहन विद्या' का उद्देश्य यही है कि सम्मोहित व्यक्ति में हिप्नोटिस्ट की इच्छानुसार भावों का संस्थापन किया जाय । इससे किसी व्यक्ति विशेष को अपने भावों के अधीन किया जा सकता है । उसके रोग, दुःख व्याधियाँ एवं विकार दूर किए जा सकते हैं ।

सम्मोहन एक मानसिक क्रिया है

सम्मोहन की क्रिया अत्यन्त सूक्ष्म रूप से मनुष्य के आन्तरिक मन पर कार्य करने वाली एक मानसिक क्रिया है । यदि कोई विद्यार्थी पूर्ण रूप से इस विद्या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का ज्ञान प्राप्त करना चाहता है तो उसे सर्वप्रथम मानस-शास्त्र, मनोविज्ञान तथा मनुष्य के आन्तरिक मन का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए । मनुष्य का मस्तिष्क एक अत्यन्त सूक्ष्म यन्त्र है जिसमें नाना प्रकार के विचारों, अनुभूतियों तथा भावनाओं का कुटिल संघर्ष निरन्तर चला करता है । प्रत्येक आघात अपना सूक्ष्म प्रभाव आन्तरिक मन पर छोड़ जाता है । अप्रिय प्रसंग, दुःखदायी बातें अपने दुःखद संस्कार अन्तर्मन पर छोड़ जाते हैं । हमारा अन्तर्मन अनेक प्रिय-अप्रिय संस्कारों से दबा पड़ा है । यही नहीं, आधुनिक मनोवैज्ञानिकों की तो यह धारणा है कि मनुष्य के अर्न्तमन में जन्म-जन्मान्तरों के कुसंस्कार ठसे पड़े हैं । ये संस्कार कुछ तो सामान्य रूप से सम्पूर्ण मानव जगत में पाये जाते हैं, किन्तु कुछ प्रत्येक व्यक्ति में भिन्न-भिन्न हैं । हममें प्रत्येक व्यक्ति स्वनिर्मित मानसिक जगत में निवास करता है । प्रत्येक दुःख, हर्ष, आशा, उद्वेग, चिन्ताएँ सब अपनी ही हैं । दूसरे के मन में उनसे बिल्कुल पृथक् समस्याओं एवं अनुभूतियों की छाप है । प्रत्येक के मानसिक मित्र भी अलग-अलग हैं । प्रत्येक कल्पना तथा भावना भिन्न-भिन्न मानसिक चित्रों की रचना करती है । प्रत्येक के मानस पटल पर जो-जो सत्-असत् चित्र विनिर्मित होते हैं, वे वस्तुतः पृथक् ही हैं । मानव के मन मन्दिर की चित्त भित्ति पर जो असंख्य संस्कार बने हैं, जिनसे उसे भय, क्लेश, सन्ताप, उद्वेग, या आनन्द उपलब्ध होता है, वे स्वयं ही सृष्टि हैं ।

मनुष्य के मन की तीन भूमियाँ होती हैं—स्मृति, जागृति तथा धृति । जाग्रत मन संसार को देखता है, प्रत्यक्ष अनुभव करता है, उनसे निष्कर्ष निकालता है । इस ज्ञान तथा अनुभव के कारण अतीत काल से वह बहुत कुछ बातें संग्रह करता आ रहा है, ये सब स्मृति के अन्तर्गत आती हैं । जागृति मन की वह अवस्था है जिसमें मन ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा केवल हृदय जगत से सम्बद्ध रहता है । मन के समस्त उद्वेग, संघर्ष आशा, उत्साह, चिन्ता के अनुभव इसी अवस्था में होते हैं । धृति मन की वह स्थिर अवस्था है जिसमें पंच इन्द्रियों के उपयोग बिना ही सहानुभूति पद्धति से मन में विचार जानने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है। इसे अलौकिक (Intuition) शक्ति कहते हैं । धृतिस्थ मन इतना सूक्ष्म हो जाता है कि स्वतन्त्र रूप से किसी अप्रत्यक्ष माध्यम के द्वारा अपने वातावरण में से अनेक तत्व खींचने योग्य हो जाता है । धृतिस्थ मन के माध्यम से मनुष्य दूसरों के सन्देश ग्रहण कर लेता है तथा अपने विचार दूसरों के अन्तर्मन में प्रविष्ट करा देता है ।

मनुष्य का अन्तर्मन संसार की एक आश्चर्यजनक शक्ति है । इस केन्द्र का ज्ञान अभी मानस-शास्त्रियों को बहुत कम है, किन्तु वे धीरे-धीरे इसके रहस्य मालूम करते जा रहे हैं । यही स्थान अनेक मानसिक व्याधियों के उद्भव का प्रधान केन्द्र है । इसके विकृत होने पर मनुष्य का स्वास्थ्य विनष्ट हो जाता है तथा वह नाना प्रकार के रोगों का शिकार बनता है । इसी प्रदेश में मानसिक ग्रन्थियाँ (Complexes) निवास करती हैं, जो मनुष्य की अनेक जटिल क्रियाओं, वेदनाओं, व्याधियों, विलक्षण चेष्टाओं का प्रधान कारण होती हैं । जागरण, उच्चाटन, झाड़-फूँक, मानता, ताबीज, नजर, गंडा, डोरा इत्यादि की सूचना (Suggestion) का प्रभाव इसी अन्तर्मन पर पड़ता है । हमारा अन्तर्मन अनेक जटिल ग्रन्थियों का परम रहस्यमय पिटारा है । मनुष्य को स्वयं ज्ञात नहीं कि इस जटिल केन्द्र में क्या-क्या विलक्षण अनुभव भरे पड़े हैं ।

यदि सत्य पूछा जाय तो मनुष्य का अन्तर्मन ही उसके उत्थान तथा पतन का कारण है । दुःख , रोग, शोक की ग्रन्थियाँ निर्माण होने के कारण उसका अन्तर्मन उसे उचित मार्ग पर नहीं चलने देता । इस जटिल प्रदेश में ध्वंसात्मक एवं रचनात्मक दोनों शक्तियाँ विद्यमान हैं । इस पर उचित रीति से अधिकार कर लेने पर मनुष्य स्वयं अपना स्वामी बन जाता है । किन्तु जब वह इसके वश में हो जाता है, तो ध्वंसात्मक तत्वों के कारण उसके कुत्सित संस्कार उसका पतन कर डालते हैं । मनुष्य का वास्तविक कर्त्ता-धर्त्ता एवं स्वामी गुप्त मन ही है । वह जरा देर में मनुष्य की वास्तविकता स्पष्ट कर देता है ।

गुप्त मन सदैव सतर्क रहता है । वे बातें जो जाग्रत एवं सचेष्ट मन नहीं पकड़ पाता, अन्तर्मन सूक्ष्मता से ग्रहण कर लेता है और उन्हें विस्मृत नहीं करता । यह सदैव सतर्क रहता है । किसी से न डरता है, न घबराता है । संस्कारों की छाप फोटोग्राफी की सूक्ष्म प्लेट की भाँति इस पर निरन्तर बनती जाती है । यह उन सभी बातों को ध्यान से सुनता है, जो उससे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सम्बन्धित की जाती हैं । यह सोचता है, विचारता है और बात को तोलता है और एक बार ग्रहण कर लेने के पश्चात पुराने संस्कारों को आसानी से नहीं छोड़ता । शरीर के समस्त व्यापारों, विकारों तथा अवस्थाओं पर अन्तर्मन का ही अधिकार मुख्य है । यद्यपि हमें प्रत्यक्ष रूप से गुप्त मन का कार्य नहीं दीखता, किन्तु अप्रत्यक्ष रूप से यही हमें संचालित करता है । जब हम सो जाते हैं तो हमारा बहिर्मन (objective mind) तो निष्क्रिय हो जाता है, किन्तु स्वप्नावस्था में अन्तर्मन तीव्र गति से कार्य करता है । बहिर्मन के व्यापार बन्द होने पर गुप्त मन का व्यापार तेजी से शुरू हो जाता है । यदि बहिर्मन का मुख्य कार्य विचार शक्ति, भिन्न-भिन्न पदार्थों का स्वरूप जानना, पंच इन्द्रियों का संचालन, विवेक शक्ति का सहेतुक उपयोग है, तो अन्तर्मन का सम्बन्ध शरीर के समस्त व्यापारों से रहता है ।

अन्तर्मन का अधिकार मनुष्य की समस्त अहेतुक क्रियाओं पर होता है । सम्मोहन विद्या विशारदों का मत है कि मनुष्य के प्रायः सभी शरीर व्यापार 'अहेतुक' होते हैं और उनसे बहिर्मन का सम्बन्ध नहीं रहता । इच्छाशक्ति, बुद्धि और भावना (Emotion) ये तीन बहिर्मन के गुण अन्तर्मन में होते हैं । शरीर पोषण में कार्य करने का गुण भी उसमें हैं । ये गुण महत्त्वपूर्ण हैं । अन्तर्मन का अधिकार केवल अहेतुक क्रियाओं पर ही नहीं, वरन् सहेतुक क्रियाओं के लिए भी उसके व्यापार की आवश्यकता रहती है ।"

अन्तर्मन हमारा जीवनदाता तथा हमारी शक्तियों का कण्ट्रोलर है । यह मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर में व्याप्त है । अनेक बार हमारा बहिर्मन अन्तर्मन को आज्ञा देकर भाँति-भाँति के कार्य कराता है । व्हानहार्टमेन लिखते हैं—"प्रत्यक्ष अनुभव की अनेक बातें तथा अनेक प्रयोगों से मैंने यह सिद्धान्त स्थापित किया है कि प्रत्येक शरीर व्यापार के लिए अन्तर्मन की आवश्यकता है । यह मन कभी बहिर्मन की सहायता से, कभी अपनी अध-कच्ची इच्छा से एवं अंशतः बहिर्मन की प्रेरणा से और कई अवसरों पर बहिर्मन की प्रेरणा के विरुद्ध काम करता रहता है । यह बात अब पूर्णतः प्रमाणित हो चुकी है कि सहेतुक क्रियाओं के अतिरिक्त अन्न-पाचन, मल विसर्जन, खून चलना आदि शरीर वर्धन की क्रियाएँ यहाँ तक कि शरीर के स्नायु, ज्ञानतन्तु, नसें, माँसपेशियाँ भी अन्तर्मन के अधिकार में हैं । शरीर के अधिकतर व्यापार तभी उचित रीति से हो सकते हैं, जब अन्तर्मन उत्तम अवस्था में होता है ।" इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रत्येक मनुष्य के सभी व्यापारों से हमारे अन्तर्मन का अकाट्य सम्बन्ध है । हमारे उत्थान तथा पतन की कुंजी अन्तर्मन में ही है । यदि मनुष्य अपने अन्तर्मन का सम्प्रयक ज्ञान प्राप्त कर ले और उससे स्वास्थ्य का उचित ध्यान रखे तो वह भी मानसिक व्याधियों का शिकार न बने ।

अन्तर्मन की विशेषताएँ

बाह्य दृष्टि से हमें बहिर्मन ही कार्य करता हुआ प्रतीत होता है, किन्तु हम बता आये हैं कि वास्तविक कर्त्ता-धर्त्ता अन्तर्मन ही है । सहेतुक क्रियाएँ तो बहिर्मन द्वारा संचालित होती हैं, किन्तु इसके अतिरिक्त स्वयं वृत्तियाँ, अप्रत्यक्ष क्रियाएँ, स्वप्न, अहंकार, द्वेष, वासना की क्रिया-प्रतिक्रियाएँ, मानसिक व्याधाएँ, आन्तरिक द्वन्द्व, व्यक्त-व्यक्त का संघर्ष, शुभ-अशुभ का घात-प्रतिघात अन्तर्मन से ही परिचालित होता है । अन्तर्मन से ही शरीर की क्रियाओं (Actions) का अधिक सम्बन्ध है । इसी प्रदेश में हजारों वासनाएँ नीति तथा यश अपयश की भावना से दबाई जाती हैं । मानसिक चिकित्सा के विशेषज्ञों का विचार है कि मृगी, उन्माद, नपुंसकता, चर्म रोग इत्यादि अनेक मानसिक व्याधियों की जड़ें इसी प्रदेश में एकत्रित रहती हैं । काम वासना की अतृप्त वासनाएँ इसी प्रदेश में कुचली हुई पड़ी रहती हैं तथा मनुष्य की अनेक कुचेष्टाओं, विक्षिप्त कार्यों, अशान्ति, गाली, विकृति, स्वप्नों, अश्लील व्यवहार, मजाक, इत्यादि का मूल कारण बनती हैं । कायरता, हीनत्व या लघुत्व की भावना भी कुछ आन्तरिक ग्रन्थियों (Complexes) का परिणाम है । अतः मानसोपचार में बहिर्मन की अपेक्षा मनुष्य का यह अन्तप्रदेश तथा उसका स्वामी अन्तर्मन का विशेष महत्त्व है ।

(१) **विवेकशून्यता**—अन्तर्मन में यश-अपयश या नीति-विवेक इत्यादि की भावना नहीं है । बहिर्मन विवेकशील है, तर्कपूर्ण तथा दूर की सोचने वाला है, किन्तु अन्तर्मन में प्रमाण-शोधकर्त्ता नहीं है । अन्तर्मन एक बात को एक दम सही मान लेता है, किन्तु एक बार सत्य मानने पर वह तुरन्त उसे छोड़ नहीं पाता । जो उसने सत्य मान ली, वह मानसिक लकीर बन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाती है फिर उसे मिटाना कठिन हो जाता है । अन्तर्मन बात मानते समय अच्छी बुरी का विचार नहीं करता, वह स्थूल पर अनेक दृष्टियों से विचार नहीं कर पाता, वह एक ही प्रकार के विचार कर पाता है । बहिर्मन भिन्न वस्तुओं को देखकर कुछ निष्कर्ष निकालता है किन्तु अन्तर्मन इस प्रकार सोच-विचारने के कार्य को अधिक नहीं करता । इसे तो कोई सत्य चाहिए । किसी निमित्त को पाकर यह उसी के आधार पर सुसंगत अनुमान या नतीजे निकालता है । स्वयं उस मुख्य तथ्य की सत्यता-असत्यता की जाँच नहीं करता ।

(२) **सूचनानुगामिता**—सुप्रसिद्ध मनीषी डॉ. गणपुले लिखते हैं—"चाहे कोई कुछ भी बात कहे, अन्तर्मन तत्काल उसे सच मान लेता है और उससे मनमाने नतीजे निकालता है । इस गुण को अन्तर्मन की निष्कर्ष निकालने की प्रवृत्ति (Deductive power) कहते हैं ।" अपने विचार के लिए किसी निमित्त मात्र को पाकर यह मन उस पर अटल विश्वास रखता है और उस निमित्त से असंख्य सुसंगत अनुमान निकालने की इसमें आश्चर्यकारी शक्ति होती है ।

हिप्नोटिज्म में कृत्रिम निद्रा लाने के पश्चात बहिर्मन तो निष्क्रिय हो जाता है केवल अन्तर्मन ही अपने व्यापार जारी रखता है । उस समय अन्तर्मन की यह प्रवृत्ति स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है । उस समय जो कुछ संकेत या सूचनाएँ इसे दी जाती हैं, यह तुरन्त ग्रहण कर लेता है और इसी से निष्कर्ष एवं सुसंगत अनुमान निकालता है । इसी कारण हिप्नोटिज्म की कृत्रिम निद्रावस्था में अनेक आश्चर्यजनक बातें हो जाती हैं । मानसिक चिकित्सा का मूल आधार ही अन्तर्मन के इस गुण पर निर्भर है । इसे जो सूचना या सजेशन दिया जाता है अन्तर्मन उसी को स्वीकार कर लेता है, यदि अन्तर्मन मानसिक चिकित्सक की सूचनाएँ न ग्रहण कर पाता तो मानसोपचार नामक मानसशास्त्र की उत्पत्ति ही न हुई होती ।

(३) **सिद्धान्तानुप्रवाहिकता**—हम प्रारम्भ में ही अन्तर्मन के इस गुण पर कुछ प्रकाश डाल आये हैं । यहाँ कुछ और विस्तार से इस गुण की चर्चा करना आवश्यक प्रतीत होता है । अनेक बातों की जाँच, अन्वेषण, तर्क-वितर्क, तुलना इत्यादि कार्य इस मन से नहीं होते । इसे तो कोई तथ्य या सत्य मिलना चाहिए । सुप्तावस्था में जब बहिर्मन निष्क्रिय होता है, तब जो भी सत्य इसे ग्रहण कराया जाता है, उसे यह तत्काल ग्रहण कर लेता है । फिर उससे अनेक निष्कर्ष निकालता रहता है । ये निष्कर्ष प्रायः मनमाने होते हैं । नये-नये नतीजे या अनुमान निकालने की आश्चर्यजनक शक्ति अन्तर्मन में भर दी गई है । इन निष्कर्षों को निकालते हुए कुछ रुकावट नहीं होती । ये सर्वथा निर्दोष होते हैं ।

(४) **स्मरण शक्ति**—मोह निद्रा की अवस्था में स्मृति बहुत साफ हो जाती है । पुरानी बातें, अप्रिय अनुभूतियाँ, दिल पर पड़ी हुई चिन्ताएँ, दूसरों के अत्याचार, आन्तरिक अभिलाषाएँ, दबी हुई वासनाएँ, अनुचित या अनैतिक इच्छाएँ सब अभिव्यक्त हो उठती हैं । रोगी को पुरानी बातें, कटु अनुभव, स्थितियाँ, अनेक पुराने प्रसंग इतने साफ-साफ नजर आते हैं मानों वे अभी-अभी पुनः उसके सामने से विचर रहे हों । रोग रूप में दबी हुई वासनाओं तथा प्रतिहिंसा की भावनाओं की जड़ें तथा भावना ग्रन्थियों के कारण भी स्पष्ट हो जाते हैं । जो भावनाएँ यश-अपयश के नैतिक विचार से दबाई गई थीं वे सब व्यक्त हो उठती हैं । इन्हीं दलित वासनाओं को निकालकर अनेक मानसिक व्याधियाँ दूर की जाती हैं । अन्तर्मन का ही यह प्रताप है ।

(५) **विकार-स्थान** (Seat of Emotion)—अन्तर्मन ही मनुष्य की भावनाओं का प्रमुख केन्द्र है । हमारी आशा, उत्साह, उद्वेग, चिंता की सम्पूर्ण भावनाएँ, इसी गुह्य क्षेत्र में निवास करती हैं । जो उद्वेग या अन्तर्द्वन्द्व मन में उद्भूत होते हैं, उनका तथा समस्त जाग्रत एवं सुप्त वासनाओं का लीला केन्द्र अन्तर्मन ही है । कवि की अनेक कल्पनाएँ, उसकी प्रतिभा, कवित्व तथा भावनाएँ अनुकूल वातावरण पाकर यहीं से उद्वेलित होती हैं ।

(६) **विचार संचालन शक्ति** (Telepathic powers)—अन्तर्मन की ग्रहण शक्ति इतनी सूक्ष्म है कि उस पर बाहर के विचारों तथा भावनाओं के अनेक प्रतिबिम्ब पड़ते रहते हैं । अनेक बार हम अनायास ही दूसरे के मन की बातें भाँप लेते हैं, अन्तर्मन की सूचना प्राप्त कर लेते हैं तथा स्त्रियाँ भविष्य तथा दूरस्थ बातें मालूम कर लेती हैं । ये अद्भुत कार्य अन्तर्मन की विचार संक्रमण शक्ति से सम्पन्न होते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य का अन्तर्मन अद्भुत शक्तियों से सम्पन्न है । इसकी शक्ति का वास्तविक ज्ञान अचेतन अवस्था में स्पष्ट होता है । तभी इसकी अन्तः प्रवृत्ति, सूचनानुवर्तिता, निष्कर्ष शक्ति, स्मरण शक्ति, विकार केन्द्र तथा विचार-संचालन अपना-अपना कार्य द्रुत गति से करते हैं । प्रत्येक व्यक्ति के अन्तर्मन में एक पूर्व स्मृतियों का वृहत् भंडार है, किन्तु इसका रहस्य तभी ज्ञात होता है जब मोह निद्रा द्वारा बहिर्मन निश्चेष्ट कर दिया जाता है । अन्तर्मन के कार्यक्षेत्र की मर्यादा में वृद्धि हो जाने से मनुष्य पागल हो जाता है । वात प्रकोप, भ्रम, पागलपन, मृगी इत्यादि अन्तर्मन के ध्वंसात्मक प्रतीक हैं । अन्तर्मन की स्वच्छन्दता अनेक विचित्र लीलाओं, चमत्कारपूर्ण कार्यों तथा मनोरंजक तत्वों की जननी है । यह सम्भव है कि यदि अन्तर्मन स्वच्छन्द हो जाय, तो अनेक उपद्रव कर डाले । वस्तुतः इसीलिए उसे बहिर्मन की विवेक बुद्धि के नैतिक बन्धन में रखा है । बहिर्मन के नियंत्रण के कारण अन्तर्मन अपना कार्य साधारणतः करता है, विक्षेप उत्पन्न नहीं होता न अन्तर्मन के कार्यक्षेत्र की मर्यादा में ही वृद्धि होने पाती है । मनुष्य के बर्हिमन तथा अन्तर्मन में पूर्ण सामंजस्य या मतैक्य (Harmony) रहने से आन्तरिक शान्ति, सुख तथा आनन्द रहता है । व्यक्त तथा अव्यक्त के वैमत्य का नाम द्वन्द्व तथा मतैक्य का नाम ही मोक्ष है ।

सम्मोहन विज्ञान के दो भाग

प्रत्येक हिप्नोटिस्ट को दो बातें मुख्यतः सीखना पड़ती हैं । पहले तो कृत्रिम निद्रा का प्रयोग अर्थात् रोगी को निद्रित अवस्था में लाने की विधियाँ । दूसरे, संकेत अर्थात् सजेक्शन (Suggestion) का प्रयोग । सम्मोहित अवस्था में मनुष्य का बहिर्मन निष्क्रिय होकर सुन्न पड़ जाता है, किन्तु अन्तर्मन नियंत्रण हट जाने से तीव्रतापूर्वक अपना कार्य करता रहता है । निद्रित अवस्था में प्रायः देखा जाता है कि मनुष्य की शरीर क्रिया हीन (सुन्न) पड़ी रहती है, किन्तु उसका मस्तिष्क तथा अन्तर्मन फिर भी अपना कार्य पूर्ववत् करता रहता है । बाह्य वृत्तियों की निष्क्रियता होने पर भी आंतरिक घात-प्रतिघात, द्वन्द्व तथा मानसिक व्यापार ज्यों का त्यों चलता रहता है । यह हाल उस समय हो जाता है जब हिप्नोटिस्ट मोह निद्रा का प्रयोग करता है । सम्मोहित व्यक्ति के गहन स्तरों से अनेक सुप्त इच्छाएँ तथा कुचली हुई वासनाएँ निकाली जाती हैं, यह कार्य सूचना या सजेश्चन द्वारा होता है ।

मानसोपचार में सूचना या संकेत का प्रमुख स्थान है । संकेत क्या है ? यह हिप्नोटिस्ट द्वारा रोगी के मस्तिष्क में प्रवेश कराये जाने वाले थे, दृढ़ एवं पुष्ट विचार हैं, जो नवीन प्रवृत्तियाँ उत्पन्न करते है । सूचना की प्रेरणा कुछ ऐसे दृढ़ वाक्यों से की जाती है जिसके प्रत्येक शब्द में गुप्त इच्छा शक्ति भरी रहती है, अखंड विश्वास एवं आत्मश्रद्धा का अन्तर लगा रहता है, ये ऐसे पुष्ट संकल्प होते हैं कि दूसरे व्यक्ति के कमजोर मस्तिष्क में दृढ़ता से प्रवेश कर जाते हैं और वह उन पर विश्वास कर लेता है । संकेत या इन नई प्रेरणाओं द्वारा ही अन्तर्मन की पुनः शिक्षा प्रारम्भ होती है और उसमें नवीन प्रवृत्तियाँ उत्पन्न की जाती हैं । दृढ़तर मस्तिष्कों की सूचनाओं से ही मानव ज्ञान की तृप्ति एवं गुण का विकास हुआ है । इन सूचनाओं के बल पर ही श्रेष्ठ मन निम्न श्रेणी के मस्तिष्कों पर अधिकार तथा शासन करता है । सूचना देने वाले में दृढ़ इच्छा शक्ति (Will power) एवं अपनी शक्तियों में अखंड विश्वास अपेक्षित है । यदि वह विश्वास न रखेगा तो अपनी प्रभावशाली सूचनाओं से अस्थायी लाभ न उठा सकेगा । जितनी ही इच्छा शक्ति एवं आत्म-विश्वास की अधिकता होगी उतनी ही श्रेष्ठ सामर्थ्य उसके संकेतों में आ सकेगी ।

सम्मोहन विद्या की मूल क्रिया संकेत प्रणाली ही है । हिप्नोटिस्ट मनुष्य के अन्तर्मन की सूचनानुगामिता से लाभ उठाता है । मेस्मर तथा लीवो इत्यादि ने मनःसूचना के बल पर उपचार पद्धति खड़ी कर दी । लीवो ने कहा है कि निद्रा तथा निद्रावस्था के समस्त कार्य मनः सूचना द्वारा सम्पन्न होते हैं । सम्मोहित अवस्था में अन्तर्मन को जो भी शुभ और पुष्ट संकेत दिए जाते हैं वह उन्हें ग्रहण कर लेता है । रोग, शोक, व्याधि, उद्विग्नता के स्थान पर उसे रोग निवारक स्वस्थ एवं पवित्र संकेत दिए जाते हैं । इससे रोग दूर हो जाता है ।

सूचनाएँ दो प्रकार की होती हैं—पर सूचना तथा स्वयं सूचना जब कोई दूसरा दृढ़ विश्वासी एक निर्बल व्यक्ति को सूचना देकर शुभ प्रेरणाओं को प्रवेश कराता है तो उसे 'पर-सूचना' का प्रयोग कहते हैं । किन्तु यदि मनुष्य स्वस्थ सूचना देने का कार्य स्वयं अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बहिर्मन से करने लगे और इसी प्रकार अन्तर्मन को स्वस्थ बना ले, तो इस प्रणाली को स्वयं सूचना (Auto-Suggestion) कहेंगे । यदि मनुष्य स्वयं अपने आपको स्वास्थ्य, बल, उन्नति, स्वावलम्बन की सूचनाएँ दिया करें, तो परावलम्बत्व मिट सकता है । मानसोपचार हमें स्वावलम्बी बनाता है । मानसोपचार के इच्छुकों को अपनी इच्छा शक्ति दृढ़ कर स्वयं सूचना पद्धति सीखना चाहिए ।

स्वयं सूचना पर कुछ विद्वानों का मत

प्रायः सभी मानसोपचारकों ने सूचना एवं स्वयं सूचना पर जोर दिया है । डाक्टर पार्किन का मत है—"जानबूझ कर अथवा अनजान में किसी ज्ञानेन्द्रिय द्वारा मन पर जो प्रभाव डाला जाता है, वही सूचना है ।" डाक्टर गणपुले का विचार है कि "स्वयं सूचना सहेतुक भी हो सकती है, अन्हेतुक भी तथा मिश्र स्वरूप भी । उदाहरणार्थ, जब हम रात को सोते समय कहते हैं कि कल प्रातःकाल पाँच बजे उठना चाहिए, तब बहिर्मन को सूचना पहुँचती है । इस स्वयं सूचना को सहेतुक रहना चाहिए । अहेतुक स्वयं सूचना के भी कई उदाहरण दिए जा सकते हैं । परस्पर सम्बन्ध रखने वाली कल्पनाओं के एक स्मरण के साथ दूसरा स्मरण आना इस गुण या बाह्य पदार्थों का इन्द्रियों के विशेष संयोग होने से अहेतुक स्वयं-सूचना का उद्भव होता है । जब आदमी का बहिर्मन एक सहेतुक सूचना अन्तर्मन को देता है, परन्तु वह आदमी नहीं जानता कि सूचना का प्रयोग हो रहा है । इस प्रकार की सूचना में अहेतुकता की भी छाया रहती है इस प्रकार की स्वयं सूचना को मिश्र स्वरूप का कहते हैं ।"

सूचना द्वारा हिप्नोटिस्ट रोगी के मन में नवीन स्वस्थ्य मनः स्थिति उत्पन्न कर सकता है । उसके पुष्ट संकेतों के प्रभाव से रोगी के अन्तर्मन के विकार प्रलाप, मिथ्या भय, सन्देह नींद का न आना, तुतलाना, मृगी, कुत्सित कल्पना तथा संतृप्त रहना दूर कर सकता है । वह उसके अन्तर्मन में से आरोग्य विवात्मक धारणाएँ निकालकर शुभ मनःस्थिति स्थिर कर सकता है ।

सम्मोहन शक्ति कैसे उत्पन्न करें ?

दो मनों के सिद्धान्त तथा सूचना के प्रभाव को समर्थ लेने के पश्चात पाठक को निम्नलिखित साधनाओं द्वारा सम्मोहन शक्ति उत्पन्न करनी चाहिए । प्रायः प्रत्येक दृढ़ निश्चयी उच्च विचार एवं उत्तम आचरण वाला सत्य पुरुष इस कार्य को कर सकता है । हममें से प्रत्येक व्यक्ति जानता है कि अपनी उन्नति, पुष्ट विचार, दृढ़ संकल्प के अनुपात में हम अपने से निम्न स्थिति, मानसिक विकास वाले व्यक्तियों को प्रभावित कर सकता है । जो व्यक्ति अपनी शक्ति, उन्नति तथा सामर्थ्य में जितनी दृढ़तापूर्वक विचार करेगा और स्थिर रहेगा, उसे हिप्नोटिज्म विद्या में उतनी ही सफलता प्राप्त होगी ।

सम्मोहन शक्ति की उत्पत्ति के लिए निम्न तत्वों की अत्यन्त आवश्यकता है—

(१) मन में दृढ़ इच्छा शक्ति का प्रादुर्भाव यह विचार तथा संकल्प कि मैं जिसको सम्मोहित करुँगा अवश्य सम्मोहित करने में सफल हो सकूँगा । चाहे जैसा व्यक्ति हो मुझे अपने मनोरथ में सिद्धियाँ प्राप्त होंगी ।

(२) **सूचना-शक्ति की वृद्धि**—इस शक्ति के द्वारा आप अपने शब्दों, वाक्यों, अंग संचालन, नेत्रों तथा वचनों में ऐसी दृढ़ता उत्पन्न कीजिए कि आप जो कहें, वह निर्बल मस्तिष्क में प्रवेश कर जाय और उस पर स्थायी प्रभाव डाले ।

(३) **मार्जन (Passes)**—अर्थात् अपने हाथों को रोगी के सामने इस प्रकार हिलाना या संचालन करना कि आपका विद्युत प्रवाह अदृश्य द्वारा रोगी के मन में प्रवेश कर जाय ।

हस्त संचालन के अभ्यास के लिए 'अखंड-ज्योति' प्रकाशन की 'मेस्मरेज की शिक्षा' नामक पुस्तक को पढ़ना चाहिए । मार्जन द्वारा वायु में एक प्रकार की हलचल उत्पन्न कर स्वस्थ कम्पन रोगी के मस्तिष्क में प्रविष्ट कराई जाती है । इससे निद्रा आ जाती है । आगे के पृष्ठों में हम विस्तार से इस तत्व पर विचार करेंगे ।

नेत्रों में सम्मोहन शक्ति

नेत्र में सम्मोहन शक्ति उत्पन्न करने के लिए कई नियम स्मरण रखिए । एक छोटा-सा काला घेरा आधे इंच लम्बाई का बनाते हुए यह जितना अधिक काला हो सके बना लीजिए । इसे पुठ्ठों पर चिपकाकर दूर टाँग दीजिए । अपने कमरे में शान्ति से कुर्सी पर इस प्रकार बैठिये कि यह घेरा तीन फीट दूरी पर रहे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रीढ़ तथा सिर सीधा रखिए । अब इस काले निशान पर नेत्र केन्द्रित कीजिए और बिना पलक मारे इसे देर तक देखने का अभ्यास कीजिए । आधा मिनट से एक मिनट तक इसी प्रकार अपलक दृष्टि से देखने का अभ्यास डालिए । जब आप निशान पर दृष्टि केन्द्रित करें तो निशान के अन्दर देखिए ।

काले-निशान को तेजी से देखिए तथा मन में सोचिये मेरी दृष्टि में सम्मोहन-बल क्रमशः एकत्रित हो रहा है । मैं जिसे देखता हूँ उस पर प्रभाव पड़ता है, अपनी दृढ़ शक्ति को मैं अपनी दृष्टि के माध्यम द्वारा फेंकता हूँ । मैं दृढ़ निश्चय वाला व्यक्ति हूँ । इस विचारधारा को दृढ़ता से मन में घुमाइये और दृष्टि द्वारा प्रकट कीजिए । इस त्राटक से धीरे-धीरे दृष्टि में ऐसी ताकत आ जावेगी कि आप थोड़ी देर देखकर ही दूसरे को अपने वश में कर सकेंगे । दृष्टि केन्द्रित करने का अभ्यास शीशे में अपने ही नेत्रों को देखकर भी हो सकता है । अभ्यास करते समय आपको चाहिए कि सब ओर से ध्यान हटाकर केवल एक निर्दिष्ट वस्तु की ओर केन्द्रित करें । ध्यान तथा दृढ़ इच्छा शक्ति से केन्द्रित होने वाले नेत्रों में आश्चर्जनक शक्ति एकत्रित हो जाती है । इस कार्य में लगभग १ मास का समय लग जाता है । बिन्दु या शीशे के पश्चात् छोटे-छोटे बच्चों पर अभ्यास करना चाहिए ।

हाथ तथा आवाज

मनुष्य के आकर्षण एवं प्रभाव डालने के तीन अंगों नेत्र का वर्णन हो चुका है । प्रभाव के अन्य केन्द्र हाथ तथा आवाज हैं । हाथ द्वारा हिप्नोटिस्ट अपना व्यक्तिगत आकर्षण पात्र में प्रवेश कराता है, अपनी व्यक्तिगत विद्युत से वह रोग परिहार कर सकता है । इसी प्रकार आवाज का प्रभाव मनुष्य के अन्तर्मन पर पड़ता है । जिस प्रयोगकर्त्ता की सूचनाएँ दृढ़, स्पष्ट एवं स्थिर स्थान में दी जायेंगी, उसका प्रभाव शीघ्रता से पड़ेगा । प्रयोगकर्त्ता मधुर ध्वनि में सहानुभूतिपूर्ण शब्दों में जो कुछ कहता है, उसका सम्मोहनकारी प्रभाव पड़ता है ।

प्रयोगकर्त्ता हस्त संचार करते समय अपने हाथ का पंजा खुला रखे और जरा टेढ़ा करके स्थिरतापूर्वक हस्त संचालन करे । सूचना देते समय आपकी आवाज धीमी किन्तु स्पष्ट हो, प्रत्येक शब्द धीरे-धीरे निश्चयपूर्ण स्वर में उच्चारित किया जाय । उसमें प्रेम तथा सहानुभूति की मिठास हो । दृष्टि, हाथ तथा आवाज के साथ-साथ प्रयोगकर्त्ता की दृढ़ इच्छा शक्ति निरन्तर अपना कार्य करती रहे ।

पात्रों का चुनाव

इस विद्या के प्रारम्भिक अभ्यास के लिए ऐसा व्यक्ति चुनिये जो स्वयं मोह-निद्रा से सम्मोहित हो जाना चाहता हो । स्वेच्छा होने से प्रारम्भ में आपको सहायता मिलेगी । अनिच्छा होने से प्रारम्भ में कठिनाई पड़ सकती है । सुने हुए व्यक्ति को किसी एकान्त स्थान में ले जाकर उन्हें सम्मोहित क्रिया की आवश्यक जानकारी करा दीजिए । आप उनसे कहिए कि तुम्हें हस्त संचालन द्वारा यह मोह-निद्रा में प्रवेश करा देंगे, तुम्हें नींद आ जावेगी, हम तुम्हें आराम पहुँचा देंगे, मोह-निद्रा में उपचार कर तुम्हारी मानसिक व्याधियाँ दूर कर देंगे । जब तुम ठीक हो जाओगे तो तुम्हें जाग्रत कर देंगे । हम तुम्हें जो भी आज्ञा देंगे, तुम वही करते जाना । हम तुम्हें मन में जैसा विचार करने के लिए कहेंगे, तुम वैसा ही करना । तुम वैसा ही अनुभव करना जैसा हम तुम्हें आज्ञा देंगे । तुम देखोगे कि तुम्हारा मन, हृदय और अनुभूति हमारे अधिकार में रहेंगे । तुम्हारा रोग मिटता जायेगा, तुम आराम का अनुभव करोगे, मैं तुम पर एक मनोवैज्ञानिक परीक्षण कर रहा हूँ । मैं केवल तुम्हारे अन्तर्गत की अर्धविकसति या अविकसित मनोवृत्तियों का अध्ययन करना चाहता हूँ । सम्मोहित हो जाने से तुम्हारे उपचार की अधिक सम्भावना है । सम्मोहन द्वारा सैंकड़ों रोग दूर हो गए हैं इत्यादि इत्यादि । ऐसा समझाने से सम्मोहनकारी को किसी प्रकार का सन्देह न होगा ।

पहली परीक्षा—आपने पात्र (रोगी) का चुनाव कर लिया । इसे किसी शान्त स्वच्छ एवं एकान्त स्थान में ले जाइये । उसे एक कुर्सी पर बैठा दीजिए, स्वयं सामने कुर्सी पर बैठ जाइये । आप उससे कहिए, "देखो भाई, अब हम तुम्हें हस्त संचालन द्वारा मोह-निद्रा में प्रवेश करायेंगे । तुम अपने पट्ठों में थकावट लाने का प्रयत्न करो, उनका खिंचाव दूर करो अर्थात् उन्हें ढीला छोड़ दो, आराम से बैठो । अब तुम थकान महसूस कर रहे हो, धीरे-धीरे थक रहे हो, अब थक गए और अधिक थक गए । अब तुम बिलकुल थक गए ।" अच्छा, अब मैं यह देखता हूँ कि तुम थकावट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का भाव ला सके हो या नहीं । मैं तुम्हारी मनोवैज्ञानिक परीक्षा प्रारम्भ करता हूँ । तुमको आज्ञा देता हूँ कि तुम अपने बाएँ हाथ को दाहिने हाथ की अनामिका उँगली के ऊपर इस प्रकार रखो कि वह सारा हाथ उस पर आ जाय । अर्थात् तुम अपने हाथ को इतना शिथिल करो कि वह उँगली पर रखा रहे । यदि उँगली हटा दी जाय तो वह गिर पड़े । ऐसा समझा कर दो एक मिनट पश्चात आप पुनः पूछिये कि रोगी थकाव का भाव ला सका है या नहीं । आप देखेंगे कि यह प्रारम्भिक थकावट की अवस्था लाने में रोगी को देर लगेगी, किन्तु धीरे-धीरे वह थकावट या अवसाद का भाव लाना सीख जायेगा । कृत्रिम निद्रा लाने के लिए थकावट का अभ्यास सीखना आवश्यक है । कुछ मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि एक दिन में यदि न हो तो दो दिन में, दो दिन में न हो तो तीन दिन में अवश्य ही थकावट लाने में सफलता होगी, किन्तु प्रयत्न (सूचनाओं द्वारा) करते रहना चाहिए । सफलता में विलम्ब देखकर उद्योग रहित हो जाने से उन्नति की आशा नहीं रहती ।"

सम्मोहित होने वाले व्यक्ति को चाहिए कि वह केवल थकान का भाव ही मन में लावे, इधर-उधर के चिंतन में न फँसे । प्रतिदिन थकावट का भाव मन में लाने से कृत्रिम निद्रा लगेगी, किन्तु प्रतिदिन आध घण्टे से अधिक समय तक प्रयोग न किया जाय । सम्मोहित करने की प्रथम अवस्था है, थकावट लाना ।

दूसरी परीक्षा—प्रथम परीक्षा साधक को कई व्यक्तियों पर करनी चाहिए और दूसरी परीक्षा के लिए वही व्यक्ति लेने चाहिए जिन पर प्रथम परीक्षा सही उतरी हो अर्थात् जो पट्ठों में थकावट का अवसर ला सके हों । यदि वे शरीर को ढीला छोड़ने की क्रिया न कर सके तो आगे की परीक्षाएँ न करनी चाहिए ।

एक ऐसा व्यक्ति लीजिए जिस पर प्रथम प्रयोग ठीक-ठीक हो सका है । इस व्यक्ति से कहिए कि वह सीधा खड़ा हो जाय । पाँव मिला ले, हाथ बदन से सटा ले । अब उसे नेत्र मूँदने का आदेश दीजिए । नेत्र मूँद लेने पर उसे पूर्वोक्त प्रकार से अवसाद लाने के लिए कहिए । थोड़ी देर बाद परीक्षा कीजिए कि वह ऐसा कर सका है या नहीं ? वह थकान का अनुभव कर रहा है या नहीं—यह जाँचने के लिए उसके कंधे के पीछे से हाथ रख कर पीछे को तानने की चेष्टा कीजिए । यदि यह व्यक्ति सहज ही में पीछे पड़ जाता है तो समझ लीजिए कि थकावट या अवसाद का भाव उत्पन्न हो गया है । यदि उसके पट्टे सख्त हैं तो समझिए कि वह अभी वैसा ही है, निश्चेष्ट नहीं हुआ है । यदि थकावट लाने की क्रिया ठीक तरह हो सकी है तो आप आगे चलिए ।

उसे इस प्रकार समझाइये, "देखो भाई, हम तुम्हें कृत्रिम निद्रा में प्रवेश कराने वाले हैं, हम तुम्हें जो सूचनाएँ देंगे, वे तुम्हारे योग्य हैं, तुम्हें मान लेनी चाहिए, विघ्न न करना चाहिए । आदेश अनुसार काम करते जाना । तुम्हारी इच्छा जो कुछ कहे उसी के अनुसार काम करते जाना, इच्छा विरुद्ध कार्य न करना । यदि तुम्हारी इच्छा है कि लेटे रहें और सो जायें, तो व्यर्थ ही जागते रहने की चेष्टा मत करना, नींद को आने देना, आँखें जबरदस्ती मत खोले रहना या खड़े न हो जाना । मैं तुमसे जैसे भाव लाने का आदेश दूँ, वैसे ही भाव लाना दूसरी तरह के नहीं, अच्छा अब मैं तुम्हें सम्मोहित करता हूँ । तैयार रहो ।"

आप उससे सीधा खड़े होने के लिए कहिए । अपने बाएँ हाथ से उसका मस्तक पीछे से पकड़ कर अपनी दाहिनी हथेली पर उसे अपने मस्तक का सारा बोझ डाल देने के लिए कहिए । फिर दाहिने हाथ से उसका मस्तक ऊपर करके उसे पीछे पड़ जाने के भाव में लाने का आदेश दीजिए । उससे कहिए—"तुम मन में ऐसा भाव लाओ मानो पीछे गिर रहे हो, पीछे को पड़े जाते हो, पड़े जा रहे हो । तुम इसी प्रकार के विचार तेजी से मन में लाते जाओ । देखो तुम्हारा सारा बोझ मेरी हथेली पर आ गया है । तुम तेजी से पीछे पड़े जा रहे हो । मेरे हाथ हटाते ही गिर पड़ोगे । तुम गिरे-तुम गिरे । ऐसा कह कर धीरे से हाथ हटाओ । अपने हाथ पीछे को ताने रहो, क्योंकि रोगी अवश्य गिरेगा । यदि न सम्हाला गया तो धड़ाम से गिर कर चोट खा जायेगा ।

सम्मोहन विद्या सीखने वाले को चाहिए कि वह ऊपर की परीक्षा का अभ्यास काफी दिनों तक करे । दक्षता प्राप्त कर लेने पर ही आगे के प्रयोग करे । यह ध्यान रहे कि सम्मोहित मनुष्य उपचारक के कार्य में किसी प्रकार की बाधा न पहुँचाए । अतः यह पहले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही मालूम कर लीजिए कि सम्मोहित व्यक्ति क्या-क्या बात चाहता है । श्रीयुत प्रकाश की राय है कि यह कहना भी अनुचित न होगा कि मनुष्य हृदय के भावों का विचार करना सम्मोहन शिक्षा का मूल मन्त्र है ।

तीसरी परीक्षा—रोगी को सीधा खड़ा कीजिए । आप उसके सामने खड़े हो जाइये । उससे कहिए कि वह अवसाद या थकावट का भाव मन में लाये । तत्पश्चात उसके चेहरे का पीछे का भाग छूकर १०-१५ सेकण्ड तक चुप रहिए । उससे धीरे-धीरे कहिए, "देखो भाई, जिस समय दोनों हाथ तुम्हारे चेहरे से खींच लिए जायें, तुम सामने की ओर गिर पड़ोगे, यही होने वाला है । तुम इसी प्रकार के भाव मन में लाओ ।" धीरे-धीरे अपने हाथों को सरकाते जाओ । तुम देखोगे कि हाथ हटाते ही तुम्हारे संकेतों के प्रभाव से व्यक्ति सामने को गिर पड़ेगा । यदि रोगी निरन्तर उसी प्रकार के विचार मन में लाता रहा है, तो वह अवश्य गिर पड़ेगा ।

चौथी परीक्षा—गत परीक्षा से व्यक्ति आगे बढ़ गया है, उसी को प्रयोग के लिए लीजिए । उसे सरल भाव से खड़े होने के लिए कहिए । आदेश दीजिए कि वह उंगलियाँ मिलाकर अपना हाथ मजबूती से जकड़ ले । इस अवस्था में आ जाने पर उसे संकेत दीजिए "तुम्हारे दोनों हाथ मजबूती से जकड़ गए हैं । अब अलग न होंगे । तुम उन्हें पृथक् नहीं कर सकते, नहीं कर सकते, यह सम्भव नहीं ।" उससे कहिए कि वह ऐसा सोचे और पुनः-पुनः उन्हीं संकेतों में रमण करे । आदेश फिर देना शुरू कर दें । सीधे उसकी भौंहों के मध्य में देखते रहें । अपनी इच्छा शक्ति डालते रहें । आपके संकेत ऐसे हो सकते हैं । तुम्हारे हाथ अलग न हो सकेंगे । तुम दोनों हाथ अलग नहीं कर सकते, नहीं, नहीं, हाथ अलग नहीं होंगे ।" अपके नेत्र उस व्यक्ति की भौंहों पर अड़े रहें और सूचनाएँ भी चलती रहें । आप देखेंगे कि सम्मोहित व्यक्ति के दोनों हाथ पृथक् न हो सकेंगे ।

क्रमशः इन चारों प्रयोगों के पश्चात उपचारक सम्मोहन विज्ञान की एक सीढ़ी पार कर लेता है । अभी तक हमने जाग्रत अवस्थाओं के प्रयोगों का जिक्र किया है । पाश्चात्य मनोविज्ञान के अनुसार साधक को कृत्रिम निद्रा लाने से पूर्व सम्मोहित मनुष्य के अन्तर्जगत की जानकारी प्राप्त कर लेनी चाहिए । उससे सहानुभूति और सहृदयता से बातें करने में आप उसकी अनेक गुप्त बातें मालूम कर सकते हैं । हिप्नोटिज्म का उपयोग केवल चमत्कार प्रदर्शन के लिए नहीं, रोग परिचय के लिए भी किया जाता है । बाजार में बाजीगर तथा भाषण देता हुआ व्याख्याता जिस सम्मोहन विद्या का उपयोग करता है, वह जाग्रत अवस्था में प्रयोग करने के लिए लिखी गई है ।

मोह निद्रा—हिप्नोटिज्म द्वारा अनेक मानसिक रोगों को मिटाया गया है, किन्तु इसके लिए हिप्नोटिस्ट को कृत्रिम निद्रा का उपयोग करना पड़ता है । निद्रित करने की अनेक विधियाँ हैं । वास्तव में सम्मोहन द्वारा निद्रा नहीं आती, एक प्रकार की तन्द्रा सी आती है । उसका शरीर निश्चेष्ट हो जाता है, पर मन जाग्रत बना रहता है । मन की निम्न भूमिकाओं में बैठी हुई कुटिल भावना ग्रन्थियाँ, उपचारक के तर्क, विश्वास, सूचना, प्रश्नों से ऊपर आ जाती हैं । वह अन्तर्मन की जटिल भावनाओं को जान कर मानसिक रोग का कारण समझ लेता है । अतः यह कृत्रिम निद्रा हिप्नोटिज्म के लिए आवश्यक हो जाती है ।

प्रारम्भिक प्रयोग के लिए ऐसा व्यक्ति चुनिए जिस पर जाग्रत अवस्था में आप कुछ परीक्षाएँ कर चुके हैं । उसे आराम से बैठा दीजिए या किसी गद्देदार बैंच या खाट पर चित्त सीधे पाँव लेटने के लिए कहिए । उससे कहिए के वह शान्त चित्त हो, नेत्र मूंद कर अपने पट्टे ढीले कर ले, शरीर और मन को शिथिल कर ले, सब ओर से विचार हटा कर वह थकावट के भाव मन में लावे । ऐसा सोचे जैसे उसे नींद आ रही है, क्रमशः वह सोया जा रहा है । इस भावना पर दृढ़ता से चित्तवृत्तियाँ लगाने से वह शीघ्र ही निद्रा मग्न हो जायेगा । जब वह ऐसा कर रहा हो, सोने लगा हो उसके पास खड़े हो जाइये, या बैठ जाइये और एकाग्रता से उसकी नासिका की जड़ में देखिए । अपनी दृष्टि द्वारा अपनी इच्छा शक्ति प्रविष्ट कराएँ । मन ही मन यह संकेत दीजिए—"मैं अपनी प्रबल इच्छा शक्ति द्वारा इस व्यक्ति को निद्रा में प्रविष्ट करा रहा हूँ । यह सो रहा है । नींद आ रही है, खुमारी चढ़ रही है । अब पात्र तन्द्रा में निमग्न हो रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेरी व्यक्तिगत विद्युत-शक्ति ने पात्र को सुला दिया है ।"

आप उचित समझें तो हस्त संचालन भी प्रारम्भ कर दें । सिर से धीरे-धीरे हाथ को घुटनों की ओर लाइये । मार्जन के प्रयोग में आप उचित स्थान ग्रहण कर लें । हाथ कुछ अन्दर की ओर मुड़ा रहे । आप अत्यन्त धीरे से हाथ मोड़ कर उसका शरीर छूते हुए नीचे की ओर ला सकते हैं । जब आप मार्जन का प्रयोग कर रहे हों तो धीरे-धीरे यह संकेत दीजिए—"तुम सो रहे हो, नींद, मधुर नींद, तुहारे शरीर को निश्चेष्ट कर रही है । सो आओ, निद्रित हो जाओ प्रगाढ़ निद्रा में निमग्न हो जाओ । तुम्हारे नेत्र मुंदे जा रहे हैं । तुम अपने नेत्र नहीं खोल सकते, तुम्हारा मन शान्त, निर्मल हो रहा है, तुम कुछ देख नहीं सकते, क्योंकि तुम अब सो गए हो ।" ऐसे अनेक पुष्ट संकेतों द्वारा पात्र में प्रविष्ट करा दीजिए । संकेतों को बार-बार दुहराइये ।

कृत्रिम निद्रा बुलाने के लिए और उपाय जानने के लिए 'अखण्ड ज्योति' कार्यालय की 'मेस्मेरिज्म की अनुभवपूर्ण शिक्षा' के पृष्ठ ३२-३८ पढ़िए । निद्रा के पश्चात पात्र आपके प्रयोगों के लिए तैयार हो गया । स्मरण रखिए, उसका अन्तर्मन अब भी जाग्रत है । केवल शरीर तन्द्रावश हो गया है । रोग परिहार अथवा अन्य चमत्कारों के लिए पात्र तैयार है । निद्रा में मनुष्य का शरीर लोहे जैसा सख्त बनाने का कार्य आप कर सकते हैं ।

डॉ. गणपुले ने हिप्नोटिज्म के चमत्कारों का वर्णन करते हुए लिखा है, निद्रा में लीन व्यक्ति की नाक में अमोनिया डाला जाता है, पर उसे वास भी नहीं आती, अत्यन्त कड़वा पदार्थ मिष्ठान की तरह लग जाता है, अथवा कमरे में की कोई वस्तु या मनुष्य, उसके लिए अदृश्य कर देना आदि प्रयोग किए जाते हैं । कई बार निद्रा नियुक्त आदमी को नाना प्रकार के भयंकर एवं विलक्षण दृश्य दिखाए जाते हैं । हमें स्मरण है कि एक बार हमारे सामने एक हिप्नोटिस्ट ने एक तन्द्रित व्यक्ति को काल्पनिक शर्बत का एक प्याला दिया, जिसमें पात्र ने शर्बत का स्वाद और गंध का मजा लिया । एक बार हिप्नोटिस्ट ने एक निद्रा नियुक्त व्यक्ति से भिन्न-भिन्न आदमियों जैसे कार्यों का अभिनय कराया । कभी वह अपने कल्पना-जन्य साथियों के साथ कल्पना खिलौनों के साथ ६ वर्ष का बालक बनकर खेलता, कभी १६ वर्ष की लज्जावती युवती बनता और कभी शत्रु पर आक्रमण करने के लिए सेनानायक का अभिनय करता ।

जब तक संसार में मनोविज्ञान का प्रचार नहीं हुआ था, तब तक हिप्नोटिज्म को एक जादू समझा जाता था । आज हिप्नोटिज्म के गूढ़ समझे जाने वाले सिद्धान्त स्पष्टतः समझे जा सकते हैं । विवेकशील पाठक जानता है कि अन्तर्मन को अपने अधिकार में लेकर संकेत या सजेश्चन द्वारा मनमाने काम कराए जा सकते हैं । पूरे शरीर को, शरीर के अंग-प्रत्यंग को वश में किया जा सकता है, रोग तथा मानसिक व्याधियाँ दूर की जा सकती हैं तथा अनेक प्रकार के आश्चर्य चकित करने वाले खेल दिखाए जा सकते हैं । सम्मोहन शस्त्र के जड़ में केवल एक ही तत्व है, वह है अन्तर्मन का सूचनानुवर्ती स्वभाव । वह पुष्ट संकेतों के बताए मार्ग पर बखूबी चल सकता है । सम्मोहन विज्ञान एक उत्तम उपचार पद्धति है ।

सम्मोहन विज्ञान द्वारा रोग परिहार

सम्मोहन विज्ञान का प्रधान उद्देश्य यही है कि पात्र में सम्मोहनकारी की इच्छानुसार भावों का संस्थापन किया जाय, पुरानी कुटिल अभद्र अनुभव भावना ग्रन्थियों का उन्मूलन किया जाय । मानसिक ग्रन्थियों का निराकरण मनोविश्लेषण द्वारा होता है । कुछ ग्रन्थियाँ इतनी जटिल होती हैं कि चेतन अवस्था में पूछने तथा अध्ययन करने से रोगी कुछ भी नहीं बतलाता, उसका चेतन मन उन अप्रिय स्मृतियों को स्मृति पटल पर नहीं लाने देता । जटिल मानसिक रोगों का उपचार सम्मोहन-विज्ञान की सहायता से होता है । सम्मोहनकारी सर्वप्रथम रोगी को मानसिक जगत् में से विचार-प्रवाह बन्द करने को कहता है । वह उसे एकान्त स्थान में ले आकर शान्त चित्त हो शरीर और मन को शिथिल करने का आदेश देता है । अपने पुष्ट संकेतों द्वारा वह उसे मोह-निद्रा में प्रवेश कराता है । मोह निद्रा आने पर रोगी अपने विषय में अनेक पुरानी बातें, कटु अनुभव,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभद्र प्रसंग, आत्मग्लानि से सम्बद्ध अनेक बातें बतलाता है । किसी भी कटु अनुभव को लेकर बुरे संस्कार से मानसिक जगत में जटिल ग्रन्थि का निर्माण हो सकता है । ये कटु अनुभव अनेक विचारों, संकल्पों, इच्छाओं के नीचे अन्तर्मन के निमम्नतल में जमे रहते हैं । प्रत्येक जटिल मानसिक ग्रन्थि मानसिक विचार का कारण बनती है ।

कुए महाशय का विचार था कि केवल संकेत या सूचना (निर्देश) से रोगी को पूर्ण स्वस्थ किया जा सकता है । निद्रा के पश्चात वे रोगी के अन्तर्मन में स्वस्थ निर्देश डालने के पक्ष में थे । आरोग्य के पुष्ट संकेतों से रोगी को लाभ होता देखा जाता था । फ्रायड महाशय ने इसमें कुछ परिवर्तन किया । उन्होंने कहा कि कुए साहब की पद्धति अपूर्ण है । उसमें स्थायी लाभ पहुँचाने की शक्ति नहीं है, वह केवल ऊपरी सतह तक ही रोगोपचार कराती है । अतः स्थायी स्वास्थ्य लाभ नहीं हो सकता । उस पद्धति में मानसिक ग्रन्थियों का दमन मात्र होता है, उन्मूलन नहीं । मानसिक ग्रन्थियों की जड़ें निकालने से ही, अर्थात् चेतना पर मानसिक रोग का मुख्य कारण लाने पर ही, चिरस्थायी लाभ सम्भव है । इसे रेचन क्रिया कहते हैं । फ्रायड साहब के अनुसार, मानसिक चिकित्सा में पहले रेचन क्रिया हो, फिर निर्देश । पुरानी ग्रन्थियाँ निकलने पर जो आरोग्य, स्वास्थ्य एवं समृद्धि के पवित्र निर्देश अन्तर्मन में जमाए जायेंगे, वे ही स्थायी रूप से पूर्ण लाभ कर सकेंगे ।

सम्मोहन द्वारा रेचन विधि में सहायता मिलती है । मनोविश्लेषण में मोह-निद्रा का प्रयोग किया जाता है । सम्मोहन की निद्रा में रोगी विगत घटनाओं, दुःखद प्रसंगों, सांकेतिक चेष्टाओं, विस्मृतिओं, भूलों को अपनी चेतना पर ले आता है । जटिल ग्रन्थि की खोज हो जाती है । सम्मोहन की निद्रा में रोगी अपनी मानसिक ग्रन्थि चिकित्सक के सामने खोल देता है । रोग का मूल कारण, अर्थात् जटिल ग्रन्थि के निर्माण का कारण मिलते ही सम्मोहनकार का कार्य सरल हो जाता है । मानसोपचारकों का कथन है कि घटनाओं, भूलों, विगत स्मृतियों के चेतना-पटल पर आते ही रोग समूल नष्ट हो जाता है । रोग की जड़ ढूँढने में सम्मोहन का प्रयोग करना पड़ता है ।

मनोविश्लेषण विज्ञान के विशेषज्ञ पहले गुप्त मन की जटिल ग्रन्थियों को रेचन द्वारा दूर करते हैं । उसे बाहर निकालते हैं, दबाते नहीं । दलित भाव का रेचन ही एकमात्र उपाय है । अनेक बार मानसिक ग्रन्थियाँ बिना चेतना की सतह पर आये ही स्वयं नष्ट हो जाती हैं । मोहनिद्रा में ये दलित वृत्तियाँ ऊपरी सतह पर आ जाती हैं और आसानी से समझी जा सकती हैं । अन्तर्मन की गुप्त बातों के अध्ययन के लिए, उनके पुराने दूषित संस्कारों के अध्ययन के लिए मानसोपचारक को सम्मोहन का आश्रय लेना पड़ता है ।

सम्मोहन द्वारा उत्पन्न की हुई मोह-निद्रा में जो भी संकेत रोगी के अन्तर्मन को दिए जाते हैं; वह उन्हें बखूबी ग्रहण करता है । ऐसी अवस्था में स्वास्थ्य, आरोग्य सदाचार, भक्ति, का जो भी निर्देश या सूचना रोगी को दी जायेगी, वह उसे सरलता से ग्रहण कर लेगा । नये निर्माणकारी संकेत देते समय आप निम्नलिखित तीन बातें स्मरण रखिए—

(१) रोगी के मन से रेचन क्रिया द्वारा पुराने दूषित विचार या विश्वास निकाल डालिए । उससे बार-बार प्रश्न कर मालूम कीजिए कि कौन-सा विचार या संस्कार उसे दुःखी कर रहा है ? रोगी बार-बार क्या कहता है ? उसे किस का भय या घृणा है ? इत्यादि इस दबे हुए विचार की चेतना की सतह पर लाने से वह मानसिक पीड़ा दूर हो जायेगी । इस कार्य के लिए उपचारक को मनोविश्लेषण विधि का भी ज्ञान प्राप्त करना चाहिए ।

(२) आप ने मूल ग्रन्थि की खोज करली, उन घटनाओं को चेतना के ऊपर ले आये और पुराने संस्कार तोड़ दिए । अब रोगी के मन को सब विचारों से मुक्त कीजिए । उसमें स्थिरता पैदा कीजिए ।

(३) तृतीय कार्य है नये विचारों का आरोपण । शान्ति, धैर्य, स्वास्थ्य, प्रसन्नता, आनन्द से भरे हुए नवीन संकेत उसे दीजिए । पुनः-पुनः इन्हें दुहराइये । रोगी से कहिए कि वह दृढ़ता से सब तरफ से मन हटाकर केवल अपनी उन्नति, अपने स्वास्थ्य, शक्ति, बुद्धि, प्रगति की पवित्र भावनाओं पर मन को एकाग्र करे । आप उपचार के समय रोगी का विश्वास एवं सहकारिता प्राप्त कीजिए । ऐसा उपक्रम कीजिए कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोगी आपकी सूचनाओं को दृढ़ता से ग्रहण कर ले और प्रत्येक विचार को आचार रूप में परिणत कर दे । अतः अपनी सूचनाओं को बार-बार दुहराइए ।

सम्मोहित व्यक्ति का अन्तर्मन अत्यन्त ग्रहणशील बन जाता है । उसे जो आदेश दिया जाता है, वह उसके विपरीत नहीं जा सकता है । मोह निद्रित अवस्था में आज्ञापालनकारी वृत्तियाँ तीव्रता से कार्य करतीं हैं । कुछ मनोवैज्ञानिकों का विचार है कि ये वृत्तियाँ कुछ अधिक विकसित और तीव्र को जाती हैं और रोगी को जो पुष्ट संकेत दिए जाते हैं, वह उन्हें स्वीकार कर लेता है । अतः उपचारक को निर्देश विधि में पारंगत होना चाहिए ।

उपचारक को चाहिए कि वह अपने महान व्यक्तित्व निश्चयबल, उदात्त चरित्र द्वारा रोगी की श्रद्धा प्राप्त करने का प्रयत्न करे जिससे वह उसके संकेतों में विश्वास कर सके । रोगियों को चिकित्सक की सिद्धि में जितना अधिक विश्वास होगा, उतना ही लाभ होगा ।

मोह निद्रा में लाकर उपचारक रोगों के अनुसार अपने निर्देश या संकेत बना ले और रोगी के मन में प्रविष्ट करा दे । निर्देश-चिकित्सा काफी समय ले सकती है पर चिकित्सक को रोगियों से परेशान न होना चाहिए, सहानुभूति से काम लेना चाहिए । हर प्रकार के मानसिक रोगों का परिहार निद्रित अवस्था में निर्देश करने से होता है । छोटे बच्चों की बुरी आदतें सफलतापूर्वक दूर की जा सकती हैं । व्यसनी व्यक्ति के व्यसन दूर हो सकते हैं । व्यक्तित्व के नव-निर्माण के लिए सवनोपचार सर्वश्रेष्ठ है ।

रेचन क्रिया और निर्देश इन दोनों विधियों द्वारा प्रत्येक व्यक्ति दूसरों की सहायता कर सकता है । यह स्मरण रखना चाहिए कि जो बातें रोगी करता है, चाहे वह प्रलाप मात्र ही है, उससे पूर्व संचित अनेक मानसिक विकारों, रोगों, व्याधियों का रेचन होता है । जैसे-जैसे चेतना समक्ष आती है, जैसे-जैसे चिकित्सक सुन्दर और पुष्ट संकेत देता है, वैसे-वैसे रोगी का रोग दूर होता जाता है । प्रारम्भ में रोगी चिकित्सक का विरोध भी कर सकता है पर अन्त में उसे चिकित्सक के सामने झुकना पड़ता है, वह चिकित्सक की बात मानने लगता है और अन्तः स्वस्थ हो जाता है ।

आत्म-सम्मोहन कैसे करें ?

हिप्नोटिज्म वास्तव में मनुष्य की गुप्त शक्ति का एक नाम है और जब तक मनुष्य समाज में किसी को प्रभावित करने या प्रभावित होने की शक्ति शेष है या जब तक मनुष्य अपनी इच्छा के आश्रित है, तब तक हिप्नोटिज्म भी छायावत् मानव समाज में प्रस्तुत रहेगा । उसके द्वारा मनोविज्ञान द्वारा रोग-परिहार तथा मानसिक व्याधियाँ दूर करने के जो महत्त्वपूर्ण कार्य हुए हैं उनसे मानव समाज बहुत उन्नत और परिपुष्ट हुआ है । सम्मोहन एक ऐसी प्रभावशाली शक्ति है जो मोह निद्रा द्वारा अनेक आश्चर्यजनक कार्य करती है । अब हमें इस शक्ति से अपने ऊपर कैसे आत्म-सम्मोहन करना चाहिए इस पर विचार करेंगे ।

आत्म-सम्मोहन क्या है ? यह मोह निद्रा की वह अवस्था है जिसमें प्रयोगकर्त्ता स्वयं अपने ऊपर सम्मोहन कर सकता है । इसके द्वारा स्वयं परिपुष्ट मन से अपने शरीर पर मोहनिद्रा पैदा कर आवश्यक परिवर्तन, सुधार, रोग-परिहार कर सकता है । इस अवस्था में जिन संकेतों का प्रयोग आत्मसुधार में किया जाता है, उन्हें संकेत कहते हैं । आत्म संकेत की अद्‌भुत शक्ति से बहुत कम लोग परिचित हैं । आत्म-निर्देश द्वारा मनोवैज्ञानिक मनुष्य के गुप्त मन पर प्रभाव डालते हैं और गुह्य मानसिक ग्रन्थियों को चेतना के समक्ष लाकर खोलते हैं । अनेक बेपढ़े लिखे वैद्य मनुष्य के मन की जटिलता पर नहीं सोचते, अतः वे रोगियों की मानसिक ग्रन्थियों का दमन मात्र कर देते हैं । इससे कुछ काल के लिए रोग तो अच्छा हुआ दीखता है किन्तु उत्तेजना पाकर वह पुनः उपस्थित हो जाता है । जब तक रोगी मूल रूप से इन मानसिक ग्रन्थियों को नहीं खोल डालता, तब तक चिरस्थायी लाभ नहीं हो सकता है । रोगी जब अपनी मानसिक व्याधि का कारण ढूँढ़कर उसे अपनी चेतना पर ले आता है, तो मानसिक रोग हो जाता है । भावना ग्रन्थियाँ प्रायः इतनी जटिल होती हैं कि मनोवैज्ञानिक को कारण ढूँढ़ने में बहुत-सा समय लग जाता है । मनोवैज्ञानिक रोगी की कटुअनुभूतियाँ सुनता है, सांकेतिक चेष्टाओं, गालियों, स्वप्नों, भूलों इत्यादि का विश्लेषण करता है । इस पूछताछ के परिणाम में उसे रोगी के विषय में अनेक बीती हुई बातें, दुःख भरे अनुभव मालूम हो जाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वह सोचता है कि किस आघात से रोगी को रोग उत्पन्न हुआ है । अनेक बार रोगी स्वयं अपनी गुप्त बातें बयान नहीं करता । वह शर्माता है कि वह अपनी अनैतिक भूलें उपचारक के सामने कैसे रखे ? कई बार रोगी को स्वयं यह पता होता है कि वह दुःखी क्यों है ? रोग क्यों हुआ है ? किसने उसे आघात पहुँचाया ? उसके मन पर किन-किन आलोचनाओं का दूषित प्रभाव पड़ा ? मन के गुप्त से गुप्त स्थलों में से गुह्य मानसिक ग्रन्थियों के कारण निकालने के लिए सम्मोहन का प्रयोग बड़ा उत्तम रहा है । सम्मोहन द्वारा मोहनिद्रा उत्पन्न की जाती है । उस अचेतन अवस्था में डूबी हुई वासना चेतना पर आ जाती है । रोगी स्वयं अपनी भूली हुई बातें स्मरण कर लेता है, वह उसे सबको बयान करता है । कभी बच्चों जैसा अभिनय करता है । कभी हँसता तथा कभी खिलखिलाता है । मोहनिद्रा में अनेक प्रकार के जीवन अभिनीत होते देखे गए हैं ।

आत्म-सम्मोहन का प्रयोग व्यक्ति अपने आप कर सकता है । आत्म-सम्मोहन आत्म-निर्देश (Suggestion) के माध्यम द्वारा ही सम्पन्न हो सकता है । मन का शरीर पर पूर्ण राज्य है, अतः मानसिक श्रद्धा से पूर्ण जो भी संकेत शरीर को दिए जाते हैं उनका अद्‌भुत प्रभाव पड़ता है । इच्छा शक्ति की दृढ़ता का ही इसमें विशेष हाथ है । अपने रोगों के निवारण में आत्म-सम्मोहन बड़ा हितकर सिद्ध हुआ है । अनेक आत्म-सुधार प्रिय व्यक्तियों ने इसके आश्चर्यजनक प्रयोग दैनिक जीवन में सफलतापूर्वक किए हैं । आत्मसम्मोहन की विधि इस प्रकार है—

एक शान्त कमरे को चुन लीजिए । समय चाहे कुछ भी हो सकता है, किन्तु वह ऐसा रहे जब आप समस्त सांसारिक चिन्ताओं से मुक्त हों । आराम कुर्सी या बैंच अथवा किसी खाट पर चित्त लेट जाइये । शान्त और निश्चेष्ट हो जाइये । अपने शरीर के पट्ठों को शिथिल (Relex) कर लीजिए और अंग-प्रत्यंग को निश्चेष्ट करते जाइये । अपने मन से सब विचारों को हटाकर निद्रा पर केन्द्रित कीजिए । ऐसा सोचिए जैसे आप धीरे-धीरे निद्रित होते जा रहे हैं, अंग-प्रत्यंग शिथिल हो रहे हैं, निद्रा आपके ऊपर अपना प्रभाव दिखा रही है । मन ही मन आप निम्न संकेतों को दुहरा सकते हैं—

"मैं आलस्य का अनुभव कर रहा हूँ । मेरा मन थक गया है, विश्राम चाहता है, मेरे अंग शिथिल होते जा रहे हैं, मुझे नींद आ रही है, मेरे नेत्र मुंदे जा रहे हैं, मेरा शरीर शिथिल हो जा रहा है, मैं इधर-उधर हिलडुल भी नहीं सकता, निद्रा ने मेरे शरीर को अभिभूत कर लिया है । अब मैं अधिक देर तक जाग्रत नहीं रह सकता । शीघ्र ही सो जाऊँगा ।

जब आप पूरी तरह निश्चेष्ट हो जायें और निद्रा आने को हो तब ऊपर लिखे संकेत लेने के पश्चात और जब आप अर्द्ध निद्रित अवस्था में पहुँच जायें, तब अपने किसी रोग को दूर करने की सूचना देना प्रारम्भ कर दीजिए । यदि आप रोगी नहीं हैं तो मानसिक शक्तियों के विकास या किसी अनुचित आदत को दूर करने का निर्देश दीजिए । मान लीजिए आप सिगरेट पीते हैं और आत्म-निर्देश द्वारा इसे दूर करना चाहते हैं । आपको वह आदत मित्रों की संगति से लगी है और आप उसके ऐसे हीन दास बन गए हैं कि उसके पंजे से छूटना दुष्कर प्रतीत होता है । इस बुरी आदत से मुक्त होने के लिए आप अपने अन्तर्मन को निम्न संकेत देना प्रारम्भ कीजिए । संकेत से पूर्व आप सम्मोहित निद्रा में निमग्न हों तथा शरीर शिथिल एवं निश्चेष्ट हो—

"मैं अब सिगरेट नहीं पीऊँगा, मैं अब कभी धूम्रपान न करूँगा, इस समय बुरी आदत को सदा सर्वदा के लिए छोड़ता हूँ, मेरा संकल्प दृढ़ है, मैं प्रतिज्ञा से मुड़ूँगा नहीं—वह मुझे लुभा नहीं सकती, मैं प्रलोभनों से बहुत ऊँचा हूँ, वह आदत छूट गई है । मैं अब पवित्र, निर्विकार, निर्मल हूँ ।

इन संकेतों में रमण करते हुए निद्रा-निमग्न हो जाइये जब तक पूरी निद्रा न आये, तब तक इन्हीं को पुनः-पुनः दुहराते जाइये । यदि नींद न आवे तब भी पन्द्रह से बीस मिनट तक इन्हीं संकेतों को श्रद्धापूर्वक दोहराते रहिए । यह अभ्यास दिन में दो बार होना चाहिए । हफ्ते भर भी प्रयोग चल सकता है । आप देखेंगे कि यह भावना गुप्त मन में गहराई तक बैठ जायेगी और आपके कार्य उसी से निर्देशित हो जायेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिगरेट की ओर से स्वयं एक प्रकार की विरक्ति होती जायेगी ।

आप अपने इन संकेतों को शीघ्रता से फलीभूत करने के लिए एक अभ्यास और कर सकते हैं । सोने से दस मिनट पूर्व आप यह सोचिए कि सिगरेट पीने की आदत अत्यन्त निंद्य है । इसी प्रकार सोकर शैय्या से उठने के पूर्व आप इस गन्दी आदत से मुक्त होंगे, और धीरे-धीरे हो रहे हैं, सोचिए कि धूम्रपान की ओर आपकी प्रवृत्ति नहीं होगी, आप उधर भूलकर भी न जायेंगे । यदि आपके सामने कोई व्यक्ति सिगरेट पीयेगा तब भी आप उस ओर आकृष्ट न होंगे । कोई भी आपको आपके दृढ़ संकल्प से नहीं हटा सकता । आप उन व्यक्तियों की कल्पना कीजिए जो बिना सिगरेट पीये प्रसन्न और संतुष्ट रहते हैं ।

इससे भी सुन्दर विधि यह है कि आप अपने संकेत एक कागज पर दर्ज करते जाइये । अक्षर बड़े और लिखावट साफ हो, जिससे पढ़कर भाव तुरन्त मन में उत्पन्न हो जाय । इन सेकेतों को आप कई बार पढ़ लिया करें । प्रति बार दो-तीन मिनट तक मन को उन पर दृढ़ता से केन्द्रित किया करें । इनका अद्‌भुत प्रभाव आप सिगरेट के प्रति आन्तरिक विरक्ति के रूप में देखेंगे । यह विधि पहले साधन के साथ भी मिलाई जा सकती है । सायंकाल, सोने से पूर्व और प्रातःकाल उठने पर आप अपने इन लिखित संकेतों की पुनरावृत्ति कर सकते हैं ।

जब हम किन्हीं संकेतों को लेकर निद्रा में प्रवेश करते हैं तो रात्रि में उनका बड़ा अद्‌भुत प्रभाव हमें मिलता है । हमारा गुप्त मन तो सदैव बड़ा सतर्क और चौकस रहता है । वह कोई भी विचार ग्रहण कर लेता है तो रात-रात में उसका प्रभाव सम्पूर्ण शरीर पर छोड़ जाता है । प्राकृतिक निद्रा से पूर्व दिए गए आत्म-निर्देश आपकी प्रचुर सहायता कर सकते हैं ।

पाठक यह जानना चाहेंगे कि पुरानी आदतें, रोग, बुरा स्वभाव त्यागते और नया ग्रहण करने में कितना समय लग जायेगा ? इसके लिए हमें मन में अपनी निष्ठा, दृढ़ता, और संकेत की शक्ति से अनुपात को देखना पड़ेगा । जितनी सच्चाई, आत्म-श्रद्धा और दृढ़ता से आप मोह निद्रा में निर्देश करेंगे, उतनी ही सफलता प्राप्त हो सकेगी । समय आपकी ग्रहण शक्ति पर निर्भर है । यदि आप बहुत ग्रहणशील हैं तो आप तीन-चार दिन में ही अपने रोग का परिहार कर सकेंगे, किन्तु कुछ रोगों में एक सप्ताह का अभ्यास आवश्यक हो जाता है । यदि किसी विद्यार्थी में कम ग्रहणशीलता हो तो उसे कई सप्ताह भी लग सकते हैं ।

अपने व्यक्तित्व में से रोग परिहार करने या स्वभाव के बुरे अंशों पर विजय पाने के लिए साधक को आत्मश्रद्धा, सच्चाई और खूब दृढ़ता से काम लेना चाहिए । उसे केवल सोचना ही नहीं प्रत्युत यह समझना चाहिए कि हम अपने उद्देश्य में धीरे-धीरे सफल होते जा रहे हैं । आपके यह संकेत केवल विचार या वाणी तक ही सीमित न रहें, बल्कि कार्य रूप में परिणत होने चाहिए । आप जैसा कहते हैं वैसा ही कीजिए भी, तभी आप संकल्पों में सफल हो सकेंगे ।

यदि आपमें कोई बुरी आदत है, रोग या दूषित मनोवृत्ति है, तो उसी पर प्रयोग प्रारम्भ कर दीजिए । हल्की-सी मोह निद्रा उत्पन्न कीजिए और फिर गुप्त मन को अपने शुभ संकेत दृढ़ता से दीजिए । यदि आप शर्मीले, डरपोक या आलसी हैं, तो मोहनिद्रा में इन दुर्बलताओं से मुक्ति पा सकते हैं । यदि आप खर्चीली तबियत के हैं, या मन बहुत ललचाता है, तो मन की चंचलता इस विधि से नष्ट कर सकते हैं । पौरुष, बल, वीर्य, साहस, नियमितता, एकाग्रता की शक्तियाँ इसी निर्देश-विधि से विकसित की जा सकती हैं । यदि आप सुबह को जल्दी उठने की आदत डालना चाहते हैं, तो सोने से पूर्व ही मन ही मन कहिए—"मैं कल सुबह चार बजे उठ जाऊँगा, सोता नहीं रहूँगा, ठीक चार बजे के आस-पास मेरी आँख खुल जायेगी ।" दो-चार बार ये संकेत लेने से आपमें जल्दी उठने की आदत आयेगी । अपने व्यक्तित्व को जिधर चाहें उधर मोड़ लेना आपके हाथ की बात है ।

सम्मोहन की तीन दशाएँ—सम्मोहन और मेस्मेरिज्म का बड़ा अन्तर यह है कि मेस्मेरिज्म में प्रयोग किए जाने वाले को कुछ हलचलों के द्वारा बेहोशी और जाग्रत अवस्था की भिन्न-भिन्न दशाएँ उत्पन्न की जाती हैं, किन्तु सम्मोहन में संकेतों के द्वारा । संकेतों का विशेष महत्त्व है । मेस्मेरिज्स में प्रत्येक व्यक्ति को प्रभावित किया जा सकता है, किन्तु हिप्नोटिज्म द्वारा नहीं । उदाहरणार्थ, चार वर्ष का बच्चा या उससे कम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आयु का बालक मेस्मेरिज्म द्वारा प्रभावित किया जा सकता है, किन्तु हिप्नोटिज्म द्वारा नहीं । मेस्मेरिज्म के प्रयोग किए जाने वाले की आँखें खुली रहती हैं, किन्तु हिप्नोटिज्म में या तो वे बिल्कुल ही या किसी प्रकार बन्द हो जाती हैं । मेस्मेरिज्म की निद्रा शान्तिदायक होती है किन्तु हिप्नोटिज्म की नींद से थकान, सुस्ती उत्पन्न होती है । मेस्मेरिज्म के द्वारा निद्रा देर में आती है और कभी-कभी नहीं आती, किन्तु हिप्नोटिज्म में शीघ्र और अवश्य आती है । सम्मोहन के प्रयोग द्वारा किए जाने वाले के ऊपर निम्नलिखित तीन दशाएँ की जा सकती हैं—

(१) **कैटेलेप्सी** (Catalepsy)—इस दशा में प्रयोग किए जाने वाला प्रयोगकर्त्ता की बिना आज्ञा कोई अंग-प्रत्यंग नहीं हिला सकता (२) **धोखा** (Illusion) इस दशा में प्रयोग किए जाने वाले की दृष्टि में कोई वस्तु दिखाई देती है, किन्तु वास्तव में वह वस्तु कुछ और ही होती है । (३) **गलत ख्याल** (Hallucination) इस दशा में प्रयोग किया जाने वाला गलती से एक चीज को दूसरी मान लेता है । उपरोक्त तीनों अवस्थाओं में प्रयोग किए जाने वाले की चित्त वृत्ति पर प्रयोगकर्त्ता का अधिकार रहता है । अतः प्रयोगकर्त्ता में दृढ़ इच्छा शक्ति और उन्नत एवं परिपुष्ट मस्तिष्क की नितान्त आवश्यकता है । चिरकाल तक चित्त को एकाग्र रहने का, जो इन प्रयोगों का मुख्य साधन है, काफी अभ्यास न होने पर सम्मोहन में निश्चित सिद्धि नहीं मिलती और प्रयोगकर्त्ता का समय एवं प्रयत्न व्यर्थ हो जाता है । इन प्रयोगों में परोपकार बुद्धि की भी पूर्ण आवश्यकता है । क्योंकि व्यक्तिगत स्वार्थ—धन पिपासा, कुत्सित इच्छाओं की पूर्ति, हानि पहुँचाने या ईर्ष्या द्वेष के भावों से प्रयोगकर्त्ता की इच्छा शक्ति कुंठित हो जाती है । प्रायः देखा गया है कि ऐसे दुष्ट विचारों वाले प्रयोगकर्त्ता कुछ भी नहीं कर पाते । सात्विक मनोभाव, दूसरों की सहायता, रोग-निवारण, परोपकार आदि के मनोभावों से हमारी सभी शक्तियाँ अपना कार्य तेजी से करती हैं । चरित्र की निष्ठा भी एक कारण है । निर्मल चरित्र वाले, शुद्ध विचारों वाले परोपकारी प्रयोगकर्त्ता जो पूरे धैर्य और आत्म-श्रद्धा से प्रयोग करते हैं, अवश्य सफल रहते हैं ।

कैटेलैप्सी कैसे उत्पन्न करें ?—कैटेलैप्सी क्या है ? यह मनुष्य की वह निष्क्रिय, निश्चेष्ट, शिथिल अवस्था है जिसमें उसकी सम्पूर्ण शक्तियाँ निर्बल हो जाती हैं और उसमें मूर्तिवत् जड़ता आ जाती है । इस दशा में प्रयोग किया जाने वाला प्रयोगकर्त्ता की बिना आशा के कोई अंग-प्रत्यंग नहीं हिला सकता । कैटेलैप्सी के दो रूप हैं—(१) पूर्ण निश्चेष्टता तथा (Complete) (२) अर्द्ध-निश्चेष्टता (Partial) । अर्द्ध निश्चेष्टता में व्यक्ति के शरीर का कुछ भाग, कोई विशेष अंग—हाथ, पाँव, नेत्र इत्यादि इस दशा में पहुँच जाते हैं कि प्रयोगकर्त्ता की बिना आज्ञा के कोई अंग-प्रत्यंग नहीं हिला सकता । पूर्ण निश्चेष्टता में सम्पूर्ण शरीर पर प्रयोगकर्त्ता की उन्नत इच्छा शक्ति का अधिकार हो जाता है ।

कैटेलैप्सी उत्पन्न करने की विधि इस प्रकार है—दो मजबूत बिना हाथ की कुर्सियाँ आमने-सामने तीन या चार फुट की दूरी पर रखिए । इन कुर्सियों के पीछे रुई की दो गद्दी खड़ी कर दीजिए । अब दो व्यक्तियों को इन दोनों कुर्सियों पर इस प्रकार बिठाइये कि उनके पाँव सामने न रह कर कुर्सियों के इधर-उधर रहें । दोनों व्यक्ति अपनी रीढ़ की हड्डी सीधी उन्नत कर लें और सीधे बैठ जायें । इन दोनों व्यक्तियों को निष्क्रिय सम्मोहित व्यक्ति को पकड़ना है ।

अब एक व्यक्ति, जिस पर आप प्रयोग करना चाहते हैं, लीजिए । स्मरण रखिए, यह ऐसा व्यक्ति हो जिस पर या तो आप मोह निद्रा का प्रयोग कर चुके हों अथवा वह सम्मोहित होना चाहता हो । यदि वह अनिच्छा प्रकट करे तो दूसरा व्यक्ति ले लेना उचित होगा । इच्छा के विरुद्ध आप अपने प्रयोग में सफल न हो सकेंगे ।

आप उसे आदेश दीजिए कि वह कमर सीधा करके खड़ा हो जाय । हाथ सीधे रखकर शरीर से मिला ले और एड़ियाँ दृढ़ता से पृथ्वी पर जमा ले । अब उसे दृढ़ता से आदेश दीजिए कि वह अपने पट्ठों को सख्त कर ले और सिर से लेकर पाँव तक शरीर को सख्त बनाता जाय । जब वह कहे कि उसने शरीर को दृढ़ कर लिया है तो आप उसकी सख्ती की जाँच कीजिए, हिलाकर देखिए कि वास्तव में जो यह कह रहा है सत्य है या नहीं । यदि शरीर अभी सख्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं है तो एक बार पुनः उससे ऐसा करने के लिए कहिए । जब शरीर सख्त हो जाय तो उससे कहिए कि वह मन में सख्ती का भाव लाये, पुनः-पुनः सख्ती की बात को सोचे । अब उससे नेत्र मूंद लेने को कहिए और उससे मनमें निद्रा का भाव जाग्रत करने का आदेश दीजिए । अपने बाएँ हाथ से उस व्यक्ति का सिर बजबूती से पकड़ लीजिए । दाहिने हाथ से मार्जन या पास देना आरम्भ कर दीजिए । पास करते हुए उसे इस प्रकार संकेत दीजिए—

"तुम निद्रित होते जा रहे हो—निद्रित-निद्रित ! तुम्हें नींद आ रही है । निद्रा तुम्हारे अंग-प्रत्यंग पर अपना प्रभाव दिखा रही है । देखों तुम डरो नहीं, सो जाओ—नींद को आने दो ! हाँ, अब ठीक है । तुम इसी प्रकार नींद में हो जाओ । गिरो नहीं खड़े-खड़े ही सो जाओ । यों खड़े-खड़े ही तुम्हें नींद आ जोयेगी । अपने पाँवों को सख्त किए रहो और अपना समूचा शरीर उसी पर सम्हाले रहो—शरीर को सख्त रखो—सो जाओ—गहरी निद्रा में सो जाओ—अब तुम्हें नींद आ गई है, तुम्हारा शरीर सख्त हो गया है, वह मुड़ नहीं सकता यह कभी नहीं मुड़ेगा—यह बिल्कुल सख्त है ।"

तुम देखोगे कि जितनी दृढ़ता से तुमने संकेत दिए हैं, उतनी शीघ्रता से व्यक्ति मोह निद्रा में आ जायेगा और उसका शरीर भी सख्त होता जायेगा । इन संकेत को कई बार दोहराओ जिससे व्यक्ति पूरी तरह निद्रित हो जाय । वास्तव में वह सख्त हो जायेगा । उसका शरीर निश्चेष्ट खड़ा रह जायेगा । अब उसे धीरे से टेढ़ा करो और बैठे हुए दोनों व्यक्तियों के हाथों में थमा दो । दोनों कुर्सियों पर उसे इस प्रकार रख दो कि उसका सिर तथा कमर एक कुर्सी पर रहे तथा पाँव दूसरी कुर्सी पर । यदि शरीर में कुछ लचक हो तो पुनः संकेत देना प्रारम्भ करो—"सख्त हो जाओ, सख्त मजबूत बिल्कुल सख्त ।" अब व्यक्ति के शरीर की पुनः परीक्षा करो । उसे हाथ से दबाकर देखो कि वह लचकता तो नहीं । यह शरीर इतना दृढ़ हो सकता है कि तुम उस पर खड़े हो जाओ । सावधान, व्यक्ति को गिरने से चोट न आ जाय ।

अब उसे पुनः जाग्रत अवस्था में लाना है । कुर्सियों पर से उन दोनों व्यक्तियों की सहायता से उस आदमी को सीधा खड़ा कर लो, उसकी नाक की जड़ में तेजी से देखो और ऊपर की ओर को मार्जन प्रारम्भ करो । फिर निम्नलिखित संकेत उसे दो—"तुम्हारे पट्ठे और माँसपेशियाँ अब शिथिल होने लगीं हैं, यह देखो तुम शिथिल हुए, तुम्हारे अंग-प्रत्यंग ढीले हो रहे हैं, बिल्कुल ढीले । धीरे-धीरे तुम अपनी वास्तविक अवस्था में आ रहे हो । तुम पुनः जाग्रत अवस्था में आ जाओ, विश्राम करो—यह देखो तुम्हें पूर्ण जागृति हो गई है ।"—धीरे-धीरे व्यक्ति अपनी असली अवस्था में आ जायेगा । इसे संकेत द्वारा ही उठाना चाहिए । तालियाँ बजाकर नहीं, क्योंकि ऐसा करने से उसके दिमाग को धक्का पहुँचेगा ।

इस विधि को करने में प्रयोगकर्त्ता को बड़ी सावधानी रखनी चाहिए । जब आप अपना प्रयोग आरम्भ करें तो सदैव ऐसा व्यक्ति चुनें जो अच्छे स्वास्थ्य और उत्तम हृदय वाला हो । कमजोर दिल वाले पात्रों का चुनाव कदापि न करो । कैप्लिटिक अवस्था में पात्र को तीन मिनट से अधिक कदापि न रखो । यद्यपि व्यक्ति पर काफी बोझ रखा जा सकता है और वह उसे सम्हाल भी लेगा तथापि थोड़ा बोझ रख कर ही प्रयोग करो । मानव मस्तिष्क के प्रभाव का यह एक अद्भुत उदाहरण है ।

एक दम सम्मोहित करना—यदि इच्छा शक्ति अत्यन्त विकसित हो जाय तो प्रयोगकर्त्ता अत्यन्त शीघ्रता से दूसरों को सम्मोहित कर सकता है । प्रारम्भिक प्रयोगों में सफलता प्रारम्भ कर लेने के पश्चात आप आत्मविश्वास से अपने प्रयोग शीघ्रता से कर सकते हैं । हम यह मान लेते हैं कि आपने निरन्तर अभ्यास द्वारा अपनी मानसिक शक्तियों को विकास की चरम सीमा तक कर लिया है ।

सम्मोहन की इच्छा रखने वाले एक व्यक्ति को लीजिए और दृढ़ता से आत्म-विश्वास पूर्ण शब्दों में अपने संकेत आरम्भ कीजिए । अपनी बीच की उँगली उसके सामने उठाइये और उससे कहिए कि वह अपनी उँगली पर दृष्टि एकाग्र करे । आप उसकी नासिका की जड़ को देखिए और उच्च स्वर में उसे संकेत दीजिए—"इस उँगली की ओर देखो, इस पर अपने नेत्र केन्द्रित करो—तुम इधर-उधर नहीं देख सकते, अच्छा अब जैसा मैं करता हूँ वैसे ही तुम भी किया करो"—ऐसा कह कर तुम चलने लगो, पहले धीरे चलो फिर रफ्तार बढ़ाओ । तुम देखोगे कि वह व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तुरन्त चलने लगेगा । वह हतबुद्धि सा हो जायेगा और जैसे-जैसे तुम भागोगे, वैसे-वैसे वह भी भागता जायेगा और तुम्हारी आज्ञा पालन करता रहेगा । अधिक सम्वेदनशील व्यक्ति ही इस प्रकार सम्मोहित हो सकता है ।

सम्मोहित व्यक्ति का नाम भुला देना—जब आप शरीर के किसी अंग को सख्त करने के प्रयोगों में सफल हो जायें, तो अन्य बहुत से आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं, जैसे व्यक्ति का नाम भुला देना । एक व्यक्ति को मोहनिद्रा में प्रवेश कराओ और बिना जगाए उसके कंठ में हाथ लगाकर कहो—"एक, दो, तीन, सुनते हो हम तुमसे तुम्हारा नाम पूछेंगे, पर तुम अपना नाम न बता सकोगे, तुम अपना नाम भूल जाओगे, वह याद ही न रहेगा । देखो तुम नाम भूल रहे हो, अब तुम हमें अपना नाम नहीं बता सकते । तुम नाम भूल गए । इन दृढ़ संकेतों का प्रभाव बड़ा अद्भुत रहेगा । सम्मोहित व्यक्ति वास्तव में इतना हतबुद्धि हो जायेगा कि अपना नाम न बता सकेगा । तुम्हारे मन का प्रभाव उस पर रहेगा ।

बैठने की शक्ति से रहित करना—श्रीयुत प्रकाश ने अपने लेख में इस क्रिया का वर्णन इस प्रकार किया है । आप लिखते हैं "सम्मोहित को सीधा खड़ा करके उसके पीछे कुर्सी रख दो फिर उसे अपनी आँखों के ऊपर देखने को कहकर तुम अपनी दृष्टि उसकी नाक की जड़ में जमा दो और उसको अपने दोनों पैर कठिन करने की अनुमति देकर उसे अपने मन में यह सोचने की आज्ञा दो कि "प्रयत्न करने पर भी मैं अपने पीछे रखी हुई कुर्सी पर न बैठ सकूँगा" इत्यादि । इस तरह आदेश करने पर सम्मोहित व्यक्ति बैठने की शक्ति से रहित हो जायेगा ।

इसी प्रकार कुर्सी पर बैठकर सम्मोहित से उठने की शक्ति से रहित किया जा सकता है । क्रिया सब वही है केवल आदेश वाक्य (Suggestions) देना होगा कि "प्रयत्न करने पर भी इस कुर्सी पर से न उठ सकूँगा ।" भिन्न-भिन्न क्रियाओं के अभ्यास को बार-बार करना चाहिए । पहले एक व्यक्ति को, फिर दो व्यक्तियों को तथा इस प्रकार अधिकाधिक व्यक्तियों को जाग्रत अवस्था में सम्मोहित करने का प्रयत्न करना चाहिए ।"

यदि प्रयोगकर्त्ता में आत्मश्रद्धा पर्याप्त मात्रा में है तो वह बड़े-बड़े अद्भुत कार्य कर सकता है । आत्मश्रद्धा एवं विश्वास से ही महानता प्राप्त होती है—इस सत्य को स्वीकार करते ही मनुष्य अद्भुत शक्तियों का स्वामी बन जाता है । जो अपने व्यक्तित्व का, अपनी आत्मा और संकेतों का सम्मान करता है, अपनी सत्ता को श्रेष्ठ, पवित्र, महान एवं विश्वसनीय अनुभव करता है, वह सचमुच वैसा ही बन जाता है । योगशास्त्र पुकार-पुकार कर हमसे कह रहा है कि "जो समझता है कि मैं शिव हूँ, वह शिव है । जो समझता है कि मैं जीव हूँ, वह जीव, । सम्मोहन विज्ञान में प्रयोगकर्त्ता यदि अपनी महानता न देखे, न अनुभव करे और न उसे चरितार्थ करने का प्रयत्न करे, तो वह कैसे सफल हो सकता है ? हमारे मनोभाव ही हमारी अन्तःचेतना के ढाँचे में ढल जाते हैं । सम्मोहन विज्ञान का उद्देश्य यही है कि सम्मोहित व्यक्ति में सम्मोहनकारी की इच्छानुसार भावों का संस्थापन किया जाय ।

मन की गांठें खोल दीजिए

मनोविकारों में 'दुराव' अपने ढंग का अनोखा है । इसकी भयंकरता बड़ी विकट है । काम, क्रोध, लोभ, शोक, चिन्ता, भय आदि विकार तो तूफान, बाढ़, बबंडर की तरह आते हैं और कुछ देर बाद शान्त होने पर उनका कोई चिह्न बाकी नहीं रहता । उनका दौड़ा कभी-कभी होता है सो भी थोड़े समय के लिए, उतने ही समय में, उनसे जो कुछ हानि होनी होती है वह हो जाती है । पर 'दुराव' एक ऐसा विकार है जो हर घड़ी हानि पहुँचाता रहता है ।

डॉक्टर फ्राइड, ब्रेवोन, राइली, प्रभृति मनोविज्ञान शास्त्र के आचार्य अपनी चिरकालीन शोधों के आधार पर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि अधिकांश मानसिक रोग दुराव की महाव्याधि के कारण होते हैं । मनुष्य कोई इच्छा या अभिलाषा करता है, भविष्य की कोई सुन्दर कल्पना करता है, पर संकोच के कारण उसे मन में ही रखता है किसी पर प्रकट नहीं करता, उसे भय होता है कि जिस पर अपनी कल्पना प्रकट करूँगा वे मेरा मजाक बनायेंगे, तिरस्कार करेंगे, दूसरों के सामने चर्चा करके मूर्ख ठहरायेंगे । इसी प्रकार मन में कभी-कभी जो आशंकाएँ, चिन्ताएँ, वेदनाएँ, पीड़ाएँ उठा करती हैं उन्हें भी दूसरों से नहीं कहता । वह सोचता है अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनोभाव जिस पर प्रकट करूँगा वह मुझे डरपोक, कायर, कमजोर, दुःखी समझेगा, मेरी हेटी होगी । यह सोचकर वह इन भावनाओं को मन में छिपाये रहता है किसी पर प्रकट नहीं करता । कामवासना का विषय अश्लील और गोपनीय समझा जाता है, सामाजिक और धार्मिक प्रतिबन्ध भी इस दिशा में बहुत हैं । किसी अवैध दिशा में यदि मन चलता है तो उसे छिपाये रहने में ही भलाई समझी जाती है । किसी पर उन भावों के प्रकट करते ही प्रतिष्ठा नष्ट होती है । इसलिए उन इच्छाओं को मन में दबाकर रखना ही ठीक मालूम होता है । यदि किसी ने कोई पाप किया है, चोरी, हत्या, डकैती, विश्वासघात, ठगी, व्यभिचार सरीखा कोई दुष्ट कर्म किया है, तब तो उसका प्रकट करना भारी जोखिम का काम है । जिससे कहा जाय वह अपने को सन्देह की दृष्टि से देखेगा, अविश्वास करेगा और यदि खुल गया तो राजदण्ड का भागी होना पड़ेगा तथा जिसे हानि पहुँचाई थी उसकी प्रत्यक्ष शत्रुता का प्रतिहिंसा का मुकाबला करना पड़ेगा । इतने खतरे उठाने की अपेक्षा यही ठीक समझा जाता है कि उन बातों को किसी पर प्रकट न किया जाय, मन में ही छिपा कर रखा जाय । ईर्ष्या, द्वेष, शत्रुता, प्रतिहिंसा के भावों को भी मनुष्य मन में छिपाये रहता है, किसी को ठगना हो, नीचा दिखाना हो, आक्रमण करना हो तो उन भावी योजनाओं को छिपाकर रखा जाता है । 'मन में कुछ—मुख में कुछ, की कहावत को चरितार्थ करते हुए कितने ही व्यक्ति देखे जाते हैं, वे वास्तव में जैसे हैं, वास्तव में जैसे विचार रखते हैं, उससे भिन्न अपना रूप दूसरों के सामने प्रकट करना चाहते हैं, इसलिए अपनी वास्तविकता के प्रतिकूल बातें कहते हैं और वेष बताते हैं ।

इस प्रकार दुराव के कारण उनके अन्तःकरण में दो व्यक्तित्व निवास करने लगते हैं । अर्थात् एक मनुष्य के अन्दर दो मनुष्य धंस जाते हैं । एक वह जो वास्तविक, दोषयुक्त, पापी, अपराधी या मूर्ख ठहराए जाने के भय से भीतर छिपा बैठा है । दूसरा वह जो मायाचार से अपनी बाह्य प्रतिष्ठा बनाये बैठा है । दोनों एक दूसरे के प्रतिकूल होते हैं । फिर भी एक ही घर में रहते हैं । जैसे एक म्यान में दो तलवारें ठीक तरह नहीं ठुसतीं, उसी प्रकार यह दो व्यक्तित्व भी आपस में सहयोगपूर्वक नहीं रह पाते । भीतर ही भीतर दोनों में संघर्ष होता रहता है, जिससे आत्मा में एक अशान्ति बनी रहती है, बैचेनी उठती रहती है । मनुष्य को ठीक-ठीक पता चलता कि इस बैचेनी का क्या कारण है, तो भी वह देखता है कि उसे चैन नहीं, भीतरी संघर्ष कभी-कभी तो इतने प्रबल हो जाते हैं कि रात को अच्छी तरह नींद भी नहीं आ पाती ।

स्वप्नों की दुनियाँ का निर्माण इन दो व्यक्तियों के द्वन्द्व के कारण होता है, जिस व्यक्तित्व को जाग्रत अवस्था में दबा-दबा कर रखा गया था, वह नींद आ जाने पर उठता है और मस्तिष्क में कुलाचें भरता है । मस्तिष्क के भीतरी यंत्रों के ऊपर वह चूहे की तरह उछलता-कूदता फिरता है, उन्हें काटता-कुतरता है । फलस्वरूप विविध प्रकार के आघात लगने से विचित्र अनियंत्रित तरंगें मनःलोक में उठती हैं, यही तरंगें बेसिर पैर के विविध स्वप्नों के रूप में सामने आती हैं । अधिक स्वप्न उन्हें ही आते हैं जिनके अन्दर दो व्यक्तित्व निवास करते हैं ।

कहते हैं कि जिसकी देह में भूत-पिशाच घुस जाता है, उसे एक प्रकार का आवेश चढ़ आता है । साँप का विष या पागल कुत्ते का विष शरीर में घुस जाय तो भी कुछ विचित्र दशा हो जाती है, दो व्यक्तियों का एक देह में रहना भी ऐसा ही है ।' वह मनुष्य की शारीरिक और मानसिक स्वस्थता को भीतर ही भीतर चौपट करता रहता है ।

मनोविज्ञान शास्त्र भी इसी निष्कर्ष पर पहुँचा है । उसका कथन है कि दुराव के कारण ही अधिकांश शारीरिक तथा मानसिक रोग उत्पन्न होते हैं । नासूर, भगंदर, दमा, बवासीर, संग्रहणी सरीखे चिरस्थायी रोग गोपनीय मनोवृत्ति के कारण होते हैं । खुजली का प्रधान कारण दुराव है । उसी के कारण रक्त में चिड़चिड़ाने वाले क्षार बढ़ते हैं । स्त्रियों को हिस्टेरिया के, मृगी के दौरे संतान सम्बन्धी अतृप्त इच्छा के कारण आते हैं । प्रायः सभी किस्म के पागलपनों का प्रधान हेतु 'दुराव' है । कब्ज, मूत्राशय की शिथिलता और यकृत की शुष्कता भी इसी कारण होती है । इस प्रकार के लोगों को नींद कम आती है और थकान बनी रहती है । दबी हुई, कुचली हुई, अतृप्त कामेच्छा तथा अन्य भावनाएँ एक प्रकार की ग्रन्थियों के रूप में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिणित होकर अन्तर्मन में धँस जाती हैं । जैसे माँस के भीतर एक लोहे की पिन धँस जाय तो वह जब तक निकल नहीं जाती, घाव बना रहता है और दर्द होता रहता है । वैसे ही दुराव की ग्रन्थियाँ मनःक्षेत्र में धँसी रहती हैं और वहाँ से विष भरी फुसकारें छोड़-छोड़कर शरीर तथा मन को विषैला, रोगी, जीर्ण-शीर्ण करती रहती हैं ।

यह ग्रन्थियाँ जिस कारण को लेकर उत्पन्न होती हैं इससे मिलते-जुलते रोगों की सृष्टि करती हैं । धनवान् मनुष्य अपने धन की तादाद, उसके रखने का स्थान आदि छिपाये रहते हैं, इस निरन्तर दुराव की ग्रन्थियाँ वीर्य कोष को निःशक्त कर देती हैं । फलस्वरूप उन्हें सन्तान नहीं होती । जहाँ फूँस के झोंपड़ों में सोने वाले मजदूर दर्जनों बच्चे जनते जाते हैं वहाँ अमीर लोग सन्तान के लिए तरसते हैं । ऐसे असंख्यों शारीरिक और मानसिक रोग हैं जिनका निदान और निवारण करने में बड़े से बड़े डाक्टर हतबुद्धि हो जाते हैं । शरीर के सब कल-पुर्जे ठीक काम कर रहे हैं पर रोगी के प्राणों पर बीतती है । डाक्टर लोग हैरत में रह जाते हैं कि यह सब क्या है ? उसका उपचार क्या है ? कैसे करें ? ऐसे लोगों को कई बार मूतव्याधा, कर्म रोग, कहकर छोड़ दिया जाता है ।

मनःशास्त्र के तत्वज्ञों ने एक नई चिकित्सा विधि निकाली है । वे रोगी को एकान्त में ले जाते हैं और उससे भूतकाल की स्मृतियों को सविस्तार कहने का अनुरोध करते हैं । जो भूलें या गलतियाँ उससे हुई हैं, जो इच्छाएँ, अभिलाषाएँ, कल्पनाएँ, आयोजनाएँ उसने कभी बनाई हैं, जो अपमान, तिरष्कार, असफलता, निराशा, विछोह, विश्वासघात आदि के आघात लगे हों तथा भविष्य के लिए वह जो-जो बातें सोचा करता हो उन सब बातों को बिना राई रत्ती छिपाये कह दे, इस बात पर वे डाक्टर उस रोगी से विशेष आग्रह करते हैं, उसकी निरर्थक बातों को भी बड़े ध्यान से सुनते हैं और रोगी जो कुछ कहने में भूल रहा हो उसे प्रश्न पूछ-पूछ कर उघाड़ते जाते हैं । डाक्टर उस रोगी को पूरा विश्वास दिला देते हैं कि उसकी एक भी गुप्त बात किसी दूसरे पर प्रकट न करेंगे । रोगी से लगातार कई-कई घण्टे, कई दिन तक उसका पूर्व वृत्तान्त पूछा जाता है और उसकी मनोभूमि को जोत-जोतकर सब बातें उगलवा ली जाती हैं जो बहुत समय से छिपी पड़ी थीं । रोगी को स्वयं भी यह पता नहीं होता कि कब किस बात के कारण कौन ग्रन्थि उसके मन में बन गई थी और उसके कारण क्या-क्या अनिष्ट हुए । डाक्टर भी इसका ठीक-ठीक विश्लेषण कम ही कर पाते हैं । इतना होते हुए भी उस—'गोप्य प्रकाशन वार्त्तालाप' द्वारा वे ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं । रोगी का मन हल्का हो जाता है । साथ ही वे मानसिक द्वन्द्व भी मिट जाते हैं जिनके कारण रोगी बाहर से ठीक दिखते हुए भी भीतर ही भीतर खोखला हुआ जा रहा था और चुपके-चुपके मृत्यु के मुख की ओर बड़ी तेजी से सरक रहा था । इस चिकित्सा विधि का पाश्चात्य देशों में आश्चर्यजनक परिणाम निकल रहा है । सहस्रों कष्टसाध्य और असाध्य शारीरिक एवं मानसिक रोगियों की व्यथाओं का सफलतापूर्वक निर्मूलन किया जा रहा है ।

यह नवीन शोधें भारतीय योगियों के अकाट्य आध्यात्मिक विषयों का समर्थन करती हैं । योगशास्त्र मन की निष्कपटता पर अत्यधिक जोर देता है और उसे आत्मोन्नति का प्रथम साधन बताता है । महात्मा ईसा मसीह कहा करते थे—"जिनका हृदय बालकों की तरह पवित्र है वे ही ईश्वरीय राज्य में प्रवेश करेंगे ।" दुराव से जितना ही बचा जायेगा उतना ही मनःक्षेत्र शुद्ध रहेगा । पाप के संस्कार भी दुराव के कारण ही बनते हैं । जो चोरी सबके सामने प्रकट रूप से की जाय वह चीरी नहीं होती । अपनी स्त्री के साथ काम सम्बन्ध होना सर्वविदित है, इसलिए वह व्यभिचार नहीं कहा जाता । इशियल जाति में यह मान्यता है कि पुरुष अपनी स्त्री की सहमति से किसी दूसरी स्त्री से व्यभिचार करे तो पाप नहीं । इसी प्रकार स्त्री अपने पति की सहमति से किसी दूसरे पुरुष से समागम करे तो उसमें दोष नहीं । इस मत की पुष्टि में इशियल धर्मशास्त्र की दलील यह है कि जहाँ दुराव नहीं-वहाँ पाप नहीं । भारतीय धर्मशास्त्रों में सत्य को सब पापों का नाश करने वाला कहा है ।

आन्तरिक स्वस्थता के लिए, आत्मिक स्वच्छता के लिए यह आवश्यक है कि हम दुराव से बचकर निष्कपटता की नीति को अपनावें । स्वच्छ हृदय में परमात्मा का साक्षात् निवास होता है । इस महा साधना का आरम्भ किन्हीं पूर्ण विश्वासी, परखे हुए, उच्च चरित्र वाले, उदारमना मित्रों से आरम्भ किया जा सकता है । कुछ ऐसे सच्चे मित्र चुनने चाहिए जिनके सामने अपने पेट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की बातें उसी रूप में कही जा सकें जिस रूप में अपने मन में आती हैं । प्रकार 'गोप्य प्रकाशन वार्त्तालाप' द्वारा मन हल्का होता रहता है, दुराव ग्रन्थियों की गाँठ खुलती रहती है और मनोविज्ञान के डाक्टरों को भारी फीस देने पर जो लाभ मिलते हैं वे अपने आप मिलने लगते हैं । यहाँ एक बात ध्यान रखने की आवश्यकता है कि यह सच्चे मित्र उदार अवश्य हों कि थोड़ा विरोध होने पर उन बातों को अनधिकारियों में फैलाकर कोई संकट उपस्थित न करा दें ।

कहते हैं कि "पाप को प्रकट कर देने पर उसका भार उतर जाता है ।" जैसे गौ हत्या करने का प्रायश्चित यह बताया गया है कि अपने पाप की घोषणा करता हुआ मनुष्य एक सौ ग्रामों में फिरे और गंगा स्नान करे ।" मन की भेद ग्रन्थि खोल देने से एक प्रकार मानसिक जुलाव हो जाता है, जिससे मनःक्षेत्र में जमे हुए पुराने विष घुल जाते हैं ।

इस मार्ग पर धीरे-धीरे आत्मविकास के क्रमानुसार कदम बढ़ाना चाहिए । साधारण स्थिति वाले लोग यदि एकदम अपना नग्न स्वरूप सर्वसाधारण पर प्रकट करते हैं तो उन्हें अपनी सामाजिक स्थिति बिगड़ जाने का भय रहता है । इसलिए आरम्भ थोड़े से करना चाहिए । दृढ़ चरित्र वाले विश्वासी मित्रों पर, अपने सभी भले-बुरे मनोभाव प्रकट करना आरम्भ करना चाहिए । उन मित्रों का कर्त्तव्य है कि मित्र की कमजोरी समझकर सहन करें । दुर्भाव मन में न लावें और मृदुल, सहानुभूति, सूचक भावनाओं के साथ मित्र की भूलों को सुधारने का प्रयत्न करते हुए उसे आगे बढ़ने के लिए प्रोत्साहित करें । यह व्यवस्था बन जाने पर हर व्यक्ति अपनी आध्यात्मिक शान्ति एवं उन्नति का पथ प्रशस्त कर सकता है ।

वशीकरण का सच्चा एवं सर्वसुलभ उपाय प्रेम और त्याग

मनुष्य जाति बहुत समय से एक ऐसी सिद्धि की कल्पना करती चली आ रही है, जिससे वह दूसरों को वश में कर सके । इस दिशा में अब तक बहुत प्रयत्न हुए हैं और अनेक किम्वदन्तियाँ एवं कथाएँ प्रचलित हुई हैं । कहीं-कहीं इन जनश्रुतियों में इतनी अत्युक्ति हुई है कि एक जिज्ञासु के लिए यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि इसमें कितना सत्य है और कितना असत्य ।

सर्व साधारण के लिए मन्त्र द्वारा किसी को मोहित कर लेने का कोई नियम ईश्वरीय सृष्टि में नहीं है, क्योंकि परमात्मा हर मनुष्य की स्वाधीनता को अक्षुण्य रखना चाहता है । बलात्कारपूर्वक किसी का धन, धर्म और बुद्धि हरण करना पाप है और दण्डनीय है । पहले तो ऐसी सिद्धि को प्राप्त करना कठिन है, यदि कोई दुरुपयोग करने के लिए प्राप्त कर ले तो वह प्रयोक्ता के नाश का ही हेतु प्रमाणित होती ।

एक सर्वसुलभ और सच्चा वशीकरण भी है, जिसे त्याग और प्रेम के नाम से पुकारते हैं । प्रेम एक तप है । यह तप जिस प्राणी के पक्ष में किया जाता है, उसके प्रसन्न होने और वश में आने में कुछ सन्देह नहीं ।

पर आज तो वशीकरण के सम्बन्ध में जनता की जो विचित्र धारणाएँ हैं उनके भ्रम जंजाल में बड़ी कष्टकारक स्थिति का सामना करना पड़ता है । कई बार तो बेचारे निर्दोष व्यक्तियों की हत्याएँ कर दी गईं या अमानुषिक दण्ड इस सन्देह में दिए गए कि इन्होंने हमारे ऊपर कुछ मंत्र-जंत्र कर दिया है । इस प्रकार के भ्रम-जंजालों का सदैव ही हम खण्डन करते रहे हैं और इस पुस्तक में तो इस विषय का और भी स्पष्ट रूप से विवेचन कर रहे हैं जिससे कि सर्व साधारण को वास्तविकता का ठीक तरह ज्ञान हो जाय ।

किसी को वश में करने का कार्य छू मंत्र से नहीं हो सकता और यदि कर भी ले तो बड़ा अधूरा कष्टसाध्य एवं अन्त में हानिकारक सिद्ध होगा । वशीकरण का सर्व सुलभ मंत्र हमारी आन्तरिक भावनाओं के अन्तर्गत रहता है । मनुष्य में दूसरे के भाव पहचानने की असाधारण योग्यता है । छोटा बालक जो लोकाचार और वाणी व्यापार को नहीं जानता, वह भी आंतरिक प्रेम और अप्रेम को बात की बात में ताड़ लेता है और उन्हीं की तरफ आकर्षित होता है जिनमें तुलनात्मक दृष्टि से अधिक प्रेम पाता है । फिर बड़ी उम्र के समझदार व्यक्तियों की तो बात ही क्या है । जब पशु-पक्षी भी हित अनहित पहचान लेते हैं तो मनुष्य क्यों नहीं पहचान लेगा । जिसका आंतरिक स्नेह जिस पर होता है वह उसे पहचान ही लेता है और एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिन अपनी भूल सुधार कर सच्चे मार्ग पर आ जाता है । सच्चे प्रेम की यह कसौटी है कि वह प्रेमी की अवनति नहीं उन्नति चाहता है । जो अपने प्रेमी का धन, धर्म, समय, यश या और कुछ नष्ट करने की चेष्टा करता है वह प्रेमी नहीं हो सकता । स्वार्थी मनुष्य अपने मतलब के लिए प्रेमी के धन, धर्म की परवाह नहीं करता और उसका बदला चाहता है, किन्तु जो सच्चा प्रेमी है वह अपने प्रेमी की सब प्रकार की उन्नति चाहता है और उसमें अपने को तनिक भी बाधक नहीं बनने देता । निःस्वार्थ और निष्कपट प्रेम में आकर्षण है जो प्रेमी के हृदय को बाँध लेता है । पवित्र प्रेम का बंधन ऐसा उच्च है कि वह नरक की यातनाओं में अब प्रेमी को सड़ाने के लिए नहीं रोकता वरन् शांति और आनन्द का रसास्वादन करते हुए उच्च कक्षा की ओर मुक्ति की ओर बढ़ता जाता है । सात्विक प्रेम बंधन का नहीं मुक्ति का सोपान है । इसके द्वारा एक मनुष्य दूसरे को सहायता देकर देवत्व के पुण्यपथ पर अग्रसर करता है । प्रेम ही वशीकरण है ।

बलिदान की आवश्यकता

समझा जाता है कि वशीकरण एक तांत्रिक विद्या है । इसलिए इसके विधि विधान भी तांत्रिक रीतियों के ही होने चाहिए । हम देखते हैं कि तांत्रिक लोग अपने इष्टदेव को प्रसन्न करने के लिए बलिदान की अनिवार्य आवश्यकता समझते हैं । भैरव, भवानी आदि के मठों पर अक्सर पशु-पक्षियों का बलिदान होता है, किसी जमाने में तो मनुष्यों के शरीर का भी बलिदान किया जाता था । सुधरे हुए दक्षिणमार्गी तांत्रिक भी नारियल आदि बलिदान करते हैं । ठीक भी है बिना दिए दूसरी चीज नहीं मिलती । जो लेना चाहता है उसे देना अवश्य पड़ेगा । संसार के सभी तत्वों का निर्माण 'पहले दो तब मिलेगा' के आधार पर हुआ है । बीज बोने पर खेत उगता है, प्रसव कष्ट सह कर माता सन्तान सुख उठाती है । कठिन परिश्रम के बाद पैसा मिलता है, पानी से भरे प्याले में दूध लेना चाहते हैं, तो पहले पानी को फैला देना आवश्यक है । मुफ्त में कुछ नहीं मिलता । यदि मिल भी जाय तो ठहर नहीं सकता । आप किसी का हृदय जीतना चाहते हैं, इसके लिए कुछ बलिदान करना पड़ेगा क्योंकि मुफ्त में कुछ नहीं मिल सकता । पुराणों में ऐसी असंख्य कथाएँ भरी पड़ी हैं, जिनसे प्रकट होता है, कि बलिदान करने से देवता प्रसन्न होते हैं और वे मन चाहा फल देते हैं । रावण ने अपने सिरों का बलिदान शंकर को देकर इच्छित वरदान प्राप्त किए थे । भागीरथ ने तप करके गंगा को प्रसन्न करने की कथा प्रसिद्ध है । बलिदान तत्व पर अधिक गंभीरता से विचार करने पर उसमें उच्चकोटि के त्याग का आभास मिलता है । साधारण त्याग वह है जिसमें अपनी फालतू चीज दूसरे को दे दी जाय । बलिदान वह है जिसमें आपकी जरूरी और प्रिय वस्तु को भी स्वयं कष्ट सहकर दूसरे को दे दी जाय । यह ऊँचे दर्जे का त्याग हुआ । बलिदान का अर्थ ऊँचे दर्जे का त्याग ही समझना चाहिए ।

आप जिसे प्रसन्न करना चाहते हैं, जिसे वश में करना चाहते हैं, उसके लिए कुछ बलिदान कीजिए, कष्ट सहिए, तपस्या कीजिए, अपनी प्रिय वस्तु को दीजिए । बनावट से नहीं हृदय के अन्तःस्थल से लालच देकर, बहकावे के लिए नहीं निःस्वार्थ भाव से । इस प्रकार आप अपने ध्येय के अधिक निकट पहुँच जायेंगे । प्रेम का मार्ग कठिन नहीं वरन् सुगम है । प्रेमी को प्राप्त करना बहुत आसान है, बशर्ते कि अपने मन में त्याग, प्रेम और उदारता की भावनाएँ मौजूद हों । नीचे हम कुछ प्रेमियों के अनुभव उद्धृत करते हैं, यह लोग वशीकरण के पहुँचे हुए सिद्ध कहे जा सकते हैं । सन्त कबीर कहते हैं—

पिया का मारग सुगम है, तेरा चलन अपेड़ा ।
नाच न जाने बावरी, कहे कि आँगन टेढ़ा ॥

सच्चा प्रेमी अपने लिए कुछ नहीं चाहता । बदले में चाहे उसे प्रेम प्राप्त न हो तो भी खिन्न नहीं होता । अपने प्रेम में किसी प्रकार का अन्तर नहीं आने देता । वह 'हरिऔध' के शब्दों में कामना करता है कि—

'प्यारे जीव' जगत हित करें, गेह चाहे न आवें ।

श्री मैथिलीशरण गुप्त लिखते हैं—

"तुम यहाँ सुधि लो कि न लो कभी ।
उचित उत्तर दो कि न दो कभी ।
पर यही कहते हम हैं अहो ।
तुम सदैव सहर्ष, सुखी रहो ॥"

सच्चे प्रेमी की भावना होती है कि—

"मेरी प्रीति होय नँदनन्दन सों आठों याम—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मोसों जनि प्रीति होय नन्द के किशोर की ।"

तुलसीदास जी कहते हैं—

जलदि जनम भरि सुरति बिसारेउ ।
याचत जल पवि पाहन डारेउ ॥
चातक रटनि घटे घटि जाई ।
बढ़े प्रेम सब भाँति भलाई ॥
कनकहि बान चढ़हि जिमि दाहे ।
तिमि प्रियतम पद नेह निबाहे ॥

सच्चा प्रेम स्वयं ही वरदान है । प्रेमी के मिलने में जो आनन्द आता है, वह पूरा का पूरा प्रेम की भावना में मौजूद है । जो शुद्ध हृदय से प्रेम करता है उसको वियोग नाम की कोई वस्तु दुनिया में नहीं है । रामायण कहती है—

जेहि कर जेहि पर सत्य सनेहू ।
सो तेहि मिलै न कछु सन्देहू ॥

चाहे ध्येय कितना ही कठिन हो सच्ची लगन से वह प्राप्त हो ही जाता है । एक अंग्रेजी कवि कहता है—

"मैंने झरने के किनारे पर पत्थर का बारीक पिसा हुआ चूर्ण बालू की तरह दूर-दूर तक फैला हुआ देखा । इस बालू में से एक मुट्ठी उठा कर मैंने देखा तो जाना कि यह बढ़िया जाति के पत्थरों का चूरा है, जो बड़ा कठोर होता है और तीक्ष्ण औजारों के द्वारा ही बड़ी मुश्किल से काटा जाता है । मैं विचार करने लगा कि यहाँ न तो कोई बड़ा यन्त्र है और न कोई चतुर इंजीनियर, फिर वे शिलाखण्ड क्यों कर चूर-चूर हो गए ? और पर्वत शिखर से उतर कर इस साधारण भूमि में कैसे लोटने लगे ?"

"बहुत सोच विचार कर मैंने जाना कि झरने की कोमल बूँदें उन चट्टानों पर लगातार गिरती रही हैं और उन्हें गला कर अपने प्रवाह में बहा ले गई हैं । मैंने यह भी जाना कि यदि कोई मनुष्य पर्वत की तरह अहंकारी हो और चट्टान की तरह उसका दिल कठोर हो तो भी वह आन्तरिक प्रेम की सुकोमल बूँदों से गल कर ऐसी ही धूलि बन सकता है, जैसे इस झरने के किनारे पर दूर-दूर तक हुई फैली दिखाई देती है ।"

एक-दूसरे तत्वज्ञ का उपदेश है कि—"संसार में कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जिसे आप प्राप्त न कर सकें । कोई भी सुन्दर भविष्य इतनी दूर नहीं है कि आप न आ सकें । कोई भी ऐसी सम्पदा नहीं है जिसे कोई व्यक्ति प्राप्त कर सका हो, पर आप न पा सकें । आप अपने साथियों के हृदयों में ज्ञान और प्रेम का संचार कीजिए, उनके लिए शुभकामना कीजिए और भलाई चाहिए । उनके सुखों को अपना सुख मानिये, वे सब आपके चरणों पर लोटने लगेंगे, आपकी आज्ञा का पालन करने में गौरव अनुभव करेंगे ।"

कवि हैनिटन कहते हैं—"पैनी तलवार फौलाद की ढालों को भी काट सकती है, क्योंकि वह अचूक है । मुझसे दस आदमियों की बराबर शक्ति है, क्योंकि मेरा हृदय पवित्र है ।"

इमर्सन कहते हैं—"मनुष्य के हृदय की पवित्रता से बढ़कर कोई भी दूसरी वस्तु नहीं है । अपने आपको दुर्भावनाओं और स्वार्थपूर्ण विचारों से मुक्त करलो, फिर समस्त संसार तुम्हारे साथ होगा ।"

यह सभी अनुभव इस बात के साक्षी हैं कि वशीकरण की महान साधना के लिए त्याग सबसे महत्त्वपूर्ण अंग है । दिए बिना कुछ नहीं मिल सकता । स्वयं कष्ट सहिए, तप कीजिए, अपने प्रेमी को अपनी सर्वोत्तम वस्तुएँ समर्पण कीजिए, तो वह आपका अपना हो सकता है । आपके वश में आ सकता है ।

दाम्पत्ति वशीकरण

इन्द्रिय वासना से प्रेरित होकर किसी को वश में करने का या उसके ऊपर अपनी इच्छा लादने का प्रयत्न मत कीजिए । खास तौर से यदि वैसा करना धर्म के विरुद्ध हो । पाश्चात्य देशों में जहाँ पति-पत्नी का चुनाव करने की आजादी है, वहाँ की बात दूसरी है । यहां हमारे देश में ऐसा रिवाज नहीं है । लड़की-लड़कों की अन्धवासना को वैध रूप से विवाह कार्य में कोई स्थान नहीं दिया जाता । लड़की या लड़के के कुल, संस्कार, परिवार, स्वास्थ्य, समानता आदि पर ही यहाँ विशेष जोर दिया जाता है और निर्णय करने का अधिकार अनुभवी गृहपतियों को होता है । यहाँ भावी पत्नी के लिए आकर्षित होने का प्रश्न नहीं उठता, वरन् उनके संरक्षकों को सन्तोषजनक स्थिति का विश्वास कराना होता है इसलिए पति-पत्नी का चुनाव करने के लिए कथित वशीकरण की कुछ भी आवश्यकता नहीं है । वे गन्धर्व विवाह जिनमें स्त्री-पुरुष एक-दूसरे के साथ हो लेते हैं, उनमें एक-दूसरे को सन्तोष करा देने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बात होती है । जब एक-दूसरे को अपनी आवश्यकता को पूर्ण करने की योग्यता देखते हैं, तो आपस में बंध जाते हैं । वशीकरण की आवश्यकता वहाँ समझी जाती है, जहाँ एक पक्ष अरुचि रखता है या विरोधी होता है, किन्तु दूसरा पक्ष सहयोग के लिए उत्सुक होता है, यह स्थिति अवांछनीय है । इन्द्रिय वासना बहुत प्रबल है, वह प्रायः सभी प्राणियों को सताती है । यदि एक पक्ष अपनी वासना को रोक कर उत्सुक पक्ष की बात अस्वीकार करता है, तो अवश्य ही उसमें कोई तथ्य होना चाहिए । धर्म-अधर्म का विचार ऐसे अवसरों पर प्रमुख होता है । स्त्री जाति में धर्म का विचार सतीत्व बहुत अधिक है, वह कष्ट सहकर भी पतिव्रत धर्म का पालन करती है । अनेक लुच्चे गुण्डे उनकी ओर पाप दृष्टि से देखते हैं, पर वे विचलित नहीं होतीं और उनकी अन्तरात्मा फिसलते हुए पाँव को रोक लेती है । उपरोक्त दोनों प्रकार की देवियों को पतित करने का प्रयत्न करना परले दर्जे की असुरता है । इस असुरता में कोई सात्विक आध्यात्मिक शक्ति सहायक नहीं हो सकती । कुछ तामसी तंत्र इस कार्य में मदद कर सकते हैं, पर वह धर्म विरुद्ध होने के कारण प्रयोक्ता को बड़ी अधोगति में डालते हैं । ऐसी सिद्धियाँ कुछ क्षणिक चमत्कार दिखाकर लुप्त हो जाती हैं । बाजारों में जिस प्रकार के वशीकरण के गण्डे-ताबीज बिकते हैं, उनमें ठगी के अतिरिक्त और कुछ नहीं है । पहले तो ईश्वरीय इच्छा के विपरीत होने के कारण ऐसी सिद्धि किसी स्वार्थी मनुष्य को प्राप्त ही नहीं होती । यदि हो भी जाय, तो इतने बड़े परिमाण में नहीं कि हजारों ताबीज हर महीने बेचे जा सकें । यदि यह विज्ञापनबाजी सत्य होती, तो शायद संसार से सतीत्व धर्म अब तक उठ गया होता । लुच्चे गुण्डों ने गृहस्थ धर्म की पवित्रता को कब का समाप्त कर दिया होता ।

यदि आप अब तक ऐसा विचार किए हुए हों कि किसी स्त्री का सतीत्व अधर्म पूर्वक, वशीकरण मंत्र की सहायता से करेंगे, तो उन विचारों को अपने मन से इसी क्षण हटा दीजिए । इस मार्ग से किसी की मानसिक चेतना को किसी तन्त्र शक्ति से अर्द्ध-निद्रित व्यक्ति की स्वेच्छा आपको प्राप्त न होगी । क्या ऐसा संयोग कुछ तृप्ति दे सकता है ? दूसरे यह निद्रा अधिक समय तक कायम नहीं रखी जा सकती । इसलिए जब भी वह जाग्रत होगा, पहले की अपेक्षा और अधिक घृणा करने लगेगा एवं विरोधी बन जावेगा । इसलिए सबसे प्रथम इस मार्ग में आगे बढ़ने से पूर्व यह विचार कीजिए कि आप कोई धर्म विरुद्ध कार्य तो नहीं कर रहे हैं । यदि कर रहे हों तो तुरन्त ही पीछे हट जाइये । यदि आपका मार्ग धर्म विरुद्ध नहीं है, केवल रूठे को मान रहे हैं तो बात अलग है । पति-पत्नी में आपस में अनबन रहती हो, तो वह एक-दूसरे को मनाने या आकर्षित करने का प्रयत्न कर सकते हैं । जहाँ पति-पत्नी का चुनाव आपस में ही करने की स्वतन्त्रता है, वहाँ भी ऐसे प्रयत्न उचित समझे जायेंगे ।

किसी के हृदय को केवल बातूनी जमा खर्च या मन्त्र जप से वश में नहीं किया जा सकता । दो मनुष्यों का सम्मिलन, किन्हीं स्वार्थों के आधार पर होता है । योग्यता ही वह आकर्षण है जो पर्वतों पर अपने लिए स्थान बनाती है । शारीरिक, बौद्धिक और आर्थिक योग्यताओं को दाम्पत्ति चुनाव में प्रमुख स्थान मिलता है । आपकी यह योग्यताएँ जितनी ही ऊँची होंगी उतना ही पात्र को आकर्षित करने में सहायता मिलेगी । यदि आपका प्रेमी, धार्मिक या अन्य किसी विशिष्ट कारण से केवल आपसे व्यक्तिगत रूप से उदासीन है तो समझना चाहिए कि उपरोक्त तीन कारणों में से कोई न कोई बात अवश्य होगी । उन्हें सुधारना चाहिए । कम से कम इतना सुधार तो अवश्य करना चाहिए कि दूसरे पक्ष को कामचलाऊ सन्तोष हो जाय । हार्दिक प्रेम का स्थान बहुत ऊँचा है, पर ऊँचे प्रेमी अपने प्रिय मित्र से कुछ लेने की नहीं, वरन् देने की इच्छा करते हैं । साधारण मनुष्य जो दाम्पत्ति सम्बन्ध स्थापित करने के इच्छुक हैं, उन्हें अपनी योग्यताओं को ठीक करना चाहिए । बिना इनके वह दूसरे के मन को नहीं जीत सकता । एक नवयुवती अपने वृद्ध पति को शायद ही कभी हृदय से प्रेम करे, चाहे वह स्त्री को कितना ही चाहता हो या उसके पास कितना ही धन क्यों न हो । इसी प्रकार बदमिजाजी के कारण भी मन नहीं मिलते । बड़बड़ाने, सन्देह करने, अपशब्द कहने, जरा-जरा सी बात पर तुनक जाने आदि की बातें भी ऐसी बेहूदी हैं कि धन और शरीर की योग्यताओं के बावजूद भी कलह के बीज बोती हैं । मूर्खता मन्द

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुद्धि व्यावहारिक ज्ञान की कमी, उदासीनता इन कारणों से भी दूसरा पक्ष असंतुष्ट हो जाता है । धन का कारण चाहे तीसरा है, तो भी उसका बहुत कुछ महत्त्व है । शारीरिक और मानसिक योग्यता अच्छी होने पर भी यदि आर्थिक दशा ठीक नहीं है, तो बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ता है । कमाने का भार पुरुष पर होता है, यदि पुरुष निरुद्यमी है, या उसकी उपार्जन शक्ति न्यून है, तो चंचल स्वभाव की स्त्री से उसे तिरस्कृत होना ही पड़ेगा । शरीर और मन की योग्यता का अभाव बहुत बड़ा कारण है । दम्पति में से जो इन योग्यताओं को खो देगा वह दूसरे पक्ष को असंतुष्ट कर देगा । दाम्पत्यि जीवन यथार्थ में एक साझे की दुकान है, जो समान योग्यता की आवश्यकता रखती है । सन्तान उत्पन्न करने का कार्य स्त्री के हिस्से और धन उत्पन्न करना पुरुष के हिस्से में है । देश की बढ़ी हुई गरीबी, शारीरिक स्वास्थ्य की निर्बलता, पालन-पोषण की असुविधा आदि कारणों से सन्तानोत्पत्ति कम से कम होनी चाहिए, इस दृष्टि से यदि स्त्री सन्तानोत्पन्न न करे, तो कुछ हर्ज नहीं, किन्तु पति का कार्य अनिवार्य है । उसे पैसा कमाना ही चाहिए ।

चरित्रहीनता या प्रेम की कमी, यह आध्यात्मिकता का अभाव है । वास्तव में देखा जाय तो इन्हीं दोनों की आवश्यकता सबसे अधिक है, पर इस युग में तो पिछली तीन भौतिक बातों पर ही अधिक ध्यान दिया जाता है । आप किसी को अपने सहयोग के लिए तैयार करना चाहते हैं, तो अपनी योग्यताओं को उसकी रुचि के अनुकूल बनाइये । यह वशीकरण का उत्तम मार्ग है ।

एक हीन प्रकार का तीसरे दर्जे का वशीकरण देश में और प्रचलित है । यहाँ परदे की प्रथा के कारण निर्धारित सीमा के अन्दर ही स्त्री-पुरुष आपस में मिल सकते हैं । इसलिए दोनों की इच्छा होते हुए भी प्रेमी आपस में नहीं मिल पाते । इसके विपरीत, वासना की प्रबलता के कारण अथवा अन्य स्वार्थों से प्रेरित होकर अरुचिकर और अयोग्य सम्बन्ध स्थापित हो जाते हैं । बहकावा, ठगी, लोभ, अज्ञान ऐसे सम्बन्धों की जड़ में होता है । अपहरण आदि की दुखःद घटनाएँ अधिकतर होती हैं, जिनमें दोनों की नाम मात्र की पसंदगी होती है, किन्तु तात्कालिक कारण प्रबल होते हैं । यह बहकावे या किसी प्रकार इन्द्रिय शांति के निमित्त किए गए सहयोग एक प्रकार के नारकीय समझौते हैं, जिनमें समझौते की हजार शर्तों में से एक ही पूरी होती है । यह समझौते बहुत कमजोर होते हैं और बात की बात में टूट जाते हैं ।

योग्यता और तात्कालिक स्वार्थ के वशीकरण इन्हीं दोनों का प्रचलन आज अधिक है । इनके लिए दूसरे पक्ष की खुशामद, मीठी बातें, सहायता, प्रशंसा, निकट सम्पर्क में रहना, लोभ, भेंट, पुरस्कार, तरह-तरह के वायदे आदि द्वारा काम चलाया जाता है । एक चलता पुरजा आदमी इन बातों को अपने आप जानता है, या दूसरे अपने सहकर्मियों से सीख लेता है । चेतावनी और दिग्दर्शन के तरीके पर इस सम्बन्ध में कुछ प्रकाश डाल देने के अतिरिक्त इस विषय में कुछ चर्चा करने से हमारा कुछ प्रयोजन नहीं है । जिन्हें वैध रूप में दाम्पत्य सम्बन्ध स्थापित करने की सुविधा है वे अपनी योग्यताओं, सद्गुणों, आन्तरिक सदिच्छाओं और निष्कपट प्रेम का परिचय देकर दूसरे पक्ष को आकर्षित कर सकते हैं । यदि उसने अपने प्रेमी का चुनाव समान दर्जे का किया है और प्रिय पात्र के सम्मुख कोई अधिक उत्तम अवसर नहीं है, तो आपको सफलता मिलेगी । अपने से बहुत असम्मान परिस्थितियों के व्यक्तियों में या तो मैत्री होती ही नहीं, यदि हो भी जाय तो बहुत जल्द टूट जाती है इसलिए प्राथमिक इच्छा उठते ही इन बातों पर विचार कर लेना चाहिए कि जिस मैत्री को हम चाहते हैं, वह सम्भव भी है कि नहीं । यदि असम्भव प्रतीत हो तो अधिक कांटों में उलझने की अपेक्षा पहले ही समझ से काम लेना चाहिए । आध्यात्मिक मित्रता बहुत उच्चकोटि की है । एक प्रेम बन्धन में बंध जाने के उपरान्त प्रेमी प्राण देकर भी पूरी तरह निवाहता है । "अन्ध बधिर रोगी अति दीना ।" जैसे पतियों को भी ईश्वर तुल्य समझकर पूजने वाली और चाहे जैसी अल्प योग्यता की स्त्री हो उसे लक्ष्मी के समान आदर करने वाले दम्पत्ति कम मिलते हैं, पर वास्तव में उन्हीं का प्रेम सराहनीय है । कर्त्तव्य और धर्म को वशीकरण मान कर जो स्वेच्छा से उसके बन्धन में बंधे हुए हैं उन्हीं का वशीकरण धन्य है ।

अब प्रश्न यह उठता है कि यदि एक पक्ष अनुचित मार्ग पर हो तो क्या करना चाहिए ? यदि धर्म बन्धन में बंधने से पूर्व ऐसी स्थिति उपस्थित हो तो घोर विरोध करना चाहिए । यदि रोगी या अयोग्य पति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

के साथ विवाह कराया जा रहा हो तो कन्या का धर्म है कि प्राण-प्रण से उसका विरोध करे और उस संस्कार में सम्मिलित होने से इन्कार कर दे । इसी प्रकार किसी लोभ से यदि अयोग्य कन्या का पाणिग्रहण कराया जा रहा हो तो पति को ऐसा विवाह करने से इन्कार कर देना चाहिए, किन्तु यह विरोध विवाह करने के पूर्व तक ही उचित है । एक धर्म बन्धन में बंध जाने पर एक दूसरे को निवाहना ही कर्त्तव्य है । माना कि विपरीत परिस्थितियों में हार्दिक ऐक्य नहीं हो सकता है तो ऊँचे पक्ष का कर्त्तव्य है नीचे पक्ष को स्वयं कष्ट सह कर निवाह ले और गृहस्थी की कलह को नाट्यशाला न बनावे, क्योंकि गृह कलह का अपने परिवार पर तथा परिवार से बाहर भी अनेक व्यक्तियों पर बुरा प्रभाव पड़ता है । यह प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से समाज में बड़ा उपद्रव उत्पन्न कर सकता है, इसलिए जो हो गया उसे हर दृष्टि से अपनी भूल का प्रायश्चित करने की दृष्टि से भी सहन करना उचित है ।

प्रसन्नता के कारणों में से जिनका सुधार नहीं हो सकता हो उनके लिए ईश्वर इच्छा समझ कर सन्तोष करना चाहिए । जैसे एक पक्ष कुरूप, अंग भंग, वृद्ध या सन्तानोत्पादन में असमर्थ है या ऐसी ही किसी स्थायी शारीरिक अयोग्यता से ग्रसित है तो उसे सहन ही करना पड़ेगा । यदि रोग या दुर्बलता से पीड़ित है, तो उसकी चिकित्सा करानी चाहिए । इसी प्रकार बौद्धिक या आर्थिक उन्नति के लिए परस्पर मिल कर प्रयत्न करना चाहिए । जैसे भी उचित हो कामचलाऊ समझौता कर लेना चाहिए । बुद्धिमान पक्ष होना चाहिए कि कलह के बीजांकुरों को बढ़ने न दे, अपनी सहनशीलता का परिचय देकर तथा दूसरे पक्ष को अधिक सुविधा देकर झगड़े को निबटा लेना चाहिए । एक-दूसरे से निजी सम्बन्ध रखने वाले दोषों का समाधान इस प्रकार हो सकता है, किन्तु यदि एक पक्ष किन्हीं लज्जाजनक कुटेवों में ग्रसित हो तो दूसरे पक्ष को चाहिए कि जैसे भी बन सके उसकी बुरी आदतों को छुड़ावे । केवल विरोध, झगड़ा या बदनामी करने में कुछ सफलता नहीं मिल सकती, इससे तो दूसरा पक्ष और भी अधिक हठी, चिड़चिड़ा एवं दुराग्रही बन जावेगा । यह गुप्त या प्रकट रीति से अपनी आदतों को विरोध की प्रतिक्रियास्वरूप जारी रखेगा, इसलिए यदि दम्पत्ति में से कोई किसी कुटेव में ग्रसित हो तो मामूली कहन-सुनन के अतिरिक्त अत्यन्त उग्र झगड़ा कभी न करना चाहिए । दुर्गुणी पर दूसरों के कहने का उतना असर नहीं पड़ता । अस्तु, ऐसे अवसर उपस्थित करने चाहिए कि वह स्वयं ही अपनी भूल की गम्भीरता अनुभव करे और लज्जित होकर प्रायश्चित की ओर झुके । शराबी और व्यभिचारी पतियों को बुद्धिमान स्त्री आसानी से सुधार सकती है । देखने में यह दो दुर्गुण प्रतीत होते हैं, परन्तु इनका मूल एक ही कारण है, वह है—'मनोरंजन का अभाव' । पत्नी का कर्त्तव्य है कि पति के मनोरंजन की समुचित व्यवस्था रखे । काली कलूटी स्त्रियाँ भी यदि पति की मनोवृत्तियों को पहचानती हुई उन्हें प्रसन्न रखने की कला को समझ लें तो वे उन्हें कुमार्ग से बचाकर अपना ग्रहस्थ जीवन सुखमय बना सकती हैं । रूठने, अभिमान करने, जिद्दी होने और अपनी भूल को अनुभव न करने से कलह बढ़ता है, कर्कश स्वर से द्वेष पैदा होता है, इसलिए दूसरे पक्ष से आपको जो शिकायत है एकांत में गम्भीरतापूर्वक, प्रेम और सरलता के साथ कहिए । मन में जो सन्देह या शिकायत उठे उसका शीघ्र ही निराकरण कर लीजिए । अधिक समय तक अविश्वास के मिथ्या विचार भी मन में पड़े रहें तो अपना स्थान बना लेते हैं ।

दाम्पत्य जीवन को शुद्ध रखने के लिए आवश्यक है कि हृदय इतना उदार हो कि उसमें सन्देह को उठने का स्थान ही न हो । यदि उठे भी तो उसका समाधान उससे ही करना चाहिए जिसके प्रति सन्देह उठा हो । दुनिया में तीन-चौथाई झगड़े भ्रम के कारण होते हैं, वास्तविक कारण चौथाई से भी कम होते हैं । यह भ्रम ही बढ़ते-बढ़ते ऐसा विकट रूप धारण कर लेते हैं कि उनके द्वारा लोमहर्षक परिणाम उपस्थित होते हैं । यदि हम इस सिद्धान्त को अपना लें कि जिनकी शिकायत हो उसी से पूछकर अपना समाधान करें तो निश्चय ही हमारा जीवन कलह से मुक्त हो सकता है । शिकायत कड़ुई होती है और चूँकि लोग कड़ुई बात कहने-सुनने के आदी नहीं होते इसलिए वे उन बातों को पेट में ही डाले रहते हैं । पेट में पड़ी-पड़ी वे बातें चक्रवृद्धि ब्याज की रीति से बढ़ती रहती हैं और तिल का ताड़ बन जाती हैं । दुनिया में सुख-शांति फैलाने के लिए इस बात की आवश्यकता है कि आप कड़ुई बात को मीठे शब्दों में कहने की कला को सीख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जायँ । एकांत में अपने सन्देह को निवारण करने की इच्छा के लिए, विशुद्ध भाव से यदि किसी से पूछा जाय तो वह वास्तविक बात का बहुत कुछ अंश अवश्य बता देगा । यदि नहीं भी बतावे तो यह पूछना ही उसके लिए सौ विरोधों और हजार उपदेश से अधिक काम कर सकेगा, ऐसे प्रश्नों से आदमी अपनी कीर्ति की रक्षा के लिए तुरन्त सावधान हो जाता है और यदि वह दुर्गुण उसके अन्दर प्रवेश हुआ तो तुरन्त ही त्याग देता है । कड़ुई बातों में स्वयं नाराज करने वाली कोई वस्तु नहीं है । नाराज तो आदमी तब होता है, जब कर्ण कटु शब्दों में अपमानित, लांछित या बदनाम करने की बुरी नीयत से सबके सामने पूछा जाय । आप अपने प्रियजन की शिकायत सुनें तो प्रेमपूर्वक उसी से एकान्त में पूछें, इसी में दोनों का ही हित है ।

प्रियजन का वशीकरण

बाहर के लोगों का रागद्वेष इतना महत्त्व नहीं रखता, जितना परिवार का । बाहर के विरोधी को परास्त करने के लिए अनेक प्रकार के मार्ग ढूँढ़े जाते हैं, किन्तु परिवार के सदस्य की बात दूसरी है । यदि पुत्र नाराज हो जाय तो उससे वैसा व्यवहार नहीं किया जायेगा जैसा कि पड़ोसी से किया है । इस देश में सम्मिलित परिवार में रहने की प्रथा होने के कारण प्रायः कई व्यक्ति अपने स्त्री बच्चों सहित एक साथ रहते हैं । इस पूरे परिवार का एक व्यक्ति प्रमुख संचालक होता है । साधारणतः इस संचालक के हाथ में परिवार की शान्ति सुव्यवस्था होती है । यदि वह चाहे तो सबको प्रसन्न रख सकता है । सम्मिलित परिवारों में आर्थिक भेदभाव के कारण अक्सर मन-मुटाव पैदा होते देखा जाता है । भोजन, वस्त्र तथा अन्य खर्चों में भेदभाव का या पक्षपात का व्यवहार करने से असन्तोष के अंकुर उत्पन्न होते हैं । योग्यता, अवस्था, स्थिति के अनुसार घर के लोगों से अलग-अलग व्यवहार होता है । पर उसमें न्याय बुद्धि होनी चाहिए, पक्षपात नहीं । सम्मिलित परिवार तभी तक चल सकते हैं, जब तक कि कपट भाव का समावेश नहीं होता, इसलिए गृहपति की यदि यह इच्छा है कि मेरा परिवार अलग-अलग न हो और मैं सबको वश में किए रहूँ तो उसे बड़ी सावधानी और सतर्कता के साथ अपने कार्यों का निरीक्षण करते रहना चाहिए कि कहीं इसमें ऐसा प्रसंग तो उपस्थित नहीं हो रहा है जिसमें किसी को उँगली उठाने का अवसर मिले । यदि गृह संचालक अज्ञानवश ऐसा कर रहा हो तो उसे सचेत हो जाना या कर देना चाहिए । यदि घर के किन्हीं लोगों में झगड़ा चल रहा हो तो उसे प्रेमपूर्वक सुलझा देना चाहिए । झगड़े की जड़ आरम्भ में ही काट देनी सुगम होती है । पर आगे जब उसकी बेल बहुत बढ़ जाती है तो सम्भालना कठिन होता है ।

वाद-विवाद और पैसे के लेन-देन में बड़ी साफ प्रकृति की आवश्यकता है । छोटे दिल के लोग राजनैतिक, धार्मिक या अन्य विषयों को भी अपनी क्षुद्रता के कारण व्यक्तिगत रूप में ले आते हैं । किसी दूर के विषय पर बातचीत करते, ताश शतरंज खेलते या मामूली हँसी-मजाक करते-करते लोग लड़ने-मरने लगते हैं । इसका कारण 'तंग दिली' है । वे खेल, मजाक या विवाद विषय की हार-जीत को अपनी हार मान लेते हैं, बस उनका पारा गरम हो जाता है । यदि किसी विषय पर वाद-विवाद करना हो तो देख लेना चाहिए कि इसका तंग दिल तो नहीं है । उसकी हार्दिक विशालता पर सन्देह हो तो विवाद से पूर्व ही तय कर लेना चाहिए कि इसका परिणाम लड़ाई तो न होगी ? फिर भी जहाँ तक हो किसी भी प्रकार की प्रतियोगिता का कम से कम अवसर आने देना चाहिए, क्योंकि हार-जीत झूँठी ही क्यों न हो उनका प्रभाव हुए बिना रहता नहीं । पैसे का लेन-देन भी इसी प्रकार का है । हर आदमी को लेना अच्छा और देना बुरा लगता है । छोटे दिल के लोग देने की इच्छा नहीं करते । उनके पास हो तो भी नहीं देना चाहते । इसलिए जब तक दिल खुले न हों पैसे का लेन-देन आपस में न बढ़ावें, क्योंकि यह मित्रता को भंग कर सकता है ।

छोटे बच्चे बिलकुल अज्ञान ही हों ऐसी बात नहीं । 'अभी यह क्या समझता है, ऐसा समझकर बालकों के साथ हीनता का व्यवहार करना वैसा ही बुरा है जैसा बड़े आदमियों के साथ दुर्व्यवहार करना । बालकों की बाह्य बुद्धि भले ही अविकसित हो पर उनकी अन्तरात्मा सदैव-चैतन्य है । आपकी भावना का उस पर अवश्य ही प्रभाव होगा । वास्तविक और बनावटी प्रेम को बालक तुरन्त ताड़ जाते हैं । यदि किसी बच्चे के साथ छोटेपन में हीनता का बर्ताव किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाय तो वह बड़ा होने पर उस मनुष्य से कदापि प्रेम न करेगा । उसका आन्तरिक मस्तिष्क अप्रिय व्यवहार की ठोकरें खाकर ऐसा हो जायेगा कि उससे फिर किसी प्रकार मिल न सकेगा । जिन बालकों को बड़ा होने पर अपना स्नेही बनाना चाहें उनसे उनके बचपन में उचित और प्रेमपूर्ण व्यवहार कीजिए । बिना इसके बड़ी आयु में उन्हें अपना प्रिय पात्र नहीं बनाया जा सकता । मार-पीट, डाँट-फटकार करना, मूर्ख बताना या उन्हें तिरस्कृत या लांछित करना बहुत ही बुरा है, इसका प्रभाव यह होता है कि आगे चलकर वे बालक उद्दण्ड और अवज्ञा करने वाले बन जाते हैं ।

दस-बारह बरस के बच्चे का स्वाभिमान अधिक जाग्रत हो जाता है । उनका वैसा ही आदर करना चाहिए जैसा बड़ी आयु के मनुष्यों का किया जाता है । बेशक, उनका ज्ञान बड़ी आयु के व्यक्तियों की अपेक्षा कुछ कम होता है, पर इसी से वे नीची दृष्टि से नहीं देखे जाने चाहिए । कितने ही बड़ी आयु के मनुष्य ऐसे हो सकते हैं जो अनेक बातों में इन बालकों से भी कम ज्ञान रखते हों, पर क्या उन्हें अपमानित किया जाता है । छोटा होना ही यदि तिरस्कार की बात होती तो राजा बड़ा होने के कारण हम सबको अपमानित करता और ईश्वर राजा से भी अपनी जूती उठवाता । यह बड़ी अनुचित बात है कि किशोर बालकों को शारीरिक दण्ड दिया जाय या उनसे अपशब्द कहे जायें । यदि आप प्रेम और समझदारी से किसी को वश में नहीं कर सकते तो विश्वास रखिए कि मारपीट करके भी किसी को काबू में नहीं रख सकते । नित्य ऐसी घटनाएँ हमारे सुनने में आती हैं कि अमुक का लड़का घर छोड़कर भाग गया और उसकी जोरों से तलाश हो रही है । असल में घर छोड़कर भागना बाल बुद्धि के अनुसार एक प्रकार की आत्म-हत्या है जिसे हताश और किंकर्त्तव्यविमूढ़ बालक ही करते हैं । कुछ बहकावे में आये हुए या मटरगश्त लड़कों को छोड़कर अधिकांश भगोड़े बालक ऐसे ही होते हैं जो घर वालों के दुर्व्यवहार के कारण भागते हैं । कभी-कभी बालकों के मन में भ्रमण आदि की उत्कट इच्छाएँ उठती हैं । उन्हें मसलना न चाहिए वरन् यथाशक्ति उनका कुछ अंश पूरा करने का प्रयत्न करना चाहिए । बीस-बाईस वर्ष से अधिक उम्र के लड़के जो पढ़ नहीं रहे हैं, वरन् उद्योग कर रहे हैं वे घरेलू कार्य से हाथ खर्च के लिए कुछ नहीं पाते तो बाहर नौकरी के लिए भागते हैं ताकि घर वाले उनसे कुछ कहासुनी न करें । ऐसे लड़कों की वृत्तियों का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण यह है कि वे अपनी उपार्जन शक्ति का फल स्वतन्त्र रूप से देखना चाहते हैं । उन्हें यदि सम्मिलित रखना है तो उनकी आदमनी खर्च का हिसाब उनके सामने रखना चाहिए और नफा-नुकसान के लिए जिम्मेदार हिस्सेदार की तरह उन पर भार डालना चाहिए । कोरा कागजी जमा खर्च नहीं । कभी-कभी उनके हाथ में पैसा आना भी चाहिए । यदि ऐसी सुविधा न हो तो द्वेष भाव से नहीं वरन् प्रसन्नतापूर्वक उन्हें अलग कोई रोजगार करने की स्वीकृति देनी चाहिए । विदेशों में वयस्क लड़कों को उनके संरक्षक आर्थिक दृष्टि से प्रायः पूरा स्वतन्त्र कर देते हैं । माता, पिता उन्हें नौकरी पर लगाने या कारोबार चलाने में पूरी-पूरी मदद करते हैं और लड़कों को स्वावलम्बी देखकर अपनी तौहीन नहीं, बल्कि इज्जत अनुभव करते हैं । जवान लड़कों को आर्थिक स्वाधीनता देने से 'बना घर बिगड़ता' नहीं वरन् बिगड़ा घर बन जाता है । व्यवहार की उत्तमता प्रियजनों के लिए बहुत ही बढ़िया वशीकरण प्रमाणित होती है ।

पाँच अन्य साधन

वशीकरण के साधक को अपने में कुछ अन्य योग्यताएँ भी पैदा करनी होती हैं, क्योंकि उनका बाह्य प्रभाव से बड़ा घनिष्ट सम्बन्ध है । उत्तम स्वास्थ्य, यह एक सबसे बड़ी आवश्यकता है । जिनका शरीर निरोग है, उन्हीं की नाड़ियों में शुद्ध रक्त उत्पन्न होगा और उस रक्त के कारण उत्तम सौन्दर्य प्रकट होगा । किसी आदमी का रंग तो गोरा है और बनावट भी बहुत बढ़िया है, किन्तु स्वास्थ्य हीन है इसलिए चेहरा पीला पड़ रहा है, मुँहासे मुरझाया हुआ है, आँखों में दीनता है, पीड़ा और असमर्थता उसके अंग-अंग से झर रही है, ऐसी स्थिति में उसका रूपवान होना कोई अर्थ नहीं रखता । इसके विपरीत, काले रंग का या मामूली आकृति का व्यक्ति यदि स्वस्थ है तो उसकी सुन्दरता बहुत बढ़ी-चढ़ी होगी । सुन्दर अंगों की बनावट में नहीं वरन् उस तेज में है जो शुद्ध रक्त के द्वारा उत्पन्न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता है, इसी तेज को मानवीय विद्युत शक्ति या आकर्षण शक्ति भी कह सकते हैं । वश दूसरों को करने में और उन पर अपना असर डालने में यह जादू की तरह आश्चर्यजनक प्रतीत होता है । लम्पट पुरुष, उत्तम स्वास्थ्य पर आसक्त होते देखे गए हैं चाहे उनमें अन्य कोई गुण न भी हो । सब दृष्टियों से विचार कीजिए सम्पूर्ण सुखोपभोगों का प्रथम साधन स्वास्थ्य है । यदि आपकी तन्दरुस्ती अच्छी नहीं है तो वशीकरण का सारा प्रयास नीरस प्रतीत होगा, आप सबसे पहले अपनी तन्दरुस्ती को ठीक रखने के लिए प्रयत्नशील रहिए । इसके लिए डॉक्टरों की सलाह लेने या किसी बड़े पचड़े में पड़ने की जरूरत नहीं है । उत्तम स्वास्थ्य हमारी बपौती है । परम पिता परमात्मा ने हमें स्वस्थ बनाकर भेजा है और उसकी इच्छा है कि हम लोग सदैव निरोग रहें । रोग अपने आप प्रायः नहीं आते, उन्हें हम बड़ी खातिर खुशामद से बुलवाते हैं या भारी कीमत देकर मोल खरीदते हैं । "जीभ और गुप्तेन्द्रिय पर यदि काबू रखा जाय तो बीमारी पास नहीं फटक सकती ।" इस वाक्य को गाँठ बाँध लीजिए । बीमार पड़ जाने पर नाना प्रकार के दुःख भोगने और उनसे छुटकारा पाने के लिए बड़े-बड़े प्रयत्न करें इससे तो यही अच्छा है कि पहले से ही सावधान रहा जाय । बिना भूख लगे मत खाइये, पेट को ठूँसकर मत खाइये और बिना चबाये मत खाइये । इन चार बातों पर ध्यान रखने से तन्दुरुस्ती की समस्या बहुत कुछ हल हो जाती है । जब भूख लगे तब ऐसा भोजन कीजिए जो सात्विक और पौष्टिक हो, पेट को थोड़ा खाली रहने दीजिए और हर ग्रास को दाँतों से इतना पीसिए कि वह अपने आप पेट में चला जाय । निगलने के लिए झटके लेने की बिल्कुल जरूरत न पड़े । ईश्वर आपको जैसा घटिया-बढ़िया भोजन दे उसी में सन्तोष कर लीजिए, यह मत सोचिए कि कीमती चीजों में ही ताकत होती है । जीभ को काबू में रखकर खायी हुई जौ की रोटी, मेवा मिठाइयों से बढ़कर बलकारक प्रमाणित होती है । जिस प्रकार धन जोड़ने के लिए, आमदनी बढ़ाना और खर्च कम करना आवश्यक है, उसी प्रकार स्वास्थ्य बढ़ाने के लिए जिह्वा पर काबू रखना चाहिए और उसे संचित रखने के लिए ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए, वीर्य ही जीवन है, उसे नष्ट मत होने दीजिए । जितना अधिक हो सके दीर्घकालीन ब्रह्मचर्य रखिए । वीर्य जैसी अनमोल वस्तु को कदापि व्यर्थ नष्ट न होने दीजिए । शारीरिक और मानसिक गुणों को चेतना देने वाली वस्तु वीर्य है, इसलिए गुप्तेन्द्रिय पर भी काबू रखिए और उसे कुमार्ग पर मत जाने दीजिए । इन दोनों इन्द्रियों को काबू में रखने से आपका स्वास्थ्य बहुत उत्तम रह सकता है । अन्य स्वास्थ्य सम्बन्धी साधारण नियमों को सब लोग जानते हैं, उनका यथाविधि पालन करना चाहिए ।

(२) **प्रसन्नता**—प्रसन्न रहना, हँसना, मुसकराते रहना यह वशीकरण की साधना में बड़ा ही दिव्य अस्त्र है । फूल जब खिलता है तो बरबस सबका मन अपनी ओर खींच लेता है । मुख की बन्द कली में से दाँतों की पंखुरि जब आप खोल देंगे तो यह स्वर्गीय पुष्प बड़ा ही सुन्दर बन जायेगा और दूसरों के मन को लुभा लेगा । फूल जब तक अपने दाँतों को होठों के अन्दर बन्द किए रहता है, तब तक उसकी ओर कोई ध्यान नहीं देता । कहते हैं कि—'हँसने में मुँह से फूल झड़ते हैं ।' हँसना एक कला है, जिसमें विश्व की सहानुभूति को अपनी ओर खींच लेने का गुण है । हँसना एक मरहम है, जो दूसरों के दर्द से भरे हुए जीवन को आराम पहुँचाता है । आप जब हँसते हैं तो ऐसे सुन्दर चित्र बन जाते हैं, जिसे देखने के लिए बच्चे भीड़ लगाए रहते हैं । जब आप हँसते हैं तो ऐसे पुष्प बन जाते हैं जिन पर मधु लोलुप मक्खियाँ सदैव भिनभिनाती रहती हैं । जिसके चेहरे पर मुस्कराहट नाचती है, उसके मन में ईर्ष्या, द्वेष, चिन्ता कुढ़न को स्थान नहीं मिलता है । आज आपका किसी से झगड़ा हो जाता है, कल उससे मिलते हैं तो प्रेम के साथ मुस्करा जाते हैं । बस जरा-सी बात में सारा बैर विरोध दूर हो गया । एक अरबी के विद्वान का कथन है कि खुदा ने कामयाबी की नियामत खुशमिजाज लोगों के लिए बनाई और बदकिस्मती का मर्शिया पढ़ने वालों को लानत बख्शी ।" बात ठीक है । आप अपने दुर्भाग्य, घाटे, अपमान, दुःख, निराशा का रोना रोवें तो सब लोग नाक भौं सकोड़ेंगे । दुनिया में किसी को इतनी फुरसत नहीं है कि वह आपका रोना सुने और अपने को रंजीदा बनाये । आप हँसेंगे तो दूसरे भी साथ-साथ हँसेंगे, रोवेंगे तो दुत्कार कर अलग कर दिए जायेंगे । इसलिए अपने दुर्भाग्य का रोना कभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मत रोइये, यदि सचमुच कोई मुसीबत आयी हुई है तो भी हँसिए । इससे दुःख हल्का हो जायेगा और जग हँसाई नहीं होगी । आप कुरूप हैं तो कोई हरज नहीं, जरा मुस्काइये तो सही आपके मुँह से फूल बरसने लगेंगे । हँसना, यह एक कला है, जो मनुष्य के पहाड़ समान दुःख को भी हल्का कर देती है, जो जीवन को सरस और अस्निग्ध बना देती है जिसके मुँह पर मृदुल हँसी की रेखा खिंची होती है उसके प्रति कौन आकर्षित नहीं होता ? ईश्वर बालकों को छोटेपन से ही यह गुण सिखा देता है । हँसना आत्मा का सर्व-प्रिय गुण है, यह दूसरों को वश में ही नहीं करता वरन् उन्हें शान्त और मुक्त भी बना देता है ।

(३) **पवित्र विचार**—अच्छे विचार और निस्वार्थ भावनाओं में वह शक्ति है कि वे अपने चारों ओर एक विशेष प्रकार का वातावरण बना लेते हैं जिसमें वशीकरण का पूर्ण प्रभाव होता है । ऋषि महात्माओं के आश्रमों में सिंह और हिरण पास-पास बैठे रहते हैं । दुष्ट स्वभाव के जीव जन्तु भी वहाँ पहुँचकर अपना स्वभाव भूल जाते हैं । महात्मा बुद्ध से अप्रसन्न होकर एक डाकू उन्हें मारने आया, पर जैसे ही सामने पहुँचा कि उसके हाथ काँप गए और वह उनके चरणों में गिर पड़ा । दासूर नामक एक व्यक्ति जब हजरत मुहम्मद साहब को मारने पहुँचा, तो तलवार उसके हाथ से गिर पड़ी । स्वामी रामतीर्थ भयानक जंगलों में रात-रात भर घूमते रहते थे । कितनी ही बार शेर, रीछ आदि से उनकी भेंट हुई पर किसी ने उन्हें हानि नहीं पहुँचाई । विचारों में एक ऐसी शक्ति होती है कि वे अपनी जाति के विचारों को अखिल आकाश तत्व में से खींच लाते हैं । शुभ विचार अपने ही समान अन्य लोगों के विचारों को खींच लाते हैं । जो लोग प्रेम और पवित्रता का विचार करते रहते हैं, उनके ऊपर संसार की सहानुभूति और सद्भावनाएँ उमड़-घुमड़ कर आती हैं और प्रसन्नता की छाया से चारों ओर ढक देती हैं । जिसका उद्देश्य ऊँचा है जो भलाई के विचार सामने रखकर किसी कार्य में प्रवृत होता है, उसको पग-पग पर सफलता प्राप्त होती है, हार भी उसके लिए जीत है । श्रीमती लिली ऐलन कहती हैं—"वास्तविक शक्ति और बल पवित्रता में है । जिस मनुष्य के कर्म अच्छे हैं, जिसने मस्तक पर कलंक का टीका नहीं लगाया और जिसकी गर्दन किसी के सामने शर्म से नीचे नहीं झुकती, वह सच्चा बहादुर है । ऐसे आदमी के गले में विजयमाला पहनाई जायेगी । उसके चेहरे के आस-पास वैभव की वास्तविक आभा चमकती होगी, जिस रास्ते वह निकलेगा उसके ईंट पत्थर तक उसके आगे अपना हृदय बिछा देंगे । पवित्रता के बिना ऐसा व्यक्तित्व और किसी प्रकार प्राप्त नहीं हो सकता ।" श्री अरनल्ड कहते हैं—"पवित्रता की शक्ति अपार है उसका कोई अन्त नहीं । यह बल साधारण नहीं वरन् एक दैवी तेज है । यदि आपके विचार ईमानदारी के हैं, तो हमारी घोषणा है कि लोगों के हृदय का राज्य आपके लिए है ।"

(४) **मधुर भाषण**—भोजन के छहों रसों में मुधर रस अग्रणी है । बच्चे से लेकर बड़े तक सभी मीठे को पसन्द करते हैं । इसमें इतनी मधुरता है कि मनुष्य तो क्या देवता भी इसे पसन्द करते हैं । हवन यज्ञों में मीठे का भोग अवश्य होता है, ब्राह्मणों को मीठा खिलाने में अधिक पुण्य बताया जाता है । संसार में सबसे मीठी बोली है । मधुर भाषण जैसी मिठास भला और कहाँ मिल सकती है ? तुलसीदास जी कहते हैं—"वशीकरण एक मन्त्र है, तज दे वचन कठोर ।" रहीम कहते हैं "कागा काको धन हरे कोयल काको देय । मीठे वचन सुनाये के जग वश में कर लेय ।" हिरण मधुर शब्द सुनकर भागना भूल जाते हैं, बीन सुनने के लिए साँप बिल से बाहर निकले आते हैं, एक विद्वान का कथन है कि—"भाषण में वशीकरण की शक्ति है ।" इससे पराये अपने हो जाते हैं । सर्वत्र मित्र ही दृष्टिगोचर होते हैं, मधुर वाणी एक दैवी वरदान है, मोहनास्त्रों में इसे शिरोमणि कहते हैं ।

किसी के साथ जो भालाई की है, उसे प्रकाशित मत कीजिए । किस स्थान पर आपका धन गढ़ा हुआ है, यह जगह-जगह बताते फिरें तो वह चोरी चला जायेगा । इसी प्रकार किया हुआ उपकार यदि आप प्रकाशित कर देंगे, तो वह नष्ट हो जायेगा । बाइबिल में कहा है कि "जो तू करता है उसे इस तरह कर कि एक हाथ के काम को दूसरा हाथ न जानने पावे ।" अपने शत्रुओं को क्षमा कर इससे मित्र होंगे एवम् सर्वत्र प्रेम का सागर लहराता हुआ नजर आयेगा । किसी से कडुए शब्द मत बोलिए, क्रोध में भी अपशब्द मत कहिए, छोटों को भी तू जैसे कर्ण कटु शब्दों से सम्बोधित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मत कीजिए, मधुर बोलिए और विनयपूर्वक बोलिए, फिर देखिए कि आपको इससे कैसी अद्भुत सफलता मिलती है ।

(५) उदारता—उदारता की जंजीरें इतनी मजबूत हैं कि इनमें बन्धा हुआ मनुष्य छूट नहीं सकता । जिसके साथ में आप कोई उपकार-अहसान कर देते हैं वह जन्म भर के लिए आपका गुलाम बन जाता है । एक विद्वान ने कहा है कि—"आदमी का दिल रुपए पैसे से नहीं एहसान से खरीदा जा सकता है ।" जिन लोगों को आप अपना प्रेम पात्र बनाना चाहते हैं उनके साथ में कुछ एहसान कीजिए, उदारता प्रदर्शित कीजिए, जिसकी उसे आवश्यकता है, बिना माँगे दीजिए । बस इस कीमत में आप बड़े से बड़े व्यक्ति को खरीद सकते हैं । जो आज देकर उसका बदला आज माँगता है उसे उतना ही एवज मिल जाता है, किन्तु जो पीछे के लिए छोड़ देते हैं वह दिन दूनी रात चौगुनी ब्याज के हिसाब से बढ़ता हुआ वापस आता है । अपने स्वभाव को उदार बना लीलिए, हर वक्त यह सोचते रहिए कि मैं इस समय किसे, क्या दे सकता हूँ ? जो कुछ दे सकते हैं आज ही दीजिए !

अपने शत्रुओं को क्षमा कर दीजिए, अपने प्रेमियों को हर वक्त कुछ देने की सोचते रहिए । दीजिए, आपके पास पैसा, रोटी, विद्या, सदाचार, श्रद्धा, प्रेम, समय, शरीर जो कुछ भी हो मुक्तहस्त से दुनिया को दीजिए । वह आपको बदले में कुछ देगी । दान वृत्ति को अपनाना, उदारता को स्वीकार करना, गरीब हो जाने का मार्ग नहीं है । समझदार किसान जानते हैं कि गेहूँ बो देने के बाद वह सैकड़ों गुना मिल जाता है । उदारता से ही दूसरों के दिल खरीदे जाते हैं ।

यह पाँच वशीकरण के आवश्यक साधन हैं । आप अपने अन्दर इनको भरने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहिए । इनकी वृद्धि के साथ आपकी सफलता का मार्ग भी साफ होता जायेगा और फिर आपके लिए वशीकरण विद्या कुछ भी कठिन न रहेगी ।

अप्सराओं का वशीकरण

कितने ही मनुष्यों का ख्याल है कि अदृश्य लोक में कुछ ऐसी मायावी स्त्रियाँ रहती हैं जो अपने अन्दर अद्भुत शक्तियाँ धारण किए हुए हैं । शंकिनी, डाकिनी, चुडैल, मसानी देवी, भैरवी आदि का विश्वास सभी देशों में किया जाता है और सब मजहबों में ऐसे अलौकिक स्त्री-पुरुषों की मान्यता है जो आँखों से नहीं दिखाई पड़ते, पर अदृश्य हैं । सभी महजबों में अनेक कथाएँ प्रचिलित हैं, जिनमें यह बताया गया है कि ऐसी अदृश्य सत्ताएँ कैसे कठिन कामों को बात की बात में हल कर देती हैं । भातवर्ष में आम तौर से इन बातों पर विश्वास किया जाता है और ख्याल किया जाता है कि आसाम तथा बंगाल इस विद्या का केन्द्र रहे हैं और अब भी वहाँ बहुत से जानकार मौजूद हैं ।

देश के कोने-कोने में फैले हुए गुप्त और प्रकट तान्त्रिक यह विश्वास करते हैं कि बावन भैरव और चौंसठ योगिनी भी मौजूद हैं और वे विधि विशेष से प्रकट की जा सकती हैं । तन्त्रशास्त्र के अनेक ग्रन्थों में ऐसी ही विधि उपासनाएँ भरी पड़ी हैं । ग्रन्थों में अनेक यक्षिणी बताई गई हैं, जिनके नाम महायक्षिणी, सुन्दरी, मनोहरी, कनकवती, कामेश्वरी, रतिकरी, पद्मिनी, नटी, अनुरागिणी, विशाला, चन्द्रिका, लक्ष्मी शोभना, धान्या, जया, भूतिनी, श्मशानी, अदृश्य करणी, कर्ण, पिचाशी, अन्नपूर्णा आदि हैं । यह अपने नामों के अनुसार अत्यन्त रूपवान, मन को हरण करने वाली, काम किलोल करने वाली, नट विद्या की अभ्यस्त, अनुराग प्रिय, विशाल, चन्द्रिका की तरह उज्ज्वल, विजय करने वाली, डराने वाली, किसी वस्तु को अदृश्य कर देने वाली, कान में गुप्त बात को कहने वाली, अन्न से भण्डार भरे रखने वाली हैं । इनमें से हर एक यक्षिणी मनुष्य की अपेक्षा अनेक गुनी शक्ति रखती है और अदृश्य लोक से उन कामों को करके ले आती है, जिन्हें हम चाहते हैं । इनमें कोई या कुछ यक्षिणी ऐसी भी हैं जो वशीकरण में मदद देती हैं । जिस स्त्री या पुरुष के ऊपर उस यक्षिणी को लगा दिया जाता है वह वहाँ जाकर उसके मन को ऐसा फेर देती हैं कि उसे प्रयोगकर्त्ता के वश में होना पड़ता है, वह उसे जैसे चलाना चाहता है वैसे चलाता है, जो कुछ आज्ञा करता है वह पूरी करती है ।

जिन तान्त्रिक देवियों के बारे में उपरोक्त पंक्तियों में उल्लेख किया गया है, उनके बारे में या उनसे मिलती हुई अन्य अप्सराओं के बारे में बहुत से मनुष्य हमसे पूछ-ताछ किया करते हैं । वे सोचते हैं कि इनमें से कोई देवी यदि हमारे साथ लग जाय, तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारी मनोकामनाएँ पूर्ण हो सकती हैं और जो बात हम चाहते हैं चुटकी बजाते ही हाजिर हो सकती है । लोग बहुत जगह उनकी सिद्धियाँ प्राप्त करने के बारे में ढूँढ खोज करते हैं और इसी सिलसिले में वे हमारे पास भी पत्र भेजते हैं कि कृपया अमुक यक्षिणी की साधना में हमें बता दीजिए, अमुक देवी को अपनी कृपा से हमारे वश में करा दीजिए, जिससे अमुक इच्छाएँ पूर्ण हो जायें ।

ऐसे लोगों के साथ हमारी पूरी हमदर्दी है । मनुष्य का धर्म है कि सर्वोत्तम सुख को तलाश करे, अपने मित्रों की इच्छा पूरी करने के लिए हमने इन अप्सराओं के बारे में अनुसन्धान किया है । जैसा कहा जाता है, वैसा तो नहीं पर कोई देवियाँ हैं जरूर । वे माल ढोने और एक के पास दूसरे की बातें ले जाने की सेवा तो नहीं करतीं, पर जिस पर प्रसन्न होती हैं, उसे स्वर्ग का सुख अनुभव करा देती हैं । रति प्रिया, सुन्दरी, मनोहरी, पद्मिनी, अनुरागिणी, चन्द्रिका आदि से मिलती-जुलती अप्सराएँ तो हमारे कई मित्रों ने देखी हैं और कई के पास हैं भी । वे उनकी साधना विधि बहुत जाँच-पड़ताल के बाद और थोड़े से आदमियों को बताते हैं । परन्तु एक पाश्चात्य तान्त्रिक ऐसे हो चुके हैं, जिन्होंने अप्सराओं का रसास्वादन किया था और उन्हें उनका स्थान, घर, रहन-सहन, साधन की विधि सब कुछ थोड़े से किन्तु बिना लाग लपेट के शब्दों में सबके सामने खोल कर रख दिया है । ऐसा साहस बहुत कम लोग करते हैं । पाठक उत्सुक होंगे कि उस विवरण को हमें शीघ्र बतलाया जाय । अच्छा लीजिए आपको बताये देते हैं । जिन तान्त्रिक की ओर हमारा इशारा है, वे एक बड़े भारी भक्त हुए हैं । उनका नाम है 'माईकल ऐंगलो ।' खुलेआम कहते थे कि "मुझे पत्थरों और चट्टानों में भी दिव्य मूर्तियाँ दिखाई पड़ती हैं । एक ऐसे सिद्ध पुरुष की आवश्यकता है जो इनमें प्राण डाल सके ।" संसार के परमाणुओं में सौन्दर्य और आनन्द की जीती-जागती अप्सराएँ छिपी बैठी हैं, किन्तु निर्जीव होने के कारण वे हमारी सहायता नहीं कर सकतीं । इन प्रतिमाओं में प्राण 'प्रेम' है । यदि हमारे हृदय में निस्वार्थ प्रेम का अमृत भरा हुआ हो, तो उसकी बूँद पाकर ही यह निर्जीव प्रतिमाएँ सजीव हो सकती हैं और अलौकिक सौन्दर्य के कारण हमें अपार आनन्द का अनुभव करा सकती हैं । जब हम अपने पवित्र प्रेम का अमृत संसार के ऊपर छिड़कते हैं तो उसके कण-कण में से श्याम सलोनी अप्सराएँ जाग्रत होकर सामने आ जाती हैं और यही दुनिया यही हमारी झौंपड़ी इन्द्र का परिस्तान बन जाती है ।

प्रभु हमारे चारों ओर व्याप्त हैं । उनकी चैतन्य सत्ता सब तरफ लहरा रही है । संसार में जो कुछ है, सब उसी सत्ता के अन्तर्गत है और उसी मिट्टी से बना हुआ है । ईश्वर की प्रतिज्ञा है कि 'योयथा मा प्रपद्यन्ते तां तथैव भजाम्यहम्' जो मुझे जिस भाव से देखता है, उसके लिए उसी भाव से प्रकट होता हूँ । रामायण साक्षी है "जाकी रही भावना जैसी । प्रभु मूरति देखी तिन तैसी ।" हम जिस भाव से प्रभु को देखते हैं, वे उसी रूप में प्रकट हो जाते हैं । अप्सराएँ क्या प्रभु के रूप से बाहर हैं ? मनोविज्ञान शास्त्र के आचार्य कहते हैं कि—"भावना एक प्रत्यक्ष पदार्थ है उसे ईश्वर तत्व में हम जितने बल के साथ फेंकते हैं वह उतने ही जोर से सामने की वस्तु से टकराकर प्रेरक के पास उसी प्रकार लौट आती है, जैसे कि रबड़ की गेंद जोर से फेंकने पर सामने की दीवार से टकराकर वापस लौट आती है ।" एक दूसरा पंडित कहता है कि "प्रेम और पवित्रता के विचारों से जितना लाभ दूसरों को होता है, उससे अनेक गुना अपने को होता है । इन उत्तम भावनाओं का सबसे अधिक आनन्द उसे प्राप्त होता है, जिस के हृदय में कि वे निरन्तर निवास करती हैं ।"

आप यदि इन अप्सराओं के साथ आनन्द करना चाहते हैं, तो दूसरों से जितना बन सके, ऊँचा प्रेम कीजिए । कलुप कषायों को बिल्कुल हटा दीजिए और इस संसार को प्रभु की रम्य-वाटिका समझते हुए अपने को उसका माली मानिए, एक-एक पौधे को अपने आँसुओं से सींचिए, किसी को मुरझाया देखें तो अपना पसीना बहा कर उस में जल डालिए । इस वाटिका के अपरिमेय सौन्दर्य को देख-देख कर अपने नयनों को तृप्त कीजिए । फिर देखिए इस वाटिका में आपका राजा महाराजाओं जैसा स्वागत होता है या नहीं । लाताएँ आपके गले से लिपटेंगी, वृक्ष आपका पंखा झलेंगे, फूल आपके लिए सुगन्ध भेंट करेंगे, कलियाँ मन्द हँसी से मुस्कराती हुई स्वागत करेंगी । जिस संसार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को आप इस समय रूखा नीरस, कुरूप समझ रहे हैं, वह एक क्षण बाद मधुर, सरस, सुन्दर और पवित्र बन जायेगा जरा प्रेम को अपने हृदय में प्रवेश तो करने दीजिए । आप बदल जायेंगे और आपका संसार बदल जायेगा । जो पत्थर और चट्टान इस समय आपको कठोर, निर्जीव मालूम पड़ रहे हैं, वास्तव में वे वैसे नहीं हैं । भक्त माइकिल ऐंग्लो की आँखों से देखिए, "इनमें एक-एक अप्सरा छिपी बैठी है । वह सौन्दर्य की मूर्ति है और आनन्द की सरिता है । परन्तु बेचारी करें क्या ? निर्जीव हैं उन्हें कोई ऐसा सिद्ध पुरुष नहीं मिलता जो प्राण डाल कर जीवित कर दे और अपनी अंकशायनी बनाये । लोग जिसे वस्तु के लिए व्याकुल फिर रहे हैं, वह स्वयं प्रतीक्षा में खड़ी हुई है, परन्तु दुर्भाग्य की बात है कि हम उसे देख नहीं पाते । काश, हमने प्रेम का महत्त्व समझा होता और इस संजीवन रस के प्रयोग करने की विधि जानते तो कितना सुन्दर होता है । यह संसार हमारे लिए कितना उदार, दयालु और उपकारी बन जाता । दुःख शोक के स्थान पर हम चारों ओर आनन्द ही आनन्द उमड़ता देखते ।"

आध्यात्म विज्ञान बतलाता है कि पिण्ड, ब्राह्मण का नक्शा है । जो संसार में है, वह सभी पिण्ड में मौजूद है । यथार्थ में छोटे परमाणु के अन्दर वह समस्त शक्तियाँ बीज रूप से छिपी हुई हैं जो संसार में कहीं भी दृष्टिगोचर होती हैं । आनन्द की अनुभूति जिन वस्तुओं द्वारा होती है, उनके बीज हर एक चैतन्य परमाणु में पाये जाते हैं । भक्त माइकेल झूँठ नहीं बोलते, वे सच कहते हैं कि यदि किसी जड़ वस्तु पर भी सच्चा प्रेम किया जाय तो उसके अन्तर्गत छिपे हुए परमाणु उत्तेजित होकर प्रेमी की भावना स्वरूप बन जाते हैं, उनके वह शक्ति आ जाती है, जिसके द्वारा आनन्द का स्रोत फूट जाता है । इच्छाओं की पूर्ति के योग्य समुचित मसाला उनके अन्दर से जाग्रत हो उठता है । जड़ प्रकृति में स्थूल दृष्टि से देखने पर जड़ता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है, निर्दयता, निष्ठुरता, निराशा, बदी, बेईमानी, यह बातें जड़ता में ही पायी जाती हैं । पत्थर की आप पूजा कीजिए, उसे रेशमी वस्त्र पहनाइये, उसे उठाकर गंगा तट पर रख दीजिए या और भी अनेक प्रकार के अहसान कीजिए पर वह उनका कुछ भी उत्तर या बदला न देगा । आपकी खुशी या रंजीदगी की वह जरा भी परवाह न करेगा, क्योंकि वह जड़ है । प्रकृति भी इसी प्रकार जड़ है । हम असंख्य मनुष्यों को ऐसी शिकायत करते सुनते हैं कि हमने उनके साथ इतने अहसान किए पर उसने बदी में ही उत्तर दिया । 'नेकी का बदला बदी' यह संसार का स्वभाविक धर्म जो बदलना चाहता है वह मिथ्या प्रयत्न करता है । योगी लोग संसार को मिथ्या, माया, पापमय, भवसागर आदि नामों में पुकारते हैं, उनका मतलब प्रकृति के स्थूल तत्वों से ही, जड़ संसार सचमुच ही मिथ्या और भवसागर है । यह एक चट्टान की तरह निर्जीव है ।

अब प्रश्न उठता है कि फिर उनमें आनन्द क्यों प्रतीत होता है ? आनन्द, जड़ प्रकृति का धर्म नहीं वरन् चैतन्य आत्मा का धर्म है । हमारा हृदय जिन वस्तुओं में प्रेम का आरोप करता है वही आनन्दमय बन जाती हैं । यथार्थ में वह वस्तु स्वयं कुछ नहीं अपने मन का प्रेम ही उसमें आनन्द भर देता है । बालक खिलौने से बहुत प्रेम करता है, बड़ा होने पर उनसे नफरत करता है । खिलौने न तो प्रिय हैं, न अप्रिय । वे सदा एकरस हैं पर मनोभावों का आरोप करते ही उनकी अनुभूति दूसरी तरह की हो जाती है । आपका घोड़ा आपको बहुत प्रिय है, पर यदि वह बेच दिया, तो उस पर से सारी ममता उठ गई । बच्चे को माता, तरुण को स्त्री, वृद्ध को सन्तान प्रिय लगती है । जवान आदमी अपनी माता से उतना प्यार नहीं करता जितना बचपन में करता था । कारण यही है कि माता के ऊपर जो सर्वोत्तम प्यार का उसने आरोप किया था वह अब उठकर स्त्री पर चला गया । छोटा बच्चा अपनी माता से किसी को झगड़ा करते देखे तो उसे मारने दौड़ता है, पर मर जाने पर माता के उसी शरीर को खुशी-खुशी जला देता है । तात्पर्य यह है कि इस समस्त संसार में कुछ भी वस्तु प्रिय या अप्रिय नहीं है । कोई भी चीज प्रसन्नता या अप्रसन्नता नहीं दे सकती । कूड़े-कचरे को देखकर साधारणतः घृणा होती है, पर कागज बनाने वाले उस कूड़े कचरे को ही लक्ष्मी के रूप में देखते हैं । भक्त माइकिल के शब्दों में यह तत्वज्ञान भरा हुआ है । वे कहते हैं कि मुझे चट्टानों में भी एक अप्सरा दिखाई पड़ती है, पर ऐसे सिद्ध की आवश्यकता है, जो उनमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राण डाल सके । यदि इनमें प्राण नहीं तो यह चट्टान के चट्टान ही पड़े रहेंगे, किन्तु प्राण प्रतिष्ठा होते ही रत्नजटित रेशम मखमली पोशाक पहनकर उर्वशी को मात करने वाली यही अनुपम परियाँ आँखों के आगे ऐसा सुन्दर नृत्य करेंगी कि मन मुग्ध हो जायेगा और यही जड़-संसार करोड़ों नन्दन वनों से अधिक आनन्ददायक प्रतीत होगा ।

यह प्राण प्रतिष्ठा कैसे होगी ? प्रेम ही प्राण है । आप स्वार्थ और वासना के विष को अन्तःस्थल में से हटा दीजिए तो इनके भार से दबा हुआ पवित्र प्रेम अपने आप खिल उठेगा । इस पवित्र प्रेम को जिस मन्दिर, पशु, पक्षी, स्त्री पुरुष पर आरोपित करेंगे उसी न्यद्यान के अन्दर की परियाँ छूम-छननन करती हुई बाहर निकल पड़ेंगी । यह परियाँ स्वप्न नहीं सत्य हैं, आत्मा सत्य है, आनन्द सत्य है, इसलिए उनकी अनुभूति रूपिणी यह परियाँ भी सत्य हैं । यह आपका मनोरंजन ही नहीं करतीं वरन् सम्पूर्ण इच्छाएँ तृप्त कर देती हैं । जो वस्तु माँगते हैं वही लाकर देती हैं । इसे भी झूठ मत समझिए क्योंकि जिसने स्वार्थ और विषयों की तिलांजलि देकर इन दिव्य देवियों को जगाया है वह उनसे लड्डू मँगवाने का काम नहीं लेगा । बालक सोचता है कि बड़ा हो जाऊँगा, तो बहुत से कुम्हार नौकर रखूँगा जो रोज हजारों तरह के खिलौने बनाकर मुझे प्रसन्न किया करेंगे । पर बड़ा हो जाने पर कोई उसके उन बचपन के विचार की याद दिलावे कि अब तो आप बड़े हो गए हैं । खिलौना बनाने के लिए कुम्हार नौकर रखिए तो केवल मुस्करा भर देता है, क्योंकि अब उसे खिलौने से भी बढ़ कर दूसरी प्रसन्नता की चीजें प्रात हैं । अब वह अपनी बचपन की बुद्धि की अपूर्णता और खिलौनों की निरर्थकता समझ गया है । इसलिए उनकी तनिक भी इच्छा नहीं करता ।

आप अप्सराओं को वश में करके उनसे तरह-तरह की चीजें लेने की आज इच्छा करते हैं, पर जब वे आपके वश में आ जायेंगी तो देखेंगे कि अब इनका प्राप्त होना ही सबसे बड़ा आनन्द है । वह वस्तुएँ तो अपने आप ही इनके साथ मौजूद हैं, जिन्हें हम बौद्धिक बचपन में खिलौने की तरह चाहते थे । आप निस्वार्थ भाव से प्रेम करना सीखिए । अपने बिराने सभी से पवित्र प्रेम रखिए, सबके लिए शुभकामनाएँ कीजिए, कुएँ की आवाज की तरह आपकी भावनाएँ आपके पास लौट आयेंगी और आत्मा को आनन्द से परिपूर्ण कर देंगी । यह अप्सराएँ आपके ही मानस चित्र, आपकी ही छाया मूर्तियाँ हैं । इन्हें उत्पन्न कीजिए और अपने को आनन्दित करिए ।

यक्षिणी वश में करने के इच्छुको ! यह संसार मरघट है, इसमें अनेक भैरव-भैरवी सोए हुए पड़े हैं । जब सब ओर सुनसान हो जाय, तुम्हारे मद-मत्सर दूर हो जायँ, रात्रि की एकान्त एकाग्रता तुम्हारे मानस लोक में आ जाय, तब चुपचाप बैठना और निर्भय होकर मरघट पहुँचना और किसी मृतक की लाश पर बैठकर मन्त्र का पुरश्चरण करना । मरे हुए प्राणी के शरीर पर नहीं वासनाओं से रहित अपने मन की छाती पर बैठना प्रेम का मन्त्र जपना । हे प्रेम ? आपकी जय हो । आप भूतेश्वर शंकर के स्वरूप हैं, आप मेरी मनोकामनाओं को पूर्ण कर दीजिए । परीक्षा के लिए बड़े-बड़े भूत आयेंगे । कोई डरायेगा, कोई लालच देगा, पर किसी की ओर आँख उठाकर भी मत देखना । अनन्य भाव से यही मन्त्र जपते रहना, हे प्रेम आपकी जय हो, परीक्षा में उत्तीर्ण हुए तो भगवान भूतनाथ आपको यह यक्षिणी उपहार देंगे, जिसे आप चाहते हैं, वह बात की बात में हर किसी को वश में कर दिया करेगी । फिर तीनों लोकों में कोई भी ऐसा न बचेगा जो आपके वशीकरण से बाहर हो । सर्वत्र आपकी विजय दुंदुभी बजा देती है । ऐसी ही तो है वह प्रेमी की दिव्य भावना-वशीकरण की महायक्षिणी ।

यदि चाहें तो आप भी उसे सिद्ध कर सकते हैं और उसके ऐश्वर्य का आनन्द भोग सकते हैं ।

ईश्वर को वश में करना

मनुष्यों का ही नहीं—ईश्वर का वशीकरण सम्भव है । इस संसार की कोई भी वस्तु ऐसी नहीं जो तीव्र इच्छा शक्ति होने पर भी प्राप्त न हो सके । जिन्हें सच्ची आकांक्षा हो, वे परमात्मा की समीपता प्राप्त कर सकते हैं, उसे अपना सहचर बना सकते हैं । प्रेम के, भक्ति के बन्धन ऐसे अटूट हैं कि उनमें मनुष्यों की भाँति परमात्मा को भी बाँधा जा सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप परमेश्वर के प्रिय पात्र बनना चाहते हैं । क्या आप किसी ऐसे मनुष्य को कृपा पात्र बना सकते हैं, जो आपके प्रियजनों से उदास रहा हो या द्वेष करता हो ? जब आपके प्रियजन विपत्ति में पड़े हुए हों और मैं उनकी ओर मुँह पिचका कर उदासीनतापूर्वक आगे बढ़ जाऊँ तो क्या यह कार्य आपकी कृपा प्रात करने योग्य होगा ? कोई माता-पिता उस व्यक्ति से प्रसन्न न होंगे जो उसकी सन्तान से द्वेष करता हो या उपेक्षा की दृष्टि से देखता हो । प्रभु के प्रिय पुत्रों के साथ उदासीनता और दुष्टता का व्यवहार करने वाला कोई जीव यही आशा करता है कि उसे ईश्वर अपना कृपा पात्र बना लेंगे तो वह एक बड़े भारी भ्रम में भटक रहा है । यदि किसी व्यक्ति का प्रेम प्राप्त करना है तो उसकी खुशामद की अपेक्षा उसके आदेशों को पालन करना, उसके प्रियजनों को सुख पहुँचाना, उसकी सम्पत्ति को सुरक्षित रखना अधिक महत्त्वपूर्ण है । ऐसा भक्त जो मुँह से तो राम-राम रटता है, पर कठोर पत्थर जैसा कलेजा लिए बैठा है, किसी के दुःख पर जरा भी नहीं पसीजता व्यर्थ की विडम्बना कर रहा है । शायद ही उसकी तोता रटंत का कुछ परिणाम प्राप्त हो । ईश्वर कर्मकाण्ड को नहीं हृदय की पवित्रता और प्रेम को देखता है । जो संसार के साधारण प्राणियों की सेवा सहायता करके उनको उन्नत बनाने, सन्मार्ग पर लगाने, छाती से चिपटाने के लिए प्रेरित न करे वह क्या प्रेम ?

प्रेम, सुगन्धित पुष्प के समान है । वह अपने वैभव का परिचय सबसे प्रथम अपने पड़ोसियों को देता है । जिसके हृदय में परमात्मा के प्रति भक्ति है, वह आत्माओं के लिए भी प्रकट होगा । पर्वत की कठोरता में से निकल कर जब कोई नदी महासागर में मिलने के लिए प्रयाण करती है तो वह रास्ते में अनेक प्राणियों को तृप्त करती जाती है क्योंकि प्रेम का यह धर्म है कि यह जहाँ कहीं रहे सुगन्धित पुष्प की तरह अपनी दिव्यता से निकटवर्ती लोगों को तृप्त करे । जिस नदी को देख कर प्यासे पशु-पक्षी निराश लौट रहे हों आप दूर बैठ कर भी यह अनुमान लगा सकते हैं कि यह दीखने मात्र की नदी है, जल इसका सूख गया है, और जब तक इसमें जल न भर जाय सागर में आत्मसात् होने के लिए नहीं पहुँच सकती । परमात्मा की सच्ची उपासना और कुछ नहीं, केवल उससे अनन्त प्रेम करना है । बनावट या पाखण्डता से नहीं वरन् सच्चे प्रेम से ईश्वर को प्राप्त किया जा सकता है । ऐसी अनन्य भक्ति या पवित्रता जिसके अन्तकरण में होगी वह अपने निकटवर्ती लोगों को उस अजस्र धारा से स्नान अवश्य करा देगा ।

ईश्वर-भक्त की यह कसौटी है कि वह ईश्वर की सन्तान का भी भक्त होगा । प्रेम और स्वार्थ यह दोनों विरोधी तत्व हैं, दोनों का एक साथ रहना नहीं हो सकता । जो अपनी तृष्णा को तृप्त करने के लिए दूसरों को सताता है वह कैसा धार्मिक ? कैसा भक्त ? कैसा प्रेमी ? संकीर्ण प्रेम के लिए दुःख भोगना पड़ेगा, पर जो अपने लिए कुछ नहीं चाहता उसके लिए वेदना का कोई कारण नहीं । परिपूर्ण ईश्वरीय प्रेम की कक्षा तक पहुँचने के लिए मानवीय प्रेम की परीक्षा पास करनी होती है । जो दृश्य मनुष्यों से प्रेम नहीं कर सकता, वह अदृश्य ईश्वर की भी भक्ति न कर सकेगा ।

प्रेमी दूसरों के दुःख देख कर नहीं बैठा रहता वरन् पसीज जाता है । जबकि वह सत्पुरुषों, सुखी और समृद्ध पुरुषों को देख कर प्रसन्न होता है तो दुःखी लोगों के दुःख का भी प्रभाव होना चाहिए । बालक को जब कुछ कष्ट होता है तो माता की आँखें छलक आती हैं, चूँकि बालक से उसका निकट सम्बन्ध स्थापित है, इसलिए बालक की सुख-दुःख की अनुभूतियाँ भी विद्युत शक्ति की भाँति माता के पास पहुँचती हैं और उसके हृदय में दया उमड़ आती है । यहाँ दुःख और दया के अन्तर को अच्छी तरह समझ लेना चाहिए । दुःख अपने कष्ट की अनुभूति है और दया दूसरों को सहायता करने की भावना । स्वार्थ और परमार्थ में जितना अन्तर है उतना ही अन्तर दुःख और दया में है । प्रेम की दो अनुभूतियाँ हैं—दया और आनन्द । दुःखी को देखकर प्रेमी के अन्तःकरण में दया उमड़ती है और सुखी को देखकर आनन्द उत्पन्न होता है । इसके विपरीत, क्रोध और घृणा स्वार्थ के चिन्ह हैं । स्वार्थी मनुष्य दुःख के समय में समर्थ होने पर क्रोध करता है और असमर्थ होने पर रोता चिल्लाता है एवं सुख मिलने पर घमण्ड में मदहोश हो जाता है ।

पवित्र हृदय व्यक्ति के हृदय में पीड़ित व्यक्तियों के प्रति दया उत्पन्न होती है । आत्मा कायर या

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हतवीर्य नहीं है, इसलिए वह अपनी चैतन्यता दया में मिश्रित कर देती है । जिस कटोरे में खांड रखी हुई है, उसमें यदि दूध डाला जाय तो उन दोनों के समिश्रण से मीठा दूध तैयार हो जायेगा । चैतन्यता और करुणा का मिश्रण होते ही एक बड़ी प्रिय क्रियाशीलता उत्पन्न हो जाती है जिसे हम सेवा के नाम से पुकारते हैं । निस्वार्थ प्रेमी, ईश्वर के भक्त के हृदय में निरन्तर दया उमड़ती रहती है, इसलिए वह सदैव सेवा धर्म में प्रवृत्त रहता है । उसकी सम्पूर्ण क्रियाएँ लोक-कल्याण के लिए होती हैं । सयाने कौवे उसके परमार्थ पर भले ही हँसे पर अपने इस कार्य पर वह स्वयं अनुमान करता है कि सेवा से बढ़कर आनन्दप्रद वस्तु और कोई इस दुनिया में नहीं है । संसार का उच्चतम आनन्द उस सेवा भावी को सदैव प्राप्त रहता है । ऐसा आनन्द जिसकी एक बूँद भी उन कुछ कांचन की नालियों में सड़ने वाले कीड़ों को प्राप्त हो जाय तो वे अपने सौभाग्य की तुच्छता को भली प्रकार समझ जायें ।

एक भक्त का अनुभव है कि—जो आँख दया के आँसू झड़ने से पवित्र हो गई है उन्हें ही ईश्वर की दिव्य मूर्ति दिखाई देती है । एक योगी का मत है कि—निस्वार्थ प्रेम ही वह ढाल है जिसके पीछे रह कर पाप और प्रलोभनों से बचा जा सकता है । ऐसा दिव्य तत्व किस प्रकार प्राप्त किया जाय ? इसके उत्तर में यही कहा जा सकता है कि अपने हृदय को स्वार्थ की कीचड़ से खाली करो, परमात्मा उसमें प्रेम का अमृत भर देगा । कुत्सित इच्छाओं के विदा होते ही उसकी आभा दिखाई देने लगती है । कहते हैं कि ईसामसीह को शूली पर चढ़ाकर मार डाला गया, किन्तु जब उनकी लाश को नीचे उतारा गया तो वे पुनः जीवित हो गए । अपने पवित्र प्रेम को अपने स्वार्थों की शूली पर चढ़ा कर मार डाला है । चलिए पश्चात्ताप कीजिए और उस मृतक को शूली पर से नीचे उतार लीजिए । वह ईश्वर का सगा बेटा अपने आप जीवित हो जायेगा और आपके पापों की गठरी अपने सिर पर लादकर आपको पार कर देगा ।

ईश्वरीय प्रेम क्या है ? मानवीय प्रेम का ही एक वृहत्तर रूप है । 'सर्वदेव नमस्कारं केशवं प्रति गच्छति ।' सब देवताओं के लिए किया हुआ नमस्कार केशव को प्राप्त होता है । सम्पूर्ण प्राणियों से किया हुआ प्रेम ईश्वर को प्राप्त होगा । आप निष्कपट भाव से ईश्वर की भक्ति कीजिए, उसकी चलती-फिरती प्रतिमाओं के चरणों पर अपना मस्तक टेक दीजिए । ईश्वर आपको ठुकरायेंगे नहीं, वे आपको उठा कर छाती से लगा लेंगे । जब आप अपने को ईश्वर को सौंप रहे हैं तो ईश्वर आपसे पीछे न रहेगा, वह भी अपने को आपके सुपुर्द कर देगा । इस प्रकार आप मनुष्यों को ही नहीं ईश्वर को भी प्रेम के वशीकरण मंत्र द्वारा अपने वश में कर सकेंगे ।

वशीकरण के तान्त्रिक प्रयोग

तन्त्र शास्त्र की गुप्त प्रक्रियाएँ जो हठात् किसी मनुष्य को अर्द्ध-निद्रित करके वशीभूत कर लेती हैं, बहुत कठिन है, उनका अभ्यास खतरे से खाली नहीं है । हर कोई न तो उन्हें कर सकता है और न सबके लिए उनकी आवश्यकता है । वह पात्र और अधिकारी का विषय है । कुपात्र उसे प्राप्त भी करलें तो दुरुपयोग करेंगे और प्रभु की पवित्र सृष्टि में विष बोते फिरेंगे । इसी प्रकार अनधिकारी इस ओर बढ़ेंगे तो उन खतरों में पड़ जायेंगे जो अक्सर तान्त्रिक अभ्यासों में अनाड़ी साधकों को उठानी पड़ती हैं । इन सब बातों को ध्यान में रखते हुए एक सर्व सुलभ साधन का यहाँ उल्लेख कर रहे हैं ।

मानसिक साधन

मस्तिष्क में प्रेम शक्ति का स्थान कनपटी के ऊपरी भाग में है । अपने इस स्थान को जाग्रत करने के लिए निम्न प्रकार का अभ्यास कीजिए । रात को आठ और दस बजे के बीच किसी एकान्त कमरे में जाइये । दरवाजे और खिड़कियाँ बन्द कर लीजिए, जिससे बाहर की खटपट सुनाई न पड़े और कोई दृश्य दिखाई न पड़े । प्रकाश बहुत ही मन्द हो । एक पतली बत्ती का दीपक टिमटिमाना या छोटी मोमबत्ती जला लेना पर्याप्त है । मेज-कुर्सी का प्रबन्ध हो सके तो उत्तम है, न हो तो आसन पर एक फुट ऊँची लकड़ी की सन्दूक को सामने रखकर उत्तराभिमुख बैठ जाइये । यह कहने की तो आवश्यकता ही नहीं है कि मल-मूत्र से निवृत होकर एवं हाथ-पाँव, मुख आदि धोकर अभ्यास पर बैठना चाहिए । आरम्भ में पालथी मार कर

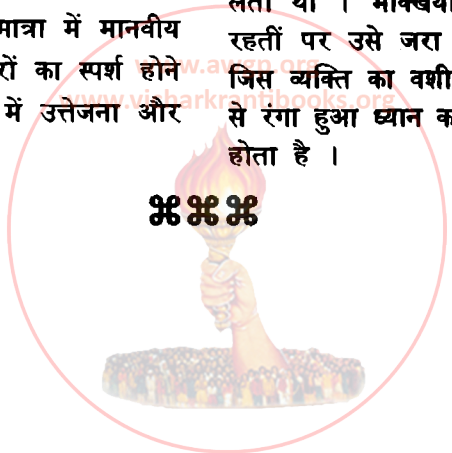
Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेरूदंड को सीधा रखते हुए आँखें बंद करके बैठ जाइये । दस मिनट तक मन ही मन ॐ राम या जो मन्त्र हो उसे जपते रहिए और मन को एकाग्र करने का प्रयत्न कीजिए । दस मिनट बाद जप बन्द कर दीजिए और हाथों की दोनों कुहनियाँ मेज़ या सन्दूकची पर जमाइये तथा जबड़े के निचले भाग को हथेलियों पर रख लीजिए । उँगली को ऊपर कनपटी की ओर उठा दीजिए । इस प्रकार आपके दोनों हाथ दोनों गालों को ढक लेंगे । हथेलियाँ जबड़े से सटी हुई होंगी और उँगलियाँ कनपटी के पास पहुँच जायेंगी । अब उँगली के पोरुओं को कुछ नीचे की ओर झुकाइये और कान के ऊपरी भाग की सीध कनपटी से तर्जनी, मध्यमा और अनामिका को उँगलियों के पोरुओं के अन्तिम सिरे से सटा दीजिए, हथेलियों पर सिर का अधिक जोर न देना चाहिए, थोड़ा सा सहारा पर्याप्त है । विज्ञान बताता है कि उँगली के पोरुओं में बहुत अधिक मात्रा में मानवीय विद्युत रहती है । उँगलियों के छोरों का स्पर्श होने पर मस्तिष्क के प्रेम शक्ति संस्थान में उत्तेजना और हलचल पैदा होती है ।

उपरोक्त प्रकार से बैठकर नेत्र बन्द कर लेने चाहिए और मानस जगत् में पीले रंग का ध्यान करना चाहिए । निखिल विश्व में पीले रंग का ही आकाश भरा हुआ है, यह ध्यान दृढ़ता से करना चाहिए । केवल पीले रंग का अनन्त आकाश ही चारों ओर फैला हुआ देखने से मस्तिष्क के प्रेम केन्द्रों में एक प्रकार का चुम्बकत्व उत्पन्न होता है । जब जो मनुष्य प्रेमपूर्ण विचार कर रहा हो तो उसके मस्तिष्क से पीले रंग की किरणें फूटती हुई यन्त्रों द्वारा देखी गई हैं । इसी प्रकार यह भी अनुभव किया जा चुका है कि जब मन में केवल पीले ही रंग का ध्यान हो, तब प्रेम केन्द्र उत्तेजित हो जाता है । कई बार परीक्षा के लिए पीले रंग का ध्यान करते हुए व्यक्तियों के शरीर पर जहरीले डंकों वाली मक्खियाँ और बिच्छू छोड़े गए, किन्तु उन्होंने रत्ती भर भी कष्ट न दिया । एक आयरिश डॉक्टर शहद की मक्खियों का छत्ता नंगे शरीर होकर तोड़ लेता था । मक्खियाँ उसके चारों ओर भिनभिनाती रहतीं पर उसे जरा भी नुकसान न पहुँचाती थीं । जिस व्यक्ति का वशीकरण करना हो उसको पीले रंग से रंगा हुआ ध्यान करने से वह अपनी ओर आकर्षित होता है ।

⌘⌘⌘



Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परकाया : प्रवेश की साधना

कैसे हो सकता है ?

'परकाया-प्रवेश' शब्द हमारी रोज क बोल-चाल की भाषा में कम प्रयोग होता है, इसलिए इसमें कुछ विचित्रता और अजनबीपन सा प्रतीत होता है । परन्तु ध्यानपूर्वक देखने पर इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है । यह प्राणियों का स्वाभाविक धर्म है । थोड़ी बहुत मात्रा में सभी प्राणी नित्य के जीवन में इसका प्रयोग करते हैं, जिनमें यह शक्ति अधिक होती है, वह उससे अधिक लाभ उठा लेते हैं । विशेष अभ्यास के साथ प्रचुर परिमाण में इस कला को सीख लेने के उपरान्त ही बड़े-बड़े कठिन कार्यों में ऐसी सफलता प्राप्त की जा सकती है, जिसे अलौकिक और अद्‌भुत कहा जा सके ।

'परकाया' शब्द का अर्थ पराया शरीर है । पर काया प्रवेश अर्थात् दूसरे के शरीर में प्रवेश करना होगा । यहाँ यह सन्देह उत्पन्न होता है कि दूसरे के शरीर में भला किस प्रकार प्रवेश किया जा सकता है ? शरीर चमड़े की झिल्ली से ढँका हुआ है । माँस, मज्जा, अस्थि आदि से उसकी दीवारें इस प्रकार से बनी हुई हैं कि एक सुई भी कहीं होकर प्रवेश नहीं कर सकती । यदि एक छोटी सी आलपिन चुभाई जाय, तो सारी देह पीड़ा से बेचैन हो जायेगी और उस जगह से खून निकलने लगेगा । ऐसी दशा में भला परकाया प्रवेश कैसे होगा ? यदि मुँह, कान, नाक, मल, मूत्र छिद्रों में से प्रवेश करने की बात हो, तब भी समझ में नहीं आती, क्योंकि यह छिद्र भी कुछ ही दूर तक स्पष्ट रूप से खुले हुए हैं । नियत सीमा से आगे इनमें से भी कोई वस्तु प्रवेश नहीं पा सकती । फिर क्यों कर किसी के शरीर में प्रवेश पाया जाता है और यदि पाया भी जा सके, तो उससे क्या लाभ होगा ? जिन वस्तुओं की कुदरती आवश्यकता है, उन्हीं के प्रवेश कर सकने योग्य परमात्मा ने इस शरीर को बनाया है; उससे अतिरिक्त वस्तुएँ इसमें ठहर नहीं सकतीं । जैसे तम्बाकू का धुआँ पीने पर भी पेट में नहीं रह सकता । कोई विषैली वस्तु खा ली जाय, तो तुरन्त ही दस्त या कै शुरू हो जाते हैं । नाक में अप्रिय वस्तु पहुँच जाय तो छींक आने लगती है । आँखों में कचरा पड़ते ही उसको बहा देने के लिए पानी बहने लगता है । अतएव परकाया प्रवेश किस प्रकार हो सकता है ? और यदि हो भी सके, तो उससे क्या प्रयोजन सिद्ध होगा ?

उपरोक्त शंका करते समय पाठक इस भ्रम में होंगे कि शायद हाड़-माँस के शरीर में इस हाड़-माँस का ही कोई अंग प्रवेश की बात कही जायेगी । पर हमारा इस प्रकार का कोई मन्तव्य नहीं है । ऐसा हो भी नहीं सकता और यदि हो भी सके, तो उसका लाभ एक विशेष अवसर ही हो सकता है, जैसे हड्डी टूट जाने पर बकरे आदि की हड्डी बिठा दी जाती है, नवयौवन प्राप्त करने के लिए बन्दर की गिल्टियाँ लगा दी जाती हैं । रक्त कम पड़ जाने पर दूसरे के शरीर का खून पिचकारी द्वारा रोगी के शरीर में पहुँचा दिया जाता है । विटामिन तत्व कम हो जाने पर मछली का तेल पिलाते हैं, कई रोगी में पशु-पक्षियों का माँस खाने को दिया जाता है, किन्तु यह सब बातें चिकित्सा शास्त्र से सम्बन्ध रखने वाली हैं और भौतिक विज्ञानी डाक्टर लोग ही इनका प्रयोग करते हैं । आध्यात्म तत्व-जिसके आधार पर इस पुस्तक की रचना की जा रही है, इस प्रकार की किसी क्रिया को नहीं बतलायेगा । योगियों की दृष्टि में शरीर का महत्त्व इतना ही है कि वह आत्मा के रहने का मन्दिर होने के कारण तीर्थ स्थान है, इसलिए इसकी धर्मपूर्वक सावधानी और रखवाली करनी चाहिए, जिससे वह असमय में ही नष्ट न हो जाय और रोगी न पड़ जाय । इससे अधिक विशेष चिन्ता और माथा-पच्ची करने की आध्यात्म तत्व की शिक्षा नहीं है ।

इस पुस्तक के पाठकों को यह जानना चाहिए कि काया यथार्थ में कोई वस्तु नहीं है । यह जड़ पदार्थ-एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिट्टी के ढेल के सदृश्य है । जिसकी शक्ति से यह संचालित है, वह चैतन्य तत्व-प्राण शक्ति है । प्राण के बल से ही यह नाचती, कूदती है, वह बल समाप्त हो जाने पर यह एक तिनका भी नहीं उठा सकती । यहाँ तक कि अपने आपकी रक्षा भी नहीं कर सकती । मरे हुए शरीर को कुत्ते, कौए खाने लगें, तो वह हाथ भी नहीं हिला सकती । कुछ देर उसे योंही छोड़ रखा जाय, तो अपने आप सड़ने लगे और कीड़ों का आहार बन कर नष्ट हो जाय । शरीर उन अगणित कल पुर्जों से बनी हुई मशीनों के सदृश्य है, जो बिजली या भाप आदि की शक्ति से चलती हैं । यदि कोई ताकत उन्हें चलाने वाली न हो, तो बहुमूल्य मशीन अपने आप जरा-सी खिसक भी नहीं सकती । शरीर में जो कुछ सुन्दरता, बल, बुद्धि, ज्ञान, योग्यता, दिखाई देते हैं, उनकी असली शक्ति प्राण में निहित है । प्राण के विकृत होते ही उत्तम शरीर भी बिगड़ जाता है । जो मनुष्य दस दिन पहिले बहुत अच्छा था, वह पागल हो जाने के कारण आज घृणा का पात्र बन गया है । जिसका मन दुष्ट होता है, उसके शरीर में चाहे कितना ही आकर्षण क्यों न हो चोर, दुराचारी, धूर्त और पापियों की तरह उसे तिरस्कार ही सहना पड़ेगा । इसके विपरीत यदि शरीर टेड़ा-मेड़ा, काला-कलूटा, कुरूप और भद्दी बनावट का हो और आत्म शक्ति उत्तम हो तो, वह मनुष्य सम्मान ही प्राप्त करेगा । अष्टावक्र ऋषि आठ जगह से टेड़े थे, उनकी देह बड़ी कुरूप और देखने में उपहासास्पद मालूम होती थी, फिर भी वे धुरंधर विद्धानों में अग्रिणी थे, अपने जमाने के राजाओं द्वारा पूजे जाते थे । लँगड़ा तैमूर लंग, काना रणजीत सिंह, अपनी कहानी आप ही हैं । गाँधी की सूरत शक्ल आपने कभी पास से देखी होगी, तो बड़ा कौतूहल हुआ होगा, परन्तु जिसके बल पर विश्व के समस्त मानव समाज का मस्तिष्क उनके चरणों पर झुक गया है, वह उनकी देह में नहीं, वरन् उसके भीतर है ।

उपरोक्त पंक्तियों का तात्पर्य इतना ही है कि 'मनुष्य' शरीर नहीं आत्मा है । आत्मा के गुणों में कुछ घट बढ़ हो जाने पर शरीर की योग्यता में घट-बढ़ होती रहती है । कालिदास आरम्भ में इतने मूर्ख थे कि पेड़ की जिस डाली पर बैठे थे, उसी को काट रहे थे । किसी दयालु ने उन्हें रास्ते पर लगा दिया, तो इतने बड़े विद्वान हुए कि संस्कृत में उनकी सानी का कवि ढूँढ़ने पर नहीं मिलता । जीवन का बहुत बड़ा भाग हत्याएँ करते और डाके डालने में लगाने वाले बाल्मीकि जब बदले, तो महान् ऋषि के रूप में प्रकट हुए और पतन की कहानियों के बारे में तो कुछ कहना ही नहीं है । हर जगह ऐसे असंख्य उदाहरण मिल सकते हैं, जो कुछ दिन पहले बड़े श्रेष्ठ सदाचारी थे, किन्तु दुर्बुद्धि के कारण नीच कर्म करने लगे और पतित हो गए । यह सब उत्थान पतन के कार्य हाड़ माँस का पुतला नहीं कर लेता । इसका जो करने वाला है, वही कर्त्ता है, वही मनुष्य है, वही आत्मा है ।

मनुष्य जो कुछ काम शरीर से करता है, वह यों ही एकदम या अपने आप नहीं हो जाते । उनका बीज मन में उत्पन्न होता है । वहाँ उस प्रकार के विचार बनना आरम्भ होता है । वह विचार लगातार उठते रहने पर दृढ़ हो जाते हैं । और यदि कोई बाधा उपस्थित न हुई, तो क्रिया रूप में परिणित होने लगते हैं, यदि परिस्थितियाँ अनुकूल हुईं, तो शरीर द्वारा वैसा ही कार्य होने लगता है । शायद ही कोई आदमी अचानक किसी कार्य में प्रवृत्त होता है । उसके मन की परख की जाय, तो पता चलेगा कि कुछ समय पूर्व से ही ऐसे विचार उसके मन में उठने लगे थे, सुविधा पाकर वे विचार फूल उठे और उस प्रकार का काम शुरू हो गया ।

हर प्रकार के विचार बीज अपने आप ही नहीं उठ बैठते वे, बाहर से भी आते हैं । पूर्व संचित संस्कारों का असर मन के ऊपर अंकित रहता है, परन्तु दूसरों का असर भी प्रचुर मात्रा में पड़ता है । संगति के गुण दोषों को सब लोग स्वीकार करते हैं । सत्संग के बारे में रामायण कहती है-"काक होंहि बक, पिकहु मराला ।" इसी प्रकार दुष्ट संग है । बुरे आदमियों की सोहबत में अच्छे लोग भी खराब हो जाते हैं । इसका कारण क्या है ? कारण यह है कि एक आदमी के मन के विचारों का प्रवेश इसके मन में होता है । फलस्वरूप उसमें भी वैसे विचार उठने लगते हैं । वेश्याओं के मुहल्ले में जाकर रहने से स्वभावतः कामुकता के विचार उठने लगते हैं । सन्त महात्माओं के आश्रमों का वातावरण कितना शान्तिदायक होता है । गवैयों की महफिल में बैठकर बिना गाने वाले का भी तान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के ऊपर सिर हिलने लगता है । विचारों का वातावरण दूसरों पर असर डालता है । अधिक मात्रा में अधिक शक्ति और सामर्थ्य के साथ छोड़े गए विचारों का वातावरण दूसरों को प्रभावित किए बिना नहीं रहता । इस सूक्ष्म विज्ञान को बहुत से आदमी नहीं जानते पर उसके परिणाम को प्रत्यक्ष देखते हैं । दूसरों के प्रभाव से किसी का अपने पूर्व स्वभाव में परिवर्तन कर लेना क्या है ? यह परकाया प्रवेश का उदाहरण है । राम एक साल से बुरे लोगों की सोहबत में है, अब उसने अपने पुराने सद्गुण त्याग दिए हैं, और नं. १ का गुण्डा बन गया है । यह किस प्रकार हुआ ? बुरे लोगों ने अपने विचार उसके ऊपर प्रेरित किए । उन विचारों ने राम के मस्तिष्क पर आक्रमण किया और अच्छे विचारों को हटाकर अपना कब्जा कर लिया । राम का दिमाग अब अच्छे भावों से बिल्कुल खाली हो गया और उन दूसरे विचारों के कब्जे में पहुँच गया । इससे यह बात सिद्ध साबित हुई कि विचार आसानी से दूसरों के ऊपर आक्रमण कर सकते हैं । यदि वे जोरदार हैं तो उसे अपना अनुवर्ती बना सकते हैं । यह क्रिया संसार में दिन-रात जान और अनजान में हो रही है । जिससे प्रतिक्षण असंख्य मनुष्यों के जीवन में विचित्र परिवर्तन हो रहे हैं । यही पर काया प्रवेश है । शरीर में शरीर का प्रवेश नहीं हो सकता पर एक मन के विचार दूसरे के मन में प्रवेश करके उसके शरीर को अपनी इच्छानुकूल चला सकते हैं, यदि कुशलतापूर्वक और विशेष युक्तियों के साथ इस कार्य को किया जाय तो इतनी शीघ्रता और अधिकता से परिवर्तन होते हैं, कि आश्चर्य करना पड़ता है ।

यह क्रिया नई नहीं है

राजा को अपने राज की सारी व्यवस्था करने के लिए मन्त्री की आवश्यकता होती है । मन्त्री अपनी योग्यतानुसार सारे शासन तन्त्र को चलाता है । इसी प्रकार आत्मा की कार्य-वाहिनी शक्ति का नाम प्राण है । यह मन से कुछ ऊँची और सुसंस्कारित सत्ता है । यह प्राण शक्ति शरीर के विभिन्न अंगों में अपनी प्रेरणा से क्रिया उत्पन्न करती है । हमारे शरीर के कलपूर्जों के चलने में जो क्रिया हो रही है, वह अद्भुत है । वैज्ञानिकों का मत है कि मनुष्य के शारीरिक और मानसिक कामों को चलाने में इतनी विद्युत शक्ति खर्च होती है जितनी से एक बड़ा मिल चल सकता है । मनुष्य की तमाम शक्तियों से सम्पन्न एक कृत्रिम मनुष्य बनाया जाय तो उसके संचालन में एक बिजलीघर की पूरी ताकत लग जायेगी । मृत्यु क्या है ? उस बिजलीघर का फेल होना है । शरीर के तमाम कल पुर्जे बदस्तूर रहते हैं कोई कहीं से टूटता-फूटता नहीं, केवल विद्युतधारा बन्द हो जाती है । शरीर की बिजली का क्षेत्र केवल अपने कल पुर्जों तक ही सीमित नहीं है । वरन् वह बाहर की चीजों पर प्रभाव डालने और उनसे शक्ति ग्रहण करने का कार्य भी करती है । एक वैज्ञानिक ने अपने गहरे अनुभव के आधार पर बताया है कि हमारी बिजली का एक तिहाई भाग कल पुर्जों के चलाने में खर्च होता है । एक तिहाई से यह गुप्त क्रिया होती है कि अनन्त आकाश में उड़ते फिरते विचार, बल आदि को पकड़े और उनमें से अरुचिकर, हानिकारक, रोग कीटाणुस बुरे विचार आदि को दूर फेंके । शेष एक तिहाई बिजली दूसरे प्राणियों पर अपना प्रत्यक्ष प्रभाव डालने और उनका अच्छा असर ग्रहण करने के काम आती है । इन तीन भागों में से भी प्रत्येक तिहाई की शक्ति असंख्य मार्गों द्वारा खर्च होती है । या यों कहना चाहिए कि उस पावर हाउस में से असंख्य तार लगे हुए हैं और वे भिन्न-भिन्न दिशाओं में विभिन्न कार्य करते रहते हैं । मानव शरीर की विद्युत का अन्वेषण करने वाले कहते हैं कि हाल के जन्मे बालक की भी तमाम बिजली एकत्रित करली जाय, तो उससे एक डाक गाड़ी का इन्जन चल सकता है । बड़े होने पर यह शक्ति बढ़ती है और जो व्यक्ति उसे बढ़ाने की कोशिश करते हैं, उन्हें तो और भी अधिक बल मिल जाता है ।

यह शक्ति पशु पक्षियों के शरीर में भी होती है । भारत के प्रसिद्ध क्रांतिकारी और वैज्ञानिक श्री हंसराज जी वायरलेस ने बेतार के तार का एक यन्त्र बनाने में छिपकलियों के शरीर से काफी मदद ली थी । खद्योत अपने शरीर की बिजली को चमका कर कैसा सुन्दर प्रकाश करता है । एक प्रकार की मछली छोटे जल जन्तुओं का शिकार करते समय अपनी बिजली का ऐसा झटका देती है कि वह बेहोश हो जाते हैं । बड़े अजगर सर्पों की विद्युत से छोटी चिड़ियाँ और मेंढक मूर्तिवत् अचल खड़े रह जाते हैं, कई बार तो वे खुद घिसट कर साँपों के मुँह तक चले जाते हैं । भेड़िये को देखते ही भेड़ का भागना तो दूर, उसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मुँह से आवाज निकलना तक बन्द हो जाती है । बिल्ली, शेर, बाघ आदि भी अपने शिकार को पकड़ते समय इस शक्ति से काम लेते हैं । मनुष्यों की यह शक्ति पर्याप्त मात्रा में होती है उसमें आकर्षण (Negative) और विषर्कण (Positive) दोनों ही धाराएँ विद्यमान रहती हैं । क्रोधित और रोष में भरे हुए व्यक्ति को सामने देख कर हमारे पाँव काँपने लगते हैं, किन्तु एक सुन्दर स्त्री को देखने के लिए बरबस आकर्षित हो जाते हैं । यह क्या है ? यह उन्हीं आकर्षण विकर्षण शक्तियों का प्रभाव है । वेश्याओं के यहाँ बदनामी, धन व्यय, स्वास्थ्य नाश होते हुए भी लोग जाते हैं, अपनी स्त्री के निकट सम्पर्क में आने की इच्छा रहती है, सुन्दर बच्चों को खिलाने के लिए मन ललचाता है । मित्रों पर सर्वस्व न्यौछावर कर देते हैं, यह सब आकर्षण शक्ति-धारा का खेल है । कभी-कभी तो यह शक्ति गजब का काम कर जाती है । एक व्यक्ति अपने स्वतन्त्र विचार रखता है, वह अपने विरोधी विचार वाले के पास विरोध करने के लिए जाता है, किन्तु वहाँ जाकर कुछ ऐसा असर पड़ता है कि अपने विचारों को छोड़ कर वह दूसरे के विचारों को अपना लेता है और उसी के अनुरूप बन जाता है । कई बार ऐसी घटनाएँ देखने में आती हैं कि एक व्यक्ति जिस विषय में कुछ भी रुचि नहीं रखता उस काम के लिए दूसरे व्यक्तियों द्वारा उसे बहका लिया जाता है और वह उस काम में बहुत दिलचस्पी लेने लगता है । दो व्यक्तियों के एक साथ रहने पर यदि प्रेम सच्चा हो तो यह आकर्षण शक्ति इतनी बढ़ जाती है कि एक बिना दूसरे का जीवन कठिन हो जाता है । प्रेमी के विरह में आत्महत्या कर लेना या पति के साथ सती हो जाना इसी आधार पर होता है । इसी प्रकार विकर्षण शक्ति का असर है । जालिम आदमियों की सूरत देखकर डर लगने लगता है, प्रभावशाली शक्ति के सामने जाकर कई व्यक्ति ठीक तरह बोल भी नहीं सकते और कुछ का कुछ कहते हैं । अदालतों में हाकिमों के सामने बात करने में कई लोगों का दम फूलता है । क्रोधियों और रूखे स्वभाव के लोगों के पास से जल्दी ही उठ चलने को जी चाहता है, घृणित कर्म करने वाले और पापियों से दूर रहने की स्वाभाविक इच्छा होती है । विकर्षण शक्ति का गुण अलग हटाना दूर फेंकना है ।

यह तो हुआ दैनिक जीवन में स्वाभाविक शक्ति का स्वयंमेव होने वाला प्रभाव विशेष अवसरों पर विशेष शक्ति द्वारा जान बूझकर डाला गया असर इससे भिन्न तथा बहुत अधिक शक्तिशाली होता है । यह पहले ही कहा जा चुका है कि हमारे अपने बिजलीघर की शक्ति असंख्य अलग-अलग तारों में होकर बह रही है । यदि दो चार तारों में चलने वाला प्रवाह एक ही तार में चालू कर दिया जाय, तो वह पहले की अपेक्षा कहीं अधिक शक्ति सम्पन्न हो जाता है और यदि दस, बीस, पचास, चालीस, तारों की शक्ति एकत्रित कर ली जाय, तो उसी संख्या में और भी अधिक बल मिलेगा । तात्पर्य यह है कि मनुष्य की विशृंखलित शक्तियों का यदि एकत्रीकरण हो जाय, तो वह अत्यधिक प्रभावशाली हो सकता है और उससे आश्चर्यजनक एवं अलौकिक कार्य किए जा सकते हैं ।

मनुष्य की विशृंखलित विद्युत शक्ति को इकठ्ठी करने पर उसके अद्‌भुत परिणाम होते हैं । सूर्य की धूप चारों ओर फैली रहती है और साधारणतः अपना काम करती रहती है, किन्तु यदि एक आतिशी शीशे द्वारा दो इंच जगह की धूप को एक बिन्दु पर एकत्रित किया जाय, तो कुछ ही सेकण्ड में आग जलने लगेगी और उस आग की शक्ति से विशाल बमों को भस्म किया जा सकता है । साधारण तरीके से किसी में हाथ का धक्का मार दिया जाय, तो कोई ज्यादा चोट न लगेगी, किन्तु हाथ को घूंसे की शक्ल में बना कर और पूरे जोर से खींच कर किसी के मर्म स्थान में मारें, तो उसे गहरी चोट पहुँचेगी और तिलमिला उठेगा । मानसिक शक्तियों की विशेष तैयारी के साथ किए हुए आघात की चोट शारीरिक आघात से कहीं अधिक गहरी होती है । सरकस में पतले तारों पर नाचने वाले और शरीर को गेंद की तरह उछालने वाले नट नटी यही कहते हैं कि 'हमने कोई जादू नहीं सीखा केवल मन को एकाग्र करने का अभ्यास किया है । जिस समय लोग तमाशा देख रहे होते हैं उस समय हमारी निगाह और सारी विचार शक्ति अपने कार्य पर एकत्रित होती है ।' एकाग्रता की शक्ति महान् है । बिखरी हुई शक्तियों का एकत्रीकरण ही शक्ति का पुंज है । कल के मोची, चपरासी और आबारे जिनकों पेट भरने के भी लाले पड़े हुए थे आज दुनियाँ में तहलका मचा रहे हैं । हिटलर, मुसोलिनी, स्टालिन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के आतंक से सारी पृथ्वी काँप रही है । इन लोगों ने अपनी शक्ति को पहचाना और उसे एकत्रित करके एक दशा में लगाया है । उस दिन नेपोलियन नामक एक लड़का महान् एपल्स पर्वत के निकट पहुँचा । वह अनन्त काल से रास्ता रोके पड़ा था । नेपोलियन ने दृढ़तापूर्वक कहा तुम्हें मेरे मार्ग में से हटना पड़ेगा, बेचारा ऐपल्स आखिर जड़ पदार्थ था, चैतन्य तत्व की गर्मी कैसे सह सकता था, उसे हटना पड़ा और नेपोलियन के लिए जगह देनी पड़ी । लक्ष्मण ने जब धनुष पर डोरी चढ़ाई, तो बेचारा समुद्र घबरा गया और रास्ता देने की स्वीकृति देता हुआ हाथ जोड़ कर सामने आ खड़ा हुआ ।

हिन्दू इतिहास पुराणों का पन्ना-पन्ना ऐसी कथाओं से भरा पड़ा है, जिनसे सिद्ध होता है कि मनुष्य अपनी इच्छा शक्ति और एकाग्रता के बल पर दूसरों को शाप वरदान दे सकता है, उनका भला बुरा कर सकता है, उनके मन में अपने विचारों को प्रवेश करके इच्छानुसार काम करा सकता है ।

पर काया प्रवेश क्यों ?

गत अध्याय में बताया जा चुका है कि पर काया प्रवेश क्या है और उसका होना किस प्रकार सम्भव है । अब प्रश्न उपस्थित होता है कि उसकी क्या आवश्यकता है ? भूत, प्रेत आदि का प्रवेश यदि किसी की काया में हो जाता है, तो उसे कष्ट होता है और उसके साधारण कार्यक्रम में बाधा पड़ती है । सर्पादि का शरीर प्रवेश भी इसी प्रकार हानिकारक सिद्ध होता है ।

संसार की समस्त बातों के भले-बुरे दोनों ही पहलू होते हैं । हर वस्तु को दोनों प्रकार के काम में लाया जा सकता है । ऊपर के दोनों उदाहरण इस विद्या के बुरे पहलू हैं । वह तो मनष्येतर दुष्ट प्राणियों की बात है, स्वयं मनुष्य ने भी आत्मशक्ति का काफी दुरुपयोग किया है । पिछले दिनों एक युग ऐसा आ गया था कि आज के भौतिक विज्ञान की तरह उस समय आत्म-विज्ञान का उपयोग स्वार्थ-साधन, प्रति हिंसा और इन्द्रिय तृप्ति के लिए किया जाने लगा था । बाम मार्ग के तान्त्रिक कर्म, आध्यात्म पथ के उग्र और शीघ्र फल देने वाले साधन हैं । इनके द्वारा नीच श्रेणी के मनुष्य भी कुछ चमत्कारिक शक्ति प्राप्त कर लेते हैं । ऐसे लोगों के हाथ में पहुँचने पर हर एक सत्ता का दुरुपयोग ही हो सकता है । मध्य युग में तान्त्रिकों का एक आतंक सा छा गया था, वे अपने स्वार्थ साधन के लिए मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि के ऐसे दुष्ट कर्म करते थे, जिनके द्वारा साधारण जनता का दिल दहल जाता था । ऐसे वीभत्स कार्यों का अन्त शीघ्र ही हो जाने का प्राकृतिक नियम है । कहते हैं कि "जालिम की उम्र कम होती है ।" सर्व साधारण को हानि पहुँचाने वाले कार्य अधिक दिन जीवित नहीं रह सकते । तन्त्र शक्ति के द्वारा जब कुकर्म होने लगे, तो इस विज्ञान के विरुद्ध लोक में घोर घृणा फैल गई और तान्त्रिकों का सहयोग करना छोड़ दिया गया । लोक विरोध के कारण तान्त्रिकों को अपने को छिपाना पड़ा, जो इस विज्ञान के पंडित थे और शक्ति रखते थे, उन्होंने भी अपने भेद को गुप्त रखा, क्योंकि प्रकट करने पर वे आपत्तियों के शिकार बनते थे । तब से अब तक उन क्रियाओं के जानने वाले बराबर अपने को छिपाते हैं, यद्यपि अब जमाना बहुत आगे बढ़ चुका है, हर सत्य का समुचित आदर होता है और जनता में तन्त्र शक्ति के लिए उस प्रकार की घृणा और आतंक भी नहीं हैं, फिर भी पूर्व परिस्थिति के अनुसार इस विषय के विद्वान् गुप्त रहने की परम्परा को ही बनाये हुए हैं ।

इस विद्या का प्रयोग यदि नीच कार्यों के लिए हो, तो सचमुच इससे जनता का कुछ लाभ नहीं, वरन् उल्टी हानि है । किन्तु यदि इसका उपयोग लोगों के मानसिक उत्थान, उनकी उन्नति के लिए किया जाय, तो किसी प्रकार बुरा नहीं कहा जा सकता । हमारा विश्वास है कि इस शक्ति का उपयोग हमारे अनुयायी परोपकार के लिए ही करेंगे, जनता की सेवा करना ही साधकों का धर्म होना चाहिए । इस पुस्तक में इस शक्ति के द्वारा पाँच प्रकार की क्रियाओं द्वारा पाँच प्रकार के कार्य करने का उपाय बतलाये गए हैं । इसके अतिरिक्त और भी अनेक प्रकार के अनेक कार्य हो सकते हैं, परन्तु जान-बूझ कर इस पुस्तक में नहीं लिखा गया है, क्योंकि इस पुस्तक को कोई भी व्यक्ति पैसे देकर खरीद सका है, किन्तु प्रचण्ड शक्ति रखने वाली बन्दूक हर बालक के हाथ में नहीं दी जा सकती ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आगे के पृष्ठों में केवल इतना ही बताया जायेगा कि किसी दुष्ट स्वभाव वाले बुरी आदतों में फँसे हुए, रोगों से ग्रसित और विकृत मनोवृत्ति वाले व्यक्ति को किस प्रकार सुमार्ग पर लाया सकता है । दूसरे के मन में कैसे विचार उठ रहे हैं, इस बात को निदान के रूप में मालूम किया जा सकता है । इसमें कहीं किसी ऐसे साधन की चर्चा नहीं की गई है कि अच्छे पुरुषों को बुरा कैसे बनाया जाय ? या स्वस्थ मनुष्य को पीड़ित कैसे किया जाय ? यदि इस प्रकार की शिक्षा दी गई होती, तो सचमुच ही बड़ा अनर्थ हो सकता था ।

शुभ और अशुभ विचार स्वयं एक पृथक-पृथक सत्ताएँ हैं । उनके गुण अलग-अलग हैं । शुभ संकल्पों से दूसरे का हित और अपनी उन्नति होती है, यह मेहँदी के रंग के समान है जो दूसरे के हाथ को रचाते समय अपना हाथ रच जाता है । किन्तु अशुभ विचार चिन्गारी के समान है, जो दूसरी वस्तुओं को तो जलाती ही है, पर छोड़ती उसे भी नहीं, जिस पर वह रखी गई थी—जहाँ उसे आश्रय दिया गया था । लोक हितकारी काम चाहे वह शारीरिक हों या आध्यात्मिक अवश्य फलेंगे-फूलेंगे और उनसे करने वाले की शक्ति बढ़ेगी, किन्तु दुष्ट कर्मों में दूसरों का जितना अहित होता है, उससे अधिक अपना हो जाता है । चोर दूसरे का माल चुराकर उसे उतनी हानि नहीं पहुँचाता जितनी अपने को । हर समय डरते रहना, भय से खून सुखा लेना, आत्मा के अन्दर अशान्ति रहना, लोक-परलोक बिगाड़ लेना, और पकड़े जाने पर कठोर दण्ड भोगना, क्या इतनी हानि उन पैसों से भी कम है, जो उसने चुराए थे ? इस पुस्तक में बताए हुए अभ्यासों से किसी भी साधक में ऐसी शक्ति नहीं आयेगी कि वह किसी भले स्वभाव के स्त्री-पुरुष को बुराई के रास्ते पर खींच सके, उसमें उलटी बुद्धि उत्पन्न करके हानिकारक कार्यों को करा सके, स्वार्थ के लिए किसी को अपने चंगुल में कस सके, या मारण, मोहन, वशीकरण जैसे अभिचार, अभिघात कर सके । यदि दैव योग से किसी में ऐसी शक्ति हो भी जाय तो उसे ध्यान रखना होगा कि कितने ही बड़े प्रलोभन के लिए उसका अनुचित उपयोग न करें, यदि करेगा तो हम भुजा उठाकर कहते हैं कि 'ऐ, क्रूर कर्माओं ! इस अग्नि से भद्दा खेल मत खेलो; अन्यथा प्राप्त शक्ति को तो खो ही दोगे साथ ही खुद भी नष्ट हो जाओगे ।'

इस पुस्तक का 'परकाया प्रवेश' एक नियत सीमा तक है । किसी बालक का स्वभाव चिड़चिड़ा हो गया है, वह बात-बात में जिद्द करता है, सांसारिक ज्ञान को बहुत ही धीरे-धीरे प्राप्त कर रहा है, अर्थात् बड़ी उम्र हो जाने पर भी उसे उतनी जानकारी नहीं है जितनी कि उस उम्र के बालकों में साधारणतः होती है, किसी बालक का मस्तिष्क अविकसित है, विद्या पढ़ने में या याद रखने में कमजोर है, चोरी करने की या झूठ बोलने आदि की लत पड़ गई है, तो इन सब कमजोरियों के बारे में तुम उसकी इस विद्या द्वारा मदद कर सकते हो । कोई किशोर चटोरे स्वभाव का बन गया है, फैशन की तड़क-भड़क पर बहुत ही मुग्ध है, मनोरंजन के कामों में अधिक व्यस्त रहता है, बीड़ी पीने की टेव सीखता जाता है, बुरी सोहबत में ब्रह्मचर्य को नष्ट करता है, पढ़ने में कमजोर है या उदासीन है तो उस पर इस विज्ञान का अद्भुत असर होगा । कोई वयस्क स्त्री पुरुष क्रोधी स्वभाव का हो चला है, अपने या दूसरे के ऊपर झुंझलाता रहता है, दुर्व्यसनों में फँसने लगा है, आचरण नष्ट कर रहा है, न करने योग्य कामों में प्रवृत्त है, आलस्य या उदासीनता से ग्रस्त है, मानसिक उलझनों ने जकड़ रखा है, या विरह, दुःख, शोक आदि से पागल हो रहा है तो उसके लिए इस विज्ञान का प्रयोग बहुत ही उत्तम होगा । वह व्यक्ति पास हो तो ठीक, अन्यथा दूरस्थ होने पर भी विशेष परिश्रमपूर्वक प्रयोग किया जा सकता है और यह निश्चय है कि किसी के भी ऊपर किया गया प्रयोग कदापि व्यर्थ नहीं जा सकता है । अभ्यास और क्रिया की त्रुटि से यदि पूरी-पूरी सफलता न मिले तो भी बहुत बड़ी मात्रा में सुधार अवश्य हो जायेगा ।

'परकाया प्रवेश' की ही एक शाखा 'पर-चित्त-विज्ञान' है जिसका उल्लेख इस पुस्तक के अन्तिम पृष्ठों पर किया गया है । इसके द्वारा दूसरे के मन में किस प्रकार के भाव उठ रहे हैं ? वह इन दिनों किस प्रकार के भावों से ग्रस्त है ? उसके विचारों में किस प्रकार का क्या परिवर्तन होता जा रहा है ? आदि बातों को जाना जा सकता है । किन्तु कोई ऐसा प्रयत्न करना कि इसकी निजी बातों को जान लें—इसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धन कहाँ गड़ा है ? इसका किस व्यक्ति से कैसा सम्बन्ध है ? इसके गुप्त प्रोग्राम क्या हैं ? तो उन्हें निराश होना पड़ेगा । इन बातों को जानने के अधिकारी इस पुस्तक के पाठक नहीं हैं । यह बहुत आगे की बात है । जब तक इन बातों के जानने का लालसा है, तब तक वह इसका पात्र नहीं । उसे दूसरे की गुप्त बातों का इस प्रकार पता चल जाय तो संसार में बड़े-बड़े अनर्थ उपस्थित कर सकते हैं । वीतराग महात्मा जिन्हें संसार से पूर्ण रूप से विरिक्त हो जाती है और जो इस प्रकार के भेदों को मालूम करना मूर्खता समझते हैं, उनका पवित्र अन्तःकरण वह बातें जान सकता है । साधारण लोगों के लिए तो इतना ही पर्याप्त है, कि वे इसका परिचय प्राप्त कर लें, कि कौन आदनी इस समय किस प्रकार की विचारधारा से परिपूर्ण है । पिछले समय में कैसे विचारों से भरा जा रहा है और अब उसके विचारों में क्या परिवर्तन हो रहा है ।

क्या इस प्रकार की 'परकाया प्रवेश' सम्बन्धी योग्यता संसार का कुछ भी उपकार न कर सकेगी ? क्या साधक इसके अलौकिक महत्त्व को नहीं समझेंगे ?

दूसरों को कैसे समझावें ?

मनुष्य स्वभाव का यह एक सिद्धान्त है कि जो बात बलपूर्वक और गंभारता के साथ कही जाती है, उसे वह मान लेता है । मनुष्य का मन आम तौर से तर्क-वितर्क के झगड़े से बचना चाहता है । किसी बात को मानने से उसके कार्यक्रम में कोई बड़ा भारी परिवर्तन प्रत्यक्ष रूप से होने वाला हो या किसी का मन स्वाभावतः ही बहुत तर्कशील हो, उसी दशा में कुछ सन्देह और अधिक सोच-विचार करने की इच्छा होती है । आमतौर से उन बातों को भी स्वीकार कर लिया जाता है, जिनके मानने पर अप्रत्यक्ष रूप से अपना बड़ा भारी हानि-लाभ होता हो । साधु बच्चों को उठा ले जाते हैं, अमुक स्त्री डायन है, अमुक पेड़ पर भूत रहता है आदि बातें अफवाहों के रूप में उड़ती हैं और हजार पीछे नौ सौ आदमी उन पर विश्वास कर लेते हैं, इस बात की तलाश बहुत ही कम लोग करते हैं, कि यह बात कहाँ तक सच है ? इसलिए दूसरे लोगों को जिस बात के लिए प्रभावित करना है, उसके लिए कुछ बातों को खास तौर से ध्यान रखो ।

कोई नई बात या ऐसा विषय किसी आदमी को समझाना चाहते हो, जिसे वह अब तक नहीं मानता रहा है, तो उस बात को उसके मन में भरने के लिए बहुत बुद्धिमानी के साथ काम लेना होगा । पहली ही बार उससे यह मत कहो कि तुम्हें यह करना चाहिए और यही नहीं करना चाहिए । ऐसा कहने से उसका सुप्त मन और वर्तमान आदतें एकदम बगावत कर देंगे । एक घोड़ा मुद्दतों से जिस सड़क पर चलता रहा है, उसे किसी नई सड़क पर ले जाना चाहोगे तो उसे बहुत अखरेगा, वह रुकेगा, बिगड़ेगा और लातें मारेगा । इसलिए प्रथम वार्त्तालाप में अपना अन्तिम उद्देश्य पूरी तरह प्रकट मत हो जाने दो । उस आदमी से क्यों बार-बार मिलते हो, इसके लिए कोई दूसरा छोटा-मोटा कारण निकाल लो । मान लो तुम बीमा ऐजेन्ट हो और किसी आदमी को बीमा कराने के लिए तैयार करना चाहते हो, तो उससे आरम्भ में ही अपनी बात मत खोल दो, क्योंकि किसी आदमी से आरम्भिक बात-चीत करते समय हर कोई दो बातों को बड़ी सावधानी से देखता है, अपनी हानि और दूसरों का स्वार्थ । यदि किसी प्रस्ताव में उसे इन दोनों बातों की गंध आ जाय, तो स्वभावतः वह उस प्रस्ताव से उचट जायेगा । यहाँ हम चर्चा करने नहीं बैठे हैं कि तत्वतः क्या बात सत्य है और क्या असत्य ? यहाँ तो हमें मनोविज्ञान शास्त्र के अनुसार मनुष्य स्वभाव की गुत्थी को सुलझाना है । कोई आदमी व्यभिचारी है, वह दुराचार में अपनी कमाई फूँकता है । मान लो कि वह आदमी तुम्हारा भाई है और सम्मिलित परिवार में रहता है । तुम उससे कहते हो कि वह बदमाशी छोड़ दो और घर की आर्थिक दशा सुधारो, तो निश्चय ही उसकी आदतें एकदम उबल पड़ेगी और अपने इन्द्रिय सुख की हानि एवं परिवार में होने के कारण अपनी कमाई से उसके लाभ उठाने का स्वार्थ दिखाई देगा । जहाँ यह दोनों बातें इकट्ठी दिखाई दीं कि आदमी उस बात पर से उचटा । इसलिए सीधा आक्रमण मत करो । जंगली हाथी से लड़कर उसे पकड़ना चाहो, तो यह जरा मुश्किल है, पर उन्हें फुसलाकर तो हर साल हजारों हाथी पकड़े जाते हैं ।

जिस बात के लिए किसी आदमी हो तैयार करना चाहते हो, उसके लिए कुछ दर्जे नियत कर लो । पहले दर्जे में उस विषय की अच्छाइयों का उदाहरण सहित वर्णन होना चाहिए । दूसरे दर्जे में उन बुराइयों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर हल्का आक्षेप होना चाहिए, जिनमें वह आदमी वशीभूत है । तीसरे दर्जे में उसकी अच्छाई से उसके जीवन को सम्बन्धित करते हुए एक सुन्दर चित्र खड़ा करो । बस, यहीं तक उसे ले चलो । यदि तुम देखो कि यह व्यक्ति हमारी आज्ञा मानने न मानने के लिए बिल्कुल स्वतन्त्र है, तो कोई कड़ी आज्ञा मत दो । उसके मन में अपने विचारों का प्रबल घेरा डालकर उन्हीं में उलझा हुआ छोड़ दो और अन्त में यही कहो कि जैसा तुम्हें उचित प्रतीत हो करो । योगिराज कृष्ण अद्वितीय मनोविज्ञान वेत्ता थे, उन्होंने अर्जुन के विचारों को बदल कर दूसरे विचार लेने के लिए इन्हीं सिद्धान्तों का प्रयोग किया है । रणक्षेत्र में पहुँच कर जब अर्जुन को मोह हुआ है और उसने गाँडीव को पटक कर संन्यासी हो जाने का निश्चय किया है, उसके उस समय के मन का जरा अध्ययन कीजिए । असंख्य व्यक्तियों का रक्तपात उसके भयंकर परिणाम और उसके फलस्वरूप प्राप्त होने वाली तुच्छ वस्तु इन तीनों की बातों के मिश्रण से एक उदार, दयाशील और त्यागी व्यक्ति के मन में स्वभावतः ही युद्ध से विरक्ति हो सकती है और वह विरक्ति की भावना केवल शंका नहीं, एक गहरी अनुभूति होगी । ऐसी अनुभूति का थोड़े से समय में हटा देना कोई आसान बात नहीं थी । कृष्ण यदि केवल आज्ञा के रूप में आदेश करते कि "तुम्हारे यह विचार ठीक नहीं, चलो युद्ध करो" तो कदाचित उन्हें सफलता न मिलती और अर्जुन तैयार न होता । इसलिए उन्होंने धैर्य और बुद्धिमानी से काम लिया ।

गीता के अनुसार भगवान कृष्ण ने आरम्भ में आत्मा की अमरता और शरीर की नश्वरता का वर्णन करते हुए युद्ध को दोष रहित और क्षत्रिय के लिए स्वर्ग देने वाला धर्म कार्य बताते हुए उस बात की अच्छाई सिद्ध की, जिसे वे कराना चाहते थे । तदुपरान्त दूसरे दर्जे में युद्ध न करने, संन्यासी होने की व्यर्थता और दोष बताये कि तेरी कीर्ति चली जायेगी, अपमान होगा, धर्मच्युत हो जायेगा, लोग गालियाँ देंगे, डरपोक कहेंगे । इस प्रकार उन्होंने उस बात के दोष बताए, जिन्हें वे त्याग कराना चाहते थे । तीसरे दर्जे में उन्होंने अपने प्रस्ताव के अनुसार अर्जुन से अपना कार्यक्रम बना लेने का सुन्दर चित्र खींचते हुए कहा—मर जायेगा तो स्वर्ग मिलेगा और जीतेगा तो राज्य भोगेगा, इसलिए इसी प्रस्ताव को स्वीकार कर । जब तक अर्जुन कच्चा था, तब तो कृष्ण कहते थे कि "युद्धाय कृत निश्चयः" अर्थात् युद्ध का ही निश्चय कर, परन्तु जब अर्जुन पक गया, उनकी बातों से पूरी तरह प्रभावित हो गया, स्वीकार करने लगा और केवल अन्तिम फैसले की बात आयी, तो तीसरा दर्जा आ गया । तब कृष्ण पल्ला झाड़कर अलग हो गए उन्होंने साफ कह दिया कि—'यथेच्छसि तथा कुरु' जैसी तेरी इच्छा हो सो कर । क्योंकि अन्तिम निश्चय तो उस व्यक्ति को स्वयं ही करना चाहिए, ऐसा करने से वह उस पर दृढ़ रहेगा । दूसरे की आज्ञा से जो कार्य किया गया, उससे आदमी बहुत जल्दी लौट सकता है, किन्तु अपने आप जिस बात का आखिरी फैसला किया गया, वह बात अन्त तक पार जायेगी ।

इस प्रकार किसी व्यक्ति के विचार बदलने के लिए इन दर्जों का चुनाव करना चाहिए । कोई आदमी चोरी करता है, तो आरम्भ में इस प्रकार का प्रसंग उसके सामने रखना चाहिए, जिससे चोरी न करने की अच्छाइयाँ, उदाहरण सहित बताई जायें । तदुपरान्त चोरी करने वालों की दुर्गति भी उदाहण देते हुए सिद्ध की जाय । इसके पीछे ऐसा एक सुन्दर चित्र उस आदमी के सामने खड़ा किया जाय, कि यदि ईमानदारी से रहने लगे तो उसकी किस प्रकार उन्नति हो सकती है । लगातार इस प्रकार बातें कुछ अधिक दिनों तक, थोड़ा-थोड़ा अवकाश देकर थोड़े-थोड़े समय तक करनी चाहिए । एक साथ सब कुछ समझा देना उचित नहीं होता, इससे उसे अनिच्छा, उदासी आने लगती है । पहली बार उसकी रुचि अपनी ओर आकर्षित कर लेना ही पर्याप्त है, उसे इस दशा पर ले आया जाय कि दुबारा मिलने के लिए उत्सुक रहे । हर भेंट में इस उत्सुकता का बढ़ते जाना सफलता का चिन्ह है । जब बातचीत समाप्त करनी हो, तब बहुत ही मनोरंजक बात दूसरी बार के लिए अधूरी छोड़ देनी चाहिए । संस्कृत साहित्य में 'हितोपदेश' और 'पंचतन्त्र' नामक दो पुस्तकें इस दृष्टि से बहुत ही महत्त्वपूर्ण हैं । उनकी हर एक कहानी अपनी एक नई शाखा कहानी के लिए उत्सुकता छोड़कर अधूरी समाप्त हो जाती है । इस प्रकार अगले दिन के लिए उत्सुकता बनाये रहने के निमित्त कोई बहुत मनोरंजक बात अधूरी छोड़ी जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकती है । यदि किसी के मत की पुष्टि कर रहे हो, तब तो किसी लगाव लपेट की बात नहीं है, सीधे शब्दों से उस विषय का समर्थन ऐसी मनोरंजनता और प्रमाणों के साथ करो कि उसके विचार और अधिक दृढ़ हो जायें, किन्तु यदि किसी के विचारों को पलटना है, तो निश्चय ही लगाव लपेट के साथ बात करनी चाहिए । किसी आदमी के जिन विचारों से तुम बुरा समझते हो, वह स्वयं ऐसा नहीं समझता । उसके लिए वह बातें प्रिय हैं और अपनी प्रिय वस्तु को जाते देखकर ही किसी को क्षोभ होता है । शराबी की निगाह में नशा करना बड़े आनन्द की बात है । वह उसे यों ही किसी के कहने से नहीं छोड़ सकता है । इसलिए उसे फुसलाना ही एक उपाय रह जाता है । यह कार्य उपरोक्त प्रकार से ही हो सकता है ।

यहाँ एक और बात बताना भी जरूरी है । वह यह कि जिस आदमी को सुधारना चाहते हो, उसकी बुराई मत करो, भिड़को मत, कड़वे शब्द मत कहो और उसके वे दोष बिल्कुल साफ-साफ मत कह दो और यह भी प्रकट मत करो कि "मुझे विश्वास है कि तुममें यह बुराइयाँ अवश्य हैं ।" ऐसी कहा-सुनी करोगे, तो मामला बिगड़ जायेगा । वह आदमी उद्दण्ड और विरोधी हो जायेगा और निर्लज्जता पूर्वक ढिठाई करने लगेगा । जिस आदमी को सुधारना है, उसके साथ प्रेम प्रकट करो, अपने को उसका शुभचिन्तक होने का विश्वास कराओ, जो दोष उसमें हैं, उसके लिए केवल संकेत करो और वह उनसे मुकरता हो, तो प्रसन्नता प्रकट करते हुए कहो कि "बेशक, भले आदमी में ऐसी बातें नहीं हो सकतीं, व्यर्थ ही विरोधी लोग तुम्हारी बदनामी करते हैं । पर किसी को आगे से ऐसी शिकायत का भी मौका नहीं देना चाहिए । पूरी सावधानी रखो कि किसी को ऐसी बदनामी करने का मौका न मिले ।"

इस प्रकार बुद्धिमत्ता के साथ कुछ दिन थोड़ा-थोड़ा प्रयत्न करके तुम एक आदमी के विचार बिल्कुल बदल सकते हो । रस्सी घिसने से जब पत्थर पर निशान हो जाता है, तो क्या तुम्हारा मूल्यवान प्रयत्न व्यर्थ जायेगा ? नहीं, अवश्य ही तुम दूसरों के हीन विचारों को छुड़ाकर उच्च विचार उत्पन्न कर सकते हो और उनका जीवन सुधार सकते हो । आवश्यकता इस बात की है कि तुम बिल्ली की उस क्रिया को बड़े गौर के साथ देखो कि वह छोटे से चूहे को पकड़ने के लिए कैसी बुद्धिमानी और सावधानी के साथ चुपके-चुपके पैर रखकर सफलता प्राप्त करती है ।

त्राटक का अभ्यास

दूसरों पर प्रभाव के लिए नेत्रों का जितना उपयोग होता है उतना शरीर के और किसी अवयव का नहीं होता । शृंगाररस के कवियों ने नेत्रों को बाण की उपमा दी है और उसकी चोट को बाण से भी गहरा बताया है । मनोवैज्ञानिकों की दृष्टि में आँखें एक प्रकार के दर्पण हैं, जिनमें आदमी के सारे भले-बुरे स्वभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जाते हैं । छोटे बालक जिन्हें भाषा या लोक व्यवहार का ज्ञान नहीं होता, आँखें देखकर ही प्रेम या अप्रेम को ताड़ लेते हैं । हर प्रकार की भावनाओं के चित्र आँखों में खिंच जाते हैं । हँसने, रोने, सुखी या दुःखी होने, प्रेम, उपेक्षा, तिरस्कार, क्रोध आदि के मनोभावों को नेत्रों द्वारा तुरन्त ही ताड़ा जा सकता है । राजा नल की पत्नी दमयन्ती को जब बधिक ने सताया तो रानी के नेत्रों से एक ऐसी शक्ति निकली कि बधिक सर्प हो गया । जब कामदेव ने अत्याचार करना आरम्भ कर दिया, तो योगिराज शंकर ने क्रोध से अपने नेत्र खोले, फलस्वरूप "चितवत काम भयेउ जरि छारा ।"

परकाया प्रवेश की क्रिया के लिए दो प्रमुख साधन हैं, (१) दृष्टिपात (२) एकग्रता । दृष्टिपात साधन और एकाग्रता शक्ति है । पहलवान को दाँव-पेच और बल दोनों की जरूरत है, पंडित को बुद्धि और विद्या की, व्यापारी को कुशलता और पूँजी की जिस प्रकार जरूरत है, उसी प्रकार इस विषय के जिज्ञासु के लिए बेधक दृष्टि और विचार बल की योग्यता का होना आवश्यकीय है ।

इस अध्याय में बेधक दृष्टि प्राप्त करने और विचारों की एकाग्रता करने के साधन बताए जायेंगे, इन दोनों के सामंजस्य से दूसरों को प्रभावित करने का कार्य ठीक प्रकार हो सकता है । अकेली बेधक दृष्टि ऐसी है, जैसी बढ़िया बन्दूक और अकेला विचार बल ऐसा है, जैसा कारतूस । दोनों के अलग-अलग रहने पर सिद्धि नहीं मिलती, किन्तु जब दोनों आपस में मिल जाते हैं, और चलाने वाला बुद्धिमान होता है तो निशाना ठीक जगह पर लगता है और इच्छित फल की प्राप्ति हो जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधक की प्रारम्भिक योग्यता

साधक में कुछ प्रारम्भिक योग्यताओं का होना आवश्यक है । जो सज्जन इस विद्या का अभ्यास शुरू करना चाहते हैं, उन्हें उचित है कि सबसे पहले यह जाँच करें कि हम साधन की योग्यता रखते हैं या नहीं । अभ्यासी के लिए आवश्यक है कि (१) अट्ठारह वर्ष से कम और पचास वर्ष से अधिक आयु न हो, (२) बीमार न हो, (३) किसी मानसिक दुर्बलता से ग्रसित न हो, (४) स्वभाव आलस्य रहित और परिश्रमी हो, (५) आर्थिक चिन्ता से व्याकुल न हो, (६) मादकद्रव्य या अन्य व्यसनों का गुलाम न हो, (७) आत्म विश्वासी और आशावादी हो, (८) दृढ़ निश्चयी और धैर्य धारण करने वाला हो, (९) आँखों में कोई रोग न हो, (१०) इस विद्या पर पूर्ण विश्वास हो और सीखने की दृढ़ इच्छा हो । यदि यह योग्यताएँ साधक में न हों, उसे ठहरना चाहिए और इनमें से जो अयोग्यताएँ हों उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना चाहिए जब तक यह गुण अपने में न आ जाय, तब तक इस बात का निरन्तर प्रयत्न करते रहना चाहिए कि यह शारीरिक और मानसिक दुर्गुण दूर हो जाय ।

अभ्यासी को सबसे प्रथम अपना आहार-विहार ठीक करने की व्यवस्था करनी चाहिए । गरम, उत्तेजक, अधिक मसाले पड़ी हुई, बासी, गरिष्ठ वस्तुओं को त्यागकर सादा और हल्का भोजन अपनाना चाहिए । घी, दूध, फल, मेवे आदि का व्यवहार बढ़ा देना चाहिए । ठीक समय पर नियत मात्रा में भूख लगने पर और खूब चबा कर खाया हुआ साधारण भोजन, अव्यवस्थित रूप से खाये हुए बहुमूल्य भोजन की अपेक्षा अधिक लाभप्रद होता है । रात को जागना और दिन में सोना निषिद्ध है । हाँ, गर्मी के दिनों में दोपहर में सोया जा सकता है । अभ्यास के दिनों में ब्रह्मचर्य के साथ रहना चाहिए । चिन्ता, क्रोध, रोष, कलह आदि से दूर रहकर मानसिक स्थिति को ठीक बनाये रहना चाहिए । योगाभ्यास का कार्य कुछ अधिक समय चाहता है । इसमें देर में सफलता मिलती है, इसलिए दृढ़तापूर्वक अधिक दिनों तक अभ्यास करने के लिए पहले से ही तैयार रहना चाहिए । कुछ लोगों की मानसिक स्थिति ऐसी होती है, जिससे उन्हें सफलता बहुत जल्दी मिलने लगती है, परन्तु सबके लिए ऐसी बात नहीं है । जैसे शरीर को मजबूत और बलवान बनाने के लिए निरन्तर अभ्यास और सावधानी की जरूरत होती है, वैसे ही मन को बलवान बनाने के लिए भी बहुत दिनों तक साधन करते रहने की आवश्यकता होती है । एक दो महीने में ही सफलता न मिले तो साधन छोड़ना नहीं चाहिए वरन् प्रयत्न जारी रखना चाहिए ।

दृष्टिपात का अभ्यास (त्राटक)

पूर्व ही यह बताया जा चुका है कि शरीर की विद्युत शक्ति कई भागों में विभक्त होकर अलग-अलग दिशाओं में काम कर रही है । इस क्रिया में ऐसे साधन की जरूरत है, जिससे शरीर और मन की विद्युत शक्तियाँ अधिक से अधिक मात्रा में एकत्रित होकर एक स्थान पर लग जायें । त्राटक हठयोग का एक साधन है । इसके द्वारा शरीर के विभिन्न अंगों में बहने वाली बिजली को सब ओर से खींचकर एक स्थान पर लाने का प्रयत्न किया जाता है । त्राटक का अभ्यास जैसे-जैसे बढ़ता जाता है, वैसे ही वैसे नेत्रों की प्रभावकारिणी शक्ति बढ़ती जाती है ।

एक हाथ लम्बा, एक हाथ चौड़ा एक चौकोर कागज या पट्ठा लेकर उसके बीच में रुपये के बराबर एक काला गोल निशान बनाओ । स्याही एक सी, कहीं कम ज्यादा न हो । इसके बीच में सरसों के बराबर सफेद निशान छोड़ दो और उस सफेदी में पीला रंग भर दो । इस कागज को किसी दीवार पर टांग दो और तुम उससे चार फीट दूरी पर इस प्रकार बैठो कि वह काला गोला तुम्हारी आँखों के बिल्कुल सामने सीध में रहे । साधना का कमरा ऐसा होना चाहिए, जिसमें न अधिक प्रकाश रहे न अँधेरा । न अधिक सर्दी हो न गर्मी । पाल्थी मारकर मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए बैठो और काले गोले के बीच में जो पीला निशान है, उस पर दृष्टि जमाओ । चित्त की सारी भावनाएँ एकत्रित करके उस बिन्दु को इस प्रकार देखो मानो तुम अपनी सारी शक्ति नेत्रों द्वारा उसमें प्रवेश कर देना चाहते हो । ऐसा सोचते रहो कि मेरी तीक्ष्ण दृष्टि से इस बिन्दु में छेद हुआ जा रहा है । कुछ देर इस प्रकार देखने से आँखों में दर्द होने लगेगा और पानी बहने लगेगा, तब अभ्यास को बन्द कर दो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभ्यास के लिए प्रातःकाल का समय ठीक है । नित्यकर्म से निवृत्त होकर नियत स्थान पर बैठना चाहिए और चित्त एकाग्र करके साधना आरम्भ करनी चाहिए । पहले दिन देखो कि कितनी देर में आँखें थक जाती हैं और पानी आ जाता है, पहले दिन जितनी देर अभ्यास किया है, प्रतिदिन उसमें एक या आधा मिनट बढ़ाते जाओ । इस प्रकार दृष्टि को स्थिर करने पर तुम देखोगे कि उस काले गोले में तरह-तरह की आकृतियाँ पैदा होती हैं । कभी वह सफेद रंग का हो जायेगा, तो कभी सुनहरा । कभी छोटा मालूम पड़ेगा, तो कभी बड़ा । कभी चिन्गारियाँ सी उड़ती दिखाई देंगी, तो कभी बादल से छाये हुए प्रतीत होंगे । इस प्रकार वह गोला अपनी आकृति बदलता रहेगा । किन्तु जैसे-जैसे दृष्टि स्थिर होना शुरू होगी, वैसे ही वैसे यह गोला भी स्थिर होता जायेगा और उसमें दीखने वाली विभिन्न आकृतियाँ बन्द हो जायेगी और बहुत देर देखते रहने पर भी गोला ज्यों का त्यों बना रहेगा ।

त्राटक करने का चित्र और भी कई प्रकार से बनाया जाता है । एक-एक फुट लम्बे चौड़े चौकोर दर्पण के बीचों बीच चाँदी की चवन्नी भर काले रंग के कागज का गोल टुकड़ा काटकर चिपका दिया जाता है । उस कागज के मध्य में सरसों के बराबर एक पीला बिन्दु बनाते हैं । इस अभ्यास को एक मिनट से शुरू करते हैं और प्रतिदिन एक-एक मिनट बढ़ाते जाते हैं । जब इस तरह दृष्टि स्थिर हो जाती है, तब और भी आगे का अभ्यास शुरू किया जाता है । दर्पण पर चिपके हुए कागज को छुड़ा देते हैं और उसमें अपना मुँह देखते हुए अपनी बायीं आँख की पुतली पर दृष्टि जमा लेते हैं और उस पुतली में बड़े ध्यानपूर्वक अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं ।

तीसरी विधि मोमबत्ती या दीपक की ज्योति पर दृष्टि जमाने की है । दीपक घृत का या शुद्ध सरसों के तेल का होना चाहिए । मोमबत्ती की रोशनी भी ठण्डी समझी जाती है ।

चौथी विधि प्रातःकाल के सूर्य पर दृष्टि जमाने की है और पाँचवीं चन्द्रमा पर त्राटक करने की है । इनमें से इच्छानुसार चाहे जिसे किया जा सकता है, पर हमें अनुभव से पहला साधन ही सुलभ और निरापद प्रतीत हुआ है ।

अभ्यास पर से जब उठो, तो गुलाब जल से आँखें धो डालो । आँख धोने के लिए एक काँच की प्याली बाजार में मिलती है, उसमें गुलाब जल भरकर आँखों से लगाना चाहिए और उस पानी में आँख खोलकर उन्हें स्नान कराना चाहिए, जिससे उनकी उष्णता शान्त हो जाय और शीतलता प्राप्त हो । अभ्यास से उठने के बाद कोई पौष्टिक शीतल वस्तु खा लेना भी आवश्यक है । दूध या दही की लस्सी मक्खन, मिश्री, फल, शरबत आदि कुछ सेवन कर लेने से शरीर की बढ़ी हुई गर्मी शान्त हो जाती है ।

विचारों की एकाग्रता का अभ्यास [नाद]

मन की शक्तियों को धारण करने का प्रमुख स्थान मस्तिष्क है । स्मरण शक्ति, कल्पना शक्ति, मेधा शक्ति, निर्णायक शक्ति आदि अनेक मानसिक शक्तियाँ मस्तिष्क में भरी हुई हैं । शरीर और मन का उचित अभ्यास कर लेने से मनुष्य में बहुत दैवी गुण आ जाते हैं । और वह अलौकिक काम करने लगता है । मस्तिष्क की क्रियाशीलता और उत्पादक शक्ति इतनी तीव्र है कि एक क्षण के सौवें भाग के लिए भी वह बिल्कुल शान्त होकर नहीं उठता । एक सेकण्ड में विचारों की कई-कई लहरें मस्तिष्क में से उठा करती हैं । जैसे खौलते हुए पानी की देगची में हर क्षण भाप उठती रहती है । ऐसी ही क्रिया मस्तिष्क में होती हैं । मस्तिष्क की वे असंख्य लहरें खुले मुँह की खौलती देगची की भाप की भाँति उड़कर इधर-उधर छितरा जाती हैं और उस अद्भुत शक्ति का कुछ भी प्रयोग नहीं होता ।

भारत के प्राचीन तत्ववेत्ता ऋषियों ने शरीर और मन का सूक्ष्म अनुसन्धान करके यह जाना था कि मन शक्तियों का खजाना है । यह एक प्रकार का बैताल है, जिससे यदि कोई ठीक तरह काम ले सके, तो बड़े-बड़े महान् कार्यों को क्षण में पूरा करके रख देता है । ऐसा बहुमूल्य खजाना हमारे अज्ञान प्रमाद के कारण लुटता रहे, यह तो बड़े दुःख की बात है । ऋषियों ने जब समस्त विश्व की शक्तिशाली वस्तुओं को खोज डाला और उन्हें मन से अधिक बलवान कोई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तु न मिली, तो उन्होंने लोक और परलोक सम्बन्धी सम्पूर्ण उन्नति के लिए मन का आश्रय टटोला । सर्व सम्मति से निश्चय किया गया—"योगाश्चित्त वृत्ति निरोधः" चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है । इसमें सन्देह की कुछ भी बात नहीं है । पैदावार को फिजूल खर्च न किया जाय और हिफाजत से रखा जाय, तो कुछ ही समय में एक भारी खजाना जमा हो जाता है । करोड़ों टन पानी की भाप रोज हमारी आँखों के सामने उड़ती रहती है, उसका उपयोग कुछ भी नहीं होता, किन्तु थोड़े से पानी की भाप को सुव्यवस्था पूर्वक रोककर इंजन चलाने के काम में लगाया जाता है तो उससे रेलगाड़ियाँ दौड़ती हैं, बड़े-बड़े कल कारखाने चलते हैं तथा अन्य सैकड़ों प्रकार के काम होते हैं ।

जिस प्रकार शारीरिक शक्तियों को एक स्थान पर जमा कर लेने से सरकस आदि के खिलाड़ी विचित्र करतब करते हैं, उसी प्रकार मन की शक्तियों का संयम करने वाले, योगी ऐसे अलौकिक काम करते हैं, जिन पर इस नास्तिकता के युग में भी आश्चर्य करना पड़ता है । उच्च आध्यात्म वेत्ता ऋषियों की बात जाने दीजिए । भौतिक मन का थोड़ा-सा संयम करने वाले वैज्ञानिकों को ही ले लीजिए, रेल, तार, रेडियो, वायुयान, टेलीविजन आदि कितने-कितने करिश्मे थोड़े ही दिन के प्रयत्न से उपस्थित कर दिए हैं । इन कार्यों के बिना मन का संयम किए बिना, चित्त को एकाग्र किए बिना विचारों को एक स्थान पर जमा किए कदापि नहीं कर सकते थे । जब शरीर और मन दोनों की शक्ति एकत्रित होने लगे और उन दोनों को आपस में मिलाकर किसी काम में लगाया जाय, तब तो एक और एक मिलकर ग्यारह हो जाने की बात चरितार्थ होती है ।

यह बताया जा चुका है कि मस्तिष्क में से हर सेकण्ड में कई-कई बार चैतन्यता की सूक्ष्म लहरें उठती हैं । उनको व्यर्थ नष्ट होने से रोक कर किसी ऐसे काम पर लगाने का प्रयत्न करना जिससे शक्ति प्राप्त हो, यही तो बुद्धिमानी है । पानी के झरने अत्यन्त प्राचीनकाल से यों ही बहते आ रहे हैं । उनका कुछ उपयोग नहीं होता, किन्तु बुद्धिमान लोग उसकी बहती हुई धार को एक पहिए से सम्बन्धित करके एक पनचक्की बना लेते हैं, जिसके द्वारा वे बड़ा लाभ उठाते हैं । मन की धारा से चाहे जिस प्रकार के भले, बुरे काम या अभ्यास में लगाकर उससे वैसा ही काम लिया जा सकता है और लेने वाले लेते भी हैं ।

हमारा मन्तव्य अपने अभ्यासियों को आध्यात्मिता की उच्च भूमिका की ओर बढ़ाने का है, इसलिए उसी के उपयुक्त अभ्यास भी बतायेंगे । आत्मिक विकास और पुण्य परमात्म सत्ता की ओर अग्रसर होना यह दैवी मार्ग है । इसमें खतरा नहीं है और जितना कुछ थोड़ा बहुत आगे बढ़ सकेंगे, लाभ ही होगा ।

पाठकों को मालूम होगा कि स्थूल शरीर और उसकी मोटी इन्द्रियों के सम्पर्क में ही स्थूल जगत आता है । इससे गहरे उतरने में सूक्ष्म तत्व है । जो वस्तु जितनी सूक्ष्म होगी उतनी ही हल्की होने के कारण कठिनाई से अनुभव में आयेगी । मोटी मिट्टी को हम हाथ में लेकर चाहे जिस प्रकार काम ला सकते हैं । पानी उससे सूक्ष्म है, उसके ऊपर हमारा उतनी सीमा तक अधिकार नहीं होता । उसके बाद आग और हवा का नम्बर आता है, यह चीज तो और भी अधिक ध्यान देने पर अनुभव में आती है । आकाश तो किसी प्रकार देखने में ही नहीं आता । इन तत्वों से सूक्ष्म भी हजारों तत्व हैं । पानी के परमाणु खुर्द बीन से ही दिखाई देते हैं । ईथर तत्व जिसमें होकर शब्दों की लहरें बहती रहती हैं । बिना यन्त्रों की सहायता के नहीं जाना जा सकता और प्रकृति के मूल परमाणु-विद्युत घटक (इलेक्ट्रॉन) जो अपनी ऋण और धन विद्युत के बल से रात-दिन घूम रहे हैं और जिनके एक-एक जर्रे में प्रलय कर देने की शक्ति भरी है, उनके बारे में तो हममें से बहुत से लोगों ने शायद कुछ सुना भी न होगा । वैज्ञानिकों का मत है कि यही विद्युत परमाणु संसार की विकास और विनाश क्रियाओं का कर्त्ता-धर्त्ता और हर्त्ता है ।

भारतीय ऋषियों की दृष्टि से यह खोज अभी अधूरी है । उनका मत है कि यह विद्युत परमाणु अपने आप नहीं घूम रहे हैं, वरन् इन्हें घुमाने वाली भी कोई सत्ता है । यह सत्ता है परमात्मा । यह शक्ति इन विद्युत परमाणुओं से भी करोड़ों गुनी सूक्ष्म होने के कारण मनुष्य के बनाये हुए किसी औजार या यन्त्र से जानी नहीं जा सकती । अब तक जितने भी वैज्ञानिक यन्त्र बने हैं, वे मनुष्य के मस्तिष्क के मुकाबले में बहुत ही स्थूल हैं । ईश्वर की सूक्ष्म सत्ता और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकृति की सूक्ष्म क्रियाओं का अनुभव इसी सर्वोत्तम यन्त्र अन्तःकरण द्वारा हो सकता है ।

हर चढ़ने वाले को यह ध्यान रखना चाहिए कि वह पहले नीची सीढ़ी पर कदम रखे और इसके बाद आगे को कदम बढ़ाये जो ऐसा न करके एकदम ऊँचा उछलना चाहेगा वह गिरेगा और नुकसान उठायेगा । 'परकाया प्रवेश' के साधक आध्यात्म लोक में प्रवेश करते समय सीढ़ी-सीढ़ी चलने का प्रयत्न करें । शरीर की स्थूल वस्तुओं से नीचे उतरकर जो वस्तु मिलती है वह नाद है । अन्तर जगत से इस नाद के आधार पर हम बहुत कुछ प्राप्त कर सकते हैं । अन्धा आदमी नेत्रों के अभाव से संसार की वस्तुओं को देख नहीं सकता किन्तु सुनने की शक्ति होने से बहुत कुछ ज्ञान प्राप्त कर लेता है । वह शब्द के आधार पर मनुष्यों को अलग-अलग पहचान लेता है । कुत्ते, घोड़े, बैल की बोली के आधार पर उन्हें जान जाता है । बादल गरजने, चक्की चलने और मोटर दौड़ने की आवाज प्रायः एक-सी होती हैं पर वह अपने अभ्यास के आधार पर इनमें से कौन-सी आवाज है, इसे बखूबी समझ लेता है । मेले-ठेले, लड़ाई, सभा-सम्मेलन आदि के कोलाहलों में से कुछ शब्दों को सुनकर वह घटनाओं और परिस्थितियों के बारे में लगभग सही अनुमान लगा लेता है । अन्धे की शक्ति शब्द ज्ञान के आधार पर होती है । सूक्ष्म लोक में उतरते ही हम भी अन्धे हैं, क्योंकि आँखें तो बाहर की चीजों को ही देख सकती हैं । देह के भीतर क्या हो रहा है यह देखना भी उन की शक्ति से बाहर है । ऐसी दशा में सूक्ष्म लोक के बारे में जान ही कैसे सकती है ?

सभी आध्यात्मिक व्यक्ति जानते हैं कि इस मोटे शरीर की तरह इसके अन्दर एक सूक्ष्म शरीर भी है । इस सूक्ष्म शरीर का अब तो वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा भी परीक्षण हो चुका है और उसके अस्तित्व की पूर्णरूप से घोषणा हो चुकी है । कर्नल अलवर्ट डेरोचस ने हस्तक (मीडियम) के शरीर से बाहर निकले हुए सूक्ष्म शरीर का वजन लिया है, वे कहते हैं कि सूक्ष्म शरीर का कुल वजन २। औंस है । यह जीवात्मा की इच्छानुसार सिकुड़ और फैल भी सकता है । इसका साधारण आकार करीब तीन इंच है, किन्तु इच्छानुसार छः गुना तक बढ़ सकता है । जितनी जगह में १ ओंस पानी रह सकता है, उतनी जगह में सूक्ष्म शरीर का वजन १.५३/१३५०० यानी ०.१२२४ औंस है । यह हवा और हाइड्रोजन से भी हल्का है । स्थूल शरीर की भाँति यह भी एक प्रकार के सूक्ष्म परमाणुओं का संगठन है । इस सूक्ष्म शरीर में भी स्थूल शरीर की ही भाँति इन्द्रियाँ होती हैं । इसे यों भी कहा जा सकता है कि स्थूल शरीर की इन्द्रियों की चेतना सूक्ष्म शरीर की इन्द्रियों से मिलती है । सूक्ष्म शरीर की कोई इन्द्रिय नष्ट हो जाती है, तो स्थूल शरीर में वह अंग बिल्कुल स्वस्थ होते हुए भी निकम्मा होता है ।

मानसिक अभ्यासों में स्थूल शरीर को सिर्फ आसन प्राणायाम आदि का इतना ही प्रयत्न करना पड़ता है कि शरीर स्वस्थ बना रहे और बीमार पड़कर कोई बाधा उपस्थित न करे । शेष काम सूक्ष्म शरीर और उसकी इन्द्रियों को ही करना पड़ता है । नाद अभ्यास या शब्द श्रवण में चमड़े कान समर्थ नहीं होते इसके लिए सूक्ष्म शरीर के कानों को काम में लाना पड़ता है ।

अभ्यास के लिए ऐसा स्थान तलाश कीजिए जो एकान्त हो और जहाँ बाहर की अधिक आवाजें न आती हों । तीक्ष्ण प्रकाश इस अभ्यास में बाधक है । इसलिए कोई अँधेरी कोठरी ढूँढ़नी चाहिए । एक पहर रात जाने के बाद से लेकर सूर्योदय से पूर्व तक का समय इसके लिए बहुत ही अच्छा है । यदि इस समय की व्यवस्था न हो सके तो प्रातः ६ बजे तक और शाम को दिन छिपे बाद का कोई समय नियत किया जा सकता । नित्य नियमित समय पर अभ्यास करना चाहिए । अपने नियत कमरे में एक आसन या आराम कुर्सी बिछाकर बैठो । यदि आसन पर बैठो तो पीठ के पीछे कोई मसन्द, कपड़े की गठरी आदि रख लो । यह भी न हो तो अपना आसन एक कोने में लगाओ । जिस प्रकार शरीर को आराम मिले, उस तरह बैठ जाओ और अपने शरीर को ढीला छोड़ने का प्रयत्न करो । भावना करो कि मेरा शरीर रुई का ढेर मात्र है और मैं इस समय इसे पूरी तरह स्वतन्त्र छोड़ रहा हूँ । थोड़ी देर में शरीर बिल्कुल ढीला हो जायेगा और अपना भार अपने आप न सहकर इधर-उधर को ढुलने लगेगा । आराम कुर्सी, मसन्द या दीवार का सहारा ले लेने से शरीर ठीक प्रकार अपने स्थान पर बना रहेगा । साफ रुई की मुलायम सी दो डाटें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाकर उन्हें कानों में इस प्रकार लगा लो कि बाहर की कोई आवाज भीतर प्रवेश न कर सके । उँगलियों से कान के छेद बन्द करके भी काम चल सकता है । अब बाहर की कोई आवाज तुम्हें सुनाई न पड़ेगी । यदि पड़े भी तो उस ओर से ध्यान हटाकर अपने मूर्धा स्थान पर ले आओ और वहाँ जो शब्द हो रहे हैं, उन्हें ध्यानपूर्वक सुनने का प्रयत्न करो । आरम्भ में शायद कुछ भी सुनाई न पड़े, पर दो चार दिन के प्रयत्न के बाद जैसे-जैसे सूक्ष्म कर्णेन्द्रिय निर्मल होती जायेंगी, वैसे ही वैसे शब्दों की स्पष्टता बढ़ती जायेगी । पहले-पहले कई प्रकार के शब्द सुनाई देते हैं । शरीर में जो रक्त प्रवाह हो रहा है, उसकी आवाज रेल की तरह धक्, धक्, धक्, धक् सुनाई पड़ती है । वायु के आने-जाने की आवाज बादल गरजने जैसी होती है, रसों के पकने और उनके आगे की ओर गति करने की आवाज चटकने की सी होती है, यह तीन प्रकार के शब्द शरीर की क्रियाओं द्वारा उत्पन्न होते हैं, इसी प्रकार दो प्रकार के शब्द मानसिक क्रियाओं के हैं, मन में जो चंचलता की लहरें उठती हैं । वे मानस तन्तुओं पर टकराकर ऐसे शब्द करती हैं, मानो टीन के ऊपर मेह बरस रहा हो और जब मस्तिष्क बाह्य ज्ञान को ग्रहण करके अपने में धारण करता है, तो ऐसा मालूम होता है, मानो कोई प्राणी साँस ले रहा हो । यह पाँचों शब्द शरीर और मन के हैं, कुछ ही दिन अभ्यास साधारणतः दो तीन सप्ताह के प्रयत्न से यह सब शब्द स्पष्ट रूप से सुनाई पड़ने लगते हैं । इन शब्दों के सुनने से सूक्ष्म इन्द्रियाँ निर्मल होती जाती हैं और गुप्त शक्तियों को ग्रहण करने की उनकी योग्यता बढ़ती जाती है ।

जब नाद श्रवण करने की योग्यता बढ़ती जाती है, तो बंशी या सीटी से मिलती-झुलती अनेक प्रकार की शब्दावलियाँ सुनाई पड़ती हैं, यह सूक्ष्म लोक में होने वाली क्रियाओं की परिचायक हैं । बहुत दिनों से बिछुड़े हुए बच्चे को यदि उसकी माता की गोद में पहुँचाया जाता है, तो वह आनन्द से विभोर हो जाता है, ऐसा ही आनन्द सुनने वाले को आता है, जिन सूक्ष्म शब्द ध्वनियों को आज वह सुन रहा है । वास्तव में वह उसी तत्व के निकट से आ रही हैं, जहाँ से कि आत्मा और परमात्मा का बिलगाव हुआ है और जहाँ पहुँचकर दोनों फिर एक हो सकते हैं । धीरे-धीरे यह शब्द अधिक स्पष्ट होने लगते हैं और अभ्यासी उनको सुनने में अद्भुत आनन्द आने लगता है । कभी-कभी तो वह उन शब्दों में मस्त होकर आनन्द से विह्वल हो जाता है और अपने तन-मन की सुधि भूल जाता है । अन्तिम शब्द ॐ का है, यह बहुत ही सूक्ष्म है । इसकी ध्वनि घण्टा ध्वनि के समान होती है । घड़ियाल में हथौड़ी मार देने पर जैसे वह कुछ देर तक झन-झनाती रहती है, उसी प्रकार "ॐ" का घण्टा शब्द सुनाई पड़ता है । पर यह तो हम आगे की बात कह गए, जब साधक उस दशा को पहुँचेंगे तब तो उन्हें इस या ऐसी ही किसी अन्य पुस्तक की कोई आवश्यकता न रहेगी ।

परकाया प्रवेश के लिए शरीर और मन के पंच शब्दों से ऊँचे उठकर बंशी नाद में प्रवेश पालने की योग्यता पर्याप्त है । इतना करने से उसका मन संयत होने लगेगा, विचारों की शृंखला भंग न होकर एक काम पर जमती जायेगी और वह दूसरों को प्रभावित कर सकेगा । शब्दों का आगे का अभ्यास उसे वैसी योग्यता करा देगा, जैसी अन्धों को हो जाती है । अभ्यासी लोग उसके आधार पर अनेक गुप्त बातों की जानकारी अपने आप प्राप्त कर सकेंगे ।

शब्द श्रवण के लिए दिन में एक बार बैठना चाहिए । अवकाश हो तो कम से कम आठ घण्टे का बीच छोड़कर दुबारा बैठ सकते हैं । बीस मिनट से लेकर एक घण्टे तक अभ्यास बढ़ाना चाहिए । त्राटक को पूर्व नाद श्रवण किया जा सकता है, पर बाद में कदापि न करना चाहिए । अच्छा हो कि दोनों के बीच में कम से कम एक घण्टे का बीच ही रखा जाय ।

कुछ जानने योग्य बातें

त्राटक और नाद का अभ्यास लगातार कम से कम चालीस दिन करने के उपरान्त काम चलाऊ शक्ति साधक को प्राप्त हो जाती है । जहाँ तक हो सके दोनों अभ्यासों को नियमित रूप से चालू रखना चाहिए, किन्तु यदि किसी कारण विशेष से किसी दिन अभ्यास छूट जाय, तो उसके प्रायश्चित स्वरूप एक दिन उपवास रखना या एक ब्राह्मण को भोजन कराना चाहिए । यदि दो दिन से भी अधिक गड़बड़ी हो जाय तो पिछले दिनों का अभ्यास निष्फल समझकर नये दिन का पहला

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दिन गिनकर आगे बढ़ना चाहिए और चालीस तक पूरा करना चाहिए । इतने दिनों में साधारणतः त्राटक में स्थिरता आ जाती है । यदि न आयी हो तो कुछ दिन और जारी रखना चाहिए । नाद में जब मधुरता लिए बंशी या सीटी जैसे शब्द जब सुनाई देने लगें, तो अभ्यास में सफलता मिली समझना चाहिए । इसके उपरान्त यह बाहरी त्राटक बन्द कर देना चाहिए, क्योंकि अधिक दिनों तक जारी रखने के लिए जैसा उत्तम आहार-विहार होना चाहिए । वैसा इस समय में आसानी से नहीं रखा जा सकता और उत्तम आहार-विहार न होने पर नेत्रों को हानि पहुँचने की सम्भावना रहती है । नाद को लगातार सुनते रहने में कुछ भी हानि नहीं, वरन् लाभ ही है । आगे चलकर बाहरी नेत्रों से त्राटक बन्द करके सूक्ष्म नेत्रों से करना चाहिए । आँखें बन्द करके मस्तिष्क के भीतर भृकुटियों के मध्य भाग में ध्यान को एकत्रित कर सूक्ष्म नेत्रों से वहाँ देखना चाहिए । आरम्भ में कई रंग के धब्बे से या चिन्गारियाँ जैसी उड़ती प्रतीत होंगी, यह मस्तिष्क में व्याप्त पंचतत्वों की तन्मात्राएँ हैं, जब तक अर्न्तदृष्टि स्वच्छ नहीं हो जाती तब तक अन्धकार या रंग-बिरंगे धब्बे से ही अनुभव में आते हैं, किन्तु जैसे-जैसे दृष्टि निर्मल होती जाती है और स्थूल पंचतत्वों को पार कर गहराई तक देखने लगती है, तब प्रकाश दिखाई पड़ता है । आगे चलकर सूर्य की तरह प्रकाशवान एक श्वेत बिन्दु दिखाई पड़ता है । महात्माओं का कहना है कि आरम्भ में यह बिन्दु सरसों या उर्द की बराबर होता है और पीछे शनैः-शनैः यह अपना विस्तार करने लगता है । बढ़े हुए अभ्यासी को इसी प्रकाश बिन्दु पर मानस नेत्रों से त्राटक करना चाहिए । चालीस दिन बाद प्रथम नाद श्रवण पश्चात् मानसिक त्राटक की क्रियाएँ एक ही आसन पर बैठकर कर लेनी चाहिए, फिर बीच में अन्तर देने की जरूरत नहीं है । प्रायः तीन महीने के अभ्यास के उपरान्त यह क्रियाएँ मानसिक चेतना में प्रवेश पा लेती हैं और मन इनसे उचटने की अपेक्षा इनमें रस लेने लगता है । तब इतनी छूट मिल सकती है कि किसी दिन नियत समय पर अभ्यास करना सम्भव न हो, तो आगे पीछे समय में भी किया जा सकता है । चिरकालीन अभ्यास के उपरान्त जब इन अभ्यासों की अनुभूति सूक्ष्म शरीर और उसकी अनुभूतियों से नीचे उतरकर लिंग, शरीर और कारण शरीर तक पहुँचती है, तो नाद और प्रकाश बिन्दु दो वस्तुएँ न रहकर एक ही वस्तु रह जाती है, जिसे अमृत कहते हैं । योग शास्त्रों में उल्लेख है कि चन्द्र मण्डल में अमृत बिन्दु टपकता है और उसे सुषुम्ना द्वारा पान करते हैं । इस अमृत पान का आनन्द साधक स्वयं ही जान सकते हैं, गूँगे के गुड़ की तरह लिखकर नहीं बताया जा सकता ।

परकाया प्रवेश के लिए उस अवस्था को कायम रखना पर्याप्त है, जो साधारणतः चालीस दिन के या किसी को थोड़े बहुत कम ज्यादा समय के अभ्यास के बाद आती है । इतने को छोड़ न देना चाहिए, वरन् यहाँ तक हो सके बराबर जारी रखना चाहिए । यदि हो सके तो एक योग्य अभ्यासी की अध्यक्षता में सप्ताह में एक बार रविवार को कई लोग मिलकर सत्संग की तरह अन्तर्त्राटक और अन्तर्नाद का साधन किया करें, जो लोग नित्य नियमपूर्वक नहीं कर सकते, सप्ताह में एक बार करके ही इसके अद्भुत परणामों की परीक्षा कर देखें ।

जो लोग अपनी आत्मोन्नति के लिए इस साधन को अपनाना चाहते हैं, वे यदि अपने रहन-सहन और आचरणों को अधिक पवित्र न रखेंगे, तो उन्हें सफलता शीघ्र और अधिक मात्रा में न मिलेगी, जैसे एक आदमी दूध पीता है और मदिरा भी सेवन करता है, तो उसे मदिरा से हानि तो होगी, किन्तु दूध का लाभ अवश्य मिलेगा । कोई उतनी अधिक कठोरता से नियन्त्रित न रहें, तो भी किसी का अधिक हर्ज नहीं, किन्तु जो साधक दूसरों के अन्दर अपनी आत्म शक्ति का प्रवेश करना चाहते हैं, उन्हें तो अपने आचार-विचारों को बहुत ही पवित्र रखना चाहिए, अन्यथा अपने दुर्गुणों के बीज दूसरों के मन में भी बो देगें । डॉक्टर लोग ऑपरेशन करने से पूर्व अपने औजारों को गरम पानी से या दवाओं द्वारा शुद्ध कर लेते हैं, ताकि इन औजारों से चिपकी हुई कोई हानिकारक चीज बीमार के शरीर में प्रवेश करके उसे हानि न पहुँचाये । बुद्धिमान साधक की आत्म-शक्ति जब दूसरे को प्रभावित करने के लिए किसी के शरीर में प्रवेश करती है तो वह इंजेक्शन की सुई की तरह होती है । क्या कोई डॉक्टर अपनी गंदी सुई को बीमार की देह में चुभोने का साहस करेगा ? नहीं । इसी प्रकार हर कोई साधक जो दूसरों

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में मानसिक परिवर्तन करने के इच्छुक हैं अपने विचारों को पवित्र रखें, अपने आचरण ठीक रखें, अपना खान-पान सात्विक रखें, अपनी शक्तियों को व्यर्थ व्यय न होने दें, नित्य प्रभु की प्रार्थना करें और संसार के समस्त प्राणियों के लिए मंगल कामना करते रहें ।

दूसरों पर आत्म शक्ति का प्रयोग

परकाया प्रवेश करने की आवश्यकता कब होती है, यह पहले समझाया जा चुका है । अपने स्वार्थ साधन के लिए कदापि उसका उपयोग न करना चाहिए । पूर्ण रूप से निःस्वार्थ होकर दूसरों के हित की कामना से किसी पर प्रभाव डालना चाहिए । जैसा अवसर और परिस्थिति हो उसके अनुसार यह क्रिया भी तीन अवस्थाओं में की जाती है । जाग्रत अवस्था में, सुप्त अवस्था में निद्रित करके जो लोग तुम्हारे ऊपर पूर्ण विश्वास करते हैं, सम्मान की दृष्टि से देखते हैं, और आज्ञाएँ पालन करने के लिए उद्यत रहते हैं, उनको जाग्रत अवस्था में प्रभावित किया जा सकता है । जो मध्यम श्रेणी के हैं, तुम्हारे साथ साधारण सम्बन्ध रखते हैं । आदतों में मामूली तरह से जकड़े हुए हैं, किन्तु आस्तिक स्वभाव के हैं, धर्म और ईश्वर पर अविश्वास नहीं करते उन्हें निद्रित करके प्रभावित करना चाहिए । जो अत्यन्त ही उद्दण्ड, क्रूर स्वभाव के हैं, अहंकार जिनकी नस-नस में भरा हुआ है, हर किसी को झिड़क देना या अपमान कर देना जिनका बायें हाथ का खेल है, सुधार की बात कही जाय तो उल्टे लड़ पड़ें ऐसे लोगों के साथ सुप्त अवस्था में प्रयोग करना उपयोगी होता है । पाँच वर्ष से कम उम्र के बालकों को सुप्त दशा में प्रभावित करना चाहिए, क्योंकि इनके मानसिक तन्तु अवकसित होने के कारण जाग्रत अवस्था में प्रभाव को उचित मात्रा में ग्रहण नहीं कर सकते । उन्हें अवस्था के अनुसार जाग्रत अवस्था में भी प्रभावित किया जा सकता है । तीन वर्ष से बड़ी उम्र के बच्चों को कई बार जाग्रत अवस्था में प्रभावित करने पर अधिक लाभ होते हुए देखा गया है । पाँच से लेकर पन्द्रह वर्ष तक की उम्र के बालकों पर तो केवल जाग्रत अवस्था में ही प्रयोग करना चाहिए ।

जाग्रत अवस्था में परकाया प्रवेश करने के लिए कोई एकान्त स्थान चुनना चाहिए । यदि तुम अपनी एक पूजा की कोठरी अलग नियत करलो और उसमें आदर्श सफाई रखते हुए नित्य पूजा पाठ, आध्यात्मिक अभ्यास करते रहो और उसमें बाहर के अधिक व्यक्तियों का आना-जाना न रहे तो कुछ ही दिनों में उसका वातावरण बड़ा शान्तिदायक और प्रभावशाली बन जायेगा इस कोठरी में यह साधन बड़ी उत्तमता से हो सकता है । किन्तु यदि ऐसा कोई स्थान तुम्हारा नियुक्त किया हुआ न हो तो किसी पवित्र स्थान के एकान्त भाग में आसन बिछाना चाहिए । आप दो व्यक्तियों के अतिरिक्त तीसरा कोई वहाँ नहीं होना चाहिए । यदि वह बालक है, या संरक्षकों की अध्यक्षता में है और तुम उसके संरक्षक नहीं हो तो यह आवश्यक है, कि उस बालक के संरक्षकों की अनुमति पाने के उपरान्त ही कार्य करो क्योंकि कई बार कुदरती तरीके से उसके स्वास्थ्य आदि में गड़बड़ी हुई जैसी कि चाहे किसी के स्वास्थ में चाहे कभी हो सकती है, तो मूर्ख अभिभावक उसका दोष प्रयोक्ता पर मढ़ने तक का दुस्साहस करने लगते हैं । यद्यपि इन प्रयोगों में शारीरिक या मानसिक हानि पहुँचने जैसी कुछ भी बात नहीं है ।

प्रयोग के लिए दोनों को ही पवित्र होकर बैठना चाहिए । उसी समय स्नान और शुद्ध वस्त्र धारण की व्यवस्था हो सके तो बहुत उत्तम है, अन्यथा दोनों को हाथ-मुँह धोकर और कम से कम वस्त्र पहन कर बैठना चाहिए । प्रयोक्ता का आसन कुछ ऊँचा रहना चाहिए । यदि दोनों के बैठने के लिये चौकी या कुर्सी का प्रबन्ध हो तो एक कुछ ऊँची और दूसरी जरा नीची होनी चाहिए । अन्यथा प्रयोक्ता किसी पत्थर या तख्ते आदि पर आसन बिछाये और उसके लिए साधारण भूमि पर बिछौना रहे । सूर्य उदय अस्त से एक घण्टा पूर्व से लेकर एक घण्टा पश्चात् तक का समय इस कार्य के लिए उचित है । आवश्यकता पड़ने पर दोपहर और अर्धरात्रि के तीन-तीन घण्टे अर्थात् साढ़े दस से लेकर १।। बजे तक का समय प्रयोग किया जा सकता है । प्रयोक्ता का मुँह सूर्योदय के उपरान्त दक्षिण की ओर तथा सूर्य अस्त के बाद उत्तर की ओर रहना चाहिए । दोनों के बीच में एक हाथ से अधिक का अन्तर न हो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयोक्ता का चेहरा इस समय बहुत ही शान्त और गम्भीर होना चाहिए । चंचलता या उत्सुकता का एक भी लक्षण न हो । बिलकुल शान्त मुद्रा के साथ आरम्भ में सिद्ध अपने साधक के भृकुटि मध्य पर दृष्टि जमाये । आधे मिनट तक उसके भ्रू-भाग पर दृष्टिपात करने के उपरान्त निगाह को सिर की ओर ऊँची उठा के और उसके सिर को अच्छी तरह देखे इसके उपरान्त कान, नाक, आँखें, मुँह, ठोड़ी, गरदन, हाथ, धड़, पैर आदि के ऊपर नीचे धीरे-धीरे दृष्टिपात करे । देखने का ढंग गम्भीर मुद्रा के साथ ऐसा होना चाहिए, मानो किसी खोई हुई चीज को उसमें तुम तलाश कर रहे हो और जब वह वहाँ नहीं मिली है तो आगे तलाश करने के लिए निगाह को बढ़ा रहे हो । इस प्रकार सिर से लेकर पाँव तक सब अंगों को देखने में पाँच मिनट लगने चाहिए । जब पैरों पर दृष्टि पहुँच जाय तो फिर पैरों की तरफ से उल्टे मत चलो वरन् पुनः सिर से पैर तक दृष्टिपात करो । इस तरह तीन से पाँच बार तक का दृष्टिपात पर्याप्त होता है । इतने समय तक साधक को तुम्हारी नासिका के अग्रभाग पर दृष्टि जमानी चाहिए । यदि छोटा बालक है, तो उस पर इस प्रकार का प्रतिवन्ध नहीं है । वह अपने आप आसन पर बैठ भी नहीं सकेगा, इसलिए वह किसी दूसरे की गोद में होना चाहिए और जिसकी गोद में हो, उसके सब अंग कपड़े से ढके हुए हों, ताकि प्रयोक्ता की नजर बालक को छोड़कर उस पर भी न पहुँच जाय, क्योंकि ऐसा करने से उसकी शक्ति बँट जायेगी और बालक पर कम प्रभाव पड़ेगा ।

दृष्टिपात करते समय प्रयोक्ता को अपने मन में प्रेम की भावनाओं को अधिकाधिक चैतन्य करना चाहिए, मानो साधक के ऊपर दृष्टि मार्ग द्वारा प्रेम की अमृत वर्षा की जा रही है । प्रेम वह रहस्यमय दिव्य रस है, जो एक हृदय से दूसरे को जोड़ता है, यह एक अलौकिक शक्ति सम्पन्न जादू भरी मरहम है, जिसे लगाते ही सब कोढ़, खाज अच्छे हो जाते हैं और बेचैनी के स्थान पर शान्ति प्राप्त होती है । ऐसा विचार करो, मानो उस व्यक्ति के लिए तुम्हारे हृदय में प्रेम उमड़ा पड़ रहा है और अपनी भुजाएँ पसार कर उसे प्रेम पाश में आबद्ध कर रहे हो, यह प्रेममयी भावनाएँ जितनी ही उच्च कोटि की, गहरे अन्तःकरण से निकली हुई और पवित्र होंगी, उतनी ही अधिक उनमें शक्ति होगी । यह शक्ति सम्पन्न विचार किरणें अज्ञात रूप से उस व्यक्ति के गुप्त अन्तःकरण में प्रवेश करेंगी और उसे खींच कर तुम्हारे विचारों की छाया में लाने का प्रयत्न करेंगी । प्रेम भावनाओं के साथ दृष्टिपात करने से साधक को बड़ी शान्ति मिलती है अपने में कुछ प्रवेश होता हुआ वह अनुभव करता है और कभी-कभी तो उसे कँपकपी आते या रोमांच खड़े होते तक प्रतीत होते हैं ।

करीब पन्द्रह मिनट दृष्टिपात करने के उपरान्त उससे आधे समय तक मार्जन करना चाहिए । मार्जन करने की विधि यह है कि बायें हाथ की हथेली पर जितना आसानी से आ सके, उतना ही शुद्ध जल भर लो । गंगाजल मिल सके तो और भी उत्तम है । इसमें दाहिने हाथ की तर्जनी और मध्यमा उँगलियों के पोरुए से डुबाओ और इस मन्त्र को मन ही मन गुनगुनाओ ।

"तुम अनुभव करने लगे हो कि वह परम आत्मा तुम्हारी आत्मा में व्यापक है और यह शरीर ईश्वर का पवित्र मन्दिर है । तुम्हारा हृदय सर्वदा सत्यनिष्ठ और पवित्र है । अब तुम जाग उठो हो और दुनिया के सामान्य क्षुद्र विचारों से ऊपर उठ गए हो, छोटी-छोटी क्षुद्र बातों से अपना अमूल्य जीवन नष्ट नहीं करते । तुमने अपने जीवन का लक्ष्य स्थिर कर लिया है । अब संसार के प्रलोभनों में नहीं खिंच सकते । मानसिक पीडायें अब तुम्हें नहीं सता सकतीं । काम, क्रोध लोभ, मद, मोह, मत्सर, षड्रिपु अब तुम्हें व्यथित नहीं कर सकते । तुम्हारे हृदय की समस्त बुरी वृत्तियाँ नष्ट हो चुकी हैं और शुभ वृत्तियाँ जाग्रत हो रही हैं । सच्चिदानन्द परमात्मा की कृपा से तुम्हारा जीवन निर्मल और उच्च बन रहा है ।"

इस मन्त्र को मन ही मन गुनगुनाते रहो । होंठ हिलते रहने से साधक पर अच्छा असर होता है । मन्त्र पूरा होते ही उँगलियों को उठा कर सात बार जल के छींटे उसके ऊपर मारने चाहिए । इस प्रकार प्रत्येक बार मन्त्र समाप्त होने पर जल के मार्जन तीन बार देने चाहिए । अन्त में उसके सिर पर आगे से पीछे की ओर (पीछे से आगे की ओर नहीं) हाथ फिरा कर प्रयोग को समाप्त कर देना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधक यदि इस प्रयोग के लिए स्वयं इच्छुक है और उस पर विश्वास करते हुए कार्य में मदद देता है, तो उसे उपरोक्त मन्त्र को प्रयोग काल में मन ही मन स्वयं भी दुहराते रहना चाहिए । इसमें जहाँ "तुम" या "तुम्हारे" शब्दों का उपयोग हुआ है, वहाँ 'मैं' या 'मेरे' करके साधक अपने लिए एक मन्त्र बना सकता है और अन्य समय में गायत्री आदि मन्त्रों की तरह जप कर सकता है । इस मन्त्र जप से बहुत ही अल्प समय में अपने अन्दर उत्तम वृत्तियाँ जाग्रत होती हैं ।

किन्तु ऐसे साधक जो स्वेच्छा से इस प्रयोग में शामिल नहीं होते, उनकी इच्छा के विरुद्ध बुलाया जाता है, उनके लिए प्रयोक्ता को बहुत कठिनाई होती है । ऐसी मामलों में उसे बहुत बुद्धिमानी के साथ बातचीत करके साधक को इस बात पर जमाना पड़ता है कि वह इस लाभदायक प्रयोग का विरोध न करें इसमें उसकी किसी प्रकार की कोई हानि नहीं है । इस प्रयत्न की बात हर हालत में गुप्त रखनी चाहिए, क्योंकि जब दूसरों को ऐसा पता चलता है कि इसमें अमुक दोष हैं जिनके लिए यह उपाय किया जा रहा है तो वह दोष उस व्यक्ति के मित्रों के मालूम हो जाते हैं और यह मनुष्य का साधारण स्वभाव है कि वह अपने दोषों को प्रकट होने में लज्जा और दुःख मानता है । जो लोग साधक की निन्दा किया करते हैं उन्हें भी प्रयोक्ता को समझा देना चाहिए कि ऐसा करने से आदमी बेशर्म बन जाता है तथा और अधिक उद्दण्डता करने पर उतारू हो जाता है, इसलिए पिछली बातों पर ध्यान न देकर अब उसे बढ़ावा देने में ही लाभ है । कई बार दूसरों के मुँह अपनी प्रसंशा सुन कर लोग अपने को बड़ा मानने लगते हैं और फिर उस बड़प्पन की रक्षा करने की उन्हें एक लाज सी पड़ जाती है । इसलिए इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि सुधारने का सबसे अच्छा तरीका यह है कि उसके दोषों की चर्चा न करके गुणों पर प्रकाश डालो और उस व्यक्ति को उत्साहित करो कि अपने दिव्य गुणों की अधिकाधिक उन्नति करे ।

अनेक अवसर ऐसे भी आते हैं जब इस प्रकार नियमित रूप से निरन्तर अभ्यास पर बैठने की सुविधा नहीं होती । कभी-कभी किसी सफल प्रयोक्ता ने रास्ता चलते किसी आदमी को शक्ति दान देने की आवश्यकता प्रतीत होती है, तो वह इतनी सब सुविधाओं की प्रतीक्षा नहीं कर सकता वह चाहे जिस अवस्था में प्रेम पूर्ण दृष्टिपात करता है और जल भरा मार्जन के स्थान पर उसके शरीर से अपना दाहिना हाथ स्पर्श करके काम चलाता है । ऐसे तत्कालीन प्रयोग भी बहुत ही लाभदायक सिद्ध होते देखे गए हैं । कई व्यक्तियों पर एक साथ प्रयोग करके सफलता प्राप्त करना भी प्रयोक्ता की बढ़ी हुई शक्ति के ऊपर निर्भर है ।

निद्रित करके प्रभावित करना

जिन लोगों की दुर्वृत्तियाँ पुरानी हो कर जड़ पकड़ गई हैं और जिनके स्वभाव में कोई बुराई घर कर गई हैं, उनके लिए निद्रित करके परकाया प्रवेश करने की आवश्यकता पड़ती है । क्रोध, शोक, अशान्ति, उद्विग्नता, निराशा, मस्तिष्कीय शक्तियों की कमी आदि मानसिक विकारों में तो इस तरीके को खासतौर से काम में लाने की आवश्यकता पड़ती है ।

जिन लोगों ने त्राटक और नाद का ठीक अभ्यास कर लिया है, उनके लिए यह आसान है कि आपकी बेधक दृष्टि के बल पर किसी को तन्द्रा में गिरा दें । जिस व्यक्ति पर प्रयोग करना है उसे अच्छी तरह समझा देना चाहिए कि यह कोई जादूगरी या टोना टोटका नहीं किया जा रहा है और न कोई ठगी या मायाचार जैसी वस्तु ही है, यह केवल दो आत्माओं का एक प्रेम पूर्ण समझौता मात्र है जिसके अनुसार कि उच्च भावनाओं के साथ दोनों एक-दूसरे से कुछ आदान-प्रदान करते हैं । निद्रित होने वाले की न तो कोई बात हेटी होती और न प्रयोक्ता का कोई रुतवा बढ़ता है इसलिए साधक को उचित है कि इस प्रयोग में किसी प्रकार की बाधा न डाले और जहाँ तक हो सके सहयोग करे । मेस्मेरिज्म करने वालों की चालाकी को ताड़ने के लिए या अपनी दृढ़ता का परिचय देने के लिए कई सज्जन यह हठ करके बैठ जाते हैं कि 'देखें हमें कौन निद्रित कर सकता है ?' सचमुच ऐसे दृढ़ निश्चय वालों को परास्त करना बहुत कठिन है । साधारण कोटि में मेस्मेराइजर ऐसे मौके पर हिम्मतपस्त हो जाते हैं । परन्तु इस विज्ञान में ऐसा हठधर्मी के लिए कोई स्थान नहीं है । हर मामले में हर जगह उद्धतपन की आवश्यकता नहीं होती । इस पवित्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकर्षण क्रिया के प्रयोग में साधक को नम्र होना चाहिए और प्रयोक्ता की कृपा तथा अपने हित को ध्यान में रखते हुए इस कार्य में शक्ति भर सहयोग देने चाहिए।

जिस व्यक्ति पर प्रयोग करना है उसे एकान्त स्थान में आराम कुर्सी पर लिटा दो और सामने एक साधारण कुर्सी पर आप बैठ जाओ । दोनों कुर्सियों के बीच में बहुत थोड़ा अन्तर होना चाहिए । साधक को आदेश करो कि वह अपने शरीर को बिल्कुल ढीला रुई की तरह छोड़ दे, कहीं किसी अंग पर बिल्कुल दबाव या तनाव न रहे । जब वह इस प्रकार अपने शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दे, उसके दाहिने हाथ की उँगलियों को अपने बायें हाथ में पकड़ लो और उसकी बायीं आँख की पुतली पर अपनी निगाह जमाओ तथा दृढ़ संकल्प करो कि पात्र को गहरी निद्रा आ रही है । साधक को हिदायत करनी चाहिए कि वह बिना पलक मारे एकाग्रतापूर्वक तुम्हारी आँखों की ओर देखता रहे । उसे यह भी समझा देना चाहिए कि जब पलक भारी हो जाय और आँखें झपकने लगें तो बलपूर्वक उन्हें खोले रखने का प्रयत्न न करे वरन् यदि पलक बन्द हो रहे हैं तो उन्हें हो जाने दें और अपने मानस लोक में केवल नीले रंग को ही देखता हुआ शान्ति प्राप्त करने की भावना करे । साधारणतः पाँच-सात मिनट में ही इस क्रिया से पात्र को निद्रा आने लगती है, किन्हीं-किन्हीं पर दस-पन्द्रह मिनट में प्रभाव होता है ! किसी को कठोर मानस भूमिका होने के कारण यदि निद्रा आने में देर लग रही है तो प्रयोक्ता को अधीर नहीं होना चाहिए । वरन् और भी अधिक साहस के साथ शक्तिपात करना चाहिए । 'नेत्रों की दृष्टि द्वारा मेरी आत्मा शक्ति साधक के शरीर में तीव्र गति से प्रवेश करती जा रही है ।' प्रयोक्ता द्वारा यह भावना जितनी ही अधिक विश्वास और दृढ़तापूर्वक की जायेगी उतनी ही अधिक सफलता मिलेगी ।

पात्र जब तन्द्रा में गिर जायेगा तो उसके अंग बिल्कुल ढीले ही जायेंगे । जैसे सोते हुए या मुर्दे के अंग ढीले होकर इधर उधर लुढ़क जाते हैं, उसी प्रकार उसके भी ढल सकते हैं । इसलिए हिफाजत के साथ उसकी गरदन या हाथों को इस प्रकार रखने की व्यवस्था कर देनी चाहिए कि उसको निद्रित अवस्था में कोई हानि या तकलीफ न होने पाये । उपरोक्त अवस्था को निद्रा न कहकर तन्द्रा कहना चाहिए क्योंकि इस समय तुम्हारी शक्ति ने उसके मानस स्थान में प्रवेश करके उसके शरीर पर अपना कब्जा जमा लिया है । फलस्वरूप साधक की अपनी साधारण चेतना लुप्त सी हो गई है । उपरोक्त अभ्यास से इतनी गहरी निद्रा नहीं आयेगी कि उसके किसी अंग का आपरेशन किया जा सके । इतनी गहरी निद्रा लाने के लिए ऊँचे अभ्यास हैं । हम जरूरत नहीं समझते कि इस पुस्तक द्वारा सर्व साधारण तक उस क्रियाओं को पहुँचा दिया जाय और हर कोई उनका उपयोग करने के लिए टाँग अड़ाये । इस प्रयोग द्वारा लायी गई निद्रा में पात्र एक प्रकार की तंद्रा बेहोशी में पड़ा हुआ है, मर नहीं गया है । इसलिए उन लोगों को सावधान किया जाता है, जो निद्रा के गहरेपन की परीक्षा लेने के लिए उसके शरीर में चिकोंटी काटते हैं या सुई आदि चुभोते हैं । कोई व्यक्ति यदि निद्रित व्यक्ति के साथ ऐसी हरकत करेगा तो उसे भारी नुकसान पहुँचायेगा । निद्रित अवस्था में तो पात्र को अधिक से अधिक आराम देने की और मौसम के अनुसार पंखे आदि की व्यवस्था करनी चाहिए ।

प्रयोग करते समय पात्र के हाथों को प्रयोक्ता ने अपने हाथों में पकड़ रखा था । तन्द्राग्रस्त हो जाने पर उन्हें छोड़कर उसी की गोदी में रख देना चाहिए । अब शक्ति प्रवेश की भावना के साथ पुतली पर बेधक दृष्टि डालने की जरूरत नहीं है । क्योंकि इस क्रिया का जो उद्देश्य था, वह पूरा हो चुका । तुम्हारी शक्ति पात्र के शरीर में भरपूर प्रवेश करके उस पर अपना अधिकार जमाये हुए हैं । अब तुम्हें वह काम करना है, जिससे तुम्हारे शुभ संकल्प उसके सुप्त मन पर गहरे अंकित हो जायें और वह उन्हें अपने अन्दर धारण करलें । इस बात में तो कोई सन्देह ही नहीं कि किसी स्थान पर कोई वस्तु रख देने पर, उससे पूर्व की रखी हुई वस्तु अपने आप हट जाती है । जैसे किसी गिलास में पानी भर दिया जाय, तो उससे पूर्व उसमें जो हवा भरी हुई थी, वह अपने आप हट जायेगी । शुभ विचार भर जाने पर नीच वृत्तियाँ अपने आप हट जाती हैं । उसी प्रकार तुम्हारी मानसिक सहायता पहुँचने पर उसकी मानसिक शक्तियों को बल मिलेगा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और वे जाग्रत होकर अपनी उन्नति करती हुई ठीक प्रकार से काम करती हुई दिखाई देंगी ।

अब पिछले पृष्ठों में बताई हुई प्रेम दृष्टि को उसी भाँति पन्द्रह मिनट तक समस्त शरीर पर डालना चाहिए और इसके पश्चात् उसी मन्त्र को गुनगुनाते हुए सिर पर कम्पन देने चाहिए । कम्पन की पूरी क्रिया 'प्राण चिकित्सा विज्ञान के पृष्ठ ४४ पर सविस्तार दी हुई है ।' हाथ को इस प्रकार कुछ देर तक लगातार कंपित रहते हैं मानो विद्युत गति या किसी मन्त्र से उसे थरथराया जा रहा है । यही कम्प उपचार है । किसी पतले बेंत को एक बार जोर से फटकार दो, तो वह कुछ देर तक कंपकपाता रहता है । घड़ियाल में हथोड़ी लगाने पर घण्टा शब्द होता है और तदुपरान्त वह कुछ क्षण काँपती रहती है । यही क्रिया हाथ की होनी चाहिए । कलाई से लेकर कोहनी तक की पेशियों को कड़ी करके थरथराहट पैदा करने से यह कम्पन आ सकता है । उपचार करने से पूर्व एक-सी गति से—बिना थके हुए हाथ से कुछ देर कँपाते रहने का अभ्यास करना चाहिए । सिर के ऊपर कम्पन देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हाथों की थरथराहट केवल बालों से ही थोड़ा सा स्पर्श करे वह इतने निकट से न होनी चाहिए कि शरीर की चमड़ी तक को आघात पहुँचे और पात्र की निद्रा भंग हो जाय । यह मार्जन साधारणतः दस मिनट तक देना काफी है ।

तन्द्रा की अवस्था प्रायः पन्द्रह मिनट से लेकर आधे घण्टे तक रहती है । कभी-कभी गहरा असर हो जाता है, तो इससे भी अधिक समय तक बनी रहती है । मामूली दशा में पन्द्रह मिनट प्रेम दृष्टि से डालने और दस मिनट कम्प करने के उपरान्त उसे जागृति वापिस आने लगती है । कभी-कभी कम्पनों के समय में ही वह जागने लगता है । जब स्वेच्छापूर्वक उसे चेतना वापिस आ रही हो तो जाग जाने देना चाहिए और क्रिया को वहीं समाप्त कर देना चाहिए, किन्तु यदि कम्प पूरे होने पर भी वह न जागे तो पाँच मिनट और भी उसी दशा में पड़ा रहने देना चाहिए और आधा घण्टा पूरा होते ही सिर से पैरों की तरफ 'पास' करने चाहिए । 'पास' करने का सीधा सादा कायदा यह है कि दोनों हाथों की उँगलियों को खोल दो और उन्हें बराबर-बराबर इस प्रकार रखो कि हथेलियाँ पात्र के पैरों की तरफ रहें । अब दोनों हाथों को साथ-साथ नीचे की ओर—रोगी के शरीर से तीन इंच के फासले पर नीचे की ओर खिसकाते लाओ और पैरों के पास ले जाकर उन्हें एक ओर झटकार दो । मानो तुम्हारे हाथ पानी में भीग गए थे और तुमने उसकी बूँदों को अलग फेंक दिया । इस प्रकार कई बार पास करने से तुम्हारी शक्ति, जो पात्र को भरी हुई है, निकल जायेगी और वह जाग जायेगा । दस मिनट पास करने पर रोगी शक्ति से बिल्कुल खाली हो जायेगा और ऊँघता हुआ जाग पड़ेगा । किन्तु यदि इस पर भी न जागे तो समझना चाहिए, उसे स्वाभाविक निद्रा आ गई है । इस खींचतान से थककर वह साधारण नींद में सो गया है । ऐसी दशा में न तो चिन्तित होना चाहिए और न बलात् जगाने का प्रयत्न करना चाहिए, वह कुछ देर में अपने आप अपनी नींद पूरी करके जाग पड़ेगा ।

यह प्रयोग एक दो दिन करके ही काम पूरा नहीं हो जाता । एक सप्ताह तो परीक्षा के तौर पर लगाना चाहिए । इतने समय में बहुत कुछ सुधार हो जायेगा और पीड़ित इसकी ओर अधिक आकर्षित होता जायेगा । तीन सप्ताह में बड़े-बड़े कठिन और पेचीदा स्थितियों का सुधार हो जाने के बीसियों अनुभव हमने स्वयं अनुभव किए हैं ।

सोते हुए आदमी पर प्रयोग

सोते हुए आदमी के ऊपर प्रयोग करने की आवश्यकता उस स्थिति में होती है जब वह इस कार्य में कोई सहयोग नहीं देना चाहता था नहीं दे सकता । इसी प्रकार वे जिद्दी और क्रूर स्वभाव के लोग जो अपने ऊपर किसी बात का किया जाना शान के विरुद्ध समझते हैं । अपने को 'बहुत-बड़ा' समझने वाले लोगों के मन में कोई बात बिठाने को प्रयत्न उसे करना पड़े, जिसे वह छोटा समझते हैं, तब भी सुप्त अवस्था का प्रयोग ही ठीक रहता है । दूध पीते बालकों के लिए भी यही उपाय उचित है ।

सोया आदमी किस अवस्था में हो इसका कोई प्रतिबन्ध नहीं है और हो भी नहीं सकता । क्योंकि यदि वह नियमपूर्वक स्वेच्छा से प्रयोग में शामिल होता तो सुप्त अवस्था ढूँढ़ने की नौबत ही न आती, वह जैसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ भी सोया हुआ है सोने दीजिए । यदि कपड़े से बिल्कुल ढका हुआ है, तो उस ओर का अन्तिम भाग जिस ओर कि तुम बैठे हुए हो थोड़ा-सा खोल दो । जैसे तुम सिर की ओर बैठना चाहते हो तो सिर के बाल ओर पैरों की और बैठना है तो पैरों का तलवे थोड़े से खोल दो । इससे कार्य में आसानी रहेगी । यदि इस प्रकार अन्तिम अंग खुला रखने की सुविधा न हो सके तब भी काम चलाया जा सकता है पर सफलता अधिक परिश्रम और अधिक विलम्ब से मिलती है ।

जिस आदमी पर जिस समय प्रयोग करना है । उसके सोने की साधारण अवधि मालूम करो और आठवाँ भाग आदि अन्त का समय त्याज्य समझो । जैसे वह व्यक्ति आमतौर से रात को छः घण्टे सोता है तो पौन घण्टा आरम्भ में और पौन घण्टे में अन्तिम समय में उसे नहीं छेड़ना चाहिए । दोपहर को वह दो घण्टे सोता है तो पन्द्रह मिनट आदि और पन्द्रह मिनट अन्त में उसके ऊपर कोई प्रयत्न नहीं करना चाहिए, क्योंकि ऐसा करने से शरीर में जो गर्मी बढ़ेगी, उससे उसकी नींद उचट सकती है ।

असुविधा न हो तो दो गज के फासले पर बैठना ठीक है, इससे निकट रहना और भी अच्छा है । किन्तु यदि अधिक दूर रहना अभीष्ट हो, तो अधिक से अधिक दस गज की दूरी तक यह प्रयोग हो सकता है । अधिक दूरी रहने की दशा में पानी में एक भीगे हुए सूत्र को सोने वाले उन वस्त्रों से सम्बन्धित कर देना चाहिए, जो उसके शरीर को छूते हैं । इस सूत्र का दूसरा सिरा प्रयोक्ता के पास तक पहुँचना चाहिए, इस सूत्र के द्वारा पाँच गज दूर रहते हुए भी शरीर तक सम्बन्ध हो जाता है । यदि दो गज के भीतर ही बैठना हो, तब इसकी विशेष आवश्यकता नहीं है ।

प्रयोग के लिए खुली हुई जमीन पर कभी मत बैठो, क्योंकि पृथ्वी की आकर्षण शक्ति तुम्हारे बढ़ाए हुए बल को खींच कर छूंछ कर देगी । हमेशा कुर्सी, चौकी, तख्ता या आसन आदि बिछा कर बैठना चाहिए । मुँह पात्र की ओर रहे । यदि भीगे हुए सूत्र का प्रयोग करना पड़ रहा है, तो उसका अन्तिम भाग अपने दाहिने हाथ को मुट्ठी में दबाये रहो । अब तम्हें वज्र यानी श्वास-प्रहार द्वारा काम लेना होगा । उसकी विधि इस प्रकार है—

मेरुदंड को सीधा रख कर बैठो और मुँह अच्छी तरह बन्द कर लो, ताकि उसमें ही साँस का आना जाना न हो । अब नाक द्वारा साँस लेने छोड़ने की क्रिया जल्दी-जल्दी करो । मानो धक्-धक् करता हुआ रेल का इंजन चल रहा हो । इस प्रकार साँस पूरी नहीं ली और छोड़ी नहीं जा सकेगी, वरन् थोड़ी सी वायु भीतर पहुँचेगी और फौरन ही झटके के साथ निकाल दी जायेगी । यह साँस लेने छोड़ने की क्रिया जितनी जल्दी हो सके, करनी चाहिए । करीब आधे मिनट इसे करने पर वायु की रगड़ से फेंफड़े तथा शरीर के अन्य भीतरी अंगों में घर्षण होने लगेगा । दो वस्तुएँ रगड़ने पर विद्युत प्रवाह तेजी से बहने लगता है । यदि तुम अपनी हथेलियों को कुछ देर तक बराबर रगड़ोगे, तो वे गरम हो जाती हैं । इसी प्रकार श्वास की रगड़ मस्तिष्क, कंठ, फेंफड़े, हृदय आदि अंगों में लगेगी, इससे इनके अन्दर रहने वाली साधारण विद्युत और गुप्त दैवी शक्तियाँ उत्तेजित हो कर वायु के साथ मिल जायेंगी । इस वज्र यानी श्वास प्रहार के साथ मन ही मन 'हूँ' शब्द दुहराना चाहिए । महर्षि नागार्जुन ने शरीर के अन्दर विभिन्न अवस्थाओं में विभिन्न प्रकार के होने वाले शब्दों का ज्ञान प्राप्त करके बताया है । इस 'प्रहार' के समय माँसपेशियों और स्नायु तन्तुओं की घिसावट से एक प्रकार की सूक्ष्म आवाज आती है जो 'हूँ' शब्द से मिलती-जुलती होती है । यदि इसी शब्द को मन में मन्त्र की तरह जपा जाय तो वह ध्वनि अधिक तीव्र होकर श्वास को विशेष शक्तिशाली बना देती है । इस घर्षण के समय मन की भावनाएँ आत्मशक्ति को चैतन्य करने पर केन्द्रित रहनी चाहिए ।

प्रायः आधे मिनट पर श्वास घर्षण करने के बाद एक लम्बी साँस खींचनी चाहिए जितनी अधिक हवा पेट में भर सको भर लो । अब फूँक मारने के लिए मुँह को सिकोड़ो । बहुत ही पतली फूँक यदि दूर तक फेंकना चाहो तो यह काम पूरा मुँह खुला रखने से नहीं हो सकता वरन् इसके लिए होठों को ऐसे सिकोड़ना पड़ेगा जैसा बंशी या सीटी बजाने के लिए सिकोड़ते हैं । काँच की छोटी शीशी को होंठ के पास ले जाकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फूँक द्वारा यदि तुम सीटी बजाना जानते हो तो ठीक वैसी ही तरह होठों को सिकोड़कर पतली और हर दूर तक जाने वाली फूँक मारने के लिए तैयार करो और धीरे-धीरे पतली फूँक उस के खुले हुए अंग को लक्ष्य करके छोड़ना शुरू करो । यह कार्य बहुत ही धीरे होना चाहिए और पेट की पूरी हवा खाली करने में आधा मिनट का समय लगाना चाहिए । यदि यह कार्य तुम्हें ऐसी जगह बैठ कर करना पड़ रहा है, जहाँ पात्र के और तुम्हारे बीच में कोई पर्दा, आड़ या दीवार आदि की रोक पड़ती है, तो मुट्ठी में रखे हुए सूत्र पर इस प्राण वायु को छोड़ दो । इस 'वज्र यानी श्वास प्रहार' के करते समय भावना करते जाना चाहिए कि "मेरा यह शक्तिशाली प्राणवायु परम पवित्र और प्रेम के विचारों को लेकर पात्र के मस्तिष्क में प्रवेश कर रहा है । यह उसके जीवन को उच्च और सुन्दर बनाने के उद्देश्य से अनुकूल वातावरण पैदा करता है । बसन्त जैसे पुराने शक्तिहीन पत्तों को पेड़ों से गिराकर नवीन कोंपले उत्पन्न करता है वैसा ही जीवन रस मेरा यह प्राण वायु इस व्यक्ति में संचरित करता है । इससे बुरी आदतें और सब प्रकार की कमजोरियाँ नष्ट हो रही हैं और उनके स्थान पर दिव्य गुणों का विकास हो रहा है ।" इसके मन्त्र के साथ-साथ दुर्गुण के नष्ट होने और उसके विरोधी उत्तम स्वभाव के उदय होने की भी भावना विशेष रूप से करनी चाहिए जिसके श्वास उद्देश्य से यह प्रयोग किया गया है ।

साधारणतया पन्द्रह-बीस मिनट यह पूरा प्रयोग करना चाहिए । जिनको श्वास प्रहार का पूरा अभ्यास नहीं है, उन्हें तो आधे घण्टे से अधिक परिश्रम करने पर अपने शरीर को हानि पहुँचने का भय रहता है ।

यदि सुविधा हो तो सुप्त मनुष्य के सिरहाने खड़े होकर उसके मस्तिष्क पर प्रेममय दृष्टिपात करना चाहिए और सुधार का उपरोक्त मन्त्र उसके ऊपर अपने विचार बल द्वारा प्रेषित करना चाहिए । छोटे बालकों के लिए सूत्र आदि की कोई आवश्यकता नहीं है । उनके दिव्य गुणों का विकास करने के लिए दस-पन्द्रह मिनट शुभ भावनाओं के साथ हल्का श्वास प्रहार और प्रेममय दृष्टिपात करना पर्याप्त है ।

उपरोक्त साधन में सूत्र आदि का प्रयोग देख कर कोई सज्जन भ्रम कर सकता हैं, उन्हें ध्यान रखना चाहिए, यह अन्ध विश्वास या ढोंग ठगी को कोई चाल नहीं है, वरन् व्यक्तिगत विद्युत (Personal Megnetism) की एक शास्त्र सम्मत क्रिया है । इसकी सच्चाई और शक्ति को हर कोई व्यक्ति परीक्षा कर सकता है । इसका ठीक प्रकार उपयोग करने के उपरान्त अभ्यासियों को हमारी ही भाँति इस पर पूर्ण विश्वास करने के लिए बाध्य होना पड़ेगा ।

दूरस्थ व्यक्ति को प्रभावित करना

जो व्यक्ति तुम्हारे निकट नहीं है, और बहुत दूर रहता है उसके लिए भी उपचार करना असम्भव नहीं है । दूरी का प्रश्न स्थूल वस्तुओं के लिए है । मिट्टी, लोहे, लकड़ी आदि को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने में बहुत प्रयत्न करना पड़ता है । लेकिन हवा बहुत जल्दी एक स्थान से दूसरे स्थान को उड़ जाती है । बिजली की गति हवा से भी कहीं तेज है । शब्दों की लहरें तो बिजली से भी तेज चलती हैं । जैसे-जैसे सूक्ष्मता आती जाती है वैसे ही वैसे दूरी का प्रश्न घटता जाता है, विचारों की तरंगें तो एक सेकण्ड में सात बार पृत्वी की परिक्रमा कर सकती हैं । आत्म शक्ति के लिए दूरी की कोई कठिनाई नहीं है, किन्तु इसमें एक नियम का पालन करना आवश्यक है, कि जिस समय प्रयोक्ता उपचार करे उसी समय साधक को भी उसे ग्रहण करने की इच्छा से शान्त चित्त होकर बैठना चाहिए । पात्र की बिल्कुल रुचि न होने और प्रयत्न न करने पर भी उसे सहायता पहुँचाना लगभग असम्भव है ।

ब्राडकास्टिंग स्टेशन से समाचार या गायन वाद्य आदि की शब्द धारा प्रेषित की जाती है, वह ईश्वर तत्व में मिल कर समस्त विश्व में गूँज जाती है, किन्तु हम उनमें से कुछ भी नहीं सुन सकते । यदि सुनने की इच्छा हो तो एक अच्छा रेडियो यन्त्र प्राप्त करना चाहिए, जिसमें उन शब्द लहरों की पकड़ने योग्य आकर्षक बिजली चलती हो । उस यन्त्र की धारा का मुख जिस प्रवाह की ओर किया जायेगा, वह उसी के सन्देश सुना सकेगा । दिल्ली, लाहौर, लन्दन, बर्लिन, रोम आदि जिस स्थान के मीटर पर सुई कर दोगे, वहीं की शब्द धारा को तुम्हारा रेडियो सुनने लगेगा । अन्य स्थानों के प्रोग्राम भी उसी समय चल रहे होंगे पर वे अपने रास्ते चले जायेंगे और जब तक उन्हें पकड़ने की कोशिश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

न की जाय तुम्हारे यन्त्र पर कोई हस्तक्षेप न करेगा । ठीक इसी भाँति यदि दो व्यक्ति एक नियत समय पर अपनी आत्मशक्ति को एक-दूसरे के साथ सम्बन्धित करना चाहें और उससे लाभ उठाना चाहें तो वैसा कर सकते हैं ।

किसी रोगी, मानसिक विकारग्रस्त, या दुर्गुणों में फँसे हुए व्यक्ति को तुम अपनी शक्ति से कुछ लाभ पहुँचाना चाहते हो तो सबसे प्रथम इसमें सहयोग देने के लिए उसको रजामन्द कर लो । उसकी इच्छा होने पर ही कुछ किया जा सकता है । यदि वह स्वीकृति दे तो शिखा स्थान के कम से कम दस बाल या हाथ पाँवों की अंगुलियों के मुर्दा नाखून अपने पास मँगा लो । यह वस्तुएँ मुर्दा होने पर भी शरीर का बहुत प्रतिनिधित्व करती हैं और उसके साथ सम्बन्ध स्थापित करने में बड़ी मदद देती हैं । जिस प्रकार मरे हुए केंचुए के शरीर के एक टुकड़े को गीली मिट्टी में दबा दिया जाय तो वह टुकड़ा ही एक जीवित केंचुआ बन जाता है । उसी प्रकार यह दोनों ही वस्तुएँ पूर्व शरीर के लिए माध्यम बन जाती हैं । हिन्दू अपने शिखा स्थान के बालों को चोटी के रूप में रखाये रहते हैं ताकि उनके द्वारा कोई व्यक्ति अनिष्ट साधन कर सकें । कहावत है कि मैंने तुझसे चोटी नहीं कटाई है—अर्थात तेरे वश में नहीं हो गया हूँ । तान्त्रिक गुरु अपने शिष्यों की चोटी काट लिया करते हैं ताकि उसे अपना इच्छानुवर्ती बना सकें । चीन आदि देशों में बौद्ध तान्त्रिकों की इस बात पर भली-भाँति विश्वास किया जाता था कि नाखूनों को मध्यस्थ बनाकर कई दुष्ट मनस्वी किसी का प्राण तक ले सकते हैं । इसलिए वहाँ नाखून बढ़ाये रखने की प्रथा है । आगे चलकर तो बड़े हुए नाखून सुन्दरता के चिन्ह समझे जाने लगे, चीन की महिलाएँ अब तक उँगलियों में बाँस की नली पहन कर उसके अन्दर अपना नाखूनों को बढ़ाती रहती हैं । शेर आदि के नाखून बालकों के गले में पहनाये जाते हैं ।

आजकल के शिखा स्थान के बाल और नाखूनों को काट कर चाहे जहाँ भले बुरे स्थान में फेंक दिया जाता है, इससे परोक्ष रूप से हानि हो सकती है । हिन्दूओं में विधिपूर्वक मुंडन करने की रिवाज बहुत खोजबीन के साथ प्रचलित की गई थी । हिन्दुओं बालकों के बाल जब पहले काटे जाते हैं तो बहुत पवित्रतापूर्वक धार्मिक विधि से यह कार्य होता है और उन बालों को यों ही चाहे जहाँ नहीं फेंक दिया जाता वरन् सुरक्षापूर्वक किसी पवित्र जलाशय में विसर्जित किया जाता है । अस्तु ।

शिखा स्थल के बाल और नाखून दो व्यक्तियों के बीच माध्यम का बड़ा अच्छा काम दे सकते हैं । प्राचीन समय में इन्हीं से काम लिया जाता था । यूरोप के विद्वान्, टेलीपैथी के लिए किसी ऐसे वस्त्र की माँग करते हैं, जो उस व्यक्ति के शरीर से छूता रहा हो । इस युग में कैमरे द्वारा खींचा हुआ (हाथ से बना हुआ नहीं) चित्र भी इस कार्य के लिए बहुत उपयुक्त है, किन्तु यदि फोटो प्राप्त न हो तो वस्त्र की अपेक्षा नाखून या केश ही अधिक ठीक हैं ।

जिस समय प्रयोग करना है उस समय पहले से ही निश्चित कर लेना चाहिए और ठीक समय पर अभ्यास के लिए बैठना चाहिए । यदि घड़ी आदि की ठीक सुविधा न हो और वह स्थान विदेश में न हो, तो सूर्योदय का समय सर्वोत्तम है । साधारणतः आधी रात के बाद और प्रातः नौ दस बजे तक का समय इस कार्य के लिए ठीक है । दोनों व्यक्तियों के चित्र या नाखून, केश आदि में से कोई एक या एकाधिक वस्तुएँ पास होनी चाहिए । नियत समय पर दोनों एक-दूसरे के नगर की दिशा में मुँह करके किसी शान्त और एकान्त स्थान में बैठें ।

प्रयोक्ता को चाहिए कि उन माध्मय वस्तुओं में चैतन्यता और जीवन की भावना करे अर्थात् ऐसा विचार करे कि यह चीज माँस पिंड की भाँति सजीव हैं और इनके ऊपर जो शक्ति छिड़की जायेगी, इसे ग्रहण करके यह अपने पिता के पास तक पहुँचा देगी । पत्थर की मूर्ति में ईश्वरीय भावना करने से वह देवताओं जैसा फल देती है, भय और भ्रम की भावना दृढ़ होते ही झाड़ी का भूत दिखाई देने लगता है और उससे डर कर कई बार तो लोग प्राणों से हाथ तक धो बैठे हैं । अस्तु । इन वस्तुओं में चैतन्यता की भावना करने पर उनमें एक शक्ति का संचार होने लगता है और जिस शरीर से वे अलग हुई हैं, उसके साथ सम्बन्ध स्थापित करने में बड़ी मदद देती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आरोग्यता, स्वास्थ्य, आशीर्वाद और शुभ कामना से सम्मिश्रित दृष्टि उन वस्तुओं पर पूर्ण एकाग्रता के साथ डालो । यह मत सोचो कि केवल दृष्टिपात से क्या होगा ? कोई विशेष अनुष्ठान या मन्त्र आदि इस क्रिया में नहीं है, तो फिर कैसे लाभ पहुँचेगा ? तुम्हें जानना चाहिए कि मन्त्रों के शब्द वास्तव में कुछ नहीं, उनके अर्थ बहुत मामूली होते हैं, कई मन्त्र तो यों ही विचित्र अक्षरों को जोड़ कर बने होते हैं, उनकी अद्‌भुत शक्ति का रहस्य केवल प्रयोक्ता के मनोबल में है । एक सिद्ध तान्त्रिक जिस मन्त्र के बल से मुर्दे को जिला सकता है, उसी मन्त्र को कोई अजनबी आदमी दिन भर चिल्लाता रहे, तो खाक भी असर न होगा । मंत्र और अनुष्ठान केवल प्रयोक्ता के विश्वास को मजबूत बनाने के लिए हैं, ताकि वह अपने मन्त्र पर भरोसा रखे और अविश्वास या सन्देह के विचारों को ग्रहण न करे । तुम्हें इस महाविज्ञान का मूलतत्व समझा दिया गया है, इसलिए अब इस बात की आवश्यकता नहीं रही कि खास शब्दावली का ही प्रयोग करो । तुम्हारी पवित्र और अविचल इच्छा शक्ति बहुत ही उच्च कोटि की अचूक मन्त्र है । फिर भी यदि इच्छा हो, तो गायत्री मन्त्र को इस या ऐसी ही किसी भी अवसर पर निश्चित भावनाओं के साथ प्रयोग कर सकते हो । अनेक प्रकार के मन्त्र रटने या विभिन्न क्रियाओं के अनुष्ठान सीखने सिखाने में बहुमूल्य समय बरबाद करना हमें निष्प्रयोजन प्रतीत होता है ।

साधक को नियत समय पर तुम्हारा चित्र या अन्य वस्तुएँ लेकर बैठना चाहिए और श्रद्धा के साथ अनुभव करना चाहिए कि जिस व्यक्ति के यह चित्र हैं, उसके द्वारा ठीक इस समय मेरे लिए लाभदायक शक्ति प्रेषित की जा रही है और भी उसे अपने शरीर एवं मन की आकर्षण शक्ति द्वारा ग्रहण कर अपने अन्दर धारण कर रहा हूँ । आकर्षण भावना सन्देह रहित, नम्रता और एकाग्रता युक्त चित्त से करने की आवश्यकता है ।

यदि साधक नियत समय पर बैठने को तैयार न हो या इसके विरुद्ध हो, तो उसकी इच्छा के प्रतिकूल भी कुछ किया जा सकता है । उसके लिए ऐसा समय चुनना चाहिए, जब वह व्यक्ति अधिक कामों में न फँसा रह कर शान्त चित्त बैठता हो । यदि ऐसे समय का भी पता न लग सके, तो प्रातःकाल का ब्रह्म मुहूर्त उत्तम हैं, ब्रह्म मुहूर्त में किसी के सुधार, विकास या उन्नति के लिए निःस्वार्थ और पवित्र हृदय के साथ तुम परमात्मा से सच्ची प्रार्थना करोगे, तो वह व्यर्थ न जायेगी । दयामय प्रभु तुम्हारी टेर सुनेंगे और उसे दुःख के मार्ग से हटा कर कल्याण के पथ पर अग्रसर कर देंगे । सच्ची प्रार्थना में सच्चा बल होता है ।

दूसरों के मन की बात जानना

मनुष्य के मस्तिष्क में से जो विचार उठते हैं, वे भाप की तरह ऊपर उड़ते रहते हैं । अब इनका रंग रूप यन्त्रों द्वारा देखा जाने लगा है । पेरिस के डॉक्टर बेशडुक ने उड़ते हुए विचारों के चित्र खींचे हैं, एक लड़की अपना पाले हुए पक्षी की मृत्यु पर रो रही थी, उसके विचारों का फोटो लिया गया हो, मरे हुए पक्षी का पिंजड़े सहित फोटो आया । एक स्त्री अपने मृत पुत्र के लिए विलाप कर रही थी, फोटो में मरे हुए बच्चे की तस्वीर आयी । एक युवक अपनी प्रेमिका के लिए चिन्तन कर रहा था । फोटो लेने पर उसी युवती की तस्वीर खिंच गई । ऐसे हजारों चित्र अब तक खींचे जा चुके हैं और वे प्रायः सौ फीसदी ठीक निकले हैं । विलायत में ऐसे यन्त्रों का निर्माण हुआ है, जिसकी सुई बताती है कि अमुक आदमी इतनी शक्ति युक्त और इस प्रकार के विचार कर रहा है । एक दूसरे वैज्ञानिक डॉक्टर ने उन विचारों के भी चित्र लिए हैं, जो किसी प्राणी या वस्तु विशेष को लक्ष्य करके नहीं किए जाते हैं । इन भावनाओं के चित्रों ने तो विचारों के स्वरूप के सम्बन्ध में दुनिया को और भी अधिक विश्वास करा दिया है । प्रेममयी भावना करते हुए व्यक्तियों के विचार, चित्र सुन्दर फूले आकार के बनते हैं । ईश्वर आराधना से कमल के फूल या गुंबद जैसी तस्वीर आती है । रोष, प्रतिहिंसा तथा क्रोध के चित्र शूल, छुरी आदि की तरह नुकीले तथा तेज धार वाले होते हैं । सदाचार और सन्तोष की भावनाएँ हल्के रंग की बेलों की तरह फैली होती हैं, काम-वासना के विचार नारंगी रंग के धतूरे के फूल की तरह उड़ते हैं । शंका, सन्देह और मानसिक अशान्ति का रंग पीला होता है । स्वार्थपूर्ण और धोखेबाजी से भरे हुए विचार हरापन लिए हुए होते हैं । उपकार और उदारता के विचार जुगनू के प्रकाश की तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चमकते हैं, विरोध, अवज्ञा तथा तिरस्कार के विचार काले धुँए के रंग के पाये जाते हैं, उदासीनता, निराशा और अविश्वास के विचारों का रंग हल्का गुलाबी होता है । यदि कोई शारीरिक कष्ट हो रहा हो तो मस्तिष्क के आस-पास कपासी रंग की चिन्गारियाँ सी उड़ती मालूम होती हैं । विज्ञान द्वारा यह अनुभव परीक्षा की कड़ी कसौटी पर कसे जा चुके हैं और सत्य निकले हैं । विचारों की आकृतियाँ मस्तिष्क के आस पास प्रायः तीन चार फीट तक स्पष्ट होती है और उसके बाद धुंधली होने लगती हैं । विचारों और स्वभाव के अनुसार ही मनुष्य का शारीरिक तेज (Aura) बनता रहता है ।

उपरोक्त बातें खुले हुए नेत्रों से दिखाई नहीं देतीं, उनका परीक्षण बहुमूल्य वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा भी हो सकता है, परन्तु जब तुम आत्मिक शक्ति का विकास कर लोगे तब विचारों के स्वरूप चित्र और उनका पूरा तथा खुद बिना किसी यन्त्र की सहायता के भी देख सकोगे । योग विद्या के ज्ञाता दूसरों के मन के भावों को भली-भाँति जान लेते हैं ।

मैस्मेरिज्म का तमाशा करने वाले कुछ लोग एक व्यक्ति को निद्रित करके उससे पास में खड़े हुए व्यक्तियों का हाल उस निद्रित व्यक्ति द्वारा कहलाते हैं, वह व्यक्ति आँखों से पट्टी आदि बँधी रहने पर भी सबके रंग रूप, उनके हाथ की वस्तुएँ, जेब की चीजें, रुपये-पैसों की छाप, सन् आदि बताता है । तुमने ऐसे खेल जरूर देखें होंगे और आशा करते होंगे कि इस प्रकार की विद्या इस 'परकाया प्रवेश' पुस्तक द्वारा अवश्य सीख जायेंगे । लेकिन हम यह स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि इतनी उच्च शिक्षा प्राप्त कर लेना हँसी खेल नहीं है । इसके लिए वर्षों की कड़ी तपस्या चाहिए तब कहीं सफलता के दर्शन होते हैं । तमाशा दिखाने वाले प्रायः धूर्त होते हैं, वे चालाकी से कुछ निर्धारित संकेतों के आधार पर यह बातें बताते हैं, इनके झमेले में पड़ना व्यर्थ है फिर भी यदि कोई इन चालाकियों के पूरे रहस्य को मालूम करना चाहें तो मथुरा पधारने का कष्ट करें थोड़ी ही देर में उस नकली मेस्मेरिज्म का पूरा भेद बता दिया जायेगा ।

हम सत्य के उपासक हैं और अपने हर एक अनुयायी के लिए आकांक्षा करते हैं कि वह सत्य का उपासक बने । क्योंकि सच्चाई सदा सच्चाई रहेगी, उसका भविष्य सुनहला होगा । झूठी बाजीगरी किसी आध्यात्मिक व्यक्ति को शोभा नहीं देती वह तो भिखारियों का पेशा है । दूसरों के मन की बात जानने की सच्ची सीमा तुम्हारे लिए इतनी है कि यह जान जाओ कि किस व्यक्ति के किस श्रेणी के विचार कितनी शक्ति के साथ उठ रहे हैं और उनमें परिवर्तन की कैसी हलचल हो रही है । दूसरों के मन के गुप्त प्रोग्राम, उनकी निजी बातें, उनकी अव्यस्त इच्छाएँ तुम नहीं जान सकते । परमात्मा ने उन लोगों को इतनी शक्ति नहीं दी है जो इनको जान कर अनुचित कार्य कर सकते हैं । यह तो उन्हें ही प्राप्त होती है जिनका मन सांसारिक माया-मोह से अत्यन्त ही ऊँचा उठ गया है ।

दूसरों के मनोगत भावों को जानने के लिए तुम्हें अपने मन को बिल्कुल खाली करने का अभ्यास करना होगा । त्राटक और नाद के अभ्यास से एकाग्रता की शक्ति प्राप्त कर चुके हो उसके द्वारा इस कार्य में तुम्हें बहुत सफलता मिलेगी । मन को खाली करने का अभ्यास करने के लिए किसी एकान्त स्थान में अन्धकार के समय जाओ और आँखें बन्द करके आराम के साथ सुख कर आसन पर बैठ जाओ । अपने मन के समस्त विचारों को रोककर उसे ब्रह्माण्ड में (मस्तिष्क के भीतर) ले आओ । भावना करो कि इसके अन्दर जितना स्थान है बस वहीं समस्त संसार है, उसके अतिरिक्त और कोई वस्तु कहीं नहीं यहाँ तक कि मैं खुद भी कहीं नहीं हूँ । इस लोक को बिल्कुल शून्य और नीले अन्धकार के युक्त देखने का प्रयत्न करो । आरम्भ के दिनों में इसमें पूरी सफलता न मिलेगी, चित्त की चंचलता के कारण उस शून्य ब्रह्माण्ड से मन उचट कर कभी कुछ कभी कुछ देखने लगेगा पर प्रयत्न करो और उसे रोककर उस शून्य नीलाकाश में ही स्थिर करो । नित्य पन्द्रह मिनट से आधे घन्टे तक का अभ्यास पर्याप्त है । यदि दो मिनट तक मन के न उचटने का अभ्यास हो जाय तो भी काम चलाने लायक काफी है । यह समय यदि इससे अधिक बढ़ाने लगो तब तो और भी उत्तम है । चूँकि तुम्हारा नाद और त्राटक का अभ्यास पूरा हो चुका है, इसलिए मन को कम से कम दो मिनट खाली रखने में सफलता प्राप्त करने के लिए एक दो सप्ताह से अधिक प्रयत्न न करना होगा इतने ही दिनों में काम चलाऊ अभ्यास हो जायेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूर स्थान से बहुत पतली आने वाली आवाज को जब तुम सुनना चाहते हो तो अपने आस-पास का शोरगुल बन्द कर देते हो और बहुत दत्तचित होकर उसी आवाज पर कान लगाते हो, इसी प्रकार दूसरे के मन की बात जानने के लिए पूर्ण शान्ति और एकाग्रता लाने का प्रयत्न करो । जिस आदमी के विचार तुम्हें जानने हैं, उसका मानसिक चित्र अपने शून्य नीलाकाश ब्राह्माण्ड में बनाओ मानो एकान्त स्थान में वही अकेला बैठा है । अब उसकी मानस प्रतिमा के सिर में से उड़ते हुए विचारों का परीक्षण करो । अपने शून्य मन को उस व्यक्ति के मानस चित्र के निकट ले जाओ और कुछ देर वहीं रुक कर देखो कि तुम्हारे मन में क्या विचार आते हैं । इस समय तुम्हारा शान्त मन एक बढ़िया कैमरे की तरह है जो साफ-साफ चित्र खींचता है । उस समय तुम्हारे मन में जैसे भाव उठें उन्हें उस व्यक्ति के विचार समझना चाहिए जिसकी कि तुमने अपने मनोलोक में धारणा की थी ।

प्रारम्भिक अभ्यास में कभी गड़बड़ी भी हो जाती है और अपना मन शून्य न रह कर अपनी वृत्तियों में जाग पड़ता है, ऐसी दशा में दूसरे के विचारों की ध्वनि अपने अन्दर नहीं आने पाती और अपने ही विचार गूँज जाते हैं । इसलिए एक आदमी के विचार जानने के लिए दो-तीन बार प्रयत्न करना चाहिए और कई बार एक से ही जो चित्र आयें उन्हें ठीक समझना चाहिए । शून्य मन में जब भाव उठे वह अपने आराधित व्यक्ति का समझा जा सकता है ।

आरम्भ में यह परीक्षण भी एकान्त और शान्त स्थान में ही करना चाहिए पर कुछ दिन के निरन्तर अभ्यास के उपरान्त जब मानस भूमिका बहुत शुद्ध हो जाती है और मन की ठीक-ठीक स्थिति उस शून्याकाश में होने लगती है, तो चाहे जहाँ ओर चाहे जैसी स्थिति में दूसरे की विचार धारा मालूम की जा सकती है । परन्तु स्मरण रहे, इससे केवल इतना ही मालूम हो सकेगा कि यह व्यक्ति किस प्रकार के, किस श्रेणी के और कैसे विचार कर रहा है । तुम उसकी हर बात को खुलासा नहीं जान सकते क्योंकि परमात्मा ऐसी शक्ति पर व्यक्ति को नहीं देना चाहिए । फिर भी श्रद्धापूर्वक और पवित्र और उद्देश्य से इस ओर प्रयत्न करोगे तो बहुत कुछ "परामानोविज्ञान" (Telepathy) की शक्ति प्राप्त कर लोगे ।

ईश्वर आप लोगों को सफलता दे ।

हिप्नोटिज्म

पिछले पृष्ठों पर मेस्मेरिज्म की परिधि के अन्दर योग और तन्त्र की कुछ अनुभूत क्रियाएँ बताई जा चुकी हैं, मेस्मेरिज्म के सम्बन्ध में लगातार पन्द्रह वर्ष से खोज करने के उपरान्त उसकी सीमा के अन्दर और कुछ हमें प्राप्त नहीं हुआ है । परन्तु हम जानते हैं कि पिछले पृष्ठों को पढ़ कर अनेक जिज्ञासु सन्तुष्ट नहीं हुए होंगे । उन्होंने मेस्मेरिज्म के नाम पर अनेक बाजीगरी के खेल देखे होंगे और वे कदाचित् ऐसा ही कुछ जानने की इस पुस्तक से भी आशा करते होंगे । लड़कों को बेहोश करना, उनसे भूत, भविष्य की बातें पूछना, भूत, प्रेतों के सन्देश, गुप्त बातें बताना आदि तमाशे और त्रिकालदर्शी अंगूठी, सिद्ध दर्पण आदि की शिक्षा हमने नहीं दी है, क्योंकि हम जानते हैं कि यह व्यर्थ बातें हैं, और इनसे किसी का कुछ लाभ नहीं ।

इन कार्यों में हाथ की सफाई या बाजीगरी होती है । हिप्नोटिज्म की सूचनाओं से भी कई प्रकार के विचित्र तमाशे दिखाए जाते हैं । हिप्नोटिज्म को हम देहाती बोली में 'धोंस' कहेंगे । इसके लिए कोई विशेष अभ्यास नहीं करना पड़ता । अपनी मुख मुद्रा, कपड़े, रहन-सहन आदि ऐसा रखते हैं, जिससे दूसरा समझे कि यह अदृश्य ही कुछ जादू जानते हैं । उनकी बोली, बातचीत का ढंग, हाथों की सफाई के साथ मार्जन के ढँग पर नचाया, इन बातों को कोई भी होशियार आदमी खुद अपने आप दस-पाँच दिन के अभ्यास से ठीक कर सकता है । यह 'धोंस' कमजोर तबियत के आदमियों पर ही चलती है । वे लोग उसी आदमी को तमाशे के लिए चुनेंगे, जो सीधा-साधा, आज्ञाकारी, डरपोक, कमजोर तबियत का हो । बालक और स्त्रियों को खासतौर पर से ऐसे खेलों के लिए चुना जाता है । मजबूत दिल का आदमी इन चकमों में नहीं आ सकता ।

हिप्नोटिज्म करने वाले लोग उससे कहते हैं कि "इस अंगूठी (आदि जो वस्तु हो उसकी) ओर देखो, थोड़ी देर में तुम बेहोश हो जाओगे ।" उसके अनन्तर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन ने यदि बात को स्वीकार कर लिया तो सचमुच ही वह बेहोश हो जायेगा और जैसा कोई आदमी सोते समय अपनी इच्छा से स्वप्न देखता है, वैसे ही इस बेहोशी में हिप्नोटिस्ट की आज्ञानुसार स्वप्न देखता है । इस नींद में वही स्वप्न दिखाई पड़ते हैं, जिन्हें उसे दिखलाया जाय । साधारणतः वह आदमी उन्हीं बातों को कहता है, जिन्हें हिप्नोटिज्म कहलवाना चाहता है । हाँ, कभी-कभी सैकड़ों में से एक आध को निरन्तर अभ्यास के बाद अधिक गहरी निद्रा आने लगती है और उसका सात्विक मन यदि उस समय जग जाय तो कुछ बहुत गुप्त और सच्ची बातें बता सकता है । पर यह हमेशा और हर आदमी पर नहीं हो सकती । जिस आदमी का कड़ा दिल हो और निश्चय कर ले कि मेरे ऊपर असर नहीं हो सकता, उस पर किसी की हिप्नोटिज्म न चलेगी । दूसरे इससे लाभ बहुत ही कम हैं और बेहोश करने वाले तथा होने वाले की हानि अधिक होती है । इसलिए इस विषय पर हम अधिक प्रकाश नहीं डालते, क्योंकि इसके तरीके बहुत ही आसान होने की वजह से हर कोई आदमी कर सकता है और तमाशा दिखाने का लोभ न संभाल सके, तो व्यर्थ ही अपने तथा दूसरों के समय की बर्बादी, हानि और भ्रम प्रचार के कार्य में लग जायेंगे । इससे सर्व साधारण का अहित ही हो सकता है ।

जो लोग मेस्मेरिज्म सीखना चाहते हैं उन्हें इन अभ्यासों के द्वारा बहुत अधिक लाभ होगा । मेस्मेरिज्म की पूरी क्रिया इसके अन्दर है, वरन् उससे भी कुछ अधिक है । हमारी प्राण चिकित्सा विज्ञान पुस्तक मेस्मेरिज्म द्वारा रोग निवारण का पूरा तत्व ज्ञान है, उसमें डॉक्टर की ही बताई हुई विधियाँ नहीं हैं, वरन् अन्यान्य देशों के प्रमुख आध्यात्म-चिकित्सकों की विधियों का भी समन्वय है । इस प्रकार यह दोनों पुस्तकें मिल कर मेस्मेरिज्म का परिपूर्ण विज्ञान बन जाता है । अधिकारी साधक थोड़े समय तक इनका अभ्यास कर देखें । वे इसमें अपना बहुत लाभ पायेंगे और दूसरों की सन्तोषजनक सेवा कर सकेंगे ।

इसमें ऐसे प्रसंग नहीं दिए गए हैं जिनसे अभ्यास करने वाले या जिस पर प्रयोग किया जाय उसे कोई हानि पहुँचे । इसलिए यह प्रणाली निरापद है । मेस्मेरिज्म के नाम पर जो बाजीगरी और धूर्तता के खेल दिखाए जाते हैं, उन प्रसंगों को भी व्यर्थ समझ कर छोड़ दिया गया है, इसलिए शायद कोई जिज्ञासु जो उन तमाशों के लिए ही मेस्मेरिज्म सीखना चाहते हों, निराश होंगे । उनकी इच्छा पूर्ति इससे नहीं होगी, उन्हें किसी बाजीगर को पैसे ठगाने होंगे और जो कुछ सीखेंगे उससे या तो अपने गुरु की भाँति लोगों को भ्रम में डालेंगे, या अपनी मूर्खता पर पछतायेंगे । हम स्वयं ऐसी ही ढूँढ़-खोज के सिलसिले में अपनी कीमती तीन वर्ष और सैकड़ों रुपया गँवा चुके हैं और स्टेजों पर बड़े-बड़े करिश्मे दिखाने वाले और अपने खेलों से देखने वालों को ढंग कर देने वालों से जो कुछ सीखा उसे बिल्कुल बेबुनियाद देखकर अपने अज्ञान पर पछताए । तमाशों में प्रायः मेस्मेरिज्म का शतांश भी प्रयोग में नहीं आता, हर बात में हाथ की सफाई, चालाकी और लोगों की दृष्टि तथा मन को चकमे में डालने की क्रिया होती है । इसका जो असर देखने वालों पर पड़ता है वह बहुत बुरा होता है । वे भ्रम में पड़ते हैं, वास्तविक ज्ञान से वंचित होते हैं और भविष्य में किसी धूर्त द्वारा ठगे जा सकते हैं । इसलिए हम अपने पाठकों को उन तमाशों के असत्य प्रलोभनों से रोकते हैं और सलाह देते हैं कि वे आत्म शक्ति को बढ़ायें, उसकी शक्ति से ही उन्हें वास्तविक लाभ होगा ।

मेस्मेरिज्म का तत्वज्ञान

मेस्मेरिज्म विद्या के अनुसार जो शक्ति उत्पन्न होती है । उसके तीन स्रोत हैं—(१) इच्छा (२) आदेश (३) मार्जन स्रोत । इन तीन साधनाओं द्वारा शक्ति का उत्पादन और प्रयोग करके प्रयोक्ता लोग आश्चर्यजनक कार्यों का सम्पादन करते हैं । अब हम इन तीनों तथ्यों पर कुछ प्रकाश डालते हैं ।

(१) इच्छा शक्ति—ईश्वर ने इच्छा की कि 'मैं एक से अनेक हो जाऊँ ।" फलस्वरूप इस सारे जगत की रचना हो गई । इच्छा के कारण ही मनुष्य स्वर्ग-नरक, बन्ध-मोक्ष, जन्म-मरण के चक्र में घूमता है । संसार की सारी हल-चल संकल्प के आधार पर है, जहाँ कहीं जो कुछ कार्य हो रहा है इच्छा के कारण ही हो रहा है । चैतन्य प्राणियों की चेतना इच्छा से परिपूर्ण है, कुछ न कुछ इच्छा उन्हें बनी ही रहती है और उसी की प्रेरणा से शारीरिक एवं मानसिक यन्त्र चलते रहते हैं । इच्छा और चेतना दो ऐसे तत्व हैं जिनको एक-दूसरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से पृथक नहीं किया जा सकता । निखिल विश्व ब्रह्माण्ड में जो चेतना काम कर रही है वह संकल्पमय है । संकल्प शान्त होते ही चेतना भी समाप्त हो जाती है ।

वैज्ञानिक टी. डी. ब्रनी ने सिद्ध किया है कि जड़ प्रकृति का एक सूक्ष्म परमाणु-इलेक्ट्रोन इतनी शक्ति रखता है कि उसके विस्फोट से लन्दन जैसा महानगर क्षण भर में भस्मसात हो सकता है । जड़ प्रकृति के परमाणुओं की इतनी महान् शक्ति कूती गई है । परन्तु चैतन्य जगत के एक परमाणु का जब अन्वेषण किया जायेगा तब पता चलेगा कि उसके अन्तर्गत जड़ परमाणुओं की अपेक्षा सहस्त्रों गुनी शक्ति छिपी पड़ी है । जड़ पदार्थों का पूरा-पूरा शासन चैतन्य का है । जो चैतन्य है वह अपनी क्षमता के कारण जड़ पदार्थों का मनमाना उपयोग करता है । इससे प्रकट है कि चैतन्य में जड़ की अपेक्षा कहीं अधिक और उच्चकोटि की शक्ति है ।

मनुष्य चैतन्य प्राणियों में सर्वश्रेष्ठ है उसमें अन्य जीवधारियों की भाँति साधारण चेतना तो है ही साथ साथ ही विकास के उच्च शिखर पर पहुँचती हुई आत्मिक चेतना भी है । इस चेतना में अकूत ताकत है । विकासवाद के आचार्य डार्विन महोदय ने प्रमाणों सहित साबित किया है कि मक्का की भुटिया ने अपनी रक्षा के लिए अपने ऊपर पर्तदार खोल उत्पन्न किया, माँसाहारी चिड़ियों की पहचान में न आने की इच्छा से तितली ने अपना रंग फूलों जैसा बनाया । पेड़ों के नीचे खड़े होने पर धूप छाया से देखें और पहचाने न जा सकें इस इच्छा के कारण कितने जीवों ने अपने शरीर चितकबरे बना लिए, कुछ घास में छिपने वाले घास के रंग के हो गए । इन सब बातों से पता चलता है कि इच्छा के कारण छोटे दर्जे के जीव बड़े-बड़े परिवर्तन करने में सफल हुए हैं । फिर मनुष्य का तो कहना ही क्या ? उसकी इच्छा शक्ति ने निर्जन, सुनसान, ऊबड़-खाबड़ जमीन को कैसी रंगभूमि बना दिया है, तरह-तरह के अद्‌भुत आविष्कारों और कला-कौशलों से पृथ्वी को कैसा विचित्र सा बना दिया है किसी उजाड़ नक्षत्र का इस सरसब्ज पृथ्वी से यदि कोई मुकाबला कर सके तो पता लगता है कि मनुष्य के संकल्प में कितनी रचना शक्ति है । जितना वह अब तक प्रकट हुई है उसने अनेकों गुनी अभी अप्रकट पड़ी हुईं हैं ।

निसन्देह संकल्प की शक्ति महान् है । यों कहना चाहिए कि वह सर्वोपरि है । इच्छा के बल से जीव महान्तम कार्य कर सकता है मेस्मेरिज्म की जैसी साधारण योग्यता को उसके द्वारा प्राप्त कर लेना बिल्कुल साधारण और सरल है । 'चाहना' और 'इच्छा करना' दो पृथक बातें हैं । केवल चाहना शेखचिल्ली की सी कल्पनाएँ करना, कुछ विशेष महत्त्व की बात नहीं है इससे शक्ति उत्पन्न नहीं होती किन्तु ऐसी इच्छा जिसके पीछे एकाग्रता, गम्भीरता, दृढ़ता, तत्परता, तीव्रता और प्रयत्नशीलता भी है वह अवश्य फलवती होती है उसके असफल होने की सम्भावना नहीं रहती ।

श्रीमती ओ. हण्णहारा ने मानसिक शक्तियों की विवेचना करते हुए सिद्ध किया है कि मस्तिष्क की तीव्र इच्छा के साथ जो भावना की जाती है उसकी बड़ी शक्तिशाली विद्युत लहरें उत्पन्न होती हैं । यह लहरें ईथर तत्व में दौड़ पड़ती हैं और चाही हुई बात को पूरा करने के लिए परिस्थितियाँ जुटाने में लग जाती हैं । उनका यह भी मत है कि जिस वस्तु या कार्य के लिए तीव्र इच्छा की जाती है वे विद्युत लहरें नियत स्थान पर पहुँच कर अनुकूलता पैदा करने लगती हैं । मनोविज्ञान के सिद्धान्तानुसार तीव्र इच्छा में दूसरों को प्रभावित करने की पर्याप्त शक्ति है । श्रद्धा और विश्वास को तुलसीदास जी ने भवानी और शंकर की उपमा दी है । भगवान उमाशंकर सर्वशक्तिवान है, श्रद्धा और विश्वास की प्रचण्ड सत्ता से कौन इन्कार कर सकता है ।

पाठकों में एक भी ऐसा न होगा जो संकल्प की शक्ति से अपरिचित हो । भावना से भगवान प्रकट होते हैं फिर मेस्मेरिज्म की योग्यता प्रगट होने में तो सन्देह ही क्या है । आतिशी शीशे द्वारा जब थोड़ी सी परिधि की सूर्य किरणें एक स्थान पर एकत्रित कर दी जाती हैं तो अग्नि उत्पन्न हो जाती है । सारे शरीर में व्याप्त शक्तियों को एक स्थान पर एकत्रित करके यदि किसी जगह उन्हें फेंका जाय तो उसका प्रहार और प्रभाव असाधारण होगा । मेस्मेरिज्म के प्रयोक्ता अपनी मानसिक शक्तियों का तीव्र इच्छा के द्वारा एकीकरण करके किसी व्यक्ति पर फेंकते हैं, यह प्रहार व्यर्थ नहीं जाता वरन् सनसनीखेज असर दिखाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । इसी को लोग "मेस्मेरिज्म का चमत्कार" कह कर पुकारा करते हैं ।

(२) आदेश—मनुष्य स्वयं गीली मिट्टी के समान है । उसे चाहे जैसा ढाला जा सकता है । छोटा बच्चा जिन लोगों के द्वारा पाला पोसा जाता है उन्हीं की भाषा सीखता है, वैसे ही आचरण, विचार, व्यवहार ग्रहण करता है । मेहतर का लड़का गन्दगी से घृणा नहीं करता पर उच्च वर्ण का बालक वैसे स्वभाव का न होगा । यह अन्तर क्यों है ? इसकी खोज करने पर पता चलता है कि मेहतर के बालक के ऊपर जिन लोगों का प्रभाव पड़ा है वे गन्दगी से घृणा नहीं करते इसलिए उसने अपने पथ-प्रदर्शकों का प्रभाव ग्रहण किया । इसी प्रकार उच्च वर्ण के बालक ने भी अपने अभिभावकों का प्रभाव ग्रहण करके तदनुसार आचरण करना सीखा ।

गीली मिट्टी को जैसे साँचे में ढाला जाता है वैसा ही बर्तन या खिलौना बनकर तैयार हो जाता है । मनुष्य का निर्माण आदेशों के साँचे में हो होता है । जो जैसे वातावरण, विचार और परिस्थितियों में पड़ा है वह उसी प्रकार का ढल जायेगा । अफ्रीका में एक बार भेड़िया दो मनुष्य बालकों को उठा ले गया । कुछ ऐसी अद्भुत बात हुई कि उसने उन बालकों को खाया नहीं वरन् पाल लिया । बहुत दिन बाद शिकारियों का एक दल इधर से निकला तो उन्हें बड़ा आश्चर्य हुआ कि मनुष्य के बालक भेड़ियों के साथ में रहते हैं, वैसे ही चार पैर से चलते हैं, उसी तरह गुर्राते हैं, शिकार पकड़ते हैं । इन बालकों को पकड़ कर मानव तत्व की खोज करने वालों की अन्वेषणशाला में भेज दिया गया ।

वैज्ञानिकों की प्रसिद्ध सभा अब इस निष्कर्ष पर पहुँच गई है कि "मनुष्य स्वयं के कोरे कागज की तरह होता है उस पर जैसा कुछ अंकन होता है । वैसा ही वह बन जाता है ।" अब वे कई बालकों को अलग-अलग एकान्त कमरों में रख कर परीक्षण कर रहे हैं । इनका पालन पोषण करने के लिए सुविज्ञ वैज्ञानिक नियुक्त हैं । इनके अतिरिक्त और कोई उन बालकों के पास नहीं जा सकता । इस प्रयोग द्वारा उन बालकों को वर्तमान मनुष्यों से सर्वथा भिन्न विचार, विश्वास, शक्ति और सम्भावनाओं वाला बनाया जा रहा है । इसमें सफल होने की वैज्ञानिकों को पूरी आशा है ।

'संगति का प्रभाव' इस सत्य को सब कोई स्वीकार करते हैं । उसी संगति का असर पड़ता है जिसका प्रभाव मनुष्य करे । महात्मा गान्धी जैसे महापुरुष के साथ रह कर भी दुष्टात्मा लोग पहले जैसे दुष्ट ही बने रहते हैं । यदि प्रभाव ग्रहण करें तो दूरस्थ व्यक्ति का असर भी अपने में धारण कर सकते हैं । 'एकलव्य' भील ने दूरस्थ गुरु की मिट्टी की मूर्ति बनाकर उसी से बाण विद्या सीख ली थी । 'संगति' का तात्पर्य 'पास रहना' नहीं वरन् 'प्रभाव ग्रहण' करना है । पास-पास रहना तो संगति का एक छोटा-सा साधन है । यह हो सकता है कि पास रहते हुए भी प्रभाव न पड़े और दूरस्थ व्यक्ति का असर पड़ जाय । कारण स्पष्ट है सच्चे अर्थों में 'सत्संग' वही है जिसमें प्रभाव ग्रहण किया जाता है ।

'प्रभाव' की शक्ति अद्भुत है । इसके द्वारा 'मनुष्य' कुछ का कुछ बन जाता है । मेस्मेरिज्म विद्या में 'इच्छा-शक्ति' के उपरान्त 'प्रभाव-शक्ति' का स्थान है इसे ही आदेश या सजेशन कहते हैं । प्रभाव डालने में विचार-प्रकाशन मुख्य है । बिना मुँह से बोले आचरण दिखाकर भी 'प्रभाव' डाला जाता है और वाणी से विचारों में प्रकाशन करके भी आचरण का प्रभाव गहरा पड़ता है, क्योंकि फिर उसमें कुछ सन्देह नहीं रहता, वाणी में सन्देह की गुंजाइश रहती है । इसलिए केवल विचार-प्रकाशन से मेस्मेरिज्म करने वालों का काम नहीं चलता । उन्हें दूसरों को प्रभावित करने के लिए वाणी और आचरण दोनों की सहायता लेनी पड़ती है ।

तर्क, सन्देह या अविश्वास यदि मन में काम कर रहे हों तो दूसरे का फेंका हुआ प्रभाव प्रायः निरर्थक चला जाता है । अखिल ईथर तत्व में रेडियो की वाणी गूँजती रहती है पर सुनाई सिर्फ वहीं पड़ती है जहाँ रेडियो यन्त्र लगा हो । इसी प्रकार एक व्यक्ति का प्रभाव सदा एक-सा होते हुए भी उसे ग्रहण वही करते हैं जिनका मन उसे ग्रहण करने के अनुकूल है । अविश्वास, तर्क, सन्देह के स्थान पर श्रद्धा, विश्वास या स्वीकारोक्ति मौजूद है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मेस्मेरिज्म करने वाले जानते हैं कि बाह्य मन में तर्क और सन्देह की शक्ति है और अन्तर्मन में श्रद्धा तथा विश्वास का निवास है इसलिए वे अपना प्रभाव डालने के लिए एक अद्‌भुत उपाय काम में लाते हैं । वे एक विशेष आध्यात्मिक क्रिया द्वारा बाह्य मन को निद्रा-ग्रस्त कर देते हैं जिससे तर्क और सन्देह की शक्ति शिथिल हो जाय । दरवाजा खुल जाने पर घर में घुस जाना आसान है । इसी प्रकार तर्क, सन्देह और विवेचना के सो जाने पर अन्तर्मन के ऊपर सुगमतापूर्वक प्रभाव स्थापित किया जा सकता है । साधारण जीवन, तर्क और सन्देह की चलनी में भले बुरे प्रभावों को छानता रहता है, विवेचना की कसौटी पर उन्हें कसता रहता है, तब फिर जो उपयोगी और ठीक जँचते हैं उन्हें स्वीकार करता है और अरुचिकर प्रभावों को अस्वीकार करके बाहर हटा देता है । किन्तु मेस्मेरिज्म क्रिया द्वारा तार्किक मन के निद्रित हो जाने पर फिर यह बात नहीं रहती । प्रयोक्ता अपने प्रभाव को सीधा अन्तःमन में स्थापित कर देता है । यह बात प्रत्यक्ष है कि अन्तर्मन के विश्वासों के आधार पर शारीरिक एवं मस्तिष्कीय क्रियाएँ चलती हैं । मेस्मेरिज्म द्वारा निद्रित मनुष्य की सारी क्रियाएँ भी उसी प्रभाव के द्वारा होने लगती हैं जो उस पर डाला गया है । जब तक मैस्मेरिज्म निद्रा है तब तक तो वह प्रभाव पूर्ण रूप से रहता ही है । बाद में जाने पर भी वह संस्कार बीज रूप से मन पर बने रहते हैं । इस विज्ञान के अनुसार ही आदेश शक्ति का प्रयोग किया जाता है । वाणी द्वारा सूचनाएँ-आज्ञाएँ-देकर दूसरे व्यक्ति से इच्छित कार्य कराया जाता है । यही 'आदेश' मेस्मेरिज्म विज्ञान का दूसरा तथ्य है ।

(३) **मार्जन**—अनेक वैज्ञानिक परिणामों के उपरान्त यह सिद्ध हो चुका है कि मानव शरीर में एक विद्युत प्रवाह निरन्तर जारी रहता है कोई इसे 'ओड' कोई 'और' कहते हैं । भारतीय शास्त्रों में इसे 'ओज' कहा गया है । डॉक्टर मेस्मेर ने इसे 'एनेमल मेगनेटिज्म' नाम दिया है । विशेष यन्त्रों की सहायता से मनुष्य शरीर के चारों ओर करीब ६ इंच तक एक प्रकाश दिखाई पड़ता है इसे अंग्रेजी भाषा में 'औरा' कहा जाता है । देवी-देवताओं की तस्वीर में उनके मुख-मण्डल के आस-पास सूर्य जैसा तेज मण्डल दिखाया जाता है । इससे प्रतीत होता है कि भारतीय वैज्ञानिक बहुत प्राचीन काल से इस विद्युत तेज के सम्बन्ध में जानकारी रखते थे । शरीर के अन्य अंगों की अपेक्षा चेहरे पर यह तेज अधिक मात्रा में होता है और अधिक दूरी तक फैला रहता है ।

डॉक्टर मेस्मेर ने इस दिशा में एक और खोज की । उन्होंने साबित किया है कि तेज हाथों की उँगलियों के पोरों में भी काफी रहता है । पहले एक प्रसिद्ध नक्षत्र विद्या के विज्ञ पुरुष मि. जेसवोट फादर लोह चुम्बक की सहायता से कठिन रोगों की चिकित्सा करते थे । डॉक्टर मेस्मेर उनसे मिले और प्रमाणित किया कि इस चिकित्सा पद्धति में लोह चुम्बक का कुछ महत्त्व नहीं, हाथों की उँगलियों से जो मानवीय विद्युत का प्रवाह निकलता है, उसके प्रभाव से बीमारियाँ अच्छी होती हैं । विशेष कैमरों द्वारा फोटो लेकर भी यह देखा गया है कि उँगलियों के आस-पास 'औरा' बहुत दूर तथा घना और पर्याप्त मात्रा में फैला रहता है । लोहे की सुई उँगलियों से नहीं चिपकतीं तो भी उँगलियों में लोह चुम्बक के गुण पर्याप्त मात्रा में मौजूद रहते हैं ।

बिजली स्वभावतः हलचल उत्पन्न करने वाली, प्रभाव डालने वाली शक्ति है । मनुष्य के शरीर की बिजली का किस प्रकार चमत्कारिक प्रभाव होता है इसका सविस्तार वर्णन हम अपनी 'मानवीय विद्युत के चमत्कार' और 'परकाया-प्रवेश' पुस्तकों में कर चुके हैं, उन बातों को यहाँ दुहराने की आवश्यकता नहीं । यहाँ तो हम संक्षेप में अपने पाठकों को यह बताना चाहते हैं कि इस बिजली की सहायता से कठिन रोगों की चिकित्सा हो सकती है । जिन्होंने हमारी 'प्राण-चिकित्सा विज्ञान' पढ़ी है, वे विधि को भली प्रकार जानते होंगे । मेस्मेरिज्म विद्या में उँगली के पोरों से मार्जन करके "पास" देने का तीसरा विधान है । इस क्रिया द्वारा प्रयोग करने वाला अपने शरीर की बिजली को दूसरे शरीर में प्रवेश कराता है । डॉक्टर द्वारा पेट में पहुँचाई गई औषधियाँ विभिन्न प्रभाव उत्पन्न करती हैं—किसी से दस्त होते हैं, किसी से निद्रा आती है, किसी से खून साफ होता है, किसी से कफ छँटता है । इसी प्रकार दूसरे के शरीर में डाला गया विद्युत प्रभाव भी इच्छित परिणाम उपस्थित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करता है । किन्हीं मार्जनों से रोग अच्छे होते हैं, किन्हीं से निद्रा, किन्हीं से चैतन्यता, किन्हीं से मानसिक उथल-पुथल, किन्हीं से शारीरिक हलचल होती है । इन सब बारीकियों को मेस्मेरिज्म का प्रयोक्ता जानता है और अपनी विद्युत शक्ति की विधि-व्यवस्था के अनुसार दूसरों पर प्रयोग करके इच्छित फल उत्पन्न करता है । मेस्मेरिज्म का तीसरा तत्व यही है । मार्जन क्रियाओं का यही आधार है ।

उपरोक्त पंक्तियों में मेस्मेरिज्म के तीन आधारभूत तथ्यों पर-इच्छा, आदेश, मार्जन, पर कुछ प्रकाश डाला गया है । इससे पाठकों को यह समझाने में सरलता होगी कि मेस्मेरिज्म द्वारा दूसरों पर प्रभाव किस प्रकार डाला जाता है । भौतिक बिजली के ए. सी. करेन्ट और डी. सी. करेन्ट सिर्फ ताँबे और जस्ते के दो तारों के मिलने से उत्पन्न होते हैं परन्तु आत्मिक बिजली में तीन तारों का समन्वय है । इच्छा, आदेश, मार्जन । यह तीनों तार महत्त्वपूर्ण विद्युत प्रवाहों से भरे हुए है जब ये एक स्थान पर एकत्रित होते हैं, आपस में एक-दूसरे को छूते हैं तो तुरन्त हलचल पैदा करने वाली बिजली उत्पन्न हो जाती है । इससे 'निगेटिव' और 'पोजेटिव' भागों का ठीक प्रकार विज्ञान सम्मत उपयोग करके चतुर मेस्मेराइजर अपने करतब दिखाया करते हैं । संक्षेप में यही मेस्मेरिज्म का तत्व ज्ञान है ।

मेस्मेरिज्म का अभ्यास

अपने आत्मिक विद्युत प्रवाह में वृद्धि करना मेस्मेरिज्म के अभ्यासियों के लिए आवश्यक है । अपनी प्रभावशालिनी योग्यताओं को विकसित करने, बढ़ाने और दूसरों पर असर डालने योग्य बनाने के लिए कुछ अभ्यास करने पड़ते हैं यही मेस्मेरिज्म की साधना है ।

पिछले पृष्ठों में बताया जा चुका है कि इच्छा, आदेश और मार्जन यह तीन क्रियाएँ मेस्मेरिज्म में होती हैं । इन तीनों का संचालन करने के लिए शारीरिक और मानसिक विद्युत शक्ति की मात्रा बढ़ाने की आवश्यकता है । इसके लिए दो साधना बताये जाते हैं—(१) मानसिक विद्युत बढ़ाने के लिए प्राणाकर्षण प्राणायाम, (२) शारीरिक विद्युत बढ़ाने के लिए त्राटक । दोनों अभ्यास नीचे बताए जाते हैं ।

प्राणाकर्षण प्राणायाम—कहीं एकान्त स्थान में जाओ । समतल भूमि पर नरम बिछौना बिछाकर पीठ के बल लेट जाओ । मुँह ऊपर को रहे । पैर, कमर, छाती, सिर सब एक सीध में रहें । दोनों हाथ सूर्य चक्र पर (आमाशय का वह स्थान जहाँ पसलियाँ और पेट मिलता है) रख लो । मुँह बन्द रखो । शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ दो मानो वह कोई निर्जीव वस्तु है और उससे तुम्हारा कोई सम्बन्ध नहीं है । कुछ देर शिथिलता की भावना करने पर शरीर बिल्कुल ढीला पड़ जायेगा । अब धीरे-धीरे नाक द्वारा साँस खींचना आरम्भ करो और दृढ़ शक्ति के साथ भावना करो कि विश्वव्यापी महान् प्राण भण्डार में से मैं स्वच्छ प्राण साँस के साथ खींच रहा हूँ और वह प्राण मेरे रक्त प्रवाह तथा समस्त नाड़ी तन्तुओं में प्रवाहित होता हुआ सूर्य चक्र में इकट्ठा हो रहा है । इस भावना को कल्पना लोक में इतनी दृढ़ता के साथ उतारो कि प्राणशक्ति की बिजली जैसी किरणें नासिका द्वारा देह में घुसती हुई चित्रवत् दिखने लगें और अपना रक्त का दौरा एवं नाड़ी समूह तस्वीर की तरह दिखें तथा उसमें प्राण प्रवाह बहता हुआ नजर आये । भावना की जितनी अधिकता होगी उतनी ही अधिक मात्रा में तुम प्राण खींच सकोगे । फेफड़ों को वायु से अच्छी तरह भर लो और पाँच से १० सेकण्ड तक रोके रहो । आरम्भ में पाँच सेकण्ड काफी हैं तत्पश्चात् अभ्यास बढ़ने पर दस सेकण्ड तक रोक सकते हैं । साँस रोके रहने के समय अपने अन्दर प्रचुर परिणाम में प्राण भरा हुआ अनुभव करना चाहिए । अब वायु को मुँह द्वारा धीरे-धीरे बाहर निकालते समय ऐसा अनुभव करो कि शरीर के सारे दोष, रोग और विष इसके द्वारा निकाल बाहर किए, पूर्ववत् प्राणाकर्षण प्राणायाम करना आरम्भ कर दो । स्मरण रखो कि प्राण आकर्षण का मूल तत्व साँस खीचने छोड़ने में नहीं वरन् आकर्षण की उस भावना में है जिसके अनुसार अपने शरीर में प्राण का प्रवेश होता हुआ चित्रवत् दिखाई देने लगता है ।

इस प्रकार की श्वास-प्रश्वास क्रियाएँ दस मिनट से लेकर धीरे-धीरे आध घण्टे तक बढ़ा लेनी चाहिए । श्वास द्वारा खींचा हुआ प्राण सूर्य चक्र में जमा होता है जा रहा है इसकी विशेष रूप से भावना करो ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि मुँह द्वारा श्वास छोड़ते समय आकर्षित प्राण छोड़ने की भी कल्पना करने लगे तो यह सारी क्रिया व्यर्थ ही जायेगी और कुछ भी लाभ न मिलेगा । ठीक तरह से प्राणाकर्षण करने पर सूर्य चक्र जाग्रत होने लगता है । ऐसा प्रतीत होता है कि पसलियों के जोड़ का आमाशय स्थान पर जो गड्डा है, वहाँ सूर्य के समान एक छोटा सा प्रकाश बिन्दु मानस नेत्रों से दिखने लगा है । यह गोला आरम्भ में छोटा प्रकाश का धुंधला मालूम देता है किन्तु जैसे-जैसे अभ्यास बढ़ने लगता है वैसे-वैसे वह साफ, स्वच्छ, बड़ा और प्रकाशवान होता है । जिनका अभ्यास बढ़ा-चढ़ा है उन्हें आँखें बन्द करते ही अपना सूर्य चक्र साक्षात् सूर्य के समान दिखाई देने लगता है । यह प्रकाशित तत्व सचमुच प्राण शक्ति है । इसकी शक्ति से कठिन कार्यों में अद्‌भुत सफलता प्राप्त होती है ।

अभ्यास पूरा करके उठ बैठो । तुम्हें मालूम पड़ेगा कि रक्त का दौरा तेजी से हो रहा है सारे शरीर में बिजली-सी दौड़ रही । अभ्यास के उपरान्त कुछ देर शान्तिमय स्थान में बैठना चाहिए और हो सके तो किसी सात्विक वस्तु का जलपान कर लेना चाहिए । अभ्यास से उठकर एकदम किसी कठिन काम में जुट जाना, स्नान, भोजन या मैथुन करना निषिद्ध है । अभ्यास के लिए प्रातःकाल का समय सर्वोत्तम है ।

दृष्टिपात का अभ्यास (त्राटक)

पूर्व में यह बताया जा चुका है कि शरीर की विद्युत शक्ति कई भागों में विभक्त अलग-अलग दिशाओं में काम कर रही है । इस क्रिया में ऐसे साधन की जरूरत है, जिससे शरीर और मन से विद्युत शक्तियाँ अधिक से अधिक मात्रा में एकत्रित होकर एक स्थान पर जमा हो जायें । त्राटक हटयोग का एक साधन है । इसके द्वारा शरीर के विभिन्न अंगों में बहने वाली बिजली को सब ओर से खींच कर एक स्थान पर लाने का प्रयत्न किया जाता है । त्राटक का अभ्यास जैसे-जैसे बढ़ता जाता है वैसे ही नेत्रों की प्रभावकारिणी शक्ति बढ़ती जाती है ।

एक हाथ लम्बा, हाथ एक चौड़ा चौकोर कागज या पट्ठा लेकर उसके बीच में रुपए के बराबर एक काला गोल निशान बना लो । स्याही एकसी हो, कहीं कम या ज्यादा न हो । इसके बीच में सरसों के बराबर निशान छोड़ दो और उस सफेदी में पीला रंग भर दो । इस कागज को किसी दीवार पर टाँग दो और तुम उससे चार फीट दूरी पर इस प्रकार बैठो कि वह काला गोला तुम्हारी आँखों के सामने सीध में रहे । साधना का कमरा ऐसा होना चाहिए, जिसमें न अधिक प्रकाश रहे न अँधेरा । न अधिक सर्दी हो न गर्मी । पाल्थी मारकर मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए बैठो और काले गोले के बीच में जो पीला निशान है, उस पर दृष्टि से जमाओ । चित्त की सारी भावनाएँ एकत्रित करके उस बिन्दु को इस प्रकार देखो मानो तुम अपनी सारी शक्ति नेत्रों द्वारा उसमें प्रवेश कर देना चाहते हो । ऐसा सोचते रहो कि मेरी तीक्ष्ण दृष्टि से इस बिन्दु में छेद हुआ जा रहा है । कुछ देर इस प्रकार देखने से आँखों में दर्द होने लगेगा और पानी बहने लगेगा, तब अभ्यास को बन्द कर दो ।

अभ्यास के लिए प्रातःकाल का समय ठीक है । नित्य कर्म से निवृत्त होकर नियत स्थान पर बैठना चाहिए और चित्त एकाग्र करके साधन आरम्भ करना चाहिए । पहले दिन देखो कि कितनी देर में आँख थक जाती हैं और पानी आ जाता है, पहले दिन जितनी देर अभ्यास किया है, प्रतिदिन उसमें एक या आधा मिनट बढ़ाते जाओ । इस प्रकार दृष्टि को स्थिर करके तुम देखोगे कि उस काले गोले में तरह-तरह की आकृतियाँ पैदा होती हैं । कभी वह सफेद रंग का हो जायेगा तो कभी सुनहरा । कभी छोटा मालूम पड़ेगा कभी चिनगारियाँ सी उड़ती दिखाई देंगी, कभी बादल से छाये हुए प्रतीत होंगे । इस प्रकार यह गोला अपनी आकृति बदलता रहेगा । किन्तु जैसे-जैसे दृष्टि से स्थिर होना शुरू होगी, वैसे ही वैसे यह गोला भी स्थिर होता जायेगा और उसमें दीखने वाली विभिन्न आकृतियाँ बन्द हो जायेंगी और बहुत देर तक देखने पर भी गोला ज्यों का त्यों बना रहेगा ।

त्राटक करने का चित्र और भी कई प्रकार से बनाया जा सकता है । एक फुट लम्बे चौड़े चौकोर दर्पण के बीचों बीच चाँदी की चवन्नी के बराबर काले रंग के कागज का गोल टुकड़ा काट कर चिपका दिया जाता है । उस कागज के मध्य में सरसों के बराबर एक पीला बिन्दु बनाते हैं । इस अभ्यास को एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिनट से शुरू करते हैं और प्रति दिन एक एक मिनट बढ़ाते जाते हैं । जब हम इस तरह दृष्टि स्थिर हो जाती है, तब और भी आगे का अभ्यास शुरू किया जाता है । दर्पण पर चिपके हुए कागज को छुड़ा देते हैं और उसमें अपना मुँह देखते हुए अपनी बायीं आँख की पुतली पर दृष्टि जमा लेते हैं और उस पुतली में बड़े ध्यानपूर्वक अपना प्रतिबिम्ब देखते हैं ।

तीसरी विधि मोमबत्ती या दीपक की ज्योति पर दृष्टि जमाने की है । दीपक घृत या शुद्ध सरसों के तेल का होना चाहिए । मोमबत्ती की रोशनी भी ठण्डी समझी जाती है ।

चौथी विधि प्रातःकाल के सूर्य पर दृष्टि जमाने की है और पाँचवीं चन्द्रमा पर त्राटक करने की है । इससे से इच्छानुसार चाहे जिसे किया जा सकता है, पर हमें अनुभव से पहला साधन ही सुलभ और निरापद प्रतीत हुआ है ।

अभ्यास पर से जब उठो तो गुलाबजल से आँखों को धो डालो, आँख धोने के लिए एक काँच की प्याली बाजार में मिलती है, उसमें गुलाबजल भर कर आँखों में लगाना चाहिए और उस पानी में आँख खोलकर उन्हें स्नान कराना चाहिए, जिससे उनकी उष्णता शान्त हो जाय और शीतलता प्राप्त हो । अभ्यास से उठने के बाद कोई पौष्टिक शीतल वस्तु खा लेना आवश्यक है । दूध या दही की लस्सी, मक्खन, मिश्री, फल, शरबत आदि कुछ सेवन कर लेने से शरीर की बढ़ी हुई गर्मी शान्त हो जाती है ।

अभ्यासी की आयु कम से कम १८ वर्ष की होनी चाहिए । शरीर और मन से निरोग तथा दुर्व्यसनों से मुक्त होना चाहिए । उसे सदाचारी, आत्मविश्वासी, आशावादी, दृढ़ निश्चयी और धैर्यवान होना चाहिए । जब तक यह योग्यताएँ न हों तब तक साधना के लिए ठहर जाना चाहिए । अभ्यास के दिनों में सात्विक आहार-विहार रखना, ब्रह्मचर्य पालन करना और उत्तम भावनाएँ रखनी चाहिए ।

पहले प्राणायाम फिर त्राटक यह क्रम रखना ठीक है । आरम्भ में प्राणायाम के लिए पन्द्रह मिनट और त्राटक के लिए पाँच मिनट देने चाहिए । फिर इसी अनुपात से समय बढ़ाते हुए आधा घण्टा कर लेना चाहिए । देखा गया है कि ६ से ८ सप्ताह में साधारण श्रेणी के लोगों को मेस्मेरिज्म की योग्यता हो जाती है । किसी-किसी को न्यूनाधिक समय भी लग जाता है । साधन सफल हो जाने के बाद अभ्यास को छोड़ न देना चाहिए, वरन् आधा घण्टा प्रति दिन अथवा कुछ कम प्रति दिन अभ्यास करते रहना चाहिए जिससे अपनी शक्ति सुरक्षित बनी रहे ।

प्रयोगकर्त्ता को आचरण, चरित्र, विचार, रहन-सहन, पहनाव-उढ़ाव, बात-चीत का ढंग, मुख-मुद्रा आदि इस प्रकार रखने चाहिए जिसका दूसरों पर प्रभाव पड़े । यदि प्रयोक्ता का रंग-ढंग भद्दा और छिछोरा होगा तो दूसरे उससे प्रभावित न होंगे । ऐसी दशा में अपनी विद्युत शक्ति पर्याप्त होते हुए भी प्रयोगों में सफलता न मिलेगी । इस बात को भली प्रकार समझ लेनी चाहिए कि यदि कोई दूसरे का प्रभाव ग्रहण न करे तो उस पर किसी भी प्रयोग का असर नहीं हो सकता, यदि पात्र का प्रयोक्ता पर अविश्वास हो और उसकी योग्यता को स्वीकार न करे तो फिर सभी प्रयोग निष्फल रहेंगे । चतुर प्रयोक्ता इस मर्म को भली भाँति समझते हैं इसलिए वे अपना रंग-ढंग ऐसा रखते हैं जिससे प्रभाव उत्पन्न हो । प्रयोग से पहले ही अपने पात्र को जो आधा प्रभावित कर लेता है, वही सफल प्रयोक्ता है । मेस्मेरिज्म करने वाले की पोशाक, मुख-मुद्रा तथा वाणी की ओजस्विता, अधिकाधिक प्रभावशाली होनी चाहिए ।

अभ्यास की सफलता का परीक्षण

अभ्यास से अपनी विद्युत शक्ति की उन्नति हुई या नहीं इसका परीक्षण करने के लिए कुछ उपाय नीचे बताये जाते हैं । यदि इनमें से अधिकांश परीक्षणों में सफलता मिले तो समझना चाहिए कि मेस्मेरिज्म विद्या का प्रयोग करने लायक योग्यता उपलब्ध हो गई ।

(१) काले परदे की सहायता से

एक अँधेरी कोठरी इस कार्य के लिए चुनो । एक कुर्सी रखकर उसकी पीठ पर गहरे काले रंग का कपड़ा लटका दो । एक बहुत क्षीण प्रकाश का दीपक कुर्सी के आगे की तरफ जरा दूर रख दो ताकि कुर्सी की पीठ पर लटके हुए कपड़े का प्रकाश न पड़ने पाये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अँधेरा बना रहे । इस कपड़े के पीछे अपने लिए एक चौकी या कुर्सी बिछाओ और उस पर बैठ जाओ । अब अपने दोनों हाथों को इस प्रकार मिलाओ जैसे नमस्कार करने के लिए हाथ जोड़ते हैं । काले कपड़े और तुम्हारे हाथों के बीच एक फुट का फासला रहना चाहिए । कुर्सी के ऊपर सिरे की सीध से एक इंच नीचे हाथों को रखकर उन्हें आपस में धीरे-धीरे रगड़ना आरम्भ करो और फिर इस क्रिया को उत्तरोत्तर तेज करते जाओ । ध्यानपूर्वक देखने पर पता चलेगा कि रगड़ते समय एक सफेद भाप जैसा पदार्थ उसमें निकल रहा है । कभी-कभी हथेलियों की चमड़ी चमकती मालूम पड़ेगी और कभी एक-दो हल्की चिन्गारी सी इधर-उधर मालूम देगी । नाखूनों के पोरों में चमक विशेष रूप से देखी जाती है ।

(२) आकर्षक प्रभाव

पाल्थी मारकर लकड़ी की चौकी पर बैठो । कुर्सी पर बैठना हो तो पाँवों को लकड़ी के तख्ते पर रखो । जिस कुर्सी या चौकी पर बैठे हो उसमें धातु की कोई ऐसी कील न लगी हो जो तुम्हारे शरीर को छूती हुई जमीन तक पहुँचती हो । इन बातों का ध्यान रखना इसलिए आवश्यक है कि तुम्हारा शरीर जमीन को छू रहा होगा या धातु की कोई वस्तु शरीर को छूती हुई पृथ्वी तक पहुँच रही होगी तो शारीरिक विद्युत का प्रभाव जमीन में खिंचने लगेगा और जिस वस्तु की परीक्षा करना चाहते हो उसे देखने में सफलता न मिलेगी ।

चौकी या कुर्सी पर पाँव ऊँचे करके बैठना चाहिए । दोनों हाथों को आपस में इस प्रकार मिलाओ कि हथेलियों और उँगलियों के सिरे आपस में मिल जायें । हथेली के बीच का भाग जरा सा खुला रह सकता है । एक मिनट तक हथेली और उँगलियों के सिरों को आपस में चिपकाने का प्रयत्न करो । तदुपरान्त हथेलियों को कसकर मिलाये रहते हुए उँगलियों को अलग करने का प्रयत्न करो । ऐसा करने पर उँगलियों में कंपकपी मच जायेगी । वे एक-दूसरे से अलग न होना चाहेंगी, किन्तु जब तुम उनका चुम्बकत्व भंग करके उन्हें अलग-अलग करना चाहते हो तो मानवीय चुम्बक विद्युत के कारण वे काँपने लगती हैं ।

(३) जल का स्वाद परिवर्तन

एक मेज पर काँच के गिलासों में पानी भर कर रखो । उनमें से एक में अपनी उँगलियों का अग्र भाग ४-५ मिनट डुबाये रहो और इच्छा करते रहो कि तुम्हारी विद्युत शक्ति इस पानी में उतर जाय । इसके बाद कुशाग्र बुद्धि के मनुष्य को उन दोनों जल-पात्रों को दिखाओ या उन जलों में से थोड़ा पिलाओ । वह व्यक्ति तुरन्त ही बता देगा कि इस पानी के स्वादों में और चभक में कितना अन्तर है ।

(४) लटकती हुई वस्तु को झुलाना

सुई के छेद में धागा पिरोकर ऊपर छत में उसे इस तरह बाँध दो कि सुई बीच में लटकती रहे । उस कमरे में हवा के झोंके न आने पायें, इसका प्रबन्ध रखो । अब उस सुई से तीन फुट के फासले पर तुम बैठो और उस पर दृष्टि जमाओ, कुछ देर में उसमें हरकत होने लगेगी और जिस तरह चाहोगे उसी तरफ वह हटने व हिलने-डुलने लगेगी जलती हुई मोमबत्ती या दीपक की लौ को भी इसी प्रकार मानवीय विद्युत आधार पर हिलाया-झुलाया जा सकता है ।

(५) जीव जन्तुओं पर प्रतिबन्ध

रामायण में ऐसा उल्लेख है कि लक्ष्मण एक रक्षित रेखा खींच कर चले जाते थे और उसके अन्दर सीता जी अकेली निर्भय होकर बैठी रहती थीं । जब रावण सीता जी को चुराने पहुँचा उसका इतना साहस न हुआ कि उस रेखा के अन्दर प्रवेश कर सके, अतएव उसे भिक्षुक का रूप बनाकर छल से सीता जी को रेखा के बाहर बुलाने का षड्यन्त्र रचना पड़ा । इस प्रकार की विद्युतमयी रेखाएँ हर कोई खींच सकता है, परन्तु उसमें असर प्रयोक्ता के बल के अनुसार ही होगा । भूमि पर एक कोयले से कहीं छोटा-सा एक गोल घेरा चक्र की तरह खींच दो । खींचते समय रेखा में विद्युतमयी इच्छा का समन्वय कर दो और बैठकर तमाशा देखो । उधर से जो चीटियाँ या इसी प्रकार के कीड़े निकलेंगे, उनके लिए यह गरम घेरे की तरह होगी । वे रेखा के समीप तक जायेंगे किन्तु उल्टे पाँवों लौट आयेंगे, उसे पार करते उनसे न बन पड़ेगा । यदि किसी छोटे कीड़े के आस-पास रेखा खींच दी जाय तो उससे बाहर न निकला जायेगा और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसके अन्दर ही घुमड़ता रहेगा । उसे कोई मार्ग न मिलेगा और अपनी जान को हथेली पर रख लेगा, तब उस रेखा को पार करने को उद्यत होगा । जब वह पार करेगा तो उसे बड़ा कष्ट होगा और निकलने के बाद ध्यानपूर्वक देखने से वह पीड़ित या पागल की तरह बेचैन दिखाई देगा ।

(६) फोटो खींचना

फोटो खींचने के जो अच्छे प्लेट आते हैं वे आँखों की अपेक्षा प्रकाश को अधिक स्पष्ट अनुभव कर सकते हैं । किसी ऐसे अँधेरे कमरे में जाओ, जिसमें बाहर का प्रकाश बिल्कुल न पहुँचता हो और जिससे प्लेट पर बाहरी प्रकाश लग जाने की आशंका न हो । उस कमरे में जाकर एक फोटो का प्लेट खोलो और दो मिनट तक उस पर अपने हाथ का पंजा रखे रहो, बाद को प्लेट को सावधानी से ढककर फोटोग्राफर से धुलवालो । उस पर हाथ के प्रकाश का चित्र बन जायेगा ।

(७) चौंका देना

कोई व्यक्ति किसी कार्य में व्यस्त हो, तो चुपके से उसके पीछे कुछ दूरी पर जाकर खड़े हो जाओ । रीढ़ की हड्डी या गर्दन का पिछला भाग जो खुला हुआ हो, उस पर दृष्टि जमाओ और उसे चौंका देने की भावना करते रहो । यह व्यक्ति कितने ही जरूरी कामों में क्यों न लग रहा हो अपना ध्यान हटाने को बाध्य होगा । उस स्थान को खुजलायेगा और मुड़कर तुम्हारी ओर देखने लगेगा ।

निद्रित करने की कुछ विधियाँ

मेस्मेरिज्म का प्रयोग जिस व्यक्ति के ऊपर किया जाता है उसे एक प्रकार की निद्रा आती है, इसे योग-निद्रा या सम्मोहन तन्द्रा कह सकते हैं । रात को गहरी निद्रा में सुधि-बुधि भूल कर सो जाते हैं उस तरह की निद्रा यह नहीं होती, इसमें शरीर जागता है या अर्द्ध जाग्रत अवस्था में रहता है । शारीरिक दृष्टि से यह अर्द्ध निद्रा है, नेत्र झपक जाते हैं, अंग शिथिल हो जाते हैं, देहाध्यास कम हो जाता है । फिर भी होश बना रहता है, चेतनता में कमी आ जाती है पर वह नष्ट नहीं होती । मन की दृष्टि से भी वह अर्द्ध निद्रा ही है बाह्य मन सो जाता है, तर्क, सन्देह, छानबीन परीक्षण की शक्ति चली जाती है पर विश्वास स्वीकृत अवयव जागते रहते हैं । स्वप्न में अन्तर्मन सो जाता है और बाह्य मन सैर करता रहता है, योग-निद्रा में इससे उलटा होता है अर्थात् बाह्य मन सो जाता है और अन्तर्मन जागता रहता है । इस प्रकार यह योग-निद्रा शारीरिक और मानसिक दोनों दृष्टियों से आधी निद्रा है इसमें मनुष्य आधा सोता रहता है । और आधा जागता रहता है ।

जिस व्यक्ति के ऊपर प्रयोग करना है उसे प्रयोग के लिए पहले रजामन्द कर लेना चाहिए । उसे बता देना चाहिए कि इससे उसे कुछ भी हानि या तकलीफ न होगी । वरन् मस्तिष्क का विकास होगा, अनेक मानसिक शक्तियाँ जाग उठेंगी तथा जो शुभ संकल्प इस प्रयोग द्वारा स्थापित किए जायेंगे, वे उसके सद्गुणों की वृद्धि करेंगे और दुर्गुणों तथा मानसिक रोगों को हटा देंगे । फूलों के बगीचे के समीप रहने वाले को सुगन्ध का लाभ होता है, इसी प्रकार योगाभ्यास जैसे परम पुनीत और उपयोगी तत्व के सम्पर्क में आने से कुछ न कुछ लाभ ही प्राप्त होगा । जो व्यक्ति रजामन्द हो उसी को निद्रित करना चाहिए, जोर-जबरदस्ती या दवाब का परिणाम अच्छा नहीं होता ।

निद्रित करने के पहले पात्र को शिथिल होने का आदेश करना चाहिए । हमारी 'आसन और प्राणायाम' पुस्तक में शिथिलासन की विस्तृत विधि बताई गई है । संक्षेप में पात्र को यह बताना चाहिए कि वह किसी आरामकुर्सी या मुलायम मसन्द का सहारा लेकर अपने शरीर को बिल्कुल निर्जीव की तरह ढीला छोड़ दे, ऐसा अनुभव करे कि शरीर के अंगों में से प्राण निकल गया है और वे और वे बिल्कुल निर्जीव पड़े हुए हैं । मन को अथाह नीले समुद्र में तैरने के ध्यान में लगा दे और शरीर को पूर्ण रूप से शिथिल कर दे । पन्द्रह-बीस मिनट नित्य अभ्यास किया जाय तो एक सप्ताह के अन्दर शिथिलासन में बहुत कुछ सफलता मिल जाती है । सबसे अच्छा तो यही है कि पात्र को एक सप्ताह शिथिलासन का अभ्यास कराया जाय तत्पश्चात उसे निद्रित करने के लिए लिया जाय । यदि ऐसा सम्भव न हो तो एक दिन में कई बार शिथिलासन का अभ्यास करके फिर दूसरे दिन प्रयोग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लिए उसे लेनी चाहिए । यदि यह भी सम्भव न हो तो प्रयोग से पहले दस-पन्द्रह मिनट तक हर एक पात्र को शिथिलासन का अभ्यास करना चाहिए । इससे उसका चित्त शान्त और एकाग्र हो जायेगा ऐसी मनोदशा होने पर प्रयोग करना सरल हो जाता है ।

प्रयोग के लिए पात्र को आरामकुर्सी या मसन्द के सहारे गद्दी पर बिठाना चाहिए । पीठ के पीछे कुछ सहारा होना जरूरी है जिससे तन्द्रा आने पर इधर उधर लुढ़क कर गिर जाने का अन्देशा न रहे । स्थान एकान्त खुला हुआ स्वच्छ और शोरगुल से रहित होना चाहिए । समय प्रातःकाल सबसे अच्छा है पर आवश्यकता होने पर संध्याकाल भी रखा जा सकता है । आमतौर से मनोरंजन प्रयोग के लिए कुर्सियाँ ही काम में लायी जाती हैं । पात्र के लिए आरामकुर्सी और प्रयोक्ता के लिए हत्थेदार कुर्सी ठीक रहती हैं यह लकड़ी की ही होनी चाहिए, धातु की बनी हुई कुर्सियाँ त्याज्य हैं क्योंकि इससे विद्युत शक्ति का अधिकांश भाग धातु में चला जाने के कारण इच्छित फल प्राप्त नहीं होता । पात्र का मुँह उत्तर या पूर्व की ओर रखना चाहिए प्रयोक्ता अपनी कुर्सी उसके सामने एक हाथ फासले पर डाल कर बैठे ।

आरम्भ में दोनों को अपना चित्त शान्त और एकाग्र करना चाहिए । प्रयोक्ता, पात्र के चेहरे पर एक गम्भीर दृष्टि डाले, तत्पश्चात् उसके बायें नेत्र की पुतली पर अपनी दृष्टि से जमाये । आरम्भ में यह दृष्टिपात हल्का होना चाहिए, फिर धीरे-धीरे तीव्रता बढ़ाई जाय, जिस प्रकार काले रंग के गोले पर त्राटक किया जाता था उसी प्रकार पात्र के बायें नेत्र की पुतली पर त्राटक करना चाहिए और सम्पूर्ण एकाग्रता एवं इच्छाशक्ति के साथ ऐसी भावना करनी चाहिए कि मेरी विद्युत शक्ति का प्रवाह पात्र के नेत्र मार्ग से उसके मस्तिष्क में प्रवेश कर रहा है और वह बहुत शीघ्र निद्रित होने वाला है । यह प्रयोग करने से पाँच से लेकर पन्द्रह मिनट के अन्दर पात्र की आँखें झपकने लगती हैं, पलक भारी होने लगते हैं और तन्द्रा जैसी खुमारी आने लगती है । पात्र को पहिले से ही बता देना चाहिए कि जब पलक भारी होने लगें, खुमारी आने लगे तो वह बलपूर्वक जागने की कोशिश न करे वरन् ढीला होकर आराम से पड़ जाय ।

इच्छा-शक्ति और एकाग्रता द्वारा प्रयोक्ता की विद्युत शक्ति जब पात्र के शरीर में बलपूर्वक प्रवेश करती है तो उसे स्थान देने के लिए किसी दूसरी शक्ति को अपना स्थान खाली करना पड़ता है । पात्र का बाह्य मन अपने स्थान से हट जाता है इसलिए निद्रा आ जाती है । इस अवस्था में प्रयोक्ता की इच्छा शक्ति का पात्र के भीतरी मस्तिष्क पर कब्जा हो जाता है और वह उससे इच्छानुसार काम लेता है । मेस्मेरिज्म द्वारा सारे परिणाम इसी आधार पर उत्पन्न किए जाते हैं ।

पात्र को निद्रित कर देने के उपरान्त उसके ऊपर 'मार्जन' और 'आदेश' का प्रयोग करने के लिए अपनी कुर्सी को छोड़ कर खड़ा हो जाना चाहिए । दोनों हाथों की उँगलियाँ सीधी पसार देनी चाहिए, उनमें कड़ाई रखने की जरूरत नहीं है, सीधे साधे ढंग से उन्हें आगे की ओर जरा झुका हुआ सा रखना चाहिए । यदि मानसिक दोषों को दूर करने के लिए प्रयोग किया गया है तो मस्तिष्क पर मार्जन होना चाहिए । यदि सारे शरीरव्यापी दोषों को दूर करना है तो सारे शरीर पर मार्जन करना होगा, यदि किसी स्थान विशेष की पीड़ा दूर करनी है तो उसी स्थान पर मार्जन करना ठीक है । दोनों हाथों की उँगलियाँ बराबर-बराबर एक सीध में रखनी चाहिए और उन्हें पात्र के शरीर से आधे इंच के फासले पर रखते हुए आगे बढ़ाना चाहिए । किसी स्थान में भरा हुआ घी आदि गाढ़ा द्रव पदार्थ जिस प्रकार उँगलियों से खींचते हैं उसी प्रकार नियत अंग पर ऊपर से नीचे की ओर उँगलियों को ले जाना चाहिए और फिर उन्हें एक हल्के से झटकार देना चाहिए । इस प्रकार आवश्यकतानुसार दस से लेकर बीस तक "पास" देने चाहिए । इस क्रिया को करते समय यह भावना करते जाना चाहिए कि दूषित तत्वों को अपनी आकर्षित शक्ति द्वारा खींच-खींच कर बाहर फेंक रहा हूँ और इस स्थान को निर्दोष बना रहा हूँ भावनाएँ दृढ़ इच्छा शक्ति और श्रद्धा विश्वास के साथ की जानी चाहिए और ध्यानपूर्वक पीड़ित स्थान की स्वस्थता की कामना से देखते जाना चाहिए । यह क्रिया विश्वास के साथ की जानी चाहिए । मार्जन समाप्त करते हुए अन्त में हाथों को तीन बार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जरा जोर से एक तरफ झटकार देना चाहिए जिससे वह दूषित तत्व अपने शरीर में चिपटे न रह जायें ।

मार्जन करने से पात्र को अधिक शान्ति मिलती है । वह कुछ और गहरी निद्रा में चला जाता है । अब आदेश की बारी आती है । निद्रित पात्र के पीछे खड़े होकर गम्भीर, स्थिर, निश्चित, स्पष्ट और मध्यम स्वर से उसे निरोगता, स्वस्थता एवं उन्नति का अनुभव कराना चाहिए । दाहिना हाथ पीड़ित स्थान पर हल्के से रख लेना चाहिए । नकारात्मक नहीं, वरन् स्वीकारात्मक ही आदेश चाहिए । 'तुम बीमार नहीं हो' यह कहने की अपेक्षा 'तुम स्वस्थ हो' कहना चाहिए । रोगी के लिए इस प्रकार का आदेश दिया जा सकता है—'तुम्हारी पीड़ा को नाश करती हुई स्वस्थता बढ़ रही है, विश्वास करो तुम्हें अवश्य आराम होगा, शीघ्र आराम होगा, स्वस्थता बढ़ रही है, अब तुम निरोग होकर रहोगे, निरोगता प्रतिक्षण बढ़ती चली जाती है । मैं तुम्हारे रोग को निकाल रहा हूँ, खींच कर बाहर फेंक रहा हूँ, अब तुम स्वस्थ हो जाओगे, बहुत कुछ स्वस्थ हो गए हो । अपनी प्राण-शक्ति तुम्हारे शरीर में प्रवेश करके नवीन बल, स्वस्थता, ताजगी दे रहा हूँ, इससे तुम अपने में चैतन्यता और शक्ति का अनुभव करोगे ।'

बुद्धि बढ़ाने के लिए निद्रित पात्र के सिर पर हाथ रखकर इस प्रकार का आदेश दिया जा सकता है—"मैं अपने हाथ की उंगलियों में से तुम्हारे मस्तिष्क में बुद्धि-शक्ति की लहरें डाल रहा हूँ । वे बुद्धि की लहरें तुम्हारे मस्तिष्क में जड़ जमा रही हैं । अब तुम्हारी बुद्धि में पर्याप्त उन्नति होगी, वह बराबर बढ़ती ही जायेगी, हर एक विषय को अब तुम बहुत अच्छी तरह समझ सकोगे और रख सकोगे । अब से ही इसी क्षण से ही तुम्हारी बुद्धिमत्ता बढ़ेगी और तुम भली प्रकार उसका अनुभव करोगे ।"

इस प्रकार के आदेश शारीरिक रोगों के लिए, मानसिक रोगों के लिए चरित्र सम्बन्धी दोषों के लिए, बनाये जा सकते हैं । सद्गुणों का बीजारोपण करने के लिए भी ऐसे ही आदेश बनाये जा सकते हैं । इनके लिखने की आवश्यकता नहीं है, समयानुसार परिस्थितियों के अनुकूल आदेशों की रचना करने की योग्यता प्रयोग करने वाले में स्वयं होनी चाहिए ।

आदेशों को कई बार दुहराना चाहिए । इसके पश्चात् प्रयोग समाप्त करके अलग हट जाना चाहिए । यदि पात्र गहरी नींद में हो तो उसे उसी दशा में सोते रहने देना चाहिए और थोड़ी-थोड़ी देर बाद यह देखते रहना चाहिए कि निद्रा हल्की हुई है या नहीं, जब निद्रा टूटने के लक्षण दीखने लगें, अंगों में चैतन्यता और हलचल प्रतीत होने लगे तो मस्तिष्क से उदर तक चार पाँच 'पास' देकर हल्के सम्बोधन के साथ पात्र को जगा देना चाहिए ।

निद्रित करने के उपरान्त पात्र से खेल तमाशे का, अव्यक्त बातों के सम्बन्ध में पूछताछ करने का, उसको किसी मार्ग पर ले जाने का या कुछ और काम कराना हो तो उसी भावना से आदेश और मार्जन करने चाहिए । जैसी इच्छा का प्रयोग किया जायेगा, वैसा ही फल होगा ।

निद्रित करने की कुछ अन्य विधियाँ भी हैं जो यहाँ लिखी जा रही हैं—

(१) दाहिने हाथ की तर्जनी उँगली पात्र की दोनों भौंह के बीच त्रिकुटी स्थान पर हल्के से लगाओ और उससे "धीरे-धीरे मुझे योग निद्रा घेरती आ रही है" इस संकल्प की भावना करने को कहो, थोड़ी देर में निद्रा आ जायेगी ।

(२) बिल्लौरी काँच की चमकदार अँगूठी को प्रकाश के सम्मुख इस प्रकार रखो कि उसकी चमक पात्र के नेत्रों पर पड़े । इस अँगूठी के नग पर दृष्टि से जमाने से निद्रा आ जाती है ।

(३) अपने दोनों हाथों की मुट्ठियों में पात्र के दोनों हाथों की अँगूठे पकड़ लो । उसके अँगूठों की जड़ों में अपने अँगूठों का नख जरा सा घिसो और उसके चहरे की तरफ निद्रित करने की इच्छा के साथ घूरते रहो, निद्रा आ जायेगी ।

(४) सादा चौकोर काँच लेकर उसकी पीठ पर काला पक्का रंग पोत दो और चौखटा लगा दो । यह 'त्रिकालदर्शीदर्पण' हो गया । इसकी लोग पाँच-पाँच रुपया कीमत वसूल करते हैं । इस काले दर्पण बीचों के बीच एक रुपए के बराबर स्थान में तेल लगा दो । शीशे के सामने कुछ फासले पर दीपक इस प्रकार रखो कि तेल लगे हुए स्थान के बीचों बीच प्रकाश चमके,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस चमक पर पात्र को दृष्टि जमाने के लिए कहो और निद्रा आने का आदेश करते रहो, थोड़ी देर में वह निद्रित हो जायेगा ।

अपने ऊपर मेस्मेरिज्म करना

मेस्मेरिज्म विधान के अनुसार दूसरों को निद्रित करना एवं उनकी मनोभूमि का संशोधन, परिमार्जन करना पहले पाठ में बताया जा चुका है । अब यह बतायेंगे कि इस साधना से अपना क्या हित किया जा सकता है ।

जिस प्रकार विश्वास और संकल्प-शक्ति के आधार पर दूसरों को निद्रित किया जा सकता है एवं कुसंस्कारों का परिमार्जन तथा शुभ संस्कारों का बीजारोपण किया जा सकता है, उसी प्रकार का प्रयोग अपने आप भी किया जा सकता है । पीछे बताया जा चुका है कि विश्वास हो जाने पर झाड़ी भूत दिखाई देने लगती है । यह अपने आप अपने पर अनजाने में मेस्मेरिज्म का प्रयोग है । जैसे हिप्नोटाइज्ड व्यक्ति को कुछ का कुछ दिखाई पड़ने लगता है वैसे ही अपने निजी संकल्प से भी तन्द्रावस्था प्राप्त होती है और उसमें संकल्पों का ही मूर्त्तरूप दिखाई पड़ने लगता है ।

कहते हैं कि एक ग्रामीण व्यक्ति किसी साधू के पास गया और कहने लगा—मुझे योग-साधना सिखा दीजिए । साधु ने सरल स्वभाव से उसे श्रीकृष्ण की मूर्ति का ध्यान करने को कहा, ग्रामीण ने प्रयत्न किया पर उससे वह ध्यान न हुआ । तब साधु ने उसे दूसरा ध्यान बताया । वह भी उससे न हुआ इस प्रकार हर बार वह विफल होता गया । अन्त में साधु नें उसे बताया कि जो वस्तु सबसे प्रिय हो उसी का ध्यान करे । ग्रामीण को अपनी भैंस सबसे प्रिय थी वह भैंस का ध्यान एकान्त कुटी में बैठकर करने लगा । कुछ समय बाद साधु ने उससे पूछा कि बच्चा कुटी से बाहर निकलकर अपना हाल बताओ । ग्रामीण ने कहा-महाराज अब तो मैं भैंस ही हो गया हूँ, बड़े-बड़े सींग उपज आये हैं । कुटी से बाहर नहीं निकला जाता । साधु उसकी सफलता देखकर प्रसन्न हुआ और उसे बाहर निकाल कर सच्चे ध्यान में लगा दिया । यह स्वयं सम्मोहन क्रिया है । दूसरे का हिप्नोटिज्म करके उसे यह अनुभव कराया जा सकता है कि वह मनुष्य नहीं, हाथी है । इसी प्रकार अपने आप अपने ऊपर हिप्नोटिज्म करके भी लोग कुछ का कुछ अनुभव कर सकते हैं । सब पूछा जाय तो दुनियाँ के अधिकांश लोग स्वयं सम्मोहन क्रिया द्वारा अर्द्ध-मूर्च्छा में डूबे रहते हैं और कुछ का कुछ अनुभव करते रहते हैं । मनुष्य-जीवन का वास्तविक उद्देश्य और कर्त्तव्य क्या है ? इसे करीब-करीब सभी लोग जानते हैं पर सांसारिक चकाचौंध से अपने आपको अर्ध-निद्रित करके भ्रमपूर्ण विश्वास और विचारों को अपने अन्दर भरे रहते हैं और अर्द्ध-पागलों जैसा आचरण करते हुए निरर्थक एवं हानिकर कामों में अपनी जीवन-सम्पत्ति को नष्ट कर डालते हैं ।

मन ही मनुष्य का तत्व, सार है । यह जिधर चल पड़ता है, जीवन की धारा उसी ओर प्रवाहित होने लगती है । इसलिए हम अपने को जिधर ले जाना चाहते हैं वैसे ही संस्कार मन के ऊपर जमाने की आवश्यकता है । यह कार्य मेस्मेरिज्म के 'स्वसम्मोहन' सिद्धान्त द्वारा हो सकता है । आत्मोन्नति की योगिक साधनाओं को मेस्मेरिज्म विज्ञान की भाषा में 'स्वसम्मोहन' कहा जायेगा । साधक लोग मन्त्रों का जप करके, पुस्तकों का पाठ करके; अमुक अनुष्ठान कर्मकाण्ड करके, अपने ऊपर अमुक प्रकार के संस्कार जमाते हैं । यह संस्कार जितने मजबूत होते जाते हैं, बाह्य जीवन में वैसी ही परिस्थितियाँ इकट्ठी होती जाती हैं ।

अपनी जिस दिशा में उन्नति करनी हो तदनुकूल संस्कारों को मनोभूमि पर जमाने का अभ्यास करना चाहिए । वास्तविक सम्पत्ति यह संस्कार ही हैं । एक बार एक बड़े व्यापारी की कोठी में आग लग गई । कर्मचारी भागे हुए आये और उन्होंने व्यापारी को सब हाल सुनाया कि करोड़ों की सम्पत्ति नष्ट हो गई, अब कारोबार करने के लिए फूटी कौड़ी भी नहीं बची है । व्यापारी के चेहरे पर इस समाचार से जरा भी उदासी नहीं आयी उसने कहा-तुम समझते हो कि मैं कोठी या सम्पत्ति के कारण अमीर था, यह तुम्हारी भूल है । मैं धन के कारण नहीं, अपनी आदतों और मानसिक सम्पदाओं के कारण अमीर हूँ, तुम लोग देखोगें कि कुछ ही दिनों में फिर वैसी ही कोठियाँ खड़ी हो जायेंगी । व्यापारी का कहना सत्य हुआ, सब कुछ नष्ट हो जाने पर भी उसने प्रयत्न किया और थोड़े ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिनों में फिर पहले जैसा अमीर हो गया । लोग बड़ी भूल करते हैं । जब यह कहते हैं कि हम परिस्थितियों के गुलाम हैं । वास्तव में हर मनुष्य अपने भाग्य का स्वयं निर्माण करता है । जिसकी जैसी मनोदशा है उसे तदनुकुल परिस्थितियाँ प्राप्त होकर रहती हैं ।

(१) आरोग्य प्राप्ति के लिए

एकान्त कमरे में पद्मासन से बैठो या आरामकुर्सी पर पड़े रहो, चित्त की चंचलता को छोड़ दो और सारी माँसपेशियों तथा नाड़ियों को ढीली करके शरीर को शिथिल हो जाने दो । शिथिल हो जाने पर धीरे-धीरे एक लम्बी साँस खींचो और फिर उसी प्रकार धीरे-धीरे छोड़ते हुए साँस बिल्कुल निकाल दो, साँस खींचते समय भावना करो कि आरोग्यतावर्द्धक तत्वों को साँस द्वारा खींचकर अपने अन्दर भर रहा हूँ । जब साँस छोड़ो तो ध्यान करो कि बीमारियाँ तथा दुर्बलताएँ साँस के साथ निकलकर बाहर जा रही हैं । दस-पन्द्रह मिनट तक इसी प्रकार श्वास-प्रश्वास क्रिया करते रहो । इससे बड़ी शान्ति मिलेगी और शरीर में हल्कापन, फुर्ती और चैतन्यता नजर आयेगी । अब मन ही मन इस मन्त्र का जाप करो—"ॐ मैं अपने शरीर का स्वामी हूँ । मैं बलवान हूँ । मेरे सारे अंग ठीक-ठीक काम करते हैं । सबलता, स्वस्थता और सुन्दरता निरन्तर मुझ में बढ़ती जा रही हैं । धमनियों में शुद्ध रक्त प्रवाहित हो रहा है । दिन-दिन स्वास्थ्य उन्नत हो रहा है । बहुत तेजी से मैं स्वस्थता प्राप्त कर रहा हूँ ।" इस मन्त्र को मन में अनेक बार जपो और कल्पना शक्ति द्वारा वैसे ही अपने को अनुभव करो । इस अभ्यास को प्रतिदिन प्रातःकाल करने से आश्चर्यजनक तीव्रता से आरोग्यता प्राप्त होती है ।

(२) ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए

एकान्त स्थान में चित्त को शान्त और शरीर को शिथिल करके, आराम से बैठ जाओ । नेत्रों को बन्द कर लो । ध्यान द्वारा सर्वत्र हरा रंग देखो । आकाश, भूमि, सूर्य, नक्षत्र, मकान, पेड़, पहाड़, नदी, जीवजन्तु सबको हरे रंग का देखो । चारों ओर हरा ही हरा अनुभव करो । यह हरे रंग की भावना जितनी अधिक देर तक जितनी दृढ़तापूर्वक जमाये रहोगे उतना ही अच्छा है । मनोविज्ञान शास्त्रियों का मत है कि हरा रंग धन, वैभव और सफलता का प्रतिनिधि है । शुभ कर्मों में हरे रंग की प्रधानता दी जाती है । हरे रंग के बन्दनवार और तोरण विवाह शादियों में बाँधे जाते हैं । चूना में हरा रंग मिलाकर कमरे पुतवाये जाते हैं, इसमें वैभव-वृद्धि का रहस्य छिपा हुआ है ।

हरे रंग का ध्यान करते हुए शिथिल मन और मस्तिष्क से इस मन्त्र को भावनापूर्वक मन ही मन जप किया कीजिए 'मेरी सत्ता में अमित ऋद्धि-सिद्धियों समाई हुई हैं । अब मैं अपनी प्रबल इच्छा शक्ति द्वारा वैभव की कामना करता हूँ और विश्वास करता हूँ कि अत्यन्त शीघ्र मेरे ऐश्वर्य की वृद्धि होगी, मुझे इच्छित वस्तुएँ तथा परिस्थितियाँ प्राप्त करने में सफलता प्राप्त होगी । मैं अपनी सम्पूर्ण शक्तियों के साथ वैभव प्राप्त करने में लगा हूँ इसलिए यह निर्विवाद निश्चित है कि मेरी मनोकामना पूर्ण होकर रहेगी । इस मन्त्र को श्रद्धापूर्वक प्रतिदिन जपना चाहिए ।

(३) मानसिक शक्तियों की उन्नति के लिए

उपरोक्त रीति से एकान्त स्थान में बैठकर दोनों भृकुटियों के मध्य में, त्रिकुटि स्थान में, नेत्र बन्द करके ध्यान जमाना चाहिए और चन्द्रमा के समान सुनहरी तथा शीतल प्रकाश ज्योति का ध्यान करना चाहिए तथा मन ही मन इस मन्त्र का जप करना चाहिए "मेरा मस्तिष्क स्वस्थ तथा सबल है, मेरी बुद्धि तीव्र होती जा रही है, विचार शक्ति, निर्णय शक्ति, परीक्षण शक्ति, कल्पना शक्ति आदि अनेक मानसिक शक्तियाँ बढ़ रही हैं, विकसित हो रही हैं, मैं धीरे-धीरे बुद्धिमान बनता जा रहा हूँ । बहुत शीघ्रता से मेरा मानसिक विकास हो रहा है ।" इस ध्यान और जप से मानसिक शक्तियों का बड़ी तीव्र गति से विकास होता देखा गया है ।"

(४) आत्मिक बल बढ़ाने के लिए

उपरोक्त रीति से एकान्त स्थान में शिथिल होकर बैठिए । दोनों पसलियों के जोड़ पर (आमाशय के स्थान पर) सूर्य चक्र में सूर्य के समान तेजस्वी ज्योति का ध्यान कीजिए, साथ ही निम्न मन्त्र जपते जाइए "मैं आत्म-बल से परिपूर्ण हूँ, मेरे अन्दर अपार आत्म-शक्ति है, इस सोई हुई महान् शक्ति को अब मैं प्रयत्न पूर्वक जाग्रत कर रहा हूँ । सारे दुर्गुण एवं कुसंस्कारों को मैं ठोकर मार-मार भगाये दे रहा हूँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उनके स्थान पर सात्विक सद्गुणों को प्रतिष्ठित कर रहा हूँ । मैं दृढ़ हूँ, निर्भय हूँ, पुरुषार्थी हूँ, सदाचारी और सत्यनिष्ठ हूँ । मैं आत्मा हूँ और अपनी महान् आत्मिक शक्तियों को दृढ़तापूर्वक धारण किए हूँ ।"

(५) किसी सांसारिक वस्तु को प्राप्त करने के लिए

पूर्वोक्त प्रकार से शान्तिपूर्वक बैठकर पीले रंग का ध्यान करना चाहिए और इस प्रकार मानसिक जप करना चाहिए कि अमुक वस्तु को मैं चाहता हूँ । उसे प्राप्त करने की दृढ़ प्रतिज्ञा करता हूँ । सम्पूर्ण शक्ति के साथ उसे प्राप्त करने के लिए जी जान से कोशिश करूँगा, यह निश्चित सिद्धान्त है कि "जो चाहता है उसे मिलता है ।" मैं सच्चे दिल से अमुक वस्तु को चाहता हूँ, इसलिए उसे प्राप्त करके रहूँगा ।" इस संकल्प के अतिरिक्त इस चौपाई को बार-बार गुनगुनाते रहना चाहिए ।

'जेहि कर जेहि पर सत्य सनेहू ।
सो तेहि मिलत न कछु सन्देहू ।'

(६) प्रार्थना द्वारा इच्छापूर्ति

ईश्वर से, या किसी देवता से, अमुक वस्तु के लिए प्रार्थना करने की पद्धति भारत में अत्यन्त प्राचीन काल से चली आ रही है । वेदों का आधे से अधिक भाग ऐसे मन्त्रों से भरा हुआ है जिसमें धन, वैभव, पुत्र, यश, आरोग्य, बुद्धि, विद्या, सुख आदि के लिए ईश्वर से प्रार्थना है । ऐसी प्रार्थनाएँ करना मेस्मेरिज्म सिद्धान्त के अनुकूल हैं । प्रार्थना से दो बातें होती हैं—(१) अपनी आवश्यकता का बार-बार स्मरण आता है जिससे उधर रुचि तथा लगन बढ़ती है, (२) ईश्वर या देवता द्वारा सहायता मिलने की सम्भावना से आशा की किरणें दिखाई पड़ती हैं तथा उत्साह उत्पन्न होता है । यह दोनों ही बातें इच्छा पूर्ति में बहुत सहायक होती हैं । अनेक बार तो प्रार्थना बहुत अंशों में तथा कभी-कभी पूर्णरूपेण सफल हो जाती हैं । प्रार्थना के साथ-साथ यदि पौरुष या प्रयत्न भी हो तो वह बहुत फलवती होती है । अकर्मण्यों की प्रार्थना ईश्वर के दरबार में नहीं सुनी जाती । मेस्मेरिज्म के सिद्धान्त के अनुसार भी वह निष्फल ही ठहरती है ।

मेस्मेरिज्म की सिद्धियाँ

मेस्मेरिज्म का अभ्यासी त्राटक और प्राणायाम द्वारा अपनी आत्मिक शक्तियों को विकसित करके कुछ और भी दिव्य लाभ प्राप्त कर सकता है । उनका संक्षिप्त उल्लेख नीचे किया जाता है ।

(१) दूरस्थ व्यक्ति पर प्रभाव प्रेरणा

किसी को सामने बिठाकर उस पर मेस्मेरिज्म प्रयोग करने की विधि पीछे बताई जा चुकी है । यह प्रयोग दूर करने वाले व्यक्ति पर भी हो सकता है । सूक्ष्म शक्ति के लिए दूरी का कोई प्रश्न नहीं है । प्रकाश एक सेकण्ड में हजारों मील चलता है, विचारों की गति तो उससे भी अनेक गुनी तीव्र है । इसलिए दो व्यक्तियों के दूर होते हुए भी आत्म-शक्ति का प्रयोग सम्भव है ।

जिस व्यक्ति पर प्रभाव प्रेरणा करनी हो उसकी कोई ऐसी वस्तु लेनी चाहिए जो उसके शरीर से कई काल तक सम्बन्धित रही हो । योरोपीय प्रयोक्ता इस कार्य के लिए रूमाल मँगाया करते हैं क्योंकि वह छोटा वस्त्र होते हुए भी शरीर के स्पर्श में बार-बार आता है । भारतीय तान्त्रिक नख या बालों को अधिक काम की वस्तु मानते हैं । फोटो, वस्त्र, आभूषण उसी के हाथ का लिखा हुआ कागज आदि भी काम दे सकते हैं । जिन वस्तुओं का मनुष्य के शरीर से बार-बार स्पर्श होता है उनमें उसके कुछ शारीरिक विद्युत-कण चिपके रह जाते हैं, यह कण पूर्णरूप से सम्बन्ध विछिन्न नहीं होते । माता के शरीर का कुछ भाग पुत्र में होता है, दूरस्थ पुत्र पर विपत्ति आने पर माता का दिल धड़कने लगता है । कारण यह है कि पुत्र के शरीर में विक्षोभ उत्पन्न होता है, उसकी अनुभूति पूर्व सम्बन्धित माता के शरीर तक पहुँचती है । इस प्रकार नख, केश, वस्त्र आदि के चिपके हुए कणों पर जो प्रयोग किया जाता है उसका प्रभाव पूर्व सम्बन्धित शरीर पर, उस व्यक्ति पर भी होता है ।

एकान्त स्थान में प्राणाकर्षण क्रिया करके अपने आत्मबल को सतेज कर लीजिए । जिस व्यक्ति के ऊपर प्रभाव प्रेरणा करनी है उसके नख, केश, वस्त्र या लिखा हुआ पत्र आदि सामने रखिए और उस पर ऐसी दृष्टि जमाइए मानो त्राटक का अभ्यास कर रहे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हों । मन में भावना कीजिए कि यह वस्तु जो रखी है मानो साक्षात् यह मनुष्य ही बैठा है । जिस प्रकार सामने बैठ हुए मनुष्य के ऊपर दृष्टिपात, आदेश एवं मार्जन द्वारा प्रयोग किया जाता है वैसे ही उस व्यक्ति पर कीजिए, स्मरण रखिए यह प्रेरणा कल्याण के लिए उचित ढंग की होनी चाहिए । हानिकारक या अनुचित मार्ग पर जाने वाला प्रयोग करने के लिए हम अपने पाठकों को कड़ी मनाही करते हैं ।

इस प्रकार किए हुए प्रयोग दूर रहने वाले व्यक्ति पर असाधारण प्रभाव डालते हैं और उसे इच्छानुकूल कार्य करने के लिए विवश करते हैं । प्रतिदिन एक बार प्रातःकाल प्रयोग करना चाहिए, अधिक से अधिक ग्यारह बार । सन्ध्या को भी किया जा सकता है । कुछ दिनों तक लगातार जारी रखने से इच्छित फल प्राप्त होता है ।

ऐसा भी होता है कि कोई दुष्टात्मा जीवित या मृत व्यक्ति दूसरों को हानि पहुँचाने के अदृश्य प्रयत्न करते हैं, इससे बीमारी, पीड़ा, कलह, मतिभ्रम, चित्त उचटना, भय आदि उत्पन्न होकर मनुष्यों की कार्य-शक्ति, बुद्धिमत्ता को नष्ट कर डालते हैं ।

इस प्रकार के कुप्रभावों को दूर करने के लिए अपने चारों ओर एक प्रकार का घेरा डालने की आवश्यकता होती है । रामचन्द्र जी जब वन में सीता जी को अकेली छोड़कर जाया करते थे तो कुटी के चारों ओर एक रेखा खींचकर घेरा बना जाते थे । इस घेरे के अन्दर ऐसा आत्मिक प्रभाव रहता था कि अन्दर किसी हानिकर तत्व का प्रवेश नहीं हो सकता था । रावण जब सीता जी को चुराने गया तो वह घेरे के अन्दर न घुस सका, किसी प्रकार बहकाकर उसने सीता जी को रेखा से बाहर बुलाया तब उन्हें हरण कर सका ।

योगशास्त्र की भाषा में इस घेरे को 'कवच' कहते हैं । कवच एक ऐसा धातु मिश्रित कपड़ा होता है । जिसे पहनकर योद्धा लोग लड़ने जाते हैं, उस कपड़े पर शत्रु के हथियारों का प्रभाव नहीं पड़ता । आत्म-शक्ति के कवच का भी ऐसा ही प्रभाव है । जब सम्भावना हो कि अनिष्ट प्रभाव अपने ऊपर किया जा रहा है तो निम्न उपाय करके कवच धारण कर लेना चाहिए ।

(१) एकान्त स्थान में स्वस्थ चित्त होकर मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए पद्मासन से पूर्व को मुँह करके बैठिए । फेफड़ों में भरी हुई साँस को धीरे-धीरे बाहर निकालिए और भावना करते जाइए कि दूसरे के अनिष्टकर प्रभाव साँस के साथ बाहर निकल रहे हैं । जब साँस पूरी तरह निकल जाय तो साँस खींचना आरम्भ कीजिए और भावना कीजिए कि पवन देवता अपने पुत्र हनुमान जी के साथ शरीर में प्रवेश कर रहे हैं । साँस को पूरी तरह खींच लेने पर कुछ देर उसे भीतर ही रोकिए और भावना कीजिए कि बजरंगी पवन-पुत्र मेरे शरीर में भरे हुए हैं, उनके प्रभाव से सारे कुप्रभाव भागे जा रहे हैं, इस भावना से कई बार प्राणायाम कीजिए ।

(२) प्राणायाम के बाद नेत्र बन्द कर लीजिए और अपने तेजोबल का ध्यान कीजिए । शरीर के चारों ओर कुछ दूर तक एक प्रकाश फैला रहता है इसे तेजोबलय कहते हैं । भावना कीजिए कि 'आप सूर्य के समान तेजस्वी हैं और आपकी किरणें दूर-दूर घेरे के रूप में फैली हुई हैं । इस घेरे में बहुत तेजी है, कोई भी बाह्य कुप्रभाव इसके अन्दर प्रवेश नहीं कर सकता ।' इस ध्यान को श्रद्धापूर्वक अधिक समय तक कीजिए ।

(३) जब ऐसी आशंका को तब ये कर्म कर डालिए । तेल लगाकर गरम पानी से स्नान कीजिए, यज्ञोपवीत बदलिए, सारे कपड़े उतारकर धो डालिए, नये कपड़े पहन लीजिए, उपवास रखिए और एक हजार बार गायत्री मन्त्र जप कीजिए । देवदर्शन कीजिए और यथाशक्ति कुछ दान कीजिए ।

(४) किसी आध्यात्मिक पुरुष से अभिमन्त्रित जल ग्रहण करिए, विभूति, रक्षा-सूत्र एवं कवच (ताबीज) धारण करिए ।

यदि किसी दूसरे को कुप्रभाव से बचाना हो तो उसे उपरोक्त तीन उपाय करने का आदेश करना चाहिए और इच्छा शक्तिपूर्वक गायत्री मन्त्र से जल या भस्म मन्त्रित करके उसे देना चाहिए । बीसा मन्त्र या ॐ अक्षर रक्षा-भावना से पवित्रतापूर्वक लिखकर उसे धारण करा देना चाहिए ।

इन उपायों से दूसरों द्वारा अपने ऊपर किए हुए कुप्रयोगों का शमन होता है और वे कुकर्म लौटकर प्रयोग करने वाले के ऊपर ही पड़ते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(३) दूरदर्शन

कौरव-पाण्डव-युद्ध का सारा दृश्य राजमहल में बैठे हुए संजय देखा करते थे और धृतराष्ट्र को सुनाया करते थे । ऐसी पूर्ण सिद्धावस्था तो विशेष प्रयत्न साध्य है, परन्तु इस दशा में थोड़ी बहुत सफलता मेस्मेरिज्म के अभ्यासी भी कर सकते हैं । दूर स्थानों पर होने वाली हलचलों का बहुत हद तक अभ्यास प्राप्त कर सकते हैं ।

(१) बिल्कुल शान्त, कोलाहल रहित एकान्त स्थान में नेत्र बन्द करके बैठिए । मन को एकाएक संकल्पों से रहित कर दीजिए, सारी चंचलता हटाइए और अपनी निज की बातों को बिल्कुल भुला दीजिए, मानो हमें कुछ विचार या कार्य है ही नहीं । इस संकल्प रहित अवस्था को प्राप्त करने में दस-पन्द्रह मिनट लगाइए ।

(२) जब चित्त शान्त हो जाय तो उस स्थान का ध्यान कीजिए जहाँ के दृश्य आप देखना चाहते हैं । उस स्थान का ठीक-ठीक ध्यान कीजिए, हर वस्तु को गौर से देखिए । उस समय वहाँ जो कुछ कार्य हो रहे होंगे दिखाई देंगे । आरम्भ में कुछ त्रुटि रहती है परन्तु धीरे-धीरे जब एकाग्रता बढ़ती है और मन इधर-उधर नहीं उछलता तो यह त्रुटियाँ घटने लगती हैं और 'दूरदर्शन' की सिद्धि प्राप्त होती जाती है ।

(४) भविष्य ज्ञान

(१) अपने आपको पूर्णतया शिथिल कर दीजिए । शरीर में से अपने को पृथक अनुभव कीजिए । अँगूठे के बराबर आत्मा की ज्योति का ध्यान कीजिए । निर्विकार, निर्लिप्त, शुद्ध बुद्ध, मुक्त, गुणों से युक्त आत्मा अपने का अनुभव कीजिए ।

(२) इस तेज स्वरूप आत्मा को ऊँचा, ऊपर आकाश गें अवस्थित कीजिए । वहाँ से अमुक व्यक्ति, देश या कार्य के ऊपर दृष्टिपात कीजिए—दिखाई देगा कि उसके आगे और पीछे एक विशेष वर्ण का धुआँ सा उड़ता है । यह धुआँ किस रंग का है इसे बारीकी के साथ पहचानिए ।

(३) जिसके आस-पास काला, घना, भयानक कुहरा सा उड़ता दिखाई दे उसका भविष्य अन्धकारमय, अनिष्ट सूचक समझना चाहिए, जिसके चारों ओर श्वेत, स्वच्छ, हल्का कुहरा सा छाया हो उसका भविष्य उज्ज्वल समझना चाहिए ।

(४) अधिक दिनों के अभ्यास से ध्यान करने पर भविष्य में होने वाली घटनाओं के दृश्य भी दृष्टिगोचर होते हैं । जिनसे जाना जा सकता है कि इस व्यक्ति या कार्य का भविष्य कैसा होगा ।

(५) व्यक्तित्व की पहचान

कौन व्यक्ति कैसे आचरण और विचार का है इसकी जानकारी भी आत्मिक अभ्यास द्वारा प्राप्त की जा सकती है । वह इस प्रकार है:—

(१) जिस मनुष्य का व्यक्तित्व जानना है, दस सेकण्ड तक उसकी बायीं आँख की पुतली पर त्राटक कीजिए । इसके पश्चात् दस सेकण्ड के लिए आँखें बन्दकर लीजिए ।

(२) आँखें बन्द करके सामने वाले व्यक्ति के चेहरे का ध्यान कीजिए । आपको किसी खास रंग की धज्जियाँ-सी उसके चेहरे के आस-पास उड़ती हुई दृष्टिगोचर होंगी ।

(३) इन रंगों के द्वारा इस प्रकार का परिणाम निकाला जा सकता है । सफेद रंग-सच्चा ईमानदार । मटीला-चालाक । खाकी-वचन का पालन करने वाला । गुलाबी-पेट का साफ । लाल-क्रोधी । हरा-शान्त, स्थिर । पीला-पुरुषार्थी, बहादुर । नारंगी-अभिमानी । नीला-अस्थिर । बैंगनी-स्वार्थी । काला-निर्दय, धोखेबाज । सुनहरी-दिव्य स्वभाव । मिश्रित रंग-कूटनीतिज्ञ । यदि एक साथ कई रंग मिश्रित हों तो मिश्रित गुण समझने चाहिए ।

(४) सामने वाले व्यक्ति के चेहरे पर गम्भीरतापूर्वक दृष्टि जमाइए और देखिए कि इससे आपके मन पर किस प्रकार की छाप पड़ती है । स्वच्छ मन में जैसी श्रद्धा या आशंका उत्पन्न होती है प्रायः वैसा ही सामने वाले का चरित्र तथा स्वभाव निकलता है ।

(६) सन्देश पहुँचाना

बिना टेलीफोन या रेडियो के भी एक मनुष्य दूसरे तक अपने विचार पहुँचा सकता है । इस विद्या को योरोपीय योगी 'टैलीपैथी' कहते हैं । इस विद्या का अभ्यास इस प्रकार करना चाहिए:—

(१) एक समान विचार के दो मनुष्य एक ही समय नियत करके अपने-अपने स्थान पर एकान्त स्थान में शान्तचित्त में बैठा करें ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२) आरम्भ में पाँच मिनट पहला व्यक्ति अपना सन्देश भेजेगा और दूसरा सुनेगा । बाद में दूसरा व्यक्ति पाँच मिनट सन्देश देगा और पहला सुनेगा । पहला और दूसरा कौन हो यह क्रम पहले ही निश्चित कर लेना चाहिए ।

(३) सन्देश देने वाला नेत्र बन्द करके दूसरे मनुष्य का ध्यान करे और सामने बैठा हुआ अनुभव करते हुए मन ही मन अपनी बात कहे । जो बात कहीं जाय उसका एक-एक शब्द स्पष्टता और गम्भीरता युक्त होना चाहिए । शब्दों को मुख से ही उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं है । मौन भाव से ही यह सब होना चाहिए ।

(४) दूसरा व्यक्ति आरम्भ के नियत समय में पहले व्यक्ति का नेत्र बन्द करके ध्यान करे और मुख की तरफ गम्भीरता पूर्वक देखे कि वह क्या भाव प्रकट कर रहा है । जो भाव उसकी मुख मुद्रा से समझ में आये उन्हें हृदयंगम कर लो ।

(५) इसी प्रकार पाँच मिनट बाद दूसरा व्यक्ति सन्देश भेजे और पहला उसे ग्रहण करें ।

यह अभ्यास ब्रह्ममुहूर्त में अच्छा होता है । दोनों अभ्यासी अपने अभ्यासों से निवृत्त होकर आपस में मिला करें और विचार किया करें कि कितने अंशों में सफलता मिली । आरम्भ में दस प्रतिशत सफलता मिलती है । फिर धीरे-धीरे उन्नति होने लगती है । आधी बातें ठीक निकलें तो उसे अच्छी सफलता समझना चाहिए । फिर बिना समय नियत किए भी सन्देश भेजे जा सकते हैं और सतत् प्रयत्न से पूर्ण सिद्धि भी प्राप्त हो सकती है ।

(७) दूसरों के मन की बात जानना

(१) ध्यानावस्थित होकर अपनी मनोभूमि को बिल्कुल खाली, नीले आकाश की तरह शून्य देखो । जिस व्यक्ति के मन की बात जाननी है उसकी अकेली मूर्ति उस अखिल नीले आकाश में स्थित देखो अर्थात् ऐसा अनुभव करो कि सारा विश्व नीला आकाश मात्र है और उस आकाश में अमुक व्यक्ति के अतिरिक्त और कोई वस्तु नहीं है ।

(२) एकटक होकर उस व्यक्ति की प्रतिमा की ओर ध्यान लगाकर देखो । कुछ क्षण में वह व्यक्ति अपने भाव और विचार संकेतों द्वारा तथा मुँह खोलकर बताता हुआ दृष्टिगोचर होगा ।

(८) पीड़ा दूर करना

दाँत, सिर, पसली, जोड़ आदि के दर्द, बिच्छू, ततैया, साँप आदि जहरीले जानवरों के काट लेने का दर्द, उन्माद, आवेश, भूतबाधा, भय आदि की मानसिक पीड़ा के लिए दुःख निवारण की दृढ़ इच्छा रखते हुए, गायत्री मन्त्र से जल अभिमन्त्रित करके उस स्थान से लगा देना चाहिए और पीड़ित स्थान पर हाथ फेरना तथा मार्जन करना चाहिए । ऐसा करने से पीड़ा को बहुत शीघ्र आराम होता है ।

(९) शक्तिपात

आध्यात्म विद्या के ऊँचे अभ्यासी अपनी शक्ति को सामने वाले व्यक्ति पर असाधारण रूप से एक दम गिरा सकते हैं । इससे उसका भीतरी जीवन बिल्कुल उलट-पुलट हो जाता है, स्वभाव, विचार और संस्कार दूसरे ही ढाँचे में ढल जाते हैं । यह मेस्मेरिज्म का ऊँचे दर्जे का प्रयोग है । साधारण प्रयोग का विशेष असर तो सिर्फ उतनी ही देर रहता है जब तक कि तन्द्रा रहती है जाग्रत होने पर प्रभाव कम हो जाता है, किन्तु शक्तिपात का प्रभाव स्थायी पड़ता है और एक ही बार के प्रयोग से मनुष्य की मानसिक स्थिति बदल जाती है । इस प्रयोग को ग्रहण करते समय कंपकपी आ जाती है, झटके से लगते हैं और अवर्णनीय विचित्र मनोदशा हो जाती है, सच्चे सदाचारी, तपस्वी और खरे साधक ही शक्तिपात कर सकते हैं ।

उपरोक्त पंक्तियों में जिन ९ सिद्धियों का वर्णन किया है आरम्भ में ही किसी को पूर्ण रीति से प्राप्त नहीं हो जातीं, बहुत समय तक निरन्तर अभ्यास करते रहने से सफलता की यात्रा धीरे-धीरे बढ़ती जाती है और एक दिन साधक आशातीत सिद्धि प्राप्त कर लेता है ।

हिप्नोटिज्म के तीन खेल

विश्वास की शक्ति का उपयोग करते हुए मनोविज्ञान शास्त्र के आधार पर डॉक्टर मेस्मेर के पश्चात् अन्य लोगों ने कुछ खेल-तमाशे आविष्कृत किए, जिनसे जनता में बड़ा कौतूहल हुआ । कुछ लोग तो इन्हें केवल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खेल-तमाशे ही समझते थे, कुछ सीधे-साधे अल्पज्ञ, अन्ध श्रद्धालु लोग इनको सत्य समझने लगे, कुछ लोगों ने इन शोधों को अपना धन्धा बना लिया और उनके साथ विज्ञापनी तौर-तरीके जोड़कर एक खासा खेल खड़ा कर दिया । यह खेल-तमाशे यद्यपि मेस्मेर एक विज्ञान से कुछ भी सम्बन्ध नहीं रखते तो भी हमारे देश की जनता पूरी जानकारी न होने के कारण उन्हें मेस्मेरिज्म का ही भेद समझती है । यह खेल-तमाशे हिप्नोटिज्म की मर्यादा के अन्तर्गत आ सकते हैं ।

मेस्मेरिज्म और हिप्नोटिज्म का अन्तर पाठकों को भली प्रकार समझ लेना चाहिए । मानवीय विद्युत शक्ति का दूसरे के ऊपर उपयोग करके इच्छित फल उत्पन्न करना मेस्मेरिज्म है । हिप्नोटिज्म में इस शक्ति की कुछ भी आवश्यकता नहीं है, उसमें किसी प्रकार डांट-डपट से, बहकावा देकर, भूल में डालकर, डराकर, फुसलाकर कुछ विश्वास कराया जाता है । हिप्नोटिज्म करने वाला तरह-तरह की तरकीबों से यह कोशिश करता है कि पात्र मेरी बात का पूरा भरोसा कर ले, गहरा विश्वास जमा ले । जितना ही विश्वास पक्का होगा उतना ही अच्छा खेल होगा । यदि विश्वास हल्का रहा या न रहा तो खेल भी गड़बड़ होता है । अब हम हिप्नोटिज्म के कुछ खेल नीचे देते हैं ।

दृष्टि बन्ध

किसी काली गोल चमकदार चीज पर एकाग्रता पूर्वक दृष्टि जमाने से बाह्य मन शिथिल होने लगता है । इस सिद्धान्त के आधार पर दृष्टि बन्ध के खेल होते हैं ।

दस से बारह वर्ष की आयु के बीच का एक लड़का चुनिए । सामने जो लड़के खड़े हों उन पर निगाह फेंककर यह पहचानिए कि इनमें सीधा, दब्बू, डरपोक लड़का कौन-सा है, उसे ही तमाशे के लिए बाहर बुला लीजिए । चंचल, तार्किक, हेकड़ लड़के इस काम के लिए अच्चे साबित नहीं होते । लड़कों की अपेक्षा लड़कियाँ और भी अच्छी रहती हैं ।

बालक को आरामकुर्सी, चौकी या आसन पर बैठा दीजिए । उसके दाहिने हाथ के अँगूठे के नाखून पर बीचों-बीच गोलाकार गीली स्याही लगा दीजिए । उसे हाथ की मुट्ठी बँधवाकर स्याही लगे अँगूठे को दोनों आँखों के बीच की सीध में एक बालिस्त फासले पर रखवाइए और उस बालक से कहिए कि अँगूठे पर लगी हुई काली स्याही पर चमक है उस पर ध्यान पूर्वक दृष्टि जमाए रहो । जब तीन चार मिनट हो जाय तो कहिए कि—"इसके अन्दर तुम्हें एक बाग दिखाई पड़ेगा, जब दिखाई पड़ने लगे तब हमें कह देना । थोड़ी देर में बालक कहेगा—अब मुझे बाग दिखाई पड़ने लगा, फिर उससे कहिए—ध्यान से देखते रहो इस बगीचे में एक मैदान भी दिखाई देगा । थोड़ी देर में लड़का कहेगा—मैदान भी दिखने लगा । अब लड़के से कहलवाइए—कि कहो, इस मैदान को साफ करने के लिए एक मेहतर आये । लड़का आपकी बात कहेगा और थोड़ी देर में बतायेगा कि मेहतर आ गया, झाड़ू से मैदान साफ कर रहा है । उससे कहलवाइये कहो एक भिश्ती पानी छिड़कने आवे । लड़का कहेगा और थोड़ी देर में बतायेगा कि भिश्ती आ गया, छिड़काव कर रहा, एक आदमी बुलाकर फर्श बिछवाइये । दरी, गलीचे, कालीन, कुर्सी मेज जो चाहे मँगवाइये ।

ढीले स्वभाव के लड़के कुछ देर-दार करते हैं । यदि भिश्ती के आने में देर-दार हो, लड़का कहे अभी नहीं आया तो जरा हल्के से गम्भीर स्वर में कहिए कि ध्यान से देखो किसी कोने की तरफ से आ रहा होगा । बालक कहने लगेगा हाँ उधर से आता तो मालूम पड़ता है—आ रहा है, आ गया । इसी प्रकार अन्य वस्तुएँ मँगाने के समय ढील-ढाल हो तो ऐसे ही उससे कहिए, देर-दार में वह चीज आ जायेगी ।

पूछने वाले किसी देवी-देवता को बालक से कहकर बुलवाते हैं । उनके लिए प्रमाण कहलाते हैं और चोरी में गई वस्तु, भूत, भविष्य की बात, गढ़ा धन, बीमारी, जन्म, मृत्यु, भाग्योदय, हानि, लाभ, तेजी, मन्दी, मुकद्दमा, भूत-बाधा, पास-फेल, विवाह-शादी आदि की बातें लड़के द्वारा पुछवाते हैं । वे देवता बोर्ड पर लिखकर, इशारे से या मुँह से बोलकर उन बातों का उत्तर देते हैं, मनोकांक्षा पूरी होने का उपाय बताते हैं और कुछ शर्तों पर सहायता करने को तैयार हो जाते हैं । अन्त में उन देवताओं को प्रणाम करके विदा कर दिया जाता है और पर्ववत् नौकर, कुर्सी, फर्श आदि उठवा दिए जाते हैं, तत्पश्चात् खेल खत्म हो जाता है । इस क्रिया को हाजरात के नाम से भी पुकारते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आप देवी-देवता बुलाना चाहें तो किसी महापुरुष को बुला सकते हैं और उनसे किन्हीं समस्याओं के बारे में पूछताछ कर सकते हैं, बराबर जबाब मिलेगा । अँगूठे पर स्याही लगाने की अपेक्षा 'करामाती अँगूठी' या 'त्रिकालदर्शी दर्पण' से भी काम लिया जा सकता है । यह दर्पण या अँगूठी बनाना बहुत आसान है । काले नग की अँगूठी ही 'करामाती अँगूठी' है और पीठ पर काला रंग पुता हुआ दर्पण 'करामाती दर्पण' है । प्रयोग करते समय इन पर गोल घेरे में जरा सा तेल चुपड़ देना चाहिए जिससे चमक आ जाय ।

इस करामात का यह रहस्य है कि चमकदार स्याही पर दृष्टि जमाने से बालक का बाह्य मन निद्रित हो जाता है, देखने में जागता मालूम पड़ने पर भी उसकी मनोदशा तन्द्रा या अर्ध स्वप्न की सी हो जाती है । इस दशा में आप जो कुछ उसे आदेश करेंगे बिना तर्क के स्वीकार कर लेगा । आपका संकल्प उसके विश्वास में जम जायेगा और विश्वास के आधार पर उस स्याही में सब वस्तुएँ वैसे ही दिखाई पड़ेंगी, जैसे झाड़ी का स्वरूप भूत जैसा बन जाता है । वास्तव में कोई भिश्ती, मेहतर या देवता वहाँ नहीं, यह बालक का जाग्रत स्वप्न मात्र है । प्रश्नों के उत्तर जो मिलते हैं वे बालक के अपने विचार हैं । यह स्वप्न हर किसी को नहीं दिखाए जा सकते । आसानी से तो दब्बू और सीधे स्वभाव के बालक ही देख सकते हैं । स्त्रियों पर भी यह प्रयोग सफल हो जाते हैं । कभी-कभी बड़ी उम्र के पुरुष भी यह सब देख लेते हैं ।

प्रेत-विद्या

(१) हल्की तीन पाये की गोल मेज लीजिए । इनके पाये किनारों से लगे हुए न हों वरन् ६ इंच अन्दर की तरफ हों, यदि गोल न मिले तो साधारण हल्की मेज से ही काम लिया जा सकता है । उसके एक पाये के नीचे लकड़ी लगा देनी चाहिए जिससे थोड़े संकेत से हिलडुल सके ।

पायों का नीचे का सिरा गोल कुण्डीदार ठीक रहता है । मेज के चारों ओर एक हाथ के फासले पर कुर्सियाँ रख दी जायें इन पर प्रेतों का आवाहन करने वाले बैठें और अपनी हथेलियाँ मेज के तख्ते से हटा लें । हाथ इस प्रकार सीध में रखे जायें कि गोल चक्र से मालूम पड़ें । इन बैठने वालों में से एक नेतृत्व करे । सब लोग दस मिनट तक शान्त चित्त होकर मेज के मध्य बिन्दु में एकाग्रता करते रहें और भावना करते रहें कि कोई या अमुक प्रेतात्मा इस मेज पर पधारकर हम लोगों से वार्तालाप करे ।

इस स्थिति के कुछ देर रहने के उपरान्त मेज में एक कँपकपी सी उत्पन्न होगी और एक पाया खटपट करने लगेगा । खटपट प्रेतात्मा के आगमन की सूचना समझी जायेगी । उसे प्रणाम करने के उपरान्त नेतृत्व करने वाला, आत्मा से कुछ प्रश्न करे और स्वयं ही उन प्रश्नों के दो तीन या चार पाँच उत्तर एक कागज पर लिख ले । फिर मेज के पाये के जितने खटके हों उसी नम्बर के उत्तर को प्रेतात्मा का उत्तर समझे । जैसे प्रश्न किया कि आयी हुई प्रेतात्मा किस वर्ण की है ? उसका उत्तर क्रमशः लिख लिया गया । (१) ब्राह्मण, (२) क्षत्रिय, (३) वैश्य, (४) शूद्र । यदि मेज के पाये एक बार खटकें तो ब्राह्मण वर्ण की, दो बार खटकें तो क्षत्रिय वर्ण की समझनी चाहिए । इसी प्रकार अन्य प्रश्नों के उत्तर मिल सकते हैं । एक बार खटकने को अ, दो बार खटकने को इ, तीन बार को उ इस प्रकार वर्णमाला बनाकर भी उत्तर प्राप्त किए जा सकते हैं । जब प्रेतात्मा विदा होना चाहती है तो एक बार बड़े जोर से मेज हिलाकर विदा हो जाती है । इस प्रकार प्रेतात्मा से वार्तालाप हो जाता है ।

(२) दूसरा तरीका प्लेनचिट का है । यह पान के आकार का लकड़ी का टुकड़ा है इसमें पीछे की ओर सब तरफ घूमने वाले दो छोटे-छोटे पहिए लगे रहते हैं । नोंक की ओर एक छेद होता है जिसमें पेन्सिल लगा दी जाती है । मेज या चौकी पर कोरा कागज रखकर उस पर इस प्लेनचिट यन्त्र को रखते हैं, प्रयोग करने वाले दो आदमी अपनी उँगलियों के छोर उस पर रख कर बैठते हैं और एकाग्रता तथा ध्यान करते हैं थोड़ी देर में हाथों में हरकत सी होती है और प्लेनचिट आगे चलने लगता है और पेन्सिल द्वारा प्रश्नों के उत्तर लिखे जाते हैं ।

(३) तीसरा तरीका स्वयं लेखन—ओटोमेटिक राइटिंग है । एक व्यक्ति अपने हाथ में पेन्सिल लेकर और मेज पर एक कागज रख कर बैठता है । अमुक या किसी भी प्रेतात्मा का ध्यान करता हुआ उसे आवाहन करता है । शरीर में रोमांच होता है और हाथ में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगी हुई पेन्सिल द्वारा उत्तर लिखे जाने लगते हैं । स्वयं ही प्रश्न करता है और आवेश आने पर स्वयं ही उत्तर लिख सकता है । ऐसी भी हो सकता है कि एक व्यक्ति प्रश्न पूछे और दूसरा आत्मा के आवेश में उत्तर लिखता रहे ।

साधारणतः इन्हीं तीन तरीकों से प्रेतात्माओं का आवाहन किया जाता है । आत्माओं का फोटो खींचना, प्रत्यक्ष दर्शन करना, ट्रान्स द्वारा बोली सुनना, स्पर्श करना आदि पद्धतियाँ भी प्रचलित हुई हैं पर वे अपने देश में अभी उतनी प्रचलित नहीं हैं । तीन तरीके ही यहाँ प्रचलित हैं । यह प्रेतात्मावाद भी मैस्मेरिज्म के अन्तर्गत शामिल समझा जाता है, इसलिए इस पर भी इन पंक्तियों में कुछ प्रकाश डालना पड़ा है ।

सम्भव है कोई विशेष अनुभवी महानुभाव वास्तविक प्रेतों को बुलाने में समर्थ होते हों, पर आमतौर से ऐसा नहीं होता । अधिकांश प्रयोगों में मानसिक आवेश ही काम करता है । ध्यान, एकाग्रता और विश्वास पूर्वक चिन्तन करने से एक आवेश पैदा हो जाता है और इस मानसिक आवेश का प्रभाव शरीर पर भी पड़ता है तदनुसार मेज, प्लेनचिट तथा पेन्सिल की हरकतें होने लगती हैं । जो उत्तर प्राप्त होते हैं वे प्रयोग करने वालों के मस्तिष्क में उत्पन्न हुए होते हैं । जैसे 'हाजरात' में बालक को भंगी, भिश्ती, देवता दिखाई पड़ते हैं वैसे ही प्रेतात्माओं के आवेश में उत्तर लिखे जाते हैं । बाहरी रूपरेखा दो हैं पर सिद्धान्त एक ही है । प्रेतात्मा आवाहन विधि की कलई तब खुल जाती है जब भुलावे में डालने वाले परीक्षा दृष्टि से प्रश्न पूछे जाते हैं । जिन्दे आदमियों की आत्माएँ भी आती हैं, बिलकुल झूठे उत्तर देती हैं, जिन्हें देख कर यही मानना पड़ता है कि यह उत्तर प्रयोग करने वाले के मस्तिष्क में उत्पन्न हुए हैं । श्री प्रियरत्न जी आर्य को बिजली, वायु आदि तत्वों को आदेश प्राप्त हुए हैं, उनके प्रयोगों में बिजली वायु आदि तक ने उत्तर दिए हैं ।

सम्मोहन

एक लाइन में कई सीधे स्वभाव के आदमी खड़े कर लीजिए । इनमें कौन व्यक्ति आपके तमाशे के लिए उपयुक्त हो सकता है, इसका निर्णय इन विधियों से कीजिए ।

(१) अपने अंगूठे पर स्याही लगाकर बारी-बारी हर एक दो-दो मिनट दिखाइए और कहिए इसमें सोने का मन्दिर जिसे दिखाई पड़े हमें बता दे । जो यों कहें कि हमें 'सोने का मन्दिर' दिखाई पड़ता है समझिए कि यह प्रयोग के योग्य हैं ।

(२) लाइन में खड़े हुए व्यक्तियों के सामने तीन फीट के फासले पर अपने हाथ का पंजा खोल दीजिए और कहिए मेरी इस हाथ की आकर्षण शक्ति से आपस में कई लोगों के सिर नीचे झुक जायेंगे । ऐसा कह कर पंजे को इस प्रकार पीछे खींचिए मानो पंजे में पकड़ कर उन लोगों को खींच रहे हैं । इस प्रकार दस-पाँच बार कीजिए, जिनके सिर झुक जायें उन्हें अपने प्रयोग के योग्य समझिए ।

(३) साधारण पानी एक गिलास मे लेकर उस पर तीन बार हाथ फिरावें और फिर उसमें से एक-एक चम्मच सबको पीने के लिए दीजिए और कहिए यह अभिमन्त्रित जल जिसको जरा मीठा मालूम पड़े वह बता दे । इन लोगों में से जो कहे कि जल हमें मीठा लगा उन्हें प्रयोग के लिए ठीक समझिए ।

जो व्यक्ति प्रयोग के योग्य ठहरें उनमें से सबसे श्रद्धालु और सीधा एक व्यक्ति चुन लीजिए । इसे साधारण कुर्सी पर बिठा लीजिए । आप उसके सामने खड़े होकर सिर से छाती तक दस-बारह मार्जन कीजिए और सुनिश्चित स्वर में आदेश दीजिए कि अब तुम पूर्णरूप से हमारे आज्ञानुवर्ती हो गए हो । जो हम कहेंगे, जैसा हम चाहेंगे उसी के अनुसार तुम्हारी सारी क्रियाएँ होंगी, हमने मेस्मेरिज्म का प्रयोग करके तुम्हें पूर्णरूप से अपने वश में कर लिया है । यह शब्द कह कर तीन मिनट एकटक दृष्टि से उसके चेहरे को घूरते रहिए और देखते रहिए कि उसके चेहरे के भाव आज्ञानुवर्ती जैसे हो गए या नहीं, यदि न हुए हों तो एक दो बार यही आदेश फिर जरा दृढ़ शब्दों में दीजिए । जब पात्र का चेहरा ढीला पड़ जाय, आज्ञानुवर्ती झलकने लगे तब कहिए 'तुम्हारे हाथ भारी, बहुत ज्यादा भारी कर दिए गए हैं अब तुम उन्हें उठा न सकोगे । कितना ही प्रयत्न करो तो भी तुम से उठेगा नहीं ।' व्यक्ति हाथ उठाने की कोशिश करेगा पर उठा न सकेगा । जब आप कहेंगे हमने हाथ हल्के कर दिए तब वह हाथ उठा लेगा । जब आप कहेंगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बड़ी सर्दी पड़ रही है तो वह जाड़े के मारे काँपने लगेगा, गर्मी लगने का आदेश करेंगे तो गर्मी से बेचैन हो जायेगा, कपड़े उतारेगा और पंखा झलेगा, मिट्टी का टुकड़ा देकर उसे मीठा बतायेंगे तो मिठाई की तरह रुचिपूर्वक खाने लगेगा । मिठाई को कडुवी बतायेंगे तो उसे चखते ही थूक देगा ।

हिप्नोटिज्म के तीन खेलों का यहाँ उल्लेख किया गया है । यह कौतुक मात्र हैं । इनसे किसी का कुछ लाभ नहीं । उपरोक्त तीनों खेलों के अलावा मनः शक्ति के और भी अनेक कौतुक हैं तथा हो सकते हैं । हम अपने पाठकों से इन खेल तमाशों में अपनी और दूसरों की शक्ति बर्बाद करने को मना करते हैं । इसमें कौतुक के अलावा कुछ लाभ नहीं, हानि दोनों की है । हाँ इनसे एक मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त जरूर साबित होता है । वह यह कि विश्वास में प्रबल शक्ति है । जो जैसा विश्वास करता है उसे बाहरी वस्तु वैसी ही दिखाई पड़ती है । 'हर मनुष्य अपनी दुनियाँ आप बनाता है ।' इस उक्ति का प्रमाण हिप्नोटिज्म के खेलों से पाया जा सकता है और यह शिक्षा ग्रहण की जा सकती है कि हम संसार को जैसा देखना चाहते हैं । अपने विश्वासों को सुई साँचे में ढालें ।

नकली मेस्मेरिज्म

आपने देखा होगा कि बाजीगर लोग एक लड़के को पास देकर बेहोश करते है, उसे कपड़े से ढक देते हैं, ऊपर से उसकी छाती पर एक ताबीज रख देते हैं । लड़के की आँखों से पट्टी बाँध दी जाती है । बाजीगर कोई सवाल पूछता है लड़का उसका उत्तर देता है । इस खेल को देख कर लोग बड़े अचम्भे में रह जाते हैं । इसे ताबीज की करामात समझते हैं बाजीगर के ताबीज धड़ाधड़ बिकने लगते हैं । पैसों का ढेर लग जाता है ।

रहस्य यह है कि बाजीगर अपने ही लड़के को बेहोश करके प्रश्न पूछता है । वह लड़का पहले से सिखाया पढ़ाया होता है । अगर आप अपना लड़का पेश करें कि इसे बेहोश करके प्रश्न पूछो तो उनकी सारी कलई खुल सकती है । तमाशा करने वाला कुछ प्रश्न और उत्तर पहले से ही निश्चित करता है और उसे लड़के को भली भाँति कण्ठस्थ करा देता है । प्रश्नों को पूछने से रटे हुए उत्तर मिलते हैं ।

परकाया-प्रवेश : एक सत्य घटना

सन् १९३९ की घटना है एक दिन पश्चिमी कमान के सैनिक कमाण्डेन्ट श्री एल. पी. फैरेल अपने सहायक अधिकारियों के साथ एक युद्ध सम्बन्धी योजना तैयार कर रहे थे । यह स्थान जहाँ पर उनका कैम्प लगा हुआ था, आसाम-बर्मा की सीमा पर था । वहीं पास में एक नदी बहती थी । नदी के पास ही यह मन्त्रणा चल रही थी ।

एकाएक कुछ अधिकारियों का ध्यान नदी की ओर चला गया । श्री फैरेल ने भी उधर देखा तो उनकी भी दृष्टि अटक कर रह गई । टेलेस्कोप उठाकर देखा एक महा जीर्ण-शीर्ण शरीर का वृद्ध संन्यासी पानी में घुसा एक शव को बाहर खींच रहा है । कमजोर शरीर होने से शव ढोने में अड़चन हो रही थी । हाँफता जाता था और खींचता भी । बड़ी कठिनाई से शव किनारे आ पाया ।

श्री एल. पी. फैरेल यद्यपि अंग्रेज थे पर अपनी बाल्यावस्था से ही आध्यात्मिक विषयों में रुचि उन्होंने प्रगाढ़ कर ली थी । भारतवर्ष में एक उच्च सैनिक अफसर नियुक्त होने के बाद तो उनके जीवन में एक नया मोड़ आया । भारतीय तत्व-दर्शन का उन्होंने गहरा अध्ययन ही नहीं किया, जिसकी भी जानकारी मिली, वह सिद्ध महात्माओं के पास जा-जाकर अपनी जिज्ञासाओं का समाधान भी करते रहे । धीरे-धीरे उनका परलोक, पुनर्जन्म, कर्मफल और आत्मा की अमरता पर विश्वास हो चला था । यह घटना तो उनके जीवन में अप्रत्याशित ही थी । और उसने उनके उक्त विश्वास को निष्ठा में बदल दिया । श्री फैरेल एक अंग्रेज ऑफीसर के रूप में भारत आये थे पर जब वे यहाँ से लौटे तब उनकी आत्मा में शुद्ध हिन्दू संस्कार स्थान ले चुके थे ।

एक वृद्ध शव क्यों खींच रहा है ? इस रहस्य को जानने की जिज्ञासा स्वाभाविक ही थी । योजना तो वहीं रखी रह गई, सब लोग एकटक देखने लगे कि वृद्ध संन्यासी इस शव का क्या करता है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वृद्ध शव को खींचकर एक वृक्ष की आड़ में ले गया । फिर थोड़ी देर तक सन्नाटा छाया रहा, कुछ पता नहीं चला कि वह क्या कर रहा है । कोई १५-२० मिनट पीछे ही दिखाई दिया कि वह युवक जो अभी शव के रूप में नदी में बहता चला आ रहा था, उन्हीं गीले कपड़ों को पहने बाहर निकल आया और कपड़े उतारने लगा । सम्भवतः वह उन्हें सुखाना चाहता होगा ।

मृत व्यक्ति का एकाएक जीवित हो जाना एक महान् आश्चर्यजनक घटना थी और एक बड़ा भारी रहस्य भी जो श्री फैरेल के मन में कौतूहल भी उत्पन्न कर रहा था, आशंका भी । उन्होंने कुछ सैनिकों को आदेश दिया—सशस्त्र सिपाहियों ने जाकर युवक को घेर लिया जाय और उसे बन्दी बनाकर श्री फैरेल के पास ले आये ।

युवक के वहाँ आते ही श्री फैरेल ने प्रश्न किया—"वह वृद्ध कहाँ है ?" इस पर युवक हँसा जैसे इस गिरफ्तारी आदि का उसके मन पर कोई प्रभाव ही न पड़ा हो और फिर बोला—"वह वृद्ध मैं ही हूँ ।"

लेकिन अभी कुछ देर पहले तो तुम शव थे, पानी में बह रहे थे, एक बुड्ढा तुम्हें पानी में से खींचकर किनारे पर ले गया था । फिर तुम प्रकट हो गए, यह रहस्य क्या है, यदि तुम्हीं वह वृद्ध हो तो उस वृद्ध का शरीर कहाँ है ?" आश्चर्यचकित फैरेल ने एक साथ ही इतने प्रश्न पूछ डाले, जिनका एकाएक उत्तर देना असम्भव-सा था ।

युवक ने सन्तोष के साथ बताया—"हम योगी हैं, हमारा स्थूल शरीर वृद्ध हो गया था, काम नहीं देता था, अभी इस पृथ्वी पर रहने की हमारी आकांक्षा तृप्त नहीं हुई थी । किसी को मारकर बलात् शरीर में प्रवेश करना तो पाप होता इसलिए बहुत दिन से इस प्रतीक्षा में था कि कोई अच्छा शव मिले तो उसमें अपना यह पुराना चोला बदल लें । सौभाग्य से यह इच्छा आज पूरी हुई । मैं ही वह वृद्ध हूँ, यह शरीर उस युवक का था, अब मेरा है ।"

इस पर फैरेल ने प्रश्न किया—तब फिर तुम्हारा पहला शरीर कहाँ है ?

संकेत से उस युवक शरीर में प्रवेशधारी संन्यासी ने बताया—वह वहाँ पेड़ के पीछे अब मृत अवस्था में पड़ा है । अपना प्राण शरीर खींचकर उसे इस शरीर में धारण कर लेने के बाद उसकी कोई उपयोगिता नहीं रही । थोड़ी देर में उसका अग्नि संस्कार कर देते, पर अभी तो इस शरीर के कपड़े भी नहीं सूख पाये थे कि आपके इन सैनिकों ने हमें बन्दी बना लिया ।

श्री फैरेल ने इसके बाद उन संन्यासी से बहुत सारी बातें हिन्दू-दर्शन के बारे में पूछीं और बहुत प्रभावित हुए । वह यह भी जानना चाहते थे कि स्थूल शरीर के अणु-अणु में व्याप्त प्रकाश शरीर का अणुओं को किस प्रकार समेटा जा सकता है, किस प्रकार शरीर से बाहर निकाला और दूसरे शरीर में अथवा मुक्त आकाश में रखा जा सकता है ? पर यह सब कष्ट साध्य योग साधनाओं से पूरी होने वाली योजनाएँ थी, उसके लिए श्री फैरेल के पास न तो पर्याप्त साहस ही था और न ही समय पर उन्होंने अवश्य स्वीकार कर लिया कि सूक्ष्म अन्तर्चेतना से सम्बन्धित भारतीय तत्व-दर्शन कोई गल्प या कल्पना मात्र नहीं, वह वैज्ञानिक तथ्य हैं, जिनकी ओर आज यूरोपीय वैज्ञानिक बढ़ रहे हैं ।

कोश (सेल) स्थिति नाभिक (न्यूक्लियस) में, जिसमें जीवित चेतना के सूक्ष्मतम संस्कार माला के मनकों की तरह पिरोये हैं, स्वतन्त्र कोश में शरीर निर्माण की क्षमता है, अमीबा के अध्ययन से यह स्पष्ट हो गया है । पर वैज्ञानिक अभी यह स्वीकार नहीं करते कि न्यूक्लियस स्वतन्त्र अवस्था में भी रह सकता है । उस सिद्धान्त की पुष्टि भारतीय दर्शन का यह परकाया प्रवेश सिद्धान्त करेगा । भूत-प्रेत की कल्पना को भले ही लोग एकाएक स्वीकार न करें पर श्री फैरेल के उक्त संस्मरण को धोखा नहीं कहा जा सकता । वे एक जिम्मेदार व्यक्ति थे और यह घटना उन्होंने स्वयं ही १७ मई १९५९ के साप्ताहिक हिन्दुस्तान में उद्धृत की थी ।

एक अन्य घटना एक ऐसे व्यक्ति से सम्बन्धित है जिसको "तीसरी आँख" (आज्ञा चक्र) प्राप्त थी । तृतीय नेत्र शल्य—क्रिया (आपरेशन) से खुला था । पहला शरीर जीर्ण-शीर्ण हो जाने पर उसने एक मृत अमेरिकन के शरीर में प्रवेश कर सारे अमरीका के कथाकथित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विज्ञानवादियों के सम्मुख एक प्रश्न उपस्थित कर दिया कि स्थूल शरीर से भी भिन्न सूक्ष्म शरीर की कल्पना भ्रम या अन्ध-विश्वास नहीं है । प्राप्त विवरण इस बात के प्रमाण हैं कि शरीर नष्ट हो जाने पर सूक्ष्म शरीर का अस्तित्व चिरकाल तक बना रहता है ।

सन् १९०९ में तिब्बत के एक धर्मनिष्ठ परिवार में एक बच्चे ने जन्म लिया । १९२६ तक ल्हासा विभिन्न विषयों का अध्ययन करने के बाद इस बालक ने चीन की यात्रा की और वहाँ के मेडिकल कॉलेज से सर्जन की डिग्री प्राप्त कर ली । डाक्टर बनने के बावजूद युवक की रुचि सदैव हवा में उड़ने की हुआ करती तो उसने वायु सेवा में कमीशन प्राप्त करने का प्रयास किया—उसमें सफलता भी मिली और वह "फ्लाइंग डॉक्टर" बन भी गया । १९३७ के युद्ध में वह जापान द्वारा बन्दी बना लिया गया । बन्दी जीवन में उसने भरपूर यातनायें झेलीं पर निराश होता तो उसने सीखा ही नहीं था—एक दिन चुपचाप जापानियों की कैद से निकल भागा और यहीं से इस युवक के एक विचित्र जीवन की शुरूआत हो गई ।

अनेक यूरोपीय देशों का भ्रमण करने के बाद युवक पुनः तिब्बत लौट आया । सांसारिक यातनाओं से थके व्यक्ति को भगवान की याद आती है और तब वह अपने आप को एक नए आध्यात्मिक वातावरण में अनुभव करता है, इससे उसकी सूक्ष्म एवं अदृश्य अतिमानसिक शक्तियों का विकास होता है । स्वामी नारायणनन्द ने कुण्डलिनी शक्ति के जागरण की साधनाओं का उल्लेख करते हुए लिखा है कि यदि व्यक्ति किसी भी परिस्थिति में केवल सत्य बोलने का प्रण करले, गुरु में इतनी निष्ठा जम जाय कि वह अपना शरीर माँगे तो वह भी देते हुए हिचक न आये तो ऐसे व्यक्तियों की कुण्डलिनी शक्ति का अनायास जागरण हो जाता है । शक्ति संस्थान के जागरण के इन कारणों में अत्यधिक यातना से पीड़ित होना भी शामिल है सम्भवतः आध्यात्मवादी इसी कारण केवल दुःख की कामना करते हैं क्योंकि उससे आत्मा को ब्रह्म से जोड़ने वाली शक्ति रेखा का जागरण सम्भव हो जाता है । इस युवक के साथ प्रत्यक्षतः ऐसा ही हुआ । उसकी सुषुम्ना नाड़ी प्रायः दिनभर चलती रहती, जिससे उसमें आध्यात्मिक विचारों की एक न टूटने वाली धारा बहने लगी और इसी सतत् आध्यात्मिकता ने उसमें कठिन योग साधनाओं का साहस पैदा कर दिया ।

तिब्बत योग साधनाओं, सिद्धि चमत्कारों का गढ़ माना जाता है । तिब्बत के ज्योतिषी और योगी विश्व विख्यात हैं । यह युवक जब बच्चा ही था तब अनेक ज्योतिषियों ने इसके बारे में घोषणा की कि वह लामा—अवतार है, एक दिन प्रसिद्ध योगी बनेगा और पश्चिम में जाकर वहाँ ही छिन्न-भिन्न धार्मिक आस्थाओं को नया जीवन देगा और उन्हें पूर्वीय दर्शन की ओर मोड़ने में समर्थ होगा । तिब्बत लौटने पर जब उसने शक्ति जागरण की कठिन साधनायें प्रारम्भ कीं तभी उसके सम्बन्ध में की गईं भविष्यवाणियाँ सच होने लगीं । यह युवक और कोई नहीं सुप्रसिद्ध योगी और तीन्द्रिय दृष्टा श्री ट्यूजडे लोवसांग रम्पा हैं जो इन दिनों मान्ट्रियल में निवास करते हैं और जहाँ उनके अनुयायियों को संख्या हजारों तक है ।

शक्ति-साधनाओं के लिए जहाँ साधक का मनोबल आवश्यक होता है । वहाँ उसकी शारीरिक क्षमताओं का भी प्रौढ़ एवं परिपुष्ट होना भी आवश्यक है । आग के पास ठण्डे जल के अन्दर, तेज हवा के प्रवाह में अथवा जमीन के अन्दर गड़कर शरीर एक निश्चित बर्दाश्त की सीमा तक ही स्थिर रह सकता है फिर यदि शक्तियाँ शरीर के अन्दर जाग्रत हो रही हों—और उन्हें सीखने के लिए शरीर के सूक्ष्म कोश तैयार न हों तो वह महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ अपने लिए ही घातक बन जाती हैं इसीलिए रोगी शरीर के लिए योग साधनाएँ निषिद्ध हैं । साधना के क्रम में यही अड़चन श्री रम्पा के सम्मुख भी आयी । उनके साधना गुरु ने स्पष्ट कह दिया कि अब आपका शरीर उच्च स्तरीय योग साधनाओं के उपयुक्त नहीं रहा ।

प्राणयाम के विभिन्न प्रकार के अभ्यास द्वारा श्री रम्पा अब तक प्राणों पर नियन्त्रण करना सीख चुके थे । ठीक उसी समय उनके लामा गुरु ने उनकी तीसरी आँख का आपरेशन किया मस्तिष्क के अग्रभाग में जहाँ दो हड्डियाँ मिलकर आष्टिक जैसा बनाती हैं उसके ठीक सामने दोनों भौंहों के मध्य एक विशेष प्रकार का द्विदल चक्र होता है इसके जाग जाने पर योगी संसार के किसी भी भू भाग की हलचल को ऐसे ही देख, सुन सकता है जैसे वह किसी सिनेमा के पर्दे पर चित्र देख रहा हो । लामा मिंग्यार डोंडुप की कृपा से प्राप्त इस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिव्य दृष्टि से उन्हें टूटे-फूटे शरीर द्वारा शक्तियों को धारण किए रहने की कठिनाई से दूर कर दिया । वे अपने भौतिक शरीर से निकल कर सूक्ष्म जगत में विचरण करने और अतीन्द्रिय ज्ञान अर्जित करने में निष्णात हो गए । अपनी इन दिव्य शक्तियों का वैज्ञानिक विश्लेषण उन्होंने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक—"तीसरी आँख" (Third Eye) और "अमर आत्मा" (You Forever) में विस्तार से किया है । दोनों पुस्तकें कोर्गी बुक्स, ट्रांसवर्ल्ड पब्लिशर्स लिमिटेड, बैशले रोड, लन्दन एन डब्लू ६०—ने प्रकाशित की हैं—कोर्गी बुक्स ने इनकी कुल मिलाकर १० पुस्तकें छापी हैं, जिनकी कई लाख प्रतियाँ सारे संसार में प्रसारित हो चुकी हैं ।

एक दिन की बात है श्री लोबसांग रम्पा अपने सूक्ष्म शरीर से आकाश में परिभ्रमण कर रहे थे । इंग्लैण्ड के टेक्स डिटन नगर का एक अंग्रेज कलाकार उस दिन एक पेड़ की डाल पर बैठा कागज पर सीनरी उतार रहा था । उसका नाम था "साइरिल होस्किंस" होस्किंस बेखबर चित्र बना रहा था तभी पेड़ की शाखा फट गई और वह धड़ाम से नीचे जमीन पर जा गिरा । जमीन पर गिरते ही उसके प्राण-पखेरू शरीर छोड़कर चलते बने । हृदय में आकस्मिक धक्का लगने से प्राणों से क्षुब्ध होकर अपना स्थान छोड़ अवश्य दिया पर होस्किंस के शरीर में कोई विशेष खराबी नहीं आयी । योगी लोबसांग रम्पा ने इस स्थिति का लाभ उठाया । योग-बल से अपने जीर्ण-शीर्ण शरीर से उन्होंने प्राणों को निकाल लिया और उन्हें होस्किंस के शरीर में प्रवेश करा दिया । ६ घण्टे के बाद "होस्किंस" का शव फिर हिलने-डुलने लगा जबकि पहले के, लोबसाँग रम्पा का शरीर ठण्डा पड़ गया । कुछ समय बाद उसकी दाह क्रिया कर दी गई ।

होस्किंस के मृतक शरीर में जीवन का एकाएक संचार हो जाने से घर वाले विस्मित रह गए । मुहल्ले वाले बहुत घबड़ाये पर जब उस शरीर वाले मुख ने अपने आपको होस्किंस के स्थान पर लोबसांग रम्पा बताना प्रारम्भ कर दिया तो लोगों का भय गहरे कौतूहल में बदल गया । कुछ दिन तक तो लोगों का अनुमान यह बना रहा कि होस्किंस चोट खाकर मरने के बाद जिया है । इसी से उसका मस्तिष्क विकृत हो गया है पर जब रम्पा ने अपने विगत जीवन का शृंखलाबद्ध इतिहास बताना शुरू किया और खोज करने पर न केवल पिछली बातें सच पायी गईं वरन् उसका पिछला शव भी मिल गया तो लोगों का अविश्वास विश्वास में बदलने लगा । इसका एक कारण और भी था वह श्री लोबसांग रम्पा का "तृतीय नेत्र" । अपने सूक्ष्म ज्ञान द्वारा जब उन्होंने कितने ही लोगों का भविष्य अक्षरशः सत्य पढ़ दिया तो लोगों को विश्वास हो गया कि प्राण-परिवर्तन और शरीर में दिव्य यौगिक शक्तियों जैसी मान्यताओं का कुछ न कुछ वैज्ञानिक आधार है ही भले ही विज्ञान अभी तक उन बारीकियों तक पहुँच न पाया हो । विज्ञान की खोजों का जो क्रम चल रहा है वह भी उसकी अपूर्णता और अज्ञात में छिपे किसी न किसी रहस्य का ही प्रतिपादन करता है प्राण विद्या और आत्म-विद्या के यह रहस्य ही मानव-जीवन को सही दिशाएँ दे पाते हैं इसी कारण भारतीय तत्व वेत्ताओं ने जितना जोर तत्व दर्शन पर दिया उतना भौतिकवाद पर नहीं । अब श्री रम्पा अतीन्द्रिय विज्ञान पर शोध कर अपने अनुभवों से जिज्ञासुओं को लाभान्वित कर रहे हैं ।

परकाया प्रवेश एक विद्या एक विज्ञान

आद्य शंकराचार्य ने एक शास्त्रार्थ प्रयोजन में काम-शास्त्र का अनुभव प्राप्त करने के लिए अपने शरीर में से आत्मा को निकाल कर मृत सुधन्वा के शरीर में प्रवेश किया था । परकाया प्रवेश की इस प्रक्रिया का उद्देश्य पूरा होने पर वे पुनः अपने शरीर में वापिस लौट आये थे ।

रामकृष्ण परमहंस ने अपनी आत्मा को विवेकानन्द में प्रवेश कर दिया था । परमहंस जी के स्वर्गवास के अवसर पर विवेकानन्द को भान हुआ कि कोई दिव्य-प्रकाश उनके शरीर में घुस पड़ा और उनकी नस-नस में नई शक्ति भर गई ।

शंकराचार्य के उदाहरण से मृत शरीर पर किसी अन्य जीवात्मा का अधिपत्य हो सकने की बात प्रकाश में आती है और परमहंस जी के परकाया प्रवेश से जीवित मनुष्य में किसी समर्थ व्यक्तित्व के प्रवेश कर जाने का लक्ष्य सामने आता है । परकाया प्रवेश की आध्यात्म सिद्धियों के संदर्भ में चर्चा होती रही है । यह आंशिक समान रूप से पारस्परिक विनियोग की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह सम्भव है । शक्ति-पात दीक्षा में गुरु अपना एक अंश शिष्य के व्यक्तित्व में हस्तान्तरित करता है ।

आत्मा स्वामी है और शरीर सेवक । आत्मा यात्री है और शरीर वाहन । स्वामी की अपनी दुर्बलताएँ ही सेवक के श्रम सहयोग से वंचित रह सकती हैं । स्वेच्छाचार बरतने वाले सेवकों को देखकर यही अनुमान लगाया जा सकता है कि स्वामी को अपने पद का ध्यान नहीं रहा । वाहन रहते हुए भी यदि सवार को पैदल चलना पड़े तो समझना चाहिए कि उसे अपने साधन के उपभोग की समुचित जानकारी नहीं है ।

अपने शरीर पर आत्मा का अधिपत्य होता ही है, यदि उसकी सामर्थ्य सबल है तो वह दूसरों के शरीर का भी अपने लिए उपयोग कर सकता है । ऐसा जीवित अवस्था में भी हो सकता है और प्रेतात्माएँ भी वैसा कर सकती हैं ।

दो अमरीकी प्रोफेसरों ने मिल कर एक किताब लिखी है, "बीसवीं सदी में, अचेतन मनोविज्ञान की खोज ।" इसमें आत्मा की स्वतन्त्र सत्ता तथा पुनर्जन्म को सिद्ध करने वाले अनेकों प्रमाण दिए गए हैं । इसी पुस्तक में परकाया प्रवेश सम्बन्धी कई घटनाओं—तथ्यों का संकलन किया गया है । उनमें से कुछ ये हैं—

एक बर्तन विक्रेता घर से टहलने निकला और गायब हो गया । जाकर मशीनों की मरम्मत का काम करने लगा दो वर्ष बाद सहसा घर की सुधि आयी । जैसी गहरी नींद टूटी हो । घर वापस पहुँचा । पता चला, मशीनों की मरम्मत का वही काम एक अन्य व्यक्ति करता था जो कुछ ही समय पहले मरा था । बर्तन विक्रेता दो वर्ष तक उसी व्यक्ति की तरह काम करता रहा । वहाँ सभी कर्मचारियों के नाम, व्यवहार, सराय, होटल उसे याद थे । घर लौटकर धीरे-धीरे आते वह सब भूल गया और पूर्ववत् अपना पुराना कसेरे का धन्धा करने लगा । डॉ. आसबन ने इस घटना को विस्तार से प्रकाशित किया । अनुमान यह किया गया कि मशीनों की मरम्मत करने वाले व्यक्ति की आत्मा ने कसेरे की आत्मा को दो वर्ष तक अपने कब्जे में रखा । जब वह आत्मा कब्जा छोड़कर चली गई, तो पुरानी आत्मा अपनी स्वतन्त्र सत्ता का परिचय पुनः दे सकी । इस बीच वह दबी रही ।

कभी-कभी ऐसे घटनाक्रम भी प्रकाश में आते हैं कि किसी मृतात्मा ने किसी दूसरे जीवित मनुष्य के शरीर पर अधिपत्य जमा लिया और उसका उपयोग मनमर्जी से करती रही । भूत-प्रेतों के आवेश की चर्चा झाड़-फूँक के क्षेत्र में आये दिन होती रहती है । उनमें अधिकतर तो मानसिक दुर्बला, मूढ़ मान्यता, अर्ध उन्मुक्त की मनःस्थिति, झूठ-मूठ का नाटक एवं सम्बद्ध व्यक्तियों द्वारा छोड़ी गई छाप ही प्रमुख कारण होती है, फिर भी ऐसे तत्वों की कमी नहीं जिनमें मृतात्माओं के अन्य शरीर पर अधिकार जमा लेने की बात सिद्ध होती है । इस प्रकार के अधिकार प्रायः अस्थायी होते हैं । आत्माएँ अपना उद्देश्य पूरा करके उस अधिपत्य को अनायास ही छोड़कर चली जाती है अथवा उदासीन हो जाती हैं ।

किन्हीं विशिष्ट आत्माओं ने दूसरों के शरीर में प्रवेश करके उनसे कुछ विशिष्ट काम कराए ऐसी घटनाएँ संसार के अनेक भागों में घटित होती रही हैं ।

विश्व विख्यात कलाकार गोया की आत्मा ने अमेरिका की एक विधवा हैनरोट के शरीर में प्रवेश करके उसके द्वारा गवालन नामक एक अद्‌भुत कलाकृति का सृजन कराया था । यह समाचार उन दिनों अमेरिका में अनेक पत्रों में प्रकाशित हुआ था ।

रोड्स नगर के एक नागरिक ऐसेलवर्न बैंक से दस हजार का चैक भुनाकर निकले और सहसा गायब हो गए । घर वाले ढूँढ़-ढूँढ़ कर थक गए । ऐसेलवर्न सैकड़ों मील दूर एक नगर में जाकर वहाँ चीनी का व्यापार करने लगा । नाम बताता अपना—ए. से. ब्राउन । उसने पहले यह व्यापार कभी भी नहीं किया था । अब एक निष्णात व्यापारी की तरह काम कर रहा था । दो माह बाद जैसे स्वप्न टूटा । वह चौंका । यह चीनी का व्यापार मैंने तो कभी नहीं किया और मेरा घर भी यहाँ नहीं । वह भागा और पुराने घर जा पहुँचा । इस घटना का भी निष्कर्ष यही निकाला कि किसी मृत व्यापारी की आत्मा ने उसे वशवर्ती कर लिया था ।

१८६४ में डॉक्टर डामा के पास एक सुशिक्षित बेहोश रोगी आया । वह चंगा हो गया । पर शिशुवत् आचरण व चिन्तन करने लगा । पढ़ना-लिखना भूल चुका था । कई महीनों तक यही दशा रही । फिर उसे जैसे कुछ याद आया और वह पुनः प्रौढ़ व्यक्तित्व का स्वामी बन गया ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बोस्टन के डा. नार्टन प्रिंस के पास आयी एक महिला की भी कुछ यही स्थिति थी । वह प्रतिदिन कुछ घन्टे तक अन्य ही व्यक्तित्व बन जाती । व्यवहार, क्रिया-कलाप, उच्चारण, सब भिन्न । वह एक स्वस्थ पुरुष जैसा आचरण करती । अपना नाम भी किसी पुरुष का नाम बताती । फिर अपने महिला व्यक्तित्व में लौट आती ।

१५ अप्रैल १८९७ को एक पादरी मोटर दुर्घटनाग्रस्त हो गए । बेहोशी में अस्पताल ले जाय गए । होश आया तो एक छोटे बालक का ही आचरण करने लगे । पिछला नाम, पता, व्यवसाय सब भूल गए । शिक्षा भी भूल गए । पहले वे यहूदी भाषा नहीं जानते थे । शिशु रूप में अब यहूदी बोलते परेशान होकर डॉक्टरों ने उन्हें लन्दन से न्यूयार्क भेजा । वहाँ चिकित्सा चली । धीरे-धीरे सुधार हुआ । लम्बे समय तक कभी बालक व्यक्तित्व मुखर रहता, कभी पादरी—व्यक्तित्व । अरसे बाद अन्ततः वे असली व्यक्तित्व में लौट सके ।

मृतात्माएँ दूसरों के शरीर पर किस स्थिति में ? किन पर ? और किसलिए अधिपत्य स्थापित करती हैं इसका सही उत्तर दे सकना तो आज की स्थिति में कठिन है, पर अनुमान यह लगाया जा सकता है कि कोई मनस्वी आत्मा अपने से दुर्बल पड़ने वाले व्यक्तित्वों पर छा जाने में अधिक सफल होता है । पूर्व परिचय एवं स्नेह-सौहार्द भी एक कारण हो सकता है । अतृप्त आत्माएँ सांसारिक जीवन का आनन्द लेना चाहती हैं, अथवा अपनी अभिलाषाएँ पूरी करने के लिए आतुर होती हैं । यह इन्द्रिय क्षमता से युक्त स्थूल शरीर से ही सम्भव है । सूक्ष्म शरीर मानसिक अनुभूतियाँ ले सकता है, पर स्थूल इन्द्रियों के अभाव से भौतिक वस्तुओं का उपभोग उसके लिए शक्य नहीं होता । अस्तु इस प्रयोजन के लिए वे दूसरों के शरीरों पर अधिपत्य जमाते हैं और अपना मनोरथ पूरा करते हैं । इसके अतिरिक्त अन्य कारण भी हो सकते हैं ।

यह अधिपत्य थोड़े समय के लिए आवेश, उन्माद स्तर का भी हो सकता है और उसका एक रूप में भी सम्भव है कि शरीर का असली स्वामी जीवात्मा मूर्छित अवस्था में जा पड़े और उस शरीर का उपयोग कोई अधिकार जगाने वाली सत्ता मन चाहे ढंग से करती रहे ।

हावर्ड विश्वविद्यालय के डॉक्टर आसवन ने अपनी मनोवैज्ञानिक खोजों में कई सच्ची घटनाओं का उल्लेख दिया है, जो किसी व्यक्ति में किसी अन्य आत्मा का प्रवेश हो जाना सम्भव बताती हैं । उन्होंने एक कारीगर का उदाहरण प्रस्तुत किया है । एक दिन अनायास ही वह अपने औजार फेंक कर चिल्लाया कि मैं यहाँ कैसे आ गया और यह बेकार काम कैसे करने लगा ? सही यह है कि दो वर्षों से उसने अपना असली घर छोड़ दिया था । किसी आत्मा के प्रभाव में आकर ही उसने घर छोड़ा और वह काम करने लगा जिसका उसे अभ्यास नहीं था । जब तक वह उस आत्मा के प्रभाव में रहा तब तक वह अपना नाम व असली घर भूला हुआ था ।

सम्मोहन विद्या एक प्रकार से परकाया प्रवेश का दूसरा रूप है । प्रयोक्ता अपने प्रचण्ड मनोबल का प्रहार करता है, और जिस पर प्रयोग किया गया है उसके बाह्य मस्तिष्क की चेतना को पीछे अन्तर्मन में धकेल देता है । यह अर्ध मूर्छित स्थिति हुई । सोचने समझने वाला मस्तिष्क निद्राग्रस्त हो गया और उसकी जगह प्रयोक्ता का मनोबल काम करने लगा । सारे मस्तिष्कीय तन्त्रों का उपयोग तब तक वही करता है जब तक कि उस बलात् निद्रा से मुक्ति नहीं मिल जाती । प्रयोक्ता को प्रहार और उपभोक्ता ही सहज स्वीकृति का समन्वय ही सम्मोहन की स्थिति उत्पन्न करता है । दोनों में से एक पक्ष भी दुर्बल न हो तो प्रयोग सफल न हो सकेगा ।

स्व-सम्मोहन का स्तर अधिक ऊँचा है उसमें प्रबल आत्म शक्ति के द्वारा ही अपने चेतन मस्तिष्क को अर्धतन्द्रा में धकेल दिया जाता है और अचेतन को सामान्य जीवन संचार की व्यवस्था जुटाते रहने के लिए सीमित कर दिया जाता है । इसे योगनिद्रा या समाधि कहते हैं । इससे अहिनिर्शि श्रम संलग्न रहने वाले बाह्य मस्तिष्क की कृत्रिम शक्ति के साथ ही दिव्य निद्रा का आनन्द मिलता है । इस विश्रान्ति के उपरान्त एक नई स्फूर्ति का लाभ मिलता है । साथ ही चेतना को अनावश्यक परतों को—दुर्बल एवं आवश्यक परतों को सबल बनाने का अवसर मिलता है, योगी लोग आत्मोत्कर्ष के अनान्य उच्चस्तरीय लाभ भी इस योग-निद्रा द्वारा प्राप्त करते हैं । सामान्यतया प्रचलित स्व-सम्मोहन भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना मनोबल बढ़ाने, बुरी आदतें छुड़ाने एवं उपयोगी निष्ठाएँ जमाने के लिए बहुत उपयोगी सिद्ध हो रहा है ।

स्व-सम्मोहन कठिन है । आत्मबल को प्रखर बनाने के उपरान्त ही उसमें इतनी क्षमता उत्पन्न होती है कि जाग्रत मस्तिष्क को शिथिल बना सके और उस स्थिति का लाभ लेकर अनावश्यक को हटाने एवं आवश्यक को जमाने का कार्य पूरा कर सके । आमतौर से जाग्रत मस्तिष्क ही सबल होता है, और वह अपनी सर्वोपरि सत्ता को चुनौती दी जाना स्वीकार करता । तर्क और सन्देह के आधार पर वह अपने ऊपर होने वाले आक्रमण को पूरी शक्ति के साथ रोकता है । फलतः स्व-सम्मोहन की अभीष्ट गहराई उत्पन्न होने से भारी कठिनाई उत्पन्न होती है । इतने पर भी शान्त चित्त से, श्रद्धापूर्वक किन्हीं विचारों को बार-बार दुहराने से भी कुछ तो प्रभाव पड़ता ही है और उपयोगी मानसिक परिवर्तन के लिए प्रयासों से कुछ तो सफलताएँ मिलती ही हैं । यह कुछ-कुछ भी बूँद-बूँद करके घड़ा भरने की उक्ति के अनुरूप लाभदायक ही सिद्ध होता है ।

"कान्शस ओटोसजैशन" ग्रन्थ में फ्रांस के मनोविज्ञान विशारद प्रो. इमाइल कू ने अनेक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए बताया है कि किस प्रकार इच्छा शक्ति का प्रयोग करके अपने आप में तथा दूसरों में असाधारण परिवर्तन किया जा सकता है । ये प्रयोग शारीरिक और मानसिक रुग्णता को दूर करने में भी बहुत प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं ।

स्व-सम्मोहन आत्म साधना है, सम्मोहन वैज्ञानिक प्रयोग । मानसिक चिकित्सा जैसे महत्त्वपूर्ण कार्य एक व्यक्ति द्वारा दूसरे को अर्ध-मूर्च्छित करने की प्रक्रिया द्वारा ही सम्पन्न होता है । इस प्रकार उत्पन्न हुई योग निन्द्रा इतनी गहरी होती है कि उसमें छोटे बड़े आपरेशन भी आसानी से हो सकते हैं । पाश्चात्य देशों में यह विज्ञान अब बहुत आगे तक बढ़ गया है और दन्त चिकित्सक तो आमतौर से इस प्रक्रिया का उपयोग करके बिना सुन्न किए ही दाँत उखाड़ते रहते हैं, और रोगी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं होता ।

हिप्नोटिज्म का हिन्दी अनुवाद 'सम्मोहन' है । उसे सामान्यतः एक विशेष प्रकार की सुझाई हुई नींद 'नर्वस निन्द्रा' कहा जा सकता है । साधारण नींद में मनुष्य सुधि-बुधि खोकर अचेत हो जाता है । पर सम्मोहन निद्रा में मनुष्य का आधा सचेतन मस्तिष्क भर सोता है । उसके स्थान पर अचेतन अधिक सक्षम हो जाता है । और आदेश कर्त्ता के निर्देशों के प्रति पूर्ण सजगता का परिचय देता है इसे चेतना की सामान्य स्थिति का असामान्य प्रत्यावर्तन कहा जा सकता है । सक्रिय मस्तिष्क की सुषुप्ति और निष्क्रिय की जागृति इसे कहा जाय तो भी बात बनती नहीं है । क्योंकि सक्रिय की निद्रा वाली बात तो सही है, पर जिसे निष्क्रिय कहा जा रहा है वह अपने क्षेत्र में सक्रिय से अधिक सक्रिय रहता है और व्यक्तित्व के निर्माण में ज्ञानवान चेतना से भी कहीं अधिक बढ़ी-चढ़ी भूमिका का निर्वाह करता है ।

शरीर को सुन्न करने में सम्मोहन प्रयोग बहुत सफल हुए हैं । प्रथम महायुद्ध के दिनों रूसी डॉक्टर पोडियापोलेस्की ने ३० घायलों के शरीर बिना क्लोरोफार्म के ही सुन्न करके दिखाए थे और उनके पीड़ा रहित आपरेशन सम्पन्न किए थे । ब्रिटिश डॉक्टर एस्टल ने इस प्रयोग के आधार पर लगभग २०० आपरेशन सम्पन्न किए थे । यूरोप के अनेक देशों में दन्त चिकित्सक बिना कष्ट दाँत उखाड़ने में इस पद्धति का प्रयोग करते हैं । दन्त ही में नहीं बल्कि प्रसव के लिए भी प्रसूति ग्रहों में यह प्रक्रिया बहुत उपयोगी सिद्ध हो रही है । अमेरिका की मेडीकल ऐसोसिएशन ने चिकिसा विज्ञान के एक प्रामाणिक पद्धति के रूप में सम्मोहन को सन् १९५८ से ही मान्यता दे रखी है । इसी प्रकार 'ब्रिटिश एण्ड अमेरिकन मेडीकल एसोसिएशन ने भी उसे उपयोगी चिकित्सा विधि के रूप में प्रामाणिकता प्रदान की है ।

'सम्मोहन किसी समय जादुई करिश्मा समझा जाता था और उसके समर्थकों और विरोधियों के पक्ष में अपनी-अपनी बातें इतने जोर-शोर से कहते थे कि जन-साधारण के लिए उस सम्बन्ध में कोई स्पष्ट अभिमत बना सकना सम्भव न हो पाता था, पर ऐसी बात नहीं है । उसे विज्ञान की एक तथ्यपूर्ण धारा के रूप में स्वीकार कर लिया गया है । अब सम्मोहन को कला नहीं विज्ञान के रूप में प्रतिपादित किया जाता है । इसे आश्चर्यजनक प्रदर्शनों के रूप में नहीं मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के लिए उपयोगी सत्परिणाम प्रस्तुत कर सकने वाली 'विधा' के रूप में प्रयुक्त किया जाता है ।

डॉक्टर बार्बर की तरह अन्य लोगों को भी यह सन्देह था कि सम्मोहन प्रदर्शनों में कोई पद्द-शिष्य बाजीगर को सफल सिद्ध करने के लिए जान-बूझ कर ढोंग बनाता है । किन्तु आशंका क्रमशः निर्मूल होती चली गई है । जब तक बाजीगरी के कौतुक-प्रदर्शनों का सम्मोहन विद्या का प्रयोग होता था, तब तक उस पर उँगली उठने की काफी गुंजाइश थी पर अब वैसा कदाचित ही होता है । अब यह विद्या मानसोपचार के क्षेत्र में सम्मिलित हो गई है और प्रायः इसी के लिए इसका उपयोग होता है । मस्तिष्क में तर्क शक्ति, इच्छा शक्ति एवं निष्कर्ष क्षमता के कुछ अपने क्षेत्र हैं । सम्मोहन निद्रा में उसी को निष्क्रिय बना दिया जाता है और सम्मोहित व्यक्ति इस स्थिति में पहुँच जाता है मानो उसकी अपनी निजी विचार बुद्धि का अन्त हो गया ।

विज्ञानी एरिक्शन ने सम्मोहित व्यक्ति की रंग पहचानने की क्षमता बदल देने—पानी को ही शराब बताकर उसमें नशे के लक्षण उत्पन्न कर देने में सफलता पायी है । इसी प्रकार 'जनरल ऑफ साइकेटरी' में मनः शास्त्री के उलमैन के प्रयोग विवरण लेख में उन सफलताओं का वर्णन है, जिनमें शरीर के विभिन्न अवयवों पर विभिन्न परिवर्तन सम्भव कर दिखाए थे । उदाहरण के लिए एक व्यक्ति का हाथ ठंडे पानी में डलवाया गया और उसे अत्यधिक उष्ण मनवा लेने पर हाथ में छाले उठ आना सम्भव हो गया था । ऐसे ही अनेक विवरण रूसी मानसोपचारक प्लेटोनोव ने अपनी पुस्तक "दि वर्ल्ड एज ए फिजियोलॉजिकल एण्ड थैराट्यूटिक फैक्टर" में प्रकाशित कराए हैं ।

रूसी मनःशास्त्री पावलोव के अनुसार सम्मोहन में जादू जैसी कोई बात नहीं वह मनोविज्ञान सम्मत सहज प्रक्रिया है जिसमें कुछ मस्तिष्कीय कणों की अन्तःक्षमता को कृत्रिम रूप से सुला देने और जगा देने की प्रक्रिया को संकल्पशक्ति के आधार पर सम्पन्न कर दिया जाता है ।

सम्मोहन से शरीर की सामान्य स्थिति में भी अन्तर आ जाता है । यह अन्तर शरीर परीक्षा में सहज ही देखा जा सकता है । जैसे हृदय की गति ८२ से बढ़कर १४६ तक हो जाना—रक्त का बढ़ाव १०५ से उठकर १३६ तक जा पहुँचना—तापमान ९९ सेन्टीग्रेड से १०१ तक देखा जाना । इतना होने पर भी रक्त में जिन तत्वों का समावेश है उनके अनुपात में अन्तर नहीं आता । लवण, शंकर आदि की जो मात्रा रक्त में विद्यमान थी उसका परिमाण नहीं बदला जा सका । इसी प्रकार बीमारियों के कारण होने वाले कष्ट की अनुभूति तो उतने समय के लिए रुक सकती है, और रोगी अपने को अच्छा अनुभव कर सकता है । इतने पर भी उस बीमारी की जड़ कट जाना सम्भव नहीं होता । हाँ सुधार का धीमा सिलसिला चल पड़ सकता है ।

पूर्व निर्धारित नैतिक मान्यताओं को बदलने के प्रयोग यदि करने ही हों तो उनमें बहुत समय लगेगा और सफलता बहुत धीरे-धीरे मिलेगी । लड़ाइयों में पकड़े गए शत्रु पक्ष के सैनिकों को पहले की अपेक्षा भिन्न मत का बनाने के लिए सम्मोहन विज्ञान के आधार पर प्रयोग होते रहे हैं । उन्हें 'ब्रेन वाशिंग' कहा जाता रहा है । इनसे आंशिक सफलता ही मिली है, क्योंकि उनकी परिपक्व देशभक्ति की मूलधारा बदल देने के लिए किए गए अति कठिन कार्य थे । इनकी तुलना में किसी अनाचारी व्यक्ति का अनाचार छुड़ा देना सरल पड़ता है । क्योंकि उस अनाचार की आदत होते हुए भी अन्तःकरण में उसके लिए विरोधी भावना पहले से ही बनी हुई थी ।

सम्मोहित व्यक्ति में उसके विनिर्मित व्यक्तित्व की सीमा के अन्तर्गत ही कार्य कराये जा सकते हैं । अचेतन की गहरी परतें अपने भीतर कुछ नैतिक और आत्मिक मान्यताएँ अत्यन्त सघन होकर जमाये रहतीं हैं । उन्हें सम्मोहित प्रयोगों में नहीं छुआ जाता । सामान्य कामकाजी बातों को ही शरीर और मस्तिष्क द्वारा पूरा कराया जा सकता है । किसी व्यक्ति की आन्तरिक आस्था जीव दया पर आधारित है । उसे सम्मोहित स्थिति में माँस खाने के लिए कहा जाय तो मन की गहरी परतें उसका विरोध करेंगी और वह व्यक्ति उस आदेश का पालन करने से इन्कार कर देगा । इसी प्रकार किसी का धन या शील हरण करने, किसी की हत्या कराने, जैसे कुकृत्यों के लिए सम्मोहन कर्त्ता कोई प्रयोग करे तो अन्तःकरण की अस्वीकृति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होन पर वे प्रयोग सफल न हो सकेंगे । इसी प्रकार यह भी सम्भव नहीं कि किसी व्यक्ति की मूल-भूत क्षमता से बाहर के काम कराए जा सकें । हिन्दी पढ़े व्यक्ति से अंग्रेजी बोलने के लिए कहा जाय तो वह न बोल सकेगा । इसी प्रकार इतना वजन उठाने के लिए कहा जाय जो उसकी शारीरिक क्षमता से बाहर हो, तो भी वह इन प्रयोगों में न बन सकेगा । आत्म-हत्या कर लेने जैसे आदेश भी सम्मोहित व्यक्ति को स्वीकार्य नहीं होते । इसका तात्पर्य इतना ही है कि प्रदर्शनों में इतनी ही सफलता मिलेगी जितनी कि किसी अनुशासित व्यक्ति से जीवित अवस्था में सहमत करके करायी जा सकती है । प्रकारान्तर से इन्हें काम-काजी सहमति से लादी हुई सफलता भर कह सकते हैं ।

सत्संग और कुसंग का प्रभाव सर्वविदित है । ऋषियों के आश्रमों में सिंह और गाय एक घाट पानी पीते थे । यह उस आत्म-चेतना का ही प्रभाव था, जो प्रचंड होने के कारण अपने क्षेत्र में एक प्रकार से सम्मोहन का वातावरण उत्पन्न किये रहती थी । नारद जी के थोड़े से सम्पर्क से ही प्रहलाद, ध्रुव, पार्वती, बाल्मीकि आदि अनेकों को दिशा मिली और जीवन-क्रम उलट गये । भगवान बुद्ध के सम्पर्क में आने वाले अंगुलिमाल, अम्बपाली जैसे अगणित अधम जन उच्चस्तर पर पहुँचे । गांधी जी के प्रभाव से अगणित व्यक्ति त्याग और बलिदान के क्षेत्र में उतरे और बढ़े-चढ़े आदर्श उपस्थित करते रहे । इस प्राण-तत्व की प्रखरता का—सुविस्तृत क्षेत्र में फेला हुआ आलोक ही कह सकते हैं । परकाया प्रवेश एवं सम्मोहन विज्ञान के अनुसार भी इस प्रभाव प्रक्रिया की व्याख्या की जा सकती है ।

परकाया प्रवेश उच्चस्तीरय आध्यात्म विज्ञान की परिधि में आने वाली महत्त्वपूर्ण विधि व्यवस्था है । इसका उपभोग सदुद्देश्य के लिए—सज्जनता सम्पन्न आत्माओं द्वारा—सद्भावनापूर्वक किया जा सके तो उसका प्रभाव उसी प्रकार श्रेयस्कर होगा जैसा कि चिकित्सा-विज्ञान आदि के द्वारा सम्भव होता है ।

प्राचीन भारतीय इतिहास को आध्यात्मिक उपलब्धियों की शृंखला कहें, तो आध्यात्मिक साहित्य और दर्शन को तत्वदर्शी, ऋषियों, योगी और सन्तों का इतिहास कहना पड़ेगा । आध्यात्मिक जगत की प्रसिद्ध घटना है कि मण्डन मिश्र के जगद्गुरु शंकराचार्य से शास्त्रार्थ में पराजित हो जाने के बाद उनकी धर्मपत्नी विद्योत्तमा ने मोर्चा सम्भाला । उन्होंने शंकराचार्य से "काम-विद्या" पर ऐसे जटिल प्रश्न पूछे जो उन जैसे ब्रह्मचारी संन्यासी की कल्पना से भी परे थे, किन्तु वे योगी थे । उन्हें मण्डन मिश्र जैसे महान् पण्डित की सेवाओं की अपेक्षा थी सो उन्होंने माहिष्मती नरेश के मृतक शरीर में "परकाया प्रवेश" किया और "काम-विद्या" का गहन अध्ययन किया । उनके द्वारा प्रणीत "काम-सूत्र" इस विद्या का अनुपम ग्रन्थ माना जाता है ।

इतिहास में इस घटना की तरह ही पाटलिपुत्र के सम्राट महापद्मनन्द और चाणक्य भी प्रख्यात हैं, पर वे केवल शासकीय दृष्टि से । बहुत थोड़े लोग जानते हैं कि महापद्मनन्द का शरीर एक था, पर उस शरीर से यात्राएँ दो आत्माओं ने की थी । एक स्वयं महापद्मनन्द ने तो दूसरे तत्कालीन विद्वान आचार्य उपवर्ष के प्रसिद्ध योगी शिष्य "इन्द्रदत्त" ने । महर्षि उपवर्ष उनके अग्रज महर्षि वर्ष का पाटलिपुत्र में ही विशाल तपोवन और गुरुकुल आश्रम था, जिसमें देश-विदेश से आये स्नातक साहित्य, भेषज व्याकरण और योग विद्या सीखा करते थे । उपवर्ष के शिष्यों में तीन शिष्य ऐसे थे जिन्हें त्रिवेणी संगम कहा जाता था । प्रथम वररुचि या कात्यायन जो पीछे सम्राट चन्द्रगुप्त के महामन्त्री बने । इन्होंने पाणिनी के व्याकरण सूत्रों की टीका की थी । दूसरे थे "व्याडी" इन्होंने एक विशाल व्याकरण ग्रन्थ लिखा था जिसमें सवा लाख श्लोक थे, यह ग्रन्थ अंग्रेजों के समय जर्मनी उठा ले गए थे और आज तक फिर पता ही नहीं चल पाया । केवल मात्र कुछ श्लोक ही यत्र-तत्र मिलते हैं । तीसरे देवदारू थे जिनकी योग विद्या में इतनी गहन अभिरुचि थी कि उस युग में उनके समान कोई अन्य योगी न रह गया था । "उपवर्ष" ने उन्हें 'परकाया प्रवेश' तक की गूढ़ विद्या सिखलाई थी ।

तीनों शिष्यों में प्रगाढ़ मैत्री थी । आश्रम से विदा होते समय तीनों साथ ही महर्षि उपवर्ष के पास गए और उनसे गुरु दक्षिणा माँगने का आग्रह किया । आचार्य प्रवर ! ने समझाया—वत्स आचार्यों की विद्या योग्य शिष्य पाकर स्वतः सार्थक हो जाती है, तुमने अपने-अपने विषयों में दक्षता और प्रवीणता पाकर मेरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यश बढ़ाया है यही मेरे लिए पर्याप्त है तो भी मेरी हार्दिक अभिलाषा है कि तुम्हें जो ज्ञान, जो प्रकाश और मार्गदर्शन यहाँ मिला उसका तुम सारे देश में प्रचार प्रसार करना ।

बात पूरी हो गई थी किन्तु वे तीनों सिद्धि के अहंकार में थे अतएव कोई न कोई लौकिक वस्तु माँगने के आग्रह पर अड़ गए । गुरु को क्षोभ हुआ उन्होंने कहा भी—हमने तुम्हें सिद्ध बनाया किन्तु सिद्धि को आत्म सात करने वाली सरलता और गम्भीरता नहीं सिखाई उसी का यह प्रतिफल है—नहीं मानते जाइए और हमारे लिए एक लाख स्वर्ण मुद्राओं का प्रबन्ध कीजिए ।

तीर धनुष से निकल चुका था मर्मस्थल तो विंधना ही था । वररुचि और व्याडी दोनों अभी इस चिन्ता में थे कि इस कठिन समस्या का निराकरण कैसे हो तभी देवदत्त ने मुस्करा कर कहा—तात ! आपने सुना है आज महापद्मनन्द ने देह परित्याग कर दिया है मुझे परकाया प्रवेश-विद्या आती है । मैं महापद्मनन्द की मृतक देह में प्रवेश कर स्वयं पद्मनन्द बनूँगा, इसी खुशी में राजभवन में उत्सव होगा दान-दक्षिणा बँटेगी उसी में इस धन का प्रबन्ध वररुचि को कर दूँगा । व्याडी इस बीच मेरे शव की रक्षा करें ताकि अपना कार्य पूरा करते ही मैं पुनः अपनी देह में आ जाऊँ ।

पूर्व नियोजित कार्यक्रम के अनुसार देवदत्त ने अपने कुटीर में लेटकर "प्राणायाम" क्रिया के द्वारा अपने प्राणों को शरीर से अलग कर लिया और महापद्मनन्द के शरीर में प्रवेश किया । महापद्मनन्द पुनः जीवित हो उठे । यह घटना इतिहास प्रसिद्ध घटना है । सारे राज्य में छाई दुःख की लहर एकाएक खुशी में बदल गई । चारों ओर उत्सव मनाये जाने लगे ।

महापद्मनन्द के महामन्त्री "शकटार" ने देखा अब पुनर्जीवित महापद्मनन्द के संस्कार, गुण, कर्म, स्वभाव, मूल सम्राट के गुणों से बिल्कुल भिन्न संस्कृत के अल्पज्ञ महापद्मनन्द का महान् पांडित्य ही सन्देह के लिए पर्याप्त था उधर शकटार को यह भी ज्ञात था कि "देवदत्त" ही एक मात्र ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें परकाया प्रवेश की विद्या आती थी सो यह अनुमान करते देर न लगी की महापद्मनन्द के शरीर में "देवदत्त" की आत्मा के अतिरिक्त और कोई हो नहीं सकता था ।

शकटार कुशाग्र बुद्धि थे परिस्थितियों के सूक्ष्म विश्लेषण के साथ वे प्रख्यात प्रत्युत्पन्नमति महामन्त्री थे । यह वह समय था जब सिकन्दर झेलम तक आ पहुँचा था और उसने सम्राट पुरु को भी पराजित कर लिया था । अगली टक्कर महापद्मनन्द से ही होने वाली थी । यदि उनके निधन की बात सिकन्दर तक पहुँच जाती तो उसका तथा उसके सिपाहियों का मनोबल बढ़ जाता, अतएव शकटार ने निश्चय किया कि महापद्मनन्द वे चाहे जो हों पुनः मरने नहीं दिया जाना चाहिए । शकटार को कई दिनों से व्याडी का पता नहीं चल रहा था जबकि वररुचि इन दिनों व्यर्थ ही राजभवन के आसपास घूमते दिखाई देते थे, अतएव उसे यह अनुमान करते देर न लगी कि व्याडी और कही नहीं देवदत्त के शव की रक्षा में ही होगा । शकटार ने विश्वासपात्र सैनिकों को भेजकर व्याडी के विरोध के बावजूद देवदत्त के पूर्ववर्ती शरीर का "शवदाह" करा दिया । महापद्मनन्द के शरीर में निर्वासित देवदत्त को इस बात का पता चला तो वे माथा पीटते रह गए, पर अब बाजी हाथ से निकल चुकी थी, अतएव रहे तो महापद्मनन्द ही पर अब वह पद्मनन्द नहीं थे जो कभी पहले थे । बदले की भावना से उन्होंने जीवन भर स्वामी भक्त सेवक की तरह काम करने वाले महामन्त्री शकटार को ही बन्दी बना लिया और वररुचि को अपना महामन्त्री नियुक्त कर लिया । राजकाज से सर्वथा शून्य देवदत्त (अब महापद्मनन्द) ने सर्वत्र अस्त-व्यस्तता फैलाई उसी का प्रतिफल यह हुआ कि उसे एक दिन चाणक्य के हाथों पराजय का मुँह देखना पड़ा ।

इस घटना के पीछे किसी राजतन्त्र के इतिहास की व्याख्या करना उद्देश्य नहीं वरन् एक बड़े इतिहास—आत्मा के इतिहास की ओर—मानव जाति का ध्यान मोड़ना है, सांसारिकता में पड़कर जिसकी नितान्त उपेक्षा की जाती है । एक शरीर के प्राण किसी अन्य शरीर में रहें, यह इस बात का साक्षी और प्रमाण है कि आत्मा शरीर से भिन्न और स्वतन्त्र अस्तित्व है । इस शाश्वत सत्ता को न समझने की अज्ञान दृष्टि ही मनुष्य को भौतिकतावादी बनाती है, स्वार्थी बनाती है, ऐसे अज्ञान ग्रस्त मनुष्य अपने पीछे अन्धकार की एक लम्बी परम्परा छोड़ते हुए जाते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और प्रकाश पथ का पथिक, आनन्द मूर्ति आत्मा, अन्धकार और सांसारिक बाधाओं में मारा-मारा फिरता रहता है ।

योग मार्ग उस सत्ता से सम्बन्ध जोड़ने, आत्मानुभूति कराने का सुनिश्चित साधन है । यह राह भले ही कठिनाइयों की आत्म नियन्त्रण, आत्म सुधार की हो, पर एक वैज्ञानिक पद्धति है जिसके परिणाम सुनिश्चित होते हैं । उस कठिन मार्ग पर चलाने वाली आस्था को ऐसी परिस्थितियाँ निःसन्देह परिपुष्ट करती हैं, इस तरह की घटनाएँ उसी युग में ही होती रही हों ये बात नहीं आज भी इस देश में ऐसे योगी हैं जो इस विद्या को जानते हैं ।

बात उन दिनों की है जब भारतवर्ष में अंग्रेजों का राज्य था उन दिनों पश्चिमी कमाण्ड के मिलिटरी कमाण्डर एल. पी. फैरेल थे उन्होंने अपनी आत्म-कथा में एक मार्मिक घटना का उल्लेख इन शब्दों में किया है—

"मेरा कैम्प आसाम में ब्रह्मपुत्र के किनारे लगा हुआ था । उस दिन मोर्चे पर शान्ति थी । मैं जिस स्थान पर बैठा था उसके आगे एक पहाड़ी ढलान थी, ढाल पर एक वृद्ध साधु को मैंने चहलकदमी करते देखा । थोड़ी देर में वह नदी के पानी में घुसा और एक नवयुवक के बहते हुए शव को बाहर निकाल लाया । वृद्ध साधु अत्यन्त कृशकाय थे, शव को सुरक्षित स्थान तक ले जाने में उन्हें कठिनाई हो रही थी तथापि वे यह सब इतनी सावधानी से कर रहे थे कि शव को खरोंच न लगे यह सारा दृश्य मैंने दूरबीन की सहायता से बहुत अच्छी तरह देखा ।"

"इसी बीच अपने सिपाहियों को आदेश देकर मैंने उस स्थान को घिरवा लिया । वृद्ध वृक्ष के नीचे जल रही आग के किनारे पालथी मारकर बैठे । दूर से ऐसा लगा वे कोई क्रिया कर रहे हों थोड़ी देर यह स्थिति रही, फिर एकाएक वृद्ध का शरीर एक ओर लुढ़क गया; अभी तक जो शव पड़ा था वह युवक उठ बैठा और अब वह उस वृद्ध के शरीर को निर्ममता से घसीट कर नदी की ओर ले चला इसी बीच मेरे सैनिकों ने उसे बन्दी बना लिया । तब तक कौतूहल वश मैं स्वयं भी वहाँ पहुँच गया था । मेरे पूछने पर उसने बताया—महाशय ! वह वृद्ध मैं ही हूँ । यह विद्या हम भारतीय योगी ही जानते हैं । आत्मा के लिए आवश्यक और समीपवर्ती शरीर, प्राण होते हैं, मनुष्य देह तो उसका वाहन मात्र है । इस शरीर पर बैठकर वह थोड़े समय की जिन्दगी की यात्रा करता है, किन्तु प्राण शरीर तो उसके लिए तब तक का साक्षी है जब तक कि वह परम-तत्व में विलीन न हो जाय ?"

"हम जिसे जीवन कहते हैं—प्राण, शरीर और आत्मा की शाश्वत यात्रा की रात, उसका एक पड़ाव मात्र है जहाँ वह कुछ क्षण (कुछ दिनों) विश्राम करके आगे बढ़ता है यह क्रम अनन्त काल तक चलता है, जीव उसे समझ न पाने के कारण ही अपने को पार्थिव मान बैठता है, इसी कारण वह अधोगामी प्रवृत्तियाँ अपनाता, कष्ट भोगता और अन्तिम समय अपनी इच्छा शक्ति के पतित हो जाने के कारण मानवेतर योनियों में जाने को विवश होता है । मुक्ति और स्वर्ग प्राप्ति के लिए प्राण शरीर को समझना, उस पर नियन्त्रण आवश्यक होता है । यह योगाभ्यास से सम्भव है । अभी मुझे इस संसार में रहकर कुछ कार्य करना है, जबकि मेरा अपना शरीर अत्यन्त जीर्ण हो गया था इसी से यह शरीर बदल लिया ।"

उस व्यक्ति को बातें बड़ी मार्मिक लग रही थीं । मन तो करता था कि और अधिक बातें की जायें, किन्तु हमारे आगे बढ़ने का समय हो गया था, अतएव इस प्रसंग को यहीं रोकना पड़ा, पर मुझे न तो यह घटना भूलती है और न यह तथ्य कि हम पश्चिम वासी रात को दिन, अन्धकार को ही प्रकाश मान बैठे हैं, इससे अवान्तर जीवन के प्रति हमारी प्रगति एकदम रुकी है यह मरण का वीभत्स रास्ता है उससे बचने के लिए एक दिन पूर्व का अनुसरण करना ही पड़ेगा ।

ऊपर की घटनाएँ परकाया प्रवेश की, यह सिद्ध करती हैं कि शरीरों और शारीरिक सुखों के लिए मानवीय मोह, माया मिथ्या है शरीर को, आत्मा का देवमन्दिर समझकर उसकी पवित्रता तो रखी जाय पर उसे विषय वासनाओं के द्वारा इस तरह गन्दा और घृणास्पद न बनाया जाय कि अपना अन्तःकरण ही धिक्कार कर उठे । पश्चिम की एक ऐसी ही घटना यह सिद्ध करती है कि शारीरिक विषय वासनाओं की आसक्ति किस तरह बार-बार शरीरों में आने को विवश होती है, यहाँ तो प्राण-बल था, अतएव दो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्माएँ एक शरीर के लिए झगड़ती रहीं, किन्तु जब प्राण निर्बल हो तो कीड़े-मकोड़ों की अभावग्रस्त जिन्दगी ही मिलना स्वाभाविक है ।

मिशिगन (अमेरिका) के एक छोटे से गाँव बैटल क्रीक में वाल्टर सोडरस्ट्राम नामक एक व्यक्ति रहता था वह एक ऊन की फैक्ट्री में काम करता था । प्रस्तुत घटना १३ सितम्बर १८५१ के "न्यूयार्क मरकरी" अंक में इन्हीं सोडरस्ट्राम ने छपाई ।

वाल्टर को समुद्री नौकायन का शौक था वे जिस टापू पर नौका विहार और मछलियाँ पकड़ने जाया करते उस पर एक कुटिया थी जिस पर अधेड़ आयु का व्यक्ति रहता था । अक्सर आते-जाते वाल्टर की उनसे जान-पहचान हो गई थी । एक दिन तूफान और आकस्मिक वर्षा के कारण वाल्टर ने रात उस कुटिया में ही बिताई । जिस समय तूफान का दौर चल रहा था स्ट्रैण्ड नामक उस व्यक्ति की स्थिति बड़ी विचित्र रही वह इस तरह काँपता रहा जैसे कोई पत्ता काँपता हो यही नहीं बीच-बीच में वह भंयकर चीत्कार भी करता । इस चीत्कार में वह कभी एक भाषा निकालता कभी सर्वथा अनजान दूसरी वाल्टर स्काट ने वह रात बड़ी कठिनाई से बिताई-वे लिखते हैं—उसकी देह बुरी तरह कसमसा कर ऐंठती थी तो लगता था कि दोनों ओर से पकड़कर दो आदमी उसे निचोड़ रहे हों । थोड़ी देर तक शरीर पीला और निढाल रहा पीछे स्टैण्ड मुस्कराकर उठ बैठा । पूछने में पहले तो वह टालता रहा, पर बहुत आग्रह करने पर उसने बताया कि एक फ्रान्सीसी की आत्मा भी इस शरीर पर आने के लिए अक्सर प्रतिद्वन्द्व करती है । उसने बताया कि वास्तव में यह शरीर उसी का है, किन्तु शक्तिशाली होने के कारण इस पर मैंने आधिपत्य जमा रखा है । उसने जेब से एक लाइटर और एक डायरी भी दी जो उस फ्रान्सीसी के थे लाइटर पर जेकब ब्यूमांट लिखा था । वाल्टर उन्हें लेकर चले आये यह घटना उनके मस्तिष्क पर छाई रही ।

कुछ दिन बाद वाल्टर को पेरिस जाने का अवसर मिला, कौतूहलवश वह डायरी के अनुसार पता लगाते हुए ब्यूमांट तक पहुँच गए वहाँ जाकर उसने पाया कि वही स्ट्रैण्ड जो टापू में रहता था वहाँ विद्यमान था । वाल्टर को उसने पहचाना तक नहीं, पर उसने अपनी जेब से वाल्टर का फोटो निकालकर बताया कि आपका यह फोटो मेरे पास कैसे आया मुझे ज्ञात नहीं । वाल्टर के स्मरण कराने पर वह अपने को ब्यूमाण्ट ही बताता रहा—अलबत्ता उसने यह बात स्वीकार की कि उसका एक अमेरिकी आत्मा से लम्बे समय तक शरीर के लिए संघर्ष हुआ है और उसमें अन्तिम विजय मेरी रही ।

एक तीसरी घटना जिसमें एक ही आत्मा द्वारा विभिन्न शरीर उसी तरह बदलने का जिक्र है । जिस तरह एक शहर से ट्रान्सफर के बाद दूसरे शहर में आवास किराये पर लेना पड़ता है । यह घटना अभी थोड़े दिन पूर्व की है ।

१९५५ में लन्दन में एक पुस्तक प्रकाशित हुई है । जिसका नाम है "द थर्ड आई ।" यह पुस्तक एक अंग्रेज ने लिखी, पर उसने अपना नाम उसमें "टी. लोवसंग" (तिब्बती नाम) लिखा है । १९५८ के मार्च की "नवनीत" में उसका विस्तृत विवरण छपा है जिसमें यह बताया गया है कि जिस अंग्रेज को तिब्बत के बारे में कोई जानकारी नहीं थी जिसने इंग्लैण्ड से बाहर कभी कदम नहीं रखा उसने न केवल तिब्बत की भौगोलिक जलवायु सम्बन्धी अपितु वहाँ के मन्दिरों, मठों, लामाओं तथा दलाई लामा के वह सूक्ष्म विवेचन और संस्मरण लिखे हैं जिनकी जानकारी उसे कभी सम्भव ही नहीं हो सकती थी ।

अपनी पुस्तक में लेखक ने अपने लामा गुरु मिंग्यार का वर्णन करते हुए लिखा है कि परकाया प्रवेश की विद्या मैंने उन्हीं से सीखी और उन्हीं के आदेश से अब तक मैंने तीन शरीर बदले हैं । यह ग्रन्थ पूरा करने के बाद ही मैं यह अंग्रेज शरीर भी छोड़ दूँगा और सचमुच ही पुस्तक लिखने के बाद यह अंग्रेज मृत पाये गए । मृतक की देह पर न तो किसी आघात के लक्षण थे, न कृत्रिम मृत्यु । शरीर के प्रत्येक अंग को व्यवस्थित करके इस तरह प्राण निकले मानो सचमुच किसी यात्रा की तैयारी में रहे हों । इस घटना के बाद जहाँ एक ओर इसके बारे में तहलका मचा, खोज करने पर वह स्थान, वह परिस्थितियाँ सच निकलीं दूसरी ओर लोग "भारतीय प्राण विज्ञान" की प्रामाणिकता और उसकी उपयोगिता स्वीकारने और समझने को विवश हो रहे हैं ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तृतीय नेत्रोन्मीलन : दिव्य दृष्टि जागरण

दिव्य दृष्टि का संचार स्रोत तृतीय नेत्र आज्ञाचक्र

संसार में अभी तक ऐसा फोटो कैमरा नहीं बना जो टैक्नीकलर, विस्टा विजन और थ्री-डी. के टैक्नोलॉजी युक्त हैं । शत-प्रतिशत साफ फोटो खींचता हो । जिसमें फोटोग्राफर की आवश्यकता न हो और फिल्म प्लेट आदि लगाने का झंझट न हो । ऐसा कैमरा बनना तो दूर किसी वैज्ञानिक के मस्तिष्क में इस तरह की सम्भावना की कल्पना भी अभी तक नहीं आयी है । यदि कोई सोचने भी लगे तो इन सारी सुविधाओं से सम्पन्न किसी विशालकाय यन्त्र की ही कल्पना की जा सकती है । इतने उपकरण होते हुए भी उसका साइज एक इंच जितना छोटा है । उसे तो सर्वथा अंश रूप ही कहना चाहिए ।

यान्त्रिक जगत में ऐसा फोटो यन्त्र भले ही न बना हो, भले ही उसकी सम्भावना अशक्य मानी जाय पर ऐसा कैमरा अपने पास मौजूद है और उसका उपयोग जन्मकाल से ही हम लोग कर रहे हैं—यह जादू जैसा फोटो यन्त्र है—'नेत्र' ।

हमारे नेत्र बहुत ही सम्वेदनशील और सक्रिय है । अपने पलक एक मिनट में प्रायः तीस सेकण्ड बन्द रहते हैं और लगभग उतनी ही देर खुले रहते हैं । यह क्रिया-कलाप निरन्तर अनायास ही चलता रहता है पर आश्चर्य यह है कि हमें इसका पता तक नहीं चलता । यों आँखें गर्भस्थ शिशु के पाँच महीने में ही बन कर तैयार हो जाती हैं और उनकी वृद्धि का क्रम छः वर्ष की आयु तक चलता रहता है । फिर भी उससे सम्बन्धित मस्तिष्कीय संस्थानों के विकास में २६ वर्ष लग जाते हैं । दृष्टि सम्बन्धी प्रखरता एवं परिपक्वता का क्रम पूरा होने में प्रायः २५ वर्ष लग जाते हैं । इससे पूर्व उसकी आकृति ठीक बन जाने पर भी मानसिक केन्द्र में कुछ न्यूनता ही बनी रहती है ।

पलकों के निचले भाग में से एक प्रकार का अश्रु जल स्रवित होता रहता है, यह नेत्र गोलकों पर पड़ने वाली धूलि आदि साफ करता रहता है । वर्षा के दिनों में मोटर ड्राइवर के सामने वाले शीशे पर जमने वाली बूँदों को जिस प्रकार 'विन्डशील्ड वाइपर' साफ करता चलता है उसी प्रकार पलकें झपकने की क्रिया और यह अश्रुजल स्राव आँखों की निरन्तर सफाई करते रहते हैं । इस अश्रुजल में जीवाणु नाशक तत्व भी घुले रहते हैं जिनके कारण आँखों का शुद्धिकरण भी चलता रहता है ।

आँखों की क्षमता प्रायः डेढ़ सौ प्रकार के रंग भेद पहचानने की है । उनकी बनावट अजीव है स्लोलाइट की तरह पारदर्शक, चमड़े की तरह मजबूत, रबड़ की तरह खिंचती, स्फटिक की तरह स्वच्छ और आजीवन काम देने वाली कभी न घिसने टूटने वाली वस्तुओं से मिलकर आँखें बनी हैं । दूर दृष्टि और निकट दृष्टि की—प्रकाश के अनुरूप फैलने सिकुड़ने की सभी विशेषताएँ इस नेत्र कैमरे में विद्यमान हैं । बुढ़ापे में 'कलर फिल्टर' के तन्तु घिस जाने से नीले और काले रंग को पहचानने की क्षमता घटती जाती है । आँख के दृश्य कलेवर से लेकर मस्तिष्क के दृष्टि संस्थान तक की लम्बाई जरा सी है पर उतने से ही गह्वर में प्रायः १३ करोड़ ७० लाख कोश होते हैं । प्रकाश की प्रतिक्रिया को यही तन्तु ग्रहण करते हैं ।

आँखों के पीछे का गड्ढा जिसे 'फोविया' कहते हैं । बारीक चीजें देखने के काम आता है यह नेत्र संस्थान दूषण रहति हों तो एक इंच के दस हजारवें भाग को भी ठीक तरह देखा और पहचाना जा सकता है ।

आँखें देखती जरूर हैं पर उसका निष्कर्ष और प्रभाव स्पष्ट करने वाला संस्थान मस्तिष्क के पिछले भाग में स्थित है । टेलीफोन पद्धति में 'क्रास टाक' जैसी प्रक्रिया ही नेत्र संस्थान पर होती है और उसी से देखने की प्रक्रिया ठीक तरह अपना काम कर पाती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । मस्तिष्कीय दृष्टि संस्थान में सन्निहित कोशों को तीन वर्गों में विभक्त किया जा सकता है । यह कोश बाह्य जगत के लाल हरे और नीले रंगों से प्रभावित होते हैं इन्हीं कारणों से रंगों के उतार-चढ़ाव एवं सम्मिश्रण से बनने वाले अगणित रंग हमें परिलक्षित होते हैं । मस्तिष्क ज्ञान का ८५ प्रतिशत भाग इन्हीं नेत्र गोलकों द्वारा उपलब्ध एवं विकसित होता है ।

आँखों की स्थूल शक्ति की भी अपनी महत्ता है । आँखें न रहने पर संसार में सर्वत्र जब घोर अन्धकार ही शेष रह जाता है, उस स्थिति की कल्पना करें तो प्रतीत होगा कि नेत्र ज्योति मानव जीवन की कितनी बड़ी आवश्यकता है । पर इससे भी बढ़ कर है हमारी सूक्ष्म दृष्टि जो उस अदृश्य जगत को दृश्यमान करती है जो चर्म चक्षुओं की पकड़ से बाहर है ।

यह नहीं समझना चाहिए कि प्रकाश के माध्यम से हमारी आँखें जो देख पाती हैं, उतना ही दृष्टि क्षेत्र है । वस्तुतः प्रकाश का सूक्ष्म स्वरूप ऐसा भी है जो हमारी नेत्र सीमा से बाहर रहते हुए भी संसार में विद्यमान है और उसे भी देखा समझा जा सके तो हम समस्त विश्व को अपने दृष्टि क्षेत्र में ले सकते हैं । तब 'दूरदर्शी' शब्द मात्र समझदार लोगों के—आगे की बात सोचने वालों के लिए ही लागू न होगा वरन् सचमुच हम उस स्थिति में पहुँच जायेंगे कि दूर की—अति दूर की—समस्त संसार की घटनाओं को देख सकें ।

रेडार यन्त्र में यही होता है वह प्रकाश किरणों से अधिक सूक्ष्म रेडियो किरणों के आधार पर दूरवर्ती वस्तुओं को उनकी हलचलों को देख सकता है । टेलीविजन पर दूरवर्ती दृश्य हमारे सामने छाया रूप में प्रस्तुत होते हैं, उसी से मिलता-जुलता पर दूसरे सिद्धान्त पर आधारित रेडार उपकरण है । दूरदर्शन में हमें टेलीविजन की तरह वह भी सहायता पहुँचाता है ।

रेडार एक प्रकार की वैज्ञानिक आँख है जो प्रकाश तरंगों की अपेक्षा रेडियो तरंगों के माध्यम से देखने का प्रयोजन पूरा करती है । रेडार—शब्द—'रेडियो ऐंगल डायरेक्शन एण्ड रेंज' का संक्षिप्तीकरण है ।

हमारी आँखें किसी वस्तु को तभी देख पाती हैं जब प्रकाश की किरणें उससे टकराकर परावर्तित होती हैं । अँधेरे में न देखने का कारण यही है कि प्रकाश के अभाव में उसकी किरणें वस्तुओं पर पड़ती ही नहीं तो फिर वे परावर्तित होकर आँखों तक लौटेंगी ही कैसे ? आँखों में स्वयं तो इतनी शक्ति है नहीं कि वे किसी वस्तु को प्रकाशवान बना सकें ।

रडार को जादुई आँख कह सकते हैं । जिसमें देखने की ही नहीं वस्तुओं को प्रकाशित करने की भी क्षमता है । रेडार के एन्टेना में एक ऐसा ट्रान्समीटर लगा होता है जो वस्तुओं को प्रकाशवान बनाता है । साथ ही एक ऐसा रिसीवर भी लगा होता है जो प्रकाशित वस्तु से टकरा कर लौटने वाली किरणों को ग्रहण कर सके ।

यहाँ यह जान लेना चाहिए कि रडार द्वारा फेंका हुआ प्रकाश सूर्य या बिजली के प्रकाश जैसा चमकीला नहीं होता न वह खुली आँखों से दिखाई पड़ता है । इसे वस्तुतः प्रकाश नहीं रेडियो कम्पन कहना चाहिए । प्रकाश किरणों की तरह रेडियो किरणें भी होती हैं पर वे चमकीली न होने के कारण आँखों को दिखाई नहीं पड़तीं । अन्य बातों में दोनों समान हैं ।

रात में सामने से मोटर आ रही हो तो उसके प्रकाश से सामने वाले ड्राइवर की आँखें चोंधियाने का खतरा रहता है । तेज रोशनी की ओर कुछ देर देखा जाये तो भी आँखें चोंधिया जाती हैं और उनका दिखना बन्द हो जाता है । इसके लिए लगातार देखना रोकना पड़ता है । या तो पलक झपक कर—या रोशनी को जलाते-बुझाते रहकर यह व्यवस्था करनी पड़ती है कि लगातार देखने का सिलसिला न चले । ठीक यही बात रडार में होती है । रेडियो तरंगें भेजने और ग्रहण करने के बीच थोड़ा-सा व्यवधान रखना पड़ता है । यह सिलसिला चालू रखकर दूरवर्ती वस्तुओं को देख सकना रेडार के लिए सम्भव होता है ।

रेडियो तरंगों की चाल भी लगभग उतनी ही है जितनी कि प्रकाश किरणों की होती है । एक सेकण्ड में ३ लाख किलो मीटर साधारण राडारों की शक्ति आमतौर से ५०० किलोमीटर तक ही होती है । इतनी दूरी तक रेडियो किरणों के जाने और वापस लौटने में एक सेकण्ड के दस लाखवें भाग जितना समय लगता है । यह अत्यधिक स्वल्प समय है । इस अवधि में भी विराम की व्यवस्था करना कठिन प्रतीत होता है । फिर भी वैज्ञानिकों ने इसके लिए उपकरण बना लिए हैं । रेजोनेन्ट ट्रान्सफॉर्मर, इम्पीडेन्स, इन्वर्टर और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्पार्क गैपों का समन्वय करके एक विचित्र प्रकार का 'ड्युप्लेकसर' विनिर्मित किया गया है, जो स्वल्प समय में भी प्रेषण ग्रहण के बीच व्यवधान रखे जाने की व्यवस्था पूरी करता रहता है ।

रेडियो किरणें जिस वस्तु से टकराकर जितनी देर में लौटती हैं, उस समय गणना के आधार पर यह जाना जाता है कि अभीष्ट वस्तु कितनी दूरी पर है और उसकी आकृति किस प्रकार की है । यन्त्र में रहने वाली 'ए—'स्कोप' प्रक्रिया वस्तु की दूरी का ठीक निर्धारण कर देती है । इन दिनों पुरानी पद्धति में और भी सुधार हुए हैं । सूक्ष्म तरंगों का प्रयोग करने वाले 'केलैस्ट्रीन' एवं कैवटी मैग्नेट्रोन यन्त्र अब हर बात को और भी अच्छी तरह अंकित करने लगे हैं ।

रेडियो तरंगें बादल, धुआँ, कुहरा, अँधेरा सामने होने पर रुकती नहीं और वे निर्दिष्ट दिशा में बिना किसी अवरोध के बढ़ती चली जाती हैं । जबकि प्रकाश किरणें ऐसी रुकावट आने पर अवरुद्ध और कुण्ठित हो जाती हैं । रेडार पद्धति में इसीलिए प्रकाश किरणों की अपेक्षा रेडियो तरंगों का उपयोग किया जाता है ।

आकाश में उड़ने वाले जहाजों की दूरी दिशा तथा शकल यह रेडार ठीक-ठीक बता देता है । आँधी तूफानों की परिधि तथा चाल का पता चल जाता है । आकाश के ग्रह नक्षत्रों की स्थिति का अध्ययन करने में उससे बड़ी सहायता मिलती है । बड़ी-बड़ी दूरबीनें जो देख नहीं पातीं उन्हें बता देना रडार के लिए सरल है । उल्कापात आदि के विवरण वे बराबर अंकित करते रहते हैं । ग्रह नक्षत्रों की दूरी तथा परिधि का अंकन भी इसी पद्धति से सम्भव हुआ है । शुक्र ग्रह तक रेडियो किरणें जाने और वापस लौटने में लगभग ७ मिनट लगते हैं इसी आधार पर उसकी दूरी लगभग २ करोड़ मील निश्चित की गई है ।

हवाई जहाज आकाश में उड़ते हैं । अँधेरे और कुहरे में उन्हें रास्ते का पता कैसे लगे ? उनमें लगे 'वैठीगेटर' इसी पद्धति से नगर, नदी, पर्वत, मैदान आदि को दिन की तरह देखते चलते हैं । पानी के जहाजों को भी यह पद्धति सामने के टापुओं, चट्टानों जहाजों, का विवरण बताती है । युद्ध के समय इनका बहुत उपयोग है । पनडुब्बियों की स्थिति का इसी आधार पर पता चलता है । प्रक्षेपास्त्र फेंकते समय दूरस्थ वस्तु की सही जानकारी इसी यन्त्र से विदित होती है । द्वितीय महायुद्ध में जर्मन वायु आक्रमणों से ब्रिटेन को किसी प्रकार जिन्दा रख लेने का श्रेय इन्हीं यन्त्रों को है ।

रेडियो तरंगें अनेक प्रकार की होती हैं । पर उनमें से रेडार उन 'सुपर फ्रीक्वेन्सी' वाली तरंगों का ही प्रयोग करता है जो अत्यधिक कम्पन वाली किन्तु 'अल्पावधि की' होती हैं । यह एक सीमा तक ही जाती हैं । कितनी दूरी तक उन्हें प्रयुक्त करना है इसकी सीमा इन्डीकेटर में पहले से ही व्यवस्थित कर देनी पड़ती है । यह यन्त्रों की शक्ति और देखने की आवश्कता के अनुरूप सीमा बन्धन किया गया है । इसका अर्थ यह नहीं है कि रेडियो तरंगों की सीमा इतनी ही है । यह तो उनका एक सीमा बन्धित विशेष प्रयोग है । उनकी ऊर्जा अनन्त दूरी तक चलती हुई—सब व्यवधानों को पार करती हुई—असीम तक चली जा सकती है ।

दोनों भवों के मध्य भाग में जो बाल रहित खाली स्थान है उसे भृकुटि कहते हैं उसके नीचे अस्थि आवरण के उपरान्त एक बेर की गुठली जैसी ग्रन्थि है । इसे 'आज्ञाचक्र' कहते हैं । शरीर शास्त्र की दृष्टि से उसका कार्य और प्रयोजन अभी पूरी तरह नहीं समझा जा सका पर आत्म विद्या के अन्वेषी इसके अति महत्त्वपूर्ण कार्य को बहुत पहले से ही जानते हैं । इसे तीसरा नेत्र या दिव्य नेत्र कहते हैं । दिव्य दृष्टि यहीं से निःसृत होती है ।

भगवान शिव के चित्रों में प्रदर्शित यह एक तीसरा नेत्र इसी स्थान पर अंकित रहता है । कथा है कि इस तीसरे नेत्र को खोलने पर एक प्रचण्ड अग्नि ज्वाला निकली थी और उसी से कामदेव जलकर भस्म हो गया था । भगवती दुर्गा के चित्रों में भी यह तीसरा नेत्र इसी स्थान पर विद्यमान है । यह तीसरा नेत्र हर मनुष्य के शरीर में मौजूद है । प्रश्न केवल विकसित करने का है । सामान्यतया दो चर्म चक्षु ही काम करते हैं और उन्हीं से जीवन के साधारण काम-काज चलाये जाते रहते हैं ।

यह तीसरा नेत्र—आज्ञाचक्र यदि विकसित किया जा सके तो उससे रडार, टेलीविजन और एक्सरे यन्त्रों के तीनों काम लिए जा सकते हैं । रडार, रेडियो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किरणें फेंकता है और उसके वापस लौटने से उस स्थान का विवरण प्राप्त करना है जिस स्थान पर वे किरणें टकराई थीं । टेलीविजन से दूरगामी दृश्य दिखाई पड़ते हैं । संजय ने महाभारत का सारा दृश्य इसी पद्धति से देखा था और धृतराष्ट्र को पल-पल की विस्तृत खबरें देते रहने का कार्य-दायित्व भली प्रकार निवाहा था । एक्स-रे से आवरण से ढकी वस्तुएँ भी दिखती हैं । शरीर के भीतरी भागों के फोटो उसी से लिए जाते हैं और क्षयजन्य घाव, हड्डी टूटना, गोली छर्रा आदि का लगा होना उसी के द्वारा लिए हुए फोटो से जाना जाता है । किसी लकड़ी के बक्स में जेवर आदि रखे हों तो एक्स-रे द्वारा उसके फोटो लेकर भीतर क्या है यह जाना जा सकता है । आज्ञाचक्र इन तीनों प्रयोजनों को भली प्रकार पूरा कर सकता है ।

सुदूर क्षेत्रों के निवासी व्यक्तियों की परिस्थितियों तथा विभिन्न स्थानों में घटित होने वाली घटनाओं का विवरण आज्ञाचक्र बता सकता है । उससे वहाँ के दृश्य देखे जा सकते हैं जहाँ नेत्रों की पहुँच नहीं है । भूगर्भ में छिपे हुए रहस्य प्रकट हो सकते हैं और अन्तरिक्ष में जो सूक्ष्म क्रिया-कलाप अभी पक रहा है, निकट भविष्य में प्रत्यक्ष होने वाला है, उसका पूर्व रूप समझा जा सकता है यह सांसारिक अगम्य ज्ञान की उपलब्धि हुई । इससे ऊपर आत्म सत्ता का—आत्म चेतना का—दैवी संकेतों का अभ्यास है । इसे देख सकना इतना अद्‌भुत और आकर्षक है कि उस स्थिति में पहुँचा हुआ व्यक्ति परा और अपरा प्रकृति के सारे रहस्यों से ही अवगत हो जाता है । तब यह स्थूल जगत के क्रिया-कलापों के और बाल-क्रीड़ा में रचे हुए रेत बालू के घर मकानों जैसी स्थिति में पाता है । ईश्वरीय सत्ता, आत्मा की स्थिति, जीवन का स्वरूप, जन्म-जन्मान्तरों की शृंखला, कर्त्तव्य पथ, लोक व्यवहार का आधार आदि महत्त्वपूर्ण आधार ही उसे वास्तविक लगते हैं । ऐसा दिव्यदर्शी मनुष्य बालबुद्धि से प्रेरित ओछी रीति-नीति को त्याग कर अपनी गतिविधियों में उन तत्वों का समावेश करता है जो महामानवों के लिए उचित और उपयुक्त हैं ।

तीसरे नेत्र के खोलने से जो विवेक बुद्धि जाग्रत होती है उससे काम, क्रोध, लोभ, मोह जैसे मृग मारीच अपने असली रूप में प्रकट हो जाते हैं और उन्हें नष्ट करने के लिए शिवजी के तीसरे नेत्र की तरह हर विवेकवान की दिव्य दृष्टि खुलती है । परिष्कृति दृष्टिकोण विकसित हो जाने के कारण उसके सोचने और करने का तरीका मायामोह-ग्रस्त—अज्ञान अन्धकार में भटकने वाले लोगों से सर्वथा भिन्न होता है ।

दो नेत्र प्रकृति ने दिए हैं, तीसरा नेत्र खोलने और दिव्य दृष्टि प्राप्त करने को आज्ञाचक्र साधना करना—दूरदर्शी विवेकवान का काम है । हमें इस परमपुरुषार्थ के लिए साहस जुटाना ही चाहिए । कारण चमड़े की सामान्य आँखों से जो दिखता है जो देखा जा सकता है वह बहुत स्वल्प है । यदि इतनी ही परिधि तक देख सकना सम्भव हो सके तो उसे बहुत ही नगण्य उपलब्धि कहा जा सकेगा ।

यों देखने का काम आँखों के लेन्स ही करते हैं । पर उनकी सीमा बहुत छोटी है । कुछ ही दूरी पर उनकी सीमा समाप्त हो जाती है । स्पष्ट दिखने वाली वस्तुएँ ही उनकी परख पकड़ में आती हैं पर यह संसार बहुत विस्तृत है । सब पदार्थों के स्वरूप दृश्यमान नहीं हैं । जो दिखता है उससे अनदेखा बहुत ज्यादा है । अणुओं की गतिविधियों को ही लें, वे आकाशस्थ ग्रह-नक्षत्रों से भी अधिक संख्या में हैं और उनसे भी अधिक सक्रिय हैं । अपने शरीर में काम करने वाले परमाणुओं, जीवाणुओं, शक्तिघर के विद्युत प्रवाहों एवं क्रिया-कलापों को देख सकना, समझ सकना सम्भव हो सके तो वह इतना ही विस्तृत, अद्‌भुत एवं अन्वेषण योग्य प्रतीत होगा जितना कि यह विराट् विश्व ब्रह्माण्ड । आँखें वह सब कहाँ देख पाती हैं ।

प्रत्यक्ष जगत में भी—दृश्य पदार्थों में भी हमारी दृष्टि में एक छोटा सा क्षेत्र ही आता है । जाननी तो आगे की बातें भी पड़ती हैं । वह प्रयोजन चिट्ठियों से, अखबारों, तार, टेलीफोन, रेडियो आदि से पूरा होता है । आँखों की क्षमता से काम चलता न देखकर हमें जानकारी के क्षेत्र दूसरे साधनों से बढ़ाने पड़ते हैं । जिसके पास यह साधन जितने अधिक होते हैं वह उतना ही अधिक लाभान्वित होता है ।

स्थूल दृष्टि की ससीमता से आगे असीम तक विस्तृत होने वाला एक और नेत्र हमारे पास हैं जिसे सूक्ष्म दृष्टि या दिव्य दृष्टि कहते हैं । योग साधना द्वारा कोई चाहे तो इस नेत्र को विकसित कर सकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और चर्म चक्षुओं की परिधि से बहुत आगे की परिस्थितियों एवं घटनाओं को भली प्रकार देख सकने में समर्थ हो सकता है ।

टेलीफोन के माध्यम से आवाज को सुदूर प्रदेशों तक पहुँचाने की विद्या बहुत पहले ज्ञात हो गई थी । इसके बाद रेडियो प्रणाली से परस्पर बैठे हुए व्यक्तियों का—बिना तार के ही—केवल ध्वनि कम्पनों की सहायता से वार्तालाप करना सम्भव हुआ । टेलीविजन प्रणाली में चित्रों को दूर-दूर तक भेजना सम्भव हुआ । अब उसमें एक कदम और आगे बढ़ा है । फोटोग्राफी भी इसी संचार प्रक्रिया के साथ जुड़ गयी है । इसे ऐसे मानना चाहिए जैसे दर्पण और फोटो कैमरा, दर्पण के सामने खड़े होने पर चित्र दिखता है पर हटते ही वह चित्र गायब हो जाता है । कैमरे की बात दूसरी है । उसके सामने खड़े होकर फोटो उतारा जाय तो वह स्थायी बना रहेगा । टेलीविजन को दर्पण कहा जाय तो इस 'विद्युत आवृत्ति संचार व्यवस्था' को कैमरे की फोटोग्राफी मानना पड़ेगा जो क्षणभर में एक स्थान का फोटो पृथ्वी के इस छोर से उस छोर पर भेज देती है ।

आजकल अखबारों में जो विश्व भर की महत्त्वपूर्ण घटनाओं के फोटो दूसरे ही दिन छप जाते हैं इसका कारण यही प्रणाली है । 'टेलेक्स' प्रणाली से भी यह अधिक बारीकियों से भरी हुई है । भारत में एक संचार केन्द्र पूना के पास 'आर्वी' में छोटी पहाड़ियों के बीच बना हुआ है । इसे 'इंटेल्साट—३' कहते हैं । इनकी संचार तरंगें बम्बई के स्टील टावर में पहुँचती हैं । वहाँ फ्लोरा फाइण्डेशन के निकट बना हुआ अठारह मंजिल वाला संचार भवन उन तरंगों को ग्रहण करता है और फिर शक्तिशाली उपकरणों के माध्यम से अभीष्ट स्थानों पर भेज देता है । प्रेषण जैसी ही ग्रहण व्यवस्था भी इन 'संयन्त्रों में हैं । विदेशों से आने वाले फोटो यहीं ग्रहण किए जाते हैं और उनकी अनेक प्रतियाँ छापकर तत्काल अखबारों को अथवा सम्बन्धित सरकारी विभागों को भेज दिए जाते हैं । फोटो ही नहीं—महत्त्वपूर्ण नक्शे, कागजात, पत्र आदि भी तत्काल इसी पद्धति के माध्यम से भेजे और ग्रहण किए जाते हैं ।

अन्यत्र भेजे जाने वाले फोटो एक बड़े बेलन पर चिपका दिए जाते हैं । यह बेलन ६० चक्कर प्रति मिनट के हिसाब से घूमता है । साथ ही प्रति इन्च १०० रेखाएँ भी गतिशील करता है । प्रकाश का एक केन्द्रित पुंज उस फोटो पर डाला जाता है, परावर्तित प्रकाश एक लेंस की सहायता से प्रकाश कोशिका पर केन्द्रित होता है । यहाँ प्रकाश की विविधता—विविध विद्युत कम्पनों में बदल जाती है । रंगों के उतार-चढ़ाव के हिसाब से इन विद्युत कम्पनों में अन्तर हो जाता है । सफेद रंग के लिए १५०० साइकल, काले रंग के लिए २३०० भूरे रंग के लिए, १८०० साइकल प्रति सेकिण्ड आवृत्ति होती है । अब इन कम्पनों को दुनिया के किसी भी कोने में रेडियो संचार प्रणाली के अनुसार विश्व के किसी भी कोने पर भेज दिया जा सकता है । जहाँ इन चित्रों को पकड़ा जाता है वहाँ भी रेडियो ध्वनि ग्रहण करने जैसे यन्त्र लगे रहते हैं वे यन्त्र उन विद्युत कम्पनों को पकड़कर उन्हें चित्र रूप में पुनः परिवर्तित कर लेते हैं । अपने देश में ऐसे २४ रेडियो फोटो चैनल हैं, जिनका सम्बन्ध संसार के ३४ प्रमुख देशों से है ।

इस संचार उपग्रह पद्धति की रूसी प्रणाली 'डार्विटा' कहलाती है । अमेरिका की अपनी प्रणाली है । सन् १९६९ से लेकर अब तक अमेरिका ने लगभग ६०० से अधिक अन्तरिक्ष यान छोड़े जिनमें से ५५० से अधिक अभी भी पृथ्वी की विभिन्न कक्षाओं में घूम रहे हैं । रूस में हर साल ५० और १०० के बीच में इस प्रकार के उपग्रह भेजते रहे हैं । यह कृत्रिम अन्तरिक्ष उपग्रह मौसम शोध से लेकर खगोलीय परिस्थितियों की जानकारी अपने मूल केन्द्र को भेजते रहते हैं । ऐसे ही उपग्रह इस रेडियो फोटो संचार पद्धति को संचालित रखने में सहायता करते हैं । इस 'इंटेसाल्ट उपग्रह पद्धति का विकास करके शब्द संचार की तरह चित्रसंचार की सुविधा भी सरल बनाई जा सकती है और हम घर बैठे विश्व की महत्त्वपूर्ण घटनाओं को सिनेमा के पर्दे पर देखी जाने वाली फिल्मों की तरह प्रत्यक्ष देख सकते हैं । टेलीविजन में अभी जो छोटे दायरे से ही काम करने की कठिनाई है वह भी इस प्रणाली में दूर की जा सकती है ।

यह दूरदर्शन का कार्य टेलीविजन यन्त्र करते हैं । चित्रों को दूर तक भेजने वाली यह रेडियो फोटोग्राफी भी काम में आ रही है । टैलिस्कोप, माइक्रोस्कोप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि सूक्ष्मदर्शी और सुदूरदर्शी यन्त्र भी नेत्र शक्ति की ससीमता को बढ़ाकर विस्तृत और व्यापक बनाते हैं । यह साधन जिनके पास हैं वे इन यन्त्रों की मर्यादा के अनुरूप लाभ उठा लेते हैं ।

भगवान का दिया हुआ एक ऐसा ही यन्त्र मनुष्य के पास भी है जिस दृष्टिवर्धन के अद्यावधि आविष्कारों की सम्मिलित उपलब्धियों से भी कहीं अधिक समर्थ और व्यापक कहा जा सकता है । न इसे खरीदना पड़ता है और न इसके संचालन की कोई बड़ी शिक्षा लेनी पड़ती है । भ्रूमध्य भाग में अवस्थित आज्ञाचक्र अपना तीसरा नेत्र है । इसे खोलने की साधना करने से वह अन्तर्ज्योति विकसित हो सकती है जिसके माध्यम से लोक-लोकान्तरों की—भूगर्भ की—पंच भौतिक परिस्थितियों को देखा और समझा जा सके । इतना ही नहीं इस तीसरे नेत्र में वह शक्ति भी है कि जीवित प्राणियों की मनःस्थिति, भावना, कल्पना, योजना, इच्छा, आस्था एवं प्रकृति को भी समझा जा सके । इस आज्ञाचक्र को विकसित करने की साधना हमें दृष्टि की प्रखरता और व्यापकता का अनुपम उपहार दे सकती है । यह उपहार न केवल वर्तमान का ही परिचय प्राप्त करने में समर्थ है वरन् चिर अतीत में जो घटित हो चुका और निकट भविष्य में जो होने जा रहा है उसका पूर्वाभास भी जाना जा सकता है ।

भारतीय आध्यात्म वेत्ता चिरकाल से यह तथ्य प्रमाणित करते रहे हैं कि मानव शरीर में देखने की क्षमता का प्रयोजन केवल आँखें ही पूरी नहीं करतीं, वरन् दूसरे अवयव भी ऐसे हैं जो देखने का उद्देश्य पूरा करते हैं ।

भ्रूमध्य भाग में भीतर एक ग्रन्थि होती है जिसे आज्ञाचक्र या तृतीय नेत्र कहा जाता है । शिव और पार्वती के चित्रों में उनका एक पौराणिक तीसरा नेत्र भी दिखाया जाता है । कथा के अनुसार शंकर भगवान ने इसी नेत्र को खोल कर उसमें से निकलने वाली अग्नि से कामदेव को भस्म किया था । यह दिव्य दृष्टि का केन्द्र है । इससे टेलीविजन जैसा कार्य लिया जा सकता है । दूर-दर्शन का दिव्य यन्त्र यहीं लगा हुआ है । महाभारत के सारे दृश्य संजय ने इसी के माध्यम से देखे और धृतराष्ट्र को सुनाये । चित्रलेखा द्वारा प्रद्युम्न प्रणय इस दिव्य-दर्शन का ही परिणाम था ।

यह तीसरा नेत्र अति प्रभावशाली है इससे दूर-दर्शन ही नहीं; अदृश्य और अप्रत्यक्ष भी देखा समझा जा सकता है । एक्स-रे की किरणें जिस तरह ठोस पदार्थों में होकर भी पार चली जाती हैं और आँखों से न दीख पड़ने वाली वस्तुओं के भी चित्र खींचती हैं, उसी प्रकार यह आज्ञाचक्र का कैमरा अदृश्य को देख सकता है । इसके माध्यम से न केवल पदार्थों को देखने का प्रयोजन पूरा होता है वरन् जीवित प्राणियों की मनःस्थिति को समझना भी सम्भव होता है । देखने समझने से ही बात पूरी नहीं होती आज्ञाचक्र की क्षमता इससे भी आगे है वह दूसरों को प्रभावित परिवर्तित भी कर सकती है । मेस्मेरिज्म हिप्नोटिज्म में इसी दिव्य क्षमता को स्थूल नेत्रों के माध्यम से प्रयोग किया जाता है ।

सूक्ष्म और कारण शरीर की दिव्य दृष्टि की मर्यादा और क्षमता बहुत बढ़ी चढ़ी है । उसे समझने, विकसित करने और प्रयोग करने की क्षमता योगाभ्यास से उपलब्ध होती है । पर स्थूल शरीर में भी यह शक्ति बहुत व्यापक है । आँखों से ही सब कुछ नहीं देखा जाता उसके अतिरिक्त अंगों में भी देखने समझने की क्षमता मौजूद है । मस्तिष्क, नेत्र गोलकों का फोटोग्राफी कैमरे जैसा प्रयोग करता है और पदार्थों के जो चित्र आँखों की पुतलियों के लैंस से खींचता है वे मस्तिष्क में जमा होते हैं । इनकी प्रतिक्रिया के आधार पर मस्तिष्क के ज्ञान तन्तु जो निष्कर्ष निकालते हैं उसी का नाम 'दर्शन' है । आँख इसके लिए सब से उपयुक्त माध्यम है । मस्तिष्क के रूप दर्शन केन्द्र के साथ नेत्र गोलकों के ज्ञान तन्तुओं का सीधा और समीपवर्ती सम्बन्ध है इसलिए आमतौर से हम नेत्रों से ही देखने का काम लेते हैं और मस्तिष्क उन्हीं के आधार पर अपनी निरीक्षण क्रिया को गतिशील देखता है ।

पर ऐसा नहीं समझना चाहिए कि दृष्टि शक्ति केवल नेत्रों तक ही सीमित है । अन्य अंगों के मस्तिष्क के साथ जुड़े हुए ज्ञान तन्तुओं को विकसित करके भी मस्तिष्क बहुत हद तक उस प्रयोजन की पूर्ति कर सकता है । समस्त विश्व का हर पदार्थ अपने साथ ताप और प्रकाश की विद्युत किरणें सँजोये हुए है । वे कम्पन लहरियों के साथ इस निखिल विश्व में अपना प्रवाह फैलाती हैं । ईथर तत्व के द्वारा वे दूर-दूर तक जा पहुँचती हैं और यदि उन्हें ठीक तरह से पकड़ा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सके तो जो दृश्य बहुत दूर पर अवस्थित है—जो घटनाएँ सुदूर क्षेत्रों में घटित हो रही हैं । उन्हें निकटवर्ती वस्तुओं की तरह देखा जा सकता है । इन दृश्य किरणों को पकड़ने के लिए नेत्र उपयुक्त हैं । समीपवर्ती दृश्य वही देखते हैं । और दूरवर्ती दृश्य देखने के लिए—तृतीय नेत्र को भ्रूमध्य में अवस्थित आज्ञाचक्र को प्रयुक्त किया जा सकता है । इतने पर भी यह नहीं समझ लेना चाहिए कि रूप तत्व का—सम्बन्ध नेत्रों से ही है । अग्नि तत्व की प्रधानता से 'रूप' कम्पन्न उत्पन्न होते हैं । शरीर में अग्नि तत्व का प्रतिनिधित्व नेत्र करते हैं, पर ऐसा नहीं मानना चाहिए कि अग्नि तत्व अन्यत्र शरीर के अन्य अंगों में नहीं है । समस्त शरीर पंच-तत्वों के गुम्फन से बना है । यदि किसी अन्य अंग का अग्नितत्व अनायास ही विकसित हो जायेगा या साधनात्मक प्रयत्नों द्वारा विकसित कर लिया जाय तो नेत्रों की बहुत आवश्यकता उनके माध्यम से भी पूरी हो सकती है । इसी प्रकार अन्य ज्ञानेन्द्रियों के कार्य एक सीमा तक दूसरे अंग कर सकते हैं । स्वामी विवेकानन्द द्वारा प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किए गए पौहारी बाबा प्रत्यक्षतः वायु ही ग्रहण करते थे, अन्न, जल सेवन नहीं करते थे पर शरीर के अन्य अंगों द्वारा अदृश्य जगत से उन्हें सूक्ष्म आहार बराबर मिलता रहता था इसके बिना किसी के लिए भी जीवन धारण किए रहना असम्भव है ।

क्या नेत्रों का प्रयोजन अन्य अंग पूरा कर सकते हैं ? अतीन्द्रिय क्षेत्र की इस सम्भावना के कितने ही प्रमाण समय-समय पर मिलते रहते हैं । अभी कुछ ही दिन पूर्व एक रूसी कुमारिका 'रोजा कुलेशोवा' ने अपनी उँगलियों के पोरों से नेत्र-शक्ति का प्रयोजन पूरा करके वहाँ के वैज्ञानिकों को आश्चर्य में डाल दिया । सभी जानते हैं कि रूस में नास्तिक सरकार है । वहाँ सिद्धि चमत्कार के नाम पर भारत की तरह छल-प्रपंच करने की तनिक भी गुंजाइश नहीं है । कोई ऐसा छल प्रपंच रचता—जनता को भ्रम में डालता पाया जाय तो उसे मृत्युदण्ड तक मिल सकता है । फिर वह बेचारी किशोरी ऐसा करती भी क्यों ?

कुलेशोवा अन्धों के संघ में काम करती थी । उसकी ड्यूटी उन्हीं के बीच थी । न जाने क्या अचम्भा हुआ कि उसे उँगलियों की सहायता से बहुत कुछ पढ़ लेने देख लेने की क्षमता प्राप्त हो गई । वह दायें हाथ की तीसरी और चौथी उँगलियाँ अखबार पर फिराकर पढ़ने में समर्थ हो गई । आँखों से पट्टी बाँधकर उसने अपना यह करतब अनेकों को दिखाया ।

बात आगे बढ़ी । उसे वैज्ञानिकों की प्रयोगशाला में उपस्थित होना पड़ा । 'निजनी टैमिल शैक्षणिक संस्थान मास्को' में उसे लाया गया और वैज्ञानिकों की एक समिति ने उसकी कड़ी परीक्षा ली और तथ्यों को जानने का बारीकी के साथ प्रयत्न किया । हर परीक्षण में 'कुलेशोवा' उत्तीर्ण रही । आँखों पर कड़ी पट्टी के साथ कई तरह के अन्य अवरोधक इसलिए चढ़ाये गए कि कहीं से उसे देख सकने की गुंजाइश न मिल जाय फिर भी उसने उँगलियों के पोरों के सहारे पुस्तकें पढ़कर सुनाईं । इतना ही नहीं उसने रंग भी पहचानने और डाक टिकटों पर छोटे चित्रों की बारीकियाँ भी बताईं, इस विलक्षणता को देखते हुए इसमें किसी प्रकार का सन्देह करने की गुंजाइश नहीं रह गई कि नेत्रों का काम कुलशोवा की उँगलियाँ करती हैं ।

परीक्षकों ने आगे की बात और जाननी चाही और यह देखा कि क्या यह शक्ति उसकी दो उँगलियों में ही है या किसी अन्य अंग में भी है । लड़की को स्वयं भी यह नहीं मालूम था कि यह अद्भुत क्षमता उसके किसी अन्य अंग में भी होगी । परीक्षण ने सिद्ध किया कि वह शक्ति उसके अन्य कई अंगों में भी मौजूद है । बायें हाथ की उँगलियों से दायें पैर के टखने से तथा जीभ से भी वह इस प्रयोजन को पूरा कर सकती है ।

रूसी वैज्ञानिकों के लिए यह लड़की एक अध्ययन और परीक्षण का विषय बन गई । इस कार्य के लिए डॉ. नोवोमीस्को की अध्यक्षता में वैज्ञानिकों का एक बोर्ड बना जो इस अतीन्द्रिय क्षमता के कारणों की शोध करने में संलग्न हो गया ।

इसी बीच ठीक ऐसी ही एक और घटना सामने आयी । वह अमेरिका की थी । बर्नार्ड कॉलेज न्यूयार्क के मनोविज्ञान प्राध्यापक डॉ. रिचार्ड यूटस् को ऐसी ही एक अमेरिकन महिला पोद्दोशया के अध्ययन परीक्षण में लगाना पड़ा । वह महिला घोर अन्धकार में भी आँखों में पट्टी बाँध कर रंगों को पहचान लेती थी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस अतीन्द्रिय स्थिति के कई कारण सोचे गए एक यह था प्रत्येक रंग से अलग तरह की ताप तरगें निकलती हैं । किसी के शरीर में उन तरंगों का अन्तर समझने की क्षमता हो सकती है और उस आधार पर यह पहचान सम्भव है । कुलेशोवा की उँगलियों पर ऐसें यन्त्र लगाये गए जो रंगों की किरणों को सोख लेते थे । इसके बावजूद भी लड़की ने रंगों को ठीक तरह से पहचान लिया । इसलिए वह अनुमान गलत माना गया उसने बिना रिविन के टाइप किए हुए अक्षर पढ़कर सुनाये । इसमें रंग का प्रश्न भी नहीं था । बिना रिविन के टाइप राइटर से कागज पर थोड़े निशान ही बन सकते हैं, रंग तो उसमें था ही नहीं । रंगों की ताप किरणों वाली बात इससे भी कट गई ।

रूस ही नहीं संसार के अन्य देशों के विज्ञान वेत्ताओं ने भी इस विलक्षणता को समझने की कोशिश की है । इनमें से चैकोस्लोवाकिया के परामनोविज्ञान वेत्ता 'मैलिन रिज्ल' और लैनिन ग्राड विश्वविद्यालय के प्राध्यापक मि. बेसिलियेव इस विलक्षणता को मनुष्य के अन्दर रहने वाली अतीन्द्रिय क्षमता की पृष्ठ भूमि में देखते हैं । दूसरे वैज्ञानिक दूसरी तरह के भौतिक निष्कर्ष निकाल रहे हैं । पर वे अभी किसी निश्चय समाधान पर पहुँच नहीं सके हैं । उनके लिए यह पहेली जहाँ की तहाँ है ।

उपरोक्त रूस की कुलेशोवा और अमेरिकी पोद्देशिया स्टेनले की दो घटनाएँ ही मनुष्य की अतीन्द्रिय क्षमता को प्रमाणित करती हों सो बात नहीं है । इससे पहले भी ऐसे ही अनेक प्रामाणिक उदाहरण उपलब्ध होते रहते हैं । तन्त्र विद्या के विश्व कोष 'एन साइक्लोपीडिया ऑफ दी आकल्ट' में एन्टीन मेसयर के अनुयायियों का ऐसा वर्णन है जिसमें वे पेट के माध्यम से अप्रत्यक्ष वस्तुओं का विवरण बताने में समर्थ होते थे ।

प्रो. फोन्टान ने एक फ्रांसीसी नाविक का ऐसा ही उल्लेख किया है । वह अन्धा व्यक्ति उँगलियों से छू कर ऐसे विवरण बताता था जो साधारणतया आँखों के बिना नहीं बताये जा सकते । कनाडा की एक अन्धी लड़की हाथ की कुहनियों के माध्यम से ऐसा ही अदृश्य दर्शन कर सकने में समर्थ थी ऐसे प्रमाण मिले हैं ।

फ्रांसीसी कवि-जूल्स रोमेन्स की उन दिनों परीक्ष दृष्टि विज्ञान में बड़ी दिलचस्पी थी उसने अपने साहित्य कार्यों के साथ-साथ इस विषय में भी शोध की थी और बताया है कि त्वचा में अगणित 'कीट नेत्र' विद्यमान हैं जो स्पर्श सम्वेदना के द्वारा निकटवर्ती वस्तुओं के बारे में निरन्तर जानकारी संग्रहीत करते रहते हैं । आँखों की तरह ये छोटे नेत्र वस्तुओं की आकृति भले ही स्पष्ट रूप से न जान सकें पर उनकी प्रकृति के सम्बन्ध में नेत्र गोलकों से भी अधिक ज्ञान प्राप्त करते हैं ।

प्रसिद्ध जादूगर गोगिया पाशा और प्रो. सरकार नेत्रों से कड़ी पट्टी बँधवा कर घनी आबादी की भीड़ भरी सड़कों पर मोटर साइकिल दौड़ाने के अपने करतब दिखा चुके हैं । इस प्रदर्शन में आँखों से देखने की कोई गुंजाइश तो नहीं रही है इसलिए पट्टी बाँधने से लेकर उसकी जाँच करने तक का काम ऐसे कार्यों की जानकारी रखने वाले प्रामाणिक लोगों को सौंपा गया था । उन लोगों की मोटर साइकिलें मोड़ और बचाव की सही व्यवस्था बनाती हुई निर्धारित लक्ष्य पर ठीक प्रकार जा पहुँची तो दर्शकों को वह विश्वास करना पड़ा कि बिना आँखों की सहायता के भी दूसरे माध्यमों से देखने का कार्य किया जा सकना सम्भव है । स्वामी माधवानन्दजी ने राजस्थान में जल रहित प्रदेशों में कई जगह अपनी दिव्य दृष्टि से जल स्रोतों की जानकारी दी थी और वहाँ कुआँ खोदने पर सचमुच यथा स्थान पानी निकला ।

मनुष्य अनन्त शक्तियों का भण्डार है । यदा-कदा उसकी यह अविज्ञात क्षमताएँ उभर आती हैं तो उसे अद्‌भुत और आश्चर्यजनक माना जाने लगता है । वस्तुतः ब्रह्माण्ड का एक छोटा नमूना पिण्ड अपने भीतर विश्व की समस्त सामर्थ्यें बीज रूप से छिपाये बैठा है । साधना द्वारा उन प्रसुप्त शक्ति स्रोतों का प्रकटीकरण किया जा सकता है । यदाकदा उन अतीन्द्रिय शक्तियों का आभास मिलता रहता है वे उदाहरण यही सिद्ध करते हैं कि मानवीय अविज्ञात सामर्थ्य को विशालता और महानता के अस्तित्व पर अविश्वास न किया जाय वरन् उन्हें ढूँढ़ने, जगाने और उपयोग में लाने के प्रयास में लगा जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य की दो नहीं तीन आँखें हैं

भगवान ने आँखें सभी प्राणियों को दी हैं पर वे काम उतना ही देती हैं जितना कि उस प्राणी के निर्वाह के लिए आवश्यक है । बिना जरूरत का भार उसने किसी पर भी नहीं लादा है । सृष्टि का विस्तार असीम है । आवश्यक नहीं कि हर प्राणी उसके हर रहस्य को खोजें और उसके लिए लाथ पैर पटके जिसकी कि उसे सामान्य निर्वाह के लिए आवश्यकता ही नहीं है । हर प्राणी की शरीर संरचना इसी स्तर की है कि उसे अपना काम चलाने समय गुजारने में कठिनाई न पड़े और जानकारियों का इतना बोझ भी न लदे जो उसके लिए आवश्यक नहीं है । साधन सुविधाओं के सम्बन्ध में भी यही बात है । सृष्टि एक असीम सागर है उसमें से मछली, शैवाल, घोंघे, प्रबाल और बादल अपनी काम चलाऊ आवश्यकता ही पूर्ण करते हैं । जो अनावश्यक है उसके लिए हाथ पैर नहीं पीटते ।

आँखों का अन्यान्य सभी अवयवों की तुलना में अधिक महत्त्व है । वे जीवनचर्या में बहुत काम आती हैं तो भी हर प्राणी के शरीर में उन्हें इस योग्य बनाया गया है और इस प्रकार लगाया गया है कि उन्हें दूसरों से तुलना करने के झंझट में न पड़कर अपना काम चलाते रहने की सुविधा मिलती रहे ।

मेंढ़क, रेंगने वाले कीड़े-मकोड़े और मछलियाँ हिलती-जुलती चीजों को देखते हैं । जो स्थिर है वह उन्हें दिखाई ही नहीं पड़ता । मेंढ़क को एक लम्बा चौड़ा बगीचा मात्र भूरे पर्दे की तरह स्थिर दीखता है या तो मक्खी आदि शिकार स्वयं उठे या मेढ़क उछले तभी उसे काम की वस्तु देखने पकड़ने का अवसर मिलता है । अन्यथा सब कुछ स्थिर एवं एक रंग का ही दीखता रहता है ।

कुत्ता सिर्फ काला सफेद रंग पहचानता है । शिकार तलाश करने में उसकी आँखें उतना काम नहीं देतीं जितना कि नाक के सहारे सूँघकर पता चलता है । आँखें तो रुकावटों से बचाने भर में काम आती हैं । खरगोश उसकी इस कमजोरी को भली-भाँति जानते हैं इसलिए अपना बचाव करने के लिए हवा की विपरीत दिशा में दौड़ते हैं ताकि सूँघने से पता न चले ।

घोड़े की आँखें ऊपर और नीचे भी देख सकती हैं । उसे शत्रुओं से बचने के लिए मात्र सामने देखना ही पर्याप्त नहीं होगा वरन् अन्य दिशाओं में क्या हो रहा है इसकी जानकारी भी बहुत काम आती है । प्रकृति ने उसकी आँखें इसी हिसाब से बनाई हैं ।

चील गिद्धों की आँखें बहुत दूर का देख सकती हैं यही कारण है कि वे ऊँचे उड़ते रहकर भी जमीन पर अपने आहार का पता लगाने को नीचे उतर पड़ते हैं । उकाव मछलियों की ताक में तालाबों के इर्द-गिर्द मँडराता रहता है । साँस लेने के लिए जैसे ही कोई मछली पानी से बाहर तनिक भी सिर उठाती है कि बिजली की तरह झपटकर वह उसे लपक लेता है ।

मनुष्य की पुतलियाँ चलती हैं और पलक झपकते हैं जबकि यह विशेषता अन्य प्राणियों में बहुत कम मात्रा में ही देखी जाती है । मनुष्य प्रायः ७०० प्रकार के रंगों को देख सकता है । किन्तु इससे क्या । सात रंगों के सम्मिश्रण तो ६७०० के लगभग बनते हैं । इन सभी को देख पाना मनुष्य की आँखों के लिए सम्भव नहीं ।

टिड्डी, मक्खियों, मच्छरों के कई-कई आँखें होती हैं । वे कुछ से देखते हैं तथा कुछ से अन्य प्रकार के अनुभव करते हैं । प्राज्ञैतिहासिक काल के प्राणी अपेक्षाकृत अधिक आँखों वाले थे जब मस्तिष्क का विकास हुआ और सामने दीखने वाली दो आँखें ही आवश्यक ज्ञान अर्जित करने में कई प्रकार की भूमिकाएँ निभाने लगीं तो उनकी बढ़ी हुई संख्या अनावश्यक होने के कारण क्रमशः समाप्त होती चली गई ।

मनुष्य और उसी वर्ग के पशुओं को रीढ़ वाले प्राणियों में गिना जाता है । उनमें से सभी की तीन आँखें होती हैं । दो प्रत्यक्ष दृश्यमान एक खोपड़ी के भीतर विद्यमान किन्तु टटोलने में अदृश्य । इस तीसरे नेत्र को वैज्ञानिक भाषा में 'पीनियल ग्लाण्ड' कहा जाता है । मनुष्य में यह ग्रन्थि प्रायः डेढ़ दो मिलीग्राम की होती है । बनावट आँख की तरह । इसमें एक पारदर्शक द्रव भरा रहता हैं । आँख की पुतली की तरह उसमें प्रकाश संवेदी कोशिकाएँ भी रहती हैं । न केवल मनुष्य में वरन् थोड़ा हट-बढ़कर थोड़े आकार प्रकार के अन्तर से यह प्रायः सभी रीढ़ वाले प्राणियों में पायी जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रत्यक्ष वाली दो आँखें सिर्फ अमुक दूरी तक अमुक स्तर के प्रकाश में दीख पड़ने वाले दृश्य ही देख पाती हैं पर यह तीसरी आँख अनेकों काम आती हैं । प्रकाश की कमी पड़ने पर पलकों वाली आँखों को कुछ दिखाई नहीं पड़ता परन्तु सर्वदा, सर्वत्र किसी न किसी रूप में विद्यमान रहने वाली सूक्ष्म प्रकाश तरंगों के सहारे वह अन्धकार में भी बहुत कुछ देख सकती है, अनुमान इसी आधार पर लगाते जाते हैं । अन्धों के लिए तो यह लाठी का काम देती है । न केवल दृश्य वरन् गंध, शब्द और ताप की इन तरंगों को भी वह ग्रहण कर सकती है जो नाक, कान या त्वचा की पकड़ में सामान्यतया आती नहीं है । मछलियाँ इसी उपकरण के सहारे पानी का तापमान नापती हैं और अनुकूल क्षेत्र के लिए चली जाती हैं । वे समुद्र की गहराई और अत्यधिक दूरी में क्या स्थिति है, इस सम्बन्ध की सभी जानकारियाँ प्राप्त करती रहती हैं जो खुली आँखों की सामर्थ्य से बाहर है ।

मेंढ़कों की तीसरी आँख में 'मेलाटोनि' नामक हारमोन निकलता है । उसी प्रकृति वरदान के सहारे उनका काया उन चित्र-विचित्र पुरुषार्थों को सम्पन्न करती रहती है जो अन्य प्राणियों के बस से बाहर है ।

पीनियल ग्लाण्ड का मनुष्य की विशेषतया महत्त्वाकांक्षा और कामुकता के साथ गहरा सम्बन्ध है । इस क्षेत्र में थोड़ी सी विशिष्टता बढ़ जाने से मनुष्य असाधारण रूप से महत्त्वाकांक्षी हो उठते हैं और दुस्साहस भरे कदम उठाने के लिए बिना डरे, रुके, आतुर रहते देखा जाता है । इसी प्रकार इस क्षेत्र के उतार-चढ़ावों से कामुकता की प्रवृत्ति पर गहरा असर पड़ता है । वह असाधारण रूप से उत्तेजित एवं अतृप्त भी रहती देखी गई है और ऐसा भी पाया गया कि उस उत्साह का एक प्रकार से लोप ही हो जाय एवं नपुंसकता की स्थिति बन पड़े । अल्प आयु में प्रौढ़ों जैसी परिपक्व एवं विकसित जननेन्द्रियों वाले कितने ही व्यक्तियों की यह विचित्रता, पीनियल ग्लाण्ड की उत्तेजना से सम्बन्धित पायी गई है । इसी प्रकार शरीर से सर्वथा हृष्ट-पुष्ट होने पर भी वासना से घृणा करने वालों या डरने वालों में इसी क्षेत्र की शिथिलता को आधारभूत कारण समझा गया है । इतना ही नहीं आयु की तुलना बहुत घटी या बढ़ी हुए व्यक्तित्व का आश्चर्य भी इसी कारण दृश्यमान होता है । कई अधेड़ों की प्रवृत्ति बचपन जैसी पायी गई है जबकि कई बच्चे बुजुर्गों जैसे गम्भीर और दूरदर्शी देखे गए हैं ।

इसी तीसरे नेत्र का सहयोग करने के लिए एक छोटी ग्रन्थि मस्तिष्क के पिछले भाग में रहती है । इसे 'पिट्युटरी' ग्रन्थि कहते हैं । यों इसका प्रभाव क्षेत्र एडरीनल और थाइराइड ग्रन्थियों से रिसने वाले हारमोनों पर अधिक रहता है फिर भी वह पीनियल के कामो में बराबर हिस्सा बंटाती और भार हल्का करती है । इसलिए इन दोनों का एक युग्म माना गया है ।

मनुष्य में उदासी या प्रसन्नता का स्वभाव इसी क्षेत्र की स्थिति एवं प्रतिक्रिया पर निर्भर रहता है । आलसी और उत्साही का अन्तर भी इसी क्षेत्र से सम्बन्धित है । शरीर का विकास जब असाधारण रूप से घट रहा या बढ़ रहा होता तब उसका कारण पोषण की न्यूनाधिकता न होकर उपरोक्त ग्रन्थियों की हलचलों में कोई व्यतिरेक उत्पन्न होने की बात ही मस्तिष्क विधा के ज्ञाता सोचते और तद्नुरूप उपचार करते देखे गए हैं ।

चूहों और मुर्गियों पर किए गए प्रयोगों में यह तथ्य स्पष्ट रूप से परिलक्षित हुआ कि यह तीसरी आँख जो सामान्यतया निरर्थक जैसी प्रतीत होती है, उनकी शारीरिक और मानसिक स्थिति को उठाने गिराने में कितनी बड़ी भूमिका निभाती है । उस क्षेत्र को उत्तेजित कर देने पर यह प्राणी अपनी सामान्य गतिविधियों और योग्यताओं को कई गुना बढ़ा सके । जबकि शिथिल कर देने पर वे मुर्दनी के शिकार हुए और अपनी दक्षता तथा क्रियाशीलता सर्वथा स्वस्थ होते हुए भी गँवा बैठे ।

मेरुदण्डधारी प्राणियों को जिनमें सोचने-विचारने की शक्ति होती है, तीन-तीन आँखों का प्राकृतिक अनुदान मिला है जो कि जीवित रहने के लिए अपरिहार्य है । आमतौर से हम तीसरी आँख से अनजान होते हैं किन्तु यह प्राणियों के दिमाग में सक्रिय रूप में पायी जाती हैं एवं इसका प्रयोग भी वे बड़ी कुशलतापूर्वक करते देखे जाते हैं ।

वैज्ञानिकों ने इस तृतीय नेत्र को पीनियल ग्लेन्ड (ग्रन्थि) कहा है जबकि यह तीसरी आँख का ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूपान्तरित स्वरूप है । पीनियल ग्लेन्ड जीवधारियों में पूर्व में आँख के ही आकार का था । इसमें रोंएँदार एक लेंस का प्रति रूप होता है और एक पारदर्शक द्रव भी अन्दर रहता है इसके अतिरिक्त प्रकाश संवेदी कोशिकाएँ एवं अल्प विकसित रेटिना भी पायी जाती है । मानव प्राणी में इसका वजन दो मिलीग्राम होता है ।

यह मेंढ़क की खोपड़ी में तथा छिपकलियों में चमड़ी के नीचे पाया जाता है । इन जीव-जन्तुओं में यह तीसरा नेत्र रंग की पहचान कर सकता है । वैज्ञानिकों की राय है कि यदि मेंढ़क प्रकृति की व्यवस्था के अनुसार पानी के अलावा धरती पर अधिक रह सका होता तब यह बहुत उपयोगी रहा होता । जब मेंढ़क पानी में रहता है तब उसका तीसरा नेत्र पानी के बाहर के आस-पास के वातावरण का पता लगाकर संकेत देता है तब वह धरती पर आता है । इस नेत्र के माध्यम से यह रंगों को भी पहचानता है तथा यौन सम्पर्क स्थापित करता है ।

छिपकलियों में तीसरे नेत्र से कोई फायदा नहीं क्योंकि वह चमड़ों के नीचे ढका रहता है । ह्वेल मछली के पैर उपयोग न होने के कारण लुप्त हो गए । तीसरे नेत्र के विषय में भी वैज्ञानिक यही उत्तर ढूंढ़ रहे हैं, कि इसके वेस्टीजियल अंग माना जाने का कारण यही हो सकता है । वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि जिन प्राणियों का खून ठण्डा होता है उनमें यह तीसरा नेत्र थर्मोस्टेट का कार्य करता है । क्योंकि उनका तापक्रम एक-सा नहीं रहता है । जैसे वातावरण होता है बदल जाता है । इस प्रकार से प्राणी यह पता लगा लेता है कि ठण्डे या गर्म स्थान किसमें जाना है ।

मेंढ़क के पूँछ वाले बच्चे जिन्हें टेडपोल कहते हैं यदि अन्धेरे में रख दिए जायँ तो उनका रंग हल्का हो जाता है यह तीसरे नेत्र से निकलने वाले हारमोन्स मेलाटोनिन का ही परिणाम है ।

आदमियों में यह ग्रन्थि के रूप में परिवर्तित हो गई है इसमें तन्त्रिका कोशिकाएँ पायी जाती हैं । ग्रन्थि की गतिविधि गड़बड़ होने से मनुष्य जल्दी यौन विकास की दृष्टि से जल्दी परिपक्वता को प्राप्त हो जाता है । उसके जननांग तेजी से बढ़ने लगते हैं । यदि इस ग्रन्थि में हारमोन की मात्रा बढ़ जाती है तो मनुष्य में बचपना ही बना रहता है और जननांग अविकसित रहते हैं ।

जर्मन वैज्ञानिकों का ऐसा मत है कि इस तीसरे नेत्र के द्वारा दिशा ज्ञान भी होता है । इसमें पाया जाने वाला हारमोन मेलाटोनिन मनुष्य की मानसिक उदासी से सम्बन्धित है । अनेकानेक मनोविकारों एवं मानसिक गुणों का सम्बन्ध यहाँ स्रावित हारमोन स्रावों से है ।

पीनियल ग्रन्थि मेंढ़क और गिरगिट के मस्तिष्क पर एक उभार के रूप में ऊँची उठी हुई देखी जा सकती है । वे इसी के सहारे ऋतुओं के अनुरूप अपनी स्थिति बदलते रहते हैं जिसे रंग परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है ।

मनुष्य की आँखें मस्तिष्कीय पीनियल ग्रन्थि से प्रभावित होतीं और उसी स्तर के अनुरूप दृश्य देखती हैं । इन्फ्रारेड और अल्फा वायलेट किरणों को पकड़ने की क्षमता उसमें विशेष रूप से पायी जाती है इसलिए मनुष्य प्रकाश किरणों के सातों रंग न देखकर मात्र उन्हीं रंगों को उतनी ही मात्रा में देख पाता है जितने के लिए कि पीनियल ग्रन्थि का कामकाजी भाग सहमति प्रदान करता है ।

जिस प्रकार मस्तिष्क का मात्र ७ प्रतिशत कामकाजी प्रयोजनों में प्रयुक्त होता है और शेष भाग प्रसुप्त स्थिति में पड़ा रहता है उसी प्रकार पीनियल का एक अंश ही प्रकृति ने दैनिक व्यवहार में काम आने के लिए पर्याप्त समझा है और शेष को विशेष व्यक्तियों द्वारा, विशेष प्रयोजन के लिए, विशेष प्रयत्नों के सहारे प्रयुक्त किए जाने के लिए सुरक्षित रखा है । यदि उन अन्धेरे क्षेत्रों को प्रकाशवान बनाया जा सके तो न केवल पीनियल ग्रन्थि वरन् सुविस्तृत मस्तिष्कीय चेतना भी जाग्रत हो सकती है और मानवी क्षमता से रहस्य भरे चमत्कारों का समावेश हो सकता है ।

सन् १८६८ में जर्मन चिकित्सिक ह्यूवनर के सामने एक बारह वर्षीय ऐसा बालक लाया गया जिसके अन्य सभी अंग तो आयु के हिसाब से ही विकसित हुए थे किन्तु जननेन्द्रिय पूर्ण वयस्कों जितनी परिपुष्ट हो गई थी और वह सन्तानोत्पादन में हर दृष्टि से समर्थ थी । इस असाधारण और एकांगी प्रगति का कारण उन्होंने खोजा तो पाया कि उसकी पीनियल ग्रन्थि को अविकसित रहने वाला भाग किसी कारण उत्तेजित हो गया है और उसने अपने प्रभाव क्षेत्र को अतिशय विकसित करने की भूमिका निभाई है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ह्यूवनर से पूर्व पीनियल ग्रन्थि की रहस्यमय क्षमता के सम्बन्ध में ईसा में ४०० वर्ष पहले यूनान के चिकित्सक हैरी फिलम ने ऐसे संकेत दिए थे कि यह क्षेत्र मानवी व्यक्तित्व के अनेक पहलुओं को प्रभावित कर सकने में समर्थ है । फ्रांसीसी तत्ववेत्ता रेने डेस्कार्टीज ने भी इस क्षेत्र को आत्मा का निवास माना था और वहाँ दिव्य दर्शन की सम्भावना व्यक्त की थी ।

पीनियल में कितनी ही अतीन्द्रिय क्षमताएँ विद्यमान हैं । आज्ञाचक्र जागरण एवं तृतीय नेत्र उन्मीलन के रूप में उन्हीं के महात्म्य प्रतिफल की चर्चा होती रहती है । शिवजी द्वारा कामदेव जलाया जाना, दमयन्ती के शाप से व्याध का भस्म होना, गांधार द्वारा दुर्योधन का बज्रांग बना दिया जाना, संजय को महाभारत का दृश्य धृतराष्ट्र को दिखाना, लेखा द्वारा ऊषा के अनिरुद्ध दर्शन कराना जैसा पौराणिक आख्याकिकाएँ इसी तृतीय नेत्र उन्मीलन के साथ जुड़ी हुई सिद्धियों का दिग्दर्शन कराती हैं । मेस्मेरिज्म, हिप्नोटिज्म में नेत्रों के द्वारा जिस बेधक दृष्टि को उगाया बढ़ाया एवं प्रयुक्त किया जाता है वस्तुतः वह उसी तृतीय नेत्र का उत्पादन है जिसे शरीर शास्त्री पीनियल ग्रन्थि के नाम से सम्बर्धन करते हैं ।

चर्म चक्षुओं की यदि हिफाजत न रखी जाय, उनके प्रति उपेक्षा बरती जाय, दृश्य शक्ति का व्यतिक्रम किया जाय तो वे असमय में ही खराब हो जाते हैं और समान या आंशिक मान्यता का शिकार बनना पड़ता है । यही बात तृतीय नेत्र के सम्बन्ध में भी है । ध्यान योग त्राटक अभ्यास आदि के माध्यम से आज्ञाचक्र के नाम से जानने वाले पीनियल संस्थान को विशिष्ट क्षमता सम्पन्न बना सकते हैं । तीसरी आँख प्रस्तुत दो आँखों से कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । उसे न तो उपेक्षित पड़े रहने देना चाहिए और कुदृष्टि अपनाकर नष्ट-भ्रष्ट ही करना चाहिए ।

तृतीय नेत्र की दिव्य क्षमता

यों तो मानव शरीर के हर अंग, अवयव का महत्त्व है । शरीर के विभिन्न क्रिया-कलापों में उनकी छोटी-बड़ी भूमिका है । पर उन सबमें मस्तिष्क का अपना अलग स्थान है । वह न केवल मूर्धा पर अवस्थित है वरन् मूर्धन्य गतिविधियों का संचालक भी है । आमतौर पर उससे सोचने—विचार करने, स्मृति रखने निर्णय लेने जैसे काम लिए जाते हैं पर मस्तिष्क की सामर्थ्य उतने तक ही सीमित नहीं है । सूक्ष्म शक्तियों का वह ऐसा भाण्डागार है जिसका एक अत्यन्त छोटा भाग ही सामने आता तथा प्रयुक्त हो पाता है । अपने भीतर अद्‌भुत शक्तियों को दबाये एक ऐसे ही मानसिक केन्द्र की जानकारी वैज्ञानिकों को मिली है, जिसमें रहस्यमय शक्तियों के होने—उभरते रहने की सम्भावना वे व्यक्त करते हैं । जिसे योग विज्ञानी चिर पुरातन काल से आज्ञाचक्र—तृतीय नेत्र कहते रहे हैं तथा महान सम्भावनाओं से युक्त बताते रहे हैं, सम्भवतः वह केन्द्र यहीं कहीं स्थित हो ।

दोनों भौहों के मध्य में स्थिति कोश-समूह को योग-विज्ञान में आज्ञाचक्र कहा गया है । यह दिव्य दृष्टि का एक महत्त्वपूर्ण संयन्त्र है । यह रेडियो सेट के उस अति सूक्ष्म क्रिस्टल या चुम्बक-घटक से कहीं अधिक सूक्ष्म और समर्थ है, जो अदृश्य तथा अश्रव्य ध्वनि तरंगों को अपनी ओर खींचता है—उन्हें पकड़ता है और पुनः उन्हें दृश्य एवं श्रव्य कम्पनों में परिवर्तित कर देता है । अदृश्य को देखने तथा अश्रव्य को सुनने की अद्‌भुत सामर्थ्य इस आज्ञाचक्र में है । संजय ने इसी के माध्यम से महाभारत के विविध दृश्य देखे थे तथा गीता के उद्‌बोधनों को सुना था । इसे ही शिवनेत्र कहा गया है । जिससे भगवान शिव ने कामदेव को भस्म किया था ।

वेदों तथा उपनिषदों में आज्ञाचक्र को छटी इन्द्रिय अर्थात् अतीन्द्रिय क्षमताओं का समुच्चय कहा गया है । जागरण की स्थिति में इसके द्वारा दूरस्थ घटनाओं को देखा तथा सुना जा सकता है, मनोविज्ञान वेत्ता जिसे ई. एस. पी. नाम से पुकारते हैं ।

मनःशास्त्रियों का मत है कि स्वप्नावस्था में सामान्यतया आँखें बन्द रहती हैं । अन्य ज्ञानेन्द्रियाँ भी विश्राम की स्थिति में होती हैं । कामेन्द्रियाँ भी शिथिल हो जाती हैं । उस स्थिति में दोनों भौंहों के बीच की आप्टिक चिआज्मा के आस-पास की कोशिकाएँ ही सक्रिय होतीं तथा विविध प्रकार के स्वप्नों की अनुभूति कराती हैं । स्वप्नों में मनुष्य का दायां मस्तिष्क सक्रिय होता है, वह विभिन्न प्रकार की बातें करता, सुनता तथा अन्य तरह की चेष्टाएँ भी करता है । यह तथ्य इस पक्ष पर प्रकाश डालता है कि हर व्यक्ति बिना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आँख कान के भी देखने-सुनने की दिव्य सामर्थ्य रखता है । स्वप्नों के पूर्वाभास के माध्यम से उस क्षमता का छोटा-सा परिचय भर मिलता है ।

स्नायु विज्ञानियों ने अपने परीक्षणों में पाया है कि आज्ञाचक्र का जहाँ केन्द्र है, वहाँ स्थित आप्टिक चिआज्मा के समीप की कोशिकाओं से निरन्तर इलेक्ट्रो मैग्नेटिक तरंगें निकलती रहती हैं । इनकी क्षमता सामर्थ्य एक्स-रे लेसर आदि किरणों से भी अधिक मानी जाती है । वे संकल्प से परिचालित तथा नियन्त्रित होती है । विविध स्थूल अवरोधों को पार करते हुए निर्दिष्ट स्थान पर जा पहुँचने की उनमें विलक्षण सामर्थ्य है । आज्ञाचक्र की सूक्ष्म विद्युत चुम्बकीय तरंगें ही परोक्ष जगत का दर्शन कराती हैं । इनकी सहायता से किसी भी व्यक्ति को मनःस्थिति-भावना, कल्पना, इच्छा, आकांक्षा आदि के विषय में सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है । अपनी ही नहीं दूसरों की अभिरुचि एवं प्रकृति को भी तृतीय नेत्र की सामर्थ्य के सहारे बदलना सम्भव है । अदृश्य सहायकों, भूत-प्रेत एवं पितरों से भी सम्पर्क साधना इस यौगिक तृतीय नेत्र—आज्ञाचक्र के सहयोग से सम्भव है ।

आज्ञाचक्र केन्द्र की सूक्ष्मग्राही सम्वेदनशीलता तथा विलक्षणता को योगशास्त्र में तो प्रतिपादित किया ही गया है, अब तो अगणित मनोविज्ञान के प्रयोगों से यह प्रमाणित भी हो चुका है कि यह वह केन्द्र है जिसके द्वारा दिव्य दर्शन, दिव्य श्रवण, दूरदर्शन, भूत भविष्य का ज्ञान, पूर्वाभास, दूरानुभूति, विचार सम्प्रेषण जैसे कार्य सम्पन्न हो सकते हैं । उनका मत है कि इस केन्द्र से निकलने वाली सूक्ष्म किन्तु प्राणवान भाव तरंगों के द्वारा सम्मोहन—मेस्मेरिज्म जैसे कार्यों को कर पाना भी सम्भव है ।

ध्यान योगियों का अभिमत है कि आत्म-साक्षात्कार, ईश्वरानुभूति, दिव्य अनुदानों के आदान-प्रदान जैसे महान प्रयोजन तीसरे नेत्र के जागरण से ही सम्भव होते हैं । सामान्य-सा दिखने वाला व्यक्ति भी इस केन्द्र के जागरण से परम सत्ता के एकाकार होने का परम लक्ष्य सिद्ध कर सकता है । ध्यान योग के विविध प्रयोग इस केन्द्र के जागरण के लिए ही किए जाते हैं ।

नूतन विकासवाद के प्रवक्ता कुछ वैज्ञानिकों का अभिमत है कि बहुत समय पूर्व मस्तिष्क के मध्य दोनों भौंहों के बीच एक तीसरे नेत्र का अस्तित्व था, जो बाद में ग्रन्थि के रूप में बदल गया । पीनियल ग्रन्थि उस तीसरे नेत्र का ही अब बदला रूप है जो अपने भीतर अगणित रहस्यों को छिपाये हुए है । मनुष्य में इसका वजन मुश्किल से एक या दो मिलीग्राम होता है । पर इस छोटी-सी रचना का शरीर के विकास एवं उसकी हलचलों में भारी योगदान है । एकमात्र यही ऐसी ग्रन्थि है जिसमें तन्त्रिका कोशिकाएँ विधिवत् मस्तिष्कीय कोशों की तरह पायी जाती हैं । यदि इस ग्रन्थि का सन्तुलन गड़बड़ा जाय तो अनेकों प्रकार की शारीरिक-मानसिक समस्याएँ पैदा हो सकती हैं । जाग्रत स्थिति में कुरेदने उभारने पर इससे अगणित उपलब्धियाँ भी हस्तगत होती हैं ।

असन्तुलन की स्थिति में शारीरिक प्रौढ़ता शीघ्र आ धमकती है । जननांग तेजी से बढ़ने लगते हैं । ग्रन्थि के हारमोनों के असन्तुलन से विकास अवरुद्ध हो जाता है । जीवन पर्यन्त बचपन का अभिशाप लद जाता है । शरीर एवं मस्तिष्क का विकास बन्द हो सकता है । कुछ विशेषज्ञों का यह भी मत है कि पीनियल ग्रन्थि रक्त में शक्कर की मात्रा के माध्यम से "ग्रोथ" को सन्तुलित बनाये रखने में पिट्यूटरी ग्रन्थि तथा पैन्क्रियाज की मदद करती है । इस ग्रन्थि का नियन्त्रण एड्रीनल तथा थायराइड ग्रन्थियों पर भी रहता है ।

वैज्ञानिकों ने अपनी खोजों में पाया है कि मनुष्येतर कितने जीव-जन्तु ऐसे हैं जिनमें तीसरे नेत्र का अस्तित्व स्थूल रूप से भी विद्यमान है । अपने दैनन्दिन कार्यों में वे उस नेत्र का उपयोग उसी प्रकार करते हैं जैसे कि सामान्य मनुष्य आँखों का करता है । न केवल देखने बल्कि समय, दिशा, मौसम, प्रकृति की घटनाओं का भी अनुमान वे अपने तृतीय नेत्र से लगा लेते हैं । यह मात्र उसका स्थूल स्वरूप है जिसका उपयोग जीव-जन्तु कर पाते हैं । मनुष्य के लिए तो अनेकों सम्भावनाएँ छिपी पड़ी हैं ।

वैज्ञानिकों की खोज से यह भी मालूम हुआ है कि ठण्डे खून वाले प्राणियों में इस क्षेत्र की कोशिकाएँ थर्मोस्टेट का काम करती हैं । उनके शरीर का तापक्रम एक-सा नहीं रहता, बदलता रहता है । गर्मी में गरम और ठण्ड में ठण्डा । तापक्रम नियन्त्रण के लिए वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गर्मी में ठण्डे स्थानों पर रहते हैं तथा ठण्ड में गरम स्थानों पर । उनकी इस विलक्षणता के कारण उन्हें तापक्रम की पूरी खबर रहती है तथा समय-समय पर स्थान परिवर्तन के लिए निर्देश देती रहती है ।

प. जर्मनी में हुई खोजों का निष्कर्ष है कि तीसरी आँख कुतुबनुमा का भी काम करती है । दूसरे पशु-पक्षी दिशा का अनुमान अपने इसी चुम्बक के आधार पर लगा लेते हैं । पृथ्वी चुम्बकत्व एवं जैव चुम्बकत्व दोनों की तरंगों की गति समान है, यह इससे सिद्ध होता है कि मनुष्यों में भी अपवाद रूप में किन्हीं-किन्हीं में यह कुतुबनुमा क्रियाशील बताया गया है । जिस प्रकार साइबेरिया से आने वाली आब्रजक पक्षी अपनी दिशा स्वयं ढूँढ़ते एवं आस्ट्रेलिया फिर वापस अपने स्थान पहुँच जाते हैं, मनुष्यों में भी यही बोध विद्यमान होता है ।

मानवी विलक्षणता के परिचायक किसी अंग का उपयोग न हो तो एनाटामी की दृष्टि से वेस्टीजियल आर्गन (निरर्थक अंग) ही कहा जायेगा । यही विडम्बना पीनियल—पीटुचरी एक्सिस एवं हाइपोथैलेमिक ऊत्तकों के साथ हुई है । सामान्य नजर आने वाले क्रिया-कलापों में असामान्य सामर्थ्य छुपी पड़ी है । किन्हीं-किन्हीं में यह फूट पड़ती है तो उन विभूतियों का परिचय मिलता है ।

जो प्रत्यक्ष है, दृश्यमान है उससे भी परे एक विलक्षण दिव्य शक्ति सम्पन्न परोक्ष संसार है । उसमें घटने वाली गतिविधियाँ स्थूल नेत्रों से दो दिखाई नहीं पड़ती, पर साधना पराक्रम से आज्ञाचक्र को जगा लेने पर उनकी अनुभूतियाँ सहज ही होने लगती हैं । परामनोवैज्ञानिकों का यह कार्य क्षेत्र अब एक मान्यता प्राप्त स्वयं एक परिपूर्ण विज्ञान का स्थान ले चुका है । अनेकों घटनाक्रम यदा-कदा घटते एवं इस अविज्ञात की झाँकी हमें दिखाते रहते हैं ।

डॉ. क्रीरी ने अपने प्रयोगों की सच्चाई जाँचने के लिए अनेक प्रामाणिक व्यक्तियों से अनुरोध किया । जाँचने वालों में डबलिन विश्वविद्यालय के प्रोफेसर सर विलियम बैरट, इंग्लैण्ड की सोसाइटी फॉर साइकिल रिसर्च के प्रधान प्रो. सिजविग जैसे मूर्धन्य लोग थे । उन्होंने कई तरह से उलट-पुलट कर इन प्रयोगों को देखा और उन प्रयोगों के पीछे निहित सच्चाई को स्वीकारा । इन प्रयोगों की जाँच का विवरण 'विचार संप्रेषण समिति' ने प्रकाशित किया ।

गेविन मैक्सवेल ने अपने अनुसन्धानों में एक अस्सी वर्षीय अन्धे का वर्णन किया है, जिसने समुद्र में डूबी हुई एक मछुहारे की लाश का सही स्थान बताने और उसे बाहर लाने में सहायता की थी । उन्होंने पश्चिमी पठार के द्वीप समूहों के लोगों में यह क्षमता विशेष रूप से पाये जाने का उल्लेख किया है । शमस फियारना द्वीप में एक मछुआरा मछली पकड़ते समय गाँव के समीप की खाड़ी में डूब गया । उसकी लाश निकालने और विधिवत् दफनाने के लिए सारा गाँव उत्सुक था । सभी नावें कई दिन तक लगातार खाड़ी में चक्कर काटती रहीं । निराशा छाई हुई थी । तभी उस ८० वर्षीय अन्धे कैलम मेकिनन ने कहा "आप लोग मुझे नाव में बिठाकर ले चलें और खाड़ी में घुमाते रहें । संभवतः मैं लाश को तलाश करा दूँगा ।" वैसा ही किया गया । सही जगह मिलने पर बुड्ढा चिल्लाया, काँटा डालो, लाश ठीक नीचे है । वैसा ही किया गया । फलतः मृतक को बाहर निकाल लिया गया और विधिवत् दफनाया गया ।"

अभी-अभी पाठकों ने महर्षि महेश योगी की यौगिक उड़ान का विवरण समाचार पत्रों में पढ़ा होगा । स्प्रिंगदार गद्दों पर उड़ने वाली यह रेस तो मजाक बनकर रह गई, पर गुरुत्वाशक्ति के विपरीत ऊँचा उठ पाना व हवा में तैर-पाना अतीन्द्रिय क्षमताओं के जागरण से सम्भव है । इटली की पादरी जोसेफ ने अपने समय में हवा में उड़ सकने की क्षमता प्रदर्शित करके अनोखी ख्याति पायी थी । इस सिद्धि की चर्चा तब तो देशभर में फैल गई जबकि उनने अपनी मृत्यु से कुछ ही समय पूर्व एक डॉक्टर को भी अपने साथ हवा में उड़ाकर दिखा दिया । जोसेफ की मृत्यु १६६३ ई. हुई । जब वह मरणासन्न थे, तो प्रसिद्ध चिकित्सक फ्रांसिस्को थिरयोली को चिकित्सा के लिए बुलाया गया । डॉक्टर ने अपने संस्मरण में लिखा है—"मैं देख-भाल कर ही रहा था कि जोसेफ ने मेरा हाथ पकड़ा और हवा में तैरने लगा । उससे जकड़ा हुआ मैं भी उड़ रहा था । इसके बाद वह मुझे भी उड़ाते हुए फ्रांस के गिरजे तक ले गया और वहीं बैठकर प्रार्थना करने लगे । मुझसे कहा "आपके इलाज की जरूरत नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रही । मुझे भगवान ने बुलाया है सो मैं जल्दी ही परलोक जा रहा हूँ ।" डॉक्टर सन्न रह गया । दूसरे दिन ही उनकी मृत्यु हो गई ।

इटली के सरकारी कागजों में जोसेफ के हवा में तैरने के कितने ही प्रसंग हैं जो पुलिस तथा दूसरे अफसरों ने तथ्य का पता लगाने के लिए जाँच-पड़ताल के सम्बन्ध में संग्रह किए थे । किंवदन्तियों से लेकर प्रत्यक्षदर्शियों तक के ऐसे अनेकानेक प्रसंग इटली की जनता में प्रचलित हैं जिनसे पता चलता है कि वे ऊँची रखी हुई ईसा की मूर्त्तियों तक उछलकर जा पहुँचते थे और ऐसे ही कुछ देर अधर में लटके रहते थे । लोग उन्हें अलौकिक क्षमताओं से सम्पन्न सिद्ध पुरुष मानने लगे थे । पूर्वार्त्त दर्शन के अनुसार ये अलौकिक सूक्ष्म शरीर के जागरण की सिद्धि मात्र है ।

"डाउजिंग" (जमीन के अन्दर क्या है, यह बताने की क्षमता) भी एक ऐसी ही विधा है जो किन्हीं-किन्हीं में जन्म से ही जागी पायी जाती है । कोलोरेडो प्रान्त लेडीवली नगर में के. जब्ल्यू. पी. जोंस नाम का एक ऐसा व्यक्ति हुआ है जो जमीन पर चलकर यह बता देता था कि जिस भूमि पर वह चल रहा है उसके बीच किस धातु की कितनी गहरी तथा गितनी बड़ी खदान है । उसे जमीन में दबी भिन्न धातुओं का प्रभाव अपने शरीर पर विभिन्न प्रकार के स्पन्दनों से होता था । अनुभव ने उसे यह सिखा दिया था किस धातु का स्पन्दन कैसा होता है । अपनी इस विशेषता का उसने भरपूर लाभ उठाया । कइयों को खदानें बताकर उनसे हिस्सा लिया और कुछ खदानें अपने धन से खरीदी और चलाईं । अमेरिका का यह बहुत धन-सम्पन्न व्यक्ति इसी अपनी विशेषता के कारण बना था । अपने यहाँ पानी वाली बाबा बड़े मशहूर रहे हैं । स्वामी विवेकानन्द ने अपने अतीन्द्रिय ज्ञान से ही टाटा को जमशेदपुर (जो बाद में बसा) में लौह अयस्क होने की सम्भावना बताकर खुदाई हेतु कहा था ।

प्रख्यात भविष्य वक्ता पीटर हरकौस की विलक्षण अतीन्द्रिय शक्ति विश्व प्रसिद्ध है । वह घटनास्थल की किसी भी वस्तु को छूता और उसे उस स्थान से सम्बन्धित अतीत में घटी, वर्तमान में घट रही तथा भविष्य में घटित होने वाली घटनाएँ स्पष्ट दिखने लगतीं ।

पेरिस में कई शीर्षस्थ अधिकारियों की उपस्थिति में हरकौस का आह्वान किया गया कि वह अपनी अतीन्द्रिय सामर्थ्य का प्रदर्शन करें । पीटर हरकौस को कंघा, कैंची, घड़ी, लाइटर और बटुआ देकर कहा गया कि आप इनके आधार पर एक मामले का पता लगाएँ । पीटर ने पाँचों को छुआ और ध्यान मग्न हो गया । उसने दो वस्तुएँ अनावश्यक कहकर लौटा दीं । फिर बटुए को हाथ में थामकर खोया हुआ-सा बोलने लगा—"एक गंजा आदमी है । वह सफेद कोट पहने है । एक पहाड़ी के पास छोटे-से मकान में वह रहता है, जिसके बगल से रेलवे लाइन गुजरती है । मकान से कुछ दूर एक गोदाम है । दोनों स्थानों के बीच एक शव पड़ा है । यह हत्या का मामला है । यह हत्या किसी निकोला नामक व्यक्ति द्वारा उसे जहर मिला दूध पिलाकर की गई है । लगता है यह सफेद कोटधारी गंजा ही निकोला है—जो इन दिनों जेल में है । निकोला भी मर गया है ।

पीटर हरकौस की सभी बातें तो सही थीं । पर जेल में बन्द निकोला जीवित था, तभी अधिकारियों को समाचार दिया गया कि दो घण्टे पहले निकोला ने आत्महत्या कर ली है ।

पूर्वाभास की क्षमता कई व्यक्तियों में असाधारण तौर विकसित होती है । द्वितीय महायुद्ध में ऐसे लोगों का दोनों पक्षों ने उपयोग किया था । हिटलर के परामर्श मण्डल में पाँच ऐसे ही दिव्यदर्शी भी थे । उनका नेतत्व करते थे विलियम क्राफ्ट ।

इसी मण्डली के एक सदस्य श्री डी. व्होल ने तत्कालीन ब्रिटिश विदेश मन्त्री लार्ड हेली फिक्स को सर्वप्रथम एक भोज में अनुरोध किए जाने पर हिटलर की योजनाओं का पूर्वाभास दिया । वे सच निकलीं और श्री व्होल को फौज में कैप्टेन का पद दिया गया । श्री डी. व्होल हिटलर की अनेक योजनाओं की जानकारी अपनी दिव्यदृष्टि से दे देते । ब्रिटेन तदनुसार रणनीति बनाता । फौजी अफसरों को जिम्मेदारियाँ सौंपते समय भी उनके भविष्य की बाबत श्री डी. व्होल से सलाह ली जाती । उन्हीं के परामर्श पर माउण्ट गुमरी को फील्ड मार्शल बनाया गया । उनकी सफलताएँ सर्वविदित हैं । जापानी जहाजी बेड़े को नष्ट करने की योजना भी श्री व्हील की सलाह से बनी थी । महायुद्ध की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाप्ति के बाद श्री व्हील ने सलाहकार का काम छोड़कर स्वयं को लेखन को समर्पित कर दिया । यों तो स्थूल आँखें व्यक्तित्व के गहन मर्मस्थल का प्रतीक हैं । बचपन का भोलापन, यौवन की मादकता, प्रौढ़ता की परिपक्वता हम किसी के नेत्रों में नेत्र डालकर आसानी से अवलोकन कर सकते हैं ।

सौम्यता सज्जनता भी आँखों से झलकती है और क्रोध आवेश भी उन्हें देखकर किस स्तर तक उभरा, इसे सहज ही अनुमान लगा लेने में देर नहीं लगती । मैत्री शत्रुता उपेक्षा के भाव भी चेहरे पर चमकते हैं और शत्रुता की वक्रता भी ।

व्यक्ति के स्वभाव और चरित्र को पढ़ने में समूचा चेहरा ही दर्पण का काम करता है । पर उसका केन्द्र बिन्दु नेत्र ही हैं । समूचे चेहरे पर यों भावभंगिमा उभर कर व्यक्ति के मानसिक धरातल की जानकारी देती हैं पर उसका सार संक्षेप में नेत्रों में भी बोलते झांकते देखा जा सकता है । यदि पढ़ने की क्षमता हो तो उसे ध्यानपूर्वक देखने से वस्तुस्थिति को सहज ही पहचाना जा सकता है ।

देखा जाय तो शरीर के सभी अवयव अपने स्थान पर महत्त्वपूर्ण हैं पर नेत्रों की उपयोगिता आवश्यकता दोनों ही बढ़ी चढ़ी हैं । कहते हैं कि "दाँत गए तो स्वाद गया, और आँख गई तो जहान गया ।" इस उक्ति में व्यावहारिक दृष्टि से समुचित तथ्य समाया हुआ है । यों अन्धे भी किसी तरह काम करते और ढर्रा चलाते हैं । पर वे दूसरे व्यक्तियों व पदार्थों के सम्बन्ध में कुछ भी जान नहीं पाते । ऐसी दशा में कल्पना या स्पर्श शक्ति ही थोड़ा सहारा देकर काम चला देती है । इसके अतिरिक्त अध्ययन आध्यापन का भी आधा रास्ता रुक जाता है । ब्रेललिपि के आधार पर उभरे हुए अक्षरों के सहारे की कुछ पढ़ा जा सकता है या किसी सुनकर स्मरण शक्ति की धारणा ही कुछ काम चला पाने में सहायक सिद्ध हो सकती है । उपयोगिता और आवश्यकता का बौद्धिक पक्ष बहुत करके नेत्रों पर भी निर्भर है । महत्ता इसलिए है कि देव दर्शन जैसी भावना उभारने वाले प्रयोजन भी एक सीमा तक सध पाते हैं ।

आध्यात्मिक जगत में जिस अन्तर्मुखी होने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है, वह भी बहिर्मुखी प्रत्यक्ष जगत से अपने को अवरुद्ध करके भीतर घसीट ले जाने से ही बन पड़ती है । अन्यथा नेत्र न होने पर कल्पना क्षेत्र से विनिर्मित किया हुआ एक प्रपंच मस्तिष्क में घुस बैठता है । उसे अवरुद्ध करना और भी कठिन है । नेत्र चले जाने पर किसी का कथन सुना जा सकता है । पर ऐसा नहीं हो सकता कि किसी की मुखाकृत्ति या सौन्दर्य सुषमा देखकर वस्तु-स्थिति को अधिक अच्छी तरह समझना और उस आधार पर सही निष्कर्ष निकाल सकना सम्भव हो सके ।

फिर भी प्रकृति इतनी उदार है कि नेत्र न रहने पर भी अपनी दयालुता से अन्य छुटपुट सूत्रों के सहारे उसकी प्रतिभा निखार देती है । यही कारण है कि सूरदास जैसी प्रतिभाएँ नेत्र विहीन स्थिति में भी अपना काम करती रहीं ।

जिनके नेत्र हैं, उन्हें दर्पण के सहारे बारीक दृष्टि से स्वयं अवलोकन करना चाहिए और यदि उसमें क्षुद्रताएँ समाविष्ट दीखें तो उनके परिमार्जन का प्रयत्न करना चाहिए । अहंता, वासना, कपट, कामना आदि अपनी भीतरी दुष्प्रवृत्तियों को नेत्र मात्र से उभरता देखा जा सकता है । इस अनगढ़ता को अपनी समीक्षा दूसरों से कराकर अपने द्वारा स्वयं मिटाना चाहिए । आत्म-निरीक्षण और आत्म-परीक्षण का प्रयोग अपने द्वारा अधिक अच्छी तरह किया जा सकता है । बाहर के सामान्य लोगों में सूक्ष्म बुद्धि का अभाव होता है । इसलिए वे अपने दृष्टिकोण से निन्दा स्तुति करते हैं और समीक्षा की दृष्टि से वे राग द्वेष वश प्रायः भटके हुए ही होते हैं । अस्तु नेत्रों को माध्यम बना कर आत्म समीक्षा का प्रयोग साधना यह अपना ही काम है अथवा फिर किसी दिव्यदर्शी साधक से, गुरुजन से इसकी समीक्षा करानी चाहिए । जो उसमें अनौचित्य झलका हो, उसका निराकरण करने के लिए सन्निध होना चाहिए ।

दोनों भृकुटियों के मध्य में तृतीय नेत्र का स्थान है । इसी को दिव्य दृष्टि या ज्ञान चक्षु कहते हैं । उसको जाग्रत करने की साधना साधारण त्राटक के आधार पर की जाती है । प्रत्यक्ष प्रकाशमान वस्तु को देखकर उसका स्वरूप नेत्र बन्द करके चिन्तन करते रहने की विधा को त्राटक साधना कहा गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इससे चर्म चक्षुओं में आत्म तेज का आविर्भाव होता है और दृष्टिकोण के परिमार्जन का क्रम चल पड़ता है ।

अन्तर्त्राटक का एक तरीका यह भी है कि बिना किसी बाहरी उपकरण के दोनों आँखें बन्द करके मात्र तीसरे नेत्र से ही दिव्य जगत का अवलोकन किया जाय । आरम्भ में कुछ विशेष स्पष्ट रूप से दिखाई नहीं पड़ता । अपनी संचित कल्पनाएँ ही उभर कर आती हैं । पर थोड़े दिन अभ्यास करने पर तृतीय नेत्र के दिव्य प्रकाश का उभरना आरम्भ होता है और आँखें मूँदे रहकर भी अन्यत्र होने वाली या हो चुकी घटनाओं का दर्शन किया जा सकता है ।

तृतीय नेत्र की शक्ति कितनी विशिष्ट होती है, इसका पुरातन विवरण शंकर जी द्वारा कामदेव को जला दिया जाने के रूप में किया जाता है । दयमन्ती को छेड़ने वाला व्याध भी इसी शाप प्रकोप से नेत्रों की तीव्र बेधक शक्ति से जल मरा था । वस्तुतः तृतीय नेत्र प्रकाश और ऊर्जा का पुंज भी है । उसके आधार ऐसा कुछ भी किया जा सकता है जिससे दिव्य दर्शन के अतिरिक्त शाप वरदान का उद्देश्य भी पूरा हो सके । शक्तिपात, में हिप्नोटिज्म में उस नेत्र शक्ति का प्रयोग किया जाता है जो पहले से ही तृतीय नेत्र के भंडार में भर ली गई होती है । इस शक्ति से उत्पन्न हुई दिव्य दृष्टि अनेकों का अनेक प्रकार से भला कर सकती है ।

यह भण्डार कदाचित अनायास भी फूट पड़ता है । इटली के सुप्रसिद्ध पर्यटन केन्द्र फसिया का निवासी बेनेदेतो सुपीनो जब १६ वर्ष का था तब उसमें एक विलक्षण क्षमता उभरी कि वह जिस वस्तु को भी एकाग्र दृष्टि से देखता वही जलने लगती । आतिशी शीशे द्वारा सूर्य किरणों के एकत्रित करने पर जब जिस प्रकार अग्नि प्रकट हो जाती है, ठीक उसके दोनों नेत्रों की दृष्टि एकत्रित किए जाने पर वही स्थिति उभर आती है और वस्तुएँ जलने लगती हैं । घर का सामान जल जाता । जिसे भी वह घूर कर देखता, वह पसीने पसीने हो जाता । आखिर इस व्यथा की जाँच इटली के मूधन्य वैज्ञानिक डॉ. मार्सियों से कराई । उसने जाँच पड़ताल के बाद इतना ही बताया कि इसके नेत्रों में ऊर्जा उगलने की विशेषता तो है, पर यह नहीं कहा जा सकता कि इसका कारण और उपचार क्या है ? टेलीविजन पर भी उसका प्रभाव दिखाया गया ।

मूलतः यह शक्ति होती सभी में है, पर वह अनायास तो किसी किसी में ही अपवाद स्वरूप विकसित हो जाती है । उसका "लेसर" स्तर का मूल स्रोत तृतीय नेत्र अवस्थिति होता है । इसे योगाभ्यास परक साधनों के लिए तमाशा दिखाने के लिए नहीं, वरन् मात्र उच्च उद्देश्यों के लिए विकसित किया जा सकता है ।

अभी तक समझा जाता था कि किसी वस्तु को देखने के लिए दो ही वस्तुएँ आवश्यक हैं एक प्रकाश और दूसरी आँख । प्रकाश जब आँखों से टकराता है तो आँखों का तंन्त्रिका तंत्र एक विशेष प्रकार की रासायनिक प्रक्रिया का आयोजन कर सारी सूचनाएँ मस्तिष्क को भेजता है और दृश्य दिखाई देता है । यह विज्ञान की मान्यता थी । अब विज्ञान भी भारतीय दर्शन की इस मान्यता को स्वीकार करने लगा है कि प्रकाश और आँखों से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण घटक है—मन । मन एक तीसरी और उपरोक्त दोनों से महत्त्वपूर्ण वस्तु है जो प्रकाश और आँखों के क्रिया-कलाप को अनुभव करता है तथा नई तरह की योजनाएँ बनाता है, आदेश देता है और अनुभूति का संयोजन कर दूसरे अवयवों में विभक्त करता है ।

सीधी-सी बात है कि जिसे हर कोई जान और अनुभव कर सकता है कि प्रकाश और आँख के रहते भी वह सब कुछ नहीं दिखाई देता है जो सामने प्रस्तुत रहता है । दिखाई पड़ने वाली वस्तु का दृश्य अनुभव तभी होता है जब मन का ध्यान उस ओर रहता है अन्यथा सैकड़ों दृश्य अपने आस-पास घटते रहते हैं, उनमें से प्रत्येक को न कोई देखता है और देखता भी है तो उसे अनदेखा कर देता है । पुस्तक पढ़ते समय आँखों के सामने पूरा पृष्ठ रहता है । आँख पर पूरे पृष्ठ की छाया पड़ती है परन्तु मस्तिष्क तक वही अक्षर, वही पंक्तियाँ पहुँचती हैं जिन्हें पढ़ा जा रहा होता है अर्थात् जिन पर मन केन्द्रित रहता है । वही दृश्य दिखाई देते हैं, जिन तक मानसिक चेतना, मन की एकाग्रता केन्द्रित हो । कहने का आशय यह कि यदि मानसिक चेतना का प्रकाश न हो तो प्रकाश और आँखों के होते हुए भी देखना सम्भव नहीं है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानसिक चेतना को जाग्रत किया जा सके, उसे सशक्त तथा प्रखर बनाया जा सके तो वह सब कुछ भी देखा और जाना जा सकता है जो आँखों से देख पाना सम्भव नहीं होता या जिन्हें देखने में आँखें समर्थ नहीं होती हैं । दूसरे शब्दों में इसे यों भी कहा जा सकता है कि दो स्थूल नेत्रों और दृष्टिवर्धन के अद्यावधि आविष्कारों की सम्मिलित उपलब्धियों से भी अधिक समर्थ और अधिक समक्ष एक तीसरा नेत्र मनुष्य के पास है । इस यन्त्र को न कहीं से खरीदना पड़ता है और न इसके संचालन की शिक्षा लेनी पड़ती है । योगशास्त्रियों ने इसे आज्ञाचक्र भी कहा है और इसका स्थान भ्रूमध्य भाग बताया है । तीसरा नेत्र खोलने या आज्ञाचक्र जाग्रत करने के लिए विभिन्न साधना अनुष्ठानों का विधान है । उन्हें निष्ठापूर्वक सम्पन्न करते हुए वह अन्तर्ज्योति विकसित की जा सकती है जिसके माध्यम से लोक-लोकान्तरों की भू-गर्भ की पंच भौतिक परिस्थितियों को देखा और समझा जा सके ।

इतना ही नहीं इस नेत्र में वह शक्ति भी है कि जीवित प्राणियों की मनःस्थिति, भावना, कल्पना, योजना, इच्छा, आस्था एवं प्रकृति को भी समझा जा सके । यों सामान्य नेत्र भी अपने आप में अद्‌भुत हैं । उसकी संरचना भी इतनी विलक्षण है कि उसे देखते हुए आश्चर्यचकित रह जाना पड़ता है । जिनमें प्रकाश दर्शन की रहस्यमय परतें सन्निहित हैं, मस्तिष्क के उन संस्थानों का विवेचन कर पाना भी विरलों के लिए ही सम्भव है और समझ पाना तो और भी कठिन है ।

यहाँ चर्चा इन दोनों नेत्रों से भिन्न और उनसे भी विलक्षण तृतीय नेत्र की की जा रही है । मस्तिष्क के अग्रभाग में जकड़े हुए दो नेत्र तो सभी को दीखते हैं, लेकिन उनके मध्यवर्ती अन्तराल में जो तीसरा नेत्र है उसका परिचय और अनुभव योगीजनों को ही मिल पाता है । दोनों भौंहों के मध्यभाग में जो बाल रहित स्थान है, उसे भृकुटि कहते हैं । उसके पीछे नीचे अस्थि आवरण के बाद एक बेर की गुठली जैसी ग्रन्थि आती है । इसे आज्ञाचक्र का स्थान कहते हैं । स्मरण रहे यह ग्रन्थि आज्ञाचक्र नहीं है । जैसे शरीर आत्मा नहीं है । शरीर में रहते हुए भी आत्म-चेतना का जिस प्रकार शरीर से भिन्न अस्तित्व है उसी प्रकार इस ग्रन्थि में होते हुए भी आज्ञा-चक्र भिन्न बात है । इसका अस्तित्व माँस-मज्जा से बनी यह ग्रन्थि नहीं है अपितु वह तो सूक्ष्म अस्तित्व रखती है । फिर भी शरीर शास्त्र की दृष्टि से इस ग्रन्थि का कार्य और प्रयोजन अभी तक पूरी तरह नहीं समझा जा सका है । आत्मविद्या के अन्वेषी ज्ञाता इसके महत्त्व और कार्य की विशेषता को बहुत पहले से जानते हैं ।

इसे दिव्य दृष्टि का केन्द्र भी कहते हैं । दृष्टि यहीं से निसृत होती है । भूमध्य भाग में अवस्थित इस तृतीय नेत्र के कई प्रमाण अब तक मिल चुके हैं । यों तो पुराण ग्रन्थों में शिव और पार्वती के प्रसंगों में भी इस तृतीय नेत्र का उल्लेख आता है । कथा के अनुसार शंकर भगवान से इसी नेत्र को खोलकर उसमें निकलने वाली अग्नि द्वारा कामदेव को भस्म किया था । संजय ने महाभारत के सारे दृश्य इसी के माध्यम से देखे और धृतराष्ट्र को सुनाये । चित्रलेखा द्वारा प्रद्युम्न के प्रति उसे बिना देखे ही आकर्षित होना तथा उसके साथ प्रणय सम्बन्ध का संकल्प लेना इसी दिव्य दर्शन का ही परिणाम था । ये तो खैर पौराणिक घटनाएँ हुईं, लोग इनकी विश्वसनीयता पर सन्देह भी कर सकते हैं । पर ऐसे ढेरों प्रसंग हैं जिनमें इस तृतीय नेत्र के अस्तित्व तथा उसकी क्षमता का परिचय मिलता है ।

कुछ दिनों पहले रूस से प्रकाशित होने वाले वहाँ के प्रसिद्ध समाचार पत्र इजवेस्तिया में एक समाचार प्रकाशित हुआ था । जिसके अनुसार निझनी तागिल नामक स्थान पर रहने वाली 'रोजा' नामक युवती पंक्तियों पर उंगली चलाकर मामूली प्रेस में छपी पुस्तकें पढ़ लेती है । दुनिया के कई प्रतिष्ठित समाचार पत्रों ने इस युवती के प्रमाण सहित फोटो और विवरण प्रकाशित किए हैं । आश्चर्य तो यह है कि वह पुस्तकों में बने हुए किसी भी फोटो को बिना देखे अंगुलियों से छूकर ही बता देती है कि यह फोटो किसका है । यदि वह चित्रित व्यक्ति के बारे में नहीं जानती होती है तो उसकी आकृति का वर्णन कर देती है कि यह अमुक तरह का व्यक्ति है, मूँछ दाड़ी वाला है कि बिना दाढ़ी मूँछ का, ऐसे कान हैं, और अमुक पोशाक पहने हुए है ।

फोटो कोई भी क्यों न हो, किसी व्यक्ति की हो, जानवर की, वस्तु की, इमारत की या किसी प्राकृतिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इश्यावली की 'रोजा' उसके बारे में केवल छूकर ही बता देती है । यह कैसे सम्भव है ? कहीं कोई धोखा या फ्राड तो नहीं है ? वैज्ञानिकों ने यह जाँच करने के लिए रोजा की आँखों पर पट्टियाँ बाँधकर तथा उसके चेहरे को गले तक मास्क से ढक दिया, फिर भी रोजा ने अक्षरों को पहचान लिया और फोटो के विवरण भी बता दिए । इसके बाद वैज्ञानिकों ने प्रकाश में से 'इन्फ्रारेड किरणें' निकाला हुआ प्रकाश छपे हुए कागज पर डाला । रोजा ने उस कागज को भी पढ़ लिया । हाँ, यह जरूर हुआ कि रोजा इस स्थिति में आकृतियाँ नहीं पहचान पायी । लेकिन वैज्ञानिकों ने यह मान लिया कि आँखें ही नहीं, शरीर के अन्य अंगों में भी दृष्टि तत्व हो सकते हैं । वैज्ञानिकों ने बताया कि यह असामान्य स्थिति है और हम कह नहीं सकते कि शरीर में ऐसे तत्व और कहीं है या नहीं अथवा उन्हें विकसित किया जा सकता है अथवा नहीं ? उन्होंने यह निश्चय भी व्यक्त किया कि प्रकाश को ग्रहण करने वाले तत्व उँगुलियों में कैसे आ गए ? यह जानने के लिए बाकायदा अनुसन्धान एवं प्रयोग किए जायेंगे ।

यदि इस तथ्य को खोज निकाला गया तो ध्यान द्वारा प्रकाश कणों को आकर्षित करने तथा शरीर में अतीन्द्रिय ज्ञान की क्षमता उत्पन्न करने वाली भारतीय योग प्रणाली पूर्णतः सम्मत प्रामाणित हो जायेगी । रोजा के समान ही प्रसिद्ध मिस्टीक प्रो. फोण्टान ने एक अन्धे फ्रांसीसी व्यक्ति का उल्लेख किया है । वह व्यक्ति उँगलियों से छूकर ऐसे विवरण बताया करता था जो साधारणतः आँखों के बिना नहीं बताये जा सकते । कनाडा की एक अन्धी लड़की कहानियों के माध्यम से ऐसा चमत्कार प्रदर्शन करने में सक्षम थी । फ्रांस के प्रसिद्ध कवि जूल्स रोमेन्स की उन दिनों परोक्ष दृष्टि विज्ञान में बड़ी दिलचस्पी थी । उन्होंने अपने साहित्यिक कार्यों के साथ-साथ इस विषय में शोध की थी और बताया था कि त्वचा में तीसरा नेत्र विद्यमान है जो स्पर्श सम्वेदना के द्वारा निकटवर्ती वस्तु के बारे में वृहत्तर जानकारी संग्रहित करते रहते हैं । आँखों की तरह ये छोटे नेत्र वस्तुओं की आकृति भले ही स्पष्ट रूप से जान सकें, पर उनकी प्रकृति के सम्बन्ध में नेत्र गोलकों की भाँति ही ज्ञान प्राप्त करते हैं ।

भूमिका अदृश्य वस्तुओं को देखने, भू-गर्भ में छिपी जलधारा और अन्य वस्तुओं का पता लगाने वाले व्यक्तियों के समाचार आये दिन प्रकाशित होते रहते हैं । उस विद्या को रेण्डोमेन्सी कहते हैं । रेण्डोमेन्सी विज्ञान के द्वारा जमीन में दबे खनिज, रसायन, तेल आदि वस्तुओं का पता लगाया जा सकता है । केवल जल की तलाश करने वाली विद्या 'वाटर डाउनिंग' में तो कई लोग पारंगत है । आयरलैंड के विकलो पहाड़ी क्षेत्र में मीलों दूरी तक कहीं पानी का नाम निशान नहीं था । जमीन भी बहुत कड़ी और पथरीली थी । प्रो. वेनेट जो वाटर डाउनिंग में पारंगत थे, ने खदान विशेषज्ञों के आग्रह पर अपनी इस क्षमता का सफल उपयोग किया । वे कई घण्टे तक उस क्षेत्र में घूमते रहे और अपने ढंग से उस स्थान का परीक्षण करते रहे । अनन्तः वे एक स्थान पर रुके और कहा कि यहाँ केवल चौदह फुट गहराई पर एक अच्छा जल स्रोत है । खुदाई प्रारम्भ हुई और प्रो. वेनेट का कथन बिल्कुल सच निकला । चौदह फुट तक खुदाई करने पर पानी की एक जोरदार धारा उबल पड़ी ।

पिछले दिनों गुजरात के चन्द्रवदन मेहता का नाम पत्र-पत्रिकाओं में काफी लोकप्रिय हुआ है । श्री मेहता ने बम्बई में अनेक प्रतिष्ठानों के आस-पास पानी का पता लगाकर इन्जीनियरों को चकित कर दिया । कुछ समय पूर्व ब्लिट्ज ने फल्टण (महाराष्ट्र) के दानी नामक एक सज्जन का विवरण प्रकाशित किया था जो अब तक दस हजार स्थानों पर भूमि में छिपे जल का पता लगा चुका है । वे अपनी इस विशेषता के कारण इतने अधिक प्रसिद्ध हो चुके हैं कि लोग उन्हें 'पानी महाराज' के नाम से पुकारते हैं । उनकी सेवाओं का लाभ न केवल भारत सरकार वरन् इटली, जर्मनी एवं चेकोस्लोवाकिया देशों की सरकारें भी उठा चुकी हैं ।

यह सब सूक्ष्म शरीर की दिव्य दृष्टि, आज्ञाचक्र का ही चमत्कार है । इसकी मर्यादा और क्षमता बहुत बढ़ी-चढ़ी है । उसे समझने, विकसित करने और प्रयोग में लाने की क्षमता योगाभ्यास से ही उपलब्ध होती है । उपरोक्त व्यक्तियों के उदाहरण इस बात के प्रमाण हैं कि आँखों से ही सब कुछ नहीं देखा जा सकता । आँखों के अतिरिक्त दूसरे अंगों, इन्द्रियातीत अवयवों में भी देखने समझने की क्षमता विद्यमान है । मस्तिष्क नेत्र गोलकों का फोटोग्राफी कैमरे जैसा प्रयोग करता है और पदार्थों के जो चित्र आँखों की पुतलियों के लेंस से खींचता है, वे मस्तिष्क में जमा होते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनकी प्रतिक्रिया के आधार पर मस्तिष्क के ज्ञान तन्तु जो निष्कर्ष निकालते हैं, उसी का नाम दर्शन है । आँख इसके लिए उपयुक्त माध्यम है ।

समस्त दिशा में विद्यमान प्रत्येक पदार्थ अपने साथ ताप और प्रकाश की विद्युत किरणें संजोये हुए है । कम्पन लहरियों के माध्यम से वे पदार्थ अपना प्रवाह निखिल विश्व में फैलाते रहते हैं । ईथर तत्व के द्वारा वे किरणें, लहरियाँ दूर-दूर तक जा पहुँचती हैं । यदि उन्हें ठीक तरह से पकड़ा जा सके तो दृश्य बहुत दूर अवस्थित है, जो घटनाएँ सुदूर क्षेत्रों में घटित हो रही हैं उन्हें भी निकटवर्ती वस्तुओं की तरह देखा जा सकता है । इन दृश्य किरणों को पकड़ने के लिए नेत्र उपयुक्त हैं, यह बात ठीक है समीपवर्ती दृश्य नेत्रों के माध्यम से ही देखे जा सकते हैं और दूरवर्ती या अदृश्य दर्शन के लिए तृतीय नेत्र को—आज्ञाचक्र को प्रयुक्त किया जा सकता है । इस नेत्र के उन्मीलन में योगाभ्यास ही समर्थ है । अपने भीतर की प्रकाश सत्ता को यदि योगाभ्यास द्वारा विकसित किया जा सके, तृतीय नेत्र को जाग्रत किया जा सके तो उससे भी बाहरी पदार्थों को बिना आँखों के भी देखा जा सकता है । भौतिक विज्ञान में टेलीविजन प्रक्रिया के द्वारा अन्यत्र का घटनाक्रम किसी अन्य स्थान पर यथावत् देखा जा सकता है । इससे भी अधिक महत्त्वपूर्ण यन्त्र हमारे आज्ञाचक्र में मौजूद हैं और उसके सहारे वह सब कुछ देखा जा सकता है जो कहीं भी घटित हो रहा है अथवा घटित हो चुका है । इस शक्ति को अधिक विकसित कर लेने पर भविष्य की झाँकी भी उसी प्रकार मिल सकती है जिस प्रकार कि यन्त्रों द्वारा निकट भविष्य में आने वाले आँधी तूफान या मौसम बदलने सम्बन्धी जानकारी मिलती है ।

क्या तृतीय नेत्र का जागरण सम्भव है ?

मनुष्य के तीसरी आँख होती है, यह विज्ञान में भले ही विवाद का विषय हो; पर सम्पूर्ण आध्यात्म जगत इस बात पर एकमत है कि मनुष्य का एक तृतीय दिव्य नेत्र भी है, जिसे प्रयासपूर्वक आध्यात्मिक उपचारों के माध्यम से खोला और जगाया जा सकता है ।

इस सन्दर्भ में अनेक पौराणिक आख्यान भी हैं । एक के अनुसार भगवान शंकर ने कामदेव को अपने इसी नेत्र द्वारा जला कर भस्मसात् किया था । इसी कारण भगवान शंकर के चित्रों में तृतीय चक्षु को भी चित्रित दिखाया जाता है । कहा जाता है कि जब उनका यह चक्षु खुलता है, तो संसार में हाहाकार मच जाता है । इसलिए उन्हें "महाकाल" कहा गया है, अर्थात् जो काल से ऊपर हो और प्रकृति में जरा भी व्यक्तिक्रम आने पर प्रलय जैसी स्थिति उत्पन्न कर दे । उनका एक नाम प्रलयंकर भी है; पर ऐसी बात नहीं कि उनका यह दिव्य चक्षु सदा प्रलय ही मचाता रहता है । वास्तविकता तो यह है कि इसमें दो प्रकार की शक्तियाँ हैं—एक "शिव" शक्ति कहलाती है और दूसरी "रुद्र" । जब विश्व का कल्याण करना होता है, तो उनके उक्त नेत्र के 'शिव शक्ति' वाला पक्ष काम करता है और जब अवांछनीय तत्वों को हटाना-मिटाना अभीष्ट हो, तो इसका दूसरा भीषण और विनाशकारी पक्ष 'रुद्र शक्ति' काम करता है । इन दिनों महाकाल की यह दोनों शक्तियाँ साथ-साथ काम कर रही हैं, इसलिए एक और जहाँ कुहराम का वीभत्स दृश्य दिखाई पड़ता है, वहीं दूसरी ओर सृजन की सुनिश्चित सम्भावना भी अग्रगामी होती हुई प्रतीत होती है । यह शिव का पौराणिक प्रसंग हुआ ।

इसके ऐतिहासिक उदाहरण भी देखने को मिलते हैं । संजय के बारे में कहा जाता है कि उनने मीलों दूर लड़े जा रहे महाभारत युद्ध के पल-पल का वर्णन १८ दिनों तक धृतराष्ट्र को सुनाया था । वह ऐसे ही दिव्य जागरण का परिणाम था । विवेकानन्द ने अपने इसी दिव्य नेत्र का प्रयोग करते हुए जमशेद जी टाटा को बिहार के उक्त स्थान में कोयले का पता बताया था । सूरदास के सम्बन्ध में प्रचलित है कि वे यदा-कदा नवनीतप्रिया के दर्शन करने अपने निवास गोवर्धन (पारसोली) से गोकुल जाया करते थे । एक दिन वहाँ के पुजारी के पुत्र गिरधर ने किसी के बहकावे में आकर उनकी परीक्षा लेनी चाही । उस दिन उसने मूर्ति को निर्वसन कर मात्र मोतियों की मालाओं से शृंगार किया और सूरदास से उसका वर्णन करने को कहा । सूर ने एक पद रचकर उसका यों उल्लेख किया—

"देखे री हरि नंगम नंगा ।
जलसुत भूषन अंग बिराजत,
बसनहीन छबि उठत तरंगा ॥"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वर्णन बिल्कुल सही पाकर पुजारी का पुत्र बड़ा लज्जित हुआ और क्षमा-याचना की । वे गोवर्धन के श्रीनाथ जी की प्रतिमा के दर्शन प्रायः प्रतिदिन इसी दृष्टि से करते थे और न केवल करते थे, वरन् हर रोज उनकी अद्‌भुत साज-सज्जा का वर्णन पद-रचना द्वारा औरों को भी सुनाया करते थे ।

विज्ञान इस सम्बन्ध में क्या कहता है ? यहाँ यह भी विचारणीय विषय है, अतः इसका लेखा-जोखा भी आवश्यक है । तृतीय आँख के अस्तित्व के बारे में वह सर्वथा इन्कार तो नहीं करता; पर मनुष्य में ऐसी कोई अलौकिक दृष्टि है, इसकी स्पष्ट शब्दों में कभी स्वीकारोक्ति भी नहीं की । इसके कई कारण हो सकते हैं । प्रथम, तो यह स्थूल विज्ञान है, पंचभौतिक तत्वों से बने पदार्थों और प्राणियों की संरचना तक ही पिछले दिनों उसके शोध और अनुसन्धान सीमित रहे हैं । दूसरे, सूक्ष्म की गहराइयों तक पहुँच पाना कदाचित् अगले दिनों उसके द्वारा सम्भव हो सके; पर अब तक तो वह इस क्षेत्र में लगभग असफल ही रहा है, अस्तु यहाँ उसके विगत की उपलब्धियों की तनिक चर्चा कर लेना अनुचित भी न होगा । मानवेत्तर प्राणियों में से कइयों के उदाहरण प्रस्तुत करते हुए शरीर शास्त्र कहता है कि उनमें तृतीय नेत्र अथवा इससे मिलता-जुलता कोई अंग पूर्व में कभी विद्यमान था, जो अब अनावश्यक व अनुपयोगी होने के कारण अवशेष के रूप में उपस्थित रहकर जन्तु की राई-रत्ती जैसी जरूरत की ही पूर्ति करता रहता है । प्रमाण के रूप में जीव विज्ञानी न्यूजीलैण्ड के निकट के द्वीपों में छिपकली सदृश्य बहुतायत में पाया जाने वाला जन्तु 'तुआतारा' का उदाहरण प्रस्तुत करते हैं और कहते हैं कि यह विश्व के उन कतिपय प्राणियों में से एक है, जिसमें 'तीसरी आँख' के अवशेष खोजे जा सकते हैं । ज्ञातव्य है कि इस विलक्षण प्राणी के सिरे में आँख जैसी एक संरचना होती है । आँख के लेंस की तरह का ही एक लेंस एवं उसके पीछे दृष्टि पटल जैसी एक बनावट विद्यमान होती हैं । सामान्य जन्तुओं में आँख को सुरक्षा प्रदान करने के लिए जिस प्रकार पलकों की व्यवस्था है, वैसे ही सम्पूर्ण संरचना एक पतली झिल्ली से ढकी होती है । इससे मिलता-जुलता अंग "लेम्प्रे" नामक मछली एवं मेढ़कों की कुछ विशेष प्रजातियों में भी पाया जाता है । इस अंग के सम्बन्ध में जीव विज्ञानियों का कहना है कि उक्त अवयव आँख जैसा दीखते हुए भी आँख का कार्य नहीं करता और मात्र फोटो रिसेप्टर—प्रकाश संग्राहक की आवश्यकता भर पूर्ति करता है । जानने योग्य तथ्य यह है कि सामान्य आँख भी एक प्रकार से ग्रहण करने वाली संरचना है, पर वह इससे आगे का एक अन्य कार्य भी करती है, वह यह कि वस्तु का प्रकाशचित्र ज्ञान-तन्तुओं के माध्यम से मस्तिष्क तक पहुँचा देती है, जहाँ उसका अध्ययन-विश्लेषण कर पहचानने का कार्य सम्पन्न होता है । उपरोक्त जन्तुओं को तथाकथित "तीसरी आँख" यह कार्य नहीं कर पाती ।

उल्लेखनीय है कि जब किसी प्राणी का कोई अंग विशेष आवश्यकतानुसार अनुपयोगी सिद्ध हो जाता है, तो धीरे-धीरे उसका डिजेनरेशन (अपविकास) आरम्भ हो जाता है, ऐसा विकासवाद का मत है । उनके अनुसार प्रारम्भ में मनुष्यों में नर के भी नारियों जैसे विकसित स्तन थे; पर कालक्रम में उनकी उपयोगिता समाप्त होती गई, अतः आज वे पुरुषों में मात्र दो काले धब्बों के रूप में अवशिष्ट हैं । इसी प्रकार आदि मानवों में विद्यमान पूँछ अब केवल एक अस्थि के रूप में उसकी गाथा गाती देखी जाती है । इस दृष्टि से विचार किया जाय, तो 'तुआतारा' एवं उस जैसे अन्य जन्तुओं में आज का "फोटो रिसेप्टर" आदिम काल में 'तीसरा नेत्र' रहा होगा, ऐसा माना जा सकता है । मानने में कोई हर्ज भी नहीं । यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि जब तुआतारा जैसे निम्न श्रेणी के जन्तुओं में तीसरे नेत्र का प्रतिमान फोटो-रिसेप्टर के रूप में आज भी मौजूद है, तो मनुष्य जैसे अति विकसित प्राणी में उसका वह अस्तित्व अचानक कहाँ व क्यों लुप्त हो गया ?

उत्तर "एण्डोक्राइनेलॉजी" से मिलता है । शरीर शास्त्र की इस शाखा के अनुसार निम्न स्तरीय जन्तुओं में फोटो-रिसेप्टर अंग मानवी मस्तिष्क की पीनियल ग्रन्थि का ही एक प्रकार है, और लगभग वही आवश्यकता पूरी करता है, जो विकसित प्राणियों में पीनियल ग्लैण्ड । मनुष्य के मामले में उसकी यह ग्रन्थि खोपड़ी के भीतर मस्तिष्क में स्थित है और बाहर वह ललाट में त्रिकुटी के आस-पास स्थित पिट्युटरी से जुड़ा बताया जाता

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, जहाँ आज्ञा-चक्र स्थित है । सन् १९१९ से पूर्व इस ग्रन्थि को फालतू और बेकार अवयव माना जाता था; पर उसी वर्ष टिलने और वारेन नामक जन्तुशास्त्रियों ने "अमेरिकन एनाटामिकल मेमायर्स" पत्र में इस पर आधारित अपना गहन शोध निबन्ध प्रकाशित किया, जिसके उपरान्त ही यह जाना जा सका कि इस छोटे-से अवयव का प्रकाश से गहरा लगाव है । बाद के अध्ययनों से भी इसी तथ्य की पुष्टि हुई । १९६६ में एम. ज्विग, एस. एच. स्नीडर एवं जे. एक्जेलरोड ने चूहों पर प्रयोग कर यह सिद्ध किया कि यदि उनकी आँख फोड़ दी जाती हैं, तो यह रहस्यमय ग्रन्थि उसकी खोपड़ी के माध्यम से प्रकाश अवशोषित करने लगती है । जब खोपड़ी भी ढँक दी गई तो उसका स्पष्ट प्रभाव पीनियल की क्रिया पर पड़ता देखा गया इस प्रकार इन अध्ययनों से यह साबित हो गया कि जिसे छिपकली प्रभृति प्राणियों में तीसरी आँख की संज्ञा दी जाती है, वह अवयव मानवी मस्तिष्क में भी विद्यमान है और दृश्य तथा प्रकाश से उसका सीधा सम्बन्ध है ।

तो क्या आध्यात्मिक पुरुषों की दिव्य दृष्टि का निमित्त कारण भी इसी अंग अवयव को मान लिया जाय ? उत्तर 'हाँ' में दिया जा सकता है ! जिस प्रकार इस विश्व-ब्रह्माण्ड में अनेकानेक प्रकार के सूक्ष्म संदेश उमड़ते-घुमड़ते रहते हैं; पर उन्हें स्थूल कान से नहीं, सूक्ष्म कर्णेन्द्रिय से ही सुना और समझा जा सकता है, वैसी ही बात इस ग्रन्थि के सम्बन्ध में भी है । नेपोलियन के बारे में कहा जाता है कि एक दिन आधी रात के समय वह अपने सेनापतियों के साथ विचार विमर्श में तिल्लीन था, तो शिविर में उसे दूर से आती हुई किसी महिला के रोने की आवाज सुनाई दी । इस सम्बन्ध में जब उसने अपने साथियों से बात की, तो उन्होंने किसी प्रकार की आवाज से अनभिज्ञता प्रकट की । बाद में जब इसका पता लगाने के लिए निर्दिष्ट दिशा में सैनिकों को भेजा गया, तो बात सच सिद्ध हुई । ऐसे ही पीनियल व पिट्युटरी द्वितीय तृतीय नेत्र का प्रतीक प्रतिनिधि तो है; पर उनकी सूक्ष्म शक्ति को जाग्रत किए बिना वह विभूति हस्तगत नहीं की जा सकती, जो दिव्य दृष्टि के रूप में सिद्ध पुरुषों में पायी जाती है ।

आध्यात्म विज्ञान के अनुसार हर पदार्थ के तीन स्तर होते हैं—स्थूल, सूक्ष्म व कारण । स्थूल के अन्तर्गत पदार्थ के आकार-प्रकार और बनावट आते हैं । सूक्ष्म वह स्तर है, जिसमें उसकी संरचना सम्बन्धी बारीक अध्ययन-विश्लेषण और रसायनों की जाँच-पड़ताल की जाती है । कारण सत्ता वह है, जिसमें उसके गुण और शक्तियाँ सम्मिलित हैं । भौतिक विज्ञान ने अपने प्रकार से इन तीनों भूमिकाओं में पहुँचने का प्रयास तो किया है; पर है वह पदार्थ स्तर का ही; जबकि आध्यात्म चेतना का विज्ञान है; वह चेतना स्तर की सूक्ष्म शक्ति का प्रतिपादन करता है । उसके तृतीय नेत्र-दिव्य चक्षु-दिव्य दृष्टि इसी परिधि में आते हैं, अतएव पीनियल की चेतनात्मक शक्ति को जगाये बिना, उसका दिव्य उन्मीलन सम्भव नहीं ।

मूर्धन्य अन्तःस्रावी विज्ञान विशारदी रसेल जे. रीटर एवं सैण्डी सोरेण्टीनो (रोचेस्टर यूनिवर्सिटी, न्यूयॉर्क) "दि पीनियल ग्लैण्ड" नामक पुस्तक के "फैक्टर्स इन्फ्लुएन्सिंग पीनियल" नामक निबन्ध में लिखते हैं कि तप-तितीक्षा-उपवास का इस ग्रन्थि पर महत्त्वपूर्ण असर पड़ता है और उसकी क्षमता इससे बढ़ने लगती है । लगभग इसी प्रकार का मन्तव्य जे. क्रेसेक एवं वी. पैलैटी ने अपनी पुस्तक "जनरल कम्पैरिजन ऑफ एण्ड्रोक्राइन सिस्टम्स" में प्रकट किया है । इससे आध्यात्म उपचारों में उपवास की महत्ता विदित होती है । फ्रांसीसी शरीर विज्ञानी जी. राउसी तथा एम. मोसिम्जर अपनी पुस्तक "ट्रेटे डी न्यूरोएण्डो क्राइनोलॉजी" में मनुष्यों पर किए गए पीनियल ग्रन्थि सम्बन्धी अध्ययनों का उल्लेख करते हुए लिखते हैं कि विचार तन्त्र भी पीनियल को सर्वथा अप्रभावित नहीं रहने देता । भले-बुरे विचारों का उसके स्राव व शक्ति पर तदनुरूप असर पड़ते देखा गया है ।

दो प्रत्यक्ष नेत्रों का महत्त्व हम सभी जानते हैं । यदि तीसरे नेत्र का उपयोग भी समझ सकें तो हमारी दिव्य क्षमता का आश्चर्यजनक विकास हो सकता है ।

पौराणिक गाथा के अनुसार पुरातन काल में जब यह दुनिया जीर्ण-शीर्ण हो गई, तीन रिपुओं—काम, क्रोध, लोभ के कारण उसकी उपयोगिता नष्ट हो गई, तब भगवान शिव ने अपना तृतीय नेत्र खोलकर प्रलय का दावानल उत्पन्न किया था और ध्वंस के ताण्डव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नृत्य में तन्मय होकर भविष्य की—विश्व के अभिनव नव-निर्माण की भूमिका सम्पादित की थी । उस प्रलयकारी ताण्डव नृत्य का बाह्य स्वरूप कितना ही रोमांचकारी क्यों न रहा हो, कथा तृतीय नेत्र की महत्ता के ऊपर मूलरूप से प्रकाश डालती है । मनुष्य के जीवन क्रम तथा समाज के समष्टिगत जीवन में भी कभी-कभी ऐसी आवश्यकता पड़ जाती है कि प्रचलित ढर्रे में आमूल-चूल परिवर्तन किया जाय, जो चल रहा है उसे उलटना अनिवार्य बन जाय । यह महान परिवर्तन भी तृतीय नेत्र के जागरण अर्थात् दूरदर्शी विवेकशीलता द्वारा ही सम्भव है । शिव के द्वारा ताण्डव नृत्य के समय तृतीय नेत्र खोले जाने के पीछे यही अलंकारिक रहस्य सन्निहित है ।

भूमध्य भाग में आज्ञाचक्र अवस्थित है । इसी को तृतीय नेत्र कहा गया है । शंकर एवं दुर्गा के चित्रों में इसी स्थान पर तीसरा नेत्र दिखाया जाता है । एक कथा और आती है कि इसी तीसरे नेत्र को खोलकर भगवान शंकर ने अग्नि तेजस् उत्पन्न किया था और उससे विघ्नकारी कामदेव जलकर भस्म हो गया था । दमयन्ती ने भी व्याघ्र से अपने शील की रक्षा तृतीय नेत्र से प्रचण्ड अग्नि ज्वाला उत्पन्न करके की थी । इन वर्णनों से एक ही निष्कर्ष निकलता है कि अवांछनीयताओं का कूड़ा-करकट जलाने में तृतीय नेत्र की अग्नि अर्थात् दूरदर्शी विवेकशीलता ही सक्षम हो सकती है । तृतीय नेत्र के प्रदीप्त होने पर संजय को दिव्य दृष्टि प्राप्त हो गई थी । फलस्वरूप घर बैठे ही टेलीविजन की भाँति महाभारत युद्ध के सभी दृश्य उन्हें दिखायी पड़ने लगे थे ।

प्रत्यक्ष जगत के दृश्य पदार्थों का एक छोटा-सा क्षेत्र ही इन नेत्रों की पकड़ में आता है । चमड़े की आँखों से देखे जाने की सीमा स्वल्प है । स्पष्ट दीखने वाली वस्तुएँ ही उसकी पकड़ में आती हैं । पर यह संसार अत्यन्त विस्तृत है । उस विस्तार को देख सकना इन स्थूल नेत्रों द्वारा सम्भव नहीं है । परमात्मा ने हर मनुष्य को एक ऐसी सूक्ष्म दृष्टि दे रखी है कि उसके द्वारा असीम विस्तार को देख एवं समझ सकना शक्य हो । सामान्य अवस्था में अधिकांश व्यक्तियों में यह सूक्ष्म दृष्टि सुषुप्त स्थिति में रहती है । फलतः वे उसका लाभ नहीं उठा पाते । ध्यान में त्राटक—साधना का उद्देश्य अपनी दृष्टि क्षमता से इतनी तीक्ष्णता उत्पन्न करता है कि वह दृश्य एवं अदृश्य की गहराई में उतरकर उसके अन्तराल में जो अति महत्त्वपूर्ण घटित हो रहा है उसे पकड़ने एवं समझने में समर्थ हो सके । मानवी विद्युत का अत्याधिक प्रवाह नेत्रों द्वारा ही होता है । उस प्रवाह का एक दिशा विशेष में नियोजित एवं लक्ष्य विशेष पर केन्द्रित कर देने की प्रक्रिया को 'त्राटक' कहा गया है ।

वैज्ञानिकों, कलाकारों, तत्वदर्शियों की यही विशेषता होती है कि वे सामान्य समझी जाने वाली घटनाओं को अपनी सूक्ष्म दृष्टि से देखते हैं और उसी में से कितने ही ऐसे तथ्य ढूँढ़ निकालते हैं जो अद्भुत एवं असाधारण सिद्ध होते हैं । अपने बचपन से वृद्धावस्था तक सभी पेड़ से फल टूटकर नीचे गिरने का दृश्य अनेकों बार देखते हैं । पर उनके लिए यह कोई विशिष्ट घटना नहीं होती, किन्तु 'न्यूटन' ने पेड़ पर से सेब का फल टूटकर जमीन पर गिरते देखा । उनकी सूक्ष्म दृष्टि अन्वेषण में लग गई और अन्ततः पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण का क्रांतिकारी सिद्धान्त विज्ञान जगत में एक नवीन आविष्कार के रूप में उभरकर सामने आया । महर्षि चरक ने जमीन पर उगती रहने वाली सामान्य जड़ी-बूटियों के गुणों की खोज से चिकित्सा जगत की प्रगति में असामान्य सहयोग दिया । यह सब विशिष्ट उपलब्धियाँ सूक्ष्म दृष्टि की ही महिमा का प्रतिपादन करती हैं । जिसके जागरण का अभ्यास प्रत्यक्ष बेधक दृष्टि से—त्राटक के माध्यम से किया जाता है ।

विद्युत का प्रवाह शरीर के रोम-रोम में कार्यरत है पर तीन स्थानों पर उसका प्रवाह अत्यन्त तीव्र होता है—नेत्र, जननेन्द्रिय और वाणी । इन तीनों से निकलने वाली विद्युत ही व्यक्तियों एवं परिस्थितियों को अधिक प्रभावित करती है । मस्तिष्क का ब्रह्मरन्ध्र भाग उत्तरी ध्रुव की तरह निखिल ब्रह्माण्ड में संव्याप्त महाप्राण को आकर्षित एवं धारण करता है तथा तीन मार्गों—नेत्र, जननेन्द्रिय तथा वाणी से होकर बहता है । अस्तु साधना क्षेत्र में इन्हीं तीनों के संयम एवं नियमन पर अधिक ध्यान दिया जाता है । जिह्वा की वाक् साधना के लिए जप, पाठ, मौन जैसे कितने ही अभ्यास किए जाते हैं । ब्रह्मचर्य के परिपालन से जननेन्द्रियों को संयमित रखा जाता है । पर इस सबमें सर्वाधिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महत्त्वपूर्ण केन्द्र है—नेत्र । कारण यह है कि जिह्वा मुँह के भीतर रहती है । जननेन्द्रिय भी कटि प्रदेश में वस्त्रों से ढकी रहती है । नेत्रों के ऊपर कोई परदा-आवरण नहीं होता । इसलिए विद्युतधारा अत्यधिक इसी केन्द्र से होकर प्रवाहित होती रहती है । त्राटक का उद्देश्य नेत्र गोलकों से होकर बहने वाली विद्युत शक्ति को केन्द्रीभूत करना एवं तीक्ष्ण बनाना है ।

कहा जाता है कि मनुष्य का अन्तरंग व्यक्तित्व नेत्रों से होकर बाहर झाँकता है । यही कारण है कि प्रेम, द्वेष, ईर्ष्या, उपेक्षा, चिन्ता, उद्वेग के भावों की अन्त:स्थिति को आँख मिलाते ही देखा, समझा एवं अनुभव किया जा सकता है । काम कौतुक के आवेश का आरम्भिक संचार नेत्रों द्वारा ही होता है । कवि, कलाकार नेत्रों के सौन्दर्य एवं प्रभाव की चर्चा करते नहीं थकते । शृंगार रस की कविताओं में सर्वाधिक अलंकार नेत्रों के लिए ही प्रस्तुत किए गए हैं । सज्जनता एवं दुष्टता को उभरने वाली भाव-भंगिमा को नेत्रों में प्रत्यक्ष उठते देखा जा सकता है तथा उसके आधार पर व्यक्ति की आन्तरिक स्थिति का पता लगाया जा सकना सम्भव है ।

किन्हीं-किन्हीं के नेत्रों में एक विशेष प्रकार का आकर्षण भी पाया जाता है । बरबस ही लोग उनकी ओर आकर्षित हो जाते हैं । यह आकर्षण भला एवं बुरा दोनों ही प्रकार का प्रभाव डालने में सक्षम होता है । यों तो छोटे बच्चों एवं वस्तुओं को नजर लगने की किंवदन्तियाँ सुनी जाती हैं । जिनमें प्राय: अन्ध विश्वासों का पुट अधिक होता है, पर मानवी विद्युत विज्ञान की दृष्टि से ऐसा प्रभाव पड़ना सर्वथा असम्भव नहीं है । नेत्रों की बेधक दृष्टि में भले-बुरे दोनों ही प्रकार के तत्व समाहित रहते हैं जिनका प्रयोग मनचाही दिशा में किया जा सकता है । यह तो सहज उपलब्ध बेधक दृष्टि की क्षमता हुई जो किसी-किसी को अनायास ही प्राप्त होती है । त्राटक साधना में इसी क्षमता को प्रखर किया जाता तथा उच्च भूमिका में प्रविष्ट करके दिव्य दृष्टि जागरण का प्रयोजन पूरा किया जाता है ।

यह तीसरा नेत्र—आज्ञाचक्र यदि जाग्रत किया जा सके तो रडार, टेलीविजन और एक्स-रे यन्त्रों की भाँति ही कितने ही असाधारण काम लिए जा सकते हैं । रडार रेडियो किरणें फेंकता है और उसके वापस लौटने से उस स्थान का विवरण देता है जिस स्थान से वे किरणें टकराई थीं । टेलीविजन में दूरगामी दृश्य दिखायी देता है । तीसरे नेत्र के जागरण से बिना किसी यन्त्र के भी सुदूर क्षेत्र की घटनाओं एवं दृश्यों को देखा जा सकता है । संजय ने महाभारत का सारा दृश्य इसी पद्धति से देखा था तथा धृतराष्ट्र को युद्ध की विस्तृत खबरें देते रहने का दायित्व भली-भाँति पूरा किया था । एक्स-रे से आवरण में ढकी वस्तुएँ भी दिखती हैं । शरीर के भीतरी भागों का चित्रांकन इसी से सम्भव हो पाता है । भूमध्य पर अवस्थित आज्ञाचक्र की जागृति अवस्था इन तीनों ही प्रयोजनों को पूरा कर सकने में सक्षम है ।

कितने ही व्यक्तियों में भविष्य बोध की सामर्थ्य पायी जाती है । चलचित्र की भाँति उन्हें भविष्य के गर्भ में पक रही घटनाएँ पहले ही दिखाई पड़ने लगती हैं । प्रत्यक्ष नेत्रों एवं सम्पर्क क्षेत्र से दूर रहने वाले व्यक्तियों की परिस्थितियों में क्या हेर-फेर हो रहा है तथा वहाँ किस तरह की घटनाएँ घटित हो रही हैं इसका आभास किन्हीं-किन्हीं को होने लगता है । यह सब आज्ञाचक्र की जागृति का ही चमत्कार है । इससे वहाँ के दृश्य देखे जा सकते हैं जहाँ कि नेत्रों की पहुँच नहीं है । भू-गर्भ के अन्तराल में छिपे रहस्य, अन्तरिक्ष के सूक्ष्म क्रिया-कलापों का पूर्व स्वरूप देखा और समझा जा सकना सम्भव है ।

तृतीय नेत्र जागरण की यह भौतिक उपलब्धियाँ हैं । आध्यात्मिक विभूतियाँ तो और भी अधिक रहस्यमय और महत्त्वपूर्ण हैं । सांसारिक अलभ्य ज्ञान की तुलना में आत्मिक-ज्ञान कहीं अधिक उपयोगी है । अपने भीतर क्या है ? मूल सत्ता का स्वरूप कैसा है ? यह प्राय: अविज्ञात ही बना रहता है । मनुष्य न तो अपने स्वरूप से परिचित होता है और न ही उसे अपनी सामर्थ्य का बोध रहता है । बाह्य संसार एवं सम्बन्धित वस्तुओं की जानकारी मात्र उसे बनी रहती है । रंग-बिरंगा संसार अधिक लुभावना और आकर्षक दिखायी पड़ता है । अपनी आत्मसत्ता का स्वरूप अनुभव में आ जाय तो मनुष्य को मालूम होगा कि संसार की सबसे विलक्षण और सामर्थ्यवान सत्ता अपने ही भीतर बैठी है । तृतीय नेत्र के दिव्य प्रकाश से अन्त: पर छाये मलिनताओं के आवरण कटने-छँटने लगते हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आत्म-सत्ता उस प्रकाश में जगमगाने लगती है । ऐसी शाश्वत अनुभूति में पहुँचे हुए व्यक्ति को परा और अपरा प्रकृति के सम्पूर्ण रहस्यों का अनुभव होने लगता है । तब वह स्थूल जगत के क्रिया-कलापों को बाल-क्रीड़ा में रचे हुए रेत बालू के घर, मकानों जैसी स्थिति में पाता है । अनुभूतियाँ आत्म-सत्ता के स्वरूप को जानने तक ही सीमित नहीं रहतीं । उद्गम स्रोत पर आत्म सत्ता की प्रत्यक्ष अनुभूति सर्वत्र विराट् चेतना के रूप में होने लगती है । ऐसी दिव्य अनुभूतियों का साक्षात्कार करने वाला साधक बाल-बुद्धि की ओछी रीति-नीति त्यागकर अपनी गतिविधियों में उन तत्वों का समावेश करता है जो महा मानवों के लिए उचित और उपयुक्त हैं ।

तृतीय नेत्र जागरण से वह दूरदर्शी विवेक बुद्धि जाग्रत होती है जिसके प्रकाश में—आन्तरिक मनोविकार काम-क्रोध, लोभ-मोह आदि अपने असली रूप में प्रकट हो जाते हैं । तब उनकी कुरूपता स्पष्ट दिखाई पड़ने लगती है । वे मानवी गरिमा के सर्वथा प्रतिकूल हैं, ऐसा मात्र बोध ही नहीं होता वरन् उनेक निष्कासन के लिए प्रचण्ड संकल्प एवं पुरुषार्थ उभरता है । दिव्य दृष्टि खुलने एवं परिष्कृत दृष्टिकोण विकसित होने से सोचने एवं करने का तरीका माया-मोहग्रस्त अज्ञान अन्धकार में भटकने वाले लोगों से सर्वथा भिन्न होता है ।

त्राटक साधना अपने समय पर परिपक्व एवं विकसित होकर साधक को समाधि की उच्चस्तरीय अवस्था में पहुँचाती है । शास्त्रों में अनेकों स्थानों पर उसका वर्णन आता है ।

त्राटकाभ्यास तश्चापिकालेन क्रमयोगतः ।
राजयोग समाधिः स्यात् तत्प्रकारोऽधुनोच्यते ॥

—योग रसायन्

अर्थात्—'त्राटक के अभ्यास के समयानुसार राजयोग की समाधि का लाभ सम्भव है ।'

सामान्य-सी दिखने वाली पर असामान्य भौतिक एवं आध्यात्मिक उपलब्धियों से साधक को अनुप्राणित करने वाली त्राटक साधना का तत्वदर्शन समझा जा सके और प्रक्रिया को ठीक प्रकार अपनाया जा सके तो दिव्य दृष्टि जागरण का लाभ उठा सकना हर किसी के लिए सम्भव है ।

त्राटक साधना से दिव्य दृष्टि का जागरण

तृतीय नेत्र आज्ञाचक्र की दिव्य दृष्टि बढ़ाने वाली साधनाओं में 'त्राटक' प्रमुख है । इसे बिन्दुयोग भी कहते हैं । अस्त-व्यस्त, इधर-उधर भटकने वाली बाह्य और अन्तःदृष्टि को किसी बिन्दु विशेष पर—लक्ष्य विशेष पर—एकाग्र करने को बिन्दु साधना कह सकते हैं । त्राटक का उद्देश्य यही है । त्राटक में बाह्य नेत्रों एवं दीपक जैसे साधनों का उपयोग किया जाता है । इसलिए उसकी गणना स्थूल उपचारों में है । बिन्दुयोग में ध्यान धारणा के सहारे किसी इष्ट आकृति पर अथवा प्रकाश ज्योति पर एकाग्रता का अभ्यास किया जाता है । दोनों का उद्देश्य एवं अन्तर केवल भौतिक साधनों के प्रयोग करने की आवश्यकता रहने न रहने का है । आरम्भिक अभ्यास की दृष्टि से त्राटक को आवश्यक एवं प्रमुख माना गया है । बिन्दुयोग साधना की स्थिति आ जाने पर बाह्य त्राटक की आवश्यकता नहीं रहती ।

त्राटक के स्वरूप का वर्णन करते हुए हठयोग प्रदीपिका में कहा गया है—

निरीक्षे न्निश्चलदृशा सूक्ष्म लक्ष्यं समाहितः ।
अश्रु संताप पर्यन्तं आचार्ये स्त्राटक स्मृतम् ॥

अर्थात् एकाग्र चित्त होकर निश्चल दृष्टि द्वारा सूक्ष्म लक्ष्य को तब तक देखता रहे जब तक आँखों में से आँसू न आ जायँ । इस साधना को त्राटक कहते हैं ।

प्राचीनकाल के योग साधकों की नेत्र स्थिति दृष्टि बहुत प्रबल होती थी इसलिए उन पर अश्रुपात पर्यन्त देखते रहने का कोई विशेष बुरा प्रभाव नहीं पड़ता था । इसलिए वैसा करने का निर्देश दिया गया था । आज की स्थिति में नेत्र शक्ति दुर्बल रहने से वैसा न करने की बात कही गई है । तो भी एकाग्र दृष्टि के उद्देश्य की पूर्ति प्राचीन और अर्वाचीन दोनों ही मान्यताओं के अनुसार आवश्यक है ।

त्राटक की प्रतिक्रिया नेत्र रोगों को—आलस्य प्रमाद को—निरस्त करने के रूप में मानी गई है—

मोचनं नेत्र रोगाणां तन्द्रादीनां कपाटकम् ।
यत्नतस्त्राटके गोप्यं यथा हाटक पेटकम् ॥

— हठयोग प्रदीपिका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नेत्र रोगों को दूर करने एवं आलस्य, तन्द्रा आदि विकारों को हटाने वाला त्राटक है । उसे गुप्त रखना चाहिए ।

गुप्त रखने से तात्पर्य इतना ही है कि उपयुक्त मार्गदर्शन के बिना यदि ऐसे ही लोग कहे-सुने आधारों पर योग क्रियाएँ करने लगेंगे तो पात्रता के अनुरूप साधना की परम्परा न रह सकेगी और उससे समुचित लाभ प्राप्त न हो सकेगा ।

योग साधना में एकाग्रता का अत्यधिक महत्त्व है । मनःशक्तियों का बिखराव ही उस मनोबल के उत्पन्न होने में सबसे बड़ी बाधा है जिस पर साधनाओं की सफलता निर्भर है । सभी जानते हैं कि बिखरी भाप, बारूद, धूप आदि से सामान्य प्रयोजन ही सधते हैं, पर जब उनमें केन्द्रीकरण होता है तो चमत्कार देखे जा सकते हैं । लक्ष्य वेध जैसी एकाग्रता उत्पन्न की जा सके तो भौतिक एवं आत्मिक सभी प्रयोजनों में सफलता मिलती है, त्राटक से इसी उपलब्धि का अभ्यास होता है ।

यथा धन्वी स्वकं लक्ष्यं बेधयत्य चलेक्षणः ।
तथैव त्राटकाभ्यासं कुमदिकाग्रमानसः ॥

— योग रसायनम्

जैसे धनुर्धर मात्र अपने लक्ष्य को ही लक्ष्यवेध के क्षण में देखता है, वैसे ही त्राटक का अभ्यास एकाग्र मन में करना चाहिए ।

योग ग्रन्थों में बिन्दुयोग की चर्चा अनेक स्थलों पर हुई और उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है । महायोग विज्ञान का मत है—

बिन्दु ब्रह्मसकृद्दृष्ट्वा मनस्तस्मिन्नियोजयेत् ,
स्वयमेव तु संपश्येद्देहे बिन्दुं च निष्कलम् ।
भ्रूदहरादुपरि सच्चिदानन्द तेजः कूट रूपम् ।
परब्रह्म अवलोकयन्तद्रूपो भवति गर्भजन्मजरा,
मरण संसार भयात्संतारयेति तस्यात्तारक मिति ।

भूमध्य भाग के ऊपर सच्चिदानन्दमय तेज राशि विद्यमान है उसे परब्रह्म कहते हैं । इस ब्रह्म बिन्दु को देखने और उसमें मन लगाने का प्रयत्न करना चाहिए । इसके अतिरिक्त और कहीं मन न जाने दें । यह बिन्दु ब्रह्म जन्म-मरण से छुड़ाता है, संसार सागर से पार करता है इसलिए उसे तारक ब्रह्म भी कहते हैं । यह बिन्दु ध्यान तारक योग भी कहलाता है ।

सं ज्योतिषा अभूमेति सं देवैभूमेत्येवैतदाह ।

(श. १/६/३/१४)

हम उस परम ज्योति में अपनी ज्योति मिलाकर ही देवताओं का पंक्ति में बैठ सकने योग्य बनें ।

ध्यानात्मा साधकेन्द्रो भवति परपुरे शीघ्रगामी मुनीन्द्रः सर्वज्ञः सर्वदर्शी सकलहितकर सर्वशास्त्रार्थवेत्ता ।

अद्वैताद्यास्मदी विलसति परमापूर्वसिद्धिप्रसिद्धो दीर्घायुः सोऽपि कर्त्ताः त्रिभुवनभवनै सहृतौ पालने च ॥ ३५ ॥

—षट्चक्र निरूपणम् ३५

आज्ञाचक्र को सिद्ध कर लेने वाला दूरगामी बन सकता है, सूक्ष्म रूप धारण कर सकता है । परकाया प्रवेश कर सकता है । सबका हितकारी, शास्त्रों का ज्ञाता, ब्रह्मवेत्ता, प्रसन्न चित्त, सिद्धि, विद्याओं का ज्ञाता, दीर्घायु, लोक-व्यवस्था में सहायता देने वाला बनता है ।

यदाऽऽत्मतत्वेन ब्रह्मतत्त्वं
दीपोपमेनेह युक्तः प्रपश्येत् ।

—श्वेताश्वर २/१५

योग साधक आत्मा के द्वारा ही दीप के समान प्रकाशयुक्त ब्रह्मतत्व के दर्शन करता है ।

नीहारधूमार्कानलानिलानां,
खद्योतविद्युत्स्फटिकशशीनाम् ।
एतानी रूपाणि पुरः सराणि,
ब्रह्मण्यभिव्यक्तिकराणि योगे ॥ ११

—श्वेताश्वर २/११

योग साधक को कुहरा, धुँआ, सूर्य, वायु, अग्नि, जुगनू, बिजली, स्फाटिक, मणि, चन्द्रमा जैसे कई प्रकाश दृश्य दिखाई पड़ते हैं । यह योग की सफलता के चिन्ह हैं ।

समाधि के साथ दिव्य दृष्टि का—अतीन्द्रिय चेतना का जाग्रत होना सर्वविदित है । त्राटक का प्रतिफल समयानुसार समाधि के रूप में सामने आता है । कहा गया है—

त्राटकाभ्यासतश्चापि कालेन क्रमयोगतः ।
राजयोगसमाधिः स्यात् तत्प्रकारोऽधुनोच्यते ॥

—योग रसायनम्

त्राटक के अभ्यास से भी समयानुसार राजयोग की समाधि का लाभ सम्भव है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मानवी विद्युत का अत्यधिक प्रवाह नेत्रों द्वारा ही होता है, अस्तु जिस प्रकार कल्पनात्मक विचार शक्ति को सीमाबद्ध करने के लिए ध्यान योग की साधना की जाती है, उसी प्रकार मानवी विद्युत प्रवाह को दिशा विशेष में प्रयुक्त करने के लिए नेत्रों की ईक्षण शक्ति को सधाया जाता है । इस प्रक्रिया को त्राटक नाम दिया गया है ।

सरसरेतौर से और चंचलतापूर्वक उथली दृष्टि से हम प्रतिक्षण असंख्यों वस्तुएँ देखते रहते हैं । इतने पर भी उनमें से किन्हीं विशेष आकर्षक वस्तुओं की ही मन पर छाप पड़ती है अन्यथा सब कुछ यों ही आँख के आगे से गुजर जाता है । देखने की क्रिया होते रहने पर भी दृश्य पदार्थों एवं घटनाओं का नगण्य-सा प्रभाव मस्तिष्क पर पड़े, इसका कारण देखते समय मन की चंचलता, उथलापन, उपेक्षा, अन्यमनस्कता आदि कारण ही मुख्य होते हैं । यदि गम्भीरतापूर्वक किसी पदार्थ या घटना का निरीक्षण किया जाय, तो उसी में से बहुत महत्त्वपूर्ण तथ्य उभरते हुए दिखाई देंगे ।

त्राटक साधना का उद्देश्य अपनी दृष्टि क्षमता में इतनी तीक्ष्णता उत्पन्न करना है कि वह दृश्य की गहराई में उतर सके और उसके अन्तराल में अति महत्त्वपूर्ण घटित हो रहा है उसे पकड़ने और ग्रहण करने में समर्थ हो सके । वैज्ञानिकों, कलाकरों, तत्वदर्शियों में यही विशेषता होती है कि सामान्य समझी जाने वाली घटनाओं को अपनी तीक्ष्ण दृष्टि से देखते हैं और उसी में से ऐसे तथ्य ढूँढ़ निकालते हैं जो अद्‌भुत एवं असाधारण सिद्ध होते हैं ।

पेड़ पर से फल टूटकर नीचे ही गिरते रहते हैं । यह दृश्य बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक सभी देखते हैं । इसमें कोई नई बात नहीं किन्तु आइजक न्यूटन ने पेड़ पर से सेव का फल जमीन पर गिरते देखा तो उसकी सूक्ष्म दृष्टि इसका कारण तलाश करने में लग गई और अन्ततः उसने पृथ्वी में आकर्षण शक्ति होने का क्रांतिकारी सिद्धान्त प्रतिपादित करके विज्ञान जगत में एक अनूठी हलचल उत्पन्न कर दी । इस आधार पर आगे चलकर विज्ञान की भावी प्रगति का पथ-प्रशस्त होता चला गया है । कलाकारों और तत्वदर्शियों की दृष्टि भी ऐसी ही होती है । महर्षि चरक ने जमीन पर उगती रहने वाली सामान्य जड़ी-बूटियों के ऐसे गुण-धर्म खोज निकाले जिनके सहारे आरोग्य विज्ञान की प्रगति में भारी सहायता मिली । मनीषियों ने एक से एक बढ़कर विज्ञान क्षेत्र में रहस्योद्‌घाटन किए हैं । इस सूक्ष्म अवलोकन में दिव्य दृष्टि तो काम करती है, पर उसके उत्पादन अभिवर्धन में चर्म चक्षुओं में उत्पन्न होने वाली वेधक दृष्टि की भूमिका भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं होती । त्राटक इसी विभूति विशेषता के उत्पादन को ध्यान में रखते हुए किया जाता है ।

बुद्धि का महत्त्व सर्वविदित है । पर मानवी विद्युत जिसे प्रतिभा का स्रोत माना जाता है, व्यक्तित्व के निर्माण एवं प्रयत्नों की सफलता में किसी भी प्रकार कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । मनुष्य शरीर एक अच्छा-खासा बिजलीघर है । उससे लोहे की मशीनें नहीं चलाई जातीं, पर शरीर यन्त्र में जो एक से एक अद्‌भुत कलपुर्जे लगे हैं उनके सुसंचालन में यही शक्ति कितना काम करती है, इसे देखते हुए भौतिक विद्युत की क्षमता को तुच्छ ही कहा जा सकता है । मानवी विद्युत का वस्तुओं और प्राणियों पर कितना भारी प्रभाव पड़ता है—उससे वातावरण का निर्माण किस तरह उभरता है और व्यक्तित्व के विकास में कितनी सहायता मिलती है, इस सबको यदि क्रमबद्ध किया जा सके तो प्रतीत होगा कि मनुष्य शरीर में काम करने वाली बिजली कितनी सूक्ष्म और कितनी महत्त्वपूर्ण है ।

यों तो मनुष्य शरीर के रोम-रोम में विद्युत प्रवाह काम करता है, पर नेत्र, जननेन्द्रियाँ, वाणी—यह तीन द्वार मुख्य हैं जिनमें होकर वह प्रवाह बाहर निकलता है और परिस्थितियों को प्रभावित करता है । मस्तिष्क का ब्रह्मरन्ध्र भाग उत्तरी ध्रुव की तरह निखिल ब्रह्माण्ड में संव्याप्त महाप्राण को खींचकर अपने में धारण करता है । इसके उपरान्त उसके प्रयोग के आधार पर नेत्र, जिह्वा एवं जननेन्द्रिय छिद्रों में होकर बनते हैं ।

जिह्वा की वाक् साधना के लिए जप, पाठ, मौन जैसे कितने ही अभ्यास हैं । जननेन्द्रिय में सम्बन्धित काम शक्ति को ब्रह्मचर्य से संयमित किया जाता है और कुण्डलिनी जागरण के रूप में उभारा जाता है । इनका उल्लेख यहाँ अभीष्ट नहीं । त्राटक द्वारा नेत्र गोलकों से प्रवाहित होने वाली विद्युत शक्ति को किस प्रकार केन्द्रीभूत एवं तीक्ष्ण बनाया जाता है यहाँ तो इसी प्रसंग पर चर्चा की जाती है । मनुष्य का अन्तरंग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नेत्र गोलकों में होकर बाहर झाँकता है । उन्हें अन्तरात्मा की खिचड़की कहा गया है । प्रेम, द्वेष एवं उपेक्षा जैसी अन्तःस्थिति को आँख मिलाते ही देखा समझा जाता है । काम-कौतुक का सूत्र संचार नेत्रों द्वारा ही होता है । नेत्रों के सौन्दर्य एवं प्रभाव की चर्चा करते-करते कवि कलाकार थकते नहीं, एक से एक बड़े उपमा, अलंकार उनके लिए प्रस्तुत करते रहते हैं । दया, क्षमा, करुणा, ममता, पवित्रता, सज्जनता, सहृदयता जैसी आत्मिक सद्भावनाओं को अथवा इनके ठीक विपरीत दुष्ट दुर्भावनाओं को किसी के नेत्रों में नेत्र डालकर जितनी सरलतापूर्वक समझा जा सकता है उतना ही और किसी प्रकार नहीं ।

कहा जा चुका है कि दिव्य चक्षुओं से सम्भव हो सकने वाली सूक्ष्म दृष्टि और चर्म चक्षुओं की एकाग्रता युक्त तीक्ष्णता के समन्वय की साधना को त्राटक कहते हैं । इसका योगाभ्यास में अति महत्त्वपूर्ण स्थान है ।

छोटे बच्चों को नजर लग जाने, बीमार पड़ने—नये सुन्दर मकान को नजर लगने से दरार पड़ जाने जैसी किंवदंन्तियाँ अक्सर सुनी जाती हैं । इनमें प्रायः अन्धविश्वासों का ही पुट रहता है फिर भी मानवी विद्युत विज्ञान की दृष्टि से ऐसा हो सकना असम्भव नहीं है । वेधक दृष्टि में हानिकारक और लाभदायक दोनों तत्व रहते हैं ।

यह तो सामान्य स्तर के त्राटक उपचार का क्रिया-कौतुक हुआ । आध्यात्म क्षेत्र में आगे बढ़ने वाले इसी प्रयोग की उच्च भूमिका में प्रवेश करके दिव्य दृष्टि विकसित करते हैं और उस अदृश्य को देख पाते हैं जिसे देख सकना चर्म चक्षुओं के लिए सम्भव नहीं हो सकता ।

दृष्टि के स्थूल भाग की भी विशेषता है, पर वस्तुतः उसकी वास्तविक शक्ति सूक्ष्म दृष्टि पर निर्भर रहती है । प्रेम, द्वेष, घृणा, उपेक्षा आदि के भाव आँखों की बनावट या पुतली संचालन क्रम में अन्तर नहीं करते । वह स्थिति तो सदा एकसी ही रहती है । अन्तर पड़ता है उस भाव सन्दोह का जो आँखों में सूक्ष्म प्रक्रिया बनकर झाँकता है और सामने वाले को अपने अन्तरंग के सारे भेद बताकर स्थिति से अवगत कर देता है । स्थूल दृष्टि के पीछे सूक्ष्म दृष्टि ही अपना काम कर रही होती है । अस्तु भारतीय योगदर्शन ने त्राटक के माध्यम से सूक्ष्म दृष्टि को एकाग्र एवं प्रभावशाली बनने का उद्देश्य सामने रखा है जबकि पाश्चात्य शैली में चर्म चक्षु ही सब कुछ हैं और उन्हीं की दृष्टि से बेधक क्षमता उत्पन्न करके अभीष्ट प्रयोजन सम्पन्न किए जाते हैं ।

त्राटक का वास्तविक उद्देश्य दिव्य दृष्टि को ज्योतिर्मय बनाना है । इसके आधार पर सूक्ष्म जगत की झाँकी की जा सकती है । अन्तःक्षेत्र में दबी हुई रत्न राशि को खोजा और पाया जा सकता है । देश, काल, पात्र की स्थूल सीमाओं को लाँघ कर अविज्ञात और अदृश्य का परिचय प्राप्त किया जा सकता है । आँखों के इशारे से तो मोटी जानकारी भर दी जा सकती है, पर दिव्य दृष्टि से तो किसी के अन्तःक्षेत्र की गहराई में प्रवेश करके वहाँ ऐसा परिवर्तन किया जा सकता है जिससे जीवन का स्तर एवं स्वरूप ही बदल जाय । इस प्रकार त्राटक की साधना यदि सही रीति से सही उद्देश्य के लिए की जा सके तो उससे साधक को अन्तःचेतना के विकसित होने का असाधारण लाभ मिलता है, साथ ही जिस प्राणी या पदार्थ पर इस दिव्य दृष्टि का प्रभाव डाला जाय उसे भी विकासोन्मुख करके लाभान्वित किया जा सकता है ।

भूमध्य भाग में आज्ञाचक्र अवस्थित है । इसी को दिव्य नेत्र या तृतीय नेत्र कहते हैं । शंकर एवं दुर्गा के चित्रों में इसी स्थान पर तीसरा नेत्र दिखाया जाता है । पुराण कथा के अनुसार इसी नेत्र को खोलकर भगवान शिव ने अग्नि तेजस् उत्पन्न किया था और उससे विघ्नकारी मनोविकार कामदेव को जलाकर भस्म किया था । यह नेत्र हर मनुष्य में मौजूद है । शरीर शास्त्र के अनुसार इसे पिट्यूटरी ग्रंथि कहते हैं । इसमें नेत्र जैसी सूक्ष्म संरचना मौजूद है । सूक्ष्म शरीर के विश्लेषण में यह केन्द्र विशुद्ध रूप में दिव्य नेत्र है और उससे प्रकट-अप्रकट—दृश्य-अदृश्य—भूत-भविष्य सभी कुछ देखा, जाना जा सकता है । ऐक्स-रेज द्वारा शरीर के भीतर की टूट-फूट अथवा किसी बन्द बक्से के भीतर रखे आभूषणों का चित्र खींचा जा सकता है । इस दिव्य नेत्र की भी ऐक्स-रेज यन्त्र से तुलना की जा सकती है—यदि वह प्रदीप्त हो उठे तो घर बैठे महाभारत के दृश्य टेलीविजन की भाँति देखने वाले संजय जैसी दिव्य दृष्टि प्राप्त की जा सकती है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वह सब देखा जा सकता है जिसका अस्तित्व तो है, पर चमड़े से बने नेत्र उसे देख सकने में समर्थ नहीं हैं ।

इस नेत्र में अदृश्य देखने की ही नहीं ऐसी प्रचण्ड अग्नि उत्पन्न करने की भी शक्ति है जिसके आधार पर अवांछनीयताओं को अवरोधों को जलाकर भस्म किया जा सके । शंकर जी ने इसी नेत्र को खोला था तो प्रचण्ड शिखाएँ उद्‌भूत हो उठी थीं । विघ्नकारी कामदेव उसी में जल-जल कर भस्म हो गया था । बिन्दुयोग की साधना को, यदि इस तृतीय नेत्र को ठीक तरह ज्योतिर्मय किया जा सके तो उसमें उत्पन्न होने वाली अग्नि शिखा मनोविकारों को—अवरोधों को जलाकर भस्म कर सकती है । उसकी शक्ति व्याख्या है । यदि दार्शनिक व्याख्या करनी हो तो उसे विवेकशीलता एवं दूरदर्शिता का जागरण भी कह सकते हैं । जिसके आधार पर लोभ, मोह, वासना, तृष्णा, अहंता जैसे मनोविकारों के कारण उत्पन्न हुए अगणित शोक-सन्तापों और विग्रह उपद्रवों को सहज ही शमन या सहन किया जा सकता है ।

त्राटक विधियाँ अनेक प्रकार की हैं । मेस्मेरिज्म के अभ्यासी सफेद कागज पर काला गोला बनाते हैं । उसके मध्य में श्वेत बिन्दु रहने देते हैं । इस पर नेत्र दृष्टि और मानसिक एकाग्रता को केन्द्रित किया जाता है । अष्टधातु के बने तश्तरीनुमा बर्तन के मध्य में ताँबे की कील लगाकर उस मध्य बिन्दु को एकाग्र भाव से देखते रहने का भी वैसा ही लाभ बताया जाता है । कहते हैं कि धातु के माध्यम से वेधक दृष्टि की शक्ति और भी अधिक बढ़ती है ।

भारतीय योग शास्त्र के अनुसार इसके लिए चमकते प्रकाश का उपयोग करना उपयुक्त माना गया है । सूर्य, चन्द्र, तारक आदि प्राकृत प्रकाश पिण्डों को तथा दीपक जैसे मानव कृत प्रकाश साधनों को काम में लाने का विधान है ।

सूर्य की ज्योति अत्यन्त तीव्र होती है । खुली आँखों से उसे देखने में हानि होती है, इसलिए सूर्य त्राटक मात्र ध्यान द्वारा ही किया जा सकता है । खुले नेत्रों से नहीं । लगभग यही बात चन्द्रमा के सम्बन्ध में भी है । उसका प्रकाश यों सूर्य के समान तीखा तो नहीं होता फिर भी नेत्र विज्ञान के अनुसार किसी भी प्रकाश को लगातार देखते रहना हानिकारक है । प्राचीन मान्यताओं और आधुनिक शोधों में यह मौलिक अन्तर सामने आया है । खुले नेत्रों से लगातार अश्रु पर्यन्त देखते रहने की बात शरीर शास्त्री स्वीकार नहीं करते और हानिकारक बताते हैं । तारागणों को प्रकाश का माध्यम बनाकर त्राटक साधना करने में भी कई कठिनाइयाँ हैं । तारे मात्र रात्रि को निकलते हैं । बदली, कुहरा, धुन्ध, धुँआ छा जाने पर वे रात्रि में भी नहीं दीखते । जिन्हें खुला आसमान उपलब्ध है, वे ही तारों को देखने का लाभ ले सकते हैं । उन्हें लेटकर या तिरछा होकर ही देखा जा सकता है जबकि साधनाओं में मेरुदण्ड सीधा रखने का विधान है । साधक को सुविधा का समय दिन में हो तो तारे कहाँ मिलेंगे ? फिर तारे कितने होते हैं । त्राटक के लिए एक ही प्रकाश बिन्दु चाहिए कई बिन्दु होने पर दृष्टि भटकती है । इन सब कारणों को देखते हुए सिद्धान्ततः भले ही सूर्य, चन्द्र, तारकों की बात कही जा सके किन्तु व्यवहारतः वे तीनों ही अनुपयुक्त हैं । यदि इन्हीं का उपयोग करना हो तो एक सेकण्ड तक उन्हें देखने के उपरान्त तत्काल नेत्र बन्द कर लेने और फिर ध्यान धारणा से ही प्रकाश पर एकाग्रता का अभ्यास करना चाहिए ।

त्राटक के अभ्यास में दीपक का प्रयोग ही अधिक उपयुक्त है । घृत दीप का उपयोग कई दृष्टि से अधिक उपयुक्त माना गया है । पर यह होना शुद्ध ही चाहिए, मिलावटी या नकली घी की अपेक्षा शुद्ध तेल अधिक उत्तम है । मोमबत्ती का उपयोग भी किया जा सकता है । कम पावर के रंगीन बल्ब भी इस प्रयोजन की पूर्ति कर सकते हैं ।

इनमें से जो भी उपकरण काम में लाना हो, उसे छाती की सीध—चार से दस फुट तक की दूरी पर रखना चाहिए । पीछे काला, नीला या हरा पर्दा टँगा हो अथवा इन रंगों से दीवार रंगी हो । प्रकाश ज्योति के इर्द-गिर्द न्यूनतम वस्तुएँ हों अन्यथा ध्यान उनकी ओर बिखरेगा ।

त्राटक के लिए प्रातःकाल का समय सर्वोत्तम है । यों उसे रात्रि को भी किया जा सकता है । दिन में सूर्य का प्रकाश फैला रहने से यह साधना ठीक तरह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं बन पड़ती है । यदि दिन में ही करनी हो तो अँधेरे कमरे का प्रबन्ध करना होता है ।

अभ्यास में जलता दीपक साधक की छाती से लगभग पांच फीट की दूरी पर रखा होना चाहिए । साधना के लिए कमर सीधी, हाथ गोदी में, पालथी सही—रखकर बैठना चाहिए । वातावरण में घुटन, दुर्गन्ध, मक्खी, मच्छर जैसे चित्त में विक्षोभ उत्पन्न करने वाली बाधाएँ नहीं हों । यह अभ्यास दस मिनट में आरम्भ करके उसे एक मिनट बढ़ाते हुए एक दो महीने में अधिक से अधिक आधे घण्टे तक पहुँचाया जा सकता है । इससे अधिक नहीं किया जाना चाहिए ।

खुले नेत्र से प्रकाश ज्योति को दो से पाँच सेकण्ड तक देखना चाहिए और आँखें बन्द कर लेनी चाहिए । जिस स्थान पर दीपक जल रहा है उसी स्थान पर उस ज्योति को ध्यान नेत्रों से देखने का प्रयत्न करना चाहिए । एक मिनट बाद फिर नेत्र खोल लिए जायँ और पूर्ववत् कुछ सेकण्ड खुले नेत्रों से ज्योति का दर्शन करके फिर आँखें बन्द कर ली जायँ । इस प्रकार प्रायः एक-एक मिनट के अन्तर से नेत्र खोलने और कुछ सेकण्ड देखकर फिर आँख बन्द करने और ध्यान द्वारा उसी स्थान पर ज्योति दर्शन की पुनरावृत्ति करते रहनी चाहिए ।

मिनटों और सेकण्डों का सही निर्धारण उस स्थिति में नहीं हो सकता । घड़ी का उपयोग कर सकने की वह स्थिति होती ही नहीं । अनुमान पर ही निर्भर रहना पड़ता है । अलग समय में अनुमान के सही होने का अभ्यास घड़ी के सहारे किया जा सकता है । मोटा आधार यह है कि जब नेत्र बन्द कर लेने पर प्रकाश ज्योति का दर्शन झीना पड़ने लगे तो स्मृति को पुनः सतेज करने के लिए आँख खोलने और ज्योति देखने का प्रयत्न किया जाय । आमतौर से नेत्र खोलकर देखने के उपरान्त जब पलक बन्द किए जाते हैं तो ध्यान में प्रकाश अधिक स्पष्ट होता है । धीरे-धीरे वह झीना धुँधला होता है । उसे फिर से सतेज करने के लिए ही खुली आँख से ज्योति देखने की आवश्यकता पड़ती है । हर मनुष्य की मस्तिष्कीय संरचना अलग-अलग प्रकार की होती है । किसी को एक बार का प्रत्यक्ष दर्शन बहुत देर तक ध्यान में प्रकाश की झाँकी कराता रहता है । किसी की स्मृति जल्दी धुँधली हो जाती है । स्थिति का निरीक्षण स्वयं करना चाहिए और आवश्यकतानुसार जल्दी-जल्दी या देर-देर में आँखें खोलने, बन्द करने का क्रम निर्धारण करना चाहिए । उद्देश्य यह है कि त्राटक के साधना काल में ध्यान भूमिका में लगातार प्रकाश ज्योति की झाँकी होती रहे । धुँधलेपन को हटाने के उद्देश्य से ही नेत्रों को खोलने, बन्द करने की प्रक्रिया अपनाई जाय ।

त्राटक का उद्देश्य दीपक पूजा नहीं, वरन् ध्यान भूमिका में प्रखरता उत्पन्न करना है ताकि चिन्तन के आधार पर प्रकाश बिन्दु देव प्रतिमा की स्पष्ट झाँकी कर सकना सम्भव हो सके । मन्द एवं भोंथरी चिन्तन प्रक्रिया में कोई ध्यान प्रतिमा स्पष्ट रूप से नहीं उभरती । कल्पना चित्र स्पष्ट नहीं होते । तब एकाग्रता का एक महत्त्वपूर्ण मार्ग अवरुद्ध हो जाता है । ऐसी दशा में नादयोग आदि से किया जाने वाली शब्दयोग एवं ध्यान धारणा के आधार पर किया गया बिन्दु योग में से एक भी सफल नहीं होता । तब मात्र प्रत्यक्ष प्रतिमाओं को देखकर—कीर्तन, गायन तथा श्रवण, सत्संग आदि स्थूल उपायों में मन की भगदड़ रोकने के मोटे प्रयोग किए जाते हैं । जप, पाठ की जिह्वा प्रक्रिया तो पूरी होती रहती है, पर ध्यान के अभाव में उसमें भी रस उत्पन्न नहीं होता । त्राटक द्वारा चिन्तन तन्त्र को कल्पना संस्थान को प्रखर बनाने में जितनी सफलता मिलती है उतना ही आत्मिक प्रगति के लिए की जाने वाली साधनाएँ सरल एवं सफल होने लगती हैं । अस्तु त्राटक को—ध्यानयोग को प्रथम प्रक्रिया माना गया है ।

'योग रसायन' में त्राटक के विधान एवं प्रगति क्रम पर प्रकाश डालते हुए कहा है—

दृश्यते प्रथमाभ्यासे तेजो बिन्दु समीपकम् ।
चक्षषो रश्मिजात नि प्रसरति समंततः ॥

त्राटक के अभ्यास से प्रथम तेजोमय बिन्दु पास आया दिखेगा । फिर नेत्र से रश्मियाँ निकलती दिखेंगी ।

तेजसा संवृतं लक्ष्यं क्षणं लुप्तं भवेत्ततः ।
क्षणं दृष्टिगतं भूत्वा पुनर्लुप्त भवेत्क्षणात् ॥

फिर भी तेजपूर्ण बिन्दु कभी लुप्त दिखेगा, कभी प्रकट हुआ दिखेगा । ऐसा ही क्रम बार-बार चलेगा।

दृष्ट्या समं मनश्चापि लक्ष्यस्थाने प्रवेशयेत् ।
लक्ष्यं विहाय नैवान्यच्चिंतयेन्नावलोकयेत् ॥

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मन भी उसी ओर लगा रहे । लक्ष्य के अतिरिक्त और कुछ न देखे, न सोचे ।

प्रकाश ज्योति को आधार मानकर मन की एकाग्रता का अभ्यास किया जाता है । अस्तु प्रत्यक्ष या सूक्ष्म प्रकाश की झाँकी करने के साथ ही इस बात का भी प्रयत्न रहना चाहिए कि मन की तन्मयता भी इसी लक्ष्य पर बनी रहे । चन्द्र-चकोर, दीप-पतंगा के उदाहरण की तरह त्राटक साधना की ज्योति के प्रति तन्मयता का भाव रखते हुए उसमें एकाकार हो जाने की भाव भूमिका बनानी चाहिए ।

ध्यान के दो रूप हैं—एक साकार, दूसरा निराकार । दोनों को ही प्रकारान्तर से दिव्य नेत्रों से किया जाने वाला त्राटक कहा जा सकता है । देव प्रतिमाओं की कल्पना करके उनके साथ तदाकार होने—भाव भरे मनुहार करने का साकार ध्यान कहते हैं । निराकार उपासना में मनुष्याकृति की देव छवियों को इष्टदेव मानने की आवश्यकता नहीं पड़ती । उस प्रयोजन के लिए प्रकाश ज्योति की स्थापना की जाती है । रूप की दृष्टि से छवि—श्रवण की दृष्टि से नाद और श्वसन प्रक्रिया की दृष्टि से प्राणायाम का उपाय काम में लाया जाता है । निराकार साधना के यह तीनों ही उपाय एकाग्रता और भाव कल्पना को प्रखर परिपक्व बनाने के उद्देश्य से की जाती है । साकार उपासना का भी यही उद्देश्य है ।

ध्यान अभ्यास के प्रथम चरण में साकार की और द्वितीय चरण में निराकार की आवश्यकता होती है । अल्हड़ मन एक बिन्दु पर टिकने को तैयार नहीं होता । उसकी घुड़दौड़ पर धीरे-धीरे नियन्त्रण पाने के लिए देव छवि का उपयोग किया जाता है । इष्टदेव के शरीर का सौन्दर्य उनके वस्त्र, आभूषण, आयुध, वाहन आदि का एक सुविस्तृत ढाँचा खड़ा किया जाता है और मन से कहा जाता है कि वह बन्दर की उछल कूद करने की अपनी आदत छोड़ नहीं सकता तो इतने सीमित क्षेत्र में ही जारी रखे । देव छवि के अंग-प्रत्यगों की—उपकरणों को देखने, सोचने में संलग्न रहने का क्षेत्र काफी बड़ा रहता है । उतने में वह चाहें तो चिड़ियाघर के जानवरों की तरह थोड़े क्षेत्र में गुजारा कर सकता है । इसमें आरम्भिक साधक को सरलता पड़ती है और एकाग्रता की साधना सरलतापूर्वक चलने लगती है ।

निराकार में इष्टदेव को और भी अधिक सीमित—केन्द्रित करना पड़ता है । ज्योति के साथ अन्य घटक नहीं होते । उसकी एक ही सत्ता होती है । उसमें मन की एकाग्रता को लगा सकना परिपक्व मनःस्थिति में ही सम्भव होता है । ज्योति के साथ आत्म-भाव जोड़कर रस उत्पन्न करना यहाँ भी आवश्यक है । प्रकाश को ब्रह्म का प्रतीक माना गया है । ज्योति दर्शन को ब्रह्म दर्शन समझा जा सके उसके साथ एकाकार होकर स्वयं भी प्रकाश पुंज प्रकाश पिण्ड बन जाने की भाव भरी श्रद्धा उभारी जा सके तो यह बिन्दु योग की अगली भूमिका समुचित सत्परिणाम दे पाती है । इस अभ्यास में दीप, पतंग एवं चन्द्र-चकोर की सरस कल्पना उभरने से ध्यानयोग का उद्देश्य पूरा होता है । चित्त-वृत्तियों के निरोध को ही योग कहते हैं । त्राटक साधना से उसी उद्देश्यों की पूर्ति होती है ।

गायत्री साधना में त्राटक का महत्त्व

गायत्री-विद्या प्राणविद्या है । गायत्री साधना में प्राणविद्युत सम्बन्धी साधना का विशेष स्थान है । प्राणविद्युत एक चेतना ऊर्जा है । इसकी अभिवृद्धि का प्रभाव बहिरंग एवं अन्तरंग जीवन-दोनों पर ही स्पष्ट देखा जाता है । साहस, उत्साह, दृढ़ता, तत्परता प्राणविद्युत की ही गतिविधियाँ हैं । जिनमें प्राणविद्युत, की बढ़ी-चढ़ी मात्रा रहती है, उन्हें ही मनस्वी, ओजस्वी, तपस्वी आदि कहा जाता है । ऐतिहासिक महामानवों ने प्रचण्ड प्राणविद्युत, के ही सहारे जनसमूहों को नई दिशा दी है । विश्वव्यापी प्राण ऊर्जा प्राणाग्नि का केन्द्र है—सविता । प्रश्नोपनिषद्, में इसी का वर्णन करते हुए कहा है ।

"स एष वैश्वानरो विश्वरूपः प्राणोऽग्निरुदयते ।"

अर्थात्—"विश्वव्यापी प्राणाग्नि का केन्द्र वैश्वानर सूर्य उदित हो रहा है ।"

मनुष्य शरीर में इस प्राणविद्युत का केन्द्र हृदय है और उसकी अभिव्यक्ति नेत्रों में विशेषतः होती है । छान्दोग्य उपनिषद् में बताया गया है कि अन्तरिक्ष में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विद्यमान आदित्य और नेत्र स्थित देवता एक ही शक्ति है ।

अथ य एषाऽन्तरिक्षिरिग पुरुषो दृश्य ते
तस्य तस्यत देव स्वयं यदमुष्य रूपं ।"

—छा. १/७/५

अर्थात्—जो नेत्रों के मध्य में देव सत्ता है, वह वही है जो आदित्य में है । इसी उपनिषद् में आगे यह भी कहा गया है कि—

"अथ य एतदेवं विछान्साम गायत्युभौ स गायति सोऽमुनैव स एष ये चामुष्मात्पराञ्चो लोकास्तां श्चाउप्नोति देवकामांश्च ।"

—छा. १/७/७

अर्थात्—जो व्यक्ति इन (चाक्षुषस्य और आदित्य) दोनों पुरुषों (अर्थात् चेतन) की एकता का सामगान करता है, वह ऊपर के लोकों को तथा देवताओं के कामना स्तर को प्राप्त करता है ।

दोनों में एकीभूत चेतना, गायत्री चेतना ही है । इसीलिए इस एकता के सामगान की बात कही गई है । गायत्री-चेतना का गायन स्तवन ऊर्ध्वगामिता का आधार तो बनता ही है, वह ऐहिक समृद्धि के भी पथ प्रशस्त करता है । यह बात भी इसी उपनिषद् में आगे कही गई है—

"अथानेनैव ये चैतस्मादर्वाञ्चो लोकास्तां
श्चाप्नोति मनुष्य कामांश्च .....।"

—छा. १/७/८

अर्थात्—इसी (उभयस्थ) चेतना द्वारा नीचे के लोक यानी मानवीय कामनाओं के लोक की भी उपलब्धियाँ प्राप्त होती हैं ।

उपनिषद् के ये निर्देश नेत्र शक्ति के रूप में अभिव्यक्त चेतना विद्युत का महत्त्व स्पष्ट करते हैं । दृष्टि शक्ति की कारणीभूत दृश्य प्रकाश की किरणों में क्रियाशील चेतनशक्ति वह चेतन विद्युत है । दृश्य विकिरण उसी के स्थूल रूप हैं ।

नेत्रों के द्वारा, मानवीय सत्ता में सक्रिय विद्युतचुम्बकीय ऊर्जा प्रवाहित होती है । इस ऊर्जा के संरक्षण-सम्वर्धन और उसे दिशा विशेष में प्रवाहित करने की साधना प्रक्रिया त्राटक कहलाती है । इस प्रकार त्राटक साधना द्वारा प्राणविद्युत का सदुपयोग प्राणविद्या-गायत्री की साधना का ही अंग है । त्राटक साधना द्वारा दृष्टि क्षमता इतनी तीक्ष्ण बना ली जा सकती है कि वह दृश्य की गहराई में उतर सके और उसके अन्तराल में घटित हो रहे क्रिया-कलापों को पकड़ जान सके । इन दिनों सामान्यतः जिसे ध्यान कहते हैं, वह त्राटक का ही एक अंग है । ध्यान के ये विविध प्रकार त्राटक-साधना का ही हिस्सा है ।

ध्यान के दो रूप हैं एक साकार दूसरा निराकार । दोनों को ही प्रकारान्तर से दिव्य नेत्रों से किया जाने वाला त्राटक कहा जा सकता है । देव प्रतिमाओं की कल्पना करके उनके साथ तदाकार होने—भाव भरे मनुहार करने को साकार ध्यान कहते हैं । निराकार उपासना में मनुष्याकृति की देव छवियों को इष्ट देव मानने की आवश्यकता नहीं पड़ती । उस प्रयोजन के लिए प्रकाश ज्योति की स्थापना की जाती है । रूप की दृष्टि से छवि, श्रवण की दृष्टि से नाद और श्वसन-प्रक्रिया की दृष्टि से प्राणायाम का उपाय काम में लाया जाता है । निराकार साधना के ये तीनों ही उपाय एकाग्रता और भाव-कल्पना को प्रखर परिपक्व बनाने के काम आते हैं, साकार उपासना का भी यही उद्देश्य है ।

त्राटक विधियाँ विविध हैं । बाह्य त्राटक में दृष्टि को किसी विशेष वस्तु पर जमाकर उसमें मन को तन्मयतापूर्वक प्रवेश कराया जाता है । इस प्रक्रिया में नेत्रों द्वारा विकीर्ण होने वाला मनः तेज एवं विद्युतचुम्बकीय ऊर्जा प्रवाह केन्द्रीभूत तथा सघन होता है । इससे नेत्र दृष्टि में 'वेधक' क्षमता उत्पन्न होती है । वेधक-दृष्टि से देखकर किसी व्यक्ति को प्रभावित किया जा सकता है । मेस्मेरिज्म हिप्नोटिज्म में वेधक दृष्टि ही प्रयोग में लायी जाती है । मेस्मेरिज्म के अभ्यासी सफेद कागज पर काला गोला बनाते हैं । उसके मध्य में श्वेत बिन्दु रहने देते हैं या पीला रंग इस बिन्दु में भर देते हैं । लगभग एक हाथ लम्बा, एक हाथ चौड़ा, चौकोर कागज या पट्टा लेकर उसके बीच में रुपये के बराबर एक काला गोला बनाते हैं । बीच में सरसों के बराबर जगह छोड़ देते हैं या वहाँ पीला रंग भर देते हैं । इस कागज को दीवार में ऐसी जगह टांगते हैं कि उससे लगभग एक मीटर दूर, सीध में बैठा जा सके । शान्त सौम्य प्रकाश युक्त, समशीतोष्ण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वातावरण वाले कमरे में पद्मासन या सुखासन पर बैठकर उस गोले को देखते हैं । सम्पूर्ण भावना-शक्ति श्वेत या पीत बिन्दु पर एकत्र कर, ऐसा अनुभव करते हैं कि तीक्ष्णनेत्र दृष्टि यहाँ छेद किए दे रही है । कुछ देर लगातार देखने से पहले दिन आँखों में दर्द होने लग सकता है । अभ्यास अवधि धीरे-धीरे बढ़ाते हैं । अष्टधातु के बने तश्तरीनुमा पतरे के मध्य में ताँबों की कील लगाकर या किसी दर्पण के बीच २५ नये पैसे के सिक्के के बराबर कागज का गोला काले रंग में रंग कर, बीच में बिन्दु रखते हुए, चिपकाकर उस गोले के मध्यवर्ती श्वेत बिन्दु में देखते हुए भी त्राटक का अभ्यास किया जाता है । पर सर्वोत्तम अभ्यास है गोघृत के दीपक पर दृष्टि का केन्द्रीकरण । सूर्य, चन्द्र या तारे पर भी त्राटक किया जाता है, पर उनमें कठिनाइयाँ व खतरे अधिक हैं ।

अन्तःत्राटक प्रकाश-ज्योति पर ही किया जाता है । उसके आरम्भिक चरण में कुछ क्षण तक बाह्य त्राटक कर फिर उसी का ध्यान करते हैं । प्रातःकालीन उदीयमान सूर्य जब तक स्वर्णिम रहे तब तक कुछ-कुछ सेकण्ड के लिए उनका प्रत्यक्ष आँखों से दर्शन और फिर नेत्र बन्द करके उसका ध्यान करने से अन्तःत्राटक की आधार भूमिका बन जाती है । यही कार्य पूर्णिमा का पूर्ण चन्द्र देखने और आँखें बन्द करने से भी हो सकता है । उस समय अन्य तारकों की ओर ध्यान न जाय । शुक्र, गुरु, जैसे किसी प्रकाशवान तारे को इस प्रयोजन के लिए प्रयुत्म किया जा सकता है । मोमबत्ती, दीपक, बल्व आदि का प्रयोग जब तक होता रहेगा तब तक उसे बाह्य त्राटक ही कहा जाता रहेगा । जब उपकरणों की आवश्यकता नहीं रहती और मात्र ध्यान से ही प्रकाश की अनुभूति होने लगती है तो उसे अन्तःत्राटक कहा जाने लगता है ।

अन्तःत्राटक आरम्भ करते हुए कुछ समय ध्येय प्रकाश की स्थिति वही रहने देनी चाहिए, जहाँ उसे देखा गया था । प्रभात कालीन स्वर्णिम सूर्य सुदूर पूर्व में उगते हुए जहाँ देखा गया, आरम्भिक दिनों में उसे यही सूक्ष्म दृष्टि से देखना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि इस प्रकाश पुंज की ज्योति किरणें अन्तरिक्ष में होकर उतरती हैं और अपनी उत्कृष्टता को स्थूल शरीर में बल, सूक्ष्म शरीर में ज्ञान एवं कारण शरीर में भाव बनकर प्रवेश कराती हैं । परिणामतः शरीर संयमी, सक्रिय, स्वच्छ बनता है मन में उसी प्रकार की किरणें सन्तुलन, विवेक, शालीनता, सद्ज्ञान बनकर बरसती हैं । कारण में अन्तःकरण से सद्भावना और श्रद्धा-भक्ति के रूप में वे प्रकाश किरणें अवतरित होती हैं । इस प्रकार समूचा व्यक्तित्व दिव्य ज्योति से जगमग हो उठता है ।

बाह्य त्राटक के लिए खुली आँखों से अभ्यास करना होता है । पर अन्तःत्राटक के लिए ध्यान मुद्रा में बैठना पड़ता है । अधखुले नेत्र, दोनों हाथों की उँगलियाँ मिली हुई, हथेलियाँ ऊपर की ओर करके उन्हें गोदी में रखना ध्यान-मुद्रा है । भगवान बुद्ध के चित्रों में प्रायः यही स्थिति चित्रित की जाती है । इस स्थिति में स्थित होकर भ्रूमध्य भाग में अवस्थित प्रकाश पुंज की धारणा और अधिक प्रगाढ़ भाव से की जाती है । बिजली के बल्व का मध्यवर्ती तार फ्लामेन्ट जिस प्रकार चमकता है और उसकी रोशनी बल्व के भीतरी भाग में भरी हुई गैस में प्रतिबिम्बित होती है, उससे बल्ब का पूरा गोला चमकने लगता है और उसका प्रकाश बाहर भी फैलता है ठीक यही भावना अन्तःत्राटक में भी करनी होती है ।

अन्तःत्राटक का यह प्रथम चरण है । बाहर से भीतर की ओर ज्योति का प्रवेश करने की प्रक्रिया प्रथम भूमिका कहलाती है । क्रमिक विकास से इसी प्रक्रिया के विस्तार की सुविधा रहती है । यह स्थिति अधिक परिपक्व परिपुष्ट हो चलने पर प्रकाश की स्थापना भीतर की जाती है और उस आत्म-ज्योति की, ब्रह्म-ज्योति की आंच भीतर से निकलकर बाहर की ओर फैलती अनुभव होती है । बल्व का फिलामेंट भीतर तो ज्योतिर्मय होता ही है अपनी आभा से सम्पर्क क्षेत्र को भी प्रकाशवान बना देता है । आन्तरिक ज्योति के प्रकटीकरण में भी ऐसी ही स्थिति बनती है । अन्तःत्राटक का साधक आत्म सत्ता को प्रकाश से परिपूर्ण तो देखता ही है, साथ ही अपने प्रभाव क्षेत्र में भी आलोक बिखेरता है ।

अन्तःत्राटक की उच्च भूमिका में प्रकाश ज्योति को आज्ञाचक्र केन्द्र में स्थापित करते हैं । इससे भी आगे यह आभा हृदय केन्द्र में ले जायी जाती है । इस उच्च भूमिका में श्रद्धा प्राण रहती हैं और ध्येय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्योति को सविता की चेतना द्युति के रूप में अनुभव किया जाता है । इसका ही 'हृत्पुण्डरीक मध्यस्थां प्रातः सूर्य सम प्रभाम्'' कहकर अर्थात् हृदय कमल के मध्य में प्रातःकालीन सूर्य की प्रभा सदृश निर्दिष्ट कर वर्णन किया गया है । यही हृदपद्म में उल्लसित सविता की ज्योति है । गायत्री साधकों द्वारा बाह्य त्राटक एवं अन्तःत्राटक की साधना इसी परम ज्योति के दर्शन कर जीवन का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए की जाती है ।

आरम्भ में अल्हड़ मन को एक बिन्दु पर केन्द्रित करना अति कठिन हो जाता है । इसीलिए त्राटक के अभ्यास में, आध्यात्मपथ के पथिक प्रारम्भ में इष्ट देव की मूर्ति पर त्राटक करते हैं । मेस्मेरिज्म आदि के उद्देश्य से की जाने वाली त्राटक साधना में आध्यात्मिक लक्ष्य नहीं रहता । इसलिए वहाँ मन को एक बिन्दु पर टिकाने में भौतिक शक्ति के उपार्जन का उत्साह मदद करता है । आध्यात्म-मार्ग उससे भिन्न है और स्वभावतः बहिर्मुखी मन के लिए अभ्यास वश वह कार्य कठिन पड़ता है । इस प्रक्रिया में रस की अनुभूति न हो सकी, तो मन में एक तरह की स्तब्धता मात्र आ जाती है । यह स्तब्धता, जड़ता, ध्यान प्रक्रिया का प्रयोजन नहीं है । जो लोग स्तब्धता के उपरान्त अनुभव होने वाले एक तरह के स्फूर्ति पूर्णभाव का ही ध्यान साधना में प्रगति समझने लगते हैं, वे यहीं अटक जाते हैं । आध्यात्मिक प्रयोजन स्तब्धता या तन्द्रा से नहीं, जागरूकता से ही पूरा होता है । सजगता और सरसता से भरी भाव श्रद्धा ही आध्यात्म पथ का पाथेय है । इसीलिए इस मार्ग पर यात्रा का आरम्भ इष्ट देव की प्रतिमा पर बाह्य त्राटक के ध्यानाभास के साथ करता सुगम सिद्ध होता है । आरम्भिक साधक को इसी में सरलता होती है और एकाग्रता तथा सजगता के साथ-साथ साधना चलती रहती है । इसीलिए प्रारम्भ में एकाग्रता का अर्थ सीमित क्षेत्र में ही देर तक विचार और भाव केन्द्रित रखना ही समझना चाहिए ।

अतः गायत्री साधकों को त्राटक ध्यान की साधना सदा ही माँ गायत्री की देव प्रतिमा को केन्द्र बनाकर प्रारम्भ करना चाहिए । यह अभ्यास पक जाने पर आगे चलकर सूर्यमण्डल के मध्य में स्थित माता का ध्यान करना चाहिए । अगला चरण अन्तःत्राटक द्वारा मात्र सविता ज्योति की सत्ता के अनुभव का होता है । ज्योति के साथ आत्मभाव की अनुभूति तन्मयता और रसानुभूति उत्पन्न करती है । इसे ब्रह्माण्डीय ज्योति समझकर स्वयं भी उस ज्योति से भरपूर प्रकाश पुंज बन जाने की गहन श्रद्धा ही योग का क्रम पूरा कराती है और साधक सविता को एक बना देने का लक्ष्य उपलब्ध कराती है ।

त्राटक द्वारा मनःशक्तियों का केन्द्रीकरण और सम्मोहन

भारतीय सम्मोहन विद्या और त्राटक द्वारा उपलब्ध लाभों का प्रत्यक्षदर्शी वर्णन मूर्धन्य विज्ञानी डॉक्टर अलैक्जेंडर कैनन ने अपनी कृति में किया है । श्री कैनन हाँगकाँग में रहते थे । ब्रिटिश गवर्नमेन्ट ने उन्हें नाइट की पदवी दी थी । उन्होंने आजीवन आत्म तत्व की खोज की और उसके लिए चीन, तिब्बत, भारत ही नहीं सुदूर पश्चिमी देशों की यात्रा की और महत्त्वपूर्ण अनुभव अर्जित किए । प्रस्तुत अंश उनकी पुस्तक ''इनविजिबुल इन्फ्लूयन्स'' से उद्धृत किया जा रहा है ।

एक बार डॉ. कैनन को एक लामा का निमन्त्रण मिला । उसके लिए उन्होंने तिब्बत की यात्रा की । जो रास्ता बताया गया था उसमें से होते हुए वे एक ऐसे मठ के समीप पहुँचे जिसके किनारे ५० गज चौड़ी विशाल खाई थी, उसे पार करके जाना किसी भी भाँति सम्भव न था । अभी यह विचार करते हुए श्री कैनन खाई की ओर बढ़ ही रहे थे कि आगे एक लामा खड़ा दिखायी दिया । उसने नमस्कार करके पूछा—आप डॉ. अलैक्जेंडर कैनन हैं न, मैं आपकी सहायता के लिए यहाँ आया हूँ । आप कृपया अपने साथी इन स्त्री-बच्चों को वापस कर दीजिए जब तक आप इस मठ में रहें यह लोग गाँव की धर्मशाला में विश्राम करेंगे । लामा के कहने पर स्त्री, बच्चों को वापस कर दिया गया ।

अब वे उस खाई के समीप पहुँचे । लामा की गतिविधियाँ स्वचालित यन्त्र की भाँति और बड़ी विलक्षण-सी थीं । उसने बताया—अब मैं आपको कुछ प्राणायाम, शरीर का शिथिलीकरण तथा कुछ ऐसे योग साधन बताऊँगा जिनसे आपका शरीर हल्का रुई की तरह हो जायेगा और आप बादलों की तरह उड़कर खाई पार कर लेंगे मैं आपके साथ ही होऊँगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

श्री कैनन ने भारतीय योगियों द्वारा तो ऐसे योग-कारनामे देखे थे और सुना था कि यहाँ ऐसी योग साधनाएँ ढूँढ़ी गई हैं जो पाश्चात्य-विज्ञान से भी अधिक विस्मय से भरी हुई हैं अणिमा जिसमें जीव-चेतना अणु के समान बनकर कण-कण की खोज कर लाती है, महिमा जिसमें मनुष्य पर्वत के समान विशाल और शक्तिशाली हो जाता है गरिमा सिद्धि शरीर को बहुत भारी और लघिमा हल्का कर लेने को कहते हैं । प्राप्ति लाखों मील दूर की वस्तु के स्पर्श और प्राप्ति की सिद्धि है तो प्राकाम्य कोई भी कामनाएँ तत्काल पूर्ति कराने वाली सिद्धि है शरीर के भीतर अदृश्य चक्रों उपत्यिकाओं कुण्डलिनी और मन पर अधिकार करके इच्छानुसार प्रयोग कर सकने की सामर्थ्य प्रदान करने वाली ईशत्व सिद्धि तथा परिस्थितियों और शक्तिशाली पदार्थों को भी वश में रखने की वाशित्व सिद्धि भी भारतीय योगविद्या के चमत्कार हैं । मन को कण्ठ में संयम करने से अदृश्य राग-रागनियों का सुनना, नाभि में संयम करने से भूख न लगना जैसी संयम और सूर्य-वेध नाड़ी-शोधन, उज्जायी, भ्रामरी आदि प्राणायाम भी भारतीय योग-विद्या की विद्याएँ हैं तो वस्ति, ध्नौति, नौलि, नेति, बज्रौली और कपालभाति क्रियाएँ भी भारतीय योगी जानते हैं । श्री कैनन ने लामा से पूछा आप लोग भी यह सब जानते हैं क्या ? तो उसने बताया हाँ यह भारतीय योग विद्या ही है एक समय प्रसिद्ध "बज्रयान-योगी" पद्म सम्भव भारतवर्ष से बुद्ध धर्म का प्रचार करने तिब्बत आये थे । उन्होंने ही तिब्बत में इन साधनाओं का प्रचार किया था । भारतवासी धीरे-धीरे इस महान विज्ञान को भूलते जा रहे हैं जब कि तिब्बत में अनेक लामा अभी भी इन साधनाओं और गुह्य आत्मविद्या के ज्ञाता हैं डॉ. लोबसाँग रम्पा जैसे लामा योगविद्या ज्ञाताओं की ख्याति अमेरिका और इंग्लैण्ड तक में हुई है ।

लामा के बतायेनुसार साधन करने के बाद डॉ. कैनन ने आँखें खोलीं तो वे हैरान थे कि अभी एक क्षण पूर्व तो हम खाई के उस पार थे अब खाई के इस पार कैसे आ गए । वहाँ से चलकर वे मठाधीश लामा के सम्मुख पहुँचे उसने डॉ. कैनन का स्वागत किया डॉ. कैनन लिखते हैं—लामा के शरीर के बाहर तीन फीट के घेरे में मैंने नीले रंग का विलक्षण तेज देखा उससे लामा की आकृति बड़ी दिव्य लग रही थी । लामा से योग-विद्या और आत्मा आदि पर देर तक बातचीत होती रही । उन्होंने यह भी बताया कि अब शीघ्र ही संसार में ऐसा परिवर्तन आने वाला है जिसमें भौतिक विज्ञान की अपेक्षा आत्म-विज्ञान की भावनाओं का महत्त्व बढ़ जायेगा लोग धन, यश, पद की अपेक्षा, प्रेमभाव, कर्त्तव्य भाव मैत्री और सेवा आदि भावनाओं को अधिक महत्त्व देंगे ।

इस बीच लामा ने डॉ. कैनन को योग-विद्या के अनेक चमत्कार दिखाए । लामा ने यह भी बताया—योग चमत्कार की वस्तु नहीं है पर आपको एकान्त में बुलाकर और यह सब दिखाकर मैं आशा करता हूँ कि आप योग-विद्या प्रभाव से लोगों को अवगत करायें । एक दिन लामा ने त्राटक विद्या का अद्‌भुत करिश्मा देखा । कफन में लपेटा हुआ एक शव लाकर डॉ. कैनन के सामने रख दिया गया । डॉ. कैनन ने परीक्षा की और बताया इसे तो मरे हुए २४ घण्टे से भी अधिक हो गए । किन्तु तभी लामा ने कुछ पढ़ा कोई मन्त्र लगता था फिर अपनी आँखें शव पर गढ़ाईं और बोले—उठो भाई कितनी देर से पड़े हो—यह शब्द ऊधर मुँह से निकले इधर मृतक ने आँखें खोल दीं—चारों ओर देखा फिर उठ बैठा और खड़ा होकर डॉ. कैनन के पास तक गया, कैनन को प्रणाम किया । तिलस्मी किस्सों की तरह—डॉ. कैनन हैरान थे मृत व्यक्ति को खड़ा देखकर नहीं वरन् यह जानकर कि यही वह व्यक्ति था जो विविध योग साधनाएँ कराकर मुझे खाई से अन्दर लाया था । लामा ने बताया यह व्यक्ति तो सात वर्ष से मृत है इसे कई सौ वर्ष तक इसी तरह रख सकते हैं इसी बीच डॉ. कैनन के मन में जो भी बात आयी लामा अपने आप बता देता था उसका उत्तर भी दे देता था । कैनन हैरान थे आखिर वह कौन-सी वस्तु है जिसे माध्यम बनाकर यह लामा मन की सारी बातें जान लेता है ?

हठयोग प्रदीपिका में लिखा है—

निरीक्षेन्निश्चलादृशा सूक्ष्म लक्ष्यं समाहितः ।
अश्रु संपात पर्यन्तं आचार्ये त्राटकं स्मृतम् ॥
मोचनं नेत्ररोगाणां तं द्रादीनां कपाटकम् ।
यन्नतस्त्राटकं गोप्यं यथा हाटक पेटकम् ॥

—ह. प्र. २।३१-३२

अर्थात्—एकाग्रचित्त होकर मनुष्य किसी सूक्ष्म वस्तु को सामने रखकर तब तक देखे जब तक आँखों में आँसू न आ जाय । आचार्यों ने इसे त्राटक कहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

त्राटक से नेत्र रोग दूर होते हैं, तंद्रा और आलस्य दूर होते हैं । इस त्राटक में गुप्त रहस्यों का ज्ञान होता है इसलिए योगी इसे सोने की पेटी की तरह गुप्त रखते हैं ।

दूसरे के मन की बातें जान लेना, औरों को प्रभावित करना, मूर्छित कर लेना त्राटक की ही सिद्धि है योग्य और अनुभवी योगियों के मार्ग-दर्शन में सीखा हुआ त्राटक सब प्रकार की सिद्धि देने वाला है । जिस समय तुर्कों ने भारत पर हमला किया लीलाब्रज ने इसी विद्या के आधार पर उनका हमला विफल कर दिया था । आचार्य कमलरक्षित ने यवन-सेना पर पूर्ण कुम्भ का प्रयोग करके ५०० सैनिकों को मार डाला था और सारी सेना रक्त वमन करने लगी थी । इससे चिढ़कर उन्होंने विक्रम शिला और नालन्दा के विशाल योग ग्रन्थागार को जला डाला था । सिद्ध पीठों और योगियों को मारने का कुचक्र भी इसी कारण रचा गया थी कि पीछे सैनिकों से लड़ना आसान हो गया और विदेशी सेना ने इस देश पर विजय पायी । महाभारत काल में इस विज्ञान की जो अनेकों शाखाएँ खोजी गई थीं वह इसी समय या तो नष्ट कर दी गईं या विदेशी को चली गईं ।

डॉ. कैनन लामा योग-बल से बड़े प्रभावित हुए उन्होंने त्राटक सीखा भी और उसका प्रचार भी किया । उनकी पुस्तक—"इनविजिबुल इन्फ्ल्यून्स" इस सम्बन्ध में और भी प्रकाश डालती है । यह घटना कल्याण योगांक में भी छपी थी और सम्मोहिनी विद्या नामक पुस्तक में भी चन्द्रिका प्रसाद जिज्ञासु ने भी छापी थी जो कि १९३८ में छपी थी ।

इसके बाद डॉ. कैनन को लामा ने बड़े सम्मान के साथ विदा किया । लौटते समय उन्हें खाई पार करने के लिए वही पहले वाला लामा उपस्थित मिला—उन्होंने इस बार गौर से देखा तो पाया कि वह सचमुच यन्त्र की भाँति किसी और के इशारे पर काम करता है, उसकी आँखों की पुतलियाँ नहीं चल रही थीं । एक बार तो डॉ. कैनन डरे थे कि यह तो उनके साथ शव चल रहा है पर शीघ्र ही वे सम्भल गए कि इस शव के भीतर बातचीत करते हुए वह मुख्य लामा ही चल रहे हैं जिनके योग-बल की कोई थाह नहीं है । भारत से सीखी साधना का एक विद्वान लामा इतना शक्तिशाली हो सकता है तो कोई भारतीय योगी कितना शक्तिशाली होता होगा सहज ही सोचा जा सकता है ।

लामाओं से सीखी त्राटक विद्या को डॉ. कैनन ने भी ध्यान साधना का ही अंग माना है । उन्होंने लिखा है कि साधक लामा लोग सूर्योदय के एक घण्टा पहले से सूर्योदय तक यह साधना करते हैं । श्वेत पत्थर शालिगग्राम या स्फीटिक पत्थर को आँखों की सीध, उतनी ही ऊँचाई तथा २ फीट की दूरी पर रखकर टकटकी लगाकर जितनी देर सम्भव हो, स्थिर दृष्टि से उसकी ओर देखा जाता है । आँखें थक न जाय तब तक यह अभ्यास करना चाहिए । पत्थर पर दृष्टि स्थिर होने के बाद घी का दीपक जलाकर उसकी लौ पर दृष्टि स्थिर की जाती है । जब ज्योति शिखा पर दृष्टि स्थिर हो जाय तब यही प्रयोग ठुड्डी को कण्ठ कूप (गले में जो गड्ढा सा बनता है) में लगाकर अपनी नाक के अग्रभाग पर करना चाहिए ।

दूर त्राटक दूर के पौधों पर गोलाकार गुम्बद वाले मन्दिर, चन्द्रमा तथा अन्य तारों पर किया जा सकता है । इन पर दृष्टि स्थिर होने पर सूर्य पर भी किया जा सकता है । पर सब का नहीं करना चाहिए । यह सारी क्रियाएँ बिना अनुभवी मार्गदर्शक के भी नहीं करनी चाहिए । योग-ग्रन्थों में वर्णित ध्यान-बिन्दु साधना भी त्राटक ही है उसमें बिना आँख बन्द किए दोनों भौंहों के बीच ध्यान किया जाता है । यह ध्यान प्रारम्भ में किसी मूर्ति या चित्र के रूप में करते हुए प्रकाश की लौ के रूप में किया जाता है । भ्रूमध्य स्थित आज्ञाचक्र या तीसरे नेत्र का उन्मीलन इस साधना की सिद्धि है । इससे योगी में आश्चर्यजनक क्षमताएँ उत्पन्न होती हैं । दूसरों के मन की बातें जान लेना, दूर की वस्तुओं, घटनाओं का ज्ञान, दूरवर्ती आकाश में हो रही सूक्ष्म हलचलों का ज्ञान और स्वप्नावस्था में दिव्य-दृश्य तथा भविष्य में होने वाली घटनाओं का पूर्वाभास सब इसी साधना के सत्परिणाम हैं पर यह साधनाएँ सात्विक आहार-विहार तथा मनोवृत्ति वाले लोगों को योग्य गुरु के मार्गदर्शन में ही करना चाहिए अन्यथा लाभ होने के बजाय हानि अधिक होती है । इसलिए इन साधनाओं के अभ्यास के पूर्व यह निश्चित कर लेना आवश्यक है कि वे साधना की कठिनाई (कठिनाई केवल मन के आकर्षण, इच्छाओं को मारने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की होती है) को झेल सकेंगे या नहीं । दुर्बल मन वालों को यह नहीं सिखायी जाती । साधना एक प्रकार का समर (युद्ध) है उसे मनस्वी सशक्त और तेजस्वी व्यक्ति जीतते हैं जिनमें इस तरह का संकल्प बल हो, केवल उन्हें ही इसका अभ्यास करना चाहिए ।

ज्योति साधना से आज्ञाचक्र का जागरण

मानवी सत्ता इतनी रहस्यमय है कि उसे ठीक-ठीक समझ सकना अत्यन्त कठिन है । महाभारत में इसलिए महर्षि व्यास ने लिखा है—"न मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किञ्चित्" । मनुष्य से अधिक श्रेष्ठ इस संसार में और कुछ नहीं । देवता मनुष्य की मनुहार से प्रसन्न होते और वरदान देते प्रतीत होते हैं, अतः मनुष्य उन्हें अपने से श्रेष्ठ मानता रहता है । किन्तु वस्तुतः देवता मनुष्य की श्रद्धा एवं विश्वास के छेनी-हथौड़े से गढ़े-संवारे हुए उसके ही मानव-पुत्र हैं । गीता में कहा गया है "देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्ति वऽ ।" भावनाओं से देवताओं का वन्दन होता है और वे देवता बदले में भावात्मक अनुदान देते हैं । 'भावोहि विद्यते देव' का कथन यह स्पष्ट करता है कि पाषाणखण्ड को दैवी सामर्थ्य सम्पन्न बना सकने की चमत्कारिक क्षमता का वास्तिविक आधार भावना ही है । जहाँ यह भावनात्मक आधार ध्वस्त हुआ वहाँ देव प्रतिभा निष्प्राण पाषाण या धातु खण्ड मात्र रह जाती है ।

गायत्री उपासक को सविता देवता से जो शक्ति प्राप्त होती है वह उसकी भावनात्मक उत्कृष्टता के अनुपात में होती है ।

कुण्डलिनी—साधना के अनेक विधि-विधानों में से गायत्री साधना-विधान सर्वोपरि है । क्योंकि सृष्टि के कण-कण में जो जीवन—चेतना अविराम स्फूर्ति होती रहती अनुभव में आती है उसका मूल आधार सविता की सत्ता ही है और सविता देवता की शक्ति को समझ लेने पर तथा उससे अपना सम्पर्क जोड़ लेने पर मनुष्य के लिए कुछ भी असम्भव अथवा अज्ञात नहीं रह जाता ।

सूर्य इस सृष्टि का मूल आधार है । यदि बुझ जायेगा तो यह सृष्टि और सम्पूर्ण सौर मण्डल भी निर्जीव हो जायेगा । यह सूर्य सविता देवता का स्थूल प्रतीक है इसलिए उसे ही सविता कह दिया जाता है । वस्तुतः सविता उस मूल चेतना—शक्ति का नाम है जिससे कि शक्ति ग्रहण कर सूर्य सम्पूर्ण—सृष्टि को सतत् जीवन-चेतना प्रदान करता रहता है । उसी सविता देवता की साधना गायत्री-साधना है और उस शक्ति-स्रोत से प्रत्यक्ष सम्पर्क जोड़ना सर्वोत्तम एवं सर्वाधिक सहज कुण्डलिनी-साधना विधान है ।

मूलाधार में यह कुण्डलिनी शक्ति प्रसुप्त पड़ी है । जब यह जाग्रत होकर सहस्रार स्थिति परम-शिव से जा मिलती है तो साधक स्वयं उस महाज्योति के साथ तद्रूप हो जाता है । शक्ति जागरण की यह प्रक्रिया क्रमशः जिन चेतना—स्तरों को पार करती जाती है—उन्हीं को साधना-विज्ञान में चक्र कहा जाता है । मूलाधार तथा सहस्रार के बीच मेरुदण्ड में ऐसे पाँच प्रमुख चक्र संस्थित हैं । ये हैं—स्वाधिष्ठान मणिपूर अनाहत विशुद्ध और आज्ञाचक्र । मूलाधार और सहस्रार को मिलाकर ये सप्त हो जाते हैं । इन्हें ही सप्तलोक, सप्तऋषि, सप्त द्वीप, सप्त सागर आदि कहा जाता है ।

बीच में स्थिति पाँच चक्र, पंचतत्व, पंचप्राण पंच के प्रतीक हैं । इनकी उपासना ही वास्तविक पंचोपचार है । कठोपनिर्षद् के यम—नचिकेता सम्वाद में इसे ही पंचाग्नि विद्या कहा गया है ।

वस्तुतः चक्र सूक्ष्म आध्यात्मिक केन्द्र हैं । ब्रह्माण्ड जो चेतन-शक्ति की धाराएँ अविराम द्रुतगति से दौड़ रही हैं, उनके कुछ निश्चित आवर्त केन्द्र हैं जो भंवर या चक्रवात की तरह ही हैं । इसी प्रकार मानवीय पिण्ड में भी ऐसे ही आवर्त—केन्द्र हैं जो ब्रह्माण्ड स्थित चेतन संस्थानों के प्रतिनिधि हैं । ये चक्र भिन्न-भिन्न प्रकार के शक्ति-प्रवाहों के उद्गम-केन्द्र माने जा सकते हैं । यद्यपि इन सभी का मूल उद्गम केन्द्र तो सविता देवता ही है । जो चक्र संस्थान अविज्ञात चेतना-प्रवाह के जिस केन्द्र से विशेष रूप से जुड़ा रहता है उसका जागरण उसी प्रकार की अनुभूतियों और विभूतियों को जन्म देता है ।

प्रत्येक चक्र का अपना तत्व-बीज, अपना वाहन अपना आदि देवता अपना दल यन्त्र शब्द एवं रंग होता है । इन्हीं विशेषताओं की भिन्नता से उनके भेद किए गए हैं । जिस प्रकार ज्वालामुखी के छेद आग, धुँआ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा दूसरी वस्तुएँ उगलते रहते हैं, उसी प्रकार ये चक्र-संस्थान जाग्रत होने पर भिन्न-भिन्न प्रकार की शक्तियाँ-विभूतियाँ उगलते हैं ।

इन पाँचों चक्रों में आज्ञाचक्र को गुरु-चक्र कहा जाता है । क्योंकि वही मार्गदर्शक है, शक्ति-प्रवाह का उद्‌गम स्थल है । इस आज्ञाचक्र को ही तीसरा नेत्र भी कहते हैं । सन्तुलन अन्तर्दृष्टि दिव्यदर्शन की क्षमता इसी चक्र संस्थान में सन्निहित है । चक्र-वेधन एवं कुण्डलिनी जागरण की प्रक्रिया स्वरूप निहितार्थ फलितार्थ तथा उपयोग की विधि को जानने-समझने की शक्ति चक्र के जाग्रत होने पर प्राप्त होती है । जिसका आज्ञाचक्र जग गया, जिसे दिव्यदृष्टि मिल-मिल गई, उसका साधना-पथ आलोकित हो जाता और लक्ष्य स्पष्ट हो जाता है । उस साधना—पथ पर चलते हुए साधक सुगमता से लक्ष्य को पा लेता है ।

आज्ञा—चक्र को जाग्रत करने के लिए ज्योति-बिन्दु की अवतरण-साधना करनी होती है ।

मनुष्य के मस्तिष्क की दोनों भवों के मध्य में यह आज्ञा-चक्र अवस्थित है । भृकुटी के नीचे अस्थियों का जो आवरण है उसके भीतर एक बेर की गुठली जैसी ग्रन्थि है, वहीं आज्ञा-चक्र संस्थान है ।

साधक ध्यानावस्था में सुदूर अन्तरिक्ष में उदित प्रभातकालीन स्वर्णिम बाल-सूर्य को देखता है । प्रारम्भिक अभ्यास के लिए सूर्य पर त्राटक आवश्यक हो जाता है । अतः अरुणोदय के समय कोई ऐसा स्थान निश्चित करना चाहिए जहाँ मकानों, पेड़ों आदि की आड़ न हो और ऊपर उभरता बाल—सूर्य स्पष्ट दिखाई दे सके ।

कुशासन अथवा कम्बल बिछाकर मेरुदण्ड को सीधा रखते हुए पद्मासन में या पालथी मारकर ध्यान-मुद्रा में बैठें । शरीर पर न्यूनतम वस्त्र ही रहें ।

खुली आँखों से एक या दो सेकण्ड बाल-सूर्य को देखें बन्द कर लें । तीस सेकण्ड तक बन्द आँखों से उसी प्रकार सूर्य देखने की कल्पना करें । यह क्रम तभी तक चले जब तक सूर्य की स्वर्णिमा समाप्त न हो । दस-पन्द्रह मिनट के भीतर ही सूर्य श्वेत वर्ण होने लगता है । तब यह त्राटक सर्वथा निषिद्ध है । यहाँ यह ध्यान रखने योग्य है कि सूर्य का स्वर्णिम प्रकाश भी तीन सेकण्ड से अधिक देखने में आँखों को हानि पहुँचती है । अति उत्साह में आकर सूर्य को देर तक देखने की भूल किसी को भी नहीं करनी चाहिए ।

प्रारम्भिक बीस दिन तक इस प्रातःकालीन सूर्य-त्राटक का अभ्यास करने से यह कल्पना में गहराई तक बैठ जाता है । इसके बाद इस प्रारम्भिक अभ्यास की आवश्यकता नहीं रह जाती ।

इसके उपरान्त अभ्यास सिद्धि कल्पना और आस्था पुष्ट भावना के सम्मिश्रण से ज्योति-बिन्दु का ध्यान आगे बढ़ाया जाय ।

उपासना अवधि में साधक गायत्री-मन्त्र के जप के साथ ही अपने आज्ञा-चक्र संस्थान में वैसे ही बाल-सूर्य की कल्पना एवं भावना करे । यह ध्यान किया जाय कि ईश्वरीय दिव्य प्रकाश की प्रेरणा पूर्ण किरणें जो अपने ऊपर बरस रही हैं उनसे सम्पूर्ण स्थूल एवं कारण शरीर जगमग हो गया । आज्ञाचक्र स्थित आत्म ज्योति जाग्रत हो गई है । वहाँ से एक्स-रेज जैसी प्रचण्ड किरणें निकल रही हैं जो वस्तुओं, व्यक्तियों को ही नहीं, विचारों भावनाओं शास्त्रों और सैद्धान्तिक प्रतिपादनों तक के मर्म-वेधन में समर्थ हैं । जो अन्तर्निहित दिव्य दृष्टि को प्रखर बना रही हैं । अपने भीतर के कषाय-कल्मष दोष दुर्गुण भी स्पष्ट दिख रहे हैं और उन्हें दूर करने, फेंक देने, समाप्त कर देने की प्रक्रिया भी सामने स्पष्ट है । साथ ही अपनी आन्तरिक उत्कृष्टताओं को उभारने का मार्ग ही पूर्णतः प्रकाशित हो उठा है ।

जितनी गहरी श्रद्धा के साथ अन्तःक्षेत्र को दिव्य बनाने वाली यह ज्योति-साधना की जायेगी आज्ञाचक्र के जागरण का उद्देश्य उतनी ही मात्रा में पूरा होता जायेगा ।

आज्ञाचक्र की यह साधना नियमित रूप में लम्बे समय तक करने पर साधक के भीतर की उत्कृष्टताएँ उभरती चली जाती हैं, और वह संजय की तरह दिव्यदर्शन की शक्ति भी प्राप्त कर लेता है । भूगर्भ में या सृष्टि के अन्तराल में छिपी दूरवर्ती वस्तुओं का ज्ञान आज्ञाचक्र से निकलने वाली अद्‌भुत सूक्ष्म किरणों द्वारा सहज ही हो जाता है । अविज्ञात के गर्भ में पक रही सम्भावनाएँ भी उसे दिख जाती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तृतीय नेत्रोन्मीलन दिव्य दृष्टि जागरण

प्रथम शक्ति संचार द्वितीय जप ध्यान तृतीय त्राटक अभ्यास का साधना क्रम बनाकर चलने से स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों के सुविकसित होने का-सर्वतोमुखी समर्थता प्राप्त होने का लाभ मिलता है । त्राटक रात्रि में सोने से पूर्व करना चाहिए । उसके लिए न्यूनतम पन्द्रह मिनट और अधिकतम आधा घण्टा समय लगाना चाहिए ।

इस साधना के लिए एकान्त अँधेरा कमरा चाहिए । ध्यान मुद्रा में बैठा जाय । सामने तीन फुट की दूरी पर चौकी बिछा कर उस पर दीपक रखना चाहिए । शुद्ध घी का दीपक अधिक उपयुक्त है । न मिलने पर नकली घी की अपेक्षा शुद्ध तिली का तेल दीपक में जलाना उत्तम है ।

आँख खोलकर दीपक की लौ को एक-एक मिनट देखें । इसके बाद आँखें बन्द करलें । भावना करें कि दोनों भृकुटियों के मध्य आज्ञाचक्र के स्थान पर दीपक की लौ जैसी ज्योति की प्रतिष्ठापना हो रही है । आँख खोल कर दीपक की लौ देखने फिर उसे खींचकर आज्ञाचक्र में जगमगाने का बार-बार अभ्यास पन्द्रह मिनट तक चलता रहना चाहिए । प्रायः पन्द्रह दिन में ऐसी स्थिति बन जाती है कि आज्ञाचक्र में प्रकाश बिन्दु का हल्का सा आभास मिलने लगे । इतना बन पड़ने पर आगे इसका नियमित क्रम चलाना चाहिए ।

स्थापना के उपरान्त ज्योति विस्तार का क्रम है । भावना करनी चाहिए कि इस दिव्य ज्योति का आलोक मस्तिष्क के ब्रह्माकाश में सुविस्तृत हो रहा है और उससे विभिन्न स्थानों पर अवस्थित अनेकानेक ज्ञान घटकों को प्रतिविम्बित होने का अवसर मिलता है । यह ज्ञान दीप समस्त मस्तिष्क गह्वर में चमकदार ग्रह नक्षत्रों की तरह अथवा दीपावली की दीपकों की तरह जगमगाते हैं । साधना का एक तिहाई समय इसी में लगे ।

आज्ञाचक्र ज्योति की द्वितीय अवतरण-हृदयाकाश में भावना करनी चाहिए कि आज्ञाचक्र वाली दीप शिखा हृदय पर आलोकित होती है । उसका प्रकाश समूचे हृदयाकाश में फैलता है । यह आलोक हृदय महासागर में उठने वाली भाव लहरों को प्रभावित करता है । उनको पुलकन, सिहरन, फुरकन जैसी हलचलें होती हैं । श्रद्धा सद्भावना की सरसता इस क्षेत्र में उमगती और दिव्य प्रेम के बाहुल्य का अमृतोपम रसास्वादन कराती है । समय का दूसरा तिहाई भाग इसी ध्यान में लगें ।

तीसरा है—प्राणाकाश । इसका स्थान है नाभिचक्र । सारा समीपवर्ती क्षेत्र इसी परिधि में आता है । मूलाधार चक्र एवं कुण्डलिनी केन्द्र तक नाभि चक्र का क्षेत्र विस्तार है ।

ब्रह्माकाश-हृदयाकाश में समय का एक-एक तिहाई भाग लगा चुकने के उपरान्त अन्तिम तिहाई समय प्राणाकाश में ज्योति दर्शन के निमित्त लगाना चाहिए ।

स्मरण करना चाहिए कि आज्ञाचक्र वाली ज्योति शिखा नाभि केन्द्र में प्रतिष्ठापित और प्रज्ज्वलित हो रही है । उसका प्रकाश कुण्डलिनी केन्द्र के शक्ति संस्थानों में फैल रहा है, पराक्रम उत्साह एवं साहस की त्रिविधि उमंगें इसी क्षेत्र से उद्भूत होती हैं । काय संचालन में काम आने वाली विद्युत ऊर्जा का केन्द्र संस्थान यही है ।

भावना करनी चाहिए कि इस क्षेत्र के समस्त शक्ति घटक ज्योति ऊर्जा की गर्मी पाकर कमलपुष्पों की तरह खिल उठते हैं दीपकों की तरह प्रकाशवान होते हैं । प्रसुप्ति हटती और जागृति बढ़ती है । समर्थता और प्रखरता के चिन्ह इस क्षेत्र के प्रत्येक घटक के दृष्टिगोचर होते हैं । समय का अन्तिम तिहाई भाग इसी धारणा में लगना चाहिए ।

त्राटक योग का समापन समस्त काय कलेवर को सन्निहित महत्त्वपूर्ण घटकों की दीपावली के प्रज्ज्वलित दीपकों की तरह—आकाश में जगमगाने वाले ग्रह नक्षत्रों की तरह चमकते अनुभव करना चाहिए ।

काय कलेवर ज्योति घटकों की जगमगाहट से परिपूर्ण । अन्ततः समस्त काय सत्ता का एक समूची दीप लौ की स्थिति मे परिणति । विसर्जन का अन्तिम भाग काय दीप का ब्रह्म दीप के समापन के रूप में होना चाहिए, ज्योति में ज्योति मिलने का अनुभव किया जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तरंग त्राटक की महान महत्ता

मस्तिष्क से लगी हुई दो आँखें वस्तुओं को देखने, पहचानने तथा पढ़ने, लिखने आदि के कामों में आती हैं । इनमें से एक न रहे तो दूसरी उसका काम चला देती है । इतना तो सभी जानते हैं पर यह रहस्य किसी-किसी को ही विदित है कि एक तीसरी आँख भी होती है जो उन तथ्यों को, दृश्यों को देखती है जिन्हें बाहर के चर्मचक्षु नहीं देख पाते । जो तीनों का सहारा लेते हैं वे दूरदर्शी या दिव्यदर्शी कहलाते हैं । प्रत्यक्ष आँखें मात्र सामने का ही, थोड़ी दूर तक का ही देख पातीं हैं । पीठ पीछे का या बहुत दूर तक का उनको नहीं दीखता । बुढ़ापे में नेत्र ज्योति घट जाती है । चश्में की जरुरत पड़ती है । मोतियाबिन्द आ घिरने पर आपरेशन कराना पड़ता है । इससे इनकी स्वल्प शक्ति होने का पता चलता है । वे तत्काल का जो सौन्दर्य, सम्मान आदि है, उसी को देखती हैं पर यह नहीं जान पातीं कि इनके नजदीक जाने का क्या परिणाम हो सकता है । आग और सर्प देखने में कितने चमकीले चिकने लगते हैं । उन्हें पकड़ने का अबोधों का मन करता है पर तीसरी विवेक की आँख भी है । वह अपने अनुभव या दूसरों के परामर्श से यह समझ पाती है कि इस लालच में नहीं पड़ना चाहिए, अन्यथा परिणाम बहुत भयंकर हो सकता है । असली हीरे की तुलना में नकली हीरा और भी अधिक चमकदार होता है । दोनों में से कौन कितने मूल्य का हो सकता है, उसे जिस विशेष ज्ञान के आधार पर जाना जाता है उसे तृतीय नेत्र कह सकते हैं ।

दूरगामी परिणामों का विचार न कर पाने के कारण ही लोग तात्कालिक लाभ को देखकर अन्धे हो जाते हैं और जब उनके दुष्परिणाम सामने आते हैं तब पछताते हैं । इसी प्रकार तात्कालिक हानि देखकर लोग विद्या पढ़ने, खेत बोने, व्यवसाय करने आदि से हाथ खींच लेते हैं और तब पछताते हैं जब उन्हीं कार्यों के लिए साहस करने वाले लाभ उठाते और भण्डार भरते हैं ।

यह तीसरी आँख मिली तो सबको है पर है गुप्त । इसे प्रयत्नपूर्वक जगाना पड़ता है । मस्तिष्क का दूरदर्शी या सूक्ष्मदर्शी होना इसी प्रयत्नशीलता पर निर्भर है । दूर तक देखने के लिए टेलीस्कोप की आवश्यकता पड़ती है । जीवाणु जैसी बारीक वस्तुएँ देखने के लिए माइक्रोस्कोप जैसे यंत्रों की आवश्यकता पड़ती है । यह दोनों ही हमारे पास विद्यमान हैं पर काम न लिए जाने पर मैली-कुचैली होकर ठीक काम देने योग्य नहीं रहतीं । तीसरे नेत्र के सम्बन्ध में भी यही कहा जा सकता है । शिव और शक्ति के चित्रों में तीन नेत्र होते हैं । इनमें शाप वरदान देने की शक्ति बताई जाती है । ऐसा तो कोई तपस्वी या आध्यात्मिक सम्पदा के धनी ही कर सकते हैं, पर इस दूरदर्शन का लाभ कोई साधारण स्थिति का व्यक्ति भी कर सकता है । अपने को बरबादी से बचा सकता है और वह लाभ उठा सकता है जिसे मन्दमति नहीं उठा पाते ।

जो कार्य आज इन दिनों किया जा रहा है उसका अगले दिनों क्या परिणाम होगा ? यदि निष्कर्ष ठीक तरह निकाला जा सके तो कोई भी व्यक्ति दुष्कर्मों में हाथ न डाले और ऐसी रीति-नीति अपनाये जिसके सहारे उज्ज्वल भविष्य का बनना सुनिश्चित है । लोग तात्कालिक स्वाद, सौन्दर्य या लाभ भर को देखते हैं और मछली, चिड़ियों की तरह जाल में जा फँसते हैं । चासनी पर टूट पड़ने वाली मक्खी की तरह पर फँसा कर बे-मौत मरते हैं । इन्हें अदूरदर्शी ही कहा जा सकता है । जो इस जाल-जंजाल से भरे संसार में फूँक-फूँक कर कदम नहीं रखते हैं वे इसी प्रकार फँसते हैं और बहुमूल्य जीवन सम्पदा को बाजी में हार जाते हैं ।

आध्यात्म प्रकरणों में त्राटक प्रयोगों की चर्चा है । उसके प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य, दीपक या किसी चमकदार निशान पर मेस्मेरिज्म स्तर के अभ्यास करते हैं और आँखों की बेधक दृष्टि बढ़ाते हैं । चमकदार दृश्य को लगातार देखने और उसके साथ इच्छाशक्ति का समावेश करने से वह क्षमता प्राप्त हो जाती है कि किसी भी मनस्वी को योग निद्रा में सुला सके । उसके मस्तिष्क पर अधिकार कर सके । यह एक प्रकार का जादू चमत्कार है जिसके सहारे अपनी विशेषता सिद्ध की जा सकती है ।

सामान्य लोग इसी स्तर के प्रयोग करते रहते हैं । किन्तु जिन्हें आध्यात्मवाद में आस्था है, वे बाह्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

त्राटक का प्रयोग अति आरम्भिक अवस्था में करते हैं । दीपक आदि का सहारा वे कुछ समय लेकर यह क्षमता प्राप्त कर लेते हैं कि बहिरंग दृष्यों को अन्तरंग क्षेत्र में दिव्य दृष्टि से देख सकें ।

इसके अभ्यास में यह करना होता है कि कोई खिला फूल आँख भरके देखा जाय और फिर ठीक वैसी ही कल्पना आँख बन्द करके की जाय । बाद में आँखें खोल कर यह देखा जाय कि प्रत्यक्ष और कल्पना में कितना अन्तर रहा है । किसी बेलबूटे खिलौने आदि के सहारे भी यह अभ्यास किया जा सकता है कि बहिरंग दृष्यों का यथावत् स्वरूप कल्पना चित्र के रूप में सही प्रकार जमा या नहीं । आरंभ में इसमें कुछ अन्तर रहता है पर थोड़े ही दिनों में ऐसी स्थिति बन जाती है कि बाह्य वस्तुओं और घटनाओं का यथार्थ स्वरूप मात्र कल्पना के आधार पर जाना जा सके । कितने ही अन्धे लोगों में आंशिक रूप से यह शक्ति विकसित हो जाती है और वे उस अदृश्य दृष्टि के सहारे दिन भर अपना काम बिना भूल-चूक किए करते हैं । अन्धों की लिपि आरम्भ में कठिन लगती है पर वे पीछे इसके इतनी अच्छी तरह अभ्यस्त हो जाते हैं कि उस लिपि में लिखी हुई किसी भी भाषा की पुस्तकें धड़ल्ले से पढ़ सकें ।

यह तृतीय नेत्र की शक्ति है । इसे सांसारिक प्रयोजनों में भी प्रयुक्त किया जा सकता है और आध्यात्मिक प्रयोजनों में भी । समझना चाहिए कि हम कार्यों का दूरगामी परिणाम समझ सकने में एक प्रकार से अन्धे से समतुल्य हैं । न हम जीवन का स्वरूप समझ पाते हैं, न लक्ष्य, न दायित्व । इसलिए अन्धेरे में टकराते रहते हैं और सुर दुर्लभ मनुष्य जीवन को जो साँसें मिली हैं उनको ऐसे निरर्थक कामों में खर्च कर डालते हैं जो आकर्षक तो हैं किन्तु उनकी परिणति में निरर्थकता या दुर्दशा ही हाथ लगती है । यदि तीसरे नेत्र ने, विवेक बुद्धि ने, साथ दिया होता तो हस्तगत अवसर को किस प्रकार उपयोग में लाया जाय इसकी उच्चकोटि की योजना बन सकी होती और परिस्थितियाँ सामान्य या गई गुजरी होते हुए भी उच्च लक्ष्य का अवलम्बन किए रहने पर कहीं से कहीं पहुँचे होते । कुछ से कुछ बन गए होते ।

अन्तरंग त्राटक योग में अपनी गरिमा, अपनी क्षमता को समझना होता है और भावी जीवन को किन प्रयोजनों में प्रयुक्त करें, इसके कई कल्पना चित्र बनाते हुए यह देखना पड़ता है कि किन में क्या-क्या जोखिम और क्या-क्या सुयोग है ? आन्तरिक सूझ-बूझ यदि सही हो तो सर्वोत्तम का ही चुनाव करती है और उसी मार्ग पर चलते हुए सफलता तक पहुँचने का योजनाबद्ध कार्यक्रम बनाती है । यही है आन्तरिक त्राटक की महत्ता और सराहनीय सफलता ।

अंतःत्राटक से आत्म-ज्योति की साधना

बाह्य एवं प्रत्यक्ष त्राटक के लिए दीपक, मोमबत्ती, बल्ब आदि का आवश्यकता पड़ती है । पाश्चात्य वेधक दृष्टि के साधक कागज पर काला गोला बना कर उसके मध्य बिन्दु पर ध्यान करते हुए प्रक्रिया को पूर्ण करते हैं । अन्तःत्राटक में इन उपकरणों की आवश्यकता नहीं पड़ती । उसमें प्रकाश ज्योति का मानसिक एवं भावनात्मक ध्यान करने से ही काम चल जाता है ।

प्रातःकालीन उदीयमान सूर्य जब तक स्वर्णिम रहे तब कुछ-कुछ सेकण्ड के लिए उसका प्रत्यक्ष आँखों से दर्शन और फिर नेत्र बन्द करके उसका ध्यान करने से अन्तःत्राटक की आधार भूमिका बन जाती है । यही कार्य पूर्णिमा का पूर्णचन्द्र देखने और आँखें बन्द करने से भी हो सकता है । अन्य तारकों की ओर ध्यान न जाय और शुक्र, गुरु, जैसे किसी अधिक प्रकाशवान तारे को भी इस प्रयोजन के लिए प्रयुक्त किया जा सकता है । मोमबत्ती, दीपक, बल्ब आदि का प्रयोग जब तक होता रहेगा तब तक उसे बाह्य त्राटक ही कहा जाता रहेगा जब उपकरणों की आवश्यकता नहीं रहती और मात्र ध्यान से ही प्रकाश की अनुभूति होने लगती है तो उसे अन्तःत्राटक कहा जाने लगता है ।

अन्तःत्राटक आरम्भ करते हुए कुछ समय प्रकाश की स्थापना वहीं रहने देनी चाहिए जहाँ उसे देखा गया था । प्रभातकालीन स्वर्णिम सूर्य सुदूर पूर्व में उगते हुए जहाँ देखा गया था आरम्भिक दिनों में उसे वहीं सूक्ष्म दृष्टि से देखना चाहिए और भावना करनी चाहिए कि उस प्रकाश पुंज की ज्योति किरणें अन्तरिक्ष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में होकर उतरती हैं और अपनी उत्कृष्टता को स्थूल शरीर में बल, सूक्ष्म शरीर में ज्ञान एवं कारण शरीर में भाव बन कर प्रवेश करती हैं । शरीर संयमी, सक्रिय, स्वच्छ बनता है । मन में उसी प्रकार की किरणें सन्तुलन, विवेक, शालीनता, सद्ज्ञान, बन कर बरसती हैं । कारण शरीर में, अन्तःकरण में सद्भावना, सम्वेदना, श्रद्धा भक्ति के रूप में उन प्रकाश किरणों का अवतरण होता है और समूचा व्यक्तित्व दिव्य प्रकाश से, ब्रह्म ज्योति से जगमगाने लगता है ।

अन्तःत्राटक का यह प्रथम चरण है । बाहर से भीतर की ओर ज्योति का प्रवेश करने की प्रक्रिया प्रथम भूमिका कहलाती हैं । क्रमिक विकास में इसी की सुविधा रहती है । यह स्थिति अधिक परिपक्व, परिपुष्ट हो चलने पर प्रकाश की स्थापना भीतर की जाती है और उस आत्म-ज्योति की आग भीतर से निकल कर बाहर की ओर प्रकाशवान होती है । बल्ब का फिलामेन्ट भीतर तो ज्योतिर्मय होता ही है—अपनी आभा से सम्पर्क क्षेत्र को भी प्रकाशवान बना देता है । अन्तःज्योति के प्रकटीकरण में भी ऐसी ही स्थिति बनती है । अन्तःत्राटक का साधक आत्म-सत्ता को प्रकाश से परिपूर्ण तो देखता ही है-साथ ही अपने प्रभाव क्षेत्र में भी आलोक बिखेरता है ।

अन्तःत्राटक के लिएं ध्यान मुद्रा में बैठना पड़ता है । अधखुले नेत्र, दोनों हाथों की उँगलियाँ मिली हुई, हथेलियाँ ऊपर की ओर करके उन्हें गोदी में रखना—यही है ध्यान मुद्रा—भगवान बुद्ध के चित्रों में प्रायः यही स्थिति चित्रित की जाती है । इस स्थिति में स्थित होकर भ्रूमध्य भाग में अवस्थित प्रकाश पुंज की धारणा और अधिक प्रगाढ़ की जाती है । बिजली के बल्ब का मध्यवर्ती तार—फिलामेन्ट—जिस प्रकार चमकता है और उसकी रोशनी बल्ब के भीतरी भाग में भरी हुई गैस में प्रतिबिम्बित होती है । इससे बल्ब का पूरा गोला चमकने लगता है और उसका प्रकाश बाहर भी फैलता है । ठीक ऐसी ही भावना बिन्दुयोग में करनी होती है ।

भ्रूमध्य भाग में आज्ञाचक्र अवस्थित है । इसी को दिव्य नेत्र या तृतीय नेत्र कहते हैं । शंकर एवं दुर्गा के चित्रों में इसी स्थान पर तीसरा नेत्र दिखाया जाता है । पुराण कथा के अनुसार इसी नेत्र को खोलकर भगवान शिव ने अग्नि तेजस् उत्पन्न किया था और उससे विघ्नकारी मनोविकारी कामदेव को जलाकर भस्म किया था । यह नेत्र हर मनुष्य में मौजूद है । शरीर शास्त्र के अनुसार इसे पिट्यूटरी ग्रन्थि कहते हैं । इसमें नेत्र जैसी सूक्ष्म संरचना मौजूद है । सूक्ष्म शरीर के विश्लेषण में यह केन्द्र विशुद्ध रूप में दिव्य नेत्र है और उससे प्रकट-अप्रकट, दृश्य-अदृश्य, भूत- भविष्य सभी कुछ देखा जाना जा सकता है ऐक्स-रेज द्वारा शरीर के भीतर की टूट-फूट अथवा किसी बन्द बक्से के भीतर रखे आभूषण का चित्र खींचा जा सकता है । इस दिव्य नेत्र को भी एक्सरेज यन्त्र से तुलना की जा सकती है—यदि वह प्रदीप्त हो उठे तो घर बैठे महाभारत के दृश्य टेलीविजन की भाँति देखने वाले संजय जैसी दिव्य दृष्टि प्राप्त की जा सकती है और वह सब देखा जा सकता है जिसका अस्तित्व तो है, पर चमड़े से बने नेत्र उसे देख सकने में समर्थ नहीं हैं ।

इस नेत्र में अदृश्य देखने की ही नहीं ऐसी प्रचण्ड अग्नि उत्पन्न करने की भी शक्ति है जिसके आधार पर अवांछनीयता को अवरोधों को जलाकर भस्म किया जा सके । शंकर जी ने इसीं नेत्र को खोला था तो प्रचण्ड शिखाएँ उद्भूत हो उठी थीं । विघ्नकारी कामदेव उसी में जल-भुन कर भस्म हो गया था । बिन्दुयोग की साधना को, यदि इस तृतीय नेत्र को ठीक तरह ज्योतिर्मय किया जा सके तो उसमें उत्पन्न होने वाली अग्नि शिखा मनोविकारों को—अवरोधों को जलाकर भस्म कर सकती है । उसकी शक्ति व्याख्या है । यदि दार्शनिक व्याख्या करनी हो तो उसे विवेकशीलता एवं दूरदर्शिता का जागरण भी कह सकते हैं । जिसके आधार पर लोभ, मोह, वासना, तृष्णा, अहंता जैसे मनोविकारों के कारण उत्पन्न हुए अगणित शोक, सन्तापों और निग्रह उपद्रवों को सहज ही शमन या सहन किया जा सकता है ।

अतःत्राटक के अन्तर्गत भ्रूमध्य में दीप्त ज्योति का ध्यान करते हुए यह धारणा करनी पड़ती है । प्रत्येक जीवाणु में—कण-कण और रोम-रोम में- प्रकाश आलोक की आभा प्रदीप्त होती है । अन्धकार किसी भी कोने में छिपा नहीं रहा उसे पूर्णतया बहिष्कृत कर दिया गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रत्येक कोशिका एवं तन्तु को आलोकित देखा जाता है । मस्तिष्क के चार परत माने गए हैं—मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार । इन चारों को प्रकाश पुंज बना हुआ अनुभव किया जाता है । अपनी सत्ता के प्रत्येक पक्ष को भ्रूमध्य केन्द्र से निकलने वाले प्रकाश प्रवाह से आलोकित अनुभव करना लगभग उसी स्तर का है जैसा कि प्रभातकालीन सूर्य निकलने पर अन्धकार का हर दिशा से पलायन होने लगता है और समस्त संसार आलस्य अवसाद, छोड़ कर आलोक, स्फूर्ति एवं सक्रिय उमंगों के साथ कार्यरत हो जाता है । बिन्दुयोग की साधना जीवन सत्ता के कण-कण में प्रकाश उद्भव की अनुभूति तो कराती ही है साथ ही उन अभिनव स्तर की हलचलें भी उभरती दृष्टिगोचर होती हैं ।

आध्यात्म की भाषा में प्रकाश शब्द का उपयोग मात्र चमक के अर्थ में प्रयुक्त नहीं होता, वरन् उसका अभिप्राय 'ज्ञान युक्त क्रिया' में सम्मिश्रित उल्लास भरी भाव तरंगों में होता है । पचभौतिक जगत में गर्मी और रोशनी के सम्मिश्रण को प्रकाश कह सकते हैं । किन्तु आध्यात्म क्षेत्र में गर्मी का अर्थ सक्रियता और प्रकाश का अर्थ दूरदर्शी उच्चस्तरीय ज्ञान ही कहा जाता है । प्रकाश की प्राप्ति की चर्चा जहाँ कहीं भी होगी वहाँ रोशनी चमकने जैसे दृश्य खुली या बन्द आँखों से दीखना भर नहीं हो सकता वहाँ उसका अभिप्राय गहरा ही रहता है । आत्मोत्कर्ष की भूमिका स्पष्टतः विवेक युक्त सक्रियता अपनाने पर ही निर्भर है—भौतिक गर्मी या रोशनी से वह महान प्रयोजन कैसे पूरा हो सकता है ?

अन्तःत्राटक को ही बिन्दु योग भी कहते हैं । उसमें प्रकाश दर्शन के साथ-साथ यही धारणा करनी पड़ती है कि प्रकाश रूप परमात्मा का आलोक अंग-प्रत्यंग के कण-कण में—अन्तःकरण के प्रत्येक कक्ष परत में प्रकाशवान होता है । दिव्य चेतना की किरणें काय कलेवर की प्रत्येक लहर पर प्रतिबिम्बित हो रही हैं । विवेक की आभा फूटी पड़ रही है—सतोगुण झिलमिला रहा है—सत्साहस प्रखर प्रचण्ड बन कर सक्रियता की ओर अग्रसर हो रहा है । अज्ञान के आवरण तिरोहित हो रहे हैं । भ्रमाने वाले और डराने वाले दुर्भाव, संकीर्ण विचार अपनी काली चादर समेट कर चलते बने, प्रकाश भरे श्रेय पथ पर चल पड़ने वाले का शौर्य सबल हो उठा, अशुभ चिन्तन के दुर्दिन चले गए हैं । सर्वत्र आनन्द और उल्लास ही आलोकित हो रहा है । ईश्वरीय प्रकाश शरीर में सत्प्रवृत्ति और मन की सद्भावना बन कर ज्योतिर्मय हो चला । अन्धेरे में भटकने वाली काली निशा का अन्त हो गया, भगवान की दिव्य ज्योति ने सर्वत्र अपना आधिपत्य जमा लिया है ।

अन्तःत्राटक की उच्च भूमिका में सूर्य, चन्द्र, दीपक, बल्ब आदि के प्रकाश को बार्हिक्षेत्र से हटाकर अन्तरंग में स्थापित किया जाता है इसके लिए भ्रूमध्य भाग का आज्ञाचक्र मुख्य माना गया है । इसके उपरान्त इसी ज्योति की स्थापना हृदयचक्र में ले जाई जाती है । आज्ञाचक्र मनोमय कोश से और हृदयचक्र विशुद्धिचक्र से सम्बन्धित है । अस्तु साधना के क्रमिक मार्ग पर चलते हुए प्रथम आज्ञाचक्र के पश्चात हृदयचक्र को त्राटक साधना के अनुसार प्रकाशवान बनाया जाता है ।

हृदयचक्र को अन्तरात्मा का स्थान माना गया है और वही ईश्वर मिलन एवं आत्म साक्षात्कार का लाभ मिलने की बात कही गई है । गीता का वचन है—"ईश्वरः सर्वभूतानां हृदेशेऽर्जुन तिष्ठति ।" यहाँ हृदय स्थान में ही ईश्वर का निवास कहा गया है । इसकी ध्यान प्रक्रिया "हृत्पुण्डरीक मध्यस्थां प्रातः सूर्य समप्रभाम्" हृदय कमल पर प्रातःकालीन सूर्य के समान परब्रह्म का दिव्य दर्शन करने के रूप में बताई गई है ।

हृदयचक्र को हृत् पद्म भी कहा गया है । "हृत पद्मकोशे विलसत तडित् प्रभम्" वर्णन में उसने विद्युत प्रवाह युक्त कमल की संज्ञा दी गई है । इसाई धर्म के साधन विज्ञान में इस संस्थान को 'माइस्ट्रिक रोज'—रहस्यमय गुलाब-कहा गया है । यही चैनिक स्वर्ण कमल-आईचिन है ।

मृद्येष आत्मा ।

—प्र. उ. ६

यह आत्मा हृदय में अवस्थित है ।

कतम आत्मेति ? योऽयं विज्ञानमयः प्राणेषु हृद्यन्तेर्ज्योतिः पुरुषः ।

—बृहदारण्यक

आत्मा कौन है ? वह जो विज्ञान ज्योति बनकर हृदय में निवास करता है ।

कुण्डिलिनी योग साधना के अन्तर्गत हृदयचक्र में प्रज्वलित अग्नि ज्योति को उसी महाशक्ति का स्वरूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माना गया है । हृदयचक्र में ज्योति रूप बन कर कुण्डलिनी ही प्रतिभाषित होती है ।

चन्द्राग्निरविसंयुक्तो आद्या कुण्डलिनी माता ।
हृत्प्रदेशे तु सा ज्ञया अंकुराकारसंस्थिता ॥

—अग्नि पुराण

चन्द्र और सूर्य की शक्ति से भरी हुई प्रकाशवान कुण्डलिनी शक्ति हृदय प्रदेश में रहती है । उनकी ज्योति अंकुर के आकार की है ।

योग कालेन न मरुता साग्निना वांधिता सती ।
स्फुरता हृदयाकाशे नागरुपा महोज्ज्वला ॥

—त्रिशिख ब्राह्मणोपनिषद्

योगाभ्यास द्वारा कुण्डलिनी शक्ति पवन द्वारा जाग्रत अग्नि के समान हृदयाकाश में नाग रूप से अत्यन्त उज्ज्वल स्फुरित होती है ।

त्राटक की रीति और लाभ

विशाल विश्व की विलक्षण वाटिका में बढ़िया फूल भी हैं और नुकीले कांटे भी । मनुष्य को कर्म की पूरी स्वतन्त्रता है, वह सुमनों का हार गूँथे या कांटों से शरीर बिंधवाये । सुमन की शौकीनी में कांटों का चुभ जाना स्वाभाविक है । इससे यदि डरकर, चीखकर भाग निकला तो उसके भाग्य में सुगंधि का रसास्वादन है ही नहीं । संसार में करने, बढ़ने और डटने वालों को ही कुछ मिलता है । आप में परमात्मा का अंश, आत्मा मौजूद है । चाहे आप उसे प्रभाकर की तरह प्रकाशित करें या मृतिका पिण्ड की भांति निस्तेज !

योग का विधान आपके सामने है । आप प्राचीन ऋषियों की इस पूँजी से लाभ उठायें, जिसे जीवन में उतार कर आज पश्चिम सम्पन्न बन रहा है ।

योग शास्त्रांतर्गत छः (६) प्रकार के कर्म हैं । जिसका नाम नेति, धोति, नौलि, बस्ति, त्राटक और कपालभाति, कुंजल क्रिया आदि कर्म हैं । वह पटकर्म के अन्तर्गत है । स्थूल शरीर में रोगोत्पादन करने वाला मल है । वात, पित्त और कफ की अधिकता और विकार ही रोगों का कारण है और उसके साथ सप्त धातुओं का विकार भी । स्थूल और सूक्ष्म ऐसे दो प्रकार के मल हैं । छोटी आँत, बड़ी आँत, अन्नाशयकोष, किडनी आदि अवयवों में स्थूल मन उत्पन्न होता है और ज्ञानेन्द्रिय के साथ सम्पर्क रखने वाली रक्त वाहिनी नाड़ियों तथा सारे शरीर में रहने वाली वायु वाहिनी नाड़ियों, स्वादुग्रन्थियों, इरस ग्रन्थियों में सूक्ष्म मन उत्पन्न होता है । त्राटक कर्म और कपाल भाति कर्म, वे सूक्ष्म मल को नाश करते हैं ।

त्राटक की बनावट

एक फुट चौरस कागज का गत्ता (कार्ड बोर्ड) लीजिए और उस पर सफेद कागज चिपका दीजिए । उसके बीच में आधा इंच गोल काला निशान कर दीजिए और उसके इर्द-गिर्द चारों किरणों के समान रेखायें खींच लो । बनाने में नहीं समझो तो किसी योगाश्रम से त्राटक चार्ट खरीद लो । उसकी कीमत चार आना है । कम से कम ५ वर्ष तक चार्ट को उपयोग में ला सकते हो ।

त्राटक चार्ट ठीक आँख के सामने (अधिक ऊँचा व नीचा न हो) दीवाल पर टांग दो और उससे तीन फीट दूर पद्मासन व स्वस्तिकासन लगाकर बैठ जाइये । इस काले निशान की तरफ देखना आरम्भ (शुरू) करो । प्रथम दिन एक मिनट तक बिना आँख बन्द किए एकटक देखते रहो । दूसरे दिन डेढ़ मिनट, तीसरे दिन दो मिनट तक । इस क्रम से आधा मिनट का अभ्यास नित्य बढ़ाते जाइये । जब चार मिनट तक बैठने लगें तब चार मिनट आँखें बन्द कर बैठ जाइये । जो कि कदाचित तीन मिनट के ही अभ्यास से त्राटक चार्ट के मध्य काले निशान और किरणें प्रकाशित हो जायेंगी यानी काली नहीं दीखेगी । उसके बाद आँख बन्द कर लेने पर दोनों भौंओं (Eye-brow) के बीच में दृष्टि स्थिर करो । जो प्रकाश त्राटक चार्ट में दीखता, वही अन्दर भी दीखेगा (दिव्य-चक्षु में) ।

अब यह प्रकाश त्राटक चार्ट तो नहीं है, यह तो तुम्हारा है । कारण त्राटक चार्ट जड़ है इसमें त्राटक कहाँ से आ सकता है । अब इसी प्रकार अभ्यास आगे बढ़ाते जाइये और तेरह दिन तक बिना नागा लगातार करने रहते के पश्चात दूसरा कोर्स आरम्भ (शुरु) होगा ।

बैठते समय सिर तक सारा शरीर दीख पड़े, ऐसा शीशा चहिए । उसे अपने सामने रखकर बैठ जाओ और अपनी दोनों भौंहों के मध्य (आज्ञाचक्र) में आधा इंच का गोल काला निशान करो और कांच का प्रतिबिम्ब में देखना शूरू करो । पहले दिन दो मिनट देखो और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी तरह प्रतिदिन १ मिनट बढ़ाते आओ । आधे घण्टे तक बराबर बढ़ाते रहो ।

जब तक कर्म चालू हो भारी भोजन मत खाओ । त्राटक करते समय आँखों को तानो या अधिक फाड़ो नहीं, मध्य स्थिति में रखो । जैसे किसी मनुष्य की तरफ देखते हो । हमेशा एक ही आसन से बैठो । कर्म करते समय आसन बदला-बदली नहीं करना चाहिए और विचार पवित्र रहना चाहिए । एक चित्त से अपने उपासना देव या ॐ का मन में उचारण करते रहना चाहिए । यदि तन्दुरुस्ती चाहते हो तो वही इच्छा करनी चाहिए । इसके सिवाय दूसरे विचार नहीं आने पाये । उसका ध्यान रखना चाहिए । त्राटक कर्म के पश्चात ठण्डे जल से आँखे धो डालिए ।

लाभ

आधा घण्टा अभ्यास हो जाने पर त्राटक सिद्ध होता है । इससे चित्त प्रसन्न रहता है । अन्तर आलोकित होता है । मन स्थिर रहता है । मस्तिष्क शान्त रहता है । स्वास्थ्य और सौन्दर्य में वृद्धि होती है । निद्रा अच्छी आती है । आँखों की ज्योति बढ़ती है । कमजोर निगाह वालों को त्राटक हरे पानादि के पत्ते पर करना अधिक लाभप्रद है । शरीर में सात्त्विक गुण बढ़ता है । रजो गुण और तमो गुण सामान्य रूप से रहता है । चश्मा का उपयोग करने वाले अवश्यमेव त्राटक कर्म करें । हिप्नोटिज्म, मेस्मेरिज्म आदि विद्या सीखने वाले को प्रथम त्राटक कर्म में पारंगत होना पड़ता है । स्मरण शक्ति बहुत बढ़ती है । अर्थात् हाईस्कूल, कॉलेज में पढ़ने वाले विद्यार्थी एवं विद्यार्थियों को त्राटक कर्म सीखना अत्यन्त लाभप्रद है । त्राटक कर्म के लाभ से परीक्षा में अवश्यमेव उत्तीर्ण होते हैं । १० वर्ष उम्र से १०० वर्ष उम्र तक के स्त्री, पुरुष, रोगी, निरोगी एवं सर्व स्त्री पुरुष त्राटक कर्म को कर सकते हैं । त्राटक करने का उत्तम समय प्रातःकाल सूर्य उदय होने के पश्चात ६ बजे तक ।

इस तरह तृतीय नेत्र का जागरण एक बहुत बड़ी उपलब्धि है । त्राटक की मोटी रीति-नीति यही है कि आँखें खोलकर किसी वस्तु को देखा जाय । इसके बाद नेत्र बन्द करके उसका कल्पना चित्र मस्तिष्क में अंकित किया जाय । जब तक वह चित्र धुँधला न पड़े, स्मृति झीनी न पड़े तब तक आँखे बन्द रखी जायें और फिर आँख खोलकर उसी वस्तु को एकाग्रतापूर्वक देखने के उपरान्त पहले की तरह फिर आँखें बन्द कर ली जायें । इसी प्रकार देखने, स्मृति के आधार पर आँखें मूंद कर ध्यान करने और कल्पना धुँधली पड़ने पर फिर उसे आँख खोलकर देखने लगने की क्रिया बार-बार दुहरानी चाहिए ।

प्रचलन इस क्रिया को दीपक के माध्यम से करने का है । कंधे की सीध-तीन फुट की दूरी पर दीपक को या मोमबत्ती को जलाकर रखा जाय और उसी के आधार पर उपरोक्त अभ्यास को बार-बार करने का क्रम चलाया जाय । तीस सेकण्ड देखना और एक मिनट ध्यान करना । इस प्रकार एक-तीन के अनुपात से यह क्रिया चलानी चाहिए । कई लोग इसी प्रक्रिया को प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य पर या उदयीमान चन्द्रमा पर दुहराते हैं । कारण कि प्रकाशवान वस्तुओं के सहारे दिव्य दृष्टि जगाने के कार्य में सरलता पड़ती है ।

मेस्मेरिज्म के अभ्यासी एक काला गोला बनाते हैं और उसके बीचो-बीच एक सफेद निशान छोड़ देते हैं । काले रंग के बीच सफेद रंग स्पष्ट चमकता है और उस आधार पर भी त्राटक हो सकता है पर इसमें खुले नेत्रों से अधिक देर देखना पड़ता है । तब कहीं स्मृति प्रतिमा का ध्यान अच्छी तरह जम पाता है ।

प्रकाश को लगातार बहुत देर तक नहीं देखा जा सकता । इससे आँखों पर दबाव पड़ता है किन्तु साथ ही यह लाभ भी है कि प्रकाश की स्मृति बहुत देर तक बनी रहती है जबकि सामान्य वस्तुओं को आधे समय देखना और आधे समय ध्यान करने का क्रम चलाना पड़ता है । यह ध्यान गुलाब के फूल पर भी हो सकता है । क्योंकि उसका रंग गहरा और एक ही रंग का होता है ।

जिन्हें आत्मोकर्ष के लिए इस साधना की सिद्धि करनी है उन्हें लम्बे समय तक इस प्रयोग का अभ्यास करना चाहिए और जब प्रयोग करने, परिणाम देखने की इच्छा हो तो यह देखभाल कर लेना चाहिए कि शक्ति संचय का उपयोग सत्प्रयोजनों के लिए हो रहा है या नहीं ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ज्योति साधना की सिद्धिमय फलश्रुतियाँ

अद्यात्म विज्ञान में स्थान-स्थान पर जिस "कला साधना" की चर्चा की गई है, वह और कुछ नहीं, वरन् वह परम ज्योति है, जो इस विश्व में चेतना का आलोक बन कर जगमगा रही है । गायत्री का उपास्य सविता देवता इसी परम तेज को कहते हैं । इसका अस्तित्व ऋतम्भरा प्रज्ञा के रूप में प्रत्यक्ष और कण-कण में संव्याप्त जीवन ज्योति के रूप में प्रत्येक व्यक्ति अपने भीतर देख सकता है । इस 'कला' अथवा 'ज्योति' को जितनी मात्रा जिसके भीतर विद्यमान हो, समझना चाहिए कि उसमें उतना ही अधिक ईश्वरीय अंश आलोकित हो रहा है ।

कलाएँ दो प्रकर की होती हैं—(१) आप्ति और (२) व्याप्ति । आप्ति किरणें वे हैं, जो प्रकृति के अणुओं से प्रस्फुटित होती हैं । व्याप्ति उनको कहा गया है, जो पुरुष के अन्तराल से आविर्भूत होती हैं । इन्हें 'तेजस्' भी कहते हैं । भौतिक जगत के समस्त पदार्थ पंच तत्वों से बने हैं, इसलिए उनके परणाणुओं से निकलने वाली किरणें अपने प्रधान तत्व की विशेषता भी साथ लिए होती हैं । वह विशेषता रंग द्वारा पहचानी जाती है । किसी वस्तु का प्राकृतिक रंग देखकर यह बताया जा सकता है कि इन पंचतत्वों में कौन-सा तत्व किस मात्रा में विद्यमान है ।

यह शरीर भी पंचभौतिक है । काया में जिस तत्व की प्रधानता होती है, उसी का वर्ण व्याप्ति किरणें, ग्रहण कर लेती हैं । इसीलिए साधना ग्रन्थों में यत्र-तत्र पंचतत्वों को नियन्त्रित कर व्याप्ति को व्यवस्थित करने का विधान समझाया गया है । जो इसे जिस अनुपात में सम्पन्न कर लेता है, उतने ही अंशों में व्याप्ति पर उसका नियमन हो जाता है ।

इस 'व्याप्ति' कला उद्गम मस्तिष्क मध्य वह स्थान है, जिसे 'त्रिकुटी' कहा गया है । यहाँ से प्रकाश कणों का एक फब्बारा फूटता रहता है । उसकी उछलती हुई तरंगें एक वृत्त बनाती हैं और फिर मूल स्रोत में लौट आती हैं । यह रेडियो प्रसारण और संग्रहण जैसी प्रक्रिया है । ब्रह्मरन्ध्र से छूटने वाली ऊर्जा अपने भीतर छिपी हुई भावस्थिति को विश्व-ब्रह्माण्ड में विद्युत चुम्बकीय तरंगों द्वारा प्रवाहित करती रहती हैं । इस प्रकार मनुष्य अपनी चेतना का परिचय और प्रभाव समस्त संसार में फेंकता रहता है । फुहारे की लौटती हुई धाराएँ अपने साथ विश्वव्यापी असीम ज्ञान की नवीनतम घटनात्मक तथा भावनात्मक जानकारियाँ लेकर लौटती हैं । यदि इन्हें ठीक तरह समझा जा सके, ग्रहण किया जा सके, तो कोई भी व्यक्ति भूतकालीन और वर्त्तमान काल की अत्यन्त सुविस्तृत और महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त कर सकता है । कला-साधना का वास्तविक उद्देश्य शरीर के भीतर स्थित विभिन्न कला-केन्द्रों को परिमार्जित, परिष्कृत कर ब्रह्माण्डव्यापी उन हलचलों और सूक्ष्म जानकारियों को अर्जित करना है, जो परमज्योति की लौटती धारा द्वारा उसके मूल उद्गम् में संग्रहीत होती रहती हैं ।

प्रख्यात विज्ञानी डॉ. जे. सी. ट्रस्ट अपनी पुस्तक "दि लाइट विदिन दि सोल" में लिखते हैं कि जिस सूक्ष्म तत्व के एकपक्षीय अध्ययन के आधार पर विज्ञान ने उसे विद्युत कहकर अभिहित किया है, वास्तव में वह और कुछ नहीं वरन् वह प्रकाश है, जिसे आध्यात्म दिव्य ज्योति कहकर पुकारता है । शरीर की भौतिक भूमिका में यही ज्योति देह संचालन जितनी स्थूल क्रिया का सम्पादन अपने वैद्युतिक गुण द्वारा करती है, जबकि उच्च आध्यात्मिक आयाम में यह 'आत्म ज्योति' बनकर परमात्म तत्व की उपलब्धि कराती है । विज्ञान ने इस उच्चस्तरीय तत्व के जिन दो पहलुओं को अभी तक समझा है, वह चुम्बक और बिजली के रूप में शरीर-व्यापार में संलग्न रहते हैं । जिस दिन वह इसके अन्तराल में प्रवेश कर यह समझ लेगा कि स्वभाव-संस्कार, इच्छा-आकांक्षा, आस्था-क्रियाशक्ति जैसे व्यक्तित्व के सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण पक्ष-इसी के गर्भ में पकते, पनपते और पलते रहते हैं, उस दिन शायद इसे शोधित-संस्कारित करने की कोई विधा भी वह निकाल ले । यदि ऐसा हुआ, तो यह चेतना विज्ञान के क्षेत्र में पदार्थ विज्ञान की क्रांतिकारी उपलब्धि होगी, कारण कि तब व्यक्तित्वों को तराशने और गढ़ने का उसके पास एक सुनिश्चित आधार होगा, जिसका कि अभी एक प्रकार से अभाव है ।

यह सत्य है कि सम्पूर्ण व्यक्तित्व को एवं उसकी बारीकियों को अकेले उस विज्ञान को समझ कर जाना जा सकता है, जो समस्त शरीर में कला अथवा किरण के रूप में व्याप्त रहती है । बोलचाल की भाषा में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इसे ही 'तेजस्' कहते हैं । यह तेजस् मुख के आस-पास प्रकाश मण्डल की तरह विशेष रूप से फैला होता है । यों तो यह सारे शरीर के इर्द-गिर्द प्रकाशित रहता है, पर सामान्य रूप से चेहरे के ओज के रूप में ही आँखें उसे देख पाती हैं । इसे ही 'ऑरा' अथवा 'आभामण्डल' कहते हैं । देवताओं के चित्र में उनके सिर के चारों ओर एक प्रकाश का गोला-सा चित्रित होता है । यह उनकी कला का ही चिह्न है । अवतारों के सम्बन्ध में उनकी शक्ति का माप उनकी कथित कलाओं से किया जाता है । परशुराम में तीन, भगवान राम में बारह, कृष्ण में सोलह, बुद्ध में बीस और प्रज्ञावतार में चौबीस कलाएँ बतायी गई हैं । इसका तात्पर्य यह है कि उनमें साधारण मात्रा से इतनी गुनी आत्मिक शक्ति थी ।

साधना द्वारा जैसे-जैसे आत्मिक शक्ति बढ़ती जाती है, वैसे-ही-वैसे व्यक्ति में कलाओं का विस्तार होता जाता है । इस विस्तार क्रम में आगे बढ़ते हुए साधक कला की किस भूमिका में पहुँच गया, इसे कोई दिव्यदृष्टि सम्पन्न महापुरुष ही जान सकता है । आमतौर से सामान्य व्यक्ति में शक्ति का दुरुपयोग भौतिक आकांक्षाओं की पूर्ति में होता रहता है । किन्तु साधना मार्ग का पथिक जब इसे संचित करते हुए आगे बढ़ता है, तो अन्ततः एक ऐसी अवस्था में पहुँच जाता है, जिसे कला की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कहा जा सके । इसी के आधार पर उसकी क्षमता का अनुमान लगाया जाता है । जिस प्रकार मोटरों की सामर्थ्य उसकी "हार्स पावर" पर निर्भर करती है और जितनी अधिक हार्स पावर की मोटर होती है उतना ही बड़ा काम ले पाना उससे सम्भव होता है, वही बात कला शक्ति के साथ भी है । साधकों में यह शक्ति जितनी बढ़ी-चढ़ी होगी, उतना ही बढ़ा-चढ़ा पुरुषार्थ कर सकने में वह समर्थ होगा ।

संसार में अगणित स्वभाव और प्रकृति के मनुष्य हैं । कोई शालीन, सज्जन, शिष्ट और नम्र, तो कोई उग्र, उद्दंड और अशिष्ट । कोई दुष्ट-दुराचारी, तो कोई परले सिरे का क्रूर और कठोर । यह सब व्यक्ति के कलापुंज पर निर्भर है । इसमें परिवर्तन होने से आचरण भी बदलने लगता है । सामान्यतौर पर कला के रंग के आधार पर व्यक्ति के स्वभाव का अन्दाज लगाया जाता है । जिस मनुष्य में यह श्वेत रंग का होता है, उसमें शान्ति, रसिकता, कोमलता, शीघ्र प्रभावित होना, तृप्ति, शीतलता, सुन्दरता, बुद्धि, प्रेम आदि गुण देखे जाते हैं । इसके लाल रंग होने से वह गर्मी, उष्णता, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, शूरता, सामर्थ्य, उत्तेजना, कठोरता, कामुकता, तेज, प्रभावशीलता, चमक, स्फूर्ति आदि का परिचायक है । पीला रंग-क्षमा, गम्भीरता, उत्पादन, स्थिरता, वैभव, मजबूती, संजीदगी-हरा रंग चंचलता, कल्पना, स्वप्नशीलता, धूर्तता, गतिशीलता, विनोद, प्रगतिशीलता, पोषण, परिवर्तन-नीला रंग विचारशीलता, बुद्धि सूक्ष्मता, विस्तार, सात्विकता, प्रेरणा, व्यापकता, संशोधन, सम्वर्धन, सिंचन आदि गुणों को प्रकट करता है । धार्मिक ईश्वर भक्त और सदाचारी व्यक्तियों की आभा केसरिया रंग की होती है । गहरा बैंगनी अस्थिर मति अस्थिर गति का प्रतीक है । इसी प्रकार विभिन्न रंगों का सम्मिश्रण मिश्रित गुण, कर्म, स्वभाव का द्योतक माना जाता है ।

कलाविद्या का पारखी इन रंगों के आधार पर अपने शरीर-मन की स्थिति का पता लगाता है और अपने आत्मबल से ही उसका सुधार-संशोधन कर सात्विकता की मात्रा बढ़ाता चलता है । इतना ही नहीं, वह दूसरों की भी सहायता इसके सहारे कर सकता है । जिसके शरीर के प्रकाश अणुओं की जितनी तीव्रता होगी, वह उतनी ही समर्थ सहायता कर सकने में सक्षम होता है । इसके माध्यम से वह दूसरों के शारीरिक मानसिक रोग दूर कर सकता है । मनोभूमि बदल सकता है और उसमें सात्विकता का संचार कर सकता है । पौराणिक कथाओं में ऋषि आश्रमों के निकट की सरिताओं में गाय और शेर के एक ही घाट पानी पीने का जो उल्लेख मिलता है, वह वस्तुतः कला-परिवर्तन की ही घटना है । ऋषियों के दिव्य प्रकाश-पुंज के प्रभाव में आकर हिंस्र पशुओं के प्रकाश कणों में क्षणिक परिवर्तन आ जाने और उनमें अस्थायी सात्विकता बढ़ जाने के कारण ही ऐसे प्रसंग प्रकाश में आते थे । प्राचीन काल में कई उदाहरण ऐसे भी हैं, जिनमें ऋषियों के सम्पर्क में आते ही दुष्ट प्रकृति के दुर्जनों का स्वभाव परिवर्तन हो गया । इन सब घटनाओं में प्रकाश अणुओं में रूपान्तरण ही एक मात्र सीमित है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जड़ या चेतन किसी भी पदार्थ के प्रकट रंग एवं उससे निकलने वाली सूक्ष्म प्रकाश किरण से यह जाना जा सकता है कि इस वस्तु या व्यक्ति का स्वभाव एवं प्रभाव कैसा है ? साधारणतः यह पाँच तत्वों की कला है, जिनके द्वारा यह कार्य हो सकते हैं—(१) व्यक्तियों तथा पदार्थों की आंतरिक स्थिति को समझना तथा सुधारना, (२) तत्वों के मूल आधार पर पहुँचकर तत्वों की गतिविधि तथा क्रियापद्धति को जानना, (३) तत्वों पर अधिकार करके सांसारिक पदार्थों का निर्माण, पोषण तथा विनाश करना । यह तीन लाभ ऐसे हैं, जिनकी व्यवस्था की जाय, तो वे ऋद्धि-सिद्धियों के समान आश्चर्यजनक प्रतीत होंगे । राजयोगी, हठयोगी, मन्त्रयोगी तथा तन्त्रयोगी इसका अपने-अपने ढंग से सदुपयोग-दुरुपयोग करके भले-बुरे परिणाम उपस्थित करते हैं । कला द्वारा सांसारिक भोग, वैभव भी मिल सकता है, आत्म कल्याण भी हो सकता है और किसी को शापित, अभिचरित एवं शोक संतप्त भी बनाया जा सकता है ।

भारतीय योगियों ने इसके मूल उद्गम को सहस्रार कमल कहकर वर्णन किया है । यह सर्वप्रभुता सम्पन्न प्रकाश केन्द्र है । कनपटियों से दो-दो इंच अन्दर और भृकुटि से करीब तीन इंच भीतर यह स्थान दिव्य तेज पुंज रूप में है । तत्वदर्शियों के अनुसार यह स्थान उल्टे छाते के समान १७ प्रधान प्रकाश तत्वों से बना है । छान्दोग्य उपनिषद् में इस दिव्य प्रकाश प्रदर्शन की सिद्धि को निम्न प्रकार से वर्णित किया गया है—"तस्य सर्वेषु कामचारी भवति" अर्थात् सहस्रार प्राप्त कर लेने वाला योगी सम्पूर्ण विज्ञान प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है ।

इस अन्तिम प्रकाश तक पहुँचाने वाले मार्ग को ही कला-साधना के नाम से सम्बोधित किया गया है । इसमें पंचत्वों के पाँच प्रमुख स्थानों गुदा, पेडू, नाभि, हृदय एवं कंठ प्रदेशों में निवास करने वाले पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु एवं आकाश प्रभृति तत्वों का सन्तुलन-समीकरण बिठाते हुए, दोष-पारिमार्जन करते हुए मूल प्रकाश को इतना निर्मल और प्रखर बना लिया जाता है कि सामान्य स्थिति में जो अनगढ़ बनकर रोग-शोक का कारण बना हुआ था, वही अपने उच्चस्तरीय आयाम में ऋद्धि-सिद्धि का भाण्डागार बन जाता है । जो इस साधना मार्ग में प्रवृत्त होकर अपनी कला को जिस अनुपात में बढ़ाते हैं, वे उतने ही ऐश्वर्यवान् बनते चलते हैं—ऐसा तत्वज्ञों का मत है । "तमसो मा ज्योतिर्गमय" में इसी की याचना है । गायत्री का भर्ग इसे ही कहा गया है । यही सबका जीवन प्राण है ।

ज्योति साधना से भगवान की कृपा मनुष्य पर बरसी या नहीं इसकी पहचान क्या है ? इस सम्बन्ध में ईश्वर विश्वासियों की इच्छा निरन्तर बनी रहती है । कई सोचते हैं कि ईश्वर जिस पर प्रसन्न होते हैं, उन्हें प्रत्यक्ष दर्शन देते हैं । राम, कृष्ण, शिव, दुर्गा आदि के रूप में उनके सामने आ खड़े होते हैं । साथ ही यह भी कहते हैं कि "वरदान माँग" अर्थात "इच्छित मनोकामना को पूरी कराने के लिए जो सहायता चाहता हो उसे कह और ले ।" मोटी धारणा यही है ।

कई हृदयाकाश में प्रकाश ज्योति का दर्शन करते हैं । समाधिस्थ एकाग्र हो जाते हैं । वैराग्य धारण करके ऐसा सोचते हैं कि संसार को, कुटुम्ब-परिवार को भवबन्धन समझकर उन्हें त्याग दिया तो जीवन मुक्त हो गए । जन्ममरण के बन्धन से छूट गए । कई 'सोहम्' साधना में श्वास के साथ चलने वाली आवागमन की ध्वनियों को सुनते हैं । कइयों को कान बन्द कर लेने पर घण्टा, शंख, मृदंग, मंजीरे, गर्जन आदि के शब्द सुनाई पड़ते हैं और लगता है कि ईश्वर के सांकेतिक वचन सुन रहे हैं । उसका अर्थ समझने लगेंगे तो त्रिकालदर्शी बन जायेंगे ।

कुछ को षटचक्रभेदन की कल्पना उभरती रहती है । चिर सेवित कल्पना भावना बन जाती है । इस भावना की मस्ती में वे चक्र आदि प्रगाढ़ ध्यानावस्था का पुट लगाकर यथार्थवत् दीखने लगते हैं । वस्तुतः वे सूक्ष्म शरीर में अवस्थित हैं । स्थूल शरीर में जहाँ-तहाँ नाड़ी गुच्छक ही हैं । उन्हें सूक्ष्म शरीर में चक्रों की उपस्थिति बताने वाले संकेत भर कहा जा सकता है । प्लेक्सस को ही चक्र मान लेना उचित नहीं ।

ध्यान के लिए शरीर के भीतर ही कई महत्त्वपूर्ण स्थान हैं, जिनमें सघन एकाग्रता की साधना करके कई प्रसुप्त पड़े केन्द्रों के सूक्ष्म प्राण को जगाया जा सकता है । मस्तिष्क के मध्य में सहस्रदल कमल है । उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विष्णु भगवान की शेष शय्या को अलंकारिक महत्ता दी गई है । उसी को कैलाशमान सरोवर की उपमा दी गई है । मस्तिष्क के ग्रेमैटर रूपी समुद्र में जहाँ-तहाँ पड़े नाभिक-केन्द्र रूपी द्वीप भी होते हैं, जिनकी जागृति परामानसिक शक्तियों को जन्म देती है । मस्तिष्क में भरे द्रव सी. एम. एफ. को ही विष्णु भक्त क्षीरसागर की उक्ति देते हैं ।

ध्यान की परिपक्वावस्था में यह सहस्रार कमल और ब्रह्मरन्ध्र शिव या विष्णु का निवास स्थान प्रतीत होता है । इस प्रतीति को श्रद्धा के समन्वय से और भी अधिक प्रगाढ़ बनाया जा सकता है । मस्तिष्क मध्य हृदय भाग और नाभि मध्य में ब्रह्म ग्रन्थि विष्णुग्रन्थि एवं शिव ग्रन्थि भी हैं जिनके सम्बन्ध में कहा जाता है कि इन गाँठों के बन्धनों में जीव बंधा है । यदि उन्हें खोला जा सके तो मुक्ति मिल सकती है ।

नादयोग और सोहम् साधना के विषय में भी उनके बढ़े-चढ़े महात्म्यों की चर्चा की जाती है । कुण्डलिनी जागरण भी ऐसा ही प्रसंग है, जिसकी उपमा ज्वालामुखी फटने से दी जाती है । इतना सब होते हुए भी साधारणतया साधना क्षेत्र के जिज्ञासुओं में यही भ्रम बन रहता है कि यह शक्ति केन्द्र स्थूल शरीर में विद्यमान है और ध्यान, मर्दन, योगासन आदि करने से यही स्थान अपना चमत्कारी प्रतिफल दिखाने लगते हैं ।

इस भ्रम से जितनी जल्दी उबरा जाय उतना ही उत्तम है । शरीर के अंग अवयवों की संरचना और कार्य पद्धति काय विज्ञानी भली प्रकार जानते हैं । इस जानकारी के सम्बन्ध में कोई भ्रम हो तो उसे किसी मृत शरीर की शल्य क्रिया करके जाना जा सकता है । विशेषज्ञों के मतानुसार यह भी समझा जा सकता है कि किस अवयव की कार्य पद्धति क्या है ? और उनमें क्या-क्या गुण दोष उत्पन्न होते रहते हैं ? या हो सकते हैं । इस कथन और आध्यात्मिक विवेचन का परस्पर कोई तालमेल नहीं खाता । आध्यात्म का आरम्भ सूक्ष्म शरीर से होता है । स्थूल शरीर तो रक्त, माँस, अस्थि, मज्जा आदि का समुच्चय है । वह तनिक सी बीमारी से, चोट के आघात से कुम्हलाते, तिलमिलाते देखा गया है । वृद्धावस्था की जीर्णता भी ऐसी होती है जिसमें यह साधनाएँ सम्भव नहीं रहतीं । आँख में दृष्टि दोष आने पर त्राटक नहीं हो सकता । कान में बहरापन छा जाने के उपरान्त नादयोग की साधना सम्भव नहीं । इसी प्रकार मनोबल घट जाने पर ध्यान की स्थिति अस्तव्यस्त जैसी रहने लगती है । घुटने जकड़ जाने पर वे पूरी तरह खुलते नहीं । ऐसी दशा में विभिन्न प्रकार के आसन लगाना असम्भव हो जाता है । कमर झुक जाने पर वे प्राणायाम नहीं हो सकते, जिनके लिए कमर सीधी रखने की आवश्यकता है । इसका अर्थ यह हुआ कि युवावस्था के निरोग शरीर में ही शरीरगत साधनाएँ बन पड़ती हैं ।

इन कठिनाइयों के रहते यह नहीं कहा जा सकता कि साधना का उपयुक्त काल तो आयुष्य की चौथी अवस्था में है । इसलिए चतुर्थ आश्रम बनाया गया है । यह कहाँ तक ठीक है । यदि स्थूल शरीर ही साधना केन्द्र रहा होता तो बालकपन ढलती आयु-वृद्धावस्था से घिरा हुआ जीवन निरर्थक चला जाता । मात्र तरुणाई ही इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त काल माना जाता है । किन्तु बात ऐसी नहीं है । ध्रुव ने बालकपन में, च्यवन ने वृद्धावस्था में, आद्य शंकराचार्य ने भंगदर के फोड़े से ग्रसित रहते हुए रुग्णावस्था में भी कठोर साधनाएँ की थीं । समाधि अवस्था में तो शरीरगत स्पंदन अधिकतम रुक जाते हैं । ऐसी दशा में शरीर के किन्हीं अंग विशेषों का प्रभावित करने की प्रक्रिया कैसे चल सकती हैं ? वह तो मृत मूर्च्छित जैसी स्थिति होती है ।

इन समस्त तथ्यों पर ध्यान देने से प्रतीत होता है कि स्थूल शरीर द्वारा उच्चस्तरीय साधनाएँ बन पड़ना असंगत है, वह तो सूक्ष्म शरीर में समाहित दिव्य केन्द्रों द्वारा ही बन पड़ती हैं । इसलिए उसे शरीर के साथ गुथा नहीं रहने देना चाहिए । उसका शरीराध्यास घटाना या मिटाना चाहिए । इसी उपाय से शरीर इस लायक बन पाता है कि वह समयानुसार सूक्ष्म शरीर को आवश्यक छूट देकर उसे साधनारत रह सकने की सुविधा प्रदान कर सके । लोभ, मोह और अहंकार के बन्धनों को हथकड़ी, बेड़ी तक की उपमा दी जाती है । इन बन्धनों के पूरी तरह कसे रहने पर सूक्ष्म शरीर के लिए इतना संकट भय नहीं रहता कि वह शरीर बोध से विरत होकर अपनी स्वतन्त्र सत्ता में विकसित हो सके और उन उच्चस्तरीय साधनाओं का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभ्यास कर सके जिन से दिव्य क्षमताओं दिव्य विभूतियों की प्राणी को उपलब्धि होती है ।

शरीर के स्वस्थ रहने से मन स्वस्थ रहता है और सौंपे गए दायित्वों को पूरा कर सकता है । इसलिए उचित है कि साधना के प्रथम सोपान में प्रवेश करते हुए काया को बलिष्ठ और निरोग रखा जाय इस प्रकार के नियमों का पालन, उपायों को अपनाना साधना का प्रथम चरण कहा गया है । संयम, ब्रह्मचर्य, आहार-विहार की सन्तुलित सात्विकता का अपनाया जाना आवश्यक है, ताकि शरीर की निरोगता और मन की सौभ्यता अक्षुण्ण रहे । राजयोग के आठ सोपानों में से प्रथम यम और नियम इसी निमित्त हैं कि शारीरिक सात्विकता अपना कर चौथाई योगाभ्यास किया जा सके । इसके बिना मन के कल्मष कषाय न घटते हैं न मिटते हैं । साथ ही चंचलता भी उद्वेगों से भरी होती है । यह ध्यान धारणा की प्रधान बाधा है । आसन प्राणायाम में शारीरिक क्रियाओं को जितना करना पड़ता है । उनसे अधिक मनोयोग का नियोजन करना पड़ता है । मन यदि सांसारिक ताना-बाना बनने में व्यस्त और मस्त रहे तो किसी समय विशेष पर एकाग्रताजन्य ध्यान धारणा में लगाना कठिन होता है । आकाश में उड़ते पंछी को हाथ पसार कर कैसे पकड़ा जाय ? जाल में तो उसे तभी फँसाया जा सकता है जब जमीन पर बैठा हो । शरीर को सौम्य सात्विक और मन को सुसंस्कारी बना लेने के उपरान्त ही यह सम्भव है कि मन शान्ति का आश्रय लेने लगे और निर्धारित ध्यान धारणा में किसी प्रकार जमे । इसलिए जहाँ तक शरीर साधना का सम्बन्ध है वहाँ तक समग्र संयम की साधना का ही पूर्वार्द्ध समझा जा सकता है । उत्तरार्द्ध इसके उपरान्त ही सध पाता है । सूक्ष्म शरीर में जिन ऋद्धि-सिद्धियों के रत्न भण्डार भरे हुए बताये गए हैं, उन तक साधक की पहुँच तभी हो पाती है जब वह अपने शरीर को साधने की प्राथमिक आवश्यकता पूरी करले । संयम साध ले । आहार-विहार में सात्विकता का समावेश कर ले । मन को सुसंस्कारी बना ले । उसमें घुसी हुई कीचड़ को-तृष्णा, लिप्सा, वासना, अहंता को निरस्त करके सच्चे अर्थों में सज्जन सुसंस्कृत सभ्य बना ले।

त्रुटि सबसे बड़ी यही होती रहती है कि वर्णमाला सीखे बिना लोग-बाग कॉलेज में पढ़ाया जाने वाला गणित पढ़ना आरम्भ कर देते हैं । ऐसी दशा में कोई कहने लायक सफलता कैसे मिले ? किए गए अनेकों योगाभ्यास निष्फल चले जाते हैं । भव-बन्धनों से जकड़ा मन आत्मिक उत्कर्ष के लिए कुछ करना चाहता है मजबूरियों के निविड बन्धन ऐसे बंधे रहते हैं कि उनके कारण कुछ धरते-करते ठोस एवं स्थिर रूप से बन नहीं पाते, अतएव सफलता की दिशा में कुछ कहने लायक सफर नहीं बन पड़ता । यात्रा रास्ते में ही रुकी पड़ी रहती है ।

सूक्ष्म शरीर की ही अधिकांश साधनाएँ हैं । कुण्डलिनी जागरण से लेकर ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रकमल के प्रस्फुरण के सभी महान प्रयोजन सूक्ष्म शरीर में ही अवस्थित हैं । षटचक्रों से लेकर ग्रन्थिभेद तक की प्रक्रिया सूक्ष्म शरीर से ही सम्पन्न होती हैं । खेचरी मुद्राओं में अमृत पान किया जाता है । यह सूक्ष्म शरीर का ही अनुदान है । जिनने भी महत्त्वपूर्ण सिद्धियाँ प्राप्त की हैं, उनने चर्तुर्वधि मुक्ति पाने के लिए यही प्रयास किया है कि शरीर और आत्मा के बीच बंधे हुए निविड बन्धनों को शिथिल किया खोला है । इस प्राथमिक मुक्ति के मिलने पर दूसरी परोक्ष मुक्ति सरल हो सकती है । परमात्मा के साथ आत्मा को जोड़ने के लिए यह आवश्यक है कि भवबन्धन से छुटाकारा पाया जाय । इसकी उपेक्षा करके ऊँची छलांगें लगाना ऐसा ही है जैसा पंखों के जकड़े रहते पर भी उन्मुक्त आकाश में विचरण करने के लिए मनोरथ करना ।

भगवान की कृपा का प्रत्यक्ष दर्शन एक ही कसौटी पर कसा जा सकता है कि शरीर और आत्मा के बन्धन ढीले हुए या नहीं ? मनुष्य अन्तर्मुखी हुआ या नहीं । अपने स्वरूप, महत्त्व एवं लक्ष्य को समझ पाया या नहीं ? ये अनुभूतियाँ यदि होने लगे तों समझना चाहिए कि भगवान की प्रत्यक्ष कृपा का, दिव्य ज्योति का दर्शन होने लगा और उसका चमत्कार प्रतिफल बन्धन्मुक्ति के रूप में-ऊर्ध्वगमन के रूप में दीख पड़ने लगा ।

भावना योग द्वारा दिव्य दृष्टि

संसार में मनुष्य सबसे महत्त्वपूर्ण प्राणी है । यदि विचार किया जाय तो वह ईश्वर का ही प्रति रूप है । जिसका आदि और अन्त उसी में होता है । प्रत्येक मनुष्य के भीतर सब एक प्रकार की शक्तियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बीज रूप में निहित रहती हैं, जिनके द्वारा अगर दृढ़ निश्चय कर ले तो बड़े से बड़े कार्य को सिद्ध करके दिखा सकता है । पर यह तभी सम्भव है कि सब से पहले मनुष्य अपनी आत्मा को पहिचाने और उसे सांसारिक विषयों से बचाकर निर्मल तथा शुद्ध बनाने का प्रयत्न करे क्योंकि बिना इसके आत्मा उर्द्धगामी नहीं बन सकती । मनुष्य के भीतर परमात्मा का निवास अवश्य है, पर वह श्रेष्ठ रूप में तभी विकसित हो सकता है जब हम शुद्ध आचार-विचार और निष्कपट आचरण द्वारा उसे प्रभु के आसीन होने योग्य बना सकें ।

जीवन को इस प्रकार के आध्यात्मिक मार्ग पर अग्रसर करने की अनेक विधियाँ हैं । ज्ञान, भक्ति और कर्म ये तीनों मार्ग तो बहुत प्रसिद्ध हैं और इनके विषय में सभी मतमतान्तरों और सम्प्रदायों के विद्वानों ने छोटे बड़े ग्रन्थ लिखे हैं । पर इनके सिवाय और भी अनेक विधियाँ ऐसी हैं, जिनसे मनुष्य आध्यात्मिक उन्नति करता हुआ परमात्मा का साक्षात्कार कर सकता है । योग ग्रन्थों में सोलह प्रकार के योग बतलाये गए हैं जिनमें राजयोग और हठयोग के सिवाय ज्ञानयोग, मन्त्रयोग, लययोग, जपयोग आदि अनेक साधन-विधियों का उल्लेख आता है । भावना-योग भी एक ऐसी ही साधन प्रणाली है जिसके अनुसार मनुष्य ईश्वर के परम प्रेमयुक्त नाम को स्मरण करके उसका साक्षात्कार कर सकता है । हिन्दू-धर्म के "नारद भक्ति-सूत्र" "श्रीमद्भगावत्" आदि ग्रन्थों में इस प्रणाली का उल्लेख किया गया और अन्य धर्मों में भी इसका महत्त्व स्वीकार किया गया है । अंग्रेजी में इसे "मिस्टिसिज्म" कहा जाता है जिसकी हिन्दी पर्यायवाची "रहस्य योग" या 'भावना योग' होता है । इसमें न तो राजयोग के समान प्राणायाम, धारणा, समाधि आदि जैसे गम्भीर साधन करने पड़ते हैं न हठयोग के समान षटकर्म, आसन आदि की कठिन क्रियाओं की आवश्यकता पड़ती है । इसका आधार तो प्रभु की अत्यन्त प्रेमपूर्वक प्रार्थना करना और हृदय से उनकी कृपादृष्टि की आकांक्षा करते रहना ही है । इस दृष्टि से इसे हम अपने भक्ति-योग का एक अंग कह सकते हैं । पर इस समय भक्ति साधना में जिस प्रकार अपने इष्टदेव की मूर्ति की षोडशोपचार पूजा की प्रणाली विशेष रूप से चल पड़ी है वह "भावना-योग" में आवश्यक नहीं । इसका आधार तो अपनी शुद्ध और अकृत्रिम भावना ही है, उसे चाहे जिस किसी विधि से काम में लाया जाय । यही कारण है कि "भावना-योग" का साधन किसी एक धर्म से सम्बन्ध नहीं रखता । हिन्दू, मुसलमान, ईसाई, यहूदी आदि सभी इसे कर सकते हैं और करते हैं । मुसलमानों के सूफी-सन्त अधिकतर भावना योगी ही थे । ईसाइयों में भी इस साधन का विशेष रूप से प्रचार है और कहा जाता है कि ईसाइयों की धर्म-सभाओं में अनेक बार भावना-योग (मिस्टिसिज्म) की सामूहिक साधना के फलस्वरूप कई व्यक्तियों के जीवन स्थायी रूप से परिवर्तित हो जाते हैं । इस प्रणाली के अनुसार प्रभु की प्रार्थना के स्वरूप और महत्त्व का विवेचन करते हुए एक विद्वान ने लिखा है—

"ईश्वर और मनुष्य के बीच पुल बाँधने का कार्य प्रार्थना से होता है । मनुष्य के हृदय के भीतर चाहे दृढ़ निश्चय हो कि ईश्वर हमको क्षमा प्रदान करेगा, चाहे उसे पूर्ण भरोसा हो कि प्रभु कृपा हमें प्राप्त होगी, पर इतने निश्चय मात्र से काम न चलेगा । प्रार्थना ही वह जादू का कार्य है, जिससे पुल बँधता है । प्रार्थना के बिना यह चमत्कार नहीं हो सकता । इसलिए भावना-योग में प्रार्थना पर विशेष महत्त्व रखा गया है और मनुष्य की अपात्रता तथा अयोग्यता पर विशेष जोर इसलिए दिया जाता है कि उससे उसमें यदि दीनता का भाव उत्पन्न हो । प्रार्थना द्वारा जो जादू का कार्य होता है, इस दीनता-भाव की प्राप्ति से उसका निश्चय हो जाता है ।

भावना योग के कुछ साधक अपने पूज्यदेव की नारी रूप में भक्ति करना श्रेष्ठ मानते हैं । जैसे ईसाई धर्म में कुमारी मेरी की, हिन्दू धर्म में काली और राधा आदि की, मिस्र में मां आइसिस की, ग्रीक-धर्म में पैल्लव अथीनी की पूजा और प्रार्थना विशेष फलप्रद मानी जाती है और बहुसंख्यक लोग उसका अनुसरण करते हैं । ऐसा क्यों होता है यह आत्मा का एक ऐसा गुप्त रहस्य है जिसे केवल वे ही समझ सकते हैं जो इस भावना-मार्ग को ग्रहण करते हैं । यहाँ हम इतना ही कह सकते हैं कि प्रेम-भावना मार्ग का एक अति सुन्दर और बलवान रूप है जिसमें प्रेमस्वरूप परमात्मा माता, देवी या प्रियतमा के रूप में दीख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ता है । ईश्वर या देवी के चरणों में प्रेम और आत्म-समर्पण की धारा के द्वारा अपने हृदय और आत्मा को अर्पण कर देना यही हृदय की एकमात्र अभिलाषा रहती है । इस योग में आत्मा राम-राम करते प्रभु स्वभाव के अनेक रहस्यों को जानती है । इस श्रेणी के साधक प्रार्थना नहीं करते और न कुछ माँगने या कामना करने का कोई मान रखते हैं । फूल की कली सूर्य प्रकाश सें कुछ माँगती नहीं है, वह तो खिलती है, पूजा करती है और अपनी सुन्दरता प्रकट करती है । पर उसमें भी पूर्ण प्रबल प्रयत्न की आवश्यकता है । यह पूजा निषेधात्मक प्रयत्नहीनता नहीं है पर इसमें आत्मा का निश्चयात्मक और तेजस्वी समर्पण उपस्थित रहता है ।"

भावना योगी का प्रधान लक्षण बाह्य जगत की बातों की अपेक्षा अपने अन्तर्जगत को अधिक महत्त्व देना होता है । उसका जीवन मुख्य रूप से अन्तः प्रवृत्ति पर ही आश्रित रहता है और बाहरी बातों से वह उन्हीं को स्वीकार करता है जो उसकी आन्तरिक भावनाओं के अनुकूल सिद्ध होती हैं । यही कारण है कि अनेक समय धर्मात्मा और भावना योगी में एक विरोध का सा भाव जान पड़ता है । इस विषय का विवेचन करते हुए एक स्थान पर कहा कहा गया है—

"भावना-योगी और धर्मात्मा के अन्तर को हमें भूल न जाना चाहिए । वे दोनों धार्मिक हों और किसी एक ही पंथ या क्रियाकाण्ड में दोनों की एक सी श्रद्धा हो, पर दोनों में एक बड़ा अन्तर स्पष्ट दिखलाई पड़ता है । धर्मात्मा का प्रमाण उसका पंथ, शास्त्र या उसकी क्रिया ही हैं, पर भावना योगी को ऐसे बाह्य प्रमाणों को अधिक महत्त्व देना योग्य नहीं जँचता। प्रचलित रूढ़ियों और नियमों के भावना योगी एक काँटा ही बना रहता है क्योंकि बाह्य प्रमाण उसे तब तक ही माननीय रहता है जब तक वह उसकी भावना के अनुकूल होता है । धर्मात्मा मनुष्य अपनी इच्छा को अपने से बड़े की इच्छा के अनुकूल बनाने को तैयार रहता है, पर भावनायोगी अपनी इच्छा का ही पालन करता है । सब प्रकार के भावना-योग मुख्यतः व्यक्तित्व-प्रधान होते हैं पर सच्चे भावना-योग में व्यक्तित्व रहता है जो सारे विश्व को अपने अमर आलिंगन में लिए रहता है ।"

इस विवरण से "भावना-योग" को कोई विशेष पंथ या सम्प्रदाय मान लेना भूल होगी । ये विभिन्न साधन प्रणालियाँ इसी कारण चलाई गई हैं कि जिनके द्वारा पृथक-पृथक मनोवृत्तियों और स्वभाव के लोगों को अपने अनुकूल मार्ग छांट लेने की सुविधा प्राप्त हो सके । "एक ही स्थान को जाने के लिए एक व्यक्ति छः महीने का और दूसरा साल भर का मार्ग पसन्द करता है।" पर इसका यह आशय निकालना कि वे एक-दूसरे के विरोधी हैं सबसे बड़ी बुद्धिहीनता की निशानी है । वास्तव में शुद्ध आत्मा होने पर सबका लक्ष्य एक ही रहता है और वे मार्ग की भिन्नता को महत्त्व न देकर सबको आत्मस्वरूप मानते हैं ।

भावना-योग का अवलम्बन लेने वाले साधक की दिव्यदृष्टि अन्यान्य साधनावलम्बियों की अपेक्षा अधिक जल्दी विकसित होती है । यह दिव्य दृष्टि ही विवेक दृष्टि या तृतीय नेत्र है जो साधक को क्रमशः आत्मोत्कर्ष की दिशा में अग्रसर करती है ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामान्य एवं विशिष्ट फलदायी साधनाएँ

साधना की सफलता के आधार भूत तत्व

आध्यात्म साधनाओं के लिए व्यक्ति के स्तर के अनुरूप भिन्न-भिन्न प्रकार से विधि-विधान निर्धारित हैं । साधक की पात्रता, अभिदृष्टि और मनःस्थिति देखकर यह पता लगाना पड़ता है कि उसमें कितना भार वहन करने की क्षमता है । तद्नुरूप ही उसे मार्ग का चयन एवं निर्धारण करना होता है । सभी की क्षमता एवं रुझान एक जैसी नहीं होती, इसलिए उसे अपने स्थिति के अनुरूप जो उचित है वही अपनाना पड़ता है ।

सर्व साधारण को मध्यवृत्ति के लिए पुण्य और परमार्थ की सम्पदा का संचय पर्याप्त माना जाता है । पुण्य अर्थात् आत्म परिष्कार, परमार्थ अर्थात् लोक-मंगल । इस समन्वय में स्वार्थ और परमार्थ दोनों की सिद्धि होती है । पुण्य संचय के लिए संयम साधना होती है । इन्द्रिय संयम, समय संयम, अर्थ संयम, विचार संयम—इन चारों के समग्र सम्मिलन से आत्मशोधन की प्रक्रिया पूरी होती है । इसके अतिरिक्त परमार्थ सेवा कार्यों से सधना है । पिछड़ों को ऊँचा उठाने की, विपत्तिग्रस्तों को सामयिक सहायता देकर उनका दुःख हल्का करना होता है । साथ ही यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि बहानेबाज जिस-तिस बहाने किसी की श्रद्धा, सद्भावना का दोहन न करें ।

यह सरल है । अपना सुख बाँट देना दूसरों का दुःख बँटा लेना । बालकों जैसा निर्मल निष्कपट मन रखना । लोभ, मोह और अहंकार के भव-बन्धनों से अपने को न जकड़ जाने देना । इतनी ही योग साधना सर्वसाधारण के लिए पर्याप्त है । सज्जनता अपनाये रहना, शालीनता को हाथ से न जाने देना, सहृदय एवं भाव सम्वेदना से प्रेरित उदारता को स्वभाव में सम्मिलित रखना । नियमित, व्यवस्थित और आदर्शवादी जीवन जीना । यह गुण, कर्म, स्वभाव की वरिष्ठता किसी आध्यात्मिक साधना से कम नहीं । इसलिए सिद्ध पुरुष न सही मानव गरिमा अक्षुण्ण रखे रहने वाला पुण्य पुरुष निश्चित रूप से बनकर रहता है । उसकी भी सद्गति ही होती है । जीवन की सार्थकता इतने भर से सध जाती है ।

इससे अगले प्रकार की साधना वह है जिसमें तप-तितिक्षा को सहना पड़ता है । जन्म-जन्मान्तरों की पशु-प्रवृत्तियाँ मनुष्य जीवन के साथ भी बँधी चिपकी चली आती हैं । वे सहज छूटती नहीं । अनपढ़ व्यक्ति नर-पशुओं-सा ही जीवन जीते हैं । उन्हें मर्यादाओं का पालन और वर्जनाओं का अंकुश अपनाते नहीं बनता । अस्तु मनःक्षेत्र में कुत्साएँ सज्जनित कुण्ठाएँ सदा घेरे रहती हैं और व्यक्ति को खिन्न, उद्विग्न बनाये रहती हैं । इस गन्दगी से प्रयत्नपूर्वक जूझना—इन्द्रिय निग्रह और मनो निग्रह में कड़ाई बरतना तितिक्षा वर्ग में आता है । आदर्शों के परिपालन में·····त्याग करना और साहस दिखाना पड़ता है । यह मनोयोग ही आत्मोत्कर्ष है । उत्कृष्ट चिन्तन, आदर्श चिन्तन और मृदुल व्यवहार को स्वभाव का अंग बना लेना मध्यवृत्ति का योगाभ्यास है । इसी को कहते हैं—असंस्कृत से सुसंस्कृत बनना । शरीर से सत्कर्म और मन से सद्भाव क्रियान्वित होते रहें तो समझना चाहिए कि आत्मोत्कर्ष का उपक्रम अपनी गति से ठीक तरह से चल रहा है ।

सेवा कार्य में कष्ट सहना पड़ता है । असुर अपराधीजनों का विरोध करने या उनके हाथ न आने पर कोप का भाजन बनना पड़ता है । इस आधार पर भी विपत्तियाँ टूटती हैं । आदर्शवादी से दुर्जनों को खतरा दीखता है, इसलिए वे उसे दूर हटाने की चेष्टा में भी कुछ कमी नहीं रहने देते । प्रतिकार करने या सहन करने में दोनों ही तरह क्षति उठानी पड़ती है । इसलिए आदर्शों के लिए कष्ट सहना भी तप माना गया है । गाँधी के सत्याग्रहियों, स्वतन्त्रता सेनानियों को भी अपने ढंग का तपस्वी कह सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तीसरी श्रेणी उन वैज्ञानिक स्तर के योगियों की है जो आत्मसत्ता में सन्निहित दिव्य शक्तियों को उठाते और जगाते हैं । इसके लिए उन्हें बीज की तरह गलना और खाद पानी, रखवाली की आवश्यक व्यवस्था बनाते हुए परिपुष्ट वृक्ष के रूप में फलित होना पड़ता है । मस्तिष्क की मात्रा ७ प्रतिशत शक्तियाँ प्रयोग में आती हैं । ९३ प्रतिशत ऐसी हैं जिसका न अभी तक खोजना सम्भव हुआ है न प्रयोग करना । इसी प्रकार मेरुदण्ड, जननेन्द्रिय मूल आदि में अवस्थित नाड़ी गुच्छकों में भी भौतिक जगत की प्रकृतिगत अनेकानेक क्षमताएँ विद्यमान हैं । काय सत्ता वस्तुतः एक दिव्य प्रयोगशाला है जिसमें सूक्ष्मीकृत ऐसे यन्त्र उपकरण लगे हुए हैं, जिनके सहारे अणु-परमाणुओं के साथ सम्पर्क साधा और उन्हें जिस दिशा में जिस प्रयोजन के लिए प्रयुक्त करना हो, उसे मोड़ा-मरोड़ा जा सकता है । यह तन्त्र विधान है—शक्ति का उत्पादक । जिस प्रकार सामर्थ्यवान यन्त्र काम करते हैं, उसी प्रकार तन्त्र का भी अभीष्ट प्रयोग किया जा सकता है । इस राह पर चलने वाले सर्वप्रथम अपनी जीवनचर्या ऐसी बनाते हैं जो उद्देश्य की पूर्ति में भी सहायक हों ।

आत्मा के उत्कर्ष अभ्युदय में ज्ञानयोग, कर्मयोग, भक्तियोग का समावेश है । इसे व्यक्तित्व को उच्चस्तरीय ढाँचे में ढालना भी कह सकते हैं । इस निमित्त गुण, कर्म, स्वभाव के सभी पक्ष इस प्रकार ढालने-बदलने, मोड़ने-मरोड़ने पड़ते हैं कि विधान सर्वप्रथम अपने ऊपर प्रभाव छोड़े । इसके उपरान्त किसी अन्य को तद्नुरूप प्रभावित करे ।

मानवी शरीर और अन्तःकरण के दोनों पक्षों में सूक्ष्म शक्तियों के अपार भण्डार भरे पड़े हैं, पर उनका उपयोग न होने से निःचेष्ट और निर्जीव हो जाते हैं । इसलिए उनका उपयोग करते रहना आवश्यक है । सैनिकों को समय-समय पर चाँदमारी की प्रतियोगिता में सम्मिलित होना पड़ता है । इससे सैनिकों की पकड़ भी बनी रहती है और बन्दूकों की सफाई भी होती रहती है ।

सूर्य की बिखरी किरणों में सीमित गर्मी होती है, पर यदि छोटे से आतिशी शीशे पर उन्हें केन्द्रित कर लिया जाय तो तत्काल अग्नि प्रकट होती है । इसी प्रकार व्यष्टि सत्ता के बिखराव को भी यदि समेट लेने की कला हस्तगत हो जाय तो उस प्रयोग के चमत्कारी प्रतिफल सामने आते हैं ।

एकाग्रता के लिए यों लोग जप और ध्यान का प्रयोग अपनाते हैं और उसमें आंशिक सफलता भी मिलती है, पर यदि उच्चस्तरीय क्षमताओं का पुंज संचित करना हो तो फिर कुछ तपश्चर्या स्तर के कार्यक्रम भी अपनाने पड़ते हैं । ऐसे प्रयोगों में एकान्त सेवन, मौन, आहार-संयम और ब्रह्मचर्य का विशेष महत्त्व है । योगीजन वन्य प्रदेश में रहकर पर्वतीय गुफाओं में जो साधनाएँ करते हैं उनमें उन्हीं तीन अनुबन्धों का समावेश होता है । कन्द, मूल फल का आहार ऋषि करते थे, पर अब वैसे वन नहीं रहे । अमृताशन—खिचड़ी, शाकाहार, छाछ जैसी वस्तुओं पर घर गाँवों में रहने वाले तपस्वी भी निर्वाह कर सकते हैं । मौन जिह्वा पर जटिल अंकुश को नहीं करते वरन् उसे मानते हैं जिसमें आदर्शों की कहने-सुनने की छूट किसी नियत समय पर रहे । एकान्त सेवन गुफा की तरह ऐसे कमरे में भी हो सकते है जहाँ आवागमन, वार्त्तालाप या धमा-चौकड़ी का माहौल न हो । आत्म-चिन्तन में विघ्न उपस्थित करने वाली परिस्थितियाँ न हों । इस प्रयोजन के लिए ऐसे कमरे में चुनाव किया जाय जहाँ से आकाश दीखता हो । खुली वायु और सूर्य की ऊर्जा का आवागमन हो । कभी गुफाएँ इस कार्य के लिए आवश्यक मानी जाती थीं, पर अब उस कार्य के लिए उपयुक्त कमरे, झोंपड़े भी काम दे सकते हैं । ऋषियों में से अधिकांश झोंपड़े बनाकर रहते थे, जिनमें वायु और धूप का आवागमन रहता था । आज मध्यवर्ती आध्यात्म प्रयोग के लिए कोलाहल रहित एकान्त, सार्थक सीमित कथन, श्रवण का मौन पर्याप्त है । आहार में जितनी अधिक सात्विकता बरती जा सके मात्रा जितनी स्वल्प रखी जा सके उतना ही उत्तम है । श्रद्धापूर्वक की गई साधना सिद्धि प्रदान किए बिना नहीं रहती ।

जिस प्रकार भौतिक क्षेत्र में अग्नि की शक्ति को प्रमुख माना गया है, उसी प्रकार आध्यात्म क्षेत्र की ऊर्जा श्रद्धा द्वारा उपलब्ध होती है । किसी तथ्य को समझने में तर्क और प्रमाण की आवश्यकता होती है । किसी निश्चय-निर्णय पर पहुँचने के लिए प्रमाण और उदाहरणों की जरूरत पड़ती है । समाधान हो जाने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पर उस निश्चय को कार्यान्वित करने के लिए संकल्प शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है, ताकि मन कि चंचलता उसे उतावले बालक की तरह छोड़नी न पड़े । मन का स्वभाव बन्दर जैसा है । उसमें जल्दी-जल्दी काम बदलने की आतुरता पायी जाती है, इसलिए उसकी रोकथाम करके नियत कार्य में लगाये रहने के लिए अनुशासन की लगाम लगाये रहनी पड़ती है, अन्यथा समय साध्य कामों में चंचलता प्रदर्शित करने से वे बीच में ही छूट जाते हैं । उतावली निराशा में बदल जाती है । चिरस्थायी वट वृक्ष विकसित होने में देर लगती है । बाजीगर हथेली पर सरसों जमा सकते हैं, पर माली विशाल वृक्षों का उद्यान उतनी जल्दी लगा देने का वायदा नहीं कर सकता है । ताश का महल तुरन्त भी खड़ा किया जा सकता है, पर किसी सुनियोजित नगर को बसा देना समय साध्य है । आत्मिक प्रगति के बारे में भी यही बात है । इसलिए उस दिशा में कदम बढ़ाने वाले को संकल्प करना होता है कि इतना तो पूरा करके ही रहा जायेगा, चाहे असुविधा का सामना ही क्यों न करना पड़े ?

प्रसिद्ध दार्शनिक चिन्तक मूर का मत है कि अच्छे काम को करने में धन की आवश्यकता कम पड़ती है, पर "अच्छे हृदय और संकल्प की अधिक ।" यह एक सुनिश्चित तथ्य एवं परीक्षित प्रयोग है कि जिस कार्य के पीछे मनोयोग पूर्वक इच्छा शक्ति के साथ लगा जाता है, वह भली-भाँति पूरा होकर रहता है । सांसारिक अथवा आध्यात्मिक हर क्षेत्र में यह बात लागू होती है ।

सन्देहों का, जिज्ञासाओं का समाधान निश्चय पर पहुँचने से पहले ही कर लेना चाहिए, ताकि अनेक प्रकार के मत-मतान्तरों में बहककर असमंजस में न पड़ना पड़े । रास्ते अनेक हैं, पर उनमें से एक पर ही चला जा सकता है, चिकित्सा एक से ही करायी जाती है । क्षण-क्षण में चिकित्सक और उपचार बदलते रहने से रोगी की हानि ही हानि है । इसलिए जो कदम उठाये जायें । मजबूती से उठाये जायें । लोक व्यवहार की तरह यही बात आध्यात्म प्रयोजनों के लिए भी सही सिद्ध होती है ।

मनोवैज्ञानिक एडगर का मत है कि हेय कर्मों की ओर तो मन की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है । उसे सिखाने की भी आवश्यकता नहीं पड़ती । बच्चा पैदा करने की क्रिया तो पशु पक्षी भी समय आने पर अन्तः प्रेरणा के आधार पर सीख जाते हैं, पर संगीत-शिल्प के सम्बन्ध में ऐसी बात नहीं है । उसके लिए अध्यापक चाहिए और साथ ही लगन पूर्व अभ्यास भी चलना चाहिए । साधना ऐसा ही उच्चस्तरीय कृत्य है, जिसे यदि भावावेश में आरम्भ किया जाता है और योजनाबद्ध किस प्रकार रखा जाय, यह कार्यक्रम नहीं बनाया जाता तो उसका पूरा होना और पार हो पाना कठिन है ।

यह वह आधार है, जो भौतिक आध्यात्मिक सभी कार्यों पर समान रूप से लागू होता है, किन्तु साधना क्षेत्र में उतरने वाले का अपना आवाँ पकाने में एक विशेष प्रकार की ऊर्जा का अवलम्बन लेना पड़ता है और वह है—'श्रद्धा का अवलम्बन' विनोबा कहते थे सद्विचार पर बुद्धि रखने का ही नाम "श्रद्धा" है । यही श्रद्धा मनुष्य को बल देती है, सब तरह से प्रेरणा देती है और उसके जीवन को सार्थक बनाती है । रामायण में "भवानीशंकरों वन्दे श्रद्धा विश्वासरूपिणौ" कह कर विश्वास को शिव की और श्रद्धा को पार्वती की उपमा दी है, जो सदा साथ-साथ रहते हैं । साथ ही यह भी कहा गया है कि इनकी सहायता के बिना अपने अन्तराल में विद्यमान परमात्मा के दर्शन नहीं हो सकते । विश्वास में निश्चय का भाव है । विश्वास होने पर मन भटकता नहीं । एक निर्णय कर लेता है और निर्धारित मार्ग पर चल पड़ता है । सांसारिक प्रयोजनों में सफलता तक पहुँचने के लिए ज्ञान और प्रयोजनों में सफलता तक पहुँचाने के लिए ज्ञान और कर्म का समन्वय ही पर्याप्त है, पर आध्यात्म इससे एक सीढ़ी ऊँचाई पर है । उसके लिए एक विशेष अवलम्बन श्रद्धा का भी होना चाहिए ।

ज्ञान मस्तिष्क का और कर्म शरीर का विषय है । आध्यात्म का उद्गम इससे ऊँचा है । यह गंगोत्री श्रद्धा के गोमुख से प्रस्फुटित होती है । श्रद्धा में भाव-सम्वेदना का मिश्रण रहता है । प्रेम का अवलम्बन, रस की अनुभूति यही श्रद्धा की व्याख्या है । उसके सम्मिलित हो जाने पर विचारों की, तर्क की, विश्वास के उलट-पुलट की कोई आशंका नहीं रहती । अन्तःकरण की गहराई तक जिस श्रद्धा ने प्रवेश पा लिया है, उसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के रंग में समूची चेतना ढल जाती है और फिर विश्वास ही नहीं, अनुभव भी वैसा ही होने लगता है ।

गीता का कथन है—श्रद्धा मयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः । अर्थात् यह मनुष्य श्रद्धा पर अवलम्बित है । जिसकी जैसी श्रद्धा है, वह वैसा ही बन या ढल जाता है । जिसने अपने आपको चोर, अनाचारी, मूर्ख आदि मान रखा है, उसके वही गुण और वही लक्षण उभर-उभर कर ऊपर आते रहेंगे । इसी प्रकार जो अपने सम्बन्ध में सन्त, सज्जन, श्रेष्ठ होने की मान्यता बना लेता है, उसकी वही विशेषता क्रियान्वित होती दृष्टिगोचर होती है । अन्तःकरण के अनुरूप ही समूचा व्यक्तित्व विनिर्मित हो जाता है । तदनुरूप ही उसकी भावना परिपक्व हो जाती है, फिर बाहरी परामर्श या दबाव भी उस पर काम नहीं करते, उसमें रस जो आने लगता है, चेतना का समूचा ढाँचा जो उस प्रक्रिया में ढल जाता है । आध्यात्म का उद्‌भव श्रद्धा-केन्द्र के उत्कर्ष रूप में ही होता है ।

श्रद्धा प्रयत्न पूर्वक जमानी पड़ती है । गंगा देवी है । हिमालय देवात्मा है । इष्ट देव की सत्ता सुनिश्चित है । इन सब में प्रतिमा अथवा गुरु के माध्यम से अपनी भावनाओं में जमाना और पकाना पड़ता है । जिसे इसमें सफलता मिल गई, समझना चाहिए कि इष्ट प्राप्ति की दिशा में उसकी आधी मंजिल पार हो गई । श्रद्धा के अभाव में गंगा एक नदी, हिमालय पत्थरों व बर्फ का समुच्चय, देव-प्रतिमा खिलौना और गुरु साधारण स्तर का मनुष्य मात्र है । तब भगवान भी प्रकृति व्यवस्था का एक अदृश्य नियम भर मालूम पड़ता है ।

श्रद्धा प्राण है और स्वरूप उसका कलेवर । श्रद्धा न हो तो गाय और बकरी में कोई अन्तर नहीं रह जाता । मन्त्र भी अक्षरों का समुच्चय ही प्रतीत होते और उनका जो शब्दार्थ निकलता है मात्र उतना भर ही उसका महत्त्व प्रतीत होता है । तब यज्ञाग्नि और पत्थर के कोयले वाली अँगीठी में कोई अन्तर नहीं रह जाता । धार्मिक कर्मकाण्डों का भी शारीरिक श्रम या साधन-सज्जा के अनुरूप ही मूल्य मालूम पड़ता है । पदार्थ को या मान्यता को भावनापूर्ण बनाने और देव सान्निध्य जैसी उमंगें उठती ही नहीं । इन्हीं उमंगों का नाम भक्ति-भावना है । इन्हीं के कारण भक्त का भगवान से तादात्म्य हो जाता है । समर्पण में अपना अस्तित्व ही अलग से नहीं बचता । इष्ट देव की समूची सत्ता ही अपने ऊपर छा जाती है ।

एकलव्य ने द्रोणाचार्य की मिट्‌टी की अनगढ़ प्रतिमा बना ली थी । उसी के ऊपर समूची श्रद्धा उड़ेलकर वह बाण विद्या में पारंगत हो गया । उसे उतनी सफलता मिली जितनी कि सचमुच के द्रोणाचार्य अपने प्रत्यक्ष शिष्य कौरव-पाण्डवों को भी उपलब्ध नहीं करा सके थे ।

मीरा का गिरधर गोपाल एक छोटा-सा पत्थर का टुकड़ा था, पर उसी में से भगवान प्रकट होकर उसके उस प्रकार अधीन हो गए थे, जिसके सम्बन्ध में वह गर्व पूर्वक कहती थीं कि—'सखी री मैंने गिरधर लीनो मोल, राणा ने विष का प्याला और सर्प पिटारा भेजा तो मीरा ने उन्हें सहर्ष स्वीकार किया, पर उनका विष गिरधर गोपाल के शरीर में चला गया और मीरा हँसती खेलती रहीं ।

रामकृष्ण जिस काली की पूजा करते थे, उनके चमत्कारों की कोई गणनी नहीं । विवेकानन्द को उसी ने दर्शन देकर निहाल किया था । लोगों ने काली को परमहंस के साथ भोग लगाते देखा था । यह सब श्रद्धा के चमत्कार हैं । उसके अभाव में एकलव्य, मीरा और परमहंस के हाथ में मिट्‌टी-पत्थर के अनगढ़ खिलौने ही साथ रह जाते ।तब कोई देवालयों में न जाता । पत्थर की कलाकृतियाँ देखने के लिए किसी विक्रेता पुरातत्ववेत्ता की दुकान पर सभी देवाताओं को देख लेता । श्रद्धा ही आध्यात्म की शक्ति है, जिसका अभ्यास इष्ट देव की स्थापना, गुरु का वरण एवं ध्यान धारणा के सहारे किया जाता है । किसी उच्चस्तरीय शक्ति के प्रति यदि साधक की मान्यता न हो और वह कर्मकाण्डों की लकीर भर पीटता रहे, तो कदाचित् ही कोई उच्चस्तरीय प्रतिफल हाथ लगेगा ।

एक व्यक्ति के पास ऐसा अमृत जल था कि उसकी एक बूँद साधारण पानी में मिलाकर पिलाता तो कठिन-से-कठिन रोग अच्छे हो जाते । उसकी ख्याति दूर-दूर तक फैली और हजारों व्यक्ति नित्य लाभ उठाने के लिए आने लगे ।

उस व्यक्ति के गुरु ने अपने शिष्य की प्रशंसा सुनी तो बहुत चकित हुए और अपनी कई बीमारियाँ दूर कराने के लिए उस व्यक्ति के पास पहुँचे । उसने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आदर किया और वही दवा पिला कर उन्हें भी अच्छा कर दिया । गुरु के मन में यह विचार आया कि यदि इस दवा का नुस्खा मालूम कर लिया जाय तो हमें भी ऐसी ही ख्याति मिले । उन्होंने शिष्य से दवा का रहस्य पूछा, तो शिष्य ने सच्चे हृदय से शपथ पूर्वक बता दिया कि यह आपके चरणों का धोया पानी है, जिसे मैं हर साल आपकी सेवा में उपस्थित होकर एक बड़ी बोतल भर लाता हूँ और उसी की एक-एक बूँद बाँट कर असंख्यों का भला करता हूँ ।

गुरु को अपनी करामात पर बड़ा गर्व हुआ । उन्होंने सारे गाँव में रोग मुक्ति की दवा जान लेने की घोषणा की । मरीज आये । उन्होंने एक बड़ी परात में अपने चरण धोये और एक-एक कटोरा सबको पिलाया, पर कोई अच्छा न हुआ, तो सभी उनसे लड़ने आये । गुरु फिर शिष्य के पास पहुँचे और सफलता का कारण पूछा तो उसने सीधा-सादा उत्तर दिया कि मेरे चरणोदक में श्रद्धा का गहरा पुट है और आपके पैर धोवन में अहंकार की अभिव्यक्ति है । इसलिए दोनों एक वस्तु होते हुए भी उनके गुणों में जमीन आसमान जैसा अन्तर हो गया । सामर्थ्य में नहीं, श्रद्धा में समाहित है ।

एक और भी ऐसी ही कथा है । एक सन्त गंगा तट पर रहते थे । नाव न होने पर पार जाने वालों के कान में राम मन्त्र बता देते और कहते इसे जपते हुए पार निकल जाना । जाने वाले सहज ही पार उतर जाते ।

कुछ दूर पर एक फकीर रहते थे । वे भी ऐसा ही चमत्कार दिखाते । उतरने वालों को खुदा का नाम सिखा देते । वे भी सब पार निकले जाते ।

एक चतुर ने दोनों का भेद जाना और दोनों का सम्मिश्रण कर और भी अधिक आसानी से पार निकलने का हिसाब लगाया । वह राम-खुदा कहता हुआ पार जाने का प्रयत्न करने लगा और मझधार में डूब गया । शक्ति शब्दों में नहीं, उनके साथ लगी भावना शक्ति में श्रद्धा के सम्पुट में होती है । वाल्मीकि को नारद ने राम जप करने के लिए कहा था, पर वे उल्टा नाम 'मरा-मरा' जपने लगे और उसी के प्रताप से ऋषि हो गए ।

इससे प्रकट है कि कर्मकाण्डों की, साधना-विधानों की उतनी महत्ता नहीं, जितनी कि उसके मूल में काम करने वाली श्रद्धा-भावना की । संशयचित्त बेगार भुगतने की तरह, किसी प्रकार आधे-अधूरे मन से साधना की लकीर पीटते हैं और बताये गए माहात्म्य के अनुरूप उसका प्रतिफल नहीं देखते तो निराश हो जाते हैं और साधना-विज्ञान अथवा अपनाये गए क्रिया-कृत्य पर अविश्वास करने लगते हैं ।

साधना क्षेत्र के प्रति जो वस्तुतः गम्भीर हों और उसका चमत्कारी प्रतिफल पाना चाहते हों, उन्हें चाहिए कि अन्तस् में श्रद्धा का बीच बोयें, विश्वास और संकल्प का खाद, पानी लगाएँ । फसल निश्चित रूप से ऐसी उपजेगी जिस पर सन्तोष ही नहीं गर्व भी किया जा सके ।

समर्पण योग की ध्यान-साधना

ईश्वर, जीव, प्रकृति की विवेचना ही आध्यात्म तत्वज्ञान का प्रमुख विषय है । इन तीनों की सत्ता मानवी काय कलेवर में विद्यमान है । स्थूल शरीर प्रकृति का प्रतिनिधित्व करता है । सूक्ष्म शरीर जीव चेतना का और कारण शरीर अन्तःकरण का तारतम्य परब्रह्म के साथ जोड़ता है । इस समस्त ब्रह्माण्ड का प्रसार-विस्तार मनुष्य की प्रत्यक्ष सत्ता में अप्रत्यक्ष रूप से अपने मनोरम स्वरूप को दर्शाता है ।

क्रिया और कल्पना यह दोनों तत्व अन्यान्य प्राणियों में न्यूनाधिक मात्रा में पाये जाते हैं । मनुष्य में जो अतिरिक्त भावतत्व हैं, वही उसकी आध्यात्मिक विशेषता है । यही वह सीढ़ी है जिसके सहारे परब्रह्म के साथ सघन सायुज्य बनता है । यही वह विशेषता है जिसके कारण उसे ईश्वर का युवराज कहा जाता है ।

क्रियायोग को सांसारिक सफलता के लिए वैचारिक तत्व दर्शन को प्रज्ञा की उपलब्धि के लिए और भावयोग को दिव्य तत्व के साथ एकात्मता प्राप्त करने के लिए आवश्यक माना जाता है । भक्तियोग सबसे ऊँचा है । मीरा कहती थी "सबसे ऊँची प्रेम सगाई" प्रेम के बन्धनों में बँधकर माता सन्तान में, पति-पत्नी में, मित्र-मित्र में जो घनिष्टता पैदा होती है उसका आनन्द लेते सभी भावुकजन देखे जाते हैं । यही जब आदर्शों के समुच्चय परब्रह्म के साथ जुड़ जाता है तो आत्मा परमात्मा में समर्पित होकर तद्रूप बन जाता है । इसी को जीवन का परम लक्ष्य माना गया है । चेतन जगत की विशालता ही परमेश्वर है, उसी के अनुरूप भक्तजन

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने को सुविस्तृत करते हैं । समर्पण साधना यही है । अद्वैत चिन्तन इसी को कहते हैं । तादात्म्यता में ही ईश्वर दर्शन का ऐसा रसास्वादन मिलता है, जिसकी प्यास में जीव कस्तूरी के हिरन की तरह दिशा-दिशा में तलाशता, भागता फिरता है ।

उच्चस्तरीय भाव सम्वेदना विकसित करने के लिए आरम्भिक अभ्यास यह है कि किसी परमार्थ प्रतीक को अपना इष्ट बनाकर उसके साथ आत्मीयता का सघन सम्बन्ध जोड़ा जाय । साकार उपासक इसके लिए किसी देव प्रतिमा को अपना आराध्य बनाते हैं और उसकी प्रत्यक्ष स्थापना करके भाव भरा सर्वोच्च रिश्ता जोड़ते हैं । देव प्रतिमाओं के माध्यम से निराकार परब्रह्म की अचिन्त्य छवि को दृश्यमान साकार बनाते हैं । इस साकार उपासना में दो परिकल्पनाएँ करनी होती हैं । एक यह कि प्रस्तुत प्रतिमा धातु या पाषाण नहीं वरन् उच्च आदर्शों की संगठना है । उसके प्रत्येक अवयव में अपने-अपने स्तर की उत्कृष्टता छलकती है । इस प्रकार की मान्यता 'विश्वास' कहलाती है । इस स्थापना पर श्रद्धा का, आत्मीयता का, आरोपण किया जाता है । उसके प्रति प्रेम भाव दर्शाने के लिए नवधा भक्ति में प्रयुक्त होने वाले पूजा अर्चन के पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य आदि अर्पित करने होते हैं । वस्तुओं का यह उपादान वस्तुतः अपनी विभूतियों को विराट् ब्रह्म के लिए स्थायी समर्पण करने की मानसिकता को जगाता है ।

प्रकारान्तर से साकार पूजा अर्चना इस मानसिक पृष्ठभूमि का निर्माण है कि आदर्शों के प्रति अपना समय, श्रम मनोयोग एवं साधना इस स्तर का अर्पित किया जायेगा कि जिसमें उदासीनता का पुट नहीं गहरी उमंगों का भावुक समावेश हो । इस प्रयास को परमार्थ परायणता की तैयारी कह सकते हैं । बद्ध जीव संकीर्ण स्वार्थपरता के छोटे दायरे में नाली के कीड़ों की तरह हाथ-पैर पटकता रहता है । गूलर के पेड़ों में उगते रहने वाले भुनगों की तरह अधी हलचलें करता रहता है, पर जब उसके अन्तराल में प्रेम भावना का उदय होता है तो 'स्व' को 'पर' में समर्पित करने के लिए वह आतुर हो उठता है ।

प्रेम को प्रतिमा के माध्यम से गुरु या महामानव को आधार मानकर विकसित तो किया जा सकता है, पर उसे उस दायरे में सीमित नहीं रखा जा सकता । सूर्य पूर्व से उदय तो होता है पर सदा उदयाचल पर ही नहीं बैठा रहता । उसे समस्त जगती पर अपनी ऊर्जा-आभा बिखेरनी पड़ती है । भक्तजन किसी छोटे भगवान के साथ लिपट कर छोटे नहीं बने रहते वरन् महान के साथ जुड़कर अपना दृष्टिकोण, चिन्तन एवं प्रयास सम्पर्क क्षेत्र से आगे बढ़ाकर अधिकाधिक सुविस्तृत करते जाते हैं । अग्नि के लिए समर्पित होने वाला ईंधन अग्निरूप ही हो जाता है । भक्त की समस्त भाव सम्वेदनाएँ ईश्वर जैसी उदार एवं महान बनती जाती हैं उसे सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं ।

निराकार साधना का एक ही उपाय उपचार है—ध्यान । तत्परता, तन्मयता की प्रतिक्रिया ही एकाग्रता के रूप में दृष्टिगोचर होती है । महान प्रयोजन के साथ जुड़ते ही चंचलता चली जाती है और उद्देश्य के प्रति ऐसी लगन लगती है कि अन्य कहीं मन दौड़ता ही नहीं । मनोनिग्रह को शक्तियों का, सिद्धियों का केन्द्र माना गया है । यह मनोयोग साधने के लिए ध्यानयोग का आश्रय लेना पड़ता है । ध्यान का अर्थ है मानसिक बिखराव को रोककर उसे तीक्ष्ण बनाना और बाण की तरह निर्धारण में अपने साधनों को प्रविष्ट करवाना । अर्जुन को मत्स्य-वेध की सफलता इसी आधार पर मिली थी । आतिशी शीशे के छोटे से दायरे में सूर्य किरणों को एकत्रित करने पर केन्द्र बिन्दु पर आग जलने लगती है । ठीक इसी प्रकार ध्यान की सघनता से अन्यान्य विषयों पर मन नहीं भटकता । इष्ट और भक्त एक हो जाते हैं । ध्यानयोग की यही पृष्ठभूमि है ।

जार्ज बर्नार्डशा जैसे साहित्य सृजेता, राममनोहर लोहिया जैसे समाज सेवी, बहुत आग्रह करने पर भी विवाह के लिए इसीलिए तैयार नहीं हुए, वे कहते थे इससे ध्यान बँटेगा और जिस एकाग्रता पूर्वक निर्धारित लक्ष्य में लगे हैं, उतनी तन्मयता फिर न रह सकेगी और कार्य में व्यवधान आ जायेगा । ध्यानयोग का स्वरूप यही है कि चित्तवृत्तियों की भगदड़ रुक जाय और एक केन्द्र पर पूरी तरह टूटे । बिखरी भाप निरर्थक चली जाती है, पर जब उसे एक केन्द्र पर नियोजित किया जाता है तो रेलगाड़ी ले दौड़ती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बारूद फैली हुई रहे तो चिनगारी लगने पर 'भक' से जल जाती है, पर जब उसे बंदूक की छोटी नली में भरकर एक निशाने पर दागा जाता है तो उसे बिस्मार करके रख दिया जाता है । फायर ब्रिगेड का पानी भी जब एक छोटी नली में होकर फेंका जाता है तो उसकी तेज धार अग्निकाण्ड को बात की बात में बुझा देती है ।

ध्यान धारणा के लिए कोलाहल और हलचलों रहित स्थान चुनना चाहिए । पूर्व में मुख रखें । प्रातः काल का वह समय निकालें जिसमें सूर्य क्रमशः उदय होता है । ऐसा स्थान या तो सबसे ऊपर वाली छत पर हो सकता है या ऐसा मैदान जिसमें पहाड़ियों, पेड़ों की ऊँचाई प्रातः कालीन सूर्य दिशा में बाधा न पहुँचाती हो । एक दो सेकण्ड ही खुले सूर्य का दर्शन करके आँखें बन्द कर लेनी चाहिए और भावना करनी चाहिए कि चारों ओर संव्याप्त प्रकाश को अपने तीनों शरीरों में खींचा भरा जा रहा है ।

शरीर के तीन शक्ति केन्द्र हैं—(१) नाभि-स्थूल शरीर से सम्बन्धित । (२) मस्तिष्क-सूक्ष्म शरीर का केन्द्र बिन्दु । (३) हृदय-कारण शरीर की भाव सम्वेदनाओं का उद्गम । इन तीनों ही स्थानों पर छोटे कमल केन्द्रों की स्थापना भावनापूर्वक नियोजित करनी चाहिए । सूर्य का प्रकाश पाते ही कमल पुष्प खिलने लगते हैं । वही उपक्रम अन्तराल के तीनों कमलों को सविता देव के अरुणोदय प्रकाश से खिलते हुए अनुभव करना चाहिए । कमल पुष्पों के प्रातः कालीन सूर्य प्रकाश के साथ खिलने की स्थूल और सूक्ष्म शरीरों सहित विशेषतया हृदय-कमल खिलने की अनुभूति उभारनी चाहिए । खिले कमल पुष्प की सुगन्ध, शोभा, कोमलता और सात्विकता का अधिकाधिक समावेश होता जाता है । भावना करनी चाहिए कि कारण शरीर हृदय कमल में इसी प्रकार सर्वतोन्मुखी विकास के दिव्य अनुदानों से लाभान्वित हो रहा है । इस साधना को पन्द्रह मिनट से आरम्भ कर क्रमशः बढ़ाते हुए आधे घण्टे तक पहुँचाने का निर्धारण करना चाहिए । इस प्रक्रिया से जो उपलब्धियाँ हस्तगत होती हैं, वे साधक को निहाल कर देती हैं ।

जप के साथ पयपान की ध्यान धारणा

आत्म-कल्याण के लिए महाशक्ति गायत्री की, प्रज्ञा की उपासना-साधना अनिवार्य मानी गई है और कहा गया है कि प्रातःकाल दैनिक क्रिया-कृत्य से निवृत्त होकर एक बार तो महा प्रज्ञा की उपासना नित्य ही करनी चाहिए । सम्भव हो सके तो शाम को भी करना चाहिए । शाम को एक माला आत्म-कल्याण की करने से भी काम चल सकता है । आत्म-शुद्धि पाँच संध्या विधान और सप्त विधि पूजा सायंकाल को भी करनी चाहिए । घर के अन्य लोगों को भी, स्त्री बच्चों को भी यह प्रेरणा देनी चाहिए कि वे उस पूजा स्थली के समीप बैठकर कम से कम एक माला गायत्री मन्त्र की सभी कर लिया करें । सप्त विधि पूजा एक बार कर ली गई हो तो बार-बार करने की आवश्यकता नहीं रह जाती । घर में पूजा स्थली की स्थापना-उसके निकट बैठकर पूजा, उपासना का क्रम कर सद्गृहस्थ को अपने यहाँ चलाना चाहिए । स्वयं तो नियमित उपासना करनी चाहिए । प्रयत्न यह भी करना चाहिए कि बैठ कर थोड़ी बहुत उपासना अवश्य कर लिया करें । घर में आस्तिकता का, भक्ति का वातावरण रहना परिवार की भावनात्मक समृद्धि और आत्मिक शुद्धि के लिए अति आवश्यक है ।

आत्म-कल्याण के लिए गायत्री महामन्त्र की पहली एक माला जप करते समय अपने को एक वर्ष आयु के छोटे बालक के रूप में अनुभव करना चाहिए और सर्व शक्तिमान गायत्री माता की गोद में खेलने, क्रीड़ा-कल्लोल करने की भावना करनी चाहिए । उनका पयपान करते हुए अनुभूति जगानी चाहिए कि इस अमृत दूध के साथ मुझे आदर्शवादिता, उत्कृष्टता, ऋतम्भरा-प्रज्ञा, सज्जनता एवं सदा शायता जैसी दिव्य आध्यात्मिक विभूतियाँ उपलब्ध हो रही हैं और उनके माध्यम से अपना अन्तःकरण एवं व्यक्तित्व महान बनता चला जा रहा है ।

ध्यान का स्वरूप नीचे दिया जा रहा है—

(१) प्रलय के समय बची हुई अनन्त-अनन्त जलराशि में कमल के पत्ते पर तैरते हुए बाल भगवान का चित्र बाजार में बिकता है । वह चित्र खरीद लेना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए और उसी के अनुरूप अपनी स्थिति अनुभव करनी चाहिए । इस संसार में ऊपर नीला आकाश और नीचे नील जल के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं । जो कुछ भी दृश्य पदार्थ इस संसार में थे वे इस प्रलय काल में ब्रह्म के भीतर तिरोहित हो गए । अब केवल अनन्त शून्य बचा है जिसमें नीचे जल और ऊपर आकाश के अतिरिक्त और कोई वस्तु शेष नहीं यह उपासना, भूमिका के वातावरण का स्वरूप है । पहले उसी पर ध्यान एकाग्र किया जाय ।

(२) मैं कमल पत्र पर पड़े हुए एक वर्षीय बालक की स्थिति में निश्चिन्त भाव से पड़ा क्रीड़ा-कल्लोल कर रहा हूँ । न किसी बात की चिन्ता है, न आकांक्षा और न आवश्यकता । पूर्णतया निश्चिन्त, निर्भय, निर्द्वन्द्व निष्काम । जिस प्रकार छोटे बालक की मनोभूमि हुआ करती है, ठीक वैसी ही अपनी है । विचारणा का सीमित क्षेत्र एकाकीपन के उल्लास में ही सीमित है । चारों ओर उल्लास एवं आनन्द का वातावरण संव्याप्त है । मैं उसी की अनुभूति करता हुआ परिपूर्ण तृप्ति एवं सन्तुष्ट का आनन्द ले रहा हूँ ।

(३) प्रातःकाल जिस प्रकार संसार में अरुणिमा युक्त स्वर्णिम आभा के साथ भगवान सविता अपने समस्त वरेण्य, दिव्य, भंग, ऐश्वर्य के साथ उदय होते हैं, उसी प्रकार उस अनन्त आकाश की पूर्व दिशा में ब्रह्म की महान शक्ति गायत्री का उदय होता है । उसके बीच अनुपम सौन्दर्य से युक्त अलौकिक सौन्दर्य की प्रतिमा जगद्धातृ गायत्री माता प्रकट होती हैं । वे हँसती-मुस्कराती अपनी ओर बढ़ती आ रही हैं । हम बालसुलभ किलकारियाँ लेते हुए उनकी ओर बढ़ते चले जाते हैं । दोनों माता-पुत्र आलिंगन आनन्द से आबद्ध होते हैं और अपनी ओर से असीम वात्सल्य की गंगा-जमुना प्रवाहित हो उठती हैं । दोनों का संगम परम-पावन तीर्थराज बना जाता है ।

माता और पुत्र के बीच क्रीड़ा कल्लोल भर स्नेह-वात्सल्य का आदान-प्रदान होता है । उसका पूरी तरह ध्यान ही नहीं भावना, भूमिका में भी उतारना चाहिए । बच्चा माँ के बाल, नाक आदि पकड़ने की चेष्टा करता है, मुँह-नाक में अँगुली देता है, गोदी में ऊपर चढ़ने की चेष्टा करता है, हँसता, मुस्कराता और अपने आनन्द की अनुभूति उछल-उछल कर प्रकट करता है, वैसी ही स्थिति अपनी अनुभव करनी चाहिए । माता अपने बालक को पुकारती है, उसके सिर पीठ पर हाथ फिराती है, गोदी में उठाती, छाती से लगाती, दुलराती है, उछालती है, वैसी ही चेष्टाएँ माता की ओर से प्रेम-उल्लास के साथ हँसी-मुस्कान के साथ की जा रही हैं, ऐसा ध्यान करना चाहिए ।

स्मरण रहे केवल उपर्युक्त दृश्यों की कल्पना करने से ही काम न चलेगा वरन् प्रयत्न करना होगा कि वे भावनाएँ भी मन में उठें, जो ऐसे अवसर पर स्वाभाविक माता पुत्र के बीच उठती रहती हैं । दृश्य की कल्पना सरल है, पर भाव की अनुभूति कठिन है । अपने स्तर को वयस्क व्यक्ति के रूप में अनुभव किया गया तो कठिनाई पड़ेगी, किन्तु यदि सचमुच अपने को एक वर्ष के बालक की स्थिति में अनुभव किया गया, जिसको माता के स्नेह के अतिरिक्त और कोई भी प्रिय वस्तु होती ही नहीं, तो फिर विभिन्न दिशाओं में बिखरी हुई अपनी भावनाएँ एकत्रित होकर उस असीम उल्लास भरी अनुभूति के रूप में उदय होंगी जो स्वभावतः हर माता और हर बालक के बीच में निश्चित रूप में उदय होती हैं प्रौढ़ता को भुलाकर शैशव का शरीर और भावना स्तर कर सकना यदि सम्भव हो सका तो समझना चाहिए कि साधक ने एक बहुत बड़ी मंजिल पार कर ली ।

मन प्रेम का गुलाम है । मन भागता है, पर उसके भागने की दिशा अप्रिय से प्रिय भी होती है । जहाँ प्रिय वस्तु मिल जाती है, वहाँ वह ठहर जाता है । प्रेम ही सर्वोपरि प्रिय है । जिससे भी अपना प्रेम हो जाय, वह भले ही कुरूप या निरूप भी हो, पर लगता परम प्रिय है । मन का स्वभाव प्रिय वस्तु के आस-पास मँडराते रहने का है । उपर्युक्त ध्यान साधना में गायत्री माता के प्रति प्रेम भावना का विकास करना पड़ता है फिर उसका सर्वांग सुन्दर स्वरूप भी प्रस्तुत है । सर्वांग सुन्दर-प्रेम की अधिष्ठात्री गायत्री माता का चिन्तन करने से मन उसी परिधि में घूमता रहता है । उसी क्षेत्र में क्रीड़ा कल्लोल करता रहता है । अतएव मन को रोकने, वश में आवश्यकता करने की एक बहुत बड़ी आध्यात्मिकता भी इस साधना के माध्यम से पूरी हो जाती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस ध्यान धारणा में गायत्री माता को केवल एक नारी-मात्र नहीं माना जाता है । वरन् सत्-चित्-आनन्द स्वरूप—समस्त सद्गुणों, सद्भावनाओं, सत्वृत्तियों का प्रतीक, ज्ञान-विज्ञान का प्रतिनिधि और शक्ति सामर्थ्य का स्रोत मानते हैं । प्रतिमा नारी की भले ही हो, पर वस्तुतः वह ब्रह्म-चेतना क्रम दिव्य ज्योति बन कर ही अनुभूति में उतरे ।

जब माता के स्तन-पान का ध्यान किया जाय तो यह भावना उठनी चाहिए कि दूध एक प्रकार का दिव्य प्राण है जो माता के वक्ष-स्थल से निकल कर मेरे द्वारा उदर में जा रहा है और वहाँ एक धवल विद्युत धारा बन कर शरीर के अंग-प्रत्यंग—रोम-रोम में ही नहीं, वरन् मन, बुद्धि चित्त, अहंकार, हृदय, अन्तःकरण, चेतना एवं आत्मा में समाविष्ट हो रही है । स्थूल, सूक्ष्म, कारण शरीरों में—अन्नमय कोश, मनोमय कोश, प्राणमय कोश, विज्ञानमय कोश, आनन्दमय कोशों में समाए हुए अनेक रोग-शोकों का कषाय, कत्मषों का निराकरण कर रहा है । इस पय-पान का प्रभाव काया-कल्प कर सकने वाली संजीवनी रसायन जैसा हो रहा है । मैं नर से नारायण, पुरुष से पुरुषोत्तम, अणु से विभु, क्षुद्र से महान और अणु से परमात्मा के रूप में विकसित हो रहा हूँ । ईश्वर के समस्त सद्गुण धीरे-धीरे व्यक्तित्व का अंग बन रहे हैं । मैं द्रुतगति से उत्कृष्टता की ओर अग्रसर हो रहा हूँ । मेरा आत्म-बल असाधारण रूप में प्रखर हो रहा है ।

प्रतिभा सम्वर्धन हेतु विज्ञान सम्मत विशिष्ट साधनाएँ

बुद्धि का विकास एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है । उसके लिए अनेक आधार अवलम्बन अपनाये जा सकते हैं । कोई रटकर ज्ञान सम्वर्धन में बुद्धि का विकास समझता है । छोटी आयु से बच्चों को विभिन्न डिजाइनों के टुकड़ों को जोड़कर एक बनाने, लकड़ी के टुकड़ों को जोड़-जोड़ कर कुछ बनाते रहने, स्थापित आविष्कारों के मॉडल बनाकर उनमें जोड़-घटाकर नया बनाने, कोई रचनात्मक कार्य के द्वारा बुद्धिलब्धि के विभिन्न तरीके अपनाये जाते हैं । धार्मिक क्षेत्र में कतिपय कर्मकाण्ड भी इसी प्रयोजन के लिए प्रयुक्त किए जाते रहे हैं । शारीरिक बल-वृद्धियों, आहार-विहार और श्रम-सन्तुलन पर निर्भर है, फिर भी उस प्रयोजन के लिए अखाड़ों में डम्बल, मुदगर जैसे उपकरण काम में लिए जाते हैं । हथियार की धार तेज करने के लिए घूमने वाले पत्थर पर उसे रगड़ा जाता है । यद्यपि धार निकलना हथियार के अपने ही निजी स्तर पर निर्भर है, फिर भी पत्थर का महत्त्व अपनी जगह है । स्नायु-तन्त्र यों तो चमड़ी के भीतर हैं, पर उन्हें मजबूत करने के लिए शरीर पर तेल मालिश करने का प्रावधान चिकित्सक बताले हैं व वह किसी सीमा तक सहायक भी सिद्ध होता है ।

प्रतिभा परिष्कार के लिए व्यक्ति की प्रामाणिक और प्रखरता के दोनों पक्ष समान रूप से मजबूत बनाने पड़ते हैं । भावभरी, उमंग-उत्साहों से सनी एकाग्र तन्मयता उभारनी पड़ती है । साथ ही समय को श्रम के साथ विच्छिन्न रूप से जोड़े रहने वाली तत्परता या श्रमशीलता कार्यान्वित करनी पड़ती है । संकीर्ण स्वार्थपरता के दायरे से आगे बढ़ना होता है ताकि सादा जीवन उच्च विचार की रीति-नीति अपनाने के साथ ही समय, श्रम और साधनों को सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन में, लोक सेवा में लगाया जा सके । उच्चस्तरीय प्रतिभा का सम्वर्धन इसी प्रकार होता है । यों दुस्साहसी आततायी भी भयानक संकट खड़े करते और उन विनाशकारी कार्यों को ही अपनी प्रतिभा के रूप में परिणत करते रहते हैं, पर इससे उचित का सत्परिणाम और अनुचित का दुष्परिणाम झुठलाया तो नहीं जा सकता ।

यहाँ प्रतिभा से सदैव आशय आदर्शोन्मुख बुद्धि व भावना के समन्वित विकास से लिया जाना चाहिए। ऐसे प्रतिभा सम्पन्न ही संचय को प्रेरणापुंज आदर्शों के प्रतीक के रूप में उभारते व स्वयं को ही नहीं, समय को भी निहाल करते हैं । चर्चा इसी के विकास में सम्बन्धित उपचारों की चल रही है ।

क्या ऐसा भी सम्भव है कि बालकों को लिखने की पट्टी पर मनके सरका कर गिनती सिखाने एवं तीन पहिए की गाड़ी का सहारा लेकर चलना सिखाने की तरह किन्हीं अभ्यासों के माध्यम से जनसाधारण को भी प्रतिभा सम्पादित करने की दिशा में अग्रसर किया जा सकता है ? उत्तर "हाँ" में भी दिया जा सकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । जन-सामान्य शारीरिक अंग-अवयवों की पुष्टाई के लिए अखाड़े जाने की विधि व्यवस्था बताते हैं । अखाड़ों में निर्धारित अभ्यासों को अपनाना, शारीरिक अंगों को सशक्त बनाने के लिए व्यायामों का उपक्रम, बुलवर्कर का प्रयोग आदि, आहार में परिवर्तन अभीष्ट माना जाता है । ऐसा ही कतिपय साधना उपक्रम प्रतिभा परिष्कार के सन्दर्भ में भी निर्धारित हैं और वे बहुत हद तक सफल होते भी देखे गए हैं । ऐसे कुछ आधारों का जिनका ब्रह्मवर्चस की शोध-प्रक्रिया में प्रयोग किया जाता है अथवा जिन्हें वर्तमान या संशोधित रूप में प्रयुक्त किए जाने की सम्भावना है, का उल्लेख यहाँ किया जा रहा है ।

(१) स्वसंकेत (ऑटोसजेशन)

शान्त वातावरण में स्थिर शरीर और एकाग्र मन से बैठा जाय । भावना की जाय कि अपने मस्तिष्क केन्द्र से निःसृत प्राण विद्युत का समुच्चय शरीर के अंग अवयवों में अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में प्रवाहित हो रहा है । शिथिलता का स्थान समर्थ सक्रियता ग्रहण कर रही है । उस आधार पर प्रत्येक अवयव पुष्ट हो रहे हैं । इन्द्रियों की क्षमता का अभिवर्धन हो रहा है । चेहरे पर चमक बढ़ रही है । बौद्धिक स्तर में उभार आ रहा है जिसका अनुभव प्रतिभा परिवर्धन के रूप में अपने को तथा दूसरों को हो सके ।

वस्तुतः स्वसंकेतों में ही मानसिक कायाकल्प का मर्म छिपा पड़ा है । श्रुति की मान्यता है कि "यो यच्छ्रद्ध स एव सः" । अर्थात् जो जैसा सोचता और अपने सम्बन्ध में भावना करता है, वह वैसा ही बन जाता है । विधेयात्मक चिन्तन, महापुरुषों के गुणों को अपने अन्दर समावेश होने की भावना से सजातीय विचार खिंचते चले आते हैं वह वांछित विद्युत्प्रवाहों को जन्म देने लगते हैं ।

मनोवैज्ञानिक इसी आधार पर व्यक्तित्व में, विचार प्रवाह में परिवर्तन लाने की बात कहते हैं । उनका मन है कि जैसी पृथ्वी के चारों ओर आयनोस्फियर है, इसी प्रकार मानवी मस्तिष्क के चारों ओर भी एक "आयडियो स्फियर" होता है । यह वैसा ही होता है जैसा मनुष्य का चिन्तन क्रम होता है । क्षणमात्र में यह बदल भी सकता है व पुनः वैसा ही सोचने पर पूर्ववत् भी हो सकता है । इसी चिन्तन प्रवाह के आदर्शोन्मुख, श्रेष्ठता की ओर गतिशीलता होने पर व्यक्ति का मुख मण्डल चमकने लगता है । दूसरों को आकर्षित करता है एवं ऐसे व्यक्ति के कथन प्रभावोत्पादक होते हैं, इस सीमा तक कि अन्य अनेकों में भी परिवर्तन ला सके । एक प्रकार से स्वसंकेतों द्वारा अपने आभामण्डल को एक सशक्त चुम्बक में परिणत किया जाता है । मनोवैज्ञानिक कहते हैं—"थिंक एण्ड ग्रोरिच" अथवा "एडॉप्ट पॉजिटिव प्रिंसीपल टूडे" । आशय यह कि सोचिए, विधेयात्मक सोचिए एवं अभी इसी क्षण सोचिए ताकि आप स्वयं को श्रेष्ठ बना सकें । सारे महामानव स्वसंकेतों से ही महान बने हैं । गाँधीजी ने हरिश्चन्द्र के नाटक को देखकर स्वयं संकेत दिया कि सत्य के प्रयोगों को जीवन में उतारो व उसके परिणाम देखो । उनके शिखर पर चढ़ने के मूल में इसकी कितनी महान भूमिका थी, यह सभी जानते हैं ।

ब्रह्मवर्चस की शोध प्रक्रिया में ऑडियो एवं वीडियो कैसेट का आश्रय लेकर ईयरफोन द्वारा संकेत दिए जाते हैं । कुछ विराम के बाद पुनः उन सभी प्रसंगों पर चिन्तन करते रहने को कहा जाता है । इससे प्रभावशाली विद्युत्प्रवाह जन्म लेने लगता है । इसकी प्रत्यक्ष परिणति जी. एस. आर. बायोफीडबैक के रूप में देखी जा सकती है, जिसमें व्यक्ति चिन्तन द्वारा ही अपनी त्वचा प्रतिरोध घटाता-बढ़ाता व स्वयं भी उसे देखता है । इसी प्रकार श्वसनदर, हृदय की गति, रक्तचाप की गति, रक्तचाप आदि को स्वसंकेतों से प्रभावित किया जा सकता है । विपश्याना ध्यान एवं जेन ध्यान पद्धति इसी स्वसंकेत पद्धति पर आधारित हैं । कोई कारण नहीं कि सही पद्धति का आश्रय लेने पर प्रतिभा में वांछित परिवर्तन न उत्पन्न किया जा सके ।

(२) दर्पण साधना

यह मूलतः आत्मावलोकन की, आत्मसुधार व आत्मपरिष्कार की साधना है । बड़े आकार के दर्पण को सामने रखकर बैठा जाय । सुखासन में जमीन पर या कुर्सीपर बैठा जा सकता है । खुले शरीर के प्रत्येक भाग पर विश्वास भरी दृष्टि से अवलोकन किया जाय । पहले अपने आपके बारे में चिन्तन कर अन्तः के दोष-दुर्गुणों से मुक्त होते रहने की भावना की जाय । वह परमसत्ता बड़ी दयालु है । भूत को भुलाकर अब यह अनुभूति की जाय कि भीतरी संरचना में प्राण-विद्युत बढ़ रही है और उसकी तेजस्विता त्वचा के ऊपरी भाग में चमक बढ़ाने से लेकर अंग-अंग से फूटी पड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रही है । पहले जो निस्तेज-क्षीण दुर्बल काय सत्ता थी, वह बदल गई है एवं शरीर के रोम-रोम में विद्युत-शक्ति ही छायी हुई है । विकास क्रम में उभार आ रहा है । प्रतिभा-परिवर्धन के लक्षण निश्चित रूप में दीख पड़ रहे हैं एवं सामने बैठी आकृति में अपना अस्तित्व पूर्णतः विलीन हो रहा है । अब यह पहले जैसा नहीं रहा । यह ध्यान प्रक्रिया लययोग की ध्यान साधना कहलाती है और व्यक्ति का भावकल्प कर दिखाती है ।

(३) रंगीन वातावरण का ध्यान

हर रंग में सूर्य किरणों के अपने-अपने स्तर के रसायन, धातुतत्व एवं विद्युत्प्रवाह होते हैं । वे शरीर और मस्तिष्क पर अतिरिक्त प्रभाव छोड़ते हैं । इनमें से किसी का अनुपात घट-बढ़ जाता है अथवा विकृत असन्तुलित हो जाता है तो कई प्रकार के रोग-उत्पात उठ खड़े होते हैं । इस हेतु रंगीन पारदर्शी काँच के माध्यम से अथवा विभिन्न रंगों के बल्बों द्वारा पीड़ित अंग पर अथवा अंग विशेष पर उसकी सक्रियता बढ़ाने के लिए रंगीन किरणों को आवश्यकतानुसार निर्धारित अवधि तक लेने का विधान है । प्रतिभा परिवर्धन हेतु उचित रंग विशेष का आँखें बन्द करके ध्यान भी किया जाता है । कुछ देर तक सप्तवर्णों के क्रम में से निर्धारित रंग (बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी, लाल) के फ्लेशेज-स्ट्रोबोस्कोप यन्त्र द्वारा चमकाये जाते हैं एवं आँख पर पहने चश्मे में वही वर्ण विशेष सतत दिखता रहता है । इसका प्रभाव मस्तिष्क के सूक्ष्म केन्द्रों, चक्रों, संस्थानों आदि पर पड़ता है । नियमित रूप से कुछ देर के ध्यान के क्रमशः अभ्यास करने या करते रहने पर वांछित परिवर्तन प्रक्रिया आरम्भ हो जाती है । ध्यान यह किया जाता है कि संसार भर में सर्वत्र उसी एक रंग की सत्ता है, जो अपने शरीर में प्रवेश करके अभीष्ट विशेषताओं की ऊर्जा शरीर में प्रभावित करती है । यह ध्यान पाँच से दस मिनट तक किया जाता है । विशेषज्ञों के द्वारा भिन्न-भिन्न प्रकृति के साधकों के लिए भिन्न-भिन्न वर्णों का निर्धारण करके ही यह प्रक्रिया आरम्भ की जाती है ।

(४) प्राणकर्षण प्राणायाम

इस समस्त ब्रह्माण्ड में प्राणतत्व भरा पड़ा है । उसमें से साधारण प्राणी को उतनी ही मात्रा मिलती है जिससे वह अपना जीवन निर्वाह चलाता रहे । इससे अधिक मात्रा खींचने की आवश्यकता तब पड़ती है, जब किन्हीं उच्च उद्देश्यों के लिए प्राण चेतना का अधिक अंश आवश्यक हो । शरीरगत प्राण एवं समष्टिगत महाप्राण का संयोग शरीर स्थित प्राण का नवीनीकरण ही नहीं करता, प्राणधारणा कर उसे प्रयुक्त करने की क्षमता को भी बढ़ाता है । चेतन जगत में प्राण ही एक ऐसी शक्ति है जो विद्युत ऊर्जा के रूप में, "नेगेटिव आयन्स" के रूप में विद्यमान है । इनकी कमी व्यक्ति को रोगी, निस्तेज, प्राणहीन बनाती है । उसकी प्रभावोत्पादकता को कम करती है एवं प्रचुर मात्रा उसे निरोग, तेजस्वी, प्राण-सम्पन्न बनाकर उसकी प्रभाव क्षमता में अभिवर्धन करती है प्रतिभा परिवर्धन के लिए एक विधान प्राणाकर्षण प्राणायाम का है । इसकी विधि यह है कि कमर सीधी, सरल पालथी, हाथ गोदी में, मेरुदण्ड सीधा रखकर बैठा जाय । ध्यान यह किया जाय कि बादलों जैसी शक्ल के प्राण का उफान हमारे चारों ओर उमड़ता चला आ रहा है और हम उसके बीच निश्चिन्त प्रसन्न मुद्रा में बैठे हैं । नासिका के दोनों छिद्रों से धीरे-धीरे साँस खींचते हुए भावना की जाय कि साँस के साथ ही प्रखर प्राण की मात्रा भी घुली हुई है और वह शरीर में प्रवेश कर रही है । अंग अवयवों द्वारा वह धारण की जा रही है । खींचते समय प्राण के प्रवेश करने की व साँस रोकते समय अवधारण की भावना की जाय । धीरे-धीरे साँस बाहर निकालने के साथ यह विश्वास किया जाय कि जो भी अवांछनीयताओं के, दुर्बलता के तत्व भीतर थे, वे साँस के साथ घुलकर बाहर जा रहे हैं, फिर लौटने वाले नहीं हैं । इस प्राणायाम को आरम्भ में पाँच से दस मिनट करना ही पर्याप्त है । क्रमशः यह अवधि बढ़ाई जा सकती है । शोध संस्थान द्वारा यह जाँचा जाता है कि प्राण धारणा क्षमता कितनी बढ़ी व रक्त में से दूषित तत्व कितनी मात्रा में निकले तथा रक्त ऑक्सीजन का अनुपात कितना बढ़ा । यही निरोगता का प्रतिभाशीलता का चिन्ह है ।

(५) सूर्य बेधन प्राणायाम

ध्यान मुद्रा में बैठा जाय । कपड़े शरीर पर कम से कम रहें । मुख पूर्व की ओर हो । समय अरुणोदय का हो । ध्यान किया जाय कि आत्मसत्ता शरीर में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से निकलकर सीधे सूर्य लोक तक पहुँच रही है । जिस प्रकार सुई में पिरोया हुआ धागा कपड़े से होकर जाता है, जलती अग्नि में से छड़ आर-पार निकल जाती है, उसी प्रकार आत्मचेतना प्रातःकालीन सूर्य का बेधन करती हुई आर-पार जा रही है । सूर्य ऊर्जा से अपनी चेतना भर रही है । दायीं नासिका से खींचा श्वास अन्दर तक जाकर सूर्य चक्र को आन्दोलित, उत्तेजित कर रहा है । ओजस्-तेजस्-वर्चस की बड़ी मात्रा अपने में धारण करके वापस बायीं नासिका से सारे कल्मष निकल रहे हैं । पहले की अपेक्षा अब अपने में प्राणऊर्जा की मात्रा भी अधिक बढ़ गई है, जो प्रतिभा परिवर्धन के रूप में अनुभव में आती है । क्रिया को गौण व भावना को प्रधान मानते हुए यह अभ्यास नियमित रूप से किया जाय तो निश्चित ही फलदायी होता है ।

(६) चुम्बक स्पर्श

चुम्बक का चिकित्सा में बड़ा योगदान माना गया है । एक्यूपंचर, एक्यूप्रेशर, शरीर के सूक्ष्म संस्थानों को मुद्रा-बन्ध द्वारा प्रभावित करना एक चुम्बक चिकित्सा में अद्भुत साम्य है । हमारी धरती एक विराट् चुम्बक है व निश्चित मात्रा में प्राण उत्तरीध्रुव से खींचती व अनावश्यक कल्मषों को दक्षिण ध्रुव से फेंक देती है । चुम्बक स्पर्श में भी यही सिद्धान्त प्रयुक्त होता है । लौह चुम्बक का सहज क्षमता वाला पिण्ड लेकर धीरे-धीरे मस्तिष्क, रीढ़ और हृदय पर बाएँ से दायीं ओर गोलाई में घुमाया जाता है । गति धीमी रहे । कण्ठ से लेकर नाभिछिद्रों के ऊपर होते हुए जननेन्द्रियों तक उस चुम्बक को पहुँचाया जाय । स्पर्श कराने-घुमाने के उपरान्त उसे धो दिया जाय ताकि उसके साथ कोई प्रभाव न जुड़ा रहे । चुम्बक से प्रभावित जल तथा विद्युत चुम्बक का प्रयोग भी इसी क्रम में किया जाता है व किस कमी के लिए, किस रूप में, किस प्रकार प्रयोग किया जाना है, इसका निर्धारण विशेषज्ञों द्वारा किया जाता है ।

(७) प्राणवानों का सान्निध्य

शक्तिपात की तान्त्रिक क्रिया तो करने कराने में कठिन है व जोखिम भरी भी, किन्तु यह सरल है कि किन्हीं वरिष्ठों, प्राण चेतना सम्पन्न व्यक्ति के यथा सम्भव निकट पहुँचने का प्रयत्न किया जाय । चरणस्पर्श जैसे समीपता वाले उपक्रमों से लाभ उठाया जाय । अप्रत्यक्ष रूप से यह ध्यान किया जा सकता है कि हनुमान भागीरथ, जैसे किसी प्राणवान के साथ अपनी भावनात्मक एकता बन रही है और पारस्परिक आदान-प्रदान का सिलसिला चल रहा है । साबुन जिस प्रकार अपनी सफेदी प्रदान करता है और कपड़े का मैल हटा देता है, उसी प्रकार की भावना इस सघन सम्पर्क की ध्यान धारणा में करते रही जा सकती है । दृश्य चित्र व उन महामानव के कर्तृत्वों के गुणों का चिन्तन इसमें सहायक होता है । इस आधार पर भी प्राण चेतना बढ़ती है, उसी प्रकार जिस प्रकार माँ के स्तनपान से बालक एवं गुरु की शक्ति से शिष्य लाभान्वित होता है ।

(८) नादयोग

वाद्ययन्त्रों और उनकी ध्यान लहरियों के अपने-अपने प्रभाव हैं । उन्हें कोलाहल रहित स्थान में सुनने का अभ्यास भी प्रतिभा परिवर्धन में सहायक होता है । यह कार्य शब्द-शक्ति जो चेतना का ईंधन है, के श्रवण से अन्तः के ऊर्जा केन्द्रों को उत्तेजित व जगाकर सम्भव है । टेपरिकार्डर से संगीत की धुन सुनकर भी यह कार्य सम्भव एवं स्वयं उच्चारित मन्त्रों या संगीत पर ध्यान लगाकर भी । सुनकर ध्यान लगाना उचित रहता है । अपने लिए उपयुक्त संगीत का चयन भी इस विषय के विशेषज्ञों द्वारा ही निर्धारित कराना चाहिए । एक ही वाद्य व समयानुकूल राग का चयन किया जाना चाहिए । यह श्रवण आरम्भ में पाँच से दस मिनट तक ही किया जाय । क्रमशः अभ्यास के साथ बढ़ाया जा सकता है । इस विषय पर विभिन्न स्तर के व्यक्तियों के लिए धुनों का चयन कर संगीत कैसेट बनाने का कार्य शान्ति कुँज द्वारा सम्पन्न हो रहा है ।

(९) प्रायश्चित

व्यभिचार, छल, धन, अपहरण जैसे दुष्कर्मों से भी प्राण शक्ति क्षीण होती है और प्रतिभा का अनुपात घट जाता है । इसके लिए दुष्कर्मों के अनुरूप प्रायश्चित किया जाय । क्रिश्चियन धर्म में कनफेशन की बड़ी महत्ता बतायी गई है । दुष्कर्मों की भरपायी कर सकने जैसे कोई सत्कर्म किए जायें । चान्द्रायण जैसे व्रत उपवास भी उस भार को उतारने में सहायक होते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । कौन किन दोषों के बदले क्या प्रायश्चित करे, इसके लिए गुरु सत्ता जैसे विशेषज्ञों से अपनी पूरी बात कहकर परामर्श कर लेना चाहिए । इससे काफी हल्कापन आ जाता है व आगे कुछ नया करने की दिशा मिलती है । प्रायश्चित धुलाई की मनोवैज्ञानिक आवश्यकता पूरी करता है । प्रतिभा सम्वर्धन हेतु अन्तरंग की धुलाई उतनी ही जरूरी भी है ।

(१०) अंकुरों का कल्क एवं वनौषधि सेवन

अन्न धान्यों और जड़ी-बूटी, वनस्पतियों के अपने प्रभाव हैं । वे जब अंकुर स्थिति में फूटते हैं तब उनमें अभिनव एवं अतिरिक्त गुण होता है । जो अपनी आवश्यकता के अनुकूल निर्धारित हो, उसके सात गमले एक-एक दिन के अन्तर से लगाये जायें । सातवें दिन अंकुरों को पीसकर कल्क बनाकर तीन माशे व पानी एक तोला लेकर छानलें व प्रातःकाल खाली पेट मधु या उचित अनुपान के साथ लें । ये टॉनिक तेजस् की अभिवृद्धि, मेधावृद्धि जीवनी शक्ति सम्वर्धन में सहायक होते हैं । अंकुरित ने मिलने पर सूखे चूर्णों का भी कल्क बनाकर ग्रहण किया जा सकता है । निर्धारण विशेषज्ञ करते हैं । किन्हीं स्थितियों में वाष्पीभूत रूप में अग्निहोत्र प्रक्रिया से नासिका मार्ग द्वारा ग्रहण किए जाने का भी प्रावधान है ।

यहाँ संक्षेप में प्रतिभा सम्वर्धन के निर्धारित दस उपचारों की चर्चा की गई है । विस्तार से इन्हें अगले अंकों में व प्रत्यक्ष शान्ति कुँज आने पर समझाया जाता रहेगा ।

अदृश्य जगत की सम्पर्क साधना

जिस प्रकार मनुष्य चेतना और पदार्थ सम्पदा का समन्वित पिण्ड है । ठीक उसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड भी विराट् पुरुष का सुविस्तृत शरीर है । उसमें भी स्तर के अनुरूप असीम पदार्थ और अनन्त चेतन भरा पड़ा है । दोनों की मिली भगत से यह सृष्टि व्यवस्था चल रही है । उत्पादन, परिपोषण और परिवर्तन की त्रिविधि कार्य पद्धति अपनाये हुए सृष्टा का यह स्थूल शरीर पदार्थ समुच्चय अपने हिस्से का काम पूरा करने में निरत है । सृष्टा का सूक्ष्म शरीर वह है जिसमें स्थूल जगत की प्रत्यक्ष घटनाओं के लिए उत्तरदायी अदृश्य क्रिया-प्रक्रिया बनती बिगड़ती रहती है । उसे परोक्ष वातावरण भी कह सकते हैं । इसी के अनुरूप संसार की अनेकानेक परिस्थितियाँ बनती और घटनाएँ घटित होती रहती हैं । सूक्ष्म जगत में भूत और भविष्य के सभी प्रवाह विद्यमान हैं जिन्हें समझ सकने पर इस अविज्ञात की जानकारी मिल सकती है कि भूतकाल में क्या घटित हुआ था और भविष्य में क्या होने जा रहा है ?

वर्षा, आँधी, तूफान, हिमपात मौसम आदि की पूर्व जानकारी लक्षणों को देखते हुए अनुमान की पकड़ में आ जाती है । इसी प्रकार अदृश्य जगत में चल रही सचेतन हलचलों को देखते हुए भविष्य की सम्भावनाओं का, भूतकाल की घटनाओं का और वर्तमान की परिस्थितियों का पूर्वाभास प्राप्त किया जा सकता है । सामान्यतः मनुष्य की समझ अपने क्रिया-कलाप का निर्धारण करने में ही काम आती है, उसे परिस्थितियों की पृष्ठभूमि तथा सम्भावना के सम्बन्ध में कोई बात अलग से जानकारी नहीं होती । सूक्ष्म जगत से सम्पर्क साध सकना यदि सम्भव हो सके तो अँधेरी गलियों में भटकते रहने की अपेक्षा सुनिश्चित प्रकाश का अवलम्बन मिल सकता है । यह स्थिति जिन्हें भी प्राप्त होगी वे सम्भावनाओं को समझते हुए स्वयं उपयुक्त कदम उठायेंगे और दूसरों को अवसर के अनुरूप सतर्क रहने का मार्ग दर्शन करेंगे ।

अदृश्य जगत अपने आपका एक परिपूर्ण संस्कार है । मनुष्यों की अपनी दुनिया समाज व्यवस्था, रीति-नीति एवं जीवनचर्या है । इसी प्रकार जलचरों की, कृमि कीटकों की, वन्य पशुओं की, पक्षियों की, धूलि में पाये जाने वाले जीवाणुओं की, वायरस बैक्टीरियाओं की अपनी-अपनी दुनिया है । उनकी समस्याएँ, सुविधाएँ, आवश्यकताएँ, कठिनाइयाँ, इच्छाएँ, मनुष्यों की दुनिया में सर्वथा भिन्न ही समझी जा सकती है । पड़ोस में रहते हुए भी यह अनोखे संसार एक दूसरे की परिस्थितियों में प्रायः अपरिचित ही रहते हैं । पालतू पशुओं, पक्षियों और मनुष्यों के बीच उदर पोषण जितना ही सम्बन्ध रहता है शेष का तो किसी से किसी प्रकार का आदान-प्रदान भी नहीं चलता और न कोई एक दूसरे के लिए विशेष सहयोगी ही सिद्ध होता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ठीक इसी प्रकार अदृश्य लोक में सूक्ष्म जीवधारियों की एक अनौखी दुनिया है । शरीर छोड़ने के उपरान्त नया जन्म मिलने की स्थिति आने तक मनुष्यों को उसी क्षेत्र में रहना पड़ता है । भूत-प्रेतों की, देवी-देवताओं की, लोक-लोकान्तरों की, स्वर्ग नरक की चर्चा प्रायः होती ही रहती है । ऐसे प्रमाण उदाहरण आये दिन मिलते रहते हैं जिनसे दिवंगत आत्माओं के सूक्ष्म शरीर धारण किए हुए दिन गुजारने और यदा-कदा मनुष्यों के साथ सहयोग या विग्रह करने की जानकारियाँ मिलती हैं । मनुष्यों की तरह ही उनकी भी एक दुनिया है । चूँकि वे सभी मनुष्य शरीर को छोड़कर ही उस क्षेत्र में पहुँचे हैं, इसलिए स्वभावतः इस संसार के साथ सम्पर्क साधने की इच्छा होती होगी । कठिनाई एक ही है कि जीवित या दिवंगत आत्माओं में से किसी को भी यह अनुभव नहीं है कि पारस्परिक सम्पर्क साधना और आदान-प्रदान का सिलसिला चलाना किस प्रकार सम्भव हो सकता है । प्रयत्न में सफलता न मिलने पर कई प्रेतात्माएँ अनगढ़ उपाय करती हैं मूलतः मनुष्य इस अनुभूति से भयभीत एवं आतंकित होते हैं, जबकि उनमें से कितने ही प्रियजनों के साथ स्नेह, सौजन्य एवं सहयोग का सिलसिला चल सकता है । एक देश दूसरे देश की, एक समाज दूसरे समाज की, एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति के स्नेह सहयोग में बँध जाने पर उपयोगी परिणाम उपलब्ध करते हैं फिर कोई कारण नहीं कि कुछ समय पूर्व के अपने ही जैसे मनुष्यों की इसलिए उपेक्षा करे कि शरीर खो बैठे और सूक्ष्म शरीर में, अन्तरिक्ष में निवास कर रहे हैं । आत्मिकी में वह सामर्थ्य है कि वह इन दोनों लोगों के बीच भावनात्मक एवं क्रियात्मक सहयोग का द्वार खोल सके ।

क्रुद्ध, विक्षुब्ध, रुग्ण, व्यथित पीड़ितों को सहकार देने वाली उदार मानवी करुणा विपन्न स्थिति में पड़े हुए प्रेतात्माओं की—विशेषतया सहायता की आशा, अपेक्षा करने वाले दिवंगत सम्बन्धियों की सहायता करना तो सरलतापूर्वक सम्भव हो सकता है । दूसरों को हानि पहुँचाने में निरत क्रुद्ध आत्माओं को सान्त्वना देकर उनके आक्रोश प्रतिशोध से कष्ट उठाने वालों को राहत दिलाई जा सकती है । प्रेत क्रुद्ध असन्तुष्ट दुर्गतिग्रस्त आत्माओं को कहते हैं और पितर वे हैं जो श्रेष्ठ समुन्नत जीवन जीते रहे हैं । वे जीवन काल की तरह मरणोत्तर स्थिति में पहुँचने की तरह किसी के आने, किसी को सहायता पहुँचाने और परिस्थितियाँ अच्छी बनाने में योगदान करना चाहते हैं । ऐसी आत्माओं की सहायता से कितनों ने ही कितने ही प्रकार के महत्त्वपूर्ण अनुदान प्राप्त किए हैं । यह प्रकरण ऐसा है जिसे आत्मिकी के आधार पर अधिक अच्छी तरह, अधिक व्यापक एवं योजनाबद्ध प्रयोजनों के लिए खोला जा सकता है । निश्चय ही इस प्रक्रिया में दोनों ही पक्षों को लाभ मिलेगा और सन्तोष होगा ।

अदृश्य जगत के सूक्ष्म शरीरधारी आत्माओं के साथ सम्बन्ध साधने, आदान-प्रदान का द्वारा खोलने से मनुष्य का अपना दायरा और कार्य-क्षेत्र बढ़ेगा । आधार रहित सम्पर्क ही डरावने परिणाम प्रस्तुत करते हैं—अन्यथा साँप, शेर, रीछ, बन्दर तक पालतू बनने पर दोनों पक्षों के लिए ही उसका सत्परिणाम मिलता है । अदृश्य आत्माएँ किसी आधार संहिता के आधार पर मनुष्य जगत के साथ सम्पर्क सधे तो दो लोकों के बीच महत्त्वपूर्ण प्रत्यावर्तन चल पड़ेगा और मृतकों एवं जाग्रतों के बीच नाम मात्र का अन्तर रह जायेगा । विगत के अनुभवों का लाभ उठाने से मनुष्य और पुराने स्नेह सम्पर्क के जीवित रहने पर दिवंगत आत्माएँ अपने-अपने लिए एक उत्साहवर्धक आधार बनने की प्रसन्नता अनुभव करेंगे । प्राचीनकाल में मृतकों और जीवितों के बीच ऐसा ही उपयोगी प्रत्यावर्तन चलता था । श्रद्धा परम्परा में इस क्रिया के बीजांकुर मौजूद हैं ।

ब्रह्माण्डीय चेतना-समष्टि प्राण-परब्रह्म का विशाल भण्डार इस निखिल विस्तार के कण-कण में सव्याप्त है । उसमें से हर मनुष्य इतना ही अंश प्राप्त कर सकता है जितनी कि उसकी अवधारण क्षमता है । समझा जा सकता है कि हर मनुष्य में पन्द्रह वाट का बल्ब लगा है, यदि उसे हटाकर सौ वाट का लगा दिया जाय तो उसी अनुपात में उसे करेन्ट मिलने लगेगा । प्लग के माध्यम से जिस भी यन्त्र को भेजा जाता है वह चल पड़ता है । करेन्ट बनाने वाले तार और उपकरण का सिलसिला टूट जाने पर गतिशीलता एवं उपयोगिता समाप्त हो जाती है । ठीक इसी प्रकार क्षिप्र-चेतना विराट् ब्रह्म के साथ सम्पर्क जुड़ने पर सामान्य स्तर के मनुष्य भी असामान्य बनते देखे गए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हैं । महापुरुष तो व्यवहार जीवन में परब्रह्म की पवित्रता, प्रखरता, उदारता के माध्यम से अपने जीवनक्रम में प्रतिष्ठित करते और अपनी क्षमता असाधारण रूप से बढ़ा लेते हैं । यह चेतन-अचेतन का पक्ष हुआ । इसमें ऊँची भूमिका ऋषि कल्प योगी तपस्वियों की है । वे अपना उच्च चेतन अन्तःकरण परिष्कृत करते-करते इस स्तर तक पहुँचा देते हैं, जिसमें परब्रह्म का तेजस् अधिक मात्रा में अवतरित हो सके । इस मार्ग पर चलते हुए मनुष्य में देवत्व का उदय सम्भव हो जाता है । तपस्वी ऋषि और मनस्वी मुनि मनुष्य शरीर में रहते हुए भी अपनी विशिष्टता इतनी बढ़ा लेते हैं कि उन्हें धरती के देवता भूसुर कहने में कोई अत्युक्ति न रहे । वे ही जरूरत मंदों की, आत्मोकर्ष की दिशा में आगे बढ़ने वालों की सहायता किया करते हैं और अपने प्राण चेतना का एक अंश देकर उनको गन्तव्य की ओर अग्रेषित करते हैं ।

वर्षा सर्वत्र एक जैसी होने पर भी छोटे गड्ढे में थोड़ा और बड़ें तालाब, सरोवर में उनकी गहराई-चौड़ाई के अनुरूप अधिक पानी जमा होता है । इसमें वर्षा का अनुग्रह नहीं गड्ढे की पात्रता का चमत्कार है । परब्रह्म का अनुग्रह हर किसी को समान रूप से उपलब्ध है । न उसका किसी से राग है न द्वेष । न उस पर प्रशंसा का प्रभाव पड़ता है न निन्दा का । निष्पक्ष न्यायाधीश की तरह उसकी व्यवस्था चलती है । अनुशासन का पालन करने और उच्छृंखलता बरतने वाले उसी तरह दण्ड पुरस्कार पाते रहते हैं, जिस प्रकार आग या बिजली का सदुपयोग, दुरुपयोग करने वालों के सामने आता रहता है । अन्तःकरण को परिष्कृत करके परब्रह्म का अधिक अनुपात अपने में धारण करना और उसके बल पर अपनी विशिष्टता विकसित कर सकना किस प्रकार शक्य हो सकता है, यह आत्मिकी का विषय है जो उसे जानते अपनाते हैं, वे उसका सत्परिणाम भी हाथों हाथ उपलब्ध करते हैं ।

पेड़ों की आकर्षण शक्ति बादलों को बरसने के लिए विवश करती है । आँख की पुतली सही होने पर प्रकाश का और कान की झिल्ली ठीक रहने पर ध्वनि का लाभ मिलता है । सदाशयता को उलटकर सद्भावना, सहायता और प्रशंसा मिलती है । ठीक इसी प्रकार व्यक्ति द्वारा अन्तःक्षेत्र की पवित्रता, प्रखरता बढ़ाने के प्रयत्न उसे एक ऐसा चुम्बकीय पिण्ड बना देते हैं जिससे वह दृश्य जगत में सद्भावना तथा अदृश्य जगत में दिव्य अनुकम्पा अभीष्ट परिमाण में उपलब्ध करता रहे । आत्मोत्कर्ष ही साधना का एक मात्र प्रयोजन है ।

प्रकृति को खोजने के लिए जिस स्तर के पुरुषार्थ हुए हैं उसी निष्ठा और तत्परता के साथ अब मानवी सत्ता के अन्तराल में सन्निहित विशिष्टताओं को खोजने, उगाने और कुशलतापूर्वक प्रयत्न करने का मार्ग प्राप्त किया जाना चाहिए । ब्रह्माण्डव्यापी पदार्थ सत्ता का वैभव आश्चयजनक है । उसी में से पृथ्वी अपने काम का मसाला उत्तरी ध्रुव के मुख माध्यम से खींचती और चूसने के बाद जो ठूँठ बचती है उस कूड़े-करकट को दक्षिणी ध्रुव के छिद्र से अन्तरिक्ष में धकेलती रहती है । इसी रीति-नीति के सहारे पृथ्वी अपनी दरिद्रता को घटाती और सम्पन्नता को बढ़ाती रहती है । अब इसी स्तर के एक चिर पुरातन, चिर नवीन क्षेत्र में प्रवेश करने की आवश्यकता है । समष्टि प्रभाव का चेतनात्मक समुच्चय अपने ढंग का एक भूलोक है । उसकी दरिद्रता मिटाने के लिए विराट् ब्रह्म का द्वार खटखटाया जा सकता है और समष्टिगत उच्च चेतन को विकसित कर उसे उतना ही क्षमता सम्पन्न बनाया जा सकता है जितना कि धरती का उत्तरी ध्रुव । पृथ्वी अन्तर्ग्रही क्षमताओं को खींचने और सोखने के कारण ही इतनी समृद्ध बनी है । यही विशेषता समष्टि मन को आध्यात्म परायण बनाकर चेतना जगत के लिए भी उपलब्ध हो सकती है । अभावों की पूर्ति मानवी प्रयत्नों से न हो सके, उतना उच्चस्तरीय उपार्जन बन पड़े तो विराट् चेतन से वैसा सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है ।

दृश्य-लोक कितना ही महत्त्वपूर्ण क्यों न हो, अदृश्य लोक की विशिष्टता के साथ उसकी तुलना नहीं हो सकती । सम्पदा की आवश्यकता से इन्कार नहीं किया जा सकता, किन्तु उत्कृष्टता का भी तो कोई मूल्य है । दृश्य-जगत का पुरुषार्थ आवश्यक होते हुए भी पर्याप्त नहीं है । एकाकी पूर्णता तभी पूरी हो सकेगी, जब चेतनात्मक विभूतियों का उपार्जन, संचय एवं अभिवर्धन बन पड़े । यह केवल अपने ही बलबूते सम्भव नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हो पाती । इसके लिए समर्थों की, दिव्य महापुरुषों की सहायता भी अपेक्षित है ।

सौभाग्य से नैष्ठिक साधकों के लिए, यह प्रबन्ध कर रखा गया है कि उन्हें किन्हीं दिव्य महापुरुषों के व्यक्तिगत प्राण-प्रवाह का लाभ मिलता रहे । जिस प्रकार रेडियो ब्रॉडकास्टों का समय निर्धारित होता है, उसी प्रकार उच्चस्तरीय उपासना में संलग्न साधकों को आवश्यक आध्यात्मिक प्रेरणा-प्रवाह उपलब्ध होते रहने के लिए एक विशेष व्यवस्था क्रम चल रहा है ।

गायत्री साधना के नैष्ठिक उपासकों को उनकी स्वयं की साधना के अतिरिक्त दिव्य सहायता भी मिलती रहे इसी उद्देश्य से शक्ति-संचार की विशेष साधन-व्यवस्था की गई है । पिता, जैसे अपने पुत्र को केवल शिक्षा ही नहीं दिया करता वरन् अपनी कमाई में से खर करके बच्चे का पालन-पोषण करने के लिए कुछ खर्च करने में भी पीछे नहीं रहता, उसी प्रकार सामर्थ्यवान आध्यात्मिक मार्ग-दर्शक अपने शिष्यों को साधनाक्रम की शिक्षा देने के अतिरिक्त उस मार्ग पर चलने के लिए आवश्यक आत्म-बल भी अपनी संचित सम्पत्ति में से काटकर दिया करते हैं । सौभाग्य से हम लोगों को वह सुविधा प्राप्त है, जिनकी प्रेरणा से शक्ति-संचार साधना का यह कार्यक्रम चल रहा है वे इस मार्ग पर चलने वाले नैष्ठिक उपासकों को आवश्यक शक्ति भी प्रदान करते हैं और करते रहेंगे । इसी व्यवस्था को हम 'शक्ति-संचार साधना' के नाम से पुकारते हैं ।

प्राण-संचार की शक्तिदायी साधना

अखिल आकाश में संव्याप्त प्राणतत्व को कोई भी भावनाशील साधक अपनी श्रद्धा और निष्ठा अनुरूप मात्रा में अपने में धारण कर सकता है और ऐसा भी हो सकता है कि प्राणवान व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को अपने संग्रहीत प्राण में से कुछ अंश देकर उसे अधिक तीव्रगति से आत्मिक प्रगति कर सकने की क्षमता प्रदान करे । गुरु और शिष्य का रिश्ता प्रधानतया इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है । साधारण शिक्षा तो कोई भी अध्यापक या उपदेशक दे सकता है । पुस्तकें पढ़कर भी बहुत-सी जानकारी प्राप्त की जा सकती है । इतनी-सी बात के लिए गुरु की इतनी महिमा नहीं मानी जा सकती जितनी कि शास्त्रों के पन्ने-पन्ने पर भरी पड़ी है ।

आध्यात्म मार्ग पर वास्तविक प्रगति करने के इच्छुक को किसी सत्पात्र मार्ग-दर्शक की तलाश करनी पड़ती है । इसके बिना उसका मार्ग रुका ही पड़ा रहता है । जब साधारण-सी स्कूली शिक्षा में अध्यापक की आवश्यकता रहती है; साइन्स, रसायन, शिल्प, शल्यक्रिया, यन्त्र-विद्या आदि सीखने के लिए किन्हीं अनुभवियों का सक्रिय मार्ग-दर्शन आवश्यक होता है तो आत्म-विज्ञान के छात्रों को शिक्षण की आवश्यकता क्यों न होगी ? पर खेद की बात यह है कि वैसी सच्ची लगन और श्रद्धा वाले साधक दिखाई नहीं पड़ते, वैसे ही सत्पात्र गुरु भी अलभ्य हैं । उतावले शिष्य और ढोंगी गुरुओं की हर जगह भरमार है, पर उनसे प्रयोजन कुछ सिद्ध नहीं होता । ठोस प्रगति के लिए आधार भी ठोस ही होना चाहिए । जिन्हें सत्पात्र मार्ग-दर्शक मिल गए उनकी आधी मंजिल पार हो गई ऐसा ही समझना चाहिए ।

गुरु अपने शिष्यों को शिक्षा तो देते ही हैं साथ ही अपने तप, पुण्य और प्राण में से भी एक अंश उसे प्रदान करते हैं । जैसे—पिता अपनी कमाई का उत्तराधिकार पुत्र को छोड़ जाता है, वैसे ही गुरु भी अपनी उपार्जित आत्म-सम्पदा का एक बड़ा भाग अपने शिष्यों को प्रदान करता है । इसी कारण गुरु को धर्म-पिता का स्थान दिया जाता है । जिस प्रकार पिता से पुत्र का गोत्र या वंश बनता है उसी प्रकार प्राचीनकाल में गुरु से भी शिष्य का गोत्र बनता था, यही कारण है कि एक ही ऋषि के गोत्र विभिन्न वर्णों में पाये जाते हैं । यदि शिक्षा देना मात्र ही गुरु का काम रहा होता तो कदापि उन्हें इतनी महत्ता प्रदान न की जाती । पिता अपना वीर्य, पोषण स्नेह और उत्तराधिकार देकर ही पुत्र की श्रद्धा का भाजन बन पाता है । धर्म-पिता गुरु को इससे भी अधिक देना पड़ता है । वह अपनी आत्मा को शिष्य की आत्मा में और अपने प्राण को शिष्य के प्राण में ओत-प्रोत करता है । केवल साधना का मार्ग ही नहीं बताता वरन् आवश्यक शक्ति भी प्रदान करता है जिसके बल पर वह आत्मोन्नति के कठिन मार्ग पर सफलता पूर्वक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अग्रसर हो सके । जिन्हें इस प्रकार की सहायता से वंचित रहना पड़ा उनमें से कोई विरले ही साधक सफलता प्राप्त कर सके अन्यथा आधार दृढ़ होते हुए भी उन्हें बीच में ही लड़खड़ा जाना पड़ा ।

योग शास्त्रों में शक्तिपात की चर्चा बहुत है । समर्थ गुरु शक्तिपात के द्वारा अपने शिष्यों को स्वल्प काल में आशाजनक सामर्थ्य प्रदान कर देते हैं । सिद्धि योगी तोतापुरी जी महाराज ने श्रीराम कृष्ण परमहंस को शक्तिपात करके थोड़े ही समय में समाधि अवस्था तक पहुँचा दिया था । श्री परमहंस जी ने अपने शिष्य विवेकानन्द को शक्तिपात द्वारा ही आत्मसाक्षात्कार कराया था और वे क्षण भर में नास्तिक से आस्तिक बन गए थे । योगी मछीन्द्रनाथ ने गुरु गोरखनाथ को अपनी व्यक्तिगत शक्ति देकर ही स्वल्प काल में उच्चकोटि का योगी बना दिया था । योग और आध्यात्ममार्ग में ऐसे अगणित उदाहरण मौजूद हैं जिनमें समर्थ गुरुओं के अनुग्रह से सत्पात्र शिष्यों ने बहुत कुछ पाया है ।

शिष्यों द्वारा सेवा के अनेकों कष्टसाध्य उदाहरण धर्म पुराणों से भरे पड़े हैं । इस प्रक्रिया के पीछे एक बहुत बड़ा रहस्य छिपा पड़ा है । शिष्य की श्रद्धा, कर्तृव्य बुद्धि, कष्ट सहिष्णुता, उदारता एवं धैर्य की परीक्षा इससे हो जाती है और पात्र-कुपात्र का पता चल जाता है । जब धन दान के लिए सत्पात्र वाचक तलाश किए जाते हैं तो प्राण-दान जैसा महान दान कुपात्रों को क्यों दिया जाय ? सत्पात्र ही किसी महत्त्वपूर्ण वस्तु का सदुपयोग कर सकते हैं । कुपात्र उच्च तत्वों का न तो महत्त्व समझते हैं और न उन्हें ग्रहण करने में समुचित रुचि ही लेते हैं । ठेल ठाल कर कोई कुछ दे भी दे तो उसका स्वल्पकाल में ही अपव्यय कर डालते हैं, इसलिए आध्यात्म क्षेत्र में प्रगति करने के लिए जहाँ समर्थ गुरु की नितान्त आवश्यकता रहती है, वहाँ शिष्य की श्रद्धा एवं सत्पात्रता भी अभीष्ट है । दोनों ही पक्ष स्वस्थ हों तो प्रगति पथ की एक बहुत बड़ी समस्या हल हो जाती है ।

अच्छी जमीन में भी पौधे तब उगते और बढ़ते है जब बीज, खाद और पानी की बाहर से व्यवस्था की जाती है । गुरु का कर्तृव्य बीज, खाद और पानी की समुचित व्यवस्था करके शिष्य की मनोभूमि को हरी-भरी बनाना होता है । माली जो प्रयत्न अपने बगीचे को हरा भरा बनाने के लिए करता है, वही कार्य एक कर्तृव्यनिष्ठ गुरु को भी अपने शिष्यों के लिए करना पड़ता है । आज गुरु शिष्य परम्परा एक विडम्बना मात्र रह गई है । लकीर पीटने की तरह जहाँ-तहाँ शिष्य-गुरु के अत्यन्त दुर्बल आधार पर टिकी हुई परम्परा चिन्ह पूजा जैसी दिखाई पड़ती है, पर पात्रता के अभाव में उसका परिणाम कुछ भी नहीं निकलता और एक व्यर्थ की सी चीज बनकर रह जाती है । सत्पात्र शिष्य समर्थ गुरु की सहायता से जो लाभ उठा सकते हैं वैसा आज कितनों को मिलता है ? कितना मिलता है ?

गाय अपना दूध बछड़ों के लिए निचोड़ देती है, उसी प्रकार गुरु भी शिष्य की श्रद्धा से द्रवित होकर अपना संग्रहीत प्राण उसके लिए निचोड़ देता है । गुरु शिष्य का पास-पास रहना इस दृष्टि से आवश्यक माना गया है । प्राचीनकाल में साधारण ब्रह्मचारी गुरुकुलों में रहकर विद्याध्ययन करते थे और साथ ही गुरु का स्नेह एवं प्राण तत्व निरन्तर उपलब्ध करते रहकर अपनी आत्मा को सब प्रकार परिपुष्ट बनाते थे । समीपता का प्रभाव पड़ता ही है । प्रबल व्यक्तित्व और श्रेष्ठ वातावरण के सान्निध्य में रहने मात्र से जितना लाभ होता है, उतना अस्त-व्यस्त स्थिति में रहने वाला व्यक्ति बहुत साधन, अध्ययन और प्रयत्न करने पर भी प्राप्त नहीं कर सकता ।

क्षण भर में अपनी सारी शक्ति शिष्य को प्रदान कर देने वाले सर्व मेध यज्ञ जैसे शक्तिपात कहीं-कहीं ही और कभी-कभी ही होते हैं । उसके लिए विशेष भूमिका वाले गुरुओं की और वैसे ही उच्च स्तर के शिष्यों की आवश्यकता होती है, वह कठिन है । वैसे सौभाग्य पूर्ण सुअवसर किन्हीं विरलों को ही मिलते हैं, पर क्रमिक शक्तिपात उतना कठिन नहीं है । गुरु-शिष्य के बीच में यदि सच्ची आत्मीयता और श्रद्धा हो, दोनों प्रयत्न करें तो विकसित प्राण वाले गुरु की शक्ति एक नियत गति से स्वल्प प्राण वाले शिष्य की आत्मा में संचरित होती रह सकती है । अधिक जल वाले तालाब का पानी पास के कम पानी वाले तालाब में एक छोटी नाली खोदकर पहुँचाया जा सकता है । सद्गुरु भी अपनी आत्मा के प्रकाश से शिष्य का अन्तःकरण प्रकाशित कर सकते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह आवश्यक नहीं कि प्राण-संचार पास-पास रहने पर ही हो, दूरस्थ व्यक्ति भी परस्पर एक दूसरे में प्राण-प्रवाह संचारित कर सकते हैं । मादा कछुआ अपने अण्डे बालू में देती है और अपनी संकल्प-शक्ति प्रेषित करके उन्हें पकाती रहती है । यदि किसी कारणवश वह मादा कछुआ मर जाय तो फिर अण्डे भी सड़ जाते हैं, उनमें से बच्चे नहीं निकल सकते । कछुए की भाँति प्राण-शक्ति सम्पन्न गुरु भी अपने दूरस्थ शिष्यों में शक्ति संचार कर सकता है ।

प्राण-संचालन विद्या के आधार पर दूरस्थ रोगियों की चिकित्सा की जा सकती है और किन्हीं के कुविचारों को हटाकर उनके स्थान पर सद्भावनाओं की स्थापना की जा सकती है । प्राण-संचालन के माध्यम से रेडियो ब्रॉडकास्ट की तरह एक आत्मा की शक्ति दूसरी आत्मा तक पहुँच सकती है । मूलबन्ध, भस्त्रिका प्राणायाम और शांभवी मुद्रा की घर्षण क्रिया से उदान प्राण को क्षुभित किया जाता है और जब वह उत्तेजित होकर लोम विलोम गति से संचरण करने लगे तो सूर्य-चक्र में आबद्ध कर लिया जाता है । यहाँ से उस प्राण को किन्हीं व्यक्तियों के लिए रेडियो ब्रॉडकास्ट की तरह ईथर तत्व के माध्यम से प्रेषित किया जा सकता है । जिसके लिए यह प्राण-प्रेषण किया जाय वह नियत निर्धारित समय ध्यान मग्न होकर बैठता है और उस प्रेषित शक्ति का आवाहन एवं अवधारण करता रहता है । इस प्रकार प्राण-संचार की क्रमिक शक्तिपात विधि-व्यवस्था द्वारा दूरस्थ व्यक्ति भी किसी प्राणवान मार्ग-दर्शक का ओजस् अपने लिए प्राप्त कर सकते हैं ।

इस प्रकार प्राण-संचार का अनुभव शिष्य को प्रत्यक्ष जैसा ही होता है । अपने चारों ओर से उसे पीत आभा वाला, शुभ्र वर्ण, भाप के बादलों जैसा प्राण-प्रवाह उड़ता दिखाई पड़ता है । धुनी हुई रुई या हल्की बर्फ जैसी कोई वस्तु उसे अपने चारों ओर उफनते हुए दूध के झागों की तरह चलती-फिरती दिखती है । अवधारण करने से वह प्रवाह साधक के इन्द्रिय-छिद्रों तथा रोम कूपों द्वारा प्रवेश करता है । इस प्राण-संचार के साथ ही उसे अपने में अनेकों उच्चकोटि की आध्यात्म भावनाएँ भी प्रविष्ट एवं प्रतिष्ठित होती दिखती हैं । प्राण-संचार का यह क्रमिक शक्तिपात किन्हीं को सुलभ हो सके तो उनका प्राण चेतना के विकसित होने में और भी अधिक सुविधा होती है और लक्ष की प्राप्ति अधिक सफल एवं सुनिश्चित बन जाती है । प्राण-संचार प्रक्रिया द्वारा प्राण-चेतना से स्वयं को अभिपूरित करने के लिए निम्न प्रक्रिया अपनानी पड़ती है—

(१) "प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त होकर पूर्वाभिमुख पालती मारकर बैठिए । दोनों हाथ घुटनों पर रखिए, मेरुदण्ड सीधा रखिए । नेत्र बन्द कर लीजिए । ध्यान कीजिए कि अखिल आकाश में तेज और शक्ति से ओत-प्रोत प्राणतत्व व्याप्त हो रहा है । गर्म भाप के, सूर्य के प्रकाश में चमकते हुए बादलों जैसी शकल के प्राण का उफान हमारे चारों ओर उमड़ता चला आ रहा है और उस प्राण उफान के बीच हम निश्चिन्त, शान्तचित्त एवं प्रसन्न मुद्रा में बैठे हुए हैं ।"

(२) "नासिका के दोनों छिद्रों से धीरे-धीरे साँस खींचना आरम्भ कीजिए और भावना कीजिए कि प्राणतत्व के उफनते हुए बादलों को हम अपनी साँस द्वारा भीतर खींच रहे हैं । जिस प्रकार पक्षी अपने घोंसले में, साँप अपने बिल में प्रवेश करता है, उसी प्रकार वह अपने चारों ओर बिखरा हुआ प्राण-प्रवाह हमारी नासिका द्वारा साँस के साथ शरीर के भीतर प्रवेश करता है और मस्तिष्क, छाती, हृदय, पेट, आँतों से लेकर समस्त अंगों में प्रवेश कर जाता है ।"

(३) "जब साँस पूरी खींच जाय तो उसे भीतर रोकिए और भावना कीजिए कि—"जो प्राणतत्व खींचा गया है उसे हमारे भीतरी अंग-प्रत्यंग सोख रहे हैं । जिस प्रकार मिट्टी पर पानी डाला जाय तो वह उसे सोख जाती है, उसी प्रकार अपने अंग सूखी मिट्टी के समान हैं और जल रूपी इस खींचे हुए प्राण को सोख कर अपने अन्दर सदा के लिए धारण कर रहे हैं । साथ ही प्राणतत्व में सम्मिश्रित चैतन्य, तेज, बल, उत्साह, साहस, धैर्य, पराक्रम सरीखे अनेक तत्व हमारे अंग-प्रत्यंग में स्थिर हो रहे हैं ।"

(४) "जितनी देर साँस आसानी से रोकी जा सके उतनी देर रोकने के बाद धीरे-धीरे साँस बाहर निकालिए, साथ ही भावना कीजिए कि प्राणायाम का सारतत्व हमारे अंग-प्रत्यंगों के द्वारा खींच लिए जाने के बाद अब वैसी ही निकम्मा वायु बाहर निकाला जा रहा है जैसा कि मक्खन निकाल लेने के बाद निस्सार दूध हटा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया जाता है । शरीर और मन में जो विकार थे वे सब इस निकलती हुई साँस के साथ घुल गए हैं और काले धुएँ के समान अनेक दूषणों को लेकर वह बाहर निकल रहे हैं ।"

(५) "पूरी साँस बाहर निकल जाने के बाद कुछ देर बाहर साँस रोकिए अर्थात् बिना साँस के रहिए और भावना कीजिए कि अन्दर के जो दोष बाहर निकाले गए थे उनको वापिस न लौटने देने की दृष्टि से दरवाजा बन्द कर दिया गया है और वे बहिष्कृत होकर हमसे बहुत दूर उड़े जा रहे हैं ।"

"इस प्रकार पाँच अंगों में विभाजित इस प्राण-संचार प्रक्रिया को नित्य प्रातःकाल करना चाहिए । आरम्भ ५ प्राणायामों के किया जाय । अर्थात् उपरोक्त क्रिया पाँच बार दुहराई जाय । इसके बाद हर महीने एक प्राणायाम बढ़ाया जा सकता है । यह प्रक्रिया धीरे-धीरे बढ़ाते हुए एक वर्ष में आधा घण्टा तक पहुँचा देनी चाहिए ।"

उपरोक्त विधान के अनुसार जो भी व्यक्ति साधना करेंगे वे आशातीत सत्परिणाम प्राप्त करेंगे । निरुत्साही और निराश व्यक्ति भी, जिनकी नस नाड़ियाँ शिथिल हो गई हैं आँखें जरा-सा काम करने पर थक जाते हैं, थोड़ी भी कठिनाई में जिनका दिल धड़कने लगता है, चिन्ता और आकांक्षा से जिनका चित्त आतंकित रहा करता है वे भी इस प्रयोग से अपने अन्दर जादू जैसा परिवर्तन अनुभव करने लगेंगे । उन्हें अनुभव होगा कि कोई अतिरिक्त शक्ति उनके शरीर में प्रवेश कर गई है और उसकी सहायता से आत्म-विश्वास एवं आत्मबल दूना हो गया है । काम में मन लगने और आशावादी रहने का एक विशेष परिवर्तन अनुभव होने लगेगा ।

इस विश्व ब्रह्माण्ड में प्राणतत्व जितना बहुमूल्य है उतना ही सुलभ भी । इतनी सुलभ वस्तु जो भावना पूर्वक साँस खींचने मात्र से अपने को उपलब्ध हो सकती है और गुणों की दृष्टि से जो संसार की किसी भी मूल्यवान वस्तु से कम महत्त्व की नहीं है उसकी उपेक्षा किया जाना निश्चय ही दुर्भाग्यपूर्ण है । आध्यात्मिक साधनाएँ समय की बर्बादी नहीं है । भौतिक पुरुषार्थों से प्राप्त होने वाले लाभों की अपेक्षा विधिवत् किए हुए आध्यात्मिक पुरुषार्थों का लाभ निश्चय ही अत्यधिक होता है । प्राणाकर्षण प्राणायाम एक चुनी हुई सरल साधना है जिसका प्राणमय कोश के परिमार्जन में महत्त्वपूर्ण स्थान माना गया है ।

जिन लोगों ने उपरोक्त साधना आरम्भ नहीं की है उनके लिए एक वर्ष तक उपरोक्त साधना करते रहना ही उचित है, किन्तु जो एक वर्ष तक इसे कर चुके उनके लिए साधना का द्वितीय चरण उचित एवं उपयुक्त रहेगा । यह साधना इस प्रकार करनी चाहिए—

(१) किसी शान्त एकान्त स्थान में प्रातःकाल स्थिर चित्त होकर बैठिए । पूर्व की ओर मुख, पालथी मारकर सरल पद्मासन से बैठना, मेरुदण्ड सीधा, नेत्र अध खुले, घुटनों पर दोनों हाथ यह प्राण मुद्रा कहलाती है, इसी पर बैठना चाहिए ।

(२) बाएँ हाथ को मोड़कर तिरछा कीजिए । उसकी हथेली पर दाहिने हाथ की कोहनी रखिए । दाहिना हाथ ऊपर उठाइये । अँगूठा दाहिने नथुने पर और मध्यमा तथा अनामिका उँगलियाँ बाएँ नथुने पर रखिए ।

(३) बाएँ नासिका के छिद्र को मध्यमा (बीच की) ओर अनामिका (तीसरे नम्बर की) उँगली से बन्द कर लीजिए । दाहिने नथुने से धीरे-धीरे साँस खींचना आरम्भ कीजिए । साँस फेफड़े तक ही सीमित न रहे, उसे नाभि तक ले जाना चाहिए और धीरे-धीरे इतनी वायु पेट में ले जानी चाहिए जिससे वह पूरी तरह फूल जाय ।

(४) ध्यान कीजिए कि सूर्य की किरणों जैसा प्राण प्रवाह वायु में सम्मिश्रित होकर दाहिने नासिका छिद्र में अवस्थित पिंगला नाड़ी द्वारा अपने शरीर में प्रवेश कर रहा है और उसकी ऊष्मा अपने भीतरी अंग-प्रत्यंगों को तेजस्वी बना रही है ।

(५) साँस को कुछ देर भीतर रोकिए । दोनों नासिका छिद्र बन्द कर लीजिए और ध्यान कीजिए कि नाभि चक्र में प्राण वायु द्वारा एकत्रित हुआ । तेज नाभि चक्र में एकत्रित हो रहा है । नाभि स्थल में चिरकाल से प्रसुप्त पड़ा हुआ सूर्य चक्र इस आगत प्रकाशवान प्राण वायु से प्रभावित होकर प्रकाशवान् हो रहा है और उसकी चमक बढ़ती जा रही है ।

(६) दाहिने नासिका छिद्र को अँगूठे से बन्द कर लीजिए । बायाँ खोल दीजिए । साँस को धीर-धीरे बाएँ नथुने से बाहर निकालिए और ध्यान कीजिए कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सूर्य चक्र को सुषुप्त और धुंधला बनाये रहने वाले कल्मष इस छोड़ी हुई साँस के साथ बाहर निकल रहे हैं । इन कल्मषों के मिल जाने के कारण साँस खींचते समय जो शुभ वर्ण तेजस्वी प्रकाश भीतर गया था वह अब मलीन हो गया और पीतवर्ण होकर साँस के साथ बाएँ नथुने की इड़ा नाड़ी द्वारा बाहर निकल रहा है ।

(७) दोनों नथुने फिर बन्द कर लीजिए । फेफड़ों को बिना साँस के खाली रखिए । ध्यान कीजिए कि बाहरी प्राण बाहर रोक दिया गया है । उसका दबाव भीतर प्राण पर बिल्कुल भी न रहने से वह हल्का हो गया है । नाभिचक्र में जितना प्राण सूर्य पिण्ड की तरह एकत्रित था वह तेज-पुंज की तरह ऊपर की ओर अग्नि शिखाओं की तरह ऊपर उठ रहा है । उसकी लपटें पेट के उर्ध्व भाग, फुफ्फुस को बेधती हुई कंठ तक पहुँच रही हैं । भीतरी अवयवों में सुषुम्ना नाड़ी में से प्रस्फुटित हुआ यह प्राण-तेज अन्तःप्रदेश को प्रकाशमान बना रहा है ।

(८) अँगूठे से दाहिना छिद्र बन्द कीजिए और बाएँ नथुने से साँस खींचते हुए ध्यान कीजिए कि इडा नाड़ी द्वारा सूर्य प्रकाश जैसा प्राणतत्व साँस से मिलकर शरीर में भीतर प्रवेश कर रहा है और वह तेज सुषुम्ना विनिर्मित नाभिस्थल के सूर्यचक्र में प्रवेश करके वहाँ अपना भण्डार जमाकर कर रहा है । इस तेज संचय से सूर्य चक्र क्रमशः अधिक तेजस्वी बनता चला जा रहा है ।

(९) दोनों नासिका छिद्रों को बन्द कर लीजिए । साँस को भीतर रोकिए । ध्यान कीजिए कि साँस के साथ एकत्रित किया हुआ तेजस्वी प्राण नाभि स्थित सूर्यचक्र में अपनी तेजस्विता को चिरस्थायी बना रहा है । तेजस्विता निरन्तर बढ़ रही है और वह अपनी लपटें पुनः ऊपर की ओर अग्निशिखा की तरह ऊर्ध्वगामी बना रही है । इस तेज से सुषुम्ना नाड़ी निरन्तर परिपुष्ट हो रही है ।

(१०) बायाँ नथुना बन्द कीजिए और दाहिने से साँस धीरे-धीरे बाहर निकालिए । ध्यान कीजिए कि सूर्यचक्र का कल्मष धुएँ की तरह तेजस्वी साँस में मिलकर उसे धुंधला पीला बना रहा है और पीली प्राण-वायु पिंगला नाड़ी द्वारा बाहर निकल रही है । भीतरी कषाय-कल्मष बाहर निकलने से अन्तःकरण बहुत हल्का हो रहा है ।

(११) दोनों नासिका छिद्रों को पुनः बन्द कीजिए और उपरोक्त नं. ६ की तरह फेफड़ों को साँस से बिल्कुल खाली रखिए । नाभिचक्र से कंठ तक सुषुम्ना का प्रकाश पुंज ऊपर उठता देखिए । भीतरी अवयवों में एक दिव्य ज्योति जगमगाती अनुभव कीजिए ।

यह एक प्राणायाम हुआ । साँस के साथ कींचा हुआ प्राण नाभि में स्थित सूर्यचक्र को जाग्रत करता है । उसके आलस्य और अन्धकार को बेधता है और वह सूर्यचक्र अपनी परिधि को बेधन करता हुआ सुषुम्ना मार्ग से उदर, छाती और कंठ तक अपना तेज फेंकता है । इन कारणों से इसे सूर्य-बेधन कहते हैं । लोम कहते हैं सीधे को, विलोम कहते हैं उल्टे को । एक बार सीधा, एक बार उल्टा । फिर उल्टा, फिर सीधा । फिर उल्टा, फिर सीधा । बाएँ से खींचना, दाएँ से निकालना । दाहिने से खींचना बाएँ से निकालना । यह उल्टा सीधा चक्र रहने से इसे लोम-विलोम कहते हैं । प्राणायाम की प्रकृति के अनुसार इसे लोम-विलोम सूर्य-बेधन प्राणायाम कहा जाता है । साँस खींचने को पूरक, रोकने को अन्तःकुम्भक, निकालने को रेचक और बाहर साँस रोकने को बाह्य कुम्भक कहते हैं । बाएँ स्वर में चन्द्र धारा एवं इड़ा नाड़ी और दाहिने स्वर में सूर्यधारा एवं पिंगला नाड़ी अवस्थित हैं । दोनों के मिलने के स्थल पर जो प्रकाश पुंज एवं तड़ित प्राण उत्पन्न होता है उसे सुषुम्ना कहते हैं । यह परिभाषा भी हमें स्मरण रखनी चाहिए । एकबार उल्टा, एक बार सीधा । एक बार दाएँ से खींचना बाएँ से निकालना, एक बार बाएँ से खींचकर दाएँ से निकालना, यह दोनों क्रियाएँ मिलने से एक पूर्ण लोम-विलोम सूर्य-बेधन प्राणायाम बनता है । आरम्भ में इन्हें तीन की संख्या से करना चाहिए । फिर हर महीने एक बढ़ाते हुए सात महीनों में इन्हें दस तक पहुँचा देना चाहिए । साँस को छोड़ने निकालने की क्रिया जितनी धीमी रखी जा सके उतनी ही अच्छी है । ध्यान रखिए कि भावना जितनी गहरी होगी उतना ही अधिक सत्परिणाम उत्पन्न होगा ।

प्रकाश पुंज के ज्योति स्फुल्लिंग

गायत्री का देवता सविता है । सविता सूर्य को कहते हैं । प्रथम कक्षा के साधकों को प्रतिमा के आधार पर ध्यान करना पड़ता है, पर उसमें भी सूर्यमण्डल

के मध्य में अवस्थित माता की प्रतिमा होती है । इससे ऊँची कक्षा में सूर्य के समान गोलाकार प्रकाश पुंज ही गायत्री माता का स्वरूप रह जाता है और उसी का ध्यान करते हैं । यह ध्यान करने योग्य प्रकाश पर्याप्त मात्रा में अपने अन्तः प्रदेश में संव्याप्त होता है तो ही यह प्रकाश पुंज का ध्यान ठीक तरह जमता है । इस उद्देश्य की पूर्ति इस सूर्य प्राणायाम से होती है । अपने भीतर बाहर सब कुछ प्रकाशवान दीखता है । तमोगुण रूपी अन्धकार तिरोहित होने लगता है और यदा-कदा आध्यात्मिक चेतनाएँ विभिन्न रंग, रूप के ज्योति स्फुल्लिंगों के रूप में साधकों को परिलक्षित होती रहती हैं । प्रकाश दर्शन की अनुभूतियाँ आशा और उल्लास की प्रतीक मानी जाती हैं ।

प्राण तत्व की एक उपयुक्त मात्रा इस प्राण-संचार साधना से साधकों को उपलब्ध होगी । यह मात्रा थोड़ी होते हुए भी अपनी शारीरिक, मानसिकऋ सांसारिक एवं आध्यात्मिक प्रगति में बहुत सहायक होती है । साधारण गृहस्थों एवं कार्य-व्यस्त व्यक्तियों के उपयुक्त अगले पृष्ठों पर साधना क्रम बताया जा रहा है, जिन्हें अधिक अवकाश है, जिनका समय और मस्तिष्क खाली रहता है वे इन साधनाओं में अधिक तीव्रता उत्पन्न करके अधिक लाभ उठा सकते हैं । प्राण को निग्रहीत करने से मनुष्य मन चाही आयु प्राप्त कर सकता है । भीष्म की तरह शरशय्या पर पड़े हुए भी छः महीने तक मृत्यु को टाल सकता है । इच्छानुसार जब चाहे समाधि लेकर प्राण-त्याग कर सकता है । साधारण जीवन में वह एक शक्ति पुंज बिजली घर के समान सिद्ध होता है जिसकी प्रेरणा से उसका निज का जीवन ही नहीं, सम्बन्धित वातावरण भी सूदूर देशों तक प्रभावित होता है । प्राण की महत्ता असाधारण है और वैसी ही प्राणायाम की भी ।

प्राण-प्रवाह की शक्ति-संचार साधना

अखिल आकाश में संव्याप्त महाप्राण को, भावना तथा श्वास क्रिया के सम्मिश्रित प्रयोग द्वारा खींचना और अपने अन्दर धारण करना प्राणायाम कहलाता है । प्राणायाम नित्यकर्मों में आने से बहुत सरल भी है और उसकी उच्च भूमिकाएँ इतनी ही कठिन एवं महत्त्वपूर्ण भी हैं कि इसी विद्या का गहन अवगाहन करके मनुष्य देवतुल्य सामर्थ्यवान् बन सकता है । यम ने नचिकेता को इसे पंचाग्नि विद्या के नाम से सिखाया था । प्रश्न उपनिषद् में प्राण-विद्या के कुछ तथ्यों पर प्रकाश आता है, इससे प्रतीत होता है कि प्राण-तत्व पर आधिपत्य प्राप्त कर लेने वाला व्यक्ति सामान्य व्यक्ति न रहकर अगणित विभूतियों का अधिपति बन जाता है । ८४ प्रकार के प्राणायामों का योग ग्रन्थों में वर्णन मिलता है । इनमें से जितने सर्व साधारण के लिए सुलभ हैं, उन्हें आगामी नौ वर्षों में बता दिया जायेगा । जो केवल विशिष्ट साधकों के लिए ही उपयुक्त हैं, जिन विधानों में भूल हो जाने से खतरे की आशंका रहती है और जो केवल अनुभवी मार्ग-दर्शकों के सामने ही किए या सीखे जा सकते हैं, उनका वर्णन इन पृष्ठों पर न करेंगे । उन्हें व्यक्तिगत शिक्षण के लिए सुरक्षित रखा जायेगा । कुण्डलिनी जागरण षट्चक्रों का बेधन, प्राण संधान, निर्विकल्प और सविकल्प समाधियाँ यद्यपि बाण-विद्या के अन्तर्गत ही आती हैं फिर भी वह विषय ऐसा जटिल है कि लिखने, छापने और पढ़ने से उसका किया जाना सम्भव नहीं । अधिकार और पात्रत्व बढ़ने पर ही कोई व्यक्ति उन विशिष्ट साधनाओं से लाभ पर उठा सकता है ।

व्यक्ति विद्युत का धारा-प्रवाह

प्राण-तत्व का एक दूसरा प्रयोग भी है जिसे "व्यक्ति विद्युत" कहते हैं । मेस्मेरिज्म के ज्ञाता जिसे पर्सूसनल 'मेग्नेटिज्म' के नाम से कुछ अंश तक जान सके हैं और उसके प्रयोगों की थोड़ी-सी प्रक्रिया काम में लाने लगे हैं, वह व्यक्ति विद्युत के महान विज्ञान का ही एक छोटा आ अंश है, भारतीय योगी इसे शक्ति संचार या शक्तिपात के रूप में प्रयुक्त करते हैं । "मानवीय विद्युत के चमत्कार" नामक हमारी पुस्तक जिन्होंने पढ़ी है वे जानते हैं कि मनुष्य का शरीर और मन अपने भीतर कितनी भारी मात्रा में बिजली धारण किए हुए हैं और उसके किन-किन प्रयोजनों की सिद्धि होती है । प्राण इससे भी उत्कृष्ट कोटि की विद्युत है । कोई प्राणवान् व्यक्ति यदि चाहे तो अपने प्राणबल से दुर्बल प्राण वालों को उसी प्रकार लाभान्वित कर सकता है जैसे कोई धनी व्यक्ति अपने पैसे से निर्धनों का भला कर सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शिक्षा के साथ-साथ शक्ति दान भी

साधना क्षेत्र में गुरु-शिष्य परम्परा से इस शक्ति का आदान-प्रदान होता रहता है । अध्यापक अपने छात्रों को केवल ज्ञान देते हैं, पर गुरु अपने शिष्यों को शिक्षा के साथ-साथ शक्ति का भी एक भाग भी दिया करते हैं । इसीलिए गुरु को धर्म पिता कहा जाता है । शरीर को जन्म देने वाला पिता अपनी सन्तान की शिक्षा-दीक्षा भी करता है और अपनी कमाई हुई सम्पत्ति का एक बड़ा भाग उन पर खर्च भी करता है । गुरुओं को भी ऐसा ही करना पड़ता है । गुरु को धर्म पिता इसीलिए कहते हैं, क्योंकि वह अपने धर्म पुत्रों, शिष्यों को, निःस्वार्थ भाव से अपनी-अपनी उपार्जित तपश्चर्या का एक अंश उपहार में देकर उनको सुखी और समुन्नत बनाने के लिए बहुत कुछ आत्म-त्याग करता रहता है ।

यों अभिवादन का उत्तर आशीर्वाद में देने का एक आम रिवाज है, जिसे हम प्रणाम करेंगे वह गुरुजन कुछ न कुछ मंगल वचन ही उत्तर में कहेंगे, पर वे आशीर्वाद सार्थक किसी-किसी के ही होते हैं । कारण स्पष्ट है, कोई हीन वीर्य पदार्थ फलप्रद नहीं होता । सड़ा, घुना बीज कहा उगता है ? आशीर्वाद के साथ-साथ अपने पुण्य और तप का एक अंश यदि नहीं दिया गया तो उसे शिष्टाचार मात्र ही माना जायेगा और उसका प्रतिफल सुनने वाले को मनोरंजन जितना ही होगा । सामर्थ्यवान गुरु अधिकारी सपात्रों को उनकी श्रद्धा और सत्प्रवृत्तियों से प्रसन्न होकर यदि सच्चा आशीर्वाद देते हैं तो वह सफल ही होते देखा जाता है । कभी-कभी कोई बिरले प्रारब्ध ही ऐसे होते हैं जो भोगने के अतिरिक्त और किसी प्रकार समाप्त नहीं होते । ऐसे कठिन प्रारब्ध भी सच्चे आशीर्दाद से बहुत हल्के होकर आसानी से भुगत लिए जाने योग्य बन जाते हैं । सच्चे आशीर्वादों का महत्त्व सर्व विदित है । इसलिए कोई शुभ कार्य करते समय सत्पुरुषों का आशीर्वाद प्राप्त किया करते हैं और यदि वह मिल जाता है तो मंजिल बहुत सरल हो जाती है ।

दिव्य शक्तियों का उच्च अनुदान

गायत्री उपासना की उच्च स्तरीय साधन शिक्षा प्राप्त करने वाले साधकों के लिए एक विशिष्ट आशीर्वाद का प्रेरणा प्रवाह हम लोगों को उपलब्ध है । शक्ति-संचार साधना के नाम से उसकी जानकारी साधकों को हो चुकी है । प्रत्येक गुरुवार और रविवार को सूर्योदय से ११ घण्टे पूर्व से लेकर आधा घण्टे पूर्व तक के, एक घण्टा समय में कोई उच्च आत्माएँ अपने परिवार के लिए एक प्राण प्रेरणा भेजती हैं, उसे हममें से कोई भी निर्बाध रूप से प्राप्त कर सकता है । सभी साधकों के लिए यह प्रेरणा प्रवाह उपलब्ध है । हिमालयवासी सूक्ष्म शरीरधारी दिव्य आत्माओं का इतना प्रेरणा प्रवाह उपलब्ध है जिससे कि हममें से कोई भी गायत्री की साधना करने वाला उसका लाभ उठा सकता है ।

शक्ति-संचार साधना विधि

(१) गुरुवार या रविवार को प्रातःकाल सूर्य उदय होने से २ घण्टा पूर्व से लेकर, आधा घण्टा पूर्व तक और सायंकाल ६ से १० बजे तक का समय इस साधना के लिए नियत है । प्रातःकाल के १$\frac{१}{२}$ घण्टा और सायंकाल के एक घण्टा, कुल २$\frac{१}{२}$ घण्टा में से अपनी सुविधानुसार शक्ति-संचार साधना के लिए नियत कर लेना चाहिए । इस साधना में स्नान करना अनिवार्य नहीं है । हाथ पैर, मुँह धोकर बैठा जा सकता है ।

(२) पाल्थी मारकर, मेरुदण्ड सीधा रख कर, नेत्रों को अधखुले रखकर ध्यान मुद्रा में बैठिए । दोनों हाथों को घुटनों पर रखिए । उत्तर दिशा में मुँह कीजिए ।

(३) भावना कीजिए कि हिमालय के हिमाच्छादित शिखर से कोई दिव्य शक्ति हमें आशीर्वाद, प्रेरणा और प्रोत्साहन भरा प्राण प्रवाह हमारे लिए भेज रही है और हम उसे श्रद्धापूर्वक अपने अन्तःप्रदेश में धारण कर रहे हैं ।

(४) धारणा कीजिए कि अन्तरिक्ष से एक शुभ्रवर्ण, पीत आभा वाला, भाप के बादलों जैसा प्राण-प्रवाह उमड़ता चला आता है । धुनी हुई रुई या हल्की बरफ जैसी या उफनते हुए दूध के झाग सरीखी एक मृदुल विद्युतधारा अपने चारों ओर फैली हुई है । कुहरे की तरह उसने हमारे सब ओर की परिधि घेर ली है और हम उसके मध्य बैठे हुए आनन्द एवं उल्लास का अनुभव कर रहे हैं ।

(५) ध्यान कीजिए किसी दिव्य चेतना द्वारा प्रेरित यह प्राण अपने सब इन्द्रिय छिद्रों तथा रोम कूपों द्वारा शरीर के भीतर प्रवेश करके अपने अंग-प्रत्यंगों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संव्याप्त हो रहा है । उस प्रवाह के साथ-साथ अपने भीतर उच्च आस्था, श्रेष्ठ श्रद्धा, आशा, उत्साह, कोमलता, दया, विवेक, आनन्द, उल्लास, नीति, धर्म, त्याग, संयम, परमार्थ आदि की उच्च भावनाएँ भी घुली हुई चली आ रही हैं और उन्हें उपलब्ध करके अपना अन्तःकरण महापुरुषों जैसा उदार, महान, दूरदर्शी एवं आदर्शवादी बन रहा है ।

(६) विश्वास कीजिए कि यह प्रवाह ईश्वरीय है—ऋषियों जैसी पवित्रता इसमें ओत-प्रोत है । यह शक्ति अपने भीतर प्रविष्ट होकर परमात्मा का पुण्य प्रकाश अपने भीतर उत्पन्न कर रहा है, आत्मा की परिणति परमात्मा के स्वरूप में होती जाती है । इस दिव्य प्रवाह को प्राप्त कर अपना आत्मा-परमात्मा के अधिकाधिक निकट पहुँचता चला जा रहा है ।

प्रत्येक गुरुवार और रविवार को नियत समय पर आधा घण्टा इन भावनों से ओत-प्रोत रहने का स्वयं प्रयत्न करना और दूसरी ओर से अपने परिवार के लिए विशेष रूप से नियोजित उच्च आत्माओं की प्रेरणा व्यवस्था का स्वर्ण सुयोग प्राप्त करके हम लोग निश्चय ही बहुत लाभ प्राप्त कर सकते हैं । साधारण साधना में केवल उतना ही लाभ होता है जितना अपना पुरुषार्थ रहता है, पर इसमें एक ओर से अपना पुरुषार्थ और दूसरी ओर से उच्च आत्माओं द्वारा प्रेरित पुण्य प्राण-प्रवाह उपलब्ध होने से दूना लाभ होता है और अभीष्ट लक्ष्य में सफलता की आशा अधिक सुनिश्चित बनती जाती है । इस साधना में हमारा भी एक सीमा तक प्रोत्साहन एवं सहयोग सन्निहित है ।

अंग्रेजी महीनों के हिसाब से यह समय इस प्रकार रखा जाना चाहिए । दिसम्बर, जनवरी, फरवरी प्रातः ५½ से ७ तक, मार्च, अप्रैल, मई प्रातः ४½ से ६ तक, जून, जुलाई, अगस्त ४ से ५½ तक, सितम्बर, अक्टूबर, नवम्बर ४½ से ६ तक । रात्रि का समय सदा ही ९ से १० तक रहेगा । प्रातःकाल या सायंकाल में से कोई एक ही समय नियत करना चाहिए ।

हमें स्वयं इस शक्ति संचार साधनाक्रम को चलाते रहने से ही सतत् अपने मार्ग पर अविचल रूप से बढ़ते रहने का बल प्राप्त हुआ है । शक्तिपात में एक साथ विपुल अनुदान का लाभ मिलता है और शक्ति-संचार से धीरे-धीरे किश्तों के रूप में थोड़ा-थोड़ा मिलता रहता है । शक्तिपात को अत्यन्त उच्चकोटि की परिष्कृत आत्माएँ ही पचा सकती हैं, उन्हें ही वह मिलता भी है, किन्तु शक्ति संचार के बारे में ऐसी बात नहीं है । वह मध्यम श्रेणी के लोगों को भी मिल सकता है, और जिनके पास बहुत अधिक आत्मिक सम्पदा नहीं है वे भी दूसरों को अपने कुछ अंश दे सकते हैं । कभी-कभी किन्हीं विशिष्ट साधकों की उस प्रकार की सेवा-सहायता हम स्वयं भी करते रहते हैं और उसका विधान मिलने पर व्यक्तिगत रूप से बना देते हैं ।

शक्ति-संचार प्रक्रिया से आत्म शक्ति का उपार्जन-अभिवर्धन

मनुष्य की बहिरंग सत्ता को कई प्रकार की सामर्थ्यें उपलब्ध हैं । इन शक्तियों में सम्पत्ति, बलिष्ठता, शिक्षा-कौशल, प्रतिभा, अधिकार क्षमता जैसे साधनों की बहुधा गिनती की जाती है और इन्हीं के सहारे बहिरंग जगत में, इस मायावी संसार में सफलता सम्पादित करने की कामना की जाती है । फिर भी प्राप्त सामर्थ्य-वैभव सीमित ही होता है व अस्थिर भी । फिर इन भौतिक सफलताओं के लिए मात्र पुरुषार्थ व साधन ही प्रमुख नहीं, दूसरों की सहायता और परिस्थितियों की अनुकूलता भी देखनी होती है । सहायता न मिले व परिस्थितियाँ प्रतिकूल हों तो साधन, कौशल, प्रतिभा एक ओर, कई बार असफलता का मुँह भी देखता पड़ता है ।

उसके विपरीत मनुष्य की अन्तरंग सत्ता-आत्मसत्ता की सामर्थ्य में न तो सीमा का कोई बन्धन है और न ही स्वल्पता का असन्तोष । उस क्षेत्र में असीम एवं प्रचुर शक्तिस्रोत छिपे पड़े हैं । चूँकि आत्मसत्ता सीधे परमात्मा से जुड़ी है, आवश्यकतानुसार उस मूल स्रोत से चाहे जब बहुत कुछ प्राप्त किया जा सकता है । नदी की धारा में जल तो एक सीमा तक ही होता है, किन्तु हिमालय जैसे विशाल जलस्रोत से तारतम्य जुड़ा होने के कारण सरिता अविच्छिन्न रूप से प्रवाहित ही बनी रहती है, जबकि एक पोखर का, जलाशय का पानी उपयोग कर्त्ताओं के दबाव, धूप-हवा के प्रभाव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को सहन नहीं कर पाता, व जल्दी सूखकर समाप्त हो जाता है । भौतिक स्तर की बहिरंग जगत की सामर्थ्यों की तुलना पोखर के जलाशय के पानी से की जा सकती है और आत्मिक स्तर की, अन्तर्जगत की शक्ति की वर्चस् की उपमा हिमालय से निकलने वाली नदियों के रूपों में समझी जा सकती है ।

यहाँ भौतिक साधनों के लिए किए जाने वाले पुरुषार्थ एवं प्राप्य साधनों की अवमानना नहीं की जा रही है । उन्हें जुटाना व निरन्तर पुरुषार्थरत रहना जरूरी है, किन्तु मूलभूत लक्ष्य मनुष्य का अन्तरंग की वर्चस् की सामर्थ्य को उभारने का हो तो बहिरंग जगत की उपलब्धियाँ भी सार्थक होने लगती हैं । आत्म-शक्ति का उपार्जन न होने पर बहिरंग का वैभव तनावजन्य असन्तोष, उद्विग्नता, संक्षोभ-विक्षोभ व पारस्परिक विद्वेष के साथ समाज में विषमता तथा विग्रह की स्थिति लाता है । आज सारे विश्व की स्थिति का आंकलन करने पर निष्कर्ष यही निकलता है कि बहिर्जगत का पुरुषार्थ हुआ तो है पर वह एकांगी होने के कारण अपने साथ आस्था संकट की अति कष्टकारी विभीषिका साथ लेकर आया है । यदि आज की समस्याओं का समाधान होना है, आस्थाओं-आकांक्षाओं का प्रवाह मोड़ा जाना है, व्यक्ति के अन्तराल को परिष्कृत कर उसका आत्म-गौरव जगाना है तो वह अन्तर्जगत के पुरुषार्थ द्वारा ही शक्य हो सकेगा । युग निर्माण की प्रक्रिया इसी आत्म-ऊर्जा के उत्पादन व सुनियोजन के लिए परम पूज्यगुरुदेव द्वारा आरम्भ की गई व उसी की परिणति स्वरूप आज बड़े व्यापक स्तर पर युगान्तरीय चेतना के प्रवाह को उमड़ता-उफनता देखा जा सकता है ।

आत्म-शक्ति का उत्पादन जिस यन्त्र या फैक्ट्री में किया जाता है, उसे व्यक्ति की चेतना नाम से जाना जा सकता है । मानवी अन्तःकरण को अणुऊर्जा उत्पादन केन्द्र जैसा बहुमूल्य सम्पन्न माना जा सकता है । शरीरबल, बुद्धि वैभव आदि तो आवरण, उपकरण मात्र हैं । अनन्त सम्भावनाओं से भरा अन्तर्जगत ही मनुष्य का भाग्यविधाता है । मानवी अन्तराल ऋद्धि-सिद्धियों का भाण्डागार है । परमात्मसत्ता का एक अंश होने के कारण आत्मा में परब्रह्म की सारी क्षमताएँ व विशेषताएँ बीज रूप में विद्यमान हैं । आत्ममूर्च्छना को जगाकर जब अन्तर्जगत का पुरुषार्थ साधना प्रक्रिया द्वारा किया जाता है तो व्यक्ति के निजी जीवन में मनोनुकूल परिस्थितियों के निर्माण से लेकर समष्टिगत अनुकूलन व नवसृजन की प्रक्रिया आरम्भ होने लगती है । यही है युग-ऋषि द्वारा आरम्भ किए गए युग-परिवर्तन की प्रक्रिया का सुनिश्चित आधार ।

संधिकाल की संक्रमण वेला से गुजर रही मनुष्य जाति के लिए अब सबसे बड़ी आवश्यकता है मनुष्य की निज की आत्मशक्ति का, आत्मबल का, वर्चस् का जागरण । उसके लिए प्रतिकूलताओं के बीज भी अनुकूल प्रवाह विनिर्मित करने का कार्य सृष्टि संतुलन के लिए प्रतिज्ञाबद्ध नियति ने, अवतार चेतना ने आरम्भ कर दिया है । हम को तो मात्र आत्म-शक्ति को प्रसुप्ति से जागरण की स्थिति में लाकर स्वयं को उस प्रवाह से जोड़ देना भर है शेष कार्य वह—युगान्तरीयचेतना स्वयं कर लेगी । शक्ति-संचार की प्रक्रिया इसी निमित्त आरम्भ की गई है ताकि व्यक्ति-व्यक्ति के अन्दर की शक्ति जगे व वह शक्ति के मूलस्रोत से जुड़कर अनन्त सामर्थ्य का अधिकारी बने । विगत दिनों शक्ति साधना के उपक्रम में पूरे भारत व विश्वभर में सम्पन्न अखण्ड गायत्री जप आयोजनों ने जो सबसे बड़ा कार्य किया है, वह है जन-जन की प्रसुप्ति को मिटाना तथा सूक्ष्म जगत में अनुकूल प्रवाह विनिर्मित करना । यह कार्य बड़ी सफलतापूर्वक सम्पन्न हुआ है व आगामी नौ वर्षों तक यह इसी प्रकार चलता रहेगा ।

विगत बसन्त पर्व (८ फरवरी ९२) से शक्तिसाधना प्रक्रिया में एक सम्पुट और जोड़ते हुए अब शक्ति-संचार की उच्चस्तरीय प्रक्रिया को सम्मिलित किया जाना है । यह और कुछ नहीं, निज की आत्म-शक्ति के सम्वर्धन हेतु स्वयं को दैवी प्रवाह से जोड़ने की प्रक्रिया है । युगशक्ति गायत्री कार्य-क्षेत्र सारा विश्व है, यह समग्र सृष्टि है । वह अनुकूल प्रवाह विनिर्मित कर अपना पुरुषार्थ आरम्भ कर चुकी है । अब परिवर्तन के लिए तत्पर साधक को स्वयं को, उस बहती धारा से जोड़ भर देना है । इसके लिए "शक्तिसंचार साधना" की उच्चस्तरीय प्रक्रिया के रूप में एक उपक्रम का शुभारम्भ किया जा रहा है व सभी को बिना किसी जाति, लिंग, वर्ण, धर्म, सम्प्रदाय के, भेद के इसमें भागीदारी करने के लिए आमन्त्रित किया जा रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हिमालय के ध्रुवकेन्द्र से निःसृत दिव्य प्रवाह जो इक्कीसवीं सदी के रूप में, सतयुग, लाने को संकल्पित है, का उद्‌गम् केन्द्र गंगोत्री शान्ति कुंज को माना जाता है । गंगा यों निकलती तो गोमुख से है, पर उससे पूर्व ही कैलाश पर्वत के समीपस्थ मान सरोवर से वह ग्लेशियर के रूप में जन्म ले लेती है व अन्ततः धरती पर गोमुख में आकर प्रकट होती है । महाकाल की युगान्तरीय चेतना का उत्पादन स्थल तो दुर्गम हिमालय है, पर इसका दृश्य रूप में गोमुख है शान्ति कुंज-गायत्री तीर्थ । प्रत्येक साधक को यही भावना करते हुए नित्य प्रातः शान्ति कुंज की ओर मुख करते हुए सूर्योदय से एक घण्टा पूर्व से लेकर एक घण्टा बाद तक के किसी भी समय में न्यूनतम आधा घण्टे नित्य शक्ति-संचार प्रक्रिया में अपनी भागीदारी करना चाहिए । इसके लिए आत्म-शोधन के उपक्रम कर सुखासन की मुद्रा में शान्ति कुंज की ओर मुँह करके बैठा जाय । प्रारम्भिक षटकर्म के बाद तीन विशिष्ट प्राणायाम लोम-विलोम सूर्यबेधन के सम्पन्न किये जायें । सूर्य गायत्री महाशक्ति का देवता है । शक्ति का पुंज सविता ही आत्मशक्ति के जागरण की प्रक्रिया को अगले दिनों सम्पन्न करेगा । इसके उपरान्त पन्द्रह मिनट भावनात्मक रूप से शान्ति कुंज पहुँचकर अखण्ड दीपक का दर्शन करने, गंगा की गोद हिमालय की छाया व देवी संरक्षण में पहुँचकर शक्ति-स्रोत से जुड़ने तथा तीनों शरीरों में शक्ति के संचार की ओजस्-तेजस्-वर्चस की वृद्धि की तथा हिमालय की दैवी चेतन प्राणधारा से अनुप्राणित होने की ध्यान धारणा सम्पन्न की जाय । पाँच मिनट प्रारम्भिक उपचार, दस मिनट तीन प्राणायाम तथा पन्द्रह मिनट की ध्यान धारणा इस प्रकार आधे घण्टे का यह उपक्रम नियमित रूप से निभाया जाय ।

आत्म-शोधन की ब्रह्मसंध्या हेतु पवित्रीकरण आचमन शिखाबन्धन, प्राणायाम व न्यास का उपक्रम सम्पन्न किया जाय । इसके पश्चात् कमर सीधी रख पाल्थी मारकर, अधखुले नेत्रों व घुटने पर दोनों हाथ, इस प्राण-मुद्रा में बैठकर प्रातः के उदीयमान सूर्य का ध्यान करते हुए तीन लोम-विलोम सूर्य भेदन प्राणायाम सम्पन्न किए जायें । बाएँ नासिका के छिद्र को बन्द कर दाहिने नासिका के छिद्र में अवस्थित पिंगलानाड़ी के प्रवाह से सूर्य की किरणों के प्रकाश व ऊष्मा के साथ दिव्य के अन्दर प्रवेश करने की प्रक्रिया साँस खींचने के साथ सम्पन्न की जाय । नासिका के दोनों छिद्र बन्द कर यह भावना की जाय कि सूर्यचक्र जो चिरकाल से प्रसुप्त था, इस आगत प्रकाशवान प्राणवायु से जाग रहा है व रोमरोम में, कण-कण में ऊर्जा का संचार हो रहा है । अब दाहिनी नासिका के छिद्र को बन्द कर साँस को धीरे-धीरे बाएँ नथुने से बाहर निकाला जाय व ध्यान किया जाय कि अन्तः के कल्मष जो सूर्यचक्र को, नाभिचक्र को, मूलाधार को धुँधला बनाये हुए थे, थोड़ी साँस के साथ इड़ा नाड़ी के प्रवाह के साथ बहार निकल रहे हैं । अब दोनों नथुने बन्द कर भावना की जाय कि नाभिचक्र से तेजपुंज की तरह अग्निशिखा की लपटें ऊपर उठकर अन्तर्जगत को ज्योतिमान, प्रकाशवान बना रही हैं । अब दाहिना नासिका छिद्र बन्द कर बाएँ नथुने से साँस खींचते समय इड़ा नाड़ी द्वारा सूर्य प्रकाश जैसा प्राण-तत्व साँस के साथ मिलकर प्रविष्ट होने व सूर्यचक्र में जाकर उसे और तेजस्वी बनाने की भावना की जाय । अंतर्कुम्भक के दौरान सुषुम्ना नाड़ी के परिपुष्ट होने की व रेचक में पूर्व की प्रक्रिया से विलोम अर्थात् दाहिने नथुने से साँस बाहर निकालते हुए कषाय-कल्मषों के बाहर जाने व अन्तःकरण के निर्मल बनने की भावना करें । पुनः फेफड़ों को पूरी तरह खाली रखकर एक बार बहिर्कुम्भक प्रक्रिया सम्पन्न की जाय व इस प्रकार एक लोम-विलोम प्राणायाम सम्पूर्ण हुआ माना जाय । यह पूरी प्रक्रिया तीन बार सम्पन्न की जानी है । दाएँ से खींचना, बाएँ से निकालना व पुनः बाएँ से खींचना व दाएँ से निकालना यह उल्टा सीधा चक्र प्राणायाम का रहने से इसे "लोम-विलोम" व सूर्य का ध्यान कर सूर्यचक्र को जाग्रत करने की धारणा के कारण इसे "सूर्यबेधन" प्राणायाम कहते हैं । इसके पश्चात शान्त चित्त, स्थिर शरीर, सीधी कमर, दोनों हाथ गोदी में व आँखें बन्दकर मौन गायत्री जपकर मन ही मन शान्ति कुंज पहुँचकर गायत्री तीर्थ, गुरुसत्ता एवं अखण्ड दीपक का दर्शन करने, ज्योति किरणों के स्थूल शरीर-मूलाधार चक्र में, सूक्ष्म-शरीर आज्ञा-चक्र में तथा कारण शरीर हृदय-चक्र में संचार होने व साधक के ओजवान्, तेजवान्, प्रकाशवान् बनने व उपलब्ध अमृत वर्षा से पुलकित प्रमुदित होकर रस विभोर होने की परिकल्पना की जाय । पन्द्रह मिनट बाद पाँच बार ओंकार का गुंजन करते हुए

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

असतोमासद्मय, तपसोमाज्योतिर्गमय, मृत्योर्माऽमृंतगमय की प्रार्थना करते हुए शान्ति पाठ किया जाय । तत्पश्चात दोनों हथेलियों को आपस में रगड़ कर मुख पर तथा हृदय, पीठ, हाथ आदि पर स्पर्श करते हुए भावना की जाय कि साधना के पूर्व जो स्थिति थी उससे अब श्रेष्ठतर है व क्रमशः आत्मबल की वृद्धि हो रही है । सूर्य को अर्घ्य देकर अपनी शक्ति-संचार की प्रक्रिया का समापन किया जाय ।

यह सुनिश्चित माना जाना चाहिए कि आत्म-शक्ति का उपार्जन करने वाले साधक ही अगले दिनों व्यष्टि परक, समष्टिपरक प्रतिकूलताओं को निरस्त कर सकने व अपनी जीवन यात्रा आगे बढ़ा पाने में सफल होंगे ।

ऊर्जा अनुदान की ध्यान धारणा

युग सन्धि की वेला में कुछ विशिष्ट साधनाएँ सभी जाग्रत आत्माओं को करनी चाहिए । इनसे पवित्रता, प्रखरता, समर्थता एवं प्रेरणा की इतनी मात्रा मिलती रहती है जिससे जाग्रत आत्माएँ अपने विशिष्ट उत्तरदायित्व का, युग धर्म का भली प्रकार निर्वाह कर सकें ।

इन २० वर्षों में हिमालय के आध्यात्म ध्रुव केन्द्र से सृजन शिल्पियों के व्यक्तियों को उभारने वाले विशेष अनुदान वितरित किए जा रहे हैं । इन्हें ग्रहण करने के लिए रविवार या गुरुवार का समय निर्धारित करना चाहिए । सूर्योदय के एक घण्टे पूर्व से लेकर सूर्योदय तक का एक घण्टा इस प्रसारण विचरण के लिए निर्धारित है । अनुदान ग्रहण की ध्यान धारणा के लिए उसी अवधि में किसी अपेक्षित स्थान पर बैठना चाहिए ।

स्थिर शरीर, शान्त चित्त, कमर सीधी, हाथ गोद में, आँखें बन्द ध्यान मुद्रा में । इस पर बैठकर यह ध्यान करना चाहिए कि हिमालय के सर्वोच्च हिमाच्छादित सुमेरु शिकर पर स्वर्णिमसूर्य का उदय हुआ । किरणें उभरी, साधक तक पहुँची और साधक के स्थूल सूक्ष्म, कारण शरीर में प्रवेश करती हुई समग्र व्यक्तित्व में ओत-प्रोत हो गई हैं । कण-कण, नस-नस, रोम-रोम उस दिव्य ऊर्जा से अनुप्रमाणित हुआ । स्थूल शरीर में कर्मठता, सूक्ष्म शरीर में दूरदर्शिता और कारण शरीर में उदार आत्मीयता लाबालब भर गई । निष्ठा प्रज्ञा और श्रद्धा से समूचा व्यक्तित्व सराबोर हो गया । तृप्ति, तृष्टि और शान्ति की अजस्र अनुभूति हो चली । महान परिवर्तन सम्पन्न हुआ । क्षुद्रता महानता में, कामना भावना में, लिप्सा उदारता में बदल गई । आत्मा और परमात्मा के बीच घनिष्ठता उमँगी और दोनों की सत्ता आग ईंधन की तरह मिलकर एक हो गई । इस अनुभूति के कल्पना चित्र में १५ मिनट डूबे रहा जाय । हिमालय की दिव्य किरणों के सहारे मिलने वाले ऊर्जा अनुदान की साधना में स्थापना सुनिश्चित यथार्थता के रूप में प्रतिष्ठित होने की बात पर विश्वास भी इस साधना के साथ जुड़ा रहना चाहिए ।

रविवार या गुरुवार में से जिस दिन भी प्रातः काल यह ऊर्जा अनुदान की ध्यान धारणा के लिए समय नियत किया जाय उसी दिन अस्वाद व्रत, ब्रह्मचर्य, एवं दो घण्टे का मौन व्रत भी निभाया जाय ।

यह अभ्यास मिल-जुल कर सामूहिक रूप से भी किया जा सकता है और एकाकी भी । जहाँ जैसी सुविधा हो व्यवस्था बना लेनी चाहिए ।

आनन्दानुभूति की उच्चस्तरीय साधना

प्रेम, आत्मीयता और एकता में ही आनन्द सन्निहित है । साधन, सामग्री की—धन सम्पत्ति की उपलब्धि में कई लोग आनन्द की अभिलाषा करते हैं, कई का अनुमान होता है कि वासनाओं एवं तृष्णाओं की पूर्ति का साधन जुट जाने से उन्हें आनन्द प्राप्त होगा पर यह कल्पनाएँ अन्ततः मिथ्या ही सिद्ध होती हैं । जिनके पास प्रचुर धन ऐश्वर्य भरा पड़ा है उन्हें भी खिन्न और असन्तुष्ट देखा जाता है । वासनाएँ और तृष्णाएँ कभी तृप्त नहीं होती हैं । एक इच्छा पूर्ण होते-होते उससे अनेक गुनी तीव्र आकांक्षा जाग्रत हो उठती है और पहले जितना अभाव अनुभव होता था अब नया अभाव उससे भी कई गुना असन्तोष उत्पन्न किए रहता है । आग पर तेल डालने से जैसे वह बुझती नहीं, वरन् और अधिक भड़क उठती है, उसी प्रकार भोगों की, वस्तुओं की मनमानी प्राप्ति हो जाने पर भी किसी को सन्तोष नहीं होता । सुख किसी पदार्थ में नहीं रहता वह तो मन की एक वृत्ति है जो सन्तोष के साथ जुड़ी रहती है । स्वल्प साधनों में भी सन्तुष्ट रह सकना सम्भव है । कठिनाइयों के बीच भी अनेकों को मुस्कराते और धैर्यपूर्वक कर्त्तव्य-पालन करते रहते देखा गया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस संसार में आनन्द की अनुभूति का एक ही स्थान है—'प्रेम' । जिस किसी वस्तु में, जिस किसी कार्य में, जिस किसी व्यक्ति में, जिस किसी विचार में हमें प्रेम हो जाता है, अपनापन अनुभव होने लगता है, उसी की समीपता आनन्द का आस्वादन कराने लगती है । पराई वस्तुएँ चाहे कितनी ही उत्तम क्यों न हो हमें प्रिय नहीं लगतीं, किन्तु अपनी घटिया चीजें भी आनन्द उल्लास देने लगती हैं । सच बात यह है कि हमें अपनी आत्मा ही प्रिय है । यह आत्म-भाव जितने क्षेत्र में व्यापक और विस्तृत होता जाता है उतना ही अपना आनन्द भी व्यापक होने लगता है । यदि हम सारे संसार को, विश्व के समस्त प्राणियों को अपना मानें तो निश्चय ही यहाँ जो कुछ भी है वह सब प्राण प्रिय लगने लगेगा । घृणा और तिरस्कार योग्य कोई वस्तु न लगेगी । जहाँ पाप और गन्दगी भी हो वहाँ उसे अपने लिए सफाई और सेवा का एक आवश्यक कर्त्तव्य जैसा अनुभव होगा । अस्पताल में मरीजों को भरा देखकर डॉक्टर न तो घृणा करता है और न विचलित होता है वरन् अधिक करुणा से, अधिक कर्त्तव्य परायणता से प्रेरित होकर अधिक तत्परतापूर्वक जुटता है । मरीजों की अधिक सेवा करने को वह अपना सौभाग्य और अधिक श्रेय प्राप्त करने का एक स्वर्ण सुयोग्य मानता है । इस संसार में भरी हुई गंदगी और बुराई से कोई आध्यात्मिक व्यक्ति विचलित नहीं होता वरन् अधिक सेवा के लिए अधिक तत्परतापूर्वक सफाई करने को एक आवश्यक जिम्मेदारी समझ कर उस ओर वह प्रेम और प्रसन्नतापूर्वक—तन्मयता और तत्परतापूर्वक कार्य सलग्न हो जाता है । सेवा में भी रुचि उसे तभी आती है, जब उसे अपना कर्त्तव्य मानता है । आनन्द तो अपनेपन में ही है ।

ईश्वर उपासना में मन केवल उसी का लगता है जो परमात्मा को अपना सगा स्वजन, सम्बन्धी, अत्यन्त घनिष्ट आत्मीय जन मानता है । मीरा को अपने 'गिरधर गुपाल' तभी प्राण प्रिय लगते थे, जब वह उन्हें अपना सचमुच का विवाहित पति मानती थी । रामकृष्ण परमहंस माता के प्रेम में आनन्द विभोर तभी हो पाते थे, जब वह उसे अपनी सगी जननी अनुभव करते थे । उन्हीं भक्तों ने भगवान को अपने निकट देखा और साक्षात्कार किया है, जिन्होंने अगाध प्रेम के साथ घनिष्ट आत्मीयता के बन्धनों में अपने इष्टदेव को आबद्ध किया है । अभी भी ऐसे अगणित ईश्वर भक्त हैं जिनको अपने इष्टदेव पर अगाध श्रद्धा है और वे कठिनाइयों, असफलताओं और आपत्तियों में भी भगवान की अपार करुणा अनुभव करते हैं । वस्तुतः उन्हीं का प्रेम सच्चा है जो प्रस्तुत सुख को ईश्वर की दया और आगत दुःख को दैवी कृपा मानते हैं । अपने से किसी को भला क्या शिकायत हो सकती है । अपना बच्चा गाली देता है तो भी उसकी तोतली बोली कोयल की तरह मीठी लगती है । माता की चपत खाकर भी कौन बालक उसकी गोदी का परित्याग करता है ? सुख के लिए ईश्वर की स्तुति और दुःख के लिए भर्त्सना करने वाले खुदगर्ज लोग वस्तुतः प्रेम तत्व से अनभिज्ञ ही हैं ।

एकात्म भाव की ध्यान साधना

ईश्वर के प्रति, गायत्री माता के प्रति—आत्मीयता, एकता, तन्मयता और अनन्यता उत्पन्न करने वाली एक ध्यान साधना यह है कि—"गायत्री जप करते हुए अपने को एक वर्ष के बालक के रूप में निर्मल, निष्काम मानना चाहिए और गायत्री माता को अपनी सगी जननी मानकर उसके साथ क्रीड़ा विनोद करने, पयपान एवं स्नेह पाने की ध्यान धारणा करनी चाहिए । इस ध्यान के साथ जिन लोगों ने भी जप किया है उनके आनन्द में वृद्धि हुई है, मन लगा है और यह शिकायत दूर हो गई है कि चित्त नहीं लगता । मन प्रेम का गुलाम है । जो भी वस्तु प्यारी लगती है मन भाग-भाग कर वहीं जाता है । रूखे, नीरस, व्यर्थ और उपेक्षणीय समझे जाने वाले कार्यों में ही मन नहीं लगता । यदि गायत्री माता के प्रति सचमुच ही अपनी आत्मीयता एवं भक्ति भावना हो तो उनके चरण छोड़कर मन अन्यत्र जाना ही न चाहेगा । हमें ऐसे सहस्रों उपासकों की स्थिति का परिचय है जो तन्मयतापूर्वक भाव विभोर होते हैं और जिन्हें उस परमतत्व की समीपता अहिर्निश अनुभव होती रहती है । इसमें उनका श्रद्धा विश्वास ही प्रधान कारण हैं ।

ध्यान धारणा का सीमाबन्ध

इस प्रेम और आत्मीयता की इष्ट के प्रति भक्तिभाव उत्पन्न करने वाली साधना का अब अगला पाठ भी हमें पढ़ना है । उपरोक्त साधना में माता और पुत्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के क्रीड़ा-विनोद के एक बड़े चौड़े दायरे में ध्यान करने की गुंजाइश है । अब आगे इस दायरे को छोटा और सीमित करते चलना पड़ेगा । इस प्रक्रिया में सूर्य प्रकाश मध्य गायत्री माता के मुख मण्डल मात्र का ध्यान करना पड़ेगा और उनके दाहिने नेत्र में जो ज्योति बिन्दु काला तिल है, उस पर अपना ध्यान एकाग्र करना होगा । आरम्भ में कुछ दिनों यह तिल काला ही दिखाई देगा, पर पीछे धीरे-धीरे जैसे-जैसे एकाग्रता बढ़ती जायेगी इसमें प्रकाश अनुभव होने लगेगा । कालापन घटकर सफेदी बढ़ेगी और कुछ दिन बाद मुखमण्डल या काला तिल न दीखकर केवल मात्र प्रकाश पुंज ही दीखने लगेगा । प्रकाश ज्योति के रूप में—सविता के भर्गों रूप में जब ध्यान एकाग्र होने लगता है और पहले जैसी साकार मूर्ति की आवश्यकता अनुभव नहीं होती तो यह माना जाता है कि अब साधक निराकार साधना के उपयुक्त मनोभूमि उपलब्ध कर सका ।

द्वैत से अद्वैत की ओर

प्रतिमा का स्थान ज्योति को प्राप्त हो जाय ऐसी स्थिति आने में कुछ दिन लगते हैं । बहुत दिन तक सम्मिश्रित रूप चलता रहता है, कभी प्रतिमा। कभी ज्योति यह द्विधा स्थिति वैसी ही है जैसी संध्याकाल में दिन और रात का अधूरा सम्मिलन होता है । प्रातःकाल ब्रह्ममुहूर्त में कुछ रात्रि का अंधकार शेष रहता है । कुछ दिन का प्रकाश आरम्भ हो जाता है । साकार और निराकार का—प्रतिमा और प्रकाश का ऐसा ही ब्रह्ममुहूर्त जैसा सामंजस्य इस साधना के साधकों को अनुभव होगा । इससे अगले चरण में विशुद्ध प्रकाश ज्योति के, दिव्य दर्शन के लाभ का सुअवसर सभी निष्ठावान साधकों को प्राप्त होगा । जिनको इसमें कठिनाई होगी उन्हें घृत दीपक पर त्राटक करके आज्ञा चक्र में तृतीय नेत्रोन्मीलन वाली साधना का विधान बताकर दिव्य ज्योति के साक्षात्कार का मार्ग सरल कर दिया जायेगा । भ्रू-मध्य भाग में तीसरा दिव्य नेत्र रहता है । शंकर, दुर्गा आदि के चित्रों में भृकुटी स्थान पर एक तीसरा—तिरछा नेत्र बना हुआ देखा जाता है । यह हर मनुष्य के आज्ञा चक्र में भी प्रसुप्त पड़ा रहता है । यह जब ज्योतिर्मय हो जाता है तो सूक्ष्म जगत की महत्त्वपूर्ण सम्भावनाएँ एवं अदृश्य अनुभूतियाँ सहज ही परिलक्षित होने लगती हैं । ऐसे व्यक्ति को देश, काल, पात्र आदि के आवरणों को बेधकर बहुत सी उन अज्ञात बातों का जान लेना सम्भव होता है जो साधारण मनुष्य को रहस्यमय एवं अलौकिक ही प्रतीत होती हैं ।

ज्योतिर्मयी का दिव्य दर्शन

गायत्री माता के ज्योतिर्मय मुख मण्डल का ध्यान करते हुए उनके दाहिने नेत्र के काले तिल का ध्यान करना और उसमें से प्रकाश स्फुल्लिंग निकलते हुए अनुभव करने का ध्यान ऊपर बताया गया है । इस प्रकाश के प्रति वैसी ही श्रद्धा-भावना होनी चाहिए जैसी किसी प्रत्यक्ष देवता के ज्योतिर्मय शरीर में प्रकट होने के समय भक्त के मन में हो सकती है । यदि श्रद्धा में न्यूनता रही तो केवल रोशनी मात्र दीखेगी और उस दिव्य दर्शन के समय जो आह्लाद अन्तःकरण में उठना चाहिए वह न उठेगा । अनुभव करना चाहिए कि ज्योतिर्मय होकर प्रकाश स्फुल्लिगों के रूप में माता ही अपने सामने प्रस्तुत हो रही है और हम श्रद्धापूर्वक उस दिव्य दर्शन का परम सन्तोष आनन्द एवं उल्लास प्राप्त कर रहे हैं ।

इस प्रकाश को अपने भीतर प्रवेश करता हुआ और अपनी आत्मा को इस 'तेजस्' में तादात्म्य होता हुआ अनुभव करना चाहिए । जिस प्रकार लोहा अग्नि में पड़कर लाल हो जाता है, उसी प्रकार हमें भावना करनी चाहिए कि माता ज्योतिर्मयी के साथ हमारा तादात्म्य हो रहा है । उनका हममें और हमारा उनमें तादात्म्य भाव-एकीकरण हो रहा है । हम दो न रहकर एक हो रहे हैं । द्वैत मिट रहा है और अद्वैत की सिद्धि की ओर प्रगति हो रही है । अणु से विभु के रूप में, नर से नारायण रूप में, पुरुष से पुरुषोत्तम रूप में परिणत होने के लिए इस प्रकाश ज्योति की भट्टी में पड़े हुए स्वर्ण की तरह हम अपने आपको निर्मल बना रहे हैं ।

क्रिया के स्थान पर भावना की वृद्धि

उपर्युक्त ध्यान साधना प्रातःकाल की जानी चाहिए । जप के साथ यह ध्यान चलता रह सकता है । माला लेकर इस ध्यान को करने में कठिनाई पड़ती हो तो नित्य नियम की एक माला फेरने के बाद मानसिक जप और ध्यान का कार्यक्रम बना लेना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह पहले ही बताया जा चुका है कि इस उच्चस्तरीय साधना क्रम में शारीरिक क्रियाएँ घटती जाती हैं और मानसिक धारणा ध्यान का क्रम बढ़ता जाता है । इस साधना को करते हुए एक माला नियमित गायत्री जप और नवरात्रियों के दो लघु अनुष्ठान इतना ही कार्यक्रम शेष रह जाता है बाकी तो सब कुछ धारणा और ध्यान क्षेत्र में ही श्रम करना पड़ता है ।

दृष्टिकोण का परिमार्जन

प्रेम और आत्मीयता की भावना से हर किसी को देखना, सबमें इस ज्योतिर्मयी की आभा निहारना और सबके प्रति श्रद्धा सम्मान के भाव रखना यह प्रयोग निरन्तर करते रहना चाहिए । जिस वस्तु को भी, जिस व्यक्ति को भी, जिस प्राणी को भी देखें उसे प्रेम और ममता की भावना से देखें । उसमें गुण ढूँढ़े और प्रभु की पुनीत रचना अनुभव करते हुए उसके सान्निध्य का आनन्द लाभ करें । बुराइयों को मिटाना और घटाना आवश्यक है । पाप के विरुद्ध संघर्ष करना ही कर्त्तव्य है, पर यह संघर्ष करते हुए भी पापी या कुमार्गगामी को केवल भूला-भटका अज्ञानी बालक ही मानना चाहिए । हमें पाप से घृणा करनी चाहिए, पापी से नहीं । रोग को नष्ट करना चाहिए रोगी को नहीं । इस संसार में न कोई पूर्णतया पापी है और न पूर्ण पुण्यात्मा । सब में न्यूनाधिक मात्रा में गुण दोष मौजूद हैं । सभी में सीखने योग्य और प्रसन्न होने योग्य बहुत कुछ मौजूद हैं और सभी को किसी न किसी रूप में सुधार करने की आवश्यकता है । ऐसी दशा में सुधार के आवश्यक प्रयत्न करते हुए भी हमें तीव्र घृणा से बचना चाहिए । सुधार की पुण्य प्रक्रिया घृणा से नहीं प्रेम से ही सम्भव हो सकती है । प्रेम और आत्मीयता का दृष्टिकोण दिन-दिन अधिक व्यापक बनाते हुए हमें आनन्द की, प्रेम की साधना को सफल बनाना चाहिए ।

परम तेज पुंज ज्योति अवतरण साधना

उत्तराधिकार में सम्पत्ति और प्रतिष्ठा मिलना सौभाग्य का लक्षण माना जाता है । परिश्रम से भी कुछ उत्पादन करना हो उसमें भी अपने से बड़ों का सुविधा और साधन सम्पन्न कुटुम्बियों का सहयोग आवश्यक होता है इस तरह का संरक्षण मिल जाना सफलता की आधी मंजिल स्वतः सम्पन्न हुई मानी जाती है ।

साधना के क्षेत्र में भी यही सिद्धान्त कार्य करता है । उच्च कुल में जन्म पाने की तरह यदि समर्थ संरक्षण मिल जाय तो सफलता सुनिश्चित हो जाती है । इस क्षेत्र में अपने अकेले के पराक्रम से आगे बढ़ने वाले थोड़े ही हुए हैं, अधिकांश को उनके गुरुओं से ही शक्ति मिली है । साधना विज्ञान में इस क्रिया को "शक्ति-पात" के नाम से जाना जाता है । उससे गढ़ा हुआ धन अनायास मिल जाने की तरह आकस्मिक सिद्ध का परम सौभाग्य साधक को स्वतः मिल जाता है । श्री रामकृष्ण परमहंस ने स्वामी विवेकानन्द, श्री विरजानन्द ने श्री मद्दयानन्द को, श्री श्यामाचरण लाहिड़ी ने कुवलयानन्द आदि को भी उनके समर्थ मार्ग-दर्शकों ने ही शक्ति देकर सिद्ध बनाया था । यह लाभ किसी भी साधक के सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है ।

यह लाभ बिना श्रम मिलता तो है, किन्तु उसके लिए पात्र का भी उतना ही समर्थ होना आवश्यक है । मशीनगनों की बैरेल इतने मजबूत इस्पात की होती है जो सैकड़ों फायर करते रहने पर भी फटती नहीं, जबकि कच्चे लोहे को रत्ती भर बारूद ही फाड़ देती है । जल पक्के घड़ों में ठहरता है, कच्चे घड़ों में भर दें तो पानी तो व्यर्थ जायेगा ही घड़ा भी नष्ट होगा । योग्य शिष्य की कसौटी यह कि वह प्राप्ति शक्ति का सदुपयोग उस सद्गृहस्था की भावना के अनुरूप करे, जो अपने बेटों से अपनी पारिवारिक प्रतिष्ठा, उसकी सुविधा समुन्नति बढ़ाने के लिए की जाती है । महापुरुष लोक-कल्याण के लिए जीते, लोक-मंगल का आचरण करते हैं यही दृष्टि उसकी शिष्य के प्रति होती है । यदि किसी की शारीरिक, मानसिक और आत्मिक क्षमता के प्रति उसे यह विश्वास हो जाता है कि यह प्राप्त शक्ति केवल-कल्याण में ही लगायेगा तो उसे शक्तिपात में प्रसन्नता ही होती है । शक्तिपात का अर्थ कठिन साधनाओं द्वारा अर्जित अपनी प्राण शक्ति अपने शिष्य में डाल देना । इससे सिद्धि का वरदान को स्वतः मिल जाता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आज की परिस्थितियों में वैसे मेधावी और आत्म-परायण साधकों का अभाव होगा ऐसा तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु यह लाभ अधिकतम लोगों को बाँटने से अनेक तेज पुंज प्रतिभाएँ पैदा की जा सकती हैं । अतः उच्चस्तरीय विशिष्ट साधनाओं में "परम तेज पुंज ज्योति अवतरण साधना" को भी संयुक्त रखा गया है । निर्धारित समय पर दिव्य सत्ता अपनी प्राण शक्ति से साधकों को लाभान्वित करती है और अपनी पात्रता के अनुरूप साधक उसे ग्रहण कर अपनी साधना का सफलता को द्रुतिगामी बनाते हैं ।

ज्योति अवतरण पुंज साधना एक विशिष्ट उपासना पद्धति है । इसका अनुपम लेने से किसी को भी नहीं चूकना चाहिए । प्रस्तुत ध्यान साधना के लिए रात्रि का समय ही अधिक उपयुक्त है । यों उसे दिन में भी सुविधानुसार समय पर किया जा सकता है, पर रात्रि की नीरवता में जितनी अच्छी तरह इसका सत्परिणाम मिलता है, उतना दिन में नहीं ।

इसके लिए चित्र आदि की आवश्यकता नहीं । रात्रि को यदि कभी आँख खुल जाय तो बिस्तर पर पड़े भी इसे किया जा सकता है । बैठकर करनी हो तो दीवार, मसनद आदि का सहारा लिया जा सकता है । आराम कुर्सी काम में लायी जा सकती है । शरीर को शिथिल, मन को एकाग्र करके सुविधा के समय इस साधना को करना चाहिए । समय कितना लगाना है यह अपनी सुविधा एवं परिस्थिति पर निर्भर है, पर जितना भी समय लगाना हो उसे तीन भागों में विभक्त कर लेना चाहिए । एक तिहाई में स्थूल शरीर, एक तिहाई में कारण शरीर में ज्योति का अवतरण करना चाहिए । यों थोड़ा न्यूनाधिकता रहने से भी कोई हर्ज नहीं होता, पर क्रम ऐसा ही बनाना चाहिए, जिससे शसीर मन और आत्मा तीनों स्तरों को समुचित प्रकाश मिल सके ।

प्रस्तुत साधना में समय निर्धारण के साथ-साथ कुछ अन्य आवश्यक नियमों की अनिवार्यता भी है । इस साधना के लिए नियत हिमालय-उत्तर दिशा की ओर मुख करके बैठना चाहिए और परम गुरुदेव को हिमालय पर्वत पर बैठे अनुभव करना चाहिए । सामान्य अवस्था में यह ध्यान सविता के तेजपुंज में किया जाता है, किन्तु ब्रह्मवर्चस साधना की विशिष्ट अवस्था में हिमाच्छादित प्रदेश में तेज पुंज धारी महापुरुष के मस्तक से निकल रही शक्ति धारा के अवगाहन और धारणा का ध्यान करना चाहिए ।

सामान्य स्थिति में कहीं भी रहकर किए जाने वाले ध्यान का स्वरूप भिन्न है । सूक्ष्म जगत में ईश्वरीय दिव्य प्रकाश की प्रेरणापूर्ण किरणें निरन्तर बहती रहती हैं, उन्हें श्रद्धा, एकाग्रता और भावनापूर्ण ध्यान करके इस लेख में वर्णित विधि से कोई भी साधक ग्रहण कर सकता है, पर अपने परिवार के लिए इस साधना में संलग्न साधकों के लिए दो-दो घण्टे के ऐसे समय भी नियुक्त हैं, जिनमें किन्हीं महान दिव्य शक्तियों द्वारा अपना शक्ति प्रवाह जोड़ दिया जाता है और उस समय ध्यान करने में विशेष आनन्द आता है और विशेष प्रभाव पड़ता है । यह समय रात्रि को ८ से १० बजे और प्रातः ३ से ५ बजे का है । इन दोनों अवसरों से जब जिसे सुविधा हो तब अपनी सुविधा के अनुरूप समय निर्धारित कर सकते है ।

आरम्भ में यह समय एक बार में आधा घण्टा से अधिक का नहीं होना चाहिए । धीरे-धीरे समय बढ़ाकर एक घण्टे तक का किया जा सकता है । रात्रि के पूर्वार्द्ध और उत्तरार्द्ध में दोनों बार भी यह ध्यान किया जा सकता है । तब दो बार में कुल मिलाकर एक घण्टे से लेकर दो घण्टे तक यह समय हो सकता है । २४ घण्टे में २ घण्टे इसके लिए अधिकतम समय हो सकता है । अधिक तेज के ग्रहण करने में कठिनाई पड़ती है, इसलिए ग्रहण उतना ही करना चाहिए जितना पचाया जा सके । कौन किस समय इस साधना को करे, कितनी देर किस प्रकार बैठकर करे यह निर्धारण करना साधक का अपना काम है । अपनी परिस्थितियों के अनुसार उसे अपनी व्यवस्था स्वयं ही बनानी चाहिए, पर जो क्रम या समय निर्धारित किया जाय उसे उसी क्रम से चलाना चाहिए । समय और स्थिति का एक ही क्रम चलना किसी भी साधना की सफलता के लिए उचित एवं आवश्यक है ।

ज्योति अवतरण साधना इस प्रकार करनी चाहिए—

(१) शरीर को बिल्कुल शिथिल कर देना चाहिए और ऐसी भावना करनी चाहिए कि अपना मन, शरीर और आत्मा पूर्ण शान्त निश्चिन्त एवं प्रसन्न स्थिति में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अवस्थित है । यह भावना पाँच मिनट करने से चित्त में ध्यान के उपयुक्त शान्ति उत्पन्न होने लगती है ।

(२) ध्यान कीजिए कि अपने चारों ओर प्रकाश पुंज फैला हुआ है । आगे-पीछे, ऊपर-नीचे सर्वत्र प्रकाश फैल रहा है । भगवती आद्यशक्ति की आभा सूर्य मण्डल में से निकल कर सीधी आप तक चली आ रही है और आप उस प्रकाश के घेरे में चारों ओर से घिरे हुए हैं ।

(३) यह प्रकाश किरणें धीरे-धीरे आपके शरीर में, त्वचा छिद्रो में प्रवेश करती हुई प्रत्येक अवयव में घुल रही हैं । हृदय, फेफड़े, आमाशय, आँतें, मस्तिष्क, हाथ-पैर आदि अंग उस प्रकाश पुंज को अपने भीतर धारण करके परिपुष्ट हो रहे हैं । जिह्वा, गुह्येन्द्रिय, नेत्र कान, नाक आदि इन्द्रियाँ इस प्रकार से आलोकित होकर पवित्र बन रही हैं, उनकी असंयम वृत्ति जल रही है । पवित्रता की यह ज्योति शरीर के कण-कण को पवित्र बनाने में संलग्न है । स्थूल शरीर में रक्त-माँस, अस्थि आदि के बने हुए अवयवों के प्रकाश-पुंज बनने और उनके परिपुष्ट पवित्र, स्फूर्तिवान एवं ज्योतिर्मय होने का ध्यान करके उपरान्त सूक्ष्म शरीर पर ध्यान केन्द्रित करना चाहिए । सूक्ष्म शरीर का स्थान मस्तिष्क है ।

(४) ध्यान करना चाहिए कि मस्तिष्क के भीतर मक्खन जैसे कोमल—बालू के जैसे बिखरे हुए कणों में अगणित प्रकार की मानसिक शक्तियों एवं विचारणाओं के केन्द्र छिपे हुए हैं । उन तक आदिशक्ति माता के प्रकाश की धाराएँ पहुँच रही हैं और वे सभी कण उसके द्वारा रत्नकणों की तरह ज्योतिर्मय होकर जगमगाने लगे हैं ।

(५) मन में छिपे हुए अन्धकार का असंयम, स्वार्थ, मोह, भय और भ्रम-जंजाल का इस प्रकाश के प्रवेश होने से विनाश हो चला और मानसिक संस्थान का कण-कण विवेक, उच्च विचार, सन्तुलन एवं सुरुचि जैसी विभूतियों से जगमगाने लगा । गायत्री माता की इस ज्योति द्वारा मनोभूमि को महापुरुषों जैसे स्तर की बनाया जा रहा है और हम उस प्रकाश की बड़ी श्रद्धापूर्वक अधिकाधिक मात्रा में मस्तिष्कीय कणों में ग्रहण एवं धारण करते चले जा रहे हैं ।

सूक्ष्म शरीर में गायत्री माता के प्रकाश का प्रवेश अनुभव करने के बाद, हृदय स्थान में स्थित कारण शरीर में ज्योति धारण करना चाहिए । उपनिषद् द्वारा ऋषियों ने अपनी योग-दृष्टि से जीवन का स्वरूप अँगूठे की बराबर ज्योतिर्मय आभा के रूप में हृदय स्थान में निवास करता हुआ देखा गया है । इस आत्मा के छोटे से प्रकाश को भगवती आदिशक्ति का महान प्रकाशरूपी अनुदान मिलने से अपूर्णता के स्थान पर पूर्णता का प्रादुर्भाव होता है ।

(६) ध्यान करना चाहिए कि आकाश में अनन्त प्रकाश की आभा अवतरित होकर अपने हृदय स्थान में अवस्थित आत्मा के अँगुष्ठ मात्र प्रकाशपुंज में प्रवेश कर रही है । उसकी सीमाबद्धता, संकीर्णता और तुच्छता दूर कर अपने सदृश्य बना रही है । लघु और महान का मिलन—अणु ज्योति और विभु ज्योति का यह आलिंगन परस्पर महान आदान-प्रदान के रूप में परिणत हो रहा है । जीवात्मा अपनी लघुता परमात्मा को सौंप रहा है और परमात्मा अपनी महानता जीवात्मा को प्रदान कर रहा है । बिछुड़े हुए गौवत्स की तरह दोनों मिल रहे हैं और एकता का दिव्य आनन्द उत्पन्न हो रहा है ।

(७) जीवात्मा का लघु प्रकाश परमात्मा के परम प्रकाश से लिपट रहा है और दीपक पर जलने वाले पतंगे की तरह, यज्ञ कुंड में पड़ने वाली आहुति की तरह अपने अस्तित्व को होम रहा है । चकोर की तरह उस प्रकाश पुंज को चन्द्रमा मानकर आह्लादित हो रहा है और अनन्त आनन्द का अनुभव कर रहा है ।

(८) उस मिलन के फलस्वरूप अन्तःकरण में सद्भावनाओं की हिलोरें उठ रही हैं, आकांक्षाएँ आदर्शवादिता एवं उत्कृष्टता से परिपूर्ण हो चली हैं, ईश्वरीय सन्देशों और आदर्शों पर चलने की निष्ठा परिपक्व हो रही है । विश्व के कण-कण में परम ब्रह्म को ओत-प्रोत देखकर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना प्रबल हो रही है और सेवा धर्म अपना कर ईश्वर-भक्ति का मधुर रसास्वादान करने की उमंग उठ रही है । आत्मा की महिमा के अनुरूप अपनी विचारणा और कार्य पद्धति रखने का निश्चय प्रबल हो रहा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(९) अनन्त प्रकाश के आनन्दमय समुद्र में स्नान करते हुए आत्मा अपने आपको धन्य एवं कृत-कृत्य हुआ अनुभव कर रही है ।

(१०) एकाग्र चित्त और श्रद्धा तन्मयतापूर्वक की गई ज्योति अवतरण साधना के लाभ शेष सभी साधना अभ्यासों से बढ़कर देखे गए हैं । लम्बे अर्से तक इस साधना के अनुभवों को सुनते रहने के बाद हम इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जो साधनाएँ कई वर्षों में पूरी हो पातीं, वह बहुत स्वल्प समय में आशातीत सफलता के साथ सम्पन्न हुईं । शक्ति संचार साधना में कई प्रकार के अनुभव और भावोद्रेक उत्पन्न होते हैं उनसे परेशान नहीं होना चाहिए । इस साधना काल में—

(अ) कई तरह की गन्धों की आकस्मिक अनुभूति होती है इसमें कुछ परेशानी सी उत्पन्न करती है, किन्तु यह सुनिश्चित समझा जाना चाहिए कि यह संचरित प्राण की प्रतिक्रिया और प्रभावमान है, उससे किसी पर भी शारीरिक क्षति नहीं होती ।

(ब) कई बार कान में किसी तरह की ध्वनि का-सा आभास होता है ।

(स) एकाएक तीव्र मानसिक हलचल और उत्तेजना सी होती है ।

(द) रोमांच और कम्पन्न की-सी अनुभूति होती है । विद्युत करेन्ट लगाने जैसा आभास भी हो सकता है ।

यह सब साधना की सफलता के लक्षण हैं, उनसे घबड़ाने जैसी कोई बात नहीं होती । इस साधना में शरीर स्थित प्राणों में दिव्य प्राण भरने से खाली घड़े में जल भरते समय उत्पन्न शब्द ध्वनि और हलचल की ही प्रतिक्रियाएँ उपरोक्त रूप में प्रकट होती है । यह आयाचित प्राण साधक के भीतर के कषाय-कल्मषों के परिमार्जन का कार्य प्रारम्भ करता है तब और भी विलक्षण अनुभूतियाँ हो सकती हैं । इन परिवर्तनों को बहुत ध्यानपूर्वक अध्ययन करते और नोट करते रहना चाहिए । आवश्यक हो तो उन पर चर्चा और परामर्श भी किया जा सकता है, किन्तु उसे आम चर्चा नहीं बनाना चाहिए अन्यथा अन्तर्मुखी दृष्टि बिखरती है और साधक सांसारिक लोकेषणा में फँसकर अपनी प्राप्त क्षमताएँ भी गवाँ बैठता है ।

इस संसार में जीवन को सफल बनाने की सबसे बड़ी शक्ति आध्यात्म ही है । उसी के द्वारा मनुष्य अपने को पहिचान सकता है और समस्त प्राणियों तो एक ही महाशक्ति का अंश समझ कर उनके साथ अपनत्व का अनुभव कर सकता है । इस तरह की भावना हमारी शक्ति को अनेक गुणा बड़ा सकती है । 'ज्योति-अवतरण' की साधना से मनुष्य इस सर्वव्यापी आत्मतत्व की वास्तविकता को बहुत कुछ अनुभव कर सकता है और उससे निश्चय ही इहलोक व परलोक मे दैवी महानता का अधिकारी बन सकता है ।

'ज्योति अवतरण' साधना का उद्देश्य आत्मा पर चढ़े मल आवरण और विक्षोभों के कषाय-कल्मषों को हटाकर आन्तरिक स्तर को शुद्ध करना है । जिस प्रकार अग्नि में पड़कर सोना निर्मल बन जाता है, उसी प्रकार 'ज्योति अवतरण' का प्रभाव हर साधक पर यह पड़ेगा ही कि उसके दोष, दुर्गण जलने लगेंगे और वह अपेक्षाकृत अधिक पवित्र एवं उज्ज्वल बनता चला जायेगा । अग्नि के समीप बैठने से जैसे गर्मी आती है, प्रकाश की समीपता में रहने वाली वस्तुएँ भी प्रकाशवान हो जाती हैं, उसी प्रकार इस 'ज्योति-आवरण' साधना में साधक का अन्तःकरण क्रमशः अधिकाधिक पवित्र एवं प्रकाशनान बनता चला जाता है । यह साधनाओं मनुष्य शरीर पाने के बाद दूसरे नम्बर की ईश्वरीय अनुग्रह ही मानी जा सकती है । इस सौभाग्य को जो सार्थक कर सकें उन्हें अपना मनुष्य जीवन सार्थक और धन्य हुआ मानना चाहिए ।

अन्तःशक्ति सम्वर्धन की सविता-साधना

आत्मोत्कर्ष के क्षेत्र में अभ्युदय के अनेक उपाय उपचार हैं । उपासना, साधना की सम्प्रदाय भेद से अनेकों विधि परम्पराएँ प्रचलित हैं । इनमें ध्यान धारणा को सार्वभौम एवं सर्वानुमोदित स्थान मिला हुआ है । इसे आत्मवादी विशेष आकांक्षा सँजोकर श्रद्धा विश्वास के साथ अपनाते और उसका भावना के अनुरूप प्रतिफल भी प्राप्त करते हैं । इतना ही नहीं अनीश्वरवादी भी मानसिक संतुलन बिठाने और एकाग्रताजन्य विशिष्टता प्राप्त करने के लिए ध्यान उपचार को प्रयोग में लाते हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ध्यान के अनेक माध्यम हैं । लक्ष्य एवं इष्ट निर्धारण करते हुए उसे ध्यान का केन्द्र बिन्दु बनाया जाता है । फिर भी इन स्थापनाओं में मतभेद तो बनते ही रहते हैं । इस बिखराव को दूर करने में सूर्योपासना अधिक कारगर सिद्ध हो सकती है । प्रकाश की चमक में आकर्षण भी होता है । पतंगे दीपक की ओर अनायास ही लपकते देखे जाते हैं ।

गायत्री महामन्त्र का देवता सविता है । सविता उगते हुए को सूर्य स्वर्णिम कहते हैं । ध्यान प्रयोजन के लिए सूर्योपासक इसी का प्रयोग करते हैं । सूर्योपस्थान सूर्य नमस्कार, सूर्यार्घ्य, सूर्य सेवन आदि के अनेकों उपक्रम साधना क्षेत्र में अपनाये जाते हैं । अग्निहोत्र में भी सूर्य शक्ति की प्रमुखता है । इसके अतिरिक्त ध्यान धारणा को तो उस आधारभूत अवलम्बन के रूप में अपनाया ही जाता है ।

ध्यान धारणा में सविता उपासना का सामान्य क्रम यह है कि प्रातःकालीन उगते सूर्य को अर्द्ध खुली आँखों से देखकर पलक बन्द कर लिया जाय । भावना की जाय कि वह दिव्य सत्ता अपने किरण जाल समेत सम्पूर्ण शरीर में संव्याप्त हो गई । इस शुभारम्भ में जलाशय की समीपता शक्ति आकर्षण की दृष्टि से अधिक फलप्रद होती है । कई व्यक्ति जलाशय में खड़े होकर सूर्याभिमुख स्थिति में जप तथा ध्यान करते हैं । कई उतने समय तक गीले वस्त्र धारण किए रहते हैं । कुछ सूर्य को अर्घ्यदान करते हुए मानसिक जप के साथ अपनी संरक्षित आराधना पूरी कर लेते हैं । यदि ब्रह्म मुहूर्त में यह आराधना करना हो तथा बादल छाए रहने पर प्रत्यक्ष दर्शन न हो रहा हो तो जिस दिशा में उस समय सूर्य की उपस्थिति सम्भव लगती हो उस ओर मुख करके भी ध्यान किया जा सकता है यह अनेकानेक प्रचलनों में से कुछ एक की चर्चा है ।

सार्वभौम, सर्वजनीन और सर्व सुलभ ध्यान का उपाय यह है कि खुले स्थान में बैठा जाय । प्रातः काल का समय हो जल पात्र दाईं ओर रखा हो । प्रतीक स्थापना के रूप में अगरबत्ती या दीपक जला लिया जाय । स्वच्छ स्थान में स्वच्छ शरीर, वस्त्र से पालथी मार कर बैठा जाय । मेरुदण्ड सीधा रहे । नेत्र बन्द । हाथ गोदी में एक के ऊपर एक, स्थिर शरीर, शान्त चित्त । यह है ध्यान मुद्रा, जिसे प्रत्येक प्रकार के ध्यान में आवश्यक एवं उपयोगी माना गया है ।

इस स्थिति को बनाने में आरम्भ में पाँच मिनट लग सकते हैं । इसके बाद स्वर्णिम सूर्य का ध्यान मस्तिष्क के मध्य ब्रह्मरन्ध्र से आरम्भ किया जाय । ध्यान ठीक प्रकार बन पड़ने में कुछ दिन लगते हैं । अभ्यास से ही साधना परिपक्व होती है । इसका चिन्ह यह है कि बिना आँख खोले ही इष्ट देव के भाव दर्शन होने लगें । प्रतीति हो चले कि अन्तःक्षेत्र में ध्येय का दिव्य अवतरण आरम्भ हो गया । मस्तिष्क मध्य में एक हल्का छोटा सौम्य सूर्य उदय हुआ । उसकी किरणें नीचे की दिशा में समस्त काय कलेवर में फैली और ऊपर के आकाश क्षेत्र में उन्होंने उभर कर गगन मण्डल के साथ सम्पर्क जोड़ा । ब्रह्मरन्ध्र को मध्य बिन्दु माना जाय । अधोभाग में शरीर के समस्त अवयव और ऊर्ध्व भाग में अन्तरिक्ष का वह भाग जो ध्यान के काय कलेवर से उतना ही ऊँचा है जितना नीचे का अधोभाग ।

मस्तिष्क मध्य में मनुष्य की दिव्य शक्तियों का अदृश्य भाण्डागार है । उसी को जाग्रत करने की प्रथम चेष्टा होनी चाहिए । ब्रह्मरन्ध्र खिले कमल की तरह दृष्टिगोचर होने लगता है । पुष्प प्रजाति में कमल का सूर्य के साथ रहस्य भरा सम्बन्ध है । प्रभात कालीन किरण पड़ते ही वह खिलना आरम्भ करता है और अस्त होने पर वह भी सिकुड़ जाता है । मस्तिष्क मध्य में सूर्य का ध्यान इस प्रकार किया जाय, मानो वह पर्वत शृंखला के हिमाच्छादित शिखर से उदय हो रहा है और उसमें यथावत् प्रतिबिम्ब मस्तिष्क मध्य में उसी तरह प्रतिबिम्बित होता है जैसे दर्पण में सामने वाला दृश्य यथावत परिलक्षित होता है ।

हिमालय के उदयाचल क्षेत्र में मान सरोवर अवस्थित है । मस्तिष्कीय स्निग्ध पदार्थ को मान सरोवर या क्षीर सागर की उपमा दी जाती रही है । शतदल कमल यही है । ब्रह्मा, विष्णु, महेश की, दिव्य गुरु सत्ता की, भावना कमलासन पर अवस्थित होने के रूप में देखी जाती है । इस स्थिति का भाव क्षेत्र मानस लोक में उभरते ही उसकी किरणें समूचे क्षेत्र में बिखरती हुई अनुभव की जानी चाहिए । साथ ही उसकी सौम्य ऊर्जा का विस्तार भी । सूर्य प्रायः उष्ण होता है, पर उसके प्रतिबिम्ब यदि शीतल झील पर पड़े तो उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रभाव एवं प्रकाश भी शीतल रहेगा । मस्तिष्क मध्य का सूर्य भी सदा शीतल ही रहता है, ताकि उसकी आभा समूचे सम्पर्क क्षेत्र को शान्ति प्रदान करती रहे । इस प्रकार से मनःक्षेत्र के वे सभी पक्ष अभिनव चेतना प्राप्त करते हैं और सभी ज्ञात, अविज्ञात, प्रसुप्त-जाग्रत क्षेत्र नए सिरे से उभरना, शक्ति सम्पन्न बनना आरम्भ कर देते हैं । यह दृश्य ध्याता को इस रूप में दृष्टिगोचर होता है, मानो उद्यान के पुष्प पल्लवों पर लगी कलियाँ खिलने और सुगंध बिखेरने लगीं । इस दृश्य को अतीन्द्रिय दिव्य क्षमताओं का प्रकट-प्रखर बनना, विकसित होना समझा जा सकता है । वैसा वस्तुतः होता भी है । साधक अनुभव करता है कि उसका मस्तिष्क क्षेत्र देवलोक की तरह सत्प्रवृत्तियों का देव शक्तियों का केन्द्र बन कर सुदूर क्षेत्र तक अपने आलोक का विस्तार वितरण कर रहा है ।

प्रत्यक्षतः काय कलेवर में यों सोने जगने की, पेट प्रजनन की सामान्य जीवों जैसी क्रियाएँ ही बन पड़ती हैं, पर यदि उसके अन्तरंग क्षेत्र में अवस्थित विभिन्न घटकों को टार्च जैसा प्रकाश उगते हुए दीख जाय तो दिव्य चेतना के आलोक में ऐसा बहुत कुछ विद्यमान अनुभव होता है, जो असाधारण है । दिव्य क्षमताओं से भरपूर है । अभिनव आलोक मिलने पर उस सबका अभ्युदय उत्कर्ष निश्चित है ।

स्थूल शरीर में अनेक गुच्छक अन्तर्ग्रन्थिस्राव, ग्रन्थि समुदाय शरीर विज्ञानी देखते हैं । सूक्ष्म शरीर को निरखने की जिसमें क्षमता है वे षटचक्र, पंचकोष, नाड़ी प्रवाह, उपतिकाएँ स्तर के सूक्ष्म अवयवों की उपस्थिति भी देखते हैं । मस्तिष्क चलन के अतिरिक्त सूक्ष्म शरीर में अति महत्त्वपूर्ण केन्द्र और भी हैं । इन्हें हृदय चक्र और नाभि चक्र भी कहते हैं । नाभि चक्र स्थूल शरीर का अधिष्ठाता है । इस परिधि को भूलोक कहते हैं । हृदय चक्र सूक्ष्म शरीर मानस लोक को स्वर्ग लोक का प्रतीक माना गया है । मस्तिष्क का ब्रह्मचक्र स्वर्ग लोक है । उसे कारण शरीर का अधिष्ठाता कहा जा सकता है ।

सामान्य स्थिति में यह तीन चक्र उपेक्षित, अविज्ञात, अविकसित स्थिति में पड़े रहते हैं, पर जब उनमें सविता के दिव्य आलोक का संचार होता है, तो क्रमशः विकसित होते चले जाते हैं । इस विकास की प्रमाणभूत अनुभूति साधक को स्वयं होने लगती है । उसे प्रतीत होता है कि सविता का अन्तःक्षेत्र में अवतरण अपना प्रभाव, चमत्कार दिखा रहा है । तीनों शरीरों में और उनमें सन्निहित अनेकानेक घटकों में अभिनव शक्ति संचार कर रहा है । सर्वतोन्मुखी अभ्युदय का इस आधार पर पथ प्रशस्त भी हो रहा है ।

समय साधना ही दृष्टि से उक्त ध्यान आदर्श अनुकरणीय एवं अतिफलदायी है । सामान्य साधन इसे दूसरी तरह भी करते रह सकते हैं । विधि इस प्रकार है—

प्रभात काल के उदीयमान सूर्य में कुछ समय तक स्वर्णिम आभा रहती है । वही नेत्रों के लिए सह्य भी है । आरम्भ में तनिक देर आँखें खोलकर उसे देखना और फिर तुरन्त ही पलक बन्द कर लेना चाहिए । सूर्य के अभाव में दीपक की लौ को देखने से भी काम चल सकता है । दोनों ही त्राटक साधना के अन्तर्गत आते हैं । खुले नेत्रों से प्रकाश को देखने की अवधि न्यूनतम होनी चाहिए । एक पल झाँकी भर । इसके उपरान्त पलक बन्द कर लेने चाहिए और उस प्रकाश पुंज की मानसिक अवधारणा करनी चाहिए । कुछ दिन के अभ्यास से सूर्य को या दीपक को खुले नेत्रों से देखने की आवश्यकता नहीं पड़ती है, यह ध्यान स्वाभाविक हो जाता है और अनायास ही होता रहता है । उस समय सविता मन्त्र का भी स्वचालित जप होता रहता है । प्राणयोग की 'सोऽहम्' साधना में श्वास-प्रश्वास के साथ निरन्तर चलते रहने की आदत स्वभाव का अंग बन जाती है ।

प्रकाश पर संयम किया गया विचारों का एकत्रीकरण दोनों उपचारों के कारण एक विशेष शक्ति से सुसम्पन्न हो जाता है, उससे अन्तक्षेत्र की दिव्य शक्ति का आविर्भाव होता है । इसका मनःक्षेत्र के किसी भी शक्ति केन्द्र पर आरोपण किया जाय तो वह प्रसुप्त अवस्था में न रह कर जाग्रत होने लगता है । इस जागृति का तात्पर्य है एक अतिरिक्त शक्ति की उपलब्धि हस्तगत होना । इस प्रयोग को शरीर के किसी अवयव पर या शक्ति केन्द्र चक्र, गुच्छक पर, उपत्यिका परिकर पर केन्द्रित किया जा सकता है । टार्च की रोशनी जिस स्थान पर पड़ती है वह परिधि चमकने लगती है । ठीक इसी प्रकार प्रकाश युक्त ध्यान को जिस भी स्थान के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए जोड़ा जाता है वहाँ अभिनव हलचल चल पड़ती है । कील ठोकने पर जिस पर छेद होता है उसकी नीचे की पर्तों में दबा हुआ पदार्थ ऊपर उछल कर आ जाता है, उसी प्रकार यह ध्यान धारणा भी फलित होती है । ऑपरेशन करने पर मबाद बाहर निकल पड़ता है । मधुमक्खी के छत्ते में नली डालने पर शहद टपकने लगता है । उसी प्रकार प्रकाश से समाहित एकाग्रता को किसी क्षेत्र पर आरोपण करने से कील ठोकने जैसी प्रतिक्रिया होती है । उससे भरी हुई अवांछनीयताओं का ऑपरेशन की तरह निष्कासन होता है । साथ ही वहाँ जो कुछ श्रेष्ठ प्रसुप्त स्थिति में पड़ा है, वह जाग्रत होकर अप्रत्यक्ष से प्रत्यक्ष स्तर पर आ जाता है । आगे का प्रश्न यह है कि ध्यान द्वारा उपलब्ध की गई बेधक दिव्य दृष्टि को किस स्थान पर, किस प्रयोजन के लिए, कितनी मात्रा में नियोजित किया जाय । यह निर्णय करने से पूर्व जानना होता है कि स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर में किसी दिव्य शक्ति का केन्द्र कहाँ है और उसके साथ सम्बन्ध जोड़ने के लिए बेधक दृष्टि से कितने मोड़-मरोड़ों में होकर गुजरते हुए पहुँचा जा सकता है ।

इतनी बारीकी में जा सकने की यदि सिद्धहस्त सर्जन जैसी योग्यता किसी अनुभवी का सान्निध्य प्राप्त करके जान सकना सम्भव नहीं तो फिर सीधा मार्ग है स्थूल शरीर की दिव्य क्षमताओं को जाग्रत करने के लिए नाभिचक्र के दिव्य कमल को ऊर्जा प्रदान करते हुए प्रस्फुरण सूक्ष्म शरीर का केन्द्र हृदय चक्र है और धारण शरीर की भाव सम्वेदनाओं का उद्गम मस्तिष्क मध्य में अवस्थित सहस्र दल कमल ब्रह्म चक्र । इनको झकझोरने से भी भौंरे की तरह दिव्य रस एवं दिव्य गंध जैसा अलौकिक आनन्द प्राप्त किया जा सकता है ।

यदि इतना न बन पड़े तो भी व्यक्तिगत साधना के लिए यह कहा जा रहा है कि—प्रातःकाल सूर्योदय के समय न्यूनतम दस मिनट गायत्री महामन्त्र का, स्नान करने पर विधिवत् और वैसा न बन पड़ने पर मानसिक जप किया जाय, साथ ही प्रभातकालीन स्वर्णिम-सूर्य का नेत्र बन्द करके ध्यान करते रहा जाय । भावना की जाय कि इससे बल, बुद्धि और सद्भाव की त्रिविध देव अनुकम्पा का लाभ उसे मिल रहा है ।

यों उपासना कभी भी की जा सकती है, किन्तु एक निर्धारित समय में असंख्यों की संयुक्त शक्ति का समन्वय हो जाने पर उसका चमत्कारी प्रतिफल होता है । जिन्हें संयुक्त शक्ति की चमत्कारी प्रक्रिया का ज्ञान है, उन्हें यह समझने में कठिनाई नहीं होनी चाहिए कि सूर्योदय के समय की उपासना को क्यों महत्त्व दिया गया है ? एक समय में असंख्यों की एक क्रिया का सूक्ष्म प्रभाव पड़ता है । इस सिद्धान्त के अनुसार पुल पर सेना को कदम मिलाकर नहीं चलने दिया जा सकता; क्योंकि पैरों की संयुक्त शब्द शक्ति पुल को गिरा देने का खतरा उत्पन्न कर सकती है । हानि की तरह वह चमत्कारी लाभ भी उत्पन्न कर सकती है, वातावरण का संशोधन करने वाली दिव्य शक्ति भी उत्पन्न कर सकती है । उससे प्रत्येक प्रयोक्ता को भी व्यक्तिगत रूप से लाभ मिलने की अतिरिक्त सम्भावना है ।

शास्त्रों में प्रातःकालीन स्वर्णिम सूर्य को सविता कहा गया है । वस्तुतः यह ज्ञान स्वरूप परमात्मा का नाम है । अग्नि पिण्ड सूर्य तो उसकी स्थूल प्रतिमा भर है । ईश्वर की स्वयंभू प्रतिमा सूर्य को कहा गया है । ॐ उसका स्वोच्चारित नाम है ।

सूर्य को प्रकाश और तेज का प्रतीक माना गया है । चेतना क्षेत्र में इस ज्ञान को प्रकाश कहा गया है । लेटेन्ट लाइट, डिवाइन लाइट, ब्रह्मज्योति आदि शब्दों में मानवी सत्ता में दैवी अवतरण के प्रकाश के उदय की संज्ञा दी गई है । सूर्य का ध्यान करते समय साधक की भावना रहती है कि सविता देव से निःसृत दिव्य किरणें मेरे कायकलेवर में प्रवेश करती हैं । फलस्वरूप स्थूल शरीर में बल, सूक्ष्म शरीर में ज्ञान और कारण शरीर में श्रृंद्धा का संचार करती है । तीनों शरीर इन अनुदानों सहित अवतरित होने वाले प्रकाश से परिपूर्ण होते चले जाते हैं । यह संकल्प जितना गहरा होता है, उसी अनुपात से चेतना में उपरोक्त विविध विशेषताएँ विभूतियाँ उभरती चली जाती हैं । इस प्रकार यह ध्यान आत्म-सत्ता के बहिरंग एवं अन्तरंग पक्ष को विकसित करने में असाधारण रूप से सहायक सिद्ध होता है ।

प्रकाश ध्यान का आरम्भ सूर्य को पूर्व दिशा में उदय होते हुए परिकल्पित करने की भावना से होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है । उसकी किरणें अपने काय-कलेवर में प्रवेश करती हैं और तीनों शरीरों को असाधारण रूप से सशक्त बनाती हैं । स्थूल शरीर को अग्निपुंज, अग्निपिण्ड-सूक्ष्म शरीर को प्रकाशमय, ज्योतिर्मय, कारण शरीर को दीप्तिमय, कान्तिमय, आभामय बनाती हैं । समूची जीवन सत्ता ज्योतिर्मय हो उठती है । इस स्थिति में स्थूल शरीर को ओजस्, सूक्ष्म को तेजस् और कारण शरीर को वर्चस के अनुदान उपलब्ध होते हैं । इस ध्यान धारणा का चमत्कारी प्रतिफल साधक को शीघ्र ही दृष्टिगोचर होने लगता है । स्थूल शरीर में उत्साह एवं स्फूर्ति, सूक्ष्म शरीर में संतुलन एवं विवेक, कारण शरीर में श्रद्धा एवं भक्ति का दिव्य संचार इस प्रकाश ध्यान के सहारे उठता, उभरता दीखता है । मोटी दृष्टि से यह लाभ सामान्य प्रतीत हो सकते हैं, किन्तु जब इस अन्तःविकास की प्रतिक्रिया सामने प्रस्तुत होगी तो प्रतीत होगा कि यह सामान्य साधना कितना असामान्य प्रभाव परिणाम उपलब्ध कराती है ।

सूर्य के प्रकाश ध्यान का प्रथम चरण बाहर के सूर्य की दिव्य किरणों का प्रवेश आत्मसत्ता में कराने का है । दूसरा चरण अन्तः सूर्य की मान्यता परिपुष्ट करके उसका प्रकाश बाह्य जगत में फैलाने का है । इसे अपने अनुदान विश्व मानव के लिए प्रेरित करने की प्रक्रिया कह सकते हैं । प्रथम चरण को संग्रह और दूसरे को विसर्जन कह सकते हैं । द्वितीय चरण में अन्तःक्षेत्र में सूर्योदय होने की मान्यता है । स्थूल शरीर का मध्य केन्द्र-नाभिचक्र, सूक्ष्म शरीर का आभाचक्र और कारण शरीर का हृदयचक्र है । इनमें से किस साधक को किस केन्द्र पर ब्रह्म चेतना के प्रतीक सविता देव के उदय की भावना करनी चाहिए । इसका निर्धारण अपनी व्यक्तिगत स्थिति का सूक्ष्म पर्यवेक्षण करते हुए करना होता है ।

अन्तः सूर्य की धारणा परिपक्व होने पर उसका प्रकाश निकटवर्ती क्षेत्र को प्रकाशित करता ही है, साथ ही उसका प्रभाव बाह्य जगत में भी फैलता है, इससे वातावरण में किन्हीं सामयिक सत्प्रेरणाओं को सुविस्तृत किया जा सकता है । मनुष्य के किसी वर्ग विशेष को उपयोगी प्रेरणाओं से प्रभावित किया जा सकता है । किसी व्यक्ति विशेष के अभावों की पूर्ति भी इस आधार पर की जा सकती है । मनुष्येतर प्राणियों पर भी इसका प्रभाव पड़ सकता है, इसी प्रकार वनस्पति जगत-पदार्थ सम्पदा की स्थिति में सुधार करने के लिए भी अन्तःसूर्य की क्षमता का परिपोषण होना सम्भव है । यह कितना प्रभाव उत्पन्न कर सकेगा, यह इस पर निर्भर है कि साधक का संयम बल, मनोबल और श्रद्धाबल किस स्तर का है । यह समर्थता साधना की प्रखरता और व्यक्तित्व की उत्कृष्टता पर निर्भर रहती है ।

ध्यानयोग में ज्योति दर्शन की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हुए शास्त्रकार कहते हैं—

तत्तेजो दृश्यते येन क्षणमात्रं निराकुलम् ।
सर्वपाप विनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम् ॥

—शिव संहिता

—आत्मा का यह परमतेज जो पुरुष चिर स्थित होकर क्षण मात्र भी देखता है वह सब पाप से मुक्त होकर परमगति को प्राप्त होता है ।

ज्योतिः पश्यति योगीन्द्रः
शुद्धं शुद्धा चलोपमम् ।
तन्त्राभ्यास बलेनैव स्वयं
तद्रक्षको भवेत् ॥

—शिव संहिता

ज्योति का ध्यान करने वाले साधक की ज्योति जब अचल हो जाती है, तब वह साधना ही अपने बल से साधक की रक्षा करती है ।

ध्यानयोग में ज्योति दर्शन के भेद-उपभेद समझाते हुए शास्त्रकार कहते हैं—

स्थलं ज्योतिस्तथासूक्ष्मं ध्यानस्यत्रिविधं बिंदु ।
स्थूलं मूर्तिमयं प्रोक्तं ज्योतिस्तेजो मयं तथा ।
सूक्ष्म बिन्दुमयं ब्रह्म कुण्डलनी पर देवता ॥

—घेरण्ड संहिता ६/१

ध्यान तीन प्रकार का होता है—स्थूलध्यान ज्योतिर्ध्यान एवं सूक्ष्मध्यान जिसमें मूर्ति, इष्ट देवता अथवा गुरु का चिन्तन हो उसे स्थूल और जिसमें तेजोमय ब्रह्म या शक्ति की भावना हो उसे ज्योयिर्ध्यान करते हैं । जिस ध्यान के द्वारा बिन्दुमय ब्रह्म कुण्डलिनी शक्ति का ध्यान हो उसे सूक्ष्म ध्यान कहते हैं ।

गायत्री महाशक्ति की आरम्भिक साधना में माता के रूप में साकार उपासना की आवश्यकता पड़ती है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु उच्चस्तरीय साधना के लिए प्रकाश ध्यान को ही अपनाना पड़ता है । गायत्री की उच्चभूमिका सवितामय बन जाती है । गायत्री का प्राण प्रकाश पुंज सविता देवता ही है, अस्तु समुन्नत भूमिका के साधक प्रकाश के ध्यान का ही अवलम्बन करते हैं । विभिन्न प्रसंगों में श्रुति यही कहती आयी है । ताण्डयोपनिषद् (१०/५/३) कहता है—

"तेजसा वे गायंत्री एवं ज्योतिर्वे गायत्री छन्दसाम्"

(१३/७/२)

यजुर्वेद कहता है—"सविता वे प्रसकानामीशे

—"सबको उत्पन्न करने वाला परमेश्वर सविता है ।" छान्दोग्युपनिषद् में ऋषि कहते हैं—

य एष आदित्ये
पुरुषोदृश्यते सोहमस्मि
स एवाहम स्मीति ॥

—"आदित्य-मण्डल में जो पुरुष देखा जाता है वह मैं हूँ । उसे अपना ही स्वरूप समझना चाहिए ।" शास्त्रकार आगे कहते हैं—

आदित्य मण्डल ध्याये
त्परमात्मा नमव्ययम्

—शौनक स्मृति

आदित्य मण्डल में अव्यय परमात्मा का ध्यान करना चाहिए ।

सविता सूर्य भूतानां सर्वभावांश्च सूयते ।
सर्वनात्प्रेरणाच्चैव सविता तेन चोच्यते ॥

—"समस्त सत्वों, सभी प्राणियों और समस्त भावनाओं को प्रेरणा देने के कारण ही उसे सविता कहते हैं ।"

यो देवः सवितास्माकंधियो धर्मादि कर्मणि ।
प्रेरयेत्तस्य तद्वर्गस्तद्वरेण्यमुपस्यहे ॥

—जो सविता देवता हमें धर्म एवं कर्त्तव्य की प्रेरणा करता है । उसके वरेण्य भर्ग की हम उपासना करें ।

प्रत्यक्ष अग्नि सूर्य भी प्राण-चेतना का प्रतीक है । अस्तु उसका सम्पर्क सान्निध्य भी साधक में प्राण संचार करता है । यह प्राण प्रतिभा भी आत्मिक प्रगति के लिए कम महत्त्वपूर्ण नहीं है । प्राणाग्नि उपलब्ध करने के लिए भी सूर्योपासना की उपयोगिता है । इस तथ्य का प्रतिपादन इस प्रकार शास्त्रों में उपलब्ध होता है ।

प्राणः प्रजानामुदयत्मेष सूर्यः ।

—प्रश्नोपनिषद्

प्रजा के लिए प्राण बनकर सूर्य उदय होता है ।

समृता को परब्रह्म का प्रतीक माना गया है । शत पथ ब्राह्मण की श्रुति है—

आदित्ये ब्रह्म इति आर्दशः

आदित्य ब्रह्म ही है । वह परम्परागत तथ्य है ।

सूर्य को आत्मा और परमात्मा का सम्मिश्रण भी कहा गया है—

यो असौ आदित्य पुरुषः सो असौ अहम् ।

—यजुर्वेद

जो इस सूर्य मण्डल में जो पुरुष है, वह मेरी ही आत्मा है ।

इसी कारण ऋग्वेद में ध्यान के लिए प्रातःकाल के उदीयमान सूर्य को सर्वोत्तम माध्यम माना गया है ।

"अथ आदित्य उदयन प्राची दिशां
सर्वान् प्राणान् रश्मिसु सन्निधत्ते"

मन्त्र में प्रातःकाल के उदीयमान सूर्य की किरणों को प्राण वर्षा करने वाली कहा गया है । आत्मसत्ता में प्राण तत्व का आकर्षण अभिवर्धन करने के लिए इस ध्यान प्रक्रिया का विशेष महत्त्व है ।

उपासना में मध्यकालीन प्रौढ़ सूर्य को नहीं प्रभात कालीन स्वर्णिम सूर्य को ही उपयुक्त माना गया है । भावना संज्ञा उसी की है । ध्यान में स्वर्ण कान्ति वाले नवोदित सविता का ध्यान करने का ही निर्देश है । इसकी फलश्रुतियों का साधक को शीघ्र ही अनुभव होने लगता है ।

प्रकाश ज्योति की साधना करने वाले साधक को कई प्रकार की कई आकृतियों की कई रंगों की ज्योतियों के दर्शन होते हैं । यह भ्रान्तियाँ नहीं हैं वरन् सूक्ष्म लोक की विशेष धाराएँ हैं । जिस प्रकार नादयोग में कई प्रकार की ध्वनियाँ सुनाई पड़ती हैं और उन सब के पीछे कुछ दिव्य संकेत संदेश होते हैं । इसी प्रकार बिन्दुयोग साधना के अन्तर्गत किए जाने वाली सविता देव की प्रकाश ज्योति की ध्यान धारणा में भी कई रंगों के प्रकाशों का दर्शन होना भी दिव्य अनुभूतियों की श्रेणी में ही गिना जायेगा ।

ध्यानयोग के लिए आश्रय किसी भी प्रतीक के अथवा परमात्मा के दिव्य विराट् रूप को चिन्तन रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में लिया जा सकता है । महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जिन गुणों का ध्यान किया जा रहा है वे साधक को कितना अनुप्राणित कर पाये उसके जीवन में किस सीमा तक उतरे । ध्यान से सिद्धि बाद की बात है, पहले सविता के ध्यान द्वारा प्राण शक्ति के अपने अन्दर होने की धारणा की जाय वही उत्तम है ।

ज्योतिपुंज सविता की ध्यान धारणा

(१) सावधान स्थिर शरीर शान्त मन । स्थिर चित्त । कमर सीधी, आँखें बन्द, हाथ गोदी में । ध्यान मुद्रा । भाव समाधि ।

(२) गंगा की गोद, हिमालय की छाया, प्रज्ञातीर्थ का दिव्य वातावरण, प्राण ऊर्जा का प्रखर संरक्षण ।

(३) प्रभातकाल । पूर्व दिशा । उदयमान स्वर्णिम सूर्य-सविता । सविता स्वर्णिम सूर्य ।

(४) स्वर्णिम किरणों का साधक के शरीर में प्रवेश । नस-नस में, रोम-रोम में, कण-कण में स्वर्णिम ऊर्जा का समावेश ।

(५) उपलब्धि-ओजस्, तेजस्, वर्चस की । साहस, शौर्य, पराक्रम की । दूरदर्शी विवेकशीलता से आत्मसत्ता ओत-प्रोत ।

(६) फलश्रुति-व्यक्तित्व प्रखर, समर्थ, प्रतिभावान ।

(७) प्रतिभा का उपयोग-सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन में दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन में ।

(८) दो प्रयोजनों की सिद्धि-आत्मपरिष्कार-लोकचेतना का सर्वतोन्मुखी विकास ।

(९) ॐ तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
ॐ असतो मा सद्गमय ।
ॐ मृत्योर्माऽमृतंगमय ।

दिव्य अनुदान की ध्यान धारणा

युग सन्धि के इस पावन पर्व पर हिमालय के आध्यात्म ध्रुव केन्द्र से जाग्रत आत्माओं को नव सृजन की क्षमता में अतिरिक्त अभिवृद्धि के लिए कुछ विशेष अनुदान वितरित किए जा रहे हैं । उत्कृष्ट चिन्तन, आदर्श चरित्र और सुसंस्कृत लोक-व्यवहार की दिव्य विभूतियों में अभिवृद्धि करने के लिए कोई भी भावनाशील इन्हें सहज ही उपलब्ध कर सकते हैं । इस दैवी अनुग्रह को जो जितना समेट सकेंगे वे अपना व्यक्तित्व विकसित करेंगे और आन्तरिक पवित्रता के अतिरिक्त प्रतिभा एवं प्रखरता भी विकसित करेंगे । स्मरण रहे यह अनुदान मात्र उच्चस्तरीय उद्देश्यों के लिए ही है । संकीर्ण स्वार्थपरता की मनोकामना तथा लोभ, मोह, विलास एवं अहंकार की लिप्सा-तृष्णा पूरी करने के लिए इन दिव्य अनुदानों का उपयोग न हो सकेगा ।

इस प्रवाह का समय सूर्योदय के पूर्व से लेकर सूर्योदय तक का एक घण्टा ही निर्धारित है । इससे पूर्व या पश्चात उस विशिष्ट अनुदान की उपलब्धि न हो सकेगी । साधना का क्रम-विस्तार इस प्रकार है—

एकान्त खुली हवा का कोलाहल रहित स्थान ढूँढ़े । आसन बिछाकर हिमालय की दिशा में मुँह करके बैठें । पालथी मारकर ध्यान मुद्रा बनायें । ध्यान मुख के पाँच अनुशासन हैं—(१) स्थिर शरीर, (२) शान्त चित्त, (३) कमर सीधी, (४) हाथ गोदी में, (५) आँखें बन्द । शरीर और मन की स्थिति ऐसी बना देने में दस-पाँच मिनट का समय लगता है । इसके उपरान्त भावनापूर्ण ध्यान करना चाहिए और आँखें बन्द करके कल्पना चित्र इस प्रकार निर्मित करने चाहिए ।

—हिमाच्छादित हिमालय के सर्वोच्च शिखर पर प्रभातकालीन स्वर्णिम सूर्य का उदय ।

—स्वर्णिम किरणों का हिमालय से साधक तक प्रवाह । किरणों का साधक के हृदय-चक्र में प्रवेश । इसके उपरान्त उस ऊर्जा का ऊपर मस्तिष्क सहस्रार चक्र तक और नीचे मूलाधार चक्र तक उसका विस्तार । मस्तिष्क और धड़ के सभी अवयव उस आलोक से प्रकाशित, पुलकित और अनुप्राणित ।

—नस-नस में, कण-कण में, रोम-रोम में दिव्य ज्योति का अभ्यास । साधक की आत्म सत्ता प्राण पुंज । प्रज्ञा पुंज । ज्योति पिण्ड जैसी ।

—स्थूल शरीर निष्ठावान । सूक्ष्म शरीर प्रज्ञावान । कारण शरीर श्रद्धावान ।

—साधक पर त्रिपदा की स्नेह वर्षा । सविता की शक्ति वर्षा । अनन्त अन्तरिक्ष से अमृत की विपुल वर्षा ।

—अन्तरात्मा साधक की, रस विभोर । आनन्द से सराबोर । अनुभूति-तृप्ति । तुष्टि । शान्ति ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

—हिमालय की शक्तिधारा से साधक का परिवर्तन । परिवर्तन—प्रत्यावर्तन—पुनर्जीवन ।

—परिवर्तन क्षुद्रता का महानता में । परिवर्तन वासना का भावना में । परिवर्तन नर का नारायण में । परिवर्तन उद्वेग का समाधान में ।

—विलय, विसर्जन—आत्मा का परमात्मा में । अनुभूति एकत्व अद्वैत ।

पाँच बार मन ही मन ॐकार गुंजन । तीन बार तीन प्रार्थनाएँ—असतो मा सद्गमय । मृत्योमाऽमृतंगमय । तमसो मा ज्योतिर्गमय ।

उपरोक्त ध्यान मौन रूप से मन ही मन किया जाय । मुख से उच्चारण कुछ भी न करें । टैप से उपरोक्त निर्देश मिलते रहें तो उस आधार पर ध्यान धारणा में सहायता मिलती है और कल्पना चित्र अच्छे उभरते हैं । अन्यथा उपरोक्त सारी क्रम शृंखला पहले बार-बार दुहरा कर स्मृति पटल पर बिठानी पड़ती है । सब प्रवाह ठीक प्रकार बनता है ।

यह ध्यान धारणा नित्य न बन पड़े तो सप्ताह में एक दिन गुरुवार या रविवार को भी की जा सकती है । उस दिन ब्रह्मचर्य, अस्वाद व्रत का पालन हो सके एक सुविधा के समय दो घण्टे का मौन रखते हुए वह समय आत्म परीक्षण, आत्म सुधार, आत्म निर्माण, आत्म विकास के चिन्तन मनन में लग सके तो और भी अच्छा । इस सुयोग से हिमालय की शक्ति धारा को साधक की आत्म सत्ता में गहराई तक प्रवेश करने और रोम-रोम में रम जाने का अवसर मिलता है । यह साधना एकांकी भी हो सकती है और टैप रिकार्डर की सहायता से सामूहिक भी ।

व्यस्त प्रज्ञा परिजन भी इतना तो कर ही सकेंगे

युग सन्धि जैसे विशेष समय हजारों, लाखों वर्षों बाद आते हैं । उन दिनों विभूतिवानों की विशिष्ट परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए, निजी कामों को गौण मानते हुए, समय की माँग पूरा करने को प्रमुखता देनी पड़ती है ।

इतने पर भी कुछ की मनःस्थिति या परिस्थिति ऐसी होती है जो चाहते हुए भी कुछ कर नहीं पाते । ऐसे परिजनों के लिए एक सरल मार्ग यह है कि अपनी वे निजी विचारणा और जीवनचर्या में युग धर्म के अनुरूप परिवर्तन प्रारम्भ करें । नव सृजन की दिशा में कुछ कदम बढ़ाने का प्रयत्न करें । भले ही वह न्यूनमत ही क्यों न हो ।

युग सन्धि के इस पावन पर्व पर जब सर्वत्र नव सृजन की उमंगे उभर रही हैं और प्रज्ञापुत्र महाकाल के निमन्त्रण पर भावभरे कदम उठाने के लिए मचल रहे हैं, तब उस समुदाय को भी सर्वथा निष्क्रिय नहीं रहना चाहिए जो परिस्थितिवश अधिक कुछ कर सकने की स्थिति में नहीं हैं । ऐसे परिजनों को भी ऐसे हल्के कदम उठाने चाहिए जो नितान्त व्यस्त एवं परिस्थितिवश लोक मंगल के लिए कुछ प्रत्यक्ष अनुदान प्रस्तुत नहीं कर पा रहे हैं । यहाँ तक कि अपनी निजी साधना-उपासना का भी नियमित उपक्रम बन नहीं पड़ रहा है । इसे समुदाय के लिए एक अति सरल कार्यक्रम प्रस्तुत किया गया है और उसको अपनाने के लिए वसन्त या नवरात्रि पर्व को ही शुभारम्भ के मुहूर्त के रूप में मनाने के लिए अनुरोध किया गया है ।

(१) साधना (२) स्वाध्याय (३) संयम (४) सेवा इन चार उपचारों को आत्मोत्कर्ष के आधारभूत अवलम्बन माना गया है । इन्हें किसी न किसी रूप में अपनी जीवनचर्या में स्थान देने और परिवार का भी विस्तृत शरीर मानकर उसमें भी वे हलचलें उत्पन्न की जानी चाहिए, यह हर स्थिति के व्यक्ति के लिए नितान्त सरल है ।

न्यूनतम उपासना

साधना १

उपासना, पराशक्ति के साथ अपना सम्बन्ध सूत्र जोड़कर उसके अनुदानों के लिए द्वार खोलने की प्रक्रिया है । युग सन्धि में यह नितान्त आवश्यक है । भले ही वह दस मिनट जितनी स्वल्प ही क्यों न हो । इतने पर भी उसे निष्ठा युक्त तो होना ही चाहिए । नैष्ठिक अर्थात् आस्था और दृढ़तापूर्वक अपनाया जाना । भोजन अथवा शयन के साथ उसका सम्बन्ध जोड़ा जाय । इतना किए बिना भोजन न करेंगे, पर सोयेंगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं ऐसा नियम बना लेने पर दस मिनट की उपासना भी प्रभावी हो सकती है ।

प्रातः आँख खुलते ही बिस्तर पर ही गायत्री का मानसिक जप और सविता के प्रकाश का ध्यान किया जाय । प्रातःकाल के स्वर्णिम सूर्य को जीवन का सौभाग्योदय माना जाय और नमन करते हुए उस आलोक को आत्मसात करने की भावना की जाय । शरीर से सत्कर्म, मन से सद्विचार, अन्तःकरण से सद्भाव अपनाये जाने की दिव्य प्रेरणा ही सविता का अनुदान समझा जाय । रात्रि को भी सोते समय बिस्तर पर गायत्री का मानसिक जप और अस्त होते हुए सविता का ध्यान किया जाय । सविता अर्थात् जीवन । अस्त अर्थात् मरण । मरण को ध्यान में रखने तथा उसकी दूरदर्शितापूर्ण तैयारी की बात सोची जाय ।

यह न्यूनतम उपासना हुई । इसके अतिरिक्त स्नान करने के उपरान्त भी कुछ समय गायत्री का प्रतिभा पूजन, नमन, अभिनन्दन, जप, ध्यान का कुछ औपचारिक नियम बनाया जाय । परिवार में भी हर सदस्य को इतना करने की प्रेरणा दी जाय ।

उपासना में जिनकी रुचि नहीं है वे सबेरे सोकर जागने और रात्रि को बिस्तर पकड़ने के बाद पाँच मिनट को महाप्रज्ञा का प्रकाशपुंज के रूप में ध्यान कर लिया करें । प्रज्ञा का अधिष्ठाता सविता को माना गया है । सविता अर्थात् प्रकाशपुंज सूर्य । प्रभात काल का उदीयमान सूर्य अपनी प्रभातकालीन उपासना का माध्यम बने और रात्रि को सोते समय अस्त होते हुए सूर्य को मानसिक नमन किया जाय । यह पाँच-पाँच मिनट का उभयकालीन सविता वन्दना करने का क्रम चल पड़े तो इससे न समय सम्बन्धी कठिनाई पड़ेगी और न आस्तिकता-नास्तिकता के जंजाल बाधक बनेंगे । प्रकाशपुंज के ध्यान में तेजस् के साथ सम्पर्क जुड़ता है और उससे प्रकाश की दिशा में प्रगति देने वाला साहस भी जगता है ।

उस दृश्य ध्यान के साथ-साथ इतना भर जोड़ना चाहिए कि जीवन के रूप में प्रभातकालीन अरुणोदय जैसा अनुदान किसी विशेष प्रयोजन के लिए मिला । रात्रि को सोते समय अस्तकाल की तरह नियति ने उसे वापस ले लिया । प्रकारान्तर से प्रभात संध्या को जन्म और अस्त संध्या को मरण कहा जा सकता है । इन दोनों तथ्यों को आमतौर से विस्मृति के गर्त में ही पड़ा रहने दिया जाता है । यह सुरदुर्लभ मनुष्य जीवन के सौभाग्य और उसके साथ जुड़ी जिम्मेदारी तथा सम्भावना पर विचार करने का तनिक-सा भी अवसर मिलेगा और रात्रि में बिजली कौंधने की तरह सघन अंधकार में भी कुछ देखने और कुछ सोचने का ऐसा अवसर मिलेगा जिसे उज्ज्वल भविष्य की सम्भावनाओं के साथ पूरी तरह जोड़ा जा सके । इसी प्रकार सोते समय अस्त सूर्य से तात्पर्य जीवन समापन मरण से जोड़ा जा सके और यह सोचा जा सके कि उस सुनिश्चित सम्भावना को पश्चाताप भरी न होने देने के लिए अभी से क्या किया जा सकता है ? तो समझना चाहिए कि प्रस्तुत ढर्रे पर नए सिरे से विचार करने का अवसर मिला । अस्तु इस न्यूनतम उपासना उठते समय अरुणोदय और सोते समय सूर्यास्त का ध्यान करने की प्रक्रिया का शुभारम्भ इन्हीं दिनों कर देना चाहिए ।

भारतीय साधना पद्धति में अनादि काल से गायत्री साधना सर्वश्रेष्ठ साधना के रूप में चली आ रही है । मात्र इसी को गुरुमन्त्र कहा गया है । अवतारों तक ने इसी के सहारे सफलता पायी है । मध्य युग में इस पर प्रतिबन्ध लग गया, यह और बात है, पर उसे किसी ने छोटा नहीं कहा । वर्तमान समय में जब ईश्वरीय चेतना 'प्रज्ञावतार' के रूप में अवतरित हो रही है, तब तो गायत्री साधना अनिवार्य आवश्यकता बन गई है । गायत्री परिवार के सूत्रधारों ने सारे आर्षवागंमय के सार और अपनी दीर्घकालीन साधना के निचोड़ के रूप में जो साधना पद्धति विकसित की है वह अब प्रयोगों और प्रत्यक्ष प्रतिफलों के आधार पर भी इस युग के लिए अनुपम साधना के रूप में प्रतिष्ठा पा गई है ।

इस प्रक्रिया का नया संस्करण 'युग सन्धि महापुरुश्चरण' एवं 'प्रज्ञा पुरश्चरण' के रूप में प्रयुक्त हो रहा है । शक्ति संचार का दिव्य अनुदान इसी साधना का अंग है । इस अनुदान का लाभ नैष्ठिक उपासकों को स्वभावतः अधिक मिलेगा, पर जो किसी भी रूप में नियमित गायत्री साधना करेंगे उन्हें भी उसका पर्याप्त लाभ मिल सकेगा । नैष्ठिक उपासना के नियम इस प्रकार हैं—

(१) हर दिन न्यूनतम पाँच माला गायत्री मन्त्र जप, ब्रह्ममुहूर्त में पन्द्रह मिनट की शक्ति संचार एवं वातावरण अनुकूलन साधना ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२) गुरुवार को अस्वाद व्रत, ब्रह्मचर्य और दो घण्टे के मौन की संयम साधना ।

(३) महीने में एक बार यज्ञ में सम्मिलित होना, आश्विन और चैत्र की नवरात्रियों में २४ हजार गायत्री मन्त्र जप का अनुष्ठान करना ।

(४) न्यूनतम दस अनुसाधक बनाये रहना । उनका तीन माला जप या २४ मन्त्र लेखन या ५ गायत्री चालीसा पाठ का क्रम रहा है या नहीं, इसकी देख भाल रखना । इन साधकों का मार्ग-दर्शन करना ।

(५) अपने क्षेत्र में गायत्री मन्दिरों (प्रज्ञा मन्दिरों) की स्थापना के लिए निरन्तर प्रयत्न करना । युग सन्धि साहित्य को अधिकाधिक लोगों को पढ़ाते रहना ।

किसी समय इन नियमों में से यदि कोई सध न सके तो उसे अगले दिनों पूरा कर लेना चाहिए । नैष्ठिक साधक बनने के इच्छुक व्यक्ति इन शर्तों को पूरा करने का संकल्प पत्र हाथ से लिखकर शान्ति कुंज हरिद्वार, के पते से भेज सकते हैं । इससे उनका पंजीयन नैष्ठिक साधकों में हो जाता है ।

जो नैष्ठिक साधक का परिपूर्ण उत्तरदायित्व वहन न कर सकें वे नियमित साधना अवश्य करें । उसमें भावभरी उपासना, व्यक्तित्व में पवित्रता, प्रखरता की जीवन साधना तथा संयम सेवा का समावेश यह तीनों धाराएँ जुड़ी रहें । इससे उन्हें असाधारण सौभाग्य एवं आत्मिक प्रगति की उपलब्धि हो सकेगी । इसमें लिंग, आयु, जाति, सम्प्रदाय आदि का कोई बन्धन नहीं है ।

इन साधना के भागीदार साधकों को समर्थ एवं समग्र मार्ग-दर्शन तथा संरक्षण-सहयोग की सुविधा भी प्राप्त रहेगी । यह कोई नई बात नहीं है । साधना के प्रति सच्चे अर्थों में जो निष्ठावान हैं, उन्हें सिद्ध पुरुषों के उच्चस्तरीय अनुदान मिलते हैं और वे स्वल्प पुरुषार्थ में भी उच्चस्तरीय सफलताएँ प्राप्त कर सकने में सफल होते हैं । विवेकानन्द को परमहंस का, शिवाजी को समर्थ का, चन्द्रगुप्त को चाणक्य का, विनोबा को गाँधी का अनुदान मिला और वे मूलतः अकिंचन होते हुए भी अन्ततः महान बन सकने में सफल हुए । उस उपक्रम को अपनाने के लिए हर उस व्यक्ति को जो सम्पर्क में आयें और आत्म चेतना सम्पन्न हों, उन्हें भी अपनाने के लिए कहा जाना चाहिए । अभी इसे कुछ समय समझने-समझाने का प्रयत्न किया जाय । आवश्यक पृष्ठभूमि बनाई जाय, गोष्ठियों और परामर्शों में उसके हर पक्ष को भली प्रकार समझ लेने के उपरान्त ही वह श्रद्धा और तत्परता विकसित होगी जिसके सहारे इस अति महत्त्वपूर्ण युग साधना का सही और स्थायी रूप में निर्वाह सम्भव हो सके ।

साधना २

युग सन्धि में आरम्भ होने वाली—युग सृजन शिल्पियों की युग साधना का रूप इस प्रकार है—

(१) दैनिक उपासना में न्यूनतम गायत्री मन्त्र की तीन माला अथवा २४ मन्त्र लेखन, अथवा पाँच गायत्री चालीसा पाठ । नैष्ठिक साधक इतना तो करें ही, अधिक बन पड़े तो और भी उत्तम है ।

(२) गुरुवार को अस्वाद व्रत एवं ब्रह्मचर्य व्रत पालना ।

(३) आश्विन और चैत्र की नवरात्रियों में सामूहिक गायत्री अनुष्ठान ।

इस नियमित उपासना क्रम के अतिरिक्त प्रातःकाल की शक्ति संचार साधना है । यह सूर्योदय से एक घण्टा पूर्व से लेकर सूर्योदय तक की अवधि में किसी भी समय १५ मिनट तक की जा सकती है । विधि इस प्रकार है—

—स्थिर शरीर, शान्तचित्त, सुखासन (पालथी), कमर सीधी, हाथ गोद में, आँखें बन्द, ध्यान मुद्रा ।

—साँस धीरे-धीरे खींचें । अनुभव करें हिमालय केन्द्र से प्रेरित विशिष्ट प्राणप्रवाह साँस के साथ घुलकर शरीर में भीतर पहुँच रहा है ।

—वह प्राण प्रवाह युक्त साँस मल मूत्र छिद्रों के मध्य मूलाधार चक्र तक पहुँचकर उससे टकराता है ।

—प्राण-वायु से टकराने से मूलाधार में सोई पड़ी सर्पिणी के सदृश्य कुण्डलिनी शक्ति में हलचल उत्पन्न होती है ।

—कुण्डलिनी श्वास में घुले प्राण-प्रवाह को पीकर जाग्रत और परिपुष्ट होती है । उस जागरण से स्थूल, सूक्ष्म और कारण शरीरों को बल मिलता है ।

—साँस को खींचते समय प्राण के मूलाधार चक्र तक पहुँचने का और रोकते समय मूलाधार से टकराने तक कुण्डलिनी जागने की धारणा की जाय ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

—छोड़ते समय यह किया जाय कि प्राण-वायु मेरुदण्ड मार्ग से ऊपर उठती हुई मस्तिष्क के मध्य केन्द्र तक पहुँचती है और वहाँ से वह नासिका द्वारा अनन्त अन्तरिक्ष में बिखर जाती है । यह समस्त प्राण प्रवाह ब्रह्माण्ड में फैलता है । उनके प्रवाह से विभीषिकाएँ निरस्त होती हैं और अनुकूलताएँ बढ़ती हैं ।

—यह एक प्राणायाम हुआ । इसमें पूरक, कुम्भक और रेचक तीन ध्यान हैं । तीनों के तीन उद्देश्य है—धारण, जागरण एवं संचार । इससे आत्मसत्ता की प्रखरता बढ़ती है और वातावरण के अनुकूलन में सहायता मिलती है ।

जप की दैनिक, व्रत की साप्ताहिक और अनुष्ठान की छमाही साधना करने का नियम बनाया जाय और उसे निष्ठापूर्वक निभाया जाय । कारणवश कभी उसमें व्यतिरेक उत्पन्न हो जाय तो उसकी पूर्ति अगले दिनों कर दी जाय ।

यह साधना देखने में सामान्य, किन्तु परिणाम में असामान्य है । इसमें विशेष महत्त्व शक्ति-संचार साधना का है । इसे हिमालय पर अवस्थित आध्यात्म ध्रुव केन्द्र का अनुदान समझा जाय । युग सन्धि के वर्षों मे यह विशिष्ट प्राण-प्रवाह सूर्योदय तक निरन्तर चला करेगा, यह युग निर्माण परिवार के परिजनों को अतिरिक्त अनुदान है । इसका स्वरूप प्राण प्रवाह है, जिसे संकल्प पूर्वक खींचने पर साँस के साथ भीतर प्रवेश करने का अवसर मिल जाता है । इस उपलब्धि को एक प्रकार का आध्यात्मिक 'टॉनिक' समझा जाय । जो इसे प्राप्त कर आत्मबल से सम्पन्न होंगे वे अपने भीतर ओजस्, तेजस्, वर्चस की क्रमिक अभिवृद्धि होती अनुभव करेंगे । साँस खींचने का प्रथम पूरक भाग इसी निमित्त है । इसे अनुदान पाने और सँभाल कर रखने की धारणा कह सकते हैं । दूसरा कुम्भक भाग, मूलाधार में अवस्थित दिव्य कुण्डली शक्ति को जगाता है । उसे प्रसुप्ति का जागरण समझा जाय । अतीन्द्रिय क्षमता अन्तराल में छिपी पड़ी है । उसे जगाने पर साधक में दैवी शक्तियाँ बढ़ती और परिपुष्ट होती हैं ।

निजी पुरुषार्थ मात्र की साधनाएँ इस जागरण प्रक्रिया को बहुत समय में बहुत बड़ी कठिनाई से-स्वल्प मात्रा में ही सफल बना पाती हैं, किन्तु दिव्य प्राण का अनुदान श्वास-प्रश्वास में घुला रहने से, वह प्रयोजन सरलतापूर्वक अधिक मात्रा में सम्पन्न होता है । युग शिल्पियों को इन दिनों इतना अवकाश नहीं मिलेगा कि वे इतनी लम्बी एकान्त साधना एवं कठिन तपश्चार्याएँ कर सकें । साथ ही उन्हें विशिष्ट उत्तरदायित्वों को वहन करने के लिए अतिरिक्त सामर्थ्य भी चाहिए । यह उपलब्धि इस साधना द्वारा मिल सकेगी । विवेकानन्द की निजी सम्पदा स्वल्प थी तो भी वे गुरु के अनुदान से आत्मबल सम्पन्न बने और महत्त्वपूर्ण कार्य कर सके । गुरुदेव भी इतने कठिन उत्तरदायित्वों का निर्वाह, ऐसे हिमालयी अनुदान के सहारे कर पाते हैं । यह अब लाभ अन्य सृजन शिल्पियों को भी मिलने लगेगा । प्राण साधना के कुम्भक काल में प्रसुप्ति को जगाने की प्रक्रिया सम्पन्न होती है ।

तीसरे पक्ष रेचक को विश्व-कल्याण के निमित्त प्रस्तुत किया गया साधक का योगदान कह सकते हैं । दूषित और विक्षुब्ध वातावरण पृथ्वी के इर्द-गिर्द छाया हुआ है । विपत्तियों और विभीषिकाओं के बरसने की आशंका इसी काली घटा से है । इसे धकेलकर अनन्त ब्रह्माण्ड में तिरोहित करना है । इस प्रयोजन के लिए संचार साधना द्वारा छोड़ा गया प्राण प्रवाह उद्देश्य को पूरा कर सकेगा । युग निर्माण योजना के प्रायः २४ लाख सदस्य हैं । इन सबके द्वारा एक नियत समय पर किए जाने वाली यह प्राण-वर्षा धकेलने और खदेड़ने का काम भली प्रकार कर सकेगी । यह क्रम ठीक तरह चल पड़े तो अगले बीस वर्षों में जिन प्रतिकूलताओं के बरसने का भय है, उसका बहुत बड़ा भाग निरस्त हो जाने की आशा है । जो अवश्यम्भावी है, उसका इतना अंश ही मनुष्य को संत्रस्त करेगा जिसे वह सरलता पूर्वक सहन कर सके महाविनाश के टल जाने में इस साधना का चमत्कारी परिणाम होता है । शर्त एक ही है कि परिजन उसे निष्ठापूर्वक नियमित रूप से निर्धारित समय पर करते रहें ।

दूसरे चक्र की अवधि में साँस द्वारा छोड़ा गया प्राण-प्रवाह जहाँ प्रतिकूलताओं को खदेड़ने में सफल होगा वहाँ इस सम्भावना की भी पूरी-पूरी आशा है कि अनुकूलताएँ दिव्य लोकों से खिंचे और प्राणियों में सद्भावना तथा पदार्थों में सार बनकर पृथ्वी पर उतरें, सतयुग-नवयुग के लिए मानवी पुरुषार्थ के अतिरिक्त दैवी अनुदानों की भी आवश्यकता पड़ेगी । प्रस्तुत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साधना का आकर्षण द्रौपदी और गज को मिले अनुग्रह जैसे दिव्य अनुदान उपलब्ध कर सकता है ।

पन्द्रह मिनट सबकी सुविधा की दृष्टि से न्यूनतम अनुबन्ध की तरह रखे गए हैं । अधिक समय बढ़ाना हो तो उसे हर सप्ताह एक मिनट के क्रम से बढ़ाया और अधिकतम आधा घण्टा तक पहुँचाया जा सकता है । इससे अधिक न किया जाय । प्रस्तुत प्राण-प्रवाह में हिमालय से प्रेषित विशिष्ट ऊर्जा सम्मिलित रहती है । उसे खींचना सरल है, पर पचाना कठिन है । पन्द्रह मिनट सबको पच सकते हैं । यह मध्यवर्ती मात्रा है । बालक एवं दुर्बल दस मिनट ही करें । जो आत्मिक दृष्टि से प्रौढ़ एवं परिपक्व हैं वे एक-एक मिनट बढ़ाते हुए आधा घण्टा तक पहुँच सकते हैं । अधिक भोजन से उत्पन्न होने वाली हानियों की तरह उस प्राण संचार साधना को भी उपयुक्त सीमा तक सीमित रखने को ही कहा गया है ।

युग सन्धि की यह साधना सभी परिजनों को आरम्भ करनी है, पर उससे पूर्व उसकी चर्चा, शिक्षा चलनी चाहिए ताकि नियत समय में उसे सही से अपनाया जाना और आत्म-कल्याण तथा विश्व-कल्याण का उभय पक्षीय प्रयोजन पूरा कर सकना सम्भव हो सके ।

साधना ३

उपर्युक्त न्यूनतम साधनों से भी लोक मंगल के बड़े प्रयास सम्भव होंगे, इसलिए इसे सम्पन्न करने वालों को प्रचुर मात्रा में पुण्य की प्राप्ति होगी, जो लोक परलोक दोनों क्षेत्रों में हितकारी सिद्ध होगें । वे अग्रदूत कहला सकेंगे, उन्हें तदनुरूप यश और नेतृत्व का गौरव प्राप्त हो सकेगा । इसलिए जितने अधिक व्यक्ति इस साधना क्रम में जुड़े-जोड़े जा सकें उतना ही अच्छा है । इसके दो चरण हैं—

प्रथम चरण : व्यक्तिगत, न्यूनतम

युग पुरश्चरण का न्यूनतम और सरलतम स्वरूप वह बना है । जिसे एकाकी व्यक्ति भी बिना किसी कठिनाई के अति सरलता पूर्वक सम्पन्न कर सके । हर स्थिति का व्यक्ति उसे सलरता पूर्वक अपना सके । युग पुरश्चरण में उदीयमान सूर्य का ध्यान करते हुए गायत्री महामन्त्र का जप करना होता है । भावना करनी है कि परम पिता परमात्मा का, आद्यशक्ति युग चेतना का दिव्य प्रवाह उमड़ रहा है, सूर्य की स्वर्णिम आभा के रूप में हमें चारों और से घेरे है । यह दिव्य चेतना अपने प्रभाव क्षेत्र में हर जड़-चेतन को नवयुग के अनुरूप संस्कारित-विकसित कर रही है । मन्त्र शक्ति के द्वारा हम उस दिव्य चेतना के साथ एकाकार हो रहे हैं ।

इस साधना के लिए स्नान अनिवार्य नहीं है, यों जितनी अधिक शुद्धता बन पड़े उतना ही अच्छा है । अत्यन्त व्यस्त लोगों को भी साधना कम से कम पन्द्रह मिनट तो करनी ही चाहिए । जिनके पास समय है वे आधे घण्टे तक इसे करें । रुचि और अभ्यास के आधार पर समय अधिक भी किया जा सकता है । इसके लिए सूर्योदय अथवा सूर्यास्त का संधिकाल अधिक लाभ-प्रद है । यह न सधे तो किसी भी समय यह प्रयाग किया जा सकता है । गायत्री मन्त्र न बने तो किसी अन्य मन्त्र के साथ उपरोक्त ध्यान प्रयोग किया जा सकता है ।

गायत्री आद्यशक्ति है । उसे वेदमाता, देवमाता, विश्वमाता भी कहा जाता है । उपासना की दृष्टि से उसे परम आराध्य माना गया है । गायत्री का देव 'सविता' है । सविता—अर्थात् उदीयमान स्वर्णिम सूर्य । इस पुरश्चरण में दोनों का समान सहयोग रहेगा । गायत्री का जप और सूर्य का ध्यान इससे सविता-सावित्री का संयोग बनता है और महान शक्ति का उद्भव होता है । इस बार युग अवतरण प्रयोजन के लिए सावित्री रूपी धनुष पर, सविता के तेज को ब्रह्मास्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जाना है । सूर्य केवल अग्नि पिण्ड ही नहीं है, उसकी चेतनात्मक अपार शक्ति का वर्णन भी शास्त्रकारों ने मुक्त कण्ठ से किया है । इसीलिए इस प्रयोग में नित्य प्रातः सूर्योदय काल में, न्यूनतम १५ मिनट का समय लगाने का निर्धारण किया गया है । जप ध्यान के समय यदि अपनी उपस्थिति शान्ति कुंज के प्रांगण में अनुभव की जाय तो इससे तीर्थ चेतना का विशिष्ट लाभ भी साथ जुड़ जाता है ।

बुद्ध को जिस वृक्ष के नीचे बोध हुआ था, उसकी टहनियाँ काटकर बुद्ध धर्म के अनुयायी अपने-अपने देशों में ले गए थे । उस टहनी को पाल-पोष कर विशाल वृक्ष के रूप में विकसित करके श्रद्धा केन्द्र

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाया था । शान्ति कुंज इस साधना का उद्‌गम केन्द्र है । वहाँ रहकर साधना करने का तो विशेष महत्त्व है ही; पर यदि वहाँ स्थित होकर साधना करने की भावना भी बनी रह सके, तो भी चेतना प्रवाह का पर्याप्त लाभ प्राप्त करना सम्भव है । गंगा की गोद, हिमालय की छाया, सप्तऋषियों की तपोभूमि, प्राण-प्रेरणा का सान्निध्य, उपासना का जीवन्त केन्द्र जैसी अनेकों विशेषताओं से भरा-पूरा यह उद्‌गम, भावना क्षेत्र में भी जम सके, तो सामान्य की अपेक्षा, असाधारण अनुभव और प्रभाव उपलब्ध होगा ।

रविवार सूर्य का दिन है । उस दिन कुछ विशेष उपक्रम करना चाहिए । उस दिन प्रायः परिवार के जितने लोग सम्मिलित हो सकें, उन्हें इकट्‌ठा करके उपरोक्त साधना सामूहिक रूप से करनी चाहिए । देव प्रतीक के रूप में चौकी पर दीपक अगरबत्ती और जल पात्र रख लेना चाहिए । साधना प्रयोग पूरा होने पर जलपात्र लेकर पूर्व दिशा में सूर्य की ओर अर्घ्य चढ़ाकर साधना का समापन करना चाहिए । जिनसे सधे वे रविवार को आधे दिन का उपवास करें, एक समय ही भोजन करें । यह सभी नियम सर्वसुलभ हैं । जो अधिक व्यस्त हैं और सामूहिक उपक्रम बनाने में समर्थ नहीं हो पाते, वे भी इतना क्रम तो सहज ही अपना सकते हैं ।

दूसरा चरण : संगठन, सत्संग

युग संधि पुरश्चरण का अगला कदम कुछ कठिन तो है; पर उसकी शक्ति सामर्थ्य और लाभ भी अपेक्षाकृत अधिक हैं । यह है साप्ताहिक, सामूहिक साधना का क्रम । इस हेतु परिवार का दिन सर्वोत्तम है; किन्तु अन्य दिनों के प्रयोग पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है । इसी तरह प्रातः-सायं की सन्धि वेलाएँ श्रेष्ठ हैं, किन्तु किसी अन्य समय करने पर भी प्रतिबन्ध नहीं है ।

ठीक समय पर अधिक से अधिक नर नारी एकत्रित किए जायें । पूजन चौकी पर दीपक और अगरबत्तियाँ रहें । उन्हें दीप यज्ञ की तरह प्रज्ज्वलित करके कुछ देर गायत्री मन्त्र का सामूहिक सस्वर उच्चारण किया जाय । जिन्हें शुद्ध मन्त्रोच्चार का अभ्यास न हो वे उसे सीख भी लें । चौबीस बार यह उच्चारण किया जा सके तो अच्छा है । स्थिति अनुसार कम भी कर सकते हैं । उसके बाद आधे घण्टे तक मौन जप और निर्धारित ध्यान चलाया जाय । जप की समाप्ति पर शान्ति पाठ और सूर्याघ्य दान किया जाय । एक व्यक्ति अर्घ्य चढ़ाये, अन्य लोग देव प्रयोजन के लिए अपनी विभूतियाँ अर्पित करने की भावना करते हुए सूर्याघ्य का ध्यान करें । यही वह न्यूनतम उपासना है जिसे हर कोई कर सकता है और जीवन-सौभाग्य का श्रेय प्राप्त कर सकता है ।

साधना ४

प्रज्ञा पुरश्चरण विशुद्ध रूप से अदृश्य जगत के परिशोधन के लिए है । यहाँ यह जान लेना आवश्यक है कि वायुमण्डल की शुद्धता, अशुद्धता का प्रभाव प्राणियों के शरीरों, वनस्पतियों और मौसमों पर पड़ता है । वातावरण चेतनात्मक होता है । उससे चेतन प्राणियों के चिन्तन और चरित्र पर प्रभाव पड़ता है । गुण, कर्म, स्वभाव को यों मनुष्य अपने प्रयत्नों से— परिवार एवं सम्पर्क प्रभाव से बनाता-बिगाड़ता है, पर इस तथ्य को भुला नहीं दिया जाना चाहिए कि उसमें अदृश्य वातावरण की भी अति महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है ।

इन दिनों अदृश्य जगत के वायुमण्डल और वातावरण दोनों ही पक्ष अपने-अपने ढंग की विषाक्तता से भरते जा रहे हैं । धुआँ, कोलाहल, विकिरण की अवांछनीय अभिवृद्धि से शरीरों, हाथों पदार्थों के लिए अनेकानेक प्रकार के भँवर खड़े हो रहे हैं और खण्ड प्रलय जैसी विभीषिका सामने खड़ी दीखती है । भय और आतंक से संसार भर में असुरक्षा, अनिश्चितता की आशंका का संव्याप्त है । दूसरा वातावरण पक्ष और भी बुरी स्थिति में है । लोकमानस में संकीर्ण स्वार्थपरता, विलासिता, निष्ठुरता, प्रवंचना उच्छृंखलता जैसे आसुरी तत्व अनायास ही भरते जा रहे हैं । कुछ समय पूर्व लोग परिस्थितिवश अपराध करते थे अब परिस्थिति नहीं मनःस्थिति कारण बन गई है । सम्पन्नों में डकैती, बेईमानी, भरे-पूरे गृहस्थों में व्यभिचारी प्रवृत्ति देखकर आश्चर्य होता है । धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्रों के नेता, प्रवक्ता उससे सर्वथा प्रतिकूल आचरण करते देखे जाते हैं जैसा कि वे जनसाधारण को उपदेश करते हैं । विद्वानों में, बुद्धिवादियों के निजी जीवन में अनपढ़, अशिक्षितों जैसे तो नहीं पर दूसरी तरह के इतने अन्धविश्वास और दुर्व्यसन पाये जाते हैं कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कई बार तो उनके विद्वान होने तक में सन्देह उठता है । व्यक्तित्व की दृष्टि से पिछड़े कहे जाने वाले लोगों की अपेक्षा प्रगतिशीलों में पायी जाने वाली निकृष्टता अधिक भारी, कष्टकारक और विनाशकारी होती है ।

ऐसा क्यों होता है, इसका प्रत्यक्ष कारण तो शिक्षा, व्यवस्था, परम्परा, शासन, साहित्य, कला आदि में घुसी अनुपयुक्तता को भी कहा जा सकता है और उसके लिए राजनेताओं, मनीषियों को दोष दिया जा सकता है । गम्भीर पर्यवेक्षण करने पर यह खोट प्रचलन प्रवाह तक सीमित नहीं रहता उसकी जड़ अदृश्य वातावरण में विषाक्तता उत्पन्न होती है और विषाक्त वातावरण से लोकमानस में असुरता निकृष्टता बढ़ती-भरती चली जाती है । यह एक कुचक्र है जो एक बार चल पड़ने पर टूटने का नाम नहीं लेता । अन्तरिक्ष में ग्रह-उपग्रह जब एक कक्षा पर घूसने लगें तो फिर वे समयानुसार मरने पर ही विराम लेते हैं । मुर्गी से अण्डा—अण्डा से मुर्गी । बीज से वृक्ष—वृक्ष से बीज । नर से नारी—नारी से नर । समुद्र से वर्षा—वर्षा से समुद्र की तरह एक गति चक्र है जो अपनी धुरी पर घूमने लगता है । अदृश्य वातावरण से लोकमानस और लोकमानस से अदृश्य वातावरण का भी अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है ।

इस कुचक्र को तोड़ने के लिए परमात्मा की तरह आत्मा को भी अपना उत्तरदायित्व निभाना पड़ता है । सृजन सन्तुलन लड़खड़ाने पर सृजेता अवतार लेते और अनियन्त्रित स्थिति को नियन्त्रण में लाने के लिए प्राणवान प्रवाह उत्पन्न करते हैं । यह अवतार प्रकरण की सूक्ष्म प्रक्रिया का परिचय हुआ । इस सुधार प्रयोजन का दूसरा पथ मनुष्य कृत है जिसे जाग्रत आत्माएँ ऐसी विषम बेला में आपत्ति धर्म की तरह अपनाती और स्रष्टा के प्रयोजन में हाथ बँटाती है, उन्हें आध्यात्म उपचारों का आश्रय लेना पड़ता है । विशालकाय सामूहिक धर्मानुष्ठान प्रायः इसी प्रयोजन के लिए किए जाते हैं ।

इस सन्दर्भ में इतिहास की कुछ घटनाएँ दृष्टव्य हैं । लंका विजय में असुर तो मरे पर अदृश्य वातावरण में विषाक्तता भरी रहने से लक्ष्य का सामयिक समाधान हुआ, अदृश्य का संशोधन भी होना चाहिए । इसके लिए भगवान राम ने दश अश्वमेधों का नियोजन किया । उस उपक्रम की साक्षी काशी का दशाश्वमेध घाट अब भी देता है । कुरुक्षेत्र में महाभारत संग्राम के उपरान्त कंस, दुर्योधन, जरासन्ध से तो पीछा छूटा पर अदृश्य में विषाक्तता भरे रहने से स्थायी समाधान नहीं दीख पड़ा । इसके लिए आध्यात्म उपचार का आश्रय लिया गया और विशाल रूप में राजसूय यज्ञ की भी ऐसी ही आध्यात्म परक योजना बनाई गई जैसी कि महाभारत की मारकाट के निमित्त बनी थी । इस प्रसंग में जो कमी रही थी उसकी पूर्ति परीक्षित पुत्र अन्मेजय ने नाग यज्ञ के रूप में सम्पन्न की थी ।

सामूहिक धर्मानुष्ठानों से अदृश्य वातावरण की संशुद्धि के और भी अगणित प्रमाण, उदाहरण इतिहास-पुराणों से भरे पड़े हैं । अनेक ऋषियों के रक्त संचय से घड़ा भरा गया था । उससे सीता जन्मी और तमिस्रा की स्थिति बदली । देवता असुरों से जब भी हारे तब अपनी विशृंखलता की समस्या लेकर संयुक्त रूप से प्रजापति के पास गए । एस स्वर में बोले । ऐसी ही पुकार सुनी भी जाती है । प्रजापति ने उन्हीं की थोड़ी-थोड़ी शक्ति एकत्रित करके दुर्गा को सृजा और उसने देखते-देखते संकट को निरस्त कर दिया । इन कथाओं में प्रकारान्तर से इस सिद्धान्त का प्रतिपादन है कि देव-मानवों को संयुक्त रूप से आध्यात्म पुरुषार्थ करके, अदृश्य वातावरण की प्रतिकूलता का शमन करके, समाधान करके अनुकूलता उत्पन्न करनी चाहिए ।

इन दिनों वायुमण्डल की विषाक्तता का परिशोधन करने के लिए सर्वसाधारण से बन पड़ने वाले आध्यात्म क्षेत्र में सम्पन्न हो सकने वाले दो उपाय आत्मदर्शियों ने सुझाये हैं । एक हरितिमा सम्वर्धन के लिए तुलसी का आरोपण । उसमें दुहरा लाभ है । वातावरण संशोधन के अतिरिक्त उस आधार पर हर घर में आस्तिकता का वातावरण बनता है । वनस्पति भगवती की देव प्रतिष्ठा हर आँगन में होने और पूजा-अचर्ना का भाव परिष्कार सन्तुलन रहने से उसका न केवल वायुमण्डल पर वरन् वातावरण पर भी उत्साहवर्धक प्रभाव पड़ता है । दूसरा उपाय अग्निहोत्र सुझाया गया है । उसमें भी वायुमण्डल के अतिरिक्त वातावरण के परिशोधन की दुहरी क्षमता है । अग्निहोत्र खर्चीली और कर्मकाण्ड परक प्रक्रिया होने से सर्वसाधारण द्वारा अपनाये जाने में कठिनाई प्रतीत होती है । इसलिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्थिति को देखते हुए उसका नवीनीकरण कर दिया गया है ।

आध्यात्म उपचारों में यज्ञ मूर्धन्य है । उसके दो पक्ष हैं । एक मन्त्रोच्चार दूसरा हव्य पदार्थों का यजन । दोनों के मिलन से ही समग्र अग्निहोत्र बनता है । प्रज्ञा अभियान द्वारा आरम्भ किए गए प्रज्ञा पुरश्चरण में इन दोनों ही पक्षों का समान समावेश है । प्रज्ञा परिजनों में से प्रत्येक को कहा गया है कि वे इस युग अनुष्ठान को सम्पन्न करने में उत्साहपूर्वक भाग लें और अपने क्षेत्र से उसमें भागीदार बनाने के लिए नये लोगों को ढूँढ़ें । उन्हें अवगत और सहमत करने की प्रक्रिया चलायें ताकि वस्तुस्थिति के समझने के उपरान्त नये भागीदार मिलने में कोई अवरोध न रहे ।

सूर्य की ध्यान धारणा

प्रस्तुत युग साधना में अन्य क्रिया-कलाप तो साधारण अनुष्ठानों की भाँति ही रहेंगे, पर एक बात विशिष्ट रहेगी, "सूर्योपस्थान" भगवान सूर्य की निकटता । उन्हें ही इस महान प्रक्रिया का अधिष्ठाता वरण किया गया है । इसलिए जप गायत्री का पूजन गायत्री का करते हुए भी प्रातःकाल उदय होते हुए स्वर्णिम आभा वाले सविता देव का ध्यान करते रहना होगा । ध्यान ही नहीं प्राण प्रत्यावर्तन का भाव समर्पण भी । साधक का प्राण सविता में प्रवेश करके वैसा ही लाल हो जाता है जैसा भट्टी में कुछ समय पड़ा रहने के उपरान्त सोना लाल हो जाता है । ईंधन को आग में डालने पर भी यही होता है । यह समर्पण हुआ । दूसरा भाग है सविता का साधक की सत्ता में अवतरण । जिस प्रकार किरणें धरती पर उतरती हैं और प्रभाव क्षेत्र को ऊर्जा एवं आभा से भर देती हैं, उसी प्रकार साधक भी अनुभव करेगा कि सविता का ओजस्, तेजस्, वर्चस् बरसता है और उपासनारत को अपने दिव्य अनुग्रह से ओत-प्रोत कर देता है ।

गहरी साँस लेते हुए सूर्य के अवतरण की ओर धीरे-धीरे साँस छोड़ते हुए सूर्यार्घ्य दान की तरह सविता को आत्मसमर्पण करने की भावना करते रहना चाहिए ।

इक्कीसवीं सदी में सूर्य तेजस् में भी अनुकूल परिवर्तन होगा और उसका प्रभाव समस्त वातावरण पर पड़ेगा । प्राणियों में भी क्षमता और चेतना विकसित होगी । ईंधन का, विद्युत का, रोग नियंत्रण का, समुद्र से पानी लाकर मेघ बरसाने, वायु संशोधन का काम तो सूर्य अभी भी करता है । सड़ी हुई दुर्गन्ध को मिटाने और विषाणुओं का हनन करने में उसके चमत्कार निरन्तर देखे जाते हैं । शरीरों में विटामिन "डी" का उत्पादन स्रोत वही है । अगले दिनों उसकी प्रखरता चेतना क्षेत्र को भी अपने प्रभाव में लेगी । गिरों को उठाने और उठों को उछालने में जहाँ मानवी प्रयत्न काम करेंगे, वहाँ उसे सफल-सम्भव बनाने में सविता की अदृश्य भूमिका भी काम करेगी । आद्यशक्ति गायत्री का अधिष्ठाता भी तो सविता ही है । उसी के प्रतीक रूप में दीपक ज्योति को, अगरबती के रूप में प्रतिष्ठित किया जाता है ।

सूर्य योग के सम्बन्ध में सूर्यपुराण, सूर्योपनिषद् चाक्षुष्योपनिषद् आदि में बहुत कुछ कहा गया है । सावित्री और सविता का युग्म अपने समय की आवश्यकता भली प्रकार पूरी कर सकेगा, ऐसा विश्वास किया जाता है । निराकरण, उन्नयन के लिए जो भौतिक प्रयत्न चल रहे हैं उनमें से इस दिव्य साधना का समावेश हो जाने से लक्ष्य की पूर्ति में असाधारण योगदान मिलने की आशा है । इसीलिए पुरश्चरण में गायत्री मन्त्र और सूर्योपासना का महत्त्व दिया गया है । दैनिक साधना की पूर्णाहुति महातेज की अभ्यर्थना होगी, ऐसी जिसे अभूतपूर्व कहा जा सके ।

युगसन्धि पुरश्चरण शान्ति कुंज में उद्भूत अवश्य हुआ है, पर उसका विस्तार उद्गम तक ही सीमित न रहकर विश्वव्यापी बनेगा । कम से कम प्रज्ञा परिवार के तो सभी लोग उसमें भाग लेंगे ही । जो घर से बाहर नहीं जा सकते, अत्यधिक व्यस्त या प्रतिबन्धित हैं वे अवकाश के किसी भी समय कम से कम दस मिनट मानसिक रूप से गायत्री का जप और ध्यान कर सकते हैं । मन में ही सूर्यार्घ्य देने की भावना की जा सकती है और शान्ति कुंज पहुँचकर मन ही मन उस उद्गम की परिक्रमा लगाने की भी ।

जहाँ प्रज्ञा पीठें बनी हैं, जहाँ प्रज्ञा मण्डल या महिला मण्डल बने हों, गायत्री परिवार जीवन्त हैं, वहाँ भी महापुरश्चरण की एक इकाई अपने यहाँ प्रतिष्ठित करनी चाहिए । हर रोज बन पड़ना कठिन रहे तो सप्ताह में एक दिन इसके लिए निश्चित किया जा सकता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है, रविवार-यह सूर्य का दिन भी है । उस दिन किसी स्थिर स्थान में अथवा बारीबारी आमन्त्रित करने वाले सदस्यों के घरों में यह आयोजन रखा जा सकता है । समय प्रातःकाल का रखना ही ठीक पड़ता है ।

सामूहिक गायत्री पाठ । दीप यज्ञ का प्रज्ज्वलन । पाँच दीपक माचिस, अगरबत्ती दो थालियों में सूर्य के रूप में स्थापन । आधा घण्टा मानसिक जप ध्यान, युग संगीत का सहगान कीर्तन, यन्मण्डलम् स्तोत्रों से सविता का स्तवन । इसके बाद झोला पुस्तकालय उपक्रम में सभी उपस्थित जनों को भागीदार बनाना । जिनके जितनों, जितनों से सम्बन्ध हों वे उतनी पुस्तकें पढ़ाने के लिए मण्डल से ले जायें और अगले सप्ताह जब आवें तो अधिकाधिक शिक्षितों को पढ़ाने और अशिक्षितों को सुनाने के उपरान्त वापस कर दें । यही है साप्ताहिक साधना का वह उपक्रम, जिसमें दिव्य अवतरण तो प्रधान है ही, पर साथ में जनमानस को परिष्कृत करने वाले ज्ञान यज्ञ का भी समावेश है । युग संगीत और युग साहित्य द्वारा आलोक वितरण यह दोनों कार्य इसी स्तर के हैं, जिनके माध्यम से विचार क्रान्ति अभियान का भी विस्तार होता है ।

"पाँच से पच्चीस" बनने का प्रेरणा मन्त्र किसी को भी भूलना नहीं चाहिए । इसी आधार पर तो अपना सीमित परिवार विश्वव्यापी बनेगा । साप्ताहिक आयोजनों में सम्मिलित होने वाले इस प्रयत्न में रहें कि अगले सप्ताह अपने प्रभाव क्षेत्र से अधिक लोगों को लेकर चलें । उनकी निष्ठा बढ़े तो वे भी पाँच नये खोज निकालें और आयोजन के साथ जोड़ें । इसी प्रयास के अन्तर्गत प्रज्ञा मण्डलों और महिला मण्डलों का गठन एवं विस्तार होता चलेगा । संघ शक्ति बनकर अगले दिनों कन्धे पर आने वाले उत्तरदायित्वों को वहन कर सकेंगे । जो जीवन एवं समाज के हर क्षेत्र को असाधारण रूप से प्रभावित करेंगे ।

संक्षेप में युग पुरश्चरण का स्वरूप एवं कार्यक्रम इस प्रकार हैं—

(१) सूर्योदय के समय जो, जहाँ जैसी भी स्थिति में है अपना सामान्य काम-काज रोक कर आँखें बन्द करके, हाथ जोड़कर पाँच मिनट गायत्री का मानसिक जप करें । सविता, सूर्य का ध्यान करें । समय पूरा होने पर जिस उपचार की परिणति को अदृश्य आकाश में वातावरण शोधन के लिए उछाल देने का मानसिक संकल्प करें ।

(२) महीने में एक बार एक स्थान पर सभी प्रज्ञा पुरश्चरण रत भागीदार एकत्रित हों और 'प्रज्ञा यज्ञ' का आयोजन सम्पन्न करें । यह गाँव या मुहल्ले का हो सकता है । एक दिन पूर्णिमा का अथवा महीने का अन्तिम अवकाश दिन को रखा जा सकता है ।

प्रज्ञा यज्ञ का स्वरूप यह है—पाँच घृत दीपक प्रज्ज्वलित किए जायें पाँच-पाँच अगरबत्तियों के पाँच गुच्छक जलाये जायें । उन्हें एक चौकी पर गायत्री चिरू के साथ प्रतिष्ठित किया जाय । उपस्थित लोगों के मस्तक पर चन्दन लगाकर उन्हें याज्ञिक बनाया जाय । यह सभी मिल-जुलकर चौबीस बार गायत्री मन्त्रोच्चार करें । यह कृत्य प्रायः पन्द्रह मिनट में सम्पन्न हो जाता है ।

इसके उपरान्त ज्ञान यज्ञ आरम्भ होता है । पन्द्रह मिनट युग संगीत । एक घण्टा प्रज्ञा प्रवचन में मात्र इस वर्ष की प्रज्ञा अभियान पत्रिका के कुछ लेख एक घण्टे तक सुनाये जायें । इस अवधि में प्रायः १२-१५ पृष्ठ सुनाये जा सकते हैं । इसका चयन स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार कर लिया जाय । पूर्ण अभ्यास करके अपने लोगों में से कोई या कई उन्हें इस प्रकार सुनायें जिसमें भावनात्मक अभिव्यक्ति भी जुड़ी रहे और उपस्थित लोग अभीष्ट प्रेरणा ग्रहण कर सकें । सवा घण्टे का यह ज्ञान यज्ञ, पन्द्रह मिनट के अग्निहोत्र के साथ जुड़कर पूरे डेढ़ घण्टे का हो जाता है । यह मासिक अग्निहोत्र दैनिक पाँच मिनट की जप-साधना की समन्वित प्रक्रिया कही जा सकती है । दोनों के मिलने से ही प्रज्ञा पुरश्चरण की क्रम व्यवस्था समान बनती है ।

इन दिनों नैष्ठिक प्रज्ञा परिजनों की संख्या २४ लाख है । पाँच मिनट में १०० गायत्री मन्त्र जपे जा सकते हैं । इस प्रकार प्रतिदिन २४ करोड़ जप हो जाता है । पूर्णलक्ष्य १२५ करोड़ जप प्रतिदिन का है । हर विचारशील परिजन को प्रज्ञा पुरश्चरण में भागीदार बनायें तो यह लक्ष्य देखते-देखते पूरा हो सकता है ।

सामूहिकता में असाधारण शक्ति है । निर्जीव वस्तुएँ एक और एक मिलकर दो ही होती हैं, किन्तु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राणवानों की एकात्मकता एक और एक मिलकर ग्यारह बनने जैसा-नया सिद्धान्त खड़ा होता है । प्रस्तुत पुरश्चरण में सवा करोड़ व्यक्तियों की श्रद्धा-भावना का समन्वय बहुत बड़ा तथ्य है । हर व्यक्ति का सौ जप होने से भी एक समय, एक उद्देश्य, एक विधान तथा एक लक्ष्य का समन्वय होने से चमत्कारी परिणति उत्पन्न होने की बात सुनिश्चित है । जप संख्या तो हर व्यक्ति से कई-कई घण्टे जप कराने से कम मनुष्यों द्वारा भी पूरी हो सकती है, पर अधिक लोगों का अधिक श्रद्धा और सर्वथा निःस्वार्थ भाव से—अवैतनिक रूप से किया गया जप साधन कहीं अधिक उत्कृष्ट एवं प्रभावी सिद्ध हो सकेगा । प्रस्तुत प्रज्ञा पुरश्चरण के साथ जुड़ी हुई एकात्म प्रक्रिया वातावरण के परिशोधन-परिष्कार में वैसी ही अद्‌भुत परिणति उत्पन्न कर सकती है जैसी कि दिव्यदर्शियों ने समझी और समझाई है ।

भाव समन्वय और सामूहिक धर्मानुष्ठान की इस पुनीत प्रक्रिया के सहारे उस महान प्रयोजन की पूर्ति हो सकती है जिसके सहारे वायुमण्डल और वातावरण की विषाक्तता हट सके । साथ ही उज्ज्वल भविष्य के—प्रज्ञा युग के अवतरण का सुयोग बन सके ।

नियति के परिवर्तन में आध्यात्म साधना के सफल प्रयोग

धरती की व्यवस्था सम्भालने का उत्तरदायित्व सृष्टा ने मनुष्य को सौंपा है । साथ ही उसे इतना समर्थ शरीर तन्त्र दिया है कि वह न केवल जीवधारियों के लिए सुख-शान्ति बनाये रहे वरन् ब्रह्माण्ड में संव्याप्त, अदृश्य शक्तियों को भी अनुकूल रहने के लिए सहमत रख सके । अपने उस उत्तरदायित्व में व्यतिरेक करके जब मनुष्य अनाचार और उद्‌दण्डता बरतता है—चिन्तन को भ्रष्ट और आचरण को दुष्ट बनाता है तो उसकी प्रतिक्रिया अदृश्य जगत का सन्तुलन बिगाड़ती है और विपत्तियों का विक्षोभ उत्पन्न करती है । दैवी प्रकोप प्रत्यक्ष में लगते तो ऐसे हैं मानो अदृश्य द्वारा मनमानी की जा रही है, किन्तु अदृश्य और अप्रत्यक्ष को जो जानते हैं उनका स्पष्ट मत है कि पानी में पत्थर फेंकने और छींटे उठाने की जिम्मेदारी उन लड़कों की है जो तालाब के एक कोने पर बैठे शरारत करते रहते हैं । तालाब अकारण उछलने लगे और अपने जलचर परिवार के लिए संकट उत्पन्न करे ऐसी बात है नहीं, प्रतीत भले ही होती हो ।

इन दिनों उभरने वाले प्रकृति प्रकोपों का सिलसिला अगले दिनों घटेगा नहीं, बढ़ेगा । इस आशंका से सभी चिन्तित हैं । भय अकारण है या सकारण इसका अन्वेषण करने पर कितने ही तथ्य सामने आते हैं और अशुभ सम्भावना की पुष्टि करते हैं । आणविक विस्फोटों के कारण बढ़ता हुआ विकिरण, विषाक्त ईंधन से उत्पन्न वायु प्रदूषण—पृथ्वी के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहे प्रायः ४००० उपग्रहों के कारण सुरक्षा परतों में विक्षोभ—ऊर्जा के बढ़ते उपयोग से गर्मी का बढ़ना और उसके कारण हिम प्रदेशों का असन्तुलित रीति से पिघलना—भूगर्भ से खनिज सम्पदा निचोड़ लेने पर उसका खोखला एवं ठण्डा होते जाना आदि कितने ही कारण हैं जो धरती के भीतरी सतही और बाहरी वातावरण में विक्षोभ उत्पन्न करते देखे जा सकते हैं । इन्हें मनुष्य की प्रकृति के साथ उद्धत छेड़खानी कह सकते हैं । छेड़ने पर तो चींटी भी काटती है फिर नियति क्यों चूकने लगी ।

आध्यात्म विज्ञान का प्रतिपादन है कि प्रकृति ही सब कुछ नहीं है उससे भी ऊपर एक चेतन सत्ता है, जिसको प्राणियों के साथ व्यवहार करने की विधि को 'नियति' कहते हैं । दिव्यदर्शी इस नियति को ही प्रधानता देते हैं और प्रकृति के सन्तुलन को बनाने बिगाड़ने में इसी को उत्तरदायी मानते हैं । उनका कहना है कि प्रकृति से भौतिक छेड़खानी करने पर दैवी प्रकोप बरसना एक पक्ष तो है, पर वही सब कुछ नहीं है । उससे भी बड़ी बात है मानवी चिन्तन और चरित्र से उत्पन्न होने वाली प्रतिक्रिया जो प्रकृति की नियामक सत्ता 'नियति' पर प्रभाव डालती है । अनाचरण से नियति की अन्तरात्मा क्षुब्ध होती है फलतः उसका प्रकृति कलेवर भी आक्रोश का, आवेश का, परिचय देता है । दैवी प्रकोपों के मूल में जितना दोष प्रकृति-व्यवस्था को उद्धत रूप से छेड़खानी करने का है उससे भी अधिक भ्रष्ट चिन्तन और दुष्ट आचरण का आश्रय लेने वाली मानवी निकृष्टता का है । नियति उसी से रुष्ट होती है और उसी के फलस्वरूप दृश्य एवं अदृश्य विपत्तियाँ समस्याएँ तथा विभीषिकाएँ उभरती, त्रास देती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्तरिक्ष विज्ञानी इन दिनों सौर-मण्डल तथा उससे ऊपर के ब्रह्माण्ड क्षेत्र का पर्यवेक्षण करते हैं, तो कहते हैं पृथ्वी के लिए यह परिस्थितियाँ संकटापन्न हैं । सभी जानते हैं कि पृथ्वी की अपनी निज की जितनी शक्ति और सम्पदा है उसे उससे कहीं अधिक अनुदान लेकर अपना गुजारा करना पड़ता है । सौर ऊर्जा उसका प्राण है । इसके अतिरिक्त अन्य ग्रहों से आने वाले ब्रह्माण्डीय अनुदान उसे उपलब्ध होते हैं । ऊपर के वातावरण की छलनी में छनकर ध्रुवों के माध्यम से जो सम्पदा धरती को प्राप्त होती है, उसी से उसका गौरव एवं वैभव इस स्तर तक पहुँचा है । ऐसी परिस्थितियाँ न हों तो वह भी सौर-मण्डल के अन्य सदस्यों की तरह बुध की तरह आग-बबूला होकर प्लेटों की तरह, हिमपिण्ड बनकर शुक्र की तरह विषाक्त बादलों से आच्छादित रहकर निस्तब्ध श्मशान की तरह अन्तरिक्ष के एक कोने में पड़ी अपने दुर्भाग्य का रोना रो रही होतीं ।

अन्तरिक्ष विज्ञानी अपनी गहरी जाँच पड़ताल से पृथ्वी और अन्तरिक्ष के मध्य चले आ रहे आदान-प्रदान में विक्षेप व्यवधान होता देखते हैं । सूर्य पर इन्हीं दिनों ऐसे 'कलंक' उभरने वाले हैं जो महान देवता को ही बदनाम नहीं करेंगे । अपनी चपेट में धरतीवासियों को त्रास देंगे । उन्मादी, रोगी, अपराधी स्वयं तो कष्ट सहते ही हैं, उसके स्वजन सम्बन्धी भी तरह-तरह के कष्ट और ताने सहते हैं । पृथ्वी सूर्य से लाभ भी सर्वोपरि उठाती है तो हानि भी उसी को उठानी पड़ती है । अर्धांगिनी को पति के वैभव का जहाँ श्रेय मिलता है, वहाँ से रोगी होने पर उपचार का तथा मरने पर वैधत्व का भार भी सहना पड़ता है । सूर्य की अनुकूल-प्रतिकूल परिस्थितियों ने समय-समय पर पृथ्वी को हँसाया, रुलाया है । अगले दिनों जो व्यतिरेक उत्पन्न होगा उससे उसके पदार्थ, वैभव एवं प्राणि परिवार को भी असन्तुलन सहना, त्रास विग्रह का सामना करना पड़े तो इसमें कुछ भी आश्चर्य की बात नहीं है । इस सन्दर्भ में अन्तरिक्ष विज्ञानी मनुष्य समाज को भावी कठिनाइयों से सचेत करते हैं तो उसमें यथार्थता भी है और बुद्धिमता भी ।

सन् ८१ से उभरने वाले सौर कलंकों की—बृहस्पति के अत्यधिक विक्षुब्ध होने की—१६ फरवरी १९८० एवं २४ अक्टूबर १९९५ को होने वाले असाधारण सूर्य ग्रहण की प्रतिक्रियाएँ फलित ज्योतिषी अपने ढंग से और खगोल विज्ञानी अपने ढंग से व्यक्त करते हैं । दोनों के कारण पृथक हैं, पर निष्कर्ष एक । अगले दिनों की विभीषिकाओं का भविष्य कथन दोनों ही करते हैं । भविष्य कथन की बात चल पड़े तो यहीं यह भी समझ लेना चाहिए कि सूक्ष्मदर्शी अतीन्द्रिय क्षमता सम्पन्न ऐसे लोग भी इस धरती पर कभी-कभी देखने को मिलते हैं जिसमें अदृश्य दर्शन की क्षमता है । ऐसे लोगों को जो अनुभूतियाँ होती हैं उनमें ग्रह गणित नहीं दिव्य दर्शन की अद्भुत विशेषता ही कारण भूत होती है । इनकी भविष्यवाणियों में कदाचित ही कभी कोई असम्बद्ध बैठती हो । ऐसे लोगों की एक शृंखला है जिनमें कई जीवित हैं, कई दिवंगत हो चुके हैं । इन्होंने अपने भविष्य कथन में प्रधानतया दो तथ्य प्रस्तुत किए हैं—इन दिनों अवांछनीयता एवं विपत्तियों का बढ़ना और कुछ समय उपरान्त स्वर्गीय सुख-शान्ति का सृजन होना । इसे वे युग परिवर्तन की प्रसव पीड़ा बताते हैं जिसमें कष्ट सहन और सन्तान लाभ की कटु मधुर विसंगति जुड़ी होती है । प्रामाणिक भविष्य कथनों के विस्तृत विवेचन का सारांश इतना ही है ।

दुःखद परिस्थितियों का काल क्या होगा ? और सुखद सम्भावनाएँ कब उत्पन्न होंगी ? इस सन्दर्भ में सूक्ष्मदर्शियों के कथन लगभग एक ही अवधि तक अपने निष्कर्षों को केन्द्रित करते हैं । सन् १९८० से २००० तक के समय को अधिक कष्ट कारक पाया जायेगा और २००० के बाद की परिस्थितियों में सन्तोष की साँस लेने और उज्ज्वल भविष्य के सम्बन्ध में आश्वस्त होने का अवसर मिलेगा ।

उपरोक्त पर्यवेक्षण से जिस निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है वह निकट भविष्य की अशुभ आशंकाएँ और जो सम्भावनाओं का चित्र सामने आता है, इससे किसी को भी आतंकित या भयभीत होने की आवश्यकता नहीं है । ऐसी हड़बड़ी तो विपत्ति को और भी कई गुना बढ़ा सकती है । कठिन समय का एक ही तकाजा है धैर्य और साहस बनाये रहना—मनोबल न गिरने देना—साथ ही आशंकाओं को निरस्त करने वाले प्रयासों का निर्धारण करके उनकी पूर्ति में जुट जाना । हमारे लिए यही उचित है कि भौतिक और आत्मिक स्तर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर ऐसा प्रबल पुरुषार्थ सँजोये जिनसे रुष्ट नियति को मना लेने और क्रुद्ध प्रकृति को शान्त करने का अवसर मिल सके । रोग अपनी जगह है और उपचार अपनी जगह । विपत्ति अपना काम करती है और रोकथाम के लिए बरते गए पुरुषार्थ का अपना महत्त्व है । विषम वेला में यही सबसे बड़ी बुद्धिमानी है कि आतंकित होने की मनःस्थिति उत्पन्न न होने दी जाय साथ ही प्रचण्ड पुरुषार्थ को सँजोकर असम्भव को सम्भव बनाया जाय । विपत्ति का परोक्ष वरदान यही हो सकता है कि वह जुझारू साहस और प्रबल पराक्रम उभारे । ध्वंस को सृजन से ही निरस्त किया जा सकता है । आग को पानी से ही बुझाया जा सकता है ।

अशुभ आशंकाएँ एवं दुःखद सम्भावनाएँ किनको, कितना, किस प्रकार त्रास देंगी । इसका ऊहापोह करने की अपेक्षा यह सोचना उत्तम है कि उन्हें निरस्त करने के लिए क्या कुछ सम्भव है ? यदि है तो उसे बड़े साधनों की अपेक्षा किए बिना उसके लिए जुट पड़ने का साहस है । सृजनात्मक साहस बड़ी बात है । टिटहरी का समुद्र पाटने का, जटायु का रावण से लड़ने का और गिलहरी का राम समर्थन में अपना योगदान प्रस्तुत करना ऐसे उदाहरण हैं जिनमें तुच्छ प्राणियों से भी समर्थ मनुष्य को प्राणवान मार्ग-दर्शन मिल सकता है । आवश्यक नहीं कि विपत्ति की आशंका से ही सृजन साहस सँजोया जाय । उज्ज्वल भविष्य की संरचना अपने आम में एक महान लक्ष्य है जिसे बिना किसी विपत्ति या आशंका के रहते हुए भी पुण्य पुरुषार्थ के सहारे सामान्य परिस्थितियों में भी आरम्भ किया जा सकता है ।

युग निर्माण परिजनों का देव इस विषम बेला में नियति की चुनौती को लेकर सामने आया है । हर बसन्त पर उसे अभिनव प्रेरणाएँ प्राप्त होती हैं और परिवर्तन की महान प्रक्रिया सम्पन्न करने के लिए क्रमिक जिम्मेदारियाँ उनके कन्धों पर लदी रही है । इस अवसर पर उसे प्रकृति और नियति की विभीषिकाओं से जूझने तथा उज्ज्वल भविष्य की संरचना के लिए जुटने के दुहरे उत्तरदायित्व सौंपे गए हैं । इसे लंका-दहन और रामराज्य स्थापना के लिए अंगद, हनुमान द्वारा निभाई गई दुहरी भूमिका समझा जा सकता है ।

इस भूमिका का स्वरूप है—सन् १९८० से आरम्भ होकर सन् २००० तक चलने वाली बीस वर्षीय युग परिवर्तन योजना । इसे चार, पंचवर्षीय योजनाओं में विभाजित किया गया है । विरामों पर ठहरते हुए एक के बाद दूसरा कदम उठाना ही उपयुक्त होता है । एक-एक मोर्चा जीतते हुए एक-एक सीढ़ी पर कदम बढ़ाते हुए समग्र सफलता के लक्ष्य तक पहुँचना ही उपयुक्त है । बसन्त अपना आध्यात्म वर्ष है । इसे प्रेरणा पर्व के रूप में मनाया जाता रहा है । इस बार उसमें आपत्तिकालीन परिस्थितियों के अनुरूप साहसिक कार्यक्रमों का नियोजन हुआ है ।

सन् ८० से २००० तक चलने वाली—युग परिवर्तन योजना के कार्यक्रमों पर ध्यान केन्द्रित करने और उन्हें सुदृढ़ परिपक्व बनाने का सन्देश इस प्रकार है—उसके पाँच कार्यक्रम इस प्रकार हैं—

(१) जाग्रत आत्माओं की विशिष्ट उपासना

(अ) नित्य नियमित रूप से गायत्री मन्त्र की न्यूनतम पाँच मालाओं का जप, साथ में प्रातःकाल उगते सूर्य का ध्यान । उस आलोक से स्थूल शरीर में सत्कर्मों की, सूक्ष्म शरीर में सद्विचारों की, कारण शरीर में सद्भावों की क्रमिक अभिवृद्धि ।

(ब) दिवाली से होली तक प्रातः ५½ बजे और होली से दिवाली तक ४½ बजे पन्द्रह मिनट चलने वाली प्राण आकर्षण की विशेष साधना । गहरे साँस खींचते हुए उसके साथ हिमालय के प्रेषित विशेष प्राण-प्रवाह को खींचना और अपने कण-कण में उसे धारण करना ।

(स) रात्रि को ८½ बजे पूरे वर्ष भर चलने वाले पन्द्रह मिनट की नियति सन्तुलन साधना । साँस भीतर खींचना । इडा मार्ग से मूलाधार तक प्राण का ले जाना । प्राण और कुण्डलिनी का मन्थन । उत्पन्न ऊर्जा का सुषुम्ना मार्ग से ब्रह्मरन्ध्र तक लाना और वहाँ से अनन्त अन्तरिक्ष में नियति सन्तुलन के लिये बिखेर देना । श्वास को पिंगला मार्ग से निकाल देना, फिर पिंगला से खींचकर इडा से निकालने के साथ ही प्राण प्रयोग दुहराना ।

ध्यान धारणा के माध्यम से देव प्राण को अपने में आकर्षित एवं अवधारित किया जाता है । साथ ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उस अनुदान में अपना प्राण योगदान मिलाकर अनन्त अन्तरिक्ष में नियति अनुकूल बनाने के उद्देश्य से बिखेर दिया जाता है । यह जाग्रत आत्माओं की व्यक्तिगत साधना देखते हुए भी सामूहिक सम्भव महान आत्म-शक्ति का उद्भव करते हैं । इसकी विशेषता नियत समय का परिपालन आवश्यक है । घड़ी की सहायता से ही यह सम्भव हो सकता है । यों इसे किया तो आगे-पीछे भी जा सकता हैं, पर तब उसका लाभ व्यक्तिगत ही रह जायेगा । यह विश्व-शान्ति की सामूहिक साधना तभी बनेगी जब अधिकाधिक व्यक्ति एक ही समय, एक ही भावना से एक निष्ठ होकर समष्टि शक्ति उत्पन्न करने की दृष्टि से उसे सम्पन्न करें ।

(२) जीवन साधना

जाग्रत आत्माओं को इसका नियमित शुभारम्भ 'आहार' की सात्विकता और 'विहार' की शालीनता की दृष्टि से कुछ संकल्प करते हुए करना चाहिए । व्रत चाहें छोटा-सा ही है, पर उसका परिपालन संकल्पपूर्वक समग्र निष्ठा के साथ किया जाय ।

आहार में सात्विक पदार्थ ही सम्मिलित रखे जायें । राजसी और तामसी वर्ग के घटाने और हटाने का प्रयत्न करें । मद्य, माँस से बचें । अनीति उपार्जित एवं अनुपयुक्त वातावरण में पकाया, अवांछनीय व्यक्तियों द्वारा परोसा हुआ न हो ।

विहार में यथासम्भव ब्रह्मचर्य पर अधिक ध्यान दिया जाय । वस्त्र, आभूषण शृंगार आदि उपकरणों में सादगी बरती जाय । आलस्य और अपव्यय छोड़ें । अशिष्टता न बरतें । अनीत न अपनाये । स्वार्थ सीमित और परमार्थ को विकसित करें ।

(३) सामूहिक साधना

गायत्री यज्ञों की सामूहिक साधना का क्रम नियमित रूप में जारी रखा जाय । हर पूर्णिमा को मासिक यज्ञ हो । सभी जाग्रत आत्माएँ अपने साथियों समेत सम्मिलित हों । बसन्त पर्व, गायत्री जयन्ती, गुरु पूर्णिमा को अखण्ड जप किया जाय । समाप्ति पर यज्ञ । दोनों नवरात्रियों में नौ-नौ दिन के सामूहिक अनुष्ठान सम्पन्न किए जायें ।

(४) सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन

यह कार्य परिवारों में धार्मिक वातावरण बनाने से आरम्भ किया जाय । पंचशीलों का परिपालन, पाँच आहुति का बलि वैश्व । नियमित नमन वन्दन । कथा प्रसंग । स्वाध्याय की अनिवार्यता । जन्म दिन संस्कारों का प्रचलन । साख संगठनों के माध्यम से सृजनात्मक प्रवृत्तियों के सामूहिक प्रयास । ज्ञान यज्ञ के लिए सुनिश्चित अंशदान ।

(५) दुष्प्रवृत्ति निराकरण

वैयक्तिक कषाय-कल्मषों और सामाजिक अवांछनीय प्रचलनों के उन्मूलन का प्रयास । मूढ़ मान्यताओं और भ्रष्ट परम्पराओं का उन्मूलन । मानवी मर्यादा को घटाने वाले आचरणों का असहयोग एवं विरोध ।

उपरोक्त पाँच कार्यक्रम ऐसे हैं । जिन्हें अपनाने के लिए निरन्तर कहा जाता रहा है । उनका परिपालन भी किसी न किसी रूप में होता है । युग परिवर्तन की प्रथम पंचवर्षीय योजना में विशेषता यह रहेगी कि सभी जाग्रत आत्माएँ इनका परिपालन शिथिलता, उपेक्षा के साथ नहीं वरन् सुदृढ़ निष्ठा के साथ सम्पन्न करेगी । शिथिलता एवं प्रमाद नहीं बरतेंगी । इन पाँचों कार्यक्रमों को व्यापक बनाने का प्रयत्न किया जायेगा । अपने सम्पर्क क्षेत्र में इन पाँचों प्रवृत्तियों के बीजारोपण एवं सिंचन का परिपूर्ण प्रयत्न किया जायेगा । चुनाव के दिनों में प्रत्याशी जिस प्रकार वोट माँगने के लिए घर-घर जाते और जन-जन से भाव भरा आग्रह करते हैं वही नीति जाग्रत आत्माओं द्वारा अपने समूचे सम्पर्क क्षेत्र में अपनायी जायेगी । आजीविका उपार्जन की तरह ही इन कार्यों को वास्तविक लाभ एवं श्रेष्ठतम परमार्थ मान कर पूरा किया जाता रहेगा ।

यह तथ्य सभी को ध्यान रहना चाहिए कि अन्तरक्षीय शक्तियाँ जिस प्रकार पृथ्वी को, उसकी परिस्थितियों को तथा प्राणियों को प्रभावित करती हैं । ठीक उसी प्रकार प्राणवान आत्माएँ अपनी आत्मशक्ति से प्रकृति और नियति को प्रभावित और परिवर्तित करने में समर्थ हो सकती हैं । तरह-तरह के यन्त्र प्रकृति को प्रभावित करते हैं । मनुष्य एक ऐसा यन्त्र है जिसमें वे सभी यन्त्र फिट हैं जो प्रकृति को प्रभावित एवं परिवर्तित कर सकें ।

भावी अशुभ सम्भावनाओं को निरस्त करने के लिए अपने देव परिजनों को उसी तत्परता से कटिबद्ध होना चाहिए जैसे कि वे बंगला देश की गड़बड़ी, चीनी आक्रमण, पाकिस्तानी हमला आपत्तिकालीन स्काईलैव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि की विपत्तियों के निवारण सफलतापूर्वक कर चुके हैं । इनमें से स्काईलैब यान संकट का समाधान किस प्रकार सम्भव हुआ । नीचे इसका विवरण दिया जा रहा है ।

यान संकट और सुरक्षा-अनुष्ठान

अन्तरिक्षीय हलचलों में प्रकृति प्रेरणा अनेक ज्ञात एवं अविज्ञात घटनाओं के लिए उत्तरदायी होती है पर उस पर सर्वोपरि प्रभाव मानवी स्तर का ही होता है । मनुष्य समुदाय जब अचिन्त्य चिन्तन और अभद्र आचरण पर उतारू होता है तो उसकी प्रतिक्रिया व्यक्तिगत समस्याओं, समाजगत कठिनाइयों के रूप में ही नहीं, प्रकृति सन्तुलन बिगड़ने के रूप में भी सामने आती है । सतयुग की श्रेष्ठ परिस्थितियों में उस समय की सामूहिक मनःस्थित की उत्कृष्टता ही प्रधान कारण थी । इन दिनों जन-समुदाय की अभिरुचि विचारणा एवं कार्य-पद्धति निकृष्टता की दिशा में बढ़ रही है, फलतः समस्याओं, विपत्तियों के अतिरिक्त दैवी प्रकोपों की विभीषिका का अनुपात निरन्तर बढ़ रहा है । अतिवृष्टि, अनावृष्टि और समुद्री तूफानों के कारण हुई दुर्घटनाओं के समाचार अक्सर सुनने को मिलते रहते हैं ।

यदि मनुष्य अपनी चाल नहीं बदलता तो दैवी प्रकोप और बढ़ेंगे । इस सन्दर्भ में पिछले दिनों संसार के मूर्धन्य ब्रह्माण्ड जीव विज्ञानी एवं भविष्य वक्ता श्री क्रुम हेलर ने अगले दिनों में जाति के सामने आने वाले संकटों का संकेत किया है । यह सकारण है । मनुष्य ने जो रवैया अपनाया है उसकी प्रतिक्रिया व्यक्तिगत संकट, समाज विग्रह के रूप में ही नहीं दैवी संकटों के रूप में भी प्रस्तुत होती है तो उसे विधि व्यवस्था के अनुरूप ही कहा जायेगा ।

पिछले दिनों में "स्काईलैब" यान का मलवा धरती पर गिरने और भीषण विनाश का संकट आ खड़ा होने की चर्चा जन-जन के मुख्य पर थी । उन्हीं दिनों अन्तरिक्ष में संव्याप्त शक्तियों और उनकी गतिविधियों का पता लगाने के लिए अमेरिका व रूस आदि समृद्ध देशों द्वारा लगभग १००० उपग्रह भेजे गए थे । पृथ्वी की कक्षा में स्थापित किया गया "स्काईलैब" अमेरिका द्वारा संचालित उन्हीं में से एक ८५ टन भारी यह यान १९७३ में छोड़ा गया था । यह पृथ्वी के चारों ओर विषुवत रेखा के ५० अंश उत्तर दक्षिण चक्कर काटता रहा । आशा की गई थी कि वह सन् ८३ तक अपना काम करता रहेगा, पर वैसा हो नहीं सका । अन्तरिक्षीय शक्तियाँ उसके मार्ग में आड़े आयी । इसमें एक कारण सूर्य धब्बों की गति-विधियों में असाधारण वृद्धि हो जाना भी बताया जाता है । स्मरण रहे सूर्य धब्बों का ११ वर्षीय गति चक्र चलता है और लाखों मील क्षेत्र अपनी भीषण अग्नि ज्वाला में लपेट लेता है और विकरण की इस लपेट में स्काईलैब भी आ गया और अपनी क्षमता गँवा बैठा, यान की यन्त्र प्रणाली में गड़बड़ भी कारण हो सकती है । बात जो भी हो संकट अति गहरा हो गया और करोड़ों व्यक्तियों के विनाश की विभीषिका उठ खड़ी हुई ।

प्रारम्भ में यह स्काईलैब २७६ मील की ऊँचाई पर कक्षा में स्थापित किया गया था, किन्तु यान्त्रिक गड़बड़ी और अपना भार न सँभाल पाने के कारण वह गिरते हुए अब १८० मील से भी कम ऊँचाई पर निष्प्राण प्रेत की तरह परिभ्रमण करता रहा और अपनी अन्त्येष्टि के दिन गिनता रहा है । उसके कुछ टुकड़े तो ३ अप्रैल, १९७५ से ही धरती पर गिर रहे थे । वह कहाँ गिरे कितनी क्षति हुई, इसे रहस्यमय रखा गया । जब उसके शेष भाग का गिरना निश्चित हो गया तब घोषणा की गई कि उसका मलवा ६ जुलाई से २८ जुलाई, १९७९ के बीच कभी भी पृथ्वी पर गिर सकता है । गुरुत्वाकर्षण शक्ति के कारण वह उन दिनों धरातल से टकराने के लिए तेजी से टकराने के लिए दौड़ेगी और वायुमण्डल की रगड़ से असंख्य छोटे बड़े टुकड़ों में बँट जायेगी । इनमें से कुछ तो मार्ग में ही जल जायेंगे । अनुमान था कि ४००-५०० भारी धातु खण्ड वायुमण्डल को पार करके धरती तक आ पहुँचेंगे और ४००० मील लम्बे तथा १०० मील चौड़े भू-क्षेत्र को प्रभावित करेंगे । यह टुकड़े भयानक तेजी से भीषण तापमान सहित पृथ्वी पर आयेंगे । उनके वेग से उत्पन्न ऊर्जा पृथ्वी-वासियों के लिए हर दृष्टि से घातक होगी । जिस क्षेत्र में यह गिरेंगे वहाँ जन-धन की क्षति का अनुमान लगाना कठिन है, पर वह होगी रोमांचकारी । तापमान में विकरण बढ़ने के कारण सारे वातावरण का सन्तुलन बिगड़ जायेगा, परोक्ष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रूप से समूचे मानवीय अस्तित्व को ही संकटग्रस्त होना पड़ेगा ।

जब यान को गिरने से रोकने में सभी वैज्ञानिक प्रयास असफल रहे और उसका विस्फोट सुनिश्चित जान पड़ा, तब तेज चमक वाले इस मलवे को बिना काला चश्मा पहने खुली आँखों से न देखने की चेतावनी दी गई और कहा गया कि इससे अन्धा होने का खतरा है । आवासीय क्षेत्रों में ज्वलनशील पदार्थ दूर रखने को कहा गया ताकि उसके विषैले धुएँ से भी बचा जा सके । सम्भावित संकट की सूचना उन क्षेत्रों में भी अधिकाधिक पहुँचाई गई, जहाँ संचार और यातायात के साधनों का अभाव था । ग्रामीण जनों को आतंकित तो नहीं होने दिया गया, पर सतर्कता बरतने को हर एक से कहा गया ।

जब इस संकट को टालने के लिए वैज्ञानिक अपने ढंग से प्रयत्न कर हार चुके, उसे ऊँचा उठाने अन्तरिक्ष में ही विस्फोट कर नष्ट कर देने समुद्र में धकेल देने जैसे उपायों में समर्थन हुए, तब उनके हाथ-पाँव फूलने लगे । खतरा तो स्पष्ट था पर निश्चित समय की सही जानकारी नहीं थी पहले यह विस्फोट जून में सम्भावित था, बाद में ६ जुलाई से २८ के मध्य ही हो सकता है या आगे और खिसक जाय ? यह सम्भावना व्यक्त की गई ।

संकट प्रत्यक्ष हो या परोक्ष निवारण के उपाय तो किए ही जाने चाहिए । प्रत्यक्ष उपाय उपचारों के समतुल्य ही आध्यात्म क्षेत्रों के प्रयास पुरुषार्थ भी हैं । वैयक्तिक संकटों के निवारण में निजी तपश्चर्या और सामूहिक विपत्तियों को निरस्त करने के लिए सामूहिक साधना का महत्त्व है । बंगला देश के उपद्रवों, आपातकाल स्थिति के निवारण और रजत जयन्ती वर्ष के महापुरश्चरण इसी श्रेणी में आते हैं । जो अप्रत्याशित रूप से सफल रहे । स्काईलैब का संकट सामयिक, स्थानीय, और छोटा मालूम पड़ता था, पर गम्भीरतापूर्वक विचारने पर इसे उस शृंखला का सूत्रपात समझा गया, जिसकी ओर भविष्यवक्ता क्रुम हेलर ने संकेत किया था । घटना बड़ी भी थी, दूरगामी भी । इसलिए उपाय उपचारों की दृष्टि से आध्यात्मवादियों को भी अपने कर्त्तव्य का पालन करने, सुरक्षात्मक प्रयास करने में पीछे नहीं रहना चाहिए था ।

गायत्री परिवार के प्रत्येक परिजन को १ जुलाई से ३१ जुलाई तक चलने वाले "सुरक्षा अनुष्ठान में उसी उत्साह के साथ सम्मिलित किया गया । जैसा कि महापुरश्चरण के लिए अपनाया गया था । ब्रह्मवर्चस शान्ति कुंज में यह साधना १ जुलाई से ही आरम्भ करदी गई थी । इस अनुष्ठान की सूचना आकस्मिक रूप से परिजनों को भी दी गई । जहाँ-जहाँ यह सन्देश पहुँचा यथा सम्भव जल्दी ही यह सामूहिक साधना प्रारम्भ कर दी गई । आशा की गई थी कि पहली जुलाई से न सही ६ जुलाई से अधिकांश परिजन इस साधना की सामूहिक व्यवस्था बना लेंगे । इसके बाद बन सके तो भी हर्ज नहीं । पूरा महीना न बन पड़े तो कम से भी काम चल सकता है, पर साधना में सम्मिलित सभी साधकों और शाखाओं को होना चाहिए । साधना विधि इस प्रकार थी—

(१) सुरक्षा अनुष्ठान के लिए कोई शान्त स्वच्छ स्थान चयन किया जाय । सभी साधक नौ बजे से पौने दस बजे तक सामूहिक साधनों में सम्मिलित हों ।

(२) चौबीस बार सामूहिक गायत्री जप एक स्वर से एक साथ किया जाय । आगे पीछे ऊँचे-नीचे स्वर से न बोला जाय । इसका अभ्यास पहले कर लें ताकि भूल करने वालों को पहले से ही सुधार लिया जा सके ।

(३) गायत्री गान के बाद सभी लोग ध्यान मुद्रा में बैठें । शान्त चित्त, स्थिर शरीर, कमर सीधी, हाथ गोद में—आँखें बन्द इन पाँच प्रक्रियाओं का समन्वय ही ध्यान मुद्रा है ।

(४) ध्यान करें गायत्री परिवार के लाखों सदस्यों की सामूहिक संकल्प शक्ति अन्तरिक्ष में सुरक्षा ढाल की तरह प्रखर परिपक्व हो रही है । उस ढाल के नीचे बैठी मनुष्य जाति अधिकाधिक सुरक्षा प्राप्त कर रही है ।

(५) ध्यान किया जाय कि इस सामूहिक संकल्प शक्ति का प्रहार अन्तरिक्ष में उतरते संकट को निरस्त करने के लिए हो रहा है । विपत्ति को ऊपर धकेला और अन्यत्र खदेड़ा जा रहा है । यह प्रहार और प्रयोग पूरी तरह सफल हो रहा है । विपत्ति का प्रभाव न्यूनतम ही शेष रह रहा है ।

(६) यह ध्यान ठीक नौ बजे प्रारम्भ किया जाय, पन्द्रह मिनट सामूहिक जप के लिए और तीस मिनट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ध्यान के लिए रखे जायें । ठीक नौ बजकर पैंतालीस मिनट पर प्रयोग को समाप्त कर दिया जाय । नियत समय पर न आ सकने वाले साधकों को भी सम्मिलित तो कर लिया जाय पर उन्हें दूसरी पंक्ति में बिठाया जाय । सामूहिक संकल्प बल के उपार्जन में एक जैसी विचारणा होना और नियत समय का पालन आवश्यक है ।

(७) इसक अनुष्ठान की पूर्णाहुति सर्वत्र ३१ जुलाई को होगी । जो साधक इस अनुष्ठान में भाग लेते रहे हों वे ही यज्ञ में सम्मिलित हों । पूर्णाहति की एक आहुति अन्य लोग भी दे सकते हैं । अनुष्ठान सम्पन्न होने के समाचार पूर्णाहुति के तुरन्त बाद भेजे जायें ।

कहा गया था कि विलम्ब के कारण रहने वाली कमी की पूर्ति का एक ही उपाय है कि जिन्हें यह सन्देश मिले वे अपने समीपवर्ती शाखाओं तक साधक समुदाय तक स्वयं सूचना पहुँचा दें । जहाँ यह सन्देश पहुँते रात्रि के समय पौन घण्टे के उपरोक्त सुरक्षा अनुष्ठान को आरम्भ करने का तुरन्त प्रयत्न किया जाय ।

प्रज्ञा परिजन जानते हैं कि उपरोक्त साधन सफल होकर रहा और सिर पर मँडराता संकट टल गया । यह वह आध्यात्मिक उपक्रम है जिसे कभी भी आसन्न संकट में प्रयुक्त किया जा सकता है । आवश्यकता मात्र सामूहिकता भर की है । इन दिनों परिस्थितियाँ जितनी विषम एवं विषाक्त हैं, उनका समाधान भी सुरक्षात्मक अनुष्ठान से ही सम्भव हो सकेगा, अतः हमारे सुरक्षा प्रयास भी बढ़े-चढ़े ही होने चाहिए । पिछले दिनों यही उपक्रम अपनाया गया था और इन दिनों भी वह ब्रह्मास्त्र कारगर होगा ।

प्रत्यक्ष या छद्म युद्धों के शमन में आध्यात्मोपचार की महती भूमिका

पाकिस्तान द्वारा थोपे हुए प्रत्यक्ष या छद्म युद्ध में आत्मरक्षा के लिए हमें विवश होकर लड़ना पड़ रहा है । मातृभूमि की अखण्डता और सुरक्षा के लिए हमारे रण बाँकुरे युद्ध भूमि में अपने जौहर दिखा रहे हैं । अनीति के विरुद्ध न्याय और मनुष्यता की रक्षा के लिए लड़े जाने वाले इस युद्ध में जीत हमारी ही होगी । पाण्डवों की विजय उनके आदर्श की सत्यता के कारण हुई थी । रावण और कंस विपुल शक्ति होते हुए भी न्याय और नीति से विरत होने के कारण परास्त हुए थे । वर्तमान युद्ध का अन्तिम परिणाम भी यही होगा ।

स्वर्ण की आभा कसौटी पर कसे जाने और अग्नि से तपाये जाने पर निखरती है । जातियों को भी अपनी समर्थता एक पात्रता की परीक्षा समय-समय पर देनी पड़ती है । इसी से उनका शौर्य, पराक्रम एवं गौरव निखरता है । भारतीय राष्ट्र को आज ऐसी ही अग्नि परीक्षा में होकर गुरजना पड़ रहा है ।

पुराने समय में युद्ध दो दलों की सेनाओं के बीच होते थे । सेनाओं के बाहुबल पर हार-जीत निर्भर रहती थी, पर अब परिस्थितियाँ बदल गई हैं । सेना के साथ-साथ दूसरे मोर्चे पर देश की जनता को लड़ना पड़ता है । अब युद्धों में शस्त्र बल ही एकमात्र आधार नहीं रहा वरन् उसके पीछे अन्य अनेक महत्त्वपूर्ण पहलू भी जुड़ गए हैं । जनता के सहयोग से ही कोई बड़ा युद्ध लड़ा जा सकता है । सैनिकों की वीरता तथा प्रचुरता जन उत्साह पर निर्भर है । इसी प्रकार युद्ध में काम आने वाली विपुल साधन-सामग्री को भी हमें जुटाना पड़ता है । सैनिकों की निपुणता ही नहीं, अब युद्ध की निर्णायक भूमिका में युद्धरत देशों की प्रजा की तत्परता का महत्त्वपूर्ण स्थान रहता है । भारतीय नागरिकों को भी अपने स्तर की दूसरे मोर्चे की लड़ाई लड़नी पड़ती है ।

सैनिकों की भरती, प्रशिक्षण, शस्त्रों की उपलब्धि, मोर्चे का चुनाव एवं युद्ध कौशल, आर्थिक प्रबन्ध आवश्यक सामान का जुटाना, आन्तरिक शान्ति, जन-उत्साह, कूटनीति के ऊहापोह जैसे कार्य प्रधानतया सरकार को सम्भालने पड़ते हैं । इसलिए हर देशभक्त नागरिक का कर्त्तव्य है कि अपनी सरकार को इन साधनों के जुटाने में पूरा-पूरा सहयोग दे । सरकार की शक्ति जन-सहयोग पर निर्भर रहती है । इसलिए इस धर्म युद्ध में अपनी सरकार को सफल बनाने के लिए जो भारतीय नागरिक जिस क्षमता का हो उसे उसी स्तर पर अपनी सामर्थ्य भर सरकार को सहयोग देना चाहिए ।

युद्ध के दिनों योद्धा सैनिक मोर्चे पर लड़ते हैं, पर प्रजाजनों को भी अपने को दूसरे मोर्चे का सैनिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही मानना पड़ता है । देश भक्ति की, राष्ट्रीय उत्तरदायित्वों की परीक्षा ऐसे ही समय होती है । मातृभूमि पर आये हुए संकट के समय उसमें प्रत्येक भारतवासी को उत्तीर्ण होने का प्रयत्न करना चाहिए । जिसकी जो स्थिति है, उसे अपनी सामर्थ्य के अनुरूप राष्ट्र को हर प्रकार शक्तिशाली बनाने का प्रयत्न करना चाहिए ।

अखण्ड-ज्योति परिवार के सदस्यों का इन संकट की घड़ियों में विशेष कर्त्तव्य है । वे नव-निर्माण योजना के व्रतधारी सदस्य हैं । निर्माण के लिए सुरक्षा सबसे पहले चाहिए । आक्रमण से होने वाले विनाश को रोका जाय तभी तो कुछ निर्माण होगा । इसलिए जिस श्रद्धा और लगन के साथ हम लोग नैतिक, सामाजिक एवं बौद्धिक स्तर का नव-निर्माण के प्रयास कर रहे थे, वैसे ही वरन् उससे भी अधिक उत्साह के साथ हमें वर्तमान युद्ध में मातृ-भूमि की स्वाधीनता एवं सुरक्षा के लिए प्राणपण से कार्य करना चाहिए । उपरोक्त कर्त्तव्यों को स्वयं तो पालन करना ही चाहिए । साथ ही जन-साधारण में भी वही प्रवृत्तियाँ उत्पन्न करनी चाहिए । आमतौर से लोगों की प्रवृत्तियाँ स्वार्थपरता एवं संकीर्णता के दायरे तक ही सीमित रहती हैं । लोकहित की उपेक्षा की जाती रहती है । लोक-मानस को इस स्तर से ऊँचा उठाने और उसमें देशभक्ति की, त्याग-बलिदान की भावनाएँ उभारने के लिए प्रबुद्ध लोगों के विशेष प्रयत्नों की आवश्यकता होती है । हमें वही करना चाहिए । अपने-अपने क्षेत्रों में वह वातावरण बनाना चाहिए, जिससे लोग आज की अग्नि परीक्षा के समय अधिकाधिक शौर्य, साहस, त्याग एवं बलिदान का परिचय देने के लिए समुद्यत हो सकें । इस दृष्टि से जहाँ जो कार्यक्रम बन सकें वह बनाने चाहिए । ऐसे प्रयासों को संगठित रूप से कार्यान्वित करने का प्रयत्न किया जाय तो उसमें बहुत काम होता है । युग निर्माण शाखाओं के संगठन हर जगह मौजूद हैं, इन संगठनों को यह देखना है कि वे अपने क्षेत्र में क्या कर सकते हैं ? जहाँ जैसी सम्भावना हो, वहाँ उस तरह की गतिविधियाँ तत्काल आरम्भ कर देनी चाहिए । समय की इस माँग को पूरा करने में हमें तनिक भी आलस्य-प्रमाद न करना चाहिए ।

पिछले चीन और पाकिस्तान आक्रमण के समय अखण्ड-ज्योति परिवार के सदस्यों ने इतना काम किया था कि उसका लेखा-जोखा यदि प्रकाशित किया जाय तो उस पर प्रत्येक देश-भक्त को गर्व हो सकता है । अब की बार भी हमें बहुत कुछ करना है । हमारा व्यक्तित्व बना ही इस ढंग का है कि राष्ट्रीय रक्षा एवं सम्मान के लिए जो सामयिक कर्त्तव्य सामने आये उनकी उपेक्षा हो ही नहीं सकती । अंग्रेजी सरकार के विराट् स्वाधीनता संग्राम में पौने चार वर्ष तक जेल की यन्त्रणाएँ सहीं । चीन का आक्रमण जितने दिन रहा उतने दिन पूरी तरह नागरिक मोर्चे को मजबूत बनाने के लिए काम करते रहे । अब वर्तमान में इस राष्ट्रीय सम्मान के दाँव पर लगा देने वाले संघर्ष में भी हम पीछे नहीं रह सकते । पूजा, उपासना हमें प्राणों से अधिक प्रिय है, पर उसके साथ-साथ देशसेवा के सामयिक कर्त्तव्यों का पालन करते रहने में हमें कोई अड़चन नहीं दिखायी पड़ती ।

एक बात स्पष्ट है हमें राष्ट्र को अधिक सबल एवं समर्थ बनाने के लिए रचनात्मक कार्यक्रमों में पहले से भी अधिक तत्परता के साथ लगना होगा । जब तक हमारे देश का प्रत्येक घर लोह-दुर्ग और प्रत्येक नागरिक लौह-पुरुष नहीं बन जाता तब तक आक्रमणों की सम्भावना सदा ही बनी रहेगी । गरम युद्ध, शीत युद्ध में और शीत युद्ध, गरम युद्धों में बदलते रहेंगे । जब तक ईर्षालु लोग यह अनुभव न करलें कि लड़ने में उन्हीं की हानि है तब तक वे अनुचित लाभ उठाने की दुरभिसन्धियाँ करते ही रहेंगे । संसार का नियम ही कुछ ऐसा है—'दुर्बल का दैव भी घातक होता है' की उक्ति सार्थक ही सिद्ध होती है । चीन ने कुछ दिन गरम युद्ध किया था, अब बहुत-सा भू-भाग दबा कर शीत युद्ध जारी रख रहा है । पाकिस्तान अपने जन्म काल से ही शीत युद्ध लड़ रहा था, फिर उसने गरम युद्ध छेड़ दिया । शीत युद्ध भी कम खर्चीला और चिन्ता का विषय नहीं होता । ऐसे संघर्ष में भारत को अभी काफी समय तक संलग्न रहना पड़ेगा । युद्ध विराम चीन ने भी कर लिया था, पर इसके साथ सीमा विवाद अभी भी चल रहा है । पाकिस्तान पहले भी युद्ध विराम कर चुका है, अपनी जान बचाने के लिए फिर भी कर सकता है, पर इससे भी युद्ध का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्त न होगा । वास्तविक हल तब निकलेगा जब आक्रान्ता यह अनुभव करेंगे कि लूट-खसोट की घात लगाने में नहीं, भारत के साथ मित्रता करने में उनका लाभ है । यह स्थिति तब आयेगी जब हम सैन्य दृष्टि से ही नहीं, सामाजिक, शारीरिक, आर्थिक, नैतिक, बौद्धिक सभी दृष्टियों से सुसम्पन्न एवं समर्थ होंगे । युग निर्माण का उद्देश्य ऐसी ही विशिष्टता एवं बलिष्टता प्राप्त करना है । इसलिए इन प्रयासों को दिन-दूने रात-चौगुने उत्साह के साथ आगे बढ़ना होगा । वास्तविक शक्ति का स्रोत यही है । जब राष्ट्र का हर नागरिक लौह-पुरुष सिद्ध होगा तो उसकी शक्ति अजेय होगी, कोई शत्रु उसकी ओर आँख न उठा सकेगा । जब तक वह स्थिति नहीं आयेगी, खतरा इधर से न सही उधर से बन ही रहेगा । राज्य अपने क्षेत्र में समर्थता उत्पन्न करता है । धर्म को अपना मोर्चा सँभालना चाहिए । नैतिक शक्ति के लिए राज्य-तन्त्र और आन्तरिक शक्ति के लिए धर्म-तन्त्र दोनों ही समान रूप से कार्य करते हैं । धर्म-तन्त्र की यद्यपि इन दिनों कम दुर्दशा नहीं है । फिर भी हमें जोड़-तोड़ कर उसे उपयोगी बनाना ही होगा । मानवा जाति की भौतिक प्रगति राज्य-तन्त्र द्वारा भले ही सम्भव हो पर उसकी आन्तरिक प्रगति एवं समर्थता धर्म-तन्त्र की सहायता के बिना अन्य किसी प्रकार भी उपलब्ध नहीं हो सकती । आन्तरिक समर्थता के बिना नैतिक बल बालू की भीति की तरह है । आक्रमणों का स्थायी अन्त करने के लिए जिस सर्वांगीण समर्थता की आवश्यकता है उसको उत्पन्न करने के लिए हमें प्राणपण से जुट जाना होगा । उसमें उपेक्षा करने से फिर वैसे ही दुर्दिन देखने पड़ सकते हैं । जैसे गत एक हजार वर्षों तक खून के आँसू बहाते हुए हमने देखे हैं ।

युग-निर्माण योजना का प्रयोजन यही है, उसके शतसूत्री कार्यक्रमों में से प्रत्येक इसी दृष्टि से प्रस्तुत किया गया है कि हम वैयक्तिक एवं सामूहिक दृष्टि से, शारीरिक, बौद्धिक, आर्थिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वतोन्मुखी, सुसम्पन्नता उपलब्ध कर सकें । युद्ध के प्रत्यक्ष स्वरूप से निपटने के लिए जहाँ हमें सुरक्षात्मक मोर्चे को मजबूत बनाने के लिए सामयिक कदम उठाने हैं, वहाँ आक्रमणों की जड़ उखाड़ने वाली समर्थता प्राप्त करने के लिए रचनात्मक मोर्चे के महत्त्व को भी स्मरण रखना है । क्योंकि टिकाऊ शक्ति तो उसी से प्राप्त होगी और दीर्घकालीन समस्याओं का चिरस्थायी हल तो उसी से निकलेगा । नव-निर्माण कार्यक्रमों में अखण्ड ज्योति परिवार के सदस्यों को तेजी लानी चाहिए । यह कार्य संकीर्ण स्वार्थपरता की कीचड़ में गन्दे कीड़ों की तरह बुजबुजाने से नहीं वरन् अपने समय और साधनों को लोक-मंगल के लिए लगाने का मानवोचित साहस दिखाने से सम्भव होगा । परिजनों ने, हमारे उत्तराधिकारी और प्रतिनिधियों ने, 'एक घण्टा समय और एक आना रोज नव-निर्माम के लिए लगाने का व्रत लिया है', उसे उन्हें एक परम पवित्र धर्म प्रतिज्ञा समझ कर नियमित रूप से कार्यान्वित करते रहना चाहिए । युग-निर्माण योजना के द्वारा रचनात्मक कार्यक्रमों का नियमित मार्ग-दर्शन होता रहता है । उसे ध्यानपूर्वक पढ़ते रहना चाहिए । अखण्ड-ज्योति के सदस्यों में से एक भी ऐसा न रहे जो पाक्षिक-पत्रिका को न पढ़ता हो । राष्ट्र को विजयी बनाने वाले रचनात्मक कार्यक्रमों की ट्रेनिंग एवं प्रेरणा तो उसी से प्राप्त करते हैं। परिजनों ने जो व्रत लिया है, वह राष्ट्र-रक्षा के लिए लगे हुए युद्ध-मोर्चे पर लड़ने वाले सैनिकों की तरह ही कठोर एवं महान है । उसे सच्चाई के साथ निवाहा जाना चाहिए । वर्तमान परिस्थितियाँ इसके लिए अधिकाधिक तत्पर होने के लिए प्रत्येक प्रबुद्ध परिजन को विवश कर रही हैं । इन उत्तरादायित्वों को हमें पूरी श्रद्धा एवं निष्ठा के साथ निवाहना चाहिए ।

राष्ट्रीय सुरक्षा के लिए एक महान पुरश्चरण

उपासना की दृष्टि से राष्ट्र की प्रतिरोधात्मक शक्ति को उत्पन्न करने के लिए अखण्ड-ज्योति परिवार के सदस्यों को गायत्री महातत्व की "क्लीं" शक्ति की सामूहिक उपासना करनी चाहिए । आध्यात्म विद्या के जानकारों को पता है कि ह्रीं सरस्वती, बुद्धि का, श्रीं लक्ष्मी समृद्धि का तथा क्लीं काली दुरति संहार का बीज मन्त्र है । गायत्री महाशक्ति में समय-समय पर विशेष प्रयोजनों के लिए इन्हें प्रयुक्त किया जाता है । वर्तमान परिस्थितियों में शुम्भ-निशुम्भ, महिषासुर, मधुकैटभ की तरह आक्रमणकारी दुर्दान्त दस्युओं को परास्त करने वाली दुर्गा शक्ति से भारतीय जन-मानस को ओत-प्रोत करने की आवश्यकता है । इसलिए उसका उद्भव किया जाना चाहिए । इस उद्भव के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए किसी भी पूर्णिमा से एक वर्ष के लिए राष्ट्र-व्यापी २४-२४ करोड़ जप के प्रतिमास दो क्लीं महापुरश्चरण आरम्भ कराये जा रहे हैं । इसमें परिवार के प्रत्येक परिजन को भाग लेना चाहिए ।

'ॐ भूर्भुवः स्वः क्लीं क्लीं क्लीं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् क्लीं क्लीं क्लीं ॐ ।' यह शत्रु एवं शत्रुता संहारक शक्ति मन्त्र है । इसकी एक मन्त्र की प्रति दिन ८ माला जपने से एक महीने में एक २४ हजार का अनुष्ठान पूरा हो जाता है । एक घण्टा में उपरोक्त मन्त्र की आठ मालाएँ हो सकती हैं । जिनके पास इतना समय है कि वे अकेले ही, अन्यथा अपने कुटुम्ब के सदस्यों में से एक-एक दो-दो माला करके भी ८ माला का कार्यक्रम बनाया जा सकता है । परिजन अपने परिवार से एक महीने में एक अनुष्ठान पूरा कर लेने का प्रयत्न करें । यों अखण्ड-ज्योति परिवार के लाखों सदस्य हैं पर हम २४ लाख सदस्यों से यह आशा करेंगे कि वे एक-एक अनुष्ठान हर महीने कराते रहेंगे । इससे उत्पन्न सामर्थ्य परोक्ष जगत में ऐसी हलचलें उत्पन्न करेंगी जो अपने देश के लिए हर दृष्टि से लाभदायक होगी ।

छोटे बच्चे, महिलाएँ तथा आशिक्षित परिजनों के लिए लघु क्लीं मन्त्र हैं । 'ॐ क्लीं भूः ॐ क्लीं भुवः ॐ क्लीं स्वः ॐ ।' यह दश अक्षरी क्लीं मन्त्र उनके लिए हैं जिनको शिक्षा अथवा समय अभाव में पूरा मन्त्र जपने में कठिनाई होती है । इस मन्त्र की २० मालाएँ एक घण्टे में हो सकती हैं । एक व्यक्ति इतना समय न लगा सके तो एक परिवार मिलकर तो इतना कर ही सकता है । २० माला के हिसाब से ६ दिन में एक अनुष्ठान २४ हजार का हो सकता है । अर्थात् महीने में पाँच । इस तरह के २ हजार व्यक्ति अथवा परिवार इस लघु क्लीं अनुष्ठान में सहज ही लग सकेंगे ऐसा विश्वास है । इस प्रकार २४ करोड़ के १२ अनुष्ठान इसके भी हो जायेंगे ।

इस उपासना में सिंह वाहिनी ॐ ध्वजधारी गायत्री की क्लीं भक्ति का ध्यान करना चाहिए । अखण्ड ज्योति के मुख पृष्ठों पर इस वर्ष तथा गत वर्ष कई बार इस चित्र को प्रकाशित किया जाता रहा है । साधक उसे काट कर शीशे में मढ़ा लें और उसकी पूजा-अर्चना किया करें । यह चित्र अलग से भी छपाया गया है । पुस्तकें आदि मँगाते समय उनके साथ ही यह चित्र भी मँगाया जा सकता है ।

१० हजार व्यक्तियों अथवा परिवारों द्वारा १ घण्टा समय नित्य लगाये जाने पर हर महीने २४ करोड़ का पूर्ण क्लीं बीज सहित गायत्री महातत्व अनुष्ठान ही होगा । इस शरद पूर्णिमा से अगली शरद पूर्णिमा तक एक वर्ष में ऐसे १२ अनुष्ठान हो जायेंगे । इसी प्रकार २ हजार लघु क्लीं मन्त्र का अनुष्ठान करने वाले २ हजार व्यक्तियों या परिवारों द्वारा हर महीने २४ करोड़ होते रहेंगे । एक वर्ष में १२ अनुष्ठान यह भी हो जायेंगे । इस प्रकार २४ करोड़ के १२+१२=२४ अनुष्ठान का महान महापुरश्चरण पूरा होगा । इसका प्रतिफल राष्ट्रीय सुरक्षा एवं शक्ति अभिवर्धन की दृष्टि से बहुत ही आशाजनक होगा ।

प्राचीनकाल में असुरों के दुरभिसन्धिपूर्ण आक्रमणों से जब देवता परास्त हो गए तो वे आत्म-रक्षा का उपाय पूछने प्रजापति के पास गए । उन्होंने सबकी थोड़ी-थोड़ी शक्ति लेकर एक सामूहिक महाशक्ति का निर्माण किया उसका नाम "काली" रखा । इस क्लीं काली ने शुम्भ-निशुम्भ, महिसासुर, मधुकैटभ असुरों का उनकी सेना समेत संहार कर डाला । उस पौराणिक गाथा की यह पुनरावृत्ति है । आज भी लगभग वैसा ही विषम समय है । आध्यात्मिक उपचारों में वही उपाय फिर काम में लाया जा रहा है । आत्मिक दृष्टि से भारी और हलके देव परिजनों द्वारा उनकी शक्ति का एकत्रीकरण करके यह महापुरश्चरण आरम्भ कराया जा रहा है, इससे भी पूर्वकाल जैसी 'क्लीं' काली शक्ति का प्रादुर्भाव होगा और राष्ट्रीय संकट को टालने में 'आसुरी' आक्रमण को परास्त करने में भारी सहायता मिलेगी । उस शक्ति का पुनः प्रादुर्भाव होगा जो जन-मानस में शौर्य, पौरुष, पराक्रम एवं तेज उत्पन्न कर सके । इससे राष्ट्र का लाभ तो होगा ही, उन भागीदारों की व्यक्तिगत आपत्तियों एवं कठिनाइयों के समाधान में भी सहायता मिलेगी । उनके व्यक्तिगत जीवन में जो शत्रुओं एवं शत्रुताओं के कारण जो अड़चनें उत्पन्न हो रहीं हों उनका भी समाधान होगा ।

इस अनुष्ठान के जो हजारों विशिष्ट 'ऋत्विज' नियुक्त किए जा रहे हैं उन्हें एक वर्ष तक (१) ब्रह्मचर्य का पालन, (२) एक अन्न एक शाक का उपवास, यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दो व्रत निवाहने पड़ेंगे । शेष के ऊपर इस प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं है । यों आवाहन के पाँच नियम में से जिससे जो कुछ निभ सके वे उसे निभाएँ । ब्रह्मचर्य में अधिकाधिक कठोरता बरतें । भोजन में एक अन्न और एक शाक का नियम रखना भी एक प्रकार का उपवास ही है । आज यदि गेहूँ की रोटी और आलू का शाक लिया है तो दोनों समय वही लेना चाहिए । कल यदि शाक, दाल या अन्न बदलना हो तो बदल सकते हैं । यह भी एक उपवास ही है । रविवार को फलाहार शाक, फल, दूध का निरान्न आहार करना चाहिए । अपनी शारीरिक सेवा आप करना, चमड़े का त्याग यह पाँच नियम अनुष्ठान के हैं । इनमें से सबका या एक दो का जिससे पालन हो सके वे उसे कर सकते हैं । यह स्वेच्छा व्रत है, प्रतिबन्धित नहीं भागीदार ऋत्विजों पर इस प्रकार के प्रतिबन्ध रहेंगे । उन्हें ब्रह्मचर्य, उपवास के दो नियम अनिवार्यतः पालन करने होंगे । शेष ३ को भी जो पालन कर सकें स्वेच्छापूर्वक करें । इस सन्दर्भ में जो जितना भाग इस महान अनुष्ठान में ले सके लेना आरम्भ कर देना चाहिए । शाखाओं की मीटिंग बुलाकर जो जितना भाग ले सके उसकी प्रेरणा देनी चाहिए ।

हर महीने एक हवन उपरोक्त मन्त्र से ही सामूहिक रूप से करना चाहिए । पूर्णिमा या महीने का अन्तिम रविवार या और कोई सुविधा का दिन नियत कर लिया जाय जिससे उपरोक्त पुरश्चरण का हवन होता रहे । न्यूनतम २४० आहुतियाँ तो होनी ही चाहिए । अधिक जितनी भी हो सकें उत्तम है ।

नित्य प्रार्थना उपासना में इस धर्म युद्ध में भारतीय राष्ट्र की विजय की भी माता से प्रार्थना करनी चाहिए । मन्दिरों में, धर्मस्थानों में, सत्संग, कथा, कीर्तनों में भी समय-समय पर ऐसी ही सामूहिक प्रार्थना का आयोजन करना चाहिए ।

आत्मिक प्रगति के तीन सुनिश्चित आधार अवलम्बन

विद्यार्थी को अच्छे नम्बर से उत्तीर्ण होने और उस सफलता के आधार पर उच्च पद पाने के लिए कई बातों पर आश्रित रहना पड़ता है । अपना निजी मनोयोग एवं परिश्रम तो सर्व प्रथम है ही, उसके बिना तो गाड़ी एक कदम नहीं बढ़ती, पर इसके अतिरिक्त भी अन्य दो साधन चाहिए । इनमें एक है—उपयुक्त शिक्षक एवं सुनिश्चित पाठ्य-क्रम । दूसरा है—अभिभावकों का सहयोग, अनुदान । यह तीनों सुयोग जब बन पड़ते हैं तो सफलता सुनिश्चित हो जाती है । इनमें से एक आधार भी लड़खड़ाने लगे तो समझना चाहिए कि प्रगतिक्रम रुका और सफलता संदिग्ध हो गई । अपवाद रूप में तो कोई एकाकी मात्र अपने बलबूते भी बहुत कुछ कर सकता है, पर साधारण क्रम यही है । निजी पुरुषार्थ के अतिरिक्त साधन और सहयोग को भी हर प्रसंग में आवश्यकता पड़ती है । उनके न मिल सकने पर सुयोग्यों को असफलता का दुःख उठाना पड़ता है ।

छात्र की सफलता का उदाहरण देकर यह बताया गया है कि भौतिक और आत्मिक प्रगति के लिए सर्वत्र उपरोक्त त्रिविध साधनों की आवश्यकता पड़ती है । जिन्हें मिल जाते हैं वे सफलता का श्रेय लेते हैं, जिन्हें इनसे वंचित रहना पड़ता है वे अपने प्रयत्न पुरुषार्थ में कोई कमी न पाते हुए भी दुर्भाग्यग्रसित रहते हैं । पुरुषार्थ का महत्त्व सर्वोपरि होते हुए भी वह एकाकी ऐसा नहीं है । जो अभीष्ठ प्रतिफल उपलब्ध कर सके । साधन और सहयोग के बिना प्रबल पुरुषार्थ भी असफल रहता पाया गया है । विद्यार्थी को उपयुक्त अध्यापन न मिले और अभिभावक उसके लिए भोजन, वस्त्र, पुस्तक, फीस आदि का प्रबन्ध न करे, तो पुरुषार्थी और मेधावी होते हुए भी उसे अभीष्ट प्रतिफल से वंचित रहना पड़ेगा ।

आत्मिक क्षेत्र की सफलता के सम्बन्ध में भी यही बात है । साधना पद्धति सही और सुनिश्चित होनी चाहिए । दुर्भाग्य से इन दिनों भारतीय आध्यात्मिक के क्षेत्र में इन दिनों अराजकता का साम्राज्य है । अन्य धर्मों में सुनिश्चित साधन पद्धतियाँ बनी हुई हैं । उन्हें श्रद्धापूर्वक अपनाकर अनुयायी अपना प्रगति क्रम जारी रखते हैं । मुसलमानों में मौलवी और ईसाइयों में पादरी अपना-अपना नया मजहब नहीं चलाते । अपनी-अपनी नई साधना पद्धतियाँ नहीं गढ़ते । अपनी मनमर्जी के नए-नए मन्त्र और विधान नहीं उगाते, पर इस सम्बन्ध में हिन्दू समाज को दुर्भाग्यग्रस्त ही कहना चाहिए कि हर धूर्त गुरुनामधारी ने अपनी डेढ़ ईंट की अलग मस्जिद खड़ी की और ढाई चावल की खिचड़ी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पकाई है । आठ कनौजिया नौ चूल्हे की कहावत व्यावहारिकतः कितनी सच है यह कहना कठिन है, पर उपासना के क्षेत्र में हर गुरु नामधारी ने अपना एक विशेष सम्प्रदाय शास्त्रों, आप्तवचनों एवं परम्पराओं की पूरी अवहेलना करते हुए गढ़ लिया है । पर्यवेक्षण में उसे हारना न पड़े इसलिए यह तुर्रा लगा दिया है कि जो विधि बताई गई है उसे प्रकट न किया जाय । जबकि समस्त संसार में विज्ञ-जन अपने प्रतिपादनों की प्रामाणिकता एवं विशिष्टता सिद्ध करने के लिए उन्हें साहसपूर्वक तर्क एवं प्रमाणों सहित प्रस्तुत करते हैं, तब अपने यहाँ किसी को न कहने का प्रतिबन्ध लगाया जाता है । इसका और कोई कारण नहीं, उस मनगढंत जाल-जंजाल की पोल खुल जाने का भय ही गोपनीयता का प्रतिबन्ध लगाता है । साधना विधियों की बहुलता और गोपनीयता की इस अराजकता के दिनों किसी सहज जिज्ञासु के लिए यह निर्णय करना कठिन पड़ता है, कि इन तथाकथित गुरुजनों द्वारा बतायी जाने वाली अनेकानेक उपासना विधियों में से किसे अपनाये, किसे छोड़े । भ्रान्तियों, शंकाओं सन्देहों और अनिश्चित दिशा धारा की मनःस्थिति साधक की निष्ठा में सबसे बड़ी बाधा है । इसके रहते किसी का अभीष्ट लक्ष्य तक पहुँचना कठिन है ।

इस कठिनाई के निवारण का गायत्री अभियान के सूत्र संचालकों ने प्राण-पण से प्रयत्न किया है और शास्त्र तथा आप्त परम्पराओं का लम्बे समय तक पर्यवेक्षण करने के उपरान्त वह राजमार्ग प्रस्तुत किया है, उसे चुनौती दे सकना किसी भी तर्क, तथ्य एवं प्रमाणों को मान्यता देने वाले के लिए शक्य नहीं हो सकता । अध्ययन अन्वेषण ही नहीं, अनुभव भी इस राजमार्ग को उत्कृष्टता के सम्बन्ध में प्रमाण स्वरूप प्रस्तुत किया गया है । 'साधना में सिद्धि' का उपलब्ध होना ही उसके सही होने की सबसे बड़ी साक्षी है । प्राचीनकाल के उदाहरणों पर जिन्हें सन्देह हो वे गायत्री युग लाने वाले सूत्र संचालक की निजी साधना और सिद्धि का पर्यवेक्षण करते हुए भी प्रतिपादन की प्रामाणिकता का पता लगा सकते हैं । सन्देह निवारण की दृष्टि से यह साक्षी काफी वजनदार है ।

आत्मिक प्रगति के लिए सुनिश्चित साधना पद्धति में गायत्री के अवलम्बन से बढ़कर दूसरा मार्ग हो नहीं सकता, इसे भारतीय धर्मानुयायी क्रमशः अधिक अच्छी तरह समझते और अनुभव करते जा रहे हैं । उसके लिए उपयुक्त विधान क्या होना चाहिए, उसकी समुद्र मन्थन जैसी लम्बी अनुसन्धान प्रक्रिया का जो निष्कर्ष नवनीत निकला है, वह सर्वसाधारण के सामने प्रस्तुत है । गायत्री महाविज्ञान या छोटी पुस्तिकाओं में उसे सरलतापूर्वक देखा, समझा जा सकता है । अब तो उनका प्रचलन भी इतना हो गया है कि किसी नैष्ठिक साधक से पूछकर निर्भ्रान्ति साधना पद्धति को जाना जा सकता है । कोई सन्देह हो तो हरिद्वार, मथुरा के केन्द्र उनका निराकरण समाधान करने के लिए विद्यमान हैं । ऐसी दशा में साधना से सिद्धि प्राप्त करने के मार्ग में जो प्रथम अवरोध 'सही मार्ग-दर्शन' न मिलने का, सही अध्यापक न मिलने का था, उसका समाधान मिल गया ही समझा जा सकता है ।

मार्ग-दर्शन के अतिरिक्त प्रगति पथ पर अग्रसर होने का दूसरा अवलम्बन है, पुरुषार्थ । पुरुषार्थ के दो पक्ष हैं—एक श्रम, दूसरा मनोयोग । श्रम में स्फूर्ति और तत्परता होनी चाहिए । मनोयोग में तन्मयता, निष्ठा का समावेश होना चाहिए । अन्यथा इन दोनों का स्तर नहीं बनता और चिन्ह पूजा होने जैसी स्थिति बनी रहती है । लकीर पिटते रहने को पुरुषार्थ नहीं बेगार भुगतना कहा जाता है । उसका प्रतिफल भी नगण्य ही मिलता है । साधना के क्षेत्र में भी उच्चस्तरीय पुरुषार्थ चाहिए । साधक की उपासना में साधन श्रद्धा और जीवन प्रक्रिया में उत्कृष्टता का अधिकाधिक समन्वय करना चाहिए । भजन-पूजन बेगार भुगतने की तरह क्रिया-कृत्य बनकर ही नहीं चलते रहना चाहिए वरन् उसमें सघन निष्ठा का समावेश होना चाहिए । इन दिनों युग पुरश्चरण का जो महान संकल्प चल पड़ा है उसमें संख्या और समय स्वल्प है, पर निष्ठा का स्तर बढ़ाने पर पूरा जोर दिया गया है । कहा गया है कि उसकी नियमितता और आवश्यकता भोजन, शयन से कम नहीं वरन् अधिक ही अनुभव की जानी और व्रत लिया जाना चाहिए कि भोजन या शयन से पूर्व निर्धारित साधना क्रम पूरा किया जायेगा । किसी कारणवश बन नहीं पड़ा तो उसे छोड़ नहीं दिया जाना चाहिए, वरन् अगले दिनों साधन बढ़ाकर उसे पूरा किया जाना चाहिए । यह नैष्ठिक अनुशासन है । इसी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को व्रत कहते हैं । व्रत के बिना साधना में शक्ति उत्पन्न ही नहीं होती । प्रत्यंचा खींचे बिना बाण की प्रखरता कहाँ दृष्टिगोचर होती है ?

साधनात्मक पुरुषार्थ में (१) उपासना का नियमित और निश्चित होना, (२) व्यक्तित्व में पवित्रता एवं प्रखरता का समावेश बढ़ना । (३) तपश्चर्या की संयम एवं सेवा शर्तों को पूरा किया जाना—यह तीन चरण हैं । साधक इन्हीं के सहारे इतना सशक्त बनता है कि अन्तराल से सिद्धियों का उभार—संसार से सम्मान, सहयोग और अदृश्य जगत की देवी अनुग्रह की विद्युत वर्षा होने लगे । इस वर्ष की नैष्ठिक उपासना में सप्ताह में एक दिन अस्वाद ब्रह्मचर्य एवं मौन की संयम साधना पर जोर दिया गया है । साथ ही नवसृजन के लिए अंशदान की उदारता बरतने में निष्ठावान रहना चाहिए । इन्हें तपश्चर्या की नीति अपनाने का अंगुलि निर्देश समझा जाना चाहिए । इन्हें मात्र कृत्य की तरह पूरा भर नहीं कर लिया जाना चाहिए, वरन् उन्हें तपस्वी जीवन के आधार भूत सिद्धान्त समझा जाना चाहिए और निरन्तर यह प्रयत्न चलना चाहिए कि यह आदर्श व्यक्तित्व के अंग बनकर दबे देवत्व को उभारने का चमत्कार दिखा सके ।

आध्यात्म क्षेत्र का आत्म-शोधन एवं आत्म-परिष्कार करना ही परम पुरुषार्थ है । इसी के लिए व्रत, संयम, तप के विभिन्न अनुशासन अपनाने पड़ते हैं । उपासना पद्धति में भी निष्ठा और नियमितता का अधिकाधिक समावेश करना पड़ता है । जो इस तथ्यों पर जितना अधिक ध्यान देता है वह उसी अनुपात से सच्चा साधक माना जाता है और उसी परिमाण से चमत्कारी सिद्धियाँ प्राप्त करता है । जो उस ओर ध्यान नहीं देते मात्र उपासना कृत्यों को ही सब कुछ मान बैठते हैं, उनको बाल बुद्धि की जादूगरी में रस लेने वाला कहा जा सकता है । हाथों की हेरा-फेरी और जीभ को लपालपी भर से तो बाजीगर ही चमत्कार दिखा सकते हैं । जो इतना भी नहीं समझते कि सस्ते उपचारों से बड़े चमत्कार दिखाने वाले बाजीगर वस्तुतः खोखले होते हैं और बाल मनोरंजन करके पेट भरने मात्र की कमाई कर पाते हैं । साधना को जो बाजीगरी भर मानते हैं और देवताओं की छुट-पुट उपहार मनुहार से बरगलाये जा सकने जैसे मूर्ख मानते हैं । वे भारी भूल करते हैं । तत्वतः—आत्मिक क्षेत्र का पुरुषार्थ उपासना पद्धति और जीवन प्रक्रिया से उच्चस्तरीय निष्ठा का समावेश करते चलना ही है ।

गायत्री परिवार के परिजनों ने अपनी साधना में निष्ठा का समावेश करने का प्रयत्न सदा से किया है । अब युग सन्धि की बेला में वे उस प्रयास की और भी अधिक तत्परता के साथ सम्पन्न करने जा रहे हैं । इन दिनों जाग्रत आत्माओं के कन्धों पर जो विशिष्ट उत्तरदायित्व आये हैं, उनका निर्वाह कर सकने में नैष्ठिक साधना अपनाने पर बहुत जोर दिया जा रहा है । जो इस दिशा में जितने शौर्य पराक्रम कर सकेंगे वे उतने ही बड़े पुरुषार्थी कहे जायेंगे और आत्मिक प्रगति के सुनिश्चित परिणाम उत्पन्न करने वाले त्रिविध अवलम्बनों में से एक अति महत्त्वपूर्ण पक्ष की पूर्ति करेंगे ।

भौतिक प्रगति एवं समृद्धि का जितना महत्त्व समझा और ध्यान दिया जाता है, उतना ही यदि आत्मिक क्षेत्र की उपलब्धियों के सम्बन्ध में दृष्टि रही होती तो निश्चय सामान्य परिस्थितियों में रहने वाले व्यक्ति भी देव मानवों की भूमिका निभा सकने में समर्थ हो सके होते । चलता इतना है कि भौतिक सफलताओं के लिए छुट-पुट आध्यात्मिक उपचार उपेक्षापूर्वक किए जाते हैं यदि आत्मबोध उगा और तत्व ज्ञान जगा होता तो आत्मिक प्रगति को प्रमुखता मिलती और भौतिक सुविधाओं की वैसी ही उपेक्षा बन पड़ती जैसी कि इन दिनों वैभव के निमित्त जीवनोद्देश्य की अवज्ञा होती रहती है । यह आन्तरिक परिवर्तन प्रस्तुत कर सकना ही सच्चे अर्थों में आत्मिक क्षेत्र का पुरुषार्थ है जो इसे जिस मात्रा में कर पाता है वह उसी कायकलेवर में रहते हुए अपने में दैवी विशिष्टताओं का अनुभव करता और परिचय देता है ।

आत्मिक प्रगति का तीसरा अवलम्बन है—वरिष्ठों का अनुदान । छात्र की सफलता का उदाहरण देते हुए कहा जा चुका है कि उसे अभिभावकों का बहुमुखी सहयोग मिलना चाहिए । भोजन, वस्त्र, पुस्तक, फीस, जेब खर्च आदि का सारा प्रबन्ध अभिभावक करते हैं । यदि वे न करें और यह सारा प्रबन्ध छात्र को स्वयं ही करना पड़े तो अधिकांश क्षमता उसी को जुटाने में नष्ट हो जायेगी और फिर पढ़ने के लिए न फुरसत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलेगी, न ताजगी रहेगी । ऐसी दशा में अत्यधिक भार बढ़ जाने से न उसकी पढ़ाई ठीक प्रकार चलेगी न सफलता ही सुनिश्चित रहेगी । छोटे बच्चे को माता दूध भी पिलाती है और उसकी अन्य सुविधाओं को भी जुटाती रहती है । यदि यह लाभ न मिले तो नवजात शिशु के लिए अपनी स्वल्प सामर्थ्य के बल पर जीवन धारण किए रहना भी कठिन हो जायेगा ।

आत्मिक प्रगति के क्षेत्र में भी यही सिद्धान्त काम करता है । साधना के प्रति सच्चे अर्थों में जो निष्ठावान हैं, उन्हें सिद्ध पुरुषों के उच्चस्तरीय अनुदान मिलते हैं और वे स्वल्प पुरुषार्थ में भी उच्चस्तरीय सफलताएँ प्राप्त कर सकने में सफल होते हैं । विवेकानन्द को परमहंस का, शिवाजी को समर्थ का, चन्द्रगुप्त को चाणक्य का, विनोबा को गाँधी का अनुदान मिला और वे मूलतः अकिंचन होते हुए भी अन्ततः महान बन सकने में सफल हुए । हनुमान, अंगद और नल-नील को चमत्कारी उपलब्धियाँ उनकी अपनी उपार्जित नहीं थीं वे अनुदान में मिली थीं । कुन्ती पुत्र पाण्डव जो पराक्रम दिखा सके वह उनका निज का नहीं देव प्रदत्त था । गंगा लाये तो भागीरथ ही थे, पर उस सफलता में उन्हें शिवजी का अनुदान कम नहीं मिला था । तपश्चर्याएँ ऐसे ही अनुदान, वरदान प्राप्त करने के निमित की जाती हैं ।

सर्वविदित है कि युग-निर्माण योजना के सूत्र संचालकों की अपनी उपार्जित आत्मिक सम्पदा जितनी है उससे असंख्य गुनी अनुदान स्वरूप मिलती है । यदि ऐसा न होता तो गोवर्धन उठाने और समुद्र सेतु बनाने जैसे जो महान प्रयत्न चल रहे हैं उनमें से एक भी अग्रगामी न हो सका होता ।

गुरु और शिक्षक में नैतिक अन्तर है । शिक्षक मार्ग-दर्शक भर होता है । बताने, पढ़ाने के उपरान्त उसकी जिम्मेदारीपूर्ण हो जाती है, किन्तु गुरु की गरिमा इतनी सीमित नहीं है, उसे शिष्य को प्रशिक्षण से भी अधिक अनुदान देना पड़ता है । अध्यापक कोई भी हो सकता है, पर अनुदान देने वाले अभिभावक तो भाग्यवानों को ही मिलते हैं । यदि यह आवश्यकता पूर्ण न हो सके तो मार्ग-दर्शन और पुरुषार्थ के दोनों आधार बन पड़ने पर भी एक बड़े महत्त्व का अवलम्बन अनुपलब्ध ही रह जाता है और उच्चस्तरीय सफलता संदिग्ध बनकर रह जाती है ।

कई व्यक्ति ऐसे सिद्ध पुरुषों की तलाश में रहते हैं जिनके वरदान, आशीर्वाद से उनकी कठिनाई हल निकले एवं अभीष्ट सफलताओं में सरलता हो सके । ऐसे सिद्ध पुरुष प्राचीनकाल में तो बहुत थे, पर अब भी उनका वंश नष्ट नहीं हुआ है । सत्पात्रों की उनकी सेवा सहायता अभी भी प्राचीनकाल की तरह उपलब्ध होती है । फिर क्या कारण है कि प्राचीनकाल में साधकों को ऐसे अनुदान मिलते रहते थे और अब वैसे सुयोग नहीं बनते । सिद्ध पुरुषों के वरदान प्राप्त करके जो गुरु कृपा की सराहना कर सके ऐसे भाग्यशाली कठिनाई से ही कहीं दीखते हैं । इच्छुकों की कमी नहीं वे भाग दौड़ भी कम नहीं करते—फिर भी जब निराशा हाथ लगती है तो अनेक प्रकार के सन्देह मन में उठते हैं । उनमें एक यह भी है कि सिद्ध पुरुषों की समाप्ति तो नहीं हो गई अथवा वे अनुदार तो नहीं बन गए ?

इस शंका के समाधान में इस तथ्य को भली प्रकार उजागर करना होगा कि महत्त्वपूर्ण अनुदान पात्रता के स्तर से सम्बन्धित है । पानी माँगने पर कहीं से भी मिल सकता है । मनुष्यता का तकाजा एक दूसरे को सहयोग देते हुए जीवन-यापन करने का है, पर बड़ी सहायता देने जैसे बड़े कदम उठाने के लिए कोई तभी तैयार होता है, जब प्राप्त करने वाले की पात्रता परख ली जाय । उदाहरण के लिए किसी के भी माँगने पर उसे बेटी नहीं दी जा सकती । जामाता को हर तरह ठोक-बजा कर देखना पड़ता है कि वह उसकी सुयोग्य बेटी के उपयुक्त है या नहीं । बड़े अनुदान भी मिलते तो मुफ्त में ही हैं, पर उसके लिए पात्रता को कड़ी परीक्षा में उत्तीर्ण होना पड़ता है । माँगते ही मिल जाने की कोई परम्परा इस संसार में नहीं है । देवता या सिद्ध पुरुष भी इसके लिए तैयार नहीं होते । याचना पूरी हो ही जायेगी इसकी कोई गारण्टी नहीं । बैंकों से मुफ्त में धन लेकर सभी चैक भुनाने वाले निकालते हैं, पर इस लाभ को पाने से पूर्व अपनी जमा राशि अथवा लौटाने की जमानत का प्रबन्ध करना होता है । हर किसी की मनोकामना पूरी करने वाले अनुदान बढ़ने लगें तो बैंकें ही नहीं देवता एवं सिद्ध पुरुष भी दिवालिया बन जायेंगे ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पात्रता की कसौटी पर खोटे सिद्ध होने वाले याचकों को प्रायः खाली हाथ ही लौटना पड़ता है । ठीक यही बात देव मानवों द्वारा सामान्यजनों की उपयोगी अनुदान देते समय भी ऐसी ही जाँच-पड़ताल करनी होती है और वैसी ही नीति बरती जाती है ।

बैंकों से पैसा उधार तो मिलता है, पर मजा उड़ाने या जमा करने के लिए नहीं । किसी ऐसे उपयोगी काम के लिए दिया जाता है, जिससे देश की समृद्धि बढ़े और अनेकों को रोजगार मिलें । लेने वाले उस ऋण को ब्याज समेत वापिस लौटाते और देश का उत्पादन बढ़ाने का परमार्थ करते रहते हैं । कमीशन से अपना मध्यवर्ती लाभ कमाते और समृद्ध भी बनते हैं । ठीक यही तरीका दिव्य सत्ताओं, से वरदान, अनुदान प्राप्त करने का है । वह किसी को भी अमीर बनने के लिए नहीं मिला । यदि देव सत्ताएँ ऐसा करतीं तो वे पक्षपाती और चापलूसी के इशारे पर नाचने वाली कहलातीं । फिर उनकी गरिमा के साथ जुड़ी हुई उत्कृष्टता को कोई आधार न रह जाता और पूरा भाई-भतीजावाद बिरादरीवाद पनपता । ऐसा लेन-देन ओछे मनुष्य ही निहित स्वार्थों में प्रेरित होकर कर सकते हैं । देवत्व की गरिमा अपनाने वाले दृश्य या अदृश्य सत्ताओं से कभी किसी की मनोकामना पूर्ति की नहीं-उच्च प्रयोजनों के लिए अनन्त रूप में अनुदान पाने की ही अपेक्षा करनी चाहिए । यह परम्परा अभी भी मौजूद है । आत्मिक प्रगति के लिए सत्पात्रों को उच्चस्तरीय अनुदान देने वाली देवी बैंकें अभी भी अपना लेन-देन प्राचीनकाल की भाँति ही चलाती रहती हैं । आत्मिक प्रगति का तात्पर्य है उच्चस्तरीय व्यक्तित्व और उसके साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ लोक-मंगल परक कर्तृत्व । उच्च उद्देश्य के लिए उच्च अनुदान प्राप्त करने की सुविधा अभी भी जी चाही प्रसन्नतापूर्वक प्रचुर परिमाण में उपलब्ध कर सकता है ।

दिव्य अनुदान दिव्य प्रयोजनों के लिए

दैवी अनुदान उपलब्ध करने वालों की सूची तैयार की जा सके तो अनादिकाल से लेकर अद्यावधि एक भी ऐसा न मिलेगा जो उन वरदानों को पुण्य-प्रयोजनों में खर्च न करके अपनी वासना-तृष्णा की पूर्ति में लगाता बर्बाद करता रहा हो । जिन्होंने ऐसी भूल की है या जिन देवताओं ने भूल की है उन दोनों को ही दुर्गति सहन करनी पड़ी है । भस्मासुर का प्रसंग सर्वविदित है जिसमें उपलब्धकर्त्ता और दानी दोनों को ही यातना और निन्दा का भागी बनना पड़ा था । रावण, कंस, हिरण्यकश्यप, मारीच ने दैवी—सिद्धियाँ प्राप्त करके उनसे निकृष्ट स्वार्थों की सिद्धि सोची और उनका प्रयास परिश्रम लाभदायक सिद्ध न होकर हानिकारक परिणाम ही उत्पन्न कर सका, यही सनातन क्रम है । 'दैवी अनुदान दिव्य प्रयोजनों के लिए'—का अकाट्य सिद्धान्त जो सही रूप से समझ पाते हैं उन्हीं की सर्वांगीण प्रगति में दैवी अनुकम्पा का, गुरु कृपा का समुचित सदुपयोग बन पड़ता है, उन्हीं को सच्चा लाभ मिलता है ।

इन दिनों यह सुविधा अधिक सरलतापूर्वक असंख्यों को उपलब्ध हो रही है । वर्षा के दिनों नमी और हरितिमा का दृश्य अधिक स्थानों पर देखा जा सकता है । युग सन्धियों में दैवी तत्वों को उभारने के लिए दिव्य अनुकम्पा वर्षा की तरह झरती है और जहाँ भी थोड़ी अनुकूलता पाती है वहीं अपनी उत्पादन शक्ति का परिचय देने लगती है । गड्ढे और नाले भी बिना प्रयास के भरे पूरे दीखने लगते हैं । अवतारों के प्रकटीकरण की बेला में यह प्रवाह और भी तेजी में बहने लगता है । रीछ-वानरों ने, ग्वाल-बालों ने अपनी सदाशयता भर निश्चित की थी इतने भर से उन्हें सामर्थ्य और श्रेय का अजस्र अनुदान मिलने लगा था, ठीक वैसा ही अवसर इन दिनों भी है ।

कुछ समय ऐसे होते हैं जब साधकों को सिद्ध ढूँढ़ते रहते हैं । कुछ समय ऐसे आते हैं जिसमें सिद्धों को साधक ढूँढ़ने पड़ते हैं । ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं । समय की आवश्यकता पूरी करने के लिए भगवान तूफान की तरह युगान्तरीय चेतना बनकर आते हैं और अपने प्रवाह में धूलकणों और तिनकों तक को उछालकर गगनचुम्बी बनने का अवसर प्रदान करते हैं । इसमें सारा पुरुषार्थ प्रवाह का होता है । उड़ने वालों में मात्र हल्का होने की पात्रता भर होती है । भारी लठ्ठों को तो तूफान भी नहीं उड़ा पाता । बुद्ध के परिव्राजक और गाँधी के सत्याग्रही उन कृपणों की अपेक्षा कहीं अधिक लाभ में रहे जिन्हें लोभ, मोह की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हथकड़ी, बेड़ी पुण्य पर्व के रहते हुए भी ढीली करते न बन पड़ी ।

सामान्य अवसरों पर सेना में भर्ती होने के लिए अनेक प्रकार की जाँच-पड़तालों में पास होना पड़ता है तब जगह मिलती है, किन्तु देश पर शत्रु चढ़ आने की स्थिति में आपत्तिकालीन नियम बनते हैं और अनिच्छुक वयस्कों को भी बलपूर्वक सेना में भर्ती होने के लिए विवश किया जाता है । युग सन्धि ऐसी ही असामान्य बेला है जिसमें ध्वंस को सृजन में—दैत्य को देव में परिवर्तित करने के लिए सूक्ष्म और स्थूल जगत में कायाकल्प जैसी प्रक्रिया उफनती दृष्टिगोचर होगी । लोक चेतना में भरी हुई अवांछनीयता की गलाई और उसकी उपयुक्तता के ढाँचे में ढलाई होने जा रही है । इसका दृश्य कैसा होता है इसकी झाँकी किन्हीं इस्पात गलाने ढालने वाले विशालकाय कारखाने में जाकर की जा सकती है । इन बीस वर्षों में ऐसी ही उथल-पुथल चलेगी । अन्ततः उसके सत्परिणाम ही निकलकर आयेंगे । समुद्र मन्थन के समय कैसा ही कुहराम, कोलाहल क्यों न मचा हो, अन्ततः उसके फलस्वरूप बहुमूल्य रत्न ही निकले थे । उज्ज्वल भविष्य की सम्भावना सुनिश्चित है । कष्ट कर तो परिवर्तन काल की प्रसव पीड़ा भर है । कहा जा चुका है कि युग सन्धि का पर्व बीस वर्ष का है और सन् ८० से २००० तक चलेगा । इसमें नैष्ठिक साधकों की सहायता से युग पुरश्चरण चल रहा है, उन्हें आत्मबल संग्रह करने के लिए सूर्योदय से पूर्व और सूर्यास्त के उपरान्त जो दिव्य अनुदान प्रस्तुत गायत्री जयन्ती (२३ जून) से मिलने लगे हैं उनका विस्तृत विवरण अखण्ड-ज्योति के पिछले अंकों में आ चुका है । तदनुरूप अनेकों साधक उस विशेष अनुदान को अति सरलतापूर्वक उपलब्ध करने लगे हैं । यह युग पुरश्चरण के भागीदारों और नैष्ठिक उपासना का युग सन्धि अवधि तक साधना में रहने वालों का उच्चस्तरीय अनुदान है । इस आधार पर वे अपनी नैष्ठिकता बनाये रहकर आत्मबल सम्पादित करेंगे और आत्म-कल्याण का लाभ अर्जित करेंगे ।

यह एक विशिष्ट वर्ग के लिए विशेष प्रकार के अनुदान हैं । इसका लाभ प्रायः एक लाख ऐसे साधक उठा सकेंगे जिनमें संचित संस्कारों की पूँजी तो पहले से ही विद्यमान थी । इस समय उसे निखारा और गतिशील भर किया गया है । सिद्ध पुरुष अपनी ओर से ऐसे ही लोगों को तलाशते रहते हैं, जिनके साथ स्वल्प श्रम करके अधिक लाभ कमाया जा सके । युग पुरश्चरण से जहाँ अदृश्य वातावरण के अनुकूलन और दृश्य हलचलों में सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन की सम्भावना बढ़ेगी, वहाँ उसमें सम्मिलित होने वालों के व्यक्तित्व भी निखरेंगे । इस निखार से महामानवों की शक्ति और संख्या में आशाजनक अभिवृद्धि होगी ।

युग पुरश्चरण की भागीदारी लम्बे समय की है और उसके साथ कई प्रतिबन्ध भी जुड़े हुए हैं—इसलिए उसके निर्वाह का साहस सीमित व्यक्ति ही जुटा सकेंगे—यह निश्चित है । धार्मिकता और साधना के इतने बड़े क्षेत्र में इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए एक लाख साधकों का लक्ष्य रखा गया है और उतने भर लोगों से ही युग पुरश्चरण की दैनिक साधना २४० करोड़ बनाये रहने का व्रत लिया गया है । यह महापुरश्चरण सामूहिक आध्यात्म उपचारों के इतिहास में अनुपम और अद्भुत है । उस प्रयोग के सत्परिणाम भी दूरगामी होंगे । इतने पर भी यह मानना ही होगा कि यह सीमित लोगों द्वारा वातावरण अनुकूलन जैसे विशिष्ट प्रयोजन को लेकर किया गया उपचार है । इससे सद्भाव सम्पन्न साधारणजनों को लाभ नहीं मिल सकेगा, क्योंकि वे नियमितता और निष्ठा के साथ जुड़ी हुई व्रतशीलता का निर्वाह उच्चस्तरीय मनोबल के अभाव में कर नहीं सकेंगे । ऐसे भी बहुत हैं जो कर तो सकते हैं, पर उसके लिए आवश्यक मनोबल न होने के कारण हिचकिचाते ही रहेंगे और वैसा साहस जुटा नहीं सकेंगे । इस वर्ग को द्वितीय श्रेणी के परिजन कहा जा सकता है । उन्हें पिछले निर्धारण के अनुसार युग सन्धि में बहने वाले विशिष्ट प्राण प्रवाह का वह अनायास लाभ नहीं मिल सकता जो युग पुरश्चरण के भागीदारों के निमित्त निश्चित है ।

इस द्वितीय वर्ग के असमंजस को ध्यान में रखते हुए (२३ जून सन् १९८०) से एक नया निर्धारण किया गया है कि गायत्री परिवार के परिजनों में से कोई भी इस दिव्य अनुदान प्रवाह का सीमित लाभ उठा सकेगा और आत्मिक प्रगति के लिए जिस 'अनुदान' प्रयोजन की आवश्यकता पड़ती है उससे वंचित रहने का असमंजस सहन न करेगा ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहा जा चुका है कि हिमालय के मध्यवर्ती ध्रुव केन्द्र से एक विशिष्ट ऊर्जा प्रवाह गायत्री जयन्ती से निःसृत होगा । उसके साथ सम्बन्ध जोड़कर युग पुरश्चरण के भागीदार उसके सहारे उपलब्ध होने वाले अनुदानों से लाभान्वित होते रहेंगे । उसकी विधि-व्यवस्था से सभी भागीदारों को परिचित कराया जा चुका है । अब उसी सन्दर्भ में दूसरा प्रवाह उस वर्ग के लिए आरम्भ होने की व्यवस्था बन गई है जिसका लाभ सामान्य गायत्री उपासक बिना किसी प्रकार का व्रत लिए जब भी चाहे ग्रहण कर सकते हैं । असुविधा होने पर उसे छोड़ा भी जा सकता है ।

यह शक्ति संचार के त्रिविध अनुदान इन्हीं दिनों आरम्भ हैं । इससे सामान्य गायत्री उपासक भी अपने स्तर के ऐसे दिव्य अनुग्रह उपलब्ध कर सकते हैं । जिनको अभिभावकों द्वारा अपनी सन्तान को दिए जाने वाले सहज अनुदानों के समतुल्य माना जा सके ।

अब सभी जाग्रत परिजनों को यह लाभ मिलेगा

युग परिवर्तन की दो निर्धारणाएँ हैं—(१) मनुष्य में देवत्व का उदय, (२) धरती पर स्वर्ग का अवतरण । इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए जन-जन की मनःस्थिति में उत्कृष्टता का समावेश और परिस्थिति में आदर्शवादिता का समन्वय करना पड़ेगा । यही दो चरण हैं जिन्हें उठाते हुए निर्धारण लक्ष्य तक पहुँचना सम्भव हो सकता है । संक्षेप में इन कार्यक्रमों को विचार-क्रान्ति और सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन कह सकते हैं ।

इन प्रयासों को अग्रगामी बनाने का उत्तरदायित्व जाग्रत आत्माओं को उठाना पड़ेगा । नव-सृजन के अग्रदूतों में उन्हीं की गणना होगी । साँचे में खिलौने या पुर्जे ढलते हैं । इसलिए पहले साँचे बनते हैं, पीछे खिलौने या पुर्जे सरलतापूर्वक ढलते चले जाते हैं । परिवर्तन तो ४०० करोड़ मनुष्यों का होना है और परिस्थितियों.....मील व्यास वाले धरातल की बदली जाती हैं, पर इतना विस्तार एकाकी नहीं हो सकता । उसके लिए क्रमिक गतिशीलता आवश्यक है । लेखनी या वाणी द्वारा किया गया प्रचार मात्र मस्तिष्कीय हलचल उत्पन्न करता है । अनुगमन के लिए जन-समुदाय को तैयार करने के लिए ऐसे अग्रगामियों की आवश्यकता पड़ती है जो अपने उदाहरण से दूसरों में साहस उत्पन्न कर सकें । उनके प्रयासों से सत्परिणाम उत्पन्न होते या नहीं, यह देखकर ही सर्वसाधारण को उस प्रतिपादन को अपनाने का उत्साह मिल सकता है । इसलिए व्यापक क्षेत्र में युगान्तरीय चेतना उत्पन्न करने के लिए प्रतिपादनों की लाल मशाल ही नहीं उसे मजबूती से पकड़ने वाली संकल्पवान भुजा भी होनी चाहिए । विचार-क्रान्ति की ज्ञान-गंगा का जब कभी उल्लेख किया जाता है तो उसे कर सकने वाले भागीरथों का, जाग्रत आत्माओं की भूमिका भी आवश्यक बतायी जाती है ।

प्रज्ञापीठों, शक्तिपीठों के निर्माण और प्रतिमा प्रतिष्ठा का अभियान एकांगी नहीं है । उद्देश्य रहित बनते चले जाने वाले मन्दिरों में उनकी गणना नहीं हो सकती । दृश्य निर्माणों के पीछे वे अदृश्य योजनाएँ हैं जिन्हें नियुक्त परिव्राजकों द्वारा स्थानीय एवं क्षेत्रीय गतिविधियों द्वारा सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन एवं दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन के रूप में सम्पन्न किया जायेगा । दृश्य को काया और अदृश्य को प्राण कहते हैं । प्रज्ञा अवतरण की कार्य पद्धति जनमानस के परिष्कार और नवसृजन के रचनात्मक क्रिया-कलापों को गतिशील करने में उभयपक्षीय है ।

इसके लिए धर्म तन्त्र की पृष्ठभूमि को अपनाया गया है । अर्थशास्त्र, राजनीति, समाजशास्त्र आदि भी सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन के लिए तर्क, उत्साह एवं कार्यक्रम प्रस्तुत कर सकते हैं, पर उन सबमें एक ही कमी है कि आधार सुविधा सम्वर्धन मात्र रहने से भौतिकता की परिधि में लिपट कर छोटा रह जाता है । जबकि यह सारी प्रक्रिया उत्कृष्टता की भाव सम्वेदना पर आधारित है । आत्मीता, उदारता, सज्जनता, सेवा, शालीनता, संयम त्याग बलिदान जैसी सद्भावनाएँ ही उन प्रयोजनों को किसी से पूरा करा सकती हैं जो युग अवतरण के लिए अभीष्ट हैं । भौतिकता की सीमा सुविधा सम्वर्धन तक है । उसके तर्क और उत्साह इससे आगे नहीं बढ़ते । आध्यात्मिकता ही है जो किसी को स्वयं तपस्वी रहने और दूसरों के प्रति असीम करुणा बिखेरने के लिए सहमत कर सकती है, धर्म ही उच्चस्तरीय कर्त्तव्य निष्ठा के साथ मनुष्य को जोड़े रह सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

युग सृजन का आधार चिन्तन में उत्कृष्टता और व्यवहार में आदर्शवादिता का समावेश करना है । यह दोनों ही कार्य उथले भौतिक दर्शनों के आधार पर चिरस्थायी रूप से सम्पन्न नहीं किए जा सकते हैं । इन्हें लालच, लुभा कर नहीं, श्रद्धा भरे सद्भावना जगाकर ही सम्पन्न कराया जा सकता है । यह कार्य वस्तुतः धर्म और आध्यात्म का है । भौतिक दर्शन के आधार पर समृद्धि सम्वर्धन में अमेरिका, रूस, जापान, जर्मनी, ब्रिटेन, फ्रान्स आदि कितने ही देश आश्चर्यजनक परिमाण में सफल हुए हैं । इतने पर भी वहाँ सतयुग जैसी मनःस्थिति और परिस्थिति बनने के लक्षण कहीं भी दिखाई नहीं पड़ रहे । सर्वविदित है कि शालीनता के अभाव से समृद्धि उपयोगी नहीं रहती । कई बार तो वह दरिद्रता से भी अधिक विघातक बन जाती है । सम्पन्नता का अपना महत्त्व है, किन्तु उत्कृष्टता की गरिमा तो उससे भी असंख्य गुनी बड़ी है ।

इन समस्त तथ्यों पर विचार करने के उपरान्त युग निर्माण योजना के प्रतिपादनों से सन्निहित दूरदर्शिता और सुखद सम्भावना में सन्देह करने की गुंजाइश नहीं रह जाती । प्रस्तुत विभीषिकाओं का सुखद सम्भावनाओं में परिवर्तित करने के लिए ही किया जाना है जो युग सृजन अभियान के द्वारा क्रियान्वित किया जा रहा है ।

प्रतिपादनों के क्रियान्वयन के लिए अग्रगमन का साहस करने वाले जाग्रत आत्माओं पर ही घुमा-फिराकर वे समस्त उत्तरदायित्व आ जाते हैं जिसके द्वारा उज्ज्वल भविष्य को प्रत्यक्ष बनाया जाना है । तर्क और तथ्य की दृष्टि से युगान्तरीय चेतना का समर्थन करने वालों की कमी नहीं, पर कमी उस साहसिकता की है जो इस पुण्य प्रयोजन के लिए कुछ कर सकने का पराक्रम प्रदर्शित कर सकें । परिस्थितियाँ असंख्यों की ऐसी हैं जो चाहें तो सरलतापूर्वक युग सृजन के लिए आत्म-कल्याण और विश्व-कल्याण के लिए—बहुत कुछ कर सकते हैं, पर मनःस्थिति में विपन्नता भरी रहने के कारण वे बहाने बाजी करते और बगलें झाँकते देखे जाते हैं । आदर्श जब उभरते हैं, तो विपन्नता और व्यस्त लाभों से भी आश्चर्यजनक स्तर से सत्कर्म करा लेते हैं । इसके विपरीत जब अन्तःक्षेत्र सोया रहता है, तो सुयोग्य और सुविधा सम्पन्न भी मनसूबे भर बाँधते हैं कुछ कर नहीं पाते । जबकि आज की स्थिति में हर स्तर को, विचारशील को आपत्तिकालीन, कर्त्तव्य-पालन की तरह युग सृजन के लिए कुछ न कुछ करना ही चाहिए । क्या करना चाहिए ? इस सन्दर्भ में नव-सृजन अभियान के अन्तर्गत बहुत कुछ कहा और किया जा रहा है । उस दिशा में हर स्थिति का प्राणवान व्यक्ति किसी न किसी रूप से कुछ न कुछ योगदान कर ही सकता है ।

जाग्रत आत्माओं में उच्चस्तरीय आत्मबल कैसे जागे ? और वे किस प्रकार सच्चे अर्थों में स्वार्थ परमार्थ की साधना करते हुए आत्म-सन्तोष एवं ईश्वरीय अनुग्रह के भागी बन सकें ? इसका उपाय युग प्रवाह के सूत्र-संचालकों को यह सूझा है कि सत्पात्रों को अतिरिक्त प्राणचेतना का अनुदान दिया जाय और उन्हें बाहर से सामान्य रहते हुए भी भीतर से असामान्य बनाया जाय । शक्ति और प्रगति का भूलभूत आधार अन्तरंग से ही रहता है इसे सभी विज्ञ-जन भली-भाँति जानते हैं ।

अनुदान उपलब्ध करना और कराना भी अध्याय क्षेत्र की एक महान परम्परा है । उसे साधनात्मक पुरुषार्थ से कम नहीं वरन् अधिक ही महत्त्व दिया जा सकता है । साधना दीर्घकालीन तपश्चर्या के आधार पर फलित होती है, किन्तु अनुदानों का लाभ तत्काल मिलता है । युग सन्धि की इस पुण्य बेला में उच्च सत्ता ने सत्पात्रों का दिव्य प्रयोजनों के लिए अनुदान वितरण का क्षेत्र और भी अधिक बढ़ा दिया है । अब तक वह नैष्ठिकों के लिए था । अब उसे जाग्रतों के लिए उपलब्ध किया जा रहा है ।

पूर्व पृष्ठों में नैष्ठिक उपासकों के लिए प्राण संचार के विशिष्ट अनुदान का उल्लेख किया गया है अब उसकी हल्के स्तर की उपलब्धि उनके लिए भी सुलभ हो गई है, जो युग पुरश्चरण में तो सम्मिलित नहीं हो सके किन्तु प्रज्ञा परिवार में सम्मिलित हैं और आत्म-कल्याण एवं विश्व-कल्याण के लिए कुछ करने की बात गम्भीरतापूर्वक सोचते रहते हैं । ऐसे लोगों के पैरों में गति और हाथों में प्रगति के सूत्र थमाने वाले अनुदान की आवश्यकता पड़ेगी । इसकी पूर्ति करने के लिए महाकाल ने नया कदम उठाया है और दिव्य उपलब्धि कराने वाली ध्यान धारणा का नया द्वार खोला है । इस सुविधा का लाभ अब बिना युग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुरश्चरण में सम्मिलित हुए भी सभी जाग्रत आत्माओं को मिल सकेगा । इसे युग सन्धि का असाधारण उपहार समझा जाना चाहिए और उसके लाभान्वित होने का परिजनों में से प्रत्येक को प्रयत्न करना चाहिए ।

आत्मश्रेय और दैवी अनुग्रह पाने का दुहरा सुयोग

मनोनिग्रह के लिए एकाग्रता की साधना करनी पड़ती है । बिखराव को एकत्रित कर देने पर क्षमता कितनी अधिक बढ़ जाती है, इसे सभी जानते हैं । छोटे से आतिशी शीशे पर फैली हुई सूर्य किरणें जब एक बिन्दु पर जमा होती हैं तो देखते-देखते आग जलने लगती है । भाप को एक छिद्र में होकर निकालने पर उस शक्ति से रेल का इंजन चलने लगता है । थोड़ी-सी बारूद बन्दूक की पतली नली में होकर गुजरती है तो निशाने को पार करती चली जाती है । मानसिक बिखराव जब किसी लक्ष्य विशेष पर केन्द्रित होता है तो अर्जुन के मत्स्य बेध जैसी चमत्कारी सफलता मिलती है । कला-कौशल के नाम से जानी जाने वाली अनेक विशिष्टताएँ तन्मयता के आधार पर ही उत्पन्न होती हैं । वैज्ञानिकों, साहित्यकारों, कलाकारों में जो प्रतिभा उभरती है उसे एकाग्रता का ही प्रतिफल कहना चाहिए । योग साधना की चरम परिणति 'समाधि' और कुछ नहीं तन्मयता की ही उच्चस्तरीय परिणित है । उस क्षेत्र की अन्यान्य सफलताएँ भी एकात्म की स्थापना पर ही निर्भर रहती हैं । 'मेडीटेशन' की इन दिनों साधना क्षेत्र में आकर्षक चर्चा होती रहती है । इसे एकाग्रता का माहात्म्य वर्णन ही समझा जाना चाहिए ।

अनुदानों के प्रसंग में भी श्रद्धापूर्ण तन्मयता ही अभीष्ट परिणाम उत्पन्न करती है । कीट भृंग का उदाहरण प्रख्यात है । भृंग कीड़े को अपने समान बनाती है इसमें कीड़े की तन्मतया का भी कम योगदान नहीं होता । इष्टदेव के अनुरूप साधक का ढल जाना । भौतिक क्षेत्र में भी संकल्पों को पूर्ण कर सकना इसी आधार पर सम्भव होता है कि तादात्म्य किस स्तर का बन पड़ा । भक्त की साधना भगवान के निकटतम सालोक्य, सामीप्य, सारूप्य और सामुज्य स्थित तक पहुँचा देती है । भगवान की अनुकम्पा बरसती तो सभी पर है, पर उसे अन्तरंग में आकर्षित एवं धारण करने वाले ही ग्रहण कर पाते हैं ।

दूध तो माता के स्तन से ही प्राप्त होता है, पर उससे लाभान्वित होने के लिए बच्चे को भी चूसने और पचाने का प्रयत्न करना पड़ता है । न तो अकेले बच्चे के चूसने से काम बनता है न माता ही स्तन निचोड़ने कर दूध को पेट में पहुँचा देने और हजम करा देने में समर्थ होती है । अनुदानों के बीच भी दाता और ग्रहीता को अपने-अपने ढंग की भूमिका निभानी पड़ती है । रेडियो स्टेशन उपयोगी प्रसारण करते रहते हैं, किन्तु उनका लाभ उन्हीं ट्रॉजिस्टरों को मिलता है जो उन्हें पकड़ने की क्षमता से सम्पन्न होते हैं । समर्थ सद्गुरु की अनुकम्पा का लाभ सभी शिष्ट समान रूप से नहीं उठा पाते । उनकी श्रद्धा एवं चेष्टा भी उस सुयोग का लाभ ले सकने में एक बहुत बड़ा कारण होता है । मात्र बादल ही बरस कर हरियाली उत्पन्न नहीं कर देते इसके लिए भूमि की उर्वरता भी अपना काम करती है ।

यह सब इसलिए कहा जा रहा है कि युग सन्धि में जाग्रत आत्माओं को विशिष्ट प्रयोजन के लिए जो अनुदान मिलने लगे हैं, उनसे लाभान्वित होने के लिए ग्रहीता की क्या भूमिका होनी चाहिए इस तथ्य को भली प्रकार समझा जा सके ।

उच्चस्तरीय अनुदान दे सकने वाली सत्ताएँ न पूर्व काल में कम थीं और न अब कोई कमी हुई है । मात्र ग्रहणकर्त्ताओं की पात्रता ही घटी है । इस अभाव में अनुदान मिलने का सुयोग रहने पर भी इच्छुकों को खाली हाथ रहना पड़ता है । वर्षा होती तो चट्टानों पर भी है, पर कठोरता के कारण पानी का भीतर प्रवेश कर सकना ही सम्भव नहीं होता । गड्ढों में जलराशि जमा होती है पर टीलों की चोटियों में स्थिति अनावृष्टि के कारण सूखा पड़ने जैसी ही बनी रहती है । गाय अपने बच्चे को दूध पिलाती है, किन्तु भैंस का पड्डा यदि थनों से जा लगे तो उसके लिए उदारता नहीं बरतती । गाय की अन्तःचेतना जानती है कि उसे किसे पिलाना चाहिए किसे नहीं ।

युग सन्धि के दिनों में वर्षा ऋतु की तरह उच्चस्तरीय अनुदानों का प्रवाह सूक्ष्म जगत में चल पड़ा है । इसका प्रथम उद्देश्य सृष्टि सन्तुलन बनाने की ईश्वरीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इच्छा को पूरा करना है । अवतरण इसी प्रयोजन के लिए होते हैं । अधर्म का उन्मूलन और धर्म का संस्थापन ही अवतारों का उद्देश्य रहा है । इन दिनों भी इसी उद्देश्य के लिए प्रज्ञावतार की युगान्तरीय चेतना गतिशील हो रही है । उसके अनुकूल वातावरण बन सके इसके लिए देव पक्ष का समर्थन करने वाले प्रवाह अदृश्य लोक से चल पड़े हैं ।

दूसरा उद्देश्य संचित संस्कार सम्पदा वाले सत्पात्रों जागरूकों को सामयिक श्रेय मिल सके । सूखी हुई दूब भी वर्षा ऋतु आते ही हरी-भरी हो उठती है । यह उसका पुरुषार्थ नहीं सौभाग्य अनुदान है । सीप को मोती की उपलब्धि उसका पुरुषार्थ नहीं, समय का सुयोग एवं वरिष्ठ का अनुग्रह है । इसमें दाता और ग्रहीता दोनों ही कृत-कृत्य होते हैं । दुर्भाग्य और कुछ नहीं, पात्रता के अभाव का प्रतिफल मात्र है । विशेषतया सुअवसरों की उपेक्षा करना तो एक प्रकार स्वयं अपनाया गया अभिशाप है ।

सामान्य समय पर याचकों को ही दौड़-धूप करते देखा जाता है, पर कई बार प्रतिभाओं को उपयुक्त प्रयोजनों के लिए जब ढूँढता पड़ता है तो उन्हें छात्र-वृत्ति का लालच देकर ढूँढ़ा और बुलाया जाता है । अफसरों की भर्ती के लिए नियुक्ति आवेदन विज्ञापन छापते हैं और मार्ग व्यय देकर साक्षात्कार के लिए बुलाते है । नियुक्ति की आकांक्षा तो आवेदनकर्त्ताओं को भी रहती है, पर सुयोग्य ढूँढ़ निकालने में नियुक्ति तन्त्र को उत्कंठा एवं तत्परता भी कम नहीं होती । परमहंस ने चिरकाल की खोजबीन के उपरान्त हजारों लाखों के भक्तजनों में से विवेकानन्द को ढूँढ़ निकाला था । सुयोग मिलने पर प्रसन्नता एक को नहीं वरन् दोनों ही पक्षों को हुई थी ।

युग सन्धि के इस पावन पर्व पर ईश्वरीय प्रयोजनों के लिए निमित्त पुरुषार्थ करने और श्रेय पाने वालों की तलाश चल रही है । मार्ग व्यय देकर अनेकों आवेदनकर्त्ताओं को आग्रहपूर्वक बुलाया जा रहा है । इस खोजबीन में एक मौलिक अन्तर है । सरकारी नियुक्ति, तन्त्र अपनी आवश्यकता के अनुरूप छाँटकर लेने के उपरान्त शेष को दो टूक मनाही कर देते हैं । प्रस्तुत दैवी आमन्त्रण में ऐसा नहीं है । इसमें सर्वथा निराश किसी को भी नहीं किया जायेगा । जो जितने का—जिस स्तर का अधिकारी है उसे उतना तो दिया ही जायेगा । खाली हाथ किसी को भी लौटने की आशंका नहीं है ।

हिमालय के मध्यवर्ती आध्यात्मिक ध्रुव केन्द्र से युग सन्धि के दिनों एक विशिष्ट प्राण प्रवाह रेडियो प्रसारण की तरह, वर्षा मानसून की तरह उमड़ता रहेगा । उससे लाभान्वित होने के लिए सभी जागरूकों को आमन्त्रित किया गया है । युग पुरश्चरण के भागीदारों का साहस एवं उत्तरदायित्व अधिक होने के कारण उन्हें अनुदान भी उसी स्तर का मिलेगा, किन्तु जो उतना साहस न जुटा सकेंगे उन्हें भी अपनी पात्रता के अनुरूप हल्के स्तर के उपहार पाने का अवसर मिलेगा । वर्षा में बड़े तालाब और सरोवर भी अगाध जलराशि एकत्रित करते हैं, किन्तु खाली रह जाने की शिकायत छोटे गड्ढों और पोखरों को भी नहीं रहती है । उन दिनों गणना उनकी भी सौभाग्यशालियों और उपलब्धकर्त्ताओं में ही होती है ।

अकाल पड़ने पर कुआँ खोदने आदि के लिए तकाबी बाँटने के लिए सरकारी अफसर स्वयं गाँव-गाँव घूमते हैं । इतना ही नहीं खोदने की सुविधा एवं जानकारी देते हुए प्रयत्नरत होने के लिए किसानों की खुशामद भी करते हैं । यों प्रत्यक्ष लाभ किसानों का ही है । पीने का पानी और सिंचाई का साधन मिलने से राहत उन्हीं को मिलती हैं, फिर भी सरकार जानती है कि समर्थ किसानों पर ही देश की खुशहाली निर्भर है । इसलिए तकाबी लेने और कुएँ खोदते देखकर उन्हें भी कम प्रसन्नता नहीं होती । युग सन्धि में हिमालय की दिव्य शक्तियाँ जो अनुदान वितरण कर रही हैं वे कई प्रकार की हैं और उनकी गरिमा का स्तर भी क्रमशः अधिकाधिक बढ़ा-चढ़ा है । जो उन्हें प्राप्त करेगा, वह आत्म श्रेय और दैवी अनुदान का दुहरा लाभ प्राप्त करने वाला सौभाग्यशाली होगा ।

जिनके मन में देव समुदाय में पायी जाने वाली आत्म-कल्याण और लोक-मंगल की ज्योति विद्यमान है, उनके लिए सदा की भाँति अभी भी देव सत्ता का अनुग्रह उपलब्ध करना सरल है । अड़चन तो दैत्य ही उत्पन्न करता है, जिसे तृष्णा और लिप्सा के अतिरिक्त और कुछ सूझता ही नहीं । जिनकी साधना उच्च उद्देश्यों के निमित्त है उन्हें पात्रता के अनुरूप दिव्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुदानों को प्राप्त करते रहने में कभी कोई बाधा नहीं पड़ती । शुभ प्रसंगों पर देवताओं द्वारा पुष्प वृष्टि होने के उल्लेख कथा, पुराणों में आते रहते हैं । इस अलंकारिक वर्णन में इसी तथ्य को उजागर किया गया है कि सत्प्रयोजनों में दिव्य सत्ता की सहानुभूति ही नहीं, अनुकम्पा और सहायता भी मिलती है । यदि ऐसा न रहा होता तो विपन्न परिस्थितियों में जन्मे और असंख्य अवरोधों से घिरे रहने पर महापुरुषों को उच्चस्तरीय सफलताएँ प्राप्त कर सकना किस तरह सम्भव हो सका होता ?

यह नवयुग की सन्धि बेला है । इसमें आकुलता भक्तों को कम और भगवान को अधिक है । आमतौर से वोटर ही चुने प्रतिनिधियों से अपना कुछ काम करने के लिए उनका द्वार खटखटाते रहते हैं । सामान्य समय में यही चलता है, किन्तु चुनाव के दिनों स्थिति ठीक उल्टी हो जाती है, तब खड़े हुए उम्मीदवार ही वोटरों के दरवाजों पर चक्कर काटते हैं और सहायता प्राप्त करने के लिए बहुत कुछ कहते और करते देखे जाते हैं । इन दिनों की परिस्थिति ऐसी है जिसमें निराकार भगवान को साकार वाहनों, उपकरणों की सहायता तलाश करना पड़ रही है । बिजली की सामर्थ्य सर्वविदित है, पर उसे भी अपनी सामर्थ्य का परिचय देने के लिए बल्ब, पंखा, हीटर, मोटर आदि उपकरणों की आवश्यकता पड़ती है । लम्बे सफर जल्दी पूरे करने हों तो वाहन तलाश करने होते हैं । महाकाल की समर्थता में सन्देह नहीं, पर सदा की भाँति इस समय भी उसे प्रत्यक्ष परिवर्तन कर सकने के साधनों से युक्त सहयोगियों की जरूरत पड़ रही है ।

राम ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँचे थे और हनुमान सुग्रीव को सहयोग देने के लिए, सहमत करने के लिए, मनाते रहे थे । अर्जुन ने जब महाभारत लड़ने में आना-कानी दिखाई थी तो कृष्ण समझाने से लेकर नाराज होने तक और अन्ततः उनका रथ चलाने की शर्त पर समझौता कर पाये थे । परमहंस ने विवेकानन्द के घर पर चक्कर काटे थे और साथ देने के लिए कई तरह के प्रलोभन देते रहे थे । तब तक पीछे ही लगे रहे जब तक कि लड़का सहयोगी बन नहीं गया । चन्द्रगुप्त चाणक्य को ढूँढ़ने नहीं गए थे चाणक्य ने ही उन्हें धरदबोचा था । समर्थ और शिवाजी के सम्बन्ध में भी यही बात है । इस प्रकार के असंख्य घटना क्रम मौजूद हैं जिनमें विशेष अवसरों पर विशेष आवश्यकता की पूर्ति के लिए दिव्य सत्ता जाग्रत आत्माओं को तलाश करने और उनका सहयोग पाने के लिए प्रयत्नरत रही है । आमतौर से ऐसा नहीं होता । सामान्य समय में जिज्ञासुओं को ही समर्थों का मनुहार करना पड़ता है । भगवान अकारण भक्तों के दरवाजे पर नहीं पहुँचते । समदर्शी को न किसी से मोह होता है न द्वेष । न उन पर निन्दा का असर पड़ता है न प्रशंसा का । भगवत् कृपा का एक ही सुनिश्चित उद्देश्य है, सत्प्रयोजनों में सहयोग पाने के लिए माध्यम उपलब्ध करना । निराकार होने के कारण उन्हें आकारधारी मनुष्यों की सहायता जुटानी पड़ती है ।

सृष्टा ने इस धरती को अपनी सर्वोत्कृष्ट कलाकृति रूप में विनिर्मित किया है । ऐसा सुन्दर ग्रह इस ब्रह्माण्ड में और कोई नहीं । मनुष्य को जब उसने गढ़ा है तो उसमें अपनी समस्त विशेषताएँ बीज रूप से भर दी हैं । धरती और मनुष्य से सृष्टा को असाधारण प्यार है इसलिए उनके पराभव का संकट जब कभी खड़ा होता है तो वे स्वयं दौड़ते चले आते हैं और सन्तुलन बनाये रखने का अपना "यदा-यदा हि धर्मस्य" वाला आश्वासन पूरा करते हैं । चेतना को कृत्य करने के लिए शरीर की आवश्यकता पड़ती है । इसकी पूर्ति वे जाग्रत आत्माओं का सहयोग प्राप्त करके पूर्ण करते हैं । अवतारों के सहयोगी अपनी तुच्छ-सी सहायता का इतना बड़ा उपहार प्राप्त करते रहे हैं जितना सामान्य रूप में बहुत कुछ कर गुजरने पर भी सम्भव नहीं था । यों दिव्यलोक से अवतरण मात्र अदृश्य प्रवाह का होता है, उसे युगान्तरीय चेतना जैसे किसी अदृश्य हलचल के नाम से जाना जा सकता है, पर आँधी का परिचय तो पत्तों के हिलने और धूल कणों के उड़ने जैसी दृश्य घटनाओं से ही मिलता है । युगान्तरीय चेतना जाग्रतों का वरण करती है और उन्हीं के माध्यम से अपना प्रयोजन पूर्ण करती है । इन वरण-वाहनों का सौभाग्य अनन्तकाल तक सराहा जाता रहता है । प्रज्ञावतार की इस पुण्य बेला में, युग सन्धि में भी ऐसा ही सुयोग सामने है उसमें जाग्रतों के लिए अनुपम अनुदानों का सुअवसर अनायास ही प्रस्तुत है, किन्तु उसके साथ सदा ही तरह अभी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी पुण्य प्रयोजनों के लिए अनुदानों का उपयोग करने की शर्त जुड़ी हुई है । जो दूसरों की जेब काट कर अपनी मजेदारी का ताना-बाना बुनते रहते हैं उनके लिए तो यह सुयोग भी सन्तोषप्रद सिद्ध न हो सकेगा । देव समुदाय में प्रवेश करने की प्रामाणिक पात्रता तो उदात्त चरित्र, उदार व्यवहार के सहारे ही विकसित होती है ।

युग सन्धि में नैष्ठिकों को विशिष्ट स्तर के और जाग्रतों को सामान्य स्तर के अनुदान मिल रहे हैं । प्रयास और परिश्रम की तुलना में यह उपलब्धि भी इतनी बड़ी है जिसे चन्दन के निकट उगे झाड़ों और पारस का स्पर्श करने वाले लौह-खण्डों को मिलने वाले अनायास सौभाग्य के समतुल्य समझा जा सकता है । सूर्य के उदय होने पर उसके प्रकाश क्षेत्र में आने वाले सभी प्राणी और पदार्थ गर्मी प्राप्त करते हैं । वर्षा के समय खुले में जा खड़े होने पर किसी को भी गीले होने का अवसर मिल जाता है । इसमें प्रयास स्वल्प और लाभ असाधारण हैं । ऐसे लाभ अवसर पहचानने वालों को ही मिलते हैं । जब चाहे-जहाँ चाहे वहीं सूर्य की ऊर्जा—वर्षा की तरलता का लाभ नहीं मिलता । युग सन्धि की दैवी अनुग्रह प्राप्त करने का एक विशिष्ट अवसर माना जा सकता है ।

आध्यात्म ध्रुव केन्द्र से इन दिनों ऐसे विवरण निःसृत हो रहे हैं । वे जाग्रत आत्माओं को विकसित एवं समर्थ बनाने की दृष्टि से अतीव उपयोगी हैं । इस अनुदान प्रवाहों की तीन स्तर हैं—(१) स्थूल चेतना के लिए—प्राण संचार कुण्डलिनी अनुदान, (२) सूक्ष्म चेतना के लिए—ज्योति अवतरण दिव्यदृष्टि जागरण, (३) कारण चेतना के लिए—ब्रह्म सम्पर्क अमृत अनुभव । यह तीनों जीवन के तीनों क्षेत्रों को प्रभावित करते हैं । इन्हें कर्मयोग, ज्ञानयोग एवं भक्तियोग की साधना की सहज पूर्ति कर सकने वाले अनुदान कह सकते हैं । सत्कर्म, सद्ज्ञान और सद्भाव ही वे उपलब्धियाँ हैं जिनके सहारे मनुष्य को महामानव, ऋषि और अवतार अग्रदूत बनने का अवसर मिलता है । इनमें से जिसे अपने लिए जिस स्तर की आवश्यकता अनुभव होती हो वह उन्हें इन दिनों बिना किसी अड़चन के उपयुक्त मात्रा में उपलब्ध कर सकता है । प्रमाद वितरण चल रहा हो तो उससे राहगीर भी लाभ उठा लेते हैं ।

गायत्री जयन्ती (२३ जून सन् १९८०) के उपरान्त दिव्य वितरण की उपरोक्त तीन धाराएँ हिमालय का आध्यात्म ध्रुव केन्द्र निःसृत करेगा । प्राण ऊर्जा, दिव्य दृष्टि और सरस श्रद्धा के रूप में इन तीनों का अनुभव किया जा सकता है । साधना की भाषा में इन्हें क्रमशः कुण्डलिनी ज्योति धारा एवं रसानुभूति के नाम से जाना जाता है । इन तीनों के ग्रहण केन्द्र क्रमशः ब्रह्मरन्ध्र, आज्ञाचक्र एवं हृदय चक्र में है । इन्हीं तीनों को ब्रह्मा, विष्णु, महेश कहते हैं । समर्थता, प्रतिभा एवं वरिष्ठता यह इन तीनों क्षेत्रों की सिद्धियाँ हैं । इन्हीं हुण्डियों को बाजार में भुना कर मनचाही परिस्थितियों एवं सफलताओं को उपलब्ध किया जा सकता है । सिद्ध पुरुष आध्यात्म क्षेत्र की विभूतियों एवं क्षमताओं से सम्पन्न व्यक्ति को ही कहते हैं । फूलों का उद्यान लगा कर पाया जाने वाला लाभ इन दिनों इत्र की तरह अनायास ही मिल रहा है । इसे जो प्राणवान परिजन प्राप्त कर सकेंगे निश्चय उन्हें सौभाग्यवान कहलाने का अवसर मिलेगा ।

कुछ जानने योग्य अनुशासन

शरीर की समर्थता को विकसित करने के लिए पौष्टिक आहार एवं व्यायाम का सहारा लेना पड़ता है । मस्तिष्क की प्रखरता जगाने के लिए अध्ययन एवं अनुभव सम्पादन के विभिन्न क्रिया-कलापों में संलग्न होना पड़ता है । धन कमाने के लिए श्रम, साधन जुटाने होते हैं । इसी प्रकार अज्ञात में छिपी हुई दिव्य क्षमताओं को जगाने के लिए योगाभ्यासों की आवश्यकता पड़ती है । भौतिक क्षेत्र की सुख-सम्पदाओं से सभी परिचित हैं, पर यदि भीतर के अन्तर्जगत की और ब्रह्माण्डव्यापी सूक्ष्म जगत की विभूतियों को जाना जा सके तो प्रतीत होगा कि जो प्रत्यक्ष है उसकी तुलना में अप्रत्यक्ष की महिमा असंख्य गुनी अधिक है ।

आत्मा सीमित है पर परमात्मा असीम । यदि महत् को प्राप्त करना है तो परमात्मा के साथ जुड़ना चाहिए । नदी से जुड़ी पर छोटी-छोटी नहरों को भी उधार का पानी मिलता रहता है और वे भरी पूरी रहती हैं । परमसत्ता के साथ जोड़ लेने पर स्वल्प सामर्थ्य बढ़ जाती है । बड़े और ऊँचे तालाब के साथ छोटे और नीचे तालाब का सम्बन्ध नाली बनाकर जोड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिया जाय तो पानी का प्रवाह चल पड़ता है और कुछ ही समय में दोनों का लेबिल एक हो जाता है । भक्त और भगवान के बीच की घनिष्ठता उत्पन्न करने वाले प्रयासों को योग-साधना कहते हैं ।

आग की समीपता से गर्मी और प्रकाश की समीपता से रोशनी प्राप्त होती है । चन्दन के समीप उगने वाले अन्य पौधे भी सुगन्धित हो जाते हैं । स्वाँति बूँदों का अनुदान मिलने पर सीप में मोती उत्पन्न होते हैं । पारस को छूकर लोहा स्वर्ण बनता है । इत्र लगने पर साधारण कपड़े भी सुगन्धयुक्त बन जाते हैं । पेड़ से लिपट कर बेल भी उतनी ही ऊँची उठ जाती है । गन्दा नाला गंगा में मिलने के उपरान्त गंगाजल की तरह ही सम्मानास्पद होता है । बाजीगर के हाथ से जिन धागों के सहारे कठपुतली नाचती और आकर्षण के केन्द्र बनती है उन सूत्रों को प्रकारान्तर से योगाभ्यास कहा जा सकता है । ईश्वर के साथ सम्बन्ध जोड़ने का प्रतिफल उपरोक्त उदाहरणों के सहारे समझा जा सकता है ।

बीज के भीतर विशालकाय वृक्ष की सम्भावनाएँ छिपी रहती हैं, पर वे प्रकट तभी होती हैं जब उसे बोया उगाया जाय । अन्तराल में प्रसुप्त स्थिति में पड़ी हुई दिव्य क्षमताओं को जगाने की प्रक्रिया का नाम योग साधन है । यह इतना बड़ा पुरुषार्थ है जिसकी तुलना में धन, बल, बुद्धि, वर्चस्व आदि के उपार्जन छोटे पड़ते हैं । आत्मबल, सम्पन्न महामानवों, ऋषियों, सिद्ध पुरुषों देव-दूतों ने आत्म-कल्याण एवं लोक-कल्याण की जैसी चमत्कारी सफलताएँ पाईं उन्हें संसार की सभी सफलताओं की तुलना में कहीं अधिक गरिमा-भरी माना जायेगा । आत्म-सन्तोष; लोक-सम्मान, जन-सहयोग, दैवी अनुग्रह जैसे दिव्य वरदान आत्म-साधना के फलस्वरूप ही उपलब्ध होते हैं । स्वर्ग एवं मुक्ति का परमानन्द आध्यात्म क्षेत्र के पुरुषार्थकर्त्ताओं को ही मिलता है । साधना के सहारे सिद्धि प्राप्त करने वाले अनुभव करते हैं कि उन्होंने अन्य सभी बुद्धिमानों की तुलना में कहीं अधिक दूरदर्शिता का मार्ग अपनाया था ।

आध्यात्मिक विभूतियों के सहारे मनुष्य न केवल अपना वरन् असंख्यों का उच्चस्तरीय उपकार, उद्धार कर सकता है जब कि भौतिक उपार्जन से मात्र शारीरिक सुख-सुविधाओं का अस्थायी लाभ ही मिल सकता है । काय-कलेवर की सामर्थ्य भी सीमित है, किन्तु सूक्ष्म शरीर में ऐसी रहस्यमयी विभूतियाँ भरी पड़ी हैं, जिन्हें जाग्रत कर सकने पर मनुष्य अतीन्द्रिय क्षमताओं का अधिष्ठाता सिद्ध पुरुष बन सकता है । उस क्षेत्र के प्रयत्नों को परम पुरुषार्थ माना जाता है । योग साधना के लिए किए गए प्रयत्नों को उच्चस्तरीय बुद्धिमता का परिचय माना जाता है ।

योग साधना विशुद्ध विषयक विज्ञान है । जिस प्रकार भौतिक विज्ञान का लाभ हर किसी को मिल सकता है, उसी प्रकार आध्यात्म विज्ञान का लाभ उठा सकना हर किसी के लिए सरल है । यदि अनुभवी संरक्षण में उसे किया जा सके तो उसमें लाभ ही लाभ है । जोखिम तनिक भी नहीं । शंकर को योगेश्वर और कृष्ण को योगिराज कहा जाता है । सातों ऋषि योग की सात धाराओं के अधिष्ठाता हैं । ये सभी गृहस्थ रहते योग साधन करने में किसी को किसी प्रकार की अड़चन, अवरोध का सामना नहीं करना पड़ता । राजा जनक से लेकर, राम-कृष्ण परमहंस जैसी अनेक आत्माओं ने घर गृहस्थी के बीच ही योग साधना का लोक-परलोक सुधारा । इस युग में मूर्धन्य ऋषि, गुरुदेव, आचार्य जी गृहस्थ रहते हुए भी साधना के उच्चशिखर पर पहुँचे और सिद्धियों के अधिपति बने हैं । वे इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । आत्मिक प्रगति का योग साधना का मार्ग सभी गृहस्थ-विरक्तों के लिए—नर-नारियों के लिए—बिना किसी भेद प्रतिबन्ध के समान रूप से खुला पड़ा है । सूर्य सान्निध्य जैसे इसके लाभ से हर कोई हर स्थिति में लाभान्वित हो सकता है ।

योगःसाधना के अनेक मार्ग हैं । राजयोग, हठयोग, लययोग, ध्यानयोग, नादयोग, प्राणयोग, तन्त्रयोग, कुण्डलिनीयोग आदि उनकी असंख्यों शाखा-प्रशाखाएँ हैं । उनमें से कौन, किसे किस स्थिति में, किस स्थान में, किस विधान से, किस प्रयोजन के लिए, कितनी मात्रा में अपनाये यह प्रसंग ऐसा है जिसके लिए उस विद्या के प्रवीण, पारंगत एवं अनुभवी लोगों का परामर्श, मार्गदर्शन आवश्यक है । अन्यथा उपयोगी औषधि को भी अनुपयुक्त ढंग से ग्रहण करने पर हानि होने का खतरा हो सकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस झंझट से बचते हुए एक सरल योगाभ्यास ऐसा भी है, जिसे हर स्तर का व्यक्ति बिना किसी भय, आशंका, परामर्श, संरक्षण के कर सकता है और प्रायः उतना ही लाभ उठा सकता है कि जितना कि कष्टसाध्य तप-साधना करने वाले योगीजन लम्बे समय के परिश्रम से उठा पाते हैं ।

जाग्रत आत्माओं को—नव सृजन की समर्थता प्राप्त करने के लिए दैवी अनुदानों को जो सहज वितरण इन दिनों हो रहा है, उसका लाभ उठाने की सुविधा प्रत्येक सत्पात्र को मिल सकती है । इसकी पृष्ठभूमि पिछले पृष्ठों पर प्रस्तुत की जा चुकी है । वही समझने और ध्यान देने योग्य है । दिशाधारा का तालमेल बैठ जाने पर आदान-प्रदान की क्रिया-पद्धति को समझने और उसका लाभ मिलने में फिर कोई बड़ी कठिनाई शेष नहीं रह जाती ।

प्रसारण ही कठिन होता है । उसे उपलब्ध करने के लिए छोटे से ट्रांजिस्टर से सही नम्बर पर सुई घुमा देने भर से काम चल जाता है । प्रसारण समर्थ सत्ता का है । उसे इसके लिए क्या करना पड़ रहा होगा, इसकी चिन्ता करने या जानकारी की गहराई में जाने की आवश्यकता नहीं है । अपना रेडियो ठीक रखने और समय पर सही जगह सुई घुमा देने भर की छोटी-सी प्रक्रिया अभीष्ट आनन्द दे सकती है । युग सृजन की पुण्य-प्रक्रिया में निरत महाकाल ने इस प्रसारण का प्रबन्ध किया है । सूक्ष्म होने के कारण उसे इन्द्रियों से—यन्त्रों से तो अनुभव नहीं किया जा सकता, किन्तु जाग्रत अन्तरात्मा की भाव-सम्वेदना उसकी अनुभूति भली प्रकार कर सकती है ।

दिव्य अनुदानों का ग्रहण अभ्यास

इस प्रसारण का समय और उद्देश्य निर्धारित है—प्रातःकाल दिन निकलने से एक घण्टा पूर्व से लेकर ठीक सूर्योदय तक । रात्रि को दिन छिपने से एक घण्टा उपरान्त से लेकर तीन घण्टा रात्रि गए तक प्रातःमात्र एक-एक घण्टा रात्रि में २ घण्टे का समय इस वितरण और ग्रहण के लिए नियत हैं । प्रातःएकाकी ध्यान धारणा के लिए और रात्रि को सामूहिक साधना के लिए । जहाँ जैसी आवश्यकता और सुविधा समझी जाय वहाँ वैसी प्रबन्ध किया जाय । चूँकि दिन घटते-बढ़ते रहते हैं और गर्मी के बीच घड़ी घण्टों के समय की स्थिति में काफी अन्तर पड़ जाता है, इसलिए समय का निर्धारण सूर्योदय एवं सूर्यास्त के अनुरूप ही करते रहना चाहिए । इसमें घण्टे-मिनटों का अन्तर प्रायः हर महीने या हर सप्ताह करते रहने की आवश्यकता पड़ेगी ।

स्नान करके उपासना पर बैठने की उपयोगिता के सम्बन्ध में दो मत नहीं हो सकते, किन्तु इस ध्यान धारणा में उसकी अनिवार्य नहीं है । नित्य कर्म से निपटकर बिना स्नान के भी इसे किया जा सकता है । रात्रि को सामूहिक साधना में तो हाथ-पैर धोकर बैठ जाना ही पर्याप्त है । आसन बिछा कर बैठा जाय । खाली जमीन पर न बैठें । ऊपर से आने वाली बिजली शरीर में प्रवेश करने के उपरान्त धरती में न उतर जाय इसके लिए अवरोध आसन बिछाया जाना आवश्यक है । कुशा, चटाई, जूट, ऊन, का हो तो और भी उत्तम है, अन्यथा कपड़े का आसन भी काम दे सकता है ।

साधक पालथी मारकर बैठे । पंच पात्र आदि अन्य किसी उपकरण की आवश्यकता नहीं है । स्थान जहाँ तक हो खुला हवादार ही ढूँढ़ा जाय । बन्द और घुटन के स्थान में दीवारों का अवरोध उत्पन्न होता है । सभी प्रकार की ध्यान साधना में 'ध्यान मुद्रा' बनाने का नियम है । उसका पालन इस विशिष्ट ध्यान धारणा में तो अनिवार्य रूप से किया जाना चाहिए । ध्यान मुद्रा के पाँच अनुशासन हैं—(१) स्थिर शरीर, (२) शान्त चित्त, (३) कमर सीधी, (४) हाथ गोदी में, (५) आँखें बन्द । शरीर और मन की स्थिति इस स्तर की बना लेने के उपरान्त ही ध्यान योग की साधना सधती है ।

स्थिर शरीर का तात्पर्य—देह को लकड़ी, पत्थर की बनी प्रतिमा जैसी बना लेना । अंगों का ऐन्द्रिक संचालन रोक देना । श्वास-प्रश्वास आंकुचन-प्रकुंचन, निमेष-उन्मेष जैसी अनैच्छिक क्रियाएँ भर चलने देना । ऐसी स्थिति लाने के लिए शिथिलासन, शवासन, अर्ध मूर्छित जैसी भावना करनी पड़ती है । शरीर की हलचलें जितनी कम होंगी—ध्यान उतना ही अच्छी तरह लगेगा । हिलते-जुलते, मटकते-फरकते रहने से मन की चंचलता बनी ही रहती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शान्त चित्त का अर्थ है—कल्पनाओं की उड़ानें बन्द करना-एकाग्रता । यह स्थिति तभी प्राप्त होती है जब किसी श्रेष्ठ के साथ अपने को गुथाने की, घुला देने की भावना की जाय । 'स्व' को किसी विशिष्ट से तादात्म्य बना देने को ही समर्पण या लययोग कहते हैं । एकता ही एकाग्रता है । तन्मयता से ही चित्त शान्त होता है । इसका भोंड़ा उदाहरण समर्पित रतिक्रिया है । विषयानन्द की उपमा देकर ब्रह्मानन्द की सरसता का परिचय दिया जाता है । अपने 'स्व' को इष्ट देव की सत्ता में भगीरथी के साथ गुथा दिया जाय । मन में मन को, प्राण में प्राण को, आत्मा में आत्मा को घुला देने का अभ्यास करें तो भक्ति-भाव की उच्च भूमिका उत्पन्न होती है और शान्त चित्त की मनःस्थिति बन जाती है । ईंधन का आग में, बूँद का समुद्र में, नमक का पानी में, जिस प्रकार विलय हो जाता है । दो शरीर जिस प्रकार एक प्राण बन जाते हैं उसी स्तर की भावना इष्टदेव के साथ करने में जितनी सफलता मिलेगी वह उतना ही शान्त चित्त का अनुभव करेगा । द्वैत ही चंचलता और अद्वैत ही एकाग्रता की भूमिका है । इष्टदेव का प्रथम निर्धारण सद्गुरु के रूप में भी हो सकता है और प्रत्यक्ष परिचय होने के कारण उस माध्यम से अभ्यास और भी सरल पड़ता है ।

मेरुदण्ड सीधा रखना इसलिए आवश्यक है कि ब्रह्मरन्ध्र उत्तरी ध्रुव और मूलाधार कुण्डलिनी केन्द्र दक्षिणी ध्रुव है । दोनों के मध्य प्रवाहक्रम जारी रहने से ही संसार में समर्थता एवं सम्पन्नता विद्यमान है । इसमें अवरोध होने से सुव्यवस्था लड़खड़ाती है और विश्व-व्यवस्था में कई प्रकार की गड़बड़ी उत्पन्न होती है । ठीक यही बात मेरुदण्ड के सम्बन्ध में भी है । इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना के त्रिविध प्राण प्रवाह उसी में होकर चलते हैं । षटचक्रों के दिव्य भण्डार इसी मार्ग में सन्निहित हैं । इसी मार्ग को सीधा और साफ रखने के लिए मेरुदण्ड सीधा रखना योगाभ्यास का आवश्यक नियम है । कमर में दर्द होता हो तो सहारा लेकर जितना सम्भव हो, सीधा रखने का प्रयत्न करना चाहिए ।

हाथ गोदी में रखने के साथ दोनों हाथ खुले रहें । बायीं हथेली के ऊपर दाहिना हाथ रहे । कर्मेन्द्रियों में हाथ ही सबसे अधिक सक्षम है, वे दोनों मिलते हैं तो नमस्कार से लेकर पुरुषार्थ तक के समस्त काम मिलकर भली प्रकार सम्पन्न करते हैं । साधना में भी दोनों के साथ होने से अन्तः—विद्युत का एक उपयोगी सर्किल बनता है । ध्यान मुद्रा में यह स्थिति अतीव उपयोगी मानी गई है ।

आँखें बन्द करने के दो उद्देश्य हैं—एक है बहिर्मुखी वृत्तियों को अन्तर्मुखी बनाना, दूसरा है आँखों से निःसृत होने वाले विद्युत प्रवाह को इस महत्त्वपूर्ण अवसर पर बाहर बिखरने न देना । वाणी की मौन तपश्चर्या की तरह, आँखों को बन्द रखना भी नेत्र तप माना गया है । चित्तवृत्ति अन्तर्मुखी होने से अन्तर्जगत के वैभव को समझना और कहाँ क्या छिपा है ? इस जानकारी के आधार पर उसे प्राप्त करना तभी सम्भव होता है जब उस क्षेत्र का पर्यवेक्षण किया जाय । बहिर्मुखी वृत्तियाँ बाहर ही उलझी रहती हैं । अतएव उस दिव्य भाण्डागार को देखने समझने और उखाड़ने के लिए कुछ बन ही नहीं पड़ता । नेत्र बन्द करना, अन्तर्मुखी होना अर्थात् अन्तर्जगत में प्रवेश करना है । आत्मोत्कर्ष के लिए की जाने वाली ध्यान धारणा में सदा नेत्र बन्द रखे जाते हैं ।

अकेली ध्यान मुद्रा में भी यदि आत्मिक उत्कृष्टता और श्रेष्ठता के प्रति समर्पण की धारणा जारी रखी जाय तो उतने से भी ध्यान योग का सामान्य प्रयोजन भली प्रकार पूरा होता रह सकता है । इसके साथ यदि हिमालय के अनुदानों का ग्रहण और धारण करने का उपक्रम भी चल पड़े तो सोने में सुगन्ध की स्थिति बन पड़ती है । पुरुषार्थ के रूप में ध्यान मुद्रा और अनुग्रह के रूप में अनुदान उपलब्धि का सुयोग बनने पर तो प्रगति का क्रम अनेक गुने वेग से, द्रुतगति से चल पड़ता है ।

तीन प्रकार के प्रवाह

इन अनुदान प्रवाहों के तीन स्तर हैं—(१) स्थूल चेतना के लिए प्राण संचार कुण्डलिनी अनुदान, (२) सूक्ष्म चेतना के लिए—ज्योति अवतरण दिव्यदृष्टि जागरण, (३) कारण चेतना के लिए—ब्रह्म सम्पर्क अमृत । यह तीनों क्षेत्रों को प्रभावित करते हैं । इन्हें कर्मयोग एवं ज्ञानयोग एवं भक्तियोग की साधना की सहज पूर्ति कर सकने वाले अनुदान कह सकते हैं । सत्कर्म, सद्ज्ञान, और सद्भाव ही वे उपलब्धियाँ हैं जिनके सहारे मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को महामानव ऋषि और अवतार, अग्रदूत बनने का अवसर मिलता है । इनमें से जिसे अपने लिए जिस स्तर की आवश्यकता अनुभव होती हो वह उन्हें इन दिनों बिना किसी अड़चन के उपयुक्त मात्रा में उपलब्ध कर सकता है । प्राण ऊर्जा, दिव्य दृष्टि और सरल श्रद्धा के रूप में इन तीनों का अनुभव किया जा सकता है । साधना की भाषा में इन्हें क्रमशः कुण्डलिनी, ज्योति धारा एवं रसानुभूति के नाम से जाना जाता है । इन तीनों के ग्रहण केन्द्र क्रमशः ब्रह्मरन्ध्र, आज्ञाचक्र एवं हृदयचक्र में है । इन्हीं तीनों को ब्रह्मा, विष्णु, महेश कहते हैं । समर्थता, प्रतिभा एवं परिष्ठता यह इन तीनों क्षेत्रों की सिद्धियाँ हैं । इन्हीं हुण्डियों को बाजार में भुनाकर मनचाही परिस्थितियों एवं सफलताओं को उपलब्ध किया जा सकता है । सिद्ध पुरुष आध्यात्म क्षेत्र की विभूतियों एवं क्षमताओं से सम्पन्न व्यक्ति को ही कहते हैं, फूलों का उद्यान लगा कर पाया जाने वाला लाभ इन दिनों इत्र उपहार की तरह अनायास ही मिल रहा है । इसे जो प्राणवान परिजन प्राप्त कर सकेंगे निश्चय ही उन्हें सौभाग्यवान कहलाने का अवसर मिलेगा । तीनों धाराओं के विवरण इस प्रकार हैं—

(१) प्राण ऊर्जा स्फूर्ति—समर्थता साहसिकता, जीवन जैसे शब्दों से प्राण ऊर्जा, कुण्डलिनी शक्ति का परिचय कराया जाता है । यह सभी विशेषताएँ काय-कलेवर में सन्निहित रहती है । इसलिए इन्हें प्राण सामर्थ्य कहा जाता है । क्रियाशीलता, तत्परता, कर्मनिष्ठा इसी सामर्थ्य की परिणति मानी जाती है । सत्कर्म इसी के सहारे बन पड़ते हैं । इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए प्राण संचार प्रक्रिया है । इसे कुण्डलिनी जागरण का प्रथम सोपान समझा जा सकता है । जिन्हें यह क्षेत्र अभीष्ट हो उन्हें प्राण प्रवाह के वितरण का लाभ लेना चाहिए ।

(२) ज्योति अवतरण का तापर्य है—तृतीय नेत्र उन्मीलन, दूरदर्शिता विवेकशीलता का जागरण । ज्योति का अर्थ आध्यात्म क्षेत्र में सद्ज्ञान के लिए होता है । आत्म-बोध, तत्व-बोध एवं आत्मज्ञान, ब्रह्मज्ञान की उपलब्धि के लिए ज्योति अवतरण की साझना की जाती है । तप के सहारे अन्धकार में मुक्ति मिलती है और माया की ग्रन्थि खुलती है । आज्ञाचक्र को दिव्य दर्शन का केन्द्र संस्थान माना गया है । शिव और दुर्गा की छवियों में तीन नेत्र हैं । दो सामान्य तीसरा भृकुटि स्थान पर दिव्य नेत्र । इसे गीता में दिव्य चक्षु कहा गया है और इसके सहारे विराट् ब्रह्म का दर्शन सम्भव बताया गया है । दिव्य दर्शन, दिव्य श्रवण, भविष्य ज्ञान, दूसरों को प्रभावित करने जैसी अनेक सिद्धियों का संस्थान इसी को माना गया है । प्रतिभा एवं प्रखरता यहाँ से उभरती है । यह सूक्ष्म शरीर का काय क्षेत्र है जिहें इस क्षेत्र की उपलब्धियाँ अभीष्ट हों उनको ज्योति अवतरण के प्रवाह से सम्पर्क साधना चाहिए ।

रसानुभूति का तात्पर्य है आत्मा और परमात्मा के मिलने से मिलने वाली सरसता का रसास्वादन । ऋण और धन विद्युत प्रवाहों की तरह आत्मा और परमात्मा की सत्ताएँ है । जब भी दोंनों का मिलन होगा, उमंग भरी फुलझड़ियाँ उड़ेंगी । बिजली के दो तार मिलने पर चिन्गारियाँ उठती हैं और करेण्ट चल पड़ता है । आध्यात्म नेत्र की फुलझड़ियाँ हैं—तुष्टि, तृप्ति, शान्ति, जिहें उत्साह सन्तोष आनन्द आदि के रूप में अनुभव किया जाता है ।

चिन्तन में उत्कृष्टता और चरित्र में आदर्शवादिता की मात्रा देखकर ही यह अनुमान लगाया जाता है कि किसे ईश्वर की कितनी समीपता प्राप्त हुई और कौन कितनी रसानुभूति कर रहा है । अमृतत्व इसी प्रकार की भाव सम्वेदना को कहा गया है । इस स्थिति में एक विशेष प्रकार का आवेश छाया रहता है, जिसमें उच्च स्तरीय निर्णय साहस एवं प्रयास करने में तनिक भी कठिनाई का अनुभव नहीं होता । परिष्कृत दृष्टिकोण ही स्वर्ग है । क्षुद्र समुदाय का लोक प्रवाह ही बन्धन है । उससे छुटकारा पाने और यथार्थतावादी अवलम्बन अपना सकने की साहसिकता का नाम 'मुक्ति' है । इन्हीं दोनों को परम पुरुषार्ष एवं पूर्णता का प्रतिफल कहते हैं । यह चेतना का "कारण" क्षेत्र है । इसमें भाव सम्वेदनाएँ ही प्रधान रहती हैं । भक्ति यही है । इस क्षेत्र का व्यक्ति योगी, यती, ऋषि, देवात्मा जैसी स्थिति तक जा पहुँचता है ।

इसी उच्चस्तरीय भूमिका को लक्ष्य मानने वाले आरम्भिक छोटे चरण उठाने की सामर्थ्य प्राप्त करने के लिए रसानुभूति स्तर के वितरण से लाभान्वित हो सकते हैं । इन ध्यानों में से जिसे भी करना हो पन्द्रह मिनट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से आरम्भ करना चाहिए । सप्ताह में एक मिनट बढ़ाते हुए आधा घण्टे तक पहुँचना चाहिए ।

जिस प्रकार सरस्वती, लक्ष्मी, काली के तीन बीज ह्रीं, श्रीं, क्लीं का उपयोग गायत्री मन्त्र के साथ करते हुए बुद्धि, समृद्धि और सामर्थ्य की आराधना करते हैं, उसी प्रकार उपरोक्त तीनों में से अपनी स्थिति और आवश्यकता को देखते हुए कोई भी साधना क्रम अपनाया जा सकता है, पर जो अपनाया जाय उसे जल्दी-जल्दी बदला न जाय । उतावले चंचल मनःस्थिति में बार-बार अपना साधना क्रम बदलते हैं । फलतः अपने श्रम को निरर्थक करते हुए संकल्प शक्ति को दुर्बल करते रहते हैं, अच्छा हो निर्धारण के समय शान्ति कुंज हरिद्वार से परामर्श कर लिया जाय । जो इसकी आवश्यकता समझें वे हर वर्ष गायत्री जयन्ती या बसन्त पर्व पर वर्ष में के बार अपनी प्रगति का लेखा-जोखा भी भेज दिया करें । स्मरण रहे इस सन्दर्भ में परामर्श या उत्तर प्राप्त करने के लिए जबावी पत्र भेजना अनिवार्य रूप से आवश्यक है ।

साधनाओं का उपक्रम इस प्रकार है । ध्यान अवधि में इन्हीं भावनाओं में निमग्न रहा जाय । क्रम पहले से ही याद कर लिया जाय—

(१) प्राण संचरण (कुण्डलिनी स्फुरण)

—हिमालय के मध्यवर्ती आध्यात्म केन्द्र से उमड़ता दिव्य प्राण प्रवाह ।

—शुभ्र चमकीले बादल जैसा प्रवाह साधक की ओर पहुँचना, साधक तक ।

—साधक ब्रह्मरन्ध्र द्वारा प्राण प्रवाह का स्वागत, आकर्षण, अभिनन्दन ग्रहण, अवधारण, मस्तिष्क मध्य, के सहस्रार चक्र में ।

—सहस्रार से मूलाधार तक, मूलाधार से सहस्रार तक, सहस्रार से मूलाधार तक से सहस्रार तक, प्राण ऊर्जा मन्थन, मेरुदण्ड मार्ग, मन्थन-मन्थन-मन्थन ।

—मन्थन से प्राण ऊर्जा की उत्पत्ति, अग्नि शिखा की जागृति, कुण्डलिनी में स्फूर्ति ।

—कण-कण में प्राण विद्युत, नस-नस में प्राण विद्युत, रोम-रोम में प्राण विद्युत, प्राण विद्युत कुण्डलिनी ।

—साधक प्राण पुंज—अग्नि पिण्ड प्राणवान ओजवान ।

ॐ कार का पाँच बार गुंजन शंखनाद वत् ।

ॐ तमसो मा ज्योतिर्गमय, असतो मा सद्गमय, मृत्योर्माऽमृतंगमय ।

—तीन बार । तमसो मा, तमसो मा, तमसो मा । ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय । शान्ति समाप्ति ।

(२) ज्योति अवतरण (दिव्य दृष्टि जागरण)

—हिमालय के अध्याम ध्रुव केन्द्र में स्वर्णिम सूर्योदय ।

—ज्योति किरणों का प्रसारण, पहुँच साधक तक ।

—नमन-वन्दन ग्रहण । आज्ञा-चक्र में । आज्ञा-चक्र भृकुटि केन्द्र, प्रवेश दिव्य-ज्योति का आज्ञाचक्र में दिव्य ज्योति प्रज्ञा ।

—कण-कण में ज्योति, नस-नस में ज्योति, रोम-रोम में ज्योति साधक ज्योतिवान, तेजवान, प्रज्ञावान ।

—रक्त ज्योतिवान्, माँस ज्योतिवान्, अस्थि ज्योतिवान्, स्थूल शरीर ज्योतिवान् ।

—मन ज्योतिवान्, बुद्धि ज्योतिवान्, चित्त ज्योतिवान्, सूक्ष्म शरीर ज्योतिवान् ।

—अन्तर्जगत ज्योतिवान्, अन्तःकरण ज्योतिवान्, अन्तरात्मा ज्योतिवान्, कारण शरीर ज्योतिवान् ।

—स्थूल शरीर ज्योतिवान्, सूक्ष्म शरीर ज्योतिवान्, कारण शरीर ज्योतिवान् ।

साधक ज्योति पिण्ड, तेजपुंज प्रज्ञापुंज ।

ॐकार का पाँच गुंजन शंखनादवत् ।

ॐ तमसो मा ज्योतिर्गमय, असतो मा-सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय—तीन बार ।

—तमसो मा, तमसो मा, तमसो मा, ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय शान्ति समाप्त ।

(३) रसवर्षण (प्रभु मिलन)

—हिमालय के आध्यात्म ध्रुव केन्द्र से अमृत उफान-दूध झाग जैसा ।

—रस सिन्धु की हिलोरें—साधक तक ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

—नमन वन्दन ग्रहण, हृदय केन्द्र में प्रवेश भाव श्रद्धा का । अमृत वर्षा, घन-घोर अमृत वर्षा, साधक रस विभोर, आनन्द से सराबोर ।

—कण-कण में अमृत, नस-नस में अमृत, रोम-रोम में अमृत ।

—समर्पण साधक का—परब्रह्म को विलय-विसर्जन, एकत्व, अद्वैत, भक्त भगवान एक ।

—पय पान, सोम पान, अमृत पान ।

—परिवर्तन-तमसा का ऊषा में कामना का भावना में जड़ता का चेतना में, क्षुद्रता का महानता में, आत्मा का परमात्मा में ।

—तृप्ति-तुष्टि-शान्ति ।

—साधक की अनुभूति सत्-चित् आनन्द, आत्म-दर्शन, ब्रह्म-दर्शन ।

—ॐकार गुंजन पाँच बार शंखनादवत् ।

—ॐ तमसो मा ज्यतिर्गमय, असतो मां सद्गमय, मृत्योर्माऽतंगमय । तीन बार ।

—तमसो मां, तमसो मा, तमसो मा, ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय, ज्योतिर्गमय शान्ति समाप्ति ।

तीनों ध्यानों से आत्मोत्कर्ष एवं वातावरण अनुकूलन के दोनों ही लाभ उठाये जाने चाहिए । प्रारम्भ में ध्यान मुद्रा में स्थित हों । उसके बाद शक्ति संचार—दिव्य अनुदान के लिए तीन में से अपने लिए चुना गया ध्यान करें । वातावरण अनुकूलन के लिए सद्भाव संचार छोड़ें । वातावरण अनुकूलन के लिए संचार में पंच ॐकार गुंजन तथा तमसो मा ज्योतिर्गमय उच्चारण के साथ किया जाता है । व्यक्तिगत ध्यान में साधक स्वयं बोलें । सामूहिक में यदि बाह्य निर्देश टेप या स्वयं या व्यक्ति द्वारा किया जा रहा है । तो सब लोग न बोलें । निर्देश के स्वर के साथ अपनी भाव संगति करें । भावना करें कि दिव्य अनुदानों से समर्थ हुआ अन्तःकरण कृतज्ञता व्यक्त करते हुए वातावरण के अनुकूलन के लिए अपनी विनम्र आहुति डाल रहा है । सद्भाव तरंगें सूक्ष्म जगत में विक्षोभ विकारों का शमन तथा सदाशयता की वृद्धि कर रही है ।

यह तीनों ही धाराएँ अभ्यास में अति सरल एवं सर्वथा हानि रहित हैं । इन्हें बाल-वृद्धि, नर-नारी, रुग्ण-स्वस्थ कोई भी कर सकते हैं । यथासम्भव शरीर और वस्त्रों की शुद्धि करके ही बैठना चाहिए । व्यक्तिगत उपासना में उत्तर मुख बैठने का प्रयत्न किया जाय, किन्तु सामूहिक साधना में वैसा प्रतिबन्ध नहीं है । वहाँ बैठने की सुविधा को ही प्रधानता देनी चाहिए ।

इसे सभी जाग्रत आत्माएँ बिना किसी धर्म सम्प्रदाय का भेदभाव किए उस उपक्रम को अपना सकती हैं । गायत्री उपासना का न्यूनाधिक क्रम चलता रहे तो इसका लाभ विशेष मिलता है, न करने पर भी हानि या रुकावट कुछ नहीं है । गायत्री परिवार के सभी परिजन इस उपक्रम का आरम्भ तत्काल कर दें । जहाँ सामूहिक साधना की सम्भावना हो वहाँ दैनिक न सही साप्ताहिक या मासिक रूप से चलाया जा सकता है । इस अनुदान का लाभ अपनी ग्रहण शक्ति के अनुरूप न्यूनाधिक मात्रा में हर कोई उठा सकता है । इसलिए उसका प्रसार प्रशिक्षण करने में कोई हर्ज नहीं है । ध्यानकर्त्ता अपना नामांकन शान्ति कुंज में करालें और समय-समय पर अपने अनुभवों का उल्लेख करते हुए परामर्श प्राप्त करते रहना चाहें, तो अधिक मात्रा में अधिक उच्चस्तर का उपयुक्त अनुदान मिलने की अधिक सम्भावना रहेगी ।

युग-धर्म की त्रिकाल संध्या

साथ जुड़ने के लिए सजातीयता अनिवार्य है । जुड़ने का सबसे बड़ा लाभ है, पारस्परिक आदान-प्रदान का क्रम चल पड़ना । पानी और दूध सजातीय हैं इसलिए वे एक दूसरे के साथ मिल जाते हैं । तेल और पानी के बीच अन्तर रहता है, इसलिए वे मिलने का प्रयत्न करने पर भी ऊपर नीचे तैरते रहते हैं । सत्संग और कुसंग में भी यही होता देखा जाता है कि समान प्रकृति के लोग समान गुण-कर्म वालों के साथ सहज की घुल-मिल जाते हैं और अपना समूह बढ़ाते हुए एक दूसरे को सहयोग प्रदान करते हैं । विजातियों के बीच यह बात नहीं देखी जाती ।

प्रसंग सूत्र संचालन की सूक्ष्मीकरण प्रक्रिया का है । हम अब अपने से ऊँचे देवर्षि वर्ग में सम्मिलित हो रहे हैं । हमें इसलिए सम्मिलित किया गया है कि इससे पूर्व इस बिरादरी से जुड़ने हेतु अनिवार्य पात्रता सिद्ध कर चुके थे । विवेकानन्द, शिवाजी, चन्द्रगुप्त दयानन्द आदि को भी उनकी पूर्व संग्रहीत विशेषता के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आधार पर ही उनके गुरुओं द्वारा खोज निकाला गया था । हम भी मार्ग-दर्शन ढूँढ़ने नहीं गए । वरन् हमें ही खोज निकाला गया । इसका कारण वह पात्रता थी जो लम्बे समय की साधना के उपरान्त अर्जित करनी होती है । इस एकीकरण के अद्‌भुत परिणाम हुए हैं । हमें अपने पथ-प्रदर्शक से कवल मार्गदर्शन ही नहीं मिला वरन् दैवी सम्पदा का बड़ा अंश अनुदान में मिला । यदि वह न मिला होता, अजस्र अनुकम्पा की वर्षा उन पर न हुई होती तो अपनी निज की कमाई में इतने कार्य कभी न कर पाते । एक मनुष्य की क्षमता के बाहर जो सम्भावित था, वह उन्होंने अपनी इस सीमित जिन्दगी में मात्र अपने मार्गदर्शक से सूत्र जोड़कर दिखाई ।

अब बारी प्रज्ञा परिजनों की है । उनमें जो मूर्धन्य हैं, उन्हें हमारे साथ गुंथकर अपने आदान-प्रदान का नया द्वार खोजना चाहिए । जब एक दर्जा उठने का प्रसंग ही चल रहा है तो यह भी होना चाहिए कि वरिष्ठ प्रज्ञापुत्रों की एक मूर्धन्य पीढ़ी ऊपर बढ़े और वे कार्य करने लगें जो अब तक हमने हाथ में ले रखे थे । हिमालयवासी मार्ग-दर्शन सत्ता हमारी विशेष सहायता करने जा रहे हैं तो कोई कारण नहीं कि इस छोटी पीढ़ी को एक कदम और ऊँचा उठने का अवसर न मिले वे भी अतिरिक्त क्षमताओं तथा अनुदानों के भागीदार क्यों न बनें ?

प्रश्न समान बिरादरी का है । आन्तरिक एकता होगी तो साधना मिलन और आदान-प्रदान का सिलसिला चल पड़ेगा । हमने जो गरिमा एकत्रित की, उस पुरुषार्थ साधना के कारणों व परिणतियों को "हमारी वसीयत और विरासत" में विस्तापूर्वक लिखा जा चुका है । हमारा जीवन वस्तुतः एक खुली पुस्तक है । जो किया है और जो पाया है, उसमें राई-रत्ती छिपाया नहीं । हमारे अनुभव का सार संक्षेप है—साधना, उपासना और आराधना का त्रिविध अवलम्बन और उसके आधार पर समूची जीवनचर्या का निर्धारण । कदम-कदम पर हमने उसी सूत्र को जीवन में उतारा एवं हाथों-हाथ सत्परिणाम प्राप्त किए । दूसरे लोग पूजा-पाठ के कर्मकाण्डों से जेब काट लेने की फिराक में लगे रहते हैं एवं जीवनक्रम तथा आध्यात्म को एक-दूसरे से पृथक मानते हैं । यही कारण है कि जहाँ दूसरों को निराश रहना पड़ा, वहाँ हमने अपनी साधना को नकद धर्म की तरह इस हाथ दे-उस हाथ ले जैसा प्रतिफल प्राप्त कर निहाल होते रहे हैं एवं निरन्तर अपने मार्ग-दर्शक गुरु के प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करते रहे हैं जिन्होंने हमें आत्मिक प्रगति का सही मार्ग दिखाया अपनी सत्ता उनमें धुला देने के फलस्वरूप दैवी अनुदान बरसाया ।

सूक्ष्मीकरण के उपरान्त भी जिन किन्हीं को हमारे साथ गुंथे रहने का मन हो उन्हें जीवनचर्या में उपासना, साधना और आराधना की त्रिविध सरिताओं का त्रिवेणी संगम बनाना चाहिए । यही असली आध्यात्म है । इसी में कायाकल्प जैसी उपलब्धि सुनिश्चित है ।

प्रज्ञा परिजनों से एक ही शिकायत रही है । कि उन्हें आध्यात्म तत्वज्ञान एक व्यावहारिक जीवन को एक में मिला देने का साहस दिखाना चाहिए था, वह नहीं दिखाया । निष्ठा और व्रतशीलता का वैसा परिचय नहीं दिया जैसा दिया जाना चाहिए था । संकल्प तो कितनी ही बार लिए पर सदा अधूरे रखे । मनोबल के अभाव में स्थिरता न रह सकी । आज 'जोड़ा-कल तोड़ा' वाली बालक्रीड़ा चलती रही । यदि स्थिरता और दृढ़ता रही होती, तो यह न कहना पड़ता कि हम इतने दिनों से गुरुदेव के साथ जुड़े हैं, पर वह प्राप्त नहीं हो सका जो होना चाहिए था । इसका कारण जिस-तिस पर दोष देने से नहीं मिल सकेगा वरन् इसके लिए जीवन और आध्यात्मा को परस्पर उसी प्रकार गूँथना होगा जिस प्रकार हमने अपने जीवन में एकाकार कर दिखाया । प्रगति और अवगति के निमित्त कारण अपने में ही खोजने चाहिए ।

आत्मिक प्रगति के उपासना, साधना, आराधना रूपी तीनों आधारों-उपचारों को शरीर के लिए जल, अन्न, वायु की तरह अनिवार्य साधन मानकर चलना चाहिए । इन्हीं को अपनाकर हम पात्रता अर्जित कर सकें और प्रगति के लिए आवश्यक भीतरी उफान और बाहरी अनुदान प्राप्त कर सकें । अब उन परिजनों की बारी है जो जीवन में इस स्तर की सफलता प्राप्ति हेतु इच्छुक हैं । उन्हें भी इसी राजमार्ग पर चलना पड़ेगा । शार्टकट कोई है नहीं । जीवन-क्रम ओछा और घिनौना बना रहे, दूसरी और किसी जन्त्र-मन्त्र से या वरदान आशीर्वाद के सहारे आत्मिक सफलताओं का लाभ प्राप्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता रहे, यह नियति के दरबार में सम्भव नहीं । मृगतृष्णा में भटकने की अपेक्षा उस स्तर से विमुख रहना अच्छा है ।

नए सिरे से आज की तिथि को सर्वोत्तम मुहूर्त मान कर वरिष्ठ प्रज्ञापुत्रों को अपनी नियमित और नैष्ठिक स्तर की साधना आरम्भ कर देनी चाहिए । भले ही वह समय की दृष्टि से, कर्मकाण्ड की दृष्टि से न्यूनतम ही क्यों न हो । ऐसी साधना प्रातःकाल मध्याह्न, सायं सोने से पूर्व पन्द्रह-पन्द्रह मिनट कुल ४५ मिनट की है । इतना समय भगवान के लिए काम करने का मानकर निकाल ही लेना चाहिए । नाम लेने-जपने वाले समय में कटौती भी करनी पड़े तो कोई हर्ज नहीं । विवेकानन्द कुल मिलाकर आधा घण्टा ध्यान करते थे । गाँधी और विनोबा की दैनिक उपासना भी प्रायः इतनी ही प्रतिदिन की होती थी । अतिरिक्त वाले समय को वे भगवान की इच्छा के, प्रसन्नता के कार्यों में ही खपाये रहते थे । आज जैसा आपत्तिकाल है, उसे देखते हुए इस प्रकार कार्य-निर्धारण ही उपयुक्त है ।

प्रातः नित्यकर्म से निवृत्त होकर एक माला गायत्री जप आत्मोत्कर्ष के लिए और एक माला वातावरण संशोधन हेतु करनी चाहिए । प्रथम माला के साथ सर्वव्यापी सविता देवता के प्रकाश का आत्मसत्ता में अवतरित होने का ध्यान किया जाय । वातावरण परिष्कार वाली माला के साथ ध्यान किया जाय कि साधक आत्मसत्ता ब्रह्माण्डव्यापी परब्रह्म की समष्टिसत्ता को आत्मसमर्पण कर रही है । क्षुद्रता का घेरा तोड़कर उस विराट् के साथ एकत्व-अद्वैत स्थापित कर रही है । दो माला जप रहित यह ध्यान प्रातःकाल का है । इसी समय दस प्राणायाम भी करना चाहिए । इन्हें मिलन 'प्राणायाम' नाम दिया गया है । साँस खींचते समय भावना की जाय कि विश्वप्राण अपने महाप्राण केन्द्र द्वारा आत्मसत्ता में प्रविष्ट कर सर्वतोन्मुखी बलिष्ठता प्रदान कर रहा है । कुम्भक नहीं के बराबर होगा । साँस निकालते समय भावना की जाय कि अपने पास जो भी वैभव है, वह विराट् के साथ घुलकर उसे अधिकतम पवित्र एवं प्रखर बनाने में योगदान दे रहा है । यह विराट् महाप्राण है ।

मध्याह्न संध्या में अपने जीवन को पवित्रतम बनाने की भावना करनी चाहिए । नाले का नदी में, ईंधन का आग में, बिन्दु का सिन्धु में, पतंगे का दीपक में लय होने का ध्यान इसी का बोधक है कि क्षुद्रता का महानता में परिवर्तन हो रहा है । इसी समय सर्वतोन्मुखी संयम साधना का ध्यान भी करना उचित है । तप से सामर्थ्य बढ़ती है । तब ही संयम है । तप चार प्रकार के होते हैं—इन्द्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम, विचार संयम । देखा जाय कि अपनी जीवनचर्या में तो ऐसा कोई असंयम समाविष्ट नहीं है । उसमें किस प्रकार क्या सुधार परिवर्तन की गुंजाइश है, अपने आप से यह प्रश्न कड़ाई के साथ पूछा जाय, साथ ही उस पर विचार किया जाय कि खर्च में कटौती कर परमार्थ प्रयोजन हेतु बचत किस प्रकार सम्भव है ?

रात्रि को सोते समय त्रिकाल संध्या का तीसरा चरण पूरा किया जाय । बिस्तर पर पहुँचकर दिनभर के कार्यों का लेखा-जोखा लिया जाय और देखा जाय कि जो कुछ परमार्थ प्रयोजन में लगना सम्भव था, वह लगा या नहीं । जो कमी रह गई हो, उसे अगले दिन पूरा करने के लिए अपने आप को निर्देशित किया जाय । इन दिनों सर्वोत्तम एवं नितान्त आवश्यक पुण्य-परमार्थ क्या हो सकता है, इसके सम्बन्ध में दो मत नहीं हो सकते । व्यक्ति और समाज के सम्मुख प्रस्तुत अनेकानेक समस्याओं का कारण एक ही है—दुर्मति । उसी के कारण दुर्गुति भरी परिस्थितियाँ अनेकों रूपों में सामने आ उपस्थित हुई है । इसी विष वृक्ष की जड़ें काटने के लिए हमें विचार क्रान्ति प्रयोजन में—प्रज्ञा अभियान में सर्वतोभावेन जुट जाना चाहिए ।

सोते समय तत्वबोध साधना के ढंग से चिन्तन-मनन करें । दिनभर ईश्वरनिष्ठ आदर्शक्रम कितना निभा, कितना नहीं निभा । जो हो सका, उसके लिए आत्मागौरव का बोध, जो चूकें हुईं उनके लिए पश्चाताप का भाव लायें । ऐसे चिन्तन के साथ नींद के माध्यम से उस समर्थ सत्ता की गोद में अपने व्यक्तित्व को विसर्जित करें । भावना करें कि कल प्रातः मिलने वाले नए जीवन में नई प्रेरणा, नई क्षमता लेकर कर्मक्षेत्र में अवतरित होने की स्थिति वह परम सत्ता बना देगी ।

सोचा जाय कि अभी जो क्रम चलता है, उसमें बढ़ोत्तरी की गुंजाइश है या नहीं । निजी स्वार्थपरता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में जितनी कटौती बन पड़ेगी, उसी अनुपात में युगधर्म के निर्वाह में, अधिक मात्रा में योगदान सम्भव हो सकेगा । रात्रि को इसी के बारे में विचार चिन्तन करते हुए निद्रोदेवी की गोद में जाना चाहिए । ४५ मिनट के उपरोक्त साधनाक्रम को परिजन हमारे सूक्ष्मीकरण महासाधना का ही एक अंग मानें एवं इसे नियमित रूप से बिना आलस्य प्रमाद के परिपूर्ण निष्ठा के साथ निभाएँ । इस साधना त्रिवेणी के फलितार्थ परिजनों को अपने जीवन में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगेंगे । युगधर्म के निर्वाह हेतु प्रज्ञा आलोक का विस्तार करने के लिए उन्हें स्वाध्याय और सत्संग की प्रक्रिया को अपनाते ही अपना सम्पर्क परिकर बढ़ता दिखाई देने लगेगा ।

कहना न होगा कि हमारी एकाकी साधना-तपश्चर्या में सहभागी बनने हेतु हर परिजनों में ललक उठेगी एवं वे युगधर्म की त्रिकाल संध्या को निभाने के साथ-साथ प्रज्ञा आलोक के विस्तार का कार्य भी पूरी निष्ठा से निभायेंगे । यही अब हमारे और प्रज्ञा परिजनों के मध्य जुड़ने का प्रमुख माध्यम भी है ।

महान परिवर्तन की सन्धि वेला में युग साधना

युग सन्धि की इस बीस वर्षीय कायाकल्प प्रक्रिया में देव परिवार के परिजनों के कन्धों पर महाकाल ने कुछ विशेष कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व सौंपे हैं । इस अवधि को चार पंचवर्षीय योजनाओं में अति महत्त्वपूर्ण कार्यक्रमों के लिए विभाजित किया गया है । प्रथम पंचवर्षीय योजना में जो पंच सूत्रीय कार्यक्रम प्रस्तुत करना है, वह इस प्रकार है—

(१) जाग्रत आत्माओं की विशेष साधना—

(अ) नित्य नियमित रूप से गायत्री मन्त्र की न्यूनतम पाँच मालाओं का जप, साथ में प्रातःकाल उगते सूर्य का ध्यान । उस आलोक से स्थूल शरीर में सत्कर्मों को, सूक्ष्म शरीर में सद्विचारों की—कारण शरीर में सद्भावों की क्रमिक अभिवृद्धि ।

(ब) दिवाली से होली तक प्रातः ५½ बजे से और होली से दिवाली तक ४½ बजे से पन्द्रह मिनट चलने वाली प्राण आकर्षण की विशेष साधना ।

(स) रात्रि को ८½ बजे पूरे वर्ष भर चलने वाली पन्द्रह मिनट की नियति सन्तुलन साधना । साँस भीतर खींचना । इड़ा मार्ग से मूलाधार तक प्राण को ले जाना । प्राण और कुण्डलिनी का मन्थन । उत्पन्न ऊर्जा का सुषुम्ना मार्ग से ब्रह्मरन्ध्र तक लाना और वहाँ से अनन्त अन्तरिक्ष में नियति सन्तुलन के लिए बखेर देना । श्वास को पिंगला मार्ग से निकाल देना, फिर पिंगला से खींच कर इड़ा से निकालने के साथ वही प्राण प्रयोग दुहराना ।

(२) दिव्य आत्माओं का अवतरण सम्भव करने के लिए उपयुक्त वातावरण का निर्माण । ब्रह्म विवाहों से इस पुण्य प्रक्रिया का शुभारम्भ । साधनामय दाम्पत्य जीवन । घरों का सुसंस्कृत वातावरण । इन तीनों उपक्रमों का अधिकाधिक प्रचलन ताकि युग सृजन के लिए आतुर उच्च स्तर आत्माओं को उतरने, यहाँ ठहरने और पुरिपुष्ट होने की सुविधा मिले ।

(३) देवात्माओं की खोज । उन्हें ढूँढ़ने, निखारने परिपक्व एवं कार्यरत करने का सक्रिय प्रयास । इस खोज के लिए दिव्य कार्यक्रमों का निर्धारण ताकि वे अपनी सहज रुचि से उधर आकर्षित और एकत्रित हो सकें, संघ बद्ध होकर परिवर्तन के लिए परम पुरुषार्थ कर सकें ।

(४) अदृश्य जगत के विक्षुब्ध वातावरण का शमन परिशोधन करने के लिए प्रभावी उपचार । गायत्री महापुरश्चरण का अधिकाधिक विस्तार । सामूहिक जप एवं अग्निहोत्र से दिव्य चेतना का अनुकूलन ।

(५) गायत्री शक्तिपीठों और प्रज्ञापीठों की जाग्रत क्षेत्रों में व्यापक स्थापना । उनके माध्यम से नव जागरण का आलोक वितरण । घर-घर में, जन-जन के मन-मन में इन प्रेरणा केन्द्रों के माध्यम से युग चेतना का उभार ।

यह प्रथम पंचवर्षीय योजना जनवरी ८० से दिसम्बर ८४ तक चली । इसके उपरान्त जनवरी ८५ से दिसम्बर ८९ तक महान परिवर्तन की द्वितीय पंचवर्षीय योजना कार्यान्वित हुई । उसमें प्रथम योजना की परिपक्वता देखते हुए अधिक भारी, अधिक व्यापक और अधिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

महत्त्वपूर्ण कार्य हाथ में लिए गए । संक्षेप में द्वितीय पंचवर्षीय योजना का पंच सूत्री प्रारूप इस प्रकार है—(१) समस्त धर्मों को एक सूत्र शृंखला में बाँधना और उस सम्मिलित शक्ति का लोक निर्माण में नियोजन, (२) वसुधैव कुटुम्बकम् की अभिनव संरचना । एक शासन एक धर्म, एक संस्कृति, एक भाषा की पृष्ठभूमि बनाना, (३) शासन सत्ता, मनीषा, प्रतिमा, कला समर्थता एवं सम्पदा जैसी विभूतियों पर धर्म चेतना का अनुशासन, (४) व्यक्तित्व निर्माण के लिए अभीष्ट धर्म शिक्षा की समानान्तर व्यवस्था, व्यक्तिवादी संकीर्ण स्वार्थपरता का सद्भावना और सामूहिकता में परिवर्तन ।

बाद की तीसरी योजना सन् ६० से ६४ तक चली और चौथी ६५ से ६६ तक चलेगी । उसके कार्यक्रम परस्थितियों के अनुरूप प्रस्तुत होते चलेंगे । मनुष्य में देवत्व के उदय और धरती पर स्वर्ग का अवतरण सम्भव करने के उद्देश्य से किए जा रहे महाकाल के इन प्रयासों में समस्त जाग्रत आत्माओं को भाग लेना है । अंगद, हनुमान की, भीम-अर्जुन की भूमिका उन्हीं को निभानी है ।

प्राणवान परिजन इतना तो करें ही

प्राणवान प्रज्ञापुत्र हमारी सूक्ष्मीकरण साधना में भी सहभागी रहें । इस सुयोग का लाभ उठाने हेतु उन्हें व्यक्तिगत जीवन में उपासना, साधना, आराधना, के त्रिविध आध्यात्म पुरुषार्थ नियमित रूप से निष्ठापूर्वक करने चाहिए । व्यक्तित्व में पवित्रता, प्रखरता और प्रामाणिकता बढ़ाने के यही उपाय उपचार हैं । इसे त्रिवेणी संगम साधना समझा जाय । जो इसे नियमित रूप से अपनाये रहेंगे, हमारी ही तरह आत्म-सन्तोष, जन-सहयोग और दैवी अनुग्रह के लाभ सतत् प्राप्त करते रहेंगे । इन तीनों का ही प्रयोजनों के लिए प्रातः, मध्याह्न, सायंकाल तीन बार पन्द्रह-पन्द्रह मिनट लगाते रहें एवं अपनी जीवनचर्या का एक अविच्छिन्न अंग बनाने का प्रयत्न करें ।

प्रातः उपासना

नित्य कर्म से निवृत्त होकर एक माला गायत्री मन्त्र आत्म-कल्याण के लिए और एक माला वातावरण संशोधन के लिए करें । भगवान को आदर्शों का समुच्चय मानकर उसके साथ नदी नाले की तरह, आग ईंधन की तरह एकाकार होने का प्रयत्न करें ।

सूर्योदय काल के एक घण्टे में किसी भी समय दस बार एक विशेष प्राणायाम करें । भावना करें कि साँस खींचते समय अभिनव प्राण चेतना उपलब्ध हो रही है और इन दिनों ऊँचा उठने, आगे बढ़ने की प्रेरणा दे रही है । व्यष्टि प्राण और समष्टि महाप्राण परस्पर मिल रहे हैं । यह "मिलन-प्राणायाम" है । दस बार साँस छोड़ें—ग्रहण करें । हर बार चहुँ ओर संव्याप्त महाप्राण में मिलन-संयोग की भावना करें ।

मध्यान्ह साधना

पन्द्रह मिनट एकान्त में बैठकर आत्म-समीक्षा करें । मानवी गरिमा के अनुरूप जीवन ढालने के लिए क्या करना चाहिए, यह सोचें । "सादा जीवन—उच्च विचार" की नीति अपनायें । इन्द्रिय अर्थ, समय, विचार संयम पहले की अपेक्षा अधिक मात्रा में बन पड़े, इसकी विधि व्यवस्था बनायें । लोभ, मोह के बन्धनों को काटें एवं जितना सम्भव हो—समय, श्रम, ज्ञान, एवं वैभव बचायें-सुनियोजित करने की रीति-नीति बनायें ।

सोते समय आराधना

रात को सोते समय पन्द्रह मिनट यह विचार करें कि साधनों की जो बचत हो सकती थी, वह की गई या नहीं । जो बचा, वह युग धर्म के पुण्य परमार्थ में लगा या नहीं । उचित समयदान और अंशदान निकला या नहीं ? उसे युगान्तरीय चेतना के आलोक वितरण में लगाया गया या नहीं ? युग देवता के चरणों में क्या और अधिक अनुदान दे सकना सम्भव है ? यदि है, तो उसके लिए साहस कब व कैसे जुट सकेगा ?

युग धर्म का निर्वाह

युग सन्धि की इस अपत्तिकालीन ऐतिहासिक बेला में हर प्रज्ञापुत्र की भावभरी अनुदान श्रद्धांजलियाँ एक की दूसरे से बढ़-चढ़कर रहें, ऐसी प्रतिस्पर्धा चले ।

हर समर्थ शाखा एवं वरिष्ठ कार्यकर्त्ता मिशन सभी कार्यक्रमों को अपने यहाँ तो चलायें ही, अपने सम्पर्क क्षेत्र में भी फैलें । जो अदृश्य वातावरण सूक्ष्मीकरण द्वारा हम बना रहे हैं, उसे दृश्य रूप देने के लिए सभी परिजन व्यक्तिगत जीवन के त्रिविध कार्यक्रम एवं युग धर्म के निर्वाह को अपना दायित्व मानें । इतना करने पर ही नवयुग के नन्दन-वन की समुचित सिंचाई सम्भव हो सकेगी ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह उपक्रम हम सभी अपनाएँ

युग परिवर्तन के महान अभियान में अखण्ड-ज्योति परिकर अपनी भूमिका किसी न किसी रूप में निबाहें ही । कोई ऐसा न बचे जो अपने अस्त-व्यस्त होने का बहाना बनाये । आलस्य और प्रमाद बरतने का यह समय है नहीं । सुयोग की उपेक्षा करने वाले समय निकलने पर पछताते ही रह जाते हैं ।

अग्रगामी सदा श्रेयाधिकारी बने हैं । भीड़ के साथ पीछे चलने वालों की कमी नहीं रहती । सराहे वे जाते हैं जो आदर्शों को क्रियान्वित करने में अपना उदाहरण प्रस्तुत करते हैं और असंख्यों के लिए अनुकरणीय अभिनन्दनीय और मार्ग-दर्शन बनते हैं ।

आनाकानी करने वाले अर्जुन को भगवान ने कहा कि समय ने दुर्बुद्धियों को पहले ही मार रखा है । तुझे तो धनुष उठाकर विजय का श्रेय ही प्राप्त करना है । बदलते युग में रीछ-वानरों की, गोवर्धन उठाने वाले ग्वाल वालों की भूमिका निबाहने में कृपणता नहीं बरतनी चाहिए । इस उपक्रम में लाभ ही लाभ है । सो भी ऐसा जिसे पीढ़ियाँ सराहती रहें ।

हममें से प्रत्येक को अपने चिन्तन में उत्कृष्टता, चरित्र में आदर्शवादिता और व्यवहार में वेदात्त शालीनता का समावेश यथासम्भव करते रहने में तत्परता बरतनी ही चाहिए । अपने समय और साधनों का एक अंश समय की पुकार को पूरा करने में युगधर्म के निबाहने में भी लगाते रहने की योजना बनानी और उसे व्रतधारी प्रज्ञापुत्र की तरह निभाते रहने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए ।

अपने जैसे चार साथी और तलाश करें । पाँच का प्रज्ञामण्डल बनायें । प्रयत्न यह करें कि पाँचों पाँच-पाँच अपने जैसे पाँच और ढूँढ़कर पच्चीस का एक प्रज्ञा परिवार बनायें । पाँच से पच्चीस की योजना को कार्यान्वित करते हुए हमीं लोग समूचे संसार तक अपना विस्तार कर सकेंगे ।

प्रत्येक छोटे-बड़े प्रज्ञा परिवार को व्रतधारी प्रज्ञा-युग को साप्ताहिक सत्संग का आयोजन कहीं न कहीं करते रहना ही चाहिए । सत्संग में (१) सामूहिक जप, (२) दीपयज्ञ, (३) सहगान कीर्तन, (४) विचार विनिमय, (५) झोला पुस्तकालय । यहाँ पाँचों कार्यक्रम सम्पन्न किए जाते रहने चाहिए ।

प्रज्ञा मण्डलों में जो लोग भाग लेने लगें उन्हें नौ दिवसीय युग सन्धि पुरश्चरण की भागीदारी परिपक्व करने के लिए शान्ति कुंज भिजवाना चाहिए । यह आँवे में बर्तन पकने जैसी प्रक्रिया है । एक लाख व्रतधारी इसी योजना के अन्तर्गत इन बारह वर्षों में प्रशिक्षित किए जाने हैं ।

इक्कीसवीं सदी बनाम उज्ज्वल भविष्य तथा युग पुरश्चरण सम्बन्धी विचारधारा के साथ विचार क्रान्ति अभियान के प्रतिपादन जोड़ देने से इन दोनों को युगान्तर चेतना का एक सुनिश्चित समय बनता है । इसका आलोक वितरण जितना अधिक बन पड़े करते रहना चाहिए ।

घर रहकर साधनात्मक दो नियम अनिवार्य रूप से निबाहें (१) प्रातः उदीयमान सूर्य का ध्यान करें । उसकी स्वर्णिम किरणें अपने रोम-रोम में भर रहीं हैं यह भावना करें । साथ ही मानसिक जप भी करते रहें । यह साधना अपने परिवार के अधिकाधिक लोगों से करायें ।

(२) मानसिक रूप से शान्ति कुंज आने की एक भावनात्मक यात्रा नित्य करें । यह पाँच मिनट का ध्यान एक सुदृढ़ सम्बन्ध सूत्र जोड़ेगा और नूतन ऊर्जा प्रदान करता रहेगा । ध्यान में शान्ति कुंज पहुँचना, गंगा स्नान की भावना करना, साधना परिकर की परिक्रमा करना, अखण्ड दीपक के पास बैठकर उपासना करना । यह सब कार्य आँखें बन्द करके लेने में पाँच मिनट का समय भी पर्याप्त है ।

शक्ति सम्प्रेषण का तत्वज्ञान

विचार हमारे मस्तिष्क से निकलने वाली ऊर्जा तरंगें हैं । जो कल्पना, बुद्धिमत्ता, प्रतिभा आदि अनेक रूपों में निरन्तर गतिशील रहती हैं । जीवन अनेकानेक भागों में बँटा हुआ है । उसे प्रत्यक्ष जीवन से सम्बन्धित अनेकों कार्यों में व्यस्त रहना पड़ता है । अस्तु वह स्थिर नहीं रह पाती, सदा इधर से उधर उड़ती रहती है । भगदड़ में थोड़ा-थोड़ा प्रयोजन सभी का पूरा होता है, पर स्थिरता एवं एकाग्रता के आधार पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी विशेष प्रयास में जो प्रवीणता, पारंगता होनी चाहिए वह नहीं हो पाती ।

सांसारिक महत्त्वपूर्ण प्रयोजनों में एकाग्रता की ही महती भूमिका होती है । वैज्ञानिक, साहित्यकार, कलाकार, यहाँ तक कि सरकस के नट तक अपनी एकाग्रता के सहारे ही आश्चर्यजनक सफलताएँ प्राप्त करते देखे जाते हैं । बिखरे विचारों वाले अस्त-व्यस्त, अनिश्चित होते हैं, पर जिन्हें एकाग्रता में रस आने लगता है वे मन्दबुद्धि होते हुए भी कालिदास, वरदराज की तरह उच्चकोटि के विद्वान हो जाते हैं । द्रौपदी स्वयंवर के समय अर्जुन का लक्ष्य वेध उसकी संसाधित का ही प्रतिफल था ।

आध्यात्म जगत में भी अनेकानेक साधनाओं का उद्देश्य एकाग्रता को हस्तगत करना है । इसी निमित्त ध्यान, नाद और प्राणायाम की त्रिविध साधनाएँ की जाती हैं । एकाग्रता से ये साधनाएँ सफल होती हैं अथवा इन साधनाओं के सहारे एकाग्रता की सिद्धि होती है । यह नहीं कहा जा सकता ।

दो व्यक्तियों के बीच घनिष्ठता उत्पन्न करने की प्रक्रिया भी इसी आधार पर सम्पन्न होती है । माता और बालक, पति और पत्नी एक दूसरे का जितनी तन्मयता से ध्यान करते हैं, उसी अनुपात से वे न केवल मैत्री बढ़ाते हैं वरन् एक दूसरे के प्रति सूक्ष्म आदान-प्रदान का सिलसिला भी चालू कर देते हैं ।

इस मार्ग का उपयोग ओछे प्रयोजनों के लिए भी किया जा सकता है । तान्त्रिक वर्ग के लोग इसी क्षमता को कुत्सित स्तर पर विकसित करके मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि की सिद्धि प्राप्त करते हैं और पराये को नुकसान पहुँचाकर अपनों को लाभ देने के बदले उपहार भी प्राप्त करते हैं । यह उपहार प्रतिष्ठा एवं धन दोनों ही रूपों में हो सकता है, पर यह तरीका घिनौना है । ऐसा ही जैसा कि किराये के हत्यारे या गुण्डे अपना अनैतिक धंधा चलाते हैं ।

घनिष्ठता का एक और तरीका है । स्नेह, आत्मभाव एवं समर्पण । इस सम्मिश्रण को भक्ति कहते हैं । भाव जगत में इस भक्ति की भी असाधारण शक्ति मानी गई है । यह व्यक्तियों के साथ भी जुड़ सकती है और अदृश्य शक्तियों के साथ भी । मीरा और रामकृष्ण परमहंस ने अदृश्य शक्तियों को वशवर्ती एवं साकार कर लिया था । एकलब्य ने अपनी भावना से ही एक ऐसा गुरु विनिर्मित कर लिया था जो द्रोणाचार्य की तुलना में अधिक ही सक्षम था ।

विचारों और क्षमताओं का आदान-प्रदान इस आकर्षण शक्ति के सहारे भी हो सकता है, पर यह द्विपक्षीय होना चाहिए । टेलीफोन के दोनो सिरों पर विद्युत प्रवाह होना चाहिए । एक ओर बिजली न हो तो वह काम नहीं करेगा । रेडियो ब्राडकास्ट व्यापक अन्तरिक्ष में फैलता है पर उसे पकड़ा सुना वहीं जा सकता है जहाँ रेडियो या ट्रान्जिस्टर उपकरण भी विद्यमान हों । हवा मात्र के माध्यम से वायरलैस नहीं सुना जा सकता है । सामान्य शब्दों की गति धीमी होती है, थोड़ी ही दूर तक चलकर समाप्त हो जाती है, किन्तु इसी वाणी से जब विद्युत प्रवाह जुड़ जाता है तो संसार के एक कोने से लेकर दूसरे कोने तक पहुँच जाती है ।

कछुवी रेत में अण्डे देती है । स्वयं पानी में चली जाती है, किन्तु वहीं से अपने प्राण शक्ति अण्डे तक भेजती रहती है । उस पोषण के सहारे वह पकता और पलता रहता है । यदि किसी कारणवश इसी बीच कछुवी की मृत्यु हो जाती है तो बालू में गड़ा हुआ अण्डा वहाँ सड़ा जाता है । पकता और बढ़ता नहीं । यही बात सिद्ध पुरुषों में भी देखी गई है । वे अपने वरिष्ठ शिष्यों को अपनी शक्ति हस्तान्तरित करते रहते हैं । उन्हें इसके लिए समीप जाने और आने की आवश्यकता नहीं पड़ती । यह कार्य टेलीविजन की तरह होता रहता है और एक स्थान के दृश्य एवं कथन दूसरे स्थान तक पहुँचते रहते हैं । आध्यात्म प्रयोजनों में इसके साथ-साथ शक्ति भी चलती है । जेनरेटर अपने स्थान पर गतिशील रहता है पर तारों के माध्यम से उसकी शक्ति दूसरे स्थानों तक जा पहुँचती है और अपनी शक्ति से छुट-पुट उपकरणों को भी भली-भाँति चलाता रहता है ।

सभी सिद्ध पुरुष आदि से अन्त तक शक्ति उपार्जन पूरे का पूरा स्वयं ही नहीं कर लेते । ऐसे करने में उसे क्रमिक विकास के अनुसार हजारों वर्ष भी लग सकते हैं, पर जल्दी तब होती है जब शिष्य को अनुदान में यह सब भी मिलता रहता है । विवेकानन्द के पास अपना निज का उपार्जन नहीं था । उन्हें वह रामकृष्ण परमहंस से अनुदान में मिला था । इसी प्रकार साधना क्षेत्र में अनुदानों के और भी अनेक उदाहरण हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारे हिमालय वासी गुरु के अनुदानों का अनुग्रह सर्वविदित है । इन्हीं के सहारे उनसे विगत जीवन में वह कार्य बन पड़े जो दस समर्थ व्यक्ति मिलकर भी नहीं कर सकते ।

विगत बसन्त पर्व पर सत्र में आये हुए परिजनों से कहा था कि आप लोग किसी पूछताछ के लिए हरिद्वार आने का कष्ट न उठाया करें और इतना किराया भाड़ा खर्च न किया करें । दूर प्रेषण की इतनी सिद्धि तो हमें अपनी दो वर्ष की साधना में ही मिल गई है कि आवश्यकता पड़ने पर हम आप में से किसी आमन्त्रित करने वाले तक अपने विचारों का सम्प्रेषण कर सकें ।

इसका सरल तरीका यह है कि रविवार के दिन प्रातःकाल शुद्ध होकर दस बार लम्बी साँसें खींचें । इसमें छाती से लेकर पेट तक पूरी साँस भरी जानी चाहिए और फिर धीरे-धीरे उसे पूरी तरह बाहर निकाल देना चाहिए । इसके बाद दाहिना हाथ दस बार सिर पर पीछे से आगे की ओर फिराया जाय । ऐसा करने से अपने निज के प्रश्न, निज के कल्पनात्मक उत्तर बाहर निकल जायेंगे । मस्तिष्क खाली हो जायेगा । नेत्र बन्द कर लें । ध्यान करें कि हरिद्वार से हमारी जिज्ञासाओं का उत्तर अन्तरिक्ष के माध्यम से चला आ रहा है और अपने मस्तिष्क में उभर रहा है । इसके उपरान्त नए प्रकार के विचार मस्तिष्क में भ्रमण करना शुरू करेंगे । इन्हें ध्यानपूर्वक समझें और अपनायें प्रतीत होगा कि आपकी समस्याओं का समाधान सुझाया गया है जिससे प्रस्तुत कठिनाई का निराकरण भी हो जाय और नैतिक स्तर पर आप यथावत् बने रहें और आगे बढ़ते रह सकें ।

उपरोक्त उपचार मात्र सांसारिक समस्याओं के समाधान सन्दर्भ में ही नहीं हैं वरन् इस दृष्टि से भी हैं कि जिन्हें आन्तरिक प्रगति और शान्ति की अपेक्षा है वे भी अभीष्ट आवश्यकता की पूर्ति कर सकें ।

शक्ति केन्द्र से साझेदारी की साधना

समय की दुरूहता को देखते हुए पिछले वर्षों में महाकुण्डलिनी जागरण की विशिष्ट तपश्चर्या सम्पन्न की गई है । 'महा' शब्द इसलिए जोड़ा गया है कि वह व्यक्ति विशेष के लाभ या उपयोग के लिए उसका साधना-क्रम नहीं बनाया गया, वरन् समस्त विश्व की अगणित आवश्यकतओं की पूर्ति के लिए उस तपश्चर्या में ऐसी विशिष्टता और उच्चस्तरीय उत्कृष्टता का समावेश किया गया है कि सुविस्तृत क्षेत्र की अगणित आवश्यकताओं को पूरा कर सके । इसे राष्ट्रगत, विश्वगत अनुपम आध्यात्मिक प्रयास कहा जा सकता है । इससे पूर्व ऐसे प्रयास यदा-कदा ही हुए हैं । एक घटना विश्वामित्र की हमें स्मरण है । उनका तप, अनुष्ठान, यज्ञ ऐसे ही महान प्रयोजन के लिए थे । उसे असफल करने के लिए आसुरी शक्तियाँ विघ्न भी कम नहीं फैला रही थीं । स्थिति को देखते हुए इसका संरक्षण करने राम लक्ष्मण को जाना पड़ा था । उसी से मिलता-जुलता यह महान तप संकल्प भी पूरा हुआ है ।

कहा और समझाया जाता रहा है कि प्रज्ञा मिशन का सूत्र संचालक मात्र काय-कलेवर में परिवेष्टित एक व्यक्ति विशेष नहीं है । उसकी समग्र सत्ता एक मिशन के लक्ष्य के निमित्त उपजी और कार्यरत हुई है । आदि से ही इसी दिशा धारा को-राजमार्ग को अपनाया गया है । अब आपत्तिकालीन युग सन्धि की ऐतिहासिक बेला में तो उस प्रक्रिया को और भी अधिक तेज कर दिया गया है । प्रस्तुत महाकुण्डलिनी जागरण उसी का एक स्वरूप है । इस में कर्त्ता का कोई निजी मनोरथ जुड़ा हुआ नहीं है । स्पष्टतः यह युग परिवर्तन के लिए ही है । यह अदृश्य कार्य दृश्य रूप में इस प्रकार क्रियान्वित हो रहा है कि प्रतिभाओं को और भी अधिक प्रखर आत्मबल सम्पन्न बनाया जाय । उन्हें साधारण से असाधारण स्तर तक पहुँचाया जा सके । इस सामूहिक शक्ति से ही उस लक्ष्य की पूर्ति हो सकेगी जो स्पष्टतः सामने है ।

प्रज्ञा परिकर एक समुदाय है । इसे मणि मुक्तकों का बहुमूल्य हार भी कह सकते हैं । गहरे गोते लगाकर उन्हें ढूँढ़ा, एकत्रित किया और एक सुदृढ़ रत्नमणि सूत्र में पिरोया गया है । यह समुदाय अखण्ड-ज्योति के सदस्यों के रूप में-सृजनरत प्रज्ञा पुत्रों के रूप में देखा जाता है । व्यक्ति विशेष भले ही इसे गूँथने, चमकाने का कार्य करता हो, पर उसका सुविस्तृत स्वरूप प्रायः चौबीस लाख भावनाशील उदारचेताओं तक फैला हुआ है । इन्हें केन्द्रीय सत्ता से अलग करके नहीं देखा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सोचा जा सकता है । गेंड़ा का सींग अत्यन्त सशक्त होता है, तो भी वह नथुने के ऊपर उगे कड़े बालों का सघन समुच्चय भर होता है । प्रज्ञा मिशन के रूप में जिस केन्द्र को कार्यरत देखा जाता है उसे एकाकी व्यक्ति नहीं माना जा सकता है । वह गैंड़े के नथुने पर उगा हुआ सींग भर है, जिसके साथ अगणित असाधारण बल घनीभूत हो रहे हैं । यह बालों से मिलकर बना सींग टक्कर मार कर हाथी को उलट और शेर को उछाल देता है ।

विश्वामित्र का ऊर्जा उत्पादन तप जब अपने प्रखर स्वरूप में प्रकट हुआ था तो असुरता के दमन और सतयुग की स्थापना का वातावरण बनाया था । दुर्बल रीछ, वानरों को इतना सशक्त बनाया था कि समुद्र का पुल बना सके । निशाचरों के दुर्ग को विस्मार कर सकें । राम राज्य की स्थापना में महती भूमिका निभा सकें । हनुमान, अंगद आदि का नाम प्रख्यात है, पर वास्तविकता है कि उस सुगठित वानर मण्डली का प्रत्येक सदस्य अपने-अपने स्तर की प्रतिभा का धनी था उनमें से प्रत्येक का अलग-अलग विशेषण, विवेचन किया जाय तो प्रतीत होगा कि राम का पराक्रम जो विश्वामित्र के तप से ही प्रखर हुआ था, इन सभी रीछ, वानरों में अप्रत्यक्ष रूप से काम कर रहा था । उन सब की संयुक्त प्रक्रिया ही इसी प्रकार तात्विक विवेचना हो सकती है ।

इतिहास की पुनरावृत्ति भी होती रहती है । इन दिनों भी वैसा ही हो रहा है । रीछ, वानर, ग्वाल बाल, बौद्ध परिव्राजक, स्वतन्त्रता सेनानी आदि समुदायों की तरह प्राणवान प्रज्ञा पुत्रों की भी गणना हो सकती है । सामान्य मनुष्य तो नर पशुओं की तरह पेट प्रजनन मात्र के लिए जीवन गुजारते हैं, उन्हें लोभ, मोह एवं अहंकार से हट कर और कुछ सूझता ही नहीं, पर जिनमें देवत्व की सुसंस्कारिता विद्यमान है, वे देवमानवों की तरह जीते हैं । पुरुष से पुरुषोत्तम और नर से नारायण बनते हैं । विभूतियों को परमार्थ प्रयोजन के लिए स्वयं को युग धर्म के निर्वाह के लिए खपाते हैं । वे बीज के रूप में गलते और कल्पवृक्ष की तरह फलते हैं । अखण्ड-ज्योति परिजनों में से अधिकांश ऐसी ही स्थिति में हैं । अपने सम्पर्क क्षेत्र में वे सम्भवतः साधारण माने जाते हों, पर दिव्य दृष्टि से उनकी विशिष्टता प्रकट हुए बिना नहीं रहती ।

अगले दिन कठिन समस्याओं और संकटों से भरे हैं । उन्हें संघर्ष किए बिना निपटाया नहीं जा सकता । यह महामारी ऐसी नहीं है, जिसके लिए उपचारकर्त्ताओं की आवश्यकता न पड़े और अनायास ही निपट जाय । इस मुहीम पर अनेकों को मोर्चा सम्भालना पड़ेगा । इससे पूर्व अपनी निजी स्थिति को इतनी सुदृढ़ बनाना पड़ेगा, कि वह जहाँ भी गिरे इन्द्रवज्र जैसा धमाका करे । जहाँ भी जमे गंगावतरण जैसा दृश्य उपस्थित करके उठे ।

केन्द्रिय प्रयास द्वारा जाग्रत महाकुण्डलिनी का लाभ हर आवश्यकता के अवसर पर अपना चमत्कार दिखा सके । इसके लिए आवश्यक है इस सहकारी समिति के प्रज्ञा मण्डली के हर सदस्य के पास कुछ कारगर गोला बारूद हो । प्रयोजन को समझते हुए यह आवश्यक समझा गया है कि सभी साथी इस नव उपार्जित आध्यात्म सम्पदा में भागीदार बन जायें । एक पर आश्रित न रहा जाय और अनेकों में वह समर्थता भरी जाय जिससे असंख्य क्षेत्रों में अनेक प्रकार की अनेक समस्याओं का समाधान करने के लिए अनेक देव योद्धा कटिबद्ध खड़े मिल सकें । सेनापति की सूझ-बूझ भण्डारना कितनी ही बड़ी क्यों न हो, पर मोर्चे पर जूझते तो विभिन्न योग्यताओं और साधन उपकरणों वाले सैनिक ही हैं ।

रक्षा विभाग के सभी संचित सघन सैनिकों की क्षमता बढ़ाने में और आवश्यकता के समय उपकरणों को हाथों थमाने में संकोच नहीं किया जाता । संचित तपश्चर्या का अब वितरण विकेन्द्रीकरण चलेगा । इसमें उन सभी को भाग लेने का निमन्त्रण है जो संयम साधना के द्वारा अपना उदात्तीकरण करने में व्रतशील हो सकें । पानी कितना ही क्यों न बरसे, पर गड्ढे, तालाब, सरोवर में उसकी गहराई चौड़ाई के अनुसार ही जल जमा होता है । देने वाले की उदारता या सम्पदा बढ़ी-चढ़ी होना ही सब कुछ नहीं है । प्राप्तकर्त्ता में उसे पचाने की सामर्थ्य भी होनी चाहिए अन्यथा पकवान खाने पर वे अनावश्यक मात्रा में पेट खराब ही करते हैं । हाथ लगी दौलत दुर्व्यसनों में, चोर, ठगों में बँट जाती है । कुण्डलिनी जागरण का विधि विधान अति कठिन है । उसमें तनिक भी व्यतिक्रम रहने पर खतरे भरे जोखिम भी हैं । फिर उसके लिए भी तपश्चर्या करने योग्य प्रचण्ड मनोबल चाहिए । पात्रता का विकास करने वाली संयम साधना तो अनिवार्य है ही । समय भी लगता है । जो कार्य केन्द्र में तीन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्ष में हुआ है, उसे निजी रूप में करने पर सामान्य साधकों को न्यूनतम पचास वर्ष तो धैर्यपूर्वक लगाना ही चाहिए । इतना समय निकालना उपयुक्त स्थान में रहना, अनुकूल मार्ग दर्शन प्राप्त करते रहना कठिन है इसलिए इस आपत्तिकाल में कुण्डलिनी जागरण की व्यक्तिगत साधना कठिन तो नहीं बन पड़ेगी, पर उतना ही लाभ इस वितरण व्यवस्था के आधार पर पाया उठाया जा सकता है, जो इसी बसन्त पर्व से आरम्भ कर दी गई है । यह अनुदान लेना उन्हीं को चाहिए जो उसका उपयोग परमार्थ में कर सकें । परमार्थी का स्वार्थ तो उसी प्रकार सधता रहता है जिस प्रकार मेंहदीं पीसने वाले हाथ लाल हो जाते हैं । इत्र का व्यवसाय करने वाले के कपड़े अनायास ही महकने लगते हैं । परमार्थी को आत्म-सन्तोष, लोक-सम्मान और दैवी अनुग्रह के तीन लाभ तो सदा सर्वदा मिलते रहे हैं और मिलते रहेंगे ।

वितरण अनुदान को ग्रहण करने का तरीका अत्यन्त सरल है ।

"प्रातः सूर्योदय के एक घण्टा पूर्व से लेकर एक घण्टे बाद तक का समय उस ऊर्जा प्रवाह को सभी दिशाओं में बहाने का समय है । इस समय में से कोई भी पन्द्रह मिनट का समय अपने अधिग्रहण के लिए निश्चित किया जा सकता है । उस समय ध्यान और प्राणायाम की समन्वित विधा अपनायी जाय । साँस को धीमी गति से इस प्रकार खींचा जाय कि पेट और फेफड़े पूरी तरह भर जायें । फिर धीरे-धीरे उस संचित वायु को इस प्रकार निकाला जाय कि पूरी वायु बाहर निकल जाय । यह पूरक-रेचक हुआ । इस अवसर पर रोकने की, "कुम्भक" की आवश्यकता नहीं है ।

"प्राण प्रक्रिया के साथ-साथ ध्यान धारणा भी जुड़नी है । प्रभात कालीन स्वर्णिम सूर्य हिमालय से उदय होता हुआ आँखें बन्द करके भाव नेत्रों से देखा जाय । प्राणायाम के साथ उदीयमान सूर्य की प्राण ऊर्जा अपनी समग्र सत्ता में ओत-प्रोत हुआ विश्वासपूर्वक माना जाय ।"

"जीवात्मा के तीन उदाहरण हैं—(१) स्थूल शरीर, (२) सूक्ष्म शरीर, (३) कारण शरीर । स्थूल शरीर का संचार चक्र है—नाभिकमल । सूक्ष्म शरीर का केन्द्र है—हृदय कमल । तीसरे कारण शरीर का मध्य बिन्दु है—ब्रह्मरंध्र । सहस्त्रार कमल सूर्य की ऊर्जा पहुँचते ही कमल पुष्प भी अन्यान्य पुष्पों की भाँति खिल पड़ते हैं । खिल पड़ने का अर्थ है—शोभा सुषमा, प्रौढ़ता युक्त होना और अपनी गंध गरिमा बिखेरने लगना । हिमालय के ध्रुव स्थान से उदय होने वाले सविता का ध्यान युक्त प्राणायाम करने से नाभिकमल में कुण्डलिनी प्राण प्रवाह, हृदय कमल में शौर्य-साहस, सहस्त्रार कमल में विवेक आत्मबल जाग पड़ता है । नाभिकमल में ओजस् हृदय कमल में तेजस् और ब्रह्मकमल में वर्चस् का भण्डार है । उपरोक्त ध्यान से यह तीनों ही प्रस्फुटित, प्रज्वलित, प्रकीर्ण होते हैं ।" पन्द्रह मिनट की दैनिक साधना में पाँच-पाँच मिनट इन तीनों केन्द्रों में सविता तेजस् भरते-विभाजित करते हुए समष्टि प्राण का प्राणायाम करते रहना चाहिए ।

इतनी भर सरल साधना संग्रहीत केन्द्रीय कुण्डलिनी भण्डार में साझीदार बनने की है । इसके लिए स्नान का नियत स्थान का बँधन तो नहीं है, पर यथा सम्भव अधिकाधिक शुद्ध वातावरण का प्रबन्ध करना चाहिए । कुछ ही दिनों में शरीर में स्फूर्ति, मन में उमंग और ब्रह्मरन्ध्र में भाव सम्वेदना बहने लगती है । यह निजी अनुभूति का प्रसंग है ।

दूसरे व्यक्तियों या विपन्न परिस्थितियों का सन्तुलन बनाने के लिए इस शक्ति का कब, कितना, किस प्रकार प्रयोग करना चाहिए ? इसके लिए केन्द्रिय सत्ता से परामर्श कर लेना चाहिए । अनुपयुक्तता से निपटने के लिए इस उपलब्धि को ब्रह्मरन्ध्र, ब्रह्मपाश, ब्रह्मशाप, ब्रह्मशास्त्र के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है । जिन सत्प्रवृत्तियों का उन्नयन, अभिवर्धन, अभ्युदय करना हो, वहाँ इसे प्रेरणा, प्रतिभा प्रखरता के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है ।

अगले दिनों दुहरे प्रयोजनों की पूर्ति करनी होगी । सत्प्रवृत्तियों का सम्वर्धन और दुष्प्रवृत्तियों का उन्मूलन । दोनों ही प्रयोग अपने-अपने स्थान पर उपयुक्त एवं आवश्यक हैं । उन्मूलन का प्रयोजन, अधर्म का निराकरण, सम्वर्धन का प्रयोजन, धर्म चेतना का अभ्युदय है । इन क्षेत्रों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाने से ही असंख्य समस्याएँ एवं आपत्तियाँ उत्पन्न होती हैं । इनका सन्तुलन बनाने के लिए दमन और उन्नयन के दोनों ही उपचार अपनाने पड़ते हैं ।

अभी वातावरण संशोधन के लिए रूठी प्रकृति को मनाने के लिए केन्द्रीय प्रयास ही अपनी महती भूमिका निभा रहे हैं । वायुमण्डल के परिस्थिति प्रवाह के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुकूलन के लिए परिजनों द्वारा सम्मिलित गायत्री महायज्ञों की शृंखला चल रही है । इस बसन्त पर्व से उसमें प्रज्ञा संकीर्तनों की एक नई धारा का समन्वय किया गया है । साथ ही सभी सहयोगियों को कहा गया है कि वे तपश्चर्या के रूप में चतुर्विधि संयम साधना को अपनी सामर्थ्य भर अपनाते रहें । इन्द्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम, विचार संयम इन चारों की समन्वित विधि व्यवस्था व्यावहारिक जीवन में समाविष्ट करते रहने को सर्व-सुलभ तप साधना कह सकते हैं । इनका जिससे जितना निर्वाह होता रहेगा, उनके लिए उतना ही कुण्डलिनी अनुदान बटोर सकना सम्भव बन पड़ेगा । समयानुसार वे उसका उन्नयन, उपचार अथवा दमनात्मक प्रहार भी कर सकेंगे ।

परिजनों में से जो इस अनुदान को समेटने के लिए लग पड़े हों उन्हें अपना नाम शान्ति कुंज में नोट करा देना चाहिए ताकि उनके लिए प्रेषण की समुचित मात्रा उपलब्ध कराई जाती रहे और जब जरूरी हो, परिवर्तन, परिवर्धन या मार्गदर्शन भी प्रस्तुत किया जाता रहे ।

जो इस अनुदान शृंखला में जुड़ रहे हों उन्हें अपनी स्थिति फायर बिग्रेड़ या जेनरेटर की जैसी समझनी चाहिए और आवश्यकतानुसार अपनी भूमिका निभाने के लिए तैयार रहना चाहिए । फायर ब्रिगेड जलाशय से पानी खींचता है और जहाँ अग्नि काण्ड की विभीषिका उबल रही है, वहाँ अपनी तेज धारा से पानी उलीच कर उपद्रव को शान्त करता है । अगले दिनों ऐसे अवसर आ सकते हैं, जब व्यापक अग्निकाण्ड का शमन करने के लिए अनेकों फायरब्रिगेड शमन पानी उलीचने के लिए लगाने पड़ें । पानी की अथाह गहराई वाली टंकी हिमालय के ध्रुव केन्द्र में विद्यमान है । उससे प्रत्यक्ष साधना हो तो शान्ति कुंज को देखा, टटोला जा सकता है ।

जिस अभिनव सृष्टि की संरचना की जा रही है उसका सूत्रधार तो अपना गायत्री परिवार ही है । इसमें उन आत्माओं का अवतरण हुआ है, जो अगले दिनों अपनी आत्म शक्ति से युग को नेतृत्व प्रदान करेंगी और लोगों का आध्यात्मिक, धार्मिक मार्ग-दर्शन करेंगी । यह कार्य वे अपने वर्तमान स्तर और एकाकी बल-बूते पर नहीं कर सकते । उन्हें तप साधना की अनिवार्य आवश्यकता है, उसी के लिए यह नौ-नौ दिनों की अभिनव सूत्र शृंखला प्रारम्भ की गई है । सेनापति संगठन करता है और योजनाएँ बनाता है पर लड़ने वाले सैनिक ही होते हैं । वे सेनापति की योग्यता वाले न हों तो न सही, पर उसके संरक्षण में युद्ध प्रशिक्षण तो उन्हें भी लेना पड़ता है । इन पंक्तियों में ऐसे सभी मनस्वी साधकों को युग नेतृत्व के लिए आमन्त्रित किया जा रहा है । वे अपने अन्तरंग में विद्यमान देवाधिदेव आत्म देव को पहचानें और उसे परिपुष्ट करने के लिए इन शिविरों में शान्ति कुंज आयें ।

सूक्ष्मीकरण साधना से इतनी शक्ति तो प्राप्त हो ही गई है कि जिससे यहाँ न आ सकने वाले प्रज्ञा परिजन भी अपने घरों पर १५ मिनट की शक्ति संचार साधना (जिसका उल्लेख उपरोक्त पंक्तियों में किया गया है) से लाभान्वित हो सकते हैं । कहा जा चुका है कि सूर्योदय से आधा घण्टे पूर्व से आधा घण्टे बाद तक के समय में १५ मिनट शक्ति संचार के लिए नियत रखें । साधकों को प्राणाकर्षण प्राणायाम के साथ हिमालय के ध्रुवकेन्द्र का ध्यान करना चाहिए । प्राण प्रवाह तेजी से दौड़ता हुआ आ रहा है । रोम-रोम में समा रहा है । तीनों कमल (स्थूल शरीर का नाभि कमल, सूक्ष्म का हृदय कमल तथा कारण का सहस्रार कमल) खिलते जा रहे हैं । ५-५ मिनट तीनों कमल जाग्रत करने का ध्यान करना चाहिए । इससे उन्हें न्यूनाधिक मात्रा में शान्ति कुंज के साधना सत्रों में आने जैसा लाभ मिलेगा ।

दैनिक जीवन में ज्ञानयोग की साधना गायत्री उपासना के रूप में, सप्ताह में एक दिन यज्ञ कर्मयोग की साधना और प्रज्ञा संकीर्तन भक्तियोग की साधना के अन्तर्गत जहाँ भी प्रज्ञा परिजन हों मिलकर चलायें । इससे देवात्मा भारत की महाशक्ति कुण्डलिनी का जागरण सुनिश्चित होकर रहेगा ।

परिजनों के लिए विशेष साधना उपक्रम

पिछली पंक्तियों में हमने परिजनों से अपनी तप-साधना में सहभागी बनने हेतु आग्रह किया था । इस उपक्रम में उन्हें पन्द्रह-पन्द्रह मिनट तीन बार की त्रिकाल संध्या के रूप में उपासना, साधना, आराधना के निमित्त सुनिश्चित रूप से निकालना चाहिए ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपासना—प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त होकर एक माला गायत्री जप आत्मोत्कर्ष के लिए एवं एक माला वातावरण परिवर्तन के लिए करना चाहिए ।

साथ ही आत्मा को परमात्मा के साथ लिपट जाने का भाव भी करना चाहिए । ईंधन आग की तरह, नाले नदी की तरह, बिन्दु-सिन्धु की तरह-पतंगें दीपक की तरह । आदर्शों के समुच्चय विराट् ब्रह्म के साथ अपनी सत्ता इसी प्रकार करनी चाहिए । बंसुरी वादक की तरह, पतंग उड़ाने वाले की तरह उसी के संकेतों पर चलने का निश्चय करना चाहिए ।

साधना—मध्याह्न काल में जीवन साधना के लिए पन्द्रह मिनट एकान्त चिन्तन मनन हेतु निकालना चाहिए इसमें आत्म समीक्षा-आत्म सुधार की योजना-आत्म निर्माण की विधा और आत्म विकास की स्थिति प्राप्त करने का विचार करना चाहिए । वर्तमान स्थिति में जो बन सकता हो, उसका ताना-बाना बुनना चाहिए ।

चार संयम ही तप हैं । इन्द्रिय, अर्थ, समय और विचारों में से एक भी विभूति का अपव्यय न किया जाय । न्यूनतम में निर्वाह करने और परिवार छोटा स्वावलम्बी बनाने की नीति अपनानी चाहिए । सादा जीवन उच्च विचार की रीति-नीति का निर्वाह करने से अपने पास बहुत कुछ बचने लगेगा । आठ घण्टा कमाने के, सात घण्टा सोने के, पाँच घण्टा फुटकर कामों में लगने पर कुल बीस घण्टे निजी कामों में खर्च करने के उपरान्त भी चार घण्टे बचते हैं, जिनका सुनियोजन हो सकता है यह इस पर निर्भर है कि स्वंय को कितना कसा गया ।

आराधना—सांयकाल सोते समय आराधना का पर्यवेक्षण करने के लिए बिस्तर पर पड़े-पड़े विचार करना चाहिए कि आज के समय, श्रम, वैभव एवं ज्ञान में से कितना अंश लोक मंगल के निमित्त लगा ? नहीं लगा तो क्यों नहीं लगा ? भविष्य में उन कारणों को दूर करना चाहिए जिनसे कि अपनी विभूतियाँ युगधर्म के लिए लग नहीं पातीं । शरीर से बढ़कर महत्त्व यदि आत्मा को मिले तो कोई कारण नहीं कि सारा समय और वैभव पेट प्रजनन के लिए ही लगे । समय की पुकार सर्वथा अनसुनी नहीं करनी चाहिए । चारों ओर के परिवेश से स्वयं को न प्रभावित होने देकर आत्मा की पुकार पर चलना चाहिए ।

प्रातःकाल आत्मा को परमात्मा से लिपटा देना, मध्यान्ह की बचत योजना कार्यान्वित करना और सायंकाल युगधर्म के लिए किए गए पुण्य परमार्थ का लेखा-जोखा लेना । संक्षेप में यही है उपासना, साधना, आराधना की विधा जिसे जीवन चर्या के साथ गूँथने पर जीवन त्रिवेणी संगम जैसा पवित्र, प्रखर और प्रामाणिक बनता है और फिर काक के पिक एवं बगुले के हंस बनने में कोई बाधा मार्ग में नहीं आती ।

युगधर्म हेतु क्या किया जाय, इसके लिए यही पर्याप्त है कि विचार क्रान्ति ही अपने समय का युगधर्म है । इसके लिए समयदान-अंशदान की श्रद्धान्जलि आवश्यक है ताकि झोला पुस्तकालय, ज्ञानघट के रूप में स्वाध्याय क्रम एवं जन्मदिवसोत्सव, कथा पुराण के रूप में सत्संग क्रम चल पड़े । जो पूरा समय दे सकने की स्थिति में हों वे शान्ति कुंज को अपना घर बनाने की सोचें एवं समाज सेवा हेतु स्वयं को खपाकर उस ऋण से मुक्त होने की योजना बनायें जो अभी तक उन पर लदा है । उनके लिए क्या कैसी योजना है इसका स्वरूप अगले लेखों में है ।

मिलन प्राणायाम—प्रातःकाल सूर्योदय के समय चौबीस प्राणायाम करते रहने के रूप में प्रज्ञापरिजनों के लिए विशेष सम्पर्क स्थापन क्रम बनाया गया है । दिव्य प्रेरणा की लहरें उस समय विशेष रूप से संप्रेषित होती हैं । उन्हें खींचने और धारण करने की भावना साँस खींचते समय करनी चाहिए ।

इन श्वासों के साथ कुछ विशेष संदेश संकेत हैं । दिव्यसत्ता के साथ मिलन, गुंथन एवं एकात्म अद्वैत स्थिति का अनुभव होगा । दिव्य प्राण समस्त नस-नाड़ियों में संव्याप्त होता प्रतीत होगा । श्वास खींचने और छोड़ने के इस प्राणायाम उपक्रम में भावना करनी चाहिए कि लोभ, मोह और अहंकार के तीनों भव बन्धन पलायन कर रहे हैं । आत्मा सद्भावना, सद्विचारणा और सद्क्रिया परायणता से उल्लसित हो रहा है ।

ये सभी उपक्रम उस युग सन्धि बेला में हमारी परोक्ष साधना के रूप में सतत निभाये जाते रहें ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चमत्कारी, किन्तु सर्वथा हानि रहित विशेष साधनाएँ

अन्तःकरण की गहन परतों तक जिन योग साधनाओं की पहुँच है, उनमें (१) बिन्दु योग, (२) कला योग, (३) लय योग और (४) नाद योग का प्रमुख माना गया है । इनमें मान्यता, भावना एवं आकांक्षा क्षेत्रों में सुधार परिवर्तन कर सकने की विशिष्ट क्षमता है । स्थूल, सूक्ष्म और कारण—तीनों ही शरीरों की चेतना क्षेत्रों को अधिक परिष्कृत, अधिक प्रखर एवं अधिक समर्थ इन चारों साधनाओं द्वारा बनाया जा सकता है ।

ज्योति अवतरण की बिन्दुयोग साधना

साधना ग्रन्थों में बिन्दुयोग का उल्लेख विस्तार पूर्वक है । ध्यान के लिए किसी बिन्दु विशेष पर मन को केन्द्रित किया जाता है । देवताओं की प्रतिमाएँ उसी प्रयोजन के लिए गढ़ी गई हैं । जब ध्यान साकार भूमिका की प्रथम कक्षा से ऊँचा उठकर प्रकाश तत्व पर केन्द्रित किया जाता है तो उसे बिन्दुयोग कहते हैं । बिन्दुयोग अर्थात् प्रकाश केन्द्र पर ध्यान धारणा को केन्द्रीभूत करके अन्तर्जगत में दिव्य आलोक का आविर्भाव करना । योगाभ्यास में इसका प्रथम पाठ त्राटक साधना के रूप में कराया जाता है । पीछे इसी का उच्चस्तर विकसित होकर आत्म-ज्योति एवं ब्रह्म-ज्योति दर्शन के रूप में परिणत विकसित हो जाता है, तब फिर किसी त्राटक के लिए प्रकाशोत्पादक दीपक आदि भौतिक उपकरणों की भी आवश्यकता नहीं पड़ती ।

बिन्दुयोग की साधना के लिए प्रायः सुबह का समय निर्धारित है । त्राटक अभ्यास करना इस साधना का प्रथम चरण है । इसे पन्द्रह मिनट करने और शेष आधा घण्टा अपनी समग्र सत्ता को दिव्य प्रकाश से ओत-प्रोत स्थिति की अनुभूति में लगाया जाता है ।

बिन्दु-साधना का एक अर्थ ब्रह्मचर्य है । इस बिन्दु का अर्थ 'वीर्य' भी है । आनन्दमय कोश की साधना में बिन्दु का अर्थ होगा—प्रकाश परमाणु । सूक्ष्म-से-सूक्ष्म जो अणु है, वहाँ तक अपनी गति हो जाने पर भी ब्रह्म की समीपता तक पहुँचा जा सकता है और सामीप्य-सुख का अनुभव किया जा सकता है । यह बिन्दु अपनी आत्मसत्ता ही हो सकती है । शास्त्रों में बिन्दु-साधना का महत्त्व इस प्रकार वर्णित है—

"सिद्धे बिन्दौ महादेवि किं न सिध्यति भूतले ।"

"हे पार्वती ! बिन्दु के सिद्ध हो जाने पर ऐसी कौन-सी सिद्धि है, जो साधक को प्राप्त न हो सके ।"

किसी वस्तु को कूटकर यदि चूर्ण बनालें और चूर्ण को खुर्दबीन से देखें, तो छोटे-छोटे टुकड़ों का एक ढेर दिखाई पड़ेगा । यह टुकड़े कई और टुकड़ों से मिलकर बने हैं । इन्हें भी वैज्ञानिक यन्त्रों की सहायता से कूटा जाय, तो अन्त में जो न टूटने वाले, न कुटने वाले टुकड़े रह जायेंगे, इन्हें परमाणु कहेंगे । इन परमाणुओं की लगभग सौ से अधिक जातियाँ अब तक पहचानी जा चुकी हैं, जिन्हें अणुतत्व कहा जाता है ।

अणुओं के दो भाग हैं—एक सजीव, दूसरा निर्जीव । दोनों ही एक पिण्ड या ग्रह के रूप में पूर्ण मालूम पड़ते हैं । पर वस्तुतः उनके भीतर और भी टुकड़े हैं । प्रत्येक अणु अपनी धुरी पर बड़े वेग से परिभ्रमण करता है । पृथ्वी भी सूर्य की परिक्रमा के लिए प्रति सेकण्ड १८$\frac{१}{२}$ मील की चाल से चलती है, पर १०० परमाणुओं की गति चार हजार मील प्रति सेकण्ड मानी जाती है ।

ये परमाणु भी अनेक विद्युत कणों से मिलकर बने हैं, जिनकी दो जातियाँ हैं—(१) ऋण-कण और (२) धन-कण । धन-कणों के चारों ओर ऋण-कण प्रति सेकण्ड एक लाख अस्सी हजार मील की गति से परिभ्रमण करते हैं । उधर धन-कण, ऋण की परिक्रमा के केन्द्र होते भी शान्त नहीं बैठते । जैसे पृथ्वी सूर्य की परिक्रमा लगाती है और सूर्य अपने सौर मण्डल को लेकर कृतिका नक्षत्र की परिक्रमा करता है, वैसे ही धन-कण भी परमाणु की 'अन्तरगति' का कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं । ऋण-कण, जो कि द्रुत गति से निरन्तर परिभ्रमण में संलग्न हैं, अपनी शक्ति सूर्य से अथवा विश्व व्यापी अग्नि-तत्व से प्राप्त करते हैं ।

वैज्ञानिकों का कथन है कि यदि एक परमाणु के अन्दर का शक्ति-पुंज छूट पड़े तो क्षणभर में लन्दन जैसे तीन नगरों को भस्म कर सकता है । इस परमाणु के विस्फोट की विद्या मालूम करके ही एटम बम का आविष्कार हुआ है । एक परमाणु के फोड़ देने से जो भयंकर विस्फोट होता है, उसका परिचय गत महायुद्ध में मिल चुका है, इसकी और भी भयंकरता का पूर्ण प्रकाश होना अभी बाकी है, जिसके लिए वैज्ञानिक लगे हुए हैं ।

यह तो परमाणु-शक्ति की बात रही । अभी उनके अंग—ऋण-कण और धन-कणों के भी सूक्ष्म भागों का पता चला है । वे भी अपने से अनेक गुने सूक्ष्म परमाणुओं से बने हुए हैं, जो ऋण-कणों के भीतर एक लाख छियासी हजार तीन सौ तीस मील प्रति सेकण्ड की गति से परिभ्रमण करते हैं । अभी उनके भी अन्तर्गत कर्षाणुओं की खोज हो रही है और विश्वास किया जाता है कि उन कर्षाणुओं की अपेक्षा ऋण-कण तथा धन-कणों की गति तथा शक्ति अनेकों गुनी है । उसी अनुपात से इन सूक्ष्म, सूक्ष्मतर और सूक्ष्मतम अणुओं की गति तथा शक्ति होगी ।

जब परमाणुओं के विस्फोट की शक्ति लन्दन जैसे तीन शहरों को जला देने की है, तो सर्गाणु की शक्ति एवं गति की कल्पना करना भी हमारे लिए कठिन होगा । उसके अन्तिम सूक्ष्म केन्द्र को अप्रतिम, अप्रमेय, अचिन्त्य ही कह सकते हैं ।

देखने में पृथ्वी चपटी मालूम पड़ती है पर वस्तुतः वह लट्टू की तरह अपनी धुरी पर घूमती रहती है । चौबीस घण्टे में उसका एक चक्कर पूरा हो जाता है । पृथ्वी की दूसरी चाल भी है, जो सूर्य की परिक्रमा करती है । इस चक्कर में उसे एक वर्ष लग जाता है । तीसरी चाल पृथ्वी की यह है कि सभी अपने ग्रह-उपग्रहों को साथ लेकर बड़े वेग से अभिजित नक्षत्र की ओर जा रही है । अनुमान है कि वह कृतिका नक्षत्र की परिक्रमा करता है, इसमें पृथ्वी भी उसके साथ है । लट्टू जब अपनी कील पर घूमता है, तो वह इधर-उधर झुकता-उठता भी रहता है, इसे मँडराने की चाल कहते हैं । जिसका एक चक्कर करीब २६ हजार वर्ष में पूरा होता है । कृतिका नक्षत्र भी सौर-मण्डल आदि में अपने उपग्रहों को लेकर ध्रुव की परिक्रमा करता है, उस दशा में पृथ्वी की गति पाँचवी हो जाती है ।

सूक्ष्म परमाणु के सूक्ष्मतम भाग तक मानव-बुद्धि की पहुँच हुई है और बड़े-से-बड़े महापरमाणुओं के रूप में पाँच गति तो पृथ्वी की विदित हुईं । आकाश के असंख्य ग्रह-नक्षत्रों का पारस्परिक सम्बन्ध न जाने कितने बड़े महा अणु के रूप में पूरा होता होगा, उस महानता की कल्पना भी मस्तिष्क को थका देती है । इसे भी अप्रतिम, अप्रमेय और अचिन्त्य ही कहा जायेगा।

सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और महत्-से-महत् केन्द्रों पर जाकर बुद्धि थक जाती है और उससे छोटे या बड़े की कल्पना नहीं हो सकती, उस केन्द्र को बिन्दु कहते हैं ।

अणु को योग की भाषा में 'अण्ड' भी कहते हैं । वीर्य का एक कण 'अण्ड' है । वह इतना छोटा होता है कि दुर्बीन से भी मुश्किल से ही दिखाई देता है, पर जब वह विकसित होकर स्थूल रूप में आता है, तो वही बड़ा अण्डा हो जाता है । उस अण्डे के भीतर जो पक्षी रहता है, उसके अनेक अंग-प्रत्यंग होते हैं, उन विभागों में असंख्य सूक्ष्म विभाग और उनमें भी अगणित कोपांड रहते हैं । इस प्रकार शरीर भी एक अणु है, इसी को अण्ड या पिण्ड कहते हैं । अखिल विश्व ब्रह्माण्ड में अगणित सौर मण्डल, आकाश-गंगा और ध्रुव-चक्र है ।

इन ग्रहों की दूरी और विस्तार का कुछ ठिकाना नहीं । पृथ्वी बहुत बड़ा पिण्ड है, पर सूर्य तो पृथ्वी से भी तेरह लाख गुना बड़ा है । सूर्य से भी करोड़ों गुने ग्रह आकाश में मौजूद हैं । इनकी दूरी का अनुमान इससे लगाया जाता है कि प्रकाश की गति प्रति सेकण्ड पौने दो लाख मील है और उन ग्रहों का प्रकाश पृथ्वी तक आने में तीस लाख वर्ष लगते हैं । यदि कोई ग्रह आज नष्ट हो जाय, तो उसका अस्तित्व न रहने पर भी उसकी प्रकाश-किरण आगामी तीस लाख वर्ष तक यहाँ आती रहेंगी । जिन नक्षत्रों का प्रकाश पृथ्वी पर आता है, उनके अतिरिक्त ऐसे ग्रह बहुत अधिक हैं, जो अत्यधिक दूरी के कारण पृथ्वी पर दूरबीनों से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भी दिखाई नहीं देते । इतने बड़े और दूरस्थ ग्रह जब अपनी परिक्रमा करते होंगे, अपने ग्रह-मण्डल को साथ लेकर परिभ्रमण को निकलते होंगे, तो वे अपने अधिक विस्तृत शून्य में घूम जाते होंगे, उस शून्य के विस्तार की कल्पना कर लेना मानव-मस्तिष्क के लिए बहुत कठिन है ।

इतना बड़ा ब्रह्माण्ड भी एक अणु या अण्ड है । इसलिए उसे ब्रह्म + अण्ड=ब्रह्माण्ड कहते हैं । पुराणों में वर्णन है कि जो ब्रह्माण्ड हमारी जानकारी में है, उसके अतिरिक्त भी ऐसे ही और अगणित ब्रह्माण्ड हैं और उन सबका समूह एक महान अण्ड है । उस महा अण्ड की तुलना में पृथ्वी में पृथ्वी उससे छोटी बैठती है, जितना कि परमाण की तुलना में सर्गाणु छोटा होता है ।

इस लघु-से-लघु और महान-से-महान पिण्ड में जो शक्ति व्याप्त है । जो इन सबको गतिशील, विकसित, परिवर्तित और चैतन्य रखती है उस सत्ता को 'बिन्दु' कहा गया है । यह बिन्दु ही परमात्मा है, उसी को छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा कहा जाता है । "अणोरर्णयान् महतोमहीयान्" कहकर उपनिषदों ने उस परब्रह्म का परिचय दिया है ।

जर्मन दार्शनिक इमेन्युएल कांट ने इन दोनों शक्तियों के सम्बन्ध में अपनी एक पुस्तक के उपसंहार में लिखा है—

"संसार में मुझे केवल दो बातों से भय लगता है—पहली बात यह है कि जब मैं रात को सितारों से भरे आकाश की ओर देखता हूँ तो मेरे मन में विचार आता है कि यह सृष्टि कितनी विशाल है । जिस तरह से पृथ्वी को भी वैज्ञानिक एक सितारा मानते हैं, केवल इसी की विशालता का अनुमान लगायें, तो मस्तिष्क चकराने लगता है । इससे सूर्य पाँच लाख गुना बड़ा है । सूर्य से बड़ा एक ज्येष्ठा तारा है, जो उससे कई लाख गुना बड़ा है । पृथ्वी सूर्य के आस-पास चक्कर काट रही है । इसका नियन्त्रण कैसे होता है और कौन करता है ? इन लाखों-करोड़ों तारों को देखकर तो मुझे भय लगता है । विचार आता है कि उनका संचालक कितना शक्तिशाली है, कितना महान है ? उसके सामने मेरी शक्ति कितनी सीमित है, नगण्य है । जब सृष्टि के संचालक की असीम शक्ति और अपनी सीमित शक्ति में बहुत अन्तर पाता हूँ तो मुझे भय लगता है, मेरा मन काँप उठता है ।.....

.....दूसरे प्रकार के भय का कारण यह है कि मैं जब कोई बुरा काम करने लगता हूँ तो मेरे अन्तर से एक शक्तिशाली आवाज आती है कि यह अनुचित कार्य है, इसे मत करो । उस ध्वनि में एक प्रकार का अनुशासन होता है, आज्ञा होती है । ऐसा लगता है कि वह मुझसे बड़ा है, जो अधिकारपूर्वक आदेश देता है । तब मैं सोचता हूँ कि जिस प्रकार का आदेश मेरे अन्तर में आता है, उस प्रकार का जीवन मैं नहीं बना पाता । जब उस आदेश और अपने जीवन की यथार्थता की बात मेरे मन में आती है, तो मुझे भय लगता है क्योंकि उन दोनों में बहुत अन्तर है ।"

आगे कांट साहब लिखते हैं—"आकाशस्थ तारों का संचालन करने वाली महान शक्ति और मेरे अन्दर छिपी शक्ति मुझे एक ही जान पड़ती है ।"

तान्त्रिक शास्त्रियों ने विभिन्न प्रकार से बिन्दु की परिभाषा की है । कहा है कि "यह बिन्दु शक्ति की वह अवस्था विशेष है, जहाँ से उसकी सृष्टि-क्रिया प्रारम्भ होती है । बिन्दु-तत्वों को ईश्वर तत्व के नाम से भी पुकारते हैं । इस अवस्था में शक्ति चिद्रूपिणी होकर अव्यक्त इदम् को तादात्म्य-भाव में लाकर उसके साथ चिद्बिन्दु का रूप धारण करती है । दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि इस अवस्था में (अहम्) अपनी चेतना में अखिल (इदम्) को देखता है ।"

पांचरात्र और भागवत सम्प्रदाय में वैष्णव आगम के अन्तर्गत जो 'विशुद्ध तत्व' कहा जाता है, उसी को बिन्दु कहते हैं ।

शिव की समवायिनी शक्ति दो तरह की है—एक ज्ञान-शक्ति और दूसरी क्रिया-शक्ति । क्रिया-शक्ति को ही 'बिन्दु' नाम से अभिहित किया गया है ।

महामहोपाध्याय पं. गोपीनाथ कविराज ने अपनी पुस्तक 'भारतीय संस्कृति और साधना' में लिखा है—

"तत्वातीत अवस्था में शिव और शक्ति का सामंजस्य रहता है । उस समय शिव-शक्ति के गर्भ में अन्तःसंहृत भाव से अर्थात् शक्ति के साथ अभिन्न रूप से विद्यमान रहता है । परन्तु जब पराशक्ति स्वेच्छा से अपने स्फुरण को स्वयं ही देखती है, तभी विश्व की सृष्टि होती है, वस्तुतः इस स्फुरण का दर्शन

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही विश्व-दर्शन है और विश्व-दर्शन ही सृष्टि है । इस अवस्था में दृष्टि ही सृष्टि है । अनुत्तर दशा में स्वरूप में अभिन्नतया रहने पर भी विश्व देखा नहीं जाता । इसी से वह अवस्था सृष्टि-व्यापार नहीं है । इस दृष्टि या सृष्टि व्यापार में शिव तटस्थ रहते हैं । उनकी स्वरूपभूता स्वतान्त्र्य-शक्ति ही सब कुछ करती है । शिव अग्निस्वरूप हैं, संवर्त्तानल अथवा प्रलयानल स्वरूप । शक्ति सोमस्वरूपा । दोनों का साम्य ही तान्त्रिक भाषा में बिन्दु नाम से कहा जाता है ।"

एक अन्य मनीषी वीरमणि प्रसाद उपाध्याय के अनुसार "परशिव-स्वरूप प्रकाश जब प्रपंच के अनुसंधान अथवा उन्मीलन की इच्छा से अपने में ही विश्रांत, परा, प्रकृति, माया, अविद्या आदि पदों से व्यवहियमाण, जगद्बीजभूत विमर्श को परमार्थतः अपने में ही कायम रखते हुए भी बाह्य-सा विसर्जन करता है, तब विमर्श 'विसृज्यते इति विसर्गः' इस व्युत्पत्ति के अनुसार 'विसर्ग' कहलाता है । पुनः वही शिवरूप प्रकाश जब प्रपंच के संहार अर्थात् निगिरण की इच्छा से प्रकृति को अपने में निमीलित करने लगता है, तब प्रकाश 'विन्द्यतेऽविच्छद्यत' इस व्युत्पत्ति के अनुसार बिन्दु कहलाता है ।

डॉ. शिवशंकर अवस्थी ने 'मन्त्र और मातृकाओं का रहस्य' पुस्तक में इसका विभिन्न प्रकार से स्पष्टीकरण किया है ।

समस्त सृष्टि-चक्र का मूल बिन्दु के नाम से अविहित किया गया है । यह आख्या वस्तुतः आकारहीन ब्रह्म के सृष्टिरूप मन्त्र की रचना के अनुरूप ही है । अपार संसार के विविध भावी स्थूल आकार-प्रकारों को अपने में सूक्ष्म रूप से समेटे हुए अवांगमनसगोचर पर-तत्व सर्वप्रथम बिन्दु के रूप में आकलित होता है । शब्दातीत परतत्व की ही संज्ञा महाबिन्दु है, जिसे अनिर्देश्य, अग्राह्य, अशन आदि निषेधों द्वारा कहा जाता है ।

जगत रूप अंकुर का कन्द होने के कारण उसे ही कारण-बिन्दु कहते हैं । प्रपंचसार तन्त्र में कहा गया है—

विचिकीर्षुर्घनीभूता सा चिन्त्येति बिन्दुताम् ।

—(प्र. सा. प्रथम पटल)

अर्थात्—"विशेष रूप से करने की इच्छा वाला पुरुष का वह घनीभूत ज्ञान बिन्दु के स्वरूप को प्राप्त हो जाता है ।"

कर्माभिन्न रूप ही बिन्दु है । प्रकृति का ही, प्रलयावस्था से जो परिपक्व दशा के अनन्तर सृष्ट्युन्मुख कर्मों से अभिन्न, स्व-आकार से निरूपित रूप है, वही बिन्दु है ।

कार्य, बिन्दु, नाद और बीज का—पश्यन्ती, मध्यमा और वैखरी के रूप में वर्णन किया गया है । चित्प्रधान काल-लक्षण ईश्वर ही कार्य-बिन्दु है । आचार्य पद्मपाद ने लिखा है—"यह बिन्दु परम पुरुष रूप है ।"

ह्लाद, तीक्ष्णता और दाहकता से अविच्छिन्न, प्रमाण, प्रमेय और परिमित प्रभात रूप सोम, सूर्य और अग्नि की आश्रयभूत क्रियाशक्ति के भिन्न-भिन्न रूपों से प्रस्फुरित होने पर भी उपाधिशून्य, पूर्ण, पर-प्रकाश, विदिक्रिया में स्वतन्त्र, पर-प्रमातृ रूप परमेश्वर शिव ही बिन्दु के नाम से कहे जाते हैं ।

'तत्व रक्षा-विधान' नामक ग्रन्थ में स्वयं परमेश्वर ने हृदय, भ्रूमध्य, द्वादशान्त—स्थानों में विश्रांति-भेद से नर, शक्ति, शिवात्मक, इच्छाद्दात्मक तथा शिवतत्व, विद्यातत्व और आत्मतत्व के रूप में वेदयिता पर प्रकाश रूप बिन्दु ही विश्व के अवभासन की इच्छा से प्रस्फुरित होता है, ऐसा कहा है ।

बिन्दु का स्थान आज्ञाचक्र के बाद बतलाया जाता है । योग की भाषा में इसे तृतीय नेत्र और ज्ञान-चक्षु भी कहते हैं ।

ध्यानबिन्दूपनिषद् (३७) में बिन्दु-साधक को वेदज्ञ माना गया है—

"तैलधारामिवाच्छिन्नं दीर्घघण्टानिनादवत् ।
अवाच्यं प्रणवस्याग्रं यस्तं वेद स वेदवित् ॥"

अर्थात् "तेल की धारा के समान अविच्छिन्न और दीर्घ घण्टा निनाद के सदृश्य बिन्दु, नाद, कला से अतीत को जो जानता है, वह वेदज्ञ है ।"

तन्त्राचार्यों ने ईश्वर-साक्षात्कार के लिए बिन्दु-साधना को आवश्यक बताया है—"बिन्दु की बात पहले ही कही गई है । इस भूमि में ज्योतिर्मय ज्ञानरूप से ईश्वरबोध की सूचना होती है । यहाँ प्रवेश हुए बिना जागतिक ज्ञान विलुप्त नहीं हो सकता ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाधिजनित प्रज्ञा से यह ऊपरी अवस्था है, समाधिजनित ज्ञान उत्कृष्ट होने पर भी जागतिक ज्ञान ही है । किन्तु अर्द्धमात्रा का ज्ञान चिन्मय अनुभव है, इसलिए यह श्रेष्ठ है । लौकिक ज्ञान त्रिपुटी का लोप नहीं होता, विराट् अभेद ज्ञान का उदय से भी भेदज्ञान की निवृत्ति क्रमशः होती है । वह भेदज्ञान क्रमशः स्तर-भेद करते-करते कटता है । तब पहले के देश-काल का ज्ञान रहता है-सही, पर वह तनिक दूसरे प्रकार का होता है । योगियों को जिन पंच-शून्यों का परिचय मिलता है, उसमें बिन्दु ही प्रथम शून्य है । बिन्दु के स्तर में बीज नहीं रहता अर्थात् प्रकृति का स्फुरण नहीं रहता इसलिए उनको पुरुष का अभिन्न स्वरूप भी कहा जा सकता है ।"

बिन्दु का वैज्ञानिक स्पष्टीकरण करते हुए श्री सत्यव्रत शर्मा ने लिखा है—

शाक्त-मत के अनुसार विश्व-प्रपंच का पर्यवसान एक 'बिन्दु' में होता है । इस बिन्दु को हम 'आयामरहित गणितीय बिन्दु' कह सकते हैं । इस बिन्दु को एक गणितीय रेखा लपेटे हुए है, जो इसके प्रत्येक पृष्ठभाग को स्पर्श भी करती है अर्थात् यह दोनों मिलकर एक 'बिन्दुमय' हो जाते हैं । ब्रह्माण्ड-संकोच की इस प्रक्रिया पर विचार प्रकट करते हुए अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त खगोलशास्त्री अर्नेस्ट जे. विपिक ने अपनी एक पुस्तक में लिखा है ।

'सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड (सारा गैलेक्सी समुदाय अपने जीवित या मृत सूर्यों और ग्रहों के साथ) अपने को एक सूक्ष्म आकाश या बिन्दु में लय कर देगा ।'

रेखा शक्ति की वृत्तीय प्रकृति है, इसलिए वस्तुओं में गोलाई और वक्रता (Curvature) है । 'सापेक्षतावाद' के अनुसार, चूँकि सरल रेखा में गति सम्भव ही नहीं है, इसलिए प्रत्येक ग्रह-उपग्रह वक्र पथों पर गतिशील है और इस प्रका विविध ब्रह्माण्डों (Spheroids) का निर्माण करते हैं ।

शक्ति अपने दो रूपों—स्थैतिक अर्थात् कुण्डलिनी और गत्यात्मक अर्थात् प्राण में प्रकट होती है । यह एक सामान्य बात है कि प्रत्येक संचार की एक स्थैतिक पृष्ठभूमि होती ही है । शरीर में यह स्थिति केन्द्र मूलाधार में स्थित कुण्डलिनी शक्ति है । यह शक्ति ही सम्पूर्ण शरीर और इसमें प्रवाहित सभी प्राण शक्तियों का आधार है । यह शक्ति-केन्द्र चित् का स्थूल रूप है ।

'इलेक्ट्रॉन थियरी' के अनुसार 'अणु' सौर मण्डल से मिलता-जुलता एक सूक्ष्म ब्रह्माण्ड है । अणु-केन्द्र में धनात्मक आवेश वाले 'प्रोटोन' का निवास है । इसके चारों और ऋणात्मक आवेश के तमाम इलेक्ट्रॉन विभिन्न कक्षाओं में गतिशील हैं । दोनों आवेश मिलकर अणु को सन्तुलित रखते हैं, जिससे यह साधारण रूप में भग्न न हो जायें—'पिण्डे पिण्डे ब्रह्माण्डे ब्रह्माण्डे' के अनुसार अणु में घटने वाली यही घटना समग्र विश्व में हो रही है । विश्व में सारे ग्रह सूर्य के चारों ओर घूमते हैं और सूर्य सहित सारा ग्रहमण्डल भी किसी अन्य सापेक्ष स्थिर केन्द्र के चारों और घूमता है और इस प्रकार हम 'ब्रह्म-बिन्दु' तक पहुँच जाते हैं, जिस निरपेक्ष स्थिर बिन्दु के चारों ओर सारे मण्डल घूमते हैं और यही बिन्दु सर्वनियन्ता है ।

साधना

इस बिन्दु का चिन्तन करने से आनन्दमय कोश स्थित जीव को उस परब्रह्म के रूप की कुछ झाँकी होती है और उसे प्रतीत होता है कि परब्रह्म की—महा अण्ड की तुलना में मेरा अस्तित्व, मेरा पिण्ड कितना तुच्छ है । इस तुच्छता का भान होने से अहंकार और विगलित हो जाते हैं । दूसरी ओर जब अपने पिण्ड की—शरीर की—तुलना करते हैं, तो प्रतीत होता है कि अटूट शक्ति के अक्षय भण्डार सर्गाणु की इतनी अटूट संख्या और शक्ति जब हमारे भीतर है, तो हमें अपने को अशक्त समझने का कारण नहीं है । उस शक्ति का उपयोग जान लिया जाय, तो संसार में होने वाली कोई भी बात हमारे लिए असम्भव नहीं रह सकती ।

जैसे महा अण्ड की तुलना में हमारा शरीर अत्यन्त क्षुद्र है और हमारी तुलना में उसका विस्तार अनुपमेय है । इसी प्रकार सर्गाणुओं की दृष्टि में हमारा पिण्ड (शरीर) एक महा ब्रह्माण्ड जैसा विशाल होगा । इसमें जो स्थिति समझ में आती है, वह प्रकृति अण्ड से भिन्न एक दिव्य शक्ति के रूप में विदित होती है । लगता है कि मैं मध्य बिन्दु हूँ, केन्द्र हूँ, सूक्ष्म-से-सूक्ष्म और स्थूल से स्थूल में मेरी व्यापकता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लघुता-महत्ता का एकान्त चिन्तन ही बिन्दु-साधन कहलाता है । इस साधना के साधक को सांसारिक जीवन की अवास्तविकता और तुच्छता का भली प्रकार बोध हो जाता है कि मैं अनन्त शक्ति का उद्‌गम होने के कारण इस सृष्टि का महत्त्वपूर्ण केन्द्र हूँ । जैसे जापान पर फटा हुआ परमाणु बम ही 'ऐतिहासिक एटम बम' के रूप में चिरस्मरणीय रहेगा, वैसे ही जब अपने शक्ति-पुंज का सदुपयोग किया जाता है, तो उसके द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से संसार का भारी परिवर्तन करना सम्भव हो जाता है ।

विश्वामित्र ने राजा हरिश्चन्द्र के पिंड को एटम बम बनाकर 'असत्य' के साम्राज्य पर इस प्रकार विस्फोट किया था कि लाखों वर्ष बीत जाने पर भी उसकी सक्रिय किरणें अभी समाप्त नहीं हुई हैं और अपने प्रभाव से अनेकों को बराबर प्रभावित करती चली आ रही हैं । महात्मा गाँधी ने बचपन में राजा हरिश्चन्द्र का चरित्र पड़ा था उन्होंने अपने आत्मचरित्र में लिखा है कि मैं उसे पढ़कर इतना प्रभावित हुआ कि स्वयं भी हरिश्चन्द्र बनने की ठान ली । अपने संकल्प-बल द्वारा वे सचमुच हरिश्चन्द्र बन भी गए । राजा हरिश्चन्द्र आज नहीं हैं, पर उनकी आत्मा आज भी उसी प्रकार अपना महान कार्य कर रही है, न जाने कितने अप्रकट गाँधी उसके द्वारा निर्मित होते रहते होंगे । गीताकार आज नहीं है, पर आज उनकी गीता कितनों को अमृत पिला रही है । यह पिण्ड का सूक्ष्म प्रभाव ही है, जो प्रकट या अप्रकट रूप से स्व-तथा पर-कल्याण का महान आयोजन प्रस्तुत करता है ।

कार्ल मार्क्स के सूक्ष्म शक्ति केन्द्र से प्रस्फुटित हुई चेतना आज आधी दुनिया को कम्युनिस्ट बना चुकी है । पूर्वकाल में श्रीकृष्ण, महात्मा ईसा, मुहम्मद, बुद्ध आदि ऐसे अनेक महापुरुष हुए हैं, जिन्होंने संसार पर बड़े महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाले हैं । इन प्रकट महापुरुषों के अतिरिक्त ऐसी अनेक अप्रकट आत्माएँ भी हैं, जिन्होंने संसार की सेवा में, जीवों के कल्याण में गुप्त रूप से बड़ा भारी काम किया है । हमारे देश में योगी अरविन्द, महर्षि रमण, रामकृष्ण परमहंस, समर्थ गुरु रामदास आदि द्वारा जो कार्य हुआ तथा आज भी अनेक महापुरुष जो कार्य कर रहे हैं, उसको स्थूल दृष्टि से नहीं समझा जा सकता है । युग-परिवर्तन निकट है, उसके लिए रचनात्मक और ध्वंसात्मक प्रवृत्तियों का सूक्ष्म जगत् में जो महान आयोजन हो रहा है, उस महाकार्य को हमारे चर्मचक्षु देख पायें तो जाने कि कैसा अनुपम एवं अभूतपूर्व परिवर्तन-चक्र प्रस्तुत हो रहा है और वह चक्र निकट भविष्य में ही कैसे-कैसे विलक्षण परिवर्तन करते मानव-जाति को एक नये प्रकाश की ओर ले जा रहा है ।

विषयान्तर चर्चा करना हमारा प्रयोजन नहीं है । यहाँ तो हमें यह बताना है कि लघुता और महत्ता के चिन्तन की बिन्दु-साधना से आत्मा का भौतिक अभिमान और लोभ विगलित होता है । साथ ही उस आन्तरिक शक्ति का विस्तार होता है, जो स्व-तथा पर-कल्याण के लिए अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण है ।

बिन्दु-साधक की आत्म-स्थिति उज्ज्वल होती जाती है, उसके विकार मिट जाते हैं । फलस्वरूप उसे उस अनिर्वचनीय आनन्द की प्राप्ति होती है, जिसे प्राप्त करना जीवन-धारण का प्रमुख उद्देश्य है ।

एक तन्त्र शास्त्री ने बिन्दु-साधना का स्पष्टीकरण इस प्रकार किया है—"इसी बिन्दु से ज्ञान-भूमि की सूचना मिलती है । चित्त को एकाग्र करके उपसंहृत किए बिना अर्थात विक्षिप्त अवस्था में, बिन्दु में स्थित नहीं हो सकती । बिन्दु-अवस्था में स्थित होने पर भी यथार्थ लक्ष्य की प्राप्ति में अनेकों व्यवधान रह जाते हैं । यद्यपि बिन्दु-भूमि में साधक अहंभाव में प्रतिष्ठित होकर आपेक्षिक दृष्टा बनकर निम्नवर्ती समस्त प्रपंच को निरपेक्ष भाव से देखने में समर्थ होता है, तथापि जब तक वह बिन्दु पूर्णतः तिरोहित नहीं हो जाता, अर्थात् पूर्णतः अहंभाव का विसर्जन अथवा आत्म-समर्पण नहीं होता, तब तक महा बिन्दु अथवा शिव-भाव की अभिव्यक्ति नहीं हो सकती । इसीलिए बिन्दु-भाव को प्राप्त होकर साधक को क्रमशः कलाक्षय करते-करते पूर्णतया विगतकाल अवस्था में उपनीत होना पड़ता है ।"

बिन्दु-साधक के लिए अहंकार का नाश आवश्यक है । बड़े-बड़े तपस्वी साधक भी इस महारोग में फँस देखे गए हैं । ऋषि-मुनि भी इससे नहीं बच सके हैं, परन्तु बिन्दु-साधक का तो लक्ष्य ही यही है । इससे इस साधना की महत्ता की कल्पना सहज में ही की जा सकती है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हमारे शास्त्रों ने भी आत्म विकास के जिज्ञासु को इससे बचने का आग्रह किया है ।

गीता १८।१६ : "जो संस्कृत-बुद्धि न होने के कारण यह न समझे कि मैं ही अकेला कर्त्ता हूँ, समझना चाहिए कि वह दुर्मति कुछ नहीं जानता ।" १८।५८ : "मुझमें चित्त रखने पर तू मेरे अनुग्रह से संकटों को अर्थात् कर्म के शुभाशुभ पलों को पार कर जायेगा । परन्तु यदि अहंकार के वश में हो मेरी न सुनेगा, तो नाश पायेगा ।" ईशावास्योपनिषद् (९) : "जो मनुष्य अविद्या की उपासना करते हैं, वे अज्ञान के घोर अन्धकार में प्रवेश करते हैं और जो मनुष्य विधा में रत हैं अर्थात् मिध्यामिभान में रत हैं, वे उससे भी मानों अधिकतर अन्धकार में प्रवेश करते हैं ।" महोपनिषद् में "अहंकार के कारण विपत्ति आती हैं, अहंकार के कारण दुष्ट मनोव्याधियाँ उत्पन्न होती हैं । अहंकार के कारण कामनाएँ उत्पन्न होती हैं । अहंकार से बढ़कर मनुष्य का कोई दूसरा शत्रु नहीं है ।"

अहंकार हमारी आत्मिक शक्तियों पर जौंक का-सा काम करता है, यह ठीक है । इससे बचना आवश्यक है, परन्तु इसका यह भी अर्थ नहीं कि हम अपने आत्मंगौरव को सर्वथा भूल जायें और अपने को पतित, पापी, नीच, दुष्ट, दुर्गामी, निर्बल, निःसहाय और असमर्थ समझने लगें । हमें शरीर-भाव से ऊपर उठकर आत्म-भाव में स्थित होना होगा । वेदों की अन्तरात्मा को प्रकट करने वाली उपनिषदों की उस ललकार को सुनना होगा, जिसमें उन्होंने सोऽहम्, तत्वमसि, अयमात्मा ब्रह्मा, सोहमस्ति का सिंहनाद किया है और कहा है कि मनुष्य तुच्छ कीड़ा नहीं,वरन् सच्चिदानन्द परमात्मा का पवित्र अंश है । उसे अपने निज स्वरूप की वास्तविकता का बोध होना चाहिए । ब्रह्मबिन्दूपनिषद् में कहा गया है—"जो व्यक्ति यह भावना करता है कि 'वह ब्रह्म में ही हूँ' वह उस भावना के द्वारा ब्रह्म ही हो जाता है ।"

बिन्दुयोग में यही धारणा करनी पड़ती है कि प्रकाश रूप परमात्मा का आलोक अंग-प्रत्यंग के कण-कण में—अन्तःकरण के प्रत्येक कक्ष परत में प्रकाशवान होता है । दिव्य चेतना की किरणें काय कलेवर की प्रत्येक लहर पर प्रतिबिम्बित हो रही हैं । विवेक की आभा फूटी पड़ रही है—सतोगुण झिलमिला रहा है—सत्साहस प्रखर प्रचण्ड बनकर सक्रियता की ओर अग्रसर हो रहा है । अज्ञान के आवरण तिरोहित हो रहे हैं । भ्रमानेवाले और डरानेवाले दुर्भाव, संकीर्ण विचार अपनी काली चादर समेट कर चलते बने । प्रकाश भरे श्रेय पथ पर चल पड़ने का शौर्य सबल हो उठा । अशुभ चिन्तन के दुर्दिन चले गए । सर्वत्र आनन्द और उल्लास ही आलोकित हो रहा है । ईश्वरीय प्रकाश शरीर में सत्प्रवृत्ति और मन की सद्भावना बनकर ज्योतिर्मय हो चला । अँधेरे में भटकनेवाली काली निशा का अन्त हो गया । भगवान की दिव्य ज्योति ने सर्वत्र अपना आधिपत्य जमा लिया ।

आधा घण्टे तक इन्हीं भावनाओं की प्रकाश ज्योति के साथ संगति बिठाते हुए अपनी सत्ता के प्रत्येक पक्ष को उज्ज्वल सम्भावनाओं के साथ आलोकित करने वाली विविध कल्पनाएँ करनी चाहिए । यह चिन्तन आत्मिक प्रखरता को दीप्तिमान बनाने में असाधारण रूप से सहायक सिद्ध होता है ।

यही नहीं सोचा जाना चाहिए कि बिन्दु-साधना के समय उपर्युक्त विचारधारा की सुविस्तृत शृंखला मस्तिष्क में घुमड़ते रहने से एकाग्रता नष्ट हुई । एकाग्रता की लययोग एवं समाधि प्रक्रिया में ही आवश्यकता पड़ती है । शेष सभी साधनाओं में विचार प्रवाह की एक दिशा बनाये रहना ही पर्याप्त होता है । गंगा हिमालय से निकल कर समुद्र में मिलने के लिए चलती है । यह दिशा निर्धारण उसे लक्ष्य तक पहुँचाने के लिए पर्याप्त है । प्रवाह में लहरें उत्पन्न हों, टकराव आयें, भँवर पड़ें, मोड़ बने इससे कुछ बनता-बिगड़ता नहीं । एकाग्रता मुख्य नहीं, दिशा प्रवाह का ही महत्त्व है । सरकस में काम करने वाले नटों की सारी सफलता उनकी एकाग्रता पर ही निर्भर रहती है यदि वे ध्यान बटाएँ तो तार पर चलना, झूले पर उछलना जैसे करतब दिखा सकना सम्भव ही न हो सके । इन नटों को एकाग्रता की सिद्धि होती है पर उन्हें योगी नहीं कह सकते । मीरा, चैतन्य, सूर, कबीर, रामकृष्ण परमहंस जैसे सन्त सदा भावविह्वल स्थिति में रहते थे और "घायल की गति घायल जाने" जैसे शब्दों में अन्तर की पीड़ा व्यक्त करते थे । उन्हें एकाग्रता कहाँ थी, उस पर भी उन्हें अयोगी नहीं कहा जा सकता । बिन्दुयोग—प्राण, योग आदि प्रत्यावर्तन उपक्रम में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आनेवाली प्रायः सभी साधनाओं पर यही सिद्धान्त लागू होता है । उनमें विचार-विस्तार का—भाव-प्रवाह-का क्षेत्र अति व्यापक है । अन्तः भूमिका परिशोधन परिमार्जन और परिष्कार इसी समुद्र-मन्थन में सम्भव है, इसलिए यहाँ एकाग्रता में कमी पड़ने की बात नहीं सोचनी चाहिए । साकार उपासना में तो पूजा-पाठ—स्तवन, जप आदि का पूरा उपक्रम ही बहुमुखी चिन्तन के साथ जुड़ा हुआ है । जहाँ क्रिया होगी वहाँ भाव विस्तार भी रहेगा ही । समग्र एकाग्रता तो पूर्ण निष्क्रियता वाली स्थिति में ही सम्भव है । ऐसी स्थिति समाधि स्थिति की पूर्ण भूमिका में ही उत्पन्न होती है ।

बिन्दुयोग में तथा अन्य साधना उपक्रमों में यथा-समय ऐसी स्थिति स्वयमेव आती है जिसमें योग-निद्रा जैसी अनुभूति होती है । सारे क्रिया-कलाप ठप्प हो जाते हैं । जप में माला फेरना और मन्त्रोच्चार बन्द हो जाता है । जब स्थिति सुधरती है तो ऐसा प्रतीत होता है, झपकी लग गई थी, सो गए थे । पर वस्तुतः ऐसा होता ही नहीं, यह साधनायें ऊर्जा और ऊष्मा युक्त हैं । उसमें आवेश सम्भव नहीं निद्रा की कोई सम्भावना नहीं । अस्तु, उस स्थिति को विशुद्ध रूप में योगनिद्रा—समाधि-स्तर की भूमिका ही समझा जाना चाहिए और ऐसी सहज एकाग्रता जब भी प्राप्त होती है तब उसे सफलता का उत्साहवर्धक चिन्ह मानते हुए स्थिति को यथावत् बनाये रहना चाहिए । साधना उपक्रम भले ही रुका रहे पर उसे सहज समाधि के दैवी अनुदान को अस्त-व्यस्त न किया जाय । यही उचित है । बिन्दुयोग की साधना में एकाग्रता का नहीं प्रवाह क्रम की प्रखरता का महत्त्व है । इसी बिन्दुयोग की प्रकाश साधना करने वालों को अपने कलेवर के हर कक्ष में ज्योति अवतरण के साथ दिव्य भावनाओं के समावेश का चिन्तन करते हुए प्रसन्नता ही अनुभव करनी चाहिए ।

बिन्दुयोग साधना की फलश्रुतियों का उल्लेख करते हुए "षट्चक्रनिरूपण"—३५ में कहा गया है—

"ध्यानात्मासाधकेन्द्रो भवति परपुरे शीघ्रगामी मनीन्द्रः सर्वज्ञः सर्वदर्शी सकलहितकर सर्वशास्त्रार्थवेत्ता ।"

अद्वैताचास्वादी विलसति परमापूर्वसिद्धिप्रसिद्धो दीर्घायुः सोऽपि कर्त्ताः त्रिभुवनभवनै संहृतौ पालने च ॥ ३५॥

आज्ञाचक्र को सिद्ध कर लेने वाला दूरगामी बन सकता है, सूक्ष्म रूप धारण कर सकता है । परकाया-प्रवेश कर सकता है । सबका हितकारी शास्त्रों का ज्ञाता ब्रह्मवेत्ता, प्रसन्नचित सिद्धि विधाओं का ज्ञाता, दीर्घायु, लोकव्यवस्था में सहायता देने वाला बनता है। ३५

"यदाऽऽत्मतत्त्वेन ब्रह्मतत्त्वं
दीपोपमेनेहु युक्तः प्रपश्येत् ।"

—श्वेताश्वर, २।१५

अर्थात् योग साधक आत्म के द्वारा ही दीपक के समान प्रकाशयुक्त ब्रह्मतत्व के दर्शन करता है ।

नीहारधूमार्कानलानिलानां
खद्योतविद्युत्स्फटिकशशीनाम् ।
एतानि रूपाणि पुरः सराणि
ब्रह्मण्यभिव्यक्तिकराणि योगे ॥ ११॥

—श्वेताश्वर, २।११

अर्थात् योग साधक को कुहरा, धुँआ, सूर्य, वायु, अग्नि, जुगनू, बिजली, स्फटिक मणि, चन्द्रमा जैसे कई प्रकाश दृश्य दिखाई पड़ते हैं । यह योग की सफलता के चिन्ह हैं ।

कला-साधना

कला का अर्थ है—किरण । प्रकाश यों तो अत्यन्त सूक्ष्म है, पर उस सूक्ष्मता का ऐसा समूह, जो हमें एक निश्चित प्रकार का अनुभव कराये, 'कला' कहलाता है । सूर्य से निकलकर अत्यन्त सूक्ष्म प्रकाश-तरंगें भू-तल पर आती हैं, उनका एक समूह ही इस योग्य बन पाता है कि नेत्रों से उसका अनुभव किया जा सके । सूर्य किरणों के सात रंग प्रसिद्ध हैं । परमाणुओं के अन्तर्गत जो 'प्रमाण' होते हैं, उनकी विद्युत-तरंगें जब हमारे नेत्रों से टकराती हैं, तभी किसी रंग-रूप का ज्ञान हमें होता है । रूप को प्रकाशवान बनाकर प्रकट करने का काम कला द्वारा ही होता है ।

कलाएँ दो प्रकार की होती हैं—(१) आप्ति, और (२) व्याप्ति । आप्ति वे हैं जो प्रकृति के अणुओं से प्रस्फुटित होती हैं । व्याप्ति वे हैं जो पुरुषों के अन्तराल से आविर्भूत होती हैं । इन्हें 'तेजस' भी कहते हैं । वस्तुएँ पंचतत्वों से बनी हुई होती हैं, इसलिए परमाणुओं से निकलने वाली किरणें अपने प्रधान तत्व की विशेषता भी साथ लिए होती हैं । यह विशेषता रंग द्वारा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पहचानी जाती है । किसी वस्तु का प्राकृतिक रंग देखकर बताया जा सकता है कि इसमें कौन-सा तत्व किस मात्रा में विद्यमान है ।

व्याप्ति कला, किसी मनुष्य के तेजस में परिक्षित होती है । वह तेजस मुख के आस-पास प्रकाश मण्डल की तरह विशेष रूप से फैला होता है यों तो सारे शरीर के आस-पास प्रकाश रहता है । इसे अँग्रेजी में "ओरा" और संस्कृत में "तेजोवलय" कहते हैं । देवताओं के चित्रों से उनके मुख के आस-पास एक प्रकाश का गोला-सा चित्रित होता है । यह उनकी कला का ही चिन्ह है । अवतारों के सम्बन्ध में उनकी शक्ति का माप उनकी कथित कलाओं से किया जाता है । परशुराम जी में तीन, रामचन्द्रजी में बारह, कृष्ण में सोलह कलाएँ बताई गई हैं । इसका तात्पर्य है कि उनमें साधारण मात्रा से इतनी गुनी आत्मिक शक्ति थी । सूक्ष्मदर्शी लोक किसी व्यक्ति या वस्तु की आन्तरिक स्थिति का पता उसके तेजोवलय और रूप-रंग, चमक तथा चैतन्यता को देखकर मालूम कर लेते हैं ।

'कला' विद्या की जिसे जानकारी है, वह भूमि के अन्तर्गत छिपे हुए पदार्थों को, वस्तुओं के अन्तर्गत छिपे हुए उनके गुण, प्रभाव एवं महत्त्वों को आसानी से जान लेता है । किसी मनुष्य में कितनी कलाएँ हैं, उसमें क्या-क्या शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक विशेषताएँ हैं तथा किन-किन गुणों, दोषों, योग्यताओं, सामर्थ्यों की उसमें कितनी न्यूनाधिकता है ? यह सहज ही पता चल जाता है । इस जानकारी के होने से किसी व्यक्ति से समुचित सम्बन्ध रखना सरल हो जाता है ।

कला-विज्ञान का ज्ञाता अपने शरीर की तात्विक न्यूनाधिकता का पता लगाकर इसे आत्म-बल से ही सुधार सकता है और अपनी कलाओं से समुचित संशोधन, परिमार्जन एवं विकास कर सकता है । कला ही सामर्थ्य है । अपनी आत्मिक सामर्थ्य का, आत्मिक उन्नति का माप कलाओं की परीक्षा करके प्रकट हो जाता है और साधक यह निश्चय कर सकता है कि उन्नति हो रही है अथवा नहीं ? उसे सन्तोषजनक सफलता मिल रही है या नहीं ?

सब ओर से चित्त हटाकर, नेत्र बन्द करके भृकुटी के मध्य भाग में ध्यान एकत्रित करने से मस्तिष्क में तथा उसके आस-पास रंग-बिरंगी धज्जियाँ चिन्दियाँ तथा तितलियाँ-सी उड़ती दिखाई पड़ती हैं । इनके रंगों का आधार तत्वों पर निर्भर होता है । पृथ्वी तत्व का रंग पीला, जल का श्वेत, अग्नि का लाल, वायु का हरा, आकाश का नीला होता है । जिस रंग की झिलमिल होती है, उसी के आधार पर यह जाना जा सकता है कि इस समय हममें किन तत्वों की अधिकता और किनकी न्यूनता है ।

प्रत्येक रंग में अपनी-अपनी विशेषता होती है । पीले रंग में क्षमा, गम्भीरता, उत्सादन, स्थिरता, वैभव, मजबूती, संजीदगी, भारीपन; श्वेत रंग में रसिकता, कोमलता, शीघ्र प्रभावित होना, तृप्ति, शीतलता, सुन्दरता, वृद्धि, प्रेम; लाल रंग में गर्मी, उष्णता, ,क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष, अनिष्ट, शूरता, सामर्थ्य, उत्तेजना, कामुकता, तेज, प्रभावशीलता, चमक, स्फूर्ति, हरे रंग में चंचलता, कल्पना, स्वप्नशीलता, हल्कापन, जकड़ना, दर्द, अपहरण, धूर्तता, गतिशीलता, विनोद प्रगतिशीलता, प्राण-पोषण, परिवर्तन तथा नीले रंग में—विचारशीलता, बुद्धि-सूक्ष्मता, विस्तार सात्विकता प्रेरणा, व्यापकता, संशोधन, सम्बर्द्धन सिंचन, आकर्षण आदि गुण होते हैं ।

जड़ या चेतन किसी भी पदार्थ के प्रकट रंग एवं उससे निकलने वाली सूक्ष्म प्रकाश-ज्योति से यह जाना जा सकता है कि इस वस्तु या प्राण का गुण, कर्म, स्वभाव एवं प्रभाव कैसा हो सकता है ? साधारणतः यह पाँच तत्वों की कला है, जिनके द्वारा यह कार्य हो सकते हैं—(१) व्यक्तियों तथा पदार्थों की आन्तरिक स्थिति को समझना, (२) अपने शारीरिक तथा मानसिक क्षेत्र में असन्तुलित किसी गुण-दोष को संतुलित करना, (३) दूसरों की शारीरिक तथा मानसिक विकृतियों का संशोधन करके सुव्यवस्था स्थापित करना, (४) तत्वों के मूल आधार पर पहुँचकर तत्वों की गतिविधि तथा क्रिया-पद्धति को जानना, (५) तत्वों पर अधिकार करके सांसारिक पदार्थों का निर्माण, पोषण तथा विनाश करना ।

ये उपर्युक्त पाँच लाभ ऐसे हैं, जिनकी व्याख्या की जाय, तो वे ऋद्धि-सिद्धियों के समान आश्चर्यजनक प्रतीत होंगे । ये पाँच भौतिक कलाएँ हैं, जिनका उपयोग राजयोगी, हठयोगी, मन्त्रयोगी तथा तान्त्रिक अपने-अपने ढंग से करते हैं और इस तान्त्रिक शक्ति का अपने-अपने ढंग में सदुपयोग-दुरुपयोग करके भले-बुरे परिणाम उपस्थित करते हैं । कला द्वारा सांसारिक भोग-वैभव भी मिल सकता है । आत्म कल्याण भी हो सकता है और किसी को शोषित,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभिचारित एवं दुखी, शोक-संतप्त भी बनाया जा सकता है । पंच तत्वों की कलाएँ ऐसी ही प्रभावपूर्ण होती हैं ।

आत्मिक कलाएँ तीन होती हैं—सतत्, रज और तम । तमोगुणी कलाओं का मध्य केन्द्र शिव है । रावण, हिरणकश्यप, भस्मासुर, कुम्भकरण, मेघनाद आदि असुर इन्हीं तामसिक कलाओं के सिद्ध पुरुष थे । रजोगुणी कलाएँ विष्णु से आती हैं । इन्द्र, कुबेर, वरुण, बृहस्पति, अर्जुन, भीम, युधिष्ठर, कर्ण आदि में इन राजसिक कलाओं की विशेषता थी । सतोगुणी सिद्धियाँ ब्रह्मा से आविर्भूत होती हैं । व्यास, वशिष्ठ, अत्रि, बुद्ध, महावीर, ईसा, गाँधी आदि ने सात्विकता के केन्द्र से ही शक्ति प्राप्त की थी ।

आत्मिक कलाओं की साधना गायत्री योग के अन्तर्गत ग्रन्थि-भेद द्वारा होती है । सद्ग्रन्थि और ब्रह्म-ग्रन्थि खुलने से इन तीनों ही कलाओं का साक्षात्कार साधक को होता है । पूर्वकाल में लोगों के शरीर में आकाश-तत्व अधिक था, इसलिए उन्हें इन्हीं साधनाओं से अत्यधिक आश्चर्यमयी सामर्थ्य प्राप्त हो जाती थी । पर आज के युग में जनसमुदाय के शरीरों में पृथ्वी-तत्व प्रधान है । इसलिए अणिमा-महिमा आदि तो नहीं, पर सतत्, रज, तम की अधिकता से अब भी आश्चर्यजनक हित-साधन हो सकता है ।

कुलार्णव तन्त्र में विभिन्न प्रकार की कलाओं के नाम और गुण इस प्रकार दिए गए हैं—

अग्निसूर्येन्दुब्रह्मेन्द्रविष्णुरुद्रसदाशिवैः ।
चतुर्विंशतिमन्त्रैः स्यान्मद्यञ्चैव परामृतम् ॥
अमृता मानदा पूषा तुष्टिः पुष्टी रतिर्धृतिः ।
शशिनी चन्द्रिका कान्तिर्ज्योत्स्ना श्रीः प्रीतिरंगदा ॥
पूर्णा पूर्णामृता चेति कथिताः कुलनायिके ।
सौम्याः कामप्रदायिन्यः षोडश स्वरजाः कलाः ॥
तपनी तापिनी धूम्रा मरीचिर्ज्वालिनी रुचिः ।
सुषुम्ना भोगदा विश्वा रोधिनी धारिणी क्षमा ।
कभाद्या वसुदाः सौरष्ठडान्ता द्वादशेरिताः ॥
धूम्रार्चिरुष्मा ज्वलिनी ज्वालिनी विस्फुलिङ्गिनी ।
सुश्रीः सुरूपा कपिला हव्यकव्यवहे अपि ॥
आग्नेया यादिवर्णाद्या दश धर्मप्रदाः कलाः ।
सृष्टिर्मेधा स्मृतिर्ऋद्धिः कान्तिर्लक्ष्मीर्द्युतिः स्थिरा ॥
स्थितिः सिद्धिरिति प्रोक्ताः कचवर्गकला दश ।
अकारप्रभवा ब्रह्मजाताः स्युः सृष्टये कला ॥
जरा च पालिनी शान्तिरीश्वरी रतिकामिके ।
परदाह्लादिनी प्रीतिदीर्घाः स्युष्टवर्गजाः ॥
उकारप्रभवा विष्णुजाताः स्युः स्थितये कलाः ।
तीक्ष्णा रौद्री भया निद्रा तंद्रा क्षुत क्रोधिनी क्रिया ॥
उत्कारी मृत्युरित्युक्ता पयवर्गकला दश ।
मकारप्रभवा रुद्रजाताः सहृतये कलाः ॥

अर्थात् "अग्नि, सूर्य, इन्दु, ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु, रुद्र और सदाशिव के चौबीस मन्त्रों से मद्य परामृत हो जाता है । हे कुलनायिके ! अमृता, मानदा, तूषा, तुष्टि, पुष्टि, रति, धृति, शशिनी, चन्द्रिका, कान्ति, ज्योत्स्ना, श्री, प्रीति, अंगदा, पूर्ण और पूर्णामृता, ये परम सौम्य और कामनाओं के प्रदान करने वाली स्वरजा सोलह कलाएँ कही गई हैं । तपिनी, तापिनी, धूमा, मरीचि, ज्वालिनी, रुचि, सुषुम्ना, भोगदा, विश्वा, रोधिनी, धारिणी, क्षमा, ये कमाद्या, सौराष्ठावान वपु प्रदान करने वाली बारह कलाएँ बताई गई हैं । धूमा, अर्चि, ऊष्मा, ज्वलिनी, ज्वालिनी, विस्फुर्लिंगनी, सुश्री, सुरूपा, कपिला और हव्य-कव्य-वहा ये आग्नेय या वर्णाद्या दस धर्म को प्रदान करने वाली कलाएँ कही गई हैं , सृष्टि, मेधा, स्मृति, ऋद्धि, कान्ति, लक्ष्मी, द्युति, स्थिरा, स्थिति और सिद्धि ये क-च-वर्ग की दस कलाएँ होती हैं । अकार से प्रभव वाली तथा ब्रह्म से जात ये सृष्टि के लिए कलाएँ होती हैं । जरा, पालिनी, शान्ति ईश्वरी, रति, कामिका, वरदा, अह्लादिनी, प्रीति, दीर्घा ये ट-त-वर्ग से उत्पन्न होने वाली एवं उकार प्रभवा भगवान विष्णु के द्वारा जात स्थिति के लिए दस कलाएँ होती हैं । तीक्ष्णा, रौद्री, भया, निद्रा, तंद्रा, क्षुत्, क्रोधिनी, क्रिया, उत्कारी, मृत्यु ये पयवर्ग की दस कलाएँ मकार प्रभव और जात संहार के लिए होती हैं ।

पाँच कलाओं द्वारा तात्विक साधना

पृथ्वी-तत्व

इस तत्व का स्थान मूलाधार चक्र अर्थात् गुदा से दो अंगुल अण्डकोष की ओर हटकर सीवन में स्थित है । सुषुम्ना का आरम्भ इसी स्थान से होता है । प्रत्येक तत्व-चक्र का आकार कमल के पुष्प जैसा है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

यह भूलोक का प्रतिनिधि है । पृथ्वी-तत्व का ध्यान इसी मूलाधार चक्र में किया जाता है ।

पृथ्वी-तत्व की आकृति चतुष्कोण, रंग, पीला, गुण, गन्ध है । इसलिए इसको जानने की इन्द्रियाँ नासिका तथा कर्मेन्द्रिय गुदा है । शरीर मे पीलिया कमलवाय आदि रोग इसी तत्व की विकृति से पैदा होते हैं । भय आदि मानसिक विकारों में इसकी प्रधानता होती है । इस तत्व के विकार मूलाधार चक्र में ध्यान स्थित करने से अपने आप शान्त हो जाते हैं ।

साधन-विधि

सवेरे जब एक पहर अँधेरा रहे, तब किसी शान्त स्थान और पवित्र आसन पर दोनों पैरों को पीछे की ओर मोड़कर उस पर बैठे । दोनों हाथ उल्टे करके घुटनों पर इस प्रकार रखें, जिससे उंगुलियों के छोर पेट की ओर रहें । फिर नासिका के अग्र भाग पर दृष्टि रखते हुए मूलाधार चक्र में 'ल' बीज वाली चौकोर पीले रंग की पृथ्वी का ध्यान करें । इस प्रकार करने से नासिका सुगन्ध से भर जायेगी और शरीर उज्ज्वल कान्ति वाला हो जायेगा । ध्यान करते समय ऊपर कहे हुए पृथ्वी तत्व के समस्त गुणों को अच्छी तरह ध्यान में लाने का प्रयत्न करना चाहिए और 'ल' इस बीज मन्त्र का मन-ही-मन (शब्द रूप से नहीं, वरन् ध्यान रूप से) जप करते जाना चाहिए ।

जल-तत्व

पेडू के नीचे जननेन्द्रिय के ऊपर मूल भाग में स्वाधिष्ठान चक्र में जल-चक्र का स्थान है । यह चक्र भुवः लोक का प्रतिनिधि है । रंग श्वेत, आकृति अर्द्ध चन्द्राकार और गुण रसों का स्वाद है । कटु अम्ल, तिक्त आदि रसों का स्वाद इसी तत्व के कारण आता है । इसकी ज्ञानेन्द्रिय जिह्वा और कर्मेन्द्रिय लिंग है । मोहादि विकार इसी तत्व की विकृति से होते हैं ।

साधन-विधि

पृथ्वी-तत्व का ध्यान करने के लिए बताई हुई विधि से आसन पर बैठकर 'वं' बीज वाले अर्द्ध-चन्द्राकार चन्द्रमा की तरह कान्ति वाले जल-तत्व का स्वाधिष्ठान चक्र में ध्यान करना चाहिए । इससे भूख-प्यास मिटती है और सहन-शक्ति उत्पन्न होती है ।

अग्नि-तत्व

नाभि-स्थान में स्थित मणिपूरक चक्र में अग्नि तत्व का निवास है । यह 'स्वः' लोक प्रतिनिधि है । इस तत्व की आकृति त्रिकोण, लाल गुण रूप है । ज्ञानेन्द्रिय नेत्र और कर्मेन्द्रिय पाँव है । क्रोधादि मानसिक विकार तथा सूजन आदि शारीरिक विकार इस तत्व की गड़बड़ी से होते हैं । इसके सिद्ध हो जाने पर मन्दाग्नि, अजीर्ण आदि पेट के विकार दूर हो जाते हैं और कुण्डलिनी-शक्ति के जाग्रत होने में सहायता मिलती है ।

साधन-विधि

नियत समय पर बैठकर 'रं' बीज मन्त्र वाले त्रिकोण आकृति के और अग्नि के समान लाल प्रभा वाले अग्नि-तत्व का मणिपूरक चक्र में ध्यान करे । इस तत्व के सिद्ध हो जाने पर सहन करने की शक्ति बढ़ जाती है ।

वायु-तत्व

यह तत्व हृदय-देश में स्थित अनाहत चक्र में है। एवं महालोक का प्रतिनिधि है । रंग हरा, आकृति षट्कोण तथा गोल दोनों तरह की है । गुण स्पर्श, ज्ञानेन्द्रिय त्वचा और कर्मेन्द्रिय हाथ हैं । वात, व्याधि, दमा आदि रोग इसी की विकृति से होते हैं ।

साधन-विधि

नियत विधि से स्थित होकर 'य' बीज वाले गोलाकार, हरी आभा वाले, वायु-तत्व का अनाहत-चक्र में ध्यान करे । इससे शरीर और मन में हल्कापन आता है ।

आकाश-तत्व

शरीर में इसका निवास विशुद्ध चक्र में है । यह चक्र कंठ-स्थान में जनलोक का प्रतिनिधि है । इसका रंग नीला, आकृति अण्डे की तरह लम्बी गोल, गुण शब्द, ज्ञानेन्द्रिय कान तथा कर्मेन्द्रिय वाणी है ।

साधन-विधि

पूर्वोक्त आसन पर 'हं' बीज-मन्त्र का जप करते हुए चित्र-विचित्र रंग वाले आकाश-तत्व का विशुद्ध चक्र में ध्यान करना चाहिए । इससे तीनों कालों का ज्ञान, ऐश्वर्य तथा अनेक सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नित्यप्रति पाँच तत्वों का छः मास तक अभ्यास करते रहने से तत्व सिद्ध हो जाते हैं । फिर तत्व को पहचानना और उसे घटाना-बढ़ाना सरल हो जाता है । तत्वों की सामर्थ्य तथा कलाएँ बढ़ने से साधक कलाधारी बन जाता है । उसकी कलाएँ अपना चमत्कार प्रकट करती रहती है ।

लययोग

साधना में तीसरा अनिवार्य अभ्यास लययोग है । इसमें शरीराभ्यास को आत्मसत्ता के साथ समर्पित या विसर्जित करना पड़ता है । आमतौर से मनुष्य अपने आपको शरीर भर मानता है और उसी की इच्छा, आवश्यता पूरी करने में जुटा रहता है । आत्मा को उसके स्वरूप, लक्ष्य एवं उत्तरदायित्व को तो एक प्रकार से विस्मृत ही किए रहता है । यह वह भटकाव है जिसे मायापाश, भव-बन्धन आदि नामों से पुकारते हैं ।

ध्यान मुद्रा में बैठकर दर्पण को सामने रखा जाता है । साधकों के कमरे में इसी प्रयोजन के लिए एक दर्पण रखा गया है । साधना समय अपने स्वरूप के भीतर ही परमात्मा की सत्ता का अनुभव अभ्यास किया जाता है । अपने चेहरे पर सज्जा सौन्दर्य की नहीं, एक विशेष दृष्टि डाली जाती है कि इस मास-पिण्ड के भीतर सृष्टा का प्रतिनिधित्व करने वाली आत्मसत्ता विद्यमान है । वही इस काया की आधिष्ठात्री है । उसी का उत्कर्ष परम लक्ष्य है । काया उसी प्रयोजन की पूर्ति का वाहन, साधन, उपकरण मात्र है । शरीर की सार्थकता आत्मा के प्रति वफादार, जिम्मेदार और ईमानदार रहने में ही है । आत्मा काया का पोषण तो सही रूप से करे पर साथ ही यह भी ध्यान रखे कि उसे उच्छृंखल बनाने वाली वासना, तृष्णा, अहंता के आक्रमण से सुरक्षा का प्रबन्ध भी होता रहे ।

छाया पुरुष साधना से अपने समतुल्य एक और व्यक्तित्व का निर्माण कर लिया जाता है और वह एक अभिन्न मित्र एवं समर्थ सेवक की तरह निरन्तर साथ देता तथा सहायता करता है । दर्पण साधना से भी उस छाया साधना की उद्देश्य-पूर्ति होती है ।

नादयोग

नादयोग की साधना सूक्ष्म कर्णेन्द्रियों द्वारा सम्पन्न की जाती है । खुले कान तो एक सीमा तक की समीपवर्ती प्रत्यक्ष ध्वनि ही सुन पाते हैं । किन्तु सूक्ष्म कर्णेन्द्रियों में श्रवणातीत दिव्य ध्वनियाँ सुनने की भी क्षमता है । प्रकृति का मूल "शब्द" है । शब्द को ब्रह्म भी कहा गया है । नादयोग में इसी शब्दब्रह्म की साधना है । उस आधार पर दिव्य ध्वनियों को सुनने का अभ्यास किया जाता है और ब्रह्माण्ड में संव्याप्त अदृश्य रहस्यों को जाना जाता है । अपनी आन्तरिक स्थिति का विश्लेषण-पर्यवेक्षण करने एवं प्रकृति की सामयिक हलचलों का कारण समझकर अपनी ज्ञान परिधि को अत्यधिक व्यापक बनाया जा सकता है । इसी आधार पर भूतकाल के स्मृति कम्पन एवं भविष्य में घटित होने वाले प्रकरणों का पूर्वाभास सम्भव हो पाता है । नादयोग की शब्द साधना को 'कालजयी' कहा जाता है । ऋषियों को दृष्टा, त्रिकालदर्शी, सर्वज्ञ आदि की सिद्धियाँ इसी आधार पर उपलब्ध होती थीं ।

बिन्दुयोग की तरह नादयोग में भी ध्यान मुद्रा पर एकान्त स्थान में बैठते हैं । स्थूल ध्वनियों को रोकने के लिए कान में रूई लगा लेते हैं । इसके उपरान्त प्रयत्न करते हैं कि प्रकृति के गर्भ में प्रवाहित दिव्य ध्वनि तरंगों का सुनना सम्भव हो सके । आरम्भ में बहुत धीमा अनुभव होता है । जो सुनाई पड़ता है, वह वंशी, नफीरी बजने, झींगुर बोलने, भ्रमर गूँजने, बादल बरसने, झरना झरने जैसा हल्का होता है । बाद में अधिक प्रखरता, उत्तेजना और उतार-चढ़ाव भी उत्पन्न होने लगता है । ये दिव्य ध्वनियाँ बड़ी मोहक और आनन्ददायक होती हैं । इनकी तुलना सर्प को, मृग को मोहने वाले वीणा निनाद से की जाती है । नारद की वीणा, शंकर का डमरू, सरस्वती का सितार अलंकार रूप में इस नादयोग के रहस्यों का ही उद्घाटन करने वाले संकेत हैं । शान्ति कुंज में साधकों को दिव्य ध्वनियाँ सुनने का प्रारम्भिक अभ्यास करने के लिए संगीत टेप सुनने का प्रबन्ध है । इससे ध्वनि तरंगों के साथ अन्तराल को लहराने का अवसर मिलता है और कुछ समय बाद इस सहायता के बिना भी नादयोग का अभ्यास स्वयंमेव चल पड़ता है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिव्य अनुदानों को ग्रहण करने की विशिष्ट साधना

ध्यान धारणा

मनुष्य के अपने पुरुषार्थ का महत्त्व तो है ही, साथ ही यदि परिस्थितियों की अनुकूलता भी उपलब्ध हो सके तो सफलता और भी अधिक सुनिश्चित हो जाती है । उगता तो बीज ही है और उगाने का श्रेय भी धरती को ही मिलेगा किन्तु वर्षा ऋतु आने पर पौधों को जल्दी उगने और बढ़ने का अवसर मिलता है, इस तथ्य से सभी परिचित हैं । फूल अन्य महीनों में भी खिलते हैं किन्तु वसन्त में वृक्ष-वनस्पतियों को जिस प्रकार फूल, कोंपलों से लदा देखा जाता है, वैसा अन्य किसी महीने में नहीं । शीत ऋतु स्वास्थ्य संवर्धन के प्रयोगों को अपेक्षाकृत अधिक सफल बनाती है । गर्मी के आँधी-तूफान समूची धरती की सीलन सुखाने और बुहारी लगाने का काम करते हैं । अन्य महीनों में प्रकृति को वैसा करने की फुरसत ही नहीं रहती ।

हवा का रुख पीछे हो तो नाव से लेकर साइकिल तक की चाल में सहज ही तेजी आ जाती है । कुशल अध्यापक के तत्वावधान में पढ़ने वाले विद्यार्थी अधिक अच्छे नम्बर पाते हैं । साधनों की कमी न पड़े, तो बुद्धिमत्ता और परिश्रमशीलता को चमत्कारी सफलताएँ प्राप्त करने का अवसर मिलता है । यह परिस्थितियों के प्रभाव का परिचय देने वाले कुछ विवरण हैं, जिनसे प्रतीत होगा कि बाह्य अनुकूलताओं का भी प्रगति क्रम में कम योगदान नहीं होता । सरकारी भर्ती खुलने पर इच्छुकों को सरलतापूर्वक काम मिलता है, अन्यथा योग्यता होने पर भी निराश बैठे रहना पड़ता है । खरीद बढ़ने पर उत्पादक को अच्छा मुनाफा मिल जाता है अन्यथा परिश्रमी लोग बहुत उगा लेने पर भी घाटा उठाते या कम मोल में बेचकर उल्टा घाटा ही उठाते हैं ।

साधना में यों अपना पुरुषार्थ ही प्रमुख है किन्तु वातावरण एवं परिस्थितियाँ भी सहायक या बाधक होती हैं । हनुमान, अंगद, नल-नील एवं रीछ वानरों को श्रेय यों उनके पराक्रम का ही मिला पर यह भी मिथ्या नहीं है कि सीताहरण और असुरता उन्मूलन की परिस्थितियाँ सामने न आतीं, तो वे सभी अन्यान्य रीछ-वानरों की तरह सामान्य स्तर का जीवन गुजारते रहते । अवसर सामने न होने पर कोई करे भी तो क्या करे ? ग्वाल-वालों को श्रेय इसलिए भी मिला कि कृष्ण ने गोवर्धन उठाने की योजना बनायी और उसमें सहायता की आवाज लगायी । यदि वैसी आवश्यकता सामने ने आती तो ग्वाल-बालों को सामान्य पशुपालकों से बढ़कर ऐसा कुछ हस्तगत न होता जिसके सहारे वे ऐतिहासिक चर्चा का विषय बनते । सुरक्षा संकट उत्पन्न होने पर सरकार नागरिकों को हथियार बाँटती है जबकि साधारण समय में पैसा खर्चने और आवेदन करने पर भी किसी-किसी को कठिनाई से उनका लाइसेन्स मिलता है । दंगल का आयोजन हो तो पहलवान को अपना कौशल दिखाने, इनाम जीतने का अवसर मिले, अन्यथा उसे घर रहकर कसरत करते रहने में ही दिन गुजारने पड़ते हैं । चुनाव घोषणा होने पर ही प्रत्याशी खड़े होते हैं और जीतकर प्रतिनिधि सभा में पहुँचते हैं । चुनाव ही न हो तो लोकप्रिय समाज सेवी को भी प्रतिनिधि बनने का सुयोग कैसे मिले ?

ऊपर कतिपय उदाहरण इसलिए प्रस्तुत किए गए हैं कि अवसर का महत्त्व समझा जाय । सामने हो तो उससे लाभ उठाया जाय । आलस्य प्रमाद की दीर्घसूत्रता में उसे गँवाया न जाय । नवरात्रि साधना का एक विशेष अवसर है । अन्य दिनों की अपेक्षा उन दिनों किए गए अनुष्ठान अपेक्षाकृत अधिक सफल होते हैं । तीर्थ-स्नान तो कभी भी किया जा सकता है, पर पूर्वकाल में उसका अधिक पुण्य प्रतिफल माना गया है । उपासना के लिए हर समय अच्छा है पर प्रातःकाल में जो आनन्द आता है, वह अन्य समय नहीं । सोने को तो दिन में भी कोई रोक नहीं पर सभी जानते हैं कि रात्रि में जैसी गहरी और लम्बी नींद आती है, वैसी दिन में नहीं । इसे समय का प्रभाव ही कहा जायेगा । सफलताओं में परिस्थितियों का भी योगदान रहता ही है ।

आध्यात्म साधनाएँ करने के लिए हर समय हर किसी को छूट एवं सुविधा मिली हुई है किन्तु कभी-कभी ऐसे भी अवसर आते हैं जिनका सुयोग बैठ सके तो लम्बे समय तक कठिन परिश्रम करने पर जो लाभ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिलना चाहिए वह उस विशिष्ट अवसर के कारण स्वल्प काल में भी, अधिक परिमाण में मिल सकता है । ऐसी उपलब्धियों को दैवी अनुदान कहा जाता है ।

रामकृष्ण परमहंस को कुछ करना था । उन्होंने विवेकानन्द को ढूँढ़ निकाला और अभीष्ट प्रयोजन की पूर्ति के लिए जितनी आत्म-शक्ति आवश्यक थी, उतनी अपनी तप-सम्पदा में से हस्तान्तरित कर दी । समर्थ गुरू रामदास का अनुदान शिवाजी को और चाणक्य का वरदान चन्द्रगुप्त को मिला था । तपस्वी भागीरथ का गंगावतरण प्रयास शिव की सहायता से सम्पन्न हुआ । गाँधीजी का सघन सहयोग पाये बिना विनोबा वहाँ न पहुँच पाते जहाँ वे पहुँचे । लोक व्यवहार में भी अनेकों को अपने पूर्वजों की सम्पदा उत्तराधिकार में मिलती है, वे अनायास ही सुख-चैन में समय बिताते हैं । अभिभावकों के अनुदानों के सहारे ही अधिकांश छात्र उच्च शिक्षा प्राप्त करते और प्रगतिशील कहलाते हैं । यों कुछ अपवादों में ऐसे भी प्रमाण मिलते हैं, जिनमें परिस्थितियाँ उत्साहवर्धक न होने पर भी मनस्वी लोग आगे बढ़े और ऊँचे उठे हैं । इतने पर भी यह निश्चित है कि उन्हें यदि साधनों की कमी और परिस्थितियों की प्रतिकूलता न रही होती, तो अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में, कम समय में अधिक सफलता अर्जित कर सके होते ।

युग सन्धि का यह विशेष पर्व है । ऐसे समय कभी हजारों-लाखों वर्ष बाद आते हैं । सृष्टा को कतिपय महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करने होते हैं । निराकार ब्रह्म की प्रकाश प्रेरणा अन्तःकरण को ही प्रभावित करती है । क्रियाकलाप साकार होते हैं । उन्हें करने-कराने के लिए मनुष्य शरीर एवं पुरुषार्थ की आवश्यकता पड़ती है । भूतकाल के युग परिवर्तनों में भी यही होता रहा है । महामानवों, देवदूतों, युग-प्रवर्तकों के रूप में सृष्टा का प्रतिनिधि ही इच्छा पूर्ति में संलग्न रहे हैं । निराकार ब्रह्म के लिए यह कठिन है कि वह स्वयं अपने व्यापक स्वरूप को समेट कर व्यक्तियों का रूप बनाये और सामान्यजनों की तरह चढ़ाव-उतारों से जूझने का उपक्रम अपनाये । शासनाध्यक्ष योजना बनाते और निर्देश देते हैं । असंख्य प्रकार की शासकीय गतिविधियों का कार्यान्वयन करने में तो बड़े अफसरों से लेकर छोटे कर्मचारी तक ही निरत रहते हैं । इतना अवश्य है कि इन कार्यरत अफसरों को उनकी आवश्यकतानुसार अधिकार एवं साधन सरकार की ओर से ही प्रदान किए जाते हैं । व्यक्तिगत हैसियत में तो वे वैसा कुछ कर ही नहीं सकते जैसा कि शासनतन्त्र के अंग रहकर ही कर सकना उनके लिए सम्भव होता है ।

इलाज तो डॉक्टर ही करते हैं । प्रत्यक्षतः उन्हीं की सेवाओं से रोगी लाभ उठाते हैं, किन्तु परोक्षतः सरकारी अनुदानों से ही वहाँ की समूची साधन व्यवस्था चलती है । इमारत, उपकरण, औषधि, वेतन आदि का सरकारी प्रबन्ध न हो तो अनुभवी डॉक्टर भी उस अभावग्रस्त स्थिति में कुछ बड़ा काम न कर सकेंगे । यही बात सैनिकों के सम्बन्ध में भी है । लड़ने का पराक्रम और विजय का श्रेय तो उन्हीं के हिस्से में आता है, पर यह तथ्य भी किसी से छिपा नहीं कि वाहन, वस्त्र, भोजन, अस्त्र, बारूद, निर्वाह जैसी उनकी अनेकों आवश्यकताओं की पूर्ति रक्षा मंत्रालय को ही करनी होती है । परशुराम अपने बलबूते विश्व-विजय का एकाकी अभियान नहीं रच सकते थे । उनसे यह सब तभी सम्भव हो सका जब वे भगवान शिव की इच्छा पूरी करने के लिए भारी जोखिम उठाने के लिए कटिबद्ध हो गए । नल-नील ने पत्थरों को तैराकर समुद्र पुल बनाया था । ऐसा कर सकना उनके लिए तब किसी प्रकार सम्भव न हुआ होता, जब उन्होंने पुल बनाने वाले ठेकेदारों की तरह निजी निर्वाह की दृष्टि रखी होती । सैनिक यदि निजी दुश्मनी निकालने के लिए पड़ोसियों पर आक्रमण करना चाहें, तो उन्हें उन उपकरणों का लाभ नहीं लेने दिया जायेगा, जो देश रक्षा के लिए युद्ध मोर्चे पर जाने के उद्देश्य से मिलता है ।

आध्यात्मिक अनुदानों की सामान्य परम्परा भी रही है और आपत्तिकालीन अतिरिक्त व्यवस्था भी होती है । गुरु शिष्यों को, देवता भक्तों को समय-समय पर अनेकानेक अनुदान देते रहे हैं, पर साथ ही इसका भी ध्यान रहता है कि उपलब्धकर्ता उसे संकीर्ण स्वार्थपरता की पूर्ति में खर्च न करने लगे । "दैवी वरदान दिव्य प्रयोजनों के लिए" का सिद्धान्त यदि समझा जा सके, तो उस व्यापक भ्रम-जंजाल से सहज छुटकारा मिल सकता है, जिसके कारण लोग निजी स्वार्थ-सिद्धि के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लिए पूजा-पाठ के बदले दैवी अनुग्रह जैसा बहुमूल्य झटक लेने का ताना-बाना बुनते रहते हैं और उस अनैतिक प्रसंग में असफल रहते हैं ।

युग सन्धि की बेला में नव सृजन का उत्तरदायित्व सम्भालने वाली दिव्य शक्तियाँ इन दिनों ईश्वरीय प्रयोजनों के लिए जाग्रत आत्माओं की तलाश में हैं । उन्हें वाहन बनाकर अग्रदूतों का काम लेना चाहती हैं । इसमें प्रयोजन तो सृष्टा का पूरा होता है और उसमें भागीदार बनने का साहस दिखाने के बदले श्रेयाधिकारी बनने का लाभ उन्हें मिलता है, जो इन दोनों किसी न किसी रूप में युगशिल्पी की भूमिका निभाने का शौर्य साहस जुटा सकेंगे । पाण्डवों को ऐसा ही श्रेय मिला था । अर्जुन का रथ भगवान ने इसलिए चलाया था कि वह उनकी इच्छानुसार विशाल भारत की, महाभारत की संरचना का कष्टसाध्य कार्य कराने में भगवान का सहयोगी बनने के लिए तत्पर हो । यदि ऐसा न होता, तो भगवान उसके घोड़ों की घास खोदने के लिए नौकरी की अर्जी लेकर थोड़े ही जाने वाले थे । सुदामा को भगवान ने अपना सारा वैभव हस्तान्तरित किया था, उसमें उनके महान गुरुकुल का सुप्रबन्ध करने की दूरदर्शिता सन्निहित थी । यदि उन्होंने स्वयं सेठ बनने के उद्देश्य से याचना की होती, तो तिरस्कारपूर्वक कुछ सिक्के पाकर अपनी क्षुद्रता को सन्तोष दे पाते ।

इन दिनों युग देवता ने सृजन शिल्पियों को ऐसे अलभ्य अनुदान देने का निश्चय किया है, जितना कि वे निजी प्रयास से निजी प्रयोजन के लिए लम्बे समय तक कष्टसाध्य श्रम करने पर भी अर्जित करने में सफल न हो पाते । योगाभ्यास, तपश्चर्या, व्रतशीलता, ब्रह्मविद्या, परमार्थ परायणता के क्षेत्र में गहराई से उतरने वाले ही चेतना के महासागर के कुछ मणिमुक्ता उपलब्ध कर पाते हैं, पर यदि सौभाग्य साथ दे, तो किसी राजाधिराज के अनुग्रह से बहुमूल्य हीरक हार उपहार में बिना मूल्य भी मिल सकता है । इस सम्भावना के पीछे एक तथ्य तो निश्चित रूप से है कि देने वाला किसी कारण उस व्यक्ति पर अत्यधिक उदार हो उठे । निश्चय ही यह कार्य न दो दाता की भावुकता कर सकती है और न याचक की गिड़गिड़ाहट । उसके पीछे कोई ऐसी विशिष्टता होनी चाहिए, जिसके कारण दाता का मन इतना भाव-विभोर हो उठे कि उस रत्नराशि को दिए बिना रुक सकना ही सम्भव न हो सके ।

इन दिनों उच्चस्तरीय आध्यात्म अनुदान सत्पात्रों को वितरण किए जा रहे हैं । सत्प्रयोजन के लिए प्रयुक्त किए जाने वाला आश्वासन दिलाने पर उन्हें सहज ही उपलब्ध किया जा सकता है । सरकार तकाबी बाँटती है । कुआँ खोदने, पशु पालने, उद्योग खड़ा करने जैसे किन्हीं ऐसे कामों के लिए ही वह धन दिया जाता है, जिससे न केवल ऋण लेने वाले का वरन् उस उपार्जन से अन्यान्य लोगों का भी हित साधन होता है । बुद्ध, गाँधी की महानता में ईश्वरीय अनुदान जुड़े हुए थे, पर वे मिले इसी शर्त पर थे कि उनके सहारे आत्म-कल्याण के अतिरिक्त लोक-कल्याण का भी प्रयोजन पूरा हो सके । नारद देवर्षि कहलाते थे । उन्हें विष्णु लोक तक पहुँचने की, भगवान के किसी भी स्थिति में होने पर भी उनसे मिल सकने की, बिना रोकटोक वार्तालाप कर सकने की छूट थी । इसीलिए उन्हें देवर्षि कहा जाता था । यह गौरव अन्य किसी ऋषि को प्राप्त नहीं था । अकेले उन्हीं को ऐसा सौभाग्य क्यों मिला ? इसका एक ही उत्तर है कि वे दैवी उपलब्धियों का पूरा-पूरा उपयोग लोक-शिक्षण के लिए ही करते थे । अपनी इच्छा, सुविधा का ध्यान न रखते हुए परिभ्रमण करते हुए भगवद्भक्ति के प्रसार में, उच्चस्तरीय प्रेरणाएँ भरने में प्रयत्नशील रहते थे ।

युग सन्धि के दिनों हिमालय के आध्यात्मिक ध्रुव केन्द्र से ऐसी दिव्य क्षमताओं का प्रसार विस्तार हो रहा है, जिन्हें ग्रहण, धारण करने वाले असाधारण शक्ति-सामर्थ्य उपलब्ध कर सकें और संसार का तथा साथ-साथ अपना भी भला कर सकें । दैवी अनुदानों के साथ सदा से यह शर्त जुड़ी रही है कि वे ऐसे प्रामाणिक व्यक्तियों के हाथ सौंपे जाय, जिनके द्वारा उनका मात्र सदुपयोग ही बन पड़े, उस अनुदान से विश्व-व्यवस्था में सहायता मिले और सत्प्रवृत्तियों के पनपने, फलने-फूलने की सम्भावना बने । मात्र स्वाथ साधन के लिए किसी ने दैवी अनुग्रह माँगा होगा, तो उसे खाली हाथ ही लौटना पड़ा होगा । निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भगवान ने हर मनुष्य को शरीर, मस्तिष्क और निर्वाह साधनों की सहज सुविधा उत्पन्न की हुई है । रावण, हिरण्याक्ष जैसी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तृष्णा लद पड़े तो बात दूसरी है अन्यथा उचित निर्वाह के लिए हर प्राणी के लिए अपना-अपना सामान्य पुरुषार्थ ही पर्याप्त होता है । कभी किसी को विशेष दैवी अनुग्रह मिले होंगे, तो उनके पीछे इस तथ्य की जाँच-पड़ताल अवश्य हुई होगी कि उस अतिरिक्त अनुदान का उपयोग किस प्रयोजन के लिए किया जाता है । इन दिनों हिमालय पर अवस्थित आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र कुछ ऐसी आलोक किरणें निःसृत कर रहा है, जिसके सहारे स्वार्थ और परमार्थ का संयुक्त समन्वय सम्भव हो सके ।

उद्योगों में एक अत्यन्त सरल, सुविधाजनक एवं बिना जोखिम का उद्योग 'कमीशन' का है । उत्पादक का माल उपभोक्ता तक पहुँचा देने वालों को मध्यवर्ती पारिश्रमिक लाभांश मिलता है । इसी का नाम 'कमीशन' है । ईश्वरीय अनुदानों को सत्पात्रों तक पहुँचा देने की मध्यवर्ती ढुलाई, मजूरी भी इतनी बन जाती है कि उसके द्वारा निजी उद्योग चलाने से भी अधिक लाभ उपार्जन किया जा सके । छोटी-बड़ी एजेन्सियाँ भी कम नफे में नहीं रहतीं । वे लाखों-करोड़ों इसी व्यवसाय में कमाती रहती हैं । इन दिनों सृष्टा की इच्छा जन-जन के मन-मन तक नवसृजन की चेतना उत्पन्न करने और लोकमानस की सत्प्रवृत्तियों के साथ जोड़ देने की है । इस कार्य में जो भी सहायता करना चाहें, अपना श्रम नियोजित करने के लिए इच्छुक हों, इन्हें बेचने वितरण करने के लिए आवश्यक अनुदान मिल सकते हैं । खपत में कमीशन पक्का ।

बीमा से लेकर अनेक व्यवसायों में एजेण्ट लोग भ्रमण करते जन-सम्पर्क साधते, ग्राहक पटाते हैं । साथ ही अपना अच्छा-खासा पारिश्रमिक भी मात्र हाथ-पैर की पूँजी के सहारे वसूल करते रहते हैं । दूसरों के हाथ पर लगाने के लिए मेंहदी पीसने वालों के हाथ अनायास ही रच जाते हैं । ऋषि-मुनियों से लेकर लोकसेवी महामानव यही करते रहे हैं । दैवी शक्तियों का अनुदान जन-जन तक पहुँचाने में वे प्रवृत्त रहे हैं । इससे भगवान की इच्छा पूरी हुई है । जन-जन का हित साधन हुआ है । साथ ही उन लोकसेवियों ने स्वयं भी पुण्यात्माओं का श्रेय सम्पादन किया है । यशस्वी विभूतिवान बने हैं तथा आत्म सन्तोष के साथ जीवन लक्ष्य प्राप्त कर सके हैं । इन दिनों भी ऐसा ही सुयोग-संयोग है । दूरदर्शी इसका सहज लाभ उठा कर सौभाग्यवान बन सकते हैं । साधना से सिद्धि का सिद्धान्त तो सर्वविदित है ही, पर इन दिनों एक ऐसा अलभ्य अवसर उपलब्ध है कि स्वयं की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए उसकी अनुकम्पा, शक्ति-सम्पदा ही नहीं कृतज्ञता भी प्राप्त की जा सकती है । यह सौभाग्य उन्हीं को मिलना है, जो युग सन्धि के दिनों नव-सृजन के लिए अपने श्रम, समय एवं साधनों को किसी अंश में लगाने के लिए व्रतशील हो सकें । उन्हें बैंक खजांची की भाँति विपुल राशि वितरित करते रहने जैसे उत्तरदायित्व भरा सम्मानित पद प्राप्त हो सकता है ।

पृथ्वी का उत्तरी ध्रुव केन्द्र अनन्त अन्तरिक्ष में संव्याप्त ब्रह्माण्डीय सूक्ष्म सम्पदाओं में से जो आवश्यक हैं, उन्हें खींचता रहता है । बचे-खुचे कूड़े-करकट को दक्षिण-ध्रुव के माध्यम से खत्ते में उँडेल देता है । इसी अनुदान के सहारे पृथ्वी के महत्त्वपूर्ण क्षेत्र अपना-अपना गुजारा चलाते हैं । बादल बरसते हैं, तो उनसे खेत, कुएँ, नदी, नाले सभी अपना भण्डार भरते हैं । बादल न बरसें तो किसी जलाशय में एक बूँद भी दृष्टिगोचर न हो । इसी प्रकार अन्तरिक्षीय सामर्थ्य-मेघ धरती पर बरसते हैं । वह उन्हे सोखकर ब्रह्माण्ड की राजकुमारी बनी रहती है ।

ठीक यही भूमिका हिमालय के मध्य केन्द्र में अवस्थित आध्यात्मिक ध्रुव-केन्द्र की होती है । वे ब्रह्माण्डव्यापी दिव्य चेतना का, मानवोपयोगी अति महत्त्वपूर्ण अंश आकर्षित करते हैं । उसे धारणा कहते हैं और जहाँ जिन घटकों की जितनी आवश्यकता पड़ती हैं, वहाँ उसी अनुपात में व्यवस्थापूर्वक पहुँचाते हैं । इस केन्द्र को धरती का स्वर्ग कहा जाता है । पुरातन काल से लेकर अद्यावधि वही सिद्ध पुरुषों की क्रीड़ा-भूमि रही है । देव सत्ता का प्रतिनिधित्व करने वाली आत्माएँ इसी क्षेत्र में सूक्ष्म शरीर से विद्यमान रहती हैं । सुमेरु पर्वत को देव पर्वत कहा गया है । उस पर समस्त देवताओं के निवास करने का पुराणों में उल्लेख है ।

तपस्वी, योगी प्रायः इस क्षेत्र में विद्यमान विशेष प्राण ऊर्जा का लाभ उठाने के लिए, उच्चस्तरीय साधनाएँ करने के लिए पहुँचते हैं । पाण्डव शरीर समेत स्वर्ग प्रयाण के लिए इसी क्षेत्र के स्वर्गारोहण शिखर पर गए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थे । पौराणिक स्वर्ग की ऐतिहासिक एवं भूगोल सम्मत संगति इसी क्षेत्र के साथ बैठती है । दशरथ, अर्जुन, नारद आदि का आवागमन देव सान्निध्य के सन्दर्भ में इसी क्षेत्र में रहा है । मानवी विकास विद्या के विद्यार्थी यही कहते पाये जाते हैं कि आर्य मध्य एशिया से भारत में आये और उन्होंने मध्यवर्ती पड़ाव हिमालय के जिस क्षेत्र में डाला उसका नाम स्वर्ग रखा गया । उस मण्डली के अधिनायक इन्द्र का निवास यही था । तिब्बत के लोगों की मान्यता इस क्षेत्र के सम्बन्ध में ऐसी ही है । थियोसोफिकल सोसाइटी ने भी इसी क्षेत्र में सिद्ध पुरुषों की मण्डली का निवास बताते हुए कहा है कि वहाँ से संसार में ब्रह्माण्डीय चेतना का वितरण होता है । नन्दनवन, महाशिवलिंग वाला कैलाश अभी भी इसी क्षेत्र में देखा जा सकता है ।

उल्लेखों, प्रतिपादनों के अतिरिक्त अनुभूतियाँ भी इस तथ्य को प्रकट करती हैं कि इस समूचे धरातल पर विद्यमान चेतना का ध्रुवकेन्द्र हिमालय के मध्य केन्द्र में है । उसी भाग को 'देवात्मा हिमालय' कहते हैं । इसे भौतिक क्षेत्र के उत्तरी ध्रुव के समान ही आध्यात्मिक चेतना का चुम्बकीय क्षेत्र कहा गया है । वहाँ ब्रह्माण्डीय चेतना में से उपयोगी अंश पकड़ा, खींचा और एकत्रित किया जाता है । आवश्यकतानुसार उसी को जहाँ, जितनी, जिस स्तर की आवश्यकता पड़ती है वहाँ उतना ही प्रेषण, विभाजन, वितरण कर दिया जाता है । इन्हीं विशेषताओं के कारण इस क्षेत्र को आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र कहा गया है । भौगोलिक दृष्टि से इसे गंगोत्री, गोमुख से आगे का, बद्रीनाथ के बीच में पड़ने वाला सुमेरु के आसपास का क्षेत्र कह सकते हैं । प्रज्ञावतार की युगान्तरीय चेतना का विकिरण भी यहीं से निःसृत होता है । इन दिनों उसमें अधिकाधिक प्रखरता बढ़ती चली जा रही है । सूर्योदय के समय की किरणों में मन्दताप होता है, पर मध्यान्ह काल में वे ही प्रचण्ड ऊर्जा धारण करती और प्रचण्ड बनती चली जाती हैं ।

इस केन्द्र में इन दिनों अत्यधिक सक्रियता है । ज्वालामुखी की तरह लपटें उबलती-उछलती दिव्य चक्षुओं से देखी जा सकती हैं । यह विशेष उद्भव इसलिए हो रहा है कि उससे विशिष्टों को विशिष्ट और सामान्यों को सामान्य स्तर की क्षमताएँ सरलतापूर्वक अनुदान के रूप में उपलब्ध हो सकें । यहाँ यह ध्यान रखने योग्य है कि ऐसे अनुदानों को दैवी प्रयोजनों के लिए ही प्रयुक्त करने की शर्त होती है । संकीर्ण स्वार्थपरता की पूर्ति के लिए देवताओं को फँसाने का जो भी जाल-जंजाल बुनता है, वह अपनी ही कुटिलता का कष्टकारक फल स्वयं ही विनिर्मित करता है ।

चेतना के तीन स्तर हैं—कारण, सूक्ष्म, स्थूल । कारण अर्थात् अन्तरात्मा । सूक्ष्म अर्थात् विचारणा । स्थूल अर्थात् क्रियाशीलता । इन्हीं तीन स्तरों को श्रद्धा, प्रज्ञा, निष्ठा के तीन नामों से जाना जाता है । भक्तियोग, कर्मयोग और ज्ञानयोग की विद्या इन्हीं तीनों को विकसित करने के लिए विनिर्मित हुई है । सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम् के रूप में इन्हीं तीनों की व्याख्या-विवेचना होती है । देवता, ऋषि एवं सिद्ध पुरुष इन तीन क्षेत्रों के तीन उपार्जन हैं । मनुष्य इन्हीं तीन शरीरों से आच्छन्न है । कारण शरीर का केन्द्र विन्दु हृदय चक्र, सूक्ष्म शरीर का आज्ञा चक्र और स्थूल शरीर का नाभि चक्र है ।

हठयोग में नाभिचक्र को ही मूलाधार कहते हैं और आज्ञा चक्र में सहस्रार है । मेरुदण्ड के माध्यम से इन्हीं दो सिरों को कुण्डलिनी उत्तेजित करती है । मूलाधार को भूलोक, सहस्रार को ब्रह्मलोक और मेरुदण्ड में तीनों के मध्य चलने वाले आवागमन का मध्यमार्ग 'देवयान' कहा गया है । कुण्डलिनी जागरण का उपक्रम इसी क्षेत्र में होता है ।

हृदय चक्र की उपलब्धि है—अमृतानुभूति । आज्ञा चक्र की दिव्य ज्योति । मूलाधार नाभि चक्र की प्राण ऊर्जा । इन तीनों दिव्य शक्तियों की अपनी-अपनी विशेषताएँ हैं । अमृतानुभूति का रसास्वादन करने वाले देवत्व के साथ जुड़ी हुई विभूतियों से भर जाते हैं । व्यक्तिगत रूप से वे आप्तकाम बनते हैं । कामना की तृप्ति, तृष्णा की तुष्टि और आकांक्षा की शान्ति का त्रिविध आनन्द मिलता है । साथ ही समूचे वातावरण को, प्राणि समुदाय को भाव संवेदनाओं, दिव्य प्रेरणाओं से भर देने की सामर्थ्य उनमें होती है । प्रकारान्तर से इस क्षेत्र के समर्थों को धरती के देवता , अग्रदूत, अवतारी आदि नामों से पुकारते हैं ।

सूक्ष्म शरीर के सामर्थ्यवानों को ऋषि, मनीषी, तत्वदर्शी आदि नामों से पुकारते हैं । यथार्थता को जानने की उनमें विशेषता होती है । अतीन्द्रिय क्षमताओं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के धनी होते हैं । बौद्धिक क्षेत्र में उनके पराक्रम उच्चस्तरीय होते हैं । व्यास का साहित्य सृजन, धन्वन्तरि का आयुर्वेद, द्रोणाचार्य की शस्त्र विद्या, नागर्जुन की रसायनिकी, शुश्रुत की शल्य विद्या आदि अनुसन्धानों में किन्हीं यन्त्र उपकरणों की सहायता नहीं ली गई थी । इन ऋषियों ने अपने सूक्ष्म शरीर को ही अनेकानेक यन्त्र उपकरणों की आवश्यकता पूर्ण कर सकने योग्य बना लिया था । दधीचि तो चलते-फिरते डायनामाइट राडार थे । उन्होंने अपने समय में अणु बम की भूमिका अपने अस्थिपंजर से ही विनिर्मित कर दी थी । लोक-शिक्षण एवं लोक-निर्माण में ऋषियों की ही वाणी तथा प्रतिभा काम करती है । दिव्य दृष्टि से वे त्रिकालदर्शी होते हैं और शाप-वरदान के माध्यम से अनेकों पर अनुशासन रखते तथा अभ्युदय का अवलम्बन प्रदान करते हैं ।

स्थूल शरीर में ऊर्जा का निवास है । उसी के न्यूनाधिक होने से मनुष्य की बलिष्ठता तथा साहसिकता घटती-बढ़ती रहती है । कायाबल के नाम से जानी जाने वाली बलिष्ठता देखने में तो रक्त-माँस की परिणति प्रतीत होती है । किन्तु वस्तुतः वह प्राणतत्व के अनुपात की न्यूनाधिक पर आश्रित है ।

रोगनिरोधक शक्ति, जिजीविषा, स्फूर्ति, तेजस्विता, आकर्षण क्षमता, प्रभावोत्पादकता, साहसिकता, श्रम में अभिरुचि, दृढ़ता, धैर्य, आशावादिता, प्रतिकूलताओं से निपटने की सूझबूझ जैसी अनेकों शारीरिक-मानसिक विशेषताओं का आधार प्राणशक्ति की न्यूनाधिकता पर निर्भर है । इसके लिए शारीरिक संरचना का भी प्रभाव तो पड़ता है किन्तु अंशतः वे प्राण शक्ति पर ही अवलम्बित हैं । गाँधी, बिनोवा जैसे दुर्बलकाय व्यक्ति भी सैण्ड, किंगकांग, जैविस्को, गामा और विश्वविख्यात पहलवानों की तुलना में अधिक पराक्रमी ही सिद्ध हुए हैं । उन्हें कृश काय होते हुए भी दुर्बल कह सकने की घृष्टता कोई नहीं कर सकता ।

मस्तिष्क शरीर का अंग है । उसे ग्यारहवीं इन्द्रिय कहा जाता है । भौतिक प्रयोजनों में काम आने वाली दक्षता भी शरीर क्षेत्र की विशेषता ही मानी जाती है । अस्तु चेतना का शरीर से जुड़ा हुआ लोक व्यवहार में काम आने वाला भाग चातुर्य कहलाता है और वह कायिक विशेषता के क्षेत्र में ही सम्मिलित किया जाता है । उस क्षेत्र का सूत्र-संचालन प्राण-शक्ति ही करती है । प्रजनन की उत्तेजना क्षमता से लेकर कलाकारिता, एकाग्रता, सरसता, तन्मयता जैसे गुणों का उभार प्राण-चेतना की प्रखरता का ही परिचय देते हैं । शरीर के इर्द-गिर्द विशेषता चेहरे के इर्द-गिर्द रहने वाला तेजोवलय उसी सूक्ष्म शक्ति का स्थूल परिचय है । शरीरशास्त्री इसी को जीवनी शक्ति कहते हैं । वस्तुतः यह एक प्रकार की चेतना विद्युत है और विद्युत की तरह ही अपने क्षेत्र में चमत्कारी परिणतियाँ उत्पन्न करती हैं । आध्यात्म की भाषा में इसी को निष्ठा कहते हैं ।

ज्ञान जिसे प्रकाश कहते हैं, वह मन और बुद्धि से आगे की शक्ति है । उसे प्रज्ञा कहते हैं । स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन, मनन के माध्यम से उसी को विकसित किया जाता है । दूरदर्शिता, विवेकशीलता, आत्मबोध, आत्म-विकास, आत्मावलम्बन जैसी विशेषताएँ प्रज्ञा की परिणति हैं । कल्पना, विवेचना और निर्धारण भौतिक प्रयोजन सँभालने वाली लोक व्यवहार की दक्षता को ही आमतौर से बुद्धि समझा जाता है और क्रियाकुशल लोग बुद्धिमान कहे जाते हैं, पर आध्यात्म क्षेत्र का वर्गीकरण इससे भिन्न है । उसमें नीर-क्षीर-विवेक कर सकने वाली मात्र औचित्य के मोती ही उदरस्थ करने वाली हंस वृत्ति को ही दूरदर्शी विवेकशीलता के नाम से जाना-माना गया है । अचेतन, उच्च चेतन के नाम से मनोविज्ञानी जिन रहस्यमयी परतों की चर्चा करते रहते हैं, उन्हें आध्यात्म की भाषा में चित्त कहा गया है । प्रज्ञा को चिति या चित शक्ति भी कहते हैं । दूरदर्शन, दूरश्रवण, भविष्य-ज्ञान, विचार-संचालन, कुण्डलिनी प्रकरण, षटचक्र वेधन, पंचकोश जागरण आदि नामों से इसी क्षेत्र की रहस्यमयी क्षमताओं की चर्चा होती रहती है । आज्ञाचक्र, ब्रह्मरन्ध्र, सहस्रार आदि नामों से ज्ञात क्षेत्र की अधिष्ठात्री प्रज्ञा ही है । इसको विकसित करने में शारीरिक स्थिति का कम और संकल्प शक्ति का अधिक योगदान रहता है ।

ऊपर की पंक्तियों में प्राण और प्रज्ञा का संक्षेप संकेत जान लेने के साथ-साथ ही आस्था क्षेत्र पर भी एक बार पुनः दृष्टिपात कर लेना चाहिए । अपने सम्बन्ध में, अपनी मान्यताओं के सम्बन्ध में, साथियों के सम्बन्ध में, वस्तुओं के साथ घनिष्ठता के सम्बन्ध में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जैसी भी मान्यताएँ परिपक्व हो जाती हैं, उसी के अनुरूप अपनी एक विशेष दुनिया बनकर खड़ी हो जाती है । नर और नारी के कलेवर विशुद्ध रूप से आत्म-विश्वास के ऊपर निर्भर हैं । भ्रूण की आरम्भिक अवस्था में शरीर के दोनों अवयव समान रूप से विद्यमान रहते हैं । जीव की पूर्व संचित आस्था जिस वर्ग में रहने की अभ्यस्त होती है उसी का चयन करती है और वही पक्ष विकसित होने लगता है । सामान्य जीवन में भी यदि मनुष्य विपरीत लिंग के सम्बन्ध में अपनी मान्यता परिपक्व कर ले तो इस जन्म में भी लिंग परिवर्तन सम्भव है । हेय अथवा उत्कृष्ट परिस्थितियों में जीवनयापन करना वस्तुतः आस्था क्षेत्र का ही प्रभाव परिणाम है । 'मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है—इस लोकोक्ति के साथ इस रहस्य से भी अवगत होना चाहिए कि हर मनुष्य अपनी विलक्षण दुनियाँ स्वयं ही गढ़कर खड़ी करता है । रेशम के कीड़े, मकड़ी के जाले का उदाहरण देकर यह समझा जा सकता है कि मनुष्य किस प्रकार उसी में उलझा, जकड़ा, रोता, खीझता या हँसता-हँसता समयक्षेप करता है । यदि कोई साहसी अपने खोखले को उतार कर नया सृजन आरम्भ कर दे तो निश्चय ही उसे महाप्रलय के उपरान्त विधाता द्वारा की जाने वाली नई सृष्टि की उपमा दी जा सकेगी । ध्रुव, प्रह्लाद, पार्वती, सुकन्या, अशोक, भर्तृहरि, वाल्मीकि, अंगुलिमाल, सूर, कबीर जैसे अगणित उदाहरण ऐसे हैं जिनमें मनुष्यों ने अपने कायाकल्प किए हैं और इसी जन्म से कुछ से कुछ बन गए हैं ।

देवताओं, मन्त्रों, योगाभ्यासों, तपश्चर्याओं के माध्यम से मिलने वाली दक्षिणमार्गी एवं वाममार्गी साधनाओं के जो चमत्कारी परिणाम सामने आते हैं उनमें कर्मकाण्डों का तो अकिंचन ही प्रभाव होता है । अधिकांश उत्पादन तो भाव श्रद्धा ही करती है । श्रद्धा न जागे और कर्मकाण्डों की लकीर पिटती रहे तो प्राण विहीन शरीर की तरह उस बिडम्बना का कोई महत्त्वपूर्ण परिणाम प्रस्तुत न हो सकेगा । भूत-प्रेतों का अस्तित्व तो है पर जनसाधारण के ऊपर उनका जो प्रभाव या आतंक पाया जाता है उसे एक प्रकार से आन्तरिक उत्पादन ही कहना चाहिए । छाया पुरुष की तरह देवता भी प्रकट किए जाते हैं और साधक की श्रद्धा के अनुरूप वे अपनी सामर्थ्य का न्यूनाधिक प्रमाण देते रहते हैं । रामकृष्ण-परमहंस की काली उनके लिए जो चमत्कार प्रस्तुत करती थी वह दक्षिणेश्वर के अन्य किसी पुजारी को उपलब्ध नहीं हुआ । मीरा की भाँति कृष्ण और किसके साथ नाचने आते हैं ? एकलव्य के द्रोणाचार्य जैसा गुरु कौरवों-पाण्डवों को भी उपलब्ध न हो सका । श्रद्धा की शक्ति यही है जो झाड़ी से भूत उत्पन्न करती है । इसे निष्ठा और प्रज्ञा से भी उच्चस्तरीय सामर्थ्य कहा गया है ।

अन्तःकरण का केन्द्र नाभिक हृदयचक्र में माना गया है । भाव संवेदनाएँ यहीं से उभरती हैं । सहृदयता, हृदयहीनता के रूप में जो चर्चा होती है उसे इसी संस्थान का भला-बुरा स्वरूप कह सकते हैं । अपने सम्बन्ध में जैसी भी मान्यता इस क्षेत्र में गढ़ ली गई है । उसी प्रतिमा को व्यक्तित्व की अधिष्ठात्री कहना चाहिए । 'यो यच्छ्रद्धः स एव सः' के सूत्र में गीताकार ने इसी रहस्य का उद्घाटन किया है । आस्थाएँ आकांक्षाएँ उत्पन्न करती हैं । आकांक्षा की प्रेरणा से विचार का प्रवाह चलता है । विचारणा क्रिया को धकेलती है । क्रिया के रूप में जीवनचर्या बनती है । यह दृश्यमान व्यक्तित्व है जो अपने स्तर के सहयोगियों को, परिस्थितियों को आमन्त्रित करता है । इस पर थोड़ा विस्तारपूर्वक विचार किया जा सके, तो प्रतीत होगा कि आस्था संस्थान ही पूरी तरह व्यक्तित्व का स्वरूप गढ़ता है । जो जैसा है उसे तदनुरूप स्वर्ग या नर्क की परिस्थितियों में रहना पड़ता है । उद्यान में कीड़ा पुष्पों पर बैठता है और गुबरीला उसी क्षेत्र में पड़े गोबर की तलाश कर उसी में घर बनाता है । यह अपने-अपने चयन और स्वभाव की परिणति की ही परिणति है । महानता और क्षुद्रता कहीं ऊपर से नहीं टपकती । यह आस्था क्षेत्र में उत्पन्न की गई वृक्षावली ही है । विषवृक्ष उगे या कल्पवृक्ष, यह निर्णय करना अपनी-अपनी आन्तरिक स्थिति पर निर्भर है । विचार-शक्ति की तुलना में भावना की सामर्थ्य असंख्यगुनी है । इसी प्रकार निष्ठा से प्रज्ञा को और प्रज्ञा से श्रद्धा को क्रमशः अधिक उच्चस्तरीय, अधिक सूक्ष्म, अधिक समर्थ कहा जा सकता है । प्राण का आवरण शरीर, प्रज्ञा का संस्थान, मस्तिष्क और श्रद्धा का हृदय है । इतने पर भी वे इन अवयवों के साथ जुड़ी नहीं हैं । वे अदृश्य जगत से अवतरित होती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं । प्रतिनिधि चुनकर तो अपने क्षेत्रों से ही आते हैं। पार्लियामेन्ट में तो उनकी सीटें भर नियत रहती हैं । चेतना के दिव्य अनुदान मनुष्य के तीन शरीरों को मिलते हैं । वे किस आसन पर बैठें, किस कमरे में ठहरें इसी की चर्चा मूलाधार (नाभिचक्र), तृतीय नेत्र (आज्ञाचक्र), अन्तराल (हृदयचक्र) के रूप में की गई है । सूक्ष्म शरीर, स्थूल शरीर और कारण शरीरों का उद्गम इन्हीं केन्द्रों को समझा गया है ।

समस्त साधनाएँ इन्हीं तीनों शरीरों को—केन्द्रों को विकसित परिष्कृत करने के लिए की जाती हैं । उनके स्वरूपों में भिन्नता कितनी ही क्यों न हो, वस्तुतः उस सभी का उद्देश्य तीन शक्ति-केन्द्रों में से ही किसी न किसी जागरण का होता है । व्यक्तित्व के साथ गुथी हुई विभूतियाँ यही हैं । इन्हीं की कीमत पर दुनिया के बाजार में किसी भी वस्तु को खरीदा जा सकता है ।

कहा जा चुका है कि दिव्य उद्गम स्रोतों को जगाने के लिए सामान्यतया हर साधक को स्वयं ही पुरुषार्थ करना पड़ता है । आत्मशोधन, आत्मपरिष्कार, योगाभ्यास, तपसाधन के चार चरण मिलने से साधना का समग्र प्रयोजन पूरा होता है । सर्वतोमुखी प्रगति का, आन्तरिक उत्कर्ष का एवं भौतिक अभ्युदय का आधार इन्हीं प्रयासों से खड़ा होता है ।

किन्तु यह विशेष समय है युग सन्धि की बेला में जाग्रत आत्माएँ अनुदान के रूप में भी इनका लाभ ले सकती हैं । स्मरण रखने योग्य तथ्य एक ही है कि इन दैवी अनुदानों को परमार्थ प्रयोजनों में लगाने का निश्चय हो तो ही कुछ पल्ले पड़ेगा अन्यथा स्थान न मिलने पर धर्मशाला के द्वार से मुसाफिरों के लौट जाने की तरह आह्वान किए दैवी अनुदान भी खिन्न होकर वापस लौट जायेंगे ।

पात्रता एवं पूर्व स्थिति

युग सन्धि के बीस वर्षों में १९८१ से २००० तक हिमालय के ध्रुव केन्द्र से एक दिव्य प्रवाह विशेष रूप से निःसृत हो रहा है । उसे ग्रहण करने की सुविधा उन सभी को है, जो संकीर्ण स्वार्थपरता के व्यामोह से थोड़ा ऊँचा उठकर इस अनुदान को आत्म-कल्याण एवं लोक-मंगल में प्रयुक्त करें । वैसा कर सकने के योग्य अपनी मनोभूमि विकसित करने का प्रयास आरम्भ करें । यह कार्य पण्डिताऊ संकल्प पढ़ देने जीभ से झूठे-सच्चे आश्वासन देने, एवं मानसिक छल करने के बदले में सम्भव न हो सकेगा । ऐसा छल तो आजकल पूजा उपचार के समय पर किए जाने वाले स्तवन, कीर्तनों में आये दिन होता ही रहता है । अन्तरात्मा के सामने कोई प्रवंचना नहीं चलती । वहाँ मात्र यथार्थता को ही मान्यता मिलती है ।

महाकाल की युगान्तरीय चेतना इन दिनों अवांछनीयता उन्मूलन एवं सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन में निरत है । उस प्रकार की एक सशक्त झाँकी प्रज्ञा अभियान के अन्तर्गत चल रहे नवसृजन प्रयत्नों में भी देखी जा सकती है । इस स्तर के प्रयत्नों में भागीदार बनने के लिए समयदान-अंशदान की आवश्यकता पड़ेगी ही । इनसे बच निकलना, उदार पराक्रमों से दूर रहना और कल्पनालोक की असंगत उड़ानें उड़ते रहने से वह वस्तुस्थिति बनती ही नहीं जिसके आधार पर सामयिक सौभाग्य की तरह बरसने वाले दिव्य अनुदानों का लाभ उठाया जा सके । इसकी पात्रता, नवसृजन के उत्तरदायित्व को भी शरीर एवं परिवार निर्वाह जितना महत्त्व देने एवं प्रयास करने से ही उभरती है । दैवी उपलब्धियों के लिए पूजा तो उपचार मात्र है । वैसी परिस्थितियाँ पात्रता विनिर्मित किए बिना और किसी तरह बनती ही नहीं । आत्मशोधन और आत्म-परिष्कार के लिए किए जाने वाले प्रयास ही किसी की आध्यात्मिक निष्ठा का प्रमाण-परिचय देते हैं ।

युग सन्धि के पावन पर्व पर इन दिनों उपलब्ध हो सकने वाले त्रिविध दिव्य प्रवाहों से लाभान्वित होने की उपचार प्रक्रिया अत्यन्त सरल है । याचना हाथ जोड़कर, दाँत निपोरकर, पल्ला पसारकर, अर्जी लिखकर किस प्रकार की जाय और उनमें से किस प्रयोग से कितना लाभ मिलेगा, यह गणित करना व्यर्थ है । मूल प्रश्न पात्रता का है । देने वाला दे सकता है क्या ? लेने वाले में उसके सदुपयोग की क्षमता है क्या ? इन्हीं दो प्रश्नों के आधार पर इस संसार में भी आदान-प्रदान का व्यवहार चलता है । यही नीति आध्यात्म जगत में भी प्रयुक्त होती है । सिद्धि के लिए की जाने वाली साधना में पूजा उपचारों का स्वल्प अंश अपनाने से ही काम चल जाता है । मूल प्रश्न पात्रता विकसित करने का है । यथार्थवादी साधक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपना ध्यान एवं पुरुषार्थ उसी आत्मशोधन एवं आत्मपरिष्कार की प्रक्रिया पर ही केन्द्रित करते हैं । कठिन कार्य यही है । उससे बचकर, उपचारों के सहारे उछलकर आकाश में उड़ने लगने की कल्पना-जल्पना तो असंख्यों करते हैं, पर प्रगति पथ पर अग्रसर होने और सफलता के लक्ष्य तक पहुँचने के लिए धरती पर अपने ही दो कदम उठाते हुए चलना होता है । यह तथ्य हजार बार नोट किया जाना चाहिए कि आत्मशोधन और आत्मपरिष्कार के लिए किए प्रयत्न ही साधक की पात्रता बढ़ाते और उस क्षेत्र की उच्चस्तरीय सफलताओं का सुनिश्चित आधार बनाते हैं ।

इसके लिए तीन उपाय हैं—(१) उपासना, (२) साधना, (३) आराधना । उपासना अर्थात् आदर्शों के समुच्चय पारब्रह्म के साथ अधिकाधिक समीपता स्थापित करना । उसकी प्रेरणाएँ अधिकाधिक मात्रा में आत्मसात् करना । सान्निध्य की भक्ति-भावना उभारना और चन्दन के समीप उगने वाले झाड़ की तरह अधिकाधिक सुगन्धित बनते जाना । क्रमशः अग्नि और ईंधन जैसी एकात्मता प्राप्त करना—यही है अन्तरात्मा का उच्चस्तरीय श्रद्धा से भर लेना । भक्तियोग का उद्देश्य इसी स्थिति को उभारना है ।

साधना, अर्थात् जीवन साधना । आत्मानिरीक्षण, आत्मशोधन, आत्मनिर्माण एवं आत्मविकास की अन्तःचेतना उत्पन्न करने के लिए स्वाध्याय, सत्संग, चिन्तन, मनन का नियमित प्रबन्ध करना । इन्द्रिय संयम, समय संयम एवं विचार संयम को ध्यान में रखते हुए दिनचर्या बनाना शेष जीवन में अधिक उत्कृष्टता का समावेश करते चलने की योजना बनाना । उसे कार्यान्वित करना । अन्तरंग में सुसंस्कारिता का अभिवर्द्धन और व्यवहार में सज्जोनोचित सभ्यता का अभ्यास करना । इन निर्धारणों को संकल्पपूर्वक, स्वभाव-अभ्यास का अविच्छिन्न अंग बनाने के लिए प्रयत्नरत रहना । संक्षेप में यही है जीवन साधना, जिससे अनगढ़ को सुगढ़ बनाया जाता है । इसी प्रयास से नर को नारायण बनने का सौभाग्य मिलता है ।

आराधना अर्थात् लोकमंगल के लिए समयदान-अंशदान का एक महत्त्वपूर्ण अंश नियोजित किए रहना । समाज ऋण से मुक्ति, ईश्वरीय अपेक्षा की पूर्ति एवं सर्वतोमुखी प्रगति के तीनों ही उद्देश्य इस उदार परमार्थ परायणता के बदले ही खरीदे जाते हैं । इन दिनों की सर्वोपरि परमार्थ साधना लोक मानस का परिष्कार है । सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन से ही अवांछनीय प्रवाह उलटे जा सके हैं । आस्था संकट के निवारण, जनमानस के परिष्कार, सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन के निमित्त चल रहे प्रज्ञा प्रवाह में भागीदार बनकर यह आराधना प्रयोजन अधिक ऊँचे स्तर का सम्पन्न किया जा सकता है।

व्यक्ति निर्माण, परिवार निर्माण और समाज निर्माण की बहुमुखी प्रवृत्तियाँ इन दिनों में युगान्तरीय चेतना द्वारा व्यापक-विस्तृत की जा रही हैं । इसी आलोक से साधक अपनी जीवनचर्या में कुछ न कुछ आदर्शवादी प्रसंगों को नए सिरे से धारण कर सकते हैं । जो प्रयत्न चल रहे हों उन्हें बढ़ा सकते हैं । पात्रता विकास की दिशा में प्रयत्नशील जाग्रत आत्माओं के लिए हिमालय से अरुणोदय काल जैसे आलोक वितरण का लाभ सरलतापूर्वक मिल सकता है । जो कार्य चिरकाल के कठोर श्रम साधना से सम्पन्न होता है, वह इस दिव्य प्रवाह के साथ सम्बन्ध जोड़ लेने पर सरलतापूर्वक सम्पन्न हो सकता है ।

यह प्रवाह प्रातः सूर्योदय से एक घण्टा पूर्व आरम्भ होता है और सूर्योदय तक चलता है । इसी प्रकार सायंकाल सूर्यास्त से लेकर एक घण्टा उपरान्त तक यह प्रवाह प्रक्रिया चलती रहती है । इसी बीच साधना के लिए बैठना चाहिए । मुख हिमालय की दिशा में रखा जाय । भारत में अधिकांश स्थानों में हिमालय उत्तर में पड़ता है किन्तु अन्य देशों में वह अन्य दिशाओं में होगा । उन्हें अपना मुख इसी आधार पर रखकर बैठना चाहिए कि वहाँ हिमालय किस दिशा में पड़ता है ।

एकाकी या सामूहिक बैठने की जहाँ जैसे व्यवस्था हो वहाँ वैसा प्रबन्ध कर लेना चाहिए । जहाँ अन्य साथी नहीं वहाँ एकाकी ही बैठना पड़ेगा । किन्तु जहाँ कुछ दूसरे साथी भी मिल सकें वहाँ सामूहिक रूप से बैठना अधिक प्रभावी होगा । एक उद्देश्य से, एक स्थान पर एक जैसी मनोभूमि के लोग बैठते हैं, तो उनकी संयुक्त शक्ति का लाभ सभी को मिलता है । इसलिए प्रत्यत्न उसी के लिए करना चाहिए । एकाकी बैठने का लाभ एक व्यक्ति को ही मिलता है, किन्तु सामूहिक प्रयत्नों की सम्मिलित प्रतिक्रिया सभी को उस संयुक्त शक्ति का लाभ देती है और वे सभी अपेक्षाकृत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अधिक लाभ में रहते हैं । ऐसे संयुक्त प्रयत्नों का प्रभाव न केवल साधकों को वरन् समूचे संसार को मिलता है । इस प्रकार संयुक्त साधना से विश्व सेवा का पुण्य अर्जन भी साथ-साथ बन पड़ता है । आत्मोत्कर्ष का, तीनों शरीरों की प्रखरता का प्रत्यक्ष लाभ तो है ही ।

यों यह प्रवाह निरन्तर उपर्युक्त समय पर जारी रहता है और उसे दैनिक रूप से भी उपलब्ध किया जा सकता है किन्तु सामान्यतः यही सुविधाजनक रहेगा कि सप्ताह में एक बार रविवार या गुरुवार को यह संयुक्त साधना का क्रम चलाया जाय । प्रातः सुविधा रहेगी या सायंकाल, यह निर्धारण साधकों की मनःस्थिति एवं परिस्थिति को देखकर किया जा सकता है । और आवश्यकतानुसार उसमें फेर-बदल भी हो सकता है । इस ध्यान धारणा में सम्मिलित होने के लिए स्नान आवश्यक नहीं है फिर भी हाथ, पैर, मुँह धोकर तो बैठना ही चाहिए । वस्त्र अपेक्षाकृत कम रहें । सम्भव हो तो धुले पहनें ।

स्मरण रहे, यह ध्यान धारणा का अभ्यास नहीं अनुदान ग्रहण का प्रयोग है । इसलिए इसे अभ्यास की संज्ञा नहीं देनी चाहिए । बादल बरसने की, सूर्य प्रकाश में बैठकर ऊर्जा लाभ लेने की मनःस्थिति में ही साधकों को अपना आसन ग्रहण करना चाहिए और पूरे समय इसी मनोभूमि को बनाये रहना चाहिए । अभ्यास के लिए आधा घण्टा समय निर्धारित है । घड़ी का प्रबन्ध रखे और उतने ही समय में प्रक्रिया पूर्ण करें । तीन शरीरों के लिए तीन स्तर के इन तीन प्रवाहों को बारी-बारी करके एक-एक बार प्रयोग करते रहना चाहिए ।

ध्यान मुद्रा

दिव्य प्रवाह ग्रहण करने के लिए पंक्तिबद्ध होकर बैठें । अगल-बगल की और आगे-पीछे की दोनों ही पंक्तियाँ सही-सीध में होनी चाहिए ।

जिन्हें खाँसी, जमुहाई आती हो, जो बीमार हों, जिनके घुटने आधा घण्टा बैठे रहने की स्थिति में न हों, उन्हें इस ध्यान धारणा में नहीं बिठाना चाहिए । बालकों, अनपढ़, अनुभूझों, अर्ध-विक्षिप्तों को भी नहीं बिठाना चाहिए । वे अस्त-व्यस्त हरकतें करते हैं और दूसरों का ध्यान बँटाकर विघ्न खड़ा करते और वातावरण बिगाड़ते हैं । अनुपयुक्तों को छूट देना सम्मिलित करना सारे प्रयत्न को ही अस्त-व्यस्त कर देने के समान है । इस सन्दर्भ में अनुशासन बरता जाना चाहिए और किसी के प्रसन्न होने न होने की चिन्ता न करके निर्धारित अनुशासन बनाये ही रहना चाहिए । गोदी में बच्चे लेकर न बैठें । बीच-बीच में लोग उठते या बैठते न चलें । इस दृष्टि से समय पर कार्य आरम्भ करना चाहिए और पीछे आने वालों को साधकों की पंक्ति में न बिठाकर कुछ दूरी पर अन्यत्र बिठाना चाहिए, जिससे वे लाभ तो ले सकें पर अव्यवस्था फैलाने की गड़बड़ी न करें । बच्चे अपने अभिभावकों के पास दौड़-धूप न करने लगें—पालतू कुत्ते-बिल्ली अपने मालिकों के इर्द-गिर्द मँडराने न लगें, इसलिए इनके प्रवेश को प्रतिबन्धित किया जाय और रोकथाम के लिए चौकीदार नियुक्त किया जाय ।

सभी ध्यान मुद्रा में बैठें । इसके लिए छः अनुशासन निर्धारित हैं । इन्हें प्रवक्ता उसी प्रकार बोले जिस प्रकार ड्रिल में कप्तान बोलता है और सैनिक स्वयं सेवक उन 'कॉशनों' का परिपालन करते हैं । हर 'कॉशन' के बीच एक-एक मिनट का मध्यान्तर होना चाहिए ताकि उस स्थिति को ठीक प्रकार बना सकना सम्भव हो सके ।

(१) सावधान—जागरूक । चुस्त । उपेक्षा नहीं । उदासी नहीं । अस्त-व्यस्तता नहीं ।

(२) शान्त चित्त—एकाग्रता । एकनिष्ठा । तन्मयता । मानसिक अनुशासन । मन के स्वामी । रुकने का आदेश दें । भागने से रोकें । न चंचलता चलदे दें, न उच्छृंखलता । मन की भगदड़ को दबाएँ-दबोचें ।

(३) स्थिर शरीर—अविचल । सुदृढ़ । सुनिश्चित । स्थिर चट्टान की तरह । डगमगाएँ नहीं । अंगों को हिलाएँ नहीं । गरदन घुमाएँ नहीं ।

(४) कमर सीधी—झुकिए नहीं । सीना तानें । मेरुदण्ड में प्राण प्रवाह बहने दें । इड़ा-पिंगला-सुषुम्ना का मार्ग सीधा रखें ।

(५) हाथ गोदी में—बायाँ हाथ नीचे । दायाँ हाथ ऊपर । दो का मिलन । सहकार-एकात्म । प्राण विद्युत का सर्किल सर्किट ।

(६) आँखें बन्द—प्रवृत्ति अन्तर्मुखी । प्रवेश अन्तर्जगत में । गुफा प्रवेश । अन्तः पर्यवेक्षण ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिशोधन-परिवर्धन । अनात्म प्रवेश पर प्रतिबन्ध । पलक बन्द कपाट बन्द ।

ध्यान मुद्रा । भाव समाधि । योग निद्रा । आत्मस्थ समाधिस्थ ।

यह आसन सिद्धि का प्रथम सोपान है । इसके उपारान्त ध्यान आरम्भ किया जाता है । एक दिन एक ध्यान । समय आधा घण्टा ।

यह ध्यान मुद्रा तीनों साधनाओं के आरम्भ में करनी होती है । उनके 'कॉशन' देते समय उनकी उपर्युक्त विवेचनाएँ भी साथ-साथ करनी चाहिए । यह विवेचनाएँ एक ही स्थान पर इसलिए लिख दी गई हैं कि छपने में बार-बार उनकी पुनरावृत्ति अटपटी न लगे*। हर बार, हर साधना में इन्हें कहा जाना चाहिए ।

अन्त में पाँच बार ॐकार गुंजन इस प्रकार कंठ से करना चाहिए, मानो शंख-ध्वनि हो रही हो ।

तीन शरीरों को तीन प्रार्थनाएँ करने के उपरान्त ध्यान प्रक्रिया तो समाप्त हो जाती है, किन्तु इसके बाद भी पाँच मिनट तक शान्तिपूर्वक बैठे रहना चाहिए । इस अवधि में जो पाया गया है, उसे सीखने—पचाने की भावना करते रहना चाहिए । उसके बाद आँखें खोलनी चाहिए और सिर तथा आँखों पर हाथ फेर कर योगनिद्रा समाप्त करनी चाहिए । इसके बाद ही उठना उचित है ।

इस साधना को एक प्रकार की ड्रिल समझा जाय, जिसमें एक सूत्र संचालन निर्देश देता है—शेष सभी साधक उसका अनुशासनपूर्वक पालन करते हैं । इस आधार पर हिमालय की शक्ति को ग्रहण-धारण करके वे दिव्य अनुदान पाये जा सकते हैं, जिनसे स्थूल शरीर की प्राण ऊर्जा, सूक्ष्म शरीर की दिव्य दृष्टि और कारण शरीर की सोमपान की देवत्य जैसी मस्ती का आनन्द उपलब्ध किया जा सके ।

सूक्ष्म शरीर से प्रज्ञा-तीर्थ में उपस्थिति

यहाँ ध्यान कहाँ बैठकर किया जा रहा है, इसके लिए विशेष स्थान पर पहुँचने की धारणा करनी चाहिए । इसके लिए शान्ति कुँज, हरिद्वार की धारणा सर्वोत्तम है । अपने घर-नगर में बैठकर ध्यान किया जा रहा है—यह चिन्तन हटाकर सोचना चाहिए कि अपना सूक्ष्म शरीर हरिद्वार जा पहुँचा और वहाँ के निर्धारित साधना कक्ष में बैठकर यह अभ्यास किया जा रहा है ।

(१) गंगा की गोद । (२) हिमालय की छाया। (३) दिव्य वातावरण । (४) दिव्य संरक्षण । इन चार विशेषताओं से युक्त साधना स्थल की भावना बना लेने से प्रतीत होता है कि किसी दिव्य लोक में पहुँचकर साधना की जा रही है । उच्चस्तरीय योग साधना एवं तपश्चर्या के लिए दूरदर्शी लोग स्थान चयन कर विशेष रूप से ध्यान देते हैं । भगवान राम ने तीनों भाइयों सहित साधना तपश्चर्या अयोध्या में नहीं, हिमालय-उत्तराखण्ड में वशिष्ठ आश्रम के इर्द-गिर्द रहकर सम्पन्न की थी । हिमालय आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र है । जिस प्रकार पृथ्वी के ध्रुव क्षेत्र पर अन्तर्ग्रही अनुदानों का आदन-प्रदान होता है, उसी प्रकार हिमालय की व्यापक ब्रह्मचेतना के अनेकानेक अनुदान धरती पर बरसने एवं वहाँ से क्षेत्रों तथा व्यक्तियों को वितरण करने का सिलसिला चलता है । गंगा को स्वर्ग देवी माना गया है । भागीरथ के तप और शिव के जटा धारण अनुदान का जैसा समावेश गंगा में है, वैसा अन्यत्र और किसी नदी सरोवर में नहीं । गंगा और हिमालय के संयोग वाला क्षेत्र तपोवन कहलाता है । इसमें दिव्य वातावरण अभी भी भरा-पूरा देखा जा सकता है । देवात्मा हिमालय उसी क्षेत्र को कहते हैं, जिसमें गंगा के सान्निध्य में एक विशिष्ट प्रकार की आध्यात्म चेतना का समावेश पाया जाता है । साधना की दृष्टि से यह क्षेत्र इस धरती पर अनुपम है ।

प्रज्ञावतार की युगान्तरीय चेतना का अवतरण क्षेत्र भी यही । उसे आध्यात्म गंगा का सामयिक अवतरण केन्द्र कहा जा सकता है । जिन्हें उस क्षेत्र में थोड़े समय भी साधना का अवसर मिलता है वे अनुपयुक्त वातावरण में रहकर चिरकाल तक भजन-पूजन, करते रहने की अपेक्षा कहीं अधिक लाभ उठा सकते हैं । किन्तु यह सुयोग हर किसी के लिए हर समय कहाँ सम्भव है । इसलिए प्रस्तुत ध्यान धारणा के लिए इतना तो किया ही जा सकता है कि उस समय अपनी उपस्थिति भावनापूर्वक शान्ति कुंज में मानी जाय । ध्यान का यह प्रथम चरण है, योगाभ्यास में ध्यान को प्रथम माना गया है । यहाँ आसन का अर्थ शीर्षासन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि नहीं और न ऊनी वस्त्र आदि के विवेचन से सम्बन्ध है वरन् उस स्थान के सम्बन्ध में संकेत है जहाँ बैठकर, रहकर साधना की जाय जो हर दृष्टि से पवित्र एवं प्रेरणाप्रद हो । उच्चस्तरीय ध्यान का आसन भावना द्वारा नियत निर्धारित किया जाना चाहिए । इसके लिये प्रज्ञा परिजनों के लिए 'प्रज्ञातीर्थ' से बढ़कर दूसरा स्थान नहीं हो सकता ।

(१) गंगा की गोद, (२) हिमालय की छाया, (३) प्राचीन काल के ऋषियों और देवताओं की चिरकाल तपश्चर्या से भरा-पूरा दिव्य वातावरण, यह त्रिवेणी तो अपने आप में महत्त्वपूर्ण है ही, इसके अतिरिक्त चौथी विशेषता प्रज्ञातीर्थ शान्ति कुंज की एक और है जिसे कहीं अन्यत्र पाया जाना शक्य नहीं वह है, (४) दिव्य संरक्षण । साधनों को यहाँ दुहरा संरक्षण मिलता है । प्रज्ञा युग की अभीष्ट ऊर्जा का प्रत्यक्ष उद्गम् यहाँ है, परोक्ष उद्गम हिमालय के ध्रुव केन्द्र में है । प्रज्ञातीर्थ में वह प्राण ऊर्जा प्रचुर परिमाण में अनायास ही उपलब्ध होती है, जो प्रज्ञा साधना को सफल बनाने की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण सहायता करती है । इसके अतिरिक्त प्रज्ञातीर्थ की सूत्र संचालक आत्माओं का प्रत्यक्ष मार्ग-दर्शन, सान्निध्य, सहयोग, अनुदान का ऐसा लाभ मिलता है, जिससे सफलता पथ पर अग्रसर होने में असाधारण सहायता मिल सके, यह संरक्षण पक्ष है । महत्त्वपूर्ण धर्मानुष्ठानों में संरक्षक नियुक्त किए जाते हैं । शान्ति कुंज में ऐसे संरक्षण की प्रत्यक्ष व्यवस्था है । इसे गंगा की गोद-हिमालय की छाया-दिव्य वातावरण के अतिरिक्त दिव्य संरक्षण की चौथी उपलब्धि कह सकते हैं ।

अगली तीन ध्यान धारणाओं में से कोई भी की जाय ध्यान मुद्रा के उपरान्त सूक्ष्म शरीर से अपनी भावनात्मक उपस्थिति प्रज्ञातीर्थ शान्ति कुंज में अनुभव करनी चाहिए । यह धारणा जितनी बलवती होगी उतनी ही एकाग्रता बढ़ेगी तथा वैसी ही रसानुभूति होने लगेगी ।

इस प्रयोजन के लिए ध्यान मुद्रा के पाँच संकेत—(१) शान्त चित्त, (२) स्थिर शरीर, (३) कमर सीधी, (४) हाथ गोदी में तथा (५) आँखें बन्द-कार्यान्वित किए जाते हैं । ध्यान मुद्रा बन जाने के उपरान्त अपनी उपस्थिति प्रज्ञातीर्थ में सूक्ष्म शरीर से पहुँचने की भावना की जाय और वहाँ की विशेषताओं को इन चार 'कॉशनों' के साथ स्मरण किया जाय—

(१) गंगा की गोद,

(२) हिमालय की छाया,

(३) प्रज्ञातीर्थ का दिव्य वातावरण,

(४) प्राण ऊर्जा का प्रखर संरक्षण ।

प्रथम ध्यान—प्राणाग्नि—कुण्डलिनी

—गायत्री मन्त्र—एक साथ

भूमिका

—स्थूल शरीर । प्राण—विद्युत का उभार । प्राण—विद्युत—कुण्डलिनी ।

—कुण्डलिनी—जीवट, जिजीविषा—प्रतिभा—प्रखरता।

—प्राण उभार—साहस, श्रम, पौरुष, संकल्प, उल्लास, पराक्रम ।

—प्राण पराक्रम-ध्रुव, प्रह्लाद, परशुराम, अशोक, शुकदेव, विभीषण, हनुमान, अर्जुन, दधीच, भगीरथ जैसा।

आरम्भ—सावधान । शान्त चित्त । स्थिर शरीर । कमर सीधी । हाथ गोदी में । आँखें बन्द । ध्यान मुद्रा । भाव-समाधि ।

—गंगा की गोद—हिमालय की छाया ।

—प्रज्ञातीर्थ का दिव्य वातावरण प्राण ऊर्जा का प्रखर संरक्षण ।

—हिमालय का सर्वोच्च शिखर । हिमाच्छादित । आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र ।

—उफान-तूफान । दिव्य प्राण विद्युत का । प्राण विद्युत श्वेत बादलों-सी ।

—प्रवाह । साधक तक । हिमालय से साधक तक ।

—प्रवेश—प्राण विद्युत का । मूलाधार चक्र में—नाभि-चक्र-मध्य केन्द्र-स्थूल शरीर का ।

—हलचल । पुलकन । थिरकन । मूलाधार चक्र में । नाभि चक्र में । हिमालय की प्राण धारा से ।

—प्राणधारा-मूलाधार से सहस्रार तक । सहस्रार से मूलाधार तक । मूलाधार से सहस्रार तक मार्ग—मेरुदण्ड ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

—मंथन, मंथन, मंथन । मूलाधार से सहस्रार तक—सहस्रार से मूलाधार तक मंथन ।

—समुद्र-मंथन । जीवन-मंथन । प्राण-मंथन । अग्नि-मंथन । शक्ति-मंथन ।

—मंथन से ऊर्जा की उत्पत्ति । अग्नि शिखा की जागृति ।

—अग्नि शिखा - प्राण ज्वाला । प्राणज्वाला-कुण्डलिनी ।

कुण्डलिनी-प्राणाग्नि-योगाग्नि ।

—ऊर्ध्वगमन-कुण्डलिनी का । मूलाधार से सहस्रार तक सहस्रार से मूलाधार तक ।

—मूलाधार से सहस्रार तक । मेरुदण्ड मार्ग । मूलाधार भूलोक । सहस्रार—ब्रह्मलोक । मेरुदण्ड—देवयान ।

—अग्नि-शिखा-कुण्डलिनी-संव्याप्त समस्त काय कलेवर में ।

—नस-नस में प्राणाग्नि कुण्डलिनी ।

—कण-कण में प्राणाग्नि कुण्डलिनी ।

—रोम-रोम में प्राणाग्नि कुण्डलिनी ।

—साधक-अग्नि पिण्ड-प्राण पुंज ।

—प्राण-पुंज-प्राणवान । ओजवान । शक्तिवान् समर्थ-प्रखर । हिमालय की प्राण धारा से अनुप्राणित। साधक ओजवान । शक्तिवान । प्राणवान ।

—पाँच बार ॐकार गुंजन । पाञ्चजन्य उद्घोष । अर्जुन का उद्बोधन । ॐ-ॐ-ॐ-ॐ-ॐ ।

—तीन शरीरों की तीन प्रार्थनाएँ—

असतो मा सद्गमय ।

तमसो मा ज्योतिर्गमय ।

मृत्योर्माऽमृतं गमय ।

तमसो मा ज्योतिर्गमय ।

समाप्ति-शान्ति ।

द्वितीय ध्यान : दिव्य दृष्टि-प्रकाश ज्योति

गायत्री मन्त्र का उच्चारण एक साथ करें ।

भूमिका

—तीसरा नेत्र, आज्ञाचक्र, भ्रूमध्य चक्र ।

—दिव्यज्योति, महाप्रज्ञा, ऋतम्भरा—दूरदर्शिता, विवेकशीलता—न्यायनिष्ठा ।

—विवेक दिव्य चक्षु ।

—तीसरा नेत्र, शिव का कामदहन, महाकाली का त्रिशूल, त्रिशूल—असुर निकन्दन ।

—तीसरा नेत्र-जागृति, संजय, गान्धारी, दमयन्ती जैसा ।

—आज्ञा चक्र, टेलिस्कोप-दूरदर्शिता, टेलीविजन-विश्व-दर्शन—दूरदर्शन, राडार—पूर्वाभास, एक्स-रे-अदृश्य दर्शन, माइक्रोस्कोप-सूक्ष्म दर्शन, तीसरा नेत्र-आज्ञा चक्र, आज्ञा चक्र-टेलिस्कोप, टेलीविजन, रडार, एक्स-रे, माइक्रोस्कोप समन्वय ।

—दिव्य दृष्टि-महाप्रज्ञा, महाप्रज्ञा-कल्प वृक्ष, तीसरा नेत्र ज्योतिवान, हिमालय की ज्योतिधारा से अनुप्राणित ।

आरम्भ

—सावधान, शान्त-चित्त, स्थिर शरीर, कमर सीधी, हाथ गोद में, आँखें बन्द, ध्यान मुद्रा, भाव समाधि ।

—गंगा की गोद, हिमालय की छाया ।

—प्रज्ञा तीर्थ का दिव्य वातावरण—प्राण ऊर्जा का प्रखर संरक्षण ।

—हिमालय का सर्वोच्च शिखर, हिमाच्छादित, आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र ।

—स्वर्णिम सूर्योदय, हिमालय के सर्वोच्च शिखर पर स्वर्णिम सूर्य—सविता, गायत्री का प्राण सविता ।

—प्रवेश ज्योति किरणों का, साधक के आज्ञा चक्र में आज्ञा चक्र—तीसरा नेत्र, सूक्ष्म शरीर में ।

—आज्ञा चक्र ज्योतिवान, तीसरा नेत्र तेजवान, हिमालय की दिव्य किरणों से अनुप्राणित ।

—दिव्य ज्योति-प्रज्ञा, प्रज्ञा-ऋतम्भरा, ऋतम्भरा-सत्व दृष्टि, दिव्य दृष्टि नस-नस में ज्योति, कण-कण में ज्योति, रोम-रोम में ज्योति, दिव्य ज्योति प्रज्ञा ।

—साधक ज्योति पिण्ड-तेज पुंज-प्रज्ञा पुंज ।

—स्थूल शरीर ज्योतिवान, सूक्ष्म शरीर ज्योतिवान, कारण शरीर ज्योतिवान ।

—रक्त ज्योतिवान, माँस ज्योतिवान, अस्थि ज्योतिवान, स्थूल शरीर ज्योतिवान, हिमालय की ज्योतिधारा से अनुप्राणित ।

—मन ज्योतिवान, अन्तःकरण ज्योतिवान, अन्तरात्मा ज्योतिवान, कारण शरीर ज्योतिवान ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

—स्थूल शरीर ज्योतिवान, सूक्ष्म शरीर ज्योतिवान, कारण शरीर ज्योतिवान ।

—पाँच ॐकार, पाञ्चजन्य उद्बोधन । ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ

—तीन शरीर-तीन प्रार्थना ।

असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्माऽमृतं गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय ॥
ॐ शान्ति शान्ति शान्ति ।

तृतीय ध्यान—रसानुभूति अमृत-वर्षा

गायत्री मन्त्र का उच्चारण एक साथ करें ।

भूमिका

—रस-स्नेह, सद्भाव-आत्मभाव ।

—रस-स्वर्ग, स्वर्ग-उत्कृष्ट चिन्तन ।

—रस-मुक्ति, मुक्ति-भव-बन्धनों से । भव-बन्धन-लोभ, मोह, दर्प ।

—अमृत-आत्मबोध, आत्मदर्शन, ब्रह्म सम्बन्ध ।

—अमृत-देवत्व, देवत्य करुणा, उदारता, अनुकम्पा।

—अमृत—श्रद्धा-समर्पण ।

—अमृतमयी-अग्रदूत, अवतार, ऋषि, महामानव, सुधारक, शहीद ।

—अमृत-सन्तोष, उल्लास, आनन्द ।

आरम्भ

—सावधान, शान्त-चित्त, स्थिर शरीर, हाथ गोद में, आँखें बन्द, ध्यान मुद्रा, भाव समाधि ।

—गंगा की गोद, हिमालय की छाया ।

—प्रज्ञातीर्थ का दिव्य वातावरण ।

—प्राण ऊर्जा का प्रखर संरक्षण ।

—हिमालय का सर्वोच्च शिखर—हिमाच्छादित, आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र ।

—उफान-तूफान, दूध के झाग जैसा श्वेत, मेघमाला जैसा मेघमाला-अमृत धारा ।

—लहरें-साधक तक, हिमालय से साधक तक ।

—प्रवेश हृदय चक्र में-ब्रह्म चक्र में-कारण शरीर में ।

—अमृत वर्षा-अनन्त अन्तरिक्ष से, घनघोर अमृत वर्षा, घटाटोप अमृत वर्षा ।

—शीतल, सुरभित-सरस-अमृत वर्षा ।

—त्रिपदा की स्नेह वर्षा-सविता की स्नेह वर्षा, स्नेह वर्षा शक्ति वर्षा, अमृत वर्षा ।

—अमृत-स्नेह-सौजन्य ।

—साधक रस-विभोर, आनन्द से सराबोर ।

—नस-नस में अमृत, कण-कण में अमृत, रोम-रोम में अमृत ।

—अमृत-समर्पण, एकत्व, अद्वैत, विलय, विसर्जन-भक्त का भगवान में विलय, विसर्जन, एकत्व, अमरत्व, ।

—पयपान, सोमपान, अमृतपान ।

—पयपान—सन्तोष, सोमपान-उल्लास, अमृतपान-आनन्द ।

—रस विभोर, आनन्द से सरावोर, साधक का अन्तरात्मा-अमृत पान से ।

—परिवर्तन-साधक का-अमृत वर्षा से ।

—परिवर्तन-कायाकल्प ।

—परिवर्तन-क्षुद्रता का महानता में ।

—परिवर्तन-कामना का भावना में ।

—परिवर्तन-नर का नारायण में ।

—परिवर्तन-आत्म दर्शन-ब्रह्म दर्शन ।

—उपलब्धि-अमृत वर्षा की, तृप्ति-तुष्टि-शान्ति ।

—पुलकित-प्रमुदित, उल्लसित-अन्तरात्मा साधक का, अमृत वर्षा ।

—साधक रसविभोर-आनन्द से सरावोर।

—पाञ्चजन्य उद्बोधन, पाँच बार ॐकार॥ ॐ ॐ ॐ ॐ ॐ ।

—तीन शरीर की तीन प्रार्थना ।

असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्माऽमृतं गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय ॥
ॐ शान्ति शान्ति शान्ति ।

सम्मिश्रित साधना

स्थूल शरीर के लिए प्राण ऊर्जा, सूक्ष्म शरीर के लिए दिव्य दृष्टि, कारण शरीर के लिए रस वर्षा की तीन साधनाओं का विधि-विधान प्रस्तुत किया गया । अनुभव के आधार पर जो अनुकूल लगे, जिसमें स्थिरता आये वह साधना को स्थायी रूप से अभ्यास में सम्मिलित कर सकते हैं । हर रोज सम्भव न हो तो भी सप्ताह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में एक बार यह ध्यान धारणा की जा सकती है । जहाँ प्रज्ञा संस्थान हों, वहाँ नियमित रूप से साप्ताहिक क्रम चलाया जा सकता है । ऋतु और सुविधानुसार प्रातःकाल या सायंकाल यह साधना की जा सकती है । एक दिन में दो बार करने की जरूरत नहीं है ।

ऐसा भी हो सकता है कि तीनों का एक संयुक्त मिश्रण बनाया जाय और संतुलित आहार की तरह मिश्रित साधना क्रम में कमी मात्र इतनी है कि जो उद्देश्य ध्यान में रखा गया था उसकी सम्पूर्ण नहीं पर आंशिक पूर्ति हो सकेगी । दूसरी ओर लाभ भी है । इससे जीवन के तीनों क्षेत्रों की प्रगति एक साथ होने लगेगी । कोई प्रसंग उपेक्षित नहीं रहेगा । इस तरह लाभ और हानि को देखते हुए सम्मिलित साधना ज्यादा सुविधाजनक प्रतीत होगी । यदि लम्बे समय तक सम्मिलित साधना करने का क्रम बनाया जायेगा, तो तीनों शरीरों में धीमी प्रगति का कार्यक्रम एक साथ चलता रहेगा ।

जिनको यह सम्मिलित साधना उपयुक्त लगे उनको साधना का समय बढ़ाना चाहिए ।

संयुक्त ध्यान धारणा

—सावधान, शान्त चित्त, स्थिर शरीर, कमर सीधी, हाथ गोदी में, आँखें बन्द, ध्यान मुद्रा, भाव समाधि ।

—गंगा की गोद, हिमालय की छाया, प्रज्ञा तीर्थ का दिव्य वातावरण, प्राण ऊर्जा का प्रखर संरक्षण ।

—हिमालय का सर्वोच्च शिखर, हिमाच्छादित, आध्यात्म का ध्रुव केन्द्र ।

—स्वर्णिम सूर्योदय, हिमालय के सर्वोच्च शिखरों पर स्वर्णिम सूर्य—सविता, गायत्री का प्राण सविता ।

—सविता की स्वर्णिम किरणें हिमालय से साधक तक, किरणें-दिव्य ज्योति, प्राण ऊर्जा, प्रखर प्रज्ञा ।

—प्रवेश—ज्योति धारा, साधक के आज्ञा चक्र में ।

—आज्ञा चक्र प्राणवान, तीसरा नेत्र—प्रज्ञावान, प्रज्ञा-दिव्य ज्योति ।

—नस-नस में ज्योति, कण-कण में ज्योति, रोम-रोम में ज्योति ।

—साधक ज्योति पिण्ड, प्राण पुंज, प्रज्ञा पुंज ।

—स्थूल शरीर—ज्योतिवान, सूक्ष्म शरीर ज्योतिवान, कारण शरीर ज्योतिवान ।

—रक्त ज्योतिवान, माँस ज्योतिवान, अस्थि ज्योतिवान, स्थूल शरीर ज्योतिवान ।

—मन ज्योतिवान, बुद्धि ज्योतिवान, सूक्ष्म शरीर ज्योतिवान ।

—अन्तर्जगत ज्योतिवान, अन्तःकरण ज्योतिवान, अन्तरात्मा ज्योतिवान, कारण शरीर ज्योतिवान ।

—साधक ओजवान, प्राणवान, प्रज्ञावान, तेजवान ।

—अमृत वर्षा, अनन्त अन्तरिक्ष से साधक पर अमृत वर्षा ।

—त्रिपदा की स्नेह वर्षा, सविता की शक्ति वर्षा, अन्तरिक्ष से अमृत वर्षा ।

—रस विभोर, आनन्द से सरावोर, अन्तरात्मा साधक की ।

—सोमपान, रसपान, अमृतपान ।

—परिवर्तन साधक का, हिमालय की शक्तिधारा से । परिवर्तित कायाकल्प ।

—परिवर्तन क्षुद्रता का महानता में ।

—परिवर्तन कामना का भावना में ।

—परिवर्तन नर का नारायण में ।

—परिवर्तन पुनर्जीवन, उपलब्धि अमृत ।

—वर्षा की तृप्ति, तुष्टि, शान्ति ।

—पांचजन्य उद्घोष, पाँच बार ॐकार गुञ्जन प्रार्थना ।

—प्रार्थना

असतो मा सदगमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय ।
मृत्योर्माऽमृतं गमय, तमसो मा ज्योतिर्मगमय ॥
ॐ शान्ति शान्ति शान्ति ।

⌘⌘⌘

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org


सामवेद
HIN-B-0134